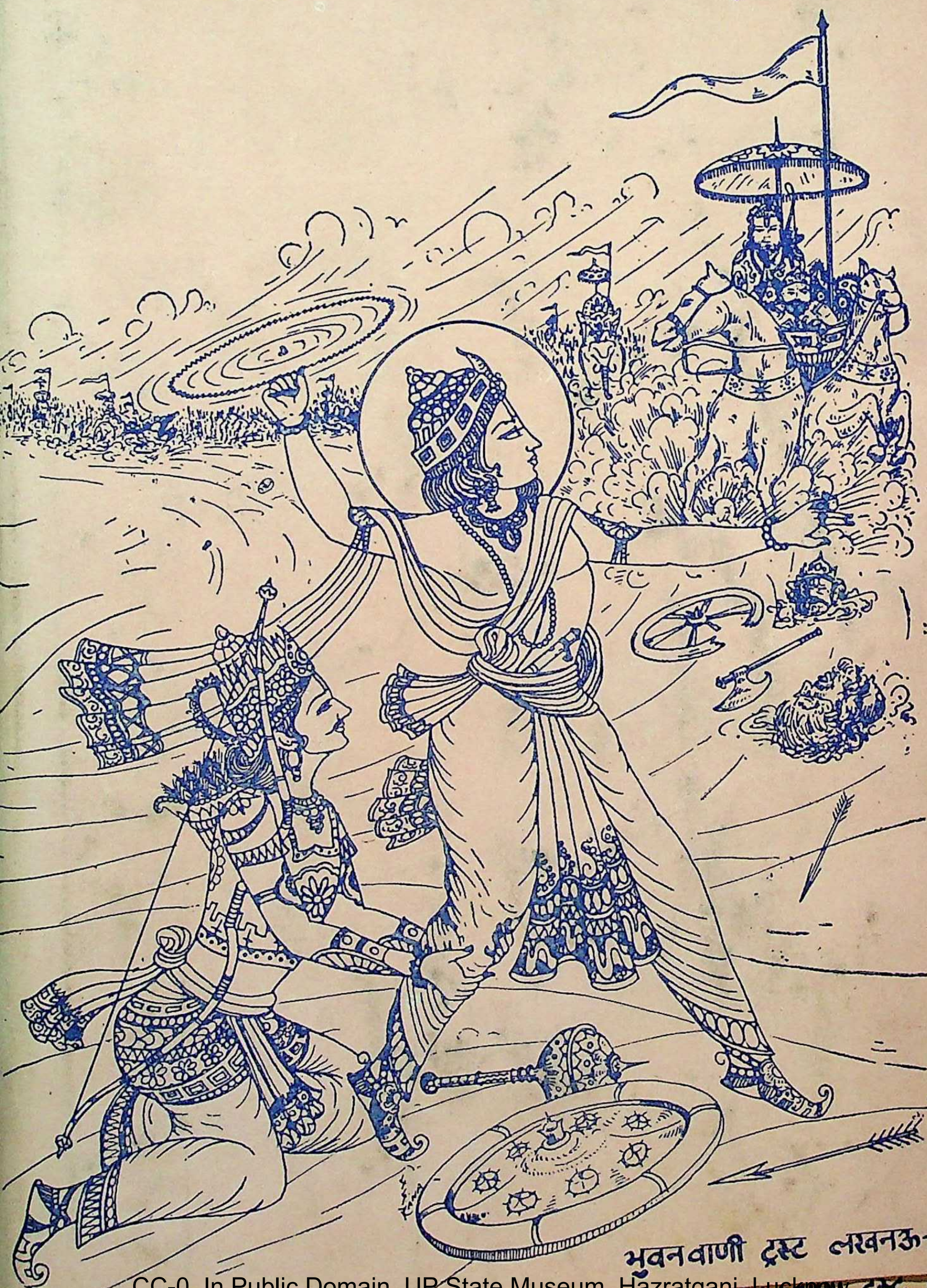
महाभारतम्



भुवनवाणी ट्रस्ट लखनऊ-३

भुवनवाणी ट्रस्ट लख

मलयाळम

महाभारतम्

रचयिता

तुञ्चत्तु ऍळुत्तच्छन्

हिन्दी-अनुवाद सहित देवनागरी-लिप्यन्तरणकार

श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर
भूतपूर्व उपकुलपति, लखनऊ-विश्व-विद्यालय एवं
वाराणसी संस्कृत विश्व विद्यालय

प्रकाशक

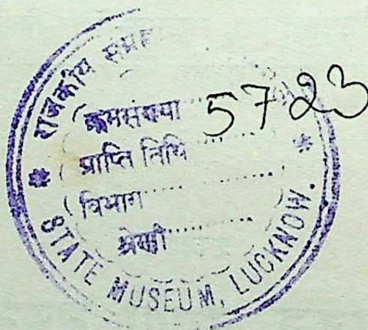
भुवन वाणी ट्रस्ट

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

प्रथम संस्करण—
जुलाई, १९७५ ई०

मूल्य— ६०·००





मुद्रक:—
वाणी प्रेस
भुवन वाणी ट्रस्ट
'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ–३

"पद्मपत्रमिवाम्भस"

उत्तरप्रदेश शासन, कांग्रेस संगठन, गांधी आश्रम एवं सभी रचनात्मक कार्यक्रमों में, अनन्य निष्ठा, अनन्य निस्पृहभाव से जल-कमलवत् आजीवन संलग्न श्री विचित्र भाई (श्री विचित्रनारायण शर्मा, अध्यक्ष गांधी स्मारकनिधि उ० प्र०) से कौन परिचित नहीं ! सत्ता और जनता— सर्वत्र उनको प्राप्त समादर ने ट्रस्ट को अपरिमित बल प्रदान किया है। वे हमारे ट्रस्ट के महान् संरक्षक हैं।

भुवन वाणी ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण की पुष्कल सफलता में श्री विचित्र भाई की सर्वोपरि सहायता है ! सत्य यह है कि आज कल की अनेक व्यवहारिक जटिलताओं में, उनकी आये दिन की सहायता के बिना, ट्रस्ट का कार्य-संचालन ही दूभर हो जाता—प्रशंसा मात्र ही हाथ लगती । अस्तु, मलयाळम के वृहद्ग्रंथ 'अॆळुत्तच्छन् विरचित महाभारत' के सानुवाद लिप्यन्तरण से उनको माल्यार्पण करते हुए हम आज अपने को कृतकृत्य मान रहे हैं।

माल्यार्पण



अॆळुत्तच्छन् * विरचित

लिप्यन्तरण * देवनागरी

* * मलयाळम * महाभारत * का सानुवाद * *

१० जुलाई, १९७५

रथयात्रा-दिवस

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

विषय-सूची

प्रकाशकीय

प्रस्तुत ग्रन्थ के अनुवादक और नागरी लिप्यन्तरणकार, हमारे प्रदेश के प्रकाण्ड विद्वान् श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर द्वारा लिखित उपोद्घात (पृष्ठ ९-२४) के बाद कुछ लिखने को अवशेष नहीं रहता। अलबत्ता पृष्ठ ८ पर, मलयाळम की वर्णमाला, उसका नागरी रूप, कुछ विशिष्ट उच्चारण, और मुद्रण-प्रकाशन सम्बन्धी सूचनाएँ—इस सम्बन्ध में कुछ पंक्तियाँ मैंने प्रस्तुत की हैं।

वयोवृद्ध, महामना श्री अय्यर महोदय ने, अपनी प्रतिकूल स्वास्थ्य की अवस्था में भी, अत्यन्त तत्परता, स्नेह और निस्पृह भाव से, १२५० पृष्ठ के इस विशाल मलयाळम ग्रन्थ का सानुवाद लिप्यन्तरण दो ढाई वर्ष में पूरा करके ट्रस्ट के हवाले कर दिया, यह मेरे श्रम पर उनकी करुणा, ट्रस्ट के पुनीत उद्देश्य के प्रति उनका आशीर्वाद ही है। यह भार, कैसे उदार और सदाशय मन से लेने की उन्होंने कृपा की, यह उपोद्घात पृष्ठ ११ और २४ में उन्हीं के शब्दों में परिलक्षित है।

रहा प्रकाशन। बड़ा खर्चीला काम था। इसमें देश के उदार श्रीमन्त जन और उत्तर प्रदेश शासन की आंशिक सहायता रही। साथ-साथ में अन्य भाषाओं के लगभग बीस ग्रन्थों का प्रकाशन भी चल रहा था। भगवान् की कृपा से भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार श्री रमाप्रसन्न नायक और तत्कालीन गृहमंत्री श्री उमाशंकर जी दीक्षित की दृष्टि ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण के पुष्कल कार्यों की ओर गई। उनकी संस्तुति, पर शिक्षा एवं समाजकल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की कृपा हुई। फलस्वरूप, ग्रन्थ के शेषांश को पूरा करके अखिल देश की जनता के सामने प्रस्तुत करने की नौबत आई। शिक्षामंत्रालय के मर्मज्ञ विद्वान् डाइरेक्टर श्री सनत्कुमार चतुर्वेदी जी की बड़ी कृपा रही। हम इन महानुभावों का, भाषाई सेतुकरण के राष्ट्रीय कार्य में उत्तरोत्तर दृढ़ और कार्यरत रहने का संकल्प लेते हुए, आभार प्रर्दन करते हैं।

सहर्ष सूचना है कि ऍळुत्तच्छन् कृत मलयाळम 'महाभारत' के सम्पूर्ण होते ही, उसी महान् कवि की दूसरी प्रख्यात रचना 'अध्यात्म रामायण' का सानुवाद नागरी लिप्यन्तरण का प्रकाशन आरंभ हो गया है।

नन्दकुमार अवस्थी

प्रतिष्ठाता—भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

ज्ञातव्य—मलयाळम भाषा के ५ विशिष्ट 'वर्ण'—ळ, ऴ, ऱ, ट़, ऩ, का उच्चारण इस प्रकार है:—'ळ' मूर्धन्य, जिह्वा को उलट कर जिह्वाग्र से 'ष' के स्थान पर तालु स्पर्श कर 'ल' का उच्चारण करने पर प्रकट होता है। 'ऴ' मूर्धन्य, जिह्वा उलटकर जिह्वाग्र से 'ष' के स्थान पर तालु स्पर्शकर 'र' का उच्चारण करने पर 'ऴ' के समान ध्वनि उत्पन्न करता है। 'ऱ' यह मूर्धन्य वर्ण हिन्दी 'र' की अपेक्षा जिह्वा को कुछ अधिक उलटकर जिह्वाग्र से अधिक स्फुरण करते हुए, अन्यथा 'ऱ' के बजाय 'ऴ' जैसा सुनाई देगा। 'ट़' हिन्दी 'ट' के समीप है। जीभ को वर्त्स्य पर एक क्षण चिपका कर तुरंत हटा लेना चाहिए 'That' के अंतिम 'टी' के उच्चारण के सदृश। 'ऩ' का उच्चारण जिह्वाग्र को दोनों दन्तावलियों के बीच में मुँह के भीतर ही रखकर; इस दन्त्य वर्ण से मिलता-जुलता देवनागरी का 'न', 'ऩ' की अपेक्षा जीभ को ज़रा ऊपर रखकर स्पर्श किया जाता है।

मलयालम-देवनागरी वर्णमाला

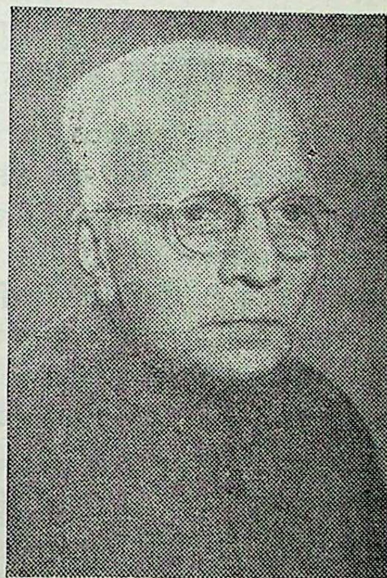
അअ क	ആआ का	ഇइ कि	ഈई की	ഉउ कु
ഊऊ कू	ഋऋ कृ	ൠॠ कॄ	ഌऌ	ൡॡ
എऎ कॆ	ഏए के	ഐऐ कै	ഒऒ कॊ	ഓओ को
	ഔऔ कौ	അംअं कं	അഃअः कः	
കक	ഖख	ഗग	ഘघ	ങङ
ചच	ഛछ	ജज	ഝझ	ഞञ
ടट	ഠठ	ഡड	ഢढ	ണण
തत	ഥथ	ദद	ധध	നन ऩ
പप	ഫफ	ബब	ഭभ	മम
യय	രर	ലल	വव	ശश
ഷष	സस	ഹह	ളळ	ക്ഷक्ष
	ഴऴ,ऴ	റऱ,ऱ	ററट़	

मलयाळम में ए और ओ की मात्राएँ ह्रस्व और दीर्घ दो प्रकार की होती हैं। इनमें ह्रस्व के लिए ॆ और ॊ तथा दीर्घ के लिए े और ो देव-नागरी में क्रमशः प्रयुक्त हैं। पौलोम और आस्तीक पर्व में ॅ ॉ, और शेष ग्रन्थ में ॆ ॊ का प्रयोग हुआ है। ह्रस्व ऍकार और ऒकार के लिए ॆ ॊ— ये चिह्न आचार्य विनोबा भावे, अ० भा० विक्रम परिषद, अ० भा० काशिराजन्यास और भुवन वाणी ट्रस्ट लखनऊ द्वारा प्रयोग में लाये जा रहे हैं। ये लेखन-मुद्रण में सरल और सुन्दर हैं। उदाहरण—'जॆहिं' और 'जेठ' एवं 'घोड़दौड़' और 'घोड़ा'। देवनागरी लिपि में मलयाळम के उकारांत शब्दों के ऊपर किन्हीं अवसरों पर चन्द्र ॅ भी लगा देते हैं। उच्चारण उकार नहीं वरन् असम्पूर्ण 'अर्थात् ह्रस्व 'अकार' जैसा होता है। जैसे 'वलियतुॅ' के 'त' को विस्तार से न पढ़ें। मलयाळम शब्द का अन्तिम सस्वर अक्षर हिन्दी की भाँति हलन्त नहीं बोला जायगा। यथा राम को Rama पढ़ें, न कि हिन्दी के अनुकरण पर राम्।

—नन्दकुमार अवस्थी

उपोद्घात

१. भारतीय भाषाओं के बीच 'मलयाळम' का स्थान विकसितों में है, क्योंकि उसकी शब्दराशि समृद्ध है और उसका साहित्य प्राचीन और सर्वतोमुख है। यद्यपि 'मलयाळम' बोलनेवालों की संख्या हिन्दी आदि कुछ अन्य भाषाभाषियों की संख्या की अपेक्षा बहुत कम है तथापि उनमें शिक्षितों का अनुपात बहुत अधिक होने के कारण 'मलयाळम' भाषा और साहित्य का श्लाघनीय विकास हुआ है। आज मलयाळम-भाषियों की संख्या क्या है, यह मैं निश्चितरूप से नहीं कह सकता हूँ। मेरा अनुमान है कि वह लगभग दो या सवा दो करोड़ होगी। वह अपनी मलयाळम लिपि में लिखी जाती है जिसका विकास भी अन्य भारतीय लिपियों की भाँति, सम्राट् अशोक के समय की ब्राह्मी लिपि से हुआ था। मलयाळम लिपि भी वर्णचिह्नों का एक समूह है और इसमें वर्णचिह्नों के बनाने की रीति वही है जो देवनागरी, बङ्गला आदि अन्य लिपियों में प्रसिद्ध है। यह रीति प्राचीन है और भारत की अपनी है। यद्यपि वर्णचिह्नों के बनाने की रीति भारतीय भाषाओं की वही है तथापि ये लिपि तो परस्पर भिन्न हैं और हर एक लिपि विशेष प्रयत्न करके सीखने से ही पढ़ी जा सकती है। एक लिपि के सीखने से अन्य लिपियाँ, बिना पृथक् प्रयत्न किये, नहीं पढ़ी जा सकती हैं। इसका नतीजा यह है कि हम भारतीय अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं को सीखने के लिए बहुत कम प्रयत्न करते हैं। दो या अधिक भारतीय भाषा जाननेवाले भारतीयों की संख्या बहुत कम है। समस्त भारतवर्ष की जनता में कोई एक लिपि पढ़ना और लिखना जाननेवालों का अनुपात जब पचीस प्रतिशत भी नहीं हुआ है, तो दो-दो, तीन-तीन लिपि जाननेवालों का जनता में अनुपात एक प्रतिशत भी नहीं होगा।


श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर
भू० पू० उपकुलपति लखनऊ वि० वि०
और वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय

२. आज भारत में प्रचलित लिपियों में देवनागरी लिपि एक है। उसी का सबसे अधिक प्रचार और प्रसार है। इसका मुख्य कारण यह है कि भारतीय भाषाओं में सबसे अधिक व्यापक हिन्दी भाषा इस लिपि में लिखी जाती है। हिन्दी के अतिरिक्त मराठी भाषा भी इसी लिपि में लिखी जाती है। तीसरी बात यह है कि भारत की सबसे प्राचीन और भारत के सभी प्रदेशों में व्याप्त संस्कृतभाषा प्रायः इसी लिपि में लिखी जाती है। जिन प्रदेशों में संस्कृत पहले अन्य लिपियों में लिखी जाती थी वहाँ भी कम से कम पिछले पचास बरसों में वह देवनागरी लिपि में लिखी जा रही है। समस्त भारत में संस्कृत को देवनागरी में लिखना और छापना, अब लोग अत्यन्त स्वाभाविक समझने लगे हैं।

इतना होते हुए भी स्मरण रहे कि अब भी देवनागरी के अतिरिक्त दस-पन्द्रह अन्य लिपियाँ भी तत्तद्भाषाओं के लिए प्रयुक्त की जा रही हैं। यह मानना ही पड़ेगा कि इतनी लिपियों का सद्भाव राष्ट्र के एकीकरण में बाधक है। मैं यह नहीं कहता हूँ कि जहाँ अनेक देशों की भाषाएँ एक ही लिपि में लिखी जाती हैं वहाँ उन देशों का एकीकरण अनायास से हो जाता है। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण पश्चिम योरप है। पश्चिम योरप अनेक देशों में विभक्त है और हर एक देश की अपनी भाषा अलग है। परन्तु इन सब भाषाओं की एक ही अक्षरमाला है, जो A से प्रारम्भ होकर Z में समाप्त होती है, और जर्मनी के Gothic Script को छोड़कर, सब जगह एक ही प्रकार लिखी जाती है। परन्तु इस अक्षरमाला और लिपि की एकता से पश्चिम योरप का कभी एकीकरण नहीं हुआ। इसका प्रमाण यह है कि पिछली दो-तीन शताब्दियों में वहाँ एक के बाद एक लगातार देशों के परस्पर युद्ध ही होते रहे हैं। अन्त में वहाँ ऐसी परिस्थिति पैदा हो गयी है कि अगर एक महायुद्ध और हुआ तो ये देश न केवल स्वयं नष्ट होंगे अपितु अन्य देशों का भी, यानी सारे संसार का भी नाश करेंगे। अस्तु, यह दूसरा विषय है। जहाँ तक भारत से संबन्ध है, स्वातंत्र्य के बाद हम महसूस करने लगे हैं कि हमारी एकता में कमी है। देश, भाषा, जाति आदि उपाधियों पर आश्रित भिन्न-भिन्न अनेकतावाद राष्ट्र में सुनाई दे रहे हैं जिनको मान्यता देने से जो राष्ट्रकार्य सब मिलजुलकर एक होने से आसानी से किये जा सकते हैं वे नहीं हो पा रहे हैं। भारतीय संस्कृति में भेद और अभेद सदा से रहे हैं, भेद तो गौण रूप में और अभेद प्रधान रूप में। इन दोनों को उस स्थिति में रखना बहुत आवश्यक है। यह न हो कि उनका गुणप्रधानभाव पलट जाय। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि एकीकरण की अनुकूल बातों को प्रोत्साहन दिया जाय और उसकी प्रतिकूल

बातों का निरोध हो जाय। इसलिए मैं इस पक्ष का हूँ कि स्वतन्त्रभारत की एक एकीकरण भाषा हो और वह एक एकीकरण लिपि में लिखी जाय। अगर यह पक्ष ग्राह्य है तो इसका एक ही निष्कर्ष हो सकता है और वह यह कि हिन्दी भाषा का और देवनागरी लिपि का अधिक से अधिक प्रचार और प्रसार होना चाहिए। इसमें क्या सन्देह हो सकता है कि अगर समस्त भारतीय भाषाएँ हिन्दी और मराठी की तरह देवनागरी लिपि में लिखी जायँ तो यह राष्ट्र के एकीकरण को एक क़दम आगे बढ़ाना है। हर एक भारतीय अगर हिन्दी बोल सकता है और लिख सकता है तो राष्ट्र का एकीकरण निकट आगया है। इसी प्रकार अगर हर एक भारतीय अपनी भारतीय भाषा को देवनागरी लिपि में भी लिखेगा, तो वह भी एकीकरण के निकट होने का एक चिह्न है। एकीकरण को निकट लाने के लिए इस प्रकार अनेक क़दम एक साथ उठाने पड़ेंगे। नहीं तो इसमें समय अधिक लगेगा जो वांछनीय नहीं है। हमारा दावा यह है कि हमारी संस्कृति एक उच्चकोटि की संस्कृति है। एक उच्चकोटि की संस्कृति का यही लक्षण है कि जिस देश में उसका निर्माण होता है केवल उस देश की जनता के लिए वह निर्मित नहीं की जाती है, परन्तु मानव मात्र के लिए निर्मित की जाती है। प्राचीन भारत में जिस अद्‌भुत संस्कृत भाषा का निर्माण हुआ वह केवल भारतीयों के लिए नहीं निर्मित की गयी। वह भारत से अनेक अन्य देशों में गयी, वहाँ की जनता ने उसे अपनाया और उसमें साहित्य निर्माण किया। इस युग में भारत एक भाषा और एक साहित्य का नहीं परन्तु अनेक भाषाओं और साहित्यों का निर्माण कर रहा है। क्यों ? । केवल अपनी जनता के लिए नहीं। सारे संसार के लिए है। ये सब भाषाएँ, लिपियाँ और साहित्य इस जगत् को भारत की देन है। इनको संसार के कोने-कोने में पहुँचाना है। जैसे "वाणी-सरोवर" के हर एक अंक के प्रारम्भ में छपा है:—

"प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक संत की बानी। सम्पूर्ण विश्व में घर घर है पहुँचानी ।।"

३. यह एक बहुत बड़ा काम है। एक बहुत बड़ी इमारत खड़ी करनी है। इसमें कार्यसिद्धि तभी होगी जब भारत के सभी प्रदेशों के रहनेवाले असंख्य कर्मचारी लग जायेंगे और बरसों लगे रहेंगे। जब भुवनवाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी और वाणी सरोवर के सम्पादक पं० नन्दकुमार अवस्थी जी ने हमसे पूँछा कि "क्या आप इस बड़ी इमारत के निर्माण में एक ईंट कहीं लगा सकते हैं?", तब हमने उत्तर दिया, "अगर आप हमको इस योग्य समझते हैं तो हम यह काम बड़ी ख़ुशी से करेंगे। हम मलयाळम साहित्य के चार सौ बरस पुराने, महाकवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् की कृति मलयाळम महाभारत का लिप्यन्तरण और हिन्दी अनुवाद कर सकते हैं"। पं० नन्दकुमार जी ने

हमारे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और लिप्यन्तरण और अनुवाद का काम बिना विलम्ब के प्रारम्भ हुआ। अब तीन चार साल के बाद समाप्त भी हो गया है। वह देवनागरी लिपि में छपा हिन्दी अनुवाद सहित 'मलयाळम महाभारत' अब पाठकों के सामने है।

४. महाकवि तुञ्चत्त् एऴुत्तच्छन्—एऴुत्तच्छन् का मलयाळम साहित्य में प्रायः वही स्थान है जो हिन्दी साहित्य में महाकवि तुलसीदास का है। दोनों महाकवियों का समय भी करीब-करीब समान है। 'एऴुत्तच्छन्' आधुनिक मलयाळम भाषा और साहित्य के पिता समझे जाते हैं। उन्होंने प्राचीन और अर्वाचीन रचना-रीतियों का समन्वय किया है। तमिऴ के प्रभाव से विकल 'पाट्टु' और संस्कृतप्रचुर 'मणिप्रवाळम्' के बीच मलयाळम की अपनी निजी शैली को स्थिर किया है। उन्होंने न केवल साहित्यिक और सांस्कृतिक दृष्टि से अपितु आध्यात्मिक दृष्टि से भी एक नवोत्थान प्रारम्भ किया है। अपने किळिप्पाट्टु की शैली द्वारा वेदान्त के तत्त्वों का प्रचार करनेवाले, और कोई कवि जनता का आराधन के पात्र नहीं बन सके।

यह माना जाता है कि महाकवि का जन्म केरल राज्य के अन्तर्गत पुराने मलबार ज़िले के पोन्नानि तालूक के तृक्कण्टियूर् अंश में स्थित तृक्कण्टियूर् मन्दिर के पास 'तुञ्चन् पऱम्पु' नामक विख्यात स्थान के पास एक घर में हुआ था। यद्यपि उनके समय, और अन्य बातों के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता है तथापि गवेषक विद्वानों में इतना मतैक्य तो अवश्य है कि उनका जीवनकाल सन् १४७५ और सन् १५७५ के बीच में ही रहा होगा। उनके माता-पिता के जाति के और नाम तक के संबन्ध में सन्देह है। एक प्रचलित ऐतिह्य यह है कि उनके पिता एक नम्पूतिरि ब्राह्मण थे और माता एक 'नायर' जाति की स्त्री थी। विद्वानों का, विशेषतः महाकवि उल्लूर परमेश्वर अय्यर का गहरे विचार के बाद प्राप्त अभिप्राय यह है कि इस ऐतिह्य में कुछ भी तत्त्व नहीं है[1]। ज़्यादातर यही संभव मालूम होता है कि वे जाति के नायर थे। जहाँ तक उनकी शिक्षा से संबन्ध है उन्होंने 'अपने अध्यातमरामायण'[2] में कहा है कि उनके बड़े भाई 'रामन्' ही उनके मुख्य गुरु थे। 'रामन्' के छोटे भाई होने के कारण ये 'रामानुजन्' कहलाने लगे। कुछ विद्वानों ने यह भी संभावना की है कि उनका नाम 'शङ्करन्' या 'सूर्यनारायणन्' था। औरों के मत में ये दोनों नाम उनके शिष्यों के थे, उनके नहीं। 'रामानुजन्' नाम की ही केरल में अधिक प्रसिद्धि है। फिर भी यह निश्चित रूप से कहा नहीं जा

---

१. उल्लूर. एस. परमेवश्र अय्यर–केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ४८३.

२. एऴुत्तच्छन्–अध्यातमरामायणम्. पृ. ४. संस्करण मंगलोदयम् प्रेस--तृशिवणेरूर (त्रिचूर) ११०१ (सन् १९२६)

सकता है कि उनका नाम क्या था। वे 'तुञ्चत्त् एऴुत्तच्छन्' अर्थात् 'तुञ्चत्त् घराने का आचार्य' इस नाम से ही आज तक केरल में विख्यात हैं। इसमें उनका व्यक्तिगत नाम अन्तर्गत नहीं है।

प्राथमिक विद्याभ्यास के बाद उन्होंने अपने बड़े भाई और अन्य गुरुओं के चरणों में बैठकर संस्कृत में काव्य, नाटक आदि से लेकर वेदान्तशास्त्र तक के विविध विषयों का अभ्यास किया और मलयाळम में अपने समय तक के समस्त साहित्य का अगाध परिशीलन किया। इस बात के असंख्य प्रमाण उनकी कृतियों में बिखरे मिलते हैं। यौवन से ही उनको देश-पर्यटन करने का शौक था। देशसंचार करने के बाद अपने जन्मस्थान तृक्कण्टियूर वापस आये और वहाँ एक पाठशाला स्थापित करके वे अध्यापक-वृत्ति में प्रवृत्त हुए। माना जाता है कि उन्होंने विवाह किया और एक पुत्री के पिता भी हुए। तृक्कण्टियूर में जब अध्यापक वृत्ति करते थे तभी उन्होंने अध्यात्मरामायण, महाभारत आदि कृतियों की रचना की। वार्धक्य में उन्होंने एक बार और देशसंचार किया, विशेषत: तीर्थों के दर्शन के लिए, ऐसा कहा जाता है। बाद में जो गुरुमठ चिट्टूर में स्थापित हुआ वह भी इस द्वितीय देशसंचार के बादही हुआ, इसमें कोई संदेह नहीं है। सन्देह केवल इस बात पर है कि मठस्थापना स्वयं एऴुत्तच्छन् ने की थी, अथवा उनके शिष्य सूर्यनारायण ने की थी। यह भी संभावना तिरस्करणीय नहीं है कि एऴुत्तच्छन् के आदेशानुसार उनके शिष्य सूर्यनारायणन् ने गुरुजी के स्वर्गवास के बाद मठ की स्थापना की और गुरुजी की पुत्री अथवा नातनी से उनका योगदण्ड, भस्म की थैली, खड़ाऊँ, भागवत आदि ग्रन्थ ले जाकर बाद में उनकी प्रतिष्ठा मठ में की। सन् १८६८ में जो अग्निकाण्ड मठ में हुआ था उसमें अनेक पदार्थ नष्ट हुए, कुछ कमरे जल गये और पास के गाँव के कुछ भवन भी जल गये, परन्तु गुरुजी का योगदण्ड और खड़ाऊँ बच गये। वे आज भी पीठ पर रखे उपलब्ध हैं। पीठ के पास ही किसी गुरु के शिला-पट्टमय ढक्कन सहित एक समाधि भी है। यह समाधि तो शिष्य आचार्य सूर्यनारायण का भी हो सकता है, परन्तु योगदण्ड और खड़ाऊँ महाकवि एऴुत्तच्छन् के ही थे, इसमें कोई सन्देह नहीं हो सकता है। शिष्य सूर्य-नारायण के समय से मठ में कुछ पुण्यदिन आज भी मनाये जा रहे हैं—जैसे महाकवि के श्राद्ध का दिन—यानी मास मार्गशीर्ष उत्तर नक्षत्र का दिन जब, यही माना जाता है कि उन्होंने समाधि प्राप्त की। स्थानीय श्रीराम के मन्दिर में नवरात्रि के दिन दीप जलाये जाते हैं और माह-फागुन में रथोत्सव भी होता है। यही माना जाता है कि यह सब महाकवि एऴुत्तच्छन् की स्मृति में ही किया जाता है।

५. एऴुत्तच्छन् की कृतियाँ—यहाँ प्रश्न उठता है कि महाकवि की असली कृतियाँ कौन-कौन हैं। निम्नलिखित ग्रन्थ उनके नाम से कहीं न

कहीं प्रसिद्ध हुए हैं—१-अध्यात्मरामायणं, २-उत्तररामायणं, ३-महाभारतम् ४-देवीमाहात्म्यं, ५-ब्रह्माण्डपुराणं, ६-शतमुखरामायणम् (सीताविजयं) ७-भागवतं, ८-हरिनामकीर्तनं, ९-चिन्तारत्नं १०-कैवल्यनवनीतं, ११-रामायणं इरुपत्तिनालुवृत्तं, १२-केरलनाटकम्। एऴुत्तच्छन् के सम्बन्ध में वही बात हुई जो पहले कालिदास के सम्बन्ध में हो चुकी थी-- यानी, औरों ने अपनी कृतियों का प्रचार बढ़ाने के लिए उनको कालिदास के नाम आरोपित कर दिया था। परन्तु यह मिथ्यारोपण विद्वानों की विवेकदृष्टि में टिक नहीं सकता है। जहाँ तक एऴुत्तच्छन् से सम्बन्ध है, अध्यात्मरामायणं, महाभारतं, देवीमाहात्म्यं, इन तीनों के सम्बन्ध में विद्वानों का कोई मतभेद नहीं है। औरों के सम्बन्ध में किसी न किसी समालोचक विद्वान् ने एऴुत्तच्छन् के कर्तृत्व पर सन्देह समुद्भावित किया है। इसलिए उनके विषय में सोच-विचारकर निर्णय करना है।

उत्तररामायणं के सम्बन्ध में विद्वानों ने दिखलाया है कि यह ग्रन्थ संस्कृत अध्यात्मरामायण के उत्तरकाण्ड पर, जो अतीव संक्षिप्त है, आधारित नहीं है। अधिक संभव यह है कि वह वाल्मीकि के उत्तरकाण्ड पर, अथवा उस पर आश्रित कण्णश्शरामायणं पर आधारित है। कई समालोचकों के अनुसार भागवतं में इतनी गलतियाँ हैं कि वह एऴुत्तच्छन् जैसे विद्वान् की कृति हो ही नहीं सकती है, पर श्री परमेश्वर अय्यर का अन्तिम निष्कर्ष नीचे दिया जायगा। शतमुखरामायणं भी, जिसका दूसरा नाम 'सीता-विजयं' है, एऴुत्तच्छन् की कृति है इस बात का साधक कोई भी अन्तरङ्ग प्रमाण नहीं मिलता है। 'हरिनामकीर्तनं' के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। जहाँ श्री नारायण पिल्ले और श्री अच्युत मेनन, एऴुत्तच्छन् के कर्तृत्व के पक्ष में हैं वहाँ श्री उल्लूर परमेश्वर अय्यर उसे महाकवि की कृति नहीं मानते हैं। 'चिन्तारत्नं' वेदान्त के तत्त्वों का सरलरीति से प्रतिपादन करनेवाला एक उपदेशग्रन्थ है। कहा जाता है कि महाकवि ने उसे अपनी पुत्री या भाञ्जी की शिक्षा हेतु लिखा था, परन्तु इसके लिए कोई प्रमाण नहीं है। उसके कविता गुणों के निचले स्तरके होने के कारण समालोचक विद्वान् उसे एऴुत्तच्छन् की कृति नहीं मानते हैं। 'रामायणं इरुपत्ति-नालुवृत्तं (चौबीसवृत्त)' के विषय में अब विद्वानों का ऐकमत्य हो गया है कि वह एऴुत्तच्छन् की कृति नहीं है। वह लड़कियों की शिक्षा के लिए पाठशालाओं में इस्तेमाल किया जाता है। यह माना जाता है कि उसके अन्तर्गत भगवान् के नामों के उच्चारण से लड़कियों की भगवद्भक्ति, शब्दव्युत्पत्ति और संगीतवासना उत्पन्न हो जाती हैं। इस ग्रन्थ के चौबीसों वृत्त द्राविड वृत्त हैं। ग्रन्थकर्ता ने कवि पुनं की रामायणचम्पू की अनेक बातों का अपहरण किया। इसी प्रकार भोजचम्पू और आश्चर्यचूड़ा-मणि आदि परग्रन्थों से भी अनेक आशयों का अपहरण हुआ है। अतएव इस

ग्रन्थ को एऴुत्तच्छन् की कृति मानना बिलकुल असंभव है। 'भागवतं' के विषय में विद्वानों में बड़ा मतभेद चला है। बहुत विचार करने के बाद उल्लूर श्री परमेश्वर अय्यर निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचे—"एऴुत्तच्छन् ने श्रीमद्-भागवत का अनुवाद वार्धक्य में ही प्रारम्भ किया और कुछ अंशों को अपनी पुत्री या अपने किसी शिष्य से लिखवाया होगा। ऐसे अंशों को अन्त में स्वयं देखकर संशोधन करने के लिए उनको समय नहीं मिला होगा। इसलिए कुछ त्रुटियाँ रह गयीं हैं पर कृति एऴुत्तच्छन् की ही है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि चिट्टूर के गुरुमठ में आज भी भागवतं की पूजा की जाती है।"[1]

६. अब संदिग्ध ग्रन्थों का विचार छोड़कर महाकवि की असली कृतियों का स्वरूप समझने का प्रयत्न करना उपयुक्त होगा। जैसे पहले ही कहा गया है– अध्यात्मरामायणं, महाभारतं और देवीमाहात्म्यं इन तीनों कृतियों के कर्तृत्व के विषय में विवाद नहीं है। तीनों "किळिप्पाट्टु" = "चिड़िया-गीत" हैं। किळिप्पाट्टु मलयाळम साहित्य की एक विशेष शाखा है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें कथा को कहनेवाली एक चिड़िया, यानी, एक शुकी होती है। कुछ लोग मानते हैं कि कथा सुनाने की यह रीति सबसे पहले एऴुत्तच्छन् ने ही अपनायी थी और बाद में असंख्य कवियों ने उनका अनुसरण किया। जो मानते हैं कि यह रीति एऴुत्तच्छन् के पहले की है वे कोई प्रमाण नहीं दे पा रहे हैं। हाँ, एऴुत्तच्छन् ने अपने किळिप्पाट्टु में जो छन्द इस्तेमाल किये हैं इनमें से कुछ उनके पहले की कृतियों में भी उपलब्ध हैं, परन्तु छन्द एक चीज़ है और किळिप्पाट्टु दूसरी चीज़ है। एऴुत्तच्छन् के बाद यह रीति मलयाळम साहित्य में रूढमूल हो गयी और असंख्य किळिप्पाट्टु लिखे गये हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं। इतनी बड़ी संख्या में आज तक किळिप्पाट्टु ग्रन्थों की उत्पत्ति होने पर भी उनमें कोई भी एऴुत्तच्छन् के महाभारत का तुल्य नहीं है। उन्हीं के अध्यात्मरामायणं और देवीमाहात्म्यं, महाभारत से कुछ निचले स्तर के हैं। वे दोनों कृतियाँ संस्कृतग्रन्थों के अनुवाद हैं। यद्यपि दोनों में महाकवि के मूल में अनुपलब्ध कुछ अंशों को अपनी प्रतिभा के अनुसार जोड़ दिया है, फिर भी अनुवादक होने के कारण उनपर शब्द और अर्थ दोनों के विषय में नियन्त्रण था। महाभारतं की बात दूसरी थी। यहाँ अनुवाद नहीं करना था। संस्कृत में लिखे एक समुद्रसमान ग्रन्थ का मलयाळम में संक्षेप करने का काम था। मूलकथा की रक्षा करते हुए असंख्य वर्णनों और धर्म, नीति आदि उपदेशों को ग्रन्थविस्तारभय से छोड़ना था, अनेक उपाख्यानों को त्यागकर कुछ मार्मिक उपाख्यानों को रखना था। इस प्रकार के काम में शब्दविषय नियन्त्रण

---

१. उल्लूर परमेश्वर अय्यर—केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ५३९-५४०

बहुत कम है और कवि को अपने मूलसिद्धान्त और स्वाभाविक भावों को प्रकट करने के लिए और अपनी प्रतिभा को उड़ने देने के लिए पर्याप्त अवसर मिल जाते हैं। महाकवि एऴुत्तच्छन् एक दार्शनिक थे, बड़े भक्त भी थे। वे मूलतः वेदान्ती थे, पर किसी भी दर्शन के प्रति द्वेष स्वल्प मात्रा में भी उनके दिल में न था। अपनी कृतियों को भक्तिग्रन्थ का रूप देने का उनका पूरा उद्देश्य था। जहाँ अध्यात्मरामायणं एक राम-भक्ति का ग्रन्थ बना, वहाँ महाभारतं एक कृष्णभक्ति का ग्रन्थ है। संस्कृत के समुद्रतुल्य महाभारत को संक्षिप्त करना उनका मुख्य उद्देश्य था, परन्तु लम्बी-लम्बी भगवान् की स्तुतियाँ भी अपने महाभारत में उन्होंने जगह-जगह जोड़ दीं हैं। उन अवसरों पर महाकवि ग्रन्थविस्तार से नहीं डरते हैं। कथा कहने के बीच में भगवान् का संकीर्तन करने का शौक उनको है। शान्तिपर्व की युधिष्ठिरकृत श्रीकृष्णस्तुति इसका एक अच्छा उदाहरण है। उतने लम्बे न सही, पर उस प्रकार के अनेक भक्तिरसमय संदर्भ महाभारतं में बिखरे मिलते हैं। इस प्रकार के नामसंकीर्तनों और स्तुतियों के अवसर पर उनकी भक्ति वस्तुतः परब्रह्म के प्रति है जो सारे विश्व की सृष्टि, स्थिति और संहार के कारण हैं। ऐसे अवसरों पर उनकी दृष्टि में राम, कृष्ण, शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि में कोई भेद नहीं है। जहाँ श्रीकृष्ण की स्तुति चल रही है वहाँ रामावतार के योग्य विशेषणों और संबोधनपदों का प्रयोग मिलता है, वहाँ श्रीराम की भी स्तुति बीच में आ जाती है जैसे कि ऊपर निर्दिष्ट युधिष्ठिरकृत श्रीकृष्ण-स्तुति में। उसमें कहा है—"तू ही ने हनुमान द्वारा सीता का वृत्तान्त सुना है", "तुम ही सुग्रीव के दुःख का नाश करने वाले हो"। इस प्रकार श्रीकृष्ण के नामसंकीर्तन द्वारा रामायण-कथा की मुख्य घटनाओं का निर्देश हो जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि एऴुत्तच्छन् की भक्ति व्यापक थी।

जैसे पहले ही कहा गया है— मुख्य कथा की रक्षा करते हुए, अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा का नियन्त्रण न करते हुए महाकवि ने मलयाळम-संस्कृत के सुन्दर मेल की भाषा में एक अति-विस्तृत कथा को सरल और लोकप्रिय शैली में संक्षेप किया है। कहने के लिए तो यह पूर्वग्रन्थ का संक्षेप है परन्तु एक प्रतिभाशाली कवि का स्वतन्त्र काव्य के समान भी है। इस संक्षेपग्रन्थ में भी प्रकरणानुसार सभी रसों की अभिव्यक्ति बड़े सुन्दर ढंग से की गयी है। भक्तिरस की चर्चा तो हो चुकी है। कवि एऴुत्तच्छन् प्रकृतिवर्णन में और युद्धवर्णन में अत्यन्त कुशल हैं। कर्णपर्व का भीम और दुश्शासन के युद्ध का वर्णन इस तत्त्व का एक अच्छा उदाहरण है। ऐसा कोई पाठक नहीं होगा जो इस युद्धवर्णन को पढ़कर रौद्ररस का अनुभव न करे। कौरव-पाण्डवों

के अन्य युद्धों के वर्णन भी साहित्यिक दृष्टि से उच्चकोटि के हैं, यह मानना ही पड़ेगा। एऴुत्तच्छन् की लेखन-शैली की कुछ विशेषताएँ हैं जिन पर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना अनुपयुक्त नहीं होगा। अनेक स्थलों पर प्रश्नोत्तर के रूप में कथा कही गयी है। कहीं-कहीं कहना कठिन है कि कौन प्रश्न पूँछ रहा है और कौन उत्तर दे रहा है। कवि ने अनुमान करके समझने का भार पाठक के ऊपर छोड़ दिया है। यद्यपि अनुमान करने में कोई कठिनाई नहीं है, फिर भी प्रसादगुण की दृष्टि से इसे एक दोष कहना अन्याय नहीं होगा। एक और कमी यह है कि कभी-कभी पात्रों का निर्देश उनके नाम से न करके उनके पिता या माता या अन्य कोई बन्धु के नाम से किया गया है। जैसे युधिष्ठिर को युधिष्ठर न कहकर दण्डिपुत्र (दण्डी = यम), मार्ताण्डात्मजसुतन् (मार्ताण्ड = सूर्य का आत्मज = पुत्र = यम), पितृपतिजन् (पितृपति = यम), पुण्डरीक-प्रियनन्दननन्दनन् (पुण्डरीकप्रिय = सूर्य का नन्दन = यम) कहा गया है। अर्जुन के विषय में कवि के मन में मुख्य बात यह थी कि वह इन्द्र का पुत्र कहलाता था। अतएव उसे अर्जुन न कहकर 'अदितिसुतवरतनयन्' (अदितिसुत = देव, देवों का वर = नायक = इन्द्र, उसका तनय = अर्जुन), आदितेयाधिपपुत्रन् (आदितेय = देव, उनका अधिप = इन्द्र, उसका पुत्र = अर्जुन), त्रिदशपतिसुतन् (त्रिदश = देव, उनका पति = इन्द्र, उनका सुत = अर्जुन), अमरवरतनयन् (अमरवर = इन्द्र, उसका तनय = अर्जुन), विबुध-पतिसुतन् (विबुध = देव, उनका पति = इन्द्र, उनका सुत = अर्जुन), अदितितनयवरनन्दनन् (अदितितनय = देव, उनका वर = इन्द्र, उनका नन्दन = अर्जुन), वज्रधरात्मजन् (वज्रधर = इन्द्र, उनका आत्मज = अर्जुन), धराधरवाहनसूनुः (धराधर = मेघ, वही वाहन जिसका = इन्द्र, उनका सूनु = अर्जुन), मेघवाहननन्दनन् आदि विशेषणपदों के द्वारा निर्देश किया गया है। कभी कभी पात्र का निर्देश पिता के भी पूर्वज पितामह के नाम से किया गया है। जैसे अभिमन्यु को 'आदितेयाधिपपुत्र-तनयन्' कहा है (आदितेयाधिप = इन्द्र, उनका पुत्र = अर्जुन, उनका तनय = अभि-मन्यु)। कभी कभी गुरुशिष्यसंबन्ध के आधार पर भी पात्रों का निर्देश हुआ है। जैसे द्रोणाचार्य को 'अङ्गजारातिशिष्यशिष्यन्' कहा है (अङ्गज = कामदेव, उसका अराति = शिव, उनका शिष्य = परशुराम, उनका शिष्य = द्रोण)। यद्यपि इस प्रकार के निर्देश प्रायः जल्दी समझ में आ जाते हैं तथापि कभी-कभी सोचना पड़ता है जिससे समझने में विलम्ब हो जाता है। उसका एक अच्छा उदाहरण यह है 'शङ्करशिष्यशिष्यप्रियशिष्यशिष्यन्' (महाभारतं–द्रोणपर्व)। यह कौन है। शिवजी के शिष्य के शिष्य के प्रियशिष्य के शिष्य। निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता है। प्रसङ्ग तो द्रोणवध का है। द्रोण और धृष्टद्युम्न में युद्ध होनेवाला है।

इस प्रकार निर्दिष्ट कोई वीर युद्ध करने के लिए आगे बढ़ रहा है। कौन ? द्रोण या धृष्टद्युम्न, दोनों में एक हो सकता है। और कोई नहीं। पर बात स्पष्ट नहीं है।

८ किळिप्पाट्टु साहित्य पद्य में लिखा गया है, गद्य में नहीं। यहाँ प्रश्न उठता है कि यह पद्य किन किन छन्दों या वृत्तों में लिखा गया है? यहाँ स्मरण योग्य पहली बात यह है कि यह पद्य संस्कृत के छन्दों में नहीं लिखा गया है। कुछ विद्वानों के मत में किळिप्पाट्टु शैली, यानी एक शुकी द्वारा कथा सुनवाने की शैली एऴुत्तच्छन् की सबसे पहले आविष्कृत है। जो इस शैली को एऴुत्तच्छन् से भी पुरानी मानते हैं वे कुछ दृढ़ प्रमाण नहीं दे पा रहे हैं। हाँ, किळिप्पाट्टु में एऴुत्तच्छन् ने जो वृत्त इस्तेमाल किये हैं उनमें से कुछ उनसे पहले की कृत्तियों में उपलब्ध हैं। किळिप्पाट्टु में प्रायः चार वृत्त दिखाई देते हैं:--(१) केक (२) काकळि (३) कळकाञ्चि (४) अन्ननट। इनमें से पहले तीन एऴुत्तच्छन् से पहले के हैं जैसे कि गुरुदक्षिणप्पाट्टु में दिखाई देते हैं। अब इन चारों का स्वरूप समझने का प्रयत्न करना उपयुक्त होगा। यद्यपि संस्कृत और द्राविड वृत्तशास्त्रों के कुछ साधारण नियम हैं तथापि उनमें भेद ही अधिक हैं। मलयाळम द्राविड परिवार की एक भाषा है। इसलिए इसकी अपनी कविताशैली तमिऴ् की कविताशैली से मिलती जुलती है। जहाँ तक छन्दःशास्त्र से सम्बन्ध है, तमिऴ् और संस्कृत में पर्याप्त अन्तर है। संस्कृत के श्लोक में प्रायः चार पाद होते हैं। प्रथम और द्वितीय पाद मिलकर श्लोक का पूर्वार्ध बनते हैं, तृतीय और चतुर्थपाद मिलकर उसका उत्तरार्ध बनते हैं। जैसे गद्य की इकाई वाक्य है, वैसे ही संस्कृत पद्य की इकाई श्लोक है। तमिऴ् पद्य में श्लोक के स्थान में दो पादों से बनी 'ईरटि' ही पद्य की इकाई होती है। यह नाम 'ईर्' = दो, 'अटि' = पाद, इन दो तमिऴ् शब्दों से व्यत्पन्न है। इसका यह अर्थ नहीं कि तमिऴ् में चार पादवाली पद्य की इकाई बिलकुल नहीं हैं। पर उनकी संख्या बहुत कम है। दूसरी बात यह है कि जिस प्रकार संस्कृत के श्लोक में अर्थ की दृष्टि से परिपूर्णता है। उस प्रकार की परिपूर्णता 'ईरटि' में नहीं है। जैसे संस्कृत के वृत्तों में गुरुलघुनियम, मात्रानियम या अक्षरनियम हैं वैसा कोई नियम तमिऴ् में नहीं है। तमिऴ् में 'अश' की मान्यता है। 'अश' का स्वरूप ही अत्यन्त भिन्न है। वह दो प्रकार का है: नेरश और निरयश। प, पल्, पा, पाल् जैसे एक ही स्वरवाले वर्णसमुदाय को 'नेरश' कहते हैं। पर, परल्, परा, परान् जैसे दो स्वरवाले वर्णसमुदाय को 'निरयश' कहते हैं। इस प्रकार के अशों से तमिऴ् में गण बनते हैं। संस्कृत में तो अक्षरों से गण बनते हैं। इस एक बात से तमिऴ् और संस्कृत वृत्तों का भेद समझ में आ जाता है। 'निरयश'

में दोनों स्वर ह्रस्व हो सकते हैं। अथवा पहला स्वर ह्रस्व और दूसरा दीर्घ भी हो सकता है। वर्णनियम और मात्रानियम, इन दोनों में से एक मलयाळम में अवश्य दिखाई देता है। तमिळ के वृत्तों की भाँति मलयाळम के वृत्त भी गाये जाते हैं, यही उनका मुख्य सादृश्य है। मलयाळम की वृत्त-व्यवस्था में प्रायः श्लोक के घटक-पादों की संख्या अनियत है। कभी कभी कीर्तनों में पादसंख्या का नियम भी दिखाई देता है। जहाँ नियम है वहाँ प्रायः संस्कृत की भाँति चार-चार पादों का एक शील (श्लोक) बनता है। गानशैली का ही प्राधान्य है। यही कारण है कि गुरुलघुक्रम कुछ गौण हो गया है। किळिप्पाट्टु प्रायेण ताल के साथ गाया नहीं जाता है। अतएव इसमें अक्षर-नियम है। गाते समय लघु अक्षर दीर्घ किया जा सकता है, पर दीर्घ अक्षर प्रायः लघु नहीं किया जाता है। जिस प्रकार संस्कृत के आर्याच्छन्द में चार मात्राओं का एक गण बनता है उसी प्रकार यहाँ भी नियत संख्या की मात्राओं से गण बनता है। दो, तीन अथवा पाँच मात्राओं के गण हो सकते हैं। पर इन गणों के अन्दर गुरुलघुक्रम का कोई प्राधान्य नहीं है। गण की कुल कितनी मात्राएँ होनी चाहिए इतना ही नियत है। मलयाळम-वृत्तों की परम्परा में एक गण में तीन अक्षर और पाँच मात्राएँ होती हैं। संस्कृत छन्दःशास्त्र में तीन-तीन अक्षरों के आठ गण माने गये हैं जो इस प्रकार हैं; इनमें — दो मात्राओं का, और ⌣ एक मात्रा का चिह्न है:—

य = ⌣——, र —⌣—, त ——⌣, भ —⌣⌣, ज ⌣—⌣, स ⌣⌣—, म ———, न ⌣⌣⌣। केवल य, र और त में तीन अक्षरों के होते हुए पाँच मात्राएँ भी हो जाती हैं। औरों में मात्राएँ अधिक या कम हैं। जब ईरटि में दो पाद होते हैं और हर एक में चार-चार गण होते हैं तब उसे 'काकळि' वृत्त कहते हैं। काकळि में 'र' गण का सबसे अधिक प्रयोग होता है, उससे कम 'त' गण का और उससे भी कम 'य' गण का। लघु का दीर्घ की तरह उच्चारण हो सकता है, इसलिए भ, ज, स, न इन गणों का भी प्रयोग हो सकता है। केवल मगण का प्रयोग नहीं होता है क्योंकि उसमें पाँच से अधिक मात्राएँ होती हैं। संस्कृत की दृष्टि से काकळि एक बारह अक्षरवाला वृत्त है। काकळि का उदाहरण यह है--

पा रं प ळिक्कि लुं भा र तं चोल्लु वा— २० मात्राएं
—— ⌣।—⌣—।—⌣—।—⌣—
ना रुं म टिक्कोण्ट नीङ्ङुं दु रितङ् ङ ळ। सभापर्व— ५
——⌣।——⌣।——⌣।⌣— ⌣⌣

कभी-कभी काकळि के पाद में लघु अक्षरों के बने गण भी घुस

जाते हैं। कळकाञ्चि काकळि से साम्य रखनेवाला वृत्त है, क्योंकि उसमें भी दो ही पाद हैं और हर एक पाद में बीस मात्राएँ होती हैं। अन्तर इतना ही है कि उसमें प्रथम पाद के आरम्भ के दो या तीन गण पाँच-पाँच लघु अक्षरों से बनते हैं। उदाहरणः--

स क ल शु क कु ल वि म ल ति ल कि त क ळे ब र

‿ ‿ ‿ ‿ ‿। ‿ ‿ ‿ ‿ ‿। ‿ ‿ ‿ ‿ ‿। — ‿ ‿

सा र स्य पी यू ष सा र सर् वस्व मे। अध्य. रा. सुन्द.।

— — ‿। — — ‿। — ‿ —। —‿—

यहाँ प्रथम पाद के प्रथम तीन गण पाँच-पाँच लघु अक्षरों से बने हैं। इसलिए प्रथमपाद कळकाञ्चि है। द्वितीय पाद में लघु अक्षरों के बने गण नहीं हैं। इसलिए वह काकळि ही है। महाभारतं का सभापर्व करीब-करीब संपूर्ण काकळि में ही लिखा है। एक उदाहरण लीजिए:--

दा न या गा दि कळ्क कुळ् ळ फलं कप टु महा-सभा-प।

—‿ —।— ‿ —। — ‿ ‿।— — ‿।

यह काकळि है क्योंकि इसमें पाँच-पाँच मात्रा वाले चार गण हैं। जहाँ मात्रा की कमी है वहाँ गाने से पूरी की जाती है। काकळि और कळ-काञ्चि में मुख्य भेद यह है कि जहाँ काकळि के पाद में बारह अक्षर होते हैं वहाँ कळकाञ्चि के पाद में बारह से अधिक होते हैं क्योंकि इसमें पाँच-पाँच लघु अक्षरों के गण होते हैं और कुल चार गण भी होते हैं। स्मरण रहे कि दोनों में कुल मात्राओं की संख्या बीस है। मणिकाञ्चि भी काकळि से साम्य रखता है। इसमें दो ही पाद होते हैं और हर एक में बीस मात्राएँ होती हैं। कळकाञ्चि से मणिकाञ्चि का इतना ही भेद है कि मणिकाञ्चि में दोनों पादों का प्रथम गण पाँच अक्षरोंवाला होता है। कळकाञ्चियों के बीच कहीं-कहीं मणिकाञ्चि दिखाई देता है। एक सारा पर्व या अध्याय मणिकाञ्चि में लिखा नहीं मिलता है। कभी-कभी इच्छानुसार काकळि में केवल पाँच लघु अक्षरों के बने गण भी मिलते हैं। ऐसी काकळि को 'मिश्रकाकळि' कहते हैं। उदाहरणः--

शि व शि व म नो ह रे शी ल व ति सा दु रं

‿ ‿ ‿ ‿ ‿। — ‿ —। — ‿ ‿ ‿। — ‿ —।

जन् म सा फल य दं चोल् लु कै वल य दं। महा-शल्य.।

— ‿ —। — ‿ —। — ‿ —।— ‿— ।

इसमें प्रथम पाद का प्रथम गण केवल लघु अक्षरों से बना है। तृतीय गण में एक गुरु है और तीन लघु हैं। द्वितीय पाद के अन्तिम गण में अगर एक अक्षर कम है तो उसे ऊनकाकळि कहते हैं। यह पर्वों के आरम्भ में दिखाई देता है। उदाहरणः--

तत् ते व रि क रि कत् तङ् ङि रि म म
— — ⌣। ⌣ ⌣ ⌣। — — ⌣। ⌣ ⌣ ⌣
चित्तं मु हु र पि तें ळिञ् ञि तल् लो। महा-सभा-१
— — ⌣। ⌣ ⌣ ⌣ ⌣ ।⌣ — ⌣।— —।

यहाँ द्वितीय पाद के अन्तिम गण का एक अक्षर कम है। प्रतीत होता है कि केवल वैचित्र्य के लिए कवि ने इस प्रकार का गण सन्निविष्ट किया है। पाँच छः पंक्तियों के बाद साधारण काकळि में लिखा गया है। अगर दोनों पादों का अन्तिम गण दो ही अक्षरवाला है तो उसे द्रुतकाकळि कहते हैं। एक अक्षर कम रखने का अभिप्राय यह है कि तीन या चार मात्राओं का गण बनाना। परन्तु जहाँ कम रखा है वहाँ तीन मात्राओं का गण रखा है। कभी-कभी द्रुतकाकळि में 'म' गण भी रख देते हैं। यह द्रुतकाकळि किळिप्पाट्टु कृतियों में नहीं दिखाई देता है।

केका का हर एक पाद इस प्रकार के छः गण होते हैं—३,२,२; ३,२,२। हर एक गण में कम से कम एक अक्षर गुरु होना चाहिये। सब गुरु हो सकते हैं। हर एक पाद में कुल चौदह अक्षर होते हैं। इनमें से अगर छः ही गुरु हैं तो पाद में कुल बीस मात्राएँ हो सकती हैं। प्रथम पाद अगर गुरु अक्षर से प्रारम्भ होता है तो द्वितीय पाद को भी गुरु अक्षर से प्रारम्भ करना चाहिए। पाद के मध्य में यति आवश्यक है। इस प्रकार हर एक पाद में छः अक्षर गुरु और अवशिष्ट आठ लघु होते हैं। मात्राएँ कुल बीस होती हैं। अगर सभी अक्षर गुरु हैं तो मात्राएँ अठाईस होंगी। इसका नतीजा यह है कि प्रायः मात्राओं की संख्या बीस और अठाईस के बीच में रहती है। उदाहरणः—

चिन्तिच्चु धृ त राष्ट्रन् वि दु रर् त न्ने नोक्कि महा-उद्योग२२मात्राएं
— — ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ — — —
वेन् तु रु कुन्न् नु म नं निंद् र यिल् ले तु मेऱ् नान् २२ मात्राएं
—⌣ ⌣ — ⌣ ⌣ — —⌣— — ⌣ — —
ता त ने न्नो रु भक्ति व हु मा नर् ने हङ् ङळ् २३ मात्राएं
— ⌣ — — ⌣ —⌣ ⌣ ⌣ — — — — —
चे त सि स दा का ल मुए टा क नि मित् त माय २१ मात्राएं
— ⌣ ⌣ ⌣ — — ⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ —
प रस् त्री ज न से व दे व नं मृ ग य युं २० मात्राएं
⌣ — — ⌣ ⌣ — ⌣ — ⌣ — ⌣ ⌣ ⌣ —
वि रक्ति व रा तो रु मद् य पा न वु मे टं २१ मात्राएं
⌣ —⌣ ⌣ — — ⌣ — ⌣ — ⌣ ⌣ — —

अन्ननट के पाद में छ गण होते हैं जिनके प्रथम अक्षर लघु होते हैं और द्वितीय अक्षर गुरु। पाद के मध्य में, अर्थात् तीन गणों के बाद यति होना चाहिये। जहाँ अक्षर लघु है वहाँ पाठ से दीर्घ किया जाता है। महाभारतं के कर्णपर्व से पहले अन्ननट वृत्त मलयाळम साहित्य में कहीं प्रयुक्त नहीं दिखाई देता है यह महाकवि और महाविद्वान् उल्लूर परमेश्वर अय्यर का मत है[1]। उदाहरणः—

ह र! ह र! ह र! शि व! शि व! शि व! महा-कर्ण.।.
⌣– ⌣– ⌣– ⌣– ⌣– ⌣–

पु र ह र! मु र ह र! न त प द!
⌣– ⌣– ⌣–⌣– ⌣– ⌣–

यहाँ अनेक लघु अक्षरों का दीर्घ की तरह उच्चारण करना है और नियमतः किया भी जाता है।

केका, काकळि, कळकाञ्चि और अन्ननट, ये ही चार वृत्त प्रायः किळिप्पाट्टु में दिखाई देते हैं और एळुत्तच्छन् का महाभारतं एक किळिप्पाट्टु है। परन्तु किळिप्पाट्टु के अतिरिक्त और भी प्रकार की कविताएँ मलयाळम साहित्य में प्रचलित हैं। उनमें प्रयुक्त कुछ छन्दों के सम्बन्ध में भी दो शब्द कह देना अनुपयुक्त नहीं होगा। उनमें से सबसे अधिक प्रसिद्ध तुळ्ळल्पाट्टु = कूदगान है। तुळ्ळल् तीन प्रकार के होते हैं-- ओट्टन्, परयन् और शीतङ्कन्। निम्नलिखित वृत्त तीनों के साधारण हैं। इनमें तरङ्गिणी का नाम पहले आता है। उसमें दो-दो मात्राओं के आठ गण होते हैं। चौथे गण के बाद मध्य में यति भी चाहिए। संस्कृत की दृष्टि से यह समवृत्त कहा जायगा, परन्तु ऐसा कोई वृत्त संस्कृत के शास्त्रकारों ने लक्षित नहीं किया है। उदाहरणः—

अ णि। म ति। क लि। युं। सु र। वा। हि नि। युं।
⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। –। ⌣ ⌣। –। ⌣ ⌣। –।

फ णि। प ति। ग ण। फ ण। ग णि। क ळु। म णि। युं।
⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। ⌣ ⌣। –।

द्वितीय उदाहरण में यतिभङ्ग है, परन्तु पाठ के समय वह ठीक किया जाता है। संस्कृत में भगवत्पाद आद्य शङ्कराचार्य का सुप्रसिद्ध स्तोत्र 'भज गोविन्दं' इस वृत्त में लिखा गया है:--

भ ज। गो। विं। दं। भ ज। गो। विं। दं
⌣ ⌣। –। –। –। ⌣ ⌣। –। –। –।

१. उल्लूर परमेश्वर अय्यर--केरल साहित्य चरित्रम् II पृ. ५०३

मलयाळम का उदाहरण लीजिये:—

कौण्टा । ल । द्मण । वि । ल्लुं । शर । बुं ।

कण्टी । ले । तुं । वरु । णमि । दानीं ।

अगर द्वितीय पाद में दो गण कम हैं तो यह 'ऊनतरङ्गिणी' कहलाता है। जैसे:—

सुर । वधु । मा । रुटे । नटु । विलि । दानीं

नर । वधु । चे । रुक । यि । ल्ले ।

उ । च्छ्रय । कां । चन । वळ । कटे । नटु । विल्

पि । च्चळ । वळ । यतु । पो । ले ।

यहाँ द्वितीय और चतुर्थ पादों में दो-दो गण कम हैं। संस्कृत के अनुष्टुप् छन्द के अन्तर्गत वक्त्र नाम का प्रयोग 'तुळ्ळल्' में मिलता है। उदाहरण:—

वि र वे टे गु रु वा यूर्

⌣ ⌣ ⌣ ⌣ ⌣ ⌣ — —

म रु वुं तम् पु रान् कृष्णन

⌣ ⌣ — — ⌣ — — —

त्रिष्टुप् छन्द के अन्तर्गत 'स्वागता' का भी प्रयोग मिलता है। उदाहरण:—

निल लु निल ले ट सु यो ध न कर् ण्णा

— ⌣ — । ⌣ ⌣ ⌣ । — ⌣ ⌣ । — — ।

जगती छन्द के अन्तर्गत सुमङ्गलां वृत्त का प्रयोग भी तुळ्ळल् साहित्य में दिखाई देता है। जैसे:—

म तं न मुक क भि म तं वृ को द रा

⌣ — ⌣ । — ⌣ ⌣ । ⌣ — ⌣ । — ⌣ — ।

त्रिष्टुप् छन्द के अन्तर्गत 'शिताग्रा' वृत्त भी है जिसमें चार-चार मात्रावाले गण होते हैं। शर्त यह है कि प्रथम गण 'ज' हो, अर्थात् मध्य-गुरु हो। उदाहरण:—

वि दग् ध । ना कि य । न ळन् ट्रे । दू तन्

⌣ — ⌣ । — ⌣ ⌣ । ⌣ — ⌣ । — —

वि दर्भ । नल पु र । म टुत् तु । कण्टु

⌣ — ⌣ । — ⌣ ⌣ । ⌣ — ⌣ । — —

जब पाद में छ मात्राओं के बाद यति है, तदनन्तर आठ मात्राएँ हैं, फिर यति है, इस प्रकार कुल चौदह मात्राएँ हैं, तो उसे मदमन्थरा कहते हैं। अक्षर अधिकांश लघु होना चाहिए। उदाहरण:—

प ल व टि वुं वऩ्नु च मङ्ङु
⏑ ⏑ ⏑ ⏑ – – ⏑ ⏑ – –
त ल मु टि युं वऩ्नु तिकञ्ञु
⏑ ⏑ ⏑ ⏑ – – ⏑ ⏑ – –

अन्त में मैं भुवनवाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी पं० नन्दकुमार अवस्थी जी के प्रति अपनी श्रद्धा और कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने मेरे इस महाकवि एऴुत्तच्छन् कृत महाभारतं के लिप्यन्तरण और हिन्दी अनुवाद को प्रकाशन योग्य समझकर स्वल्प समय में ही अपनी ग्रन्थमाला में प्रकाशित किया है। मैंने तो अपनी परदेशी की हिन्दी में अपना अनुवाद का काम किया है। कवि तुञ्चत् एऴुत्तच्छन् की शैली भी अध्यात्मपरायण होने के कारण कहीं-कहीं जटिल हो उठी है। आशा है पाठकगण इसकी रिआयत रखकर, देवनागरी कलेवर में मलयाळम भाषा और महाभारत जैसे सद्ग्रन्थ का लाभ उठाएँगे। अवस्थी जी के सुपुत्र पं० विनयकुमार अवस्थी भी मेरी कृतज्ञता के पात्र हैं जिन्होंने मलयाळम लिपि को बहुत जल्दी सीखकर मुद्रण के प्रारम्भ से ही प्रूफ़ को मूल मलयाळम महाभारतं से मिलाकर संशोधन किया और मेरे प्रूफ़-संशोधन के काम को हल्का किया है। उसी प्रकार भुवनवाणी ट्रस्ट मुद्रणालय के शिल्पी कलाकार भी प्रशंसा और साधुवाद के अतीव पात्र हैं। साक्षात् न होने पर भी, वाणी-सरोवर में प्रकाशित नाना भाषाई ग्रन्थों के विभिन्न नवसिर्जित देवनागरी अक्षरों की, अन्य प्रेसों में दुर्लभ, कृति ही उनकी कुशलता और कर्मठता की साक्षी है। अवस्थी जी से यह जानकर बड़ा हर्ष है कि वे सब सामान्य कर्मचारी की भाँति नहीं, वरन् ईमानदारी और तन्मयता के साथ संस्था में काम करते हैं। भुवनवाणी ट्रस्ट के लिए यह भी एक भगवान् की कृपा है।

॥ शुभमस्तु ॥

को. अ. सुब्रह्मण्य अय्यर

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची

१. उल्लूर परमेश्वर अय्यर—केरल साहित्य चरित्रम्— II पृ. ४८१-५६०।
२. आर्. नारायण पणिक्कर—केरल भाषा साहित्य चरित्रम् II अध्याय ९३, पृ. २३२-४०२।
३. ए. आर. राजराजवर्म्म—वृत्तमञ्जरी—प्रथम.एन.बी.एस.संस्करण-१९६४
४. एऴुत्तच्छन्-महाभारतं-प्रथम. एन.बी.एस. संस्करण—१९६७।
५. एऴुत्तच्छन्-महाभारतं-मंगलोदयं प्रेस, त्रिच्चूर १९३६।
६. एऴुत्तच्छन्-अध्यात्मरामायणं—मंगलोदयं प्रेस, त्रिच्चूर १९२६।

कवि तुञ्चत्तुँ एऴुत्तच्छन्टे

श्री महाभारतम्

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

किळिप्पाट्टु

श्रीमयमाय रूपं तेटुं पैङ्किळिप्पेण्णे !
सीमयिल्लात सुखं नल्कणमेनिक्कु नी । १
श्यामळकोमळनायीटुन्न नारायणन्-
तामरसाक्षन्कथ केळ्प्पानाग्रहिच्चु ञान् २

हिन्दी अनुवाद

कवि तुञ्चत्त् एऴुत्तच्छन् कृत श्री महाभारत

॥ हरिः श्री गणपतये नमः ॥

एक पक्षिगीत[1]

हे श्रीयुत्‌रूपवाली शुककन्ये ! मुझे असीम सुख प्रदान करो। मुझे श्यामल, कोमल और कमलनेत्र भगवान् नारायण की कथा सुनने की बड़ी इच्छा हुई है। उसे मुझे बड़ी भक्ति के साथ ठीक सुनानेवाला

---

१ 'पक्षिगीत' मलयाळम साहित्य का एक विशिष्ट काव्य-प्रकार है। इसमें कथा सुनाने वाली अथवा गानेवाली मादा पक्षी प्रायः एक शुकी (तोती) होती है। इस प्रकार के काव्य का उद्भव कवि एऴुत्तच्छन् के महाभारत के पहले ही हुआ होगा। उसके बाद भी अनेक पक्षिगीत (की रचनाएँ) रची गयीं व आज भी रची जा रही हैं। एऴुत्तच्छन् ने यह कल्पना की है कि जब नैमिषारण्य में द्वादशवार्षिक सत्र (द्वादशवर्षीय यज्ञ) हो रहा था और वहाँ सूत जी ने शौनक आदि मुनियों के प्रार्थना करने पर उनको जब महाभारत की कथा सुनाई, तब एक शुकी भी उसे सुन रही थी। कवि ने शुकी से प्रार्थना की कि मुझे भी उस कथा को सुनाओ। उसने जो सुनाया वही प्राकृत ग्रन्थ है। प्रायः भक्तिरस-प्रधान काव्यों में ही शुकी कथा सुनाती है। कवि एऴुत्तच्छन् ने अपने महाभारत को भक्ति-रस-प्रधान बनाया है।

आरुळ्ळतुरुतरभक्तिपूण्डेन्नोटतु
नेरोटे चोल्लीटुवानेन्नतोर्त्तिरिक्कुम्पोळ् ३
कारणनाय करुणानिधि नारायणन्-
कारुण्यवशाल् निन्नॆ काणाय् वन्नितुमिप्पोळ् । ४
पैदाहादिकळ् तीर्त्तु वैकातॆ परयेणं
कैतवमूर्त्ति कृष्णन्तन्नुटॆ कथामृतम् । ५
एतॊरु दिक्किल्निन्नु वन्नुवेन्नतुं चोल्ली-
टादरवोटुमेन्नु केट्टु पैङ्किळि चोन्नाळ् । ६
मामुनिश्रेष्ठन्मारां शौनकादिकळ् मेवुं
नैमिशारण्यं तन्निल्निन्नु वन्नितुमिप्पोळ् । ७
धीमानामुग्रश्रवस्साकिय सूतन् चोन्नान्
मामुनिमार्क्कु केळ्प्पान् भारतकथामृतम् । ८
अक्कथयोक्कक्केळ्प्पानिन्न पार्त्तितु ञानुं
दुःखङ्ङळतु केट्टाल् पिन्नेयुण्टाकयिल्ल । ९
सक्तियुं नशिच्चीटुं भक्तियुमुरच्चीटुं
भुक्तियिल् विरक्तियुं मुक्तियुं ताने वरुम् । १०
शक्तियोटनुदिनं युक्तनां शिवन् तन्टॆ
व्यक्तियुं विचारिच्चाल् व्यक्तमायक्काणाय् वरुम् । ११

कौन है—मैं ऐसा सोच ही रहा था, तब मूलकारण, करुणानिधि भगवान् नारायण की (दया) से तुम्हारा दर्शन हुआ। १-४ अब भूख और प्यास को शान्त करनेवाला कैतवमूर्ति[1] श्रीकृष्ण का कथामृत पिलाओ। यह भी बतलाओ कि अभी कहाँ से आ रही हो। यह सुनकर शुककन्या ने कहा—५-६ मैं अभी नैमिषारण्य से आ रही हूँ, जहाँ शौनक आदि महामुनि रहते हैं। वहाँ बुद्धिमान सूत उग्रश्रवा ने महामुनियों को भारत-कथामृत सुनाया। उसे पूरा सुनने के लिए मैं भी इतनी देर वहाँ रही (कि जिससे पूरी कथा सुन सकी) क्योंकि उसे सुनने के बाद कोई दुःख नहीं पैदा होगा। विषयासक्ति का नाश हो जायगा, भक्ति स्थिर हो जायगी, भुक्ति[2] से विरक्ति[3] और मुक्ति सहज ही उत्पन्न होगी। जो शिवजी सदा

१ छली दैत्य-राक्षसों को छल से मारने के कारण श्रीकृष्ण जी को कैतवमूर्ति कहा जाता है २ विषयभोग ३ वैराग्य।

युक्तनायीटुं जीवन् परनोटङ्ङिञ्ञालुम्
भक्तवत्सलनाकुं कृष्णन्टे कारुण्यत्ताल् । १२
एङ्किलक्कथयेल्लामेन्ने नी केळ्प्पिक्कणम्
सङ्कटमुण्टु पारं संसारं निनच्चु मे । १३
पङ्कजविलोचनन्तन्कथ चोल्लामेङ्किल्
पङ्कङ्ङळकन्नुपों पण्डुपण्टुळ्ळतेल्लाम् । १४
आदरवोटुकूटे नैमिशवनत्तिङ्कल्
द्वादशसंवत्सरंकोण्टोटुङ्ङीटुन्नोरु । १५
यागवुं तुटङ्ङिनार् शौनकादिकळायो-
रागमज्ञोत्तमन्मारांकिय मुनीन्द्रन्मार् । १६
आगमिच्चितु मुनिमारेस्सेविप्पानप्पोळ्
वेगमोटुग्रश्रवस्साकिय सूतन्तानुम् । १७
आगतनाय सूतन्तन्ने मामुनिजन-
मेकान्ते सत्कारंचेय्तासनादिकळ् नल्कि । १८
इक्कलिमलमुळ्ळिल् पटायवान् तक्कतोरु
सत्कथ चोल्लणं नीयेन्नवर् चोन्ननेरम् । १९

अपनी शक्ति के साथ हैं, उनका प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त होगा। यह भी जान लीजिए कि भक्तवत्सल श्रीकृष्ण की दया से जीव परतत्त्व (ब्रह्म) से युक्त हो जायगा। ७-१२ (कवि ने कहा—) अगर ऐसा है तो वह पूरी कथा मुझे सुनाओ, क्योंकि इस संसार पर विचार करते हुए मुझे अपार दुःख होता है। अगर पंकजविलोचन (भगवान्) की कथा सुनाओगी तो मेरे पुराने से पुराने पाप-पंक भी धुल जायेंगे। १३-१४ शौनक आदि उत्तम शास्त्र के ज्ञाता मुनीन्द्रों ने नैमिषवन के बीच बारह वर्ष में समाप्त होनेवाला एक याग बड़ी श्रद्धा के साथ प्रारम्भ किया। तब सूत उग्रश्रवा मुनियों की सेवा करने के लिए शीघ्र वहाँ पधारे। महामुनियों ने अभ्यागत सूतजी का एकान्त में सत्कार करके उनको आसनादि प्रदान किया, और कहा एक ऐसी सत्कथा सुनाओ, जिससे इस कलियुग का मल स्पर्श न कर सके, (व दूर हो जाय)। १५-१९ (सूतजी ने उत्तर दिया) अगर ऐसा है तो मैं 'भारत' सुना सकता हूँ, जिसे वैशम्पायन ने जनमेजय को भली प्रकार सुनाया था। 'भारत' सुनानेवालों और भक्ति

ऐङ्किल् वैशम्पायनन् जनमेजयनोटुँ
भंगियिलड़ियिच्च भारतं चौंल्लामल्लो । २०
भारतं चोल्लुन्नोक्कुं भक्तरायें केळ्क्कुन्नोक्कुं
पारातें गतिवरुमॆन्तरुळ्चेय्तु मुनि । २१
पाराशर्याख्यन् कृष्णनॆन्नतुं सत्यमत्ते ।
पारमार्थिकमाय तत्त्ववुमतिलत्रें । २२
भवणल्गीता श्रीमत्सहस्रनामादिकळ्
भगवान् वेदव्यासन् भारतमितिलाक्कि २३
निगमादिकळ्पोलुमतिनाल् वन्दिक्कुन्नु
सकलपुरुषार्थङ्ङळुमुण्टतिल् नूनम् । २४
भोगीशवागीशलोकेशादिजनङ्ङळ्क्कु-
माकवालितिनुटें महत्त्वं चौंल्लावल्ले । २५
ओर्क्कुम्पोळपौरुषेयत्वमुण्डितिन्नतो
साक्षाल् वेदङ्ङळ्क्कत्रेयॆन्नल्लो चौंल्लीटुन्नु । २६
एङ्किल् पौरुषेयमायार्षमायपौरुषे-
यांगियायें वरुमेन्ने भारतं वन्नुकूटु । २७

के साथ सुननेवालों की गति शीघ्र ही अच्छी होगी—ऐसा, जो मुनि पाराशर्य कृष्ण ने कहा है, वह सत्य है। यह भी सत्य है कि पारमार्थिक तत्त्व उसी में (प्रतिपादित) है। भगवान् वेदव्यासजी ने भगवद्गीता और श्रीमत्सहस्रनामादि[1] को भारत के अन्तर्गत बनाया है और उसी के द्वारा निगमादि[2] की भी वन्दना करते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि सारे पुरुषार्थ (महाभारत) में हैं। २०-२४ इसीलिए भोगीश[3], वागीश,[4] लोकेश[5] आदि इस (महाभारत) का महत्त्व बतला सकते हैं। विचार किया जाय तो यह अपौरिषेय है, माना कि अपौरुषेयत्व साक्षात् वेदों के लिए ही कहा गया है। इस स्थिति में भारत पौरुषेय, आर्ष[6] और अपौरुषेयांगी[7] ही हो सकता है। इसको द्वैपायन (महर्षि व्यास) के ओष्ठ से प्रकट हुआ कहा गया है, यह नहीं कि द्वैपायन का रचा हुआ। वेद तो चतुरानन (ब्रह्मा) के मुख से उत्पन्न हैं और यह तो वसुधात्मज (वेदव्यास)

१ विष्णु-सहस्रनाम स्तोत्र २ वेद आदि ३ शेषनाग ४ बृहस्पति ५ इन्द्र आदि लोकपाल ६ ऋषिरचित ७ किसी पुरुष के न बनाए हुए के समान।

द्वैपायनोष्ठस्फुटनिस्सृतमॆन्नाकुन्नु
द्वैपायनेन कृतमॆन्नतो चॊल्लीलल्लो । २८
चतुराननमुखसंभवं वेदमितु
वसुधात्मजमुखसंभवमॆन्नेयुळ्ळु । २९
ब्रह्मजं वेदमितु विष्णुजमॆन्नाकयाल्
ब्रह्मत्तॆ प्रतिपादिच्चीटुन्नतितिलल्लो । ३०
संगमट्टुळ्ळ विषयङ्ङळिल् निवृत्तमायॆ
मंगलं वरुत्तुन्न भगवत्संगिसंगं ३१
कैवन्नुकूट्टुमितु केळ्क्किलॆन्नुरचेय्तु
कैवणङ्ङिनान् भूदेवतङ्ङळॆ सूतन् । ३२
दैवभक्तन्माराय शौनकादिकळप्पोळ्
पावनमाय सूतभाषितं केट्टु चॊन्नार् । ३३
वैशम्पायनन् चॊन्न भारतंतन्ने चॊल नी
संशयं तीरुमतिलिल्लातॆ मट्टॊन्निल्ल । ३४
पाशङ्ङळ् नशिच्चु तन्नाशयं तॆळियिक्कुम्
केशवचरितवुमित्र मट्टॊन्निलिल्ल । ३५
कर्मकौशलङ्ङळुं सांख्ययोगादिकळुं
धर्मार्थकाममोक्षं सधिप्पानुपायवुं । ३६

के मुखसे, इतना ही भेद है। वेद ब्रह्मज[1] है और यह विष्णुज[2] और इसी में तो ब्रह्म का प्रतिपादन भी हुआ है। इसको सुनने से (संसार की ओर) आकर्षण पैदा करनेवाले विषयों से निवृत्ति और भगवत्संगियों से मंगल पैदा करनेवाला संग प्राप्त हो जाता है। इतना कहकर सूतजी ने ब्राह्मणों को हाथ जोड़े। २५-३२ देवभक्त शौनकादि मुनियों ने सूतजी के पावन कथन को सुनकर कहा—वैशम्पायनजी का कहा भारत ही सुनाओ। संदेह सब दूर हो जायँगे, क्योंकि ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो उसमें न हो। वह (काम, क्रोध आदि) पाशों को नष्ट करके मन को शान्त करेगा। केशवचरित का ऐसा वर्णन और कहीं नहीं है। सारे कर्म-कौशल, साख्य, योग आदि दर्शन और धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करने के उपाय निर्मल वेदव्यासजी ने इसमें बतलाये हैं। सुख की

१ ब्रह्मा जी से उत्पन्न २ विष्णु के अवतार वेदव्यास से उत्पन्न।

निर्मलन् वेदव्यासनितिङ्कल् प्रयोगिच्चु
शर्मसाधनमितिन्मीतॆ मट्टॊन्निल्लल्लो । ३७
अक्कथयॊक्कॆक्केळ्क्कानुण्टवसरमिप्पोळ्
सल्गुणनिधॆ सूत ! चॊल्लु नी मटियातॆ । ३८
तत्त्वज्ञनाय सूतन् विप्रमामुनिकळॆ-
च्चित्तत्तिलुऱप्पिच्चु वन्दिच्चु भक्तियोटे । ३९
सत्यज्ञानानन्दानन्ताद्वयामृतनाकु-
मुत्तमोत्तमन् कृष्णन्तन्नॆयुं ध्यानंचॆय्तान् । ४०
पाराशर्याख्यन् परमाचार्यन् वेदव्यासन्
कारुण्यमूर्त्ति कृष्णनाकिय गुरुविनॆ ४१
पारातॆ वणङ्ङिनान् भारतीदेवियॆयुं
वारणाननाय विघ्नेशन् पादङ्ङळुम् ४२
वारिजोद्भवनादियाय देवन्मारॆयुं
श्रीशुकसमनाय वैशम्पायननॆयुं
आशयं तन्निल् चेर्त्तु परञ्ञु तुटङ्ङिनान् । ४३

सिद्धि के लिए इससे बढ़कर कोई साधन नहीं है। उन सब कथाओं को सुनने के लिए हमको बड़ी उत्सुकता है। हे सद्गुणनिधि सूतजी ! अविलम्ब सुनाओ । ३३-३८ तत्त्वज्ञ सूतजी ने विप्रों और महामुनियों का ध्यान किया और भक्ति के साथ वन्दन किया। और सत्यज्ञानानन्दात्मक, अद्वय, अमृत, उत्तमोत्तम श्रीकृष्ण जी का भी ध्यान किया; और परमाचार्य, गुरु, कारुण्यमूर्त्ति, पाराशर्य, वेदव्यास कृष्ण को, भारती देवी को और गजानन विघ्नेशजी (श्रीगणेश) के चरणों को प्रणाम किया। और कमल से उत्पन्न ब्रह्मा आदि देवों को और श्रीशुक जी के समान वैशम्पायन को अपने मन में रखकर कहना प्रारम्भ किया। ३९-४३

संग्रहविवरणम् ।

नालायि वेदङ्ङळॆप्पकुत्त वेदव्यासन्
पौलोमं तन्निल् चॊन्नान् भारतसंक्षेपवुम् । १
चित्रमामुदंकोपाख्यानवुं भृगुकुल-
विस्तारङ्ङळुं वह्नितन्नुटॆ शापदियुं- २
आस्तीकंतन्निल् नागगरुडारुणोत्पत्ति
दुग्धाब्धिमथनमुच्चैःश्रवस्सुण्टायतुं ३
अस्तिकन् सर्वसत्रमॊळिच्चप्रकारवुं
अस्तिकन्ननुग्रहं सर्वङ्ङळ् कॊटुत्ततुं ४
परिभाषारूपङ्ङळ् पौलोमास्तिकङ्ङळॆ-
न्नरुळिच्चेय्तु वेदव्यासनां मुनिवरन् । ५
संभवपर्वं तन्निल् मुन्निले सोमान्वय-
संभवं नृपेन्द्रपारम्पर्यं देवासुर- ६
संभवं भुवि तेषामंशावतरणवुं ।
अम्भोजरिपुकुलसन्तति सन्धिप्पिप्पा- ७

विषयानुक्रमणिका

जिन वेदव्यास जी ने वेद को चार भागों में विभक्त किया, उन्होंने पौलोमपर्व में भारत का संक्षेप बतलाया है। और विचित्र उदकोपाख्यान, भृगुकुल का विस्तार, अग्नि-शाप आदि की कथाएँ भी हैं। आस्तीक पर्व में नागों गरुड़ और अरुण की उत्पत्ति, क्षीरसागर का मंथन, उच्चैःश्रवा का प्रादुर्भाव, अस्तीक का सर्पसत्र[1] को समाप्त करना, सर्पों का अस्तीक पर अनुग्रह करना, —यह सब वर्णित है। मुनिवर वेदव्यास जी ने कहा है कि पौलोम और आस्तीक पर्व परिभाषा के रूप में हैं। १-५ और संभवपर्व में पहले सोमवंश की उत्पत्ति, राजाओं की परम्परा, देवों और असुरों का जन्म और पृथ्वी पर उनका[2] अंशावतार वर्णित है। चन्द्रवंश की सन्तति को जारी रखने के लिये कृष्णद्वैपायन ने आदर के साथ विचित्रवीर्य के क्षेत्रों (पत्नियों) में धृतराष्ट्र आदि तीन पुत्रों को उत्पन्न किया। ६-८ वेदव्यास जी ने सुन्दर ढंग से निम्नलिखित बातें

१ नागयज्ञ २ देव और दानव दोनों का अंशावतार।

नम्पोटु विचित्रवीर्यक्षेत्रङ्ङळिल् कृष्णन्
संभविप्पिच्चु धृतराष्ट्रादि पुत्रत्रयम् । ८
मार्त्ताण्डसुतन्नु माण्डव्यशापोत्पत्तियुं
शूद्रयोनियिलवन् विदुरनायवारु ९
धार्तराष्ट्रोल्पत्तियुं पाण्डुपुत्रोल्पत्तियुं
पार्थिवनाय पाण्डु तापसशापवशाल् १०
माद्रीसंगमं कोण्टु मरणं प्रापिच्चतु-
मास्थया शेषक्रिया पुत्रन्मार् चेय्तवारुम् । ११
पाण्डवरुटे नगरप्रवेशनादियुं
पाण्डुपूर्वजनवरोटु वर्त्तिच्चवारुम् १२
शारद्वतोत्पत्तियुं भरद्वाजोत्पत्तियुम्
भरद्वाजात्मजनामश्वत्थामोल्पत्तियुम् १३
विद्यभ्यासवुं गुरुदक्षिणादियुं तम्मिल्
विद्वेषं मुळ्ळत्तुं धृष्टद्युम्नोल्पत्तियुं १४
जातुषगृहदाहं काननप्रवेशवुम्
मातुराधिकळ् कण्टु वातनन्दनतापं १५
हिडुम्बवधं भीमहिडुम्बीसमागमं
हिडुम्बितन्निल् भीमतनयनुण्टायतुम् १६

संभवपर्व में लिखी हैं—माण्डव्य द्वारा मार्त्ताण्डपुत्र का शाप और उसका शूद्रयोनि में विदुर के रूप में जन्म, धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्रों की उत्पत्ति, राजा पाण्डु का तपस्वी के शाप के अनुसार माद्री के साथ संगम होने पर प्राप्त मृत्यु और उनके पुत्रों के द्वारा उनकी अन्त्येष्टि का अनुष्ठान, ९-११ पाण्डवों का नगर-प्रवेश आदि, उनके साथ पाण्डु के अग्रज (धृतराष्ट्र) का बर्ताव, शारद्वत की उत्पत्ति, भरद्वाज की उत्पत्ति, भरद्वाज के पुत्र अश्वत्थामा की उत्पत्ति, विद्याभ्यास, गुरुदक्षिणा आदि, परस्पर द्वेष का बढ़ना, धृष्टद्युम्न की उत्पत्ति, लाक्षागृह का दाह, काननप्रवेश, माता के दुःखों को देखकर वात-नन्दन (भीमसेन) का अन्तस्ताप, हिडिम्ब का वध, भीम और हिडिम्बी का समागम, हिडिम्बी से भीमपुत्र (घटोत्कच) का जन्म, १२-१६ एकचक्र में निवास, बकासुर का निग्रह आदि, एकान्त में वेदव्यास जी का आगमन और उनके साथ संवाद

एकचक्रावासवुं बकनिग्रहादियुम्
एकान्ते वेदव्यासप्राप्तिसंवादादियुम् १७
द्रौपदीस्वयंवराकर्णनयात्रादियुम्
तापसद्विजसमागमसल्लापादियुम् १८
अंगारवर्णोपाख्यानत्तिल् वासिष्ठादिवुम्
श्रृंगाररसपूर्णसंवरणोदन्तवुम् १९
धौम्यतापसवरोपाध्यायोपलब्धियुम्
ब्राह्मणरायिप्पाञ्चालालयं पुक्कवारुम् २०
धार्मिकन् धृष्टद्युम्ननुत्सवं घोषिच्चतुम्
काम्यांगि पाञ्चालिक्कु भूपतिप्रबोधनम् २१
यन्त्रच्छेदवुं पंचेन्द्रोपाख्यानवुं पिन्ने-
क्कुन्तीनन्दनन् राजसञ्चयं जयिच्चतुम् २२
द्रौपदीस्वयंवरं विदुरागमनवुम्
भूपतिनियोगत्ताल् धर्मजाभिषेकवुम् २३
अर्धराज्यवुमिन्द्रप्रस्थलब्धियुं तत्र
सत्वरं श्रीनारदनॆळुन्नळ्ळियवारुम् २४
सुन्दोपसुन्दोपाख्यानादियुं पाञ्चालियां
सुन्दरितन्नॆप्पर्यायत्तोटॆ वहिच्चतुम् २५

आदि, द्रौपदी-स्वयंवर के समाचार का श्रवण और वहाँ की यात्रा आदि, तापसों और द्विजों के साथ मेल-मिलाप और बातचीत आदि, अंगारवर्णोपाख्यान के अन्तर्गत वासिष्ठोपाख्यान, श्रृंगाररस-पूर्ण संवरण का वृत्तान्त, तापसवर धौम्य की उपाध्याय के रूप में उपलब्धि, ब्राह्मण बनकर पाञ्चालदेश में प्रवेश, धार्मिक धृष्टद्युम्न की स्वयंवरोत्सव की घोषणा, काम्यांगी[1] पाञ्चाली को आये हुए भूपतियों का नामनिर्देश, यन्त्रच्छेद[2], पञ्चेन्द्रोपाख्यान, अर्जुन का राजाओं के समूह को जीतना, द्रौपदी का स्वयंवर, विदुर जी का आगमन, भूपति की आज्ञा से युधिष्ठिर का अभिषेक, अर्धराज्य और इन्द्रप्रस्थ की प्राप्ति, वहाँ नारद जी का पधारना, सुन्दोप-सुन्दोपाख्यान, सुन्दरी पाञ्चाली का पर्याय (बारी-बारी) से विवाह, १७-२५

१ कामनावाली २ मछली-भेदन।

अर्जुनतीर्थयात्रा सुभद्राहरणवु-
मर्जुनसुतनभिमन्युवुण्टायतुम् २६
पञ्च द्रौपदेयन्मारुण्टाय प्रकारवुम्,
सञ्चितं द्रव्यं दानं चेय्ततुं धर्मात्मजन् २७
खाण्डवदाहादियुं गाण्डीवलाभादियुम्
पाण्डवशौर्यवुमाखण्डलविजयवुम् २८
तक्षकसुतराय पक्षिकळ् नालुमाशु-
शुक्षणि दहियाते काननं दहिच्चतुम् २९
नन्दपालोपाख्यानमेन्निव देदव्यासन्
सुन्दरमायि चोन्नान् संभवपर्व तन्निल् । ३०
इरुनूट्टिरुपत्तेट्टध्यामुण्डु चोल्किल्
सरसमेण्णायिरत्तिल्पुरं तोळ्ळायिर- ३१
त्तेण्पत्तिनालु पद्यमुम्पर्कु मनोहरम्
मुन्पिले पर्वमतु संभवमतु नामम् ३२
रण्टामतल्लो सभापर्वमेन्नरियेण-
मुण्टतिल् कथ पलतोट्टतुं संक्षेपिक्काम् । ३३
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कल् मयनां शिल्पिश्रेष्ठन्
पाण्डवन्तनिक्कोरु सभयो निर्मिच्चतुम् ३४

अर्जुन की तीर्थयात्रा, सुभद्राहरण, अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु का जन्म, द्रौपदी के पाँचों पुत्रों का जन्मक्रम, धर्मराज युधिष्ठिर को अपने संचित द्रव्य का दान करना, खाण्डवदाह और गाण्डीव का लाभ, पाण्डवशौर्य, आखण्डल (इन्द्र) की विजय, अग्नि का तक्षकपुत्र चार पक्षियों को बचाकर कानन को जलाना, और मन्दपालोपाख्यान—इस प्रकार (भगवान्) वेदव्यास ने संभव पर्व में सुन्दर वर्णन किया । २६-३० उसमें दो सौ अठाईस अध्याय हैं और आठ हज़ार नौ सौ चौरासी सरस एवम् मनोहर श्लोक हैं तथा पहले पर्व का नाम है, संभवपर्व । ३१-३२ (आप यह भी) जान लीजिये कि दूसरे पर्व का नाम है सभापर्व । उसमें अनेक कथाएँ हैं । उसका भी संक्षेप (वर्णन) करूंगा । खाण्डवप्रस्थ में शिल्पिश्रेष्ठ मय[1] का पाण्डव के लिए एक

[1] मयासुर नाम के एक शिल्पकला के विद्वान, ये दैत्यों के शिल्पी थे ।

पाण्डित्यमेऱ्‍युळ्ळ नारदनॆळुन्नळ्ळि
पाण्डुनन्दननोटु चोदिच्चप्रकारवुम् ३५
माधवन् मागधनॆ मारुतितन्नॆक्कॊण्टु
बाध भूपर्क्कु तीर्प्पिन् कॊल्लिच्चप्रकारवुम् ३६
मारुतिप्रमुखन्मार् दिक्कुकळ् जयिच्चतु-
मोरोरो राजाक्कन्मार् करङ्ङळ् कॊटुत्ततुम् ३७
धर्मजन् राजसूयं चॆय्ततुं भगवानाल्
दुर्मति शिशुपालन् मुक्तियॆ लभिच्चतुम् ३८
पार्थिवेन्द्रावभृतस्नानघोषादिकळुम्
धार्तराष्ट्रौघश्रेष्ठन् काट्टिय गोष्टिकळुन् ३९
स्थलतामतिकॊण्टु जळतकलर्न्नतुम्
बलवान् वृकोदरनुच्चत्तिल् चिरिच्चतुम् ४०
सत्रपं सुयोधनन् हस्तिनं पुक्कवारुम्
निस्त्रपं शकुनितान् चूतिनु कोप्पिट्टतुम् ४१
चूतिङ्ङल् चतिचॆय्तु नाटॊक्कॆप्परिच्चतुम्
माधवन् पाञ्चालियॆप्पालिच्च प्रकारवुम् ४२

सभा का निर्माण, बड़ा पाण्डित्य रखनेवाले नारद जी का पधारना और पाण्डुनन्दन से प्रश्न पूछना, भूपतियों की पीड़ा समाप्त करने के लिए माधव (कृष्ण) का मारुति (भीमसेन) द्वारा मागध (जरासन्ध) का वध कराना। भीमसेन आदि का दिग्विजय करना, विभिन्न राजाओं द्वारा कर देना, युधिष्ठिर का राजसूयानुष्ठान, भगवान् के द्वारा दुर्मति शिशुपाल का मुक्ति प्राप्त करना, पार्थिवेन्द्र (युधिष्ठिर) के अवभृतस्थान[1] की घोषणा, धार्तराष्ट्रसंघ के श्रेष्ठ (दुर्योधन) की चेष्टाएँ, जल का स्थल समझने से (दुर्योधन का) अतिशय जड़-ज्ञान, बलवान वृकोदर का उच्चस्वर से हँसना, लज्जा के साथ सुयोधन का हस्तिनापुर को लौटना, लज्जा के विना शकुनि की जुआ खेलने की तैयारियाँ, जुए में कूट[2] प्रयोग करके (पाण्डवों से) सारे देश को छीन लेना, माधव द्वारा पाञ्चाली[3] की रक्षा, ३३-४२ गान्धार (शकुनी) का दुबारा जुआ (खेलने) के लिए बुलाना, कुन्तीनन्दन (युधिष्ठिर) का हार जाना और वन चले जाना, तथा दुःखों का अनुभव करना—इस प्रकार

१ यज्ञ के उपरान्त स्नान को अवभृथ स्नान कहते हैं २ छल-कोशल ३ द्रौपदी।

गान्धारन् रण्टामतु चूतिनु तुनिञ्ञतुम्
कौन्तेयन् योट्टु वनं पुक्कतु दुःखङ्ङळुम् ४३
इङ्ङने पुनर्द्यूतपर्यन्तमायिच्चोन्नान्
मंगलं सभापर्वं कृष्णनां वेदव्यासन् ४४
अध्यायमेळुपत्तिरण्टुण्टेन्नरिञ्ञालुम्
पद्यङ्ङळ् नालायिरत्तञ्ञूरुं पतिनोन्नुम् । ४५
धार्मिकन् धर्मात्मजन् काननं पुक्कशेषं
धौम्योपदेशाल् सूर्यन्तन्ने सेविच्चवारुम् ४६
सौदनमाय पात्रं सूर्यन् नल्कियवारुम्
भूदेवयतिजनभोजनमुट्टात्ततुम् ४७
कृम्मीरासुरन्तन्ने मारुति कोन्नवारुम्
धर्मजादिकळ्तम्मेक्काण्मानायविटेय्क्कु ४८
धर्मराजाङ्गभूतन् विदुरर् वन्नवारुम्
धर्मस्थापनकरन् गोविन्दन् नारायणन् ४९
निर्मलन् जगन्मयन् चिन्मयन् मायामयन्
सन्मयन् कर्मसाक्षि निर्मर्यादिकळक्कोरु ५०
धर्मनायकन् परब्रह्मनां विष्णुमूर्त्ति
जन्मनाशादिहीनन् कल्मषविनाशनन् ५१
निर्ममन् निरुपमन् कृष्णनङ्ङेळुन्नळ्ळि
सम्मोदं धर्मात्मजन्माविन्नु वळर्त्ततुम् ५२

कृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी ने दुबारा जुआ खेलने (की कथा) तक मंगलमय सभापर्व सुनाया। जान लीजिए कि उसमें बहत्तर अध्याय और चार हजार पाँच सौ ग्यारह श्लोक हैं। ४३-४५ धार्मिक, धर्मराजपुत्र युधिष्ठिर के वन-प्रवेश के उपरान्त उनका धौम्य के उपदेशानुसार सूर्य की सेवा करना, और सूर्य का एक भात से भरे पात्र का दान करना और ब्राह्मणों तथा संन्यासियों आदि के भोजन का कष्ट न होना, मारुति (भीम) द्वारा कृम्मीरासुर का वध, धर्मज (युधिष्ठिर) आदि के दर्शन के लिए धर्मराज के सदृश धर्मात्मा विदुर जी का पधारना, धर्मसंस्थापक, गोविन्द, नारायण, निर्मल जगन्मय, चिन्मय, मायामय, सन्मय, कर्मसाक्षि, मर्यादारहितों के नाशकर्त्ता, परब्रह्म, विष्णुमूर्ति जन्मनाशादिहीन, पापहारी, निर्मम, निरुपम,

पाञ्चालादिकळाय संबन्धिसमागमं
पाञ्चालीशोकादियुं वेदव्यासागमनं ५३
फल्गुनन् तपस्सिन्नाय निर्गमिच्चतुंपिन्ने
भर्गनां भगवानुं पार्वतीदेवितानुं ५४
कट्टाळवेषत्तोटु प्रत्यक्षमायवारुम्
वाट्टमेन्तिये तम्मिल् कलहमुण्टायतु-५५
मीशनाल् पाशुपतमवनु कोटुत्ततु-
माशु दिक्पालादिकळविटे वन्नवारुम् ५६
अर्जुनन् वासवनेक्कण्टवन् नियोगत्ताल्
निर्जरारिकळतम्मे वधिच्चप्रकारवुम् ५७
पार्थनुर्वशियुटे शापमुण्टायवारुम्
गोत्रारि तेळिञ्ञनुग्रहिच्चप्रकारवुम् ५८
पार्थनिङ्ङिने सुरलोकं वाळुन्नकालं
पार्थिवन्तन्नेक्काण्मान् बृहदश्वागमनं ५९
धर्मजदुःखं तीर्प्पान् तापसनरुळ्चेय्तु
निर्मलनळोपाख्यानादियुमगस्त्यन्टे ६०
पवित्रचरित्रमां विचित्रकथादियुं
कलत्रप्राप्तिमुखवातापिदहनवुं ६१

श्रीकृष्णजी का पधारना और धर्मराज का सम्मोद बढ़ाना, पाञ्चाल आदि संबन्धियों का आगमन, पाञ्चाली का शोक, वेदव्यासजी का आगमन, ४६-५३ अर्जुन का तप करने के लिए चले जाना और शिवजी और पार्वतीजी का किरात[1] के रूप में प्रत्यक्ष हो जाना तथा शिवजी और अर्जुन का परस्पर युद्ध, शिवजी का अर्जुन को पाशुपतास्त्र का दान, तत्क्षण ही दिक्पालों का वहाँ पधारना, अर्जुन को इन्द्र का दर्शन और उनकी आज्ञा से देवताओं के शत्रुओं का संहार, उर्वशी द्वारा पार्थ (अर्जुन) को शाप, और इन्द्र का प्रसन्न होकर पार्थ पर अनुग्रह करना, पार्थ[2] (अर्जुन) का इस प्रकार सुरलोक में निवास करते समय, (युधिष्ठिर) को देखने के लिए बृहदश्व का आगमन, और उनके दुःखों को दूर करने के लिए नलोपाख्यान सुनाना,

१ भील २ पार्थ शब्द बहुधा कुन्ती के तीन पुत्रों के लिए ही प्रयोग किया गया है। कहीं-कहीं नकुल, सहदेव, कर्ण के लिए भी इस शब्द का प्रयोग हुआ है।

शक्रनुमग्नियुमाय् शिबितन् धर्मस्थिति
पक्षिवेषत्ताल् परीक्षिच्चुकोण्टङ्ङिन्ङ्ङ्तुं ६२
पण्डितश्रेष्ठनृष्यशृङ्गनायीटुन्न वै-
भण्डकनुटे तपोबलतुं माहात्म्यवुं ६३
जामदग्न्यनाल् बहुहैहयवधादियुं
कोमळमाय सुकन्योपाख्यानवुं पिन्ने ६४
च्यवनोपाख्यानवुमवनु नासत्यन्मार्
नवकोमलरूपं नल्कियप्रकारवुं ६५
ताततेयष्टावक्रन् सोमकसुतेष्टिवि-
वादे वीण्टतुं सव्यसाचिवृत्तान्तङ्ङळुम् ६६
अमरेन्द्रानुज्ञया समरे शक्रात्मज-
नमरारातिकळेयरुतिप्पेटुत्ततुम् ६७
अर्जुनन्तन्नेक्कण्टु मट्टुळ्ळोर् सुखिच्चतु-
मर्जुनाग्रजन् जटासुरने वधिच्चतुम् ६८
मारुति सौगन्धिकं पुष्पत्ते हरिच्चतुम्
मारुतीरूपं कण्टु मारुति पेटिच्चतुम् ६९

फिर अगस्त्य मुनि के पवित्र चरित्र का विचित्र वर्णन, वातापि का भस्म होना, इन्द्र और अग्नि का राजा शिवि की धर्म-स्थिति की, पक्षिवेष[1] रूप धारण करके परीक्षा करना, विभाण्डकपुत्र, पण्डितश्रेष्ठ, ऋष्यश्रृंग का तपोबल और माहात्म्य ५४-६३ जामदग्न्य परशुराम द्वारा हैहयों[2] का वध, कोमल सुकन्या का उपाख्यान, च्यवनोपाख्यान और च्यवन को अश्विनी-कुमारों के द्वारा एक नया, कोमल रूप प्रदान करना, सोमक के पुत्र द्वारा इष्टियज्ञ के विवाद के अवसर पर अष्टावक्र का पिता जी की रक्षा करना, सव्यसाचि (अर्जुन) के वृत्तान्त, अमरेन्द्र की अनुज्ञा से शक्रात्मज (अर्जुन) का युद्ध में देवताओं के शत्रुओं का नाश करना, अर्जुन को देखकर औरों का सुखानुभव करना, अर्जुनाग्रज (भीम) द्वारा जटासुर का बध, मारुति का सौगन्धिक[3] पुष्प को ले आना, मारुति (हनुमान) का रूप देखकर मारुति

१ बाजपक्षी २ हैहयराज कार्त्तवीर्यार्जुन के पुत्र-पौत्रों का ३ सौगन्धिक तथा कल्हार ये दोनों शब सायंकाल में खिलने वाले श्वेतकमल को कहते हैं (अमर० वारिवर्ग ३६)।

अन्धनामन्धात्मजन्तन्नुटै घोषयात्र
गन्धर्वाधिपकृतबन्धनमवर्कळै ७०
कुन्तीनन्दनन् तन्नै वीण्टुकोण्टतुं पिन्नै
स्सिन्धुरगमनयां पाञ्चालीहरणार्थं ७१
सिन्धुराजागमनं गन्धवाहजकृत-
बन्धनं कुन्तीसुतबन्धुबन्धनहरं ७२
दण्डिपुत्रनैक्काण्मान् मार्कण्डेयागमनं
पण्डितन् मार्कण्डेयन् मार्ताण्डान्वयत्तिङ्कल् ७३
कुण्डलीश्वरशायि रामनाय पिरन्नतुम्
पुण्यकळाय नानाकथकळ् मट्टुळ्ळतुम् ७४
पाण्डवशोकं तीर्प्पान् अरुळ्चेय्ततुं पिन्नै
गाण्डीवधरप्रियन् माधवन् जगन्नाथन् ७५
पाण्डवन्मारेक्काण्मानैळुन्नळ्ळियवारुम्
द्रौपदीसत्यसंवादङ्ङळुम् भीष्मद्रोण-७६
पावनकथकळुमिन्द्रद्युम्नन्टै कथ
एन्निव केट्टु तेळिञ्ञिरुन्नीटिनकालं ७७
कर्णकुण्डलकवचादिकळमरेन्द्रन्
विप्रनाय् प्रतिग्रहिच्चीटिनप्रकारवुम् ७८

(भीम) का डर जाना, अन्धे अन्धपुत्र (दुर्योधन) की घोषयात्रा, गन्धर्वाधिप (चित्ररथ) द्वारा कौरवों का बन्धन और कुन्तीनन्दन का उनको छुड़वाना, गजगामिनी पाञ्चाली के हरण करने के लिए सिन्धुराज जयद्रथ का आगमन और भीमसेन द्वारा उसका बन्धन और युधिष्ठिर के कथन से उसका मोक्ष, ६४-७२ दण्डिपुत्र (युधिष्ठिर) के दर्शन के लिए मार्कण्डेय का आगमन, पाण्डवों का शोक दूर करने के लिए विद्वान मार्कण्डेय का शेषनाग पर शयन करनेवाले भगवान् विष्णु द्वारा सूर्यवंश में श्रीराम का रूप धारण करने की तथा अन्य कथाएं सुनाना, उसके बाद गाण्डीवधारी अर्जुन के प्रिय बाँधव जगन्नाथ (श्रीकृष्ण) का पाण्डवों के दर्शन के लिए आना, द्रौपदी-सत्यसंवाद, भीष्म और द्रोण की पावन कथाएँ, इन्द्रद्युम्न की कथा—ये सब सुनकर जब प्रसन्न थे तब इन्द्र का एक विप्र का रूप धारण

१ घोसियों के ग्राम में जाना ।

तल्प्रसादार्थमोरु शक्ति नल्कियवारुम्
हरिणरूपनेकनरणियेट्टुकॊ- ७९
ण्टरण्यं पुक्कानन्नोरारणन् दुःखं तीर्प्पान्
अटवितन्निल् तेटिनटन्ना पाण्डवन्मा- ८०
क्किटरायतुं दाहं मुळ्त्तिट्टुनेरं
तण्णीरन्वेषिप्पानाय् पोयनुजन्मारेल्लां ८१
तण्णीरुं कुटिच्चोक्के मरिच्चप्रकारवुम्
धर्मजन् तानुं चेन्नु तण्णीर् कोरियशेषं ८२
धर्मराजेन् कृत धर्मप्रश्नङ्ङ ळेळ्ळां
धर्मजन् परिग्रहिच्चुत्तरं परञ्ञतुम् ८३
धर्मराजानुज्ञया जीविच्चोरनुजन्मार्
धर्मराजात्मजनोटोन्निच्चु वसिच्चतुम् ८४
मून्नामताय पर्वमरण्यंतन्निल् चोन्नान्
आम्नायव्यासन् कृष्णन् तापसन् द्वैपायनन् । ८५
अध्यायमतिलिरिनूऱुपत्तोम्पतिल्
पद्यङ्ङळुण्टु पतिनायिरत्तरुनूऱ्- ८६
नुत्तरमरुपत्तुनालुमेन्नरियेणम् ।
उत्तमं पवित्रमितेत्रयुं पार्त्तुकण्टाल् । ८७
पाराशर्याख्यन् मुनि नालां पर्वत्तिल् चोन्नान्
वैराटराज्यं तन्निल् धर्मजादिकळेल्लां- ८८

कर कर्ण के कुण्डल और कवच का दान लेना ७३-७८ और उनकी प्रसन्नता के लिए एक शक्ति प्रदान करना, किसी का हिरन बनकर एक ब्राह्मण की अरणि चुराकर वन में घुस जाना, ब्राह्मण का दुःख दूर करने के लिए पाण्डवों का सारे वन में अरणि ढूंढना, थक जाना, प्यास के मारे पानी ढूँढने के लिए सहदेव आदि चार भाइयों को क्रमशः भेजना, उनका पानी पाकर व उसे पीकर मर जाना, फिर युधिष्ठिर का स्वयं पानी पीने जाना, वहाँ धर्मराज के धर्म-प्रश्नों का उत्तर देना और अन्त में धर्मराज का चारों भाइयों को जीवित करना, और फिर उनका धर्मराज के पुत्र के साथ सुख से रहना, ७९-८४ ये सब कथाएँ वेदव्यास, तापस, कृष्णद्वैपायन ने तीसरे अरण्य नामक पर्व में कही हैं, उनमें दो सौ उनहत्तर अध्याय हैं जिनमें कुल दस हजार छः सौ चौसठ श्लोक

मोरोरो नामं वेषं कैक्कोण्टु छन्नन्मारायु
ओराण्टु वसिच्चनाळुळ्ळोरु कथयेल्लां ८९
राजसेवक-वृत्ति धौम्यन् चौल्लियवारुम्
व्याजनिर्व्याजं मत्स्यनगरप्रवेशनं ९०
मल्लनिग्रहं पिन्ने कीचकादिकळ्वधं
निर्लज्जन् सुयोधनन्तन्नुटे निरूपणं ९१
गोग्रहणादिकळुं विजयविजयबुं
फाल्गुनितन्नालन्नाळुत्तराविवाहवुम् ९२
व्यक्तमायु विराटपर्व्वं तन्निल् पाराशर्यन्
भक्तिवर्धनकरं सत्यमायरुळ्चेय्तान् । ९३
अध्यायमरुपत्तेळेन्नयुं मनोहरं
चित्रार्थं मूवायिरत्तञ्जूरु पद्यङ्ङळुम् । ९४
स्वैरमायुपप्लाव्ये पाण्डवरिरुन्नतुम्
शौरियै वरिप्पान् दुर्योधनन् वन्नवारुम् ९५
चौर्यनिद्रयेप्पूण्टु भगवान् किटन्नतुम्
शौर्यमेरीटुं पार्थन् कृष्णनै वरिच्चतुम् ९६

हैं। निकट से देखने में यह (भारत) उत्तम और अत्यन्त पवित्र है। चौथे पर्व में मुनि पाराशर्य ने निम्नलिखित कथाएँ कही हैं। ८५-८८ युधिष्ठिर आदिकों के नाम और वेष बदलकर प्रच्छन्नरूप में एक वर्ष विराट राज्य में रहते समय किये गये कार्यों का वर्णन, धौम्य का राजसेवक की वृत्ति[1] का उपदेश, व्याजनिर्व्याज[2] मत्स्यनगर प्रवेश, पहलवानों को हराना और कीचकादि का वध, निर्लज्ज सुयोधन के विचार, गायों को अधिकार में कर लेना और विजय (अर्जुन) की बिजय, फाल्गुनि (अभिमन्यु) का उत्तरा के साथ विवाह—पाराशर्य (व्यास) ने विराटपर्व में यह सब भक्तिवर्द्धन कथाएँ स्पष्ट और यथार्थरूप में कही हैं। इसमें सरसठ अध्याय और अत्यन्त मनोहर, सरसार्थ तीन हजार श्लोक हैं। ८९-९४ विद्वान् कृष्ण-द्वैपायन वेदव्यास ने उद्योगपर्व में ये कथाएँ कही हैं—पाण्डवों का गुप्तवास-काल में उपप्लाव्य में आराम से रहना, श्रीकृष्ण को सहायक के रूप में वरण

१ राजा-सेवक के कर्त्तव्य का उपदेश देना २ छल की भावना न रखते हुए भी छल-रूप से।

गान्धारीसुतन् यदुसैन्यत्ते वरिच्चतुम्
कान्तनां पद्माकान्तन् कोमळलीलकळुम् ९७
इन्दुशेखरवन्द्यनिन्दुबिम्बास्यांबुज-
निन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्दितन् परन् ९८
इन्दिरावरन् नन्दनन्दनन् नारायणन्
चन्द्रिकामन्दस्मितसुन्दरन् दामोदरन् ९९
सुन्दरीजनमनोमन्दिरन् वासुदेवन्
वृन्दारण्यानुवासि कन्दर्पकळेवरन् १००
छन्दसांपति जगल्कन्दळभूतन् मुचु-
कुन्दनन्दितन् परमानन्दन् श्रीगोविन्दन् १०१
इन्द्रनन्दननुमाय् चेन्नथ समवर्त्ति-
नन्दनन्तनिक्कुळिळलानन्दं वळर्त्ततु १०२
सञ्जयन् वन्नु पुनरंबिकासुतन्चोल्ला-
लञ्जसा परञ्ञतु केट्टु धर्म्मात्मजनुम् १०३
कञ्जनेत्राज्ञापूर्वं खण्डिच्चु परञ्ञतुं
सञ्जयन् चेन्नु धृतराष्ट्रनां कपटौघ- १०४

करने के लिए दुर्योधन का आगमन, कृत्रिम निद्रा में भगवान् का लेट जाना, अतिशौर्य वाले पार्थ (अर्जुन) का श्रीकृष्ण को वरण करना, गान्धारीसुत दुर्योधन का यदुवंशियों की सेना को वरण करना, लोकप्रिय पद्माकान्त (विष्णु) की कोमल लीलाएँ, इन्दुशेखर (शिवजी) के वन्द्य[1] चन्द्रसदृश कमलमुख वाले, इन्द्रादिदेवगणवन्द्य पर, इन्दिरावर[2], नन्दनन्दन, नारायण, चन्द्रिका-सदृश मन्द मुस्कान से सुन्दर, दामोदर, सुन्दरीजनमनोमन्दिर,[3] वासुदेव, वृन्दावनविहारी, मदनसदृश शरीरवाले, वेदों के पति, जगत्कन्दल[4] मुचुकुन्दनन्दित[5] परमानन्द श्रीगोविन्द का इन्द्रनन्दन (अर्जुन) के साथ जाकर धर्मराजपुत्र युधिष्ठिर का आनन्द बढ़ाना । ९५-१०२ अंबिकासुत (धृतराष्ट्र) की ओर से सञ्जय का एक सन्देश लाना, उसे सुनकर कमलनेत्र श्रीकृष्ण की अनुमति से धर्मपुत्र द्वारा उसका खण्डन, सञ्जय का युधिष्ठिर की

१ वन्दना के योग्य २ लक्ष्मीपति ३ सुन्दरियों के मन-मन्दिर अर्थात् सुन्दरी नारियों का मन जिसमें धरा रहता है ४ संसार के लिए मीठे कन्दमूल के समान मधुर ५ मुचुकुन्द के द्वारा आनन्दप्राप्त ।

पञ्जरं तन्निल् धर्म्मजोक्तिकळ् पकराते
विज्वरात्मना सर्व्वमरियिच्चतु केट्टु १०५
सज्वरात्मना निजमन्दिरं पुक्कवारुम्
छिद्रात्मावाय धृतराष्ट्रभूपतिश्रेष्ठन् १०६
निद्रयुमिल्लाञ्ञाधिमुळुत्तु चमञ्ञतुम्
अन्नेरं विदुररे वरुत्ति रात्रियिङ्कल् १०७
मन्नवनवन् चोन्न नयङ्ङळ् केट्टु केळा-
ञ्ञध्यात्म सनल्क्कुमारन् मुनि परञ्ञतु- १०८
मित्रनन्दनन् मुनि मित्रमाय् परञ्ञतु-
मंबुजमित्रात्मजनन्दनन् प्रार्थिक्कया- १०९
लंबुजासनसेव्यनंबुजनाभन् नाथन्
अंबिकावरप्रियनंबुजशरतातन् ११०
बिंबोष्ठन् कंबुधरन् अंबरचरनाथन्
अंबिकासुतालयं प्रापिच्चु सभयिङ्कल् १११
सन्धिप्पान् परञ्ञप्पोळन्धात्मा सुयोधनन्
बन्धिप्पान् भाविक्कयालन्धकान्वयजातन् ११२
बन्धुरकळेवरन् बन्धूकसमाधरन्
बन्धुलोकात्मानन्दकरनां धराधरन् ११३

उक्तियों को वैसे ही विना आवेग के छल तथा पाप की मूर्ति धृतराष्ट्र को बतलाना, धृतराष्ट्र का पीड़ित होकर अपने घर चले जाना, वहाँ उन दोष-युक्त भूपतिश्रेष्ठ को नींद न आना और बहुत ही चिन्तित हो जाना, तब रात को विदुरजी को बुलाना और उनकी नीतियों को सुनना, तदनन्तर मुनि सनत्कुमार की आध्यात्मिक बातों को सुनना, मित्र-पुत्र मुनि का मित्र बनकर कहना, अंबुजमित्रात्मजनन्दन[1] (युधिष्ठिर) की प्रार्थना से अंबुजासनसेव्य[2], अंबुजनाभ[3], प्रभु, अंबिकावरप्रिय[4], अंबुजशरतात[5], कुन्दरू के से लाल-लाल ओठ वाले, शंख लिए हुए, गरुड़ाधिपति श्रीकृष्ण का धृतराष्ट्र के घर पहुँचना १०३-१११ और वहाँ सभा में संधि करने के लिए कहना, तब अन्धात्मा

१ संस्कृत में कमल-मित्र सूर्य को कहा गया है तथा सूर्य के पुत्र यमराज प्रसिद्ध हैं, अतः युधिष्ठिर धर्मराज यमराज के पुत्र हुए २ ब्रह्माजी से सेवा किए गए ३ विष्णु ४ शिव के प्यारे ५ कामदेव (प्रद्युम्न) के पिता श्री कृष्ण ।

बन्धमोक्षङ्ङळिल्लातुळ्ळोरु परब्रह्म
तन्तिरुवटि विश्वरूपं काट्टियवारुम् ११४
अश्वत्थामावुतन्ने रहसि चेन्नु कण्टु
विश्वासत्तोटु परञ्ञवनेक्कोण्टु सेना- ११५
पत्यं चेय्यरुतेन्नु सत्यं चेय्यिच्चवारुम्
पथ्यमेल्लावरोटुंसत्यमाय् चोन्नवारुम् ११६
विश्वनायकन् हरिदश्वनन्दननोटु
निश्शेषमाय् नयमरुळिचेय्तवारुम् ११७
कुन्तीदेवियेक्कण्टु मन्त्रिच्चु भयं तीर्त्तु
कुन्तीनन्दनन्मारे प्रापिच्चवारुमेल्लां ११८
बद्धवैरत्तोटवरुद्धतबुद्धियोटुं
युद्धसन्नद्धन्माराय् सैन्यं कूट्टियवारुम् ११९
आन्ध्यमोटुलकन् वन्नरियिच्चतुं केट्टु
कौन्तेयन् कोल्लाक्कोल चेय्तयच्चतुमेल्लां १२०
चोल्लिनान् महारथगणने गंगादत्तन्
चोल्लियोरंबोपाख्यानान्तपर्यन्तं कृष्णन् १२१

(अन्धे धृतराष्ट्र की सन्तान) सुयोधन का उनको बांधने का यत्न करने के कारण अन्धकान्वयजात[1], वन्धुरकलेवर[2], बन्धूकसमाधर[3], बन्धु लोगों की आत्मा का आनन्द करनेवाले, पृथ्वी के भार को धारण करने वाले, बन्धन और मोक्ष के परे परब्रह्म (श्रीकृष्ण) का अपना विश्वरूप दिखलाना ११२-११४ और एकान्त में अश्वत्थामा से मिलना और उनसे प्रतिज्ञा करवाना कि वे सेनापति पद नहीं ग्रहण करेंगे, सब को यथार्थ पथ्य (हितकारी बात) बतला देना, विश्वनायक (श्रीकृष्ण) का हरिदश्वतनय (सूर्यपुत्र-कर्ण) से सारी नीति कह देना, कुन्तीदेवी से मिलकर उनसे सलाह कर उनका भय दूर करना, कुन्तीपुत्रों को प्राप्त करने का प्रकार, वैर बांधे हुए और उग्रबुद्धि के साथ युद्ध के लिए तत्पर हो जाना और सेना एकत्र करना, ११५-११९ अन्धे होकर (बिना समझे शकुनि-पुत्र) उलूक का संदेश लाना, उसे सुनकर कौन्तेय (भीम) का उलूक को मार

१ एक यदुवंशी राजा के कुल में उत्पन्न २ मनोहर मूर्ति ३ गुलदुपहरी नामक पुष्प के समान लाल ओठ वाले।

विद्वानां वेदव्यासनुद्योगपर्व्वं तन्निल् ।
अध्यायमनुत्तमं नूट्टिरुपत्ताऱतिल् १२२
पद्यङ्ङळूनद्वयं निश्चयमेळायिरम्
हृद्यङ्ङळवेद्यङ्ङळनवद्यङ्ङळल्लो । १२३
पिन्नेतु भीष्मपर्वं चोल्लुवन् चुरुक्कि ञान्
धन्यना गावल्गणितनिक्कु वेदव्यासन् १२४
सर्व्वभूपालयुद्धमुर्व्वीशनऱियिप्पान्
दिव्यलोचनं नल्कियेळुन्नळ्ळियवारुम् १२५
सप्तद्वीपङ्ङळोटुं सप्तवारिधिकळुं
सप्तपर्व्वतङ्ङळुं सप्तलोकङ्ङळ् रण्टुं १२६
सप्ताश्वन् मुतलाय सप्तखेचरगत-
सप्तमामुनिगति सप्तमारुतगति १२७
सत्वरमिवयेल्लां सत्यमाय् चोन्नवारुं
पुत्रमित्रादिकळुं पित्राद्याचार्यन्मारुं १२८
शत्रुभावेन कण्टु युद्धार्थं युद्धभुवि
वृत्रारिपुत्रन् तत्र चित्तकारुण्यं कैक्को १२९

भगा देना, इन सब बातों का गंगादत्त (भीष्म) ने महारथियों की गणना के अवसर पर वर्णन किया और विद्वान् वेदव्यास कृष्ण ने (काशिराज की पुत्री) अम्बा के आख्यान तक की कथाएँ उद्योग पर्व में कही हैं। उस पर्व में एक सौ छब्बीस उत्तमोत्तम अध्याय हैं जिनमें दो कम सात हजार श्लोक हैं, जो हृदय को सुख देने वाले, अवेद्य (दुर्लभ) तथा पापरहित हैं। १२०-१२३ इसके बाद मैं संक्षेप में भीष्मपर्व कहूँगा। श्री वेदव्यास जी का गावलगणि[1] अर्थात् सञ्जय को सारे भूपालों का युद्ध देखकर पृथ्वीपति (धृतराष्ट्र) को निवेदन करने के लिए दिव्यनेत्र प्रदान करना, सातों द्वीपों, सातों समुद्रों, सातों पर्वतों, दोनों प्रकार के सातों लोकों (पृथ्वी के नीचे तथा आकाश के ऊपर के १४ लोक), सप्ताश्व (सूर्य) आदि सातों ग्रहों की गति, सप्त ऋषियों की गति, सात मारुतों की गति—इन सब वस्तुओं का यथार्थ वर्णन, १२४-१२७ युद्धभूमि में पुत्र, मित्र, पिता,

१ ऋषि गवलगण के पुत्र 'संजय' को गावलगणि कहते हैं। (महाभारत आदिपर्व)।

ण्टेन्नियुमशक्यमितुत्तमहिंसाकर्म्मं
इत्थमोर्त्तवनतिवित्रस्तहृदयनाय् १३०
बुद्धियुंकेट्टु पार्थन् तेरतिलिरुन्नप्पोळ्
भृत्यभाववुं वच्चु भक्तवत्सलन् कृष्णन्- १३१
भृत्यनोटरुळ्चेय्तु सत्यमां वेदान्तार्थम् ।
नित्यानित्यादिकळां वास्तवं तर्क्कशक्त्या १३२
तत्त्वबोधार्त्थं सत्यज्ञानानन्तानन्दवुं १३३
सत्त्वादिगुणयुक्तप्रकृतिविलासवुं
सत्त्वङ्ङळुळ्ळिल् जीवात्मावाय् तानिरिप्पतुं १३४
क्षेत्रक्षेत्रज्ञभाववास्तवभेदङ्ङळुम्
शास्त्रसिद्धान्तङ्ङळ् वर्णाश्रमाचारभेदं १३५
सूत्रतत्त्ववुं विभूतिप्रभाववुं पिन्ने
क्षेत्रकर्म्मवुं सांख्ययोगादि भेदङ्ङळुं १३६
द्वन्द्वभावङ्ङळ् कळञ्ञद्वयमुरप्पिच्चा-
नन्दवुमवनरुळ्चेय्तितानन्दमूर्त्ति । १३७
विश्वविस्मयकरसमरचतुरनु
विश्वरूपवुं काट्टि विश्वासं वरुत्तिनान् १३८

आचार्य आदि को शत्रु के रूप में देखकर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) का चित्त करुणा से प्रभावित होकर अत्यन्त भय-त्रस्त हृदय हो जाना और हिंसाकर्म—युद्ध से मुँह मोड़ लेना, अपना विवेक खो बैठना और उस समय भक्तवत्सल श्रीकृष्ण जी का अपने भृत्यभाव को भूलकर अपने भृत्य को सत्य वेदान्तार्थ (यथार्थ ब्रह्मज्ञान) का उपदेश करना –यह सब उस (ग्रन्थ) में है। वह उपदेश यों है—१२८-१३२ कुछ तत्व नित्य हैं और कुछ अनित्य। तर्क-शक्ति के द्वारा तत्त्वबोध की प्राप्ति के लिए यह बतलाया गया कि एक ओर तो सत्य, ज्ञान, अनन्त और आनन्द है और दूसरी ओर सत्त्वादिगुण-युक्त प्रकृति का विलास है। सत्त्वादि के अन्दर भगवान् जीवात्मा के रूप में विराजमान है। क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ (शरीर और जीवात्मा) का वास्तविक भेद, शास्त्रप्रतिपादित सिद्धान्त, वर्णाश्रमाचार-भेद, सूत्रोक्ततत्त्व, विभूतिप्रभाव, क्षत्रिय का कर्त्तव्य, सांख्य और योग में भेद, यह सब बतला कर आनन्दमूर्ति भगवान् ने द्वैत को त्यागकर अद्वैत को स्थिर किया। १३३-१३७ फिर समस्त जगत का विस्मय करने वाले, युद्ध में चतुर

संगरकोलाहलं तुटङ्ङप्पिन्नेशेषं
गगानन्दनन् देवव्रतनां कृष्णभक्तन् १३९
पतिनोन्नक्षौहिणीसंख्ययां नानासेना-
पतिनायकन् महारथनोरोरोदिनं १४०
पतिनायिरं कालाळ् पतिनायिरमश्व
पतिनायिरं गजं पतिनायिरं तेराळ् १४१
पतितमाक्कीट्टुवोनतुपोल् त्रिभुवन-
पतिवाच्छितमिति मतिमानरिकयाल् १४२
अङ्ङने पत्तुदिनं युद्धं चेय्तितु भीष्मर्
मङ्ङातेयतिन्निटे रण्टुनाळ् नारायणन् १४३
एटुत्तु सुदर्शनं पटुत्वमोटप्पोळ्
अट्टुत्तकण्टिट्ट्टुळ्ळ भगवल्स्तुतिकळुम् १४४
अवन्तन्ननुग्रहाल् शिखण्डितन्ने मुम्पिल्
विबुधपतिसुतन् निर्त्तिनान् युद्धत्तिन्नाय् १४५
अतिनाल् भीष्मर् शरशयने वसिच्चतुं
वसुधात्मजमुनियरुळिचेय्तानल्लो । १४६
अध्यायमतुमोरुनूटोरुपत्तेट्टल्लो
पद्यङ्ङळेळायिरत्तेण्णूटेण्पत्तुनालुम् । १४७

अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखलाकर उसमें विश्वास पैदा किया। इसके बाद युद्ध का कोलाहल प्रारम्भ हुआ और गंगानन्दन, कृष्णभक्त महारथ[1] ग्यारह अक्षौहिणी वाली सेना के सेनापति देवव्रत (भीष्म) ने प्रतिदिन दस हजार पैदल सिपाहियों, दस हजार घोड़ों, दस हजार हाथियों और दस हजार रथियों को गिराया, क्योंकि उन बुद्धिशाली ने समझ लिया था कि त्रिभुवनपति (भगवान्) की यही इच्छा है। इस प्रकार भीष्म जी ने दस दिन बिना ग्लानि के युद्ध किया। इस समय के बीच दो दिन नारायण ने बड़ी कुशलता के साथ अपना सुदर्शन उठाया और उस समय (सर्वत्र) भगवान् की स्तुति सुनी गई। भीष्म जी के अनुग्रह से विबुधपति (इन्द्र) के पुत्र अर्जुन ने शिखंडी को युद्ध के लिये सामने खड़ा किया। १३८-१४५ परिणाम यह हुआ कि भीष्म जी शरशय्या पर लेट गये। वसुधात्मज मुनि

1 दस हजार सैनिकों के साथ अकेला युद्ध करने वाला।

पतिनोन्नान्नाळ् पिन्नै दुरयोधनन् सेना-
पतियायभिषेकं द्रोणाचार्यक्कु चेय्तान् १४८
त्रिगर्तन् संशप्तकगणत्तोटोरुमिच्च-
ङ्ङकट्टिक्कोण्टुपोयान् विजयन्तन्नेयतुम् १४९
अप्रतिरथनाय कुप्रभु भगदत्तन्
सुप्रतीकाख्यनाय गजत्तिन् कळुत्तेऱि १५०
केल्पोटु वृकोदरन्तन्नोटु पोरुततुम् ।
चिल्पुमानोटुंकूटि फल्गुननप्पोळ् वन्नि- १५१
ट्टप्रमेयास्त्रप्रयोगं तुटर्न्नतुनेरम्
मत्तहस्तीन्द्रवरमस्तकं भगदत्त- १५२
मस्तकचापमोरु पत्रिकोण्टरुत्ततुम् ।
अंभोजव्यूहं भेदिच्चुम्पर्कोन्मकन्मकन् १५३
बम्पट मुटिक्कयाल् कुंभसंभवादिकळ्
कम्पमानसन्माराय् संभ्रमत्तोडुमप्पोळ् १५४
अम्पोळिञ्ञारु महारथन्मारोरुमिच्चु
वम्पनामभिमन्युतन्नै क्कोन्नतुमूलं १५५

(वेदव्यासजी) ने यह सब सुनाया। उस (भीष्म पर्व) में एक सौ अठारह अध्याय हैं और सात हजार आठ सौ चौरासी श्लोक हैं। १४६-१४७ ग्यारहवें दिन दुर्योधन ने द्रोणाचार्य का सेनापति के पद पर अभिषेक किया। त्रिगर्त[1] ने संशप्तकगण के साथ अर्जुन को दूर हटाया। अप्रतिरथ और कुप्रभु भगदत्त ने सुप्रतीक नाम के हाथी के कन्धे पर बैठकर बड़े जोर से वृकोदर (भीम) के साथ युद्ध किया। उस समय अर्जुन, चित्पुमान् (श्रीकृष्ण जी) के साथ आये और उन्होंने अप्रमेयास्त्र का प्रयोग आरम्भ किया और मतवाले हाथी के मस्तक, भगदत्त के मस्तक तथा चाप को एक बाण से काट डाला। अर्जुनपुत्र अभिमन्यु ने चक्रव्यूह को भेद कर शत्रुसेना का नाश किया। इसलिए द्रोणाचार्य आदि चकित हो गये और बड़े संभ्रम के साथ छै महारथियों ने निरन्तर वाणप्रयोग से शक्तिशाली अभिमन्यु का वध किया। १४८-१५५ इस वध से उत्पन्न युधिष्ठिर जी का दुःख दूर करने

१ यह शब्द महाभारत में राजा तथा नगरनिवासी और एक नगर—इन तीनों अर्थों में प्रयुक्त हुआ है। यहाँ राजा के अर्थ में है।

धर्म्मजन्दुःखं तीर्प्पान् सृंजयोपाख्यानादि
निर्म्मलन् वेदव्यासनरुळिचेय्तवारुम् १५६
निर्ज्जरेन्द्रात्मजनामर्ज्जुनशोकं तीर्प्पान्
दुर्ज्जनकालनाय कृष्णसान्त्वनङ्ङळुम् १५७
कृष्णसोदरियाय सुभद्रा मात्स्यपुत्रि
कृष्णयुमित्यादि नारीजनदुःखं तीर्प्पान् १५८
कृष्णसान्त्वनवचनामृतविशेषवुं
वृष्णिवंशोल्भूतनां तृष्णयोटरुळ्चेय्तु १५९
पुत्रनिग्रहत्तिनु कारणभूतनाय
शत्रु गान्धारीपुत्रमित्रभूपरिल् मुम्पन् १६०
प्रत्यर्त्थि जयद्रथनाय सैन्धवन्तन्ने
मित्रनां देवन् नाळेयस्तमिप्पतिन् मुम्पे १६१
मित्रपुत्रालयत्तिन्नयच्चीटुवनेन्नुं
वृत्रनाशनपुत्रन् सत्यवुं चेय्तानल्लो। १६२
एत्तीलेन्नाकिल् पिन्ने विल्लुमाय् तीयिल्च्चाटि
मृत्युलोकत्ते प्रापिच्चीटुवनेन्नु चोन्नान्। १६३
स्वप्नत्तिल् जिष्णुवीरन् कृष्णनेक्कण्टवारुम्
चिल्पुमानोटुं कूटि कैलासं प्रापिच्चतुं १६४

के लिये वेदव्यास जी ने सृंजयोपाख्यानादि सुनाया। और दुर्जनों के संहर्ता श्रीकृष्ण जी ने देवेन्द्र के पुत्र अर्जुन का दुःख समाप्त करने के लिए सांत्वन-वचन सुनाये, तथा अपनी भगिनी सुभद्रा, मात्स्यपुत्री द्रौपदी आदि नारीजन का दुःख दूर करने के लिए वृष्णिवंशोद्भूत (श्रीकृष्ण) ने सान्त्वना देने वाले अमृतवचनों को सुनाया। फिर वृत्रनाशक इन्द्र के पुत्र अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि अपने पुत्र (अभिमन्यु) के निग्रह का कारणभूत शत्रु गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) के मित्र व भूपालों में मुख्य, शत्रु जयद्रथ को दूसरे ही दिन सूर्यास्त समय के पहले ही यमलोक भेज दूंगा। उन्होंने यह भी कहा कि अगर यह न हो सका तो मैं अपने धनुष के साथ अग्नि में प्रवेश कर यमलोक चला जाऊँगा। १५६-१६३ वीर जिष्णु[1] (अर्जुन) का श्रीकृष्ण को स्वप्न में देखना, चित्पुमान् (श्रीकृष्ण जी) के साथ कैलास

१ शत्रु को जीतनेवाले।

शङ्करन् प्रसादिच्चु सङ्कटं तीर्त्तवारुम्
पङ्कजनेत्रपादपङ्कजार्च्चितपुष्पं १६५
शङ्करजटाभारं तङ्कले कण्टवारुम्
तिङ्कळ्तन्कुलजातन् शङ्कयेक्कळञ्ञतुं १६६
मट्टुळ्ळनृपन्मारेद्धर्म्मजरक्षय्क्काक्कि-
प्पिट्टेन्नाळ् युद्धत्तिनु कृष्णनुं तानुंकूटि १६७
जंभारिसुतन्तन्ने वम्पोटु पोरुततुं
अम्पिनाल् कुळंकुळिच्चबुनिर्म्माणादियुं १६८
शूरनामलंबुसन् जलसन्धादिकळुं
पोरिलेळक्षौहिणीप्पटयुं मुटिञ्ञतुं १६९
विष्णुचक्रच्छायकोण्टुष्णांशु मरञ्ञतुं
जिष्णुनन्दननाय जिष्णुतान् जयिच्चतुं १७०
वृद्धक्षत्रात्मजन्तन्नुत्तमांगत्तेक्कोण्टु,
वृद्धक्षत्राख्यन्तण्टे हस्तत्तिलाक्कियतुं
अस्तमिप्पतिन्नुमुम्पे सत्यत्ते रक्षिच्चतुं १७१
रात्रियुद्धवुं घटोत्कचण्टे मरणवुं
पार्त्थिवन् धृष्टद्युम्नन् द्रोणरे वधिच्चतु- १७२

जाना, श्रीशंकर जी का प्रसन्न होकर दुःख दूर करना, श्रीकृष्ण के चरण-कमलों में चढ़े हुए पुष्पों को शिवजी की जटाओं में अर्जुन का देखना, सोमवंशोद्भव की शंकाओं को दूर करना, दूसरे दिन अन्य-भूपालों को युधिष्ठिर जी की रक्षा के लिए नियुक्त कर श्रीकृष्ण जी और अर्जुन का जंभारिसुत के साथ युद्ध करना, अर्जुन का वाणों के द्वारा तालाब खोदकर जल निकालना, युद्ध में शूर अलंबुस, जलसन्ध आदि का तथा सात अक्षौहिणियों का नाश, विष्णुचक्र की छाया से सूर्य का ढक जाना जिष्णु[1] (अर्थात् इन्द्र) के पुत्र जिष्णु (अर्थात् अर्जुन) की विजय. वृद्धक्षत्र के पुत्र (जयद्रथ) के शिर को उसके पिता के हाथ में पहुँचाना, सूर्यास्त समय के पहले प्रतिज्ञा पालन करना। १६४-१७१ रात्रियुद्ध और घटोत्कच का वध, पार्थिव धृष्टद्युम्न द्वारा द्रोणाचार्य का वध, अश्वत्थामा का क्रुध होकर अस्त्रों का प्रयोग करना, विश्वान्तकारी युद्ध का हो जाना, यह सब सातवें द्रोण पर्व में

१ शत्रु को जीतनेवाले।

मश्वत्थामावु कोपिच्चस्त्वङ्ङळयच्चतुं
विश्वान्तकारणमायुण्टाय युद्धङ्ङळु- १७३
मेळामताकुं द्रोणपर्व्वत्तिलरुळ्चेय्तान्
कालीनन्दननाय मामुनि वेदव्यास- १७४
नध्यायमतिलुण्टु नूट्ट्ळुपतु नल्ल
पद्यङ्ङळुण्टु पतिनायिरत्तिलुं पुरं १७५
पिन्नेयुं तोळ्ळायिरत्तम्पतेन्नरिञ्ञालुम् ।
पुण्यवर्द्धनं पुरुषोत्तमलीलापूर्ण्णं १७६
कर्ण्णपर्व्ववु चोन्नानेट्टामततु चोल्लां
वर्ण्णिप्पान् पणियतिलुण्टाय विशेषङ्ङळ् । १७७
त्रिपुरदहनं, माद्रांगेशप्रतीवाद-
मरयन्नत्तोटोरु वायसं तोट्वारुम् १७८
तरणिसुतनोटु मारुति तोट्वारुम्
तरणिसुतशरं धर्म्मजनेट्वारुम् १७९
पार्त्थनाल् संशप्तकरोटुक्कप्पेट्टुवारुम्
पार्त्थिवन् पार्त्थनोटु परुषं चोन्नवारुम् १८०
पार्त्थिवन् तन्नेकोल्वान् पार्त्थनोङ्ङियवारुम्
पार्त्थसारथिचोल्लाल् पार्त्थिवन्तन्ने पार्त्थन् १८१

काली (सत्यवती-) नन्दन महामुनि वेदव्यासजी ने वर्णित किया है। इसमें एक सौ सत्तर अध्याय हैं और दस हजार नौ सौ पचास श्लोक हैं। १७२-१७५ (शुकी ने कहा—) वेदव्यासजी ने पुण्यवर्धन और पुरुषोत्तमलीलापूर्ण आठवाँ कर्णपर्व भी कहा। वह भी मैं कहूँगी (यद्यपि) उसका विस्तृत वर्णन करना कठिन है। १७६-१७७ त्रिपुरदहन, माद्र (शल्य) और अंगनरेश (कर्ण) का विवाद, एक कौए का हंस से हार जाना, तरणिसुत (कर्ण) से मारुति (भीम) का हार जाना, कर्ण-शरों को युधिष्ठिर जी का सहना, पार्थ के द्वारा संशप्तकों[1] का समाप्त हो जाना, पार्थिव (युधिष्ठिर) का अर्जुन से कठोर वचन कहना, पार्थिव को मारने के लिए अर्जुन का तलवार उठाना, पार्थसारथि (श्रीकृष्ण) के कहने से तू-तू कहकर

१ संशप्तकसंग्राम में प्रतिज्ञापूर्वक जाने और वहाँ से न लौटने वाला सैनिक वीर पुरुष।

पेर्त्तु नी नी नीयेन्नु निन्दिच्चू चोन्नवारु-
मार्त्तनाय् प्राणत्यागत्तिन्नोरुम्पेट्टवारुम् १८२
आर्त्तियेब्भक्तन्मार्क्कु तीर्क्कुन्न कृष्णन्चोल्लाल्
पार्त्थनुं वाचा तन्नत्तान् प्रशंसिच्चवारुम् १८३
धर्म्मजन् धनञ्जयन्मारेयुं निरत्तीट्टु
धर्म्मस्थापनकरन् पोर्क्कोरुमिप्पिच्चतुं १८४
शूरनां वृकोदरन् घोरसंगराङ्कणे
घोरनां दुश्शासनन्मार्विटं पिळर्न्नतुम् १८५
कर्ण्णफल्गुनयुद्धंतन्नुटे कट्टप्पवुं-
कर्ण्णनागास्त्रप्रयोगादियुं धनञ्जयन् १८६
कर्ण्णने वधिच्चतुं मट्टुमित्तरमेल्लां ।
पुण्यात्मा वेदव्यासनरुळिच्चेय्तीटिनान् । १८७
अध्यायमतिलरुपत्तोन्पतरिञ्ञालुम्
पद्यङ्ङळ् नालायिरत्तिल्पुरं तोळ्ळायिरम् १८८
पोरतिल् युधिष्ठिरन् शल्यरे वधिच्चतुं
मारुतिसुयोधनन्मार गदायुद्धादियुं १८९
बलभद्रागमनं तीर्त्थमाहात्म्यङ्ङळु-
मलिवोटरुळच्चेय्तु शल्यपर्व्वत्तिल् कृष्णन् १९०
अध्यायमतिलन्पत्तोन्पतेन्नरिञ्ञालुम्
पद्यङ्ङळ् मूवायिरत्तिरुनूट्टिरुपतुम् । १९१

उनकी निन्दा करना, फिर दुःखित होकर प्राणत्याग के लिए तैयार हो जाना, भक्तों की पीड़ा समाप्त करने वाले श्रीकृष्ण जी के कहने से अर्जुन का आत्मप्रशंसा करना, धर्मस्थापक श्रीकृष्णजी का युधिष्ठिर और अर्जुन को एक होकर युद्ध करने की प्रेरणा देना। १७८-१८४ शूर वृकोदर (भीमसेन) का घोर युद्ध, रणभूमि में प्रचण्ड दुःशासन का वक्षःस्थल फाड़ डालना, कर्ण और अर्जुन का घोर युद्ध, कर्ण का नागास्त्र-प्रयोग, धनञ्जय द्वारा कर्ण का वध, इस प्रकार की और कथाएँ पुण्यात्मा वेदव्यासजी ने कहीं। उसमें उनहत्तर अध्याय हैं और चार हजार नौ सौ श्लोक हैं। १८५-१८८ युद्ध में युधिष्ठिर का शल्य को मारना, मारुति और सुयोधन का गदायुद्ध, बलभद्र का आगमन, तीर्थों का माहात्म्य, यह सब

सौप्तिकपर्व्व तन्निल् चॊल्लियतॊट्टु चॊल्लां
व्याप्तियिलुरचॆय्वान् वेलयुण्टङ्ङ्ञालुम् । १९२
कालॊटिञ्ञवनियिल् वीणोरु सुयोधनन्
कालपाशानुगतनायतु कण्टनेरम् १९३
अश्वत्थामावादिकळ् निश्वासत्तोटुं कूटि
विश्वासं सुयोधनन् तन्नोटु चॆय्तवारुम् १९४
धृष्टद्युम्नादिकळॆ नष्टमाक्कीटुं मुन्पे
कॆट्टिय कवचं ञानऴिक्कुन्नीलयॆन्नु १९५
प्रॆट्टॆन्नु सत्य चॆय्तु रात्रियिल् चॆन्नवारुम्
सृष्टिपालनहरणादिकळ् चॆय्युं देवन् १९६
पाण्डवन्मारॆ वेऱॆ कॊण्टुपोय्क्कॊण्टवारुम्
ताण्डवप्रियनाय शङ्करननुग्रहाल् १९७
पञ्चद्रौपदेयन्मारोटु पाञ्चालनेयुं
पञ्च तचेर्त्तनिल्लो मिञ्चिच्च पटयॊटुम् १९८
अश्वत्थामावादिकळ् दुरियोधनन्तन्नो-
टश्रुक्कळ् तुटच्चुटनिच्छयोटितु चॊन्नार् । १९९
मरिच्चु सुयोधनन् पाण्डवन्मारुमप्पोळ्
मरिच्चु मरियातॆ वार्त्तकळ् केट्टनेरं २००

कृष्ण द्वैपायनजी ने शल्यपर्व में सुन्दरता के साथ वर्णन किया है। उसमें उनसठ अध्याय हैं और तीन हजार दो सौ बीस श्लोक हैं। १८९-१९९ जो सौप्तिक पर्व में कहा गया है वह भी संक्षेप में कहा जायगा, क्योंकि, जान लीजिये, विस्तार से कहना बड़ा काम होगा। टाँग टूटकर गिरे सुयोधन को मरणोन्मुख देखकर अश्वत्थामा आदिकों का निःश्वास लेकर सुयोधन को विश्वास दिलाना कि धृष्टद्युम्नादिकों को विना नाश किये अपना बँधा हुआ कवच मैं नहीं उतार दूंगा। ऐसी प्रतिज्ञा कर रात को चले जाना, सृष्टि, पालन और हरण करनेवाले भगवान् का पाण्डवों को अलग ले जाना। ताण्डवप्रिय शंकरजी के अनुग्रह से पाँच द्रौपदी के पुत्रों के साथ पाञ्चाल और बची हुई सेना को मार डालना—यह सब अश्वत्थामादिकों ने दुर्योधन के आँसू पोंछकर उनको सुनाया। १९२-१९९ सुयोधन की मृत्यु हुई। जब पाण्डवों ने ये सब वार्त्ताएँ सुनीं तब पांचाली (द्रौपदी) ने

अतिनालनशनं दीक्षिच्चु मरिप्पति-
न्नतिशोकत्तोटारंभिच्चितु पांचालियुम् २०१
भीमनुं द्रौणिशिरोमणि कोळ्ळुवान् पोयान्
भीमनेत्तेटिप्पिन्पे माधवार्ज्जुनन्मारुम् २०२
चेन्नतु कण्टुपेटिच्चश्वत्थामावुतानु-
मन्नेरं प्रयोगिच्चु ब्रह्मास्त्रमवारितम् २०३
इम्महीतलमपाण्डवमाय् चमकेन्नु
चिन्मयन् नारायणन् रक्षिच्चानतिल्निन्नुम् २०४
बन्धुक्कळ्क्कुदककर्मादिकळ् चेय्युन्नेरं
कुन्तियुं कर्णन् मम नन्दननेन्नु चोन्नाळ् । २०५
कुन्तीपुत्ररुमतु केट्टु सन्तापत्तोटे
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुदकक्रियकळुं चेय्तार् २०६
अध्यायं पतिनेट्टुण्टित्यादि सौप्तिकत्तिल्
पद्यङ्ङळेण्णूट्रेळुपतुमुण्टेन्नु चोल्लाम् । २०७
पतिनोन्नामतुपोल् स्त्रीपर्व्वमतिन्कथ
विधववनितमार्परिदेवनङ्ङळुम् २०८
गान्धारी यदुक्कळ्क्कु शापं नल्कियवारुम्
गान्धारीपति सुतन्मारेप्पुल्कियवारुम् २०९

प्राणत्याग के लिए अनशन प्रारम्भ किया। भीम भी अश्वत्थामा का शिरोमणि[1] लेने के लिए गये और उनकी खोज के लिए माधव और अर्जुन ने गमन किया। यह देखकर अश्वत्थामा डर गये और उन्होंने व्यर्थ न जाने वाला ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया जिससे यह महीतल पाण्डवों से रहित हो जाय। परन्तु चिन्मय नारायण ने उससे भी बचाया। जब बन्धुओं के लिए उदकक्रिया[2] की जा रही थी तब कुन्ती ने कहा कि कर्ण मेरा पुत्र है। कुन्ती के पुत्र यह सुनकर दुःखित हुए और उन्होंने ध्यान करते हुए उदकक्रियाएँ कीं। सौप्तिकपर्व में अठारह अध्याय, और आठ सौ सत्तर श्लोक हैं। २००-२०७ ग्यारहवाँ पर्व का नाम है स्त्रीपर्व और उसमें की कथाएँ इस प्रकार हैं—विधवा वनिताओं (स्त्रियों) का विलाप, गान्धारी द्वारा यदुओं को शाप, गान्धारीपति का पुत्रों को अपनाना, भीम

१ अश्वत्थामा के मस्तक में एक मणि थी २ तर्पण तथा पिण्डदान आदि।

विस्मयमयोमयमाय मारुतिरूपं
भस्ममाय् चमञ्ञतुं कश्मलनृपन्तन्नाल् २१०
सस्मितनाय कृष्णनरुळिच्चेय्तवारु-
मश्मसारवच्चित्तमन्धनु चमञ्ञतुं २११
धर्म्मजनियोगत्ताल् शवसंस्कारादिकळ्
तन्मनोदुःखत्तोटुं बन्धुक्कळ् चेय्तवारुम् । २१२
अध्यायमिरुपत्तेळुण्टितेन्नरिञ्ञालुं
पद्यङ्ङळ् चौल्लामेळुनूट्टेळुपत्तञ्चल्लो । २१३
शान्तिद शान्तिपर्व्वं पन्द्रण्टामतुं पिन्ने
श्शान्तनवोक्तिमयं मिक्कतुमोर्क्कुन्नाकिल् २१४
वर्ण्णधर्म्मङ्ङळ् पुनराश्रमधर्म्मङ्ङळुम्
पुण्यतीर्त्थादिफलं दानधर्म्मौघफलं २१५
जपहोमादिधर्म्ममापद्धर्म्मवुं पिन्ने-
त्तपसां नियमादिसांख्ययोगादिभेदं २१६
मोक्षधर्म्मवुं विशेषिच्चरियिच्चु भीष्मर्
साक्षाल् श्री नारायणन् तन्नुटे नियोगत्ताल् २१७
अध्यात्मज्ञानं मुहुर्व्विस्तरिच्चरियिच्चि-
तध्यायं मुन्नूट्टिन्मेल् मुप्पत्तोन्पतुमुण्टु २१८

के स्थान पर उनके निर्मित लौह-शरीर[1] का नृप (धृतराष्ट्र) द्वारा भस्म करना, उस समय श्रीकृष्ण जी का मुस्कराते हुए कथन, अन्धे (धृतराष्ट्र) के चित्त का लोहे के समान कठोर हो जाना, युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर बन्धुओं का बड़े दुःख के साथ शव-संस्कार करना। उसमें (स्त्रीपर्व में) जान लीजिये, सत्ताईस अध्याय और सात सौ पचहत्तर श्लोक हैं। २०८-२१३ बारहवाँ पर्व शान्ति देने वाला शान्तिपर्व है और अधिकांश वह भीष्म के कहे हुए उन्हीं के कथन के रूप में है। वर्णधर्म, आश्रमधर्म, पुण्यतीर्थों में यात्रा करने का फल, दान-धर्मों के समूह का फल, जप-होमादिधर्म, आपद्धर्म, तपों का नियम, सांख्य, योग आदि दर्शनभेद और विशेषतः मोक्षधर्म साक्षात् नारायण की अनुज्ञा से उपर्युक्त (पर्व) में भीष्म जी ने कहा है तथा वहां पर अध्यात्मज्ञान का विस्तार

1 भीम के स्थान पर 'लौह-भीम' धृतराष्ट्र के सम्मुख लाया गया मोह।

पद्यङ्ङळ् पतिन्नालायिरवुं पिन्पञ्ञूरुं
हृद्यङ्ङळतिन्नुमेल् इरुपत्तञ्चुमल्लो । २१९
पतिम्मूतामतनुशासनिकाख्य पर्व्व-
मतिङ्कल् धर्म्मस्थिति पलतुं पार्क्कुन्तोरुम् । २२०
दानङ्ङळुटे भेदमधिकारिकळ्भेदम्
दानधर्म्मनिष्ठादि विधिभेदङ्ङळ् पिन्ने २२१
पात्रभेदवुं कालभेदवुं देशभेदं
शास्त्रसिद्धान्तभेदं मन्त्रमूर्तिकळ्भेदं २२२
श्रौतस्मार्त्तादिभेदं तान्त्रिकभेदङ्ङळुम्
चेतनाजडभावभेदवुं मखभेद २२३
सृष्टि पालनहरणङ्ङळुं तत्तत्कर्म्मा-
नुष्ठाननिष्ठापूर्व्वमवतारादिकळुं २२४
मौनसत्यादिभेदगतिकळिवयेल्लां
मानसानन्दं वरुमारुरुळ्चेय्तु कृष्णन् । २२५
अध्यायमिरुनूट्टॆण्पत्तारुण्टतिल्नल्ल
पद्यङ्ङळ् हृद्यङ्ङळायुण्टु पन्तीरायिरम् । २२६
पतिनालामतश्वमेधिकपर्व्वमल्लो
मतिमान्मारायुळ्ळोर्क्कधिकं मनोहरम् २२७

से प्रतिपादन हुआ है। उसमें तीन सौ छत्तीस अध्याय हैं और चौदह हजार पाँच सौ पच्चीस हृदय को सुख देने वाले छन्द हैं। २१४-२१९ अनुशासनिक पर्व तेरहवाँ पर्व है। उसमें ठीक देखने से अनेक धर्म-स्थिति, दानों के भेद, अधिकारियों के भेद, फिर दानधर्मनिष्ठादि, विधि-भेद, पात्र-भेद, काल-भेद, देश-भेद, शास्त्रसिद्धान्त भेद, मन्त्रमूर्त्तियों के भेद, वेद तथा स्मृति सिद्धान्तों के भेद, तान्त्रिक भेद, चेतनभाव और जड़भाव के भेद, यज्ञ के भेद, सृष्टि, पालन और हरण, निष्ठापूर्वक विविध प्रकार के कर्मों का अनुष्ठान, भिन्न-भिन्न अवतार, मौन और सत्य के भेद— यह सब श्रीकृष्ण द्वैपायन ने इस प्रकार बतलाया है जिससे मन में आनन्द प्राप्त हो। उसमें दो सौ छियासी अध्याय हैं और अच्छे हृदय को सुख देने वाले बारह हजार श्लोक हैं। २२०-२२६ चौदहवाँ पर्व है अश्वमेधिक जो बुद्धिशालियों के लिए अधिक मनोहर है। उसमें निम्नलिखित

मामुनि संवर्त्तकन् मरुत्तनृपनोटु
सामोदमरुळ्चेय्त पुण्यसल्कथकळुम् । २२८
ईश्वरनियोगत्ताल् पाण्डवर्निधिकोळ्वान्
वाच्च सैन्यत्तोटुदीच्यां दिशि पोयकालं २२९
द्रोणजब्रह्मास्त्रज्ज्वालाकुलनाय बालन्
प्राणहीननुमायिप्पिरन्नोरनन्तरं २३०
प्राणिकळ्क्कॆल्लामुळ्ळिल् प्राणनाकिय कृष्णन्
प्राणनुण्टाक्कियतॆन्तद्भुतमल्लयल्लो । २३१
उत्तर पॆट्टु परीक्षित्ताय नृपवर-
नुत्तमोत्तमन् पुरुषोत्तमभक्तनुण्टाय् २३२
उत्तरदिशि मरुत्तन् पुरा वच्च निधि
युक्तपूजकळुं चॆय्तुद्धरिच्चुळ्ळोटॆ २३३
पाण्डवर् वरुम्पोळिङ्ङुण्टायि तनयनुम्
गाण्डीवधरनश्वं नटत्तीट्टुवान् पोयान् २३४
बभ्रुवाहननाय पुत्रनोटॆट्टु तोट्टि-
ट्टद्भुतं पूण्टु चॆन्नू मृगवीक्षणं पिन्नॆ । २३५
वैष्णवधर्म्मं हयमेधकर्म्मानन्तरं
वार्ष्णेयविरचितं धर्म्मजमदभंगं । २३६

कथाएँ कही गयी हैं—महामुनि संवर्तक द्वारा राजा मरुत के लिए पुण्यसत्कथाओं का वर्णन, ईश्वर की लीला से पाण्डवों का निधि[1] लाने के लिए बड़ी सेना के साथ उत्तर दिशा की यात्रा, अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से पीड़ित बालक का प्राणविहीन होकर जन्म और प्राणियों के प्राण श्रीकृष्ण जी के द्वारा उस (बालक) को प्राण देने का अद्भुत कर्म, उत्तरा ने जिस बालक को जन्म दिया वह ही उत्तमोत्तम नृपवर, पुरुषोत्तमभक्त परीक्षित् है। २२७-२३२ जब पाण्डव उत्तर दिशा में राजा मरुत का छिपा हुआ खज़ाना उचित पूजा करके खोद-निकालकर लाये तब पुत्र का जन्म। गाण्डीवधर (अर्जुन) अश्व को घुमाने के लिए निकले, बभ्रुवाहन का सामना और पराजय, आश्चर्यचकित हुए और उसके बाद हरिण की खोज में गये। वैष्णवधर्म, उसके बाद अश्वमेधयाग, वार्ष्णेय कृत धर्मज

1 खज़ाना

नकुलोपाख्यानादि पलवुं चॊल्लि मुनि
पकलिल्लिनियिप्पोळ् पऱवानबयॆल्लां । २३७
अद्ध्यायमुण्टु नूऱ्िमुप्पत्तुमून्नु चॊल्लां
पद्यङ्ङळ् नालायिरं नानूऱुमिरुपतुम् । २३८
पतिनञ्चामतु नाल्लाश्रमवासं पर्व्व-
मधिकं मनोहरमज्ञानविषहरम् । २३९
गान्धारीकान्तनन्धन् गान्धारियॊटुंकूटि-
त्तान्तनाय् पुरत्तिङ्कलिरुन्नवाऱुं पिन्ने । २४०
कुन्तियुं गान्धारियुं तानुमाय् पोयवाऱु-
मन्तिके वेदव्यासनॆळु न्नळ्ळियवाऱुम् २४१
मरिच्च सुयोधननादिकळ्तम्मॆक्कण्टु
चिरिच्चु धृतराष्ट्रन् तॆळिञ्ञु चॊन्नवारुम् २४२
अंबिकातनयनुं कुन्तियुं गान्धारियुं
संभ्रमं तीर्न्नु परलोकं प्रापिच्चवाऱुम् । २४३
माण्डव्यशापतीर्न्नु धर्म्मराजन्ऱे गति
पाण्डवर् केट्टु खेदिच्चिरुन्नवाऱुं पिन्ने । २४४
वृष्णिकळ् विनाशनं नारदनरुळ् चॆय्तु
उष्णनिश्वासत्तोटु केट्टतुमवयॆल्लां । २४५

(युधिष्ठिर) का मदभंग, नकुलोपाख्यान, इस प्रकार की और कथाएँ महामुनि ने कहीं। वह सब कहने के लिए अब पर्याप्त दिन नहीं रह गया। उसमें एक सौ तेंतीस अध्याय और चार हज़ार चार सौ बीस श्लोक हैं। २३३-२३८ पन्द्रहवाँ पर्व आश्रमवासनामक है जो अत्यन्त मनोहर और अज्ञानरूपी विष को नाश करनेवाला है। गान्धारीकान्त अन्ध नृप (धृतराष्ट्र) थककर गान्धारी के साथ नगर ही में रहे। फिर कुन्ती और गान्धारी के साथ स्वयं चले गये। उनके पास वेदव्यास जी पधारे। उसके बाद मृत सुयोधन आदि को देखकर प्रसन्न हुए और मुस्कराते हुए बोले। (अंबिकातनय) धृतराष्ट्र, कुन्ती और गान्धारी का सारा भ्रम समाप्त हुआ और वे परलोक चले गये। माण्डव्यशाप का प्रभाव समाप्त हुआ। पाण्डव धर्मराज की गति सुनकर खिन्न हुए। नारद जी ने वृष्णियों के नाश का समाचार सुनाया। उसको पाण्डवों ने उष्ण निश्वास के

अध्यायं नाल्पततिल् पद्यङ्ङळायिरत्ति-
न्नुत्तरं तोळ्ळायिरत्तारुण्टेन्नरिञ्ञालुम् । २४६
मौसलपर्व्वं तन्निल् वृष्णिकळ्विनाशवुं
कंसारियाकुं कृष्णन् संसारविनाशनन् । २४७
अग्रजनोटुंकूटे वैकुण्ठ प्रापिच्चतुं
व्यग्रिच्चु धनञ्जयन् वज्रनें वाळिच्चतुं । २४८
स्त्रीधनादिकळोटुं पोरुम्पोळ् मध्येमार्ग्गं
बाधितनाय पार्थन्तन्नोटु काट्टाळन्मार् । २४९
परिच्चुकोण्टान् धनं नारिमारेयुमेल्लां
पेरुत्त गाण्डीववुं कुलय्कायीलयल्लो । २५०
दिव्यास्त्रङ्ङळिलोन्नुं वळियेत्तोन्नीलप्पोल्
सव्यसाचियुं धनुस्सिळच्चानेन्नु केळ्प्पू । २५१
सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतन् नारायणन्
सत्त्वादिमायागुणरहितन् परमात्मा २५२ ।
तत्त्वमस्यादिमहावाक्यार्थवस्तुमूर्त्ति-
नित्यनां सच्चिचल्ब्रह्माख्यन् परन् कृष्णन्तण्टे । २५३
नित्ययां मायाविलासङ्ङळुं निरूपिच्चाल्
व्यक्तियोटुरचेय्वानार्कुमेयरुतल्लो । २५४

साथ सुना। इस (आश्रमवास पर्व) में चालीस अध्याय और एक हजार नौ सौ छ श्लोक हैं। २३९-२४६ मौसलपर्व में, वृष्णियों का विनाश, कंस के शत्रु, संसार का नाश करनेवाले श्रीकृष्णजी का अपने ज्येष्ठ भाई (श्रीबलभद्र) के साथ वैकुण्ठ चले जाना, व्याकुल होकर धनञ्जय (अर्जुन) का वज्र को राजा बनाना, धन-धान्य और स्त्रियों के साथ चलते समय रास्ते में स्त्रियों का पार्थ के अधिकार में होने पर भी जंगली मनुष्यों द्वारा लुट जाना, अद्भुत गाण्डीव का भी काम न देना, अर्जुन को उस समय कोई भी दिव्यास्त्र न सूझना और अपना धनुष खो बैठना, यह सब सुना गया है। २४७-२५१ सत्य-ज्ञान-अनन्त-आनन्द-अमृत-रूप नारायण, सत्त्वादिमायागुणरहित, परमात्मा, तत्वमसि आदि श्रुति के महावाक्यों के द्वारा सिद्ध ईश्वर की यथार्थ मूर्ति, नित्य, सच्चिदब्रह्म, पर, श्रीकृष्ण जी की नित्य माया के विलासों का कोई भी व्यक्ति वर्णन नहीं कर सकता।

वेदव्यासनुमात्मज्ञानङ्ङळरुळ्चेय्तान्
खेदवुमटक्कि श्वेताश्वनुं पुरिपुक्कान् । २५५
दुःखं पूण्टजातशत्रुक्षितिपतियोटु
शक्रनन्दनन् कृष्णगतियुमरियिच्चान् । २५६
इक्कथयेल्लामल्लो मौसलमेट्टद्ध्यायं
दुःखनाशनकरं पद्यङ्ङळ् मुन्नूरल्लो । २५७
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चु दिव्यन्मार् पाण्डवन्मार्
उर्व्विये प्रदक्षिणं चेय्वानाय् पुरप्पेट्टार् । २५८
अन्नतु मून्नद्ध्यायं नूट्रिरुपतु पद्यं
पुण्यदं महाप्रस्थानिकमाकिय पर्व्वम् । २५९
धर्म्मराजनुमथ धर्म्मनन्दनन् पिन्पे
धर्म्मत्तेप्परीक्षिप्पान् सारमेयाकारवुं । २६०
कैक्कोण्टु दैन्यं पूण्टिङ्ङारुमिल्लोरुगति
निष्कृपमुपेक्षियार्केन्नोरु भावत्तोटुं । २६१
निल्कुन्ननेरमितुकूटातेयिनिक्किप्पोळ्
स्वर्ग्गप्राप्तियुं वेण्टा केवलमेन्नु नृपन् । २६२
देवदूतनुं पाण्डुसुतनुं धर्म्माधर्म्म-
मावोळं वादं चेय्तु देवदूतनुं तोटु । २६३

वेदव्यासजी ने आत्मज्ञान का उपदेश किया और श्वेताश्व (दारुक) अपने खेद को दबाकर नगर चले गये। शक्रनन्दन (अर्जुन) ने दुःख के साथ अज्ञातशत्रु राजा (युधिष्ठिर) को श्रीकृष्णजी की गति सुनाई। ये सब कथाएँ मौसलपर्व में वर्णित हैं। इसमें आठ अध्याय और तीन सौ श्लोक हैं। २५२-२५७ सब त्याग करके दिव्य पाण्डव पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने के लिए चले गये। यह पुण्यदायक महाप्रस्थानिक नामक पर्व में कहा गया, जिसमें तीन अध्याय और एक सौ बीस श्लोक हैं। धर्मराज यमराज, युधिष्ठर जी के धर्म की परीक्षा के लिए कुत्ते का रूप ग्रहण कर उनके पीछे चले और संकेत किया कि मेरा कोई आश्रय नहीं, मेरी उपेक्षा न की जाय। तब राजा ने कहा कि इसके बिना मुझे स्वर्गप्राप्ति नहीं चाहिए, मैं अकेला स्वर्ग नहीं जाऊँगा। यमराज का दूत और पाण्डु का पुत्र इन दोनों ने धर्म और अधर्म के सम्बन्ध में यथेष्ट बातचीत की और दूत ने हार मानी।

स्वर्ग्गारोहणपर्व्वं पतिनेट्टामततिल्
स्वर्गति लभिच्चितु धर्म्मजादिकळ्क्केल्लाम् । २६४
अद्ध्यायमञ्चुण्टतिल् पद्यङ्ङळिरुनूरुम्
अद्ध्ययनं चेय्युन्नोर्क्केन्नुमे मुक्ति वरुम् । २६५
पर्व्ववु मूव्वारतिल् ग्रन्थवु नूरायिरम्
दिव्यमितद्ध्यायवुमुण्टोरु रण्टायिरम् । २६६
शौनकादिकळ् सूतनुतन्नोटु चोद्यं चेय्तु
मानमौरक्षौहिणिक्केङ्ङ नेयेन्नु चोल् नी । २६७
हस्तियुन्तेरुमोरोन्नश्वं मून्नञ्चु कालाळ्
पत्तियां मून्नु पत्तिकूटियाल् सेनामुखं । २६८
तत्त्रिगुणितं गुल्मं तत्त्रिगुणिपं गणं
तत्त्रिगुणितयल्लो वाहिनियाकुन्नतं । २६९
तत्त्रि गुणितयल्लो पृतनयाकुन्नतु
तत्त्रिगुणितु चमूराख्ययेन्नतु नूनं । २७०
तत्त्रिगुणितयल्लो चोल्लेरुमनीकिनी
तद्दशगुणितयाकुन्नतुमक्षौहिणी । २७१
इरुपत्तोरायिरत्तेण्णूरुमेळुपतु
करिकळ् वेणं नल्लरथवुमत्र वेणं । २७२

यही अठारहवाँ पर्व है जिसमें धर्मज (युधिष्ठिर) आदि को स्वर्गप्राप्ति हुई। उसमें पाँच अध्याय हैं और दो सौ श्लोक हैं। उनका अध्ययन करने वाले अवश्य मोक्ष प्राप्त करेंगे। (समस्त महाभारत में) अठारह पर्व हैं और एक लाख श्लोक हैं और कुल दो हजार दिव्य अध्याय हैं। २५८-२६६ शौनक आदिकों ने सूतजी से एक प्रश्न पूछा—एक अक्षौहिणी का परिमाण बतलाइये। एक हाथी, एक रथ, तीन घोड़े और पाँच पैदल—यह एक पत्ति का परिमाण है; तीन पत्तियों का एक सेनामुख, तीन सेनामुख का एक गुल्म बनता है; तीन गुल्म का एक गण तथा तीन गण की एक वाहिनी बनती है और तीन वाहिनियों की एक पृतना कहलाती है। तीन पृतनाओं की एक चमू, तीन चमू की एक अनीकिनी, दस अनीकिनियों की एक अक्षौहिणी बनती है। इक्कीस हजार आठ सौ सत्तर हाथी होना चाहिए और उतने ही रथ; रथ से तिगुने घोड़े और

मुम्मटङ्ङितिलश्वं कालाळुमञ्चु मट-
ङ्ङम्मतमरियिच्चान् मुनिकळोटु सूतन् । २७३
वैशम्पायनमुनि जयमेजयनोटु
वैशिष्यमुळ्ळ महाभारतमरियिप्पान् । २७४
ऐन्तु कारणमतु चोल्केन्नु केट्टु सूतन्
बन्धमुण्टायतरियिच्चीटामेन्नु चोन्नान् । २७५

उदङ्कोपाख्यानम्

जनमेजयन्तानुं मून्ननुजन्मारुमाय्
मुनिमारोटुं कूटे कुरुक्षेत्रत्तिल्च्चन्नु । १
कनिवोटोरु यागं तुटङ्ङ्यतुकाल-
मनुजातन्मार् मखशालयिलिरिक्कुम्पोळ् । २
चेन्नितु सारमेयन् भूपसोदरन्मारால्
अन्नेरमभिहतनायवनोटिप्पोयान् । ३
तन्नुटे मातावाय सरमयतु कण्टु
खिन्ननाय् करयुन्न नन्दननोटु चोन्नाळ् । ४

पँचगुने पैदल भी होना चाहिए—सूत जी ने अपना यह मत मुनियों को सुनाया। वैशम्पायन जी ने विशिष्ट ग्रंथ महाभारत की कथा जनमेजय को क्यों सुनाई, ऐसा प्रश्न सुनकर सूत जी ने कहा, इसका एक कारण है, वह में बताऊँगा। २६७-२७५।

उदङ्कोपाख्यानम्

जनमेजय अपने तीन भाइयों और मुनियों के साथ कुरुक्षेत्र गये। वहाँ उन्होंने प्रेम से एक याग आरम्भ किया। उस समय जबकि राजा के भाई यज्ञशाला में थे तब एक कुत्ता वहाँ पहुँचा तथा राजा के भाइयों द्वारा मारे जाने पर भाग गया। यह देखकर उसकी माँ सरमा[1] खिन्न हुई और रोते हुए बच्चे से बोली—क्यों रोते हो, किसने तुमको मारा? और क्यों? यह सुनकर उसने कहा— पृथ्वीपति जनमेजय के श्रुतसेन, उग्रसेन,

---

१ संस्कृत में कुतिया को सरमा तथा कुत्ते को सारमेय कहते हैं।

ॲन्तिनु करयुन्नू आरुण्णी हनिच्चतुं
बन्धमेन्तितिनेन्नु केट्टवनुचेय्तान् । ५
पृथिवीपति जनमेजयसोदरन्मार्
श्रुतसेननुमुग्रसेननुं भीमसेनन् । ६
इवर्कळ्मूवरालुं ञानभिहतनायेन्
अवळुमतु केट्टु तनयनोटु चोन्नाळ् । ७
ॲन्तु नीयवरोटु पिळच्चतेन्नु चोल् नी
बन्धमिल्लोरु पिळ ञान् चेय्तीलेन्नानवन् । ८
गन्धिच्चवतिल्ल हव्यं तोट्टीला नोक्कीलल्लो
चिन्तिच्चालितिन्नोरु बन्धमिल्लेतुमम्मे । ९
सत्यमेन्नतुकेट्टु चोल्लिनाळ् सारमेयी
एतुमे विळायते बालने हनिक्कयाल् । १०
हेतुकूटातोरापत्तुण्टाक निनयाते ।
शापत्तेक्केट्टु परितापत्तोटवनीशन् । ११
पापद्ध्वंसनमाय यागत्ते समर्प्पिच्चु ।
शापत्तेयोळिप्पतिनारिनि नल्लतेन्नु । १२
शोमिच्चोरुपाद्ध्यायन्तन्नेटिनानवन् । १३
अन्नाळिल् श्रुतश्रवावाकुन्न मुनिमुटे
पर्ण्णशालयिल् चेन्नान् मृगयाविश्रान्तनाय् । १४

और भीमसेन नामक तीनों भाइयों ने मुझे मारा। यह सुनकर माता ने अपने पुत्र से कहा— उनसे तुमने क्या अपराध किया, यह कहो। पुत्र ने कहा—कोई कारण नहीं है, मैंने कोई अपराध नहीं किया था। मैंने न तो हव्य को सूंघा, न उसको देखा; विचार किया जाय तो कोई कारण नहीं दीखता, सच कहता हूँ। १-९ यह सुनकर कुतिया बोली— बिना किसी अपराध के मेरा पुत्र मारा गया, इसलिए तुमको भी बिना कारण कोई विपत्ति प्राप्त हो। इस शाप को सुनकर पृथ्वीपति ने बड़े परिताप के साथ एक पाप के नाश करनेवाले याग को समर्पित किया। 'शाप को दूर करने के लिए कौन उपयुक्त होगा' ऐसा विचारकर वे एक तेजस्वी उपाध्याय (आचार्य) को खोजने लगे। एक दिन पृथ्वीपति मृगया (शिकार) से थककर मुनि श्रुतश्रवा की कुटी में पहुँचे। और श्रुतश्रवा के पुत्र सोमश्रवा को उन्होंने

मन्नवन् श्रुतश्रवाविन् मकन् सोमश्रवा-
वेंन्न तापसकुमारन्तन्ने वरिच्चितु । १५
पौरोहित्यत्तिन्नप्पोळवनीश्वरनोटु
पारमार्त्थ्यंवु पिता चोल्लिनान् श्रुतश्रवा । १६
वेंन्नुटे पुत्रनाकुं बालकन् सोमश्रवा
पन्नगनारीमणितन्निलुल्पन्ननायान् । १७
धन्यात्मा तपोबलंकोण्टेटं जीविच्चीटुं
वन्हिजशिखासमतेजसां निधि तव । १८
पुण्यौघं वळर्त्तुवान् पोरुमेंन्नतिन्नालुम् ।
निर्ण्णयमितुकोण्टु खेदवुमुण्टाकेण्टा । १९
उण्टल्लो वलियोरु दुद्धरमहाव्रतं
इण्टलुण्टतुकोण्टु शिष्यन्मार्क्कॆन्नुवरुम् । २०
भूदेवयज्ञभंगं चेय्तीटुमाङ्ल्लवन्
मेदिनीपते निनक्कतिनेंस्सहिक्कामो । २१
अन्नवनोत्तवण्णमिरिप्पान् सत्यं चेय्तु
मन्नवन् मुनियोटु नरिच्चुकोण्टानल्लो । २२
अत्तल्तीर्न्नुर्व्वीपति तापसपुत्रनोटुं
हस्तिनं प्रापिच्चनुजन्मारोटुरचेय्तान् । २३

पौरोहित्य के लिए वरण किया। तब पिता श्रुतश्रवा ने पृथ्वीपति राजा से यथार्थ सत्य कह दिया। मेरा पुत्र तरुण सोमश्रवा एक नागवंश की श्रेष्ठ नारी से उत्पन्न हुआ है। वह धन्यात्मा अपने तपोबल से चिरंजीवी होगा। वह अग्निशिखा के समान तेज का निधि है और आपके पुण्य-पुञ्ज को बढ़ाने के लिए बहुत ही उपयुक्त है। इसलिए आप निःसन्देह खेद न करें। एक बड़ा दुर्धर महाव्रत का अनुष्ठान करना है उसमें शिष्यों को कुछ कष्ट होने की संभावना है। वह भूदेवयज्ञ का भंग करनेवाला नहीं है। हे राजन्, क्या आप उसको सहन कर सकते हैं? १०-२१ राजा ने यथोचित रहने और यज्ञ करने की प्रतिज्ञा की, तथा मुनि का वरण किया। दुःख छोड़कर राजा तपस्वी के पुत्र के साथ हस्तिनापुर गये और अपने भाइयों से बोले— हम लोगों को एक तापसवर पुरोहित मिल गये हैं। अब सभी कर्म उनके कहने के अनुसार किये जायंगे। फिर पृथ्वीपति तक्षशिला नामक

नमुक्कु पुरोहितन् तापसवरनिनि-
स्समस्तकर्म्मङ्ङ्ळुमिम्मुनि चोल्लुंवण्णं । २४
पिन्नेप्पोय् तक्षशिलाख्यं पुरं तन्निल्च्चेन्नु
मन्नवन् युद्धं चेय्तु जयिच्चानविटवुम् । २५
सामसन्ध्यादिनिजोपायनीतिकळ्कोण्टुं
सामन्तादिकळेयुमोक्कवे वशत्ताक्कि । २६
तन्नुटे नाटाक्किक्त्तानटक्किकयिरिक्कुंनाळ्
पुण्यात्मा तपोधननायोरु धौम्यनुळ्ळल् । २७
कारुण्यं पूण्टु शिष्यरुपमन्युवुं पुन-
रारुणि पाञ्चालनुं वैदनुमुण्टाय्वन्नु । २८
अलिञ्ञ चित्तत्तोटु वैदनाकिय शिष्यन्
पलनाळोरुपोले गुरुशुश्रूष चेय्तान् । २९
वैदन्तन्नुटे शिष्यनुदङ्कनेन्न मुनि
वैदग्द्ध्यं गुरुशुश्रूषय्कवनेरुमल्लो । ३०
अवनुं पलकालं गुरुशुश्रूष चेय्ता-
नवनेक्कुडिच्चेटं वैदनुं प्रसादिच्चु । ३१
निन्नुटे शुश्रूषकल् पोरुमेन्नरिञ्ञालुं
निन्नोळं गुरुभक्ति मटोरुवक्कुंमिल्ल । ३२
इङ्ङने निन्नेप्पोले गुरुशुश्रूषचेय्वा-
नेङ्ङुमिल्लोरुत्तरुमेन्नरुळ्चेय्तु गुरु । ३३

नगर गये, वहाँ युद्ध करके जीत गये। तदनन्तर समझाने-बुझाने, सन्धि आदि अपने उपायों वाली नीति के द्वारा सभी सामन्तों को उन्होंने अपने वश में कर लिया, उन्होंने उनके देश को अपना देश बनाकर अपने बश में कर लिया। पुण्यात्मा, तपोधन मुनि धौम्य के अपने कारुण्य के कारण, चार शिष्य हुए—उपमन्यु, आरुणि, पांचाल और वैद। वैद नामक शिष्य ने बड़े प्रेम के साथ बहुत दिन अपने गुरु की समानरूप से सेवा की। वैद का शिष्य उदंक नामक मुनि गुरुशुश्रूषा में बड़ा ही निपुण था। २२-३० उसने भी अपने गुरु की बहुत दिन तक शुश्रूषा की। वैद, उदंक से बहुत प्रसन्न हुए और बोले— शुश्रूषा पर्याप्त हो गयी है। तुम्हारी जैसी गुरुभक्ति और किसी में नहीं है। तुम जैसे गुरुशुश्रूषा करनेवाले और कोई कहीं नहीं हैं।

निन्नुटेयात्मशुद्धि कण्टु ञान् प्रसादिच्चे-
न्नेन्नतु निमित्तमाय् वर्द्धिक्क विद्यकळुम् । ३४
पिन्नेयुं पुनरेवं चोल्लिनोराचार्यनो-
टेन्नतु केट्टुनिन्नु चोल्लिनानुदङ्कनुम् । ३५
एङ्किलुं गुरुविनु दक्षिण चेय्तीटेण-
मेङ्किले विद्यकळुं गुणवुं प्रकाशिप्पू । ३६
दक्षनाकिय शिष्यनिङ्ङने परञ्ञप्पोळ्
शिक्षितावाय गुरु पिन्नेयुमरुळ्चेय्तु । ३७
दक्षिण शुश्रूषयिन्मीते मट्टोन्नुमिल्ल
भक्तियिल्लेन्नाकिल् मट्टोन्निनुं फलमिल्ल । ३८
एवमाचार्यन् चोन्नताशु केट्टुदङ्कनु-
मावोळं विनयं पूण्टाचार्यनोटु चोन्नान् । ३९
समस्तकर्म्मङ्ङळ्क्कुं समस्तव्रतङ्ङळ्क्कुं
क्रमत्तालनुष्ठिच्चालन्तं दक्षिणयल्लो । ४०
अल्लेङ्किल् समाप्तियाकुन्नतेन्तरुळ्चेय्क
वल्लतुं वेणमोरु दक्षिणयेन्नु नूनम् । ४१
एङ्किलेन् पत्नियोटु चोदिच्चालवळ् चोल्लुं
शङ्ककूटाते चेय्क दक्षिणयवळ्क्कु नी । ४२

गुरु ने इस प्रकार (और भी) कहा— तुम्हारी आत्मशुद्धि देखकर मैं प्रसन्न हूँ। इस लिए तुम्हारी विद्या की वृद्धि हो। जब आचार्य ने फिर यही कहा तब उस बात को सुनकर उदंक ने निवेदन किया— यह सब ठीक है, परन्तु गुरु को दक्षिणा देनी चाहिए, तभी तो विद्या और सद्गुण खिलेंगे। जब दक्ष शिष्य ने इस प्रकार कहा तब अतिशिष्ट गुरु ने फिर उत्तर दिया— शुश्रूषा से बढ़कर कोई दक्षिणा नहीं है। जहाँ भक्ति नहीं है वहाँ और सब व्यर्थ है। ३१-३८ आचार्य की यह बात सुनकर उदंक ने बड़ी विनय के साथ गुरुजी से कहा— समस्त कर्मों का और सभी व्रतों का अगर क्रम से अनुष्ठान किया जाय, तो उनका अन्त दक्षिणा ही है। नहीं तो क्या वह समाप्त होगा, यह बतलाइए? निःसन्देह कोई दक्षिणा अवश्य चाहिए। (तब गुरु ने कहा—) अगर ऐसा है तो मेरी पत्नी से पूछो। जो कुछ भी वह कहेंगी वही उनको दक्षिणा दे दो। तुम्हारी जय हो। यह सुनकर शिष्य

नल्लनाय् वरिकॆन्नु चॊन्नतु केट्टु गुरु-
वल्लभतन्ने वन्दिच्चवनुं चोद्यं चॆय्तान् । ४३
ऒन्तभिमतमॆन्नु केट्टवळुरचॆय्ताळ्
चिन्तितं पऱञ्ञिटामॆङ्किलो नालान्नाळ् नी ४४
चॊल्लॆळुं पौष्यनाय भूपतिप्रवरन्टॆ
वल्लभयणियुन्न कुण्डलं नल्कीटणम् । ४५
अतु केट्टवन् निजगुरुवां वैदमुनि-
पदतार् नमस्करिच्चनुज्ञकॊण्टु पोयान् । ४६
अन्नेरमॊरु काळतन्मुतुकेऱिक्कॊण्टु
वन्नीटुन्नवन्तन्नेक्काणायि मद्ध्येमार्ग्गम् । ४७
भक्षिच्चीटणं काळतन्मलमॆन्नानवन्
भक्षिच्चु पण्टु वैदन् वर्द्धिक्कुं कायबलम् । ४८
शङ्किच्चीटेण्ट तव सङ्कटमॆल्लां तीरुम्
पङ्कवुमकन्नीटुं मगलं वन्नुकूटुम् । ४९
इत्तरं मुहुर्म्मुहुरुत्तमवाक्यं केट्टु
भक्तियोटुदङ्कनुं भक्षिच्चु वृषमलम् । ५०
पिन्नॆप्पोय् पौष्यनृपन्तन्नॆयुं कण्टानवन् ।
नन्नायि सल्कारं चॆय्तिरुत्ति पौष्यन् तानुम् ।५१
ऒन्तु कांक्षितमॆन्नु भूपति चोदिच्चप्पोळ्
चिन्तितमुदङ्कनुं चॊल्लिनान् परमार्त्थम् । ५२

ने गुरुजी की पत्नी की वन्दना करके उनसे पूछा— आप का क्या अभिमत है। यह सुनकर गुरुपत्नी ने कहा— विख्यात भूपति पौष्य की पत्नी जो कुण्डल पहन रही हैं वे मुझे ला दो। यह सुनकर अपने गुरु वैदमुनि का चरण स्पर्श करके उनकी आज्ञा लेकर उदंक चला गया। उस समय रास्ते में एक वृषभ की पीठ पर बैठा कोई सामने आता हुआ दिखाई दिया। उस (सवार) ने कहा— इस वृषभ का गोबर खाओ। पहले वैदमुनि ने भी खाया है। इससे शरीर के बल की वृद्धि होगी। ३८-४८ कोई शंका न करो, तुम्हारी सब चिन्ताएँ समाप्त हो जायँगी। पाप नष्ट हो जायगा और सब मंगल हो जायगा। बार-बार इस प्रकार का उत्तम वाक्य सुनकर उदंक ने भक्ति के साथ वृषभ का गोबर खा लिया। तदनन्तर

मेदिनीपते तव पत्नितन् कुण्डलङ्ङ-
ळादरवोटु मम नल्कणं मटियातॆ । ५३
भूपति चॊन्नानतु पत्नियोटपेक्षिच्चाल्
तापसवर तव नल्कीटुमवळ्तानुम् । ५४
अतु केट्टुदङ्कनुं पौष्यपत्नियॆक्काण्मा-
नतिकौतुकत्तोटु तिरञ्ञ काणाञ्ञप्पोळ् ५५
भूपति पौष्यन् पुनरुदङ्कनोटु चॊन्नान्
तापसकुलवर काणाय्वान् मूलं चॊल्लाम् । ५६
शुद्धान्तक्करणन्मार्क्कॆतुमे दण्डमिल्ल
शुद्धान्तमद्ध्ये काणां मुग्द्धगात्रियॆ नूनम् । ५७
एतानुमशुद्धतयुळ्ळवर्क्कवळुट-
लेतॊरुतरत्तिलुं कण्टुकूटुकयिल्ल । ५८
ऎन्नतुकॊण्टेतानुमुण्टशुद्धत भवा-
नॆन्नु तोन्नीटुन्नॆन्नु भूपति चॊन्नशेषं ५९
चिन्तिच्चानुदङ्कनुमशुद्धिक्काश-
मॆन्तिनिक्कॆन्नु पुनरुळ्ळिलेतिरञ्ञप्पोळ् । ६०
आचमनं चॆय्याय्क कारणमॆन्नतरि-
ञ्ञाचमनादिकळुं चॆय्तवन् चॆन्नशेषं । ६१

पौष्य का दर्शन किया। पौष्य ने उसका अच्छा सत्कार करके उसको आसन पर बैठाया। भूपति ने पूछा— आप क्या चाहते हैं? तब उदंक ने अपनी वास्तविक इच्छा प्रकट की— हे भूपाल! कृपया अपनी पत्नी के कुण्डल आदर के साथ बिना हिचके मुझे दे दीजिए। भूपति ने कहा— हे श्रेष्ठ तपस्वी! आप मेरी पत्नी से माँगिये। वे आपको अवश्य दे देंगी। यह सुनकर उदंक ने राजरानी को देखने के लिए बड़े कौतुक के साथ उनको ढूंढा, परन्तु वह मिली नहीं। तब भूपति पौष्य ने उदंक से कहा— हे तापसकुलवर, मैं न मिलने का कारण आपको बताऊँगा। ४९-५६ सुद्ध अन्त:करणवालों के लिए कोई कठिनाई नहीं है। उनको वह अवश्य अन्त:पुर में दिखाई देती हैं। जिसमें कोई भी अशुद्धि हो, वह उनका शरीर किसी भी तरह नहीं देख सकता है। इसलिए मुझे प्रतीत होता है कि आपमें कोई अशुद्धि अवश्य है। जब भूपति ने इस प्रकार कहा तब

भूपति पत्नितन्नेक्काणायितन्त:पुरे
तापसेन्द्रने नृपपत्नि सत्क्कारं चेय्ताळ् । ६२
कुण्डलमपेक्षिच्च नेरत्तु राजपत्नि
दण्डमेन्नियेयळिच्चाशु दानवुं चेय्ताळ् । ६३
कुण्डलीश्वरनाय तक्षकन्तन्नालोरु
दण्डमुण्टाकाते पोय्कोळ्ळेणमेन्नु चोन्नाळ् । ६४
पण्टु तक्षकनपेक्षिच्चितेन्नोटुतन्नि-
युण्टवनकतारिलाग्रहमितिलेट़म् ६५
तक्षकभयमिल्लेन्नक्षणमुदङ्कनुं
दक्षिणचेय्वान् परिग्रहिच्चु कौतूहलाल् । ६६
भूपतिपत्नियोटु कुण्डलमतुं वाङ्ङि-
त्तापसवरन् पौष्यनन्तन्नेक्कण्टतुनेरं । ६७
भोजनं कळिञ्ञोळिञ्ञाशु पोकरुतिनि-
प्पूजितनाय भवानेन्नु सत्क्कारपूर्व्वं । ६८
अन्नदानवुं चेय्तु भूपतितिलकनु-
मन्नमितशुद्धमेन्नानप्पोळुदङ्कनुं । ६९

उदंक ने सोचा— मुझ में क्या अशुद्धि हो सकती है ? जब वह अशुद्धि को अपने में ही ढूंढने लगा तब मालूम हुआ कि आचमन न करने के ही कारण वह (रानी को) देख न सका। अनन्तर आचमनादि करके जब वह फिर गया तब अन्त:पुर में भूपति की पत्नी दिखायी दी। और नृपपत्नी ने तापसेन्द्र का सत्कार किया। उनसे जब कुण्डलों की याचना की गयी तब राजपत्नी ने विना दु:ख के कुण्डल उतार कर उनको दान कर दिये। उन्होंने यह भी कहा कि ऐसे ढंग से चले जाओ कि रास्ते में नागराज तक्षक के द्वारा कोई कष्ट न हो। पहले तक्षक ने इन (कुण्डलों) की याचना की थी, उसके हृदय में इनके लिए बड़ी इच्छा है। ५७-६५ "मैं तक्षक से नहीं डरता हूँ" यह कहकर उदंक ने उस समय कुतूहल के साथ दक्षिणा देने के लिए कुण्डलों को ले लिया। रानी के हाथों से कुण्डल लेकर तापसवर जब पौष्य से मिले तब भूपति ने कहा— आप मेरे पूज्य हैं, भोजन करके और आराम करके जाइए, जल्दी न जाइए। यह कहकर उन्होंने अन्नदान किया। तब मुनि उदंक ने कहा— यह अन्न अशुद्ध है। इसलिए तुम

अन्धत्वमुण्टाय्‌वरिकतिनालेन्नु मुनि
चिन्तिच्चु पौष्यनप्पोळुदङ्कनोटु चोन्नान् । ७०
अन्धस्सिन्नशुद्धत चोल्लिय भवान्तनि-
क्कन्धत्वमाय्‌वन्नतु केवलमिनिक्किल्ल । ७१
एतुमोरशुद्धमिल्लाद्रिप्पोयतुमूलं
कोपिच्चु शपिच्चतिनङ्ङोट्टु शपिप्पेन् ञान् । ७२
सन्ततियुण्टाकाय्केन्नवनीपति चोन्ना-
नन्धत्वमतुतन्नेयायतेन्नतुंवरुम् । ७३
पिन्नेयोर्त्ततुनेरं तन्वगि तलमुटि
नन्नायित्तिरुकाते विळम्पियतु मूलं ७४
रोमवुं कोळिञ्ञितु चोट्टिलन्नतुमेल्लां
भूपालनद्रियाय्कयालकप्पेट्टुपोयि । ७५
चेतसि विचारमिल्लाय्कयाल् कूटेशपि-
च्चातुरनाय मम शापं तीर्त्तरुळेन्नान् । ७६
मेदिनीवरनितु चोन्नतु केट्टु मुनि
वेदवादिकळ्‌वाक्यमसत्यमाकयिल्ल । ७७
अल्पकालंकोण्टतु तीरुमेन्नते वरू
पिल्पाटु नन्नाय् वरुं विप्रन्मारुटे शापम् । ७८

अन्धे हो जाओ । पौष्य ने सोचकर उदंक से कहा— मैं ही केवल अन्धा नहीं हूं, अन्न की अशुद्धि बतलाकर आपने अपना ही अन्धत्व प्रकट किया है; उसमें कोई अशुद्धि नहीं है । कुछ ठंडा हो गया है, इसलिए आपने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया, मैं भी आपको बदले में शाप दूंगा । फिर राजा ने कहा— आपके कभी सन्तान न हो और वही आप का अन्धत्व भी होगा । ६६-७३ फिर सोचने पर प्रतीत हुआ कि दुबली-पतली राजपत्नी ने अपने बालों को बिना सँभाले भोजन को परोसा था, इसलिए बाल अलग होकर अन्न में गिर गया था । यह सब न जानने के कारण मैंने भूल की और अपने मन में विचार न करने के कारण मैंने बदले में शाप दे दिया । अत: खिन्न होकर बोले— आप कृपया अपने शाप का अन्त बतलाइये । राजा का यह वचन सुनकर मुनि ने कहा— वेदवादियों का वाक्य असत्य नहीं हो सकता । इतना ही हो सकता है कि अल्पकाल में ही उसका फल समाप्त हो

अँन्नॆ नी शपिच्चतु तीर्त्तरुळॆन्नु मुनि
मन्नवन् पौष्यनप्पोळुदङ्कनोटु चॊन्नान् । ७९
पीयूषसमं वाक्यमात्मावु वज्रोपमं
पीयूषसममात्मा वाक्कुकळ् वज्रोपमं ८०
इङ्ङनॆयुळ्ळु राजाक्कन्मावर्कुं द्विजन्मावर्कु-
मङ्ङनॆयाकयालिन्नॆन्नुटॆ शापं तीरा । ८१
अँङ्किलो शापमिनिक्केल्कयिल्लॆन्नु मुनि
शङ्ककूटातॆ यात्र परञ्ञु नटकॊण्टु । ८२
अंबुधिपोलॆ घोषिच्चिळकि दिगंबरा
डबराघोषं रण्टु कुण्डलं वच्चु भुवि ८३
संभ्रमत्तोटु नीरिलिरङ्ङीतुदङ्कनुम् ।
संभ्रान्तन् कुण्डलवुं कॊण्टोटिप्पेटियातॆ । ८४
पिन्नालॆ मुनीन्द्रनुं चॆन्नु पाताळं पुक्कान्
पन्नगकुलवरन् तक्षकनॆन्नतरि- ८५
ञ्ञन्नेरं नागङ्ङळॆ स्तुतिच्चानुदङ्कनुम् ।
तापङ्ङळ् पोम्मारॊरु पुरुषन् तन्नॆक्कण्टान् । ८६
तुरगरत्नोपरि वत्सरचक्रत्तोटुं
पॆरिकॆ स्तुतिच्चितु भक्तिपूण्टुदङ्कनुम् । ८७

जाय । ब्राह्मणों का शाप बाद में भला करनेवाला है । इसलिए आप अपने शाप का अन्त बतला दीजिए । तब राजा पौष्य ने उदंक से कहा— वाणी अमृत के समान है और आत्मा वज्र के समान । आत्मा अमृत के तुल्य है और वाक् वज्र के समान । क्षत्रियों की और ब्राह्मणों की व्यवस्था इस प्रकार है, इसलिए मेरा शाप आज समाप्त नहीं हो सकता । ७४-८१
'अगर ऐसा है तो आपका शाप मुझे लगेगा ही नहीं', इतना कहकर मुनि विदा होकर चले गये । फिर उन्होंने देखा कि आकाश समुद्र के समान गरज रहा है और क्षुब्ध हो रहा है । इसलिए कुण्डलों को भूमि पर रखकर संभ्रम के साथ उदंक जल में उतरे । तब संभ्रान्त (सर्प) कुण्डल लेकर निर्भय भागा । मुनीन्द्र ने उसका पीछा किया और वे पाताल में प्रवेश कर गये । यह जानकर कि वह पन्नगों का राजा तक्षक है उस समय उदंक ने नागों की स्तुति की । तब एक दुःख दूर करने योग्य पुरुष दिखाई दिया

पुरुषनतुनेरं ऋषियोट्टुरचेय्तु
परितापङ्ङळेल्लां पोक्कुवनेङ्किलिप्पोळ् । ८८
अश्वत्तिन् पृष्ठत्तिङ्कलूतुकेन्नतु केट्टु
विश्वासं केक्कोण्टतु चेय्तितु मुनीन्द्रनुम् । ८९
अश्वस्यविनिर्गतमायितु धूमं पृष-
दश्वनुं परत्तिनानेङ्ङुमे पाताळत्तिल् । ९०
पवनाशनन्मारुमतिनालिटर्पूण्टु
पवनाशनपति तक्षकनतुनेरं । ९१
कुण्डलमुदङ्कनु कोंटुत्तान् मटियाते
कुण्डलीषण्डमोरु दण्डमेन्नियेे तीर्त्तान् । ९२
चिन्तितमिन्नुतन्ने दक्षिणचेय्येणमे-
न्नेन्ततिन्नोरु कळिवेन्तरुळचेय्तीटणम् । ९३
तुरगत्तिन्मेलेरिक्कोळ्केन्नालेत्तुमेन्नान्
पुरुषनतु केट्टु करयेरिनान् मुनि । ९४
अरनाळिककोण्टु गुरुसन्निधिपुक्कु
गुरुपत्निक्कु चेय्तु दक्षिण मुनीन्द्रनुम् । ९५
पत्नियुं प्रसादिच्चु शिष्यनोट्टुरचेय्तु
रत्नमायतु पुरुषन्मारिल् वच्चु भवान् । ९६

जो एक अश्वरत्न पर बैठा हुआ था और जिसके हाथ में वत्सरचक्र था। उदंक ने भक्ति के साथ उसकी स्तुति की। उस समय पुरुष ने मुनि से कहा— मैं तुम्हारे सब दुःख दूर करूँगा, पर तुम्हें अश्व के पृष्ठभाग पर फूँक मारना होगा। यह सुनकर उदंक ने विश्वास के साथ ऐसा ही किया। ८२ ८९ तब घोड़े के मुँह से धुआँ निकला और वायु के द्वारा उसके सारे पाताल में फैलते ही सारा नागलोक दुखित हुआ और नागों के राजा तक्षक ने उस समय बिना विलम्ब के उदंक को कुण्डल दे दिये। इस प्रकार बिना कष्ट के उदंक ने कुण्डली वर्ग (साँपों के झुंड) को समाप्त कर दिया। "सोची हुई दक्षिणा आज ही दी जाय। इसके लिए क्या उपाय है, यह बतलाइये"—उदंक ने कहा। पुरुष ने उत्तर दिया— घोड़े पर बैठ जाओ, तो आज ही पहुँच जाओगे। यह सुनकर मुनि घोड़े पर बैठ गये। आधी घड़ी में मुनीन्द्र उदंक, गुरु के पास पहुँच

नीयितु चॅय्याय्किल् ञान् शपिप्पान् निरूपिच्चु
पोयालुमिनित्तव नल्लतु वन्नुकूटुम् । ९७
आचार्यपत्नितन्नोटाशियुं परिग्रहि-
च्चाचार्यपादांबुजमादराल् वणङ्ङिनान् । ९८
वृत्तान्तमॅल्लां केट्टु विस्मयं पूण्टु वैदन्-
पॉल्त्तळिरटि कूप्पिच्चोदिच्चानुदङ्कनुम् । ९९
वॅळ्ळक्काळयुमेऱिक्काणायितॉरुत्तनॅ
चॉल्लिनानवनॅन्नोटशिप्पान् वृषमलम् । १००
निन्नुटॅ गुरुवितु भक्षिच्चितॅन्नु चॉन्ना-
नॅन्नतु केट्टु ञानुं भक्षिच्चेनतिन्मलम् । १०१
ऍन्ततिन् फलमॅन्तुमारवनॅन्नुमॅल्लां
निन्तिरुवटियरुळ्चॅय्यणमॅन्नोटिप्पोळ् । १०२
नागलोकत्तु चॅन्ननेरत्तु कण्टू पिन्नॅ
वेगत्तिलाऱु कुमारन्माराल् भ्रमिप्पिक्कुं १०३
चक्रवुं तेजोमयमायॉरु कुतिरयुं
तल्कण्ठदेशे पुनरॅन्नयुं तेजस्सोटुं १०४
दिव्यनायिरिप्पोरु पुरुषश्रेष्ठनेयुं ।
सर्व्ववुमिवट्टिन्टॅ तत्त्वङ्ङळरुळ्चॅय्क । १०५

गये और उन्होंने गुरुपत्नी को दक्षिणा अर्पण की। गुरुपत्नी प्रसन्न होकर शिष्य से बोली—पुरुषों में तुम सचमुच रत्न हो। तुम यह काम न करते तो मैं शाप देनेवाली थी। अब तुम जा सकते हो, अब तुम्हारा भला ही होगा। उदंक ने आचार्यपत्नी से आशीर्वाद पाया और आदर के साथ आचार्य-चरणों की वन्दना की। ९०-९८ सब वृत्तान्त सुनकर गुरु वैद विस्मित हुए और उनके चरणों में प्रणाम कर उदंक ने पूछा—मार्ग में श्वेत वृषभ पर बैठा हुआ एक पुरुष मुझको दिखाई दिया। उसने मुझसे वृषभ का गोबर खाने के लिए कहा। यह भी कहा कि तुम्हारे गुरु ने भी इसे खाया है। यह सुनकर मैंने भी गोबर खा लिया। उसका फल क्या है? और वह पुरुष कौन था? यह सब कृपया गुरुचरण अब मुझे बता दें। जब मैं नागलोक गया तब वहाँ मैंने छः कुमारों द्वारा घुमाया जाने वाला एक चक्र, एक तेजस्वी घोड़ा और उसकी पीठ पर बैठा हुआ एक

वेदवेदाङ्गज्ञनां वैदनुमतुकेट्टु
सादरमुदङ्कनां शिष्यनोटरुळ्चॅय्तान् । १०६
धवळमयमाय वृषभमैरावतं
विबुधेश्वरन् मलमशिप्पान् चॉल्लियतुं १०७
अमृतमतिन्मलमतु सेविप्पोर्क्कॅन्तु-
ममरत्ववुं वरुमिन्द्रनॅन्नुटॅ सखि १०८
पाताळं पुक्कनेरं बाधकळ् वराञ्ञतुं
वासवदेवननुग्रहत्तालरिञ्ञालुम् । १०९
षळ्क्कुमारन्मार् तिरिच्चीराररस्त्रङ्ङळोटु-
मुग्रमाय्काणायतु वत्सरचक्रमॅटो । ११०
अश्वमायतुमग्नि निन्नॅयिङ्ङाक्कियतुं
निश्चयमरिकॅक्काणायतु पर्ज्जन्यनुम् १११
अद्भुतमॅत्रयुं नी साधिच्चतरिञ्ञालुं ।
सत्पुरुषन्मारिल् नी मुन्पनाय् वरिकॅन्नान् । ११२
अक्कालमुदङ्कनुं तक्षकन्तन्नॅक्कॉल्वान्
उळ्क्कान्पिल् निरूपिच्चु कल्पिच्चानुपायवुम् । ११३

अत्यन्त तेजस्वी दिव्य पुरुषश्रेष्ठ देखा। इन सबके तत्त्व कृपया बतला दीजिए। ९९-१०५ यह सुनकर वेद और वेदांगों के विद्वान् वैद मुनि ने अपने शिष्य उदंक से सादर कहा—जो श्वेत वृषभ (बैल) था वह ऐरावत (इन्द्र का हाथी) था, जिसने गोबर खाने को कहा वह स्वयं विबुधेश्वर (इन्द्र) थे। और वृषभ का गोबर तो अमृत ही था जिसे सेवन करने वालों को सदा के लिए अमरत्व प्राप्त होता है। इन्द्र मेरे सखा हैं। पाताल में जो तुम्हें कोई बाधा नहीं हुई सो जान लो कि वासव (इन्द्र) के अनुग्रह का परिणाम था। जो छः कुमारों द्वारा छः अस्त्रों के साथ घुमाया जाता हुआ दिखाई दिया वह वत्सर-चक्र था। जो घोड़ा तुम्हें यहाँ लाया वह अग्नि था। जो निकट में दिखाई दिया वह निःसन्देह पर्जन्य (इन्द्र) था। तुम जान लो कि तुमने अद्भुत काम किया है और सत्पुरुषों में तुम अग्रणी हो जाओ। १०६-११२ उन दिनों उदंक ने तक्षक को मारने के लिए अपने मन में निश्चय किया और उपाय भी ठान लिया। जब राजा जनमेजय कुरुक्षेत्र में मुनियों के साथ यज्ञ कर रहे थे, तब

जनमेजय नृपन् कुरुक्षेत्रत्तिङ्कॅन्नु
मुनिमारोट्टुमॉरु यागं चॅय्युन्न कालं ११४
पुक्कितु कुरुक्षेत्रमुदङ्कन् नृपतियुं
सत्करिच्चर्घ्यादिकळ् नल्कियोरनन्तरं । ११५
उत्तममॅत्रयुं नी चॅय्युन्न यागमिति-
लुत्तममायिट्टुण्टु ञानॉन्नु चॉल्लीटुन्नु । ११६
वल्लातॅ जनकनॅक्कॉन्न तक्षकन्तन्नॅ
कॉल्लुवानुत्साहं चॅय्तीटुकिलितिन्मीतॅ । ११७
नल्लतिल्लेतुमितु चॉल्लुवनरिञ्ञालुम् । ११८
तापसबालकन्टॅ शापं प्रामाण्यमाक्कि
भूपतिप्रवरनॅ कॉल्लुवान् काश्यपनॅ ११९
तटुत्तु परीक्षिच्चु पटुत्वमोटु पेराल्
कटिच्चु दहिप्पिच्चु तळप्पिच्चितु मुनि । १२०
कॉटुत्तु रत्नादिकळ् तक्षकन् काश्यपनु
नटिच्चु कटिच्चतिनॅन्तु कारणमोर्त्ताल् । १२१
ऑटुक्कीटेणमवन्तन्नॅयॅन्नुदङ्कनु-
मटुप्पमोटु पऱञ्ञु उरप्पिच्चतुनेरं १२२

उदंक कुरुक्षेत्र गये। नृपति ने उनके सत्कार में अर्घ्यादि भेंट किया। तदनन्तर (उदंक ने कहा—) जो याग कर रहे हो वह उत्तम है। इससे भी बढ़कर एक प्रयोग है जो मैं तुम्हें बताऊँगा। अगर तुम तक्षक का वध करने के लिए, जिसने तुम्हारे पिता को मारा है, उत्साही हो जाओगे तो इससे बढ़कर कोई अच्छी बात नहीं होगी। ११३-११७ इतना मैं कहता हूँ। तुम जान लो। तापस बालक के शाप को प्रामाण्य मानकर भूपति प्रवर (परीक्षित्) को मारने के [उद्देश्य की पूर्ति के] लिए तक्षक ने मुनि काश्यप को रोका[1], और अपनी परीक्षा देने के लिए एक बड़े वटवृक्ष को काटकर जला दिया। पर मुनि ने उसको फिर जीवित कर दिया। तब (तक्षक ने) काश्यप को रत्न आदि प्रदान किया। विचार किया जाय तो इस प्रकार बुद्धिपूर्वक उसको (परीक्षित को) का काटने कारण ही क्या है? उसको समाप्त ही करना चाहिए। जब उदंक ने इस प्रकार निकट

१ तक्षक के पिता काश्यप, राजा परीक्षित् की रक्षा के लिए जा रहे थे।

मन्त्रिकळोटुकूटॅ मन्त्रिच्चु नृपतियुं
चिन्तिच्चु मुनिमारॅ वरुत्तियुरचॅय्तु । १२३
तक्षकन्तन्नॅक्कॉल्वान्तक्कॉरु यागं चॅय्वान्
तल्क्षणं तुटङ्ङिनार् सर्प्पसत्रवुमवर् । १२४
कारणमितु सर्प्पसत्रत्तिनॅन्नु सूत-
नारणरॉटु परञ्ञीटिनोरनन्तरं । १२५
इक्कथाशेषं चॉल्वान् पिन्नॅयामॅन्ने वेण्टु ।
मुख्यमां भृगुवंशं चॉल्लणमितिन्मुन्पे १२६
नम्मुटॅ गुरुभूतन्मारवरवरुटॅ
जन्मादिगुणङ्ङळॅच्चॉल्लणं मटियातॅ । १२७

भृगुकुलविस्तारम्

सूतनुमतुनेरं चॉल्लिनानवरोटु
वेधाविन्मकन् भृगु भृगुजन् च्यवननुं । १
च्यवननुटॅ मकन् प्रमति मुनिवरन-
वनुं घृताचियिलुण्टायि रुरुनामा २
मट्टुमुण्टॉरु पुत्रन् शुनकनॅन्नु नामं
कुट्मिल्लात मुनि शौनकनवन्मकन् । ३

से समझाया तब नृपति (जनमेजय) ने अपने मन्त्रियों से सलाह की और सोंचकर मुनियों को बुलाया, ११८-१२३ और उनसे तक्षक का नाश करने योग्य याग के अनुष्ठान के लिए कहा। तत्काल ही उन्होंने एक सर्पसत्र प्रारम्भ किया। सूतजी (संजय) ने ब्राह्मणों से कहा—"सर्पसत्र कराने का यही कारण है"। इस कथा का शेष बाद में ही कहा जा सकता है। इससे पहले भृगुवंश की उत्पत्ति बतलाना चाहिए। अपने पूर्वज गुरुओं के जन्म आदि धर्मों को बिना संकोच के बतलाना चाहिए। १२४-१२७

भृगुकुल का विस्तार

तब सूतजी ने उनसे कहा—वेधा (ब्रह्मा) का पुत्र है भृगु, भृगु का पुत्र च्यवन, च्यवन का पुत्र है प्रमति जो मुनियों में श्रेष्ठ है। उसके द्वारा घृताची [के गर्भ] में रुरु नामक पुत्र हुआ। एक और पुत्र का नाम है

इत्थं चॉन्नतुनेरं तापसनरुळ्चॅय्तु
विस्तराल् चॉल्लीटणं च्यवनोल्भवमॅल्लाम् । ४

च्यवनोल्भववुं वह्निशापवुम् ।

ऍङ्किलो पुलोमाख्यभृगुपत्नियुं गर्भं
भंगियिल् धरिच्चिरिक्कुन्नॉरु कालत्तिङ्कल् १
चॅन्नितु पुलोमाख्यनाय राक्षसनप्पोळ्
नन्नाकॅन्नतिथिपूजकळुं चॅय्ताळवळ् । २
भृगुपत्नियॅक्कण्टु राक्षसप्रवरनुं
मकरध्वजपरवशनायतुनेरं ३
कुण्डत्तिलॅरियुन्न पावकन्तन्नॅक्कण्टु
वन्दिच्चु चोदिच्चितु राक्षसप्रवरनुम् । ४
अखिलसुरवृन्दमुखमाकिय पोट्टि !
निखिलशुभाशुभकर्म्मसाक्षियुं नीये । ५
तन्वंगियाकुमिवळ् भृगुविन् पत्नियॅङ्कि-
लॅन्नॉटु परमार्त्थमरुळिच्चॅय्तीटणम् । ६

शुनक और उसके निर्दोष सुत का नाम है शौनक। जब इस प्रकार कहा गया तब तापस (उदंक) ने कहा—च्यवनोद्भव आदि कथा विस्तार से कह दीजिए। १-४

च्यवन-उत्पत्ति और अग्नि-शाप

अतीत में जब भृगुपत्नी पुलोमा चारु रूप से गर्भ धारण करती थी तब पुलोम नामक राक्षस वहाँ गया और पुलोमा ने अच्छी तरह से [उसकी] अतिथिपूजा की। भृगुपत्नी को देखकर राक्षसप्रवर मकरध्वज (मदन) के वश में आ गया और उस समय कुण्ड में जो अग्नि जल रही थी उसकी वन्दना करके राक्षस ने उससे पूँछा—समस्तदेवगणों का मुखभूत हे नाथ ! तुम ही सभी शुभ और अशुभ कर्मों के साक्षी हो। अगर यह तन्वंगी[1] भृगु की पत्नी है, तो तुम मुझसे कृपया परमार्थ बतला दो। १-६ तब शोभावाले भगवान अग्नि ने निवेदन किया कि भृगु की

[1] दुबले-पतले शरीर वाली।

तापसि भृगुपत्नियायतुमिवळॅन्तु
शोभतेटीटुमग्निभगवानरुळ्चॅय्तु । ७
ञ्ञानिवळ्तन्नॅ वेळ्प्पान् भाविच्चुवाळुंकालं
आयतिन्मुन्पे भृगु वेट्टुकॉण्टतुमूलं । ८
कॉण्टुपोकुन्नेनॅन्तु सूकरवेषं कैक्को-
ण्टन्नवनवळॅयुमॅटुत्तु नटकॉण्टु । ९
गर्भपात्रस्थनायोरर्भकनतुनेर-
मुल्भविच्चवन्तन्नॅ नोक्किनान् कोपत्तोटॅ । १०
नेत्राग्नितन्निल् दहिच्चीटिनान् निशाचरन् ।
मार्त्ताण्डसमनाय पुत्रनॅयॅटुत्तवळ् ११
त्रस्तयाय् वीर्त्तुवीर्त्तु करञ्ञुकरञ्ञुळ्ळिल्
चीर्त्तवेदनयोटुमाश्रमत्तिङ्कल् चॅन्ताळ् । १२
अश्रुक्कळ् वीणु वसुधरयॅन्नॉरु नदि
विश्रुतमाय तीर्त्थमुण्टायिततु कालम् । १३
वन्नॉरु भृगुमुनि वृत्तान्तमॅल्लां केट्टु
तन्नुटॅ पत्नियोटु पिन्नॅयुं चोद्यं चॅय्तान् । १४
निन्नॅयिन्नवळॅन्तु चॉन्नतारवनोटु
निन्नॅ राक्षसनरिवानवकाशमिल्ल । १५

पत्नी यही तापसी है। (राक्षस के कहा)—मैं उससे विवाह करने को सोंच ही रहा था पर उससे पहले ही भृगु ने उससे विवाह कर लिया। इसलिए मैं उसे ले जा रहा हूँ।—यह कहंकर सूकर का वेष धारण करके वह उसे लेकर चल पड़ा। उस समय गर्भाशय में जो बालक था वह पैदा हुआ और क्रोध के साथ उसने राक्षस को देखा। वह बालक के नेत्राग्नि से जल कर भस्म हो गया। त्रस्त होकर बार-बार उष्ण निश्वास लेती हुई और रोती हुई माता अपने मार्तण्ड (सूर्य) के समान पुत्र को लेकर बड़े दुःख के साथ आश्रम पहुँची। ७-१२ तब उसकी आँसुओं की एक वसुधरा नामक नदी बन गयी जो कालान्तर में एक विख्यात तीर्थ हो गया। उस समय भृगुमुनि आगये। सब वृत्तान्त सुनकर उन्होंने अपनी पत्नी से पूँछा—उससे किसने कहा कि तुम कौन हो? राक्षस को तुम्हें जानने का कोइ अधिकार ही नहीं है। तुम्हारे तत्त्व को राक्षस से जिसने

निन्नुटॅ परमात्थं राक्षसनोटु नेरे
चॉन्नवन्तन्नॅश्शपिच्चीटुवन् नेरे चॉल नी १६
तन्नुटॅ भर्त्तावित्थं चॉन्नतु केट्टु चॉन्नाळ्
वह्नि राक्षसनोटु पऱञ्ञु कॉटुत्ततुम् । १७
क्रुद्धनायग्नितन्नॅश्शपिच्चु भृगुमुनि
शुद्धियुमशुद्धियुं भेदमॅन्नियेे भवान् १८
सर्व्ववुं भक्षिच्चुपोकॅन्नतु केट्टनेरं
हव्यवाहनन् तानुं भृगुविनोटु चॉन्नान् । १९
अन्यायमत्ते भवानिन्नॅन्नॅश्शपिच्चतु
निर्ण्णयं नरकमुण्टसत्यं चॉल्लीटुकिल् । २०
सत्यत्तॅयुपेक्षचॅय्तसत्यं चॉल्लुन्नवन्-
पुत्रसन्ततिकळ्क्कुमिल्लॉरुनाळुं गति । २१
तानऱिञ्ञातु पऱयाय्किलुं दोषमुण्टु
ञानिवयऱिञ्ञत्ते पऱञ्ञु महामुने ! २२
ऍन्निवयऱियाते कोपेन शपिच्चतु
नन्नल्ल निन्नॅक्कूटिश्शपिक्कामिनिक्कॅटो ! २३
विप्रन्मारोटु विरोधं तुटङ्ङरुतॅन्नु
कल्पिच्चु शमिक्कुन्नेनॅन्नु नीयऱियेणम् । २४

सीधे कह दिया उसको मैं शाप दूंगा। अतः जल्दी बतलाओ।—पति की यह बात सुनकर उसने कहा—अग्नि ने ही राक्षस को बतला दिया। तब क्रुद्ध होकर भृगुमुनि ने अग्नि को शाप दिया कि शुद्ध और अशुद्ध का भेद न करके तुम सभी वस्तुओं को खाते जाओ। यह सुनकर हव्यवाहन (अग्नि) ने भृगु से कहा—यह अन्याय है कि तुमने आज मुझको शाप दिया है। असत्य बोलने का फल अवश्य नरक ही होगा। सत्य की उपेक्षा करके जो असत्य बोले उसके पुत्र-सन्तान आदिकों की कभी अच्छी गति न होगी। अपनी जानी हुई बात को न कहने में भी दोष है। यह सब सोचकर ही मैंने बतला दिया मुनि जी ! । १८-२२ यह सब न जानकर तुमने जो शाप दिया सो ठीक नहीं है। मैं भी तुम्हें शाप दे सकता हूँ। परन्तु जान लो कि यह सोंचकर कि ब्राह्मणों से विरोध करना उचित नहीं होगा, मैं शान्त हो रहा हूँ। पितृ और

ञानत्ते पितृदेवादिकळॅ सङ्कल्पिच्चु
मानवन्मार् चॅय्तीटुं कर्म्मङ्ङळ्क्काधारवुं । २५
ञानत्ते देवन्मार्क्कु मुखमायीट्टुन्नतुं
ञानत्ते वेदोक्तमां कर्म्मङ्ङळ्क्काधारवुं । २६
ञानत्ते सर्व्वलोकव्याप्तनायीट्टुन्नतुं
ज्ञानिकळुळ्ळिलुळ्ळोरज्ञानं दहिप्पतुं । २७
ञानत्ते सर्वसाक्षिभूतनायीट्टुन्नतुं
ञानत्ते जन्तुक्कळॅ सृष्टिक्कुन्नतुं नित्यं २८
ञानत्ते जन्तुक्कळॅ वर्द्धिप्पिच्चीट्टुन्नतुं
ञानत्ते जन्तुक्कळॅ रक्षिक्कुन्नतुं नित्यं २९
ञानत्ते जन्तुक्कळॅ भक्षिक्कुन्नतुमॅटो !
ञानत्ते सर्वौषधरसमुण्टाक्कुन्नतु- ३०
मक्षरकर्म्मादिकळक्काद्ध्यक्ष्यमिनिक्कत्ते
मुख्यदेवतापूजय्क्कॉक्क मुन्पॅनिक्कत्ते ३१
अज्ञानमुण्टाकरुतॅनिक्कु निन्नॅप्पोलॅ ।
विज्ञानस्वरूपन् ञानॅन्नतोर्त्तङ्ङटङ्ङुन्नेन् । ३२
नल्लतु शममत्ते नल्लवर्क्कॅल्लावर्क्कुम् ।
कल्याणमितिल्परमिल्लॅन्नु वह्निदेवन् ३३

देवों का संकल्प करके मनुष्यों के किए कर्मों का मैं ही आधार हूँ । देवों का मुख बननेवाला मैं ही हूँ, वेद के प्रतिपादित कर्मों का मैं ही आधार हूँ, सभी लोगों में व्याप्त होनेवाला मैं ही हूँ, ज्ञानियों के अन्दर का अज्ञान जला देनेवाला भी मैं ही हूँ। सभी का साक्षी बननेवाला मैं ही हूँ, नित्य जन्तुओं की सृष्टि करनेवाला मैं ही हूँ, जन्तुओं को बढ़ानेवाला मैं हूँ, जन्तुओं की रक्षा करनेवाला मैं हूँ और जन्तुओं का भक्षण करनेवाला भी मैं ही हूँ। सभी औषधों का रस बनानेवाला मैं ही हूँ, अक्षर कर्मों का आध्यक्ष्य[1] भी मैं ही सँभालता हूँ, मुख्य देवता की पूजा के पहले मेरी ही पूजा होती है। [इसलिए] तुम्हारे जैसा मैं भी अज्ञान प्रकट करूँ यह उचित नहीं। मैं विज्ञानस्वरूप हूँ। क्योंकि सज्जनों के लिए शम ही अच्छा है, इससे बढ़कर कल्याण करनेवाला और कुछ नहीं है ।—इतना कहकर वह्निदेव[2] तिरोहित[3] हो गये । यह देखकर

१ वेद में विहित नाशरहित कर्मों की अध्यक्षता २ अग्निदेव ३ अन्तर्द्धान ।

शान्तनाय् मऱञ्ञातु कण्टॊरु मऱयोरुं ।
शान्तचित्तन्माराय मामुनिजनङ्ङळुं ३४
आवर्तॆन्तिनियॆन्तु तन्नुळ्ळल् निरूपिच्चु
देवकळोटु चॊन्नारुण्टाय विशेषङ्ङळ् । ३५
अग्नितन्नभावत्ताल् मऱञ्ञु कर्म्मङ्ङळुं
मग्नमायितु लोकमापदांबुधितन्निल् । ३६
सृष्टिकर्त्तावायीटुं ब्रह्मनोटिवयॆल्ला-
मॊट्टुं वैकातॆ चॆन्नङ्ङुणर्त्तिक्कयुं वेणं । ३७
कष्टमॆन्तितिनॊरु कारणमऱिञ्ञील्ल
नष्टमायिटुमिप्पोळल्लायि्कल् प्रपञ्चवुं । ३८
पॆट्टॆन्नु देवादिकळतु केट्टनन्तरं
क्लिष्टमानसन्माराय् सत्यलोकवुं पुक्कार् ।
शिष्टन्माराकुं मुनिमारुं निर्ज्जरन्मारुं ३९
स्पष्टवर्ण्णोद्यल्स्तुति नमस्कारादि परि-
तुष्टनायीटुं जगल्स्रष्टाविनोटु चॊन्नार् । ४०
उण्टाय विशेषं केट्टग्नियॆ विधातावुं
कॊण्टाटि विळिच्चरुळिच्चॆय्तानतुनेरं । ४१
ऒन्निलुं भवज्ज्वाल तट्टियालशुद्धियि-
ल्लॊन्नुकॊण्टुमे भवानशुद्धमुण्टाय्वरा । ४२

ब्राह्मण और शान्तात्मा महामुनि सोचने लगे अब क्या होगा ? उसके बाद वे सब देवों के पास गये और उनसे सारा वृत्तान्त बतला दिया । अग्नि के अभाव के कारण सारा कर्मकाण्ड समाप्त हो गया और जगत् विपत्तिसागर में डूब गया । ३०-३६ सृष्टि के कर्त्ता जो ब्रह्मा हैं उनसे जाकर विना विलम्ब के इन सब बातों को कहना चाहिए । नहीं तो यह सारा प्रपञ्च नष्ट हो जायगा । पता ही नहीं चल रहा है कि इसका क्या कारण है । यह बात सुनते ही देव सब दुखी हो गये और तुरन्त सत्यलोक चले गये । तब शिष्ट मुनिजन और देवगण की स्पष्टवर्णबद्ध स्तुतियों और नमस्कारों से परितुष्ट जगत्स्रष्टा (ब्रह्मा) से सभी वृत्तान्त कहे गये । इस वार्ता को सुनकर विधाता ने अग्नि को बुलाकर सत्कार किया और कहा । जिसमें भी आपकी ज्वाला का स्पर्श हो जाय वह

भास्कररश्मिकळ् चॅन्नॅन्तॅल्लां ताॅटुमॅन्ना-
लोक्कुन्पोळ् ताॅट्ट वस्तु शुद्धमाय् वरुमत्रे । ४३
अज्ञानिकळेप्पोलॅ खेदिप्पानॅन्तु भवान्
सुज्ञानिजनङ्ङळोटाॅन्नुं पट्टुकयिल्ल । ४४
सर्व्ववुं भक्षिच्चालुमिल्लशुद्धतयॅटो
हव्यवाहननाकुं निनक्कॅन्नरिकॅटो ! ४५
पावकन् दुःखं तीर्न्नु देवकळोटुं कूटि-
प्पावनन्मारां मुनिमारुमाय् वसिच्चितु । ४६
लोकवुं तॅळिञ्ञितु तापसवरन्मारॅ !
शोकनाशनत्तिन्नु चाॅल्लीटां कथयिन्तुम् । ४७

रुरुमुनियुटॅ अर्द्धायुर्द्दानवुं विवाहवुम् ।

च्यवननॅन्नु गर्भच्यवनत्वेन नाम-
मवनु भविच्चितु तत्सुतन् प्रमतिक्कु १
भुवनमनोहरियाकिय घृताचियिल्
तपसांनिधियाय रुरुनामावुण्टायान् । २

अशुद्ध नहीं हो सकती । फिर आपकी तो किसी भी प्रकार अशुद्धि सम्भव नहीं । ३७-४२ सूर्य के किरण जिस पदार्थ का भी स्पर्श करें वह पदार्थ, विचार किया जाय, तो शुद्ध ही हो जाता है । इसलिए आप अज्ञानियों की तरह क्यों खेद कर रहे हैं ? जो ज्ञानवान लोग हैं उनका कुछ नहीं बिगड़ेगा । जिस वस्तु का भी आप भक्षण करलें, आप हव्यवाहन को कोई अशुद्धि नहीं होगी, यह जान लीजिए । भगवान् पावक (अग्नि) का दुःख समाप्त हुआ और देवों और पावन मुनियों के साथ सुख से रहने लगे । अब शोक के नाश के लिए आज और कथा सुनाऊँगा । ४३-४७

मुनि रुरु का अर्द्धायुर्दान और विवाह

गर्भ का च्यवन (पात) होने के कारण बालक का नाम च्यवन पड़ा । उसके पुत्र प्रमति द्वारा सारे भुवन की मनोहारिणी घृताची से रुरु नामक तपोनिधि पुत्र का जन्म हुआ । उन दिनों विश्वावसु के बीज के द्वारा सुलोचना मेनका ने तपोधन ऋषि के आश्रम में एक कन्यारत्न

अक्कालं विश्वावसुतन्नुटॅ बीजंकॉण्टु
मैक्कण्णि मेनकयुं पॅट्टितु कन्यारत्न- ३
मॅत्रयुं तपस्सुळ्ळोरृष्याश्रमत्तिङ्कल्
पृथ्वियिलिट्टुंकळञ्ञवळुं पोयाळल्लो । ४
पैतलॅ कृपावशनाय्कण्टु मुनिवरन्
पैदाहादिकळ् तीर्त्तु वळर्त्तुतुटङ्ङिनान् । ५
प्रमदाजनङ्ङळिल् वरयामवळक्कन्नु
प्रमदाल् प्रमद्वरयॅन्नॉरु पेरुमिट्टान् । ६
अक्कुमारियॅक्कण्टु मन्मथातुरनायान्
चॉल्कॉण्ट रुरुमुनि तातनतरिञ्ञप्पोळ् ७
अवळॅ वळर्त्तॉरु मुनियॅक्कण्टु पर-
ञ्ञावर्कळिरुवर्क्कुं कल्पिच्चु मुहूर्तवुम् । ८
उत्रमां नक्षत्रमश्चाउान्नाळॅन्नुतन्नॅ
तत्रैव कौतूहलत्तोटॉरुक्किनारॉक्कॅ । ९
कन्यकतानुं मरिच्चीटिनाळ् पान्पुकटि-
च्चॅन्नॆ कष्टमेयॅन्नु दुःखिच्चारॅल्लावरुम् । १०
हाहेयमहो ! पापं आॅ हेयं हतयाया-
ळा हन्त हतोहमित्याकुलनायि रुरु । ११

को जन्म दिया। फिर उसे पृथिवी में छोड़कर वह चली गयी। बच्चे को देखकर मुनिवर दया के वश में आ गये, और उसकी भूख और प्यास शान्त करके उसे पालने लगे। वह प्रमदाओं (महिलाओं) में श्रेष्ठ थी। इसलिए मुनि ने प्रमोद से उसका नाम प्रमद्वरा रखा। १-६ उस कुमारी को देख कर विख्यात मुनिवर रुरु, मन्मथ (मदन) के वश में आगये। यह बात जब उनके पिता को ज्ञात हुई तब वे कन्या के पालक मुनिवर से मिले और आपस में सलाह करके उन्होंने दोनों के विवाह का लग्न निश्चित किया। जो पांचवें या छठे दिन उत्तर नक्षत्र में पड़ता था और उसी क्षण बड़े कौतूहल के साथ सब तैयार किया गया। पर अन्त में साँप के काटने से कन्या मर गयी और सब लोग दुःख में डूब गये। ७-१० रुरु तो बहुत ही व्याकुल हुआ और चिल्लाने लगा—हा ! यह हेय है, अहो पाप, हा हेय ! वह मर गयी ! मैं मर गया ! कन्या के शव को देखकर

कन्यकाशवं कण्टु शोकमोहादि पूण्टु
वन्न वेदनयोटुमोटिप्पोय् वनं पुक्कान् । १२
ञान् चॅय्त तपोबलं कोण्टिवळ् जीविक्कॅन्नु
वाञ्छपूण्टरुळ्चॅय्तान् प्रमतितनयनु । १३
वन्नॉरु देवदूतनन्नेरमुरचॅय्ता-
नॉन्नरियेणमायुस्सटवळ् जीविप्पील । १४
निन्नुटॆ शोकं कण्टिट्टॉन्नु चोदिच्चीटुन्नु-
ण्टुन्नियालुपायमिल्लॅन्नतो वरायल्लो । १५
ऍङ्किल् निन्नर्द्धायुस्सु कॉटुत्तालुण्टामिवळ्
सङ्कटं भवानतिनिल्लॅङ्किलतु चॅय्क । १६
ऍङ्किलिन्नतु चॅय्यामॅन्नितु रुरुवप्पोळ्
किङ्करन् धर्मराजनोटतुमरियिच्चान् १७
धर्मराजनुमतिननुज्ञ नल्कीटिनान्
निर्म्मलाङ्गियुमुणर्न्नॅळुन्नेटतुनेरम् । १८
कलिपिच्च मुहूर्त्तं कॉण्टवनुं वेट्टुकॉण्टान्
अद्भुतांगियुमायि सुखिच्चु मरुवुन्नाळ् । १९

शोक और मोह के वश में आकर वह दुःख के साथ चला गया और वन में प्रविष्ट हो गया। प्रमति के तनय (रुरु) ने तीव्र इच्छा के साथ कहा—मेरे तपोबल से यह फिर जीवित हो जाय!। उस समय यमराज का एक दूत आया और उसने कहा—एक बात जान लो, जिसकी आयु समाप्त है वह फिर जीवित नहीं हो सकती। तुम्हारा शोक देखकर एक बात मुझे तुमसे पूछना है—कोशिश करने पर उपाय तो निकल आता ही है, यह बात प्रसिद्ध है। इस स्थिति में अगर तुम अपनी आयु का आधा भाग उसको दे दो तो वह फिर जीवित हो जावेगी। तुम्हें अगर उसमें दुःख न हो तो ऐसा करो। तब रुरु ने कहा—मैं ऐसा करने के लिए तैयार हूँ। धर्मराज के किंकर ने यह बात अपने स्वामी को सुनाई। धर्मराज ने अपनी अनुज्ञा दी और उस समय निर्मलांगी उठ खड़ी हुई। निश्चित लग्न पर रुरु ने विवाह भी कर लिया। और जब वह अपनी मनोहर रूपवाली (पत्नी) के साथ सुख से रह रहे थे, तब ११-१९

सहस्त्रपादन्टॆ शापमोक्षम्

पण्टु तन् पत्नि तन्नॆक्कटिच्चुकॊन्नतुळ्ळि-
लुण्टाककॊण्टु वैरमवनु मुळुक्कयाल् १
दण्डुमाय् नटन्नवन् कुण्डलिकळॆयॊक्कॆ
दण्डहस्तन्टॆ पुरत्तिङ्कलाक्कीटुमल्लो । २
पण्डितनाय रुरु दण्डमोङ्ङन्पोळॊरु
डुण्डुभमॊरुदिनमवनोटुरचॆय्तान् ३
ऎन्तु ञान् पिळच्चतु निन्नोटॆन्तुर चॆय्क
जन्तुक्कळॆल्लामॊक्कुमॊन्नु कॊल्लरुतल्लो । ४
चॊल्लिनानतु केट्टु नल्ल मामुनि रुरु
कॊल्लुन्न जन्तुक्कळॆ कॊल्लुकॊन्नतेवरू । ५
ऎन्नुटॆ भार्यतन्नॆक्कटिच्चु कॊन्नानॊरु
डुंडुभमतुमूलं निङ्ङळॆक्कॊल्लुन्नु ञान् । ६
डुंडुभं चॊन्नानप्पोळदण्ड्यन्मारॆ वृथा
दण्डिप्पिच्चीटुन्नोरॆ दण्डहस्तनु पिन्नॆ ७
दण्डिप्पिच्चीटुं घोरनरकङ्ङळिलाक्कि-
प्पण्डितनाय भवानॆङ्ङिलुमितुकेळ्क्क । ८

सहस्त्रपाद का शापमोक्ष

अतीत में [सर्प द्वारा] अपनी पत्नी के काटे जाने के कारण रुरु के हृदय में वैर बहुत बढ़ा और वह हाथ में लाठी लिये घूमते थे और रास्ते में जितने कुण्डली (साँप) मिलते सबको यमसदन भेजा करते थे। जब रुरु ने जो पण्डित था एक डुंडुभ (सांप) के मारने के लिए लाठी उठायी तब उसने निवेदन किया—यह बतलाइये, मैंने क्या अपराध किया? सभी जन्तु समान हैं, किसी को भी मारना नहीं चाहिए। यह सुनकर श्रेष्ठ महामुनि रुरु ने कहा—जो जन्तु औरों को मार डालते हैं वे भी मारे ही जायँगे, और क्या हो सकता है। मेरी पत्नी को एक डुंडुभ ने मार डाला, इसलिए मैं तुम लोगों को मार रहा हूँ। १-६ तब डुंडुभ ने निवेदन किया—जो अदण्ड्यों को दण्ड देते हैं उनको यमराज घोर नरकों में डालकर डण्ड देंगे। आप

मट्टॉरु परिषकळ् कटिच्चुकॉल्लुन्नतुं
मुट्टुं ञ्ञानवरुटॅ वेषमॅन्नतेयुळ्ळु । ९
अतु केट्टॉरु रुरु दिव्यनॅन्नरिञ्ञाप्पोळ्
चतियॅन्नियॆ नम्मोटारॅन्नु चॉल्लीटॅन्नान् । १०
सहस्रपादनहं ञ्ञानॉरु मुनिशापाल्
वहिच्चीटुन्नेनिह डुंडुभवेषादिकळ् । ११
ऍन्तु नी पिळच्चतु शपिच्चतेतु मुनि ?
बन्धमॅन्तिवट्टिनॅन्नोटु पऱयणम् । १२
केळ्क्क नी खगमनां मामुनि मम सखि
भोष्ककल्ल होमं चॅय्युन्नेरं ञ्ञान् क्रीडार्त्थमाय् १३
तृणंकॉण्टुण्टाक्किय सर्प्पमङ्ङॅटुत्तिट्टे-
ननसु तार्ण्णमॅन्नतवनुमऱियातॅ । १४
पेटिच्चु मोहिच्चुटन् मोहं तीर्न्नुरचॅय्तान् ।
मूढनां भवानुमीवेषमाय् वरिकेन्ना- १५
नय्यो ञ्ञानेतुमोर्त्तल्लॅन्नुटॅ कळियत्रे
नीयिनिश्शापमोक्षं नल्कीटॅन्नपेक्षिच्चान् । १६

पण्डित हैं, फिर भी मेरी बात सुन लीजिए। औरों को काटकर मार डालने वाले [सर्प] और जाति के हैं, उनका जैसा मेरा केवल वेष है। यह सुनकर जब रुरु ने समझा कि यह कोई दिव्य पुरुष है तब कहा—बिना कपट के मुझे बतला दीजिये कि आप कौन है। "मैं सहस्रपाद हूं। एक मुनि के शाप के कारण मैं इस सर्पवेष का धारण कर रहा हूं।" (तब रुरु ने कहा)—तुमने क्या अपराध किया और किस मुनि ने शाप दिया ? इसका क्या कारण है। यह सब मुझसे बतलाओ। ७-१२ (सहस्रपाद ने कहा—) सुन लीजिए, मेरे मित्र मुनि खगम जब हवन कर रहे थे उस समय—यह विनोद नहीं है—मैंने खेल में एक घास का सांप बनाकर वहाँ डाल दिया। यह न जानकर कि वह घास का है और सजीव नहीं है, वे डर गये और बेहोश हो गये। जब फिर होश में आये तब उन्होंने कहा—आप मूर्ख हैं। आप भी इस वेष के हो जायँ!। (तब उन्होंने कहा—) "हन्त! मैंने कुछ भी नहीं सोचा था। यह केवल खेल था। आप इस शाप का मोक्ष भी बतला दीजिए।" (तब खगम ने कहा—)

भार्ग्गवसुतनाय रुरुमामुनि कण्टाल्
भाग्यवानाय निनक्कॅन्नुटॅ शापंतीरुं । १७
ऍन्नरुळ् चॅय्तु मम सखियां खगमनु-
मिन्निप्पोळ्क्काणाय्वन्नु निन्तिरुवटियेयुं । १८
शापवुं तीर्न्नु मम तापवुमकन्नितु
पापवुमुण्टाय्वरुं हिंसचॅय्यरुतल्लो । १९
तापसन्मार्क्कु विशेषिच्चुमतरुतल्लो
तापसश्रेष्ठा ! भवानोटु ञान् चोल्लेणमो । २०
कोपमाकुन्नतल्लो कॉटिय नरकङ्ङळ्
भूपतिकळ्क्कुं दुष्टवधमे चॅय्तीटावू । २१
सल्क्षितिपतिवरनां परीक्षित्तुतन्नॅ
तक्षकन् कटिच्चु कॉन्नीटिनानतुमूल- २२
मक्षिकर्ण्णन्मार्कुलं नष्टमाक्कीटुवानाय्
मुख्यनायीटुं जनमेजयनवन्मक- २३
नारंभिच्चितु सर्प्पयागमॅन्नरिञ्ञालुं ।
आरुं भाविच्चाल् मुटङ्ङातॉरु सर्प्पयाग- २४
मस्तिकन् पर्ञ्ञातु माट्टियॅन्नरिञ्ञालु-
मॅत्रयुं दोषमुण्टु हिंसय्कॅन्नतु नूनं । २५

जब भार्गव (प्रमति) का पुत्र महामुनि रुरु तुम्हें देखेंगे, तब तुम्हारा भाग्य खुल जायगा और मेरा शाप समाप्त हो जायगा। मेरे मित्र खगम ने इस प्रकार कहा और आप का दर्शन हो गया। शाप की समाप्ति हो गयी और मेरा दुःख भी दूर हो गया। आप हिंसा न करें क्योंकि आप को पातक होगा। विशेषतः तापसों के लिये यह बिलकुल अनुचित है। आप तापसों में श्रेष्ठ हैं, आप से मैं क्या कहूँ ?। १३-२० कोप घोर नरकों में परिणत हो जाता है। भूपतियों के लिए भी केवल दुष्टवध ही विहित है। तक्षक ने अच्छे भूपति परीक्षित को काटकर मार डाला इसलिए सर्पों के कुलों को नष्ट करने के लिए उनके मुख्यपुत्र जनमेजय ने, जान लीजिए सर्प-सत्र का आरम्भ किया है। यह भी जान लीजिए कि जिस सर्पयाग को और कोई रोक न सकता था उसको अस्तिक ने समझाकर रोक दिया। इसमें कोई संदेह नहीं है हिंसा से बड़ा दोष पैदा

सहस्रपादनोटु चोदिच्चु रुरुवप्पोळ्
महत्वमेरुं जनमेजयनतुचॅय्वान् २६
ऍन्तु कारणमॅन्नुमस्तिकनॉळिच्चतिन्
बन्धमॅन्तॅन्नुमरुळ्चॅय्यणमॅन्ननेरं । २७
अतु केळ्प्पिप्पान् पात्रमल्ल ञानॅन्नु चॉल्लि
मतिमान् दशशतपदनुं मरञ्ञितु । २८
रुरु मामुनिवरनतु केळाय्कमूल-
मुरुतापवुं पूण्टु नटन्नु पलेटत्तुं । २९
पिन्नप्पोन्नाश्रमत्तिल् वन्नु तन् तातनोटु
चॉन्नतु केट्टु पितावनोटरुळ्चॅय्तान् । ३०
चॉल्लुवनखिलवुं केट्टुकॉळ्कॅङ्किलॅन्नु
चॉल्लितु पौलोमत्तिलॅन्नाळ् पैङ्किळिमकळ् । ३१
इङ्ङनॅ चॉल्लि महाभारतं नूरायिरं
मंगलग्रन्थमितिहासराजाख्यमतिल् ३२
मुन्पिनालुळ्ळ पौलोमास्तिकं पर्व्वं रण्टिल्
मुन्पिल् पौलोममतु चुरुक्किच्चॉन्नेनल्लो । ३३
आस्तिकपर्व्वमिनियाकुन्नततु केळ्प्पा-
नास्थयुण्टॅङ्किलतु चुरुक्किच्चॉल्लामल्लो । ३४

होता है। (यह सुनकर) रुरु ने सहस्रपाद से कहा—बड़े महत्व वाले जनमेजय ने क्यों यह काम किया है और क्या कारण है कि अस्तिक ने उसको रोक दिया? यह मुझे बतलाइए। इस समय मैं यह सुनाने का अधिकारी नहीं हूँ—इतना कहकर मतिमान् सहस्रपाद तिरोहित हो गये। २१-२८ यह न सुनने के कारण महामुनि रुरु बड़े दुःख के साथ इधर-उधर घूमने लगे। फिर अपने आश्रम में लौटकर उन्होंने पिता जी से सब कह दिया। पिता ने सुनकर यों कहा।—मैं सब सुना दूँगा। सुन लो!। शुककन्या ने बताया—इतना पौलोम [पर्व] में कहा गया है। इस प्रकार महाभारत सुनाया गया। इस इतिहासराज में सौ हजार मंगल ग्रन्थ हैं। पौलोम और आस्तिक पहले के दो पर्व हैं। उनमें से पौलोम संक्षेप में कहा गया है। इसके बाद आस्तीक पर्व है। उसे भी सुनने के लिए यदि आस्था हो तो संक्षेप में सुना जा सकता है। आस्तिक्य (श्रद्धा)

आस्तिक्यमुळ्ळजनं बहुमानिक्कुं दैव-
नास्तिक्यन्मारायुळ्ळोर् निन्दिच्चालॅन्तु फलं ? ३५
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नमः । ३६

आस्तीकं

पैङ्किळिप्पैतले ! भंगियिल् चॉल्लॅटो
पङ्कजाक्षन्कथ पङ्कङ्ङळ् नीङ्ङुवान् । १
एॅङ्किलो केळ्प्पिन् तपोधनन्मारोटु
संक्षेपमाय् सूतनिङ्ङनॅ चॉन्नप्पोळ् २
नैमिशारण्यनिवासिकळाकिय
मामुनिमार् शौनकादिकळ् चोदिच्चु । ३
एॅन्तु जनमेजयनां नरपति
दन्तशूकक्रतु चॅय्वानवकाशं ? ४
अस्तीकनॅङ्ङनॅ माट्टियतॅन्तु-
मस्तिकनारुटॅ पुत्रनॅन्तुं भवान्
विस्तराल् ञङ्ङळोटॉक्कप्परयणं ५

वाले लोग उसका आदर करेंगे। दैव में नास्तिक्यवाले (अश्रद्धावाले) लोग अगर निन्दा करें तो उसका क्या फल है ? नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमः । २९-३६

आस्तीकपर्व

हे शुककन्ये ! पंकजाक्ष (श्रीकृष्ण) की कथा सुन्दर ढंग से सुनाओ ताकि सब मल दूर हो जायँ । [शुकी ने कहा—] अच्छा तो सुन लीजिए । जब सूत ने इस प्रकार तापसों को संक्षेप में सुनाया तब नैमिषारण्य में रहनेवाले शौनक आदि महामुनियों ने पूँछा—नरपति जनमेजय के सर्पसत्र कराने का क्या कारण है ? अस्तीक ने उसे कैसे रोक दिया ? और अस्तीक किसका पुत्र है ? यह सब हम लोगों को विस्तर से सुनाइये । यह आस्तीक तत्त्वबोध का आधार है । हे सत्त्वमते ! श्रीकृष्ण के शिष्यजनों

तत्त्वबोधत्तिनाधारमामास्तिकं
सत्वमते ! कृष्णशिष्यजनोत्तम ! ६
उत्तमं मुक्तिप्रदं चॉल्क वैकातॆ
बद्धमोदेन निरूपिच्चितीदृशं । ७
चेतसि कृष्णनॆ ध्यानिच्चुऱप्पिच्चु
सूतनतिनॆप्पऱञ्ञु तुटङ्ङिनान् । ८

अस्तिकोल्भवम्

मुन्नं जरत्कारुनाम महामुनि
धन्यन् गृहस्थाश्रमाशयिल्लाय्कयाल् १
नन्नाय् तपस्सुकळ् चॅय्तु वनं तोऱु-
मॉन्निलुमाशकूटातॆ नटक्कुन्नाळ् । २
पाताळलोकत्तु वीळुवानाय्च्चिल-
राधिपूण्टेऱ्मधोमुखन्मारुमाय् ३
पुल्कॉटितन्नुटॅयग्रमालंबमाय्
निल्कुन्नतन्नयुमल्लतिन् वेरुकळ् ४
मूषिकन् मॅल्लॅक्करण्टु मुऱिप्पतुं
दोषमिल्लात जरत्कारु कण्टप्पोळ् ५

में उत्तम ! प्रमोद के साथ विचार करके ऐसे उत्तम और मुक्तिप्रद (आस्तीक) को विना विलम्ब के सुनाइए। (यह सुनकर) श्रीकृष्ण जी को अपने मनमें ध्यान से स्थिर करके सूतजी ने इस कथा को सुनाना प्रारंभ किया। १-८

अस्तिक का उद्भव

अतीत में जरत्कारु नामक धन्य महामुनि, जिनकी गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने की इच्छा ही न थी, विविध तपस्याएँ करते हुये, किसी भी पदार्थ में इच्छा न रखते हुये, वन वन में भ्रमण करते थे। उस समय कुछ लोग बड़े दु:ख के साथ अधोमुख होकर पाताल में गिरने को थे; [वे]केवल एक घास के पौधे को पकड़े हुये थे जिसकी जड़ों को एक चूहा काट रहा था। दोषहीन जरत्कारु ने उनको देखकर पूँछा—आप लोग कौन है ? १-५

निङ्ङळारॅन्नानवनुमवरोटु
ञङ्ङळ् चिल मुनिमारॅन्नु चॉल्लिनार् । ६
पुत्रनायुण्टु जरत्कारु ञङ्ङळ्क्कु
पुत्रनवनिल्लयाञ्ञातु कारणं ७
लुप्तपिण्डोदकन्मारायितु ञङ्ङळ्
तप्तमायोरु तपस्सु वृथाफलं । ८
ञङ्ङळ् नरकत्तिल् वीळ्वान् तुटङ्ङुन्नु
मंगलनाय नीयारॅन्नु चॉल्लणं । ९
ऍङ्किल् जरत्कारुवायतु ञान् तन्नॆ
निङ्ङळ् मम पिताक्कन्मारङ्ञालुम् । १०
सङ्कटं पोक्कुवानॅन्तु ञान् वेण्टतु
शङ्कियातेयरुळ्चॅय्कॅन्नु चॉन्नप्पोळ् ११
चॉन्नार् पितामहन्मारवन्तन्नोटु
पुण्यतपोव्रतदानधर्म्मादिकळ् १२
सन्ततियिल्लाय्किलॉक्कवे निष्फलं
सन्ततिकॉण्टे गतिवरू निश्चयम् । १३
आकयाल् वेळ्क्क नी मुम्पिनाल् वेण्टतुं
पोक वैकाततिनॅन्नवर् चॉल्लिनार् । १४
भिक्षयाय् मोदालॉरु पुमानॅन्नोटु
कैक्कोळ्क भार्ययायॅन्नु नल्कीटुकिल् १५

उन्होंने उत्तर दिया—हम कुछ मुनि लोग हैं। हम लोगों का जरत्कारु नामक एक पुत्र है। उसके कोई सन्तान नहीं है, इसलिए हम लोगों को पिण्ड और जल देनेवाला कोई नहीं है; हम लोगों का किया हुआ सभी तप व्यर्थ हो गया। अतः हम नरक में गिरनेवाले हैं। यह बतलाओ कि हे मंगलमुख! तुम कौन हो। ६-९ यह सुनकर जब जरत्कारु ने कहा—"मैं ही जरत्कारु हूँ और आप लोग मेरे पितृपितामह हैं। आप का दुःख दूर करने के लिए मुझे क्या करना है? निःशंक सुनाइए"। तब पितामहों ने कहा—"जिसके सन्तान नहीं है उसका किया हुआ पुण्य, तप, व्रत, दान आदि धर्म सब व्यर्थ हो जाता है, सन्तान ही अच्छी गति का साधन है। इसलिए सबसे पहले तुम्हें विवाह करना है, विवाह के हेतु जल्दी चलो"। १०-१४

वेळ्क्कामवळँ समयमिनिक्कतु
केळ्क्क महाव्रतं पिन्नॅयुं मट़ान्नु । १६
पॅण्णिनुमॅन्नुटॅ पेरायिरिक्कण—
मॅन्नु जरत्कारु चॉन्नोरनन्तरम् । १७
चॉल्लियवण्णमे योगं वरिकॅन्नु
नल्लोरनुग्रहं नल्कि पितृक्कळुम् । १८
नन्नायॉरु वनदेशे वसिक्कुम्पोळ्
पन्नगनाथनां वासुकियुं कण्टु । १९
ऍन्नुटॅ सोदरियाकिय कन्यक—
तन्नॅ वरिच्चुकॉळ्कॅन्नितु वासुकि । २०
नाममवळ्क्कॅन्तु चॉल्लुकॅन्नु मुनि
नामं जरत्कारुवॅन्नितु वासुकि । २१
पण्टे भवानु तरुवानायुण्टाक्कि
पुण्डरीकोद्भवनॅन्नुमरिञ्ञालुम् । २२
वह्नियिल् वीळ्कॅन्नु मातृशापं कॉण्टु
पन्नगवंशवुं सन्नमामॅन्नतु । २३

यह सुनकर जब जरत्कारु ने कहा—"मैं विवाह करूँगा, पर शर्त यह है कि कोई खुशी से अपनी कन्या को पत्नी बनाने हेतु मुझे भिक्षा दे दे। इसमें एक और महाव्रत (शर्त) है। वह यह है कि कन्या का नाम मेरे ही जैसा हो"। तब पितृपितामहों ने अनुग्रह किया कि जैसे तुमने बतलाया वैसे ही हो जाय। १५-१८ तदनन्तर जब जरत्कारु एक वन में सुख से निवास कर रहा था तब पन्नगराज वासुकि ने उसे देखा। वासुकि ने कहा—"मेरी बहिन से कृपया विवाह कर लीजिए"। मुनि (जरत्कारु) ने पूँछा—"उसका नाम क्या है?" वासुकि ने कहा—"उसका नाम जरत्कारु है। पहले ही पुण्डरीकोद्भव[1] (ब्रह्मा) ने आप ही को देने के लिए, जान लीजिये, इसकी सृष्टि की थी। जब देवों ने ब्रह्मा को सूचित किया कि माता (कद्रू) का अग्नि में गिरकर जल जाने का शाप लगकर सारा

१ कमल से उत्पन्न।

चॅन्नु विधाताविनोटु विबुधन्मार्
चाॅन्नतु केट्टरुळ्चॅय्तु विरिञ्चनुम् । २४
मंगलयाय जरत्कारुनारियॅ-
यङ्ङु जरत्कारुविन्नु काॅटुक्कणम् । २५
उण्टामवळ् पॅट्वनाॅरु नन्दन-
नुण्टाय शापभयमाॅळिच्चीटुवान् । २६
इत्थं विधातृनियोगमॅन्नाल् प्रम-
दोत्तमयामिवळ्तन्नॅ वेट्टीटुक । २७
दीर्घपृष्ठाधिपनिङ्ङनॅ चाॅन्नप्पोळ्
दीर्घविलोचनमुळ्ळ जरत्कारु २८
दीर्घविलोचनयां जरत्कारुवॅ
शीघ्रं विधिविधियाल् विवाहं चॅय्तु । २९
मोक्षपरायणन् वाळुन्नकालत्तु
सौख्यं वरिवस्ययाल् वळर्त्ताळिवळ् । ३०
चाॅल्पाॅङ्ङुमस्तिकनुण्टाकयुं चॅय्तु
सर्पसत्रत्तॅयाॅळिच्चतवनल्लो । ३१

पन्नगवंश नष्ट होने को है; तब बात सुनकर विरञ्चि (ब्रह्मा) ने निवेदन किया—१९-२४ 'मंगलमयी कन्या जरत्कारु को मुनि जरत्कारु को प्रदान करना चाहिए। वह एक पुत्र को जन्म देगी जो शापभय को दूर करेगा।' 'अगर विधाता (ब्रह्मा) की यही आज्ञा है तो प्रमदाओं में श्रेष्ठ इस जरत्कारु से विवाह कीजिए'। दीर्घपृष्ठों (सर्पों) के अधिपति ने जब इस प्रकार कहा तब विशालनयन जरत्कारु ने विशालनयना कन्या जरत्कारु से विधि (ब्रह्मा) की आज्ञा से विवाह कर लिया। जब पति मोक्ष में दत्तचित्त होकर रहते थे उस बीच पत्नी ने अपनी वरिवस्या (सेवा) से उनका सुख बढ़ाया। विख्यात अस्तिक (आस्तीक) का जन्म भी हुआ। उसी ने तो सर्पसत्र (सर्प यज्ञ) को रोक दिया था। २५-३१

सर्प्पगरुडारुणोल्पत्ति

सूतवाक्यं केट्टु मोदेन शौनक-
नादरवोटु नागोल्पत्ति चॉल्लॅन्नान् । १
आश्चर्यमक्कथ केळ्प्पिन् चुरुक्कमाय्
काश्यपनाकुं प्रजापति सादरं २
भद्रशीलांगिमारायुळ्ळ भार्यमार्
कद्रुविनोटुं विनतयोटुं चॉन्नान् । ३
भर्त्तृशुस्रूषणशिक्षयुं शीलवुं
चित्तविशुद्धियुं कण्टु तॅळिञ्ञु ञान् । ४
वाञ्छितमायतु चॉल्लुविन् निङ्ङळ्क्कु
चाञ्चल्यमॅन्ये वरं तरुन्नुण्टु ञान् । ५
अन्तमिल्लातॉरु वीर्यबलमुळ्ळ
सन्तति नागसहस्रमुण्टाकणम् । ६
ऍन्नु वरिच्चितु कद्रु विनतयुं
पिन्नॅ मरीचीसुतनोटु चॉल्लिनाळ् ७
ऍत्रयुं तेजोबलवीर्यवेगङ्ङळ्
कद्रुसुतन्मारिलेट्टमुण्टायिट्टु ८
रण्टु तनयन्मारुत्तमन्मारायि-
ट्टुण्टाकवेणमिनिक्कु दयानिधे ! ९

सर्प, गरुड़ और अरुण की उत्पत्ति

प्रमोद के साथ सूतवाक्य सुनकर शौनक ने सादर कहा—"नागोत्पत्ति सुनाइए"। "वह अद्भुत कथा है। संक्षेप में सुन लीजिए।" प्रजापति कश्यप ने अपनी भद्रशील और भद्रांगी पत्नी कद्रू और विनता से कहा—"आप दोनों की पतिसेवा और शील और चित्तविशुद्धि देखकर मैं प्रसन्न हूं। अपने मन की बात कहिए, आपको बिना चाञ्चल्य के (निस्सन्देह) वर दे रहा हूँ"। कद्रू ने यह वर चुन लिया—"अनन्त बल और वीर्य वाले एक हज़ार नागरूप मेरी सन्तति हो जायँ !" विनता ने मरीचिपुत्र (कश्यप) से निवेदन किया—"हे दयानिधे ! कद्रू के सुतों से अधिक तेज, बल, वीर्य और वेग वाले दो उत्तम पुत्र मेरे पैदा हो जायँ !" १-९ तब महामुनि ने

मुट्टयायुण्टामिनियतु निङ्ङळ्क्कु
पॉट्टिप्पोकातवण्णं भरिच्चीटुविन् । १०
इत्थमनुग्रहं चॅय्तु महामुनि
सत्वरं काननं पुक्कु तपस्सिनाय् । ११
अण्डसहस्रं प्रसविच्चाळ् कद्रुवु-
मण्डद्वयं प्रसविच्चु विनतयुम् । १२
अण्डङ्ङळॅप्परिचारकन्मारॅल्लां
दण्डमॉळिञ्ञु परिपालनं चॅय्तार् । १३
अञ्ञूरु संवत्सरं चॅन्नकाल-
मीरञ्ञूरु नागप्रवरन्मारुण्टायि । १४
तन्नुटॅ मुट्टकळ् रण्टुं विरियाञ्ञु
वन्नॉरु तापाल् विनतयुमक्कालं १५
ऑन्निनॅ कॉट्टियुटच्चाळतुनेरम्
नन्नाय् विळङ्ङी चतुर्द्दशलोकवुम् । १६
अप्पोळनूरुवाय् मेवुमरुणनु-
मभ्रदेशं प्रवेशिच्चितु सत्वरम् । १७
अम्बरदेशत्तुयरुमरुणनु-
मम्मयोटीर्ष्यकलर्न्नु चॉल्लीटिनान् । १८
देहं मुळुवनॅ तीरुमतिन्मुम्पे
मोहं वळर्न्नितु चॅय्ततु कारणं १९

इस प्रकार अनुग्रह किया–"तुम्हारा सन्तान अण्डों के रूप में पैदा होगा। उनकी देखभाल करो कि टूट न जायँ"। इतना कहकर वे तप करने हेतु वन चले गये। कद्रू ने एक हज़ार अण्डों को जन्म दिया और विनता ने दो अण्डों को जन्म दिया। परिचारकों ने विना कष्ट के अण्डों का परिपालन किया। पाँच सौ वर्ष बीत जाने के बाद एक हज़ार नागप्रवर पैदा हुए। अपने दो अण्डों के न खुलने के कारण दुःखित विनता ने उनमें से एक को तोड़कर खोला। १०-१५ तब चौदहों लोक उज्ज्वल हो गये। और अरुण जो अनूरु[1] था, तुरन्त ही आकाश में प्रविष्ट हुआ। आकाश में प्रवेश करते हुए अरुण ने ईर्ष्या के साथ अपनी माता को [शाप देकर]

[1] विना उरु (जंघा अथवा जांघ) वाला।

कद्रुवामम्मय्कटिमयाय् पोक नी ।
भद्रनायुण्टामिनि मम सोदरन् २०
मुट्टयतुं नीयुटच्चुकळयाय्किल् ।
पॅट्टॅन्तु दास्यवुं तीर्क्कुमवनम्मे ! २१
इन्तुमञ्ञूटाण्टु पार्त्तीट्टुळ्ळतॅ—
यॅन्ताल् निनक्कतिनाले गतिवरुम् । २२
एॅन्तु परञ्ञुयन्र्नानरुणाख्यनु—
मॉन्निच्चिरुन्तु विनतयुं कद्रुवुम् । २३
मार्त्ताण्डदेवनु सारथियायुटन्
तेर्त्तटं पुक्कानरुणन् महाप्रभन् २४
आधियुं तीर्न्निरिक्कुन्न कालत्तिङ्क-
लादितेयासुरन्मारॉरुमिच्चुकॉ-
ण्टाधिकलर्न्नु पालाळि कटञ्ञनाळ् २५
श्वेतवर्णत्तोटु मानसवेगनाय्
जातमायीटुन्न घोटकं कारणं । २६
उच्चैश्रवस्सॅन्तु लोकप्रसिद्धमाय्
स्वच्छमायुण्टायॉरश्वं प्रति तम्मिल् २७

कहा—"मेरे शरीर के पूर्ण होने के पहले ही मोह बढ़ने के कारण तुमने यह काम किया। इसलिए तुम माता कद्रू की दासी हो जाओ। अगर तुम दूसरे अण्डे को नहीं तोड़ डालोगी तो मेरा भाई अच्छा पैदा होगा। और वह तुरन्त ही तुम्हारा दास्य[1] भी समाप्त करेगा। बिना दु:ख के और पाँच सौ वर्ष प्रतीक्षा करो, तब तुम्हारी अच्छी गति हो जायगी"। इतना कहकर अरुण आकाश में चला गया और विनता और कद्रू साथ रहने लगीं। १६-२३ महाकान्तियुक्त अरुण तो सूर्यदेव का सारथि बनकर उनके रथ में प्रविष्ट हो गया। जब सूतजी ने कहा कि सब लोग सुख से रहते थे और देवों और असुरों ने स्पर्धा के साथ क्षीरसागर का मन्थन किया;—उसमें से एक श्वेतवर्ण और मन के तुल्य वेगवाला लोकप्रसिद्ध उच्चै:श्रवा नामक घोड़ा निकल आया जिसके सम्बन्ध में विवाद[2] पैदा हो

१ कद्रू की दासता। २ आगे कथा में वर्णन है। इसी उच्चै:श्रवा के काले दाग को लेकर कद्रू की दासता विनता को स्वीकार करना पड़ी।

वादमुण्टाय्वन्नितॅन्नु परञ्ञाॅरु
सूतनोटन्नेरं चोदिच्चु शौनकन् । २८
चाॅल्लु चाॅल्लॅङ्किलमृतमथनं नी
चाॅल्लामतुमॅङ्किलॅन्नितु सूतनुम् । २९
चाॅल्लिनानॅल्लाममृतमथनवुं
चाॅल्लुवानिप्पोळ्ॅनिक्कॅळुतल्लेतुम् ३०

पालाळ्िमथनम्

विद्याधरस्त्रीकळ् दिव्यपुष्पंकाॅण्टु
हृद्यमायुळ्ळाॅरु माल्यं चमच्चतु १
शर्व्वांशसंभूतनाय मुनीन्द्रनां
दुर्व्वासाविन्नु काॅटुत्तवरुं पोयार् । २
संभोगसाधनमायुळ्ळ माल्यत्तॅ
जंभवैरिक्कु काॅटुत्तु मुनीन्द्रनुं ३
दन्तावळेश्वरस्कन्धोपरि वच्चु
कुन्तळं चिक्कियुलर्त्तुन्ननेरत्तु ४
हस्तीन्द्रमस्तकन्यस्तमाल्यामोद-
मत्तभृंगस्तोमवित्रस्तनेत्रनां ५

गया । तब शौनक ने उन [सूत जी] से कहा–"अमृत-मन्थन की कथा तो अवश्य सुना दीजिए" । सूतजी ने कहा–"तो फिर अवश्य सुना दूँगा । फिर उन्होंने अमृत-मन्थन की कथा सुना दी । मुझे तो इस समय सुनाना आसान नहीं है ।" २४-३०

क्षीरसागर का मन्थन

विद्याधरियों ने दिव्य पुष्पों की एक मनोहर माला बनाकर शिवजी के अंशभूत मुनि दुर्वासा को दे दी और वे चली गयीं । मुनीन्द्र ने माला को संभोग का साधन समझकर जंभवैरि (इन्द्र) को दे दिया । उसे हाथी ऐरावत के कन्धे पर रख कर जब वह केशसंस्कार कर रहे थे तब गजराज के कंधे पर स्थित माला के आमोद से आकृष्ट भ्रमरसमूह के द्वारा आँखों में वाधा होने के कारण हस्तीन्द्र (ऐरावत)

मत्तद्विपेन्द्रनॅट्टुत्तु मर्द्दिक्कयाल्
क्रुद्धनां मामुनि शापवुं नल्किनान् । ६
वृत्रारिमुख्यत्रिदशकुलत्तॅयुं
वृद्धन्माराय् विरूपन्मारायपोकॅन्नु ७
इन्नुतुटङ्ङिङ्ज्जरानरयुण्टाक-
यॅन्नतु केट्ट्टु भयेन महेन्द्रनुं ८
वन्दिच्चु शापमोक्षत्तॅयपेक्षिच्चान्
नन्दिच्चु तापसेन्द्रन् वरवुं नल्कि । ९
क्षीरार्णवं मथनंचय्तु पीयूष-
सारं नुकर्न्नाल् जरानरतीर्न्नुपोम् । १०
इन्द्रादिवृन्दारकन्माररविन्द-
मन्दिरनोटऱियिच्चितु सङ्कटम् । ११
चन्द्रक्कलाधरन्तन्नोट्टुणर्त्तिक्क
मन्देतरं चॅन्नु नामॅन्नु नान्मुखन् । १२
कैलासवासियॅच्चॅन्नु पुकऴ्न्नतु
शैलात्मजापतितानुमतुनेरं १३
निर्ज्जरन्मारुटॅ सङ्कटं कण्टाशु
सज्ज्वरमानसनाय्प्पुरप्पॅट्ट्टुटन् १४

ने माला का मर्दन कर दिया। उसे देखकर क्रुद्ध मुनि दुर्वासा ने वृत्रारि (इन्द्र) से लेकर सभी देवों को इस प्रकार शाप दे दिया—"सब वृद्ध और कुरूप हो जायँ ! आज से लेकर जरा[1] और सफेद बाल दिखाई दें"। शाप सुनकर डर के मारे महेन्द्र ने मुनिजी की वन्दना की और शापमोक्ष की याचना की। प्रसन्न होकर मुनीन्द्र ने यों वर प्रदान किया। क्षीरसागर का मन्थन करके अगर अमृतपान करेंगे तो जरा समाप्त होगी। १-१० इन्द्र आदि देवगण ने अरविन्द-मन्दिर (ब्रह्मा) को अपना दुःख बताया। चतुर्मुख (ब्रह्मा) ने कहा, "हम सब तुरन्त जाकर चन्द्रशेखर (शिवजी) को दुःख सुनावें"। तदनुसार जाकर [सबने] कैलासवासी (शिव) की प्रशंसा की। उस समय शैलात्मजा (पार्वती) के पति ने निर्जरों (देवों) का दुःख देखकर

१ बुढ़ापा

नारायणनोटुणर्त्तिक्क वैकातॅ
सारसलोचनन् तापं कळञ्ञिटुम् । १५
ऍन्नु कलिपच्चवरॉन्निच्चु चॅन्नुटन्
नन्नाय् स्तुतिच्चारु मुकुन्दनॅयन्नेरम् । १६
पळ्ळिक्कुरुप्पुणर्न्नाशु मुकुन्दनु-
मल्लल् पोम्मारु तॅळिञ्ञरुळिच्चॅय्तु १७
देवासुरन्मारॉरुमिक्क वैकातॅ
केवलं मत्तिनु मन्दरं पर्व्वतं १८
पाशमाक्किकक्कॉळ्क वासुकितन्नॅयु-
माशु मथनं तुटङ्ङुकयॅन्नप्पोळ् । १९
नाथनरुळ्चॅय्तवण्णमॉरुमिच्चु
पाथोनिधिमथनं चॅय्तनन्तरं २०
जातङ्ङळायुळ्ळ दिव्यपदार्थङ्ङ-
ळादरवोटु यथोचितं कैक्कॉण्टारु । २१
ऍन्नतिल् उच्चैश्रवस्सां कुतिरयॅ
वृन्दारकेन्द्रन् परिग्रहिच्चीटिनान् । २२
क्षीरांबुराशियिल्निन्नु जनिच्चॉरु
चारु तुरगमामुच्चैश्रवस्सिनु २३

पीड़ित होकर इस प्रकार आज्ञा दी–"इस बात को विना विलम्ब के नारायण को बताओ। सारसलोचन (विष्णु) तो अवश्य दुःख को दूर करेंगे"। यह कहकर उनके साथ गये और सभी ने मुकुन्द (विष्णु) की पूरी तरह से स्तुति की। ११-१६ अपनी दिव्य निद्रा से जागृत होकर मुकुन्द ने प्रसन्न होकर दुःख दूर करने के लिए कहा–"देव और असुर तुरन्त ही एक हो जायँ। मन्थ[1] के रूप में मन्दर पर्वत चाहिए, सर्प वासुकि को पाश[2] बनाइये और जल्दी क्षीरसागर का मन्थन प्रारंभ कीजिये"। नाथ (विष्णु) के कथनानुसार सबने मिलकर क्षीरसागर का मन्थन किया। तदनन्तर जो दिव्य पदार्थ पैदा हुए उनको उन्होंने यथोचित सादर ग्रहण किया। १७-२१ उनमें से उच्चैःश्रवा नामक घोड़े को देवेन्द्र ने ग्रहण किया। तब कद्रू ने कहा–"जिस मनोहर घोड़े

१ मथानी २ मथानी की रस्सी।

नेरे निऱमॅन्तु चॉल्लुकॅन्नाळ् कद्रु
पारं वॅळुत्तॅन्नु चॉन्नाळ् विनतयुम् । २४
ऍन्तालॉरु मऱुविल्लॅन्नतु वरा
निर्णयं वालधिक्कॅन्नितु कद्रुवुम् । २५
इल्ला मरुवतिनॅन्नु विनतयुम्
चॉल्लिनाळेतुमे संशयं कूटातॅ । २६
ऍङ्किल् ञान् निन्नुटॅ दासियाय् वाळुवन्
शङ्कयॉळिञ्ञॅन्नु चॉल्लिनाळ् कद्रुवुम् । २७
उण्टु कळङ्कमॅन्नाकिल् निन् दासियाय्
कॉण्टालुमॅन्नॅयुमॅन्नु विनतयुम् । २८
कोळॅ विषादमॉळिञ्ञिङ्ङटङ्ङुक
नाळॅ नोक्कामॅन्नु चॉल्लिनाळ् कद्रुवुम् । २९
पिन्नॅस्सुतरोटु वॅव्वेऱॆ चॉल्लिनाळ्
ऑन्नुण्टु चॅय्येण्टु निङ्ङळॅन्मक्कळे । ३०
उच्चैश्रवस्सां कुतिरतन्वालूटॅ
निश्चलमायॉरु रोममायुळ्प्पुक्कु ३१
निङ्ङळिलेकनॉरञ्जनवर्णत्तॅ-
त्तिङ्ङिविळङ्ङि वालिन्मेल् किटक्कणम् । ३२

का क्षीरसागर से जन्म हुआ उसका क्या रंग है ?" इसके उत्तर में विनता ने कहा—"उसका रंग एक दम सफ़ेद है"। उस पर कद्रू ने कहा— ठीक है, "उसकी पूँछ में एक काला दाग है"। तब विनता ने निःशंक कहा— "नहीं, इसमें कोई काला दाग नहीं है"। कद्रू ने फिर कहा—"अगर साबित हुआ कि नहीं है तो मैं तुम्हारी दासी बनकर रहूंगी"। विनता ने भी शपथ किया—"अगर साबित हुआ कि है, तो मुझे तुम अपनी दासी बना लेना"। उस पर कद्रू ने कहा—"आज विवाद बन्द करके चुप रहो, कल देखा जायेगा।" २२-२९ तदनन्तर अपने पुत्रों से अलग-अलग [बुलाकर] कहा—"मेरे पुत्रो ! तुम्हें एक काम करना है। तुम लोगों में से एक उच्चैःश्रवा की पूँछ में उसका एक बाल बनकर घुस जाओ और वहां अपने अञ्जन (काला) वर्ण के साथ निश्चल होकर विराजो"। उन

ञङ्ङळ्क्करुतॅन्नु चॉन्नारवर्कळुम्
मंगलमल्ल चतिक्करुतारॅयुम् । ३३
ञङ्ङळ्क्कु वेड्डिल्ल निङ्ङळिरुवरुम् ।
निङ्ङळ् तीयिल् वीणु चाकॅन्नाळम्मयुम् । ३४
शापभयंकॉण्टतिलॉरुवन् चॅन्नु
शोभतेटीटुं कळङ्कमाय् मेविनान् । ३५
पिट्टेन्नाळ् चॅन्नवर् नोक्कुन्ननेरत्तु
कुट्टमुळ्ळोरु कळङ्कमुण्टाकयाल् ३६
हास्यभावेन निन्नीटिनाळ् कद्रुवुम्
दास्यभावं पूण्टु वाणू विनतयुम् । ३७
आसुरमानसयाकियकद्रुवा-
लातुरमानसयायाळ् विनतयुम् । ३८
मातुरागस्सुं तॅळिञ्ञातिल्लेतुमे
मातरिश्वाशनेन्द्रोत्तमन्माक्कुंळ्ळिल् । ३९
माधुर्यशीलयायुळ्ळ विनतयुं
चातुर्यमुळ्ळॉरु काद्रवेयन्मारॅ ४०
सोदरभावं वळर्त्तारिवर्कळुं
भेदहीनं वसिच्चार् पलकालवुम् । ४१

सबने इनकार कर दिया और कहा—"किसी की वञ्चना[1] करना अच्छा नहीं है। आप दोनों [माताएँ] हम लोगों के लिए समान हैं"। तब माता (कद्रू) ने शाप दिया—"तुम लोग सब अग्नि में गिरकर मर जाओ"। शाप के डर से पुत्रों में से एक पूँछ का शोभावाला कलंक बन गया। ३०-३५ दूसरे दिन जब दोनों देखने गयीं तब पूछ में कलंक होने के कारण कद्रू प्रसन्न होकर हँसी और बेचारी विनता दासी बन गयी। आसुर (दुष्ट) मानस वाली कद्रू के कारण विनता आतुर (दुःखित) मानस वाली हो गयी। (कद्रू के पुत्र) पवनाशन[2] तो अपनी माता के पाप को पचा नहीं सके [और विनता को बता दिया।] माधुर्यशील विनता ने चतुर कद्रू के पुत्रों को आदर के साथ पाला और वे भी विना भेदभाव के बहुत दिन तक सुख से रहे। ३६-४१

१ छल, ठगी २ हवा खानेवाले सर्प।

गरुडोत्पत्ति

अञ्ञूरु वत्सरमिङ्ङनॅ चॅन्नना-
ळञ्जसा भिन्नमायी विनताण्डवुम् । १
कल्पान्तपावकनॅन्नमरौघवुं
कल्पिच्चु भीत्या मुनिवरन्मारुमाय् । २
आश्रयमॅन्तु लोकत्तिनॅन्नोर्त्तव-
राश्रयाशस्तुति चॅय्तार् पलतरम् । ३
मल्प्रभयल्ला भयप्पॅटाय्विन् गरु-
डप्रभयॅन्नरुळ्चॅय्तितु वह्नियुम् । ४
अप्पोळ् मुनिकळुं देवसमूहवु-
मद्भुतंपूण्टु गरुडस्तुतिचॅय्यतार् । ५
वेदत्रयमोट्टु देवत्रयमतुं
पादत्रयवुं पदत्रयवुं नीये ! ६
नामत्रयवुं वर्ण्णत्रयवुं नीये !
ज्योतिस्त्रयवुमग्नित्रयवुं नीये ! ७

गरुड़ की उत्पत्ति

इस प्रकार पांच सौ वर्ष व्यतीत होने पर विनता का दूसरा अण्डा फूट पड़ा। देवगण और मुनीन्द्रों ने भय के कारण कल्पना की कि कल्पान्त का अग्नि ही आ गया है। 'इस लोक का अब क्या आश्रय होगा' ऐसा सोच कर उन्होंने आश्रयाश (अग्नि) की तरह-तरह की स्तुति की। तब अग्नि ने कहा—"यह मेरी प्रभा नहीं है, यह गरुड़ की प्रभा है"। यह सुनकर मुनि लोग और देवगण आश्चर्यचकित होकर गरुड़ की स्तुति करने लगे। १-५ "वेदत्रयी[1] के साथ देवत्रय[2] और पादत्रय[3] और पदत्रय[4] तुम ही हो। नामत्रय[5] और वर्णत्रय[6] तुम ही हो। ज्योतित्रय[7] और

---

१ ऋक्, यजु, साम २ ब्रह्मा, विष्णु, शिव ३ गायत्री छंद के प्रथम, द्वितीय, तृतीय पाद ४ भूः, भुवः, स्वः ५ राम, बलराम, परशुराम ६ अ, उ, म् ७ सूर्य, चन्द्र, अग्नि।

शक्तित्रयवुं गुणत्रयवुं नीये !
भुक्तिमुक्तिप्रद युक्तभक्तप्रिय ! ८
लोकत्रयत्तिनु शोकत्रयं तीर्क्क
वेगप्रभानिधे पक्षिकुलोत्तम ! ९
विश्वं दहिच्चुपोकुन्नतिन्मुन्नमे
निश्शेषतेजस्सुमॉट्टुटक्कणमे ! १०
दानवनाशनन्मारुं मुनिमारुं
दीनतयोटुमीवण्णं पुकळ्न्नप्पोळ् ११
पक्षिकुलाधिपन् भक्तपरायणन्
तत्क्षणं तेजस्सुमॉट्टु चुरुक्किनान् । १२
वन्नितु सन्तोषवुं भुवनत्तिनु
पिन्नॆ माताविनॆक्काण्मान् गरुडनुं १३
पन्नगमाताविरिक्कुं गृहत्तिङ्कल्
चॆन्नु माताविनॆक्कण्टु वणङ्ङिनान् १४
ऑन्निच्चविटॆयिरुन्नु चिलदिन-
मन्नॉरुनाळुरचॆय्तितु कद्रुवुम् । १५
ऎन्नुटॆ गेहत्तिलाम्मारुपोवति-
नॆन्नॆयॆटुत्तुकॉळ्ळेणं विनते नी । १६

अग्नित्रय[1] तुम ही हो। शक्तित्रय[2] और गुणत्रय[3] तुम ही हो। भुक्ति और मुक्ति देनेवाले ! युक्तों और भक्तों[4] के प्रिय ! लोकत्रय[5] के शोकत्रय[6] को समाप्त करो ! हे वेग और प्रभा के निधि ! पक्षिकुलोत्तम ! सारा विश्व जल जाने से पहले ही तुम अपने निःशेष तेज को दबा दो ! ६-१० जब दानवनाशनों (देवों) और मुनियों ने इस प्रकार दीनता के साथ स्तुति की तब पक्षिकुलाधिप भक्तपरायण गरुड़ ने उसी क्षण अपने तेज को कम किया। सारे जगत् को हर्ष हुआ। तदनन्तर गरुड़ अपनी माता के दर्शन के लिए वहाँ गये जहाँ सर्पों की माता थी, और माता को देखकर उनको प्रणाम किया, और उनके साथ कुछ दिन रहे। एक

१ आहवनीय, गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि २ महाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती ३ सत्व, रज, तम ४ धर्म-परायण ५ स्वर्ग, पृथिवी, पाताल ६ आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक।

ऍन्नतु चॅय्ताळ् विनतयुं नन्दनन्-
तन्नोटु चॉन्नाळ् मकनॅ मटियातॅ १७
पन्नगन्मारॅयॅटुत्तुकॉळ्ळेणं नी
ऍन्नम्म चॉन्नतिळय्ककरुतॅन्नोर्त्तु १८
पन्नगन्मारॅयॅटुत्तु परन्नितु
वेगेनसूर्यन्नभिमुखमांवण्णम् । १९
व्यग्रङ्ङळ् चॉल्लुवान् वेगेन पोरुन्नि-
तग्रजनोटॅन्नु तोन्नुमतुकण्टाल् । २०
आदित्यरश्मिकळेट्टु भुजंगङ्ङ-
ळाधिपूण्टेटं तळर्न्नुचमञ्ञप्पोळ् २१
आदितेयोत्तमनाय देवेन्द्रनॅ-
यादरवोटु पुकळ्न्नितु कद्रुवुम् । २२
आधारमिल्ल मटॅन्नवळ् केळुप्पो-
ळासारवुं तुटङ्ङीटिनान् वासवन् । २३
तापवुं तीर्त्तवराशु रमणक-
द्वीपवुं पुक्कु सुखिच्चु वसिच्चितु । २४
अक्षिकर्ण्णन्मारॉरुनाळतुकालं
पक्षिकुलाधिपनोटु चॉल्लीटिनार् २५

दिन कद्रू ने कहा– ११-१५ "हे विनते ! आराम से घूमने के लिए तुम मुझे उठा ले जाओ" । विनता ने ऐसा ही किया और अपने पुत्र से कहा–"बेटा ! विना संकोच के तुम पन्नगों (कद्रू के पुत्र सर्पों) को ले चलो" ।§ माता की इस आज्ञा को टालना नहीं चाहिए, ऐसा सोच कर गरुड़ सर्पों को लेकर उड़े; सूरज के अभिमुख, मानो अपने बड़े भाई से अपने दुःख बतलाने के लिए वेग से जा रहे हों । १६-२० जब सूर्य के किरण ताप से सर्प सब बड़े परेशान हुए तब कद्रू ने अदिति के पुत्रों में श्रेष्ठ इन्द्र की स्तुति की । जब यह कहती हुई रोने लगी कि मेरा और कोई आश्रय नहीं है, तब वासव (इन्द्र) ने वर्षा प्रारम्भ की । उनका दुःख समाप्त हुआ और वे रमणीक द्वीप जाकर वहां सुख से रहे । २१-२४

§ कारण कि विनता कद्रू की दासी हो चुकी थी और उसके लिए कद्रू की आज्ञा का पालन अनिवार्य था ।

स्वर्गसमानमां द्वीपान्तरङ्ङळि-
लोक्क नटन्नु कुळिप्पतिन्नेङ्ङळे २६
ओक्कयेटुत्तु पऱक्कणं नीयेन्नु
चक्रिवरन्मार् पऱञ्ञतु केट्टोरु २७
दुःखं कलर्न्नु मातावोटु चोदिच्चान् ।
पक्षिवरन् परमार्त्थमऱिवानाय् । २८
कारणमेन्तिवर् चोल्लुन्नतु चेय्वान्
नेरे पऱयणमेन्नोटु मातावे ! २९
आत्मजनिङ्ङने चोदिच्चनेरत्तु
आत्मखेदत्तोटु चोन्नाळ् विनतयुम् । ३०
कद्रु चतिच्चु तन् दासियाक्किक्कोण्टाळ्
अेन्नयुं पीडयाय् वन्नूततिन्मूलम् । ३१
अक्कथयोक्कप्पऱञ्ञु केळ्प्पिच्चपोळ्
दुःखमुळ्क्कोण्टु विनतातनयनुम् । ३२
दन्तशूकोत्तमन्मारोटु चोदिच्चा-
नेन्तुञान् वेण्टतटिमयोऴिप्पति- ३३
न्नन्तरमिल्ल साधिप्पनतिन्निनि-
च्चिन्तितं चोल्लुविनेन्नतु केट्टप्पोळ् ३४
नीयिनि वैकाते चेन्नु वरुत्तुक
पीयूषमेन्नालटिमयोऴिञ्ञुपोम् । ३५

उस समय एक दिन अक्षिकर्णों[1] (सर्पों) ने पक्षिकुलाधिप (गरुड़) से कहा—"स्वर्ग के समान और द्वीपान्तरों में घूमकर स्नान करने के लिए हमलोगों को लेकर तुम उड़ चलो"। चक्रिवरों (सर्पों) का कहना सुनकर गरुड़ ने परमार्थ[2] जानने के लिए दुःख के साथ अपनी माता से पूछा—"क्या कारण है कि हम इनके कहने के अनुसार करें? माता जी मुझसे परमार्थ बतलाइए"। जब पुत्र ने इस प्रकार पूछा तब विनता ने खेद के साथ कहा—२५-३० "कद्रू ने वञ्चना करके मुझे अपनी दासी बनाया, इसलिए हमको यह अत्यन्त पीड़ा सहनी पड़ रही है"। जब वह सारी कथा सुनायी गयी, तब विनता का पुत्र अत्यन्त दुःखित हुआ। उसने दन्तशूकों (सर्पों) से पूछा—"दासत्व से मुक्ति पाने के लिए मुझे क्या करना है? कोई भेद न होगा, मैं वही करूँगा, अपनी अभिलाषा बतलाइए"।

१ नेत्रों से सुननेवाले   २ रहस्य।

अँन्नवर् चॊन्नतुकेट्टु गरुडनुं
चॆन्नु माताविनोटाशु चॊल्लीटिनान् । ३६
पैदाहवुं तीर्त्तमरलोकत्तिनु
चैतन्यमुळ्ळ्कॊण्टमृतिनु पोकणम् । ३७
आहारं वेणमॆनिक्कॆन्नु मातरि-
श्वाहारनाशनन् चॊन्नोरनन्तरं ३८
मातावु मन्दस्मितं पूण्टु चॊल्लिनाळ्
माधवन् वाळुन्न पालाळितन्करे ३९
वाळुं निषादन्मारे तिन्नुकॊळ्क नी
दोषमतिनिल्ल पिन्नॆयुमॊन्नु केळ् । ४०
ब्राह्मणरॆत्तिन्नु पोकातिरिक्कणम्
धार्म्मिकन्मारॆद्दहिक्करुतग्निक्कुम् । ४१
सृष्टिस्थितिलयङ्ङळ्क्कु कर्ताक्कळां
स्रष्टावुमंबुजनेत्रनुं रुद्रनुं ४२
देवेन्द्रनादियां देवसमूहवुम्
भूवाततोयाग्नियादि भूतङ्ङळुं ४३
वेदङ्ङळोटु समङ्ङळल्लाय्कयाल्
वेदज्ञन्माराय भूदेवन्मारत्रे ४४
आधारमीरेळुलोकत्तिनुमव-
र्क्काधारमायारुमिल्लॆन्नरियणम् । ४५

(यह सुनकर उन्होंने कहा—) "विना विलम्ब के तुम चलो और अमृत लाओ, तब दासत्व समाप्त हो जायगा"। यह सुनते ही गरुड़ अपनी माता के पास गया और उनसे बोला—३१-३६ "प्यास और भूख शान्त करके वीर्य (पराक्रम) के साथ अमृत लाने हेतु देवलोक जाना है। मुझे आहार चाहिए"। मातरिश्वाहारों[1] के नाशक (गरुड़) के कहने के अनन्तर माता ने मन्दहास्य के साथ कहा—"विष्णु के निवासस्थान क्षीरसागर के तट पर रहनेवाले निषादों को खा लो। इसमें कोई दोष नहीं है। पर एक बात सुन लो। ऐसा न हो कि तुम ब्राह्मणों को भी खा बैठो। अग्नि भी धार्मिकों का दाह नहीं कर सकता है। सृष्टि, स्थिति और लय के कर्ता ब्रह्मा, अंबुजनेत्र[2] और शिव, इन्द्र आदि देवगण, पृथिवी, जल, वायु, अग्नि आदि महाभूत वेदों के समान नहीं है, इसलिए वेदज्ञ ब्राह्मण

१ हवा खानेवाले सर्पों २ कमलनयन विष्णु।

ब्राह्मणरोळं महत्त्वमिल्लाक्कुमे
साम्यं द्विजन्माक्कुं मट्टोन्नुमिल्लल्लो ४६
वन्द्यन्माराकुन्नतु द्विजन्मारत्रे ।
निन्दिच्चु पोकाय्कवरेयोरिक्कलुं
नन्दिच्चु सन्ततं वन्दिच्चुकोळ्ळणम् । ४७
देवादिकळ्क्कुं प्रपञ्चत्तिनुं परं
दैवतमाकुन्नतुं द्विजन्मारत्रे । ४८
शाश्वतमाकिय धर्म्ममाकुन्नतु-
मीश्वरनाकुन्नतुं द्विजन्मारत्रे । ४९
ऎन्तटयाळं द्विजन्माक्कुमातावे ?
सन्ततं यज्ञोपवीतादि लक्षणम् । ५०
सन्तुष्टरां द्विजन्मारे विळुङ्ङुकिल्
कन्धरं वेन्तुपोमन्तरमिल्लेतुम् । ५१
भ्रष्टनेन्नाकिलुं दुष्टनेन्नाकिलुं
पुष्टभक्त्या वणङ्ङेणं द्विजन्मारे । ५२
इत्थमुपदेशवुं चेय्तनुग्रहि-
च्चत्यादरेण पुणर्न्नु मुकर्न्नव- ५३
नुत्तमांगत्तिल् बाष्पाभिषेकं चेय्तु
चित्तप्रमोदं कलर्न्नवळ् चोल्लिनाळ् । ५४

ही चौदहों लोकों के आधार हैं; और उनका कोई आधार नहीं है, इतना जान लो! ३७-४५ महत्त्व में ब्राह्मणों के तुल्य और कोई नही है। और कोई उनकी समता नहीं कर सकता। वे ही सबके वन्द्य होते हैं, उनकी कभी निन्दा न कर बैठना; प्रसन्न मन से सदा उनकी वन्दना किया करो। देवों के लिए और सारे प्रपंच के लिए ब्राह्मण ही परदैवत[1] होते हैं। शाश्वत धर्म बननेवाले और साक्षात् ईश्वर होनेवाले भी ब्राह्मण ही हैं"। "माता जी! ब्राह्मणों का चिह्न क्या है?" (गरुड़ ने पूछा)। "सदा यज्ञोपवीत आदि धारण किये रहते हैं। सन्तुष्ट ब्राह्मणों को अगर निगलोगे तो गला जल जायगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। (वे) भ्रष्ट भी हों और दुष्ट भी हों, फिर भी ब्राह्मणों की भक्ति के साथ वन्दना करनी चाहिए।" इस प्रकार उपदेश देकर और अनुग्रह करके विनता ने आदर के साथ उसका प्यार किया और उसके सिर पर

१ परमदेव।

नी निरूपिच्चतु साधिच्चिविटेक्कु
मानमियन्नु वरिक वैरयें नी । ५५
मातुरनुज्ञ शिरसि वहिच्चुकों-
ण्टादरवोटु परन्नु गरुडनुम् । ५६

अमृतापहरणम्

उर्व्वीतलङ्ङळ् कुलुक्किप्पॊटियार्प्पि-
च्चुर्व्वियुमाकाशवुमॊरुमिप्पिच्चु । १
गर्व्वं कलर्न्नु निषादन्मार् वाळुन्न
निर्व्विकारालयमॆल्लामिळक्किनान् । २
वित्रस्तराय निषादकुलमॆल्लां
विस्तृतमायॊरु वक्त्रत्तिलाक्किनान् । ३
एत्रयुं चुट्टुतुटङ्ङि गळतलं
चित्ते निरूपिच्चु मांतृवचनवुम् । ४
विप्रनुं कूटॆयकप्पॆट्टितॆन्नतु
कल्पिच्चु चॊन्नान् गरुडनुमन्नेरम् । ५
बुद्धिपूर्व्वं निन्ने कॊत्तुकयल्ल आ-
नत्तल् कूटातॆ पुरत्तु पोन्नीटुक । ६
सत्यधर्म्मादिकळ्क्काधारभूतन्मा-
रुत्तमन्माराय भूदेवन्मारत्रे । ७

आँसू बहाये और प्रसन्नता के साथ निवेदन किया—"सोची हुई बात सिद्ध होने पर सम्मान के साथ तुम जल्दी लौट आओ"। माता की आज्ञा को शिरोधार्य करके गरुड़ सादर उड़ गये । ४६-५६

अमृतापहरण

पृथिवीतल को हिलाकर चूर-चूर करके पृथिवी और आकाश को एक बना दिया । जहाँ निषादलोग सगर्व रहते थे उस निर्विकार (विष्णु) के लोक को हिला डाला । भयभीत सारे निषादकुल को अपने विस्तृत मुंह में प्रविष्ट कर लिया । जब गला बहुत जलने लगा तब माता का वचन स्मरण में आया । यह समझकर कि एक ब्राह्मण भी मुंह में प्रविष्ट हो गया होगा, गरुड़ ने कहा—"मैंने तुमको जानबूझकर मुँह में नहीं डाला है । इसलिए आराम से बाहर निकल आओ । उत्तम ब्राह्मण ही सत्य, धर्म आदि का एकमात्र आधार हैं।" १-७ गरुड़ का यह वचन

इत्थं गरुडन् पऱञ्ञतु केट्टौरु
पृथ्वीसुरोत्तमनुत्तरं चौल्लिनान् । ८
निर्म्मल ! पक्षीन्द्र ! धर्म्मपरायण !
मन्मनोवाञ्छितं चौल्लुवन् केळ्क्क नी । ९
उण्टौरु भार्य निषादियवळेयुं
कौण्टुपोकेणमॆनिक्कॆन्ऩऱिक नी । १०
कौण्टुपोन्ऩालुमॆन्नाननत्तूटॆ नी-
युण्टाकयिल्ल विषममतिनेतुम् । ११
आशु पुऱत्तवळोटुं पुऱप्पॆट्टा-
नाशीर्व्वादङ्ङळुं चॆय्तु गरुडनुम् । १२
पोयान् द्विजवरन् पिन्नॆ गरुडनुं
पोयान् पिताविनॆक्कण्टु वणङ्ङुवान् । १३
पैदाहमेतुमटङ्ङील निन्ऩुटॆ
पैतलायीटुमिनिक्कु तपोनिधे ! १४
काश्यपनोटवनिङ्ङनॆ चौन्नप्पो-
ळाश्चर्यमुळ्क्कौण्टवनुमुरचॆय्तान् १५
मुन्नं विभावसुवाय मुनियोटु
तन्नुटॆ सोदरन् मत्सरिच्चानल्लो । १६
ज्येष्ठांशमे भवानुळ्ळु पकुत्तु क-
निष्ठांशमिङ्ङु तरेणमॆन्ऩानवन् । १७

सुनकर ब्राह्मणोत्तम ने उत्तर दिया—"हे निर्मल धर्मपरायण पक्षीन्द्र ! मैं अपने मन की अभिलाषा बतला दूंगा, तुम सुनो— मेरी एक पत्नी है जो निषादी है । उसे भी साथ ले जाना चाहता हूं. यह जान लो ।" (गरुड़ ने कहा—) "मेरे मुंह से उसे भी निकाल ले जाओ, इसमें कोई कठिनाई न होगी" । तुरन्त ब्राह्मण उसे लेकर बाहर निकला और गरुड़ ने आशीर्वाद दिया । ८-१२ ब्राह्मण चला गया । तदनन्तर गरुड़ अपने पिता के दर्शन और वन्दना के लिए गया । (और बोला—) हे तपोनिधे ! आपके इस बेटे की भूख और प्यास अभी शान्त नहीं हुई । जब पिता काश्यप से इस प्रकार कहा गया तब उन्होंने आश्चर्य में आकर बतलाया—"पहले की बात है, मुनि विभावसु से उनके अनुज ने झगड़ा किया । उसने कहा—तुम्हारा अपने ज्येष्ठांश पर ही अधिकार है । इसलिए विभाजन करके कनिष्ठांश मुझे दे दो । विभावसु ने कहा—यह ठीक नहीं कि तुम

नऩ्ऩल्ल नी गृहच्छिद्रं तुटङ्ङुऩ्ऩ-
तेऩ्ऩाल् नशिच्चुपोमिऩ्ऩटङ्ङीटु नी । १८
अेन्नु विभावसु चोन्नतु केळाते
पिन्नेयुमेऱे निर्ब्बन्धं तुटङ्ङिनान् १९
अऩ्नु शपिच्चितु नी गजमाय् पोक-
येऩ्नु विभावसु सोदरन् तन्नेयुं २०
ज्येष्ठनेक्कूटेश्शपिच्चाननुजनुं
दुष्टभावालोरु कूर्म्ममाय् पोक नी । २१
सुप्रतीकन् गजमाय् चमञ्ञीटिना-
नप्पोळ् विभावसु कूमायीटिनान् । २२
अन्योन्यशापवुमेऱ्ऱिट्टिरुवरु-
मिऩ्नुं सरस्सिङ्कलुण्टु किटक्कुऩ्नु । २३
चेऩ्नु कौत्तिक्कोण्टु पोऩ्ऩिनि वैकाते
तिऩ्ऩालुमङ्ङोरु देशत्तु कोण्टुपोय् । २४
वानोर्पुरिपुक्कु पीयुषवुं कोण्टु
मानमोटे वरिकेऩ्ऩान् जनकनुम् । २५
वन्दिच्चतिनु नटऩ्ऩान् गरुडनुं
मन्देतरं चेऩ्ऩनेरत्तु काणायि २६
आमतन्वट्टमोरु दशयोजन-
याणतिन् पोक्कमो मूऩ्ऩल्लो योजन । २७

गृहच्छिद्र[1] प्रारंभ कर रहे हो। इससे सत्यानाश हो जायगा। तुम दब जाओ। विभावसु का कहना न मानकर अनुज ने और निर्बन्ध[2] करना शुरू किया। १३-१९ तब विभावसु ने अपने भाई को यों शाप दिया— 'तुम हाथी हो जाओ'। अनुज ने भी ज्येष्ठ को शाप दिया— 'तुम अपने दुष्टभाव के कारण कूर्म हो जाओ'। अनुज सुप्रतीक हाथी बन गया और विभावसु कूर्म हो गया। अब दोनों एक दूसरे का शाप लगने से सरोवर में पड़े हैं। चलो उन दोनों को अपनी चोंच से जल्दी उठा लाओ और कहीं एकान्त में लेजाकर खा लो। (उसके बाद) देवों की पुरी में जाकर अमृत लेकर सम्मान के साथ चले आओ।" पिता ने ऐसा कहा। गरुड़ पिता की वन्दना करके चला गया। वेग से जाने पर एक कूर्म दिखाई दिया जो दस योजन चौड़ा था, और तीन योजन

१ घर में कलह। २ हठ।

द्वादश योजन नीळमुण्टानयुं
मेदुरमायिटं पातियुमुण्टल्लो । २८
रण्टुमेट्टुत्तु पऱन्नॊरुदिक्किनु
कुण्ठतयॆन्नियॆ चॆन्नॊरुनेरत्तु २९
कण्टानमरमरमरङ्ङळ् निल्कुन्नतु-
मुण्टतिल् नल्ल वटमरमुन्नतम् । ३०
विस्तारमुण्टु शतयोजनवळि
पत्रप्रवाळशाखाढ्यं मनोहरम् । ३१
वृक्षप्रवरशाखान्तरे वॆच्चितु
भक्षिक्कामॆन्नु निनच्चु तॆळिवॊटे ३२
पक्षपुटङ्ङळ् कुलुक्किक्कुतं कॊण्टु
पक्षीश्वरन् चॆन्निरुन्नॊरु नेरत्तु ३३
कोटरपाटनमुण्टायतुमूल-
माटल्तेटीटिनानुण्टतिन्मेल् चिल ३४
तापसेन्द्रन्मारुपतिनायिरं
तापमवर्क्कु वरुमतुवीळ्किल् ३५
कोपवुं मां प्रति वर्द्धिक्कुमन्नेरं
शापवुमेटीटुमॆन्नु भयप्पॆट्टान् । ३६
पत्रिप्रवरनुपायं निरूपिच्चु
कॊत्तियॆटुत्तानटर्न्नॊरु कॊम्पतुं- ३७

ऊँचा था। हाथी तो बारह योजन लम्बा था और छः योजन मोटा था। २०-२८ गरुड़ दोनों को लेकर उड़ा। जब आराम से एक स्थान पर पहुँचा तब वहाँ दिव्य वृक्ष दिखाई दिये और उनमें एक अत्युन्नत वटवृक्ष भी था। वह सौ योजन चौड़ा था; पत्र, प्रवाल और शाखाओं से भरा मनोहर था। 'बाद में खालूंगा' यह सोचकर दोनों को (हाथी और कूर्म को) गरुड़ ने शाखाओं के बीच निःशंक रख दिया। फिर अपने पक्षों को हिलाकर आराम से बैठ गया। इसके कारण कोटर सहित एक शाखा टूट गयी। वह दुःखित हुआ, क्योंकि उसमें साठ हजार तापसेन्द्र रहते थे। 'अगर शाखा गिरती तो उन सबको कष्ट होता और मेरे प्रति उनका कोप बढ़ता और मैं उनके शाप का पात्र बन जाता' ऐसा सोच-कर डर गया। २९-३६ यह सोचकर कि इससे बचने का क्या उपाय हो, उसने शाखा को अपनी चोंच में दबा लिया। तदनन्तर उसे लेकर

कौन्टु जनकनिरिक्कुमिटं पुक्कान् ।
कण्टितु नन्दनन्सङ्कटं काश्यपन् ३८
दण्डमेन्तुण्णी! परिभ्रमं तीर्क्केन्तु
पण्डितन् तापसन्मारेयिऱक्किनान् । ३९
जन्तुक्कळिल्लात्त देशमरुळ् चेय्क
चिन्तिच्चितिन्टे पतनं वरुत्तुवान् । ४०
नूऱायिरं योजन वऴि चेल्लुम्पो-
ळारुमिल्लात गिरियुण्टविटेयाम् । ४१
तत्र कौण्टक्कळञ्ञानयुमामयुं
क्षुत्तटक्कीटुवान् भक्षिच्चनन्तरं ४२
देवलोकं पुक्कमृतेटुत्तीटुवान् ।
भाविच्चितु पवनाशननाशनन् । ४३
अप्पोळमरलोकत्तु काणाय्वन्नु
मुल्पाटु दुर्न्निमित्तङ्ङळ् पलतरम् । ४४
जंभारि संभ्रमिच्चुम्परुमाय् गुरु-
तन् पदांभोरुहं कुम्पिट्टु चोदिच्चान् । ४५
दारुणदुर्न्निमित्तङ्ङळ् काणायतिन्
कारणमेन्तेन्नरुळ्चेय्क गीष्पते! ४६
केळ्क्क महेन्द्र! तवापराधत्तिना-
लोर्क्क मरीचिपतापसन्मारुटे ४७

वहाँ गया जहाँ उसके पिता थे। काश्यप ने अपने पुत्र की विषम स्थिति देखी (और कहा—) "क्यों परेशानी है, बेटा ? घबड़ाओ मत।" फिर विद्वान् पिता ने तपस्वियों को उतारा। (गरुड़ ने कहा—) "सोचकर ऐसा स्थान बतलाइए जहाँ कोई जन्तु न हो, ताकि मैं इसे वहाँ फेंक सकूं।" (पिता ने कहा—) सौ हजार योजन का रास्ता पार करने पर एक पहाड़ मिलेगा जहाँ कोई भी नहीं है। वहाँ इस (शाखा) को फेंक कर हाथी और कूर्म को अपनी भूख शान्त करने के लिए खा लो। तदनन्तर देवलोक में अमृत लाने के लिए प्रवेश करो। पवनाशनों (सर्पों) के नाशक (गरुड़) ने यही करना प्रारंभ किया। ३७-४३ उस समय देवलोक में पहले से ही तरह-तरह के दुर्निमित्त (अशकुन) दीखने लगे। देवों के साथ स्वयं इन्द्र घबड़ा गये और अपने गुरु के चरणों की वन्दना करके बोले—हे बृहस्पते ! घोर दुर्निमित्त (अशकुन) दिखायी दे रहे हैं। इसका क्या कारण है, बतलाइए। (बृहस्पति बोले—) "सुनो महेन्द्रजी !

वाच्च तपोबलं कॊण्टुळवायॊरु
काश्यपपुत्रन् विनतात्मजनिप्पोळ् ४८
वन्निविटॆक्कलहिच्चु नम्मॆज्जयि-
च्चॆन्नुममृतवन् कॊण्टुपों निश्चयम् । ४९
ॲन्तालवनोटु युद्धत्तिनायिट्टु
निन्नीटुविन् निङ्ङळॆल्लारुमॊन्निच्चु । ५०
दण्डमॆन्नालुं जयिप्पतिनॆन्नतु
पण्डितनाय गुरवरुळ्चॆय्तप्पोळ् ५१
इन्द्रनमृतुं कलशवुं काक्कुन्न
वृन्दारकाधिपन्मारोटु चॊल्लिनान् ५२
पण्टु केट्टिट्टिल्लयात विशेषङ्ङ-
ळुण्टु केळ्क्कुन्नतरिविनॆल्लावरुम् । ५३
लोकत्रयत्तिन्नु नायकनाकियो-
राखण्डलनाकुमॆन्नोटु पोरिनाय् ५४
इन्नॊरु पक्षि वरुमॆन्नु केळ्क्कुन्नू ।
निन्नुकॊळ्वान् पणियॆन्नुं परयुन्नू । ५५
वह्नियुं कालनुं वीरन् निर्ऋतियुं
धन्यन् वरुणन् जगल्प्राणदेवनुं ५६
ईशसखितानुमीशनुं चन्द्रनुं
ईशात्मजनाय सेनापतियुमाय् ५७

तुम अपने अपराध के कारण, जान लो, मरीचिप-तापसों[1] के तपोबल से काश्यप प्रजापति का पुत्र विनता (के गर्भ) से पैदा हो गया और वह अब यहाँ आकर हमलोगों से झगड़ा करके हमें हराकर अमृत को अवश्य छीन ले जायगा। इसलिए उससे युद्ध करने के लिए आप सब एक होकर खड़े हो जाइए। जिससे कष्ट होते हुए भी हमारी जीत हो जाय। जब विद्वान् गुरु ने इस प्रकार कहा तब इन्द्र ने अमृत और कलश की रक्षा करनेवाले देवों से कहा—४४-५२ "आप सब जान लीजिए कि अनसुनी बातें अब सुनने में आ रही हैं। सुना जाता है कि लोकत्रय के नेता—मुझ आखण्डल (इन्द्र) से लडने के लिए आज एक पक्षी आने वाला है। यह भी कहा जाता है कि उसका सामना करना कठिन है। अग्नि, यमराज, वीर निर्ऋति, धन्य वरुण, जगत् का प्राण—वायु, शिवजी

१ किरणों का पान करनेवाले तपस्वी।

एल्कणमाशु पुरमतिल्कप्पुऱम्
भास्करन्मारोटु रुद्रसमूहवुं ५८
पोर्क्कोरुमिच्चुऱप्पिच्चु निन्नीटुविन्
पार्क्कणमोटरुतारुमोरुत्तरुम् । ५९
अष्टवसुक्कळ् मरुत्तुकळ्तम्मोटु
तट्टुकेटुण्टामिटत्तटुत्तीटणम् । ६०
अश्विनीदेवन्मार् विश्वदेवन्मारुं
पश्चाल् भयं तीर्न्नुऱप्पिच्चुनिर्त्तणम् । ६१
व्यूहमिळकुन्नताशु सूक्षिक्कणं ।
हूहूसमन्वितं हाहा निरन्तरं ६२
पत्तुनूऱायिरं कोटि गन्धर्व्वन्मार्
चित्ररथनोटु मुम्पिलेतिर्क्कणम् । ६३
यक्षवीरन्मारोरुमिच्चु निल्कणं
पक्षभागङ्ङळे रक्षिच्चिळकाते । ६४
माणिभद्रन् धृतराष्ट्रन् सुवीरनुं
त्राणनिपुणनाकुं पूर्ण्णभद्रनुं ६५
चाञ्चल्यमेतुमिल्लात विरूपाक्षन्
वाञ्चिकनाय पटयाळिवीरनुं ६६
चण्डपराक्रमनाय विभण्डकन्
भिण्डिपालायुधन् दण्डवरायुधन् ६७

का सुहृत्—महेश, चन्द्र, महेश का पुत्र सेनापति कार्तिकेय—ये सब नगर के उस तरफ़ शत्रु का सामना करें। हे आदित्यगण और रुद्रगण! एक होकर युद्ध के लिए स्थिर खड़े हो जाओ। सब डट जायँ, भागने का कोई नाम न ले। आठ वसु, मरुतों के साथ, वहाँ पहुँच जायँ, जहाँ पराजय की संभावना हो। दोनों अश्विनीदेव और विश्वेदेव भय छोड़कर पीछे स्थिर होकर रोकें। यह देखते रहें कि अपना व्यूह कहीं हिल न जाय। हूहू सहित हाहा आदि। ५३-६२ सौ-दसहज़ार[1] कोटि गन्धर्व चित्ररथ के नेतृत्व में आगे सामना करें। यक्षों के वीर एक होकर खड़े हो जायँ, और दोनों बगलों की रक्षा करें, उनको हिलने न दें। मणिभद्र, धृतराष्ट्र, सुवीर, रक्षा करने में कुशल पूर्णभद्र, बिलकुल चाञ्चल्यरहित विरूपाक्ष, सैनिकों में वीर वाञ्चिक, चण्ड पराक्रम सहित

1 दस लाख।

सिद्धविद्याधरगन्धर्व्वकिन्नर
मृत्युरक्षोगणयक्षभूतादियुं ६८
गुह्यकवीरपिशाचप्रवररुं
युद्धत्तिनेतुमॊरु कुरवॆन्निये
बद्धरोषेण निल्केणं जयिप्पोळम् । ६९
इत्थं पॆरुम्पट कूट्टि महेन्द्रनु
पक्षिप्रवरन् वरुन्नतिन्मुन्नमे । ७०
ऒल्लामॊरु पक्षि ताने वरुन्नति-
नॆल्लावरुं भयप्पॆट्टु सुरजनम् । ७१
ऎन्नु सूतन् परञ्ञोटिननेरत्तु
मन्दस्मितंचॆय्तु चोदिच्चु शौनकन् ७२
ऎन्तु मरीचिपतापसेन्द्रन्मारो-
टिन्द्रन् पिळ् चॆय्ततॆन्नु परयणम् । ७३
इन्द्रापराधं परञ्ञुतरामॆन्नु
वन्दिच्चु सूतनुं चॊल्लित्तुटङ्ङिनान् । ७४

इन्द्रापराधम्

अंभोजसंभवपुत्रन् मरीचिक्कु
संभूतनायॊरु काश्यपतापसन् १

विभण्डक—जिसका आयुध भिण्डिपाल और दण्डवर हैं, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, यमराज, रक्षोगण, यक्ष, भूत आदि, गुह्यकों के वीर, पिशाचों के प्रवर—ये सब बिना किसी न्यूनता के तीव्र कोप के साथ विजय तक युद्ध के लिए खड़े हो जायँ।" ६३-६९ इस प्रकार महेन्द्र ने पक्षिप्रवर (गरुड़) के आने के पहले ही एक बड़ी सेना इकट्ठा की। एक पक्षी अकेला ही आनेवाला है, यह समझकर सब देवगण डर गये। जब सूतजी ने इस प्रकार कहा तब शौनक ने मन्द मुस्कान के साथ पूछा—"यह बतलाइए, इन्द्र ने मरीचिप तापसों के साथ क्या अपराध किया ?" 'इन्द्र का अपराध मैं बतला दूंगा,' यह कहकर सूतजी ने बतलाना प्रारंभ किया। ७०-७४

इन्द्र का अपराध

अंभोजसंभव[1] (ब्रह्मा) के पुत्र मरीचि का एक पुत्र हुआ—तापस

१ कमल से उत्पन्न।

मुन्पोरु यागं तुटङ्ङियतिन्नायि-
ट्टुन्परेल्लारुं तुणच्चार् वळिपोले । २
जंभारितन्नेस्समिदाहरणार्थं
मुन्पिल् नटन्नु वळियेनिलिन्परुम् । ३
उन्परिल् मुन्पनां वन्पन् शतमखन्
मुन्पिल् चमतयुं कोण्टु वरुन्नेरं ४
अङ्गुष्ठमात्रशरीरिकळाकिय
मंगलन्मारां मरीचिपतापसर् ५
एल्लारुमाय् चेरियोरु चमतक्को-
लल्लल् मुळ्त्तु पूणेल्लु नुरुङ्ङुमा-६
रेत्रयुं वीर्त्तुचीर्त्तात्त्यां वरुन्नेर-
मुत्तमन्मारक्कोरु सङ्कटमुण्टायि । ७
पद्धतितन्नुटे मध्ये भविच्चिचतो-
रब्धियतायतेन्तेन्नु चोल्लेणमो । ८
कट्टकुळन्पिले वेळ्ळमतिल् वीणु
पट्टिप्पिटिच्चुळन्नाळुन्ततुनेरं ९
चेट्ट परिहसिच्चोटिक्कटन्नुपोय्
कुटमुण्टेन्नितोराते महेन्द्रनुम् । १०
पारं परिहसिच्चीटुन्नवर्कळ्क्कु
घोरनरकमेन्नुण्टु वेदोक्तिकळ् । ११

काश्यप। उसने एक यज्ञ प्रारंभ किया जिसमें सभी देवों ने यथाशक्ति सहायता की। समित[1] लाने के लिए जंभारि (इन्द्र) स्वयं आगे-आगे चले और उनके पीछे देवगण। जब देवों में श्रेष्ठ शक्तिशाली शतमख[2] (इन्द्र) एक पूरा पलाश[3] का पेड़ लेकर आगे-आगे आ रहे थे तब केवल अंगूठे के बराबर प्रमाण वाले, मंगल करनेवाले मरीचिप तापस सब मिलकर एक छोटा-सा समित[4] का टुकड़ा कन्धे की हड्डी तोड़ने लायक बड़े कष्ट के साथ पसीने से क्लिन्न[5] हुए ला रहे थे, और उनको देखकर उत्तम लोगों को बड़ा दुःख हुआ। १-७ उनके मार्ग में एक समुद्र पड़ा। वह क्या था, यह भी कह दूं! गोष्पद[6] का पानी! उसमें गिरकर वे दुःख के साथ जब डूब रहे थे तब महेन्द्र उसका दोष न समझकर उनकी

१ लकड़ियाँ। २ सौ यज्ञ करनेवाले। ३ ढाक। ४ लकड़ी। ५ भीगे
६ गौ के खुर बराबर गड्ढे।

अन्नतिलुं द्विजन्मारेप्परिहसि-
क्कुन्नतिनेत्र नरकं भुजिक्कणम् । १२
आकयालिन्द्रनिवनल्लिनियेन्नु
भागवतन्मार् तपस्सु तुटङ्ङिनार् । १३
भीतिपूण्टिन्द्रनुं काश्यपन् तन्नोटु
खेदं कलर्न्नु परञ्ञतु केळ्क्कयाल् १४
तापसन्मारे विळिच्चरुळि चेय्तु
तापं महेन्द्रनु पोक्कुवान् काश्यपन् १५
नीक्कं वरुत्तरुतिन्द्रने निर्णयं
नीक्कं वरा निङ्ङळ् चिन्तिच्चतुमोर्त्ताल् । १६
पक्षीन्द्रनायिट्टोरुत्तनुण्टामवन्
शक्रप्रतापं केटुक्कुमरिञ्ञालुम् । १७
पारं प्रभुत्वमुण्टेन्नङ्ङिरिक्कलु-
मारुं कृशन्मारे निन्दियाय्केन्नतुं १८
काश्यपन् वासवनोटु चोल्लीटिनान्
काश्यप पुत्र चरित्रमिनिच्चोल्लाम् । १९

गरुडन्टे देवलोकप्राप्तियुं अमृतापहरणवुम्

कोटि दिवाकरसंवर्त्तकाग्निक-
ळाटल् तेटीटुन्न दीप्तिकलर्न्नवन् १

हँसी उड़ाकर आगे बढ़ गया। वेदों में कहा है कि जो औरों की हँसी उड़ाते हैं वे घोर नरक में गिरेंगे। उसमें भी ब्राह्मणों की हँसी उड़ाने में कितने नरक सहना पड़ता है। यही कारण है कि भागवतों[1] (मरीचिप तापसों) ने तप प्रारंभ किया ताकि आगे यह इन्द्र ही न रहे। ८-१३ इन्द्र भयभीत हो गया और उसने सारा वृत्तान्त खेद के साथ काश्यप को सुना दिया। सब सुनकर काश्यप ने तापसों को बुलाया और महेन्द्र का दुःख दूर करने के लिए उनसे कहा। इन्द्र को अपने स्थान से न हटाना चाहिए, विचार कीजिए, आपके प्रयत्न से वह हटाया भी नहीं जा सकता। पक्षियों का एक इन्द्र (नाथ) पैदा होगा जो शक्र के प्रताप को हरा देगा, यह जान लीजिए। काश्यप ने इन्द्र से कहा—'जितना भी प्रभावशाली कोई हो, उसे दुर्बलों की निन्दा न करनी चाहिए'। अब काश्यप-पुत्र (गरुड़) की आगे की कथा सुना दूंगा। १४-१९

---

१ भगवद्-भक्तों।

चण्डतुण्डोज्ज्वलविग्रहमोट्टुमा-
खण्डलन्तन् पुरंपुक्कतिवेगत्ताल् । २
चेय्त पराक्रमं चोल्वान् पणि पणि
कैतवमल्ल पर्युन्नतेतुमे । ३
एकन् निरायुधनाय गरुडनु-
मेकीभविच्चोरु देवसमूहवुम् ४
तम्मिलुण्टायोरु युद्धकोलाहलं
ब्रह्मादिकळ्क्कुं भयप्रदं निर्ण्णयम् ५
वज्रवुं शक्तियुं दण्डवुं खड्गवुं
पाशवुमङ्कुशवुं गद शूलवुं ६
ब्रह्मास्त्रमादियामस्त्रसमूहवुं
चेम्मे वृथाफलमेन्नाय् चमञ्ञुते । ७
साक्षाल् जगन्मयनाय नारायणन्
तार्क्ष्यनाकुन्नततिनिल्ल संशयम् । ८
तुण्डपतत्रन खादिकळेट्टोरा-
खण्डलनादिकळ् मोहिच्चु वीणुते । ९
पीयूषकुंभपार्श्वं प्रवेशिच्चप्पोळ्
तीयेरियुन्नतु काणायितेट्वुम् । १०

गरुड़ की देवलोकप्राप्ति और अमृतापहरणम्

एक कोटि सूर्य और प्रलयाग्नि को हरानेवाली दीप्तियुक्त, अपने चण्ड तुण्ड (भयंकर चोंच) से उज्ज्वल शरीर सहित गरुड़ ने तुरन्त आखण्डल (इन्द्र) की पुरी में प्रवेश किया। उसने जो पराक्रम किया उसका वर्णन करना कठिन है। जो कुछ मैं कहता हूँ उसमें झूठ कुछ भी नहीं है। एक ओर निःशस्त्र गरुड़ था और दूसरी ओर सारा देवगण जो एक हो गया था। उनका जो युद्ध-कोलाहल हुआ वह निःसन्देह ब्रह्म आदियों को भी भयप्रद था। वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा, शूल, ब्रह्मास्त्र आदि अस्त्रों का समूह सब बिलकुल व्यर्थ सिद्ध हुआ। १-७ साक्षात् जगन्मय नारायण ही तार्क्ष्य (गरुड़) बन गया, इसमें सन्देह नहीं। उसके तुण्ड (चोंच), पक्ष, नख आदि लगने से आखण्डल (इन्द्र) आदि देव बेहोश हो गये। वह जब अमृतकलश के पास पहुंचा, तब जलती हुई तीव्र अग्नि दिखाई दी। एक हज़ार कोटि मुखों की सृष्टि करके एक-एफ मुंह से बहती हुई नदियों को लेकर

आयिरं कोटि मुखङ्ङळुण्टाक्कीट्टु
वायिल् नदिकळेक्कोण्टु चेन्नीटिनान् ११
तीयुं पोलिच्चङ्ङणन्नोरुनेरमो-
रायिरमायिरमश्रङ्ङळुळ्ळोरु १२
चक्रं भयङ्करमाय्क्कण्टनेरत्तु
पुक्कानतिकृशनायवट्टिन्मध्ये । १३
पिन्नेयुमङ्ङणन्नोटुन्ननेरत्तु
पन्नगेन्द्रन्मारिरुवरेक्काणायि । १४
आशीविषवरन्मारवर् नोक्कुकि-
लाशु दहिच्चुपोमेवरु निश्चयम् । १५
धूळिजालं वरिषच्चु गरुडनुं
काळसर्प्पङ्ङळ्क्कु नेत्रङ्ङळ् मूटिनान् । १६
यन्त्रवुं भेदिच्चु पीयूषवुं कोण्टो-
रन्तरमेन्नियेे पोकुन्नतु नेरम् १७
कण्टु वळियिल् निन्नप्पोळ् मुकुन्दन् वै-
कुण्ठनसुरारि नारायणन् परन् १८
कोण्टाटिक्कोण्टरुळचेय्तु वरङ्ङळ् नी
कोण्टुकोळ्ळेन्नोटु वेण्टतु नल्कुवन् । १९
ॲन्नरुळ्चेय्तोरु नाथने वन्दिच्चु
नन्नाय् स्तुतिच्चु पऱञ्ञु गरुडनुम् । २०
सर्व्वलोकेश्वरा ! कारुण्यवारिधे !
गर्व्वविनाशन ! लक्ष्मीपते ! हरे ! २१

गया। जब आग बुझकर नष्ट हुई तब हज़ारों अस्त्र (नोक) वाला एक भयंकर चक्र दिखाई दिया। (गरुड़) बहुत दुबला बनकर उनके अन्दर घुस गया। ८-१३ जब सब फिर बुझने लगा तब दो पन्नगेन्द्र (बड़े सर्प) दिखाई दिये। वे जिनको भी देख लें वह अवश्य तत्क्षण ही जल जाय। तब गरुड़ ने धूलिवर्षा करके कृष्ण सर्पों की आँखें बन्द कर दीं। फिर यन्त्र का भेद करके बिना विलम्ब के जब (गरुड़) अमृत लेकर जा रहा था तब मार्ग में बैकुण्ठ, असुरारि, नारायण, पर, मुकुन्द मिले। जिन्होंने अभिवादन करके कहा—'मुझसे वर ले लो। तुम्हें जो चाहिए सो दूंगा।' जब नाथ ने इस प्रकार कहा तब गरुड़ उनकी वन्दना करके बोले। १४-२० "सर्वलोकेश्वर ! कारुण्यवारिधे !

ऎन्तुं जरामरणादिकळ्कूटातॆ
वन्नीटवेणं सुधापानंचॆय्यातॆ । २२
ऎल्लां निनक्कॊत्तवण्णं वरिकॆन्नु
कल्याणमूर्त्तियनुग्रहिच्चीटिनान् । २३
ऎन्तटियनॊन्नु वेण्टतरुळ्चॆय्ति-
लन्तरमॆन्नियॆ चॆय्वनॆन्नानवन् । २४
ऎङ्किलिनिक्कु नी वाहनमाकण-
मॆन्कॊटिक्कङ्कवुं नीयायिरिक्कणम् । २५
तम्पुराने ! निन्तिरुवटि कल्पिच्चा-
लॆन्पॆरुमाने ! इळक्कमिल्लॊन्निनुम् । २६
शंभुविरिञ्चाद्यखिलप्रपञ्चवुं
कम्पितभ्रूविलासोद्भवंते प्रभो ! २७
नारायणनुं गरुडनुं तङ्ङळि-
लोरोन्निवण्णं परञ्ञुनिल्कुन्नेरं २८
ईर्ष्याविशालमरॆन्द्रन् गरुडनॆ
द्वेष्यं कलर्न्नु तन् वज्रं प्रयोगिच्चान् । २९
तार्क्ष्यनुमप्पोळवनोटु चॊल्लिनान्
दाक्ष्यं पॆरिकयुण्टॆत्रयुं नन्नु नी ३०
निन्नॆक्कणक्के महतामतिक्रम-
मिन्नॆनिक्किल्लॆन्नरिक महेश्वर ! ३१

गर्वविनाशन ! लक्ष्मीपते ! हरे ! ऐसा हो कि बिना अमृतपान किये मुझे कभी जरा और मरण न हो।" कल्याणमूर्त्ति (मुकुन्द) ने अनुग्रह किया—"सब ऐसा ही हो जैसा तुम चाहते हो।" तब गरुड़ ने निवेदन किया—"मुझे आज्ञा दीजिए, और क्या करना है ? वैसा ही करूँगा, कोई भेद नहीं हो पायेगा।" (भगवान् ने कहा—) "तो फिर तुम मेरे वाहन बन जाओ और तुम ही मेरे ध्वज का चिह्न भी बन जाओ।" "प्रभो ! मेरे स्वामी ! अगर यही आज्ञा है तो मेरे लिए शिरोधार्य है, इससे मैं नहीं हटूँगा। हे प्रभो ! तुम्हारी कम्पित भ्रू के विलास से शंभु, विरञ्चि आदि सारा प्रपञ्च उत्पन्न है।" २१-२७ जब नारायण और गरुड़ आपस में इस प्रकार संलाप कर रहे थे, तब ईर्ष्या के कारण इन्द्र ने गरुड़ के विरुद्ध द्वेष के साथ अपने वज्र का प्रयोग किया। तब तार्क्ष्य (गरुड़) ने इन्द्र से कहा—"जय तुम्हारी निपुणता की ! तुम बड़े होशियार हो ! पर जान लो कि मैं बड़ों का, तुम्हारे समान अतिक्रम करनेवाला नहीं हूँ।

अन्तमिल्लात दधीचन् तपस्सिनों-
रन्तरं ञान् वरुत्तीटुकयिल्लेंटो । ३२
शान्तबुद्ध्या पुनरित्थं परङ्ञुटन्
चेन्तामराक्षप्रियनां महाबलन् ३३
तूवलिलोन्नु परिच्चेरिञ्ञीटिनान्
देवेन्द्रनाय्कोण्टु पक्षिकुलेश्वरन् ३४
इन्द्रन् पवनाशनाशनन्तन्नोटु
मन्दस्मितं चेय्तु चोल्लिनानन्नेरम् ३५
सख्यमिनि नम्मिलुण्टायिरिक्कणम्
विक्रमं तावकं केळ्प्पिक्कयु वेणम् । ३६
अप्पोळमराधिपनोटु चोल्लिना-
नल्पसारज्ञ ! जळप्रभो ! केळ्क्क नी । ३७
आत्मप्रशंस मरणाल्परमेन्न-
तात्माविलुण्टेन्निरिक्किलुं चोल्लुवन् । ३८
सख्यमुण्टाकयालल्लाय्किल् निन्नुटे
धिक्कारवुं पोकयिल्लेन्नु निर्णयम् । ३९
दुर्बोधमुळ्ळवरोटु चोल्लाय्किलो
सल्बोधमुण्टाकयिल्लवर्क्केन्नुमे । ४०
सप्ताचलङ्ङळुं सप्तांबुधिकळुं
सप्तद्वीपान्वितसप्तलोकङ्ङळुं ४१

दधीचि जैसों के अनन्त तप में मैं कभी विघ्न नहीं पैदा करूँगा"। शान्त-बुद्धि के साथ इस प्रकार कहने के बाद पद्मलोचन (विष्णु) के प्रिय महाबल गरुड़ ने अपने पंख की एक तूलिका (रोयाँ) निकाल कर देवेन्द्र के ऊपर फेंक दिया। तब इन्द्र मन्द मुस्कान के साथ पवनाशनाशन[1] (गरुड़) से बोले— "अब भविष्य में हम दोनों की दोस्ती होनी चाहिए और [अब तुम अन्य] अपने विक्रमों को भी सुनाओ।" २८-३६ तब गरुड़ ने अमराधिप (इन्द्र) से कहा—"हे अल्पसारज्ञ ! जड़प्रभो ! सुन लो ! यद्यपि जानता हूँ कि आत्म-प्रशंसा करना मरण से भी निकृष्ट है, फिर भी दोस्ती हो जाने के कारण मैं कह दूंगा; नहीं तो अवश्य तुम्हारा धिक्कार समाप्त नहीं होगा। जिन्होंने ग़लत समझ रखा हो उनको अगर न बतला दिया जाय तो उनका सद्बोध कभी नहीं होगा। सातों

१ हवा पान करनेवाले सर्पों के नाशक।

पक्षपुटंकोण्टेटुत्तु परुप्पोरु-
पक्षिप्रवरनेन्नेन्नेयरिक नी । ४२
अप्पोळनुनयमोटु शतक्रतु
सत्पक्षिये प्रतिमानिच्चु चोल्लिनान् । ४३
इत्रयेल्लां महत्त्वं वळरुं भवा-
नब्धिजमाममृतं कोण्टु किं फलम् ? ४४
मातावितुळ्ळोरु दास्यमोळिक्केन्नि-
येतुमिनिक्किल्लितिलोरु कांक्षितम् । ४५
मातृदास्यमितुकोण्टु वीण्टाल् पुन-
रादरवोटुमिनिक्कु तरेणं नी । ४६
वेण्टुं वरं तरुन्नुण्टु ञानेन्नोटु-
वेण्टा विरोधवुमिन्नुतोट्टिन्निमेल् । ४७
इत्तरं वाक्कुकळ् केट्टु गरुडनुं
चित्तमोदाल् मरुत्वानोटु चोल्लिनान् । ४८
शक्र ! शतक्रतो ! विक्रमवारिधे !
चक्रायुधपदभक्तजनोत्तम ! ४९
चक्रिकळाकिय दुष्कृतजन्तुक्कळ्
वक्रशीलाकृतियुळ्ळवर् मिक्कतुं ५०
दुःखं जगद्वासिकळ्क्कु वरुत्तुवो-
रक्षमन्माराय चक्षुःश्रवणन्मार् ५१

पर्वतों, सातों समुद्रों और सातों द्वीपों सहित सातों लोकों को अपने पक्ष-पुट में लेकर उड़ने की शक्तिवाला मैं एक मात्र पक्षिप्रवर हूँ, यह समझ लो"। ३७-४२ यह सुनकर शतक्रतु (इन्द्र) ने अनुनय के साथ पक्षि-प्रवर का सम्मान करके कहा—"इतने महत्ववाले तुमको सागर से निकले अमृत से क्या प्रयोजन है ?" (गरुड़ ने उत्तर दिया—) "अपनी माता को दास्य से मुक्त कराने के अलावा मेरा इसमें कोई प्रयोजन नहीं है"। (तब इन्द्र ने कहा—) "तो फिर जब माता का दास्य हट जायगा तब इसे मुझे सादर वापस कर देना। तुम्हें यथेष्ट वर दे दूंगा, आज से मुझसे विरोध करने की आवश्यकता नहीं है"। ४३-४७ इस प्रकार की बातें सुनकर गरुड़ ने प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ मरुत्वान् (इन्द्र) से कहा—"हे शक्र !, से शतक्रतु ! हे विक्रमसागर ! हे चक्रायुध (विष्णु) के चरण-भक्तों में श्रेष्ठ ! ये जो चक्री (सर्प), पाप करनेवाले जन्तु, वक्र शील

पक्षीशनां मम भक्षणमाकणं
रक्ष भूवासिकळ्क्कुण्टाकुवान् विभो ! ५२
अॆल्लां निनक्कॊत्तवण्णं वरिकॆ़न्नु
नल्ल वरङ्ङळ् कॊटुत्तु महेन्द्रनुम् । ५३
जंभारियुं कूटॆप्पिन्पे नटकॊण्टान्
वन्पनां तार्क्ष्यनुं नागालयं पुक्कान् । ५४
कण्टुकॊण्टालुममृतुं कलशवुं
कॊण्टुवन्नेनमरन्मारॆ वॆ़न्नु ञान् ५५
शास्यमायुळ्ळतिनियुमुण्टो बहु-
लास्योत्तमन्मारॆ ! साद्ध्यमिनिक्कॆल्लाम् । ५६
दास्यमॊऴिप्पतिनॆन्तिनि वेण्टतु
हास्यमल्ल पऱयुऩ्ऩतिङ्ञालुम् । ५७
एतुमितिल्परमॆन्तिनि वेण्टतु
साधिच्चितु ञङ्ङळ् चिन्तिच्चतॆल्लामे । ५८
इप्पोळ्त्तुटङ्ङीट्टॊऴिञ्ञितु दास्यवु-
मद्भुतविक्रम पक्षिकुलोत्तम ! ५९
दर्भं विरिच्चु सुधाकलशं वच्चु
सर्प्पेन्द्रवृन्दं कुळिप्पान् पुऱप्पॆट्टु । ६०

और वक्र आकृति वाले, अधिकांश जगत्-निवासियों को दुःख देनेवाले, क्षमा-रहित चक्षुःश्रवण (आँख के द्वारा सुनने वाले सर्प) हैं, वे मुझ पक्षीश के आहार हो जायँ, ताकि पृथिवी-निवासियों की रक्षा हो जाय"। "सब ऐसा ही हो जैसा तुम चाहते हो"—यह कहकर महेन्द्र ने अच्छे वर दिये। ४८-५३ जंभारि (इन्द्र) वापस चले गये और शक्तिशाली तार्क्ष्य (गरुड़) नागालय को रवाना हुआ। (वहाँ पहुँचकर) बोला—"अमृत और कलश देख लो! देवों को मारकर मैं छीन लाया हूँ। हे बहुलास्योत्तम (अनेक-मुंहवाले सर्पो!) और कोई आज्ञा है? मेरे लिए सब साध्य है। दास्य हटाने के लिए अब और क्या चाहिए? जान लो कि मैं हँसी नहीं कर रहा हूं।" (सर्पों ने कहा—) "अब इसके अलावा और क्या चाहिए? हम लोगों की सब इच्छा पूरी हो गयी, आज से लेकर दास्य भी हट गया। हे अद्भुतविक्रम! पक्षिकुलोत्तम!" फिर दर्भ[1] बिछाकर उस पर अमृतकलश रख दिया गया; और सारा सर्पेन्द्र-वृन्द[2] स्नान करने चला।

१ कुश। २ सापों का झुण्ड।

आचमनाद्यनुष्ठानङ्ङळुं कळि-
च्चाशीविषन्मार् वरुन्नतिन्मुन्नमे ६१
आशु पीयूषकलशमेट्टुत्तुकों-
ण्टाशुगवेगाल् मरञ्ञु महेन्द्रनुम् । ६२
वञ्चितन्माराय नागङ्ङळुममृ-
ताञ्चितमाय धरातलं नोक्किनार् ६३
कुञ्चितग्रीवन्मारायवरोक्कवे
सञ्चितदर्भान्वितस्थलं नक्किनार् ६४
दर्भासिधारया रण्टाय् चमञ्ञतु
सर्प्पकुलत्तिनु जिह्वयुमक्कालम् । ६५
इक्कथ चोल्कयुं केळ्क्कयुं चेय्वोर्क्कु
दुःखमकन्नु गतिवरिकेन्नतुं ६६
पक्षिकुलोत्तमन्तानरुळिच्चेय्तु
पक्षभेदमितिनिल्लोरुवर्क्कुमे । ६७

सर्प्पङ्ङळुटे पेरुं प्रकृतवुम्

सूतनीवण्णं पऱञ्ञतु केट्टति-
मोदं कलर्न्नोरु शौनकन् चोदिच्चु । १
कद्रुविनादियिलुण्टाय पुत्रन्मा-
रेत्रयुण्टेन्नुमवरुटे नामवुं २

आशीविषों (सर्पों) के आचमन आदि अनुष्ठान करके लौटने के पहले ही महेन्द्र अमृतकलश को झट से लेकर वायुवेग से तिरोहित[1] हो गये। ५४-६२ वञ्चित[2] सर्पों ने अमृताञ्चित[3] धरातल को देखा। सभी कुञ्चितग्रीवों (सर्पों) ने कुशों से बिछे हुए स्थान को चाट लिया। तभी से दर्भों की असि[4] के समान धार से सर्प कुल की जिह्वाग्र के दो भाग हो गये। तब पक्षिकुलोत्तम (गरुड़) ने कहा—"जो यह कथा सुनें या सुनावेंगे उनका दुःख नष्ट हो जायगा और उनकी अच्छी गति होगी, इसमें कोई मतभेद नहीं"। ६३-६७

सर्पों के नाम और स्वभाव

सूतजी की यह बात सुनकर बड़े प्रमोद के साथ शौनक ने पूछा—"पहले कद्रू के कितने पुत्र हुए और उनके क्या-क्या नाम हैं? हे भद्रमते

१ अदृष्ट। २ ठगे गये। ३ अमृत से भीगे। ४ कुशों की तलवार जैसी धार।

भद्रमते सूत ! केळ्क्कयिलाग्रह-
मेंत्रयुमुण्टतु चोंल्लुकिल् नन्नेंटो । ३
चोंल्लुवानावतल्लेतुमे संख्ययु-
मिल्लवक्कोकयालोंन्नु केट्टीटुविन् । ४
नूरुनूरायिरत्तिल् पुरं पिन्नेयु-
मेरेयुण्टुळ्ळततिल् प्रधानन्मारिल् ५
आरेळुपेरुटे नामङ्ङळ् चोंल्लुवन्
कूरीटुवान् पणियुण्टु मट्टोक्कवे । ६
मुन्पिलनन्तनुं वासुकि तक्षकन्
वन्पनां कार्क्कोटकन् महापद्मनुं ७
पद्मनुं शंखपालाख्यन् नहुषनुं
काळियनैरावतन् मणिनागनुं
पिंगलन् हेमगुहन् शिखि मुल्गरन् ८
नल्ल दधिमुखन्तानुं मनोमुखन्
निर्म्मलन् पिण्डुकनुं कुमुदाक्षनुं ९
संवृत्तनुं वृत्तनुं गजपादनुं
शंखनखनजनेश्वरन् पाण्डरन् १०
पुष्करन्, भीषणन्, कौरवन् शम्यकन्
श्रीवरन् पुष्कलनुं धृतराष्ट्रनुं ११
मूषिकभक्षन् सुबाहु हरिद्रकन्
शंखशिरस्सुं महापुष्पदंष्ट्रनुं १२

सूतजी ! यह सुनने की इच्छा है; बतलाओगे तो अच्छा होगा"। (सूतजी ने उत्तर दिया—) "सब कहना बिलकुल असंभव है। वे असंख्य हैं। एक बात तो सुन लीजिए। (सर्प) सौ लाख से अधिक हैं, और उससे भी अधिक हैं। उसमें से छः सात प्रधानों के नाम बतलाऊँगा, औरों के नाम गिनाना बड़ा काम है। सबसे पहले तो अनन्त है, फिर वासुकि, तक्षक, शक्तिशाली कार्कोटक, महापद्म, पद्म, शंखपाल, नहुष, कालिय, ऐरावत. मणिनाग, पिंगल, हेमगुह, शिबि, मुद्गर, १-८ सुन्दर दधिमुख, मनोमुख, निर्मल, पिण्डुक, कुमुदाक्ष, संवृत्त, वृत्त, गजपाद, शंखनख, अजनेश्वर, पाण्डर, पुष्कर, भीषण, कौरव, शम्यक, श्रीवर, पुष्कल, धृतराष्ट्र, मूषिकभक्ष, सुबाहु, हरिद्रक, शंखशिरा, महापुष्पदंष्ट्र, कुञ्जर,

कुञ्जरन् पीठरकन् गजभद्रनुं
कुण्डोदरन् कोणनासन् महोदरन् १३
वीरन् प्रभाकरन् चारु विषायुधन्
घोरमुखरनॆन्नित्यादि नागङ्ङ- १४
ळट्मिल्लातोळमुण्टवर् सन्तति ।
कुट्मिल्लातवरुं चिलरुण्टतिल् । १५
आयिरमॆण्णूरुमञ्जूरुं मुन्नूरु-
मेळञ्चु मून्नॊन्नुमाय तलयुळ्ळोर् । १६
आयुस्सिनुं भेदमुण्टि वर्क्कॆल्लावर्क्कु-
मायतनङ्ङळ् वेरुण्टु निर्णयम् १७
अन्तरिक्षस्वर्ग्गभूमिपाताळङ्ङळ्
सिन्धुवनगिरिवृक्षादिकळिलुं १८
नित्यसुखत्तोटिरिक्कुन्नवर्कळिल्
तत्त्वबोधादियुमुण्टु चिलर्क्कॆल्लाम् । १९
ऎन्नितु सूतन् परञ्ञोरनन्तरं
पिन्नॆयुं शौनकमामुनि चोदिच्चु । २०
अग्नियिल् वीणु चाकॆन्नु नागङ्ङळॆ-
क्कद्रु शपिच्चोरनन्तरमॆन्तवर् २१
चॆय्ततॆन्नम्मुनि चोदिच्चतु केट्टु
कैतॊळुतादरवोटु चॊल्लीटिनान् । २२

पीठरक, गजभद्र, कुण्डोदर, कोणनास, महोदर, वीर, प्रभाकर, चारु, विषायुध, घोरमुखर इत्यादि नाग हैं और उनकी सन्तति अनन्त है। उनमें कई एक निर्दोष भी हैं। ९-१५ उनमें एक हज़ार, आठ सौ, पाँच सौ, तीन सौ, सात, पाँच, तीन, और एक सिर वाले भी हैं। उनकी आयु में भी भेद होता है तथा उनके आयतन (निवास-स्थान) भी अलग-अलग होते हैं। अन्तरिक्ष, स्वर्ग, भूमि, पाताल, नदी, वन, पर्वत, वृक्ष आदि स्थानों में आराम से रहनेवाले सर्पों में कुछ ऐसे भी हैं जिनको तत्त्वज्ञान हो गया है"। सूतजी के इस प्रकार कहने के बाद महामुनि शौनक ने फिर पूछा—"आग में गिरकर मर जाओ, इस प्रकार कद्रू के शाप देने के बाद उन्होंने (सर्पों ने) क्या किया ?" महामुनि के इस प्रश्न को सुनकर सूतजी ने हाथ जोड़कर निवेदन किया। १६-२२

अनन्तन्टॆ तपस्सॅु

शान्तनायुळ्ळोरनन्तननन्तरं
शान्ततयॊट्टुमिल्लाते धाताविन्नॆ १
चिन्तिच्चु पोयित्तपस्सु तुटङ्ङिनान्
बन्धमोक्षप्रभेदावलोकात्मना । २
पुण्यदेशं गन्धमादनं प्रापिच्चु
निन्नु तपस्सोटनेकायिरत्ताण्टॅु ३
पिन्नॆयव्वण्णं बदर्याश्रमत्तिङ्कल्
चॆन्नु सुखेन तपस्सुचॆय्तान् चिरम् । ४
पुक्कितु गोकर्ण्णमॊट्टुनाळ् पिन्नॆयुं
पुष्करारण्यं प्रवेशिच्चितु पिन्नॆ । ५
दुःखमकन्नु हिमाचलत्तिङ्कलु-
मुळ्क्काम्पुरच्चु तपस्सुचॆय्तान् तुलोम् । ६
नन्दिच्चॆळुन्नरुळी चतुरास्यनुम्
वन्दिच्चु कूप्पिस्तुतिच्चाननन्तनुम् । ७
व्यग्रिक्कवेण्टा वरंतरुन्नुण्टु ञा-
नुग्रमायुळ्ळ तपस्सिनि निर्त्तुक । ८
लोकत्रयत्तिनु चूटुपिटिच्चितु
भोगिप्रवर ! तपोबलं कॊण्टु ते । ९

अनन्त की तपस्या

शाप के अनन्तर शान्त अनन्त अपनी शान्तता को बिलकुल खोकर, ब्रह्मा का ध्यान करके चला गया और बन्ध और मोक्ष का भेद देखने के लिए उसने तपस्या प्रारंभ की। [वह] पुण्यदेश गन्धमादन पर्वत पर पहुँचा और वहाँ उसने सहस्रों वर्ष तक तपस्या की। तदनन्तर बदर्याश्रम पहुँचकर उसी प्रकार चिरकाल तक तपस्या की। उसके बाद कुछ समय के लिए गोकर्ण में प्रवेश किया, और तदनन्तर पुष्करारण्य में पहुँचा। उसके बाद दुःख छोड़कर हिमालय में भी मन स्थिर करके तपस्या की। १-६ प्रसन्न होकर चतुरास्य (चारमुखवाले ब्रह्मा) प्रत्यक्ष हुए। तब अनन्त ने अभिवादन करके हाथ जोड़कर स्तुति की। (ब्रह्मा ने कहा—) "दुःख मत करो, मैं वर दूंगा। इस उग्र तपस्या को अब बन्द करो। हे नागोत्तम ! तुम्हारे तपोबल के कारण तीनों लोक गरम हो गये हैं"। तब

निर्म्मलनाकुमनन्तननुनेरं
ब्रह्माविनेंत्तोळुताशु चोंल्लीटिनान् । १०
वैरं विनतयोटुं गरुत्मानोंटुं
पारमुण्टम्मय्क्कु भ्रातृजनङ्ङळ्क्कुम् । ११
अम्मय्क्कुमेंन्ननुजन्मार्क्कुमुळ्ळोरु-
दुर्म्मति कण्टु सहियाञ्ञवरोटु- १२
मोंन्निच्चिरिप्पानरुतेंन्नु कल्पिच्चु
निन्नु तपस्सोंटुं देहत्यागं चेंय्वन् । १३
ऍल्लामरिञ्ञिरिक्कुन्नितु ञानेंटो !
चेंल्ला निनक्कधर्म्मत्तिङ्कल् मानसम् । १४
भूतलमोंक्कवे नी धरिच्चीटुक
भूधरनुं प्रियनाय् वरिकाशु नी । १५
पक्षीन्द्रनुं नीयुमोंन्निच्चिरिक्कणं
लक्ष्मीपतिकलांशोद्भवन्मार् निङ्ङळ् १६
शेषियातें ममाण्डं दहिक्कुम्पोळुं
शेषिक्क नीयेंन्ननुग्रहिच्चीटिनान् । १७
शेषनुं पाताळलोकमकंपुक्क-
शेषं तेंळिञ्ञितु लोकङ्ङळुमेंल्लाम् । १८

निर्मल अनन्त ने ब्रह्मा को प्रणाम करके कहा—"मेरी माता और भाइयों का विनता और गरुड़ से बड़ा वैर है। माता की और छोटे भाइयों की दुर्भावना देख उसे न सहकर, उनके साथ रहना असंभव समझकर, मैं खड़ा तपस्या करता हुआ देहत्याग करूँगा"। ७-१३ (ब्रह्मा ने कहा—) "मैं सब जानता हूँ। तुम्हारा मन अधर्म में न लगेगा। तुम सारे भूतल को धारण करो और भूधर[1] होकर तुम सर्वप्रिय हो जाओ। पक्षीन्द्र (गरुड़) और तुम मिलजुल कर रहो क्योंकि तुम दोनों लक्ष्मीपति के कलांश से उत्पन्न हो। जब मेरा अण्ड (ब्रह्माण्ड) निःशेष[2] विलीन हो जायगा तब भी तुम शेष रहोगे"। इस प्रकार [ब्रह्मा ने] अनुग्रह किया। (तब) शेष पाताललोक चला गया और अशेष (समस्त) लोक प्रसन्न हो गये। १४-१८

१ पृथ्वी को धारण करनेवाले शेषनाग। २ पूर्ण रूप से।

शापभयमौळ्ळिक्कुवान् सर्प्पङ्ङळुटे अभिप्रायम् ।

अग्रजन् पोयतरिञ्ञोरु वासुकि
व्यग्रिच्चवरजन्मारोटु चोल्लिनान् । १
मातृशापं तट्टुक्कावल्लोरुत्तनु
भ्रातावक्कळेयतल्लो नमुक्कायतुम् । २
अन्तालुमापत्तु वन्नाल् निरूपण-
मेन्तिये मटोन्नुमावतुमिल्लल्लो । ३
आक्कुमसाद्ध्यमायिल्लोरु कार्यवु-
मोक्कं विवेकमुण्टेन्नु वरुन्नाकिल् ४
नल्लतिनियेन्तितिनेन्नु सन्तत,
मेल्लावरुमोरुमिच्चु चिन्तिक्कणम् । ५
शापबलं कोण्टु वंशं मुटिच्चिटुं
भूपन् जनमेजयन्तन् महाक्रतु । ६
नामतु चेन्नु मुटक्केणमेङ्किले
कामं वरू नमुक्केन्नतु निर्ण्णयम् । ७
अन्तणराय् चेन्नपेक्षिच्चु यागत्ति-
नन्तरं नां वरुत्तीटुकेन्नु चिलर् । ८
मन्त्रिकळाय् चेन्नु सेविच्चु पुक्कु नां
चिन्तिक्करुतेन्नु चोल्लुकेन्नु चिलर् । ९

शापभय से मुक्त होने के लिए सर्पों के उपाय

बड़े भाई के चले जाने का वृत्तान्त जानकर दुखित वासुकि ने छोटे भाइयों से कहा—"भाइयो ! माता के शाप से कोई नहीं बच सकता और वही हमको लगा है। फिर भी जब विपत्ति आ पड़ती है तब उपाय सोचने के अलावा और कोई मार्ग नहीं है। यह स्मरण रहे कि अगर विवेक हो तो किसी का कोई भी काम असाध्य नहीं है। अब सबसे अच्छा उपाय क्या है, इस विषय पर हम सब मिलकर निरन्तर विचार करें। शाप-बल के कारण भूपति [राजा] जनमेजय का महायज्ञ [हमारे] सारे वंश का नाश करेगा। हम जाकर उसे रोकें। तभी तो हमारी अभिलाषा की पूर्ति होगी"। १-७ कइयों ने कहा—"हम ब्राह्मण बनकर चलें और कुछ माँगकर यज्ञ में विघ्न पैदा करें"। औरों ने कहा—"हम मंत्री बनकर चलें, सेवा करें और भीतर से सलाह दें कि यज्ञ के लिए

ब्राह्मणरिक्रिय चेय्युन्नताकयाल्
ब्राह्मणराय् चेन्नु शालयिल् पुक्कु नां १०
धार्म्मिकन्माराय् क्रियय्क्कु कूटेक्कूटि-
ब्राह्मणरेक्कटिच्चाशु कोन्नीटुक ११
मन्नवन्तन्नेयुं पिन्नेक्कटिच्चुकों-
न्नीन्ने सुखमे वसिक्क नामेल्लारुम् । १२
भूदेवन्मारे वधिक्करुतेन्नुमे
खेदमेन्तालोक्कनाळुमोटुङ्ङुमो १३
शापभयपरिहारं वरुत्तुवान्
पापकरङ्ङळायुळ्ळव नन्नल्ल । १४
अग्निशमनत्तिनग्नि नन्नल्लल्लो
मग्नमाक्केणं जलत्तिलते नल्लू । १५
अेङ्किल् जनमेजयनां नरपति
शङ्काविहीनं जलक्रीडचेय्युम्पोळ् १६
कोण्टुपोकेणं नां पाताळलोकत्तु
कण्टुकोळ्ळां पिन्ने यागवुमत्तेरम् । १७
वेर्पिरिञ्ञाल् मरं काय्कयिल्लेन्नति-
कोपिकळां चिल भोगिकळ् चोल्लिनार् । १८
कल्पान्तजीमूतकल्पवपुस्सोटु-
मब्धिकळेळ्ळुमलरुन्नतुपोले
दिग्भ्रममांवण्णमभ्रं निरञ्ञु ना- १९

सोचो ही मत"। (पर कइओं ने कहा—) "यह क्रिया (यज्ञ) ब्राह्मण ही करा रहे हैं, इसलिए हम ब्राह्मण बनकर यज्ञशाला में घुसें और धार्मिक होने के कारण क्रिया में शामिल होकर ब्राह्मणों को काटकर मार डालें, और फिर राजा ही को काटकर खतम कर दें, और सब मिलकर सुख से रहें"। (कुछ लोगों ने कहा—) "भूदेवों (ब्राह्मणों) का कभी वध न करना चाहिए, नहीं तो दुःख कभी भी दूर नहीं होगा। शापभय से बचने के लिए पापमय उपाय उचित नहीं हैं। क्या अग्नि से अग्नि का शमन हो सकता है ? उसे पानी में डुबो देना ही ठीक होगा"। ८-१५ कुछ क्रुद्ध सर्पों ने निवेदन किया—"राजा जनमेजय के निःशंक जलक्रीडा करते समय उनको पाताललोक में उठा ले जाना चाहिए और उनका याग फिर देखा जायगा। जब जड़ ही नष्ट हो जायगी तब पेड़ फलेगा ही कैसे ?"

मभ्रनादभ्रममुद्ध्विप्पिच्चुकों-
ण्टद्भुताकारं वरिषिच्चु पावकन्- २०
दीप्ति कॆट्टुत्तुटन् तल्प्रदेशं विष-
व्याप्तमाक्केणमॆन्नाल् मुटङ्ङुं मखम् । २१
सर्प्पप्रवरन्मार् नानाविध मत-
मिप्रकारङ्ङळ् पऱञ्ञोरनन्तरं २२
वासुकियाकिय नागाधिपन् चॊन्ना-
नासुरमाय मतमिवयॊक्कवे । २३
ऎल्लावरुमॊत्तिनियुं निरूपिक्क
नल्लतु तोन्नीटुवोळमॆन्ने वेण्टू । २४
चेऱ्ऱीलिनिक्किवयॊन्नुमापत्तिङ्कल्
तोन्नुकयिल्लल्लो नल्लतॊरुवनुम् । २५
कालानुरूपमायुळ्ळ विवेकवुं
कालारियोटु पॊळि पऱञ्ञान् विधि २६
वेलयत्ते विवेकं विनाशत्तिङ्कल्
मालॊऴिप्पान् निरूपिप्पिनिन्नु निङ्ङळ् । २७
इङ्ङनॆ वासुकि चॊन्नॊरु वाक्कुकळ्
मंगलमाम्मारु केट्टोरनन्तरम् २८
एलापत्रन् तॊऴुतॊन्नु चॊल्लीटिना-
नेला पलर्क्कुमितॊङ्किलुं केळ्क्कणम् । २९

[औरों ने कहा—] "हमको चाहिए कि हम कल्पान्त के मेघ के समान रूप धारण करके सारे आकाश को ऐसा भर दें कि सभी दिशाएँ काँप उठें और सातों समुद्रों के गर्जन के समान मेघनाद पैदा करें और भयंकर वर्षा करके यागाग्नि की दीप्ति को नष्ट कर दें और यज्ञभूमि को अपने विष से व्याप्त कर दें। इससे यज्ञ बन्द हो जायगा"। १६-२१ सर्पप्रवरों के इस प्रकार के भिन्न-भिन्न मत प्रकट करने के बाद नागाधिप वासुकि ने कहा—"ये सब आसुर मत हैं। सब मिलकर फिर विचार करो, जब तक एक अच्छा उपाय किसी को न सूझे। जो कुछ कहा गया है [वह] मुझे ठीक नहीं प्रतीत होता है। यह प्रसिद्ध है कि विपत्ति में अच्छा उपाय नहीं सूझता और [समय के अनुसार] विवेक भी नहीं होता। विधि ने कालारि से झूठ कहा। विनाश के समय विवेक दिखलाना कठिन है, इसलिए दुःख दूर करने के लिए आप सब विचार कीजिए"। २२-२७ वासुकि की यह बात सादर सुनकर एलापत्र ने हाथ जोड़कर निवेदन किया—"कुछ लोग

व्याधियरिञ्ञु वेणं चिकित्सिप्पति-
नेतोरु वैद्यनुमेन्नु धरिक्कणम् । ३०
अम्म कोपंपूण्टु नम्मे शपिच्चनाळ्
निर्म्मलन्माराय देवकळेल्लारुं ३१
अंभोजसंभवन् तन्नोटु चोदिच्चार् ।
तम्पुराने ! तिरुवुळ्ळत्तिलेशीले ३२
कद्रुशापं कोण्टु नागकुलमेल्ला-
मग्नियिल् वीणोटुङ्ङीटुं दयानिधे ! ३३
सृष्टिच्च जन्तुक्कळिल् चिलतिङ्ङने
नष्टमाय्पोवतोळिच्चरुळेणमे ! । ३४
ऎन्नतु केट्टरुळ्चेय्तु कमलज-
निन्नरियाञ्ञटङ्ङीटुकयल्ल ञान् । ३५
दुष्टर् कटिच्चु कोन्नीटुं पलरेयु-
मोट्टोटुङ्ङेणमेन्निट्टुतन्नेयतुम् । ३६
शिष्टरायुळ्ळोर् मरिक्कयुमिल्लतिल् ।
दिष्टमेन्तेन्नु चोल्लां विबुधन्मारे । ३७
आर्यकुलवरजातन् जरत्कारु
भार्ययवनु जरत्कारुवाय्वरुम् । ३८
अट्टमिल्लात गुणङ्ङळोटुमवळ्
पेट्टुटनुण्टाकुमस्तिकनां मुनि ३९

मेरी बात को पसन्द नहीं करेंगे। फिर भी सुन लीजिए। समझ लीजिए कि वैद्य कोई भी हो, पहले व्याधि क्या है यह जानकर ही इलाज कर सकता है। जब क्रुद्ध होकर माता ने हमलोगों को शाप दिया तब सभी निर्मल देवगणों ने अंभोजसंभव (ब्रह्मा) से पूँछा—'स्वामी ! अपने श्रीयुक्त मन में सोचिए ! कद्रू के शाप के कारण सारे नागलोग आग में गिरकर समाप्त हो जायंगे। हे दयानिधे ! ऐसा उपाय बतलाइये कि आपके सृष्ट जन्तुओं में से कुछ यों समाप्त न हो जायं।' २८-३४ यह सुनकर (कमल से उत्पन्न) ब्रह्मा ने कहा—'मैं इसलिए उदासीन नहीं हूँ कि मैं यह नहीं जानता हूँ। दुष्ट सर्प बहुतों को काटकर मार डालेंगे, कुछ नष्ट ही हो जायँ, इस बुद्धि से मैं उदासीन हूँ। उनमें जो अच्छे हैं उनका नाश नहीं होगा। हे देवगण ! क्या विधि है, यह मैं बतलाऊँगा। आर्यकुल में उत्पन्न जरत्कारु की जरत्कारु नामक भार्या होगी। वह अनन्त गुणवाली होगी और मुनि

अक्षिकर्ण्णान्वयरक्षवरुत्तुवान्
दक्षनवनॆन्त्तरिकमरन्मारे ! ४०
वानवरोटजनिङ्ङळॆ चॊन्नतु
ञानरिञ्ञेनिनि वेण्टतु वैकातॆ ४१
सोदरियाय जरत्कारुनारियॆ-
स्सादरं नल्कू जरत्कारुविन्नॆंटो । ४२
ऎन्नितेलापत्रवाक्यङ्ङळ् केळ्क्कयाल्
नन्दितन्माराय् चमञ्ञितु नागङ्ङळ् ४३
वासुकि पण्टु पालाळि कटञ्ञनाळ्
पाशमायानॆन्त्त बन्धुत्वमोर्त्तिट्टु ४४
नाशमवनु वराय्वानमरन्मा-
राशु विधिमतं चॊन्नारवनोटु । ४५
शौनकन् सूतनोटप्पोळरुळ् चॆय्त-
तानन्दमुण्टु निन् वाक्कु केळ्क्कुन्तोरुम् । ४६
ऎन्तु जरत्कारुनामत्तिनर्त्थमॆ-
न्तन्तर्म्मुदा परञ्ञीटुक सूत नी । ४७
भीषणमाय शरीरं दिनं प्रति
शोषणं चॆय्युं तपसा पुनरवन् ४८
कारणं पेरतिनॆन्नु वरुमॆन्नु
सारनां सूतन् परञ्ञोरनन्तरम् । ४९

अस्तीक को जन्म देगी । जान लीजिए, हे देवगण ! कि वह अक्षिकर्णों[1] (सर्पों) के कुल की रक्षा में कुशल होगा' । अज (ब्रह्मा) द्वारा देवगण से कही यह बात मुझे मालूम हुई । अब बिना विलम्ब के बहिन जरत्कारु को मुनि जरत्कारु को सादर दान कीजिए ।" ३५-४२ एलापत्र की यह बात सुनकर सभी सर्प बड़े प्रसन्न हुए । प्राचीन काल में क्षीरसागर के मन्थन के अवसर पर वासुकि पाश (रस्सी) बन गया था । उस सेवा को स्मरण करके देवगण ने ब्रह्मा के वचन को उसे सुनाया ताकि उसका नाश न हो जाय । उस समय शौनक ने सूतजी से कहा—"आपका वचन सुनते-सुनते आनन्द आता है । 'जरत्कारु' इस नाम का क्या अर्थ है ? सूतजी ! प्रमोद के साथ यह बतलाइए" । "भीषण शरीर को वह प्रतिदिन अपने तप के द्वारा शोषण करता रहता है । उस नाम का यही कारण है"—सारवान् सूत के इस प्रकार कहने के अनन्तर—४३-४९

१ आँखों से सुननेवाले ।

श्रीपरीक्षिच्चरितम्

चौल्लु शेषं कथयेन्निनु शौनकन्
चौल्लिनानानन्दमुळ्क्कौण्टु सूतनुम् । १
भार्यापरिग्रहणाग्रह कूटाते
पारिल् जरत्कारु संचरिक्कुं कालं २
इन्द्रात्मजात्मजनन्दनन् भूपति
चन्द्रान्वयोद्भवन् नायाट्टिनु पोयान् । ३
दुष्टमृगङ्ङळे नष्टमाक्किक्कत्तनि-
क्किष्टमोटुं विळयाटुन्नतुनेरं ४
अन्पुकौण्टोटुं मृगत्ते तिरञ्ञतिन्
पिन्पे नटन्निनु सत्वरं भूपति । ५
काणाञ्ञु नीळत्तिरञ्ञुळन्नेत्रयुं
क्षीणनाय् वन्निनु पैदाहपीडया । ६
काणायितप्पोळविटेयोरु मुनि
तानेयिरिक्कुन्नतेतुमिळकाते । ७
गोवत्सवक्त्रफेनाशनशीलना-
न्तापसनाय शमीकन् मौनव्रतन् । ८
चोदिच्चानम्मुनियोटु ञानेय्तम्पु
वेधिच्चु पोय मृगत्तेयुण्टो कण्टु ? ९

श्री परीक्षित का चरित्र

शौनक ने कहा–"शेष कथा सुनाइए"। सूतजी ने सानन्द सुनाया भी। जब पत्नी-परिग्रह की इच्छा के विना जरत्कारु पृथिवी पर संचार कर रहे थे, तब इन्द्रात्मजात्मजनन्दन (अर्जुन का पौत्र) चन्द्रवंश में उत्पन्न राजा परीक्षित शिकार खेलने गये। दुष्ट जन्तुओं को नष्ट करते हुए, और अपनी इच्छा के अनुसार खेलते हुए, वे जा रहे थे। एक दौड़ते हुए हरिन के पीछे भूपति अपना धनुष बाण लेकर दौड़े। जब वह न मिला तो उसको ढूंढने बहुत दूर चले गये और थककर भूंख और प्यास से पीड़ित हुए। १-६ उस समय एक मुनि दिखाई दिये जो अकेले निश्चल बैठे थे। वे तापस शमीक थे जो मौनव्रत का पालन करते थे और केवल बछड़े के मुँह का फेना खाते थे। राजा ने उन मुनि से पूंछा–"क्या तुमने मेरे बाण से घायल एक हरिन को देखा है ?" तापस ने कोई उत्तर नहीं

तापसनोन्नुमुरियाटीलन्नेरम्
भूपतिवीरनभिमन्युनन्दनन् १०
कोपेन सर्प्पशवत्ते विल्कोण्टेटु-
त्तापत्तनिनाल् वरुमेन्ततोराते ११
तापसश्रेष्ठन् कळुत्तिलिट्टीटिनान्
तापवुं पिन्ने नरपतिक्कुण्टायि । १२
पापमितिनाल् वरुमेन्तरिञ्ञवन्
शोभतेटुं पुरि पुक्किरुन्नीटिनान् । १३
अन्नु विधाताविनेक्कण्टनुग्रहं
नन्नाय् लभिच्चु सुरालयं पुक्कोरु १४
शृंगियाकुन्न शमीकसुतनोटु
मंगलात्मा कृशनाय मुनिसुतन् १५
चोन्नान् परिहासमोटथ शृंगियुं
तन्नुटे तातवृत्तान्तमरिञ्ञप्पोळ् १६
तापमोटाचमनादिकळुं चेय्तु
शापमिट्टीटिनान् भूपतितन्नेयुम् । १७
इच्चेय्त कश्मलनाय नराधिपन्
निश्चयमेळां दिवसं मरिक्कणं १८
तक्षकन् वन्नु कटिच्चेन्तरुळचेय्तु
तल्क्षणं ताततेक्कण्टिव चोल्लिनान् १९

दिया । अभिमन्यु के पुत्र भूपति वीर (परीक्षित) ने क्रुद्ध होकर एक मृत सर्प को अपने बाण से उठाकर, इसका बुरा परिणाम क्या होगा यह न सोचकर, तापस के गले में डाल दिया । तदनन्तर राजा पछताने लगे । ७-१२ यह समझकर कि इसका परिणाम पाप ही होगा राजा अपने सुन्दर नगर को चले गये । उन दिनों शमीक के पुत्र शृंगी ऋषि ब्रह्मा की स्तुति करके उनका अनुग्रह लेने के लिए देवलोक गये । जब लौटे तब उनके मित्र कृश नामक मुनिपुत्र ने उनसे दिल्लगी में पिता का वृत्तान्त सुना दिया । पिता का वृत्तान्त सुनने के बाद शृंगी ऋषि ने दुःखित होकर आचमन आदि करके राजा (परीक्षित) को इस प्रकार शाप दे दिया । "जिस पापी नराधिप ने यह काम किया है वह आज के सातवें दिन तक्षक के काटने से अवश्य मर जाय," और तत्काल ही पिताजी से यह बात कह दी । १३-१९ तब शमीक ने यह सब बात जानकर अपने मन में सोचकर

अप्पोळरिञ्ञु शमीकनिवयॆल्ला-
मुळ्ळ्पूविलोर्त्तु मकनोटरुळ्चॆय्तु २०
उण्णी चॆरुप्पं निनक्करिविल्लॊट्टुं
पुण्यवानाय गुणवान् महीपति । २१
सप्त व्यसनङ्ङळुण्टां नृपन्मार्क्क-
तॆप्पेरुमोर्त्ताल् प्रजकळ् पॊरुक्कणम् २२
आपत्तिनायुळ्ळ सप्तव्यसनङ्ङळ्
शोभिक्कयिल्ल नृपोत्तमन्मार्क्कुम् । २३
स्त्रीसेव चूतु नायाट्टु सुरापानं
वाक्यपारुष्यवुं दण्डपारुष्यवुं
एळामतामर्त्थदूषणमायतुं २४
ॲन्ततिल् नायाट्टुकॊण्टवन्बुद्धिक्कु
वन्न विकल्पत्तिनिङ्ङने चॆय्यामो ? २५
नल्ल राजाक्कळ्क्कॊरु पिळयुण्टाकिल्
नल्लवरोर्त्तु पॊरुक्कुन्नतल्लयो ? २६
मन्नवनिङ्ङने कर्म्ममाकुन्नतु-
मॆन्नुटॆ दोषमल्लॆन्नितु शृंगियुम् २७
ॲन्नालुमित्थं शपिक्करुतारॆयुं
वन्नुपोमॆन्नाल् तपस्सिनु नाशवुम् । २८

पुत्र से कहा—"बेटा ! तुम जवान हो । तुम बिलकुल नहीं जानते हो । राजा तो पुण्यवान् और गुणवान् है । राजाओं के सात व्यसन (दोष) होते हैं । उन सबको स्मरण करके प्रजाओं को क्षमा करना चाहिए । जब ये व्यसन विपत्तिजनक हैं तब वे नृपोत्तमों को भी शोभा नहीं देते हैं । स्त्रीसेवा, जुआ, मृगया (शिकार), मद्यपान, वाक्पारुष्य (गाली देना), दण्डपारुष्य (अतितीव्र दण्ड देना) और सातवाँ है अर्थदूषण (लालच से धन लेना) । उनमें से मृगया के कारण राजा को जो बुद्धिभ्रम हुआ, क्या इसलिए यह किया जा सकता है ? (अर्थात् शाप दिया जा सकता है ?) जब अच्छे राजाओं से भूल हो जाती है तब क्या सज्जनों को क्षमा नहीं करना चाहिए ?" २०-२६ शृंगी ने कहा—"यह मेरा दोष नहीं है कि राजा का यह कर्मफल होनेवाला है" । शमीक ने कहा—"फिर भी किसी को इस प्रकार शाप नहीं देना चाहिए । नहीं तो अपना तप ही नष्ट हो जायगा । गुरु का काम है कि वह अपने शिष्य और पुत्र की, चाहे वे बड़े

शिष्यनेयुं निजपुत्रनेयुं गुरु
रक्षिक्कवेणं वळर्न्नालुमोर्क्क नी । २९
अन्तरुळ्चेय्तु शमीकननन्तरं
तन्नुटे शिष्यनां गौरमुखनोटु- ३०
तन्ने रहस्यमाय् वेर्टयरुळ्चेय्तु ।
अन्यरायुळ्ळवरारुमरियाते ३१
मन्नवनोटिव चेन्नु नी चोल्लण-
मेन्नयच्चानवन् वेगेन हस्तिनम् । ३२
योगीशनाय शमीकभृत्यन् तथा
वेगेन हस्तिनमाय पुरि तन्निल् ३३
चेन्नुपुक्कन्नृपन्तन्नोटु चोल्लिनान्
अन्नोटु मल्गुरु चोन्नतु केट्टालुम् । ३४
ज्ञानमिल्लातोरु बालन् मम सुतन्
ञानरियाते शपिच्चरुळीटिनान् । ३५
मारणमायोरु शापमतेन्नयुं
दारुणमायोन्नु दैवमतमल्लो । ३६
तक्षकनाकिय चक्षुःश्रवणनु-
मक्षमनेन्नयुं सल्क्षितिपालक ! । ३७
खाण्डवकाननदाहकाले पुरा
पाण्डवन्मारेक्कुरिच्चुळ्ळ वैरवुं ३८
गाण्डीवचापधरात्मज नन्दन !
ताण्डवं चेय्युन्नितुळ्ळिलवनिन्नुम् । ३९

हो गये हों, रक्षा करे, यह जान लो"। इतना कहने के बाद अपने शिष्य गौरमुख से एकान्त में अलग से कहा— "तुम जाकर भूपति (परीक्षित) से इन सब बातों को कह दो, और किसी को पता न लगे"। इतना कहकर उसको रवाना कर दिया। २७-३२ योगीश शमीक-भृत्य (शमीक का शिष्य गौरमुख) तुरन्त हस्तिनापुर पहुँचा। राजगृह में प्रवेश करके उसने भूपति से निवेदन किया— "मेरे गुरु ने जो संदेश भेजा है वह सुन लीजिए"। "मेरे ज्ञानरहित पुत्र ने मुझसे कहे बिना, आपको शाप दे दिया है। वह बहुत ही घातक शाप है, यह प्रसिद्ध है कि दैव बड़ा दारुण है। हे अच्छे भूपति! तक्षक नामक चक्षुश्रवा (सर्प) बड़ा कोपशील है। हे गाण्डीवचापधरात्मजनन्दन! (अर्जुन के पौत्र!) खाण्डव वन के

आकुन्न रक्षकळ् चेय्तुकोण्टीटुक
भागधेयानुरूपं फलं पिन्नेटम् । ४०
ऎन्निव चोन्नोरु गौरमुखनोटु
मन्नवनां परीक्षित्तु चोल्लीटिनान् । ४१
क्षुत्पिपासादिकळ्कोण्टु चित्तभ्रम-
मल्पज्ञनामिनिक्कुण्टाककारणं ४२
दुर्गति वरातिरिप्पाननुग्रह-
मक्करुणानिधिक्कुण्टायिरिक्कणम् । ४३
निर्म्मलनां भरद्वाजसुतात्मज-
ब्रह्मास्त्रशक्तया मरिच्चितु मुन्नमे । ४४
मातावुतन्नुटे गर्भपात्रं तन्निल्
माधवन् तृच्चक्रमोटुमकंपुक्कु ४५
पैतामहास्त्रं तटुत्तु रक्षिच्चुटन्
पैतलामेन्नेज्जनिप्पिक्कयुं चेय्तान् । ४६
द्रोणपुत्रन् ब्रह्मास्त्रत्तिङ्कल्निन्नु मल्-
प्राणने रक्षिच्च नारायणन् जगल्- ४७
क्कारणन् कारुण्यपीयूषवारिधि
चारुचरणांबुजं शरणं मम । ४८
नारायण हरे ! भक्तपरायण !
मृत्युनिवारण ! भुक्तिमुक्तिप्रद ! शक्तियुक्त प्रभो ! ४९

दाह के समय पाण्डवों के प्रति उसका जो वैर उत्पन्न हुआ वह आज भी उसके भीतर ताण्डव कर रहा है। जितनी रक्षा की जा सकती है उतनी कर लो। उसके बाद अपने भाग्य के अनुसार फल होगा" । ३३-४० इस प्रकार कहते हुए गौरमुख से राजा परीक्षित ने निवेदन किया— "भूंख और प्यास के कारण उस समय मुझ अल्पज्ञ को चित्तभ्रम हो गया था। उन करुणानिधि का मेरे ऊपर अनुग्रह हो ताकि मेरी दुर्गति न हो जाय। निर्मल भरद्वाजसुतात्मज (द्रोणपुत्र अश्वत्थामा) के ब्रह्मास्त्र के बल से मैं पहले ही मर चुका था पर माधव ने अपने श्रीचक्र के साथ मेरी माता के गर्भाशय में प्रवेश करके ब्रह्मास्त्र को रोककर मेरी रक्षा की और मुझ बालक को जन्म दिया। जिन्होंने द्रोणपुत्र के ब्रह्मास्त्र से मेरे प्राणों की रक्षा की उन नारायण, जगत्कारण, कारुण्यामृत के सागर का चारु चरणाम्बुज ही मेरा शरण है। ४१-४८ हे नारायण ! हरे ! भक्तपरायण !

सच्चिल्परब्रह्ममूर्त्ते ! परमात्म-
नच्युतानन्द ! गोविन्द ! मुकुन्द म- ५०
च्चित्तालयानन्द कृष्ण ! विष्णो ! हरें !
विप्रशापं तट्टुक्कावल्ल निर्ण्णयम् । ५१
चिल्पुमानां तन् तिरुवटिक्कुमतो
मुल्पाट्टु वृष्णिकुलविनाशंकों-
ण्टेन्नुळ्प्पूविलुण्टतुं वैभवं तावकम् । ५२
पण्टे मरिच्चोरिनिक्कु मरणत्ति-
नुण्टो भयमिन्नु नन्नायितेव्वयुम् । ५३
मुम्पे मरणमऱियिच्चतुमिनि-
क्कोम्पेरुमान्तन्ननुग्रहं निश्चयम् । ५४
आनन्दबाष्पमोट्टुं गद्गदाक्षर-
वाणिकळोट्टु रोमाञ्चवुं पूण्टवन् ५५
सच्चिल्परब्रह्मणि लयिच्चानन्द-
निश्चलनाय् मुहूर्त्तं निन्नरुळिनान् । ५६
बुद्धियुं ब्रह्मपूर्णाब्धियिल्निन्नूट-
नुद्धरिप्पिच्चु लोकात्मना चोल्लिनान् । ५७
सर्प्पं कटिच्चु मरिच्चाल् गतियिल्लें-
न्निन्भूतलत्तिङ्कलुण्टु जनश्रुति । ५८

हे मृत्युनिवारण ! भुक्ति-मुक्तिप्रद ! शक्तियुक्त ! प्रभो ! हे सच्चित्पर-ब्रह्ममूर्त्ते ! परमात्मन् ! हे अच्युत ! आनन्द ! गोविन्द ! मुकुन्द ! हे मेरे चित्तालय के आनन्द ! कृष्ण ! विष्णो ! हरे ! निःसन्देह ब्राह्मण का शाप टाला नहीं जा सकता। आप चित्-पुरुष स्वामी के लिए भी ऐसा ही है। पहले वृष्णिकुल के नाश के कारण आपके वैभव को मेरा मन जानता है। मैं पहले ही मर चुका हूँ, मुझे मृत्यु से क्या डर है? यह स्थिति अच्छी ही है। मेरा मरण मुझे पहले ही से विदित हो गया, निःसन्देह यह भी मेरे स्वामी ही का अनुग्रह है"। [इस प्रकार राजा परीक्षित] आनन्द के आँसुओं और गद्गदाक्षर वाणी के साथ रोमांच अनुभव करते हुए सच्चित्परब्रह्म में एक क्षण के लिए लीन होकर निश्चल हो गये। ४९-५६ ब्रह्ममय सागर से अपनी बुद्धि को उद्धार करके लोक में आकर बोले। "लोक में यह कहावत है कि जो सांप का काटा मर जाता है उसकी गति नहीं है। बहुज्ञों के मुँह से यह भी सुना है कि

विप्रशापत्तिनु पिल्पाटु नल्लतें-
न्नल्पेतरज्ञन्मार् चॊल्लियुं केळ्प्पुण्टु । ५९
दुःखवुं सौख्यवुं मृत्युवुं जन्मवुं
स्वर्ग्ग नरक जरानरशीतोष्ण ६०
इत्याद्यनेकविधं द्वन्द्वजालङ्ङळ्
मित्थ्ययत्रे महामायागुणवशाल् । ६१
अद्वयनव्ययन् पूर्ण्णनेकन् परन्
नित्यन् निरुपमन् निर्ग्गुणन् निष्कळन् ६२
निश्चलन् निर्म्मलन् निस्पृहन् निर्म्मम-
नच्युतनाद्यननन्तनानन्दात्मा ६३
निर्व्विकारन् निराकारन् निराधारन्
निर्व्विकल्पन् निराख्यानन् निरामयन् ६४
सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतन् माया-
कृत्यकर्त्ता भर्त्ता हर्त्ता जगल्पिता ६५
वेदस्वरूपन् वेदार्त्थसारात्मकन्
वेदवेदांगवेदान्तवेद्यन् परन् ६६
गूढन् परमन् परापरनीश्वरन्
कूटस्थनव्यक्तनादिनाथन् शिवन् ६७
शान्तनात्मारामनात्मप्रियन् जगल्-
कान्तनात्मप्रदन् विश्वपति हरि ६८
कृष्णन् यदुपति सत्पति मत्पति
वृष्णिकुलपति पत्मालयापति ६९

ब्राह्मण के शाप को सहने के बाद अच्छी स्थिति हो जाती है। दुःख और सुख, मृत्यु और जन्म, स्वर्ग और नरक, जरा और पलित (सफ़ेद बाल), गरम और ठंडा, इस प्रकार के अनेक द्वन्द्व जो महामाया के गुणों से होते हैं वे सब मिथ्या हैं। ५७-६१ अद्वय, अव्यय, पूर्ण, एक, पर, नित्य, निरुपम, निर्गुण, निष्कल, निश्चल, निर्मल, निस्पृह, निर्मम, अच्युत, आद्य, अनन्त, आनन्दात्मा, निर्विकार, निराकार, निराधार, निर्विकल्प, निराख्यान, निरामय, सत्यज्ञानानन्त, आनन्द, अमृत, माया के कृत्यों का कर्ता, भर्ता, हर्ता, जगत्पिता, वेदस्वरूप, वेदार्थसारात्मक, वेद, वेदाङ्ग और वेदान्त का वेद्य, पर, गूढ, परम, परापर, ईश्वर, कूटस्थ, अव्यक्त, आदिनाथ, शिव, शान्त, आत्माराम, आत्मप्रिय, जगत्कान्त, आत्मप्रद, विश्वपति,

विष्णु धरापति वृन्दारकपति
जिष्णुपति शौरि धर्म्मपति विभु ७०
यज्ञपति पाण्डुपुत्रगतिपति
सुज्ञानिनां पति देवन् पशुपति ७१
गोपति गोपीजनपति गोपति
गोपकुलपति पद्मविलोचनन् ७२
देवकीनन्दननॆन्नुळ्ळिल् वाळुन्न
देवदेवन् तनिक्कोत्ततॆल्लां वरुम् । ७३
पापियायोरपराधियामॆन्नोटु
कोपमुण्टाकातनुग्रहिक्केणमे । ७४
इत्थं क्षमानमस्कारङ्ङळ् पिन्नॆयुं
पृथ्वीपति चॆय्तयच्चानवनॆयुम् । ७५
तक्षकन् वाराय्वतिन्नु नृपतियुं
तक्षप्रवररॆयॊक्क वरुत्तिनान् । ७६
कल्पिच्चितेकस्तंभाग्रे दुरारोह-
शिल्पप्रासादवुं तत्प्रदेशङ्ङळिल् ७७
काकोदरासह सिद्धौषधङ्ङळुं
काकोळनाशनमन्त्रयन्त्रङ्ङळुं ७८
मृत्युंजयक्रियादक्षन्मारायुळ्ळ-
पृथ्वीसुरन्मारॆयुं मुनिमारॆयुं ७९

हरि, कृष्ण, यदुपति, सत्पति, मत्पति, वृष्णिकुलपति, लक्ष्मीपति, विष्णु, धरापति देवों के पति, जिष्णुपति, शौरि, धर्मपति, विभु, यज्ञपति, पाण्डु-पुत्रों की गति के स्वामी, सुज्ञानियों के पति, देव, पशुपति, गोपति, गोपीजनपति, इन्द्रियों के पति, गोपकुलपति, पद्मविलोचन, देवकीनन्दन और मेरे भीतर विराजमान देवदेव जो चाहेंगे वही होगा। क्रुद्ध न होकर इस पापी और अपराधी पर भगवान् अनुग्रह करें"। ६२-७४ इस प्रकार क्षमा माँगकर और नमस्कार करके पृथ्वीपति (राजा परीक्षित) ने गौरमुख को बिदा कर दिया। नृपति (राजा परीक्षित) ने तक्षक के प्रवेश को रोकने के लिए देश के श्रेष्ठ तक्षकों (बढ़इयों) को बुलवाया और उनके द्वारा एक स्तंभ के ऊपर एक शिल्प-प्रासाद बनवाया जो दुरारोह (चढ़ने में कठिन) था। शत्रुनाशक राजा विष्णुरात (परीक्षित) ने वहाँ काकोदरों (सर्पों) के लिए असह्य सिद्धौषध और

चुट्टुमिरुत्तियतिन्मेलिरुन्नितु
पट्ऱलर्कालनां विष्णुरातन् नृपन् । ८०

काश्यपतक्षकसंवादम्

तक्षकन् मूलमे मृत्युवरुं प्रजा-
रक्षाकरनाय राजाविनेन्नतुं १
तल्क्षणं केट्टु नृपवरजीवनं
रक्षिप्पनेन्नु पुऱप्पेट्टु काश्यपन् । २
वृद्धतपोधनवेषवुं कैक्कोण्टु
पद्धतिमध्ये भुजंगप्रवरनुं ३
तातनेक्कण्टु चोन्नानेविटेविकन्नु
यातनायीटुन्नतेन्नरुळ् चेय्यणम् । ४
शृंगिशापंकोण्टु तक्षकदष्टनां
मंगलभूपने रक्षिप्पतिन्नु ञान् ५
पोकुन्नितेन्नतु केट्टोरु तक्षक-
नाकुन्नतल्लतटङ्ङीटुक नल्लु । ६
सर्व्वविषहरणत्तिन्नु दक्षन् ञान्
दर्व्वीकरविषमेन्तसारं तुलोम् । ७

सर्पों के नाशक मन्त्र और यन्त्र इकट्ठा किये और मृत्युंजय कर्म करने में कुशल ब्राह्मणों को और मुनियों को चारों तरफ़ बैठाया और स्वयं प्रासाद पर रहने लगे । ७५-८०

काश्यप और तक्षक का संवाद

उस समय यह सुनकर कि तक्षक द्वारा ही प्रजाओं के रक्षक राजा की मृत्यु होगी, मुनि काश्यप इस अभिप्राय से घर से निकले कि मैं राजा के जीवन की रक्षा करूँगा । मार्ग में वृद्ध तापस का वेष धारण किये हुए भुजंगप्रवर (तक्षक) ने पिता (काश्यप) को देखकर पूछा— कृपया बतला दीजिए कि आप आज कहाँ जा रहे हैं ? काश्यप ने उत्तर दिया— शृंगी के शाप के कारण तक्षकं द्वारा डँसे गये मंगलमय राजा परीक्षित की रक्षा करने के लिए मैं जा रहा हूँ । यह सुनकर तक्षक ने कहा— यह बिलकुल असंभव है । अच्छा यही होगा कि आप कुछ न करें । जब काश्यप ने कहा— "सभी प्रकार के विषों के हरण में मैं कुशल हूँ ।

ऀन्तरुळ्चेय्तोरु काश्यपन् तन्नोटु
पिन्नेयुमोन्नु चोल्लीटिनान् तक्षकन् । ८
ऀन्तु फलं धरणीन्द्रने रक्षिच्चाल्
चिन्तितमेन्नोटरुळ्चेय्कयु वेणम् । ९
जीवनरक्षणत्तिन्नु सुकृतमु-
ण्टावोळमर्त्थवु किट्टु नमुक्केन्नान् । १०
सर्व्वजनत्तेयु रक्षिच्चपोरुन्नो-
रुर्व्वीश्वरन्तन्ने रक्षिच्चुकोळ्ळुम्पोळ् ११
सर्व्वरक्षाकरमाय् वरुमेन्नयु
दिव्यनल्लो सव्यसाचिसुतात्मजन् । १२
देहिकळेप्परिपालिच्चु कोळ्ळुकि-
लैहिकपारत्रिकङ्ङळु साधिक्काम् । १३
तक्षकन् तातनोटप्पोळुरचेय्तु
रक्षिप्पतिन्नु पणियुण्टु निर्ण्णयम् । १४
ब्राह्मणशापं तटुक्करुताक्कुमे
धार्म्मिकन्मारेन्निरिक्किलु केवलं १५
ब्रह्मनु विष्णुविनु महादेवनु
सम्मतं भूदेवशापवरादिकळ् । १६
सर्व्वलोकङ्ङळ्क्कुमीश्वरनायतु-
मुर्व्वीसुररेन्नरियुक मुनिवर ! १७

साँप का विष बिलकुल निःसार है", तब तक्षक ने फिर निवेदन किया—१-८ भूपति की रक्षा करने से क्या फल मिलेगा ? आप अपना अभिप्राय मुझे बतला दीजिए। काश्यप ने कहा—जीवन की रक्षा करने से बड़ा पुण्य होता है। ऊपर से मुझे यथेष्ट धन भी मिलेगा। सारी प्रजा की रक्षा करनेवाले उर्वीश्वर (राजा) की रक्षा करने से सबकी रक्षा हो जाती है। क्योंकि सव्यसाचिसुतात्मज (अर्जुन के पुत्र का पुत्र) दिव्यपुरुष तो है ही ! देहियों के परिपालन करने से ऐहिक (इस लोक के) और पारत्रिक (परलोक के) सुख प्राप्त होते हैं। तब तक्षक ने पिता से कहा—रक्षा करने में बड़ी कठिनाई होगी। ब्राह्मण-शाप का असर कोई भी नहीं रोक सकता; चाहे वह धार्मिक ब्राह्मण ही क्यों न हो। उनके शाप और वर ब्रह्मा, विष्णु और महेश के लिए भी ग्राह्य हैं। हे मुनिवर ! जान लीजिए कि उर्वीसुर (ब्राह्मण) ही सभी लोकों के ईश्वर हैं। निग्रह

निग्रहानुग्रहविग्रहवृष्टिक-
ळग्रकुलाग्रेसराश्रयभूतङ्ङळ् । १८
पिन्नें विशेषिच्चु तक्षकन् तन्विष-
मोन्‌नुकोण्टुं तटुक्कावल्ल निर्णयम् । १९
आकांक्षयायतेन्तुळ्ळिलवनेंन्नो-
राकांक्ष मारीचनुण्टायतुनेरम् । २०
क्रुद्धनां तक्षकन् काश्यपन् तन्नोटु
वृद्धतपोधनवेषमुवेक्षिच्चु २१
तक्षकनायतु ञानेन्नरिञ्ञालुम् ।
पक्षे परीक्षिच्चुकोण्टालुमिप्पोळ् २२
ऎन्नुपरञ्ञु कटिच्चितु तक्षकन्
निन्न महावटवृक्षत्तेयन्नेरम् । २३
तक्षकक्ष्वेळाग्निहेति पिटिपेट्टु
वृक्षप्रवरनुं भस्ममाय् धूळिच्चु । २४
निन्न निल तोट्टुतन्नें जपिच्चितु
पन्नगाधीश्वरन् मुन्पिले मामुनि । २५
नन्नाय् मुळच्चु तळिर्त्तितु पेरालुं
मुन्नेतिलेट्वुं नन्नायितन्नेरम् । २६
इप्परीक्षिच्चतु नन्नेट्मेंङ्किलु-
मिप्परीक्षित्तु जीविक्कुन्नतिल्लल्लो । २७

(दण्ड), अनुग्रह (कृपा) विग्रह (युद्ध) और वर्षा, प्रथम वर्ग के श्रेष्ठों के आश्रित हैं। ऊपर से विशेषतः यह भी है कि तक्षक का विष निःसन्देह किसी भी प्रकार रोका नहीं जा सकता। ९-१९ तब मरीचिपुत्र (काश्यप) सोचने लगे— इसके मन में क्या इच्छा है? उस समय तक्षक अपने वृद्ध तापस का वेष त्यागकर क्रोधपूर्वक काश्यप से बोला— जान लीजिए कि मैं ही तक्षक हूँ। और आप ही अभी-अभी इसकी परीक्षा कर सकते हैं। इतना कहकर तक्षक ने एक खड़े विशाल वटवृक्ष को काट लिया। तक्षक की विषाग्नि लगने से वह वृक्षप्रवर भस्म हो गया! तब महामुनि ने जहाँ खड़े थे वहीं की भूमि को स्पर्श करके पन्नगाधीश (तक्षक) के सामने जप किया। आश्चर्य! वटवृक्ष फिर उग निकला और पहले से भी अच्छा और सुन्दर हुआ। तब तक्षक ने कहा— यह परीक्षा अच्छी हुई। परन्तु राजा परीक्षित तो नहीं जियेंगे।

ब्रह्मवचोविषं मद्विषसंयुतं
ब्रह्मप्रळयसमं तव विद्ययुम् । २८
ऍन्ऩे विचित्रमे नन्नु नन्नॅत्रयु-
मॅन्नु परञ्ञु कॉटुत्तितु तक्षकन् २९
रत्नधनादिकळट्मिल्लातोळं
यत्नमिळच्चु मुनियुमतुनेरम् । ३०
कद्रु पुरा शपिच्चोरुमूलं निज-
पत्निवाक्यं चॅट्टु सत्यमाक्कीटुवा- ३१
नाश्रमं पुक्कु मुनीश्वरन् तक्षकन्
काश्यपन् पोयोरनन्तरं चिन्तिच्चान् । ३२
ऍन्तॉरुपायं नृपनॅक्कटिप्पति-
न्नन्तणर्क्कॅपोलटुत्तु चॅल्लावितुम् । ३३
ऍन्नतरिञ्ञु स्वजातिकळाकिय
पन्नगन्मारोटु चॉल्लिनान् तक्षकन् । ३४
निङ्ङळ् तपोधनवेषं धरिच्चुटन्
मङ्ङीटातोरु फल कॉटुत्तीटणम् ३५
सम्मानमाय् ञानतिल्पुक्किरुन्नुकॉ-
ण्टम्महीपालनॅयुं कटिच्चीटुवन् ३६
तक्षकन् चॉन्नतु चॅय्तारवर्कळुम् ।
मुख्यनां भूपतिवीरनतुकालं ३७

ब्राह्मण-वाक्य रूपी विष मेरे विष से मिल गया है। आप की विद्या ब्रह्म और प्रलय के समान है। यह विचित्र बात है और आश्चर्य की बात है। इतना कहकर तक्षक ने काश्यप को निःसीम रत्न और धन दिये और काश्यप भी अपने यत्न में कुछ ढीले पड़ गये। २०-३० कद्रू ने पहले ही शाप दे रखा था। अपनी पत्नी का वाक्य सत्य बनाने के लिये काश्यप अपने आश्रम चले गये। काश्यप के जाने के बाद तक्षक सोंचने लगा—"राजा को काटने का क्या उपाय हो सकता है। सुनते हैं कि केवल ब्राह्मण ही उनके पास जा सकते हैं"। यह जानकर तक्षक ने अपनी जाति के सर्पों से कहा—"आप सब लोग तुरन्त तपोधन का वेष धारण करके सम्मान हेतु राजा को एक उज्वल फल प्रदान कीजिए। मैं उसके अन्दर घुस जाऊँगा और राजा को काटलूँगा"। उन्होंने तक्षक के कहने के अनुसार किया। ३१-३६ उस समय नाथभूपति वीर (राजा

भार्ग्गवशौनककण्वविश्वामित्र
गार्ग्यवसिष्ठभरद्वाजगौतम ३८
याज्ञवल्क्यात्रिपुलस्त्यशंखागस्त्य
प्राज्ञपराशरद्वैपायनादियां
तापसश्रेष्ठन्मारुं द्विजाढयन्मारुं ३९
दिव्यन्माराय् मट्टुमुळ्ळ जनङ्ङळुं
सव्यसाचिप्रियपादभक्तन्मारु- ४०
मॉक्क वरिकॅन्नञ्चच्चु वरुत्तिनान् ।
मुख्यनां भूपतिवीर नुमक्कोलं ४१
षोडशदानङ्ङळुं क्रमत्ताल् चॅय्तु
बान्धवप्रीतियुं चॅय्तु महादान-
मट्टमिल्लातोळं चॅय्तु विशुद्धनाय् ४२
पुत्रनेयुं पुणन्नॅरॅ मूर्धाविङ्कल्
बद्धमोदं बाष्पतीर्थाभिषेकवुं ४३
चॅय्तमात्याचार्यभृत्यवर्गत्तिनुं
कैतवहीनं कॉट्टुत्तानभिमतं । ४४
भूसुरन्मारुं मुनीन्द्ररुं शिष्यरुं
दासवरन्मारुमायुटन् प्रासादं ४५
भागीरथीजलमध्यस्थमेरिनान् ।
भागधेयांबुधि भागवतोत्तमन् ४६
श्वेतद्वीपोपरि श्वेतपद्मासने
श्वेतपतिरिव रेजे मध्ये गंगाम् । ४७

परीक्षित्) ने भार्गव, शौनक, कण्व, विश्वामित्र, गार्ग्य, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, याज्ञवल्क्य, अत्रि, पुलस्त्य, शंख, अगस्त्य, प्राज्ञ, पराशर, द्वैपायन आदि तापस श्रेष्ठों को, ब्राह्मणोत्तमों को, और दिव्य जनों को, और सव्यसाचि (अर्जुन) के मित्र (श्रीकृष्ण) के चरणों के भक्तों को निमन्त्रण देकर बुलाया। तदनन्तर क्रम से सोलह दान करके बान्धवों को खुश करके निःसीम महादानों से विशुद्ध होकर अपने पुत्र को खूब आलिङ्गन करके उसके शीर्ष (सिर) पर प्रमोद के साथ आसुओं का अभिषेक करके अपने अमात्य, आचार्य और भृत्यवर्ग को बिना कैतव (छल) के यथेष्ट दान किया। ३७-४४ तदनन्तर भूपति ब्राह्मणों, मुनीन्द्रों, शिष्यों, और दासवरों के साथ गंगा के जल के बीच में स्थित प्रासाद पर चढ़े।

चुट्टुमिरुत्ति नानासनाग्रङ्ङळिल्
मट्टुळ्ळवरॅ यथायोग्यमुर्व्वीशन् । ४८
दर्भं विरिच्चु वटक्कु तिरिञ्ञिरु-
न्नुप्पोळनशनं दीक्षिच्चु शुद्धनाय् ४९
धृत्वा पवित्रं पुनरुपसत्ति-
नॅ कृत्वा प्रदक्षिणं कृत्वा मुहुस्त्रयं ५०
मामुनीन्द्रन्मारॅ वन्दिच्चु चोदिच्चान् ।
भूमिदेवोत्तमन्माक्कु नमस्कारम् ! ५१
जन्मङ्ङळेट्टमिनियुमुण्टाकिलुं
निर्म्मलन्माराय भूमिदेवन्मारि- ५२
लुण्टाकरुतणुमात्रमवमान-
मुण्टाकवेणमिळकात भक्तियुम् । ५३
ऍन्नतनुग्रहिक्केणं विशेषिच्चु-
मॉन्नुण्टु ञानपेक्षिक्कुन्नु पिन्नॅयुम् । ५४
मर्त्त्यनायाल् मरिप्पान् तुटङ्ङुन्नेरं
कर्त्तव्यमॅन्तु मोक्षत्तिनु चॉल्लणम् । ५५
ऍन्नु राजावु चोदिच्चतु केट्टप्पोळ-
न्योन्यमालोकनं चॅय्तवर्कळुं ५६
वेदवेदान्तशास्त्रादिकळिल् तिर-
ञ्ञेतु नल्लतॅन्नोर्त्तिरिक्कुन्नेरं ५७

भाग्य का सागर, भागवतोत्तम, भूपति श्वेतद्वीप के ऊपर, सफ़ेद पद्मों के आसन पर, गंगा के बीच में श्वेतपति के समान विराजे। फिर राजा ने अपने चारों तरफ और लोगों को भी उनके पद के अनुसार अच्छे-अच्छे आसनों पर बैठाया। फिर दर्भ (कुश) बिछाकर उत्तर की ओर मुख कर के बैठे और उपवास-दीक्षा से शुद्ध होकर पवित्र धारण करके उपसत् की तीन वार प्रदक्षिणा करके महामुनियों की वन्दना करके उनसे पूछा— ४५-५० "भूदेवों (ब्राह्मणों) को नमस्कार! यद्यपि अनेक और जन्म आनेवाले हों तथापि मुझे ऐसा अनुग्रह दीजिए कि मेरा निर्मल ब्राह्मणों के प्रति अणुमात्र भी अपमान कभी न हो और उनके प्रति निश्चल भक्ति ही हो। और एक विशेष बात है जिसकी मैं आप से याचना करता हूँ। जब आदमी मरनेवाला है तो उससे मोक्ष प्राप्त करने का उपाय बतलाना चाहिये"। राजा की इस प्रार्थना को सुनकर वे मुनिजन

कृष्णावर्त्माभया काणायितन्तिके
कृष्णतनूजनां श्रीशुकन्तन्नॅयुम् । ५८
ऑन्नाशु मिन्निस्सभातलमन्नेर-
मिन्द्रसभान्ते बृहस्पति सत्गुरु ५९
वन्नतुपोलॅ विळङ्ङी सभातलम् ।
सुन्दररूपन् दिगंबरन् निर्म्मलन् ६०
गर्भपात्रत्तिल् किटन्ननाळे पुरा
मुक्तनायुद्भविच्चोरु तपोधनन् ६१
मन्दमन्दमॅळुन्नळ्ळियनेरत्तु
मन्देतरं मान्यस्थानवुं नल्किनान् । ६२
पाद्यवुमाचमनीयवुमर्घ्यवु-
माद्यमामासनवुं मधुपर्क्कवुं ६३
वेद्यमांवण्णं विधाय तॅळिञ्ञभि-
वाद्यवुं चॅय्तु निन्नू नृपेन्द्राद्यरुम् । ६४
ञङ्ङळोटिन्नु चोदिच्च चोद्यत्तॅ नी
मंगलात्मावे तॅळिञ्ञु चोदिच्चालुं ६५
श्रीशुकनाय तपोधनश्रेष्ठनो-
टाशुतीरुं बहुसंशयमेवर्क्कुम् । ६६
मेलिल् कलियुगत्तिङ्कलुळ्ळोर्कळ्क्कु
नालां पुरुषार्त्थसाधनमाय्वरुम् । ६७

एक दूसरे का मुख देखने लगे और वेद और वेदान्तशास्त्रों में क्या क्या अच्छी बात है यह ढूँढने लगे। ५१-५७ उस समय कृष्णवर्त्मा (अग्नि) की शोभावाले श्रीकृष्णद्वैपायन के पुत्र शुकजी दिखाई दिये। तत्क्षण ही सारी सभा चमक उठी। जैसे सद्गुरु वृहस्पति के पधारने पर इन्द की सभा शोभायमान होती है उसी प्रकार वह सभा उज्वल हुई। जब सुन्दररूप, दिगम्बर, निर्मल, गर्भाशिय में रहते समय ही मुक्त, तपोधन शुकजी धीरे-धीरे पधारे तब राजा ने उनको बहुत ही मान्य स्थान दिया। तदनन्तर पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, अग्रासन और मधुपर्क स्पष्ट रूप से भेंट करके, प्रसन्नता के साथ अभिवादन भी करके राजा आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़े हो गये। ५८-६४ (मुनियों ने कहा—) "हे मंगलात्मन्। जो प्रश्न आज आप ने हम लोगों से पूँछा उसी को तपोधन श्रीशुकजी से प्रसन्न हो कर पूँछिए। तुरन्त सब के सभी संदेह दूर हो जायेंगे,

अन्त्यकालत्तिङ्कलॅन्तु मनुष्यनाल्
चिन्त्यमॅन्तॅन्तोन्नु कर्त्तव्यमायतु ६८
श्रोतव्यमाकुन्नतॅन्तोन्नुमादराल्
मोदालरुळ्चॅय्कवेणं दयानिधे ! ६९
आसन्नमृत्युवायोरटियन् तव
दासपादांबुजभक्तजनोत्तमन् । ७०
मोक्षैकसाधनमायुळ्ळतिप्पॉळे
साक्षालटियनुपदेशिच्चीटणम् । ७१
शिष्योहमॅन्नभिवाद्यवु चॅय्तु स-
न्तुष्टया पवित्रं धरिच्चिरुन्नीटिनान् । ७२
मन्दस्मितान्वितन् ब्रह्मरातन् गुरु-
वन्दनवु चॅय्तरुळ्चॅय्तितन्नेरम् । ७३
ध्येयनाकुन्नतु विष्णु नारायणन्
श्रोतव्यमाकुन्नतु तल्क्कथामृतम् ७४
कर्त्तव्यमाकुन्नतुमभिवन्दनम्
चित्तं तॅळिञ्ञु केळ्क्कॅन्नरुळिच्चॅय्तु । ७५
श्रीशुकन् चॉल्लुन्न भागवतं केट्टॉ-
राशयु कूटातॅ नारायणन्तङ्कल् ७६

और आगे जो कलियुग में रहते हैं उनके लिए चतुर्थ पुरुषार्थ (मोक्ष) का साधन होजायगा"। (राजा ने पूँछा—) "अन्तकाल में मनुष्य के लिए चिन्त्य क्या है ? कर्तव्य क्या है ? और श्रोतव्य क्या है ? यह सब आदर के साथ और प्रमोद के साथ, हे दयानिधे ! बतला दीजिए। यह दास आसन्नमृत्यु (मरनेवाला) है और आप के दासों के चरणों के भक्तों में श्रेष्ठ है। मोक्ष का जो एक मात्र साधन है उसका अभी-अभी इस दास को उपदेश कर दीजिए। मैं आप का शिष्य हूँ।" यह कह कर अभिवादन करके संतोष के साथ पवित्र धारण करके बैठ गये। उस समय ब्रह्मरात (श्रीशुकजी) ने मन्दस्मित (मन्द मुसकान) के साथ गुरु की वन्दना करके निवेदन किया—६५-७३ "विष्णु नारायण ही एकमात्र ध्येय हैं, उनका कथामृत ही एकमात्र श्रोतव्य है और उनका अभिवन्दन करना ही कर्तव्य है, प्रसन्नता के साथ सुन लीजिए"। तदनन्तर राजा परीक्षित् श्रीशुकजी की कही भागवत कथा सुनते हुए निःस्पृह होकर, भगवान् नारायण में लीन अपनी आत्मा के साथ एकान्त सुख में रहे और

एकीकरिच्चुळ्ळॉरात्माविनोटुंकू-
टेकान्तसौख्यं कलर्न्नु मरुवुम्पोळ् ७७
एषणपाशङ्ङळॉक्कवे खण्डिच्चा-
नेळां दिवसवुमस्तमिच्चू मुदा । ७८
भूपति चॉन्नारमात्य रोटन्नेरं
शापभयमिनिक्किल्लॅन्नतुं वन्नु । ७९
तापसन् तन्न फलमुपजीविच्चु
तापं कॅटुक्क नामॅन्नतु केट्टवर् ८०
परातॅ पारणय्कॅन्नवर् चॉन्नप्पोळ्
पारिनु नाथन् परीक्षित्तुमादराल् ८१
ऐवरुमॉन्निच्चतिनु तुटङ्ङिनान् ।
सेवकन्मार्क्कु कॉटुत्तु नृपतियुं ८२
तानुमॅटुत्तानॉरु फलं भक्षिप्पान् ।
काणायितु चुवन्नोरु कृमियतिल् । ८३
ब्राह्मणभक्तनां भूपति चॉल्लिनान् ।
धार्म्मिकन्माराममात्यरोटन्नेरम् । ८४
तक्षकनॅन्नु पेरिट्टुकॉण्टिप्पोळ् ना-
मिक्कृमियॅक्कॉण्टुतन्नॅ कटिप्पिच्चाल् ८५
भूदेवशापमसत्यमायुं वरा
खेदं नमुक्कु वरिकयुमिल्लल्लो । ८६

उस समय उनके सभी कामपाश खण्डित हो गये। और सातवें दिन का सूर्यास्तमय भी सुखपूर्वक व्यतीत हो गया। (तब राजा ने कहा)—"अब मुझे शाप से कोई भय नहीं है। इसलिए तापस का दिया हुआ फल खाकर हम लोग भूँख दूर करें।" यह सुन कर तुरन्त ही जब उन्होंने कहा कि यह पारण (उपवास के अन्त में किया जानेवाला भोजन) में खाया जाय तब पृथिवी के पति (राजा परीक्षित) ने औरों के साथ वही करना प्रारंभ किया। राजा ने पहले सेवकों को दे कर स्वयं खाने के लिए एक फल लेलिया। तब उसमें एक लाल कीड़ा दिखाई दिया और ब्राह्मणभक्त राजा ने अपने धार्मिक मन्त्रियों से कहा—७४-८४ "अगर हम इसको तक्षक नाम दे दें और इसी से अपने को कटवावें तो ब्राह्मण का शाप असत्य नहीं सिद्ध होगा और मुझको दुःख भी नहीं होगा।" उन्होंने (मन्त्रियों) ने उत्तर दिया—"यह ठीक है क्योंकि अन्ततोगत्वा कोई भी

नल्लतितॅन्नारवरुमॉळिक्करु-
तल्लो विधिविहितमॉरुजातियुम् । ८७
मन्दमॅटुत्तु कळुत्तिलणच्चप्पोळ्
दन्दशूकाधिपनाकिय तक्षकन् ८८
चुट्टिनान् भूपतितन्नुटलॉक्कवे ।
मट्टुळ्ळवर् भयत्तोटुमोटीटिनार् ८९
हालाहलानलज्ज्वालया भूपति
कोलाहलत्तोटु नाकलोकं पुक्कान् । ९०
दुःखितन्मारामत्यरुमाशु शे-
षक्रिय पुत्रनॅक्कॉण्टु चॅय्यिप्पिच्चार् । ९१
राज्याभिषेकवुं चॅय्तु नानाजन-
पूज्यनाय् वाणान् जनमेजयनृपन् । ९२
काशीशपुत्रि वपुष्टमयोटु भू-
मीशन् सुखिच्चु वसिक्कुन्नतु कालम् । ९३
नित्यविरक्तन् ज़रत्कारु मामुनि
भक्त्या वनान्तरे संचरिक्कुं विधौ ९४
कण्टितु वासुकि वन्दिच्चु तान् कूट्टि-
क्कॉण्टुपोय् सोदरि तन्नॆ नल्कीटिनान् - ९५
अप्रियं चॅय्कतान् चॉल्कतान् चॅय्तिल् आ-
नप्पोळुपेक्षिक्कुमॅन्नतुं चॉल्लिनान् । ९६

विधि का विहित नहीं टाल सकता"। जब राजा ने उसे धीरे-धीरे लेकर अपने गले में रखा तो सर्पों के नाथ तक्षक ने राजा के सारे शरीर को घेर लिया। और सब लोग डर के कारण भाग गये। हालाहल विष की आग की ज्वाला से राजा बड़े कोलाहल के साथ स्वर्ग चले गये। तब दुःखित मन्त्रियों ने तुरन्त ही शेष क्रिया को राजा के पुत्र से करवाया। राज्याभिषेक के होने के बाद राजा जनमेजय ने विविधि प्रजाओं से पूजित होकर राज किया। तदनन्तर जब काशिराज की पुत्री वपुष्टमा के साथ राजा सुख से रहते थे, और सदा ही विरक्त महामुनि जरत्कारु भक्ति के साथ वनों में संचार करते थे, तब वासुकि ने उनको देखा। उनकी वन्दना करके उनको अपने साथ ले गया और उन्हें अपनी बहन को शादी में देदिया। (जरत्कारु ने पहले ही कह दिया—) "अगर मेरा अप्रिय करोगी या कहोगी तो तुरन्त ही मैं छोड़कर चला जाऊँगा।" वह

भर्तृ शुश्रूषारतयामवळोटु
नित्यसुखत्तोटिरुन्नु मुनीन्द्रनुम् । ९७
इत्थं चिलनाळ् कळिञ्ञोरनन्तरं
सत्यपरायणनाय महामुनि ९८
मुग्धाक्षितन् मटियिल् तलयुं वच्चु
निद्रयुं पूण्टु किटक्कुन्नतुनेरं ९९
मित्रनुमस्तमिप्पानटुत्तु तुलोम्
भर्त्ताविुणर्न्नतुमिल्लॅन्नुकण्टवळ् १००
चिन्तिच्चु कण्टालुणर्त्तरुतॅन्नतुं
संध्याविलोपं वरुत्तरुतॅन्नतुं १०१
सन्देहमुण्टायनेरत्तु तन्नुळ्ळिल्
सुन्दरिताने निरूपिच्चु कल्पिच्चु । १०२
संध्यालोपत्तिनु दोषमेरुं निद्र-
य्कन्तरं चॅय्कयत्रे पॉरुक्कावतुं १०३
ऍन्नु कल्पिच्चुणर्त्तीटिनाळ् तापस-
नन्नेर माशु कोपिच्चु चॉल्लीटिनान् । १०४
ऍन्नॅयुणर्त्तुवानॅन्तु नी वल्लभे
निन्नुटॅ भर्तृ शुश्रूषाभंगं वन्नु । १०५
अन्धनॅन्नॅन्नॅ नी कल्पिक्क चॅय्ततुं
संध्यवरुम्पोळुणरुवन् ञानॅटो । १०६

बहुत ही सावधानी से अपने पति की सेवा में तत्पर थी और मुनीन्द्र उसके साथ सुख से रहने लगे। ८५-९७ इस प्रकार कुछ दिन के बीतने के बाद एक दिन सत्यपरायण महामुनि अपनी प्रियतमा की गोद में सिर रखकर सो रहे थे कि सूर्यास्तमय का समय निकट आ गया। जब अपने पति जाग नहीं रहे थे तब पत्नी सोंचने लगी—"एक तरफ तो उनको जगाना नहीं चाहिए और दूसरी तरफ उनकी संध्या का लोप नहीं होना चाहिए। क्या करूँ ?" इस सन्देह में सुन्दरी ने स्वयं निर्णय किया—"संध्या लोप में दोष अधिक होता है इसलिए नींद में बाधा डालना सहा जा सकता है"—यह सोंचकर उसने पति को जगाया। उस समय तापस ने क्रुद्ध होकर कहा—"प्रिये ! तुमने क्यों मुझे जगाया ? तुम्हारी भर्तृ शुश्रूषा में भंग हो गया। तुमने मुझे अन्धा समझ लिया, क्या मैं संध्या के समय स्वयं नहीं जग जाता ? ९७-१०६

ञानुणर्न्नीलॅङ्किलादित्यनुमॅन्नॆ
मानिच्चु पार्क्कुमतिनिल्ल संशयम् । १०७
अत्र महत्त्वमिनिक्कुळ्ळतेतुमे
सिद्धमल्लाञ्ञिन्नुणर्त्तियकारणं १०८
निन्नॅयुपेक्षिक्कयॅन्नतु वन्निति-
नॅन्नुटॅ सत्यलोपं वरुमायतिल् । १०९
ऍन्नतु केट्टु करञ्ञुतुटङ्ङिनाळ्
तन्वंगि दुःखिच्चु पिन्नॅयुं चॉल्लिनाळ् ११०
ऍन्नोटिवण्णमरुळ्चॅय्यरुतय्यो
निन्नुटॅ धर्म्मलोपं वरुमॅन्नतो- १११
र्त्तॉन्नरियातॆ ञान् चॆय्तोरपराध-
मॅन्नॅक्कुरिच्चु पॉरुत्तुकॉळ्ळेणमे । ११२
निर्म्मलतापसन्मार् निनवॅन्तॆन्नु
चॅम्मे तिरिच्चरिवान् पणियुण्टल्लो । ११३
दुःखिच्चिवण्णं पररञ्ञु करयुन्न
मैक्कण्णियोटरुळ्चॅय्तु मुनीन्द्रनुम् । ११४
सत्यविरोधं वरुत्तुकयिल्ल ञा-
नुत्तमयाय नी खेदिक्कयुं वेण्टा । ११५
भर्त्तृवाक्यं केट्टु भद्रयां पत्नियुं
चित्ततापत्तोटु चॉल्लिनाळ् पिन्नॅयुम् । ११६
वह्नियिल् वीळॅन्नु मातावुतान् पण्टु
पन्नगन्मारॅश्शपिच्चॉरु कारणं ११७

मैं अगर न जग जाता तो सूर्य मेरे लिये अवश्य प्रतीक्षा करता! मेरा इतना महत्त्व है यह बात तुम्हारे लिए बिलकुल सिद्ध नहीं थी, इसलिए तुमने जगाया। अब तुम्हें त्याग करने की स्थिति आ गयी। इसमें मेरा सत्य लोप हो जाने का डर है।" यह सुनकर तन्वङ्गी रोने लगी और दुःखित हो कर फिर बोली—"मुझ से आप को इस प्रकार बोलना नहीं चाहिए। यह सोंचकर कि आप का धर्मलोप हो जायगा मेंने बिना कुछ समझे यह अपराध किया है। आपको क्षमा करना चाहिए निर्मल तापसों के क्या विचार हैं यह ठीक समझना कठिन काम तो है ही"। दुःख से इस प्रकार रोती हुई प्रिया से मुनीन्द्र ने कहा—"मैं अपने सत्य के विरुद्ध कुछ नहीं करूँगा। तुम उत्तम स्त्री हो, खेद न करो"। पति की

अन्वयनाशमॉळिप्पतिन्नायॉरु
नन्दननुण्टामिनिक्कॅन्नु कल्पिच्चु । ११८
पन्नगेन्द्रन् मम सोदरन् वासुकि-
यॅन्नॅ भवानु नल्कीटिनान् निर्णयम् । ११९
मुन्नॆ विरिञ्चनियोगवुमुण्टुपोल्
ऍन्नुटॅ गर्भं मुतिर्न्नतुमिल्लल्लो । १२०
इत्यादिकळ् परञ्ञेटं करयुन्न
मुग्धांगियिल् कृपयोटु चॉल्लीटिनान् । १२१
भर्त्तृपरायणे भद्रे करयाय्क
भक्तिविश्वासङ्ङळ् कण्टु तॅळिञ्ञु ञान् । १२२
अद्भुतनाकियोरर्भकन् निन्नुटॅ
गर्भंगनायुण्टवन् नल्लनेरंकॉ-१२३
ण्टुद्भविच्चीटुं गुणवानवन्तन्नॅ
सर्प्पान्वयमॉक्क रक्षिक्कयुं चॅय्युम् । १२४
दुर्भगनल्लवनॉट्टुमवनोळं
सद्भावमिल्ल मट्टार्क्कुमरिक नी । १२५
त्वल्भ्रातृमुख्यनां सद्भोगिनायकन्
निर्भाग्यनल्लॅटो वासुकिवीरनुम् । १२६
नित्यं तपस्सिनॆ कांक्षयुळ्ळू मम
पुत्रनुण्टायाल् मति गृहस्थाश्रमम् । १२७

बात सुन कर साध्वी पत्नी ने चित्त के ताप के साथ फिर कहा—"बहुत दिन पहले माता ने सर्पों को शाप दिया था कि वे आग में गिरकर मर-जायँ। इसके फलस्वरूप होने वाले वंशनाश से बचाने वाला एक पुत्र मुझमें पैदा हो जाय, इस बुद्धि से मेरे भाई वासुकि ने निःसन्देह मुझे आपको विवाह में देदिया। अभी मेरा गर्भ पक्का भी नहीं हुआ" । १०७-१२० इस प्रकार विलाप करती और रोती हुई अपनी मुग्धांगी (प्रियतमा) के प्रति कृपा के साथ मुनि ने कहा—"हे पतिव्रते ! हे भद्रे ! रोओ मत ! तुम्हारी भक्ति और विश्वास देखकर मैं प्रसन्न हूँ। एक अद्भुत पुत्र तुम्हारे गर्भ में वर्तमान है और वह यथा समय उत्पन्न होगा। वह गुणवान् होगा और वह सर्पवंश की रक्षा भी करेगा। वह लेशमात्र भी दुर्भग नहीं होगा और उसकी जैसी सद्भावना और किसी की न होगी, जान लो। तुम्हारा मुख्य भाई, सद्भोगियों (अच्छे सर्पों) का नायक

निन्नॅक्कुरिच्चु विरक्तनायिट्टल्ल
ध्न्ये समस्तविषयविरक्तन् ञान् । १२८
सत्यविरोधं वरुत्तुकयुं वेण्टा
सत्यमत्रे ञान् परञ्ञतरिञ्ञालुम् । १२९
निङ्ङळुटॅ कुलत्तिन्नु सौख्यं वरुं
मंगलनाय ममात्मजनालिनि । १३०
ऎन्निवचॅन्नु नी वासुकियोटु चॉल्-
कॅन्नरुळ्चॅय्तॅळुन्नळ्ळी मुनीन्द्रनुम् । १३१
वासुकियॅक्कण्टवळिवयुं चॉल्लि
वासवुं चॅय्तितु नागपुरं तन्निल् १३२
नल्ल मुहूर्त्ते पिरन्नु कुमारनु-
मॅल्लावरुं तॅळिञ्ञारहिवीररुम् । १३३
अस्ति गर्भे सुतनॅन्नु तपोधनन्
सत्यमाय् चॉन्नतु कारणमाकयाल् १३४
अस्तिकनॅन्नु पेरिट्टितु वासुकि ।
नित्यमोदेन वळर्न्नितु बालनुं १३५
वेदवेदांगवेदान्तादिविद्यकळ्
चेतोहरन् बालनध्ययनं चॅय्तान् । १३६
आचार्यनाकुं च्यवनमुनीन्द्रनो-
टाशीर्व्वादं वाङ्ङि दक्षिणयुं चॅय्तान् १३७

वीर वासुकि भाग्यहीन नहीं है। मेरी तो केवल सदा तप करने की इच्छा है, अतएव पुत्रजन्म के बाद मुझे गृहस्थाश्रम नहीं चाहिए। यह न समझो कि मैं तुमसे विरक्त हो गया हूँ। सच तो यह है कि मैं सभी विषयों से विरक्त हूँ। मेरे सत्य-वचन का विरोध पैदा करने की आवश्यकता नहीं है। जान लो कि जो कुछ मैंने कहा वह सत्य सिद्ध होगा। मेरे मंगलमय पुत्र के द्वारा तुम लोगों के कुल का सौख्य ही होगा। तुम जाकर ये सब बातें वासुकि से कहो"। इतना कहकर मुनीन्द्र चले गये। १२१-१३१ तदनन्तर पत्नी ने सभी बातें बासुकि से कह दीं और वह नागों के नगर में निवास करने लगी। एक शुभ मुहूर्त में कुमार का जन्म हुआ और सभी सर्पों के वीर प्रसन्न हुए। तपोधन ने कहा था—"गर्भ में पुत्र है (अस्ति)" और वह सत्य भी निकला। इस लिए वासुकि ने उसका नाम 'अस्तिक' रखा। वह सदा ही प्रमोद के

नानारत्नङ्ङळ् धनधान्यराशिकळ्
भोगीश्वराज्ञया नल्किनानावोळम् । १३८
दिव्यनायीटुं च्यवनन् प्रसादिच्चु
सर्व्वज्ञनाय् वरिकॅन्नु चॉल्लीटिनान् १३९
सूतनीवण्णं पऱञ्ञोरनन्तरं
सादरं चोदिच्चु पिन्नॅयुं शौनकन् । १४०
हालाहलज्ज्वालया मुनिशापत्ताल्
कालवशगतनाय तातन्कथा- १४१
मूलमऱिञ्ञवाऱॅङ्ङनॅ चॉल्लु नी
बालकनाय जनमेजयनृपन् १४२
चॉन्नानतुं सूतनॅङ्किलतुं केळ्प्पिन्
मुन्नमुदङ्कन् पऱञ्ञॉट्टऱिञ्ञितु १४३
पिन्नॅयुं मन्नवन् तन्नमात्यन्मारॅ
मुन्निल् वरुत्ति मुळुवन् विचारिच्चान् । १४४
ऍन्नुटॆ तातनुण्टाय वृत्तान्तङ्ङ
ळॅन्नोटु निङ्ङळ् मुळुवन् पऱयणम् । १४५
ऍन्नतु केट्टु ताॅळुतवर् चॉल्लिनार् ।
निन्नुटॆ तातनुटॆ गुणं चॉल्लुवान् १४६

साथ बढ़ता गया । वह मनोहर बालक वेद, वेदाङ्ग, वेदान्त आदि विद्याएँ पढ़ता रहा । अपने आचार्य मुनीन्द्र च्यवन के आशीर्वाद पाकर उनको दक्षिणा दी । भोगीश्वर (वासुकि) की आज्ञा से उनको अनेक प्रकार के रत्न, धन और धान्य की पूंजी दी गयी । दिव्य च्यवनजी प्रसन्न हुए और उन्होंने आशीर्वाद दिया कि तुम सर्वज्ञ हो जाओ । सूतजी के इस प्रकार कहने के अनन्तर शौनक ने फिर सादर पूँछा—१३२-१४० "मुनि-शाप के कारण हालाहल विष की ज्वाला से काल (मृत्यु) के वश में आये अपने पिता की कथा का मूल, बालक राजा जनमेजय को कैसे मालूम हुआ, यह सुनाइए" । तब सूत ने वह भी सुनाया । इसलिए सुन लीजिए । पहले उदङ्क के कहने से कुछ ज्ञात हो गया था । फिर भी राजा ने अपने अमात्यों को अपने सामने बुलाकर सारा वृत्तान्त पूँछा । (उन्होंने कहा—) मेरे पिता के जो जो वृत्तान्त हुए वे सभी मुझको बतला दीजिए । यह सुनकर उन्होंने प्रणाम करके कहा—१४१-१४६

पन्नगनाथननन्तनुमावत-
ल्लन्यरायुळ्ळवरॅङ्ङनॅ चॉल्लुन्नु । १४७
इन्द्रादिदिक्पालकन्मारुटॅ गुण-
मॉन्नॉळियातॅ नृपनुण्टुनिर्ण्णयम् । १४८
श्रीरामनु समनॅन्ने परयावू
पारितु पालनं चॅय्ततोर्क्कु विधौ । १४९
विष्णुराताख्यनां विश्वंभरावरन्
विष्णुभक्ताग्रगण्योत्तमन् सत्तमन् १५०
जिष्णुजनन्दनपुत्रन् परीक्षित्तु
कृष्णलीलानन्दसिन्धुमग्नात्मकन् १५१
विश्वंभरापति विश्वंभरप्रियन्
विश्वरक्षाकरन् विश्वनाथोपमन् १५२
वर्ण्णाश्रमश्रेणिधर्म्मस्थितिचॅय्तु
नन्नाय् परिपालनं चॅय्तु भूतलम् । १५३
वन्न कलियॅयुमाट्टिक्कळञ्ञितु
पिन्नॅयारुळ्ळतु मट्टॉरु वैरिकळ् । १५४
एकातपत्रयाय् वन्नु धरणियु-
मेकान्तसौख्येन निन्नितु लक्ष्मियुम् १५५

पन्नगों (सर्पों) का नाथ अनन्त भी आपके पिता के गुणों का वर्णन नहीं कर सकता औरों की तो बात ही क्या है ? इन्द्र आदि दिक्पालों के सभी गुण आपके पिता भूपति (राजा परीक्षित्) में हैं, इसमें सन्देह नहीं। उनके भूमि की परिपालनविधि (पालन करने के प्रकार) को देखकर अवश्य कहना पड़ता है कि वे श्रीराम के समान थे। उनका नाम था विष्णुरात; वे पृथिवी में सब से उत्तम थे, और विष्णुभक्तों के श्रेष्ठों में श्रेष्ठ, सत्तम, अर्जुन के पुत्र के पुत्र थे। उनकी आत्मा कृष्णलीलानन्द-सागर में मग्न थी, वे विश्वंभरा (पृथिवी) के पति, विश्वंभर (भगवान्) के प्रिय थे, वे सभी की रक्षा करनेवाले थे, विश्वनाथ के तुल्य थे। ऐसे राजा परीक्षित् ने वर्णाश्रम धर्म का स्थापन करके पृथिवी का अच्छी तरह से परिपालन किया। अभ्यागत कलि को भगा दिया। इससे बढ़ कर और कौन शत्रु हो सकता है। समस्त धरणी (पृथिवी) एक छत्रच्छाया में आ गयी और राज्यलक्ष्मी बड़े सुख के साथ रही। १४७-१५५ राजा

चॆन्तु वयस्सुमऱुपतुमक्कालं
मन्नवन् पळ्ळिवेट्टय्क्कॆळुन्नळ्ळिनान् १५६
अन्तु पैदाहङ्ङळ्कॊण्टु विकल्पवुं
वन्नितु बुद्धिक्कतुनिमित्तं तदा १५७
शृंगिशापंकॊण्टु तक्षकन्तन्नुटॆ
संगति नीक्करुतातॆ चमञ्ञितु । १५८
पिन्नॆयुण्टायवृत्तङ्ङळो भवा-
नॊन्नॊळियातॆयऱिञ्ञल्लो मेवुन्नु । १५९
ऎन्नितमात्यन्मार् चॊन्नतु केट्टॊरु
मन्नवन् पन्नगसत्रमारंभिच्चान् । १६०
चॊन्नानुदङ्कनतिन्नुपायङ्ङळुं
वन्नु मुनिकळुमामॆन्नु चॊल्लिनार् १६१
शिल्पियॆक्कॊण्टन्नु शाल निर्म्मिप्पति-
न्नप्पोळवनॊरु लक्षणं चॊल्लिनान् । १६२
अग्निसमाननां ब्राह्मणनालॊरु
विघ्नमितिन्नु वरुमॆन्नु निर्ण्णयम् । १६३
वास्तुसंस्कारक्रियान्तरे तोन्निच्चु
वास्तवलक्षणमॆन्नवन् चॊल्कयाल् १६४
द्वास्थन्मार् गोपुरत्तिङ्कल् निन्नीट्टुक
पार्त्तारुमिङ्ङु वरायवतिन्नॆन्नतुं १६५

की आयु साठ बरस की हो गयी और वे शिकार खेलने निकले। उस दिन भूँख और प्यास के कारण उनकी बुद्धि में विकल्प पैदा हुआ। अतएव श्रृंगी का शाप लगा और तक्षक की अनिवार्य घटना पैदा हो गयी। उसके बाद जो कुछ हुआ वह सब जानते हुए ही आप विराज रहे हैं। अमात्यों का यह कहना सुनकर राजा ने सर्पसत्र प्रारम्भ किया। उदङ्क ने उसके अनुष्ठान के उपाय बतला दिये। मुनिजन पधारे और उन्होंने भी स्वीकार किया। शिल्पियों के द्वारा यज्ञशाला का निर्माण कराना था। उस समय (उदङ्क ने) एक लक्षण बतला दिया—"एक अग्नि-तुल्य ब्राह्मण के द्वारा इस यज्ञ का विघ्न होने वाला है, इसमें संदेह नहीं।" यज्ञशाला के निर्माण की क्रिया के अवसर पर उन्होंने सुझाव दिया था कि यही लक्षण है। इसलिए राजा जनमेजय ने आज्ञा दी कि द्वारपाल गोपुर पर खड़े हो जायँ ताकि कोई इधर न आ जाय। तदनन्तर

धात्रीशनां जनमेजयन् कल्पिच्चॉ-
रास्थकलर्न्नु यागं तुटङ्ङीटिनान् । १६६
संभारमॉक्कवे संभरिच्चीटिनार्
संभ्रमत्तोटुममात्यजनङ्ङळुं १६७
धात्रीसुरन्मारुपकरणङ्ङळुं
तीर्त्तु घोषिच्चु तुटङ्ङि महाक्रतु । १६८
नीलांशुकधरन्मारां द्विजेन्द्रन्मार्
कोलाहलेन वेदङ्ङळुमोतिनार् । १६९
नालां श्रुतिक्रिय चॅय्तुतुटङ्ङिनार् ।
भूलोकवुं निरञ्ञु पुकतन्निले । १७०
होता मुनितिलकन् चण्डभार्ग्गवन्
चेतसि चिन्तिच्चु चॉन्नतॉरुक्कुवान् १७१
पुक्कार् पराशरहोत्रादिकळॅल्ला-
मॉक्कॅप्परिकर्म्मवुं नटत्तीटिनार् । १७२
हस्तिहस्तोपमन्माराय सर्प्पङ्ङ-
ळत्र मन्त्रप्रयोगाज्याहुतिकॉण्टु १७३
कत्तियॅळुन्नॊरु पावकज्ज्वालया
दग्धगात्रात्मना गर्त्तान्तरङ्ङळि- १७४
लॅङ्ङुमिरिक्करुताञ्ञु तळर्न्नवर्
तङ्ङुळिल् चुट्टॆॅळिञ्ञु पिरिञ्ञु व- १७५
न्नग्नियिल् वीणु पॉरिञ्ञु तुटङ्ङिना-
रग्नियुमेट्टं तॅळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । १७६

उन्होंने श्रद्धा के साथ याग प्रारंभ किया । अमात्यों ने सारी यज्ञसामग्री बड़े संभर (आतुरता) के साथ इकट्ठा की । और ब्राह्मणों ने समस्त उपकरण तैयार करके महायज्ञ की घोषणा की । और ब्राह्मण लोग नीलांशुक (नीला वस्त्र) धारण करके गंभीर ध्वनि से वेदपाठ करने लगे, और चौथे वेद (अथर्ववेद) की क्रिया भी करने लगे । सारा भूलोक धुएँ से भर गया । होता मुनिश्रेष्ठ चण्ड भार्गव कही गई वस्तुओं को तैयार करने के लिए सोंचने लगे । १५६-१७१ पराशर, होता आदि प्रवेश करके अलंकरण आदि तैयारियाँ करने लगे । इतने मन्त्रों के प्रयोग से और आज्याहुति से जल उठी आग की ज्वाला से दग्ध होकर हाथी के हाथ के समान मोटे-मोटे सर्प अपने बिलों में रहना असंभव हो जाने के कारण वहाँ से निकल-निकल

चॅन्तु वयस्सुमरुपतुमक्कालं
मन्नवन् पळ्ळिवेट्टय्कॅळुन्नळ्ळिनान् १५६
अन्तु पैदाहङ्ङ्ळ्कॉण्टु विकल्पवुं
वन्नितु बुद्धिक्कतुनिमित्तं तदा १५७
शृंगिशापंकॉण्टु तक्षकन्तन्नुटॅ
संगति नीक्करुतातॅ चमञ्ञितु । १५८
पिन्नॅयुण्टायवृत्तङ्ङ्ळो भवा-
नॉन्नॉळ्ळियातॅयरिञ्ञल्लो मेवुन्नु । १५९
ऍन्नितमात्यन्मार् चॉन्नतु केट्टॉरु
मन्नवन् पन्नगसत्रमारंभिच्चान् । १६०
चॉन्नानुदङ्कनतिन्नुपायङ्ङ्ळुं
वन्नु मुनिकळुमामॅन्नु चॉल्लिनार् १६१
शिल्पियॅक्कॉण्टन्नु शाल निर्म्मिप्पति-
न्नप्पोळवनॉरु लक्षणं चॉल्लिनान् । १६२
अग्निसमाननां ब्राह्मणनालॉरु
विघ्नमितिन्नु वरुमॅन्नु निर्णयम् । १६३
वास्तुसंस्कारक्रियान्तरे तोन्निच्चु
वास्तवलक्षणमॅन्नवन् चॉल्कयाल् १६४
द्वास्थन्मार् गोपुरत्तिङ्कल् निन्नीट्टुक
पार्त्तारुमिङ्ङु वराय्वतिनॅन्नतुं १६५

की आयु साठ बरस की हो गयी और वे शिकार खेलने निकले। उस दिन भूँख और प्यास के कारण उनकी बुद्धि में विकल्प पैदा हुआ। अतएव शृंगी का शाप लगा और तक्षक की अनिवार्य घटना पैदा हो गयी। उसके बाद जो कुछ हुआ वह सब जानते हुए ही आप विराज रहे हैं। अमात्यों का यह कहना सुनकर राजा ने सर्पसत्र प्रारम्भ किया। उदङ्क ने उसके अनुष्ठान के उपाय बतला दिये। मुनिजन पधारे और उन्होंने भी स्वीकार किया। शिल्पियों के द्वारा यज्ञशाला का निर्माण कराना था। उस समय (उदङ्क ने) एक लक्षण बतला दिया—"एक अग्नि-तुल्य ब्राह्मण के द्वारा इस यज्ञ का विघ्न होने वाला है, इसमें संदेह नहीं।" यज्ञशाला के निर्माण की क्रिया के अवसर पर उन्होंने सुझाव दिया था कि यही लक्षण है। इसलिए राजा जनमेजय ने आज्ञा दी कि द्वारपाल गोपुर पर खड़े हो जायँ ताकि कोई इधर न आ जाय। तदनन्तर

धात्रीशनां जनमेजयन् कलिपच्चाॅ-
रास्थकलर्न्नु यागं तुटङ्ङीटिनान् । १६६
संभारमाॅक्कवे संभरिच्चीटिनार्
संभ्रमत्तोटुममात्यजनङ्ङळुं १६७
धात्रीसुरन्मारुपकरणङ्ङळुं
तीर्त्तु घोषिच्चु तुटङ्ङि महाक्रतु । १६८
नीलांशुकधरन्मारां द्विजेन्द्रन्मार्
कोलाहलेन वेदङ्ङळुमोतिनार् । १६९
नालां श्रुतिक्रिय चॅय्तुतुटङ्ङिनार् ।
भूलोकवुं निऱञ्ञु पुकतन्निले । १७०
होता मुनितिलकन् चण्डभार्ग्गवन्
चेतसि चिन्तिच्चु चॉन्नतॉरुक्कुवान् १७१
पुक्कार् पराशरहोत्रादिकळॅल्ला-
माॅक्कॅप्परिकर्म्मवुं नटत्तीटिनार् । १७२
हस्तिहस्तोपमन्माराय सर्प्पङ्ङ-
ळत्र मन्त्रप्रयोगाज्याहुतिकॉण्टु १७३
कत्तियॅऴुन्नॉरु पावकज्ज्वालया
दग्धगात्रात्मना गर्त्तान्तरङ्ङळि- १७४
लॅङ्ङुमिरिक्करुताञ्ञु तळर्न्नवर्
तङ्ङुळिल् चुट्टॅऴिञ्ञु पिरिञ्ञु व- १७५
न्नग्नियिल् वीणु पॉरिञ्ञु तुटङ्ङिना-
रग्नियुमेट्टं तॅळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । १७६

उन्होंने श्रद्धा के साथ याग प्रारंभ किया । अमात्यों ने सारी यज्ञसामग्री बड़े संभर (आतुरता) के साथ इकट्ठा की । और ब्राह्मणों ने समस्त उपकरण तैयार करके महायज्ञ की घोषणा की । और ब्राह्मण लोग नीलांशुक (नीला वस्त्र) धारण करके गंभीर ध्वनि से वेदपाठ करने लगे, और चौथे वेद (अथर्ववेद) की क्रिया भी करने लगे । सारा भूलोक धुएँ से भर गया । होता मुनिश्रेष्ठ चण्ड भार्गव कही गई वस्तुओं को तैयार करने के लिए सोंचने लगे । १५६-१७१ पराशर, होता आदि प्रवेश करके अलंकरण आदि तैयारियाँ करने लगे । इतने मन्त्रों के प्रयोग से और आज्याहुति से जल उठी आग की ज्वाला से दग्ध होकर हाथी के हाथ के समान मोटे-मोटे सर्प अपने बिलों में रहना असंभव हो जाने के कारण वहाँ से निकल-निकल

अञ्चुमेळु मून्नु मस्तकमुळ्ळव-
रञ्चुमारु तम्मिळॉन्निच्चु वीऴ्कयुं १७७
वाताशनकुलहाहानिनादवुं
वातसखिहेतिहूहूनिनादवुं १७८
भूदेवसत्तमवेदनिनादवुं-
मोदनतेमनास्वादनिनादवुं १७९
दिव्यगव्यद्रव्यहव्यदाहक्रिया
सव्यचाराग्निकीलाग्रधूमाभयुं १८०
सर्व्वलोकं परन्नोरु सौरभ्यवुं
गर्व्वदर्व्वीकरन्मार् विलापङ्ङळुं १८१
पार्त्थिवेन्द्रन्मार् चतुरंगसेनयो-
टार्त्तु वरुम्पोळ् नटत्तुन्न घोषवुं १८२
भोक्तुकामन्मार् भुजिच्चु नृपेन्द्रनॆ
वाऴ्त्ति स्तुतिच्चु पाटीटुन्न घोषवुं १८३
वाद्यघोषङ्ङळुं नानाजनस्तोम-
चोद्योत्तरंकॊण्टु वाय्कुं निनादवुं १८४
घोरघोरं केट्टु वारान्निधिकळुं
पारमिळकि मरिञ्ञु कलङ्ङुन्नु । १८५
धाराधरङ्ङळुमॆन्तॆन्नरियाञ्ञु
धीरतरमिटिवॆट्टि मुऴुङ्ङुन्नु । १८६

कर, परेशान होकर, एक दूसरे से जुड़कर कुण्डली बनकर फिर अलग होकर अग्नि में गिरकर भुनने लगे। और अग्नि भी अत्यन्त तीव्र जलने लगा। १७२-१७६ पांच, सात या तीन सिर वाले सर्प पांच पांच छ: छ: एक साथ आग में गिरे। सर्पकुलों का हाहानिनाद, वातसखि (अग्नि) की ज्वालाओं का हूहूनिनाद, ब्राह्मणोत्तमों की वेदध्वनि, अन्न और व्यंजन के आस्वादन का निनाद, दिव्य गव्यद्रव्य से बने हव्य की दाहक्रिया, वामचार अग्नि के ज्वालाग्र से निकले धूम की शोभा, समस्त लोक में फैला हुआ सुगन्ध, गर्ववाले सर्पों के विलाप, अपनी चतुरंग सेना के साथ आनेवाले भूपालों का घोष, भोजनेच्छुकों के भोजन के बाद राजा की स्तुति के लिए किये गानों का घोष, वाद्यों का घोष, नानाजनसमूह के प्रश्न और उत्तरों के कारण मुखों का निनाद, ये सब घोर-घोर नाद सुन कर समुद्र उलट गये। और मेघ भी कुछ न समझकर अपने गंभीर

सारतचेरुं गिरिकळ् कुलुङ्ङुन्नु ।
घोरनां सिंहिकासूनु मरुकुन्नु । १८७
स्वर्ग्गनिवासिकळ् कण्णु कलङ्ङुन्नु
दिग्गजेन्द्रन्मार् भयेन नटुङ्ङुन्नु । १८८
सन्तापमुळ्क्कॊण्टनन्तनुं चिन्तिच्चु
सन्ततं माधवन्तन्नॆ वणङ्ङुन्नु । १८९
शङ्करन् भूषणनाशं वरुमॆन्नु
शङ्किच्चुळ्ळन्नु भवानियॆ नोक्कुन्नु । १९०
पारेळुरण्टुममन्दं मुळङ्ङुन्नु
वारिजसंभवनुं चॆवि पार्क्कुन्नु । १९१
नारायणनुमुरक्कमुणरुन्नु
नारायण हरे विस्मयमॆत्रयुम् । १९२
सर्प्पसत्रप्रयोगप्रभावं कण्टॊ-
रद्भुतं पूण्टु जगद्वासिकळॆल्लाम् । १९३
अन्तमिल्लातॊरु भोगिकळ् तीयिल् वी-
णन्तमाय्वन्नु तॆन्नॆ पऱयावितुम् । १९४
वॆन्तुपॊऱाञ्ञुटन् तल्क्षणं तक्षकन्
बन्धुवामिन्द्रनॆच्चॆन्नु कण्टीटिनान् १९५
पेटियाय्केतुमिविटॆप्पॊरुक्क नी
चूटिविटेक्कु वरिकयुमिल्लेतुम् । १९६

नाद निकाल रहे हैं। बड़े-बड़े पर्वत हिल रहे हैं। घोर सिंहिका-पुत्र (राहु) परिभ्रम (धोखे) में आ गया है। १७७-१८७ स्वर्ग के निवासियों की आँखें दुःख रही हैं और सब दिग्गज भय से काँप रहे हैं। दुःखित होकर अनन्त (शेष) सदैव माधव का ध्यान कर रहा है और वन्दना कर रहा है। शङ्कर चिन्तित हुए कि अपने भूषण का नाश होगा और भवानी की ओर देखने लगे। चौदहों लोक अत्यन्त कोलाहल-पूर्ण हो रहे हैं। और वारिजसंभव (ब्रह्मा) ध्यान से सुन रहे हैं। और नारायण जी जाग रहे हैं। हे नारायण! हे हरे! कितना आश्चर्य है! सर्पसत्र के अनुष्ठान का प्रभाव देखकर जगत् के सभी निवासी आश्चर्यचकित हुए। असंख्य सर्प आग में गिरकर समाप्त हुए, इतना ही कहना है। उस समय ताप को असह्य पाकर तक्षक अपने मित्र इन्द्र को देखने गया। १८८-१९५ (इन्द्र ने कहा—)

नीचसर्प्पङ्ङ्ळॉट्टुङ्ङ्मॉट्टावोळं
नीचरल्लात निङ्ङ्ळ्क्किटरिल्लेतुम् । १९७
तक्षकनुं सहस्राक्षनॅक्कण्टाशु-
शुक्षिणिभीति कूटातॅ मरुविनान् । १९८
नासिकान्ते पुक्कु धूमाकुलनाय
वासुकि सोदरियोटु चॉल्लीटिनान् । १९९
मृत्युवटुत्त जनत्तिन्रॅ लक्षणं
भद्रे भगिनी ! भविच्चितॅनिक्किप्पोळ् । २००
भागधेयं पूण्ट भागिनेयन् मम
शोकमॉळिक्कुमवनॅययय्क नी । २०१
सोदरनेवं परञ्ञतु केट्टथ
सादरमाशु जरत्कारु चॉल्लिनाळ् । २०२
मातुलन्मारॅल्लामातुरन्माराय-
तेतुमरिञ्ञतिल्ले नी ममात्मज ! २०३
चॅन्नुनी सर्प्पसत्रं मुटक्कीटाय्कि-
लिन्नुतन्ने मुटिञ्ञीटुं कुलमॅल्लाम् । २०४
माताविवण्णं परञ्ञतु केट्टप्पोळ्
मातुलनोटु परञ्ञु नट कॉण्टान् । २०५
यागविभूतिकण्टद्भुतं पूण्टवन्
वेगेन गोपुरद्वारमकंपुक्कान् । २०६

तुम निडर हो कर यहीं रहो। गर्मी तो यहाँ आ ही नहीं सकती। नीच सर्पों का तो निस्सीम नाश होगा आप जैसे अनीचों (सज्जनों) को कोई दुःख न होगा। सहस्राक्ष (इन्द्र) को देखने के कारण तक्षक अग्नि-भय के बिना रह सका। धुएँ के नाक में घुस जाने से व्याकुल होकर वासुकि ने अपनी बहिन से कहा—"हे बहिन ! अब मेरे आसन्नमरणों (मरनेवालों) के से लक्षण उत्पन्न होने लगे हैं। मेरा भाग्यशाली बहनोई मेरा शोक दूर करेगा। उसको मेरे पास भेजो"। भाई की यह बात सुनकर जरत्कारु ने सादर कहा—"हे पुत्र ! तुम्हारे सभी मातुल (मामा) बहुत दुःखित हो गये हैं। क्या तुम्हें नहीं मालूम है ? अगर तुम जाकर सर्पसत्र को नहीं रोकोगे तो आज ही सारा सर्पवंश नष्ट हो जायगा"। १९६-२०४ माता का यह वचन सुनकर अपने मामा से बिदा हो कर (अस्तीक) चले गये। वे याग की विभूति देखकर विस्मित

आक्कुं कटक्करुतिङ्ङ तिन्नॅङ्ङळॅ-
याक्किक्किटक्कुन्नितु नृपतीश्वरन् । २०७
पाक्कं कुरञ्ञोरुनेरं तपोनिधे
कालक्षणं कॉण्टुणर्त्तिच्चु वरां अङ्ङळ् । २०८
ऍन्नि वण्णं द्वारपालन्मार् चॉल्कयाल्
तन्नुळ्ळिलोर्त्तु कलिपच्चितस्तीकनुम् २०९
वन्पुकॉण्टन्यगृहमकंपूवति-
नुम्पर्कोनुं पणि नल्लतनुनयम् । २१०
इत्थं विनिश्चित्य सत्वरमस्तिकन्
पृथ्वीशनॅ स्तुतिचॅय्तुतुटङ्ङिनान् । २११
यज्ञत्तॅयुं मुनीन्द्रन्मारॅयुं पुन-
रग्नियेयुं नृपभृत्यजनत्तॅयुं २१२
ऑक्क वॅव्वेरॅ कनक्कॅ स्तुतिच्चप्पो-
ळुळ्क्कमलं तॅळिञ्ञारवरेवरुम् । २१३
भूपन् सदस्यादिकळोटु चोदिच्चु
तापसबालकन् तेजोनिधि तुलोम् २१४
इन्नु वरुत्तेणमो पुनरॅन्नतु
निङ्ङळ् चॉल्लीटणमॅन्नतु केट्टवर् २१५
नल्लनत्रे कटत्तिक्कॉण्टु पोरिकॅ-
न्नॅल्लावरुमॉरुपोलॅयउियिच्चार् । २१६

हुए और तुरन्त गोपुरद्वार (फाटक) के अन्दर जाने लगे। द्वारपालों ने कहा—"राजा ने हम लोगों का यहाँ इसलिए बैठाया है ताकि कोई यहाँ न आ सके। हे तपोनिधे ! थोड़ी देर ठहरो। एक क्षण में हम सूचना दे कर आ रहे हैं"। उनके इस प्रकार कहने पर अस्तीक मन ही मन सोंचने लगे—'बड़ाई दिखलाकर पराये घर में प्रवेश करना देवराज के लिए भी कठिन है। समझाना ही ठीक होगा'। ऐसा निश्चय करके तुरन्त ही अस्तीक राजा की स्तुति करने लगे। जब उन्होंने यज्ञकी, मुनीन्द्रों की, अग्नि की, राजा के भृत्यों की, सब की अलग-अलग स्तुति की तब भीतर से सब प्रसन्न हुए। २०५-२१३ राजा ने सदस्यादिकों से पूँछा—'यह तापसबालक अवश्य तेजोनिधि है। आज उसको यहाँ बुलाना चाहिए या नहीं यह आप लोग तय करके बतलाइए'। यह सुन कर सब ने एक ही कण्ठ से कहा—'तापस अच्छा प्रतीत होता है। उसको

चॅन्तु कूट्टिक्कॉण्टु पोन्नु मुनीन्द्रनॅ ।
मन्नवन् पाद्यासनार्घ्यादि नल्किनान् । २१७
ऍन्तोन्नभिमतमॅन्नु नरपति
सन्तोषमोटु चोदिच्चोरनन्तरं २१८
अस्तीकनुत्तरं चॉल्लुन्नतिन्मुन्पे
सत्वरं चॉल्लीटिनान् चण्डभार्ग्गवन् । २१९
तक्षकनिग्रहमसाद्ध्यमनपरा-
धाक्षिकर्ण्णन्मारॅक्कॉन्नॅन्तॉरु फलम् २२०
ऍन्तॉरु कारणं तक्षकन् वाराय्वान्
चिन्तिक्क नामॅन्नतु केट्टनन्तरं २२१
चॉन्नार् सदस्यादिकळवनिन्द्रनॅ-
च्चॅन्नाश्रयिच्चानतिनिल्ल संशयम् । २२२
तक्षकन्तन्नॅयुमिन्द्रनॅयुं कूटॅ
तल्क्षणमावाहिच्चु चण्डभार्ग्गवन् । २२३
आदित्यरुद्रवसुप्रमुखन्मारा-
मादितेयन्मारुमाय् वन्नु वासवन् २२४
विष्णुपदत्तिङ्कलाम्मारुरच्चितु
जिष्णुतन्नुत्तरीयं पुक्कु तक्षकन् । २२५
विस्मयं कैक्कॉण्टु चॉन्नान् नृपतियुं
भस्ममाक्कीटुक सेन्द्रमित्तक्षकम् । २२६

आने दीजिए'। द्वारपाल मुनीन्द्र को बुला लाया। राजा ने पाद्य, आसन, अर्घ्य आदि दिया और हर्ष के साथ पूँछा—'आप क्या चाहते हैं?' तदनन्तर अस्तीक के उत्तर देने के पहले ही चण्डभार्गव ने जल्दी से कहा—"तक्षक का निग्रह असाध्य है। निरपराध सर्पों का वध करने से क्या लाभ है? तक्षक के न आने का क्या कारण है? हम लोग जरा सोचें"। यह सुनकर सदस्यों ने कहा—"इस में संदेह नहीं कि वह आश्रय के लिए इन्द्र के पास गया है"। तत्क्षण ही चण्डभार्गव ने तक्षक और इन्द्र का एक साथ आवाहन किया। २१४-२२३ तब आदित्य, रुद्र, वसु आदि देवों के साथ वासव (इन्द्र) पधारे। और विष्णुपद (आकाश) में जैसे स्थिर हो गये। तक्षक जिष्णु (इन्द्र) के उत्तरीय (दुपट्टे) में घुस गया। तब विस्मित होकर राजा ने कहा—'इन्द्र के साथ ही इस तक्षक को भस्म कर दो'। यह सुनकर मुनियों ने कहा—

ऍन्नतु केट्टरुळ्चॅय्तु मुनिकळुम्
मन्नवा नल्कीटुकस्तिकवाञ्छितम् । २२७
सोमश्रवास्साकुमाचार्यनुं द्विज-
कामप्रदानं चॅय्कॅन्नुळ्ळीटिनान् । २२८
चॉल्कभिवाञ्छितमॅन्नान् नृपतियुं
नल्कुवन् वेण्टुन्नतॅन्नु परञ्ञप्पोळ् । २२९
आतुरमानसन्मारां मुनिजनं
मेदिनीपालकनोटु चॉल्लीटिनार् । २३०
भीतिपूण्टिन्द्रनयच्चानरिञ्ञालुं
खेदमियन्नॊरु तक्षकन्तन्नॆयुं २३१
दुष्टाश्रितपरिपालनं नन्नल्ल
शिष्टजनत्तिनॅन्नुं वरुं निर्णयम् । २३२
तक्षकनग्नियिल् वीणु दहिच्चीटु-
मिक्कर्म्मसाद्ध्यवुं वन्नितॅन्नारवर् । २३३
अस्तिकनन्नेरमाशु चॉल्लीटिनान्
पृथ्वीपते वरं नल्कीटुक मम । २३४
चॉल्लीटुकॅन्नुरचॅय्तु नृपतियुम्
चॉल्लिनानस्तिकनुमभिवाञ्छितम् । २३५
ऍङ्किलिप्पन्नगसत्रं मुटक्कणं सङ्कट-
मुण्टु जगद्वासिकळ्क्कॅल्लाम् । २३६

'हे भूपाल ! अस्तीक की इच्छा पूरी करो' । आचार्य सोमश्रवा ने भी कहा—'द्विज के काम की पूर्ति करो' । जब औरों ने कहा कि उसका मांगा दे दो तो राजा ने कहा—'तो फिर कहो क्या चाहते हो' । तब दुःखित मुनिजनों ने मेदिनीपाल (राजा) से कहा—'जान लीजिए कि इन्द्र ने भयभीत हो कर दुःखित तक्षक को भेजा है । इसमें संदेह नहीं कि शिष्टजनों के लिए दुष्टों को आश्रय देना उचित नहीं है । २२४-२३२ तक्षक अग्नि में गिरकर जल जायगा और इस कर्म का लक्ष्य भी सिद्ध हो जायगा' । उस समय आस्तीक ने तुरन्त कहा—'हे भूपाल ! मुझे वर दे दीजिए', राजा ने कहा—'हाँ, कहो क्या है' । तब अस्तीक ने अपनी इच्छा कही । अगर वर देंगे तो इस सर्पसत्र को बन्द करना चाहिए, क्योंकि इससे जगत् के निवासियों को दुःख होता है' । अपने संकल्प के

कल्पितभंगमपेक्षिच्चतु केट्टि-
ट्टप्पोळनुतापमोटु नृपन् चॉन्नान् । २३७
ग्रामधनधान्यरत्नङ्ङळ् नल्कुवन्
काममवट्टिलॅन्तॅन्नतरुळ्चॅय्क । २३८
काममवट्टिङ्क्लेतुमिनिक्किल्ल
भूमीपते ञान् पऱयुन्नतु केळ्क्क । २३९
माताविनुं मम मातुलन्माक्कुंमु-
ळ्ळाधियुं तीर्त्तवर्जीवनं रक्षिक्क । २४०
पन्नगसत्रत्तॅयिन्नु माट्टीटुक
नल्लतल्लाय्किल् प्रपञ्चं मुटिञ्ञुपोम् । २४१
अस्तिकवाञ्छितं नल्कुकॅन्नु गुरु
सत्यपरायणन्मारां मुनिकळुं २४२
मौनानुवादमोटे जनमेजयन्
तानुं मखवरदक्षिणयुं चॅय्तान् । २४३
वह्नियिल् वीळाय्क तक्षकनॅन्नतु-
मन्नेरं मून्नुरु चॉल्लिनानस्तिकन् । २४४
सत्यपरनायॉरस्तिकवाक्किना-
लत्तल् तीर्न्नॉन्नु वीर्त्तीटिनान् तक्षकन् २४५
मट्टुळ्ळ दुष्टनागङ्ङळ् दहिच्चतु-
मट्टमिल्लातोळमुण्टॅन्नते वेण्टू । २४६

भंग की याचना सुनकर राजा ने दुःख के साथ कहा—'मैं ग्राम, धन, धान्य, रत्न सब दूँगा। कहो, इनमें से क्या चाहते हो ?' तब अस्तीक बोले—'इनमें से मैं कुछ भी नहीं चाहता हूँ। हे भूपाल ! सुनो जो मैं कहता हूँ। मेरी माता और मेरे मातुलों का दुःख दूर करो और उनके जीवन की रक्षा करो। अच्छा यही होगा कि यह सर्पसत्र आज ही बन्द किया जाय। नहीं तो सारा प्रपंच समाप्त हो जायगा'। २३३-२४१ तब गुरुजी (यज्ञ के आचार्य) ने और सत्यपरायण मुनियों ने अस्तीक का वाञ्छित पूरा करने के लिये अनुरोध किया। जनमेजय ने मौन हो कर उसे स्वीकार कर लिया और यज्ञ में अच्छी-अच्छी दक्षिणाएँ दीं। अस्तीक ने तीन वार कहा कि तक्षक अग्नि में न गिरे। सत्यसन्ध अस्तीक के वचन से दुःख से मुक्त हो कर तक्षक खुशी से फूल गया। अब इतना ही कहना है कि दुष्ट नागों में से असंख्य जल गये। भूपाल

भूपनवभृथस्नानवुं चॅय्तितु
तापवुं तीर्न्नु जगद्वासिकळ्क्कॅल्लाम् २४७
अस्तिकनॅप्पिन्नॅस्सल्कारवुं चॅय्तु
पृथ्वीपति कनिवुट्टु चॉल्लीटिनान् २४८
अच्युतप्रीतिवरुत्तुवानायिनि-
यश्वमेधं वेणमन्नॅळुन्नळ्ळणम् २४९
ऍन्नु परञ्ञु सुवर्ण्णरत्नादिकळ्
मन्नवन् वेण्टुवोळं कॉट्टुत्तीटिनान् । २५०
कौन्तेयन्माराय पाण्डवन्मारुटॅ
शान्तगुणमॅल्लां चॉल्लावतल्लत्रे । २५१
तल्पुत्रपौत्रनायुण्टायतिन्नुटॅ
सल्बोधमेतुमॉरद्भुतमल्लल्लो । २५२
तल्कुलत्तिङ्कलुण्टाकुन्न मन्नवर्
सल्गुणन्मारन्तिये वरुमाय्रिल्ल । २५३
भक्तिविश्वासङ्ङळ् कण्टु नारायणन्
मुक्तिप्रदनां मुकुन्दन् तिरुवटि २५४
दौत्यसारथ्यादि भृत्यकर्म्मं चॅय्त-
तोर्त्ताल् विचित्रमताक्कुं मट्टुण्टावू । २५५
अस्तिकनित्थं परञ्ञतु केट्टप्पो-
ळुत्तमनां जनमेजयन् चॉल्लिनान् । २५६

ने अवभृथ स्नान किया और जगत् के निवासियों का दुःख समाप्त हुआ। तदनन्तर राजा ने आस्तीक का सत्कार किया और बड़ी कृपा के साथ कहा—"अच्युत की प्रसन्नता के लिए अश्वमेध भी करना है। उसमें आप अवश्य पधारिए"। इतना कह कर राजा ने उनको यथेष्ट सुवर्ण रत्न आदि दे दिया। २४२-२५० कुन्तीपुत्र पाण्डवों के शान्त गुणों का वर्णन करना कठिन है। उसके पुत्र के पौत्र के रूप में जिसका जन्म हुआ है उसके सद्बोध में क्या आश्चर्य करना है? उनके कुल में पैदा हुए भूपाल सद्गुणवाले नहीं तो और क्या हो सकते हैं? उनकी भक्ति और श्रद्धा देखकर मुक्तिप्रद, मुकुन्द, प्रभु नारायण ने उनका दौत्य (दूत बनना) और सारथ्य (सारथी बनना) जैसे भृत्यकर्म किये। यह कितना अद्भुत है। ऐसे कर्म किसके हो सकते हैं? अस्तीक की यह बात सुनकर उत्तम जनमेजय ने कहा—"अगर ऐसा है तो मेरे प्रपितामहों

ऍॅङ्किल् प्रपितामहन्मारुटॅ गुणं
मंगलमाम्मारॅनिक्करियक्कणम् । २५७
केळ्क्कणमॅङ्किल् वेदव्यासनॅन्निम-
ट़ाक्कुं पऱयावतल्लॅन्नु निर्णयम् । २५८
सत्यवतीसुतनोटु चोदिक्कते
स्वस्त्यस्तु सांप्रतमॅन्नॅळुन्नळ्ळिनान् । २५९
मातुलगेहमकंपुक्कितस्तिकन्
वासुकि मुम्पाय नागप्रवरन्मार्
अस्तिकनॅक्कनिञ्ञाश्लेषवुं चॅय्तु
मस्तकत्तिङ्कल् मुकर्न्नु चॉल्लीटिनार् । २६१
सर्प्पकुलत्तॅ रक्षिच्चतु पाक्कुंम्पो-
ळॅत्रयुमद्भुतमॅन्ने पऱयावू । २६२
ऍन्तु भवानॉन्नु ञङ्ङळ् चॅय्येण्टुन्न-
तन्तर्गतमरुळ्चॅय्तालतु तराम् । २६३
चिन्तितमॉन्नुण्टतु पऱयामॅङ्कि-
लन्तरं पिन्नॅ वरातॅयिरिक्कणम् । २६४
संध्याकालत्तिङ्कलॅन्टॅ चरितङ्ङळ्
चिन्तिक्कयुं चॉल्कयुं केळ्क्कयुं चॅय्किलो २६५
पन्नगजातिकळालवक्कर्क्कुंमे
पिन्नॅयॉरु भयं कूटातिरिक्कणम् । २६६

के गुण मुझे सुनाइए ताकि मेरा कल्याण हो जाय"। (अस्तीक ने उत्तर दिया—) 'अगर आपको सुनना है तो निःसन्देह वेदव्यास के अतिरिक्त और कोई कह नहीं सकता, इसलिए आप सत्यवती-पुत्र (वेद-व्यास) से पूँछिए। आपका कल्याण हो।' यह कह कर अस्तीक बिदा हो गये। २५१-२५९ तदनन्तर अस्तीक ने अपने मातुल (मामा) के घर में प्रवेश किया। वासुकि आदि नागप्रमुखों ने प्रेम से अस्तीक का आश्लेष (आलिङ्गन) किया और उनका सिर चूम कर कहा—"आपने सर्पवंश की रक्षा करके बहुत अद्भुत काम किया है। हम और क्या कहें। हम लोग आपकी क्या सेवा करें आप अपने मन की बात कहिए। हम [आपका मनचाहा] देंगे"। (तब आस्तीक ने कहा—) "एक बात मेरे मन में है। वह कहूँगा। पर उसमें कोई अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। संध्या के समय जो मेरे चरित्रों पर ध्यान करें या

ॲन्नस्तिकन् परञ्ञुळ्ळतु केट्टोरु
दन्तशूकोत्तमन्मारुमुरचेय्तु । २६७
इक्कथ चोल्कयुं केळ्क्कयुं चेय्वोर्क्कु
दुःखं वरा विषमोन्नुमकप्पेटा । २६८
अन्धनाय् तङ्ङळिलेकन् कटिक्किलु-
मन्तं भविक्कयिल्लेन्नुं विषमेटो । २६९
ॲन्नुरगन्मार् कोटुत्तु वरङ्ङळुं
नन्नाय् सुखिच्चु वसिच्चारङ्ङालुम् २७०
धर्म्मस्थितिपिळयाते जरत्कारु-
तन्मकन् नागेन्द्रसोदरियाकिय- २७१
निर्म्मलगात्रि जरत्कारु पेट्टुट-
नुण्टाय तापसनस्तिकनेङ्ङळे- २७२
क्कुण्ठततीर्त्तु पालिक्केन्नु चोल्लिया-
लुण्टाकयिल्लोरु सर्प्पभयमव-
र्क्किण्टल् मट्टुळ्ळवयुं वरा निर्ण्णयम् । २७३
आशीविषभयमुण्टाकयिल्लेन्नु-
माशीर्व्वचनवुं चोन्नारुरगन्मार् । २७४
अस्तिकनिङ्ङने नित्यसुखत्तोटु
पुत्रमित्रार्थकळत्रमित्रादियो- २७५

उनका वर्णन करें या उनको सुनें, उनमें किसी को भी सर्प जाति के द्वारा कोई भय नहीं होना चाहिए।" आस्तीक का यह वचन सुनकर नागों ने निवेदन किया—"जो इस कथा को सुनावें या सुनें, उनको दुःख न होगा, उन [के शरीर में] में [सर्पों का] विष न प्रवेश करेगा। यदि हम लोगों में से कोई अन्धा होकर काट भी ले तो भी विष के द्वारा [काटे जानेवाले मनुष्य का] अन्त नहीं होगा। २६०-२६९ जब सर्पों ने इस प्रकार वर प्रदान किया, तो वे आस्तीक अत्यन्त सुखी (प्रसन्न) हो गये। अगर कोई यह प्रार्थना करे कि—'जरत्कारु का पुत्र आस्तीक, जिसे नागेन्द्र की बहिन निर्मल शरीर वाली जरत्कारु ने जन्म दिया, वह धर्म-स्थिति का उल्लंघन न करके और दुःख को दूर करते हुए हमारी रक्षा करे'—तो उसको सर्पों से कोई भय न होगा और निःसन्देह अन्य दुःख भी न होंगे, तथा आशीविषों (सर्पों) से कोई भय पैदा न होगा। सर्पों ने इस प्रकार आशीष दी। इस प्रकार आस्तीक स्थायी सुख के

ट्टुत्तमकीर्त्या वसिच्चु चिरकालं
मुक्तियुं वन्नु पुनरेन्नरिञ्ञालुम् । २७६
आस्तिकमाकिय पुण्यकथ नित्य-
मास्तिक्यमोटु चॊन्नालुं गतिवरुम् । २७७
उग्रश्रवस्साय सूतवाक्यं केट्टु
भृग्वपत्यादिकळ् पिन्नेयुं चोदिच्चु । २७८
पन्नगसत्रे जनमेजयनाय
मन्नवनोटु महामुनि चॊल्लिय- २७९
भारतं कृष्णकथामृतपूरितं
पारातॆ ञङ्ङळोटॊक्कप्परकेन्नु २८०
पारं प्रशंसिच्चु सूतनॆ वर्णिच्चु
पारमार्थ्यात्मना चोदिच्चतुनेरं २८१
सूतनुमादरवोटु चॊल्लीटिनान् ।
मेदिनीकान्तन् जनमेजयनृपन् २८२
वेदव्यासन्मुनितन्नोटु चॊल्लिनान्
पादपद्मं नमस्ते नमस्ते सदा । २८३
मुन्नं पितामहन्मार् मम पाण्डवर्
पुण्यपुरुषन्मार् पूर्णगुणवान्मार् २८४
विश्वैकनाथनां विष्णुभगवानॆ
विश्वासभक्त्या समाराधनं चेय्तु २८५

साथ अपने पुत्र, मित्र, अर्थ (धन), कलत्र (स्त्री) के संग उत्तम कीर्ति पाकर चिरकाल तक रहे। जान जीजिए कि उन्होंने मुक्ति भी प्राप्त की। जो आस्तीक की इस पुण्यकथा को आस्तिक्य (श्रद्धा) के साथ सुनावेंगे उनको अच्छी गति प्राप्त होगी। २७१-२७७ सूत उग्रश्रवा का वचन सुनकर भृगु के अपत्यों (पुत्रों) ने फिर पूँछा—कि सर्पसत्र के अवसर पर महामुनि (वैशम्पायन) ने राजा जनमेजय से कृष्णकथा से भरा हुआ जो महाभारत कहा था उसे विना विलम्ब के हमें सुना दीजिए। जब उन्होंने सच्चे हृदय से सूत जी की प्रशंसा करके पूँछा तब उन्होंने सादर निवेदन किया। पृथ्वी के स्वामी राजा जनमेजय ने महामुनि वेदव्यास जी से निवेदन किया, "आप के चरणकमलों को सदैव प्रणाम हो। २७८-२८३ अतीत में मेरे पितामह पाण्डवों ने, जो पुण्यपुरुष और पूर्णगुणवाले थे, श्रद्धा और भक्ति के साथ भगवान् विश्वैकनाथ विष्णु

विश्वपवित्रयां कीर्त्ति परत्तिनार् ।
विश्वमॆल्जाटवुमॆन्नालवरुटॆ २८६
सल्कथयॆल्लामरुळ्चॆय्तु कॆळ्क्कणम् ।
दुःखमकलुवानॆन्नतु कॆट्टॊरु २८७
विष्णुकलाभूतन् कृष्णद्वैपायनन्
कृष्णकथामृतमिश्रमां भारतं २८८
तात्पर्यवानां जनमेजयनॊ नी
कॆळ्प्पिक्कयॆन्नु वैशम्पायननोटु २८९
कारुण्यपूर्व्वं नियोगिच्चिरुन्नोरु
नेरं तॊळुतु वैशम्पायनमुनि २९०
आचार्यनाकिय वेदव्यासन्पद-
माशये चेर्त्तु समाधियुरप्पिच्चु । २९१
नारायणनॆयुं पिन्नॆ नरनेयुं
भारतियां वर्ण्णगात्रियॆत्तन्नॆयुं २९२
सादरमुळ्ळिल् सचराचरं जग-
द्वेदवेदांगवेदान्तादिविद्ययुं २९३
चेतसि चेर्त्तुणर्न्नैक्यभावत्तोटु-
मादिये चॊल्लिनानॆन्नितु सूतनुं
मोदेन चॊन्नाळिति किळिप्पैतलुम् । २९४

॥ आस्तिकं समाप्तम् ॥

का आराधन किया और अपनी पवित्र कीर्ति को फैलाया। अतएव दुःख दूर करने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि पृथिवी के सभी स्थानों पर उनकी सत्कथा सुनाई जाय। यह सुनकर विष्णु की कला का स्वरूप कृष्णद्वैपायन ने बड़े कारुण्य (कृपा) के साथ वैशम्पायन को आज्ञा दी कि तुम प्रेममूर्ति जनमेजय को कृष्णकथा-मिश्रित महाभारत सुनाओ। उस समय वैशम्पायन प्रणाम करके और आचार्य वेदव्यास के चरणों को घ्यान करके योगसमाधि में प्रविष्ट हुए। और नारायण को, और नर को, वर्णगात्री (अक्षरों से निर्मित शरीर वाली) भारती (सरस्वती देवी) को, सचराचर जगत् को, और वेद, वेदांग और वेदान्त आदि विद्याओं को अपने मन में संग्रह करके, चैतन्य होकर, अद्वैत की भावना के साथ, प्रारंभ से उन्होंने सब कहा। सूतजी ने ऐसा निवेदन किया। और शुककन्या ने प्रमोद के साथ यही सुनाया। २८४-२९४

॥ आस्तीकपर्व समाप्त ॥

संभवम्

श्रीराम ! राम ! राम ! गोविन्द ! शिवराम !
श्रीमहादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण । १
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नमः । २
पारतिलोरोतरमुळ्ळ जन्तुक्कळायि-
प्पारमुळ्ळल्लपूण्टु जनिच्चु मरिप्पतुं ३
पाराते माट्टिक्कोळ्वानेन्तोरु कळिवय्यो !
पारीरेळिनुं मूलमाकिय देवदेव ! ४
भारतमाय कथ केळ्क्कयुं चॊल्लुकयुं
पारं नन्नेन्नु गुरुवरुळिच्चेय्तु केळ्प्पू । ५
पाराते पऱयणमतु नी किळिप्पेण्णे
भारमिल्लेतुं निनक्कॊप्पेरुं पाठमल्लो । ६
भारतीदेवियेन्टे नाविन्मेल् विळङ्ङकिल्
पाराशर्यानुग्रहं कॊण्टुञान् चॊल्लीटुवन् । ७
भारतमॊट्टुङ्ङातोन्नाकिय कथयल्लो ।
पारमाग्रहमेङ्किल् चुरुक्किक्कपऱञ्ञीटां ८
केळ्क्कणमल्लो महाभारतमितिहासम्
पोक्कणं दुरितङ्ङळॆप्पेरुमितिनाले । ९

सम्भवपर्वम्

हे श्रीराम ! राम ! राम ! गोविन्द ! शिवराम ! हे महादेव ! कृष्ण ! मुकुन्द ! नारायण ! नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमो, नारायणाय नमः । चौदहों लोकों का मूलकारण हे देवदेव ! इस जगत् में जो तरह-तरह के जन्तु आभ्यन्तर (भीतरी) दुःखों के साथ जन्म लेते हैं और मरते हैं, हे हन्त ! उसको तुरन्त रोकने के लिए क्या उपाय हैं ? मैंने गुरु के मुँह से यह सुना है कि महाभारत की कथा सुनाना और सुनना अच्छा उपाय है। इसलिए हे शुककन्ये ! तुम उसे जल्दी सुनाओ । तुम्हारे लिए यह बोझ नहीं होगा । तुम्हें तो सदैव कण्ठस्थ है । अगर देवी भारती मेरी जीभ पर विराजेगी तो पाराशर्य (वेदव्यास) के अनुग्रह से मैं कहूँगा । १-७ महाभारत तो एक अनन्त कथा है । अगर प्रबल इच्छा हो तो संक्षेप में कहूँगा, क्योंकि महाभारत इतिहास सुनने योग्य है ।

मोक्षसाधनङ्ङळिल् मुन्पितिनेन्नुतन्नॆ
साक्षाल् श्रीकृष्णन् परमाचार्यनरुळ्चॆय्तु । १०
वेदव्यासोक्तमाय वेदान्तसारार्थं नी—
यादिये केळ्प्पिक्कणमानन्दं वरुवानाय् । ११
आदिये केळ्प्पिनॆङ्किल् भारतमाय कथ
मोदेन परञ्ञीटामादिनायकलील । १२
गुरुवुं गणेशनुं वाणियुं मुकुन्दनुं
गुरुकारुण्यत्ताले तुणय्क वन्दिक्कुन्नेन् । १३
करुणाचित्तन्मारां धरणीसुरवृन्द-
चरणांबुरुहत्तॆश्शरणं प्रापिक्कुन्नेन् । १४
वसिष्ठात्मजसुतपुत्रनन्दनन्तानुं
वसिच्चीटणमुळ्ळिल् वाल्मीकिमुनीन्द्रनुं १५
रसिच्चीटणमितु केट्टु भक्तन्मार् परि-
हसिच्चीटुकिलतुं दुरितविनाशनम् । १६
भगवद्भक्तन्म्यारॆक्कॊण्टुळ्ळ चरितवुं
भगवच्चरितवुं तल्गुणनामङ्ङळुं १७
परञ्ञुं केट्टु मुळ्ळिल् ध्यानिच्चुमुळ्ळ कालं
परमानन्दं पूण्टु कळिच्चु कॊळ्क नल्लू ।१८
भारतमतिल् चॊल्लातुळ्ळॊरु कथकळो
पारातॆ निरूपिक्किलॆत्रयं कुरञ्ञीटुम् । १९

इसके द्वारा पापों को दूर करना है। साक्षात् श्रीकृष्ण ने कहा है कि मोक्ष-साधनों में सबसे पहला यही है। वेदव्यासजी का कहा बेदान्त का सार तुम प्रारम्भ से ही सुनाओ ताकि हमें आनन्द प्राप्त हो जाय। भारत की कथा प्रारम्भ से ही सुन लीजिए। मैं प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ आदिनायक की लीला सुनाऊँगा। ८-१२ गुरु, गणेश, वाणी और मुकुन्द बड़े कारुण्य (कृपा) के साथ मेरी सहायता करें, हाथ जोड़ता हूँ। करुणामय ब्राह्मणवृन्द के चरणसरोज ही मेरे लिए शरणदाता हैं। वसिष्ठजी के प्रपौत्र के पुत्र और मुनीन्द्र वाल्मीकि मेरे भीतर निवास करें! और सभी भक्त इसे सुनकर इसका अनुभव करें। अगर कोई हँसी उड़ावे तो भी पापनाशक होगी। भगवान् के भक्तों के चरित, भगवान् के चरित, उनके गुण और नाम सुनाते, सुनते और ध्यान करते हुए परमानन्द अनुभव करते हुए समय बिताना सबसे अच्छा है। १३-१८ विचार

अक्कथयॊक्कच्चॊल्वानुळ्क्काम्पिल् निरूपिक्कल्
मुख्यनां वेदव्यासन्तानॊळिञ्ञारुमिल्ल । २०
अञ्चितमाय महाभारतमितिहास-
मञ्चामतॊरुवेदमॆन्नत्रे चॊल्ली मुनि । २१
अङ्ङनॆयिरिप्पॊरु भारतकथयिप्पो-
ळिङ्ङनॆ चॊल्वानुळ्ळिल् नाणमाकुन्नितय्यो । २२
ऎन्नालुमवरवर्क्करिवान्तक्कवण्णं
नन्नायिप्परकॆन्नुवन्नीटुमरिञ्ञवर् । २३
ऎङ्किलो केट्टुकॊळ्विन् दोषङ्ङळॊक्क मऱ-
च्चॆङ्कलुळ्ळॊरु गुणं ग्रहिच्चुकॊळ्विन् निङ्ङळ् । २४

रोमवंशराजोल्पत्ति

जनमेजयनृपन् तन्नुटॆ यागत्तिङ्कल्
मुनिनायकन् बेदव्यासनुमॆळुन्नळ्ळि । १
अन्नेरं पैतामहन्मार् गुणं केट्टमूलं
मन्नवनपेक्षिच्चु भारतकथ केळ्प्पान् । २
वैशद्यमोटुमिवन्तन्नॆ नी केळ्प्पिक्कॆन्नु
वैशम्पायननोटु वेदव्यासनुं चॊन्नान् । ३

करो तो बहुत ही कम ऐसी कथाएँ मिलेंगी जो महाभारत में न कही गयी हों। और विचार किया जाय तो महामुनि वेदव्यास के अतिरिक्त वहाँ की सारी कथाएँ सुनानेवाला और कोई नहीं है। मुनिजी (वेदव्यास) ने कहा है कि यह शोभन इतिहास महाभारत पाँचवाँ वेद ही है। ऐसी महाभारत की कथा को इस प्रकार (संक्षेप में) कहने में मुझे अपने मन के भीतर लज्जा प्रतीत होती है। फिर भी जाननेवाले इतना ही कर सकते हैं कि कथा ऐसे सुनाना कि सब अपने-अपने ढंग से समझें। इसलिए सुन लीजिए और दोषों को त्याग करके मुझ में जो गुण हों उनको ग्रहण कर लीजिए। २४

चन्द्रवंश के राजाओं की उत्पत्ति

राजा जनमेजय के याग में मुनियों में श्रेष्ठ वेदव्यासजी पधारे। तब अपने पितामहों (परबाबाओं) के गुण सुनने के लिए राजा ने उनसे भारतकथा सुनाने की प्रार्थना की। वेदव्यासजी ने वैशम्पायन से कहा "तुम ही इनको विशदरूप से सुनाओ"। तब विशिष्ट योग्यता वाले मुनि

वैशिष्ट्ययुळ्ळ मुनि वन्दिच्चु नृपनोटु-
संशयं तीरुं वण्णं संक्षेपिच्चरियिच्चु । ४
विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटणमेन्नु नृपन्
चित्तकौतुकत्तोटु पिन्नेयुं चोदिच्चप्पोळ् ५
सत्यज्ञानानन्तानन्दात्मकपरब्रह्म-
तत्त्वज्ञानाय वैशम्पायननरुळ्चेय्तु । ६
धाताविन् मकनाय दक्षनु मकळराय्
चेतोहारिणिकळायरुपतुण्टायतिल्
अदिति पेट्टुण्टायि सूर्यनेन्नरिञ्ञालुम् । ७
अवनु मकन् मनुववन्टे मकनिळन्
अवनुमोरु पेण्णाय् चमञ्ञु विधिवशाल् ८
मुन्पिनाल् विरिञ्चन् तन् पुत्रनामत्रिकण्णिल्
संभविच्चितु चन्द्रनवन्टे मकन् बुधन् । ९
इळयाय् चमञ्ञुळ्ळोरिळनेक्कण्टमूल-
मिळकी बुधनुटे मानसमतुकालम् । १०
इळ पट्टुण्टाय्वन्नु चोल्लेळुं पुरूरवा-
विळये वळिपोले रक्षिच्चानवन् मुन्नम् । ११
अवनुमकनायुस्साकिय नृपवर-
नवनीभरणं चेय्तिरुन्नान् चिरकालम् । १२
नहुषनाय नृपतीश्वरनवन्मकन्
नहुषन्तन्टे मकनायतु ययातियुम् । १३

(वैशम्पायन) ने हाथ जोड़कर राजा का संदेह दूर करने के लिए संक्षेप में सुनाया। जब राजा ने फिर विस्तार से सुनाने के लिये कुतूहल से प्रार्थना की तब सत्यज्ञानानन्दात्मक (सत्य ज्ञान तथा अनन्त आनन्द स्वरूप) परब्रह्म को जाननेवाले वैशम्पायन ने कहा। ६ जान लीजिए कि धाता के पुत्र दक्ष की साठ मनोहारिणी पुत्रियाँ हुईं। उनमें से अदिति ने सूर्य को जन्म दिया। उसका पुत्र मनु और उसका पुत्र इल जो विधिवश एक कन्या बन गया। पहले ही ब्रह्मा के पुत्र अत्रिकण (अत्रि ऋषि) का पुत्र चन्द्र पैदा हुआ और उसका पुत्र बुध। जब बुध ने इल को देखा जो इला हो गया था तब उसके मन में विकार होने लगा। इला ने (चन्द्रवंश में) विख्यात (राजा) पुरूरवा को जन्म दिया जिसने इला का यथोचित पालन किया। उसके पुत्र नृपवर आयु ने चिरकाल

पारिटं परिपालिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल्
नारिमारिरुवरे वेट्टितु ययातियुम् । १४
दितिजाचार्यनाय शुक्रमामुनियुटे
सुतयायिटुं देवयानिये वेट्टु मुम्पिल् १५
दितिजाधिपनाय वृषपर्व्वाविन्मक-
ळतिसुन्दररियाय शर्म्मिष्ठ रण्टामवळ् १६
अतुरण्टिलुमायिट्टञ्चु पुत्रन्मारुण्टाय्
यदुवुं तुर्व्वशुवुं देवयानिक्कु मक्कळ् १७
शर्म्मिष्ठात्मजन् द्रुह्यु रण्टामतनुद्रुह्यु
धर्म्मिष्ठनाय पूरुवायतु मून्नामवन् । १८
यदुविन् परम्पर यादवन्माराय् वन्नु
पितृशापत्तालिल्लातायितु नृपचिह्नम् । १९
पूरुविन् परम्पराजातन्मार् पौरवन्मार्
पूरुविन् भार्य्यक्कन्नु कौसल्ययेन्नु नामम् । २०
अवळ् पेट्टुळ्ळ जनमेजयनेन्न नृप—
नवन्टे पत्निक्कु पेरनन्तयेन्नाकुन्नु । २१
प्राचिन्वानेन्न नृपनवळ् पेट्टुण्टायतु
प्राचियां दिक्कु जयिच्चतिनालेन्नु नामम् । २२
अवन् तन्नुटे पत्नियश्मकियल्लो केळ्प्पि-
नवळ् पेट्टुण्टायितु शय्यातियेन्न नृपन् । २३

तक पृथिवी का पालन किया। १२ उसका पुत्र था राजा नहुष और नहुष का पुत्र हुआ ययाति। जब ययाति पृथिवी का राज कर रहा था तब उसने दो स्त्रियों से विवाह किया। पहले दैत्यों के आचार्य महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी से विवाह किया। और उसकी दूसरी स्त्री हुई दैत्यों के राजा वृषपर्वा की पुत्री अतिसुन्दरी शर्मिष्ठा। इन दोनों स्त्रियों से पाँच पुत्र पैदा हुए। यदु और तुर्वशु देवयानी के पुत्र हुए और शर्मिष्ठा का पहला पुत्र था द्रुह्यु, दूसरा अनुद्रुह्यु और तीसरा पुत्र हुआ धर्मिष्ठ पुरु। यदु के वंशज यादव कहलाते हैं और पिता के शाप के कारण उसके नृपचिह्न नष्ट हुए। १९ पुरु के वंशज पौरव कहलाते हैं। पुरु की पत्नी का नाम कौसल्या। उसके पुत्र राजा जनमेजय की पत्नी का नाम था अनन्ता। प्राची दिक् को जीतने के कारण उसके पुत्र का नाम प्राचिन्वान् हुआ।

शय्याति रुशन्तुविन् नन्दन वरांगियां
मय्यल्क्कण्णाळे विवाहं चेय्तु वाळुंकालं २४
अवळ् पेट्टहंपतियेन्नोरु नृपनुण्टा-
यवनुं कृतवीर्यतनयतन्ने वेट्टान् । २५
अवळ्क्कु नामं भानुमतियेन्नाकुन्नितु-
मवळ् पेट्टुळ्ळ सार्व्वभौमनां नरपति । २६
अवन्टे पत्नी वसुन्धर केकयपुत्रि-
यवळ् पेट्टुण्टायितु चोल्लेळुं जयसेनन् । २७
तल्पत्नि सुषुप्तयां विदर्भात्मजयल्लो
तल्पुत्रनरचिनन् तल्पत्नि मर्यादयुम् । २८
अवळ्पेट्टुळ्ळू महाभौमनां नरपति-
यवनेप्पोले परिपालनं चेय्तीलारुम् । २९
चोल्लेळुं प्रसेनजिल्प्पुत्रियां सुमन्त्रये
नल्लनां महाभौमन् वेट्टितु विधियाले । ३०
नयशौर्योपायादि सकलगुणङ्ङळो-
टयुतनाय नृपनवळ् पेट्टुण्टायवन्नान् । ३१
तल्पत्नी पृथुश्रवाविन्मकळ् भासयल्लो
तल्पुत्रनक्रोधननाक्रिय महीपति । ३२
तल्पत्नी करण्टुवां कलिंगात्मजयल्लो
तल्पुत्रन् देवातिथि देवनायकसमन् । ३३

सुन लीजिए कि उसकी पत्नी का नाम था अश्मकी जिसने शय्याति नामक पुत्र को जन्म दिया। शय्याति ने रुशन्तु की वरांगी सुन्दरी कन्या के साथ विवाह किया। उसने राजा अहंपति को जन्म दिया जिसने कृतवीर्य की लड़की से विवाह किया। उसका नाम था भानुमती और उसने नरपति सार्वभौम को जन्म दिया। २६ उसकी पत्नी केकयपुत्री वसुन्धरा थी जिसका पुत्र था विख्यात जयसेन। उसकी पत्नी विदर्भ की कन्या सुषुप्ता और उसका पुत्र अरचिन जिसकी पत्नी थी मर्यादा। उसने भूपाल महाभौम को जन्म दिया जिसके समान किसी ने भी प्रजा का परिपालन नहीं किया। अच्छे राजा महाभौम ने प्रसिद्ध प्रसेनजित् की पुत्री सुमन्त्रा से विधिवत् विवाह किया। उसने राजा अयुत को जन्म दिया जो नय, शौर्य, उपाय आदि सभी गुणों से अलंकृत था। उसकी पत्नी थी पृथुश्रवा की पुत्री भासा जिसका पुत्र था महीपति अक्रोधन।

तत्पत्नी विदेहन्तन् पुत्रियां मर्यादयुं
तत्पुत्रन् नृपनंगभूपतिपुत्रनल्लो । ३४
तत्पत्नी वामदेवी तत्पुत्रनृक्षनृपन्
तत्पत्नी वललयां तक्षकपुत्रियल्लो । ३५
तत्पुत्रनन्तिनारन् तत्पत्नी सरस्वति
तत्पुत्रन् त्रस्नुनृपन् तत्पत्नी काळिन्दियुम् । ३६
तत्पुत्रन् निलीलनु तत्पत्नी रथन्तरी
तत्पुत्रन्मारञ्चुपेर् दुष्षन्तादिकळल्लो । ३७
विश्वामित्रन्टे मकळाकिय शकुन्तळ
दुष्षन्तमहीपतितन्नुटे कान्तयायाळ् । ३८
अवळ्पेट्टुण्टायतु भरतनेन्न नृपन्
अवन्टे पारम्पर्यं भारतमाकुन्नतु । ३९
काशेयियाय सर्व्वसेनियां सुनन्दये-
याशया विवाहं चेय्तीटिनान् भरतनु । ४०
अवनु भूमन्युवेन्नुण्टायानोरु सुत-
नवनुं दाशार्हन्टे मकळां सुवर्ण्णये ४१
वेट्टितु सुहोत्रनेन्नुण्टायि तनयनुम् ।
वेट्टितु जयन्तियामैक्ष्वाकितन्नेयवर् ४२

उसकी पत्नी थी कलिंगराज की पुत्री करण्टु और उसका पुत्र था इन्द्र के तुल्य देवातिथि। उसकी पत्नी थी विदेहराज की पुत्री मर्यादा जिसका पुत्र राजा था और (वह था) अंगराजा का पुत्र। ३४ उसकी पत्नी वामदेवी जिसका पुत्र राजा ऋक्ष। उसकी पत्नी तक्षक की पुत्री वलला थी। उसका पुत्र था अन्तिनार जिसकी पत्नी थी सरस्वती। उसका पुत्र था नृप त्रस्नु जिसकी पत्नी थी कालिन्दी। उसका पुत्र था निलील जिसकी पत्नी थी रथन्तरी। उसके दुष्षन्त आदि पाँच पुत्र थे। विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला राजा दुष्षन्त की कान्ता (पत्नी) हुई। उसने भरत नामक भूपति को जन्म दिया जिसके वंश ही को भारत कहते हैं। भरत ने काशिराज सर्वसेन की पुत्री सुनन्दा के साथ प्रेम से विवाह किया। उसका सुमन्यु नामक पुत्र पैदा हुआ जिसने दाशार्ह की कन्या सुवर्णा से विवाह किया। उसका पुत्र हुआ सुहोत्र। उसने इक्ष्वाकु की पुत्री जयन्ती से विवाह किया जिसका एक पुत्र विख्यात और उत्तमकीर्ति

हस्तियां नरपति पुत्रनायुण्टाय्वन्नि-
तेत्रयुं प्रसिद्धनायुत्तमकीर्तियोटे । ४३
हस्तितान् निर्म्मिच्चोरु पुरमायतुमूलं
हस्तिनपुरमेन्नु चोल्लुन्नितरिञ्ञालुम् । ४४
हस्तिनमेन्नु चोल्वान् तोन्नियतेन्नाकिलुं
शास्त्रिकळ् चोल्लीटुन्नु हास्तिनमेन्नुतन्ने । ४५
हस्तियुं त्रिगर्त्तन्टे मकळे वेट्टुकोण्टा-
ना स्त्रीरत्नत्तिनु पेरायतु यशोधर । ४६
अवळुं विकञ्जननेन्नोरुवनेप्पेट्टा-
ळवनुं दाशार्हन्टे मकळां सुनन्दये । ४७
वेट्टितन्नवळ् पेट्टिट्टुण्टायानजमीढन् ।
वेट्टितु नारिमारेक्कनिवोटञ्चुपेरे ४८
कैकेयी नाग पिन्ने गान्धारी विमलयुं
माळ्काते रागंतेटुमृक्षयुं क्रमत्ताले । ४९
चतुर्व्विंशतिसुतशतमुण्टायितव-
नतिनाल् पल वंशमुण्टायि नृपन्मारुम् । ५०
अविटे वंशकर्त्तावायतु संवरण-
नवनुमादित्यन्टे मकळां तपतिये ५१
वसिष्ठनियोगत्ताल् वेट्टितु सुखत्तोटे
वसिक्कुं नाळिल् कुरुवाकिय सुतनुण्टाय् । ५२

वाला हस्तिन् हुआ। हस्तिन् द्वारा निर्मित होने के कारण जान लीजिए, उसकी राजधानी का हस्तिनपुर नाम हुआ। यद्यपि उसे हस्तिन कहना चाहिए तथापि शास्त्री लोग उसे हास्तिन कहते हैं। हस्ती ने त्रिगर्त की पुत्री को ब्याहा। उस स्त्रीरत्न का नाम था यशोधरा। उसने विकञ्जन को जन्म दिया। उसने दाशार्ह की पुत्री सुनन्दा को ब्याहा जिसने अजमीढ को जन्म दिया। उसने प्रेम से पाँच कन्याओं के साथ विवाह किया जिनके क्रम से ये नाम हैं—कैकेयी, नागा, गान्धारी, विमला और अक्षीण शोभावाली ऋक्षा। उनके चौबीस सौ पुत्र हुए। अतएव अनेक राजवंश भी हुए। ५० एक वंश का कर्ता था संवरण। उसने आदित्य (सूर्य) की लड़की तपती के साथ वसिष्ठ जी की आज्ञा से विवाह किया। जब वे सुख से रह रहे थे तब उनके कुरु नामक पुत्र पैदा हुआ। उस कुरु के ही कारण उसके वंश में उत्पन्न गौरव गुणवाले राजाओं को कौरव

गौरवगुणं तेट्टुं तत्कुलजातन्मारे-
क्कौरवन्मारेन्नवन्मूलमाय् चोल्लीटुन्न । ५३
दाशार्हन्तन्टे मकळाकिय शुभांगिये-
याशया वेट्टु कुरु तत्सुतन् विदूरथन् ५४
तत्पत्नी मागधन्तन् पुत्रियाममृताख्य
तत्पुत्रन् परीक्षित्तु तत्पत्नी सुरूपयुं ५५
तत्पुत्रन् भीमसेननाकिय नृपश्रेष्ठन्
तत्पत्नी सुकुमारियाय कैकेयियल्लो । ५६
अवळ्क्कु सत्यश्रवावेन्नोरु मकनुण्टा-
यवने प्रतीपनेन्नेल्लारुं चोल्लीटुन्नु । ५७
तत्पत्नी सुनन्दयां शिबिनन्दनयल्लो
तत्पुत्रन्माराय् मूवरुण्टायितग्निपोले ५८
देवापि पुनरथ शन्तनु बाह्लीकनुम् ।
देवापि वनवासं तुटङ्ङि चेन्नियन्ने । ५९
सोमवंशवुं मेलिलवनालुण्टाय्वरुम् ।
भूमिये रक्षिच्चतु शन्तनु महीपति ६०
अवन्टे पत्नियायि वन्नितु भागीरथि-
यवळ् पेट्टुळ्ळू देवव्रतनेन्नरिञ्ञालुम् ६१
कामिच्चु वलञ्ञितु शन्तनु काळियेन्न
कामिनियाय दाशनारियेक्कण्टमूलम् । ६२

कहते हैं। कुरु ने दाशार्ह की लड़की शुभांगी को प्रेम से ब्याहा। उसका पुत्र था विदूरथ। उसकी पत्नी हुई मागध की लड़की अमृता उसका पुत्र हुआ परीक्षित् जिसकी पत्नी थी सुरूपा। उसका पुत्र हुआ नृपवर भीमसेन जिसकी पत्नी थी सुकुमारी कैकयी। उसका सत्यश्रवा नाम पुत्र पैदा हुआ जिसे सब लोग प्रतीप कहते हैं। ५७ शिबि की पुत्री सुनन्दा उसकी पत्नी थी। उसके तीन पुत्र हुए अग्निसमान—देवापि, शन्तनु और बाल्हीक। देवापि ने बाल्यावस्था में ही वनवास प्रारंभ किया। आगे चलकर उसी से चन्द्रवंश भी प्रारंभ होगा। राजा शन्तनु ने पृथ्वी का परिपालन किया। भागीरथी उसकी पत्नी हुई जिसने देवव्रत को जन्म दिया। शन्तनु काली नामक कामिनी दास-कन्या (मल्लाह की पुत्री) को देखकर काम से परेशान हुआ। यही कारण है कि देवव्रत ने राज्य को त्याग दिया। फिर उस बुद्धिशाली ने ब्रह्मचर्य को

अतिनाल् देवव्रतन् राज्यवुमुपेक्षिच्चु
मतिमान् ब्रह्मचर्यं प्रापिच्चु कैवर्त्तनो- ६३
टवळ्टे वाङ्ङिङ्त्तन्टे तातनु नल्कीटिनान् ।
अवने भीष्मरेन्नु चोल्लुन्नु महाजनम् । ६४
अवळ् वेळ्क्कुं मुम्पे पुल्किनान् पराशर-
नवळिल् वेदव्यासनुण्टायितन्नु तन्ने । ६५
पिन्ने शन्तनुजन्मारायिवळ् पेट्टुण्टायार्
मन्नवन् चित्रांगदन् विचित्रवीर्यन्तानुम् । ६६
शन्तनुविन्टे कालं कळिञ्ञोरनन्तरं
शन्तनुपुत्रन् चित्रांगदनाय्वन्नु राज्यम् । ६७
उग्रनां चित्रांगदनाकिय गन्धर्व्वेन्द्रन्
निग्रहिच्चितु चित्रांगदनां नृपेन्द्रने । ६८
सत्वरं बालकनां विचित्रवीर्यन्तन्ने
पृथ्वीवल्लभनाक्कि वाळिच्चु गंगादत्तन्, ६९
कम्बुकण्ठिकळाय काशिराजात्मजमा-
रंबिकतानुमंबालिकयुमवन्तन्टे ७०
वल्लभमारायवन्नु मरिच्चु नृपतियुम् ।
अल्लल् पूण्टितु राज्यवासिकळतु मूलं ७१
सन्ततियिल्लाञ्ञाशु दुःखिच्चु सत्यवति
चिन्तिच्चु वेदव्यासनाकिय मुनीन्द्रने । ७२

अपना कर कैवर्त (मल्लाह) को समझाकर उसकी पुत्री लेकर अपने पिता को दे दिया। इसीलिए महाजन उसको भीष्म कहते हैं। ६४ काली के विवाह के पहले पराशर ने उससे प्रेम किया था। और उससे वेदव्यासजी पैदा हुए। विवाह के बाद उसके शन्तनु से दो पुत्र पैदा हुए राजा चित्रांगद और राजा विचित्रवीर्य। शन्तनु का काल समाप्त होने पर राज्य उसके पुत्र चित्रांगद के हाथ में आया। उग्र प्रकृति के चित्रांगद नामक गन्धर्वेन्द्र ने राजा चित्रांगद का निग्रह किया। तुरन्त ही गंगादत्त (भीष्म) ने बालक विचित्रवीर्य को पृथ्वीपति बनाकर उससे राज कराया। काशिराज़ की सुन्दरी पुत्रियाँ अम्बिका और अम्बालिका उनकी पत्नियाँ हुईं। तदनन्तर राजा की मृत्यु हुई। जिसके फलस्वरूप राज्य के निवासी बहुत दुःखित हुए। ७१ (विचित्रवीर्य के सन्तान न होने के कारण) सत्यवती दुःखित हुई और उन्होंने मुनीन्द्र वेदव्यास का ध्यान

माताविन्मतमरिञ्ञीटिन मुनिवरन्
भ्राताविन् कळत्रत्तिल् सन्ततियुण्टाक्किनान् । ७३
चॊल्लॆंळु धृतराष्ट्रनंबिक पॆट्टुण्टायि
नल्लयामंबालिकय्क्कुण्टायि पाण्डुतानुम् । ७४
ज्ञानियां विदुररुमुण्टायि शूद्रितन्निल्
सानन्दं धार्त्तराष्ट्रन्माराय् नूट्टॊन्नुण्टायि ७५
पाण्डुविनञ्चु मक्कळ् धर्म्मजादिकळल्लो
पाण्डवन्मारैवक्कुं पत्नि पांचालितानुं । ७६
अवळ् पॆट्टञ्चु मक्कळैवक्कुं कूटियुण्टा-
यवर्कळुटॆ नामं वॆव्वेरॆ चॊल्लामल्लो । ७७
प्रतिविन्ध्यनुं सुतसोमनुं श्रुतसेनन्
मतिमान् शतानीकन् श्रुतकर्म्मावुतानुं । ७८
पिन्नॆयुं वेरॊयॊन्नु वेट्टितु युधिष्ठिरन्
कन्यक शैब्यपुत्रि देवकियॆन्नवळॆ । ७९
यौधेयनॆन्न मकनुण्टायानवळ् पॆट्टु ।
वातजन् वाराणसि पुक्कु काशीशन्तन्टॆ ८०
मकळां बलधरतन्नॆयुं वेट्टु पिन्नॆ
मकनाय् शर्म्मत्रातनुण्टायानवळ् पॆट्टु । ८१
फल्गुनन् द्वारवतिपुक्कुटन् सुभद्रयॆ-
क्कैक्कॊण्टु पोन्नानवळ्पॆट्टभिमन्युवुण्टाय् । ८२

किया। मुनिवर ने माता का उद्देश्य समझकर अपने भाई के कलत्र (स्त्रियों) में सन्तति पैदा की। अंबिका ने विख्यात धृतराष्ट्र को जन्म दिया। साध्वी अंबालिका का पाण्डु नामक पुत्र हुआ। ज्ञानी विदुर भी शूद्री में पैदा हुआ। धृतराष्ट्र के एक सौ एक पुत्र सुख से हुए और पान्डु के धर्मपुत्र आदि पाँच पुत्र हुए। उन पाँचों पाण्डवों की पत्नी पांचाली थी। उसने पाँच पुत्रों को जन्म दिया जो पाँचों (पतियों के) थे। उनके नाम सुना रहा हूँ। ७७ प्रतिविन्ध्य, सुतसोम, श्रुतसेन, बुद्धिशाली शतनीक और पाँचवाँ श्रुतकर्मा। युधिष्ठर (धर्मपुत्र) ने शैब्य की पुत्री देविका के साथ एक और विवाह किया। उसने यौधेय नामक पुत्र को जन्म दिया। वातज (भीमसेन) वाराणसी गया और उसने काशिराज की पुत्री बलधरा से शादी की। उसने शर्मत्रात नामक पुत्र को जन्म दिया। फल्गुन (अर्जुन) ने द्वारवती जाकर सुभद्रा से

नकुलन् वेट्टु पिन्ने रेणुकयेन्नु पेरां
मकरनेत्रयाय चेदीशपुत्रितन्ने । ८३
पुत्रनाय् निरमित्रनेन्नवळ्क्कुण्टोय्वन्नु ।
मद्रेशसुतात्मजनाकिय सहदेवन् ८४
मद्रेशन्तन्टे मकळ् विजयतन्ने वेट्टान् ।
पुत्रनाय् सुहोत्रनेन्नुण्टायानवळ्पेट्टु । ८५
भीमसेननु मुन्नं हिडिम्बीतनयनाय्
भीमनां घटोत्कचनुण्टायानवळ् पेट्टु । ८६
अर्ज्जुनन् गंगास्नानं चेय्तनेरत्तु तत्र
विज्वरमुलूपियिलुण्टायानिरावानुम् । ८७
पिन्नेयुं मणलूरपतिनन्दनयाय
कन्यक चित्रांगदा फल्गुनभार्ययायाळ् । ८८
सुभ्रुवामवळुमाय् विभ्रमं कलर्न्नोळु-
मभ्रवाहनसुतनविटेयिरुन्ननाळ् ८९
अद्भुतगात्रि पेट्टिट्टर्भकनुण्टाय्वन्नु ।
बभ्रुवाहननेन्नु सत्पुमानवनेट्टम् । ९०
इङ्ङने पतिम्मून्नु नन्दनन्मारुण्टायि
मंगलन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मार्क्कु मुन्नम् । ९१
अन्नतिलभिमन्यु वेट्टितु विराटन्टे
कन्यकयाय् मेवीटुमुत्तरयेन्नवळे । ९२

विवाह किया जिससे अभिमन्यु पैदा हुआ। नकुल ने चेदीश की पुत्री मकर (मछली) के समान आँखवाली रेणुका से विवाह किया। उसका निरमित्र नामक पुत्र पैदा हुआ। माद्री के पुत्र सहदेव ने मद्रेश की कन्या विजया से विवाह किया। उसने सुहोत्र नामक पुत्र को जन्म दिया। भीमसेन को पहले ही हिडिम्बी से घटोत्कच नामक भीम (भयानक) पुत्र पैदा हो गया था। ८६ जब अर्जुन गंगा-स्नान कर रहा था उन दिनों उसके उलूपी द्वारा इरावान् नामक पुत्र हुआ। फिर मणलूर के राजा की पुत्री चित्रांगदा फल्गुन की पत्नी हुई। जब उस सुन्दरी के साथ अभ्रवाहनसुत (अर्जुन) सुख से रह रहे थे तब उस अद्भुतगात्री ने एक बालक पैदा किया जो बभ्रुवाहन नामक साधु पुरुष था। इस प्रकार पुरा (प्राचीन काल में) मंगलशाली पाण्डवों के तेरह पुत्र पैदा हुए। उनमें से अभिमन्यु ने विराट की पुत्री उत्तरा से विवाह किया। उसी से

अवळिलुण्टायितु निन् पिता परीक्षित्तु-
मवनीपति विष्णुरातनां विष्णुभक्तन् । ९३
अश्वत्थामाविन् वाणदग्धनां कुमारनें-
यच्युतन् चक्रंकोण्टु जीविप्पिच्चतुमेंटो । ९४
तन्महिमानमेंल्लां परञ्ञालोंटुङ्ङुमो
निर्म्मलनाय भवानवन्टे मकनल्लो । ९५
निनक्कु शतानीकन् शङ्कुवेंन्नतुं पेराय्
निनक्कु समन्माराय् रण्टु पुत्रन्मारुण्टाम् । ९६
निन्नुटें शतानीकन् तन्नुटें पुत्रनायि
पिन्नेंयुमश्वमेधदत्तनेंन्नुण्टाय्वरुम् । ९७
पूरुविन् वंशमुटनविटेयोंटुङ्ङीटुं
पूर्व्वन्मारुटें कथ परञ्ञालोंटुङ्ङुमो । ९८
पाण्डित्यमिल्ल परञ्ञीटुवान् केट्टुकोंळ्क
पाण्डवन्मार्क्कु कालं कळिञ्ञप्रकारवुम् । ९९
अत्तल् पूण्टच्छन् मरिच्चटवितन्निल्निन्नु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् चेंन्नवर् पुक्ककालम् । १००
पतिनारब्दं धर्म्मपुत्रर्क्कु भीमनन्नु
पतिनञ्चायि पतिन्नालायि फल्गुननुं १०१

तुम्हारे पिता राजा विष्णुरात (विष्णु का दिया हुआ विष्णुभक्त) परीक्षित पैदा हुए। जिस बालक को अश्वत्थामा ने अपने बाण से जला दिया था उसे अच्युत (विष्णु) ने अपने चक्र से फिर जिलाया। कहते-कहते इस महिमा का अन्त न होगा। अब निर्मल (चरित्रवाले) तुम उनके पुत्र हो। ९५ तुम्हारे शतानीक और शङ्क नामक तुम्हारे ही तुल्य दो पुत्र होंगे। और तुम्हारे पुत्र शतानीक का अश्वमेधदत्त नामक पुत्र होगा। वहीं तक पूरु का वंश भी समाप्त हो जायगा। पूर्वजों की कथा का वर्णन कब समाप्त हो सकता है ?। मुझमें सुनाने के लिए पाण्डित्य नहीं है। फिर भी पाण्डवों का काल कैसे समाप्त हुआ—यह सुन लीजिए। जहाँ पिता (पाण्डु) की दुःख के साथ मृत्यु हुई उस बन से जब सब लोग हस्तिनपुर लौटे तब धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) की आयु सोलह वर्ष की थी, भीमसेन की पन्द्रह वर्ष की, फल्गुन की चौदह वर्ष की और माद्री के पुत्रों की तेरह वर्ष की थी।

पतिम्मून्नायि माद्रितन्नुटे पुत्रन्मारक्कुं
पतिम्मूवाण्टु पिन्ने विद्ययुमभ्यसिच्चु । १०२
धृतराष्ट्ररुं दुरियोधनादिकळुमाय्
मतिमान्मारायुळ्ळ धर्म्मजादिकळ् वाणु । १०३
पिन्नेयन्नरक्किल्लं वेन्तिट्टु पुरप्पेट्टु
वन्नवरारुमासं काननं तन्निल् वाणु । १०४
अन्नल्लो घटोत्कचनुण्टायितविट्टुन्नु
पिन्नेयोरारुमासमेकचक्रयिल् वाणु । १०५
पाञ्चालितन्ने वेट्टानन्ताळिलवळुमाय्
पाञ्चालपुरत्तिङ्कलोराण्टु वसिच्चार्पोल् । १०६
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् पिन्नेयुमोरुमिच्चि-
ट्टेत्रयु सुखत्तोटुमय्याण्टु कालं वाणु १०७
पिन्नेयन्तिन्द्रप्रस्थमाकिय पुरि पुक्कु
मन्नवरिरुपत्तुमूवाण्टुकालं वाणु । १०८
चूतु तोट्टविट्टुन्नु पन्तीराण्टटवियिल्
मेदिनीपालकन्मार् तापसराये वाणु । १०९
ओराण्टु विराटन्टे राजधानियिल् वाणो-
रारुमेयरियाते वेषच्छन्नन्मारायि । ११०
कोल्पोटु शत्रुक्कळेयोक्कवेयोटुक्कीट्टु
मुप्पत्ताराण्टु भूमियटक्किवाणु पिन्ने । १११

तदनन्तर सबने तेरह वर्ष विद्याभ्यास किया। बुद्धिशाली युधिष्ठिर आदि धृतराष्ट्र और दुर्योधन आदियों के साथ सुख से रहे। १०३ तत्पश्चात् जतु (लाक्षा) गृह के जलजाने से वहाँ से निकल कर छः महीने वन में रहे। उसी अवसर पर घटोत्कच का जन्म हुआ। तदनन्तर छः महीने एकचक्र नगरी में निवास किया। तदनन्तर पांचाली के साथ विवाह हुआ और उसके साथ सब लोग एक वर्ष तक पाञ्चालपुरी में रहे। उसके बाद पाँच वर्ष सब लोग बड़े मेल के साथ सुख से हस्तिनापुर में रहे। तदनन्तर इन्द्रप्रस्थ नामक नगर में प्रवेश कर सभी भूपाल तेईस वर्ष वहाँ रहे। फिर जुआ में हार कर वे बारह वर्ष वन में तापस के रूप में रहे। एक बरस विराट की राजधानी में वेश बदलकर उन्होंने अज्ञातवास किया। ११० तदनन्तर अपने सभी शत्रुओं को जीतकर छत्तीस बरस पृथिवी पर राज किया। तत्पश्चात् छः महीने के अन्दर अभिमन्यु के पुत्र को राजगद्दी पर बैठाकर स्वर्ग चले

मन्नवरारु मासं कोण्टभिमन्युजन्नें
मन्नवनाक्कि वाळिच्चमरपुरिपुक्कार् । ११२
नूट्टेट्टु वरिषवुमारुमासवुं चेन्नु
माट्लर्कुलकालनाय धर्म्मजन्टो । ११३
जिष्णुविल् मून्नु मासं मूत्ततु कृष्णन् पिन्नें
कृष्णनिल् मून्नु मासं मूत्ततु बलभद्रन् । ११४
कृष्णनायवतरिच्चन्नुळ्ळ लीलकळुं
कृष्णभक्तन्माराय पाण्डवर्कथकळुं ११५
विष्णुतान्तन्नें वन्नु पिरन्न वेदव्यासन्
कृष्णनां द्वैपायनन् चोल्लिय कथयल्लो । ११६
अद्वैतोपाख्यानमां भारतं नूरायिरं
पद्यवुं पतिनेट्टु पर्व्वमाय् तीर्त्तुकूट्टि । ११७
संभवपर्व्वं सभापर्व्ववुमारण्यवुं
पिन्पु वैराटपर्व्वमुद्योगमञ्चामतुं ११८
पिन्नेतु भीष्मपर्व्वमपरं द्रोणपर्व्वं
कर्ण्णपर्व्ववुं शल्यपर्व्ववुं सौप्तीकवुं ११९
स्त्रीपर्व्वं शान्तिपर्व्वमनुशासनीकवुं
शोभतेटीटुमश्वमेधिकपर्व्वं पिन्नें १२०
पुतिनञ्चामतु नल्लाश्रमवासपर्व्वं
पतिनारामतल्लो मौसलमाय पर्व्वं १२१

गये। इस प्रकार शत्रुवर्ग के नाशक धर्मज (युधिष्ठिर) एक सौ आठ बरस और छः महीने जीवित रहे। श्रीकृष्ण तो जिष्णु (अर्जुन) से तीन महीने बड़े थे और बलभद्र कृष्ण से तीन महीने बड़े थे। भगवान् ने कृष्ण के रूप में अवतार लेकर जो लीलाएँ कीं, उनको और कृष्णभक्त पाण्डवों की कथाओं को श्रीकृष्ण द्वैयापन वेदव्यासजी ने, जो साक्षात् विष्णु ही थे, अपनी महाभारत कथा में सुनाया है। यह भारत अद्वैतोपाख्यान है और यह एक लाख श्लोकों और अठारह पर्वों में समाप्त है। ११७
१ संभवपर्व, २ सभापर्व, ३ आरण्यपर्व, तदनन्तर ४ विराटपर्व, ५ पाँचवाँ उद्योगपर्व, तत्पश्चात् ६ भीष्मपर्व, फिर ७ द्रोणपर्व, ८ कर्णपर्व, ९ शल्य-पर्व, १० सौप्तीक, ११ स्त्रीपर्व, १२ शान्तिपर्व १३ अनुशासनिक, और १४ शोभावाला अश्वमेधिक पर्व, पन्द्रहवाँ अच्छा आश्रमवासपर्व और १६ मौसलपर्व था, सतरहवाँ महाप्रस्थानपर्व और अन्त में

पतिनेळाकुं महाप्रस्थानं कळियुम्पोळ्
पतिनेट्टामतिङ्कल् स्वर्गारोहणमल्लो । १२२
अध्यायक्रमं चोंल्लवानेंत्रयु पेरुप्पमु-
ण्टत्रयेन्तिनु वेण्टियेन्नतुमरिञ्ञिल्ल । १२३
भारतं संक्षेपं ञानेप्पेरुमरियिच्चेन्
पारिटत्तिङ्कलुळ्ळ भक्तन्मार्क्करिवानाय् । १२४
नल्लतु चेय्युन्नोर्क्कुं नल्लतु वरुमेन्नुं
नल्लतिल्लाकात्ततु चेय्तीटुन्नवर्क्केन्तुं । १२५
देवदेवेशनाय कृष्णने वळिपोले
सेविच्चालुळ्ळ फलमायतुमरिञ्ञीटाम् । १२६
इन्नि मटेन्तु कथ केळक्केण्टतेन्तु चोंन्ना-
लेन्नालायतुं चोंल्लामेन्नेल्लां क्रमत्ताले १२७
वैशम्पायनमुनि जनमेजयनोटु
वैशिष्टचमुळ्ळ महाभारतकथासारं १२८
ओक्कवे चुरुक्कमायीवण्णं पञ्ञप्पोळ्
मुख्यनां नरपति जनमेजयन् चोंन्नान् । १२९
ऎत्रयुं कौतूहलमुण्टितु केळक्कुन्तोरुम्
विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटणं मटियाते । १३०
ऎन्नतु नरपति चोंन्नतु केट्टु मुनि
नन्नायित्तेळिञ्ञुटनादियेयरियिच्चु । १३१
इङ्ङने सूतवाक्यं केट्टु शौनकमुनि
तिङ्ङिन मोदत्तोटु पिन्नेयुं चोद्यं चेय्तु । १३२

---

१८ स्वर्गारोहणपर्व है । अध्यायक्रम बतलाने में बहुत श्रम है और उसका क्या प्रयोजन होगा, यह भी स्पष्ट नहीं है । भारत का संक्षेप मैं पहले ही पृथिवी के भक्तों के लिए सुना चुका हूँ । जो भला करते हैं उनका भला होगा और जो बुरा करते हैं, उनको देवदेवेश कृष्ण की यथाविधि उपासना करने से क्या फल होगा, यह भी उससे मालूम हो जाता है । अब और क्या कथा सुनाना है ? कहो तो वह भी क्रम से सुनाऊँगा । १२७ जब मुनि वैशम्पायन ने वैशिष्टचवाली महाभारत की सारी कथा संक्षेप में जनमेजय को इस प्रकार सुनायी, तब नरपति ने कहा— इसको सुनते-सुनते बड़ा (मन में) कुतूहल होता है, इसलिए निःसंकोच इसे विस्तार से सुनाइए । नरपति की यह बात सुनकर मुनि ने प्रारम्भ

अक्कथयॆल्लां निनक्कुळ्क्काम्पिल् पाठमॆन्ना-
लॊक्क जङ्ङळ्क्कु केळ्प्पानरियिच्चीटणं नी । १३३
शङ्करन् नारायणनादिनायकन् परन्
शङ्करप्रियन् देवन् मंगलप्रदन् कृष्णन् १३४
पङ्कजविलोचनन् पङ्कजनाभन् हरि
पङ्कजमातिन् कुळिर्कॊङ्कयिलिळुकीटुं १३५
कुङ्कुमपङ्कतन्नालङ्कितमायिट्टति-
भंगितेटीटुं तिरुमारुळ नारायणन्
तन्कळल् वळिपोलॆ संग्रहिच्चुळ्ळिल् नन्नाय् १३६
पङ्कङ्ङळॊक्क नीक्किप्पावनन्मारायवन्नु
तिङ्कळ्तन् कुलत्तिङ्कलुण्टाय भूपालन्मार् १३७
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारुटॆ कथ
कल्मषमकलुवानॊक्क नी परयेणम् । १३८
ऎन्नतु केट्टु सूतन् मोदमोटुरचॆय्तु
नन्नल्लो पठिक्कयुं केळ्क्कयुं पुराणङ्ङ १३९
ळॆन्नतिल् विशेषिच्चुं भारतमेरॆ नल्लू ।
निर्म्मलमितिहासं वेदसम्मितमल्लो । १४०
इत्थं पैङ्किळिमकळ्तन्नुटॆ वाक्कु केट्टु
चित्तकौतुकत्तोटे पिन्नॆयुं चोद्यं चॆय्तु । १४१
बादरायणन् चॊन्न भारतं सोपाख्यान-
मादरपूर्व्वं जनमेजयनृपनोटु १४२

से सब स्पष्ट सुना दिया। सूत का यह कहना सुनकर मुनि शौनक ने वड़े प्रमोद के साथ फिर याचना की। अगर वह सारी कथा तुम्हें कण्ठस्थ है तो हम लोगों को कृपया सुनाओ। १३३ शङ्कर, नारायण, आदिनायक, पर, शङ्करप्रिय, देव, मंगलप्रद, कृष्ण, पङ्कजविलोचन, पङ्कजनाथ, हरि, लक्ष्मी के शीतल स्तनों के कुङ्कुमपङ्क से अङ्कित शोभाशाली वक्षस्थलयुक्त नारायण की पद्धति को स्वीकार करके आभ्यन्तर (भीतरी) अशुद्धि दूर करके जो पवित्र हुए, उन चन्द्रवंश के भूपालों, निर्मल पाण्डवों की कथा पाप दूर करने के लिए तुम अवश्य सुनाओ। यह सुनकर सूतजी ने हर्ष से कहा। पुराणों को पढ़ना और सुनाना अच्छा है। उससे भी अच्छा है महाभारत; क्योंकि वह निर्मल इतिहास वेद के तुल्य है। १४० शुककन्या की यह बात सुनकर चित्त में बड़े कौतुक के साथ फिर याचना

वैशम्पायननऱियिच्चितु सूतन्तानु-
माशपूण्टोरु शौनकादिकळ्क्कऱियिच्चान् । १४३
अतिनॆच्चुरुक्कि नी चॊल्लेणं किळिप्पॆण्णे
कौतुकं पारमतिलॆन्नतु केट्टनेरं १४४
मॊळिमातिनेयुं व्यासनेयुं कृष्णनेयुं
ताळुतु किळिमकळ् पऱञ्ञुतुटङ्ङिनाळ् । १४५
पलर्क्कुमितिलॊरु रसमुण्टाकयिल्ल
चिलर्क्कु कुऱञ्ञोरु रसमुण्टायालेतुं १४६
फलिक्कयिल्लयल्लो नन्नायिप्पऱकिलुं
पलर्क्कुमॊरुपोलॆ कौतुकमुण्टॆङ्किले १४७
फलिप्पानॆळुतावू केवलमतिन्मूलम् ।
पलर्क्कुमात्मज्ञानमिल्लाय्कतन्ने तानुं । १४८
ज्ञानमुण्टॆन्नाकिले रमिप्पू नूनमितिल्
ज्ञानमो नूऱुपेरिलॊरुत्तनुण्टाकिलां १४९
ऎन्नालुं चुरुक्कि नीं पाण्डवरुटॆ कथ
निन्नालाकुन्नवण्णं चॊल्लेणमॆन्नोटिप्पोळ् । १५०
पलर्क्कुं तॆळियेणमॆन्नु नी निनय्केण्टा
चिलर्क्कु तॆळिकिलुं मतियॆन्नते वरू । १५१

की । जो बादरायण की कही भारतकथा वैशम्पायन ने उपाख्यानसहित जनमेजय को सादर सुनायी थी, उसी को सूतजी ने प्रबल इच्छावाले शौनक आदियों को सुनाया । हे शुककन्ये उसी को संक्षेप में सुनाओ, उसके सुनने के लिए हमें बड़ा कुतूहल है । यह सुनकर, व्यास और कृष्ण को हाथ जोड़कर वाग्देवी शुककन्या ने कहना प्रारम्भ किया । बहुतों को तो इसमें कोई रस ही नहीं प्रतीत होगा । कुछ लोग शायद इसमें थोड़ा-सा रस लें, परन्तु अच्छी तरह से कहे जाने पर भी इसका फल न होगा । जब बहुत लोग समान रूप से आस्वादन करेंगे, तभी तो उसकी सफलता होगी । १४७ बहुत लोगों को तो आत्मज्ञान है ही नहीं । जब ज्ञान है, तभी तो उसमें मन लगता है, और ज्ञान तो सौ मे एक ही को होता है; फिर भी तुम पाण्डवों की कथा, संक्षेप में, जितना अच्छा तुमसे हो सकता है उतना अच्छा सुनाओ । यह शर्त न लगाओ कि बहुत लोग समझें । यह पर्याप्त है कि कुछ लोग समझें । अगर कोई भी न समझे, तब भी मुझे यह सुनने की बड़ी इच्छा है । अब विलम्ब न करो ।

आक्कुंमे तॊळिकयिल्लॆङ्किलुमिनिक्किकतु
केळ्क्केणं पॆरिकॆयुण्टाग्रहं मनक्काम्पिल् । १५२
वैकरुतिनिक्कालं पळ्ळुते कळयातॆ
पैकळञ्ञुरचॆय्क भारतकथयॆल्लाम् । १५३
भारतं चमच्चोरु कृष्णद्वैपायननां
पाराशर्यन्टॆ जन्मं चॊल्लेणमल्लो मुन्पिल् । १५४

वेदव्यासोल्पत्ति

ऒङ्क्लिो मुन्नं चेदिराज्यत्तिलॊरु नृपन्
मंगलनाय वसुवुण्टायानवन् नन्नाय् १
इन्द्रनॆस्सेविक्कयाल् कॊटुत्तु वरङ्ङळु-
मिन्द्रन् मालयुमॊरु वैष्णवमाय दण्डु २
आकाशे नटप्पतिनायॊरु विमानवुं
लोकवृत्तान्त मॆल्लामरिवान् विज्ञानवुं ३
ऒक्कवे कॊटुक्कयालॆत्रयुं प्रसिद्धनाय्
विख्यातकीर्त्तियोटुं रक्षिक्कुं कालत्तिङ्कल् ४
उपरिचरनॆन्न नामवुमुण्टाय्वन्नि-
तुपरिभागत्तिङ्कल् चरिक्कायवन्तमूलम् । ५
वासवभक्तनायोरुपरिचरन् वसु
वासवसमानानाय् वाळुन्नकालत्तिङ्कल् ६

व्यर्थ समय न खोकर भूख शान्त करके [तृप्त होकर] सारी भारतकथा सुनाओ। महाभारत के रचयिता पराशर के पुत्र कृष्णद्वैपायन का जन्म पहले सुनाना चाहिए। १४५

वेदव्यास की उत्पत्ति

अतीत (भूतकाल) में चेदि राज्य में वसु नामक एक मंगलमय राजा था। उसने इन्द्र की सेवा की। इन्द्र ने उसको वर दिया और वर के अतिरिक्त एक माला, एक वैष्णव दण्ड, आकाश में संचार करने के लिए एक विमान और लोक-वृत्तान्त जानने के लिए विज्ञान भी दिया। इन्द्र के यह सब प्रदान करने के कारण वह राजा प्रसिद्ध और विख्यात-कीर्ति हुआ। राज करते समय उसका नाम उपरिचर हुआ, क्योंकि वह ऊपर संचार करता था। वासव (इन्द्र)-भक्त उपरिचर वसु वासव-

उण्टायि बृहद्रथन् प्रत्यग्रन् कुशांबनुं
विण्टलर् कालनाय मच्चिलन् यदुतानुं ७
तनयन्मारायञ्चु बालन्मारुण्टायतिल्
मणिवाहननॆन्नुं चॊल्लुवोर् कुशांबनॆ । ८
अवरॆयोरो नाट्टिटल् वाऴिच्चानैवरॆयु-
मविटॆ बृहद्रथन् मागधराजावायान् । ९
अक्कालं चेदिराज्यंतन्नुटॆयरिकत्तु
चॊल्कॊण्ट शुक्तिमतियाकिय नदितन्नॆ १०
कामिच्चु कोलाहलनाकिय गिरिवरन्
प्रेमत्तोटवळॆच्चॆन्नाश्लेषं चॆय्तानवन् ११
वेगत्तिलॊऴुकुन्न वाहिनिक्कतुनेरं
पोकरुतातॆ वन्नु पर्व्वतं तटुक्कयाल् । १२
वॆळ्ळवुं मेल्पोट्टय्क्कु पॊङ्ङियन्नाट्टिलॆल्ला-
मुळ्ळवरल्लल् कैक्कॊण्टन्यायं चॊल्कयाले । १३
मन्नवन् वसुतानुमन्नेरमतु कण्टु
चॆन्नॊन्नु चवुट्टिनान् पर्व्वतवरन्तन्नॆ । १४
पॊटिञ्ञु गिरिवरन् नटन्नु नदितानु-
मटङ्ङि तन्निलाशु तॆळिञ्ञु जनङ्ङळुम् । १५
पृथिवीधरन् नदितन्निलन्नुल्पादिच्चि-
ट्टधिकगुणत्तोटु रण्टु पैतङ्ङळुण्टाय् । १६

समान हुआ । राज करते समय उनके बृहद्रथ, प्रत्यग्र, कुशांब, मच्चिल्ल और शत्रुओं का नाशक यदु, इस प्रकार पाँच पुत्र हुए । उनमें कुशांब को मणिवाहन भी कहते हैं । वसु ने पाँचो को भिन्न-भिन्न देशों का राजा बनाया । बृहद्रथ मगध का राजा हुआ । ९ उन दिनों चेदिराज्य के समीप जो विख्यात नदी शुक्तिमती थी, उससे गिरि कोलाहल का प्रेम हुआ । उसने जाकर नदी का आश्लेष किया । पर्वत के रोकने से वेग से बहती हुई नदी आगे नहीं जा सकी । बाढ़ का जल बहुत ऊपर उठ आया, तब उस देश के निवासी दुःखित होकर इसे अन्याय कहने लगे । राजा वसु ने यह स्थिति देखकर पर्वत को एक लात मारी, जिससे पर्वत चूर-चूर हो गया और नदी फिर बहने लगी और बाढ़ भी समाप्त हुई । जनता भी प्रसन्न हुई । पर्वत ने उस अवसर पर नदी में दो गुणवान् बच्चे पैदा किये । १६ उनमें एक लड़का था और एक लड़की । नदी

ओन्नोरु पुमानतिल् मट्टेतु कन्यकयुं
मन्नवन् तनिक्कु नल्कीटिनाळ् नदितानुं । १७
पुरुषन्तन्नेस्सेनापतियाय् वच्चानवन्
तरुणीमणितन्नेप्पत्नियुमाक्किवच्चान् । १८
गिरिकयेन्नुतन्ने पेरवळ्क्काकुन्नतुं
पेरिके मनोहरियेन्नते पऱयावू । १९
अवळुमोरुदिनमृतुधर्म्मत्ते प्रापि-
च्चधिकशुद्धयायिच्चतुर्थस्नानं चेय्ताळ् । २०
अन्नल्लो मृगङ्ङळेक्कोन्नु कोण्टरिकेन्नु
मन्नवन्तन्नोटपेक्षिच्चितु पितृक्कळुम् । २१
पोयितु नायाट्टिन्नु भूपतियतुनेरं
पोयील मनस्सवळ्तन्नोटु पिरिञ्ञेतुम् । २२
सुन्दरांगियेत्तन्ने चिन्तिच्चु नृपवरन्
मन्दमन्दं पोयोरु काननं पुक्कनेरं २३
मन्दार कुन्दमाकन्दासनसून मक-
रन्दसंयुक्तमन्दगन्धवाहादिकळुं २४
कोकिलशुकक्रौंच सारसचक्रवाक,
केकिषळ्प्पदमुख्य पक्षिकळ्नादङ्ङळुं २५
सूकरकरिहरि हरिणमहिषादि
भोगलीलादिकळुं कण्टु मानसमळि- २६

ने दोनों बच्चे राजा को दे दिये। राजा ने लड़के को अपना सेनापति बनाया और लड़की को अपनी पत्नी बनाया। उस लड़की का नाम था गिरिका, वह बहुत ही सुन्दरी थी। एक बार वह अपने मासिक ऋतु धर्म के हो जाने के बाद चौथे दिन शुद्ध हुई और स्नान किया। उन दिनों पितृलोगों ने राजा से शिकार खेलकर मृगों को मार लाने के लिए याचना की। राजा शिकार खेलने तो चले गये, पर अपनी पत्नी से मन नहीं हटा सके। उसी का ध्यान करते हुए नृपवर ने धीरे-धीरे वन में प्रवेश किया। २३ उस समय वहाँ मन्दार, कुन्द, माकन्द, असन आदि पुष्पों के मकरन्द (रस) से मिला हुआ मन्दवायु का, कोकिल, शुक, क्रौंच, सारस, चक्रवाक, केकि आदि पक्षियों के निनाद का और सूकर, हाथी, सिंह, हरिन, महिष आदि की भोगलीलाओं का अनुभव कर राजा का मन शिथिल हुआ और बलात् उनका इन्द्रिय (वीर्य) स्खलन हुआ।

ञ्ञिन्द्रियस्खलनवुं वन्नितु बलालप्पोळ् ।
कन्दर्प्पशरपरवशनायतिनाले- २७
यिन्द्रसम्मितन् धरावल्लभनिन्द्रभक्तन्
स्कन्दिच्च बीजं निजं निष्फलमाक्कीटाय्वान् २८
वृक्षपत्रत्तिलाक्किक्कोण्टथ नृपवरन्
पक्षियां परुन्तिनोटीवण्णमुरच्चेय्तान् । २९
केळ्क्क नी बीजमयोनियिलुमतुपोले
भोष्कलल वियोनियिलेङ्किलुमतिल्परं ३०
पक्षीन्द्र पशुयोनितन्निलुमऱियाते
निक्षेपिप्पिक्कुं जनं नारकगामिकळ्पोल् । ३१
ऒन्नेल्लां श्रुतिस्मृतिकळिलुण्टाकमूलं
इन्नतिभयं पूण्टिट्टोन्नपेक्षिक्कुन्नु आन् । ३२
ऒन्नुटे बीजमितु पळुते कळयाते
कन्नल्नेर्मिळियाळां पत्निक्कु कोटुक्क नी । ३३
ऒन्नयच्चतुनेरं परुन्तुं कोत्तिक्कोण्टु
मन्नवनियोगत्तालाकाशे पोकुंनेरं ३४
मट्टोरु परुन्ततु कण्टोरु मांसबुद्ध्या
तेट्टेन्न चेन्नु कलहिच्चप्पोळ् वीणुपोयि ३५
कालसोदरि मार्त्ताण्डात्मजा महानदी
काळिन्दितन्निलायि वीणितु विधिवशाल् । ३६

इसलिए इन्द्र के समान, भूवल्लभ, इन्द्रभक्त राजा ने मदन से परेशान होकर अपने स्कन्न (स्खलित = गिरे हुए) बीज को निष्फल होने से बचाने के लिए एक वृक्षपत्र पर रखकर एक श्येन पक्षी से इस प्रकार कहा—हे पक्षीन्द्र ! सुनो ! कहा जाता है कि जो अनजान में भी अपने बीज को अयोनि में अथवा वियोनि में या पशुयोनि में निक्षिप्त करते हैं वे नरकगामी होते हैं। यह सब श्रुति और स्मृति में (लिखा) मिलता है। इसलिए बहुत डरकर मैं तुमसे एक प्रार्थना करता हूँ। इस बीज को बिना कहीं खोये मेरी सुन्दरी पत्नी को दे दो । २७-३३ जब राजा ने इस प्रकार भेजा तब उसे अपनी चोंच में लेकर श्येन आकाश मार्ग से जा रहा था। एक दूसरा श्येन यह देखकर बीज को मांस समझकर उससे लड़ बैठा। उस समय बीज गिर गया और विधिवश काल की बहिन, मार्ताण्ड की पुत्री महानदी कालिन्दी (यमुना) में जाकर गिरा। ब्रह्मा के शाप के

अब्जसंभवशापालद्रिकयॆन्नु पेरा-
मप्सरस्त्रीयुण्टतिल् मत्स्यमाय् किटक्कुन्नु । ३७
वीण वासवबीजमप्पोळॆ विळङ्ङनाळ्
ताणुपोंमुन्पे मत्स्यवेशमामद्रिकयुम् । ३८
अवळ्क्कु गर्भमुण्टाय् तिकञ्ञु मरुवुन्ना-
ळवळुमॊरु दाशन् वलयिलकप्पॆट्टाळ् । ३९
कीऱिनान् वयऱवनण्डङ्ङ ळॆटुप्पानाय्
वीरोटु रण्टु मर्त्यपोतङ्ङळ् कण्टानप्पोळ् । ४०
मत्स्यत्तिन्नुदरत्तिल् मर्त्यपोतङ्ङळ् कण्टु
विस्मयं पूण्टु पलरोटुमतऱियिच्चान् । ४१
अद्भुतमितु पण्टु कण्टिट्टिल्लॆन्नु चिन्ति-
च्चप्पोळॆ राजाविनु कॊटुत्तु कैवर्त्तनुम् । ४२
धीवरनाय राजावुपरिचरन् वसु
धीवरन् कॊण्टुवन्न पैतङ्ङळ् रण्टुं कण्टान् । ४३
मत्स्यगन्धिनियाय काळियॆ नृपवरन्
मत्स्यघातकनाग दाशनु कॊटुत्तितु । ४४
मत्स्यगन्धिनितन्नॆ वळर्त्तु कैवर्त्तनु-
मुत्सवं पूण्टु काळियॆन्नॊरु पेरुमिट्टु । ४५
मत्स्यनां नरपतियायितु पुरुषनुं
मत्स्यरूपवुं कळञ्ञद्रिकतानुं पोयाळ् । ४६

कारण अद्रिका नामक अप्सरा जो मछली हो गयी थी वह उस नदी में थी। बीज के डूब जाने के पहले ही मत्स्यरूपी अद्रिका ने उसे निगल लिया। उसके गर्भ रह गया। जब वह गर्भ बढ़ ही रहा था तब वह मछली एक धीवर के जाल में फँस गयी। उससे अण्डे निकालने के लिए मछली का पेट चीर डाला और उसमें दो मानुष बच्चे देखे। ३४-४० मत्स्य के पेट में मानुष बच्चे देखकर विस्मित होकर उसने लोगों से कहा। 'यह बड़ी अद्भुत बात है, ऐसी बात पहले कभी देखी ही न गयी', यह सोचकर कैवर्त (धीवर) ने उन बच्चों को राजा को दे दिया। बुद्धिशाली राजा उपरिचर वसु ने धीवर के दिये दोनों बच्चों को देखा। नृपवर ने उनमें से मत्स्य-गन्धिनी (मछली के समान गंधवाली) काले रङ्ग की लड़की को मत्स्यघातक दास (धीवर) को ही दे दिया। उस कैवर्त ने उसे बड़ी ख़ुशी से पाला-पोसा और उसका काली नाम रखा।

तरुणीमणि काळि काळिन्दीनदितन्निल्
तरणि वळिपोले कटत्तित्तुटङ्ङिनाळ् ४७
काळिन्दी कटक्कुन्न पान्थन्मार्क्कॆल्लावर्क्कुं
काळियिलळिञ्ञितु मानसमतुकालम् । ४८
तरणिसुतयाय यमुनानदितङ्कल्
तरणि कटप्पानाय् चॆन्नितु पराशरन् । ४९
तरणि देवनुदिच्चुयरुन्नतिन्मुन्पे
तरुणीमणियॆक्कण्टवनुं मोहं पूण्टान् । ५०
धरणितन्निलवळ्क्कॊत्त नारिकळिल्ल
धरणीपतियुटॆ बीजमायतिनाले । ५१
तीरत्तु चॆन्नु पुलर्काले मामुनिवरन्
दूरत्तु तुळयुमाय् निन्नितु काळितानुम् । ५२
धरित्वमकन्नोरु मामुनिवरन् चॊन्नान्
चारत्तु वरिक नी मट्टारुमिल्लयिप्पोळ् । ५३
नेरत्तु कटक्कणं नीक्कणं तोणि मरु-
तीरत्तु चॆन्नु पुनरुक्कणमिनिक्कॆटो । ५४
मारच्चूटकतारिल् पूरिच्चमूलं निन्निल्
भारिच्चोराशवन्नु कूटॊत्तु चमञ्ञितु । ५५
चोरिच्चोर्व्वायुं निन्टॆ चीरॊत्त मुलकळुं
वेरिच्चॊल्लाळॆ ञान् विचारिच्चु कण्टनेरं ५६

उनमें जो लड़का था वही मत्स्य नामक राजा हुआ। और अद्रिका अपना मत्स्यरूप त्याग कर चली गयी। ४१-४६ तरुणीमणि काली कालिन्दी (यमुना) नदी में नाव चलाने लगी। यमुना पार करनेवाले सभी यात्री काली को देखकर मुग्ध हो गये। उन दिनों नाव में सूर्यपुत्री यमुना को पार करने के लिए मुनि पराशर वहाँ पहुँचे। सूर्योदय के पहले ही तरुणीमणि (काली) को देखकर वे मोहित हो गये। धरणीपति (राजा वसु) के बीज के पैदा होने के कारण उस (काली) के समान धरणीतल में कोई (स्त्री) न थी। मुनि सबेरे ही यमुनातट पर पहुँच गये और नाव लिये काली भी दूर पर दिखायी दी। ४७-५२ महामुनि का धैर्य शिथिल हो चुका था। उन्होंने कहा--"तुम निकट चली आओ, अब यहाँ कोई नहीं है, मुझे जल्दी पार करना है और नाव के पार करने के बाद मुझे अपने नित्यकर्म करना है। भीतर कामवेदना अधिक हो

कारौंत्तकुळलाळे मारत्तीयारुमारे-
न्मारत्तु चेत्तींट्टुवान् योगमुण्टिप्पोळ्त्तन्ने । ५७
नेरत्रे परञ्ञतुमीश्वरनुटे मतं
मारध्वंसनं ब्रह्मादिकळ्क्कुं नीक्कावल्ले । ५८
चारुत्वमुळ्ळ काळि चौल्लिनाळय्यो रण्टु-
तीरत्तुमुण्टु मुनिमारुं मामरयोरुं । ५९
चारित्रदोषवुमुण्टाय्वरुं कन्यक ञान्
भारिच्च तपस्सुळ्ळ मामुनिश्रेष्ठन् भवान् । ६०
दूरत्तुनिल्केण्टुन्न कैवर्त्तनारि ञानो
पारत्रिकार्त्थियाय पारमार्त्थिकन् भवान् । ६१
विधियुं निषेधवुमरियातनुदिनं
पृथुरोमाशिकळां नीचजातिकळ् ञङ्ङळ् । ६२
श्रुतिभेदार्त्थज्ञानचतुरमतिकळाय्
स्मृतिकर्त्ताक्कन्मारां तापसरल्लो निङ्ङळ् । ६३
ऎन्तिन्तु परवानुं तोन्नीट्टुवानुमिप्पोळ्
चिन्तिच्चालवकाशं दैवकल्पितमॆन्नो । ६४
आरुमेयरियाते दोषवुमिरुवर्क्कुं
वाराते यिरिक्किलो चौन्नतुकेळ्क्कामल्लो । ६५

जाने के कारण तुममें मेरी प्रबल इच्छा हो गयी है, प्रेम पूरा हो गया। तुम्हारे लाल लाल अधर, बड़े बड़े स्तन, हे मञ्जुभाषिणि ! मैंने देख लिये। हे सुकेशिनि ! काम की आग बुझाने के लिए मेरी छाती से लग जाने का यही सुअवसर है। ठीक कहा गया है कि ईश्वर के मत में मार (कामदेव) के आघात से ब्रह्मा आदि भी नहीं बच सकते हैं।" ५३-५८ तब सुन्दरी काली ने कहा—"हा अन्याय! दोनों तटों पर मुनि और ब्राह्मण लोग हैं, मैं कन्या हूँ, मेरा चरित्र दूषित हो जायगा और आप बड़े भारी तापस हैं। मैं दूर खड़े होनेवाली कैवर्त की नारी हूँ और आप परलोकसुख और परमार्थ के भक्त हैं। विधि और निषेध न जाननेवाली और मत्स्य खानेवाली नीच जाति के हमलोग हैं। और आप तो विविध श्रुतियों के अर्थज्ञान से विकसित बुद्धिवाले स्मृतियों के रचयिता तापस हैं। आपको इस प्रकार की बातें सोंचने और कहने का अधिकार ही क्या है ? यह क्या दैव की करतूत है ? अगर किसी को पता ही न लगे और हम दोनों को कोई दोष भी न लगे तो मैं आपका कहना मानूँगी। आप

इङ्ङनेयुळ्ळ निङ्ङळ् चोन्नतु केळाञ्ञालु-
मेङ्ङने वन्नु ञायमेन्नरियरुतल्लो । ६६
एन्नतु केट्टु तेळिञ्ञन्नेरं मुनिवर-
नेन्नुटेयपेक्ष नीयोक्कवे वरुत्तियाल् । ६७
पिन्नेयुं कन्यकयाय्तन्ने वन्नीटुमल्लो ।
निर्ण्णयमत्रयल्ला नल्लते वन्नुकूटु । ६८
आस्वदिप्पतिनिन्नु योगमुण्टिप्पोळ् निन्ने
वात्सल्यं निनक्केन्निलुण्टाकवेणं बाले । ६९
आरुमे काणाय्वतिनन्नेरं मुनिवरन्
घोरमायोरु मञ्ञु निर्म्मिच्चानत्रयल्ल ७०
मत्स्यगन्धवुं पोक्किक्कस्तूरिगन्धमाक्कि
सत्संगं कोण्टल्लयो नल्लतु वन्नु कूटु । ७१
नदि तन् मध्ये वरद्वीपवुमुण्टाय्वन्नु
मतिनेर्मुखियाळ्क्कुं विस्मयमुण्टायल्लो । ७२
एन्तिनु पऱयुन्नु वेरुते बहुविधं
बन्धमोक्षङ्ङळुटे भेदं कण्टोरु मुनि ७३
नल्लोरु तीर्त्थभूतयायोरु यमुनयि-
लेल्लारुं कुळिच्चूत्तु संध्ययॆ वन्दिक्कुम्पोळ् ७४
मत्स्यगन्धियिनियाय कैवर्त्तकन्यकये
मत्स्यकेतनशरमेट्टु पुल्किनान् मुनि । ७५

जैसे का कहना न मानकर न्याय कैसे होगा, यह भी मैं जानती हूँ न!" ५९-६६ मुनिवर यह सुनकर प्रसन्न हुए और बोले—"अगर तुम मेरी प्रार्थना पूरी करोगी तो तुम फिर से कन्या ही हो जाओगी, संदेह नहीं। इतना ही नहीं, इससे भला ही होगा। तुमसे रमण करने का यही अवसर है इसलिए तुम मुझसे प्रेम करो। ऐसा कहकर मुनिवर ने उस समय घोर नीहार पैदा कर दिया ताकि कोई देख न पावे। इतना ही नहीं, उसके शरीर से मत्स्यगन्ध को दूर कर कस्तूरी की गन्ध पैदा कर दी। आखिर सत्संग से ही तो भला होता है। नदी के बीच में एक द्वीप भी बन गया और चन्द्रमुखी काली विस्मित हो गयी। और बहुत कुछ कहना व्यर्थ है। इतना ही है कि बन्ध और मोक्ष का भेद जाननेवाले मुनि ने पवित्र तीर्थ यमुना नदी में जब सब लोग स्नान करके संध्या कर रहे थे तब मदन के वाणों से व्याकुल होकर मत्स्यगन्धिनी कैवर्तकन्या को

दिव्यतीर्थत्तिङ्केन्नु दिव्यार्कनुदिक्कुन्पोळ्
दिव्यनाकिय मुनि कैवर्त्तकन्यकतन् ७६
कोङ्कळ् पुणर्न्नितु बालिकतानुमेतुं
शङ्किच्चीलतुनेरमीश्वरमतमल्लो । ७७
गर्भवुमुल्पादिच्चोरर्भकनुण्टाय्वन्नि-
तप्पोळे भविच्चितु यौवनं कुमारनुम् । ७८
यमुनाद्वीपमवनयनमाकमूलं
मुनियुं द्वैपायननेन्नोरु पेरुमिट्टान् । ७९
बदरषण्डं पुनरयनमाककोण्टु
मतिमानाकुमवन् वादरायणनायान् । ८०
चिन्तिक्क वलियोरु सङ्कटं वरुन्नेर-
मन्तिके वरुवन् आनन्तरमिल्लयेतुम् । ८१
ॲन्नु यात्रयुं चोन्नानम्मयोट्टुटनवन्
पिन्नेप्पोय् तपस्सिनु कोप्पिट्टान् वळिपोले । ८२
चोल्लेळुं पराशरन् पोयितु यथाकामम् ।
नल्ल कन्यकयायाळ् कस्तूरिगन्धितानु- ८३
मन्नेरमुण्टाय्वन्न योनितन् क्षतं पोयि
पिन्नेक्कस्तूरिगन्धं पोयतिल्लोरुनाळुं ८४

आलिङ्गन किया। ६७-७५ जब दिव्य तीर्थ से सूर्य का उदय हो रहा था तब दिव्य मुनि ने कैवर्तकन्या के स्तनों का आलिङ्गन किया। बालिका को कोई शङ्का हुई ही नहीं। उसने इसे ईश्वर की इच्छा समझा। उसके गर्भ रह गया और उसी समय उसके एक लड़का पैदा हुआ जो उसी समय जवान भी हो गया। यमुना-द्वीप उसका अयन (जन्म स्थान) होने के कारण मुनि ने उसका नाम द्वैपायान रखा। एक बदरषण्ढ भी उसका अयन होने के कारण उस मेधावी (बुद्धिमान्) का नाम बादरायण भी हुआ। "जब कोई बड़ा संकट होगा तब मुझे ध्यान करना, मैं अवश्य उपस्थित हूँगा, इसमें कोई सन्देह नहीं करना।" अपनी माता से इतना कहकर वे (द्वैपायन = व्यास) विदा हुए। फिर जाकर उन्होंने अपनी तपस्या की तैयारी की। और कीर्तिमान् पराशर भी यथाकाम (इच्छानुसार) चले गये। कस्तूरीगन्धि तो एक अच्छी कन्या बनी। ७६-८३ उस समय जो योनि की क्षति हुई थी वह ठीक हो गयी। कस्तूरी गन्ध तो कभी नष्ट नहीं हुआ। साधुजनों के संपर्क से यद्यपि अच्छा और

नल्लवरोट्टुकूटिस्संसर्ग्गमुण्टाय्वन्नाल्
नल्लतुमाकात्ततुमुण्टामॆन्निरिक्किलुं ८५
नल्लतु पोकयिल्ल पोकुमाकात्ततॆल्लाम् ।
नल्लतिल्लेतुं मट्टु सत्संगत्तिनुसमं । ८६
ओरोरो युगत्तिङ्कल् धर्म्मत्तिनिल्लातॆ पो-
मोरोरो पदंपिन्नॆ मानुषर्क्कतुपोलॆ ८७
आयुस्सुमुत्साहवुं बुद्धिशक्तियुमॆल्लां
पोयिट्टु दशांशमे शेषिप्पू युगं प्रति । ८८
आकयाल् वेदमॊक्कप्पठिच्चुकूटाय्कया-
लेकैकमाक्किप्पकुत्तीटिनान् द्वैपायनन् । ८९
व्यासनॆन्नॊरु नाममतिनालुण्टाय्वन्नु
वासवीतनयनु पिन्नॆयुमतुकालम् । ९०
वेदार्थं प्रकाशिप्पान् चमच्चु पुराणङ्ङळ्
भूदेवोत्तमन्मारुं शिष्यराय् चमञ्ञु । ९१
नालु शिष्यर्कळतिल् केवलं प्रधानन्मार्
नालर्क्कुमोरोवेदं वॆव्वेरॆ पठिप्पिच्चु । ९२
सुमन्तुतानुं पिन्नॆ जैमिनि पैलन् शुकन्
सुमन्त्रसूत्रब्राह्मणादि वेदज्ञन्मार् पोल् । ९३
भारतमाकुमञ्चां वेदत्तॆप्पठिप्पिच्चु
सारनायुळ्ळ वैशम्पायनमुनितन्नॆ । ९४

बुरा पैदा हो सकता है; अच्छा तो नष्ट नहीं होगा, बुरा सब नष्ट हो जायगा। सत्संग के समान और कोई अच्छी बात नहीं है। हर एक युग में धर्म का एक एक पाद घटता जाता है। इसी प्रकार मनुष्यों के भी आयु, उत्साह और बुद्धिशक्ति नष्ट हो जाते हैं और उनके दसवाँ अंश ही प्रतियुग रह जाता है। इसलिए सारे वेदों को पढ़ना असंभव समझ कर द्वैपायन ने उनका विभाग किया। इसीलिए वसुपुत्री के पुत्र का दूसरा नाम व्यास हुआ। ८४-९० उन्होंने वेदार्थ को प्रकाशित करने के लिए पुराणों की रचना की और अनेक ब्राह्मणोत्तम उनके शिष्य हुए। उनमें चार ही प्रमुख हैं। व्यास जी ने उनमें से एक एक को एक एक वेद पढ़ाया; सुमन्तु, जैमिनि, पैल, शुक ये ही मन्त्र, सूत्र ब्राह्मण आदि वेदों के ज्ञाता। सारवान् वैशम्पायन मुनि को उन्होंने पाँचवाँ वेद महाभारत पढ़ाया। मतिमान् सूत को तो इतिहास, पुराण आदि पढ़ाया। वेदव्यासजी

इतिहासङ्ङळ् पुराणङ्ङळेन्निव मट्टुं
मतिमानायुळ्ळोरु सूतनेप्पठिप्पिच्चु । ९५
विष्णुतन्नुटेयंशमायतु वेदव्यासन्
कृष्णवर्ण्णत्वं कोण्टु कृष्णनेन्नायी नामम् । ९६
धीरनां पराशर पुत्रनायतु मूलं
पारतिल् पाराशर्यनेन्नु चोल्लीटुन्नतुम् । ९७
कृष्णनुं द्वैपायनन् व्यासनुं पाराशर्यन्
कृष्णद्वैपायननुं वेदव्यासनुमेवं- ९८
कूटियुं चोल्लुं नामं बादरायणनति-
गूढवेदान्तात्र्थज्ञन् कूटस्थन् परन्पुमान् । ९९
अम्महा मुनियुटे माहात्म्यमार्क्कु चोल्लां
निर्म्मलनल्लो महाभारतकर्त्तावोर्त्तात्ल् । १००
मन्मनोमोहध्वान्तमुन्मूलनाशंचेय्त-
तम्महात्मावुतन्टे कारुण्यमेन्नु नूनम् । १०१
मुनिनायकनाय वैशम्पायननोटु
जनमेजयनृपन् तोळुतु चोद्यं चेय्तान् । १०२
ऒन्तिनु पिरन्नितु देवकळवनियिल्
बन्धमेन्ततिनुळ्ळ मूलवुं परयणम् । १०३

भगवान् विष्णु के अंश थे, काले रंग के होने के कारण उनका नाम कृष्ण हुआ। ९१-९६ बुद्धिमान् पराशर के पुत्र होने के कारण पृथ्वी में उनका नाम पाराशर्य हुआ। कृष्ण, द्वैपायन, व्यास, पाराशर्य, कृष्णद्वैपायन, वेदव्यास ये सब उनके नाम हैं। वे ही बादरायण हैं जो गूढवेदान्त के अर्थज्ञ, कूटस्थ, पर, पुमान् थे। उन महामुनि का माहात्म्य कौन कह सकता है? वे ही तो निर्मल महाभारत के रचयिता थे। निःसन्देह उन महामुनि के कारुण्य (कृपा) ही के कारण मेरे मन के अन्धकार का उन्मूलन हुआ। राजा जनमेजय ने हाथ जोड़कर मुनियों के नायक वैशम्पायन से प्रार्थना की—देवों ने क्यों पृथ्वी में जन्म लिया? इसका मूल कारण कृपया बतला दीजिए। ९७-१०३

परशुरामन् नशिप्पिच्च क्षत्रियवंशं वीण्टुं अभिवृद्धियें प्रपिच्चतु ।

अन्नेरं मुनिवरनाय वैशम्पायनन्
वन्दिच्चु नारायणन्तन्नुटे पादांबुजं १
चॊल्लुवनॆङ्किल् केट्टुकॊळ्ळुक नराधिप
चॊल्लेरुं जमदग्निनन्दननाय रामन् २
मूवेळुवट्टं मुटिमन्नरॆयॊट्टुक्किप्पोय्
पर्व्वतोत्तमनाय् मेवीटुन्न महेन्द्रत्तिन्- ३
मुकळिल् तपस्सुचॆय्तिरिक्कुं कालत्तिङ्कल्
अकतारुळन्नॊरु राजनारिकळॆल्लां ४
सन्ततियिल्लाञ्जुळ्ळ सन्तापमकलुवान्
सन्तुष्टन्माराय् मेवुमन्तणरोटु चॊन्नार् । ५
वॆन्तु वॆन्तुरुकुन्नु चिन्तिच्चु कुलनाशं
सन्तानमुण्टाक्कणं ञङ्ङळिल् निङ्ङळिनि- ६
यन्तिके वन्नु चॊन्न सुन्दरांगिकळुटॆ
पन्तॊक्कुं कुळुर्मुल पुल्किनारवर्कळुम् । ७
ऋतुकालं पार्त्तु गर्भाधानं चॆय्तकाल-
मतुलगुणमुळ्ळ पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नु । ८

परशुराम द्वारा नष्ट किये गये क्षत्रियवंश का फिर अभिवृद्धि प्राप्त करना

उस समय मुनिवर वैशम्पायन ने नारायण के पादांबुजों (चरण-कमलों) की वन्दना करके कहा—'मैं बतला दूँगा। हे नराधिप! आप सुन लीजिए। विख्यात जमदग्नि के पुत्र परशुराम इक्कीस बार राज करनेवाले राजाओं को समाप्त करके पर्वतोत्तम महेन्द्र पर जाकर जब तपस्या कर रहे थे तब दुःखित राजपत्नियों ने सन्तान न होने का सन्ताप दूर करने के लिए सुख से रहनेवाले ब्राह्मणों से कहा। कुलनाश को सोंचते सोंचते हम लोगों का हृदय संताप से पिघल रहा है। इसलिए आप लोग हममें सन्तान पैदा कीजिए। ब्राह्मणों ने इस प्रकार समीप में आयी हुई सुन्दरियों के कन्दुक समान शीतल स्तनों का आलिंगन किया। जब ऋतुकाल को देखकर गर्भाधान किया गया तब अतुल गुणवाले पुत्रों का जन्म हुआ। ८ उन ब्राह्मणों ने यह काम धर्म के लिए किया,

कामानुभूति चिन्तिच्चल्लतु कुलंतन्नॆ
कामिच्चु चॆय्कयत्रे धर्म्मार्त्थमवरॆल्लाम् । ९
क्षत्रियवीरन्मारुं वर्द्धिच्चारतुकालं
पृथ्वियु परिपालिच्चीटिनार् वळिपोलॆ । १०
चॆन्नीटुं वयस्सु नूऱायिरं संवत्सरं
चॆन्नीटा मनस्सधर्म्मङ्ङळिलॊरुवनुम् । ११
कामक्रोधादिकळां दोषङ्ङळॊन्नुमिल्ल
कामिच्चवण्णंतन्नॆ वन्नीटुमॆल्लावनुं १२
पिळय्किलतिनु तक्कॊरु शिक्षयुमुण्टु
पिळय्कयिल्ला तम्मिलन्योन्यमॊरुवनुं । १३
मळयुं वेणमॆन्नु तोन्नुम्पोळुण्टाय्वरुं
वळियॆन्नियॆ नटन्नीटुमाऱारुमिल्ल । १४
परनारिकळिलुं परद्रव्यङ्ङळिलु-
मॊरुनेरवुमभिरुचियिल्लॊरुवनुम् । १५
वेदवुं वळिपोलॆ पठिक्कुं द्विजेन्द्रन्मा-
रादरवोटु कर्म्मं चॆय्तीटुं नृपन्मारुम् । १६
पशुपालनं कृषि वाणिभमिवयॆल्ला-
मशुभमणयातॆ चॆय्तीटुं वैश्यन्मारुम् । १७
शूद्ररुं द्विजन्मारॆ शुश्रूषिच्चीटुं भक्त्या
शूद्रजातिकळ् केळक्के स्वाध्यायादियुमिल्ल । १८

कामभोग के उद्देश्य से नहीं। क्षत्रियवीर सब अच्छी तरह से बढ़े और उन्होंने ढंग से (न्याय पूर्वक) पृथिवी का परिपालन किया। उस समय मनुष्यों की एक एक लाख बरस की आयु होती थी। किसी का भी मन अधर्म में नहीं लगता था। काम, क्रोध आदि दोष कहीं नहीं थे। जो कुछ लोग चाहते थे वही होता था। अपराध के अनुरूप दण्ड प्राप्त होता था और लोग आपस में कभी न झगड़ते थे। जब बरसात की आवश्यकता प्रतीत होती थी तभी वह होती थी। अपना कर्तव्य-मार्ग छोड़कर चलने वाला कोई भी न था। परनारी और परद्रव्य में किसी की भी अभिरुचि न थी। ब्राह्मण यथाविधि वेद पढ़ते थे और राजा लोग सादर (प्रजापालन) कर्म करते थे। और वैश्य लोग पशुपालन, कृषि और वाणिज्य बिना कूट (छल) के करते थे। शूद्र भक्ति के साथ द्विजों की शुश्रूषा करते थे और शूद्रों के सुनते स्वाध्याय नहीं होता

रौद्रकर्म्मङ्ङळ् चेय्कयिल्लतिदीनन्मारि-
लार्द्रभाववुमुण्टु सत्यवुमुण्टेल्लावर्क्कुम् । १९
कळ्ळक्कोल् कळ्ळप्पेरुनाळियुं कळ्ळनाळि
कळ्ळच्चोतनयिवयिल्ल चन्तकळिलुम् । २०
कळ्ळमेन्नुळ्ळतुळ्ळिलेळ्ळोळमिल्ल चोल्वान्
कळ्ळवाक्किल्ला कळ्ळन्मारिल्ल काट्टिल्प्पोलुम् । २१
स्वधर्म्मानुष्ठानत्तिल् निष्ठयुमुण्टेल्लावर्क्कु-
मधर्म्मङ्ङळुमिल्ल विधर्म्मङ्ङळुमिल्ल । २२
मट्टुळ्ळ वर्णकर्म्मं मट्टुळ्ळ जातिक्किल्ल
मुट्टुं तङ्ङळ्क्कुतङ्ङल्क्कुळ्ळ कर्म्ममेयुळ्ळु । २३
गोक्कळुं नारिकळुं कालत्तु पेरुमल्लो
पूक्कयुं काय्कयुं चेय्तीटुमे मरङ्ङळुम् । २४
उल्पत्ति वेण्टुवोळं विळयुं वळिपोले
कल्पनय्किळक्कमिल्लीश्वरभक्तियुण्टु । २५
सल्पुरुषन्मारेन्नियिल्लोरु वंशत्तिलु-
मुल्पलाक्षिकळुमिल्लाकातेयोरुवरुम् । २६
कुत्सितङ्ङळुमिल्ल कुत्सनवाक्कुमिल्ल
भर्त्सनमोट्टुमिल्ल मत्सरादियुमिल्ल । २७

था। १८ रौद्रकर्म कोई नहीं करता था और अतिदीन के प्रति आर्द्रभाव होता था, सभी सत्यवादी थे। जाली डंडा (एक प्रकार का नाप) जाली बड़ी नाड़ी, जाली नाड़ी, जाली सेर, यह सब बाज़ार में नहीं चलता था। लोगों के भीतर कहने के लिए झूठ तिलभर भी नहीं था, झूठी बातें न होती थीं और चोर जङ्गलों में भी न थे। स्वधर्म के अनुष्ठान में सभी की निष्ठा थी, न कहीं अधर्म था और न विधर्म। एक वर्ण का कर्म दूसरा वर्ण न करता था, सब अपने-अपने ही कर्म किया करते थे। गायें और स्त्रियाँ ठीक समय पर सन्तान उत्पन्न करती थीं। और पेड़ भी इसी प्रकार फूल और फल देते थे। यथेष्ट उत्पादन यथासमय होता था, शासन टाला नहीं जाता था और ईश्वर के प्रति सबकी भक्ति थी। २५ किसी भी वंश में सत्पुरुषों के अतिरिक्त कोई नहीं था और उत्पलाक्षियों (कमल के समान नेत्र वाली स्त्रियों) में भी बिगड़ी हुई कोई न थी। कोई कुत्सित (निन्दित) नहीं था और किसी के भी मुख से निन्दा की वाक् (वाणी) नहीं सुनी जाती थी। कोई

इङ्ङने कृतयुगमायुळ्ळ कालत्तिङ्कल्
तङ्ङळिल् सुरासुरर् वैरमाय् चमञ्ञतु । २८
देवकळोटु पोरिल् मरिच्चारसुरकळ्
देवत्वं कोंतिच्चवर् पिऱन्नारवनियिल् । २९
नानायोनिकळिल् वन्नुद्भविच्चसुरन्मार्
मानसखेदं पूण्टु मेदिनि भारं कोण्टु । ३०
निष्ठुरन्मारायुळ्ळ दैत्यभूपतिवीरर्
दुष्टतयोळिञ्ञु चेय्तीटुकयिल्लयोन्नुम् ३१
नष्टमाय् च्चमञ्ञतु धर्म्मवुमतुकालं
पेट्टपाटोरोजनमेन्तय्यो परवतुम् । ३२
प्रकृतिगुणवशालुळ्ळ वासनकळे-
स्सुकृतमुळ्ळवक्कुं नीक्कुवान् वेलयत्रे । ३३
लोकपालरुं मुनिमारुमायवनियुं
लोककर्त्तावायुळ्ळ धातावुतन्नेक्कण्टाळ् । ३४
वेदनयेल्लां पशुरूपमाय् चेन्नु चोन्नाळ्
वेदनायकनाय धातावुमतुकालं ३५
देवकळोटुं मुनिश्रेष्ठन्मारोटुं कूटि-
ट्टेवदेवेशनीशनीश्वरन् शंभु वाम-
देवनंबिकापति शङ्करन् महेश्वरन् ३६
श्रीकण्ठन् शितिकण्ठन् त्रीक्षणन् त्रिपुरारि
वैकुण्ठनमस्कृतनीशानन् पशुपति ३७

किसी को नहीं डाँटता था और मत्सर कहीं न था। इस कृतयुग के समान समय में देव और असुरों में वैर पैदा हो गया। युद्ध में देवों के हाथ असुर मारे गये और देवत्व प्राप्त करने की लालसा से उन्होंने पृथिवी पर जन्म लिया। असुर लोग भिन्न भिन्न योनियों में पैदा हुए और उनके भार से मेदिनी (पृथ्वी) दुःखित हुई। क्रूर दैत्य भूपतिवीर दुष्टता से मुक्त (रहित) कोई भी काम नहीं करते थे। धर्म तो उस समय बिलकुल ही नष्ट हो गया और लोगों ने जो कष्ट सहा वह कहाँ तक कहा जाय? ३२ प्रकृति के गुणों के कारण जो प्रवृत्तियाँ पैदा होती हैं उनको दूर करना पुण्यजनों के लिए भी कठिन है। लोकपाल, महामुनि और स्वयं पृथिवी देवी ने लोक के कर्ता ब्रह्मा का दर्शन किया। गाय के रूप में जाकर पृथ्वी ने अपना सारा दुःख सुनाया। उस समय

त्र्यंबकन् चन्द्रचूडन् शंबराराातिवैरि
गंगावल्लभन् गौरीवल्लभन् कालाराति ३८
मत्तहस्तीन्द्रासुरमर्द्दनन् भूताधिप-
नस्थिभूषणन् कृत्तिवसनन् मृत्युञ्जयन् ३९
अद्रिमन्दिरन् अद्रिचापनद्रिजाकान्तन्
रुद्रन् वाणरुळीटुं कैलासाचलं पुक्कान् । ४०
दानवप्रवरन्मार् मानवप्रवरराय्
क्षोणियिल् वन्नु पिऱन्नीटिनारितुकालम् । ४१
सम्मतं मऱञ्ञितु दुर्म्मतं निऱञ्ञितु
धर्म्मवुं कुऱञ्ञितु निर्म्मर्यादयुं वाच्चु । ४२
भूमियुं भारंकोण्टु तळन्नुं चमञ्ञितु
सोमशेखर पोट्टी ! कात्तुकोळ्कॆन्नेवेण्टु । ४३
स्तुतिच्चु वन्दिच्चोरु पद्मजादिकळोटाय्
क्रतुध्वंसियुं तॆळिञ्ञरुळिच्चेय्तीटिनान् । ४४
वधत्तिन्नसुरभूपालरेयॆल्लामिन्नु
मधुद्वेषियेक्कल्पिच्चिरिक्कुन्नितु मुन्ने । ४५
दुष्टरे वधं चेय्तु शिष्टरे विधिपोले
विष्टपत्तिङ्कल् वच्चु रक्षिप्पान् वेलचेय्याम् । ४६
सङ्कटं दुग्धांबुधि पुक्कुटनुणर्त्तिप्पान्
पङ्कजभवादिकळ् नटप्पिन् मुन्पिलिप्पोळ् । ४७

वेदों के नायक ब्रह्मा देवों और मुनिवरों के साथ देवदेवेश, ईश, ईश्वर, शंभु-वामदेव, अंबिकापति, शङ्कर, महेश्वर श्रीकण्ठ, शितिकण्ठ, त्रीक्षण, (तीन नेत्र वाले) त्रिपुरारि, वैकुण्ठनमस्कृत, ईशान, पशुपति, त्र्यंबक, चन्द्रचूड, शंबरशत्रु के वैरि गंगावल्लभ, गौरीवल्लभ, काल के शत्रु मत्त हाथी के रूपवाले असुर का मर्दन करने वाले, भूताधिप, अस्थिभूषण, कृत्तिवास, मृत्युंजय, अद्रिमन्दिर, अद्रिचाप, पार्वतीकान्त, रुद्र के निवास स्थान कैलास पर्वत पर गये और कहने लगे—४० दानवों के प्रमुखों ने मानवप्रमुख के रूप में पृथिवी में आकर जन्म लिया है। सद्भावना नष्ट हो गयी, दुर्भावना फैल गयी, धर्म कम हो गया और निर्मर्यादा बढ़ गयी। पृथिवी भी भार से दुखी हो गयी है। हे सोमेश्वर, हे दीन-दयालु ! रक्षा करो, इतना ही कहना है। जिन ब्रह्मादिकों ने इस प्रकार स्तुति और वन्दना की उन पर प्रसन्न होकर क्रतुध्वंसी (दक्ष के यज्ञ का

मटियिल् मरुवीटुं मलमातिन् पोर्मुल-
त्तटवुं तटवि नां पोकॆटो दुग्धांबुधौ । ४८
इवर्कळोटुमिप्पोळ् नां कूटॆप्पोकाय्किलो
विवशभावं तीरा लोकङ्ङळ्क्कात्मनाथे ! ४९
ऎन्नरुळ्चॆय्तु भुवनेश्वरियोटुकूटि-
प्पन्नगविभूषणन् भूतसंचयत्तोटुं ५०
अंभोजसंभवनुमुन्परुं मुनिमारुं
तुंबुरुनारदनुमंबरचारिकळुं ५१
चॆन्नु पालाळिकण्टु पुकळ्न्नुतुटङ्ङिनार्
पन्नगशयननां परमात्मानं परम् । ५२
पुरुषोत्तम ! हरे ! पुण्डरीकाक्ष ! पर-
पुरुष ! पुरातन ! पूर्व्वदेवारे ! जय ! ५३
चरणसरसिजयुगळनतजन-
दुरितविनाशन ! करुणानिधे ! जय ! ५४
वेदज्ञप्रिय ! जय वेदार्त्थात्मक ! जय !
वेदान्तवेद्य ! जय ! वेदविग्रह ! जय ! ५५

विध्वंस करने वाले शिव जी) ने कहा असुरभूपालों के वध के लिए पहले ही मधुद्वेषी (विष्णु) से कहा गया है। दुष्टों का निग्रह करके शिष्टों की इस लोक में यथाविधि रक्षा करने में मैं सहायक हूँगा। ४६ अब क्षीरसागर पहुँचकर सारा दुःख विष्णु को बतलाने के लिए आप (ब्रह्मा आदि) रवाना हो जाइए। तदनन्तर पन्नगविभूषण (सर्पों के भूषण वाले शिव जी) ने गोद में बैठी हुई पार्वती जी के स्तनतटों को आलिङ्गन कर कहा—"अब हम क्षीरसागर चलें। हे आत्मनाभे ! अगर हम इन के साथ न चलेंगे तो लोकों की विवशता न दूर होगी"। इतना कहकर भुवनेश्वरी के साथ, भूतगणों के साथ, तथा ब्रह्मा, देवगण और मुनिगण, तुंबुरु, नारद और गगनचारियों के साथ क्षीरसागर गये और अनन्तशयन परमात्मा की इस प्रकार स्तुति करने लगे—५२ हे पुरुषोत्तम, हे हरि ! पुण्डरीकाक्ष ! परपुरुष ! पुरातन ! असुरों के शत्रु ! तुम्हारी जय हो ! हे अपने पादपद्मों पर नत लोगों के पाप को नष्ट करने वाले ! हे करुणा-निधि ! जय हो ! हे वेदज्ञों के प्रिय ! वेदार्थात्मक ! जय हो ! हे वेदान्तवेद्य ! हे वेदविग्रह ! जय हो ! हे प्रकृति और पुरुष से भिन्नात्मक ! जय हो ! हे पुण्यजनों के मन में रहने वाले ! जयजय ! हे सृष्टि, पालन और संहार-कर्त्ता !

प्रकृतिपुरुषभिन्नात्मक ! जय जय !
सुकृतिजनमनोमन्दिर ! जय जय ! ५६
सृष्टिपालनलयकारणमूर्त्ते जय !
दुष्टनाशन जय शिष्टपालन जय ! ५७
हयग्रीवनेक्कॊन्नु वेदङ्ङळ् वीण्टु मुन्नं
भयत्तेत्तीर्प्पान् मत्स्यवेष माधव जय ! ५८
क्षीरसागरमथनान्तरे मुन्नमति-
भारमाय्काणीटुन्न मन्दरमुयर्त्तुवान् ५९
घोरमायोरु कूर्म्मविग्रहं धरिच्चीटुं
कारणमूर्त्ते जय कमलापते जय ! ६०
धात्रियेत्तिरिच्चु तन् कातिलिट्टधोलोक-
प्राप्तिक्कु भाविच्चोरु हिरण्याक्षनें मुन्नं ६१
पोत्रियायवतारं चेय्तु निग्रहिच्चु तन्
धात्रियें स्थानत्ताक्कुं यज्ञांगमूर्त्ते जय ! ६२
हिरण्यकशिपुवामसुरेन्द्रनेक्कॊल्वान्
नरसिंहाकारमाय्च्चमञ्ञ नाथ ! जय । ६३
दितिजाधिपनाय बलियें जयिप्पति-
नदितीसुतनाय वामनमूर्त्ते ! जय । ६४
धरणीसुरजनद्वेषिकळायुण्टाय
धरित्रीपालन्मारें जमदग्निजनाये ६५

जय हो ! हे दुष्टनाशन ! हे शिष्टपालन ! तुम्हारी जय हो ! हयग्रीव का वध करके पूर्वकाल में तुमने वेदों का उद्धार किया। भय दूर करने के लिए जिसने मत्स्य का रूप धारण किया उस माधव की जय ! पूर्वकाल में समुद्रमन्थन के अवसर पर भारी मन्दरपर्वत को उठाने के लिए हे कारणमूर्ते ! कमलापते ! तुमने एक घोर कूर्म का रूप धारण किया था। तुम्हारी जय हो। ६० पृथिवी को लपेटकर अपने कान में दबाकर पाताल ले जानेवाले हिरण्याक्ष का पूर्वकाल में वराह रूप में अवतार लेकर निग्रह करने वाले और भूमि को अपने स्थान में स्थापित करने वाले यज्ञांगमूर्ति तुम्हारी जय हो ! हे नाथ ! असुर हिरण्यकशिपु के वध के लिए तुमने नरसिंह का आकार ग्रहण किया था। तुम्हारी जय हो ! तुम्हारी जय हो जिसने असुरों के नाथ बलि को जीतने के लिए अदितिसुत वामन की मूर्ति ग्रहण कर ली। हे परशुराममूर्त्ते ! रक्षा करो,

इरुपत्तोन्नुवट्टं वधिच्चु तापं तीर्त्त
परशुराममूर्त्ते परिपालय जय । ६६
पंक्तिकण्ठनेक्कोन्नु मुन्नमापत्तु तीर्प्पान्
पंक्तिस्यन्दनसुतनाय राघव जय ! ६७
अन्नन्नीवण्णमुण्टामापत्तु तीर्त्तु रक्षि-
क्कुन्नतु मट़ारखिलेश्वर जय जय । ६८
इप्पोळुमतिल्परमापत्तु मुळुत्तितु
चिल्पुमानाय जगतीपते ! रमापते ! । ६९
निष्ठुरन्मारामसुरेन्द्रन्मारवनियिल्
दुष्टभूपालन्माराय् पिरन्नु मुळुक्कयाल् ७०
नष्टमायितु धर्म्मकर्म्मङ्ङळेल्लामळल्-
प्पेट्टुटन् भारंकोण्टु ताणुपोमवनियुम् । ७१
निन् तिरुवुळ्ळमिल्लेन्नाकिलिन्ञङ्ङळ्क्कोल्ला-
मेन्तोरु गति परमानन्दमूर्त्ते विष्णो ! । ७२
सन्ततं तव पादपङ्कजमकतारिल्
चिन्तिक्काय्वरेणमे भगवन् जय जय ! ७३
पुरनाशनन् तानुं पुरुहूतादिकळुं
पुरुभक्तियुं पूण्टु पुकळ्न्नार् पलतरं । ७४

तुम्हारी जय हो जिसने जमदग्नि का पुत्र बनकर ब्राह्मणद्वेषी भूपालों को इक्कीस बार नष्ट कर दिया और जनता का दुःख समाप्त कर दिया। जिसने पुरा (प्राचीन काल में) दशरथ का पुत्र बनकर दशकण्ठ का वध किया और विपत्ति को हटाया उस राघव की जय हो ! ६७ हे अखिलेश्वर ! पैदा होने वाली विपत्तियों को तत्काल ही दूर करनेवाला तुम्हें छोड़कर और कौन है ? तुम्हारी जय हो ! हे जगतीपते ! रमापते ! अब फिर उससे बढ़कर विपत्ति पैदा हो गयी है। पृथिवी में दुष्ट भूपाल के रूप में क्रूर असुरों के जन्म लेने के कारण, अब धर्म कर्म सब नष्ट हो गया और दुःखित भूमि अब भार से नीची हो जायगी। हे परमानन्द-मूर्त्ते ! हे विष्णो ! अगर तुम्हारा प्रसाद (कृपा) न होगा तो अब हम लोगों की क्या गति होगी ? हे भगवन् ! ऐसा हो कि हम लोग सतत (निरन्तर) तुम्हारे पादपङ्कज का ध्यान करते रहें। जय जय ! शिवजी और इन्द्र आदि देवगणों ने बड़ी भक्ति के साथ विभिन्न प्रकार से स्तुति की। ब्रह्मा ने पुरुषसूक्त के द्वारा पुरुषोत्तम का अच्छी तरह से ध्यान किया। ७५

पुरुषसूक्तंकोंण्टु पुष्करोद्भवन् नन्नाय्
पुरुषोत्तमन्तन्नें ध्यानिच्चान् वळिपोलें। ७५
स्तुतिच्चीवण्णं नमस्करिच्चनेरं देवन्
मधुद्वेषियुमुणर्न्नरुळिच्चेय्तीटिनान्। ७६
मधुरवाक्यङ्ङळाल् विशदस्मितपूर्व्वं
मथुरापुरितन्निल् वसुदेवात्मजनाय् ७७
देवकीतनयनाय् वन्नु ञान् जनिच्चीटुम्।
देवकळेल्लावरुं भूमियिल्प्पिरक्कणम्। ७८
अरुळप्पाटीवण्णं पद्मजन् देवकळो-
टरुळिच्चेय्तु सत्यलोकवुं पुक्कीटिनान्। ७९
भूमियुं देवकळुं तापसवरन्मारु-
मामोदं पूण्टु कृतात्थत्मिना नटकोंण्टार्। ८०
आदितेयन्मारेल्लां पिरन्नारवनियिल्
आदिनाथनेस्सेविच्चानन्दं वरुत्तुवान्। ८१
भूसुरन्मारायिट्टुं भवरन्मारायिट्टुं
भूतले पिरन्नितु भूतियुं वाच्चु तुलोम्। ८२
यक्षकिन्नरगन्धर्व्वोरगचारणौघ-
रक्षोगुह्यकसिद्धविद्याधरादिकळुं ८३
अप्सरस्त्रीकळ्तानुमद्भुतं वरुंवण्णं
चित्पुरुषनेप्परिचरिप्पानुळरायार्। ८४

जब उन्होंने इस प्रकार स्तुति करके नमस्कार किया तब देव मधुद्वेषी (विष्णु) ने मुस्कराते हुए मधुर वाक्यों के द्वारा निवेदन किया। "मथुरा नगरी में वसुदेव और देवकी के पुत्र के रूप में मैं जन्म लूँगा। सभी देव भी पृथिवी में जन्म ले लें। भगवान् ब्रह्मा आदि देवों से इस प्रकार कहकर सत्यलोक चले गये। भूमिदेवी, देवगण और तापसवर प्रमुदित हुए और कृतार्थ होकर चले गये। आदिनाथ की सेवा करके आनन्द का अनुभव करने के लिए सभी आदितेयों (देवगण) ने पृथ्वी पर जन्म लिया। ब्राह्मणों और भूपालों के रूप में भूतल में जन्म लिया और समृद्धि बढ़ी। यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, उरग (सर्प), चारणगण, रक्षस्, गुह्यक, सिद्ध, विद्याधर, अप्सरा आदि अद्भुत प्रकार से चित्पुरुष (चैतन्यरूपी विष्णु) की सेवा करने के लिये सन्नद्ध हुए। ८४

कृष्णनाय् पिऱन्नतुमिङ्ङने जगन्नाथन्
विष्णुभक्तन्मारोक्क सेविच्चारानन्दिच्चार् । ८५
दुष्टरे शिक्षिक्कयुं शिष्टरे रक्षिक्कयुं
तुष्टनायेल्लावर्क्कुं सल्गति कोटुक्कयुं ८६
दोषं चेय्तवर्कळ्क्कुं नल्लतु चेय्तवर्क्कुं
द्वेषमुळ्ळवर्कळ्क्कुं स्नेहमुळ्ळवर्कळ्क्कुं ८७
कामिच्च जनङ्ङळ्क्कुं मोहिच्च जनङ्ङळ्क्कुं
नामत्ते चोल्लुवोर्क्कुं रूपत्ते ध्यानिप्पोर्क्कुं ८८
भक्तरायुळ्ळवर्क्कुं सक्तरायुळ्ळवर्क्कुं
मुक्तियै वरुत्तुवानोरोरोतरत्तिले ८९
पारिल् वन्नवतरिच्चीटिनान् नारायणन्
तारिल् मातादियाकुं परिवारङ्ङळोटुम् । ९०
शत्रुमित्रोदासीनभेदमिल्लोरुनाळुं
नित्यनामीशन्तनिक्केल्लारुमोक्कुमत्रे । ९१
केवलं देवकळे स्नेहमोट्टेऱयिल्ल
देववैरिकळेयुं द्वेषमिल्लोरुनाळुम् । ९२
सर्व्वजन्तुक्कळुटे जीवनायिरिप्पतुं
दिव्यनां नारायणन्तानेन्नु धरिच्चालुम् । ९३
अप्पोळे भेदमिल्लेन्नुळ्प्पूविलुऱच्चीटा-
मुल्पलनेत्रन्तन्टे मायावैभवमेल्लाम् । ९४

जगन्नाथ ने कृष्ण के रूप में अवतार किया। सभी विष्णुभक्तों ने उनकी सेवा की और आनन्द का अनुभव किया। उन्होंने दुष्टों को दण्ड दिया, शिष्टों की रक्षा की तथा सन्तुष्ट होकर सबको सद्गति प्रदान की। पाप करने वालों को, भला करने वालों को, दिल में द्वेष रखने वालों को और स्नेह रखनेवालों को, कामी जनों को, मोहग्रस्त जनों को, नाम का जप करने वालों को, रूप का ध्यान करने वालों को, भक्तों को और सक्तों को भिन्न भिन्न प्रकार से मुक्ति दिलाने के लिए भगवान् नारायण ने लक्ष्मी आदि अपने परिवार के साथ पृथिवी पर अवतार किया। ९० शत्रु, मित्र, उदासीन, यह भेद वे कभी नहीं मानते थे क्योंकि उन नित्य ईश के लिए सब एक थे। केवल देवों के प्रति उनका अधिक स्नेह नहीं था, और देवों के शत्रुओं के प्रति उनका कभी द्वेष भी न था। समझ लीजिए कि सभी जन्तुओं के प्राण दिव्य नारायण ही थे। इसी से अपने

ज्ञानमिल्लातवर्क्कु भेदमुण्टॆन्नु तोन्नुं
ज्ञानिकळ्क्कुळ्ळतु तोन्नुकयिल्लातानुम् । ९५
समचित्तन्मार्क्कॊक्कस्समनॆन्नुळ्ळल्तोन्नुम्
मम सिद्धान्तं तन्नॆयल्लितु धरापते । ९६
विषमचित्तन्मार्क्कु विषमनॆन्नु तोन्नुं
वृषपालकनात्मावॆन्नतिनाले नूनम् । ९७
अॆन्नु वैशम्पायनमामुनि चॊन्ननेरं
मन्नवनाय जनमेजयनुरचॆय्तु । ९८
ऒन्नुण्टु मनक्काम्पिल् तोन्नुन्नितिनिक्किप्पो-
ळिन्नितु शङ्किच्चिट्टु चोदिप्पान् पणितानुम् । ९९
दुश्चोद्यमॆन्नु तिरुवुळ्ळक्केटुण्टाकायिक-
लिच्छयुण्टिनिक्किन्नु मॊन्नु केळ्प्पतिनिप्पोळ् । १००
निन्तिरुवटियऱियातॆयिल्लेतुमॆन्नाल्
सन्ततं केळ्प्पानुण्टो भाग्यमॆन्नऱिञ्ञील । १०१
दानव दैत्य देव गन्धर्व्वाप्सरस्सुकळ्
मानव यक्ष रक्षोजातियुं मट्टुमुळ्ळ १०२
जन्तुक्कळुण्टाय्वन्नतॊक्कवेयऱिवति-
नॆन्तॊरु कळिवॆन्नु चिन्तिच्चेन् मनसि ञान् । १०३

मन में निर्णय कर लीजिए कि यह सब उत्पलनेत्र (विष्णु) की माया का वैभव है इसमें कोई पारस्परिक भेद नहीं है। जो अज्ञानी हैं उनके लिए भेद प्रतीत होता है, पर जो ज्ञानी हैं उनके लिए वह भेद प्रतीत नहीं होता। जो समचित्त हैं उनके लिए सम प्रतीत होता है। हे भूपाल ! यह केवल मेरा सिद्धान्त नहीं है। जो विषमचित्त हैं उनके लिए विषम प्रतीत होता है। इसलिए निःसन्देह वृषपालक (धर्मरक्षक विष्णु) ही सबकी आत्मा हैं। ९७ जब महामुनि वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तब राजा जनमेजय ने निवेदन किया। एक बात मुझे अब सूझ रही है। आज इस शङ्का के बारे में पूँछना कठिन लग रहा है। अगर आप इसे कुप्रश्न समझ कर नाराज़ न हों तो मेरी पूँछने की इच्छा हो रही है। ऐसी कोई बात नहीं है जो आप भगवान् न जानते हों पर मुझे सुनने का निरन्तर भाग्य है या नहीं, यह मैं नहीं जानता। मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि दानव, दैत्य, गन्धर्व, अप्सरा, मानव, यक्ष, रक्षस् आदि प्राणियों का उत्पत्तिप्रकार जानने का क्या उपाय है ? अगर मैं

ञानतु केळ्प्पान्तक्क पात्रमॆन्निल् रिक्किलो
सानन्दमरुळिच्चय्तीटणमॆन्ननेरम् । १०४
नमस्ते नारायण ! नमस्ते जगन्नाथ !
नमस्ते समस्तेश ! तुणय्कॆन्नरुळ्चेय्तु । १०५
केट्टुकॊण्टालुमॆङ्किलादिये देवादिकळ्
वाट्टमॆन्निये मुन्नमुण्टायप्रकारङ्ङळ् । १०६
अळविल्लात वॆळ्ळमॆन्निये लोकमॊन्नुं
प्रळयकालत्तिङ्कलिल्लॆन्नु धरिच्चालुम् । १०७
अप्पॊळुमॊरु लयमिल्लात नारायणन्
चिल्पुमान् नाभितन्निलुण्टायितॊरु पद्मं । १०८
अप्पूविलुद्भविच्चू चॊल्लॊङ्ङु विरिञ्चनु-
मप्पॊळुतवनॆक्कॊण्टॊक्कवे सृष्टिप्पिच्चान् । १०९
ऒन्नतिल् नटेनटेयुण्टायी चतुर्म्मुखन्
तन्नुटॆ मनस्सिल् निन्नारु तापसन्मारुम् । ११०
पेरुकळ् मरीचियुमत्रियुमंगिरस्सुं
धीरनां पुलस्त्यनुं पुलहन् क्रतुतानुं । १११
अवरिल् मरीचिक्कु काश्यपनुण्टाय्वन्ना-
नवङ्कल्निन्नु नानाजन्तुक्कळुण्टायतुम् । ११२
दक्षनां प्रजापतितन्नुटॆ मकळरां
मय्क्कण्णिमारिल् पतिम्मून्निनॆ वेट्टानवन् । ११३

यह सब सुनने योग्य पात्र हूँ तो मुझे सानन्द सुनाइए । इस पर उन्होंने कहा—१०४ हे नारायण ! नमस्ते ! हे जगन्नाथ! नमस्ते ! हे समस्तेश ! नमस्ते ! मेरी सहायता करो ! अगर इच्छा है तो बिना संकोच के सुन लीजिए कि प्रारंभ से ही देवादिकों की कैसे उत्पत्ति हुई । जान लीजिए कि प्रलयकाल में निस्सीम पानी के अतिरिक्त और कुछ न था । उस समय भी नारायण तो लयहीन थे और उनके नाभि में एक पद्म पैदा हुआ । उस पुष्प में विख्यात विरिंच (ब्रह्मा) का उद्भव हुआ और नारायण ने उससे इस जगत् की सृष्टि करायी । सबसे पहले चतुर्मुख (ब्रह्मा) के मन से छः तापसों का जन्म हुआ । ११० उनके नाम इस प्रकार हैं—मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, और क्रतु । उनमें मरीचि का काश्यप नामक पुत्र हुआ जिससे तरह-तरह के प्राणियों का जन्म हुआ । उसने प्रजापति दक्ष की कन्याओं में से तेरह के साथ विवाह

अदिति, दिति, दनु, कालयुमनायुष
पतिशुश्रूषारतयाकिय सिंहिकयुं ११४
मुनियुं क्रोधतानुं ध्रुवयुं वरिष्ठयुं
विनत कपिलयुं कद्रुवुमिवरॆल्लाम् । ११५
इवरिलदितियिलादित्यन्मारुण्टाय् ।
धातावुं मित्रन्तानुमर्यमा शक्रनॆन्नुं ११६
वरुणनंशस्भगन् विवस्वान् पूषावॆन्नुं
सविता पिन्नॆ त्वष्टा विष्णुवुमिवरॆल्लाम् । ११७
दितितन् मकनल्लो हिरण्यकशिपुतान्
सुतन्मारायिट्टवनंचुपेरुण्टाय्वन्नु । ११८
प्रह्लादन् सह्लादनुमनुह्लादनु पिन्नॆ
शिबियुं बाष्कळनुमवक्कुं नाममॆटो । ११९
अवरिल् प्रह्लादनु मून्नु पुत्रन्मारुण्टा-
यवर्पोल् विरोचनन् सुंभनुं निसुंभनुं । १२०
अवरिल् विरोचनन्तन्मकन् महाबलि-
यवनु नूरुमक्कळवरिल् ज्येष्ठन् बाणन् । १२१
दनुवामवळ् पॆट्टु नाल्पतुपेरुण्टायि
दनुजन्मारामवर् नाल्पतिन् पेरुं चॊल्लाम् । १२२
विप्रचित्तियुं पिन्नॆश्शंबरन् नमुचियुं
चॊल्पेरुं पुलोमावुमसिलोमावुं केशि १२३

किया। उन सबके नाम ये हैं—१ अदिति, २ दित, ३ दनु, ४ काला, ५ अनायुषा, ६ पतिशुश्रूषा में रत सिंहिका, ७ मुनि, ८ क्रोधा, ९ ध्रुवा, १० वरिष्टा, ११ विनता, १२ कपिला और १३ कद्रू। इनमें अदिति से आदित्यों का जन्म हुआ। जिनके नाम ये हैं—१ धाता, २ मित्र, ३ अर्यमा, ४ शक्र, ५ वरुण, ६ अंशस्, ७ भग, ८ विवस्वान्, ९ पूषा, १० सविता, ११ त्वष्टा, १२ विष्णु। दिति का पुत्र हिरण्यकशिपु हुआ जिनके पाँच पुत्र हुए—११८ उनके नाम हैं—१ प्रह्लाद, २ संह्लाद, ३ अनुह्लाद, ४ शिबि, ५ बाष्कल। उनमें प्रह्लाद के तीन पुत्र हुए—१ विरोचन, २ शुंभ और निशुंभ। उनमें विरोचन का पुत्र हुआ महाबलि जिनके सौ पुत्रों में बाण ही ज्येष्ठ था। दनु ने चालीस पुत्रों को जन्म दिया। वे ही दनुज कहलाते हैं और उनके नाम इस प्रकार हैं। विप्रचित्ति, शंबर, नमुचि, विख्यात पुलोमा, असिलोमा, केशि, दुर्जय,

दुर्ज्जयनश्वशिरावमलनयशिशरा-
वयश्शङ्कुवुं शङ्कु गगनमूर्धावेन्नुं १२४
वेगवान् केतुमानुं स्वर्भानु चित्रभानु-
वश्वनुमश्वपति वृषपर्व्वावुतानुं १२५
जगनुमश्वग्रीवन् सूक्ष्मनुं तुहुण्डनुं
खसृवुंतानुमेकचित्तनुं विरूपाक्षन् १२६
हरनुमहरनुं निचन्द्रन् निकुंभनुं
कपथन् कापथनुं शरदन् शरभनुं १२७
चन्द्रमावेन्नुमिवर् नालपतु दानवन्मार् ।
सिंहिक पेट्टिट्टुळ्ळु राहुवाकिय वीरन् । १२८
सुचन्द्रन् चन्द्रहर्त्ता चन्द्रमर्द्दनन्तानुं
क्रूरस्वभावनेन्नुं क्रूर पेट्टुण्टाय्वन्नु । १२९
अप्पारम्पर्यं परञ्ञीटुवान् पणि तुलोम् ।
दैत्यपक्षत्तिल् क्रोधवशन्मारेन्न कूट्टं १३०
पत्तुपेरुण्टु पिन्नेच्चोल्लीटामवरेयुम् ।
एकाक्षनमृतपन् प्रलंबन् नरकनुं १३१
वातापितानुं शत्रुतपनन् सदन्तनुं
गर्भिष्ठन् चन्द्रनायुर्द्दीर्घजिह्वनुमेव- १३२
मसंख्यमवरुटे पुत्रपौत्रन्मारेल्लाम् ।
चोल्लुवननायुषतन्नुटे सुतन्मारे १३३

अश्वशिरा, अमल, अयःशिरा, अयःशङ्कु, शङ्कु, गगनमूर्धा, वेगवान्, केतुमान्, स्वर्भानु, चित्रभानु, अश्व, अश्वपति, वृषपर्वा, जग, अश्वग्रीव, सूक्ष्म, तुहण्ड, खसृ, एकचित्त, विरूपाक्ष, हर, अहर, निचन्द्र, निकंभ, कपथ, कापथ, शरद, शरभ, चन्द्रमा—इस प्रकार चालीस दानव हुए। राहु नामक वीर को सिंहिका ने जन्म दिया। १२८ क्रूरा ने सुचन्द्र, चन्द्रहर्ता, चन्द्रमर्दन और क्रूरस्वभाव को पैदा किया। उस परम्परा का वर्णन करना कठिन काम है। दैत्यपक्ष में एक क्रोधी वर्ग है, दस दैत्यों का। उनके नाम भी बतला दूँगा। एकाक्ष, अमृतप, प्रलंब, नरक वातापि, शत्रुतपन, सदन्त, गर्भिष्ठ, चन्द्र, आयु, दीर्घजिह्व, इस प्रकार हैं और इनके पुत्र-पौत्र असंख्य हैं। मैं अब अनायुषा के पुत्रों को बतला रहा हूँ। विष्कर, बल, वीर, वृत्र इस प्रकार चार अत्यन्त बलवान् पुत्र हुए। जान लीजिए कि काला के पुत्र कालकेय कहलाते हैं। उनके नाम

विष्करन् बलन् वीरन् वृत्रनुमेन्नु नाल्वर्
मक्कळुण्टवर्कळुमेत्रयुं बलवान्मार् । १३४
कालयामवळुटे मक्कळेन्नरिञ्ञालुं
कालकेयन्मारवर्तम्मुटे पेरु चौल्लाम् । १३५
दुष्टनां विनाशनन् क्रोधनन् क्रोधहन्ता
पिन्नेतु विवर्धननक्रोधनिवरेल्लां १३६
कालकेयन्मार् देववैरिकळरिञ्ञालुम् ।
इच्चौन्न दैत्यपक्षत्तिङ्कलुळ्ळवर्क्कॆल्ला- १३७
मच्छनाकिय शुक्रन् भार्ग्गवनुपाध्यायन् ।
निश्शेषं देवासुरन्मारुटे पारम्पर्यं १३८
निश्चयं पऱवतिनाक्कुमेयरुतल्लो ।
विनततन्टे मक्कळ् वैनतेयन्मारेल्लां १३९
विरवोटवरुटे पेरुकळ् ताक्ष्यनेन्नु
अरिष्टनेमितानुं गरुडनरुणनु- १४०
मारुणि वारुणियुं विनतातनयन्मार् ।
कद्रुविन् मक्कळल्लो काद्रवेयन्मारेल्ला- १४१
मनन्तन् वासुकियुं तक्षकन् कार्क्कोटकन्
पद्मनुं महापद्मन् गुळिकन् शंखपालन् १४२
अप्परिषकळुटे सन्तति चौल्लिक्कूटा
मुल्पाटु चुरुक्कि ञानोट्टरियिच्चेनल्लो । १४३
मुनियामवळुटे पुत्रन्मार् मौनेयन्मा-
रवर्कळुटे नाममादिये केळ्प्पिनेङ्किल् । १४४

बतलाऊँगा । १३५ दुष्ट विनाशन, क्रोधन, क्रोधहन्ता, उसके बाद विवर्धन, अक्रोधन, ये ही कालकेय हैं और सब देवों के वैरी हैं । दैत्यपक्ष में जितने कहे गये हैं उन सबके पिता (रक्षक) हैं उपाध्याय भार्गव शुक्र । देवों और असुरों की सारी परम्परा निश्चित रूप से कोई भी नहीं बतला सकता । विनता के पुत्र वैनतेय कहलाते हैं । उनके अलग अलग नाम हैं—तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, गरुड, अरुण, आरुणि, और वारुणि । कद्रू के पुत्र काद्रवेय कहलाते हैं । वे हैं—अनन्त, वासुकि, तक्षक, कार्क्कोटक, पद्म, महापद्म, गुडिक, शंखपाल । उनकी सन्तति बतलाना कठिन है । पहले तो संक्षेप में मैं कह भी चुका हूँ । १४३ मुनि के पुत्र मौनेय हैं । उनके नाम शुरू से सुन लीजिए । भीमसेन, उग्रसेन, सुवर्ण, वरुण,

भीमसेननुमुग्रसेननुं सुवर्ण्णनुं
वरुणन् गोपतियुं धृतराष्ट्रनुं पिन्ने १४५
सूर्यवर्चसन्तानुं पत्रवानर्क्कवर्ण्णन्
प्रयुगन् चित्ररथन् सर्व्ववद्वशितानुं १४६
वीरनां शालिशिरा धृष्टद्युम्ननुं कलि
पतिनारामतल्लो नारदनेन्नु नामम् । १४७
देवगन्धर्व्वन्मारेन्निवरेच्चोल्लीटुन्नु
देवकळोटुतन्ने तुल्यन्मारिवरेल्लां । १४८
प्रापयामवळुटे मक्कळु मकळरुं
प्राभवमेरेयुळ्ळोर् नामङ्ङळ् चोल्लामल्लो । १४९
अनवद्ययुमनुवशयुं मदिरयुं
मार्ग्गणप्रियतानुं मन्नव ! सुभगयुं १५०
भंगियुमित्थमेळु नारिकळुण्टाय्वन्नु ।
सिद्धनुं पूर्ण्णन् तानुं बर्हियुं पूर्णाशनुं १५१
ब्रह्मचारियुं रतिगुणनुं सुवर्ण्णनुं
चोल्लेळुं विश्वावसु भानुवुं सुभद्रनुं १५२
पुत्रन्मारिवर्पत्तुं प्रापेयन्मारेन्नरि-
कद्भुतमप्सरस्सां वंशमेन्नरिञ्ञालुम् । १५३
वरिष्ठतनिक्कुळ्ळोरपत्यमतु केळ्प्पिन्
चुरुक्किच्चोल्वनलंबुसयुं मिश्रकेशि १५४
चोल्लेळुं विद्युद्वर्ण्णा ललनाख्ययुं पुन-
ररुण रक्षतयुं रंभयुं मनोरम १५५

गोपति, धृतराष्ट्र, सूर्यवर्चस्, पत्रवान्, अर्कवर्ण, प्रयुग, चित्ररथ, सर्ववद्वशी, वीर शालिशिरा, धृष्टद्युम्न, कलि, और सोलहवें पुत्र का नाम है नारद। इनको देवगन्धर्व कहते हैं और जान लीजिए कि ये सब देवों के समान हैं। प्रापा के पुत्र और पुत्रियाँ प्रभावशाली थे। उनके नाम भी सुनाऊँगा। १४९ हे भूपाल !, अनवद्या, अनुवशा, मदिरा, मार्गणप्रिया, सुभगा, भंगि, इस प्रकार सात पुत्रियाँ हुई। सिद्ध, पूर्ण, बर्हि, पूर्णाश, ब्रह्मचारी, रतिगुण, सुवर्ण, विख्यात विश्वावसु, भानु, सुभद्र इस प्रकार दस पुत्र हुए जो प्रापेय कहलाते हैं। फिर जान लीजिए कि अप्सराओं का वंश भी अद्भुत है। वरिष्ठा के सन्तानों का नाम भी सुन लीजिए संक्षेप में कहूँगा।

असित सुबाहुवुं सुव्रत सुभुजयुं
सुप्रिय जाति बहु चॊल्लेऴुं हाहातानुं १५६
हूहूवॆन्नवन्तानुं तुंबुरुवॆन्नवनु-
मिङ्ङनॆ पतिम्मून्नु मकळर् नालु मक्कळ् १५७
मंगलगात्रियाय वरिष्ठ पॆट्टिट्टुळ्ळू ।
गन्धर्व्वपरिषयुं गोक्कळुं ब्राह्मणरु- १५८
ममृतं कपिल पॆट्टुण्टायतॆन्नु केळ्प्पू ।
अप्सरस्सुकळ् भुजगन्मारुं सुपर्ण्णन्मार् १५९
चॊल्लेरुंगन्धर्व्वन्मार् रुद्रन्मार् मरुत्तुकळ्
गोक्कळुं ब्राह्मणरुं देवकळसुररु- १६०
मॆन्निवरुण्टाय्वन्नतॊट्टॊट्टु पऱञ्ञु ञान् ।
इनियुं पऱञ्ञीटां केळ्क्कणमॆन्नाकिलो १६१
निर्म्मलन्मारायाऱु तापसन्मारुण्टायि
ब्रह्माविन्मनस्सिल्निन्नॆन्नल्लो पऱञ्ञु ञा- १६२
नॆन्नतुपोलॆ विधितन्नुटॆ तेजस्सिङ्कल्-
निन्नुटन् पतिनॊन्नु रुद्रन्मारुण्टाय्वन्नु । १६३
जातन्मारायप्पॊळे रोदनं चॆय्त मूलम्
धातावु रुद्रन्मारॆन्नभिधानवुं चॆय्तान् । १६४
मृगव्याधनुं शर्व्वन् निऋति पुनरज-
नेकपादनुमहिर्बुध्नियुं पिनाकियुं १६५

अलंबुसा, मिश्रकेशी, विख्यात विद्युद्वर्णा, ललना, अरुणा, रक्षता, रंभा, मनोरमा, असिता, सुबाहु, सुव्रता, सुभुजा, सुप्रिया, इस प्रकार तेरह पुत्रियाँ, विख्यात हाहा, हूहू और तुंबुरु ये चार पुत्र भी मंगलगात्री वरिष्ठा ने पैदा किये। सुना जाता है कि कपिला ने गन्धर्वजाति, गो-ब्राह्मणों और अमृत को जन्म दिया। १५८ इस प्रकार मैंने अप्सराओं, सर्पों, पक्षियों विख्यात गन्धर्वों, रुद्रों, मरुतों, गायों, ब्राह्मणों, देवों और असुरों का उत्पत्ति-प्रकार थोड़े में कह दिया है। अगर सुनना है तो और कह दूँगा। मैंने पहले ही कहा था कि ब्रह्मा के मन से छः निर्मल तापस पैदा हुए, उसी प्रकार विधि (ब्रह्मा) के तेज से ग्यारह रुद्रों का भी जन्म हुआ। जन्म लेते ही रोने के कारण धाता ने उनका रुद्र नाम रखा। वे इस प्रकार हैं—मृगव्याध, शर्व, निऋति, अज, एकपाद, अहिर्बुध्नि, पिनाकी, भवन, कपाली, स्थाणु और भव। और सुनिये।

भवनन् कपालियुं स्थाणुवुं भवन्तानुम् ।
पिन्नेयुं केळ्क्क नटे चोन्नवरारुपेरिल् १६६
अंगिरस्सिनु मून्नु पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नु ।
उचथ्यन् बृहस्पति संवर्त्तनेन्नुं पेरा- १६७
यत्रिक्कु पुत्रन्मारुण्टसंख्यं तापसन्मार् ।
पुत्रनायक्षियिल्निन्नुण्टायि चन्द्रन्तानुम् । १६८
पुलस्त्यन्तन्टे पुत्रन् विश्रवस्सवनुटे
कुलत्तिल् पिरक्कयाल् पौलस्त्यन्मारायवन्नु । १६९
वानरप्परिषयुं किन्नरजातिकळुं
किंपुरुषन्मार् नानामृगङ्ङळ् सिंहङ्ङळुं
व्याघ्रङ्ङळिवरेल्लां पुलहन्तन्टे मक्कळ् १७०
पतंगसहचरन्मारायि विळङ्ङुन्न-
तसंख्यं क्रतुविन्टे पुत्ररेन्नतरिञ्ञालुम् १७१
पिन्नेयुं विरिञ्चन्टे वलत्तेप्पेरुविरल्-
तन्मेल्निन्नुण्टायवन्नु दक्षनां प्रजापति । १७२
इटत्तेप्पेरुविरल्तन्मेल्निन्नुटनोरु-
मटुत्तूकिनमोळियुण्टायाळवळल्लो १७३
दक्षन्टे पत्नियायतवळ् पेट्टुण्टायितु
पुष्कराक्षिकळन्पतवरिल् पत्तुपेरे १७४
धर्म्मराजनुतन्ने कोटुत्तानन्नु दक्षन् ।
निर्म्मलाङ्गिकळवर्तम्मुटे नामं केळ्प्पिन् । १७५

पहले जो छः तापस कहे गये थे उनमें अंगिरा के तीन पुत्र हुए—उचथ्य, बृहस्पति और संवर्त । १६७ अत्रि के असंख्य तापस पुत्र हुए । पुत्र अक्षि से चन्द्र पैदा हुआ । पुलस्त्य का पुत्र हुआ विश्रवस् । उनके कुल में जिनका जन्म हुआ वे पौलस्त्य कहलाते हैं । वानरजाति, किन्नर, किंपुरुष, तरह तरह के जानवर, सिंह, व्याघ्र, यह सब पुलह की सन्तति हैं । यह जो असंख्य पतंगसहचर विराजमान हैं वह सब क्रतु की सन्तान हैं, जान लीजिये। फिर विरिंच (ब्रह्मा) के दक्षिण अंगूठे से दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ । १७२ उनके वाम अंगूठे से एक मीठी-मीठी बात करने वाली का जन्म हुआ और वही दक्ष की पत्नी हुई जिसने पचास पुष्कराक्षिणियों (कमल के समान नेत्रवालियों) को जन्म दिया । उनमें से दक्ष ने दस धर्मराज को ही दे दीं । उन निर्मलाङ्गियों के नाम सुन लीजिए । कीर्ति, लक्ष्मी, धृति,

कीर्त्तियुं लक्ष्मी धृति मेधयुं पुष्टि शुद्ध
क्रिययुं बुद्धि लज्ज मतियुमिवक्कुं पेर् । १७६
इरुपत्तेऴिनेयुं चन्द्रनु कॊटुत्तितु
निरुपिच्चवरॆक्कॊण्टऱियां कालभेदम् । १७७
दक्षनां प्रजापतितन्नपत्योल्पन्नराय्
चॊल्कॊण्ट वसुक्कळुमुण्टायारॆट्टुपेरुम् । १७८
धरनुं ध्रुवन् सोमनापनुमनिलनु-
मनलन् प्रत्यूषनुमष्टमन् प्रभासनुम् । १७९
धूम्र पॆट्टुण्टाय्वन्नु धरनु ध्रुवन्तानुं
सोमनुं मनस्विनियामवळ् पॆट्टुण्टायि । १८०
रसयामवळ् पॆट्टिट्टापनुण्टायानल्लो
शाण्डिलि पॆट्टुण्टायितनलननिलनुम् । १८१
प्रभ पॆट्टुण्टाय्वन्नान् प्रत्यूषन् प्रभासनु-
मिवरिल् धरन्तन्टॆ तनयन् द्रविणन्पोल् । १८२
रण्टामन् हुतवहन् मून्नामन् हव्यवहन्
आपनुं वैदण्डचनुं श्रमनुं श्राद्धन्तानुं १८३
मुनियुं ध्रुवनुटॆ तनयन् कालनुमल्लो ।
सोमन्टॆ मकनु पेर् वर्च्चस्सॆन्नऱिञ्ञालुं १८४
वर्च्चस्वियवङ्कल्निन्नुण्टायितॆन्नु केळ्प्पू ।
पिन्नॆयुं मनोहरियामवळ् पॆट्टुण्टायि १८५
शिशिरन् प्राणन् पिन्नॆ मरणनिवरॆल्लां
अहस्सिन् तनयर्पोल् ज्योतिरादिकळॆल्लां । १८६

मेधा, पुष्टि, शुद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, मति, ये ही उनके नाम हैं। उनमें से सत्ताईस चन्द्र को दी गयीं जिनके द्वारा सोंचकर कालभेद जाना जा सकता है। दक्ष प्रजापति के अपत्यों (पुत्रियों) से विख्यात आठ वसुओं की उत्पत्ति हुई। धर, ध्रुव, सोम, आप; अनिल, अनल, प्रत्यूष और आठवाँ हुआ प्रभास। धूम्रा ने धर और ध्रुव को जन्म दिया। मनस्विनी ने सोम को पैदा किया। १७३-१८० रसा से आप का जन्म हुआ। शाण्डिली ने अनल और अनिल को जन्म दिया। प्रभा ने प्रत्यूष और प्रभास को जन्म दिया। इनमें धर का पुत्र है द्रविण। उसी का दूसरा पुत्र है हुतवह और तीसरा हव्यवह। आप, वैदण्डच, श्रम, श्राद्ध, मुनि और काल, ये सब ध्रुव के पुत्र हैं। सोम के पुत्र का नाम वर्चस्, उससे

चॊल्लॆळुं शरवणालयनां कुमारनु-
मनलन् तन्टॆ मकनॆन्नतु धरिच्चालु- १८७
मनिलपत्नी शिवतन्मकन् पुरोवहन्
पिन्नेवनभिज्ञातगतियॆन्नरिञ्ञालुम् । १८८
प्रत्यूषस्सिनु सुतन् देवलनाय मुनि
देवलन्तनिक्कु रण्टात्मजन्मारुण्टायि ।
देवभक्तन्मारवरॆन्नयुमॆन्नु केळ्प्पू । १८९
ऎट्टामन् प्रभासनुं गीष्पतिभगिनियॆ-
प्पुष्टकौतुकत्तोटु वेट्टानॆन्नरिञ्ञालुम् । १९०
विश्वकर्म्मावुतानुमिवळ् पॆट्टुण्टाय्वन्नु
विस्मयमवनुटॆ कौशलं निरूपिक्किल् । १९१
ब्रह्माविन् वलमुलतङ्कल्निन्नुळ्ळू धर्म्मन्
धर्म्मजातन्मार् शमन् कामनुं हर्षन्तानुम् । १९२
ऎन्नतिल् कामन्तण्टॆ वल्लभ रतियल्लो
चॊल्लॆळुं प्राप्तियल्लो शमन्टॆ पत्नि केळ् नी । १९३
नन्दियामवळल्लो हर्षन्तन्नुटॆ पत्नी
मुन्नेवन् मरीचिक्कु काश्यपन् मकनल्लो । १९४
काश्यपसुतरॆयो मुन्ने ञान् चॊन्नेनल्लो ।
द्वादशादित्यन्मारिल् सविताविन्टॆ भार्य १९५

वर्चस्वी का जन्म हुआ। फिर उस मनोहरी ने शिशिर, प्राण और मरण, इन सब को जन्म दिया। सभी ज्योति अहस् के पुत्र हैं। १८१-१८६ विख्यात शरवणालय (सरकंडे के वन में रहने वाले) कुमार (स्वामि-कार्तिक) अनल का पुत्र है। अनिल की पत्नी थी शिवा जिसका पुत्र था पुरोवह। जान लीजिए कि वह अभिज्ञातगति (अविज्ञातगति) थे। प्रत्यूष का पुत्र था मुनि देवल और देवल के दो पुत्र हुए। सुना जाता है कि दोनों बड़े देवभक्त थे। आठवें प्रभास ने गीष्पति (बृहस्पति) की बहिन के साथ बड़े आनन्द से विवाह किया। उसने विश्वकर्मा को जन्म दिया जिसका कौशल यदि विचार किया जाय, तो बहुत ही अद्भुत है। ब्रह्मा के दक्षिण स्तन से धर्म का जन्म हुआ। धर्म से शम, काम और हर्ष की उत्पत्ति हुई। उनमें काम की प्यारी स्त्री विख्यात रति हुई और जान लो कि प्राप्ति ही शम की पत्नी हुई। हर्ष की पत्नी थी नन्दी। ज्येष्ठ मरीचि का पुत्र था काश्यप। १८७-१९४ काश्यप के पुत्र मैं पहले ही

बाडवरूपिणियां त्वष्टियेन्नरिञ्ञालुम् ।
अवळ्पेट्टुण्टायवन्नारश्विनिदेवकळु- १९६
मवरिल्निन्नुण्टायि गुह्यकप्परिषयुम् ।
ओषधिकळुं पशुवृन्दवुमेन्नु केळ्प्पू १९७
पिन्नेयुं ब्रह्माविन्टे हृदयत्तिङ्कल्निन्नु
धन्यनां भृगुमुनियुण्टायितनुं केळ् नी । १९८
भृगुविन् मकन् कवि, कवितन्मकन् काव्यन्-
पिन्नेयुं भृगुविनु नल्लोरु मकनुण्टाय् १९९
अवनु नामधेयं च्यवननेन्नाकुन्नु ।
अवन्टे पत्नि मनुतन्मकळार्षियल्लो २००
अवळ्पेट्टौर्व्वनेन्न मामुनियुण्टायवन्नु-
अम्मुनिसुतनल्लो निर्म्मलनृचीकनुं २०१
चोल्लुवन् जमदग्नियायतुमवन्मकन् ।
नालु पुत्रन्मार् जमदग्निक्कु जनिच्चतिल्
कालनाशनशिष्यन् रामन्पोलवरजन् । २०२
निन्तिरुवटितानुं भार्ग्गवगोत्रत्तिङ्कल्
सन्ततियायुण्टाय शौनकमुनियल्लो । २०३
भार्ग्गवगोत्रत्तिन्टे परप्पु चोल्लिक्कूटा
मार्ग्गवेदिकळवरेवरुमेल्लानाळुम् । २०४

कह चुका हूँ । बारह, आदित्यों में सविता की पत्नी हुई बाडवरूपिणी त्वष्टी (त्वाष्ट्री-त्वष्टा की पुत्री संज्ञा) । उसने अश्विनीकुमारों को जन्म दिया और सारी गुह्यकजाति की तथा ओषधियों की और पशुवृन्द की उनसे उत्पत्ति हुई । फिर ब्रह्मा के हृदय से धन्य (यशस्वी) भृगु मुनि का जन्म हुआ, यह भी जान लो । भृगु का पुत्र कवि हुआ, और कवि का पुत्र काव्य । भृगु का एक और श्रेष्ठ पुत्र हुआ जिसका नाम था च्यवन । उसकी पत्नी मनु की पुत्री आर्षी थी । उसने महामुनि और्व को जन्म दिया । उस मुनि का पुत्र था निर्मल ऋचीक और मैं कहता हूँ कि उसी का पुत्र जमदग्नि हुआ । जमदग्नि के चार पुत्रों में सबसे छोटा था कालनाशन का शिष्य परशुराम । १९५-२०२ भगवन् आप मुनि शौनक ने भार्गव गोत्र ही में सन्तति के रूप में जन्म लिया । भार्गव गोत्र की व्याप्ति का वर्णन करना कठिन है । वे सदा ही पथप्रदर्शक रहे हैं । अगर सुनना है तो संक्षेप में कहूँगा । किसको

केळ्क्कणमेङ्किलिन्नु चोल्लुवन् चुरुक्कि आ-
नार्क्कु केळ्क्केण्टी वैराग्यंवरुं कथयेल्लाम् । २०५
धाताविन्पोक्कल्निन्नु पिन्नेयुमुण्टाय्वन्नु
धातावुं विधातावु मनुक्कळ्क्काधारमाय् । २०६
अवर्कळ्क्किरुवर्क्कुं भगिनि लक्ष्मी देवि-
यवळ्तन्मनस्सिल्निन्नुण्टायी तनयन्मार् । २०७
व्योमचारिकळाकुमश्वङ्ङळवरेल्लां
कामयानार्त्थं मनोवेगमुळ्ळवरल्लो । २०८
वरुणनुटे पत्नियायतु ज्येष्ठयल्लो
तरुणीमणियवळारु मक्कळेप्पेटाळ् । २०९
सुरयुं पिन्नेस्सुरनन्दिनियेन्नु रन्टु
वरनारिकळुमुण्टायितु मकळराय् । २१०
धाताविन् वामस्तनत्तिङ्कल्निन्नधर्म्मनुं
जातनायितु वरुणात्मजन्मारुमन्नाळ् । २११
अन्योन्यं तच्चु कोन्नु भक्षिच्चु नूरुपेरु-
मन्नु यौवनयुक्तनाकियोरधर्म्मनुं २१२
निऋतियेन्नवळे कैक्कोण्टानवळ्पेट्टु
नैऋतन्मारायुळ्ळ राक्षसरुण्टाय्वन्नु । २१३
पिन्नेयुं भयन्महाभयनुं मृत्युतानु-
मेन्नु मून्नधर्म्मपुत्रन्मारुण्टायारल्लो । २१४

सुनना है ? इन कथाओं को सुनने से वैराग्य हो जाता है । २०३-२०५
ब्रह्मा से मनुओं के आधार के रूप में फिर धाता और विधाता पैदा हुए । उन दोनों की बहिन थी लक्ष्मी देवी जिसके मन से पुत्रों का जन्म हुआ । वे सब आकाशगामी घोड़े थे । उनका वेग मन का जैसा था, ताकि अपनी इच्छा के अनुसार प्रयाण कर सकें । वरुण की पत्नी हुई ज्येष्ठा जिस तरुणीमणि (श्रेष्ठ स्त्री) ने छः पुत्रों को जन्म दिया । तत्पश्चात् अपनी पुत्री के रूप में दो वरनारियों सुरा और सुरनन्दिनी को जन्म दिया । धाता के बाम स्तन से अधर्म का और बरुण के पुत्रों का भी जन्म हुआ ।२०६-२११
उन सौओं ने आपस में लड़कर एक दूसरे को खा लिया । उन दिनों यौवनयुक्त अधर्म ने निऋति के साथ विवाह किया, जिससे नैऋत, अर्थात् राक्षसगण पैदा हुए । उस समय अधर्म के तीन पुत्र हुए—भय, महाभय और मृत्यु । ब्रह्मा की पुत्री ताम्रा की पुत्रियाँ हुईं—क्रौंची, भासी, श्येनी, धृतराष्ट्री और शुकी ।

ताम्रयां ब्रह्मात्मजापुत्रिकळायुण्टायि
क्रौंचियुं भासि श्येनी धृतराष्ट्रियुं शुकी । २१५
क्रौंचि पॆट्टुलूकन्मार् भासिक्कु भासन्मारुं
श्येनिक्कु पुत्रन्माराय् श्येनन्मार् गृध्रन्मारुं २१६
धृतराष्ट्रिक्कु मक्कळ् हंसवुं कळहंसं
चक्रवाकवुं शुकि पॆटि्ट्टु शुकन्मारुम् २१७
पद्मसंभवङ्कल्निन्नुण्टायाळॊरु नारि
कॆल्पेरुं क्रोधवशयॆन्नवळुटॆ नामम् । २१८
ऒन्पतु नारिमारॆस्संभविप्पिच्चाळवळ्
ऒन्पतुपेरुं पॆट्टारोरोजातिकळॆ । २१९
मृगियुं मृगमन्द हरियुं भद्रमना
मातांगि शार्दूलियुं श्वेतयुं सुरभियुं
सुरसतानुमवरॊन्पतुपेक्कुं नामम् । २२०
मृगि पॆट्टुण्टाय्वन्नु मृगजातिकळॆल्लां
मृगमन्दय्क्कु पुनरृक्षन्मारुण्टाय् वन्नु २२१
हरियामवळुटॆ मक्कळॆन्नरिञ्ञालुम्
हरिकळ् वानरन्मार्गोलांगुलन्मारॆल्लाम् । २२२
चॊल्कॊळ्ळुं भद्रमन्दय्क्कुण्टायितैरावतं
मातंगि पॆट्टुण्टायि मातंगप्परिषकळ् २२३
शार्द्दूली सिंहव्याघ्रन्मारॆयुं पॆट्टाळल्लो ।
श्वेतपॆट्टुण्टायितु श्वेताश्वगजमॆल्लां २२४

क्रौंची ने उलूकों को जन्म दिया, भासी ने भासों को, श्येनी के पुत्र हुए श्येन और गृध्र और धृतराष्ट्री के पुत्र हुए हंस, कलहंस और चक्रवाक और शुकी ने शुकों को जन्म दिया। ब्रह्मा से क्रोधवशा नामक विख्यात स्त्री की उत्पत्ति हुई। २१२-२१८ उसने नौ स्त्रियों को जन्म दिया—नवों ने एक-एक जाति को पैदा किया। मृगी, मृगमन्दा, हरि, भद्रमना, मातंगी, शार्दूली, श्वेता, सुरभि, सुरसा—उन नवों के ये ही नाम हैं। मृगी से सभी मृगजातियाँ उत्पन्न हुईं। मृगमन्दा से रीछ उत्पन्न हुए। सिंह, वानर और गोलांगूल हरि की सन्तान हैं। विख्यात भद्रमन्दा से ऐरावत उत्पन्न हुआ, मातङ्गी ने मातंग जाति की उत्पत्ति की और शार्दूली ने सिंह और व्याघ्रों को जन्म दिया। श्वेता से सफ़ेद घोड़ों और हाथियों का जन्म हुआ। सुरभि से रोहिणी और गन्धर्वी पैदा हुईं और

सुरभि पॆट्टिट्टुन्टायि रोहिणि गन्धर्व्वियुम्
सुरस पॆट्टुण्टायि नागङ्ङळ् पलतरं २२५
रोहिणि पॆटाळतिल् गोक्कळे बहुविधं
गन्धर्व्वियुटे मक्कळश्वङ्ङळरियणम् । २२६
शुकितन् मकळाकुमनल पॆट्टुण्टायि
सकल स्वादुफलमुळ्ळ वृक्षङ्ङळॆल्लाम् २२७
कद्रुविन् मकळाय सुरसासुतयल्लो
श्येनियाकुन्नतवळरुणपत्नियायाळ् । २२८
अवळ् पॆट्टुण्टायितु संपाति जटायुवु-
मवर्कळिरुवरुं रामभक्तन्मारल्लो । २२९

अंशावतारम्

तापसवरन् वैशम्पायनन्तन्ने नोक्कि-
ऌभूपतिवरन् जनमेजयन् चोद्यं चॆय्तान् । १
देवदानव यक्षरक्षसांपरिषकळ्
केवलमवनियिल् पिऱन्नितॆन्नाकिलो २
इन्नवनिन्नवनाय् वन्नतुं पिन्नॆयॆन्त-
तॆन्नोटु वळिपोलॆयरुळ्चॆय्कयु वेणम् । ३
केट्टुकॊळ्केङ्किलॆन्नु मामुनियरुळ्चॆय्तु
केळ्क्कणं निङ्ङळ्क्केङ्किल् ञानुमॊट्टॊट्टु चॊल्लाम् । ४

अनेक प्रकार के हाथियों का सुरसा से जन्म हुआ। रोहिणी ने अनेक प्रकार की गायों को जन्म दिया और जान लीजिए कि घोड़े ही गन्धर्वी के पुत्र हैं। २१९-२२६ शुकी की पुत्री जो अनला थी उसने सभी स्वादु फलवाले वृक्षों को जन्म दिया। श्येनी तो कद्रू की पुत्री सुरसा की पुत्री है और वही जाकर अरुण की पत्नी हुई। उसने संपाति और जटायु को जन्म दिया जो दोनों बड़े रामभक्त थे। २२७-२२९

अंशावतार

तापसवर वैशम्पायन को देखकर भूपतिवर जनमेजय ने प्रार्थना की, "जब देव, दानव, यक्ष और रक्षस् की जातियाँ पृथिवी में पैदा हुईं तब कौन क्या हुआ यह भी मुझको कृपया बतला दीजिए"। महामुनि ने कहा, 'इच्छा हो तो सुन लीजिए'। अगर आप सुनना चाहते हैं तो मैं थोड़ा-थोड़ा कह दूँगा।

दानवन् विप्रचित्तियायतु जरासन्धन्
हिरण्यकशिपुवां दैतेयन् शिशुपालन् । ५
प्रह्लादन्तन्टे तन्पि सह्लादनल्लो शल्यर्
वीरनामनुह्लादन् दैतेयन् धृतकेतु । ६
शिबियामसुरेशन् द्रुमनां नरपति
बाष्कळनाय दैत्यनायतु भगदत्तन् । ७
दानवनयशिशरा वेगवानयश्शङ्कु
वीरनामश्वशिरा गगनमूर्द्धावेन्नु ८
अञ्चुपेरोरुमिच्चु केकयराज्यत्तिङ्कल्
भूपतिवीरन्माराय् पिऱन्नारेन्नु केळ्प्पू । ९
केतुमानेन्न दैत्यनमितौजस्सां नृपन्
स्वर्भानुवेन्न दैत्यनायतुमुग्रसेनन् १०
अश्वनाकिय दैत्यन् पिऱन्नानशोकना-
यश्वसोदरनश्वपतियामसुरेशन् । ११
हार्द्दिक्यनायिवन्नु पिऱन्नानरिञ्ञालुं
वृषपर्व्वावु दीर्घप्रज्ञनां नरपति । १२
वृषपर्व्वाविन् तन्पियायवन् मल्लनायान्
अश्वग्रीवाख्यन् रोचमाननां नरपति । १३
सूक्ष्मनाकियदैत्यन् सुमतियाय भूपन्
कीर्त्तिमानाय दैत्यन् बृहन्तनेन्न नृपन् १४

दानव विप्रचित्ति ही जरासन्ध हुआ और दैत्य हिरण्यकशिपु हुआ शिशुपाल। प्रह्लाद का छोटा भाई संह्लाद ही शल्य हुआ और वीर दैत्य अनुह्लाद धृतकेतु बना। असुरेश शिबि ही राजा द्रुम हुआ और दैत्य बाष्कल ही भगदत्त बना। ७ दानव अयःशिरा वेगवाला अयःशंकु हुआ, वीर अश्वशिरा गगनमूर्धा बना। ये पाँचों, सुना जाता है, केकयराज्य में भूपतिवीर के रूप में साथ-साथ पैदा हुए। दैत्य केतुभान् राजा अमितौजा हुआ तथा दैत्या स्वर्भानु उग्रसेन बना। दैत्य अश्व अशोक हुआ और अश्व का भाई असुरेश अश्वपति हुआ। जान लीजिए कि दीर्घप्रज्ञ (बुद्धिमान्) राजा वृषपर्वा ने हार्दिक्य के रूप में जन्म लिया। ८-१२ वृषपर्वा का छोटा भाई मल्ल हुआ और अश्वग्रीव राजा रोचमान बना। दैत्य सूक्ष्म राजा सुमति हुआ, दैत्य कीर्तिमान् राजा बृहन्त हुआ और दैत्य तुहुण्ड सेनाबिन्दु बना। असुरेश खसृ ही राजा पापजित्

तुहुण्डनाय दैत्यन्तानल्लो सेनाविन्दु
खसृवामसुरेशन् पापजित्ताय नृपन् १५
एकचक्राख्यासुरनायतु प्रतिविन्ध्यन् ।
वीरनां विरूपाक्षन् चित्रवर्म्मावां नृपन् १६
हरनां हरिहरनायुळ्ळोरसुरेशन् ।
पिऱन्नान् सुबाहुवां भूपतितिलकनाय् । १७
अहरनाय दैत्यन् बाल्हिकनाय नृपन्
निचन्द्रनाय दैत्यन् मुग्धकेशाख्य नृपन् १८
निसुंभमहासुरनायतु देवाधिपन्
शरभमहासुरन् पौरवनाय नृपन् । १९
कापथनाय दैत्यन् भूपति सुपार्श्वन्पोल्
कथनामसुरेशन् पर्व्वतेयाख्यनृपन् । २०
पिन्नेयुं शरभनेन्नुण्टोरु महासुरन्
मन्नवनायानवन् बाह्लिकराज्यत्तिङ्कल् । २१
प्रह्लादनेन्नुतन्ने पेरवनाकुन्नतुं
चन्द्रनामसुरेशनायतुमृचीकन्तान् । २२
मृतवानेन्नुपेरामसुराधिपनल्लो
पश्चिमननूपनेन्नोच्चपूण्टोरु नृपन् । २३
गर्व्विष्ठनाय दैत्यन् द्रुमसेनाख्यनृपन्
दैत्येशनाय मयूरन् वन्नु पिऱन्नितु । २४
धात्रियिल् विश्वनेन्न पार्त्थिवश्रेष्ठनाये ।
दैतेयन् दीर्घजिह्वनायतु काशीनृपन् २५

बना और असुर एकचक्र प्रतिविन्ध्य हुआ। वीर विरूपाक्ष ने राजा चित्रवर्मा का रूप धारण किया और असुरेश हरिहर ही राजा हर हुआ। सुबाहु तो राजा तिलक के रूप में पैदा हुआ। दैत्य अहर राजा बाह्लिक बना और दैत्य निचन्द्र राजा मुग्धकेश हुआ। १३-१८ महासुर निशुंभ देवाधिप बना और महासुर शरभ राजा पौरव हुआ। दैत्य कापथ भूपति सुपार्श्व हुआ, सुना जाता है, और असुरेश कथ राजा पर्वतेय बना। शरभ नामक एक महासुर है जो वाह्लिक देश का राजा हुआ। उसका नाम हुआ प्रह्लाद। असुरेश चन्द्र ही ऋचीक बना। सुनते हैं कि असुराधिप मृतवान् ही पश्चिम अनूप नामक राजा बना। १९-२३ दैत्य गर्विष्ठ ही राजा द्रुमसेन हुआ और दैत्येश मयूर ही पृथ्वी में विश्व नामक

राहुवामसुरेशन् ऋथनां नरपति ।
सुवर्ण्णनाय दैत्यन् क्रोधकीर्तियुमायान् २६
दैत्यनां चन्द्रहन्ता शुकनाय नृपन्
दैतेयविनाशनन् जनकनाय नृपन् २७
विष्करनाय दैत्यन् सुमित्रनाय नृपन्
विष्करसहोदरन् पांसुराष्ट्राधिनाथन् २८
वीरनेन्नतुतन्ने पेरायोरसुरेशन्
पौंड्रमत्स्यकनेन्न राजावाय् पिऱन्नतुम् । २९
वृत्रनामसुरेशन् मणिमानाय नृपन्
क्रोधहन्तावां दैत्यन् दण्डनाकिय नृपन् । ३०
क्रोधवर्द्धनदैत्यन् दण्डधारनुमायान् ।
कालकेयन्माराकुमेट्टुपेरसुररुं ३१
चाले वन्नवनियिल् पिऱन्नार् नृपन्माराय् ।
अन्नरपतिकळ्तन् नामङ्ङळतुं चोल्लां ३२
जयसेननुमपराजितन् तानुं पिन्ने
निषधाधिपन्तानुं श्रेणिमानेन्नवनुं ३३
चोल्लेळुं महीजनुमभिरूपनुं पिन्ने
सुभद्रसेनन्तानुं बृहन्नामावुमेवं ३४
अट्टु भूपालन्मारुं कालकेयन्मारल्लो ।
दुष्टरां क्रोधवशगणमामसुरन्मार् ३५
दुष्टभूपतिकळायुद्भविच्चतुमेल्लाम् ।
नन्दिकन् कर्ण्णवेष्टन् सिद्धाश्वन् क्रीडकनुं ३६

पार्थिवश्रेष्ठ बना । दैत्य दीर्घजिह्व काशिराजा हुआ और असुरेश राहु ने ऋथ राजा का रूप धारण किया । दैत्य सुवर्ण क्रोधकीर्ति हुआ, दैत्य चन्द्रहन्ता राजा शुक हुआ । और दैत्य विनाशन राजा जनक बना, दैत्य विष्कर राजा सुमित्र तथा विष्कर का भाई पांसु राष्ट्र का अधिपति हुआ । वीर नामक असुरेश का पौंड्रमत्स्यक नामक राजा के रूप में जन्म हुआ । असुरेश वृत्र ही राजा मणिमान् और दैत्य क्रोधहन्ता राजा दण्ड के रूप में पैदा हुए ।२४-३० दैत्य क्रोधवर्धन राजा दण्डधार बना । ये जो आठ कालकेय असुर हैं वे सब पृथिवी में राजा के रूप में पैदा हुए । उन आठ राजाओं के नाम बतला रहा हूँ—जयसेन, अपराजित, निषधाधिप, श्रेणिमान्, विख्यात महीज, अभिरूप सुभद्रसेन और बृहन्नामा कालकेय, ये आठ राजा हुए । दुष्ट

वीरनां सुवीरनुं शूरनां सुबाहुवुं
धीरनां महावीरन् बाह्लिकन् क्रोधन्तानुं ३७
विचित्रन् सुरथनुं नीलनुं वीरधामा
भूमिपालेन्द्रन् दन्तवक्त्रनुं दुर्ज्जयनुं ३८
रुग्मियां नृपन् जनमेजयनाषाढनुं
वायुवेगनुं भूरितेजस्सुमेकलव्यन् ३९
सुमित्रन् वाजिधानन् गोमुखनिवरेल्लां
कारूशाधिपन्मारां भूपतिवीरन्मार्पोल् । ४०
क्षेमधूर्त्तियुं भुवि चोल्लेरुं श्रुतायुवु-
मुद्धवन् बृहत्सेनन् क्षेमनुमग्रतीर्थन् ४१
कुहकन्मतिमानुं कलिंगराजाक्कन्मार् ।
इवरुं क्रोधवशन्माराय सुरादिकळ् ४२
देवकनायतोरु गन्धर्व्वश्रेष्ठनल्लो ।
गुरुवां बृहस्पतितन्तुटेयंशमल्लो ४३
गुरुवां द्रोणर् भरद्वाजनन्दननेटो ।
ईशन्टे कामवुमक्कालन्टे कोपवुं कू- ४४
टेशियोन्नायिच्चमञ्जुण्टायानश्वत्थामा ।
वसुक्कळ् गंगतङ्कल् शन्तनुपुत्ररायार् ४५
वसिष्ठशापं कोण्टु वासवनियोगत्ताल् ।
अवरिल्लेल्लारिलुमनुजनल्लो भीष्मर् । ४६

और क्रोध के वशीभूत असुर दुष्ट भूपतियों के रूप में पैदा हुए । नन्दिक, कर्णवेष्ट, सिद्धाश्व, क्रीडक, वीर सुवीर, शूर सुबाहु, धीर महावीर, वाह्लिक, क्रोध, विचित्र, सुरथ, नील, वीरधामा, भूमिपालेन्द्र दन्तवक्र, दुर्जय, राजारुग्मि, जनमेजय, आषाढ, वायुवेग, भूरितेजा, एकलव्य, सुमित्र, वाजिधान, गोमुख, ये सब वीर भूपति हैं और कारूषाधिपति भी हैं। ३१-४० क्षेमधूर्ति, पृथ्वी में विख्यात श्रुतायु, उद्धव, बृहत्सेन, क्षेम, अग्रतीर्थ, कुहक, मतिमान्, ये सब कलिंगदेश के राजा हैं। ये सब क्रोध के वशीभूत देव आदि हैं। एक गन्धर्वश्रेष्ठ ही तो देवक बना। गुरु द्रोणाचार्य जो भरद्वाज के पुत्र थे देवगुरु वृहस्पति के ही अंश थे। ईश (शिव) का काम और काल (यमराज) का कोप मिलकर जब एक हुआ तब अश्वत्थामा का जन्म हुआ। वसिष्ठ के शाप और वासव (इन्द्र) की आज्ञा के कारण ये आठ वसु गंगा में शन्तनु के पुत्र के रूप में पैदा हुए।

रुद्रन्मारुटेयंशमायतु कृपाचार्यन्
त्रिशंकुवेन्न भूपन् पावरनायानल्लो । ४७
चोल्लेळुं मरुत्तुक्कळाय देवकळुटे-
यंशत्तालुण्टायितु सात्यकियेन्न वीरन् । ४८
गणदेवकळुटेयंशसंभूतन्माराय्
द्रुपदन् विराटनु कृतवर्म्मावुमुळ्ळु । ४९
अरिष्टसुतनाय हंसनां गन्धर्व्वेशन्
वरिष्ठनाय धृतराष्ट्रनेन्नऱिञ्ञालुम् । ५०
कलितन्नुटेयंशं दुरियोधननृपन्
पौलस्त्यन्मार्पोल् मट्टे नूट्टुपेरल्लावरुम् । ५१
धर्म्मराजनुं वन्नु पिऱन्नु विदुरराय्
धर्म्मन्तन्नुटेयंशमायतु युधिष्ठिरन् । ५२
वायुविनुटेयंशं भीमनेन्नऱिञ्ञालुम्
देवेन्द्रनुटेयंशं फल्गुनन् महारथन् । ५३
अश्विनी देवकळ्तन्नंशं माद्रेयन्मारु-
मग्नितन्नुटेयंशमायतु धृष्टद्युम्नन् । ५४
आदित्यनुटेयंशं कर्ण्णनेन्नऱिञ्ञालुं
सोमनन्दननाय सुवर्च्चस्सभिमन्यु । ५५
विश्वदेवकळुटेयंशं द्रौपदेयन्मार्
स्त्रीपुंसमायिट्टुळ्ळ गुह्यकन् शिखण्डियुम् । ५६

उनमें सबसे कनिष्ठ भीष्म ही थे। ४१-४६ कृपाचार्य तो रुद्रों का अंश था, भूप त्रिशंकु ही जाकर पावर बना, विख्यात देव मरुतों के अंश से ही वीर सात्यकि का जन्म हुआ। द्रुपद, विराट और कृतवर्मा ये ही गणदेवताओं के अंश से पैदा हुए। अरिष्ट का पुत्र, गन्धर्वेश हंस ने ही वरिष्ठ धृतराष्ट्र का रूप धारण किया। राजा दुर्योधन कलि का ही अंश था, शेष सौ पुत्र (धृतराष्ट्र के)सब पौलस्त्य (पुलस्त्यवंशी राक्षस) थे। धर्मराज (यम) विदुर के रूप में पैदा हुए और युधिष्ठिर तो धर्म ही का अंश था। जान लीजिए कि भीम वायु का ही अंश था, और महारथ फल्गुन (अर्जुन) इन्द्र का। ४७-५३ अश्विनीकुमारों के अंश से माद्री के दो पुत्र पैदा हुए और धृष्टद्युम्न तो अग्नि का अंश था। जान लीजिए कि कर्ण सूर्य का अंश था और सुवर्चा (शोभायमान) अभिमन्यु सोम (चन्द्र) का पुत्र था। द्रुपद के पुत्र सब विश्वेदेवों से उत्पन्न हुए और स्त्री और

त्रिदिवलक्ष्मियुटेयंशंपोल् पांचालियुम्
धृतियुं सिद्धियुंपोल् कुन्तियुं माद्रितानुम् । ५७
प्रद्युम्नन् सनल्कुमारांशमेन्नतुं चोल्लु-
मनन्तमूर्त्तियुटेयंशं पोल् बलभद्रन् । ५८
विष्णुतन्नुटेयंशं कृष्णनेन्नरिञ्ञालुं
माधवमतमरिञ्ञंबुजोद्भवन्चोल्लाल् । ५९
वासवनियोगंकोण्टप्सरस्त्रीकळेल्लां
माधवपत्निकळ्पोल् पतिनारायिरवुम् । ६०
इत्तरमवरवर् पृथ्वियिल् पिऱन्नतुं
विस्तरिच्चुरचेय्यानेत्रयुं पणियत्रे । ६१
इरुनूऱध्यायमां संभवपर्व्वतन्निल्
सुर दानव गन्धर्व्वादिकळुटे जन्मम् । ६२
अंशावतरणमितोन्पतध्यायमुण्टु
वैशम्पायनमुनि चोन्नतेन्नरिञ्ञालुम् । ६३
जनमेजयनृपन्तन्नुटे चोद्यमिनि
विरवोटुरचेय्यां केळ्क्केणमेन्नाकिलो । ६४
पूरुवां नरपतिवीरनां ययातितन्
पुत्रनेन्नल्लो केळ्प्पितेत्रयुं प्रसिद्धनाय् । ६५

पुमान (पुरुष) का मेल जो गुह्यक है वही शिखण्डी बना। कहा जाता है कि पाञ्चाली (द्रौपदी) लक्ष्मी का अंश थी और धृति और सिद्धि ही जाकर कुन्ती और माद्री बनीं। ५४-५७ कहते हैं कि प्रद्युम्न सनत्कुमार का अंश था और बलभद्र को अनन्तमूर्ति (विष्णु) का ही अंश बतलाते हैं। श्रीकृष्ण भी विष्णु के ही अंश हैं, यह अंबुजोद्भव (ब्रह्मा) के वचन से स्पष्ट है जो माधव (विष्णु) का मत जानते थे। इन्द्र की आज्ञा से अप्सराएँ माधव (कृष्ण) की सोलह हज़ार पत्नियाँ हुईं। इस प्रकार उनका जो पृथिवी में भिन्न-भिन्न रूप में जन्म हुआ उसका वर्णन करना बहुत कठिन है। देव, दानव और गन्धर्वों का पृथ्वी पर जन्म संभवपर्व में दो सौ अध्यायों में वर्णित है। उनमें नौ अध्यायों में अंशावतरण का वर्णन है। जान लीजिए कि वैशम्पायन मुनि ने इसी प्रकार कहा है। ५६-६३ अगर सुनना है तो राजा जनमेजय के प्रश्न का उत्तर ढंग से बतलाऊँगी। यह तो प्रसिद्ध है कि नरपतिवीर पूरु ययाति का पुत्र था। उसी परम्परा

अप्परम्परतन्निलुण्टायि दुष्षन्तनु-
मवन्ट़े मक्कळ् जनमेजयन् भरतनुम् । ६६
अविटेत्तन्नेयोट्टु परप्पिल् पऱ्येण-
मवनीश्वरनाय भरतन् कथयेल्लाम् । ६७

पुरुवंशोल्पत्ति

ऒङ्किलो केट्टुकोळ्क पूरुवां नरेन्द्रनु
पङ्कजसममुखियाकिय शतरुचि १
पत्नियाय् वन्नाळवळ्मून्नु मक्कळेप्पेट्टा-
ळेन्नतिल् मुन्पनल्लो शूरनां प्रवीराख्य- २
नवन्टे पत्नियल्लो शैब्ययेन्नऱिञ्ञालुम् ।
अवळ्पेट्टुळ्ळू नल्ल नमस्युवेन्न नृपन् ३
राजीवविलोचनन् सुभ्रुवुमभयदन् ।
इङ्ङने मून्नु मक्कळ् नमस्यु नृपनुण्टा- ४
यवरिलभयदन्तन्नुटे सुतरल्लो
सुन्वानुं वसुनाभन् गर्गनुं रम्यन्तानु- ५
मवरिल् सुन्वानुटे वल्लभ रथन्तरी-
यवळ् पेट्टुण्टाय्वन्नु वीरनां यवीयनुम् । ६

में दुष्षन्त का जन्म हुआ। जनमेजय और भरत उसी की सन्तान थी। यहाँ तो राजा भरत की कथा को कुछ विस्तर से कहना अपेक्षित है। ६४-६७

पुरुवंशोत्पत्ति

अगर सुनने की इच्छा हो तो सुन लीजिए। राजा पूरु की पङ्कज के समान मुखवाली शतरुचि पत्नी हुई। उसने तीन पुत्रों को जन्म दिया। उनमें शूर प्रवीर ज्येष्ठ था और उसकी पत्नी, जान लीजिए, शैब्या थी। उसने अच्छे राजा नमस्यु को जन्म दिया। राजीवलोचन, सुभ्रू और अभयद, इस प्रकार राजा नमस्यु के तीन पुत्र हुए, उनमें अभयद के पुत्र थे सुन्वान् वसुनाभ, गर्ग और रम्य। उनमें सुन्वान् की पत्नी रथन्तरी ने वीर यवीय को जन्म दिया। १-६ भूपति यवीय की पत्नी गन्धर्वी थी जिसने आठ पुत्रों को पैदा किया। वे थे शूर दृढ़धन्वा, वपुष्मान्,

गन्धर्व्वी यवीयनां भूपतितन्टे पत्नी
सन्ततियवळ् पॆट्टुमॆट्टुपेरुण्टाय्वन्नु । ७
शूरनां दृढधन्वा वपुष्मान् रुद्राश्वनुं
पृषदश्वनुं बृहदश्वनुं गयन् मनु- ८
वॆन्निवर्कळिल्वॆच्चु रुद्राश्वनाय नृप-
नुन्नतस्तनियायोरप्सरस्त्रीयॆ वेट्टान् ९
अवळ् पॆट्टुण्टाय्वन्नु नल्लनामृचेपुवुं
कक्षेपु कृपणेपु पिन्नेयस्थण्डिलेपु १०
अञ्चामन् वनेपुवुं पिन्नेयस्थलेपुवुं
तेजोपु रथेपुवुं धर्म्मेपु सन्ततेपु ११
ऎन्निवर् पत्तु पृथ्वीनायकन्मारुण्टायि-
तॆन्नतिलृचेपुविन् नन्दननन्तिनारन् १२
त्रस्नुवुं मेघन् प्रतिरथनुं द्रुमन्तानु-
मन्तिनारन्टॆ पुत्रनिङ्ङनॆ नालुपेरुं १३
त्रस्नुविन्निलिलनॆन्नुण्टायानॊरु सुतन् ।
पत्नियुमुण्टाय्वन्नु चॊल्लॆळुं रथन्तरि १४
अवळ्पॆट्टञ्चु मक्कळ् दुष्यन्तादिकळल्लो ।
दुषन्तन्तन्टॆ पत्नी लक्षणयॆन्न नारि १५
लक्षणपॆट्टु जनमेजयनॆन्न नृपन्
चॊल्कॊण्ट विश्वामित्रपुत्रियां शकुन्तळ १६

रुद्राश्व, पृषदश्व, बृहदश्व, गय और मनु। उनमें से राजा रुद्राश्व ने एक सुन्दरी अप्सरा से विवाह किया। उसने निम्नलिखितों को जन्म दिया—ऋचेपु, कक्षेपु, कृपणेपु, स्थण्डिलेपु, वनेपु, स्थलेपु, तेजोपु, रथेपु, धर्मेपु, और सन्ततेपु। इस प्रकार दस राजाओं की उत्पत्ति हुई। उनमें से ऋचेपु का पुत्र था अन्तिनार; त्रस्नु, मेघ, प्रतिरथ और द्रुम, इस प्रकार अन्तिनार के चार पुत्र थे। ७-१३ त्रस्नु का इलिल नामक एक पुत्र हुआ। विख्यात रथन्तरी उसकी पत्नी हुई जिसने दुःषान्त आदि पांच पुत्रों को जन्म दिया। लक्षणा नाम स्त्री दुःषन्त की पत्नी हुई जिसने राजा जनमेजय को जन्म दिया। विख्यात विश्वामित्र की पुत्री शकुन्तला दुःषन्त की ज्येष्ठ कान्ता हुई और उसने श्रेष्ठ राजा भरत को पैदा किया। १४-१७ उसी के द्वारा इस देश का नाम भारत हुआ। इस पृथ्वी में जो प्राज्ञ बुधजन हुए उनको भी खुशी से बतलाऊँगा, सुन लीजिए।

मुख्यनां दुष्षन्तन्टॆ कान्तयाय्वन्नाळ् पिन्नॆ-
यवळ्पॆट्टुळ्ळ नल्ल भरतनॆन्न नृपन् १७
भारतमॆन्नतवन्मूलमाय् चॊल्लीटुन्नु ।
पारितिल् प्राज्ञन्मारायीटिन बुधजनं १८
केळ्क्क नी नराधिप ! चॊल्लुवन् मटियातॆ ।
दक्षनुं वैवस्वतन्मनुवुं भरतनुं १९
पूरुवुं कुरुतानुमजमीढनुमिव-
राटुपेर्पोक्कल्निन्नुमुण्टाय नृपन्मारो २०
नूट्टुनूरायिरमल्लॆण्णुकिलङ्ङु नूनम्
पारतिल् क्षत्रियरुं वर्द्धिच्चारतुमूलं २१
पुण्यकळाय कथाभेदङ्ङळ् कालभेद-
मिनियुमॊरुवळि चॊल्लुवेनतु केळ्क्क । २२

पूर्व्वराजोत्पत्ति

पत्तुपेरुण्टाय् मुन्नं प्राचीनबर्हिस्सुकळ्
क्रुद्धनां प्रचेतस्सिन् मक्कळॆन्नरिञ्ञालुम् । १
मेघङ्ङळ् तम्मिलुरुम्मीटुम्पोळुण्टायवन्न-
शीकराग्नियिल् वीणु वॆन्तुपोयार्पोलवर् । २
अवरिल्निन्नुण्टायि दक्षनॆन्नतुं चॊल्लु-
मवनुं विरणियां नारियॆ संप्रापिच्चान् । ३

दक्ष, वैवस्वतमनु, भरत, पूरु, कुरु, अजमीढ, इन छः व्यक्तियों से जो राजा पैदा हुए वे अगर गिने जायँ, तो निःसन्देह सौ लाख से भी अधिक होंगे। पृथिवी में क्षत्रियों की संख्या बढ़ी। उसके कारण पुण्यकथाएँ भी। काल में जो परिवर्तन हुआ, वह भी बतलाउँगा, सुन लीजिए। १८-२२

पूर्व राजओं की उत्पत्ति

पूर्वकाल में दस प्राचीनबर्हिस क्रुद्ध, प्राचेतस के पुत्र के रूप में पैदा हुए। कहते हैं कि मेघों के परस्पर संघर्ष से जो अग्नि पैदा हुआ उसमें वे जल गये। कहा जाता है कि उन्हीं में से दक्ष की उत्पत्ति हुई। उसने विरणी नामक स्त्री को प्राप्त किया। उस स्त्री ने एक हज़ार पुत्रों को जन्म दिया जिनके हृदय में सांख्यज्ञान को नारद ने स्थिर

अवळ्पेंट्टात्मजन्मारायिरमुण्टाय्वन्ना-
रवर्क्कु सांख्यज्ञानं नारदनुऱ्प्पिच्चान् । ४
अतिनालवर्कळुं मैथुनमुपेक्षिच्चार्
मतिमान्मारायोक्क ब्रह्मचारिकळायि । ५
सन्ततियवरिल्निन्नुण्टाकाञ्ञतुमूल-
मेन्तोरुवऴि सृष्टिवर्केन्नु चिन्तिच्चु दक्षन् ६
अन्पतु पेण्णुङ्ङळेप्पिन्नेयुं जनिप्पिच्चु
वन्पोटु काश्यपनु कोटुत्तु पतिमून्नुम् । ७
पत्तु धर्म्मनुं चन्द्रनिरुपत्तेळुं नल्कि-
यवरिलदितियां काश्यपपत्नि पेट्टि- ८
ट्टादित्यन्मारुण्टाय् लोकत्तें प्रकाशिप्पान् ।
अन्नतिल् विवस्वान्टे पुत्रनायतु यमन् ९
पेण्णुमोन्नुण्टाय्वन्नु यमियेन्नवळ्क्कु पेर्
पिन्नेयुमुण्टायितु मनुवेन्नोरु मकन् । १०
मानवन्मारेल्लारु मवङ्कल्निन्नुण्टायि ।
विप्रन्मारायारतिल् चिलरेन्नते वेण्टु ११
पृथ्वीनायकन्मारायवन्नितु चिलरेटो
वेननुं त्रस्नुतानुं नरिष्यन् नाभागनु- १२
मिक्ष्वाकु करूशनुं शर्य्यातिं पुनरिळन्
पृषध्रन् दिष्टनिवर् पत्तुपेर् नृपेन्द्रन्मार् । १३
पिन्नेयुं पत्तोन्पतु नन्दनन्मारुण्टाया-
रन्योन्यं युद्धं चेय्तु मरिच्चारवर्कळुम् । १४

किया । अतएव मैथुन की उपेक्षा करके मतिमान् बनकर वे सब ब्रह्मचारी हुए । १-५ उनकी सन्तति न होने के कारण दक्ष सृष्टि का उपाय सोचने लगा । दक्ष ने पचास नारियों की सृष्टि की जिनमें से तेरह को काश्यप को प्रदान किया । दस धर्म को दी गयीं और सत्ताईस चन्द्र को । काश्यप की पत्नियों में अदिति ने लोक के प्रकाशन के लिए आदित्यों को जन्म दिया । उनमें से विवस्वान् का पुत्र हुआ यम । एक लड़की भी हुई जिसका नाम था यमी । तत्पश्चात् मनु नामक पुत्र का जन्म हुआ जिससे सभी मानव पैदा हुए । भेद इतना ही है कि उनमें से कुछ ब्राह्मण हुए और कुछ पृथ्वी के नायक (क्षत्रिय) हुए । ६-११ वेन, त्रस्नु, नरिष्य, नाभाग, इक्ष्वाकु, करूश, शर्याति, इळ, पृषध्र, दिष्ट, ये

पत्तुपेरुण्टायतिलेट्टामनाकुमिळन्
मुत्तणिमुलयाळाय् वन्नानेत्तरिञ्ञालुम् । १५
अक्कथ परयुम्पोळेन्नयुं पेरुप्पमु-
ण्टक्कयल्क्कण्णितन्नेक्कैक्कोण्टानन्तु बुधन् । १६
बुधनु पुरूरवावेन्नोरु मकनुण्टा-
यतिमानुषमाय कर्म्मङ्ङळ् चेय्तानवन् । १७
सोमवंशत्तिङ्कलेक्कादिराजावुमवन्
भूमियुं समुद्र द्वीपङ्ङळुमोक्क वाणान् । १८
दिव्यरत्नङ्ङळ् धनधान्यङ्ङळेन्नतेल्ला-
मुर्व्वीशनाकुमिळनार्जिजच्चानसंख्यमाय् । १९
ऎन्निट्टुं मतियायिल्लेन्नवनल्लो केळ्प्पू
नन्नितु लोभत्तिन्टे महिम निरूपिक्किल् । २०
ब्रह्मस्वमायुळ्ळतुमटक्कित्तुटङ्ङिनान्
कर्म्मदोषङ्ङळेन्नु कलिपच्चार् मरयोरुम् । २१
अक्कालं सनल्क्कुमारन् मुनि शपिक्कया-
लुळ्क्कान्पिल् मदनमाल् मूच्छिच्चु नरपति । २२
मैक्कण्णिमणियायोरुर्व्वशितन्नेक्कण्टु
तल्क्कोङ्क पुणराञ्ञु दुःखिच्चु विवशनाय् । २३

दस क्षत्रिय राजा हुए । फिर उन्नीस पुत्र और हुए जो आपस में युद्ध करके नष्ट हुए । दस पुत्रों में आठवाँ इल था जो सुन्दर स्तन वाली स्त्री बना । वह कथा सुनाने में संकोच होता है । उस सुन्दरी से बुध ने विवाह किया । बुध का पुरूरवा नामक पुत्र हुआ जिसने अनेक अमानुष कार्य किये । चन्द्रवंश का वही पहला राजा था और उसने पृथिवी, समुंद्र, द्वीप आदि सब पर राज किया । १२-१८ पृथ्वीपति इल ने असंख्य दिव्य रत्न और निःसीम धन और धान्य अर्जित किया । फिर भी कहा जाता है उसकी तृप्ति नहीं हुई । सोचा जाय तो लोभ की महिमा अद्भुत प्रतीत होती है । ब्रह्मस्व को भी अपने वश में लाने लगा और ब्राह्मणों ने निश्चय किया कि कर्मदोष ही इसका कारण है । उन दिनों मुनि सनत्कुमार के शाप के कारण राजा के मन में मदन का वेग बहुत अधिक हुआ । वह सुन्दर आँखवाली उर्वशी को देखकर उसके स्तनों का आलिङ्गन न कर सकने से दुखित हुआ । बिलकुल विवेकहीन होकर

नष्टसंज्ञनुमायिग्गन्धर्व्वलोकत्तिङ्कल्
मट्टोलुमॊळियाळुमायवन् नटकॊण्टान् । २४
मधुराधरियुमायधरपानंचेय्तु
मतियुं मऱन्नवनरुपत्तय्यायिर- २५
त्ताण्टिरुन्निट्टुमेतुमरुतिवन्नतिल्ल ।
वर्द्धिच्चु मदनमाल् रमिच्चुवसिच्चोळं । २६
विरक्तिवरुमॆन्नतॊरुत्तन् निनय्क्कॆण्ट
त्यजिच्चीटाञ्ञाल् रागं वर्द्धिक्कुं दिनं प्रति । २७
वह्नियिलाज्यसमिदादिकळ् वॊण्टुवोळं
पिन्नेयुं होमिच्चोळं ज्वलिच्चुवरुमत्रे । २८
सेविच्चोळवुं नन्नाय् वर्द्धिच्चुवरुं कामं
सेविच्चाल् मतियामॆन्नज्ञन्मार् पऱञ्ञीटुम् २९
आवोळमकलत्तु वॆटिकयॊळिञ्ञेतु-
मावतिल्लनुरागं वेर्व्विटवेणमॆङ्किल् । ३०
दिव्यमानिनियायॊरुर्व्वशि रमिप्पिच्चि-
ट्टुर्व्वीनायकनेतुं वन्नतिल्ललंभावम् । ३१
आरवार्मुलयाळामुर्व्वशि पॆट्टिव-
नारु पुत्रन्मारुण्टाय्वन्नितॆन्नऱिञ्ञालुम् । ३२

वह मृदुभाषिणी उर्वशी के साथ गन्धर्वलोक चला गया। १९-२४ विवेक को त्याग कर मधुराधरी (मधुर अधरों वाली उर्वशी) का अधर पान करते हुए पैंसठ हज़ार वर्ष व्यतीत किये, पर तव भी विरक्ति नहीं हुई। वह जितना रस का आस्वादन करता रहा उतनी ही मदन की भी वृद्धि हुई। कोई यह न सोचे कि भोग करने से विरक्ति हो जायगी। जब तक राग का त्याग न किया जाय तब तक वह प्रतिदिन बढ़ेगा। वह्नि (अग्नि) में आज्य (घी) समिदादि (लड़की आदि) जितना कोई प्रक्षेप करता (डालता) जावे उतना ही ज़ोर से वह जलता जायेगा। काम का जितना कोई सेवन करे उतना ही वह बढ़ेगा। केवल अज्ञ (मूर्ख) ही कहते हैं कि सेवन से काम की तृप्ति हो जाती है। जहाँ तक हो सके दूर छोड़ने के अतिरिक्त अनुराग को अलग करने का और कोई उपाय नहीं है। दिव्य उर्वशी के रमाने के बाद भी राजा का अलंभाव (तृप्ति) नहीं हुआ। २५-३१ जान लीजिए कि मनोहर स्तनवाली उर्वशी ने उनके छः पुत्रों को जन्म दिया। आयु, धीमान्, वसु, ग्रहायु, पाँचवाँ

आयुस्सुं धीमाननुं वसुवुं ग्रहायुस्सु-
मञ्चामन् वनायुस्सुमाऽामन् श्रुतायुस्सुम् । ३३
इवरिलायुस्सिनु नालु पुत्रन्मारुण्टाय्
नहुषन् मुन्पिल् वृद्धशर्म्मावु रण्टामवन् ३४
आजिरायुस्सुमनेनस्सुमेन्नवक्कुं पे-
रवरिलवनीशनाय्वन्नु नहुषनुम् । ३५
अवन्टॆ पराक्रमं पऽवान् पणि तुलों
भूमियुं वानोर्नाटुमटक्कि वाणानवन् । ३६
भूमीन्द्रनवनैन्द्रपदवुमटक्किनान्
पौलोमीकुळुर्मुल पुल्कुवान् भाविच्चल्लो ३७
मामुनिमारेक्कोण्टु तण्टॆटुप्पिच्चितव-
नगस्त्यन्तन्टॆ शापं कोण्टोरु पेरुंपाम्पाय् ३८
धन्यनां धर्म्मजनेक्काण्मोळं किटन्नुपोल् ।
अवनुमाऽुमक्कळ् यतियुं ययातियुं ३९
संयातियेन्नुं पुनरायाति यातियेन्नुं
उद्धवनेन्नुमवर्तङ्ङटॆ नाममेल्ला- ४०
मविटॆ ययातिक्कु वन्नितु राज्यं पिन्ने-
यवनुं रण्टु वेट्टानेन्नु केट्टिरिक्कुन्नु । ४१
ऋषिकन्यकयाय देवयानियुं पिन्ने
वृषपर्व्वाविन् मकळाकिय शर्म्मिष्ठयुम् । ४२

वनायु और षष्ठ था श्रुतायु। इनमें आयु के चार पुत्र हुए—नहुष पहला था, वृद्धशर्मा द्वितीय, आजिरायु तृतीय और अननस् चतुर्थ था। इनमें से नहुष ही राजा हुआ। उसके पराक्रम का वर्णन करना कठिन है। उसने भूमि और देवों के देश को जीतकर उन पर शासन किया। उस भूपाल ने इन्द्र के पद को भी जीत लिया और पौलोमी (शची) के शीतल स्तनों का आलिंगन करना चाहा। ३२-३७ और महामुनियों से उसने बोझ उठवाया। अगस्त्य के शाप के कारण एक बड़ा सर्प बनकर युधिष्ठिर का दर्शन होने तक पड़ा रहा। उसके छः पुत्र थे—यति ययाति, संयाति, आयाति, याति और उद्धव—ये ही उनके नाम हैं। उनमें राज्य ययाति के हाथ में आया। सुना है कि उसने दो विवाह किये। पहले ऋषि कन्या देवयानी से और फिर वृषपर्वा की लड़की शर्मिष्ठा से। देवयानी के दो पुत्र हुए—यदु और तुर्वशु और शर्मिष्ठा

देवयानिक्कु मक्कळ् यदुवुं तुर्व्वशुवुं
द्रुह्युवुमनुद्रुह्यु पूरुवुं शर्मिष्ठय्क्कु । ४३
अक्कालं ययातिक्कु शुक्रन्टे शापं कोण्टु
दुष्कर्म्मवशाल् वन्नुनिरञ्ञु जरानर । ४४
कैक्कोण्टानतु पूरु मट़ारुं कैक्कोळ्ळाञ्ञु
मक्कळिलनुजनां पूरुविनायि राज्यम् । ४५
मुख्यनायोरु तातन् चोन्नतु केट्टमूल-
मक्कथयोक्कॆच्चोल्किल् मट़ोन्निनिल्ल कालम् । ४६
सल्गुणनिधे जनमेजय नृपोत्तम !
वैशम्पायनन् पुनरिङ्ङने पऱञ्ञप्पोळ्
संशयं कनक्कान्पिलुण्टायि पारिक्षितन् । ४७
तापसकुलवररत्नमे ! जय जय
तापङ्ङळिव केट्टालुण्टामो मनक्कान्पिल् । ४८
शुक्रमामुनियुटे पुत्रियां देवयानि
मुख्यनां ययातिक्कु पत्नियाय् वन्नतोर्त्ताल् ४९
ओक्कुन्निल्लेतुं प्रातिलोम्यमल्लयो मुने !
मैक्कण्णि शर्म्मिष्ठयुमसुरनारियल्लो । ५०

के तीन—द्रुह्यु, अनुद्रुह्यु और पूरु। उस समय शुक्र के शाप के कारण अपने दुष्कर्मों के द्वारा ययाति जराग्रस्त हुआ[1]। और पुत्रों के इनकार करने के बाद पूरु ने इस जरा को स्वीकार कर लिया। अतएव सबसे छोटा होने पर भी राज्य पुरु ही को प्राप्त हुआ। ३८-४५ क्योंकि उसी ने पिता की प्रार्थना स्वीकार कर ली थी। वह सब कथा अगर कहने लगें तो और कुछ कहने को समय न होगा, हे सद्गुणनिधि ! नृपोत्तम जनमेजय ! जब वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तब पारिक्षित (जनमेजय) को यह संशय हुआ। उसने पूँछा, हे तापसकुलरत्न ! तुम्हारी जय हो ! इन कथाओं को सुनने के बाद मन में ताप कैसे होगा ? महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी के साथ राजा ययाति का विवाह हो यह विचार करने से कुछ ठीक नहीं बैठता है ! वह विवाह क्या प्रतिलोम्य नहीं था ? और सुन्दरी शर्मिष्ठा तो एक असुरनारी थी ! राजा ययाति

१ देवयानी के पिता शुक्राचार्य को जब मालूम हुआ कि ययाति ने दासी शर्मिष्ठा से भी विवाह कर लिया, तब उन्होंने ययाति को भी शाप दिया कि वह अपना यौवन खोकर जरावार्द्धक्यग्रस्त हो जाये।

कैक्कोंळ्वानवकाशमेन्ततु नराधिप-
नोंक्कवे चुरुक्कमायरुळिच्चेय्तीटणम् ५१
अक्कथ नमुक्किकतिल् कौतुकमुण्टु पारं
सल्कथ केट्टाल् मतियाकयिल्लोंरिक्कलुम् । ५२
अप्रकारङ्ङळेल्लां केळ्क्क नीयेङ्किलप्पो-
ळद्भुतमुण्टु पारं दुश्चोद्यमल्लयेतुम् । ५३

देवयानीचरितम्

ऒङ्किलो देवासुरयुद्धमुण्टायि मुन्नं
सङ्कटं तीर्त्तु जयमुण्टावानवक्कन्नाळ् । १
देवकळ् बृहस्पतितन्नेयाचार्यनाक्की
देववैरिकळ् शुक्रन्तन्नेयुं कैक्कोंण्टार्पोल् । २
देवकळोटु पोरिल् मरिक्कुमसुररे
जीविप्पिच्चीटुमल्लो शुक्रनां मुनिवरन् । ३
जीवनुं देवकळ्क्कु जीवनुण्टाक्कप्पोका
देवकळतुमूलं तोट्टारेन्नरिञ्ञालुम् । ४
मृतसंजीविनियां विदययुण्टल्लो शुक्र-
नतिनुळ्ळुपदेशमिल्ल देवाचार्यनो । ५

का इनके साथ विवाह करने का क्या अधिकार था ? यह सब कथा संक्षेप में बतला दीजिए । उसमें मेरा बड़ा कुतूहल है । अच्छी कथाएँ सुनकर कभी तृप्ति नहीं होती । तब वैशम्पायन बोले अगर ऐसा है तो सब सुन लीजिए, कथा तो अद्भुत है और आपका प्रश्न भी बुरा नहीं है । ४६-५३

देवायानीचरित

पूर्वकाल में देवों और असुरों में युद्ध चला ताकि दुःख समाप्त हो जाय और विजय हो । देवों ने बृहस्पति को अपना आचार्य बनाया और उनके शत्रुओं ने शुक्र को अपना आचार्य स्वीकार किया । युद्ध में जो-जो असुर मरते थे उनको शुक्र मुनि जिलाते जाते थे । जीव (बृहस्पति) तो मृत देवों का पुनरुज्जीवन न कर सका । अतएव, जान लीजिए, देव हार गये । मृतसंजीविनी (मृन को जिलानेवाली) विद्या शुक्र के पास थी पर

अन्नु देवकळ् गुरुतन्नुटे सुतन्मारिल्
मुन्नवनाय कचन्तन्नोटु चोन्नारल्लो । ६
चेन्नु नी पठिक्केणं शुक्रन्टे विदचयेन्ना-
लन्नोळिञ्ञिल्ल जयं नमुक्केन्नरिञ्ञालुम् । ७
अम्मुनियुटे मकळ् देवयानिये नन्नाय्
सम्मानिच्चरिके पुक्किकोटुक मटियाते । ८
तन्मकळ् चोन्नतोळिञ्ञम्मुनि केळ्क्कयिल्ल
निर्म्मलयाय विदच पठिक्कामेन्तालेटो । ९
कचनुमतु केट्टु वृषपर्व्वावाकुन्नो-
रसुराधिपन्तन्टे नगरमकंपुक्कान् । १०
शुक्रनेच्चेन्नु कण्टु वन्दिच्चु मुनीन्द्रनुं
कैक्कोण्टु विद्यकळुं नन्नाय् पठिप्पिच्चु । ११
शुक्रनुं देवयानियाकिय कुमारिक्कु-
मुळ्क्कान्पु तेळियुमारिरुन्नानवन्तानुम् । १२
देवयानियाल् वेण्टुमोरोरो परिकर्म्म-
मेतुमे मटियाते चेय्तीटुं कचन्तानुम् । १३
अवळ्क्कुमतुमूलं कचनिलोरुनाळु-
मिळक्कं वरातोरु रागवुमुण्टाय्वन्नु । १४

देवाचार्य ने उस विद्या के उपदेश को ग्रहण नहीं किया था। उस समय देवों ने अपने गुरु के ज्येष्ठ पुत्र कच से कहा। तुम अगर जाकर शुक्र की विद्या सीख लोगे तो हमारी भी जय होगी, यह जान लो। १-७ उस मुनि की पुत्री देवयानी का खूब सम्मान करके उसके निकटतम बन जाओ। वह मुनि अपनी पुत्री के कहने के अनुसार ही चलता है। इस प्रकार तुम उस निर्मल विद्या को सीख सकोगे। यह सुनकर कच ने असुरेश वृषपर्वा के नगर में प्रवेश किया। तत्पश्चात् शुक्रमुनि का दर्शन किया और उनकी बन्दना की। मुनीन्द्र ने संतुष्ट होकर उसको विद्या सिखा दी। कच ने ऐसा व्यवहार किया कि शुक्र और कुमारी देवयानी दोनों प्रसन्न हो जावें। देवयानी जो-जो सेवा चाहती थी वह सब कच तुरन्त ही किया करता था। ८-१३ इसलिए देवयानी का कच के प्रति अटल प्रेम हो गया। कन्या और ब्रह्मचारी कच दोनों निरन्तर सुख से रमण करते रहे। वन-वन में पशुवृन्द को चराकर विविध पुष्प, घास, समित आदि लेकर बिना किसी के कुछ कहे ही वह लौटा करता था।

कन्यकतानुं ब्रह्मचारियां कचनुमाय्
नन्नायि रमिच्चु वाणीटिनार् निरन्तरम् । १५
काननंतोरुं पशुवृन्दत्तो मेच्चु पिन्नो
नानापुष्पङ्ङळ् पुल्लुं समिदादिकळेल्लां १६
कोण्टुवन्नीटुमवन् मिण्टातेयिरिक्कुम्पोळ् ।
कण्टिक्कार्कुळलियां देवयानियुमायि १७
कण्ट काननंतोरुं नटन्नु कळिच्चीटुम् ।
कुण्ठतकूटाते तन् विद्ययुं पठिच्चीटुम् । १८
यौवनमिरुवर्क्कुमारंभिच्चिचरिक्कुन्नु
दिव्यत्वमुण्टाकयाल् वृत्तियुं रक्षिच्चीटुम् । १९
वेणुनादङ्ङळोटु ताळङ्ङळ् मेळङ्ङळुं
वीणवायन नल्ल वक्रोक्तिविशेषवुं २०
व्यंग्यङ्ङळ् पलतरं ध्वनिकळिवयेल्लां
मंगलमाकुंवण्णं नन्नायिप्परकयुं २१
अन्योन्यं कळिच्चवरिरुन्नार् पलकालम्
कन्यकतानुं ब्रह्मचारियुं पिरियाते । २२
आटीटुन्नवनिलुं पाटीटुन्नवनिलुं
गूढमां नारीवृत्तं मरटक्कुन्नवनिलुं २३
इष्टमायुळ्ळ वस्तु कोटुक्कुन्नवनिलु-
मिष्टमायतुतन्नो परयुन्नवनिलुं २४

वह सुकेशिनी देवयानी के साथ विविध काननों में घूमकर खेला करता था। साथ-साथ अपनी विद्या को भी बिना आलस्य के पढ़ता था। दोनों का यौवन प्रारम्भ हो गया था। दिव्य होने के कारण कच अपने चरित्र की भी रक्षा करता था। वेणुनादों के साथ विविध ताल और वाद्य बजाते हुए वीणावादन करते हुए, अच्छी वक्रोक्तियाँ, विविध व्यंग्य और ध्वन्युक्ति मांगलिक रूप में अच्छी तरह से कहते हुए कन्य का और ब्रह्मचारी दोनों कभी अलग न होकर चिरकाल तक आपस में खेलते रहे। १४-२२ यह प्रसिद्ध ही है कि मधुवाणियों (महिलाओं) का नाचनेवाले में, गानेवाले में, गूढ़ नारीवृत्त को छिपानेवाले में, इष्ट वस्तु देनेवाले में, मीठी बात कहनेवाले में, और तरह-तरह के आभूषण पहननेवाले में, देखने में अच्छा लगनेवाले में, और खेलनेवाले में प्रेम पैदा हो जाता है; और कच में इस प्रकार के गुण तो थे ही। कच के इस प्रकार

कण्टभूषणमॆल्लामणियुन्नवनिलुं
कण्टाल् नल्लवनिलुं कोळियुळ्ळवनिलु २५
मुण्टाकुमल्लो मधुवाणिकळ्क्कनुराग-
मुण्टल्लो कचनेवमादियां गुणमॆल्लाम् । २६
अञ्ञूरु संवत्सरं कळिञ्ञु कचनेवं
मञ्जुळगात्रियुमाय् कळिच्चकालमन्नाळ् । २७
अरिञ्ञारसुरकळ् कचन्टॆ परमार्त्थम्
निरञ्ञ वैरत्तोटुमतिनालतुकालम् । २८
काननं तन्निल् पशुवृन्दवुं मेच्चु कचन्
ताने निल्कुन्ननेरं कॊन्नवनुटलॆल्लां २९
ओरोरो तिलत्तोळं नुरुक्किच्चॆन्नाय्क्कळ्क्कु
पारातॆ कॊटुत्तितु दुष्टरामसुरकळ् । ३०
पशुवृन्दवुमप्पोळ् तङ्ङळॆप्पोन्नु वन्नार्
कचनॆक्काणाय्कयाल् देवयानियुं चॆन्नु ३१
करञ्ञु परितापं निरञ्ञु मनतारिल्
परञ्ञु तातनोटु वन्नीला गुरुसुतन् ३२
गोक्कळुं गोशालय्कल् तङ्ङळे वन्नारॊक्क
पार्क्कॊण्टुं नेरमल्ल सूर्यनुमस्तमिच्चु । ३३
अग्निहोत्रवुं वेण्टीलॆन्तॊरुमूलं कचन्
वैकियतवनॊरु सङ्कटं वन्नीलल्ली । ३४

मंजुलगात्रि (सुंदर शरीर वाली देवयानी) के साथ खेलते हुए पाँच सौ बरस बीत गये। असुरों ने प्रवृद्ध क्रोध के साथ कच के इस रहस्य को जान लिया। जब पशुओं को चराकर कच वन में अकेला खड़ा था तब दुष्ट असुरों ने उसे जान से मार कर उसके शरीर के तिल के समान छोटे-छोटे टुकड़े काटकर भेड़ियों को खिला दिया। पशुवृन्द आप ही घर वापस आये। कच को न देखकर देवयानी बहुत दुःखित हुई और रोने लगी। तदनन्तर अपने पिता से बोली—"गुरुपुत्र (कच) अभी वापस नहीं आया और गायें सब आप ही वापस आ गयीं। अब और प्रतीक्षा करने के लिए समय नहीं है, सूर्यास्त हो गया। कच को क्या अग्निहोत्र नहीं करना है? क्या कारण है कि विलम्ब कर रहा है। उसको कोई विपत्ति तो नहीं हुई? अगर कच को कुछ हुआ तो मैं मर जाऊँगी इसमें कोई संदेह नहीं"। जब पुत्री ने इस प्रकार कहा (तब पिता ने कहा),

अन्तरं कचनु वन्नीटुकिल् मरिप्पन् ञा-
नन्तरमेतुमिल्लेन्नात्मज परञ्ञप्पोळ् ३५
ॲन्तिनु खेदिक्कुन्नु मरिच्चानेन्नाकिलु-
मिन्नु ञान् जीविप्पिच्चुकोळ्वन् नीयटङ्ङुक । ३६
विळिच्चु शुक्रमुनि कचनुं चेन्नाय्क्कळे-
प्पोळिच्चु पुरप्पेट्टु वन्नानेन्तोरु चित्रम् ३७
ॲन्तेटो नटे वराञ्ञीटुवान मूलमेन्नु
सुन्दरगात्रि देवयानि चोदिच्चनेरं ३८
पुञ्चिरिपूण्टु कचन् चोल्लिनान् परमार्त्थं
वञ्चिच्चु दनुजन्मार् चेय्त दुष्टतयेल्लाम् । ३९
पिन्नेयुमोरु दिनं पूविनु वनं पुक्का-
नन्नवनुटल् पोटिच्चाळियिलिट्टारवर् । ४०
कन्यक देवयानि तातनोटरियिच्चाळ्
अन्नुं मामुनिवरन् विळिच्चुवरुत्तिनान् । ४१
पिन्नेयुं मून्नामतु दुष्टरामसुरकळ्
मुन्नं वन्नतुपोले वन्नुपोकरुतेन्नार् । ४२
वधिच्चु वरुत्तीक्कोप्पोटिच्चु तरि पोक्कि
मृदुत्वं कलन्नोरु चूर्ण्णमाय् वशमाक्कि ४३
हृद्यमाय् गुरुविनु सेविप्पानुण्टाक्किय-
मद्यत्तिल् कलक्कि नल्कीटिनारसुरकळ् । ४४

"क्यों दुःखित हो रही हो ? अगर मर भी गया है तो मैं जिला दूँगा। तुम शान्त हो जाओ"। तब शुक्र मुनि ने पुकारा और कच भेड़ियों (के पेट) को फाड़कर निकल आया। कितना आश्चर्य है ! जब सुन्दरगात्री देवयानी ने पूँछा 'तुम पहले ही क्यों नहीं आये', तब मुस्कराते हुए कच ने परमार्थ बतला दिया—'असुरों ने वञ्चना करके दुष्टता की'। फिर एक दिन वह (कच) फूल (लाने) के लिए वन गया। तब असुरों ने उसके शरीर को चूर-चूर कर समुद्र में फेंक दिया। कन्या देवयानी ने पिता को बतला दिया और उस अवसर पर भी उसको जिलाकर बुला लिया। तीसरी बार असुरों ने फिर सोचा कि अब की वह बात न होना चाहिए जो पहले हुई थी। इसलिए उसका (कच का) वध करके, शरीर को तलकर उसे पीसकर छान कर महीन चूर्ण बना लिया और उस चूर्ण को गुरु (शुक्राचार्य) के लिए तैयार किये हुए मद्य में

देवयानियुं कचन् वराञ्ञनेरं परि-
देवनं तुटङ्ङिनाळ् तातन्टे मुन्पिल् निन्नु । ४५
देवकळुटे गुरुपुत्रनेन्नरिञ्ञिट्टु
देववैरिकळुटे दुष्टत तन्नेयितु । ४६
जीविप्पिच्चीटुकिन्नुमेन्नतु केट्टु मृत-
जीविनिविद्यकोण्टु विळिच्चु भार्ग्गवनुम् । ४७
वन्नील कचनेन्तु मकळे कर्म्मफलं
वन्नीटुन्नतिनेतुमावतल्लटङ्ङु नी । ४८
ऍन्नेल्लां पलतरं भार्ग्गवन् परञ्ञप्पोळ्
कन्यक देवयानि कण्णुनीर् वार्त्तु चोन्नाळ् । ४९
आदितेयाचार्यनां गीष्पतिसुतनाय-
भूदेवन्तन्नेक्कोन्न पापिकळसुरकळ् । ५०
सन्ततिनाशंकूटे वरुत्तीटुवान् शपि-
च्चन्तरमतिनिल्ल केवलं पिन्ने ञानुं ५१
इन्नेन्टे कचनोटुकूटि ञान् मरिक्कुन्ने-
नेन्नेल्लां देवयानि चोन्नतु केट्टु शुक्रन् ५२
पिन्नेयुं विळिच्चितु नन्नायि ध्यानिच्चप्पोळ् ।
तन्नुटे जठरत्तिल्निन्नवन् विळिकेट्टान् ५३
एतोरु वळियेनीयेन्नुटेयुळ्ळिल् पुक्कॊ-
न्नादरवोटु शुक्रन् चोदिच्चनेरं कचन् ५४

घोलकर पीने को दिया। ३७-४४ जब कच वापस नहीं आया तब देवयानी अपने पिता के सामने रोने लगी। (उसने कहा,) "यह जानकर कि कच देवगुरु का पुत्र है असुरों ने ही अवश्य यह दुष्टता की है। अतएव उसको फिर जिलाइए"। यह सुनकर भार्गव (शुक्राचार्य) ने मृतसंजीवनी विद्या के द्वारा कच को बुलाया। "बेटी, कच तो आता नहीं है। यह कर्म का फल है जिसे कोई भी रोक नहीं सकता। इसलिए तुम शान्त हो जाओ।" जब पिता ने इस प्रकार बहुत कुछ कहा तब कन्या देवयानी रोती हुई बोली, "इसमें संदेह नहीं कि पापी असुरों ने ही देवों के आचार्य बृहस्पति के पुत्र को मार डाला है। ४५-५० मैं शाप देकर उनका संततिनाश कर दूँगी, इसमें संदेह नहीं। फिर यह भी है कि मैं आज अपने कच के साथ मर जाऊँगी"। देवयानी की इस प्रकार की बात सुनकर शुक्राचार्य ने अच्छी तरह से ध्यान करके फिर

अॆन्नॆक्कॊन्नसुरकळ् वरुत्तुपॊटिच्चुटन्
तन्नितु मद्यं तन्निल् कलक्किक्कसेविप्पानाय् । ५५
अॆन्नु केट्टॊरु शुक्रन् कोपिच्चु चॊन्नानॆङ्कि-
लिन्नु ञानसुररॆश्शपिच्चु नशिप्पिच्चु ५६
पुण्यमुळ्ळमररोटॊन्निच्चु वाणीटुव-
नॆन्नतु केट्टु कचन् चॊल्लिनानरुतॆन्नाल् ५७
वन्नुपों तपस्सिन्नु नाशमॆन्नरियेणम्
नन्नल्ल शपिक्कुन्नतारॆयुमॊरुवक्कुं ५८
दोषमिल्लात नमुक्कॊक्कयुं क्षमिप्पतु
भूषणमाकुन्नतु कोपमुण्टायालाका । ५९
कोपकामादिकळॆ क्षमया जयिप्पवन्
तापसश्रेष्ठनॆन्नु चॊल्लुन्नु विद्वज्जनम् । ६०
अॆन्नतु केट्टु भृगुनन्दनन् मकळोटु
चॊन्नानॆङ्ङनॆ वेण्डू तिरिच्चुचॊल्लेणं नी । ६१
ञान् मरिच्चीटुन्नाकिल् कचनॆयुण्टाक्कुवन्
ञान् मरियातॆ कचनुण्टाकयिल्लतानुम् ६२
अच्छनॆन्तॆन्नोटिप्पोळिङ्ङनॆ परयुन्नु
पिच्चयॆन्ततु पुनरॆल्लाक्कुं चॆय्यामल्लो । ६३

कच को बुलाया। और कच ने भी पेट में रहते हुए उनकी पुकार सुन ली। जब शुक्राचार्य ने सादर पूँछा कि तुम किस मार्ग से मेरे भीतर घुस आये तब कच ने कहा—"मुझे मार कर मेरे शरीर को तलकर और पीसकर मद्य में मिलाकर आपको पीने को दिया गया"। यह सुनकर शुक्र क्रुद्ध हुए और बोले—"अगर ऐसा है तो आज मैं असुरों को शाप देकर नष्ट कर दूँगा और पुण्यशाली देवों के साथ रहने लगूँगा"। यह सुनकर कच ने कहा—"ऐसा मत कीजिए क्योंकि आपके तप का नाश हो जायगा। किसी को भी औरों को शाप देना उचित नहीं है। ५१-५८ हम निर्दोषों के लिए सब क्षमा कर देना ही भूषण होगा। क्रुद्ध होने से वह बात न रहेगी। विद्वान् लोग कहते हैं कि जो क्रोध और काम आदि को क्षमा के साथ जीत लेता है वही तापस श्रेष्ठ है"। यह सुनकर भृगुनन्दन (शुक्र) ने अपनी बेटी से कहा अब क्या करना है यह सोचकर बतलाओ। अगर मैं मरजाऊँगा तो कच को जिला दूँगा। मेरी मौत के बिना कच नहीं जिलाया जा सकता है। (तब देवयानी

तान्मरिच्चॊरुत्तनॆ रक्षिक्कुमसारनुं
तान्मरियातॆकण्टु मट्रॊरु पुरुषनॆ ६४
जीविप्पिच्चीटुन्नतु सामर्त्थ्यमाकुन्नतुं
जीवरक्षणत्तिनुनॊङ्किले फलमुळ्ळु । ६५
ऎन्नतिल् विशेषिच्चुमाश्रितनल्लो कचन्
निन्नुटॆयॊरु शिष्यनाकयुमुन्टु पिन्नॆ । ६६
धन्यनां बृहस्पति पुत्रनाकयुमुण्टु
ऎन्नतु निरूपिच्चिट्टॊत्ततु चॆय्कयॆन्नाळ् । ६७
निन्तिरुवटितन्नॆक्कॊन्नु जीविच्चालति-
नॆन्तॊरु फलमतु चॆय्कयिल्लॆन्नु कचन् । ६८
अच्छनुं कचनुमॊरन्तरं वरातॆक-
ण्टिच्छवन्नीटुन्नाकिलिज्जन्ममॊटुङ्ङील ६९
निश्चयमल्लाय्किल् ञान् मरिप्पनॆन्नुतन्नॆ
कच्चेलुं मुलयाळां देवयानियुं चॊन्नाळ् । ७०
आर्ज्जववचनमूर्ज्जस्वतीपुत्रि चॊन्न-
ताश्चर्यमॆन्नु कण्टु भार्गव मुनितानुं ७१
अप्पॊळ्ऎयुपदेशिच्चान् मृतसंजीविनि
सल्पुमानाय कचन्तनिक्कु मटियातॆ । ७२

बोली, "पिता जी ! आप क्यों मुझसे इस प्रकार कह रहे हैं ? भिक्षा देने का काम सब कोई कर सकता है, स्वयं मरकर किसी की रक्षा करने वाला सारहीन है। स्वयं न मरकर किसी को जिला देने में ही सामर्थ्य है और जिलाने का फल भी तभी होता है। ५९-६५ और फिर विशेष बात यह है कि कच आपका आश्रित है और आपके शिष्यों में से एक है। ऊपर से वह धन्य बृहस्पति का पुत्र भी है। यह सब ध्यान में रखकर आप जो उचित हो सो करें"। कच ने तब निवेदन किया—"आप महानुभाव को मारकर जीवित रहने में क्या प्रयोजन है ? यह मैं न करूँगा"। तब सुन्दरस्तन वाली देवयानी ने कहा—"अगर पिता जी को और कच को वही इच्छा हो जायगी तो निःसन्देह यह जन्म समाप्त नहीं होगा। और मैं तो अवश्य मर जाउँगी"। अपनी ऊर्जस्वती पुत्री की इस बात को अद्भुत समझकर भार्गव मुनि (शुक्राचार्य) ने उसी समय सत्पुरुष कच को संकोच के बिना मृतसंजीविनी विद्या का उपदेश दिया। ६६-७२ तत्काल ही दक्ष कच शुक्राचार्य के दक्षिणपाशर्व को

दक्षिणपार्श्वं भेदिच्चप्पॊ़ळे पुऱप्पॆट्टान्
दक्षनां कचन् जीविप्पिच्चितु शुक्रनेयुम् ७३
दक्षिण गुरुविनु जीवनुं नल्की कच-
मॊक्कुमॆन्ऩतुं परीक्षिच्चितन्ऩतिनाले । ७४
दुष्टरामसुरकळ् चॆय्ततुं फलिच्चील
निष्ठुरकर्म्मिकळ्क्कु तङ्ङळ्क्के फलङ्ङळुं । ७५
गुणमुळ्ळवरुटॆ गुणत्तॆक्कॆटुप्पानाय्
गुणमिल्लात जनं चॆय्ततिन् फलङ्ङळुं ७६
गुणङ्ङळाये वरू मेल्क्कुमेल् गुणिकळ्क्कुं
गुणक्केटतु चॆय्युन्ऩवर्क्कॆयकप्पॆटू ७७
विद्ययुं पठिप्पिच्चु कीर्त्तिमानाक नीयॆ-
न्ऩॊत्वयुं तॊ़ळिञ्ञरुळ्चॆय्तितु शुक्रन्तानुम् । ७८
इङ्ङनॆयॆन्टॆ शिष्यन्तन्नोटु चॆय्तमूलं
निङ्ङळुमज्ञानिकळाय् पोविनसुररे । ७९
इन्ऩिनिक्कितु वन्ऩ कारणं मऱयव-
रिन्ऩुतॊट्टिनिमेलिल् चॆय्यायक सुरापानम् । ८०
चॆय्तीटुन्ऩवन् ब्रह्महत्ययुळ्ळतुपोलॆ
जातिभ्रष्टनुमायिप्पापियाय् वरिकॆन्ऩान् । ८१
शुक्रशापत्तालिन्ऩुं मद्यपानत्तॆच्चॆय्कि-
ल्लुल्क्रुष्टन्माराय् तपोविद्यावृत्तन्माराकुं ८२

फाड़कर बाहर निकाला। तदनन्तर शुक्र को जिला दिया। इस प्रकार कच ने गुरु को उनके जीवन ही को दक्षिणा के रूप में दिया। विचार करने पर यह उचित भी प्रतीत हुआ। इसलिए दुष्ट असुरों का किया सब व्यर्थ निकला। जो निष्ठुर (क्रूर) काम करते हैं वे ही उसका फल भोगते हैं। गुणियों के गुण बिगाड़ने के लिए गुणहीन जो कुछ करते हैं वह गुणियों के लिए ही उत्तरोत्तर लाभ बन जाता है। हानि उन्हीं की होती जो उसे करते हैं। शुक्र ने संजीवनी विद्या सिखलायी और बड़ी प्रसन्नता के साथ कच से कहा—"कीर्तिमान् हो जाओ। हे असुर ! तुम लोगों ने जो मेरे शिष्य के साथ यह बर्ताव किया इसलिए अज्ञानी ही बने रहो। ७३-७९ मेरी आज यह दशा होने के कारण आज से लेकर ब्राह्मण सुरापान न करें। जो करेगा वह ब्रह्महत्या करनेवाले के समान जातिभ्रष्ट और पापी हो जावेगा"। शुक्र के शाप के कारण आज

विप्रन्मार् पञ्चमहापातकं प्रापिक्कुन्नु ।
शुक्रशापत्तिन्बलं पोकयिल्लोरुनाळु- ८३
मायिरत्ताण्टु कचनिङ्ङने वासं चेय्ति-
ट्टाचार्यनियोगत्ताल् पोवानाय् पुरप्पेट्टान् । ८४
आयतमिळियाळां देवयानियुमप्पोळ्
आतुरयायाळ् कचन्तन्नुटे वियोगत्ताल् । ८५
अन्तेंटो ! तुटङ्ङुन्नतेन्नॆ नी वेंटियाय़्क
सन्ततमायिरत्ताण्डोरुमिच्चिरुन्निट्टुं ८६
कण्टिट्टिल्लेन्न भावं कण्टितु निनक्किप्पो-
ळिण्टलुण्टतुकोण्टु पारमेन्नुटेयुळ्ळिल् । ८७
इन्नितु कळिञ्ञीटुं निन्नुटे व्रतमेन्न-
तेन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु पार्त्तु ञानित्र नाळुम् । ८८
इन्निप्पोळ् नीयो पोवानायल्लो पुरप्पेट्टु
ॲन्नोटु यात्रपोलुं चोल्लुवान् भाविच्चील । ८९
निन्नोटु पिरिञ्ञु ञानेङ्ङने पोरुक्कुन्नु
ॲन्नॆ नी परिग्रहिच्चीटणं मटियाते । ९०
आभिजात्यवुं वयोरूपलावण्यविद्या-
शोभयुं निरूपिक्क नम्मिले रागङ्ङळुम् । ९१

भी उत्कृष्ट, तप, विद्या आदि गुणवाले ब्राह्मण भी मद्यपान करके पाँच महापातकों से लिप्त हो जाते हैं। शुक्रशाप का बल कभी नष्ट नहीं होगा। एक हज़ार वर्ष इस प्रकार रहने के बाद गुरु की अनुमति लेकर कच जाने की तैयारी करने लगा। यह देखकर कि अब कच से वियोग होगा आयतलोचना (विशाल नेत्र वाली) देवयानी दुःखित हुई और बोली—८०-८५ "अब यह तुम क्या करने लगे हो ? मुझे मत छोड़ना। निरन्तर एक हज़ार वर्ष साथ रहने के बाद भी तुम्हारी ऐसी भावना है कि मानो तुमने मुझे कभी देखा ही नहीं। इसलिए अब मेरे मन में बड़ा दुःख हो रहा है। तुम्हारा व्रत[1] अब समाप्त होने वाला है यह समझकर मैंने इतने दिन प्रतीक्षा की। तुम तो आज चले जाने की तैयारी में हो, मुझ से विदा लेने तक की बात भी नहीं सोच रहे हो। तुम्हारा विरह मैं कैसे सह सकती हूँ ? अब बिना संकोच के मुझे परिग्रह[2] करो।

१ संजीविनी विद्या सीखने का व्रत. २. मुझ से विवाह करो।

इत्तरं केट्टु कचनुत्तरमुरचॆय्ता-
नुत्तमकुलस्त्रीयां देवयानियोटप्पोळ् ९२
निर्म्मलगुणाकरे ! नीतिसम्मतवरे !
सन्मृदुकळेवरे ! सारस्यपारावारे ! ९३
कन्यकाजनवरे ! कामुकमनोहरे !
धन्ये ! सौजन्याधारे ! कोरकस्तनभरे ! ९४
बन्धुरतपोधरे ! बन्धूकसमाधरे
मन्धरविलोचने ! शीतांशुबिंबानने ! ९५
हन्त नी चिन्तिच्चतिनन्तरं पॆरिकॊयु-
ण्टॆन्ततॆऩ्ऩुरचॆय्यां पन्तॊक्कुंमलयाळे । ९६
निन्नॆ ञान् परिग्रहिच्चीटुकयॆऩ्ऩुळ्ळतु
नऩ्ऩल्ल गुरुपुत्रियल्लो नी मनोहरे ! ९७
एतुमे दोषमिल्ल चॆय्तालुमॆऩ्ऩाळव-
ळेतुमे पऱयेण्टा चॆय्कयिल्लॆऩ्ऩु कचन् । ९८
निन्नॆप्पण्टसुरकळ् रण्टुमूऩ्ऩूटॆ कॊऩ्ऩा-
रऩ्ऩु ञानल्लो निन्नॆ जीविप्पिच्चतुमॆटो । ९९
अङ्ङनॆयुळ्ळोरॆन्नॆ निर्म्मूलं वॆटिकिल् ञा-
नॆङ्ङनॆ पॊऱुक्कुऩ्ऩु दुष्टत काट्टीटॊल्ला । १००

मेरे आभिजात्य (उच्च कुल), यौवन, रूप, लावण्य, विद्या, शोभा और हमारे पारस्परिक प्रेम का ध्यान करो"। इस प्रकार की बात सुनकर कच ने उस समय उत्तम कुल की कन्या देवयानी से कहा—८६-९२ "हे निर्मल गुणों की खान ! नैतिक स्त्रियों में श्रेष्ठ ! शुद्ध और कोमल शरीरवाली ! सरसता का समुद्र ! कन्यकाओं में श्रेष्ठ ! कामुकों का मन हरनेवाली ! धन्य ! सज्जनता का आधार ! सुमन-कटोरी के समान स्तन वाली ! सुन्दर तप करने वाली ! बन्धूक पुष्प के समान अधरवाली ! मन्थर लोचनवाली ! चन्द्र के समान मुखवाली ! हे कन्दुक समान स्तनवाली ! तुमने जो सोचा है वह वस्तुस्थिति से बहुत भिन्न है। सो मैं बतलादूँगा। तुम से विवाह करना, ठीक न होगा, तुम तो मेरे लिए गुरुपुत्री हो, न ?" (तब देवयानी ने कहा कि) विवाह करने में कोई दोष नहीं। तब कच ने कहा, "इसकी बात तक न करो, मैं नहीं करूँगा" तब देवयानी ने कहा, "जब पहले असुरों ने तुम्हें दो तीन बार मार डाला था तब तो मैंने ही तुम्हें जीवित करा दिया था। ९३-९९ ऐसी स्थिति में

दुष्टतयल्ला चॊल्वनॊट्टुमे केट्टालुं नी
मट्टोलुंमॊऴियाळे धर्म्मंत्तॆ निरूपिक्क ! । १०१
ऒन्नॆ नीयुण्टाक्कुवान् कारणमॆङ्किलिप्पो-
ऴॆन्नुटॆ मातावॆन्नु वन्नीटुमतुकॊण्टुम् । १०२
पिन्नॆ ञान् निन्टॆ तातन् तन्नुटॆ जठरत्तिल्
निन्नल्लो पिऱन्नतुमॆन्नतु निरूपिच्चाल् १०३
ऎन्नुटॆ भगिनियाय् वन्नीटुं मनोरम्ये ! ।
ऒन्नुकॊण्टुमेयरुतिन्नु नी पऱञ्ञतु १०४
नन्नायिट्टनुग्रहिच्चीटुकॆन्नते वेण्टु ।
निन्नॆक्काण्मतिन्नु ञान् वैकात वन्नीटुवन् १०५
नामिरुवरुं कूटि कीडिच्चु वसिच्चतो
नामिरुवरुमुळ्ळकालत्तु मऱक्कुमो । १०६
खेदवुमटक्कि नी यात्रयुमयय्क्कणं
मोदेन पिताविनॆ शुश्रूषिच्चिरिक्कॆटो । १०७
ऎन्नितु बृहस्पति नन्दनन् पऱञ्ञप्पोळ्
कण्णुनीर्तूकिनिन्नु देवयानियुं चॊन्नाळ् । १०८
एऱियोरनुरागत्तोटु वन्नपेक्षिच्च-
नारितन्नभिमतं नल्कातपुरुषन्मार् १०९

अगर तुम मेरा निर्मूल त्याग करोगे तो मैं कैसे सह सकूँगी ? इसलिए दुष्टता मत दिखलाओ"। कच ने कहा "यह दुष्टता नहीं है। मेरा कहना ज़रा सुनलो ! हे मीठी बात कहनेवाली ! धर्म का भी ध्यान करो। अगर तुम मेरे जीने का कारण हो तो जान लो कि तुम मेरी माता हो गयीं। अगर तुम इस पर विचार करोगी कि तुम्हारे पिता के पेट से मेरा जन्म हुआ तो, मनोरमे ! तुम मेरी बहन हो जाती हो। इसलिए जो विवाह की बात तुमने कही वह किसी भी प्रकार संभव नहीं हो सकती है। मुझ पर अनुग्रह करो, यही अब रह गया है। तुम्हें देखने मैं जल्दी आजाऊँगा, हम दोनों जो खेलते हुए इतने दिनों तक सुख से रहे वह, जब तक हम दोनों जीवित रहेंगे, नहीं भुलाया जा सकता। १००-१०६ इसलिए खेद न करके मुझे विदा दो और प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ पिता की परिचर्या (सेवा) करती रहो"। जब बृहस्पति के पुत्र ने इस प्रकार कहा तब आँसू गिराती हुई देवयानी ने कहा, "सुना जाता है कि जो पुरुष स्त्री की बड़े अनुराग के साथ की गयी प्रार्थना को ठुकरा देते हैं वे घोर

घोरमां नरकत्तिल् वीऴुवोरॆन्नु केऴ्पू ।
सारनाकिय निन्नोटॆन्तिनु पऱयुन्नु ११०
पारातॆ वॆटिञ्ञु नी दूरवे पोयीटुकिल्
पारितिलिरुन्नतु पोरुमॆन्नते वेण्टु । १११
पारमायुळ्ळोरनुरागवात्सल्यादिकळ्
पारमात्थ्यंवुमऱिञ्ञल्लो नीयिरिक्कुन्नु । ११२
आरवार्मुल पुणर्न्नीटुवान् निनक्कक-
तारिलिल्लभिरुचियॆन्नु वन्नीटुन्नाकिल् ११३
आरूढतापमॆल्लामारोटु पऱवू ञान्
चेरुवन् परलोकत्तिल्ल संशयमेतुम् । ११४
चारुतकलर्न्न नी धीरत कळञ्ञालुं
चारॆ वन्नालुमतिदूरे निल्लाय्क सखे ! ११५
चेरातॊरवस्थ ञान् चॊल्लुकयिल्लयल्लो
चेराय्वानवकाशमॆन्ततु निनक्किप्पोळ् । ११६
सारसं विरियुन्न नेरत्तॆ पार्त्तु
पारातॆ मधुपानं चॆय्तीटुं मधुपन्मार् । ११७
वैरस्यं कलर्न्नॊवं पारुष्य वाक्कु केट्टु
सारस्यं पारमुळ्ळ गीष्पतिसुतन् चॊन्नान् । ११८

नरक में गिर जाते हैं। तुम सारवान् हो, तुम से और क्या कहूँ ? तुम अगर जल्दी दूर चले जाओगे तो मुझे इस पृथिवी में और नहीं रहना है, बस इतना ही है। मेरा असीम अनुराग, वात्सल्य आदि का परमार्थ, तुम जानते ही हो। अगर मेरे सुन्दर स्तनों का आलिंगन करने की तुम्हारी कोई इच्छा ही न होगी तो मैं अपना चढ़ा हुआ दुःख किस से जाकर कहूँगी ? मैं परलोक में फिर तुम से मिलूँगी, इसमें कोई सन्देह नहीं। १०७-११४ अपने इस चारुतावाले धैर्य को त्याग दो, और मेरे पास आजाओ, हे सखे ! इतना दूर तो न खड़े रहो। मैं कोई अनुचित स्थिति न प्रस्तुत करूँगी। मुझसे न मिलने का तुम्हारा क्या अधिकार है ? भ्रमर सरोज के खिलने का समय देखते रहते हैं और खिलने पर झट से मधुपान कर लेते हैं"। विरस (अरुचिपूर्ण) इन खरी-खरी बातों को सुनकर अत्यन्त सहृदय बृहस्पति के पुत्र ने कहा, "हे शुक्राचार्य की पुत्रि ! बाले ! आलस्य पैदा न होने दो। तुम वैदुष्यवाली हो, अपने मन का कालुष्य त्याग करो। स्त्रियों को यह न चाहिए कि वे पुरुषों की अधिक कामिनी (कामना करने वाली) हो जायँ। प्रेम ही के द्वारा सब का नाश हुआ है।

आलस्यमुण्टाकेण्ट वैदुष्यं कलर्न्न नी
कालुष्यं कळयेणं काव्यनन्दने बाले ! । ११९
कामिच्चीटरुतेऱ्रॆ नारिमार् पुरुषऱ्रॆ
प्रेमत्तालल्लो नाशमॆल्लाक्कुं वन्नुकूटि । १२०
धर्म्मार्थकाममोक्षं नालिनु विरोधङ्ङळ्
तम्मिल् वारातकण्टु साधिच्चुकॊळ्ळकेयावू । १२१
धर्म्मत्तॆयुपेक्षिच्चॊरर्थकामङ्ङळ् वेण्टा,
धर्म्मत्तॆक्कॊतिच्चर्थकामवुं कळयेण्टा । १२२
धर्म्मकामङ्ङळ् वॆटिञ्ञर्थवुमुण्टाक्केण्टा,
धर्म्मार्थङ्ङळॆ वॆटिञ्ञुळ्ळ कामवु वेण्टा । १२३
तङ्ङळिल् विरुद्धमायिरिक्कुमिव मून्नुं
मंगलशीले निन्नोटॆन्तिनु पऱयुन्नु । १२४
धर्म्मत्तॆ साधिक्कुम्पोळर्थकामङ्ङळुं पोम्,
धर्म्मकामङ्ङळुं पोमर्थत्तॆ साधिक्कुम्पोळ् । १२५
कामत्तॆ साधिक्कुम्पोळर्थ धर्म्मङ्ङळुं पोम्,
कामिनियाय नीयुमितिनु पुऱप्पॆट्टाल् । १२६
ईश्वरनेयुं गुरुवाकुं निन्नच्छनेयुं
शाश्वतमाय धर्म्मतन्नॆयुं पेटिक्कणम् । १२७
ञानितु चॊय्कयिल्ल पोयालुमकत्तिप्पोळ्
ज्ञानमो निन्नोळमिन्नावर्क्कुमेयिल्लयल्लो । १२८

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों में जैसे विरोध न हो वैसे ही काम करना ठीक होगा । ११५-१२१ धर्म की उपेक्षा करके अर्थ और काम का सेवन न हो, और धर्म की लालसा में अर्थ और काम न खो जायँ । धर्म और काम को त्याग कर अर्थ न पैदा करना चाहिए । तथा धर्म और अर्थ से अलग होकर काम का सेवन न करो । ये तीनों आपस में विरुद्ध हैं, हे मंगलशीले ! तुमसे यह सब कहने की क्या ज़रूरत है ? धर्म को साधने में अर्थ और काम नष्ट हो जाते हैं, धर्म और काम अर्थ के साधन में नष्ट हो जाते हैं। अगर कामिनी होकर तुम काम के पीछे दौड़ोगी तो उसको साधने में अर्थ और धर्म नष्ट हो जायेंगे। ईश्वर से, अपने पिता से जो तुम्हारे गुरु हैं, और शाश्वत धर्म से डरना चाहिए । आज ज्ञान में तुम्हारे तुल्य कोई नहीं है, इसलिए मैं कुछ नहीं कहूँगा । अब तुम अन्दर चली जाओ" ।१२२-१२८ जब विद्वान् कच ने इस प्रकार उसकी बात का खण्डन करके कहा, तब देवयानी,

पण्डितनाय कचन् खण्डिच्चु पऱञ्ञप्पोळ्
कुण्डत्तिलाज्यं वीण कणक्कें देवयानि १२९
कुण्डलमण्डितमां गण्डमण्डललस-
त्तुण्डवुं प्रचण्डमामुन्नतस्तनङ्ङळुं १३०
कण्णुनीर्कॊण्टु ननच्चङ्गवुं वियर्त्तवळ्
कण्णुकळ् चुवप्पिच्चु देहवुं विऱप्पिच्चु १३१
चण्डदीधियुटॆ मण्डलं पॊङ्ङुं पोलें
चण्डिक महिषनॆक्कण्टतुनेरंपोलें १३२
तन्नुटॆ मनोरथं वाराञ्ञु कोपं पूण्टु
निन्नुटॆ विद्ययॆल्लां निष्फलमाकयॆन्ऩाळ् । १३३
मन्मथातुरयाय निन्नुटॆ शापमुण्टो
धर्म्मतल्परनायोरिनिक्किङ्ङेट्टीटुन्नु ? । १३४
ॲन्नॆ नी शपिच्चतु केट्टु ञान् पोकयिल्ल
निन्नॆयुमिन्नु शपिच्चीटुवनॆन्नु कचन् । १३५
निन्नुटॆ मनोरथमिन्नुतॊट्टॊरुनाळुं
वन्नुकूटाय्कयतुमॆङ्ङनॆयॆन्नु केळ् नी । १३६
आरणरायुळ्ळोरुं मामुनिमारुं निन्नॆ-
यारुमे कैक्कॊळ्ळाय्कयॆन्नुर चॆय्तु कचन् । १३७
विण्णवर्पुरं पुक्कु विद्ययुं पठिप्पिच्चान्
वन्नितानन्दं तन्टॆ तातनुं देवकळ्क्कुम् । १३८

कुण्डलों से भूषित अपने कपोलों के पास विराजमान नासिका को और प्रचण्ड तथा उन्नत स्तनों को आंसुओं से भिगोती हुई, पसीने से तर होकर, आंखें लाल करती हुई, उदीयमान सूर्यमण्डल के समान काँपती हुई, महिषासुर को देखती हुई चण्डिका के समान, अपने मनोरथ की पूर्ति न होने के कारण जिसमें घी डाला गया हो ऐसे अग्निकुण्ड के समान क्रुद्ध होकर बोली, "तुम्हारी सारी विद्या व्यर्थ हो जाय" । १२९-१३३ तब कच ने कहा, 'कामदेव के वश में आकर दिया हुआ तुम्हारा यह शाप मुझ धर्मतत्पर पर थोड़े ही लगेगा ? तुम्हारा शाप सुनकर मैं न चला जाऊँगा, तुमको भी मैं आज प्रतिशाप दूँगा । तुम्हारा मनोरथ कभी न पूरा होगा । क्यों ? यह भी सुन लो । न ब्राह्मणों में और न मुनियों में कोई तुम से विवाह करे" । यह कह कर कच देवों की पुरी चला गया और उसने अपनी विद्या औरों को पढ़ा दी । उसके पिता और देवगण बड़े प्रसन्न हुए ।१३४-१३८

शर्म्मिष्ठयुटॆ दास्यम्

विण्णवरतुकालं पोरिनु कोप्पिट्टॊक्कॆ-
च्चॆन्नितु वृषपर्व्वातन्नुटॆ राज्यत्तिङ्कल् । १
कोट्टतन्नुटॆ पुऱत्तट्टुत्तु वलियॊरु
काट्टिलुच्चॆन्निरुन्नप्पोळ्क्काणगयितॆल्लावक्कुं २
कण्टालॆत्रयुं नल्ल कन्यकाजनमॊक्क-
त्तण्टलर्पॊय्कतन्निल्क्कळिच्चीटुन्नतॆल्लां । ३
कण्डिवार्कुळलिकळप्सरस्त्रीकळॆक्काळ्
कण्टाल् नल्लवरिङ्ङुमुण्टो मटॆन्नु तोन्नी । ४
वस्त्रङ्ङळळिच्चतिन् तीरत्तु वच्चुंकळ-
ञ्ञत्यन्तं मतिमऱन्नङ्ङनॆ कुळिक्कुन्पोळ् ५
चूतसायकमेट्टु वासवनतु कण्टु
चूतुवार्मुलमारिल् कौतुकमुण्टाय्वन्नु । ६
काणणमिवरुटॆ मन्मथगृहमॆल्लां
नाणिच्चु पोकुमल्लो नामङ्ङु चॆल्लुन्नेरं ७
वायुवाय् चमञ्ञवन् पॊय्कतन् करॆच्चॆन्नु
मायया पुटवकळ् वारियङ्ङोट्टिङ्ङोट्टु ८

शर्मिष्ठा का दास्य

उन दिनों देवगण युद्ध के लिए तैय्यारी करके वृषपर्वा[1] के राज्य में पहुँचा। वहाँ दुर्ग के निकट के एक बड़े वन में जब पहुँचा तब सब को, एक बड़े कमलसरोवर में खेलता हुआ, तथा देखने में बहुत अच्छा एक कन्याओं का समूह दिखला दिया। ऐसा प्रतीत हुआ कि अप्सराओं से भी देखने में अच्छी महिलाएँ यहाँ इनके अतिरिक्त क्या हो सकती है? जब वे कपड़े उतारकर, तट पर रखकर, तथा दुनिया को भूलकर स्नान करने लगीं तव कन्याओं को देखकर कामदेव के बाण से पीड़ित इन्द्र को बड़ा कौतूहल हुआ। १-६ (इन्द्र ने सोचा मैं) इनके मन्मथगृह देखना चाहता हूँ, यदि निकट जाऊँ तो सब लज्जित हो जायेंगी, इसलिये वायु बनकर सरोवर के पास जाकर अपनी माया से वस्त्रों को इधर उधर बिखराकर धूलिधूसर कर दिया। यह देखकर

१ दानवों का एक राजा और शर्मिष्ठा का पिता।

धूळिप्पिच्चतु कण्टु वेगत्तिल् कन्यकमा-
रोळत्तोटॊरुमिच्चु वेगत्तिल् करेऱिनार् । ९
आरुमिल्लटुत्तॆन्नु कल्पिच्चुतन्नॆयवर्
दूरप्पोयॊरु वस्त्रमोटिच्चॆन्नॆटुत्तप्पोळ् १०
कण्टिवार्कुळलारॆक्कण्टु कौतुकंपूण्टो-
रण्टर्नायकन्तानुमिण्टल्पूण्टितु तुलोम् । ११
पुण्डरीकेषु परवशमानसनाया-
खण्डलन्तानुं परिखण्डितधैर्यत्तोटु- १२
मिन्नल्ला युद्धत्तिनु पोक नामॆन्नु पऱ-
ञ्ञिन्द्रादिदेवगणमात्ममन्दिरं पुक्कार् । १३
धूळियॆप्पिन्नॆयॆङ्ङु काणाञ्ञनेरमवर्
कूळिकळ् काळियुमाय्पोकयॆन्नोर्त्तु भीत्या १४
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळॊरु वस्त्रङ्ङळॆटुत्तुकॊ-
ण्टङ्ङोट्टिङ्ङोट्टु नोक्कियुटुत्तीटुन्ननेरं । १५
सुन्दरि देवयानितन्नुटॆ पुटवयु-
मन्नेरमऱियातॆ संभ्रमं कॊण्टु बलाल् १६
चॆन्नॆटुत्तुटुत्तितु शर्म्मिष्ठयतुकण्टु
निन्नॊरु देवयानि चॊल्लिलनाळतुनेरम् । १७
ऒन्नुटॆ वस्त्रमल्लो नीयुटुत्ततुमॆटो
निन्नुटॆ वस्त्रमिता मट्टेतु तन्नीटणं । १८

कन्याएँ घबड़ाकर झट से सब एक साथ तट पर निकल आयीं। यह समझकर कि निकट में कोई नहीं है जब वे दूर उड़े हुए वस्त्रों को बटोरने लगीं तब कन्याओं को देखकर कौतुक से भरा देवों का नायक इन्द्र बहुत पीड़ित हुआ। पुण्डरीकों को देख मोहित होकर आखण्डल (इन्द्र) अपना धैर्य खो बैठा और बोला—"हम लोग आज युद्ध के लिए न जायँ"। यह कहकर इन्द्र आदि अपने घर चले गये। ७-१३ जब धूल उड़ना बन्द हो गयी थी तब उन कन्याओं ने अपने साथी और परिचारकों के साथ चले जाना निश्चित करके अपने-अपने वस्त्रों को लेकर डर के मारे इधर-उधर देखती हुईं पहनना प्रारम्भ किया। शर्मिष्ठा ने घबराहट के कारण बिना जाने सुन्दरी देवयानी के वस्त्र लेकर झट से पहन लिये। उसे देखती हुई देवयानी ने उस समय कहा—"जो वस्त्र तुम ने पहन लिये वे मेरे हैं। तुम्हारा यह है, इन्हें लेलो और दूसरे वापस करो"। जब शर्मिष्ठा

ऒन्नतु केट्टीलॆन्नु भाविच्चु शर्म्मिष्ठयुं
तन्नुटॆ सखिकळुमाय् नटन्नीटुन्नेरं १९
पिन्नालॆ देवयानि चॆन्नाळितरुतल्लो
तन्नीटुकॆन्टॆ वस्त्रं मट्तु तरामल्लो । २०
ञङ्ङळ्क्कु निङ्ङळुटॆ पुटवयुटुक्करु-
तिङ्ङु तन्नीटवेणमॆन्नतु केट्टनेरं २१
शर्म्मिष्ठ कोपत्तोटे चॊल्लनाळटङ्ङु नी
निन्महिमकळॆल्लां ञानरिञ्ञिरिक्कुन्नु । २२
ऎन्नुटॆ तातन्तन्टॆ कारुण्यमुण्टाकया-
लिन्नेटं ञॆळियुन्नु नीयॆन्नतरिञ्ञालुम् । २३
नेरिय पुटवयुं कुरियुं कोप्पुमॆल्ला-
मेरॆ नी तिळय्किलो पोकेणं मरयत्तु । २४
वेणमॆन्नाकिलतुमुटुत्तु पोन्नीटु नी
ञानिप्पोळितु विटुर्त्तीटुकयिल्लयॆन्नुं । २५
इत्तरमधिक्षेपिच्चॆत्रयुं भर्त्सिक्कया-
लुळ्ळत्तळिरिरुवर्क्कुं चीरियोरनन्तरं २६
दुष्टतपेरिय शर्म्मिष्ठयुं सखिमारुं
पॆट्टन्नङ्ङॊरु पॊट्टक्किणट्टिल् तळ्ळियिट्टार् । २७
पुत्रियॆक्काणाञ्ञतिदुःखंपूण्टॊरु शुक्र-
नत्तल्पूण्टुरचॆय्तु धात्रियोटतुनेरम् । २८

अपनी सखियों के साथ चलने लगी, मानो उसने कुछ सुना ही न हो, तब देवयानी उसके पीछे-पीछे गयी और बोली—"यह ठीक नहीं, मेरा वस्त्र दे दो, दूसरा मैं वापस करूँगी। हम लोगों को तुम लोगों का वस्त्र पहनना नहीं चाहिए। इसलिए वापस करो"। यह सुनकर १४-२१ शर्मिष्ठा क्रुद्ध होकर बोली—"तुम दब जाओ। मैं तुम्हारा सब बड़प्पन जानती हूँ। मेरे पिता के कारुण्य (दया) के कारण ही तो तुम आज इतना घमंड दिखला रही हो, यह जान लो। अगर तुम अधिक जलोगी तो तुम्हारी एक महीन साड़ी, तिलक और सब सजावट नष्ट कर दूँगी। अगर भला चाहती हो तो उसी को पहन कर चली आओ। मैं तो अब इस वस्त्र को नहीं उतारूँगी"। जब इस प्रकार की अपमानजनक फटकार के कारण दोनों के हृदय कलुषित हो गये तब अतिदुष्टा शर्मिष्ठा और उसकी सखियों ने उसे झट से एक अन्धे कुएँ में ढकेल दिया। २२-२७

कण्टील कुळिप्पानाय् पोयोरु मकळेआन्
कण्ट कावुकळ्तोरुं नी चेन्नु तिरयणम् । २९
अन्नेरमवळ् नीळेत्तिरञ्ञुतुटङ्ङिनाळ् ।
अन्नल्लो ययातियुं चेन्निनु नायाट्टिनाय् ३०
भूपति दाहंकोण्टु पानीयं तिरयुम्पोळ्
कूपं निर्ज्जलं चारत्ताम्मारु कण्टानतिल् ३१
काणायि मिन्नल्पोले कन्यकारत्नंतन्ने ।
क्षोणीपालकन्तानुमेट्टुत्तु करेट्टिनान् । ३२
कोपवुमसूययुं प्रीतियुं विनयवुं
भूपतितन्निलनुरागवुं विरयलुं ३३
प्रेमवुं मन्दाक्षवुं बाष्पवुं प्रलापवुं
कामतापवुं कमनीयवेषवुमुळ्ळल् ३४
पेटियुमभिमानहानियुं दुःखङ्ङळुं
कूटिनिन्नीटुन्नोरु कन्यकतन्नेक्कण्टु ३५
कूटलर्कुलकालनाय मन्नवन् चोन्नान् ।
पाटलाधरिकुलमौलिमालिके बाले । ३६
निर्म्मले ! निरुपमशीले ! चोल्लेन्नोटिप्पोळ् ।
निन्मनोदुःखत्तिन्टे मूलवुं पिन्ने निन्टे ३७
गोत्रवुं पेरुं निन्टे तातनारेन्नुं पर-
मार्त्थं चोल्लम्मयाराकुन्नतेन्नतुमेल्लां ३८

पुत्री को न देखकर दुःखित शुक्र ने उसकी धात्री (धाय) से कहा—"मेरी पुत्री नहाने गयी थी पर अभी तक दिखाई नहीं दे रही है। तुम जाकर उसे झाड़ी-झाड़ी में ढूँढ़ो"। तदनुसार धाय उसे सब जगह ढूँढ़ने लगी। उन दिनों राजा ययाति शिकार खेलने निकला था। जब प्यास के कारण जल ढूढ़ रहा था तब एक निर्जल कुआँ दिखाई दिया, और उसमें बिजली के समान एक कन्यारत्न दिखाई पड़ा। राजा ने उसको पकड़कर कुएँ से बाहर निकाला। कोप, असूया, प्रीति, विनय, भूपति के प्रति अनुराग, कम्पन, प्रेम, लज्जा, आँसू, प्रलाप, काम का ताप, कमनीयवेष, आन्तरिक भय, अभिमान की हानि तथा दुःख आदि भावों से युक्त उस कन्या को देखकर, २८-३५ शत्रुओं के नाशक राजा ययाति ने कहा—"हे लाल अधरवालियों की मौलिमालिके (शिरोमणि)! बाले! निर्मले! निरुपमशीलवाली! अब मुझे यह बतलाओ कि तुम्हारे दुःख का क्या

कूपत्तिल् वीणुपोवानेन्तवकाशमेन्तुं ।
भूपति चोदिच्चप्पोळ् कन्यक तानु चोन्नाळ् । ३९
असुराचार्यनाय शुक्रन्टे मकळ् ञानो
मधुराकृते देवयानियेन्नल्लो नामम् । ४०
कूपत्तिल्वीळ्वानुळ्ळ कारणमतुं चोन्नाळ् ।
तापसकुलवरबालिकयतुनेरम् । ४१
पुञ्चिरिकलर्न्नवळ् कुन्पिट्टुनिन्नुचोन्नाळ्
ॲन्चेविकळुमिप्पोळोन्निनुण्टुळरुन्नु । ४२
कूपत्तिल् पतितयाय् तापत्तिल् मुळ्कुमेन्नापत्तु केट्टुत्तोरु मानुषनाय भवान् ४३
आरेन्नतरिकयिलाग्रहमुण्टु पारं ।
नेरे चोल्लुकवेणमेन्नतु केट्टु नृपन् ४४
मन्दहासवुं चेय्तु कन्यकारत्नमाय
सुन्दरीतन्नोटनुनन्दिच्चु चोल्लीटिनान् । ४५
अहितकुलकालनाकिय नरवीरन्
नहुषन्तन्टे मकनाकिय ययाति ञान् । ४६
अतुकेट्टोरु दीर्घश्वासवुंपूण्टु चोन्नाळ्
मतिनेर्मुखियाय देवयानियुमप्पोळ् । ४७

कारण है, तुम्हारा गोत्र और नाम क्या है, परमार्थ में तुम्हारे पिता कौन हैं, और तुम्हारी माता कौन हैं, तथा कुएँ में गिर जाने का क्या कारण है?" राजा के पूँछने पर कन्या ने उत्तर दिया—"असुरों के आचार्य शुक्र की मैं पुत्री हूँ। हे सुन्दर आकृतिवाले ! मेरा नाम देवयानी है"। तापस-कुल की उस बालिका ने कुएँ में गिरने का कारण भी कहा। ३९-४१ वह हाथ जोड़कर मुस्कराती हुई बोली—"मेरे कान अब एक बात के लिए तरस रहे हैं। मेरी यह जानने की बड़ी इच्छा है कि आप कौन मानव हैं, जिन्होंने कुएँ में गिरी हुई और दुःखों में डूबी हुई मेरे दुःख को दूर किया ? जल्दी बतलाइए"। यह सुनकर भूपति मन्द हास करके उस सुन्दरी कन्यारत्न के प्रति सहानुभूति दिखाते हुए बोले—"मैं शत्रुओं के अन्तक, नरवीर नहुष का पुत्र ययाति हूँ"। यह सुनकर दीर्घ निश्वास लेती हुई चन्द्रमुखी देवयानी ने कहा—"आपने जो मेरा हाथ पकड़ा था[1] उसमें कोई

[1] कुएँ से उद्धारने के समय।

कुट्मल्लेतुमेन्टॆ कै पिटिच्चतिनिनि
मट्टॊरु पुरुषनॆ कॊळ्ळरुतॆन्नॆयुळ्ळु । ४८
विधिच्चवण्णंतन्नॆ वेट्टुकॊळ्ळुकवेण्टु
विधिच्चतॊळिञ्ञुण्टो वरुन्नु निरूपिच्चाल् । ४९
ऎन्नतु केट्टु नृपन् कन्यकयोटु चॊन्नान्
मन्नवर्क्कुचितमल्लिन्नु नी चॊन्नतॆटो । ५०
मानवाद्यष्टादशस्मृतिकळॆल्लाट्टिलु-
मानुलोम्यमे विधियुळ्ळतु वेदत्तिलुं । ५१
प्रातिलोम्यत्तिनेऱ्ऱप्पापमुण्टॆन्नु नूनं
पातिव्रत्यत्तिल् निष्ठ पारमुण्टॆन्नाकिलुम् । ५२
अन्योन्यमनुरागंकॊण्टतु चॆय्तीटिलुं
निन्नुटॆ जनकनॆप्पेटिक्कवेणमल्लो । ५३
पावकायुधकाकोळादिकळॆल्लाट्टिलु-
मावोळं पेटिक्केणं विप्ररॆ मरोहरे ! ५४
इच्चॊन्न वस्तुक्कळालॊरुत्तन् मुटिञ्ञीटुं
निश्चयं मऱ्ऱयवर् वंशमे मुटिच्चीटुम् । ५५
नीयिनियकत्तूट्टु पोयालुं मुनिकुल-
नायकनाय शुक्रन्तानिप्पोळ् वरुंमुन्पे । ५६
ऎन्नॊल्लामुरचॆय्तु मन्नवन्तानुं पोयान्
कन्यक दुःखिच्चॊरु वृक्षत्तिन्कीऴुं निन्नाळ् ।५७

दोष नहीं है । इतना ही है कि अब मैं और किसी पुरुष को स्वीकार नहीं कर सकती । विधि के अनुसार अब विवाह कर लेना, यही शेष रह गया है । विचार किया जाय तो विधि ने जो चाहा वही अन्त में होगा" । ४२-४९ यह सुनकर राजा ने उस कन्या से कहा—"जो बात तुमने कही वह क्षत्रियों के लिए अनुचित है । मनुस्मृति आदि अठारह स्मृतियों में अनुलोम विवाह का ही विधान है । वेदों में भी यही स्थिति है । पातिव्रत्य में निष्ठा होने पर भी प्रतिलोम विवाह में निःसन्देह बड़ा पाप है । माना कि यह विवाह परस्पर अनुराग के कारण होगा, फिर भी तुम्हारे पिता से तो हमको डरना चाहिए । हे मनोहरे ! पावकायुध, काकोळ विष आदियों से भी अधिक ब्राह्मणों से डरना चाहिए । क्योंकि ऊपर कही वस्तुएँ एक ही व्यक्ति का नाश करती हैं, पर ब्राह्मण तो निःसन्देह सारे वंश का नाश कर देते हैं । मुनिकुल के नायक शुक्र के आने से पहले तुम कृपया अन्दर चली जाओ" । ५०-५६

मुन्नमे नीळे नटन्नन्वेषिच्चवळुं पो-
न्नन्नेरं देवयानितन्नेयुं कण्टाळल्लो । ५८
अन्तुण्णी मकळे नीयिङ्ङने निल्कुन्नतु ?
अन्तियुमायि तातन् काणाञ्ञु खेदिक्कुन्नु । ५९
पोरे नीयेन्नु केट्टु देवयानियुं चोन्नाळ् ।
पोरिकयिल्ल दनुजाधिपन् पुरत्तिङ्कल् ञान् । ६०
शर्म्मिष्ठ चेय्तोरु दुष्कर्म्मवुमरियिच्चाळ्
धर्म्मिष्ठयायोरूर्ज्जस्वतीतन्नुटे मकळ् । ६१
अक्कथयोक्कच्चेन्नु शुक्रनोटवळ् चोन्नाळ्
दुःखिच्चु शुक्रन्तानुमप्पोळे पोन्नुवन्नान् । ६२
अन्तय्यो निनक्कु निर्ब्बन्धमुण्टायतोरु-
बन्धमेन्तिवट्टिनु बन्धुरकळेबरे ! ६३
बन्धुक्कळोटु वैरं चिन्तिच्चीटरुतल्लो
सन्ततं वणक्कं नल्लन्धत्वं कळञ्ञालुम् । ६४
पैन्तेनिन्मोळियाळे पोरिक वैकिक्केण्टा ।
पन्तेलुंमुलयाळुमुत्तरमुरचेय्ताळ् । ६५
अन्तिनु तातनेन्नोटित्तरं परयुन्नु
बन्धुशत्रूदासीनभेदमोट्टरिवन् ञान् ६६

यह सब कहकर राजा चले गये और वह कन्या एक वृक्ष के नीचे खड़ी रही। (धाय) जो पहले ही उसे ढूँढ़ती चलती थी उसने अब देवयानी को देखा। (और कहा—) "बेटी ! तुम इस तरह यहाँ क्यों खड़ी हो ? सांझ हो गयी है, तुम्हें न देखकर तुम्हारे पिता दुःखित हैं, चली आओ"। यह सुनकर देवयानी ने कहा—"मैं दानवों के राजा के नगर में नहीं आऊँगी, तत्पश्चात् शर्मिष्ठा ने जो दुष्कर्म किया था उसको धर्मिष्ठा ऊर्जस्वती[1] की पुत्री देवयानी ने बतलाया। उसने (धाय ने) जाकर सारा किस्सा शुक्र को सुनाया। तब दुखित होकर शुक्र तत्काल ही वहाँ पर चले आये। और कहा—"यह तुम क्या आग्रह कर रही हो ? हे कोमल शरीरवाली ! इसका कारण तो बतलाओ। ५७-६३ बन्धुओं के साथ वैर तो सोचना ही न चाहिए, हर अवस्था में विनय ही ठीक है, अपना अन्धत्व त्याग करो। मधुमय बात करनेवाली ! साथ चलो, अब विलम्ब मत करो"। तब कन्दुकसमानस्तनवाली देवयानी ने उत्तर दिया—"पिता जी ! आप

१ प्रियव्रत और बर्हिष्मती की पुत्री और शुक्र की पत्नी।

महिमयिल्ला, कुलमाका, वृत्तियुं पोरा
सहिया शीलवुमेन्नुळ्ळिलुळ्ळवरुटे ६७
गृहत्तिलिरिक्कयिल् मरिक्कतन्ने नल्लू ।
सहिच्चीटुमो निन्दावचनादिकळेल्लां । ६८
पापिकळोटुचेर्न्नु वसिक्कुन्नवर्कळ्क्कुं
पापमेयुण्टाय्वरू केवलमरिञ्ञालुम् ६९
शुक्रनुं देवयानियाकिय पुत्रितानुं
सूक्तिकळ् परञ्ञतु विस्तरिच्चुरचेय्किल् ७०
एत्रयुं पेरुप्पमुण्टक्कथयिरिक्कट्टे
युक्तिकळ् मुट्टि शुक्रन्तनिक्कु नीतिकोण्टुम् । ७१
एन्मकळोटुकूटे ञानेन्नु कलिपच्चुटन्
अम्मुनि वृषपर्व्वातन्नोटु यात्रचोल्वान् ७२
चेन्नप्पोळवस्थकळसुराधिपनरि-
ञ्ञेन्नाल् वेण्टुन्नतेन्तेन्नप्पोळे काल्कल्वीणु । ७३
एन्नुटे मकळ्कूटातिविटेयिरिक्कयि-
ल्लिन्नवळ् वरुन्नाकिल् मटोन्नुं वेण्टतिल्ल । ७४
अन्नेरमसुरेन्द्रन् तान्तन्ने देवयानि
तन्नुटे काल्कल्वीणान् कात्तुकोळ्केन्नुतन्ने ७५

मुझसे इस प्रकार क्यों कह रहे हैं ? बन्धु, शत्रु, उदासीन, इन तीनों में भेद मैं जानती हूँ । जिसकी कोई महिमा न हो, जिसका कुल ठीक न हो, जिसका बर्ताव अच्छा न हो, तथा जिसका शील सहा न जा सकता हो, ऐसे के घर में रहने से मर जाना ही ठीक है । निन्दा के वचन कैसे सहे जा सकते हैं ? जो पापियों के साथ रहते हैं जान लीजिए उनको भी पाप ही प्राप्त होता है" । ६४-६९ इस प्रकार शुक्र और उसकी पुत्री देवयानी ने आपस में जो बातें कीं वे अगर विस्तार से कही जायँ, तो किस्सा बहुत बड़ा हो जायगा । अस्तु । शुक्र को और कोई नैतिक युक्ति न सूझी । "मैं अपनी पुत्री का साथ न छोड़ूँगा" ऐसा निश्चयकरके मुनि जी वृषपर्वा से विदा लेने गये । तब असुराधिप सारी स्थिति समझ-कर गुरु के पैरों पड़े और बोले, "अब क्या करना चाहिए ?" शुक्र ने उत्तर दिया कि अपनी पुत्री के बिना मैं यहाँ नहीं रहूँगा । वह मेरे साथ आजाय, मुझे और कुछ नहीं चाहिए । तब असुरेन्द्र स्वयं देवयानी के पैरों पड़े और बोले, "मेरी रक्षा कीजिए" । ७०-७५ तब उसने कहा—

ऍङ्किलो निन्टॆ मकळाकिय शर्म्मिष्ठयुं
मंगलांगिकळाकुमायिरं दासिकळुं ७६
इन्नुतॊट्टिनिमेलिलॆन्नुटॆ दासिकळा-
यॆन्नोटुकूटॆत्तन्नॆ ञान् चॊल्लुन्नतुं केट्टु ७७
वाळुकिल् ञानो कूटिप्पोरामॆन्नरिञ्ञालुम् ।
दोषङ्ङळरियातॆ चॆय्तव सहिच्चीटा- ७८
मप्पॊळॆ वृषपर्व्वावयच्चान् मकळॆयु-
मप्पुरिकुळ्ळलाळुमप्पोळॆ पोन्नुवन्नाळ् । ६९
दासिकळायिरवुं ञानुं नी चॊल्लुंवण्णं
दासिकळॆन्नु काल्क्कल् वीणितुशर्म्मिष्ठयुम् । ८०
ब्रह्मचर्यत्तोटिरुन्नीटुकायिरत्ताण्टु
निर्म्मर्यादं चॆय्ततिन् प्रायश्चित्तार्थमॆन्नाळ् । ८१
शुक्रनुं पुत्रितानुं दैत्यराजनुं पुन-
रुळ्क्कान्पु तॆळिञ्ञकंपुक्कितु राज्यं तन्निल् । ८२

देवयानीपरिणयम्

अङ्ङनॆ चिलकालं कळिञ्ञोरनन्तर-
मंगनाशिरोमणियाकिय देवयानि १

"जान लीजिए कि अगर आपकी पुत्री शर्मिष्ठा और उसकी एक हज़ार सुन्दरी दासियाँ आज से मेरी दासियाँ बनकर मेरे साथ रहकर मेरा कहना मानती रहेंगी तो मैं साथ चलूँगी। बिना दोष समझे जो किया गया उसको मैं क्षमा कर दूँगी"। वृषपर्वा ने तत्काल ही अपनी पुत्री को भेजा। वह भी तत्क्षण ही चली आयी। "मेरी एक हज़ार दासियाँ और मैं तुम्हारे कहे के अनुसार तुम्हारी दासियाँ हैं", यह कहकर शर्मिष्ठा पैरों पड़ी। देवयानी ने कहा, "एक हज़ार वर्ष ब्रह्मचर्य का पालन करती रहो। तुम्हारे मर्यादोल्लंघन का यही प्रायश्चित्त है"। शुक्र, उसकी पुत्री और दैत्यराज सब प्रसन्न हुए और राज्य में अपने-अपने घर चले गये। ७६-८२

देवयानी परिणय

कुछ दिन इस प्रकार बीतने के बाद महिलाओं की शिरोमणि देवयानी शर्मिष्ठा और अपनी एक हज़ार दासियों के साथ विनोद के लिए स्वेच्छानुसार उद्यानों में घूमने लगी। जब वे शहद का मद्य पीती हुईं, उत्साह

शर्म्मिष्ठयोटुं दासीसहस्रत्तोटुं कूटॆ
नर्म्मार्त्थं यथाकामं पोयितारामंतोरुम् । २
माधवमाय मधुपानवुं चॆय्तानन्दि-
च्चादरवोटुमाटिप्पाटि वाणीटुन्नेरं ३
दाहमुळक्कॊण्टु मृगयापरिश्रमत्तोटुं
नाहुषनाय नृपन् काननंपुक्कानन्नु । ४
कण्टितु कळिक्कुन्न कन्यकाजनत्तेयु-
मुण्टतिल् प्रधानियायॊरुत्तियवळुटॆ ५
पादवुं तलोटिक्कॊण्टाभरणादि मणि-
दीधितियोटुकूटॆक्काणायितॊरुत्तियॆ । ६
चोदिच्चान् नृपवरन् निङ्ङळारिरुवरुं ?
मोदत्तोटुरचॆय्तु देवयानियुमप्पोळ् । ७
शुक्रमामुनियुटॆ पुत्रि ञान् देवयानि
चॊल्कॊण्ट दनुजेन्द्रन् वृषपर्व्वाविन् मकळ् । ८
शर्म्मिष्ठयायतिवळॆन्नुटॆ दासियल्लो ।
निर्म्मलाङ्गिकळ् मट्टुळ्ळवरुं दासीवर्ग्गम् । ९
मुट्टुमॆन्नोटुकूटॆप्पोरुमिन्निवरॆल्लां
मट्टारुमुटयवरिल्लॆन्नु धरिच्चालुम् । १०
अतु केट्टवनीशनवळोटुरचॆय्ता-
नतुलगुणमुळ्ळोरिवळॆङ्ङने निन्टॆ ११
दासियाय् चमञ्ञवारॆङ्ङने परकॆटो ।
हासमोटतु केट्टु देवयानियुं चॊन्ना- १२

के साथ नाचती, गाती हुई, आनन्द करती थीं, तब राजा नहुष (ययाति) शिकार के परिश्रम से प्यासे होकर वन में प्रविष्ट हुए। उन्होंने खेलती हुई कन्याओं के समूह को देखा। उनमें एक कन्या प्रधान थी जिसके पैर दबाती हुई और आभूषणों की किरणों से चमकती हुई एक दूसरी कन्या भी दिखाई दी। १-६ नृपवर ययाति ने पूछा—"आप दोनों कौन हैं" ? तब देवयानी ने प्रमोद के साथ उत्तर दिया—"मैं हूँ महामुनि शुक्र की पुत्री देवयानी और यह है प्रसिद्ध दनुजेन्द्र वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा जो मेरी दासी है। और सब ललनायें मेरी दासियाँ हैं। वे सब मेरे साथ चली जायेंगी। और कोई स्वामी यहाँ नहीं है, जान लीजिये।" यह सुनकर राजा ने कहा—"असीम गुणवाली यह कैसे तुम्हारी दासी

ळीश्वरमतमॆल्लामार्क्कुपोलऱियावि-
ताश्चर्यं तोन्नीटुवानॆन्तितिलितुकालम् । १३
केळ्क्कणमल्लो भवानारॆन्नॆतिनिक्किप्पोळ्
भोष्कल्ल राजश्रेष्ठनॆन्नु तोन्नीटुं कण्टाल् । १४
ऒॆङ्किलङ्ङनॆतन्नॆ भूपति ययाति, ञान्
पङ्कजविलोचने नहुषात्मजनल्लो । १५
ऒॆङ्किल् नीयॆन्नॆ वेट्टुकॊळ्ळुक मटियातॆ
सङ्कटमॆल्लां तीरुं संशयमुण्टाकेण्टा । १६
मन्नवनतु केट्टु पिन्नॆयुमुरचॆय्तु ।
कन्यकातिलकमे ! धन्ये ! केळ् मनोरमे ! १७
सिद्धमल्लयो निनक्केतुमे शुक्रन्तन्टॆ-
पुत्रियॆन्नॆनिक्केतुं तोन्नीतिल्लिप्पोळॆटो । १८
पतिता परभार्या भगिनी सगोत्रयुं
विधवाकुलंतन्निलेऱिय नारितानुं १९
सर्व्वसङ्गङ्ङळिलुं निवृत्तिवन्नवळुं
सर्व्वलोकङ्ङळालुं निन्द्ययायुळ्ळवळुं २०
तन्नुटॆ मकन् वेट्ट तन्वियुं स्वतन्त्रयुं
ऒॆन्नुं कॊण्टीटुमाऱिल्लॆन्नल्लो विधियिप्पोळ् । २१

हुई, यह मुझे बतलाओ।" यह सुनकर देवयानी हँसती हुई बोली—७-१२ "ईश्वर का अभिप्राय कौन जान सकता है ? आप को यह आश्चर्य क्यों लगता है ? मुझे तो यह जानने की इच्छा है कि आप कौन हैं ? दिल्लगी नहीं, आप देखने में एक राजवर लगते हैं।" राजा ने कहा "यह ठीक है, हे कमलनयने ! मैं राजा ययाति हूँ, नहुष का पुत्र।" अगर ऐसा है है तो बिना संकोच के मुझसे विवाह करो। मेरा सब दुःख दूर हो जायगा। इसमें सन्देह नहीं।" राजा ने यह सुनकर फिर कहा—हे कन्यकातिलक ! धन्ये ! मनोरमे ! सुनो। १३-१७ "तुम तो शुक्र की पुत्री हो, इसलिए तुम्हारे लिए सब सिद्ध ही है। मुझे तो अब कुछ भी नहीं सूझता। पतिता, परस्त्री, बहिन, अपने गोत्र की स्त्री, जो नारी विधवा हो गयी हो, जो सभी सङ्गों से विरक्त हो गयी हो, जो सारे संसार की निन्द्य हो, अपनी पुत्रवधू तथा स्वतन्त्र स्त्री, इनमें कोई भी, विधि के अनुसार, स्वीकार योग्य नहीं है। १८-२१

निन्नॆ ञान् कैक्कॊळ्ळुवानॆङ्ङनॆ परञ्ञु नी–
युन्नतान्वयत्तिङ्कलुळ्ळ कन्यकयल्लो । २२
शर्मिष्ठतन्नॆक्कण्टु मन्मथशरमेट्टु
तन्मनमळिञ्ञॊरु मन्नवन्चॊन्ननेरं २३
मन्नवन्तन्नॆक्कण्टु मन्मथविवशयां
कन्यक देवयानि पिन्नॆयुमुरचॆय्ताळ् । २४
ब्रह्मक्षत्रङ्ङळ् तम्मिलेतुमे भेदमिल्ल
सम्मतमॆनिक्कुमॊट्टुरियप्पोकुमॆटो । २५
कल्याणमोटुमॆन्नॆक्कैक्कॊळ्किल् निनक्किप्पोळ्
नल्लतु वन्नुकूटुमिल्ल संशयमेतुम् । २६
ऒङ्किल् निन्नच्छन्तन्ने तन्नालामॆन्नु नृपन्
पङ्कजमुखियोटु चॊन्नप्पोळवळ् चॊन्नाळ् । २७
सङ्कटं वेण्टा भवानामल्लो पुनरतुं
शङ्कयुमुण्टां सूक्ष्मधर्म्मत्तॊयरियाञ्ञाल् । २८
काव्यनां पिताविनॆयप्पोळ्े वरुत्तियाळ्
सेव्यनां मुनितन्नॆक्कुम्पिट्टु नृपतियुम् । २९
निःशेषविशेषङ्ङळच्छनोटरियिच्चाळ्
तच्चरितङ्ङळ् केट्टु भार्ग्गवन्तानुं चॊन्नान् । ३०
कन्यकाजनमुळ्ळिल् तङ्ङळॆक्कामिच्चीटिल्
अन्योन्य ब्रह्मक्षत्रं तङ्ङळिल्क्कॊळ्ळामल्लो । ३१

तुम ने कैसे कह दिया कि मैं तुम से विवाह करूँ ? तुम तो एक उच्चवंश (ब्राह्मणवंश) की कन्या हो ?" जब शर्मिष्ठा को देखने से मदन के वश में आकर ढीले मत्त से राजा ने इस प्रकार कहा तब राजा को देखने से मदन के वश में आकर कन्या देवयानी ने फिर कहा— "ब्रह्म और क्षत्र में कोई भी भेद नहीं है। मैं भी कुछ अच्छा मत रखने वाली हूँ। मुझसे विवाह करके अगर मुझे स्वीकार करोगे तो तुम्हारा भला होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।" १८-२६ जब राजा ने उस कमलमुखी से कहा—"अगर तुम्हारे पिता ही दान करेंगे तो मैं 'हाँ' कहता हूँ" तब उसने उत्तर दिया—"आप चिन्ता मत करें, आप का बन्धन स्वीकार है। सूक्ष्म धर्म को न जानने से शङ्का हो जाती है।" फिर अपने पिता को तत्काल ही बुलाया। राजा ने सेवा करने योग्य मुनि को हाथ जोड़ा। देवयानी ने सारा समाचार अपने पिता को

तन्नुटॆ मकळ्तन्निल् वात्सल्यमुण्टाकयाल्
अन्नॊरु विधियवनन्नेरमुण्टाक्कियान् । ३२
गोष्पतिसुतनुटॆ शापवुं नृप्निलें-
त्तात्पर्यवुमवळ्क्कुण्टायनेरं मुनि ३३
पुत्रियॆ ययातिक्कु कॊटुत्तु विशेषिच्चुं
पृत्थ्वीनायकनोटु पिन्नॆयुमॊन्नु चॊन्नान् । ३४
आपद्धर्म्मङ्ङळ्क्केतुं दोषवुमुण्टाकयिल्ल
शापत्तॆत्तटुक्कयुमरुतु मट्टॊन्निनाल् । ३५
शर्म्मिष्ठयाकुमसुराधिपपुत्रियोटु
नर्म्मङ्ङळ्पोलुं पऱञ्ञीटरुतॊरुनाळुम् । ३६
ऍन्नुटॆ मकळ् चॊल्लुंवण्णं नीयवळॆयुं
नन्नायि रक्षिच्चीटुकॆन्नते पऱयेण्टु । ३७
आयतमिऴियाळां देवयानियुं पुन-
रायिरं दासिकळुं शर्म्मिष्ठतानुंकूटि ३८
पोयितु ययातियां भूपतिराज्यं तन्निल्
पोयितु परितापं देवयानिक्कुमप्पोळ् । ३९
उम्मरप्पूङ्काविलॊरालयमतुं तीर्त्तु
शर्म्मिष्ठतन्नॆयतिल् नन्नायि वच्चु नृपन् । ४०

सुनाया। राजा के सब चरित सुनकर भार्गव मुनि (शुक्र) ने कहा—"अगर कन्या आप से प्रेम करती है तो ब्रह्म और क्षत्र का आपस में सम्बन्ध हो सकता है।" अपनी पुत्री के प्रति वात्सल्य होने के कारण शुक्र ने उस अवसर पर एक नया विधान बना लिया। बृहस्पति के पुत्र (कच) के शाप और कन्या के राजा के प्रति प्रेम के कारण उस समय मुनि ने अपनी पुत्री को ययाति को दान किया। तदनन्तर भूपति से यह विशेष बात भी कही—२७-३४ "आपद्धर्म का अनुसरण करने से कोई दोष न होगा। और किसी बात से शाप की बाधा भी न होना चाहिए। असुराधिप की पुत्री शर्मिष्ठा के साथ कभी परिहास तक न करना। मेरी पुत्री जैसा कहे वैसे ही उसकी रक्षा करते रहें। मुझे इतना ही कहना है।" दीर्घलोचना देवयानी अपनी एक हज़ार दासियों और शर्मिष्ठा के साथ राजा ययाति के राज्य में चली गयी। उस समय देवयानी के सभी दुःख दूर होगये। ३५-३९ राजा ने आगे के उद्यान में एक भवन बनाया और उसमें शर्मिष्ठा को अच्छे ढंग से बसाया।

मुन्नमे कण्टनाळिलुण्टायोरनुरागं
मन्नवनकतारिल् वाच्चितु दिनं प्रति । ४१
ऍन्नालुं देवयानितन्नोटु कूटिच्चेर्न्नु
नन्नायि रमिच्चितु भूपतिवीरन्तानुम् । ४२
अक्कालं यदुवॆन्नुं तुर्व्वशुवॆन्नुं रण्टु
मक्कळुमुण्टाय्वन्नु मुख्यन्मारवर्कळुम् । ४३

ययातियुटॆ शर्म्मिष्ठा प्राप्ति

इङ्ङनॆ चॆन्नुकालमायिरं संवत्सर-
मंगजतापवुंपूण्टिरुन्नु शर्म्मिष्ठयुम् । १
ऒन्निच्चु वळर्न्नॊरु तन्नुटॆ सखि नन्नाय्
मन्नवनोटुं कूटि क्रीडिक्कुन्नतुं कण्टु । २
तानॊरु पुरुषनॆक्काणातॆ गुहतन्निल्
मानसतापं पूण्टु मारमाल् पिटिपॆट्टु । ३
नाळ्तोरुमिरिक्कुन्नोळक्कालमवळुटल्
चेतोमोहनमॆन्ने चॊल्लावू काणुन्तोरुम् । ४
अन्नवळृतुधर्म्मं प्रापिच्चु कुळिच्चुव-
न्नुन्नतस्तनङ्ङळुं मॆल्लवे नोक्कि नोक्कि ५

उसके प्रति जो अनुराग देखने के पहले ही दिन ययाति के मन में उत्पन्न हो गया था वह प्रतिदिन बढ़ता गया। फिर भी भूपति ने देवयानी के साथ मिलकर यथेष्ट आनन्द भोगा। उन दिनों देवयानी के यदु और तुर्वशु नामक दो पुत्रों का जन्म हुआ। वे ही मुख्य थे। ४०-४३

ययाति की शर्मिष्ठा-प्राप्ति

इस प्रकार एक हजार वर्ष बीत गये। शर्मिष्ठा तो मदन का ताप अनुभव करती रही। उसने अपने बचपन की सखी को राजा के साथ खेलते देखा। वह किसी पुरुष को न देखती हुई, मानो एक गुहा में बैठकर दुःख का अनुभव करती हुई, मार (मदन) के वश में फँसी हुई दिन काटती थी। फिर भी उसका शरीर देखने में मोह उत्पन्न करने वाला था। १-४ एक दिन जब वह अपने मासिक धर्म के बाद स्नान करके, अपने उन्नत स्तनों को आनन्द से देखती हुई, अपने दन्तों का मार्जन करके, बन्धूक पुष्प के समान अधरवाली, कन्दुक सदृश स्तनों पर

दन्तशोधनचेय्तु बन्धूकसमाधरि
पन्तीक्कुं कोङ्कत्तटत्तिङ्कल् कुङ्कुमंचार्त्ति ६
भंगियिल् कुऱियिट्टु कुङ्कुमतिलकंतों-
ट्टंगजन्तळपोले पूङ्कुळलळिच्चिट्टु ७
निर्म्मलमायुळ्ळोरु वस्त्रवुमुटुत्तुंकों-
ण्टंबुजमिळिकळिलञ्जनमतु चेर्त्तु ८
कुण्डलषण्डं मिन्नुं गण्डमण्डलत्तिङ्कल्
कुण्डलिफणंपोले पत्तिक्कोट्टुं चेर्त्तु ९
स्वर्ण्णभूषणङ्ङळुमोक्कवेयणिञ्ञोरु
कण्णाटितन्निल् मुखपद्मवुं नोक्कि नोक्कि १०
नल्लोरु पुरुषने चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुळ्ळि-
लुल्लासं चेन्नोरशोकत्तेयुं चारिनिन्नु ११
दुःखिक्कुन्नतुनेरं मन्नवन्तानेतन्ने
मय्कण्णियुटे मुन्पिल्च्चेन्निन्नु बलालप्पोळ् । १२
ॲन्नुटे भर्त्तावाकेन्नवळुमपेक्षिच्चाळ्
निन्निन्नु विषण्णनाय् मन्नवन्तानुमप्पोळ् । १३
निन्नोटुकूटि रमिक्कुन्नतिल्लेन्नुतन्ने
मुन्नमे देवयानितन्नोटु चोन्नेनल्लो । १४
सत्यत्ते लंघिक्करुतेन्नतुकोण्टुं पिन्ने-
युत्तमनाय शुक्रन्तन्निलेप्पेटिकोण्टु- १५

कुंकुम लगाकर सुन्दर ढंग से कुंकुम का तिलक लगाकर अंगज (कामदेव) के पल्लव के समान अपने केशों को खुले डालकर, एक निर्मल वस्त्र पहनती हुई, अपने कमलसदृश नयनों पर काजल लगाकर चमकते हुए कपोलों पर सर्पों के फणों के सदृश कुण्डलों को पहनती हुई, सुवर्ण के आभूषण लगाती हुई, एक आदर्श (दर्पण) में अपना मुख बार-बार देखती हुई, एक आदर्श पुरुष का ध्यान करती हुई, बड़े उल्लास के साथ एक अशोकवृक्ष के सहारे दुःखित खड़ी थी, तब राजा स्वयं कज्जलनयना के समक्ष झट से खड़े हो गये। ५-१२ कन्या ने प्रार्थना की—"मेरे पति हो जाइए"। राजा तो विषण्ण होकर खड़े थे। और बोले—"मैंने पहले ही से देवयानी से प्रतिज्ञा की है कि मैं तुमसे नहीं रमूँगा। एक तो इस लिए कि प्रतिज्ञा का उल्लंघन न करना चाहिए और दूसरे उत्तम शुक्राचार्य के डर से मैं आज संकोच करता हूँ। हे मनोहरे ! यही सत्य है। तुम्हारे प्रति तो मेरा देखने के दिन से ही

मिन्नितु मटिच्चुञान् निर्ण्णयं मनोहरे ।
निन्निलुळ्ळनुरागं कण्टन्नेयुळ्ळतल्लो- १६
यॆन्नतु केट्टु चॊन्नाळ् शर्म्मिष्ठायतुनेरम् ।
ऒन्नुण्टु पऱयुन्नु ञानिप्पोळितु केळ्क्क- १७
योरोरो धर्मङ्ङळुं पऱञ्ञु वाळुम्पोळु
नारिमारोटु वेळि पऱयुम्पोळुं पिन्नॆ १८
तन्नुटॆ जीवनिप्पोळ् पोमॆन्नु तोन्नुम्पळु-
ऎन्नतु पोलॆ धनमॊक्कॆप्पोयीटुम्पोळुं १९
मॆन्निव नालिङ्कलुमसत्यं पऱञ्ञालुं
ऎन्नुमे दोषमिल्लयॆन्नु केळियुमिल्ले ? । २०
विस्तरिच्चवळ् चॊन्नतॆन्तिनु पऱयुन्नु
सिद्धिच्चाळ् भूपालनॆयन्नवळ्क्कॆन्नॆ वेण्टु । २१
शर्म्मिष्ठय्कन्नुतन्नॆ गर्भवुमुण्टाय्वन्नु
निर्म्मलनायिट्टॊरु पुत्रनुमुण्टाय्वन्नु । २२
अन्नुतॊट्टुटन् पिन्नॆशर्म्मिष्ठतन्निल् चित्तं
नन्नायि रमिच्चितु भूपनु दिनं प्रति । २३
अन्नॊरु दिनं वन्नु शर्म्मिष्ठतन्नॆक्काण्मान्
मन्नवनुटॆ पत्नियाकिय देवयानी । २४
अप्पोळॆ कुमारनॆक्काणायि तेजस्सोटु-
मद्भुतं तोळि ! चॊल् नी पॆट्टवारॆङ्ङनॆ नी ? २५

अनुराग है ही ।" यह सुनकर शर्मिष्ठा ने कहा—"एक बात तो मुझे कहना है, सो सुन लीजिए । तरह-तरह के परिहास के वचनों के अवसर पर, स्त्रियों के साथ विवाह की बात करने के समय, अपने प्राण ही के चले जाने की संभावना होने पर, तथा सारी सम्पत्ति का नाश होने की स्थिति आने पर—इन चार अवसरों पर अगर असत्य बोला जाय तो कोई भी दोष नहीं है । यह तो आपने सुना ही होगा ? ।" १३-२० उसके कथन को विस्तर से बतलाने में क्या प्रयोजन है ? इतना कहना पर्याप्त होगा कि उसको राजा प्राप्त हुए । शर्मिष्ठा को उसी दिन गर्भ हो गया । तदनन्तर एक निर्मल पुत्र का भी जन्म हुआ । उस दिन से लेकर राजा का चित्त शर्मिष्ठा ही में प्रतिदिन अधिक लग गया । एक दिन राजा ययाति की पत्नी देवयानी शर्मिष्ठा को देखने आयी । तब उसे एक तेजस्वी कुमार दिखाई पड़ा । उसने कहा—"हे सखी ! यह

पेट्वारेन्तुपरयावतुमेटो पुन-
रेत्रयुं दिव्यनायोरादित्यनेन्नपोले २६
वन्नोरु नरनेन्ने मेल्लवे तळुकिना-
नेन्नतेयरिञ्ञु ञानेन्तवळ् परञ्ञप्पोळ् २७
नन्नायितेङ्किलेन्नु पोयितु देवयानी ।
पिन्नेयुं नृपनवळ् काणाते पुणर्न्नीट्टु २८
नन्दनन्मारुं पाटे मून्नुपेरुण्टाय्वन्नु ।
चन्द्रार्क्कानलतेजस्त्रितयमेन्नपोले २९
द्रुह्युवुमनद्रुह्यु पूरुवेन्नतुमल्लो
मुख्यन्माराकुमवर् मूवर्क्कुं नामङ्ङळुं । ३०
अङ्ङने चेल्लुंकालं क्षोणीन्द्रनोरुदिन-
मंगनारत्नमाय देवयानियुं तानुं ३१
ओन्निच्चु मधुपानं चेय्तितु वळिपोले
तन्नेत्तान् मरन्नितु देवयानियुमप्पोळ् । ३२
मदिरापानं चेय्तुमधरपानं चेय्तुं
मदनन् तेरुतेरे वलिच्चु कूरम्पेय्तुं ३३
मनसि मदं कलर्न्नोरनुरागं चेय्तुं
कनिविनोटु गाढं वार्कोङ्क तळुकियुं ३४

एक अद्भुत बात है ! तुमने कैसे बच्चे को जन्म दिया ?" तब शर्मिष्ठा ने उत्तर दिया—"मैं क्या बताऊँ ! एक अत्यन्त दिव्य और आदित्य के सदृश पुरुष मेरे पास आया और उसने मेरा आलिंगन किया। मैं इतना ही जानती हूँ।" तब देवयानी ने कहा—"यह बात अच्छी रही !" और चली गयी। उसके बाद भी राजा ने पत्नी से छिपकर कई बार शर्मिष्ठा का स्पर्श किया। २१-२८ शर्मिष्ठा के तीन पुत्रों का जन्म हुआ, मानों चन्द्र, सूर्य और अग्नि के तीन तेज हों। द्रुह्यु, अनुद्रुह्यु, पूरु—ये ही उन तीन श्रेष्ठ पुत्रों के नाम थे। जब समय इस प्रकार बीत रहा था तब एक दिन महिलाओं में रत्न देवयानी के साथ राजा ने प्रचलित प्रथा के अनुसार मधुपान किया। देवयानी अपने को बिलकुल भूल गयी। दोनों ने मदिरापान किया, अधरपान किया, जिससे उन दोनों की मदनव्याधि अतिशीघ्र बढ़ने लगी। २९-३३ मन में मदमिश्रित अनुराग चढ़ गया, प्रेम से स्तनों का आलिंगन हुआ, दोनों ने आनन्दामृत के सागर में गोता खाया, मुख से काम का पसीना बहुत बहा, पीन स्तनों

आनन्दामृतवारिराशियिल् मुळुकियु-
माननादनंगस्वेदामृतमोळुकियुं ३५
पीनवक्षोजङ्ङळिल् कळभमिळुकियुं
मानसत्तिङ्कलेट्मानन्दं पेरुकियुं ३६
चेतस्सु कनिञ्ञुटळ् पुल्कियुं पलतरं
वेधस्सिन् विनोदङ्ङळेत्रयुं चित्रं चित्रम् ३७
आटियुं पाटियुं कोण्टाटियुं नयनङ्ङळ्
वाटियुं कौतूहलं तेटियुं मारप्पट- ३८
कूटियुं मदनन्टे चापमां चिल्लीवल्लि-
कोटियुमिरुवरुं कूटि वाणीटुन्नेरं ३९
भूपतिवीरनोटु देवयानियुं चोन्नाळ्
तापसबुद्धया मद्यव्याकुलचेतस्सोटुम् । ४०
अन्तणनाय भवानेन्तिनु वन्नतिप्पोळ्
बन्धमेन्तटवियिल् वरुवान् परञ्ञालुम् । ४१
चेन्तार्बाणार्त्ति भवानेङ्कल् वर्द्धिच्चालति-
नन्तरं पेरिकेयुण्टन्धात्मावायुळ्ळोवे ! ४२
नेरत्तु पोय्क्कोळ्क नी दूरत्तु मटियाते
चारत्तिङ्ङणयाते चारित्रभंगं वन्नाल् ४३
पेटिक्कवेणमल्लो भूपति ययातिये
माटोत्त कुळुर्मुल पुल्कुवान् वशमल्ला । ४४

में सुगन्धि द्रव्य लगाया गया, मन में असीम आनन्द का अनुभव हुआ, मन पिघल गया और तरह-तरह की लीलाएँ हुईं। वेधा (ब्रह्मा) के विनोद अत्यन्त विचित्र होते हैं। जब दोनों नाचते हुए और गाते हुए विचरने लगे तो उनकी आँखें मन्द हो गयीं, उनका कौतूहल बढ़ा, मार (मदन) की सारी सेना एकत्रित हुई और उसने उनकी भौंहरूपी धनुष का प्रयोग किया। उस समय देवयानी ने मद्यपान से व्याकुल होकर राजा को कोई तापस समझकर कहा। ३४-४० "आप ब्राह्मण होकर यहाँ कैसे आये ? यहाँ इस वन में आने का क्या कारण है, बतलाइए। अगर आप अन्धात्मा होकर मेरी काम-व्यथा को बढ़ाएँगे तो स्थिति बहुत बिगड़ेगी। आप जल्दी दूर चले जाइए ताकि आप मेरे निकट न आ जायँ। अगर चरित्रभंग हो जायगा तो भूपति ययाति से बहुत डरना होगा, अब मेरे उन्नत स्तनों का आलिंगन करना असंभव है।"

इत्तरं देवयानि चॊन्नतुकेट्टु नृपन्
भर्त्सिच्चु लिंगहीनन्मारॆ कावलुं वच्चान् । ४५
शर्मिष्ठयोटु कूटॆ नर्म्मवुं चॆय्तु नन्नाय्
मन्मथपरवशनाय् मरुवीटुं कालं ४६
मद्यपानवुं चॆय्तु मत्तमां चित्तत्तोटु-
मुद्यानभुवि पोवानुद्योगं कैक्कॊण्टप्पोळ् ४७
पोकणं वनक्रीडय्क्कॆन्नितु देवयानि ।
भोगार्त्थं भूपालनुं कूटवे पुरप्पॆट्टान् । ४८
चॆन्नितु शर्मिष्ठतन्नाश्रमत्तिङ्कलप्पोळ्
नन्नायि कीडिक्कुन्न पैतङ्ङळतम्मेक्कण्टु । ४९
अच्छनॆक्कण्टु चिरिच्चक्कुमारन्मारॆल्ला-
मर्च्चनादिकळ्चॆय्तु चारत्तु वरुंनेरं ५०
अच्चिरिपूण्टुनिन्नु भूपतितिलकनु-
मच्चरितङ्ङळ् कण्टु चोदिच्चु देवयानी । ५१
अच्छनॆङ्ङोट्टु पोयि चॊल्लुविन् पैतङ्ङळे
पिच्चकळुण्टाक्कुवान् पोयितो वनङ्ङळिल् ? । ५२
मॆल्लवे चूण्टिक्काट्टिक्कॊटुत्तु पैतङ्ङळु-
मल्लल्पूण्टॊरु देवयानियुं कोपत्तोटॆ ५३
दृष्टियुं चुवप्पिच्चु देहवुं विरप्पिच्चु
पॊट्टिच्चङ्ङॆरिञ्ञितु भूषणङ्ङळुमॆल्लाम् । ५४

देवयानी की इस प्रकार की बातें सुनकर राजा ने उसे डाँटा और उस पर नपुंसकों का पहरा लगाया। तदनन्तर शर्मिष्ठा के साथ परिहास करते हुए, कामदेव के वश में आकर, मद्यपान से मत्त होकर जब उद्यान में जाने की तैयारी कर रहे थे तब, देवयानी ने कहा कि मैं वनक्रीड़ा के लिए जाना चाहती हूँ। राजा भी भोग करने के लिए उसके साथ गये। ४१-४८ तब देवयानी शर्मिष्ठा के आश्रम पहुँची और वहाँ उसने सुख से खेलते हुए बालकों को देखा। अपने पिता को देखकर जब बालक हँसते हुए और वन्दना करते हुए निकट आये तब राजा भी लज्जासहित हँसने लगे। उनका यह व्यवहार देखकर देवयानी ने पूछा— "तुम्हारे पिता कहाँ गये ?" बालकों बतलादो! क्या वन में भिक्षा का संग्रह करने गये ?" तब बालकों ने उंगली से अपने पिता का निर्देश किया।

कलिपच्चवण्णंवरुमिनिक्कुमिनि निङ्ङळ्
कलिपच्चवण्णंतन्ने वाणालुमिरुवरुम् । ५५
पॊट्टक्कूपत्तिल्तळ्ळिविट्टन्नेयुळ्ळवैर-
मॊट्टुमे पोयील शर्म्मिष्ठय्क्कॆन्नोटु ञानो ५६
पॆट्टॆन्नु मऽन्नितु पॊट्टियायतुमूलं
पुष्टभोगत्तोटॆट्टं तुष्टया वाळुविन् निङ्ङळ् । ५७
भूमियिल् वीणुं केणुमुरुण्टुं नटकॊण्टाळ्
मामुनि शुक्रन्तन्नॆक्काण्मानाय् वेगत्तोटॆ । ५८
भूमिपालनुमतिव्याकुलचेतस्सोटुं
भामिनिकोपं कण्टु भाववैवर्ण्यं पूण्टु ५९
पेटिच्चु सरसभं पिन्नालॆ नटकॊण्टु
माटॊत्त मुलयाळॆयॆत्तील ययातिक्कुम् । ६०
वेगत्तिलवळ्चॆन्नु तातनोटाऽियिच्चा-
ळाकवे केट्टनेरं कोपिच्चु शुक्रन्तानुम् । ६१
अन्नेरं नृपतियुं चॆन्नटिवणङ्ङिनान्
मन्युकैक्कॊण्टु शुक्रमामुनियरुळ्चॆय्तु । ६२
ऒन्नुटॆ मकळॆयुं पॆट्टॆन्नङ्ङुपेक्षिच्चु
मन्नव ! दासितन्नॆप्पुल्कियनिमित्तं नी ६३

दु:खित और क्रुद्ध होकर, आँखें लाल करती हुई तथा काँपती हुई देवयानी ने अपने आभूषणों को तोड़कर फेंक दिया । ४९-५४ (और कहा) मुझे तो वही होगा जो विधि चाहता है । आप दोनों अपनी ही कल्पना के अनुसार रहें । जिस दिन मैं एक अंधे कुएँ में ढकेल दी ग़यी थी उस दिन का शर्मिष्ठा का कोप अभी नहीं गया । मैं तो तभी भूल गयी थी, क्योंकि मैं भोली हूँ ! आप दोनों पुष्ट भोगों सहित सुख से रहें ।" भूमि पर गिरती हुई और लोटती हुई वह जल्दी महामुनि शुक्र के पास चली गयी । भूपाल बड़े व्याकुल हुए और अपनी प्रिया का कोप देखकर विवर्ण हुए । डर के मारे उसके पीछे-पीछे जल्दी चले, परन्तु उस उन्नत स्तनवाली देवयानी के पास ययाति पहुँच न सके । वह आगे चली गयी और पिताजी को उसने सब सुनाया । सब सुनकर शुक्राचार्य क्रुद्ध हुए । ५५-६१ उस समय भूपति वहाँ पहुँचे और पैरों गिरे । तब शुक्रमुनि ने मन्यु (क्रोध) के वश में आकर कहा—"हे भूपाल ! मेरी पुत्री को बिना वजह त्यागकर तुमने उसकी दासी का आलिंगन किया । इसलिए

सत्यपुरुषनल्ल मर्त्त्यकुत्सितनत्रे
सत्त्वबुद्धियुं निनक्कोट्टुमिल्लेन्नुवन्नू । ६४
धर्म्मत्तेयुपेक्षिच्चु दासियेयपेक्षिच्च
दुर्म्मतियाय भवानिप्पोळ् जरानर- ६५
वन्नुपोकसुरस्त्रीतन्नोटुकूटेच्चेर्न्नु
नन्नायि रमिक्कणं नरच्चु कुरच्चु नी । ६६
अेन्न शापत्तेक्केट्टु मन्नवनुरचेय्ता-
निन्नु ञानधर्म्मत्तेच्चेय्ततिल्लरिञ्ञालुम् । ६७
रम्ययायिरिप्पोरु नारि वन्नपेक्षिच्चाल्
सम्मतिक्केन्नवरुं धर्म्मिष्ठन्मार्क्कु नूनम् । ६८
भ्रूणहत्ययुमिवनुण्टाकुमल्लेन्नाकिल्
ज्ञानमिन्निवयेल्लां ञान् परञ्ञीटेणमो । ६९
देवयानियिलुमेन् कौतुकं पोयीलेतु-
मावोळमनुग्रहिच्चीटुक मटियाते । ७०
अेङ्किलो पुत्रन्मारिलार्क्कानुं पकर्न्नु नी
भंगियिल् परिपूर्ण्णयौवनं कैक्कोण्टालुम् । ७१
अेन्नु मामुनिवरन् चोन्नतु केट्टु नृप-
निन्नतु नल्कुन्नवनेन्नुटे राज्यमेल्लां ७२

तुम एक सच्चे पुरुष नहीं हो, एक कुत्सित पुरुष हो, यह सिद्ध हुआ कि तुममें सत्त्वबुद्धि बिलकुल नहीं है। दासी की लालसा से धर्म की उपेक्षा करने वाले तुम जैसे दुर्मति को अभी-अभी जरा और पलित (सफ़ेद बाल) हो जाय ? आप असुर-स्त्री के साथ रहिए और बुड्ढे होकर खाँसते-खाँसते उसके साथ रमिए।" यह शाप सुनकर राजा ने कहा—"जान लीजिए कि मैंने कोई अधर्म नहीं किया। अगर कोई सुन्दर स्त्री आकर प्रार्थना करे तो अवश्य धर्मिष्ठ लोगों को भी कभी स्वीकार करना पड़ता है, नहीं तो भ्रूणहत्या का पाप लग जाता है। इन बातों का ज्ञान आपको है ही, मुझे तो नहीं बताना है। ६२-६९ देवयानी के प्रति मेरा प्रेम तनिक भी कम नहीं है। अतः बिना संकोच के मुझ को अनुग्रह दीजिए।" तब (मुनि ने कहा) "इस स्थिति में आप अपने पुत्रों में से किसी को यह जरा देकर बदले में उसका संपूर्ण यौवन ले लीजिए।" महामुनि का यह वचन सुनकर ययाति ने कहा—"जो मुझे (अपना यौवन) देगा मेरा सारा राज्य उसका है। पर वह मेरे प्रति दूसरी बात (यौवन खो जाने)

पिन्नॆ मट़्तिनायि कोपिक्कातिऱिक्कणम्
मन्नवा ! कोपिक्कयिल्लङ्ङ्नॆतन्नॆयॆऩ्ऩान् ७३
भार्ग्गवमुनिवरन् भूपतिवरन्तानुं
भार्ग्गवपुत्रियोटुं कूटवे राज्यंपुक्कान् । ७४

जरानराविनिमयम्

सीमन्तात्मजनाय यदुविनोटु नृप-
नामन्त्रिच्चितु जरायौवनविनिमयम् । १
सूक्ष्मधर्म्मत्तॆप्पार्त्तु धात्रीशनोटु यदु
दाक्ष्यमोटरुतितॆऩ्ऩाख्यानं चॆय्तशेषं । २
मक्कळॆ क्रमत्ताले वॆव्वेऱॆ वरुत्तीट्टु
कैक्कॊळ्क जरानरयॆऩ्ऩवनपेक्षिच्चु । ३
आरुमे कैक्कॊळ्ळाञ्ञट्टञ्चामनाय सुतन्
पूरुवॆऩ्ऩवनोटु मन्नवन् पऱञ्ञप्पोळ् ४
अच्छन् चॊन्नतु केट्टिट्टुच्चिरिवरुऩ्ऩाकिल्
निश्चयं पॊऱुक्कुऩ्ऩु तऩ्ऩालुमॆऩ्ऩानवन् । ५
तातनु तनिक्कुळ्ळ यौवनमतुं नल्कि-
च्चेतसि तॆळिञ्ञवन् भार्यमारोटुं कूटि ६

के लिए नाराज न हो।" शुक्र मुनि ने उत्तर दिया—"नहीं क्रुद्ध न होगा।" तदनन्तर भूपाल शुक्र की पुत्री के साथ अपने राज्य को चले गये। ७०-७४

वार्द्धक्य और पलित (सफ़ेद बाल) का विनिमय

राजा ने अपने सीमन्तपुत्र (प्रथम पुत्र) यदु से वार्द्धक्य और यौवन के विनिमय के लिए अभ्यर्थना की। सूक्ष्म धर्म पर विचार करके जब यदु ने दक्षता के साथ कह दिया कि यह हो ही नहीं सकता, तब राजा ने अपने पुत्रों को अलग-अलग बुलाया और प्रार्थना की कि मेरा वार्द्धक्य और पलित स्वीकार करो। जब वे एक-एक करके अस्वीकार करते गये तब राजा ने पूरु नामक पाँचवें पुत्र से प्रार्थना की। पिताजी का कहना सुनकर उसको हँसी आयी, पर उसने उसे दबा लिया और कहा—"अपना वार्द्धक्य दे दीजिए।" तदनन्तर पूरु ने पिता को अपना यौवन दे दिया। पिता प्रसन्न हुए और उन्होंने अपनी पत्नियों के साथ, कामदेव के बाण

चूतसायकमेट्टु चूतुवार्मुलपुल्कि-
च्चूतोटु चतुरंगमेन्निवकोण्टुं क्रीडि-
च्चादरवोट्टु वाणानायिरत्ताण्टु पिन्ने ७
पूरुवां तनयनु यौवनमतुं नल्कि-
प्पाराते राज्यत्तिङ्कलभिषेकवुं चेय्तु । ८
राजचिह्नङ्ङळ् निङ्ङळ्क्किल्लाते पोकेन्नतु
राजावु मट्टे मक्कळ्क्कोक्कवे शापं नल्कि । ९
यदुविन् परम्पर यादवन्मारेन्नायि
मधुरानामं पूण्टु राज्यवुमुण्टाय्वन्नु १०
तुर्व्वशुविन्टे पारम्पर्यमायुण्टायितु-
मुर्व्वियिलन्नु यवनन्मारेन्नरिञ्ञालुम् ११
द्रुह्युविन् परम्पर भोजन्मारल्लो अनु-
द्रुह्युविन् मक्कळेल्लां म्लेच्छजातिकळल्लो । १२
पूरुविन् परम्पर पौरवन्मारायितु
वीरनां ययातियुं पोय् वनवासं चेय्तान् । १३
वानुलोकवुं पुक्कान् पिन्नेयेन्नरिञ्ञालुं
मानववीरन् पूरु भूमियुं वाणानल्लो । १४
उत्तरयायातत्तिलुळ्ळोरु कथयेल्लां
विस्तारं पारमुण्टु पऱवान् पणियत्रे । १५
इन्द्रनु ययातियुं तङ्ङळिल् पऱञ्ञतुं
मन्नवनष्टकनां मुनियेक्कण्टवारुम् १६

से विद्ध होकर, आलिंगन आदि करते हुए और शतरंज आदि खेल खेलते हुए सुख से एक हज़ार वर्ष व्यतीत किये । १-७ तत्पश्चात् अपने पुत्र पूरु को यौवन लौटा दिया और शीघ्र ही उसका राजा के पद पर अभिषेक किया । तथा अपने अन्य पुत्रों को शाप दिया कि उन्हें राजा के लक्षण कभी न प्राप्त हों । यदु की परम्परा में यादव हुए, (उनका) मथुरा नामक एक देश भी प्रसिद्ध है । तुर्वशु के वंश में, यवन पैदा हुए । द्रुह्यु के वंशज हैं भोज और अनुद्रुह्यु की सन्तान हैं सभी म्लेच्छ जातियाँ । पूरु के वंशजों को पौरव कहते हैं । तदनन्तर वीर ययाति वनवास के लिए चले गये, और अन्त में, सभी स्वर्गलोक पहुँच गये । मानव वीर पूरु ने भूमि पर राज्य किया । ८-१४ ययाति-चरित के उत्तर-भाग में विस्तृत कथाएँ हैं, उनको कहना कठिन काम है । इन्द्र और

तङ्ङळिल् धर्म्मधर्म्ममॊक्कवे पऱञ्ञतु-
मॆङ्ङनॆ पऱयुन्नु कालमो पोरयल्लो । १७
पूरुविङ्कॆन्नुतॊट्टु भरतन्तन्कलोळं
नेरे मुन्नमेतन्नॆ पऱञ्ञानल्लोतानुम् १८
ॲन्नु वैशम्पायननरुळ्चॆय्ततु केट्टु
मन्नवनाय जनमेजयन् चोद्यं चॆय्तु । १९

शाकुन्तळं-भरतोल्पत्ति

भरतन्तन्टॆ जन्ममऱिवान्तक्कवण्ण-
मरुळिच्चॆय्तीटेणमावोळं चुरुक्कातॆ । १
केट्टुकॊण्टालुमतुमॊट्टॊट्टु चॊल्लामॆङ्किल्
वाट्टमिल्लातॆ केळियुळ्ळ दुष्षन्तनृपन् २
उळ्ळतिल् चतुर्भागं वाङ्ङिनान् राजभोगम् ।
चॊल्लुवान् पणियवन् रक्षिच्च प्रकारङ्ङळ् । ३
कीर्त्तिपूण्टिरिक्कुंनाळ् नायाट्टिन्नॊरुदिन-
मार्त्तुनालंगत्तोटुकूटवे वनंपुक्कान् । ४
व्याघ्रसिंहादि मृगमावोळं कॊन्नुकॊन्नु
शीघ्रमुर्व्वीन्द्रन् विळयाटुन्ननेरमेटं ५

ययाति के संवाद, ययाति की मुनि अष्टक से भेंट और उनकी आपस में धर्माधर्म की वार्त्ता, यह सब कैसे कहा जाय, समय बहुत कम है। पूरु से लेकर भरत तक तो मैं पहले ही कह चुका हूँ। वैशम्पायन का यह कहना सुनकर राजा जनमेजय ने पूँछा। १५-१९

शकुन्तलोपाख्यान और भरत की उत्पत्ति।

जहाँ तक हो सके बिना संक्षेप किये कथा सुनाइए ताकि भरत की उत्पत्ति समझ में आजाए। तब वैशम्पायन बोले कि मैं संक्षेप में कह रहा हूँ सुन लीजिए। राजा दुष्यन्त जिनकी कीर्ति में कोई कमी न थी, वे प्रजा से पैदावार का चतुर्थ भाग राजकर रूप में लेते थे। जिस प्रकार उन्होंने रक्षा की उसका वर्णन करना कठिन है। अपनी संपूर्ण कीर्ति से युक्त वे राजा दुष्यन्त एक बार चतुरंग सेना सहित शिकार खेलने के लिए वन गये। १-४ व्याघ्र, सिंह आदि जन्तुओं को यथेष्ट मारते हुए राजा शीघ्रता पूर्वक शिकार खेलने लगे और जब अपनी प्रबल इच्छा के कारण विविध

आग्रहिच्चटविकळाक्रमिच्चीटुं नेर-
मार्क्कुमेत्तात्त वेगमेरुन्न रथत्तोटु ६
भास्कररश्मिपोलुं चेल्लात वनंपुक्कान् ।
नोक्कियुं मृगङ्ङळेक्कण्टु कौतुकंपूण्टुं ७
वेगमेरीटुं मृगजालङ्ङळ्वळियै पो-
येकाकियाय वसुधेन्द्रनां दुष्षन्तनु ८
क्षुत्पिपासादिपूण्टु चमञ्ञोरनन्तर-
मद्भुतं वळर्न्नीटुमाश्रमदेशं कण्टान् । ९
पुष्पङ्ङळ् तळिरुकळ् फलङ्ङळ् निरञ्ञोरो-
षट्पद शुक पिक केकिकळ्नादत्तोटुं १०
वृक्षङ्ङळ्तोरुं चुट्टिप्पटर्न्नीटुं वल्लिकळुं
यक्ष किन्नर सिद्ध गन्धर्वादिकळालुं ११
पक्षिकळ् मृगङ्ङळेन्नुळ्ळ जन्तुक्कळालु-
मिक्षु जंबीर केर कदळीवृन्दत्तालुं १२
शीतत्व सुगन्धमान्द्यादियां गुणं तेटुं
वातपोतङ्ङळालुं सेव्यमाश्रमदेशम् । १३
चित्तप्रह्लादोद्भवमेन्नयुमेन्नु निन-
च्चुत्तमनाय नृपन् विस्मयंपूण्टानेटम् । १४
मालिनियाय नदि तन्नुटे तीरत्तिङ्कल्
कालदोषादिकूटाताश्रमं मनोहरं १५

वनों में प्रविष्ट हुए तब औरों के लिए अप्राप्य वेग वाले रथ के साथ ऐसे वन में पहुँचे जहाँ सूर्य की किरणों की भी पहुँच न थी। चारों ओर मृगों को देखते हुए कौतुक भरे राजा दुष्यन्त वेग से दौड़ते हुए मृगों के ही रास्ते पर चढ़ते चले गये और अकेले होकर जब भूखे और प्यासे हुए एक अद्भुत आश्रम देखने में आया। ५-९ पुष्प, पल्लव और फलों से लदे हुए, भ्रमर, शुक पिक, मोर आदि पक्षियों के नादों से गूँजते हुए वृक्षों पर चढ़ी लताओं के कारण, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, गन्धर्व आदियों के, पक्षी, मृग और अन्य जन्तुओं के, ईख, नारङ्गी, नारिकेल, कदली आदि वृन्दों के तथा शीतलतरु-सुगन्ध, मन्दता आदि गुणयुक्त वायु के कारण वह आश्रम सेवन के योग्य था। 'यह मन में आनन्द उत्पन्न करने वाला है' ऐसा समझकर वह उत्तम राजा अत्यन्त विस्मित हुए। १०-१४ मालिनी नदी के तट पर स्थित, कालदोष से रहित और गंगा के तट पर

सततं नरनारायणन्मार् मरुवीटुं
बदर्याश्रमं गंगतन्नालेन्नतुपोले १६
मालिनिनदितन्नाल् शोभितं देशं कण्टु-
मालकन्नोरु नृपन् मट्टुळ्ळ पटयेल्लाम् १७
काननद्वारत्तिङ्कल् निल्केन्नु नियोगिच्चु
तानुं तन् पुरोहितन्तानुमायकं पुक्कान् । १८
ब्रह्मलोकत्तें प्रवेशिच्चितु ञानेन्नप्पोळ्
निर्म्मलनाय नृपन्तन्नुळ्ळिलुण्टायवन्नु । १९
मायकोण्टुण्टां महामोहङ्ङळ्नीक्कि नित्यं
न्यायतत्त्वार्थविज्ञानादि सन्पन्नन्माराय् २०
बोधमेऱिय मुनिप्रवरशिष्यन्माराय्
वेदपारगन्मारां बह्वृचमुख्यन्माराल् २१
प्रेर्यमाणङ्ङळाकुं संहितापदङ्ङळे-
द्धार्यमाणार्थत्तोटुं सुस्वरव्यक्तियोटुं २२
केट्टुकेट्टानन्दिच्चु चेन्नप्पोळ् काणायवन्नु
वाट्टमेन्निये यागशालकळ् पलतरम् । २३
यज्ञविद्यांगक्रियातल्परन्माराय् नाना-
विज्ञानज्ञानादिकोण्टज्ञानमकन्नोटुं २४
यजुर्वेदिकळुमृग्वेदिकळायुळ्ळोरु-
मृजुमार्ग्गत्तोटतिमधुरगानत्तोटुं २५

स्थित यह मनोहर आश्रम नर और नारायण के निवास-स्थान बदर्याश्रम के समान है। मालिनी नदी से शोभित उस देश को देखकर भूपाल ने अपनी सेना को आज्ञा दी कि वन के द्वार ही पर ठहर जाओ। तत्पश्चात् अपने पुरोहित के साथ वे अन्दर गये। उस समय राजा को प्रतीत हुआ कि 'मैंने ब्रह्मलोक में प्रवेश किया है''। वहाँ पर माया के महामोहों को हटाकर सदैव मीमांसा की युक्तियों के अर्थज्ञान से सम्पन्न प्रौढ़ ज्ञान-वाले मुनियों के वेदों के पारंगत तथा ऋग्वेद के विशेषज्ञ शिष्यों की प्रेरणा से किये जानेवाले अर्थज्ञान-सहित सस्वर संहिता और पद का पाठ सुनकर जब राजा अत्यन्त आनन्दित हुए तब उन्हें विविध अत्युत्तम यज्ञशालाएँ दिखाई दीं। १५-२३ यज्ञविद्या और अंगक्रिया में तत्पर और तरह-तरह के विज्ञान और ज्ञान से अज्ञान दूर करनेवाले यजुर्वेदी और ऋग्वेदी, सीधे मार्ग से और अति मधुर गानशैली से गानेवाले सामवेदी

सामवेदिकळोटु भारुण्डसामगन्मार्
सोमपानादिकोण्टु पूतमानसन्मारुं २६
तैत्तिरीयादिशाखाभेदङ्ङळू बहुविधं
मूर्त्तिभेदङ्ङळ् चोल्लु सूक्तङ्ङळ् पलतरं २७
सूत्रङ्ङळ् चोल्लुन्नोरुं ब्राह्मणवेदिकळुं
शास्त्रसिद्धान्तव्याख्यानार्त्थतल्परन्मारुं २८
अथर्वृग्यजुस्सामभेदसंहितागानं
पदसंक्रमस्वरमात्रादिशिक्षयोटुं २९
शब्दसंस्कारत्तोटुं वाक्यभेदात्र्थत्तोटुं
सुप्तिङन्तादि बाद्ध्यसूत्रवृत्तिकळोटुं ३०
शिक्षाव्याकरणवुं छन्दस्सुं निरुक्तवुं
सूक्ष्मज्योतिषं कल्पमिवट्टिन्मतभेदं ३१
मोक्षधर्म्मोक्तमीमांसादिकळुपनिष-
द्वाक्यार्त्थविशेषादि व्याख्यानमतङ्ङळुं ३२
द्रव्यभेदवुं कर्म्मभेदवुं कालभेदं
दिव्यमानुषभेदं सव्यापसव्यभेदं ३३
कर्तृत्वभेदवुं क्रियाभेदवुं गुणभेदं
कृत्याकृत्याचारप्रायश्चित्तग्रन्थङ्ङळुं ३४

और भारुण्ड साम गानेवाले, सोमपान से पुनीत मानस (पवित्र मनवाले) तैत्तिरीय[1] आदि विविध शाखाभेदों का तथा मूर्तिभेद का प्रतिपादन करनेवाले सूक्तों का और सूत्रों का पाठ करनेवाले, ब्राह्मणों के विशेषज्ञ, शास्त्रों के सिद्धान्तों की व्याख्या करने में तत्पर, अथर्व, ऋक्, यजुस्, और सामवेदों का संहितागान पद, क्रम, स्वर, मात्रा आदि के ज्ञान-सहित, शब्द-संस्कार[2] और वाक्यभेदों के अर्थ के साथ, सुबन्त,[3] तिङन्त,[4] बाध्यसूत्र और वृत्ति[5] के साथ २४-३० शिक्षा, व्याकरण, छन्दःशास्त्र, निरुक्त, सूक्ष्म ज्योतिष, कल्प[6] और उनके भेद मोक्षधर्म में कही गयी मीमांसा, उपनिषद् के वाक्यों के विशेष अर्थ, व्याख्यान और विविध मत, द्रव्यभेद, कर्मभेद, कालभेद, दिव्यमानुषभेद, सव्य और अपसव्य का भेद, कर्तृभेद, क्रियाभेद, गुणभेद, कृत्य और अकृत्य आचारों का और प्रायश्चित्तों का प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ, कार्य, कारण और करण के भेद, आचार्यभेद,

१ कृष्णयजुर्वेद की एक शाखा २ शब्दों का व्याकरण की दृष्टि से साधुत्व ३ नामपद ४ क्रियापद ५ लघु व्याख्या ६ कर्मकाण्ड के ग्रन्थ।

कार्यकारणकरणादिभेदङ्ङळुमा-
चार्यभेदवुं व्यासग्रन्थादिपुराणवुं ३५
श्रुतिगूढार्त्थभेदप्रतिबोधकमाय
स्मृतिभेदङ्ङळितिहासङ्ङळ् पलतरं ३६
वेदाङ्गस्कन्धभेदोपांगशाखादिकळुं
वेदान्तादिकळ् नानाशास्त्रङ्ङळ् बहुविधं ३७
अभ्यसिच्चीटुं मुनिवर्ग्गवुं शिष्यर्कळु-
मद्भुतात्मकजपहोमादिकर्म्मङ्ङळुं ३८
यन्त्रतन्त्रादियुतमन्त्रजापकन्मारु-
मन्तेवासिकळ् परिकर्म्मिकळ् भृत्यन्मारुं ३९
पवित्रालयङ्ङळुं विचित्रासनङ्ङळुं
धवित्रच्छत्रदण्डपादुकापटङ्ङळुं ४०
अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्यनिष्ठ पूण्टीटुन्नोरु-
मष्टांगयोगत्तोटुकूटिन यतिकळुं ४१
जात्यादिवैरं वेटिञ्ञीटिन जन्तुक्कळुं
जात्यादि कुसुमितलतिकावलिकळुं ४२
प्रीत्या कण्टुण्टायोरु परमानन्दत्तोटुं
भीत्या सात्विकमत्या मञ्जुळतरगत्या ४३
नीत्या सज्जनरीत्या मनसि पूर्ण्णभक्त्या
स्वाध्यायश्रवणसन्तुष्टनाय् मन्दं मन्दं ४४

व्यासग्रन्थ, पुराण, श्रुति के गूढ अर्थभेदों के बोधक स्मृतिग्रन्थ, विविध इतिहासग्रन्थ, वेदाङ्गों के स्कन्धभेद, उपांगों की विविध शाखाएँ तथा वेदान्त आदि बहुविध शास्त्रों का अभ्यास करनेवाला मुनिवर्ग और उनके शिष्य, अद्भुत जप, होम आदि विविध कर्म, ३१-३८ यन्त्र और तन्त्र से युक्त मन्त्रों का जप करनेवाले, अन्तेवासी (शिष्य), परिचारक और भृत्य पवित्र आलय, विचित्र आसन, पंखे, छत्री, दण्ड, खड़ाऊँ, वस्त्र अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले, अष्टाङ्ग योग का अभ्यास करनेवाले यति, जातिवैर से मुक्त जानवर, जाति आदि पुष्पों से लदी हुई लताएँ, इन सबको प्रीति के साथ देखकर, परम आनन्दयुत होकर राजा दुष्यन्त ने भय और सात्त्विक भावना के साथ मन्दगति से, नैतिक सज्जनों की शैली से, सम्पूर्ण भक्ति से, स्वाध्याय-श्रवण से सन्तुष्ट होकर धीरे-धीरे काश्यप मुनि के तप से रक्षित उस आश्रम में प्रवेश किया और उत्तरोत्तर

काश्यपतपोगुप्तमाश्रममकं पुक्का-
नाश्चर्यं मनक्कान्पिल् मेल्क्कमेलुण्टाय्वन्नु । ४५
पर्ण्णशालयिल् चेन्नु मन्नवन् निन्ननेरं
धन्यनां तपोधनन्तन्नेक्कण्टीलयल्लो । ४६
आरुळ्ळतिविटेयेन्नोत्रयुं गांभीर्यत्तो-
टारेयुं काणाञ्ञवनुच्चत्तिलुरचेय्तान् । ४७
लक्षणयुक्तमाय नादत्तेक्केट्टनेरं
लक्ष्मितान्तन्नेयोरु कन्यकारूपं पूण्टु ४८
निष्क्रमिच्चतुपोले तल्क्षणं काणाय्वन्नु ।
चोल्क्कोण्ट कोण्टल्मद्धवे मिन्नुन्न मिन्नलपोले ४९
रूपयौवनशुभशीलाचारादिकोण्टु
शोभितयाय दिव्यकन्यकतानुमप्पोळ् ५०
सर्व्वलक्षणयुक्तरूपादि गुणं तेटु-
मुर्व्वीशन्तन्नेक्कण्टु दुर्व्वारमोदत्तोटुं ५१
गाढकौतुकत्तोटुं गूढसुस्मेरत्तोटुं
प्रौढसद्भावत्तोटुं कूटवे चोन्नाळवळ् । ५२
स्वागतमिति पुनरादरवोटुकूटे
वेगत्तिलतिथिपूजकळुं चेय्तीटिनाळ् ५३
आसनपाद्यार्घ्यादि स्वाचमनीयङ्ङळाल्
चेतसि तेळिञ्ञवळ् पिन्नेयुमुरचेय्ताळ् । ५४

बढ़ते हुए आश्चर्य का अनुभव किया। ३९-४५ जब राजा पर्णशाला पहुँचे तब प्रशंसनीय तपोधन काश्यप मुनि वहाँ न दिखाई दिये। तब वहाँ किसी को न देखकर राजा ने 'यहाँ कोई है ?' ऐसा पुकारा। तब ऐसा देखने में आया मानों इस लक्षणयुत नाद को सुनकर लक्ष्मीदेवी स्वयं कन्या-रूप धारण करके निकल आयी हों। तब सुप्रसिद्ध मेघ के बीच चमकनेवाली बिजली के समान रूप, यौवन, शुभ शील, शुभ आचार आदि से शोभित कन्या ने सभी लक्षणों से सम्पन्न और रूप आदि गुणों से युक्त राजा को देखकर अनिवार्य प्रमोद, गाढ कौतुक, गूढ मुस्कान, और प्रौढ सद्भावना के साथ इस प्रकार कहा। ४६-५२ "आपका स्वागत है"। तदनन्तर शीघ्रतापूर्वक बड़े आदर के साथ अतिथिसत्कार भी किया। आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय आदि देकर प्रसन्नतापूर्वक बोली। "आप कुशल हैं और स्वस्थ हैं ? हे विशद बुद्धिवाले ! बताइए

कुशलमल्ली भवानिन्ननामयमल्ली
विशदमते भवानारेन्नु परयणम् । ५५
कानने वरुवतिनेन्तु कारणमेन्नु
मानिनि चोदिच्चप्पोळ् मन्नवन् तानुं चोन्नान् ५६
दुष्यन्तनाय नृपनिलिलतनयन् ञान्
पुष्करविलोचने ! सत्यमेन्नरिञ्ञालुम् । ५७
राजावेन्नतु केट्टु फलमूलादिकळुं
राजीवविलोचन नल्किनाळ् भुजिप्पानाय् । ५८
अेन्नालेन्तिनियेन्नु वेण्टुन्नतेन्नु चोन्न-
कन्यकतन्ने नोक्कि मन्नवन् तानुं चोन्नान् ५९
कण्वमामुनितन्नेक्काण्मान् वन्नतुमिप्पो-
ळण्णोजविलोचने ! मामुनियेङ्ङु चोल् नी । ६०
कायोटु पळङ्ङळेक्कोण्टुवन्नीटुवानाय्
पोयितु पितावोरु रण्टुनाळिक पार्त्तल् ६१
नायकनाय निनक्कन्पोटु काणामेन्ना-
ळायतविलोचनयाकिय कन्यकयुम् । ६२
कन्यकावयोरूपशीलादिगुणं कण्टु
मन्नवन् मारवशनायुटनुरचेय्तान् । ६३
निन्नुटे मातापिताक्कन्मारारेन्नुं पिन्ने
निन्नेयुमुळ्ळवण्णमेन्नोटु चोल्लीटणम् । ६४

आप कौन हैं ? यह भी बतलाइए यहाँ वन में आने का क्या कारण है ?" उस मानिनी के द्वारा इस प्रकार पूछने पर राजा ने कहा—"मैं इलिल का पुत्र राजा दुष्यन्त हूँ। हे कमललोचने ! मैं सच कहता हूँ।" यह सुनकर कि वह राजा है उस राजीवलोचना ने उनको फल, मूल आदि खाने के लिए दिये। 'अब आप को किस बात की आवश्यकता है ?' यह कहती हुई कन्या को देखकर राजा ने कहा। "मैं महामुनि कण्व का दर्शन करने आया हूँ। हे कमललोचने ! महामुनि कहाँ गये हैं ? बतला दीजिए।" ५३-६० तब आयत (दीर्घ)-लोचना कन्या ने उत्तर दिया—"पिताजी कच्चे और पक्के फल लाने गये हैं। अगर आप दो नाडिका (घड़ी) ठहरेंगे तो आप उनका आनन्द से दर्शन कर सकेंगे"। कन्या के वय, रूप और शील आदि देखकर राजा मदन के वश में होकर बोले। तुम्हारे माता-पिता कौन हैं और तुम स्वयं कौन हो, यह सब

ऎन्तॆटो वनत्तिल् वाणीटुवान् मूलमॆन्तु
बन्धुरकळेबरे ! चॊल्लणं परमार्त्थम् । ६५
निन्नुटॆ रूपगुणं कण्टतुकॊण्टु पार-
मॆन्नुटॆ मनस्सिनॆ नीयपहरिप्पानुं ६६
पूरुवां राजर्षिवंशत्तिङ्कल् पिरन्नु ञान्
नारिमार्कुलमौलिरत्नमे धरिच्चालुम् । ६७
उत्तमे निन्नोटिन्नुमॊन्नुण्टु परयुन्नु
चित्तमॆन्नुमे मम चॆल्कयिल्लधर्म्मत्तिल् । ६८
क्षत्रियस्त्रीयिलॆन्नि मट्टुळ्ळ नारिमारिल्
चित्तजतापमिनिक्कुण्टावान् मूलमिल्ल । ६९
राजनन्दनयत्रे नीयॆन्नु वन्नुकूटुं
व्याजमॆन्नियॆ परञ्ञीटणमॆन्नोटिप्पोळ् । ७०
मन्दहासवुं चॆय्तु सुन्दरांगियुमप्पोळ्
कन्दर्प्पसमाननां भूपतियोटु चॊन्नाळ् । ७१
पुण्यपापङ्ङळ् निरूपिच्चु नी परयणम्
कण्वनां मम तातन्तन्नेयुं पेटिक्कणम् ७२
ञानिप्पोळ् स्वतन्त्रयल्लॆन्नतुमरियणम्
मानिच्चीटणं वेदविधियां धर्म्मत्तॆयुं । ७३
जनकनाय कण्वन्तन्नॆ प्रार्त्थिच्चालव-
ननुवादत्तालॆङ्किलरुतॆन्निल्लतानुं । ७४

यथार्थ (ठीक प्रकार से) मुझ से कहो। हे सुन्दर शरीरवाली तुम्हारे वन में रहने का क्या कारण है ? मुझसे परमार्थ बतलादो। तुम्हारे रूप और गुणों ने मेरे मन का अपहरण कर लिया है। हे महिलावर्ग की चूडामणि ! मेरा जन्म राजर्षि पूरु के वंश में हुआ है। ६१-६७ हे साध्वि ! एक बात मैं आज तुमसे कहना चाहता हूँ—'कि मेरा चित्त कभी अधर्म की ओर न जायगा'। क्षत्रिय स्त्रियों को छोड़कर अन्य स्त्रियों के प्रति मेरे मन में मदनताप होजाना बिलकुल असंभव है। हो सकता है कि तुम क्षत्रिय की पुत्री हो। इस लिए बिना व्याज (छल) के मुझसे सब बतादो। तब मुस्कराती हुई सुन्दरी ने कामदेव के समान भूपति से कहा। आप पुण्य और पाप का ध्यान रखकर कोई बात कहें, मेरे पिता कण्वमुनि से डरना भी चाहिए, जान लीजिए कि मैं अब स्वतन्त्र नहीं हूँ और वेदविहित धर्म का आदर भी करना चाहिए। ६८-७३

मधुरस्वरविस्पष्टाक्षरालापं केट्टु
मधुराधरियोटु मन्नवनुरचेय्तान् । ७५
भोष्कुरचेय्कॆन्नुळ्ळतार्क्कटुत्ततु बाले
मूर्खन्मारोटु वेणं चॊल्लुवानतुमॆङ्किल् ७६
ऊद्ध्र्वरेतस्सां मुनितन्नुटॆ पुत्रि ञानॆ-
न्नोर्त्तु नी परयणमॆन्नोटु मनोहरे ! ७७
ऎन्नतु केट्टु मुनिकन्यकतानुं चॊन्नाळ्
नन्नल्ल तन्नॆक्कक्कॆन्नुळ्ळतॆन्नतु नूनम् । ७८

शकुन्तळोत्पत्ति

ऎङ्किलो यथातत्त्वं केट्टालुं मम जन्मं
पङ्कजशरसमनाकिय नराधिप ! १
पण्टॊरु तपोधननिविटेक्कॊळुन्नळ्ळि-
क्कण्टितु मम पितावाकिय मुनीन्द्रनॆ । २
कॊण्टाटिच्चोद्यं चेय्तानूद्ध्र्वरेतस्सां भवा-
नुण्टाय मकळुटॆ जन्मत्तॆप्परयणम् । ३
अप्पोळुतच्छनॆल्लामवनोटरियिच्चा-
नप्रकारङ्ङळ् ञानुमॆप्पेरुमरियिक्कां । ४

आप पिता कण्व से प्रार्थना कीजिए। यदि उनकी अनुमति होगी तो मेरी ओर से अस्वीकार न होगा। मधुर स्वर और विस्पष्ट अक्षरवाली उसकी बातें सुनकर राजा ने उस मधुर अधरवाली से कहा। हे बाले ! असत्य बोलना किसके लिए ठीक है ? अगर बोलना ही हो तो मूर्खों से कहना चाहिए। "मैं ऊर्ध्वरेता (ब्रह्मचारी) मुनि की पुत्री हूँ" इस प्रकार, हे मनोहरे, तुमको मुझसे सोचकर कहना था। यह सुनकर मुनिकन्या ने कहा—'निस्सन्देह यह ठीक नहीं कि मैं झूठी निकलूँ। ७४-७८

शकुन्तला की उत्पत्ति

इसलिए मेरे जन्म की कथा यथातत्त्व (ठीक प्रकार से) सुनिए। हे कमलबाण के समान भूपाल ! बहुत दिन पहले एक तपोधन ने यहाँ पधारकर पिताजी का दर्शन किया। शिष्टाचार होने के बाद उन्होंने पूछा—"आप ऊद्ध्र्वरेता हैं, तो बतलाइए लड़की का जन्म कैसे हुआ"। तब पिताजी ने सारी बात उनको बतला दी। मैं भी उसी प्रकार आप

विश्वामित्रन्टॆ तपोविघ्नत्तॆ वरुत्तुवान्
विश्वमोहिनियाय मेनकतन्नॆशक्रन् ५
मन्मथमन्दमरुन्माधवमासादिये
निर्म्मलचन्द्रनोटुकूटवे नियोगिच्चान् । ६
कौशिकनवळॆक्कण्टाशया विवशना-
याशया धैर्यतपोबलङ्ङळाशु कळ-
ञ्ञायिरं संवत्सरं क्रीडिच्चुवनन्तोरु-
मायतविलोचनयाय मेनकयोटुं । ८
अक्कालं तपोबलमॊक्कवे नशिक्कया-
लुळ्ळकान्पिल् तत्वबोधमुदिच्चिचट्टवनप्पोळ् ९
पुष्करविलोचनतन्नॆयुमुपेक्षचॆ-
य्तुग्रमां तपस्सिनु कोप्पिट्टान् पण्टॆप्पोलॆ । १०
विश्वामित्रन्टॆ बीजं धरिच्च मेनकयुं
निश्शेषदेवकार्यं साधिच्चु पोकुन्नेरं ११
हिमवल्प्रस्थदेशे मालिनीतीरस्थले
कमलविलोचन पॆट्राळॆन्नरिञ्ञालुम् । १२
तापसबीजत्तिनु नाशमिल्लॆन्नुकण्टु
तापवुमकन्नवळ् वानुलोकवुं पुक्काळ् । १३
लाळिच्चु शकुन्तङ्ङळिवळॆप्पलकालं
पालिप्पानॆन्टॆ कैयिल् नल्किनार् शकुन्तङ्ङळ् । १४

को पूरी कथा सुनाऊँगी। विश्वामित्र के तप को बाधा पहुँचाने के लिए इन्द्र ने विश्वमोहिनी मेनका, कामदेव, मन्दमारुत, माधव मास और निर्मल चन्द्रमा को आज्ञा दी। १-६ कौशिक (विश्वामित्र) उसको (मेनका को) देखकर आशा के कारण बेबस हो गये। अपना धैर्य और तपोबल खो बैठे और दीर्घलोचना मेनका के साथ एक हज़ार वर्ष तक बन-बन में क्रीड़ा करते रहे। जब उनका सारा तपोबल नष्ट हो गया तब उनके मन में तत्त्वबोध का उदय हुआ और कमललोचना की उपेक्षा करके उन्होंने फिर पहले की ही तरह उग्र तप की तैयारी की। कमलाक्षी मेनका, जो विश्वामित्र का बीज धारण किये हुए थी, जब समस्त देवकार्य समाप्त करके लौट रही थी तब, हिमालय के एक ऊँचे भाग में, मालिनी नदी के तट पर, उसने एक सन्तान को जन्म दिया। ७-१२ यह समझकर कि तापस के बीज का नाश न होगा वह निश्चिन्त होकर

पेरिट्टु शकुन्तळयॆन्निवळ्क्कतिनाल् ञान्
भारिच्च मोदत्तोटु मकळायू वळर्त्तुन्नेन् । १५
नेरत्रे पऱञ्ञतन्नम्मुनियोट्टु तातन्
पारमार्त्थिकन् चॊन्नतॊक्क ञान् केट्ट मूलं १६
ऎन्नुटॆ जन्ममॆल्लामऱिञ्ञेनप्पोळ् ञानुं
निन्नोटु परमार्त्थं पऱञ्ञेनऱिञ्ञालुम् । १७

गान्धर्व्वविवाहम्

अक्कथ केट्टु तॆळिञ्ञक्कालं दुष्षन्तनु
पुष्करशरमेट्टु कन्यकयोटु चॊन्नान् । १
सुव्यक्तं राजपुत्रि नीयॆन्नुवन्निनितिनि
निर्व्याजं परिग्रहिच्चीटणमॆन्नॆयिप्पोळ् । २
ब्राह्मवुमार्षं दैवं प्राजापत्यवुं पुन-
रासुरं गान्धर्व्ववुं राक्षसं पैशाचवुं ३
वैवाहकर्म्ममॆट्टुविधमीवण्णमतिल्
क्ष्मावरन्मार्क्कु कॊळ्ळां गान्धर्व्वं राक्षसवुं । ४
दैवज्ञनाय मनुवीवण्णं चॊन्नमूलं
केवलं गान्धर्व्वंकॊण्टॆन्नॆ नी वरिक्कणं । ५

स्वर्गलोक चली गयी । शकुन्तों (पक्षियों) ने कुछ दिन तक उस सन्तान का लालन किया, फिर पालने के लिए मुझे समर्पण किया । इसलिए मैंने उसको शकुन्तला नाम दिया और बड़े प्रमोद के साथ उसको पुत्री की तरह पालता हूँ । पिताजी ने उस मुनि से जो कहा था वह सच था । सच्चे पिताजी की कही सभी बात मैंने सुनली थी, इसलिए मैंने अपने जन्म के सम्बन्ध में सब जान लिया । इसलिए मैंने आपसे सच ही कहा है । १३-१७

गान्धर्वविवाह

यह कथा सुनकर प्रसन्न होकर कमलबाण से व्यथित दुष्यन्त ने उस कन्यका से कहा । 'स्पष्ट है कि तुम राजकुमारी हो । इसलिए तुम अब बिना व्याज के मुझे स्वीकार करो । ब्राह्म, आर्ष, दैव, प्राजा-पत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, पैशाच—इस प्रकार आठ तरह के विवाह

अन्नेरं शकुन्तळ चॊल्लिनाळ् नृपनोटु
मन्नव ! होमद्रव्यमिविटॆयुण्टाय्वरुं । ६
वह्लियुमुपाध्यायन्तानुमुण्टल्लो पिन्नॆ-
यॆन्तिवयॊन्तुकॊण्टुमिल्ल वैषम्यमेतुं । ७
ऎन्नालुमॊरु दण्डं पारमुण्टरिञ्ञालुं
मन्नव ! पुनरतुमॆन्नोटु परयणं । ८
दण्डमाकुन्नतॆन्तु नेरे नी चॊल्लीटॆटो
पुण्डरीकाक्षि ! अतु पोक्कावोन्नल्लॆन्तुण्टो ? ९
पोक्कावोन्नल्लॆन्नत्वे तोन्नुन्नु पिन्नॆ नृप-
न्मार्क्कुण्टो निरूपिच्चाल्साद्ध्यमल्लातॆयॊन्तुं । १०
दुःखसाद्ध्यमो बाले केवलमसाद्ध्यमो
मय्क्कण्णि ! चॊल्लीटॆन्तॆन्नॆन्नोटु परमार्त्थं । ११

हैं[1]। उनमें क्षत्रियों के लिए गान्धर्व और राक्षस विवाह ठीक हैं। दैवज्ञ मनु के इस प्रकार के कथन के अनुसार तुम केवल गान्धर्व विधि से मुझसे विवाह करो। १-५ तब शकुन्तला ने राजा से कहा—हे राजन् ! हवन की सामग्री यहाँ उपलब्ध है। यहाँ वह्नि (अग्नि) भी है और उपाध्याय भी। इनके कारण कोई कठिनाई नहीं है। फिर भी एक बड़ी कठिनाई अवश्य है जिसके सम्बन्ध में भी आप कह दीजिए। (राजा ने कहा) क्या कठिनाई है, सीधे कह दो। हे कमललोचने ! ऐसा कुछ है जो हटाया नहीं जा सकता है ? मुझे लगता है कि ऐसा कुछ नहीं जो हटाया नहीं जा सकता है और फिर राजाओं के लिए असाध्य क्या है ? । वह क्या केवल दुःखसाध्य है या बिलकुल असाध्य है ? हे काजलयुक्त आँखवाली ! मुझ से परमार्थ बतलादो। तब वह बोली, वह क्या है यह न जानने से आपको दुःख न हो! विचार किया जाय तो दुःखसाध्य भी मुझे स्वीकार होगा। ६-१२

१ कन्या को अच्छे वस्त्र पहनाकर और आभूषणों से अलंकृत कर विद्वान् वर को प्रदान करना, यही ब्राह्म विवाह है। यज्ञ के अवसर पर कन्या को वस्त्रादि से सजाकर ऋत्विक् (पुरोहित) को प्रदान करना, यह दैव विवाह है। वर से एक या दो गोमिथुन लेकर उसको कन्याप्रदान करना, यही आर्षविवाह है। 'दोनों साथ धर्म करो" ऐसा नियम बतलाकर कन्यादान करना, यह प्राजापत्य विवाह है। कन्या के नातेदारों को या स्वयं कन्या को धन देकर उसका ग्रहण करना यह आसुर विवाह है। वर और कन्या का स्वेच्छा से संयोग, यह गान्धर्व विवाह है। मार-तोड़कर रोती चिल्लाती हुई कन्या को उसके घर से छीन ले जाना, यह राक्षस विवाह है। सोती हुई, मत्त या पागल स्त्री का एकान्त में उपगमन, यह पैशाच विवाह है और यही विवाहों में पापिष्ठ भी है। देखो-मनुस्मृति ३, २७-३४।

अँन्ततेंन्नड्रियाञ्ञु सन्तापमुण्टाकेण्ट
चिन्तिच्चाल् कृच्छ्रसाद्धयमेंङ्किलुं कोंळ्ळामल्लो । १२
निंन्नुटें पुत्रनायिट्टेंन्निलुण्टाकुन्नवन्
तन्नें नी राजावाक्किक्प्पिन्नें वाळिक्कामेंन्नु
अँन्नोटु सत्यं चेंय्किलरुतेंन्निल्लतानुं । १३
दुर्ग्गतियुण्टां वृथामैथुनत्तिन्नेंन्नेंन्नो
सल्गुणनिधे ! तवञान् पऱञ्ञीटेणमो । १४
धात्रीशनवळ्चोंन्न सत्यवुं चेंय्तुकोंटु-
त्तास्थया कृतयुगकालधर्म्मवुं चेंय्तु । १५
कान्तयां शकुन्तळतन्नेंयुं पुणर्न्नितु
गान्धर्व्वविधियालेंन्नड्रिक नृपोत्तम ! १६
चतुरंगिणियाय सेनयुमाय् वन्नु ञान्
कुतुकमोटॆ निन्नेंक्कोंण्टुपोंय्क्कोंळ्वेनेंन्नुं १७
समयंचेंय्तु नृपन्तन्नुटें राज्यं पुक्कान् ।
कमलाक्षियुं गर्भं धरिच्चाळन्नुतन्नें । १८
कण्वमामुनितानुमन्नेरं पोन्नुवन्नान्
कन्यक पेटियोटे नाणिच्चु निन्नाळल्लो । १९
दिव्यलोचनंकोंण्टु सर्व्ववुं कण्टु मुनि
दिव्यमानिनियाय पुत्रियोटरुळ्चेंय्तान् । २०

अगर आप शपथ करेंगे कि जो आप का पुत्र मुझसे पैदा होगा उसी को आप राजा बनायेंगे तो आप का प्रस्ताव मुझे अस्वीकार नहीं है। हे सद्गुणों की निधि ! वृथा मैथुन से दुर्गति होती है, यह मुझको आप से कहने की क्या आवश्यकता है ? राजा ने उसका वचन शपथपूर्वक स्वीकार करके सादर कृतयुग धर्म को स्वीकार कर लिया। हे राजवर ! इस प्रकार उन्होंने गान्धर्व विधि के अनुसार अपनी कान्ता शकुन्तला को अपनाया। "मैं चतुरंगिणी सेना के साथ आकर तुम्हें बड़े कौतुक के साथ ले जाऊँगा," यह कहकर राजा ने अपने राज्य में प्रवेश किया। उस कमललोचना शकुन्तला ने उसी दिन गर्भ धारण कर लिया और महामुनि कण्व भी उसी समय वापस आगये। कन्यका तो भयभीत और लज्जित हुई १३-१९ मुनि ने अपनी दिव्यदृष्टि से सब देख लिया और अपनी दिव्य और मानिनी पुत्री से कहा, "तुम्हारा कोई दोष नहीं है, खेद मत करो, मैंने अपने मन में जो सोचा था उसकी

एतुमे दोषमिल्ल खेदिक्कवेण्ट बाले !
साधिच्चु मनसि ञान् चिन्तिच्चतॊन्तु वन्नु । २१
मून्नु लोकवुं पुकळ्कॊण्टॊरु कुमारनॆ
मून्नु वत्सरं कॊण्टु पॆट्टितु शकुन्तळ । २२
पुष्पवृष्टियुं चॆय्तारर्भकन् पिरन्नप्पो-
ळप्सरस्त्रीकळॆल्लां तुटङ्ङी पाट्टुं कूत्तुं । २३
देवदुन्दुभिकळुं घोषिच्चङ्ङुण्टाय्वन्नु
देवकळिवन् चक्रवर्त्तियाय् वरुमॆन्नार् । २४
जातकर्म्मादिकळुं चॆय्तितु मुनिवरन्
जातनायवनॆल्ला विद्ययुं पठिप्पिच्चू । २५
तापसि शकुन्तळ नन्दननोटुं कूटि-
ब्भूपतितन्नॆच्चिन्तिच्चातुरयाय्वाळुन्नाळ् २६
निष्ठुरमृगङ्ङळॆ निग्रहिक्कयुमोरो
दुष्टराक्षसकुलं नष्टमाय् चमकयुं २७
पुष्टविक्रमत्तोटॆ तुटङ्ङी दुष्षन्तजन्
तुष्टिपूण्टितु मुनिवर्ग्गवुं द्विजन्मारुं । २८
द्वादशसंवत्सरं चॆन्नितु कुमारनुं
वेदशास्त्रादिकळुं पाठं चॆय्तुरच्चितु । २९

सिद्धि हुई, इतना ही हुआ है"। शकुन्तला ने तीनों लोकों में कीर्ति प्राप्त करनेवाले एक कुमार को तीन वर्षों में जन्म दिया। जब बच्चे का जन्म हुआ तब अप्सराओं ने पुष्पवृष्टि की और गाना-नाचना प्रारम्भ किया। देवों की दुन्दुभियों का घोष सुनाई दिया और देवों ने घोषित किया कि यह चक्रवर्ती होगा। मुनिवर ने उसके जातकर्म आदि संस्कारों का अनुष्ठान किया और उसको सभी विद्याओं को पढ़ाया। २०-२५ जब तापसी शकुन्तला अपने पुत्र के साथ राजा का ध्यान करती हुई दु:खित रहती थी तब दुष्यन्त के पुत्र ने क्रूर जन्तुओं का निग्रह करना और बड़े पराक्रम के साथ दुष्ट राक्षस कुलों को एक-एक करके नाश करना प्रारम्भ किया। मुनिवर्ग और ब्राह्मण बड़े प्रसन्न हुए। कुमार का बारहवाँ वर्ष पूरा हुआ। उसने अभ्यास करके सभी वेदों और शास्त्रों को कण्ठस्थ कर लिया। २६-२९

शकुन्तळयुटे भर्त्तृसमीपत्तेक्कुळ्ळ यात्र

तातनां मुनिवरन् पुत्रियोटरुळ्चेय्तान् :
नी तव भर्त्ताविनेच्चेन्नु काणणमिनि १
स्वातन्त्र्यं नारिमार्क्किल्लेन्नल्लो चौल्लीटुन्नु ।
तातन्तान् रक्षिक्कणं कौमारवयस्सिङ्कल् २
भर्त्तावु रक्षिक्कणं यौवनवयस्सिङ्कल्
पुत्रन् तान् रक्षिक्कणं वार्द्धक्यवयस्सिङ्कल् । ३
देवकळ्क्केल्लां विष्णु देवतयल्लो भूमि-
देवन्मार्क्केल्लामग्नितानुं ब्रह्मावुं दैवं । ४
लोकङ्ङळ्क्केल्लां दैवं ब्राह्मणरेन्नु नूनं
मूर्खनाकिलु भर्त्ता नारिमार्क्केल्लां दैवं ! ५
चेतसा वाचा वृत्या कर्म्मणा भर्त्ताविने-
स्सादरं शुश्रूषिक्क नल्लतु निङ्ङळ्क्केल्लां ६
अतिलुं पतिव्रतमाराकुं कुलस्त्रीकळ्-
क्कतिनुमीतेयोरु धर्म्ममिल्लरिक नी । ७
गतियुं वरुमिहलोकसौख्यवुं वरुं
पतिशुश्रूषणंकोण्टेन्नु चौल्लुन्नु वेदं । ८
पुत्रनुं नीयुं कूटिप्पोकणं मटियाते
वृद्धतापसन्मारुं शिष्यरुं तुणपोरुं । ९

शकुन्तला का अपने पति के पास जाना

शकुन्तला के पिता मुनिवर कण्व ने पुत्री से कहा—"अब तुम जाओ और अपने पति का दर्शन करो। कहा तो यही गया है कि नारियों के लिए स्वातन्त्र्य नहीं है", कौमारावस्था में स्त्री की पिता रक्षा करे, यौवनावस्था में पति रक्षा करे और वार्धक्य में पुत्र रक्षा करे। देवों के लिए विष्णु ही देव हैं और भूदेवों (ब्राह्मणों) के लिए के लिए अग्नि और ब्रह्मा ही देव हैं। निःसन्देह जनता के लिए ब्राह्मण ही देव हैं और मूर्ख ही क्यों न हो किन्तु पति ही नारियों के लिए देव है। मनसा, वाचा, वृत्त्या और कर्मणा पति की सेवा करना, यही तुमलोगों के लिए ठीक है। १-६ विशेषतः पतिव्रता कुलस्त्रियों के लिए इससे बढ़कर कोई धर्म नहीं है। वेद कहता है कि पति की सेवा से इस लोक में सुख प्राप्त होता है और परलोक में भी अच्छी गति प्राप्त होगी। इसलिए अब तुम बिना विलम्ब के अपने

तातनेप्पिरियुन्न दुःखं कोण्टवळ्प्पोळ्
चूतेलुंमुलतन्मेलिट्टिट्टु वीणीटुन्न- १०
नेत्रांबु तुटच्चभिवाद्यवुं चेय्तु तोळु-
तास्थया प्रदक्षिणं चेय्तु तन् पुत्रनोटुं ११
गद्गदाक्षरत्तोटु यात्रयुंचोल्लि मेल्ले
निर्ग्गमिप्पतिन्नाशु तुनिञ्ञु शकुन्तळ । १२
मुनियुं तनयने मटियिलेट्टुत्तुव-
च्चनुमोदत्तोटणच्चाश्लेषंचेय्तु नन्नाय् १३
तलयिल् पलवुरु चुम्बिच्चु चोल्लीटिनान्
पलनाळ् वाळ्क भुवि गुणवानाय् नीयेन्नुं । १४
पलवुमाशीर्व्वचनादिकळ्चेय्तु पिन्ने
कलशङ्ङळुं जपिच्चीटिनान् पिन्नेत्तन्टे १५
मकळेक्करंकोण्टु तटवि मन्दं मन्दं
सुखमाय् वरिकेन्नु परञ्ञोरनन्तरं १६
अश्रुक्कळ् पोळिक्कयुमुळ्ककनं विटुकयुं
निश्वासं वरिकयुं निस्सहं चिन्तिक्कयुं १७
मानुषभावंकोण्टु मामुनिक्कतुनेरं
मानसखेदं चेर्त्तुण्टायितेल्लेवेण्टु । १८
शीर्ण्णपर्ण्णार्ण्णोवायुफलमूलाशिकळाय्
तार्ण्णपल्यङ्क स्थलस्थण्डिलशायिकळाय् १९

पुत्र के साथ प्रस्थान करो, वृद्धतापस और मेरे शिष्य तुम्हारे साथ जायेंगे। तब शकुन्तला अपने पिता से वियोग होने के कारण स्तनों पर गिरते हुए आँसुओं को पोंछकर, अभिवादन, नमस्कार और सादर प्रदक्षिणा करके अपने पुत्र के साथ रुँधे हुए कण्ठ से विदा लेकर धीरे-धीरे घर से निकलने के लिए तैयार हुई। ७-१२ मुनि ने भी अपने पुत्र (नाती) को गोद में लेकर बड़े आनन्द के साथ छाती लगाया और बार-बार सिर पर चुम्बन करके उससे कहा—"अनेक वर्षों तक गुणवान् होकर पृथ्वी पर राज करो"। तदनन्तर अनेक आशीर्वाद देकर मङ्गलकलशों का जप किया। तत्पश्चात् अपनी पुत्री को हाथ से धीरे-धीरे स्पर्श करते हुए कहा—"सुख से रहो"। फिर क्या था, महामुनि के आँसू गिरे, धैर्य शिथिल हुआ, निःश्वास निकले, असह्य चिन्ता हुई, और अपनी मानवता के कारण उनके मन में खेद हुआ। १३-१८ तदनन्तर मुनिवर कण्व ने सूखे पत्र, जल,

शान्तमानसन्माराय् निर्ज्जितेन्द्रियन्माराय्
दान्तन्माराय् सन्ततं परमहंसन्माराय् २०
धमनीसमुदायसततगात्रन्माराय्
समवीक्षणन्माराय् तपसा कृशन्माराय् २१
वल्क्कलाजिनधरन्माराय् सुव्रतिकळा-
युळ्क्कनमोटु शक्तियुक्तधारिकळायि २२
निटिलत्तिङ्कलूद्ध्वं पुण्ड्रमुळ्ळवर् चिलर्
जटिलन्माराय् चिलर् मुण्डन्मारायुमुळ्ळ २३
मुनिमारेयुं निजशिष्यरामवरेयुं
तुणयाययच्चितु कण्वनां मुनिवरन् । २४
शैलप्रस्रवणङ्ङळ् वनङ्ङळ् नदिकळुं
शैलङ्ङळ् नितम्बङ्ङळ् कन्दरङ्ङळुं पिन्ने २५
राष्ट्रङ्ङळ् नगरङ्ङळाश्रमप्रवरङ्ङळ्
गोष्ठङ्ङळ् मुंख्यदिव्यक्षेत्रङ्ङळुद्यानङ्ङ- २६
ळेन्निव कटन्नुपोय् मध्याह्नकालत्तिङ्कल् ।
चेन्नितु महाराजगोपुरद्वारत्तोळं २७
ऐळार्त्थं शतक्रतुनिर्म्मितमाय पुर-
मैळिविळ्यर्त्थं मुन्नमळकापुरं पोले । २८
परिखापुराट्टोपतल्पङ्ङळ् पलतरं
पारणशाल भित्तिचित्रङ्ङळ् पलतरं २९

वायु, फल, मूल आदि खानेवाले तृण के विस्तर पर या नंगी भूमि पर सोनेवाले शान्तचित्त, इन्द्रियों को वश में रखनेवाले, दान्त, सदैव परमहंस की दशा में रहनेवाले धमनीसमुदाय (नाड़ियों) से व्याप्त शरीरवाले, सभी पर समदृष्टि रखनेवाले, तप के कारण दुबले, वल्कल और कृष्णाजिन धारण करनेवाले, व्रत रखनेवाले, धैर्य और आभ्यन्तर शक्ति से युक्त, माथे पर ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करनेवाले, अनेक जटाधारी, और अनेक मुण्ड-मुनियों को और अपने शिष्यों को रक्षा के लिए साथ भेज दिया । १९-२४ पर्वतों से निकलती हुई निर्झरिणियाँ, वन, नदियाँ, अनेक गिरि, पहाड़ी मैदान, गुफाएँ, अनेक राष्ट्र, नगरियाँ, अच्छे-अच्छे आश्रम, गोशालाएँ, महत्त्वपूर्ण देवालय, उद्यान, यह सब पार करके मध्याह्न में राजा के गोपुरद्वार तक पहुँचे, जहाँ वह नगर था जिसे इन्द्र ने ऐल (पुरूरवा) के लिए बनाया था, जैसे पहले ऐलविल (कुबेर) के लिए अलका बनायी गयी

शतघ्नि चक्रयन्त्रशतङ्ङळ् पलतरं
रथघ्नतरयन्त्रप्पालङ्ङळ् पलतरं ३०
हर्म्म्यप्रासादङ्ङळुं मण्डपवरङ्ङळुं
निर्म्मलपुण्यवीथि प्रपकळ् सभातलं ३१
कैलासशिखरौघाकारगोपुरङ्ङळुं
शैलसन्निभकरिप्रवरालयङ्ङळुं ३२
मन्दुरकळुं पत्तिमन्दिरङ्ङळुं वर-
सुन्दरीजनं वाळुं मन्दिरनिकरवुं ३३
चन्द्रिकाकरलसन्माळिकागणङ्ङळुं
चन्द्रिकाङ्कणङ्ङळुं नाटकशालकळुं ३४
द्वारतोरणपरिशोभितमाय पुरं
पारिटत्तिनु तॊटुकुरियॆन्नतुपोलॆ । ३५
पुष्करणिकळ् पलवुद्यानवनङ्ङळुं
पुष्कराक्षिकळ् वाळुमवरोधनङ्ङळुं ३६
स्वधर्म्मस्थन्माराय नानावर्ण्णाश्रमिकळ्
सुतदारङ्ङळोटु वाणीटुं गृहङ्ङळुं ३७
नित्यमुत्सवंकॊण्टु शोभिच्च मन्दिरङ्ङळ्
सत्यतल्परन्मारां वैश्यन्मार्गृहङ्ङळुं ३८
रत्नकाञ्चनधनधान्यौघसमृद्धियु-
मग्निहोत्रङ्ङळ् नल्ल पण्डितन्मारायुळ्ळोर् ३९

थी । २५-२८ अनेक प्रकार की खाइयाँ, प्रासाद, छज्जे, हाथीखाना और विविध भित्तिचित्र,शतघ्नियाँ, चक्र, विविध यन्त्र रथघ्न[1], यन्त्ररूप पुल, हर्म्य, महल, विविध श्रेष्ठ मण्डप, निर्मल और पावन वीथियाँ, प्रपायें, (पौंसराएँ), सभागृह, कैलास के सिखरों के समान गोपुर, पर्वत के समान हाथियों की शालाएँ, घुड़ासाल, सैनिकों के निवास स्थान, सुन्दरियों के रहने योग्य गृह, चान्दनी से चमकनेवाले प्रासाद, चान्दनी के आङ्गन, नाटकशालाएँ, इनसे और द्वार-तोरणों से परिशोभित पुर था, मानों पृथिवी के माथे पर लगा तिलक हो । २९-३५ अनेक तालावों, विविध उद्यानों, कमलाक्षियों के रहने योग्य अन्तःपुरों, अपने-अपने धर्म का पालन करनेवाले विविध वर्ण और आश्रम के अनुयायियों, पुत्र, पत्नी आदियों से विराजमान अनेक गृहों, प्रतिदिन उत्सवों से शोभित मन्दिरों, सत्य का पालन करनेवाले

१ एक प्रकार का प्रचीन शस्त्र ।

दानशीलन्माराय करुणार्द्रात्माक्कळुं
मानशीलन्माराय भटन्मारायुळ्ळोरुं ४०
सततमकार्यङ्ङळकलें वॅटिञ्ञुळ्ळो-
रधर्म्मभीरुक्कळाल् संपूर्णमाय राज्यं । ४१
स्वर्गवुमतिनोटु तुल्यमल्लेन्नु तोन्नुं
सत्गुणपरिपूर्णमेत्रयुं चित्रं पार्त्ताल् । ४२
पत्तनमद्ध्ये राजमन्दिरं मनोहरं
वित्तसञ्चयपूर्णमुत्तमसभायुतं । ४३
ब्राह्मणप्रवररुं भूपतिवीरन्मारुं
धार्म्मिकन्मारां धनपतिकळ् वैश्यन्मारुं ४४
सद्विजभक्तन्मारामुत्तमशूद्रन्मारुं
सद्वृत्तन्मारायुमट्टुमुळ्ळ वर्णिकळ्तामुं ४५
सूतन्मार् मागधन्मार् वन्दिकळ् गायकन्मार्
पादसेवकन्मारुं स्तुतिपाठकन्मारुं ४६
नर्त्तकन्मारुं नल्ल नर्त्तकीजनङ्ङळुं
उत्तमवाद्यङ्ङळे वदिक्कुन्नवर्कळुं ४७
आन, तेर्, कुतिर, कालाळाय, सैन्यङ्ङळु-
मानकपटहादि शंखनादङ्ङळोटुं ४८
आनन्दं वरुमारु सेविच्चु सदाकाल-
मानन्दं पारमुण्टामप्पुरि तन्निल् चेन्नाल् । ४९

वैश्यों के घरों, रत्न, सुवर्ण, धन-धान्य आदियों की समृद्धि, अग्निहोत्र का अनुष्ठान अच्छे-अच्छे विद्वानों, दानशीलों, करुणा से परिपूर्ण हृदयवालों, मानशील सैनिकों, और अधर्म से डरनेवालों से वह राज्य परिपूर्ण था। स्वर्ग भी उसके तुल्य नहीं प्रतीत होता था। वह सद्गुणों से परिपूर्ण था और देखने में बहुत सुन्दर था। ३६-४२ नगर के बीच में राजा का मनोहर प्रासाद था। जो धन के सञ्चय से परिपूर्ण था और जिसमें एक उत्तम सभागृह था। वहाँ श्रेष्ठ ब्राह्मण, वीर क्षत्रिय, धार्मिक धन के स्वामी वैश्य, अच्छे द्विजों की सेवा करनेवाले उत्तम शूद्र, और अनेक सदाचार रखनेवाले ब्रह्मचारी सूत (भाट), मागध (चारण), वन्दी, गायक, पादसेवक, स्तुतिपाठक, नर्तक और अच्छी-अच्छी नर्त्तकियाँ, उत्तम वाद्यों को बजानेवाले, तथा हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिक आदि भी थे जो अपने आनक (भेरी) और दुंदुभियों के साथ आनन्दप्रद सेवा करते

सुन्दरी शकुन्तळ नन्दननोटुं कूटि
मन्दाक्षभावत्तोटु मन्दं पोय् चेल्लुन्नेरं ५०
नन्दिच्चु कुमारनेक्कण्टवरेल्लावरु-
मिन्दुवो पुनरिवनिन्द्रनो कन्दर्प्पनो ५१
स्कन्दनो मुकुन्दनो चन्द्रचूडनो चोल्लि-
नेन्नेल्लामोरोजनं कण्टानन्दिक्कुंनेरं ५२
दुर्ज्जनबहुलमां नगरप्रवेशन-
मिज्जनत्तिनु योग्यमल्लेन्नु निरूपिच्चु ५३
निर्वत्तिच्चितु मुनिवर्गवुं शिष्यर्कळुं।
सुवृत्त शकुन्तळ सुपुत्रनोटुंकूटे- ५४
द्धरित्रीपति वाळुमास्थाने चेन्नुनिन्नाळ्।
चरित्रं कण्टु लोकर् बहुमानिच्चु पारं ५५
देवेन्द्रसदृशनां भर्त्तावुतन्नेक्कण्टु
भावनयाले वन्दिच्चीटिनाळ् शकुन्तळ। ५६
अच्छन्टे पादङ्ङळिल् वीणुटन् नमस्कार-
मिच्छया चेय्तीटुण्णी नीयेन्नु जननितान् ५७
चोन्नतु केट्टु नमस्करिच्चु दौष्यन्तियुं।
निन्नितु पितावुतन्नापादचूडं नोक्कि ५८

थे। अगर कोई उस नगरी में जाये तो उसे अपार आनन्द प्राप्त हो। ४३-४९ सुन्दरी शकुन्तला जब अपने पुत्र के साथ शर्माती हुई धीरे-धीरे जा रही थी तब सब लोग कुमार को देखकर प्रसन्न हुए और कहने लगे—"यह क्या चन्द्रमा है या इन्द्र है या कन्दर्प (कामदेव) है, या स्कन्द है, या मुकुन्द है या चन्द्रचूड़ (शिवजी) हैं? ऐसा कहकर सभी आनन्द अनुभव करने लगे। उस समय यह समझकर कि दुर्जनों से भरे इस नगर में प्रवेश करना हम लोगों के लिए ठीक नहीं है मुनिजन और शिष्यवर्ग लौट गये। पर सदाचारी शकुन्तला अपने पुत्र के साथ उस सभामंडप में पहुँच गयी जहाँ राजा दुष्यन्त विराजमान थे। उसका चरित्र देखकर लोगों ने बड़ा आदर किया। शकुन्तला ने तो देवेन्द्र के समान अपने पति को देखकर हृदय से वन्दना की। ५०-५६ "बेटा! पिताजी के चरणों में पड़कर सादर नमस्कार करो", माता की यह आज्ञा सुनकर दौष्णन्ति (दुष्यन्त के पुत्र) ने नमस्कार किया। और पिता को पैर से सिर तक देखने लगा। यह देखकर सब अत्यन्त चकित हुए।

निन्नवरतुकण्टु विस्मयं पूण्टारेटं ।
नन्निवनेन्नुतन्ने चोल्लिनारेल्लावरुं । ५९
मन्नवनुरचेय्तानन्नेरमवळोटु
नन्दननोटुंकूटे वन्न तापसि केळ् नी ६०
चोन्नतु तरुवन् ञानिल्ल संशयमेतुं
निन्नुटे मनोरथं चोल्लुक मटियाते- ६१
येन्नतु केट्टु चोन्नाळन्नेरं शकुन्तळ ।
मन्नवा ! तव सुतनेन्निलुल्पन्ननिवन् ६२
वन्नितु कुमारनु यौवनारंभकाल-
मिन्निनिच्चेय्तीटणं यौवराज्याभिषेकं । ६३
कण्वमामुनियुटे पर्ण्णशालयिल्निन्नु
मन्नवा ! समागमं नम्मिलुण्टायनेरं ६४
ऐन्नोटु चेय्तुतन्न सत्यवु मऴन्नितो
धन्यनाकिय भवानेन्नेयिन्नेन्नपोले ? ६५
ऐन्नतु केट्टु नृपनन्नेरमुरचेय्तान्
निन्नोटुकूटियुळ्ळ संगमं तोन्नीलेतुं ६६
इक्कथ नन्नुनन्नितेत्र वैचित्र्यमोर्त्तालु ।
निल्क्कलुं कणक्किनिप्पोकिलुं कणक्किनि । ६७
ओत्ततु चेय्तालुं नीयित्तरं पऴयात-
युत्तमसभातलत्तिङ्कल्निन्नसत्यङ्ङळ् । ६८

सभी ने कहा—'यह कुमार अच्छा है' । तब राजा ने उससे (शकुन्तला से) कहा—"हे तापसि ! जो अपने पुत्र के साथ आयी हो सुनो ! जो माँगोगी सो दूँगा, इसमें संदेह नहीं, इस लिए बिना संकोच के अपनी इच्छा बता दो ।" यह सुनकर शकुन्तला ने कहा—"हे भूपाल ! यह आपका पुत्र है जो मुझसे उत्पन्न हुआ है । इसका यौवन अब प्रारम्भ हो गया है । इस लिए इसका युवराज के पद पर अभिषेक कीजिए । ५७-६३ हे राजन् ! जब महामुनि कण्व की पर्णशाला में आपका और मेरा समागम हुआ था तब आपने जो शपथ किया था उसे आप भूल तो नहीं गये । जिस प्रकार आज आप मुझको ही भूल गये ?" यह सुनकर राजा ने उस समय कहा—"तुम्हारे साथ कोई संगम मुझे स्मरण ही नहीं है । यह अच्छा किस्सा रहा! यह बहुत ही विचित्र बात है । चाहे तुम खड़ी रहो चाहे चली जाओ, तुम्हारी खुशी है ! जो उचित है वही करो, पर इस

दुष्षन्तनृपवरनीवण्णमवळोटु
दुस्सहमायवाक्कु चॊऩ्ऩतु केट्टनेरं ६९
व्रीळयुं पूण्टुपारं दुःखवुं मुळ्ुक्कयाल्
सालभञ्जिकपोलॆ निऩ्ऩतु स्वल्पनेरं । ७०
संरंभरोषंकॊण्टु ताम्रमां नयनवुं
सौररश्मिकळ्पोलॆ तीक्ष्णमां तेजस्सोटुं ७१
प्रस्फुरमाणमायोरोष्ठसंपुटत्तोटुं
प्रस्फुलिङ्गङ्ङळोटुं कूटि नोक्कीटुंनेरं ७२
भूपति दहिच्चुपोमॆऩ्ऩु तोऩ्ऩीटुंवण्णं
तापसि निऩ्ऩु रण्टु नाळिकनेरं पिन्नॆ । ७३
स्वाकारं मऱच्चितु तेजसा शकुन्तळ
शोकमोटवनीशन्तन्नोटु चॊल्लीटिनाळ् । ७४
ऎन्तिनित्तरमिप्पोळॆन्नोटु पऱयुऩ्ऩु
चिन्तिक्क नृपवर ! मऱऩ्ऩीलॆऩ्ऩु नूनं । ७५
आत्मावे वञ्चिच्चीटुं चोरनुळ्ळॊरु पाप-
मात्मना निरूपिक्किल् मऱ्ऱॊरुवनुमुण्टो । ७६
आदित्यचन्द्रन्मारुमनलानिलन्मारु-
माकाशं भूमि जलं हृदयं यमन्तानुं
अहस्सुं रात्रितानुं रण्टु सन्ध्यकळ् धर्म्म- ७७

प्रकार इस उत्तम सभा में आकर असत्य न बोलो। ६४-६८ नृपवर दुष्यन्त की यह असह्य वाणी सुनकर शकुन्तला अत्यन्त लज्जित और दुःखित होने के कारण थोड़ी देर के लिए एक प्रतिमा की भाँति खड़ी रही। आवेग और क्रोध के कारण ताँबे की तरह लाल आँखों, सूर्य की किरणों की भाँति तीक्ष्ण तेज, स्फुरण करने वाले ओंठों और निकलते हुए अग्निकणों के साथ दो नाड़िका (घड़ी) तक देखती रही, मानो राजा जल ही जायगा। ६९-७३ तदनन्तर शकुन्तला ने अपने तेज से आकार बदल दिया और बड़े शोक के साथ राजा से कहा। "आप मुझसे क्यों इस प्रकार कहते हैं ? ज़रा सोचिए, हे नृपवर ! यह नहीं हो सकता कि आप भूल गये ! अगर सोचा जाय तो जो चोर अपनी ही आत्मा की वञ्चना करता है उससे बढ़कर कोई पापी नहीं है ? हे भूपाल ! सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वायु, आकाश, पृथिवी, जल, अपना हृदय, यमराज, दिन, रात, दोनों सन्ध्याएँ, धर्म इस प्रकार चौदह व्यक्ति, प्राणियों का किया जानते हैं, यह

मेन्निवर् पतिन्नालुपेरुमुण्टरिञ्ञिट्टु
मन्नव ! जन्तुवृत्तमेन्नतु धरिच्चालुं । ७८
प्राकृतपुरुषनेप्पोले नी सभयिङ्कल्
स्वाकृति मरच्चेन्नेस्सन्त्यजिच्चीटुन्नाकिल् ७९
उत्तमाङ्गवुं नूरुनुरुङ्ङ्ङ वीळुं निन-
क्कुत्तमपुरुषन्मार् सत्यत्ते लंघिक्कुमो ? ८०
तत्त्वचित्तन्माराय तत्त्वज्ञन्मारायुळ्ळोर्-
वृत्तत्ते निरूपिक्क चित्तत्तिल् नृपोत्तम ! ८१
पुन्नाममायिट्टुळ्ळ नरकत्तिङ्कल्निन्नु
तन्नुटे पिताविने त्राणं चेय्तीटुन्नवन्- ८२
तन्नुटे नाममल्लो पुत्रनेन्नुळ्ळ शब्दं
मुन्नमे विधातावु चोन्नतेन्नरिञ्ञालुं । ८३
पुत्रनाल् मोदं प्रापिच्चीटुन्नु पितृक्कळुं
पुत्रपुत्रनाल् पितामहन्मार् मोदिक्कुन्नु ८४
पौत्रपुत्रनाल् मोदं प्रपितामहन्मार्क्कु
पार्त्थिवशिखामणे वन्नुकूटुन्नु नूनं । ८५
भार्यग्याकुन्नतवळेवळ् मन्दिरदक्ष,
भार्यग्याकुन्नतवळेवळ् सत्प्रजापति । ८६
भार्यग्याकुन्नतवळेवळ् वल्लभप्राण,
भार्यग्याकुन्नतवळतिथिप्रिययल्लो । ८७

जान लीजिए। अगर आप एक प्राकृत (नीच) पुरुष की भाँति इस सभा में अपने स्वरूप को छिपाकर मुझे त्याग करेंगे तो आपका उत्तमांग (शीर्ष) सौ टुकड़े होकर गिरेगा। उत्तम पुरुष कभी सत्य का उल्लंघन नहीं करते हैं। हे राजवर ! जो तत्त्व का ध्यान करते हैं, जो तत्त्व को जानते हैं उनके वृत्त (व्यवहार) पर विचार कीजिए। ७४-८१ 'पुत्' नामक नरक से अपने पिता की रक्षा करनेवाले का नाम है यह 'पुत्र' शब्द। ब्रह्मा ने तो यह पहले ही कहा है। पुत्र से पितृजन प्रसन्न होते हैं, पुत्र के पुत्र द्वारा पितामह लोग प्रमोद प्राप्त करते हैं, पौत्र के पुत्र से प्रपितामहों की प्रसन्नता होती है, हे राजाओं के शिरोमणि ! इसमें कोई सन्देह नहीं है। ८२-८५ पत्नी कौन है ? वही जो घर में निपुण है। पत्नी कौन है ? जो अच्छी प्रजा को जन्म देती है। पत्नी कौन है ? जिसका अपना पति ही प्राण है। पत्नी कौन है ? जिसका मन अतिथि-सत्कार

पातियुं मनुष्यनु भार्ययेन्नरिञ्ञालुं ।
मेदिनीपते भार्य वलिय सखियल्लो । ८८
धर्म्मार्त्थकामङ्ङळ्क्कु कारणं भार्ययत्रे ।
कर्म्मिकळाकुन्नतुं भार्यावत्तुकळत्रे । ८९
बन्धुमानाकुन्नतुं भार्ययुळ्ळवनत्रे ।
सन्ततं गृहस्थन्मार् भार्यावत्तुक्कळत्रे । ९०
भार्यावत्तुक्कळत्रे सन्तोषिच्चीटुन्नतुं
भार्यावत्तुक्कळत्रे निश्चलश्रीमत्तुकळ् । ९१
विविक्तवासत्तिङ्कल् तुणयुं भार्ययत्रे
प्रवृत्तिक्कनुकरिक्कुन्नतुं भार्ययत्रे । ९२
अश्रान्तं प्रियं पऱयुन्नतुं भार्ययत्रे
विश्वास्यनाकुन्नतुं भार्ययुळ्ळवनत्रे । ९३
साक्षियायीटुन्नतुं भार्ययुळ्ळवनत्रे
मोक्षत्तेस्साधिप्पतुं भार्ययुळ्ळवनत्रे । ९४
परबीजत्तै ग्रहिच्चीटुन्न कुलस्त्रीकळ्
नरकं प्रापिक्कुन्नु कुलवुं नशिप्पिक्कुं । ९५
परनाल् जनितन्मारायुळ्ळ पुत्रन्मारे-
प्परन्मारेन्नुतन्ने चोल्लुकेवेण्टु नूनं । ९६
पुत्रन्मारायीटुन्न शत्रुक्कळवरल्लो
वृद्धनेन्नवमानिच्चेत्रयुं द्वेषिक्कयुं ९७

में लगता है। जान लीजिए कि पत्नी पुरुष का अर्धांश है। हे भूपाल! पत्नी पुरुष की बड़ी सखी होती है। धर्म, अर्थ और काम का कारण वही है। जिनके पत्नी है वे ही कर्मयोगी होते हैं। जिसकी भार्या है वही बन्धुमान् है। गृहस्थों के सदैव पत्नियाँ हुआ करती हैं। जिसकी पत्नी है वही हर्ष अनुभव करता है, जिसकी पत्नी है उसी की सम्पत्ति निश्चल रहती है। एकान्त वास में पत्नी ही साथी होती है, भार्या ही मनुष्य की प्रवृत्तियों का प्रोत्साहन करती है, ८६-९२ निरन्तर मीठी बात कहनेवाली भी पत्नी ही है। जिसके पत्नी है वही विश्वास का पात्र होता है, जिसके पत्नी है वही साक्षी बनता है। मोक्ष प्राप्त करने-वाला भी वही है जिसके पत्नी है। जो कुलस्त्रियाँ पराए बीज का ग्रहण करती हैं वे नरक जाती हैं, अपने कुल का भी नाश करती हैं। पर पुरुष के द्वारा पैदा किये गये पुत्र पराये ही हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। पुत्र के

धिक्करिक्कयुं चॊन्नालॊन्नुमे केळाय्कयुं
दुःखं वर्द्धिक्कुंवण्णं शुश्रूषिक्कयुं पक्षे ९८
मक्कळॆयुण्टाक्कुवान् ञङ्ङळ् पण्टुण्टो चॊल्लि
शिक्षिप्पानॆन्तुमूलं ञङ्ङळॆयिवनॆन्नु ९९
मन्मथविवशनायम्मयॆक्कण्टु मोहि-
च्चुन्मदमोटु चॆय्त सम्मतक्केटिन्निप्पोळ् १००
कल्मषमाकुन्नतु धर्म्मत्तॆ मऱक्कयाल्
मर्म्मङ्ङळ् ञङ्ङळोटु पऱञ्ञालॆन्तु फलं ? । १०१
इत्तरं भर्त्सिच्चीटुं परजातन्माराय
पुत्रन्मारवरॆयुं पालिक्कुं पितावॆटं । १०२
कण्टालुं पिपीलिकाजातिकळ्पोलुं पुन-
रण्डङ्ङळ् कळयातॆ संभरिक्कुन्नुवल्लो । १०३
कोकिलाण्डवुं भरिच्चीटुन्नु वात्सल्यत्ताल्
काकन्मारात्मीयमॆन्नोर्त्ततुमत्र चित्रं । १०४
सर्व्वज्ञनाय भवानिङ्ङनॆयिरिक्कुन्न
दिव्यनां पुत्रन्तन्नॆब्भरिच्चीटाय्वानॆन्ते ? १०५
मलयोद्भवमाय चन्दनत्तिलुमेट-
मलियुं त्वगिन्द्रियं सुतनॆप्पुल्कुन्नेरं । १०६
स्निग्धन्माराय वेश्यमारुटॆ शरीरवुं
स्निग्धमां वासोरत्नजलमॆन्निवट्टिलुं १०७

रूप में वे शत्रु ही हैं। वे अपने वृद्ध पिता का अपमान और द्वेष करते हैं, उसका तिरस्कार करते हैं, उसका कहना मानते ही नहीं; उसकी ऐसी सेवा करते हैं कि उसको दुःख प्राप्त हो। हमने तो पहले पुत्र पैदा करने के लिए नहीं कहा, हमको दण्ड देने का इसका क्या अधिकार है? ९३-९९ कामदेव के वश में आकर माँ पर मोहित होगया, और उन्माद में अकार्य किया जो अब, धर्म को भूलने के कारण, पाप बन गया। हमसे मार्मिक बातें कहने से क्या लाभ है? जो परबीज से उत्पन्न पुत्र पिता को इस प्रकार डाँटते हैं उनका भी पिता पालन करते हैं। आप देखें, च्यूटियाँ भी अपने अण्डों को बिना खोये ले जाती हैं। कौए कोयल के अण्डों को प्रेम से पालते हैं, कितने आश्चर्य की बात है! आप सर्वज्ञ होकर भी अपने ऐसे दिव्य पुत्र को क्यों नहीं स्वीकार करते हैं? पुत्र के आलिङ्गन से मनुष्य की त्वचा मलयपर्वत में उत्पन्न चन्दन

पुत्रदेहालिंगनमेत्रयुं सुखमेरुं ।
पुत्रस्पर्शत्तिल्परं स्पर्शनसुखमिल्ल १०८
कालु रण्टायुळ्ळोरिल् श्रेष्ठन् ब्राह्मणनल्लो
नालु कालुळ्ळवट्टिल् श्रेष्ठत्वं पशुविनुं १०९
गौरवमुळ्ळवरिल् श्रेष्ठत्वं गुरुविनुं
कारुण्यमुळ्ळवरिल् श्रेष्ठत्वं मुकुन्दनुं ११०
स्पर्शनवस्तुक्कळिल् श्रेष्ठत्वं तनयनुं
स्पर्शनसुखमनुभविक्क भवानिप्पोळ् १११
सुतन्टे मूर्द्धाविङ्कल् प्राणिच्चु मनुजन्मार्
प्रतिनन्दिच्चीटुन्नु नृपतिशिखामणे ! ११२
जातकर्म्मत्तिङ्कले वेदमन्त्रवुं तव
चेतसि पाठमल्लो मूढनल्लल्लो भवान् ? ११३
मृगयाविवशनायाश्रमत्तिङ्कल् वन्नु
सुखमे परिग्रहिच्चीलयो मुन्नं भवान् ११४
उर्व्वशी पूर्व्वचित्ति सहजन्ययुं पिन्ने
दिव्ययां मेनकयुं विश्वाचि घृताचियुं ११५
अप्सरस्त्रीकळिल्वच्चवर्कळरुवरु-
मद्भुताङ्गिकळतिल् ब्रह्मज मेनक तान् । ११६

के लेप से भी अधिक शीतल होती है । १००-१०६ प्रेम करनेवाली वेश्याओं का शरीर, कोमल वस्त्र, रत्न, जल, इन सभी वस्तुओं से पुत्रशरीर का आलिंगन ही सुखप्रद है । पुत्रर्स्पश से अधिक सुख देनेवाला कोई स्पर्श नहीं है । दो पाँववालों में श्रेष्ठ ब्राह्मण है, चार पाँववालों में श्रेष्ठ गाय है, गौरवयुक्तों में श्रेष्ठ गुरु है और कारुण्य जिनमें है उनमें मुकुन्द ही श्रेष्ठ हैं । जो स्पर्श करने योग्य वस्तुएँ हैं उनमें पुत्र ही श्रेष्ठ है, इस लिए आप अब स्पर्श-सुख का अनुभव कीजिए । हे नृपवर ! मनुष्य अपने पुत्र के शीर्ष को सूँघकर आनन्द अनुभव करते हैं । जातकर्म के वेदमन्त्र सब आपको कण्ठस्थ हैं, आप मूर्ख तो नहीं हैं । शिकार से थककर आप आश्रम में नहीं पधारे थे और मुझसे गान्धर्व विवाह नहीं किया था ? १०७-११४ अप्सराओं में उर्वशी, पूर्वचित्ति, सहजन्या, दिव्य मेनका, विश्वाची तथा घृताची, यह छह अप्सराएँ अत्यन्त सुन्दरी हैं । इनमें मेनका ही ब्रह्मजा है और वही मेरी माता है, यह जान लीजिए । ब्रह्मा का पुत्र है कुश, उसका पुत्र है कुशनाभ, उसका पुत्र है गाधि और उसका पुत्र

अम्मयायतुमिनिक्कोन्नतु धरिक्कणं
ब्रह्मनन्दनन् कुशन् तत्सुतन् कुशनाभन् ११७
तत्सुतनल्लो गाथि तत्सुतन् विश्वामित्रन्
तत्सुतयल्लो ञानुं पृथ्वीशतिलकमे । ११८
इङ्ङने शकुन्तळ चोन्न वाक्कुकळेल्ला-
मेङ्ङने परयुन्नु कालमो पोरायल्लो । ११९
अङ्ङने पोकतेल्लां दुष्षन्तनुतानुं पिन्ने
निर्म्मलगात्रितन्नोटीवण्णमुरचेय्तु । १२०
धार्ष्टचमेत्रयुं पारमुण्टु नारिकळ्क्कोन्नु
केट्टुकेळियेयुळ्ळू कण्टिट्टिल्लेवं मुन्नं । १२१
कुलटयाय नी वन्नेन्नोटु कुलीनये-
न्नलसालापं चेय्ततखिलमलमलं १२२
सुवर्णमणि मुक्ताभरणवस्त्रादिक-
ळवन्नु तरुवन् ञान् निनक्कु वेण्टुवोळं । १२३
पिन्ने नी निनक्कोत्तदिक्किनु पोय्क्कोळ्ळेणं
निन्निनिक्कालं कळिञ्ञीटाय्क वेरुते नी । १२४
पार्त्थिवसभयिङ्कल् नाणं कूटाते निन्नी-
वार्त्तकळिव चोन्नतोर्त्तु ञान् पोरुत्तीटां । १२५

है विश्वामित्र । हे भूपतिश्रेष्ठ, मैं उसी विश्वामित्र की पुत्री हूँ ।" इस प्रकार शकुन्तला ने जो बातें कीं वे सब कैसे कही जायँ, समय तो कम है। अच्छा, जाने दीजिए। तब दुष्यन्त ने निर्मल शरीरवाली शकुन्तला से इस प्रकार कहा। ११५-१२० "महिलाओं में असीम धृष्टता होती है ऐसा तो मैंने सुना अवश्य था, पर इससे पहले देखा न था। कुलटा होकर तुमने मुझसे कुलीन स्त्री की बातें व्यर्थ कहीं। बस, अब समाप्त करो। जितना भी तुम चाहती हो उतना सोना, मणि, मोती, आभूषण, कपड़े आदि मैं तुमको दूँगा। उसके बाद तुम इच्छा के अनुसार जहाँ भी चाहे चली जाओ। यहाँ रहकर व्यर्थ अपना समय न ख़राब करो। राजसभा में निर्लज्ज होकर जो बातें तुमने कहीं उनको मैं सह लूँगा। महिलाओं को तो 'वामा'[1] कहते ही हैं। नारीजन तो जन्म से ही काम-प्रधान होती हैं। १२१-१२६ वे अधिकांश अपने वश में नहीं हैं। उनका मन क्रोध

१ जो सीधी नहीं है।

वाममारेन्नल्लयो मानिनिमारेच्चोल्लू
कामतल्परमारायुण्टायी नारीजनं । १२६
मिक्कतुं परवशमारेन्नुमरियण-
मुळ्क्कान्पुं क्रोधंकोण्टु चञ्चलमायिट्टुळ्ळु । १२७
सत्यवुं पऱयुमारिल्लवरोरुनाळुं
मिथ्यापवादं कण्वनुण्टाक्किच्चमय्क्केण्टा । १२८
वन्धकियल्लो तव जननी मेनकयुं
सन्तति निर्म्माल्यत्तेक्कणक्केयुपेक्षिच्चाळ् । १२९
कोकिलनरिपोले नी परभृतयल्लो
पोक वैकाते निन्नेक्काण्कयिलिच्छयिल्ल । १३०
भोगलोलुपयाय पुंश्चलि नीयेन्नेल्लां
रागहीनतयोटे राजावु पऱञ्ञप्पोळ् १३१
सुन्दरि शकुन्तळ पिन्नेयुमुरचेय्ताळ्
निन्दावाणिकळ् केट्टु मन्दाक्षभावत्तोटुं । १३२
कटुकिन्मणिमात्रमुळ्ळोरु परदोष-
मुटने काणुन्नु नी निन्नुटे दोषं पिन्ने १३३
कण्टालुं गजमात्रं काणुन्नीलेतुमतु
पण्डितन्मार्क्कुपोलुमुळ्ळोरु शीलमत्रे । १३४
निन्नुटे जन्मत्तेक्काळ् श्रेष्ठमेन्नुटे जन्मं
मन्निटत्तिङ्कलेन्नि निनक्कु चरिक्कामो । १३५
मन्नव ! भूविङ्कलुमन्तरीक्षत्तिङ्कलुं
भेदमेन्नियेचरिच्चीटामिन्निनिक्कोटो । १३६

से चञ्चल रहता है। सच तो वे कभी बोलती ही नहीं। कण्वमुनि मेरे ऊपर झूठा अपवाद न लगायें। तुम्हारी माँ तो एक वेश्या है जिसने अपने संतान को निर्माल्य की भाँति त्याग कर दिया। कोयल की स्त्री की भाँति तुम पराए की पाली हो, जल्दी चली जाओ, अब मुझे और देखने की इच्छा नहीं है। तुम केवल एक भोग की लालसावाली कुलटा हो।" जब राजा ने इस प्रकार की भावहीन बातें कीं तब सुन्दरी शकुन्तला ने अपनी निन्दा सुनकर लज्जा के साथ कहा—१२७-१३२ "सरसों के कण के तुल्य परदोष को तुम जल्दी देख लेते हो। अपना दोष जो हाथी के बराबर है, उसे तो देखते ही नहीं, यह प्रवृत्ति पण्डितों तक में दिखाई देती है। तुम्हारे जन्म से मेरा जन्म कहीं श्रेष्ठ है।

भेदवुं नम्मिलॆत्र पारमुण्टोर्क्कुंतोरु
चेतसि विचारिक्क भूपतितिलकमे ! । १३७
मेरुवुं कट्टुकुमुळ्ळन्तरमुण्टु नम्मिल्
सारज्ञनल्लॊट्टुमोर्त्तोळं धात्रीश भवान् । १३८
एतानुं विचारमुण्टॆन्नाकिलॆन्नोटितु
भूदेवेन्द्रन्मार् केळ्क्कॆच्चॊल्वानिल्लवकाशं १३९
निन्नुटॆ पूर्व्वपितामहनामायुन्नामा-
तन्नोळं महत्वमुण्टायिट्टिल्लारुमवन् १४०
तन्नुटॆ जन्मं केट्टीट्टिल्ले नी नृपोत्तम ! ।
मुन्नमादिये शशाङ्कान्वयजातनाया- १४१
नुर्व्वीशन् पुरूरवा तल्सुतनायिट्टव-
नुर्व्वशि पॆट्टुण्टायिट्टॆन्नतोर्त्तुरचॆय्क । १४२
अद्भुतपराक्रममुळ्ळ राजाक्कन्मारु-
ण्टप्सरस्त्रीकळ् पॆट्टिट्टुत्तममुनिमारुं १४३
मातृदोषंकॊण्टिल्ल दिव्यन्माक्कॊरु दोषं
मेदिनीपते तव चेतसि निरूपिक्क । १४४
कण्णाटि काण्मोळवुं तन्नुटॆ मुखमेटं
नन्नॆन्नु निरूपिक्कुमॆत्रयुं विरूपन्मार् १४५

पृथिवी को छोड़कर क्या आप और कहीं सञ्चार कर सकते हैं ? हे भूपाल ! मैं तो भूमि तथा अन्तरिक्ष दोनों में बराबर संचार कर सकती हूँ। आप और मुझ में बहुत भेद है। हे राजवर, इस पर आप विचार करें। मेरु और सरसों का भेद आप और मुझ में है। हे भूपाल, विचार करने पर आप बिलकुल नासमझ मालूम होते हैं। १३३-१३८ अगर आप थोड़ा भी विचारशील होते तो ब्राह्मणों के सामने मुझसे इस प्रकार न बोलते। आपके परदादा आयु के समान कीर्ति किसी ने प्राप्त नहीं की है। हे राजवर ! क्या आपने उनके जन्म के सम्बन्ध में नहीं सुना है ?। पहले तो चन्द्रवंश में राजा पुरूरवा हुए और उनके पुत्र के रूप में उर्वशी ने आयु को जन्म दिया। यह सोचकर आप बोलिए। अद्भुत पराक्रम वाले अनेक राजा और उत्तम मुनिवर हैं जिनको अप्सराओं ने जन्म दिया है। माता के दोष से दिव्य पुरुषों का दोष नहीं होता है ? हे भूपाल, आप इस बात पर विचार कीजिए। १३९-१४४ ऐसे कुरूप भी हैं जो दर्पण (आइना) देखने के पहले अपने

मट्टुळ्ळजनङ्ङळ्क्कु कुट़ङ्ङळ् पऱ्ञीट्टुं
मुट्टुतन्नुटे कुट़मोन्ऱिऱ्यिक्कयुमिल्ल । १४६
कुट़मिल्लातजनं कुट़मुळ्ळवरेयुं
चेट्टु निन्दिक्कयिल्ल तम्मुटे गुणङ्ङळाल् । १४७
मत्तेभन् पांसुस्नानंकोण्टल्लो सन्तोषिप्पु
नित्यवुं स्वच्छजलंतन्निले कुळिच्चालुं । १४८
सज्जननिन्दकोण्टे दुर्ज्जनं सन्तोषिप्पू
सज्जनत्तिनु निन्दयिल्ल दुर्ज्जनत्तेयुं । १४९
क्षीरमांसादि भुजिच्चीटिलुममेध्यत्त
प्पारातें भुजिक्केणं सारमेयङ्ङळ्क्केल्लां । १५०
सत्यधर्म्मादिवेटिञ्ञीटिन पुरुषने
क्रुद्धनां सर्प्पत्तेक्काळेट्वुं पेटिक्कणं । १५१
नास्तिकन्मारायुळ्ळोर् तङ्ङळुमेल्लां पुन-
रास्तिकन्मारो पऱ्येणमेन्निल्लयल्लो । १५२
नास्तिकन्मारायुळ्ळोरसत्यवादिकळि-
लास्थया वसिक्कुन्नु कलियेन्तऱिञ्ञालुं । १५३
निर्म्मलमनस्सोटुं धर्म्मचारिकळायोर्
तम्मोटङ्ङङ्ङुमटुत्तीटुकयिल्ल कलि । १५४
मूर्खनामवनोटु पण्डितन् शुभाशुभ-
माख्यानं चेय्ताल् मूर्खनशुभं ग्रहिच्चीटुं । १५५

मुख को सुन्दर समझते हैं। औरों के दोष बतलाया करते हैं और अपने दोष तो जानते ही नहीं। दोषों से रहित लोग दुष्टों की भी निन्दा नहीं करते हैं, उनके गुण ही इसका कारण हैं। प्रतिदिन स्वच्छ जल से नहाने-वाला भी मदयुक्त हाथी मिट्टी में स्नान करके ही सन्तुष्ट होता है। दुर्जन तो सज्जनों की निन्दा करके ही सन्तुष्ट होता है और सज्जन तो दुर्जनों की निन्दा नहीं करता है। १४५-१४९ दूध, मांस आदि खाकर भी कुत्ते छिपकर विष्ठा खा लेते हैं। सत्य, धर्म आदि-रहित पुरुष से क्रुद्ध साँप की भाँति डरना चाहिए। जो नास्तिक हैं वे अपने को आस्तिक कहें, यह तो होता नहीं, जो नास्तिक और असत्य बोलनेवाले हैं उनके प्रति कलि बड़ा आदर प्रदर्शित करता है। जो शुद्ध मन के हैं और धर्म का आचरण करते हैं उनके निकट तो कलि कभी जाता ही नहीं। अगर विद्वान् किसी मूर्ख से शुभ और अशुभ की चर्चा करे तो मूर्ख अशुभ को

अन्नवुं पुरीषवुं कूटवे नल्कीट्टुकिल्
तिन्नीटुं पुरीषत्तॆप्पन्निरयॆन्नरिञ्ञालुं । १५६
नल्लनायिरिप्पवन् नल्लतु ग्रहिच्चीटुं
वॆळ्ळत्तॆ वॆटिञ्ञु पालन्नमॆन्नतु पोलॆ । १५७
दुर्ज्जनं चॊल्लीटुन्नु सज्जनत्तेयुमॆल्लां
दुर्ज्जनमॆन्नतिनिक्कॆन्नयुं चित्रमोर्त्ताल् । १५८
सज्जनमाकुन्नतु तङ्ङळॆन्नाक्कीटुन्नु
दुर्ज्जनमाकात्तवरॆन्नरिञ्ञतुमूलं । १५९
इत्तरमॆन्तिन्नु ञान् वळरॆप्परयुन्नु
तत्वमायतु परञ्ञीटुवन् केळ्क्कुन्नाकिल् । १६०
शतकूपत्तिल् परं वापियॆन्नरिञ्ञालुं
शतवापियिल् परं यागमॆन्नॊन्नु केळ्प्पू । १६१
शतयागत्तिल् परं पुत्रनॊन्नल्लो नूनं
शतपुत्ररिल् परं सत्यमॊन्नॆन्नु केळ्प्पू । १६२
सहस्रमश्वमेधत्तोटॊरु सत्यं तन्नॆ
सहस्रपत्रोळ्भवन् तूक्कि पण्टॆन्नु केळ्प्पू । १६३
अन्नॆरॆत्तूङ्ङियतु सत्यमॆन्नरिञ्ञालुं
मन्नव ! सत्यत्तॆक्काळ् वलुतल्लॊन्नुमोर्त्ताल् । १६४
सर्व्ववेदवुमॊक्क नित्यवुं जपिक्किलुं
सर्व्वतीर्थङ्ङळिलुं नित्यवुं कुळिक्किलुं । १६५

ही ग्रहण करेगा। अगर सुअर को अन्न और विष्ठा दोनों ही दिये जायँ तो वह विष्ठा ही को खायेगा, । १५०-१५६ जो स्वयं अच्छा है वह अच्छे को ग्रहण करेगा जैसे हंस पानी को छोड़कर दूध को ग्रहण कर लेता है। दुर्जन तो सज्जन को भी दुर्जन बतलाते हैं, यह विचित्र बात है। और अपने ही को सज्जन बता देते हैं और जो अपने से भिन्न हैं उनको दुर्जन। अब अधिक कहने से क्या लाभ है ? अगर आप सुनेंगे तो तथ्य बतला दूँगी। सौ कुओं से एक तालाब अधिक है। सौ तालाबों से एक यज्ञ अधिक है। कहा जाता है कि सौ यज्ञों से एक पुत्र अधिक है और सौ पुत्रों से सत्य अधिक है। १५७-१६२ सुना जाता है कि पूर्वकाल में ब्रह्मा ने एक हजार अश्वमेधों को सत्य के साथ तोला। उस समय सत्य ही अधिक भारी निकला। हे राजन् ! सत्य से बढ़कर कुछ भी नहीं है। सभी वेदों का प्रतिदिन पाठ करके और सभी तीर्थों में प्रति दिन स्नान करके सत्य बोलने के फल का हज़ारवाँ

सत्यत्तिन् फलं सहस्रांशमिल्लङिङ्ञालुं
सत्यत्तिल् परमोरु धर्म्ममिल्लोक्कणं नी । १६६
अन्नतुपोलेतन्ने कण्टुकोळ्क सत्यवुं
मन्नव ! निन्नोटेरे ञान् परञ्ञीटेणमो ? । १६७
अन्नेल्लां शकुन्तळ परञ्ञोरनन्तरं
विण्णिल्निन्नशरीरि तन्नुटे वाक्यं केट्टु । १६८
भरिच्चु कोळ्क तव पुत्रने वैकात नी
सुरस्त्री समयाय कौशिकपुत्रियोटुं । १६९
भरतनेन्न नाममतिनालन्नु वानोर्
धरणीपतियोटु चोन्नतु केट्टमूलं । १७०
कल्याणघोषत्तोटुं कैक्कोण्टु शकुन्तळ
वल्लभनोटुं कूटि सन्तोषं प्रापिच्चप्पोळ् । १७१
भरतन्तन्ने नाट्टिन्नभिषेकवुं चेय्तु
परिपालिच्चु राज्यं पलनाळ् दुष्षन्तनुं । १७२
पिन्नेप्पोय् विण्णिल् पुक्कु मेनकयोळिच्चुळ्ळ-
विण्णवर्नारिमारोटोन्निच्चु मरुविनान् । १७३

हिस्सा भी नहीं प्राप्त होता है। सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। सत्य को इस दृष्टि से देखिए हे राजन् ! मुझे आपसे अधिक कहने की क्या आवश्यकता है ?" शकुन्तला के इस प्रकार कहने के बाद आकाश से एक अशरीरी (बिना शरीर की) वाणी सुनाई दी। "अप्सरा के समान विश्वामित्र की पुत्री के साथ अपने पुत्र का भरण (पालन) करो" १६३-१६९ देवों के इस प्रकार राजा से कहने के कारण उसका नाम 'भरत' हुआ। राजा ने बड़े शुभ समारोह के साथ शकुन्तला को स्वीकार किया। वह भी अपने पति के साथ सुख से रहने लगी। दुष्यन्त ने भरत को युवराज के पद पर अभिषेक करके अपने राज्य का अनेक वर्षों तक परिपालन किया। तत्पश्चात् जब स्वर्ग गये तब मेनका को छोड़कर अन्य अप्सराओं के साथ सुख से रहे। १७०-१७३

भरतन्टे राज्यभरणं

तदनु भरतनां धरणीपतिवीरन्
सदयं प्रजकळेप्परिपालिच्चु नन्नाय् १
इन्द्रनेप्पोले नूरु यागवुं चेय्तु भूमि-
क्किन्द्रनाय् कण्वमुनितन्नेयुं गुरुवाक्कि २
पद्मङ्ङळुटे सहस्रार्त्थदक्षिणयुं चे-
य्तुल्पलरिपुकुलकीर्त्तियुं वर्द्धिप्पिच्चान् । ३
आत्मजन्मारे परस्त्रीकळिलुल्पादिच्चा-
नात्मानुरूपन्मारल्लेन्नु कण्टुळत्तापत्ताल् ४
पिन्नेयुं पलपलयागङ्ङळ् चेय्तशेषं
नन्दनन् भूमन्युवेन्नुण्टायान् प्रसिद्धनाय् । ५
भूमन्युतनयनाय् वितथनुण्टाय्वन्नु
प्रमदमारिल् सुहोत्रादिकळ् नाल्वरुण्टा- ६
यवरिल् सुहोत्रनामग्रजनायि राज्य-
मवनियन्नु चैत्ययूपलक्षणयायाळ् । ७
स्वर्ग्गलोकत्तिल् नल्लू भूतलमेन्नाक्कियान्
दुर्ग्गवुमुरप्पिच्चु जयिच्चु भूलोकवुं । ८
ऐक्ष्वाकियाय भार्यतन्निलात्मजन्मारे
श्लाघ्यन्मारायि मूवर् तम्मेयुमुल्पादिच्चान् । ९

भरत का राज्य-पालन

तदनन्तर वीर राजा भरत ने बड़ी दया के साथ अपनी प्रजा का परिपालन किया और इन्द्र के समान एक सौ यज्ञों का अनुष्ठान करके पृथिवी का इन्द्र बनकर मुनि कण्व को अपना गुरु बनाया, जिनको उन्होंने एक सहस्र पद्म दक्षिणा के रूप में देकर चन्द्रवंश की कीर्ति बढ़ायी। परस्त्रियों में पुत्र पैदा करके देखा कि वे अपने समान नहीं हैं, इस लिए पछताकर फिर अनेक यज्ञों का अनुष्ठान करने के बाद भूमन्यु नामक एक प्रसिद्ध पुत्र का जन्म हुआ। फिर भूमन्यु का तनय वितथ पैदा हुआ और उनकी स्त्रियों में सुहोत्र आदि चार पुत्र हुए। १-६ उनमें सुहोत्र ही ज्येष्ठ थे, इस लिए राज्य उनका हुआ। उनके समय में पृथिवी चैत्यों (यज्ञशालाओं) और यूपों से भरी थी। उन्होंने ऐसा यज्ञ किया कि स्वर्ग से भूमि ही श्रेष्ठ सिद्ध हुई। फिर दृढ़ दुर्ग बनाकर सारी पृथ्वी जीत ली।

अजमीढनुं सदामीढनुं पुरुमीढ-
नजमीढाख्यनतिलग्रजन् वाणु राज्यं । १०
अवनुमारुमक्कळ् मून्नु पत्निकळ् पॆट्टि-
ट्टवरिल् ज्येष्ठनृक्षन् वाणितु पिन्ने राज्यं । ११
ऋक्षनु तनयनाय् संवरणनुमुण्टाय्
कैक्कॊण्टान् तपतियां मित्रपुत्रियेयवन् । १२
अंगारवर्ण्णोपाख्यानत्तिलृक्षन्टे कथ
मंगलमते ! जनमेजय ! चॊल्लीटुवन् । १३
तपति पॆट्टुण्टायि कुरुवां नरपति
तपसा कुरुक्षेत्रं निर्म्मिच्चतवनल्लो । १४
विश्वपालकन्मारायञ्चु पुत्रन्मारव-
नश्ववानभिश्वानुं पिन्नेवन् चित्ररथन् । १५
जनरञ्जनकरनाकिय मुनितानुं
जनमेजयन्तानुमुण्टायारतुकालं । १६
अवरिलभिश्वानु पुत्ररायॆट्टुपेरु-
ण्टवर्कळेल्लावरुं प्रसिद्धगुणवान्मार् । १७
नामङ्ङळ् परीक्षित्तुं शबलाश्वनुमभि-
राजनुं विराजनुमश्चामन् बलाश्वनुं । १८
आरामन् चित्रश्रवावेळामन् धर्म्मकरन्
जिन्वानॆन्नॆट्टामवन् धन्यन्मारिवरॆल्लां । १९

अपनी पत्नी ऐक्ष्वाकी में उनके तीन श्लाघ्य पुत्रों का जन्म हुआ । उनके नाम अजमीढ, सदामीढ और पुरुमीढ थे, जिनमें अजमीढ ही ज्येष्ठ थे जिन्होंने राज्य किया । उनकी तीन पत्नियों से छः पुत्र हुए । उनमें ऋक्ष ही ज्येष्ठ था, जिसने राज्य किया । ऋक्ष का पुत्र संवरण हुआ जिसने मित्र (सूर्य) की पुत्री तपती से विवाह किया । ७-१२ हे मंगलमति जनमेजय! अंगारवर्णोपाख्यान में ऋक्ष की कथा सुनाऊँगा । तपती ने राजा कुरु को जन्म दिया जिसने अपने तप से कुरुक्षेत्र निर्माण किया । उनके विश्व के पालक पाँच पुत्र हुए अश्ववान्, अभिश्वान्, तदनन्तर चित्ररथ, जनता की प्रीति करनेवाला मुनि, और जनमेजय । उनमें से अभिश्वान् के आठ पुत्र हुए जो सब विख्यात और गुणवान् थे । उनके नाम हैं—पहला परीक्षित् दूसरा शबलाश्व, तीसरा अभिराज, चौथा विराज, पाँचवाँ बलाश्व, छठा चित्रश्रवा, सातवाँ धर्मकर और आठवाँ जिन्वान् । ये सब के सब अत्यन्त यशस्वी

अवरिल् परीक्षित्तिन्नेळु पुत्रन्मारुण्टा-
यवरिलग्रजन्मा जनमेजयनल्लो । २०
कण्वसेननुमुग्रसेननुं चित्रसेन-
निन्द्रसेननुं सुषेणाख्यनुं भीमसेनन् । २१
जनमेजयन्तनिक्कॊट्टु पुत्रन्मारुण्टाय्
धृतराष्ट्रनुं पाण्डु बाल्हीकन् निषधनुं २२
अश्वामन् जांबुनदनाऴामन् कुण्डोदर-
नेळामन् पदातियुमॆट्टामन् वसातियुं । २३
धृतराष्ट्रनु पतिम्मूम्न्नु पुत्रन्मारुण्टा-
यधिकं तपोबलमुण्टवर्क्कॆल्लावर्क्कुं । २४
अतिनाल् विरक्तन्माराय् वन्नारवरॆल्लां
पृथिवीपति भोगं तुच्छमॆन्नुऱय्ककयाल् । २५
अक्कालं परीक्षित्तिन् पुत्ररिलवरजन्
विख्यातन् भीमसेनन् भूपतियायानल्लो । २६
उत्सवं प्रजकळ्क्कु वर्द्धिच्चुवरुंवण्णं
तत्सुतनां प्रतीपाख्यनुमुण्टाय्वन्नु । २७
भूवरन् प्रतीपनु मून्नु पुत्रन्मारुण्टाय्
देवापियॆन्नुं पिन्नॆशन्तनु बाल्हीकनुं । २८
देवापि तपस्सिनु कोप्पिट्टान् चॆऱियन्ने
देवसन्निभनवन् दीर्घायुष्मतां वरन् । २९

थे । १३-१९ उनमें से परीक्षित् के सात पुत्र हुए । उनमें जनमेजय ज्येष्ठ था । अन्य पुत्रों के नाम थे कण्वसेन, उग्रसेन, चित्रसेन, इन्द्रसेन, सुषेण और भीमसेन । जनमेजय के आठ पुत्र हुए जो इस प्रकार हैं—धृतराष्ट्र, पाण्डु, वाल्हीक, निषध, जाम्बुनद, कुण्डोढर, पदाति और वसाति । धृतराष्ट्र, के तेरह पुत्र हुए; वे सभी अधिक तपोबल वाले थे २०-२४ इस लिए उन सब ने निश्चय किया कि राजा का भोग तुच्छ है और सबके सब विरक्त हुए । अत एव परीक्षित् का सब से छोटा पुत्र विख्यात भीमसेन राजा हुआ । उसका प्रतीप नाम का पुत्र हुआ जिसके द्वारा प्रजा का आनन्द बढ़ा । राजा प्रतीप के तीन पुत्र हुए, देवापि, शन्तनु और वाल्हीक । देवापि ने बाल्यावस्था में ही तपस्या की तैयारी की । वह देवतुल्य और चिरंजीवियों में श्रेष्ठ था । २५-२९ आगे चलकर सोमवंश उनके द्वारा ही चला । शन्तनु ने ही राजा बनकर राज्य किया । राजा भरत के

सोमवंशवु मेलिलवनालुण्टाय्वन्नु
भूमिपालकनायि शन्तनु वाणानल्लो । ३०
भरतमहीपतितन्नुटे गुणङ्ङळाल्
परञ्ञीटुन्नु लोकर् भारतमेन्नुतन्ने । ३१
भरतान्वयत्तिङ्कलुण्टाय राजाक्कन्मार्
पैरिकप्रसिद्धन्मार् देवतुल्यन्मारल्लो । ३२
संभवपर्व्वंतन्निल् नाल्पतद्ध्यायमिप्पो-
ळिन्पमोटुरचेय्तेन् कळिञ्ञु शाकुन्तळं । ३३

शन्तनुविन्टे उल्भवं

सन्तोषत्तोटुं चेवितन्नु केट्टीटुन्नाकिल्
शन्तनुविन्टे जन्मं संक्षेपिच्चरियिक्कां । १
विख्यातगुणंतेटुमिक्ष्वाकुवंशत्तिङ्कल्
मुख्यनाय् महाभिषक्केन्नोरु नृपनुण्टाय् । २
सहस्रशतसंख्यमश्वमेधादिकोण्टु
सहस्राक्षने प्रसादिप्पिच्चानवन् नन्नाय् । ३
अतिनाल् स्वर्ग्गत्तिङ्कल् सुखिच्चु वसिक्कुन्नाळ्
त्रिदशन्मारुं मुनिमारुमायोरुदिनं ४
चतुराननन्तन्नेस्सेविप्पान् चेन्ननेरं
त्रिदशनदितानुमविटेक्केळुन्नळ्ळि । ५

गुणों के कारण लोग इस देश को भारत कहते हैं। जो राजा भरत के वंश में हुए वे बड़े विख्यात और देवों के समान थे। अब मैं (वैशम्पायन) संभवपर्व के चालीस अध्याय बता चुका हूँ और शकुन्तलोपाख्यान समाप्त हो गया। ३०-३३

शन्तनु का उद्भव

अगर आप सन्तोष के साथ सुनेंगे तो मैं संक्षेप में शन्तनु का जन्म वताऊँगा। प्रसिद्ध गुणवाले इक्ष्वाकु-वंश में महाभिषक् नाम का एक प्रमुख राजा हुआ। उसने एक लाख अश्वमेध यज्ञों के द्वारा इन्द्र की अच्छी तरह से प्रीति प्राप्ति की। इस लिए जब वह स्वर्ग में सुख से रहता था तब एक दिन देव और मुनि ब्रह्मा की सेवा में उपस्थित हुए।

मन्दाक्षभावत्तोटुं सुन्दरि मन्दाकिनि
मन्दमाय् वरुन्नेरं मन्दमारुतनप्पोळ् ६
अंबरं कळञ्ञतुकण्टवाङ्मुखन्मारा-
यंबरचारिजनमिरुन्नारतुनेरं । ७
अंबररहितयामंबरनदितन्नॆ-
श्शंबररिपुवशनाय् महाभिषक्भूपन् ८
कुतुकंपूण्टु शङ्ककूटातॆ नोक्किक्कण्टान् ।
चतुराननन्तानुमन्नेरमरुळ्चॆय्तु: ९
मर्त्यनाय्पिऱन्नु निन् मोहवुमॊक्कॆत्तीर्न्नाल्
सत्यलोकादिकळिल् सञ्चरिच्चीटामॆन्नु । १०
धाताविन् शापं परिग्रहिच्चु नरपति
भूतलंतन्निल् पिऱन्नीटुवानारंभिच्चु । ११

वसुक्कळुटॆ अपेक्ष

अक्कालं धरादिकळाकिय वसुक्कळॆ-
दु:खितन्मारायॆकण्टु चोदिच्चु गंगादेवि । १
अॆन्तयुं महत्वमेऱीटिन निङ्ङळॆल्लां
निस्तेजन्मारायॆवन्नतॆन्तिप्पोळ् वसुक्कळे ! २

देवनदी (गंगा) भी उस समय वहाँ उपस्थित हुईं। जब सुन्दरी गंगा लज्जा के साथ धीरे-धीरे आ रही थीं तब मन्द मारुत के कारण उसका वस्त्र गिर गया और उसे देखकर सभी देवगण अधोमुख हो गये। १-७ राजा महाभिषक् तो वस्त्ररहित आकाशगंगा को कामदेव के वश में आकर बिना संकोच के कौतुक के साथ देखता रहा। उस समय ब्रह्मा ने कहा—"तुम मर्त्य का जन्म लो और अपना मोह समाप्त होने पर सत्यलोक आदि में सञ्चार करो"। राजा ने ब्रह्मा का शाप स्वीकार किया। और भूतल पर जन्म लेने की तैयारी की। ८-११

वसुओं की प्रार्थना

उन दिनों गंगादेवी ने धर आदि वसुओं[1] को दु:खित देखा और उन से पूछा—"हे वसुओ ! आप तो बड़े महत्ववाले हैं, फिर भी निस्तेज दीखते हैं ? क्या कारण है ? परमार्थ बतलाइए"। यह सुनकर उन्होंने वसिष्ठ

१ धर, अनल, अनिल, अप्, ध्रुव, प्रत्यूष, प्रभास, सोम, ये आठ वसुओं के नाम हैं।

चॊल्लुविन् परमार्त्थमॆन्तु केट्टनेरं
चॊल्लिनार्वसिष्ठशापत्तिन् कारणमॆल्लां । ३
मानुषस्त्रीकळुटॆ गर्भपात्रत्तिल्प्पूवान्
मानसत्तिङ्कल् मटियुण्टु ञङ्ङळ्क्कु पारं । ४
मानुषियायिट्टु नी ञङ्ङळ्क्कु शापं तीर्प्पान्
मानसत्तिङ्कल् कृपयुण्टाकवेणं नाथे । ५
मातावाय् चमयणं ञङ्ङळ्क्कॆन्नपेक्षिच्चो-
रादितेयोत्तमन्मारोटु गंगयुं चॊन्नाळ् । ६
मानुषन्मारिल् निङ्ङळेवनु सुतन्माराय्
दीनमॆन्नियॆ पिऱन्नीटुवान् निरूपिच्चु ? ७
शन्तनुवाकुं प्रतीपात्मजक्षितिपति-
सन्ततियावान् ञङ्ङळोर्त्तिरिक्कुन्निप्पोळ् । ८
निन्तिरुवटितन्नॆक्कामिच्च महाभिषक्
चन्द्रवंशाधिपति शन्तनुवायतिप्पोळ् । ९
ऒङ्किलङ्ङनॆयाकॆन्नरुळिच्चॆय्तु गंग
शङ्किच्चु वसुक्कळ् चॊल्लीटिनारतुनेरं । १०
जातमात्रन्माराकुं ञङ्ङळॆयॆल्लां तव
स्रोतसि प्रक्षेपणं चॆय्यणं मटियातॆ । ११
मानुषभावंपूण्टु चिरनाळवनियिल्
मानुषतापंपूण्टु वाळुवानरुतय्यो । १२

के शाप का कारण बतलाया। परन्तु मानवी स्त्रियों के गर्भाशय में प्रविष्ट होना हम लोग चाहते ही नहीं। इसलिए तुम मानुषी होने की कृपा करो जिससे हम लोगों का शाप समाप्त हो जाय। हम लोगों की माता हो जाओ। इस प्रकार प्रार्थना करते हुए वसुओं से गंगा ने कहा। १-६ "मनुष्यों में किसके पुत्र होकर जन्म लेने के लिए आपने निश्चय किया ?" (उन्होंने उत्तर दिया) हम लोग प्रतीप के पुत्र शन्तनु के पुत्र होने के लिए विचार कर रहे हैं। आपका कामुक नहाभिषक् अब चन्द्रवंश का राजा शन्तनु के रूप में उत्पन्न हुआ है। तब गंगा ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार किया। वसुओं ने फिर सोचकर कहा—पैदा होते ही हमको अपने प्रवाह में बिना संकोच के फेंक दिया करना। क्योंकि मनुष्य होकर और मनुष्य के दुःखों को सहते हुए हम बहुत दिन पृथिवी में नहीं रह सकते। यह सुन कर गंगा ने कहा—"मैं ऐसा ही करूँगी। परन्तु आप भी एक बात

गंगयुमतुकेट्टु चॊल्लिनाळ् वसुक्कळो-
टङ्ङने चॆय्वन् ञानो निङ्ङळुण्टॊन्नु वेण्टु । १३
पुत्रार्त्थमाय कर्म्मं व्यर्त्थमाय्वराय्वति-
न्नुत्तमनृपनॊरु पुत्रनॆ विधिक्केणं । १४
अतिनु ञङ्ङळुटॆ वीर्यत्तिल् तुरीयार्द्धं
सुतसंभवत्तिनु वॆव्वेरॆ नल्कामल्लो । १५
शन्तनु नृपनॊरु सन्ततियुण्टामॆन्नाल्
सन्तति शन्तनुजनुण्टाकयिल्लतानुं । १६
इङ्ङने समयं चॆय्तीटिनार् वसुक्कळुं
गंगयुं यथाकामं गमिच्चाळतुकालं । १७
चॊल्लॆळुं प्रतीपनायीटिन राजर्षियां
कल्याणरूपशीलमुळ्ळवन् गंगातीरे १८
चॆन्निरुन्नितु पुनरध्ययनार्थमप्पोळ् ।
स्वर्न्नदि नृपनुटॆ वलत्तॆत्तुटतन्मेल् १९
संगमोटिरुन्नितु सुन्दररूपत्तोटॆ ।
श्रृंगारयोनि परदेवतयॆन्नपोलॆ । २०
अन्नेरं प्रतीपनुं चॊल्लिनानॆन्तु निन-
क्कॆन्नाल् वेणुन्नतॆन्नु केट्टु गंगयुं चॊन्नाळ् । २१
निन्नॆक्कामिच्चु वन्नॊरॆन्नॆ नी भजिक्केण-
मॆन्नल्लो वेदत्तिलुं विधियॆन्नरियेणं । २२

स्वीकार कीजिए । उन उत्तम राजा के पास एक पुत्र रहने दीजिए ताकि जो उन्होंने पुत्र के लिए कर्म किया है वह व्यर्थ न जाय।" ७-१४ तब उन्होंने कहा, "उसके लिए हम अपने वीर्य का आठवाँ भाग अलग-अलग देंगे ताकि पुत्र जन्म हो जाय"। इस प्रकार राजा शन्तनु के एक सन्तान होगी पर उस सन्तान की सन्तान न होगी"। जब वसुओं ने इस प्रकार संविदा (प्रतिज्ञा) की, तब गंगा अपनी इच्छा के अनुसार चली गयी। उस समय विख्यात राजर्षि शोभन रूप और शीलवाले प्रतीप अध्ययन के लिए गंगातट पर जा कर बैठे। तग गंगा सुन्दर रूप लिए उनकी दायीं जांघ पर प्रेम से जाकर बैठी, मानो श्रृंगार का स्रोत परदेवता ही है। तब प्रतीप ने पूछा—"तुम्हें क्या चाहिए ?" यह सुनकर गंगा ने कहा—कामिनी होकर में आयी हूँ, इसलिए मुझे ग्रहण करो। जान लो कि वेद में भी यही लिखा है। जो कामिनी नारी का तिरस्कार करते हैं उनकी इच्छाएँ

कामिच्च नारितन्नॆ त्यागं चॆय्तीटुन्नवर्
कामिच्चतॊन्नु वरा नरकं वरुंतानु । २३
अन्नेरं प्रतीपनुं गंगयोटुरचॆय्तु
पुण्यपापङ्ङळुटॆ सूक्ष्मालोकनत्तोटुं । २४
कामार्त्थं मिथुनकर्म्मङ्ङळ् चॆय्कयुमिल्ल
कामिनि पुनरसवर्ण्णयुमरुतल्लो । २५
वलत्तॆत्तुटतन्मेलिरिक्कनिमित्तमाय्
फलिक्कयिल्ल मनोरथमॆन्नरिक ते । २६
अपत्यस्नुषादिकळ्क्कॆन्तिये भार्यतनि-
क्कबद्धमधिवस्तुं दक्षिणोत्संगमॆन्नाल् २७
ऎन्नुटॆ तनयनु भार्ययाय् वरुवति-
निन्निह योग्यतानुमॆन्नतु केट्टु गंग २८
चॊल्लिनाळिन्न शान्तनाकिय निन्मकनु
वल्लभयावां ञानॆन्नुटनॆ मरञ्ञप्पोळ् २९
सन्तुष्टन् प्रतीपनुं सन्ततं कर्म्मं चॆय्तु
सन्तति लभिच्चितु शन्तनु नामत्तोटुं । ३०
पुत्रमित्रार्त्थकळत्रादि सन्पत्तियोटु-
मॆत्रयुं कीर्त्तियोटे वसिच्चान् प्रतीपनुं । ३१
इङ्ङनॆ कृतत्रेतद्वापरयुगङ्ङळिल्
मंगलं वळर्त्तीटुं धार्म्मिकन्मारायमेवुं ३२

पूरी न होंगी । उल्टा वे नरक में जायेंगे । १५-२३ तब प्रतीप ने पुण्य और पाप पर सूक्ष्म विचार करके गंगा से कहा, "एक तो काम की तृप्ति के लिए मैं मैथुन न करूँगा और दूसरा कामिनी भी तो अपने ही वर्ण की होनी चाहिए । चूँकि तुम मेरी दायीं जांघ पर बैठी हो इस लिए तुम्हारा मनोरथ सफल न होगा । अपने बच्चे स्नुषा आदि को छोड़ कर पत्नी का दायीं जांघ पर बैठना उचित नहीं है । तुम तो मेरे पुत्र की पत्नी होने योग्य हो ।" यह सुनकर गंगा ने कहा "मैं आपके जैसे शान्त पुत्र की पत्नी हो जाऊँगी", और अदृश्य हो गयी । प्रतीप प्रसन्न हुए और निरन्तर कर्म करते रहे और उनके शन्तनु नाम का एक पुत्र उत्पन्न हुआ । प्रतीप अपने पुत्र, मित्र, धन, पत्नी आदि संपत्ति के साथ बड़ी कीर्ति प्राप्त करके सुख से रहे । २४-३१ इस प्रकार कृत, त्रेता और द्वापर युगों में मंगल को बढ़ानेवाले, धार्मिक चन्द्रवंश के राजाओं ने पूर्वकाल में पृथिवी का

सोमवंशोत्भवन्माराकिय राजाक्कन्मार्
भूमियॆ वऴिपोलॆ परिपालिच्चु मुन्नं । ३३
चॊल्लॆऴुं पुरूरवावादियायुळ्ळ मन्नो-
रॆल्लारुं कऴिञ्ञथ शन्तनुवॆन्न वीरन् । ३४
आऴिकळ् चूऴुमूऴिक्कॊक्क नायकनायि
वाऴुन्नकालत्तिङ्कलविटॆयॊरुदिनं । ३५
भंगि तेटीटुन्नॊरु मंगलरूपत्तोटे
गंगयुमॊरु वरसुन्दरियायि वन्नाळ् । ३६
मन्नवन् मोहं कैक्कॊण्टन्नेरमवळ्तन्नो-
टॆन्नुटॆ वल्लभयायिविटॆयिरिक्कॆन्नान् । ३७
बालिकाकुलशिरोमालितानुमनु-
कूलतयोटुं भूमिपालनोटुरचॆय्तु । ३८
अप्रियं पऱयुन्नाळप्पोऴे पोवन्ञानॆ-
न्नप्पुरिकुऴलाळुमप्पॊऴे चॊन्ननेरं । ३९
अप्रियं पऱयुन्नीलॆप्पॊऴुं मटियातॆ
मत्प्रियं वरुत्तुकॆन्नप्पृथिवीशन् चॊन्नान् । ४०
अप्पॊऴुतनुवदिच्चप्पुरिकुऴलाळु-
मप्पुरुषाधिपनोटप्पुरितन्निल् वाणाळ् । ४१
उळ्प्पूविल् वळर्न्नॊऴुं विभ्रमत्तोटुं कूटि
पुष्पबाणार्त्तिपूण्टु पुळच्चुकळिक्कुं नाळ् । ४२
अप्पुरं तन्निलुळ्ळोर्क्कॆल्लभुतं वरुमारु
गर्भंवुमुल्पादिच्चॊरर्भकनुण्टायवन्नु । ४३

विधिवत् परिपालन किया। विख्यात पुरुरवा आदि राजाओं का समय बीतने के बाद जब वीर शन्तनु समुद्रों से लेकर पृथ्वी के कोने-कोने तक के नायक बनकर राज्य करते थे, उस समय एक दिन शोभा-युक्त और मांगलिक रूप धारण करके गंगा एक अत्यन्त सुन्दरी स्त्री बनकर पधारीं। राजा मोहित हुए और उनसे बोले—"मेरी पत्नी होकर यहीं रहो"। तब युवतियों की शिरोमणि उन गंगा ने अनुकूलता के साथ राजा से कहा, "जिस दिन आप मुझसे कोई अप्रिय बात कहेंगे, मैं उसी दिन चली जाऊँगी।" जब सुन्दरी ने इस प्रकार कहा तब राजा ने उत्तर दिया—"मैं अप्रिय न कहूँगा। और तुम सदैव मेरा प्रिय करती रहो"। ३२-४० उस सुन्दर केशवाली ने स्वीकार कर लिया और भूपाल के साथ उस नगरी में रहने लगी।

उण्टाय पैतल्तन्नेक्कण्टुकूटुन्ननेरं
कण्टवर्क्किण्टलुण्टाम्मारु मातावुतन्ने ४४
कण्ठत्तेप्पिरिच्चु कोन्नीटिनाळेन्नेवेण्टू
कण्टु भूपालन्तानुं मिण्टीतिल्लेतुमोन्नुं ४५
कण्टिवार् कुळलियिलुळ्ळोरु रागं कोण्टुं ।
पण्टु तान् पऱञ्ञतिनन्तरं वराय्वानुं । ४६
इङ्ङने कोन्नाळवळ् बालन्मारेळुपेरे-
त्तिङ्ङिङ्न कान्तियोटुमुण्टायितेट्टामतुं । ४७
अक्कुमारनेयवळ् कोल्लुवानोङ्ङुंनेर-
मर्क्कनुसममाय तेजस्सु काण्कयाले ४८
सुभ्रुवायुळ्ळ बाले ! विप्रियमेन्नाकिलु-
मर्भकन्तन्ने वधिच्चीटरुतेन्नु नृपन् । ४९
अन्नरंत्ते गंगादेवि तन्नुटे परमार्त्थ-
मोन्नोळियाते नृपन्तन्नोटु चोल्लीटिनाळ् । ५०

वसुक्कळुटे पूर्व्वचरितं

जह्नुज मन्दाकिनि ञानेटो हैमवति
वन्नतुमत्र देवकार्यात्र्थसिद्ध्यर्त्थमाय् । १

जब वे कामदेव के वश में आकर आनन्द के साथ विविध क्रीड़ाएँ कर रहे थे, तब उस नगर में रहनेवालों को आश्चर्य करता हुआ गर्भ हुआ और अन्त में एक पुत्र का जन्म हुआ। जब नये पैदा हुए बच्चे को सब देख रहे थे तब उसकी माँ ने स्वयं उसकी गर्दन दबाकर उसे ऐसा मार डाला कि देखनेवाले सब दुःखित हुए। राजा ने भी उस सुन्दरी के प्रति प्रेम के कारण देखकर भी कुछ नहीं कहा और इसलिए भी कि अपनी पूर्व प्रतिज्ञा में कोई भेद न हो जाय। इस प्रकार गंगा ने सात बच्चों को मार डाला; इसके बाद बड़े तेजवाले आठवें पुत्र का जन्म हुआ। जब उसने उस बच्चे को मारने के लिए हाथ उठाया तब बच्चे के सूर्य के समान तेज को देखकर राजा ने कहा—"हे सुन्दर भौंहँवाली बाले! मैं जानता हूँ कि यह तुम्हारे लिए अप्रिय होगा, परन्तु बच्चे को न मारो"। तब देवी ने अपने सम्बन्ध में सारा परमार्थ राजा को सुनाया। ४१-५०

वसुओं का पूर्वचरित

"मैं जह्नुकन्या हैमवती मन्दाकिनी हूँ और देवों के कार्य की सिद्धि

आपवमुनिवरन् शापत्ताल् वसुक्कळुं
भूपते तव सुतन्मारायुत्भविच्चितु । २
यमुनापुत्रन् वरुणात्मजन् वसिष्ठना-
ममित तपोबलमेंळुमापवन् मुन्नं ३
कनकाचलपार्श्वे विपिने मनोहरे
मुनि निर्ज्जरयक्षगन्धर्व्वनिषेविते ४
शोभनमायुळ्ळोरु पर्ण्णशालयुं तीर्त्तु
तापसननुदिनं तपसा वाळुं कालं ५
दक्षनन्दिनियाय सुरभितन्नीयत्तु
मुख्यनामापवनु कोंटुत्तु काश्यपनुं ६
यामुननाय मुनिश्रेष्ठनाश्रमभुवि
होमधेनुविनोटुं वाळुन्नकालत्तिङ्कल् ७
हेमशैलेन्द्रप्रस्थे वसुक्कळोरुदिनं
कामिनीजनत्तोटुं क्रीडिच्चुनटक्कुन्पोळ् ८
कानने वीतभयं सञ्चरिच्चीटुन्नतुं
काणायि मुनिश्रेष्ठन्तन्नुटे पशुविने ९
तल्क्षणे धरप्रमुखन्मारां वसुक्कळुं
लक्षणयुक्तयाय धेनुतन् गुणङ्ङळाल् १०
विस्मितचित्तन्माराय् तत्र निन्नीटुन्नेरं
सस्मितं चोल्लीटिनाळ् तन् कनिष्ठात्मेश्वरी । ११

के लिए यहाँ आयी हूँ। हे राजन्! मुनि आपव (वसिष्ठ) के शाप के कारण आठों वसु आपके पुत्र के रूप में पैदा हुए। पूर्वकाल में यमुना का पुत्र, वरुणात्मज असीम तेजवाले वसिष्ठ जब कनकाचल (मेरु) के पास, एक मनोहर वन में जहाँ मुनि, देव, यक्ष, गन्धर्व आदि रहते थे, एक सुन्दर पर्णकुटी बनाकर उसमें प्रतिदिन तपस्या करते थे, तब काश्यप ने सुरभि (कामधेनु) को मुनियों में प्रमुख आपव (वसिष्ठ) को दे दिया। जब यमुना-पुत्र मुनिश्रेष्ठ (वसिष्ठ) अपने आश्रम में होमधेनु (कामधेनु) के साथ रह रहे थे, तब एक दिन आठों वसु मेरु पर्वत की चोटी पर कामिनियों के साथ खेलते हुए आये। १-८ वहाँ वन में मुनिश्रेष्ठ की गाय निडर चरती हुई दिखाई दी। तब धर आदि वसु उस लक्षणयुक्त गाय के गुणों से विस्मित हो कर उसे देखने लगे। उस समय एक वसुपत्नी ने मुस्कराकर कहा—पतिदेव! इस प्यारी गाय को देखिए! मालूम होता

भर्त्तावि कण्टीलयो मुग्धयां पशुविनें
मर्त्यभोगत्तिन्निवळ् युक्तयल्लेन्नुतोन्नुं । १२
गोविनेक्कण्टनेरं द्योविनोटाशकैक्कों-
ण्टीवण्णं परञ्ञवळोट्टन् द्योवुं चोन्नाळ् । १३
कामिनीकुलमौलिमालिके केट्टालुं नी
यामुनमुनियुटे होमगोवितु नूनं । १४
तत्तपोवनमिदं सत्यलोकत्तिन्नोक्कुं
चित्तमोहनङ्ङळां चित्रङ्ङळ् कण्टीले नी । १५
इप्पशुक्षीरपानंचेय्तीटुं जनङ्ङळ्क्कु
पिल्पाटोरापत्तुकळुण्टाकयिल्ल नाथे । १६
क्षुत्पिपासादि व्याधि मरण जरानरा-
द्युत्पत्ति नृणां पतिनायिरत्ताण्टेक्किल्ल । १७
देवियुं द्योविन् वाक्यमीवण्णं केट्टनेरं
भावसम्मोदत्तोटु भर्त्ताविनोटु चोन्नाळ् । १८
मानुषलोकत्तिङ्कलुण्टिनिक्कोरु सखि
मानियामुशीनरभूपतितन्टे मकळ् १९
मानुषिकळिल्वच्चु मत्सखित्वं कोण्टोरु
मानिनी जरारोगहीनयाय् वर्त्तिक्कणं । २०
महत्संगमंकोण्टु किंफलमल्लयाय्किल्
महत्वं भवान्माक्कुं भविक्कुमतुमूलं । २१

है कि यह मनुष्यों के भोग के लिए नहीं है। गाय को देखकर अपने पति द्यौ से इस प्रकार कहनेवाली से द्यौ ने कहा—हे कामिनियों की शिरोमालिके सुन लो ! यह निःसन्देह वसिष्ठ जी की हवनवाली गाय है। यह उनका तपोवन है जो सत्यलोक के समान है। मन को लुभानेवाले दृश्य देखो। हे नाथे, जो इस गाय का दूध पिये उसको किसी प्रकार की विपत्ति नहीं प्राप्त होगी। भूँख, प्यास, बीमारी, मरण, वार्धक्य आदि की उत्पत्ति मनुष्यों में दस हज़ार बरस तक नहीं होगी। ९-१७ द्यौ की यह बात सुनकर देवी ने अपने पति से कहा—"मनुष्यलोक में मेरी एक सखी है जो मानी राजा उशीनर की पुत्री है। मैं चाहती हूँ कि मानुषियों में, मेरी सखी होने के कारण, वह वार्धक्य और बीमारी से मुक्त रहे। नहीं तो बड़ों के परिचय से क्या फल है ? इससे आप लोगों का भी भला होगा। इसलिए इस गाय को बिना संकोच के ले जाना चाहिए, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

कौण्टुपोकेणमतुकारणं पशुविनॆ-
क्कुण्ठतकूटातॆकण्टिल्ल संशयमेतुं २२
मत्प्रियमितिल्परं मट़ॊन्ऩिल्लऱिञ्ञालुं
मल् प्राणेश्वर ! वॆटियाय्क मामितु मूलं । २३
इत्तरं कळत्रत्तिन् वाक्कु केट्टतुनेरं
सत्वरं धराद्यन्माराकुं भ्रातावक्कळोटुं २४
गोविनॆक्कयऱिट्टु पिटिच्चुनटन्ऩिट्टु
द्योविन मुन्निट्टु पोयीटिनार् वसुक्कळुं । २५
वारुणी फलङ्ङळुं कौण्टुवन्ऩीटिनान-
न्ऩेरमाश्रमभुवि कण्टील पशुविन । २६
कण्टितु दिव्यदृशा पशुवृत्तान्तमप्पोळ्
पण्डितन् वसिष्ठनुं शपिच्चु वसुक्कळॆ । २७
मानुषयोनौ जनिच्चीटुविन् निङ्ङळॆन्ऩु
मानसकोपत्तोटॆ शपिच्चतऱिञ्ञप्पोळ् २८
आश्रमत्तिङ्कल् वीण्टुं वन्ऩुटन् वसुक्कळु-
माश्रयमिल्लमट़ॆन्ऩॆण्वरुं काक्कल् वीणार् २९
ओरो वत्सरं कौण्टु शापमितॆळुपेक्कुं
तीरुक निङ्ङळ्क्किनि द्योविनु मनुष्यराय् । ३०
वासमुण्टल्लो चिरकालमितऱिकॆन्ऩुं
वासन नारिमारिलुण्टाकयिल्लतानुं । ३१

जान लो कि इससे प्रिय मेरे लिए और कुछ नहीं है। हे प्राणेश्वर ! इस बात को टालो मत। अपनी पत्नी की यह बात सुनकर तत्क्षण ही धर शादि भाइयों के साथ गाय को रस्सी से बाँध कर द्यौ को आगे रखकर आठों वसु चले गये। जब वसिष्ठ फल लेकर आये तो उन्हें गाय आश्रम की भूमि पर नहीं दिखाई दी। १८-२६ वसिष्ठ ने अपनी दिव्य दृष्टि से गाय का हाल समझ कर वसुओं को शाप दिया कि वे सब मनुष्य के रूप में जन्म लें। यह जानकर कि वसिष्ठ ने बड़े कोप के साथ शाप दिया है आठों वसु शीघ्र ही फिर वसिष्ठ के आश्रम में आयें और यह कह कर कि हमारा और कोई आश्रय नहीं है आठों उनके पैरों पड़े (तब वसिष्ठ ने कहा) आपमें से सात का शाप एक-एक वर्ष में समाप्त हो जायगा पर जान लीजिए कि द्यौ दीर्घकाल तक मनुष्य बना रहेगा और उसकी स्त्रियों के प्रति प्रवृत्ति ही न होगी। जो अपनी स्त्री की बात सुनता रहता है

कळत्रवाक्यमनुसरिक्कुं जनत्तिनु
कळत्रमुण्टाकातॆयिरिक्कतन्नॆ नल्लू। ३२
वसिष्ठ शापमनुभविप्पानॆन्नॆ वन्नु
वसुक्कळ् सेविच्चतुकारणं ञानुमिह ३३
वसिच्चु सार्द्धं त्वया नन्दननिवन् विभा-
वसुज्योतिष्मान् ब्रह्मचारिणामग्रेसरन्। ३४
बालकन्मारॆक्कॊल्वान् कारणमितु भूमि-
पालक ! चिरकालं कुशलं भविक्क ते। ३५
ऎङ्किल् ञान् कॊण्टुपोयि विद्ययुं पठिप्पिच्चु
सङ्कटंतीर्त्तु वळर्त्ताशु नल्कुवेनॆन्नाळ्। ३६
उन्परिल् मुन्पुतेटुं वसुक्कळ् शापं तीर्प्पा-
नन्पोटु वन्नतिन्टॆ परमार्त्थवुं चॊल्लि ३७
मरञ्ञु गंगा देवि नरवीरनुमुळ्ळिल्
निरञ्ञु परितापं विरहव्याधिकॊण्टे। ३८
परञ्ञवण्णंतन्नॆ गंगयुं कुमारनॆ-
प्परञ्ञु कूटातॊळं विद्ययुं पठिप्पिच्चु ३९
निरञ्ञङ्ङॊळुकीटुं जाह्नवीतीरत्तिङ्कल्
चॊरिञ्ञ कण्णीरोटुं कॊण्टुवन्नाक्कीटिनाळ्। ४०
पिरिञ्ञुकळञ्ञॆन्नॆप्पोकरुतॆन्नपोलॆ
तिरिञ्ञु तूणितन्निल्निन्नुटनॆटुत्तोरो- ४१

उसकी स्त्री ही न होना अधिक अच्छा है। वसिष्ठ के शाप का अनुभव करने के लिए वसुओं ने मेरी सेवा की और मैं भी आपके साथ रही। यह पुत्र सूर्य के समान तेजवाला है और ब्रह्मचारियों में श्रेष्ठ है। बालकों को मारने का कारण यही है। हे भूपाल ! आपकी चिरकाल तक कुशल हो! । २७-३५ मैं इसे ले जाऊँगी, इसको विद्या पढ़वाऊँगी और कष्ट सहकर इसका पालन करूँगी और अन्त में आपको वापस कर दूँगी। देवों में श्रेष्ठ वसुओं का शाप समाप्त करने के लिए प्रेम से अपने आने का परमार्थ कहकर गंगादेवी अदृश्य हो गयीं और राजवर शन्तनु विरह के कारण बहुत दुःखित हुए। अपने कहने के अनुसार गंगा ने कुमार को इतनी विद्याएँ सिखायीं कि वर्णन करना कठिन है। तदनन्तर बहती गंगा के तट पर आँसू गिराती हुई उसे लेकर आयीं। मानो इस हेतु कि गंगा छोड़कर चली न जाय, कुमार ने अपने तूण से शर निकाल-निकाल कर गंगा

शरङ्ङळ्कोण्टु पुळनटुवे चिऱकॆट्टि
निऱञ्ञ यौवनवुं कलन्नु निल्कुन्नोरं ४२
तिरञ्ञु मृगङ्ङळ्तन् वळियॆ शन्तनुवुं
वरुन्ननेरं भागीरथियॆक्काणाय्वन्नु । ४३
कुऱञ्ञ जलत्तोटुं मन्दस्यन्दतयोटुं ।
तिरञ्ञानतिन्मूलमन्नेरं कण्टु नृपन् ४४
पुरङ्ङळॆरिच्चवन् निन्नरुळुन्नपोलॆ
पिऱन्ननेरंकण्ट नन्दनन्तन्नॆयॆन्नु ४५
शरङ्ङळोटुं विल्लुं पूर्णयौवनवुं क-
ण्टऱिञ्ञतिल्लयल्लो शन्तनु नन्दननॆ । ४६
मऱञ्ञुकळञ्ञितु तातनॆ मोहिप्पिप्पान्
कुऱञ्ञोन्नुळ्ळिलल् शङ्क शन्तनुविन्नुमुण्टाय् । ४७
विरञ्ञ वॆळिच्चत्तु काट्टेणं गंगे देवि
चिरं ञानपेक्षिक्कुं पुत्रनॆ भक्तप्रिये ! ४८
निऱञ्ञु रूपत्तोटुं प्रत्यक्षीकरिच्चुटन्
पऱञ्ञु गंगादेवि निन्नुटॆ पुत्रनिवन् । ४९
कुऱञ्ञोन्नल्लयल्लो गुणङ्ङळिवनुळ्ळु
पिरिञ्ञीटातॆ नित्यमरिके वच्चुकॊळ्क । ५०
मऱञ्ञुपोकुं तव शत्रुक्कळॆल्लामॆन्नु
पऱञ्ञु गंगादेवि मऱञ्ञु नृपेन्द्रनुं । ५१

प्रवाह के बीच में एक बाँध बना दिया और वह अपने संपूर्ण यौवन से विराजमान था । ३६-४२ उस समय मृगों को ढूँढते हुए उस रास्ते से शन्तनु आ रहे थे और उनको भागीरथी (गंगा) दिखाई दी, जिसका पानी कम था और जो धीरे-धीरे बहती थी । राजा ने इसका कारण ढूँढा और त्रिपुरदाह करनेवाले (शिव जी) के समान किसी को देखा । धनुष्बाण और पूर्णयौवन-सहित वह पहले जन्म के समय देखा हुआ अपना पुत्र ही है, ऐसा शन्तनु पहचान न सके । फिर वह अपने पिता को मोहित करने के लिए अदृश्य हो गया । शन्तनु के मन में कुछ शंका होने लगी । (उन्होंने कहा) "हे गंगादेवि ! हे भक्तप्रिये ! जिस अपने पुत्र को मैं बहुत दिन से चाहता हूँ, उसे प्रकाश में स्पष्ट दिखलाओ । ४३-४८ तब गंगा-देवी अपनें सम्पूर्ण रूप में प्रत्यक्ष हुईं और बोलीं—यही आपका पुत्र है । इसके गुण निस्सीम हैं । इसलिए इसको अपने पास रखिए, ताकि कभी

कुऱ्ऩ्ञु परितापं तन्नुटॆ तनयनु
पऱ्ऩ्ञुकूटातॊळं गुणङ्ङळ् काण्कयाले । ५२

सत्यवती परिणयं

चॊल्लॆळुं गंगादत्तनाकिय सुतनोटु-
मल्ललुमकन्नुटनरचनिरिक्कुन्नाळ् १
अमितपराक्रम मुटय पटयोटुं
यमुनातीरत्तिङ्कल् वनत्तिल् नायाट्टिनाय् । २
मत्तवारणहयपत्तिकळोटुं चॆन्नु
चित्तकौतुकत्तोटुं विळयाटुन्ननेरं । ३
अॆन्नयुं मनोज्ञमाय् चित्रमायिरिप्पोरु
कस्तूरिगन्धत्तिन्टॆ कारणमन्वेषिच्चु । ४
नटक्कुं नेरत्तिङ्कलटुत्तु कण्टानॊरु-
मटुत्तूकिनमॊळिमार्कुलरत्नंतन्नॆ । ५
देहत्तिन् गुणं कण्टुं लावण्यपूरं कण्टुं
मोहिच्चु नरपति कन्यकयोटु चॊन्नान् । ६
ऒरुयोजनवळि परन्नीटुन्नु निन्टॆ-
तिरुमॆय्परिमळं कस्तूरिगन्धंपोलॆ । ७

वियोग न हो । अब आपके सब शत्रु नष्ट हो जायेंगे" । यह कह कर गंगादेवी अदृश्य हो गयीं और अपने पुत्र में अवर्णनीय गुण पाकर राजा का भी दु:ख कम हुआ । ४९-५२

सत्यवती से विवाह

राजा अपने विख्यात पुत्र गंगा दत्त के साथ बिना किसी प्रकार के दु:ख के सुख से रहने लगे । एक दिन अपनी पराक्रमशाली सेना और अनेक हाथी, घोड़े और पैदल सैनिकों के साथ यमुना के तट पर शिकार खेलने गये और बड़े कौतुक (आनन्द) के साथ शिकार खेलने लगे । तब उन्हें एक अत्यन्त मनोहर और अद्भुत कस्तूरी का गन्ध अनुभव हुआ । राजा ने उसका कारण ढूँढा । जब वह ढूँढ रहे थे तब उन्होंने पास ही में एक कन्यारत्न देखा । उसके शारीरिक गुण और उसका लावण्य देखकर राजा मोहित हो गये और उस कन्या से बोले । "तुम्हारी सुगन्ध एक योजन (चार मील) तक फैलती है, जैसे कस्तूरी की गन्ध । साफ़ साफ़

नेरे नी पऱयणमारॆन्नु केट्टनेरं
चारुतकलन्नॊरु नारियुमुरचॆय्तु । ८
इत्तोणि कटत्तुन्न कैवर्त्तवीरन्तन्टॆ
पुत्रि ञान् तोणि कटत्तीट्टुवानवन्चॊल्लाल् । ९
ऎप्पॊऴुमिरिप्पिनिक्किप्पुऴक्करयॆन्नु
चॆप्पेलु मुलयाऴमप्पॊऴॆयुरचॆय्ताऴ् । १०
मन्नवनतु केट्टु दाशनॆच्चॆन्नु कण्टु
कन्यकतन्नॆ मम नल्केणमॆन्नु चॊन्नान् । ११
ऎन्नुटॆमकळ् पॆट्टुण्टाकुन्न तनयनॆ
मन्नवनाक्कि वाऴिच्चीटामॆन्नॊरु सत्यं । १२
ऎन्नोटु चॆय्किल् नल्कामिन्ने कन्यकतन्नॆ-
यॆन्तुटॆ गंगादत्तनिङ्ङनॆयिरिक्कुन्ना- १३
ळन्यनु राज्यमॆल्लामॆङ्ङनॆ कॊटुप्पू ञान्
ऎन्नुळ्ळ चिन्तयोटॆ मन्नवन् पुरिपुक्कु । १४
अन्नुतॊट्टरचनु मारमाल् मुळुक्कया-
लन्नवुं नरुंपालुमॊन्नुमे वेण्टीतिल्ल । १५
गंगयिल् मुऴुकिय मंगलचित्तं चॆन्नु
संगिच्चु मुऴुकीतु धीवरनारितन्निल् । १६
रोगमॆत्रयुं पारं भूमीन्द्रनॆन्नु नाना-
नागरजनङ्ङळुं पऱञ्ञुतुटङ्ङिनार् । १७

बतलाओ कि तुम कौन हो" यह सुनकर उस सुन्दरी कन्या ने कहा । १-८ "मैं इस नाव खेनेवाले वीर केवट की पुत्री हूँ, उसकी आज्ञा से मैं भी नाव खेती हूँ, मेरा निवास सदैव इस नदी के तट पर है"। जब उस सुन्दर स्तन-वाली ने इस प्रकार उत्तर दिया, तब राजा दाश (केवट) के पास गये और बोले "इस कन्या को मुझे दान करो ।" केवट ने कहा "मेरी पुत्री से उत्पन्न पुत्र को ही राजा बनाकर राज्य देने की शपथ अगर आप मुझ से करेंगे तो आज ही कन्या को दूँगा ।" राजा यह सोचकर कि जब तक मेरा (पुत्र) गंगादत्त इस प्रकार विराजमान है तब तक राज्य मैं और किसी को कैसे दूँ, अपनी नगरी चले गये । उस दिन से राजा का काम-विकार बढ़ा, वे अन्न, शुद्ध दूध या और कुछ भी न खा सके । उनका मन जो पहले गंगा में तन्मय था, वह अब जाकर केवट की कन्या में लीन हो गया । अनेक नागरिक कहने लगे कि राजा बहुत ही बीमार हैं। ९-१७ उनके पुत्र गगादत्त ने

अन्नतु कण्टु गंगादत्तनायुळ्ळ पुत्रन्
मन्नवन्तन्नॆत्तॊळुतीवण्णमुर्णत्तिच्चान् । १८
अच्छनॆन्तॊरु तापमुळ्ळिलॆन्तरियॆणं
निश्चयं पण्टॆप्पोलॆयल्ला काणुन्नतिप्पोळ् । १९
अन्नेरमरचनुं मकनोटुरचॆय्ता-
नॆन्नुटॆ तापत्तिन्टॆ कारणं चॊल्लामॆङ्किल् । २०
उण्णी नीयॊरु मकन्तन्नॆयिन्निनिक्कुळ्ळु
निन्नुटॆ वळियॆ मट्टॊन्निनॆ काणाय्कयाल् । २१
ऎन्नुळ्ळिल् परितापमेरुन्नु नाळिल् नाळिल्
मुन्नमे शास्त्रङ्ङळिल् केट्टु ञानिरिक्कुन्नु २२
एकपुत्रत्वमपुत्रत्वमोटॊक्कुमल्लो ।
भागधेयवुमरियावतल्लॊरुवक्कुं । २३
ऎन्नुळळी पिताविन्टॆ वाक्कुकळ् केट्टशेषं
तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु कल्पिच्चू गंगादत्तन् । २४
तातन्टॆ सूतनोटु चोदिच्चु धरिच्चितु
तातनुण्टाय विषमङ्ङळुं विशेषवुं । २५
संन्यासं चॆय्तु दाशन्तन्नॆयुं बोधिप्पिच्चु
कन्यकतन्नॆक्कॊण्टुवन्नु तातनु नल्कि । २६
पुष्पङ्ङळ् वरिषिच्चारप्पॊळ्ळुतमररु-
मत्भुतं कण्टु भीष्मरॆन्नॊरु पेरुमिट्टार् । २७

यह सब देखकर राजा को प्रणाम किया और कहा—"मैं यह जानना चाहता हूँ कि पिता जी को क्या चिन्ता है। देखने में आप पहले की तरह नहीं हैं।" तब राजा ने पुत्र से कहा, "मैं अपने दुःख का कारण बतलाऊँगा। बेटा! तुम मेरे इकलौते पुत्र हो, तुम्हारे बाद और कोई पुत्र न होने के कारण मेरे मन में दिन प्रतिदिन दुःख बढ़ रहा है। मैंने पहले ही सुन रखा है कि शास्त्रों के अनुसार एक ही पुत्र होना, पुत्र न होने के बराबर है। और कोई भी अपना भागधेय नहीं जानता है।" पिता की यह बात सुनकर गंगादत्त ने अपने मन में सोचकर निश्चय कर लिया। पिता के सूत से पूछ कर उनकी कठिनाइयाँ और विशेष बातें समझ लीं। १८-२५ तदनन्तर स्वयं संन्यास लेकर केवट को विश्वास दिलाया और कन्या को ले आकर पिता को दे दिया। तब देवों ने उस पर पुष्पवृष्टि की और इस अद्भुत घटना को देखकर उसका 'भीष्म'

ब्रह्मज्ञनाय भीष्मरतुकारणं नित्य-
ब्रह्मचारिकळिल्वच्चुत्तमनायानल्लो । २८
शन्तनु सत्यवतितन्नोटुकूटॆच्चेर्न्नु
सन्तापमकन्नुळिळल् सन्तोषत्तोटॆ वाणान् । २९
सन्ततं राज्यं परिपालनं चॆय्तु तात-
नन्तरानन्दं वळर्त्तीटिनान् गंगादत्तन् । ३०
कण्टककुलान्तकनाय शन्तनुवीरन्
कण्टकावुकळ् तोरुं हर्म्म्यगेहङ्ङळ्तोरुं । ३१
कण्टिवार्कुळलियां काळितन्नोटुं चेर्न्नु
तण्टलर्बाणोत्सवं कॊण्टानन्दिक्कुंकाल- ३२
मुण्टायि चित्राङ्गदनाकिय तनयनुं ।
रण्टामतुण्टाय्वन्नु विचित्रवीर्यन्तानु- ३३
मुण्टायि सन्तोषवुं भूपालादिकळ्क्कॆल्लां ।
इण्टलुं तीर्न्नु सौख्यं प्रापिच्चारॆल्लावरुं ३४
बालन्मार् वळरुन्नकालं वन्नीटुंमुन्पे
कालधर्म्मत्तॆ प्रापिच्चीटिनानरचनुं ३५
कैय्यूक्कु पॆरुकिय भीष्मरुमतुकालं
चॆय्यिच्चु शेषक्रिय बालकन्मारॆक्कॊण्टे ३६
वय्यवनोटुनेरां मामुनिमारॆक्कॊण्टु
चॆय्यिच्चानवर्कळिलग्रजन्नभिषेकं । ३७

नाम रखा। यही कारण है कि ब्रह्मज्ञ भीष्म नित्य-ब्रह्मचारियों में श्रेष्ठ हुए। शन्तनु सत्यवती के साथ सभी दुःख छोड़कर बड़े आनन्द से जीवन बिताने लगे। गंगादत्त ने सदैव राज्य का ठीक परिपालन करके अपने पिता का आनन्द बढ़ाया। शत्रु-कुलों के नाशक वीर शन्तनु हर एक उपवन में और हर एक प्रासाद में घूमते हुए सुन्दरी काली के साथ जब कामदेव का उत्सव मनाते थे तब चित्राङ्गद नाम का पुत्र का जन्म हुआ। तदनन्तर दूसरा पुत्र विचित्रवीर्य भी हुआ और सभी भूपालों को बड़ा आनन्द प्रतीत हुआ। सब दुःख समाप्त हुआ और सबने सुख प्राप्त किया। २६-३४ बालकों के बड़े होने के पहले ही राजा का स्वर्गवास हो गया। बड़े बाहुबल वाले भीष्म ने बालकों से ही अन्येष्टि क्रिया करायी। तदनन्तर महामुनियों के द्वारा उन बालकों में जो सूर्य-सदृश ज्येष्ठ था उसका अभिषेक कराया। जब अच्छे भीष्म देवासुरयुद्ध के प्रसङ्ग में स्वर्गलोक में

नल्लनां भीष्मरमरासुरयुद्धत्तिन्नाय्
स्वर्ल्लोकत्तिङ्कल् वाळुंनाळवसरं कण्टु ३८
चॊल्लॆळु चित्राङ्गदनाय गन्धर्व्वन् वन्नु
चॊल्लिनान् चित्राङ्गदनाकिय नृपनोटु । ३९
पेरु नी मारियिट्टु कॊळ्ळेणमल्लयाय्किल्
पोरिनु पुऱप्पॆटुकेतुमे मटियातॆ । ४०
अप्पॊळे पुऱप्पॆट्टु कॆल्पॊटु युद्धं चॆय्ता–
नद्भुतं वरुमारु मूवाण्टेय्क्कॊरुपोलॆ । ४१
हिरण्यतीरस्थन्माराय वीरन्मारुटॆ
शरङ्ङळ्कॊण्टुतन्नॆ मरञ्ञुदिक्कुकळुं । ४२
परन्न हिरण्वतियाकिय नदीतीरे
निरन्न कुरुक्षेत्रत्तिङ्कल्निन्नुण्टायॊरु ४३
युद्धवैचित्र्यं कण्टुनिन्नोरु जनमॆल्लां
चित्रमॆत्रयुं युद्धमॆन्नु कॊण्टाटीटिनार् । ४४
वीर्यस्वर्गत्तॆ प्रापिच्चीटिनान् नरपति
वीर्यत्ताल् स्वर्ग प्रापिच्चीटिनान् गन्धर्व्वनुं । ४५

अंबोपाख्यानम्

अक्कालमसुररॆज्जयिच्चु सुरन्मार्क्कु
दुःखवुं तीर्त्तु राज्यं पुक्कितु गंगादत्तन् १

रह रहे थे तब अवसर पाकर विख्यात गन्धर्व चित्राङ्गद ने राजा चित्राङ्गद से इस प्रकार कहा—"तुम अपना नाम बदल दो नहीं तो युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।" उसी समय (वे) युद्ध के लिए निकले और तीन वर्ष तक अद्भुत युद्ध करते रहे। हिरण्या के तट के उन वीरों के बाणों से ही सभी दिशाएँ छिप गयीं। विशाल हिरण्वती के तट पर स्थित कुरुक्षेत्र में होनेवाले युद्ध का वैचित्र्य देखनेवालों ने कहा "यह युद्ध कितना अद्भुत है!" राजा को वीर्यस्वर्ग प्राप्त हुआ और गन्धर्व भी अपने वीर्य के कारण स्वर्ग चले गये। ४१-४५

अम्बोपाख्यान

उन दिनों असुरों को हराकर और देवों का दुःख समाप्त करके गंगादत्त अपने राज्य वापस आये। उन्होंने बिना विलम्ब के बाल विचित्रवीर्य,

बालनायीटुन्नोरु विचित्रवीर्यन्तन्नै
कालं वैकातॆ वाळिच्चीटिनान् भीष्मर् पिन्नै । २
विचित्रवीर्याग्रजन् मरिच्चोरनन्तरं
विचित्रवीर्यन्दिक्कु जयिच्चु वाळुं कालं । ३
बालिकयाकुमंबतानुमंबिकयुमं-
बालिकतानुमेन्नु मून्नु पुत्रिकळुण्टु ४
काशिराजाविन्नवर्कान्तियेक्काणुन्नाकि-
लाशयामेल्लावर्क्कुमेन्नु केट्टिरिक्कुन्नाळ् ५
कल्याणमुण्टेन्नोरु वार्त्त केट्टन्नु भीष्म-
रुल्लासत्तोटुं तेरिलेऱिनान् विल्लुमायि । ६
कूटलर् कुलकालनाकिय गंगादत्तन्
कूटियनृपन्मारेयोक्कवे जयिच्चिट्टु ७
मुग्धमारोटुं कूटि हस्तिनापुरि पुक्कान् ।
क्रुद्धनायणञ्ञोरु साल्वनुं नाणं केट्टान् ८
वत्सनेक्कोण्टु वेळ्प्पिप्पानाशु तुनिञ्ञप्पोळ्
मत्सर मुळ्ळिलुळ्ळोरंबयुमुरचेय्ताळ् । ९
साल्वनु कोटुप्पानायेन्नेक्कलिपच्चु तातन्
साल्वनुमेन्नेत्तन्ने करुतियिरिक्कुन्नु । १०
मट्टोरुवनेयिनिक्कैक्कोण्टालिनिक्कुळ्ळल्
कुट्मुण्टेन्नु चोन्नोरवळेययच्चुटन् ११

को राजगद्दी पर बैठाकर राज्य कराया। विचित्रवीर्य के बड़े भाई के मरने के बाद जब विचित्रवीर्य चारों ओर जीतकर राज्य करते थे तब काशिराज की तीन पुत्रियाँ थीं, अंबा, अंबिका और अंबालिका। वे इतनी सुन्दर थीं कि उनकी शोभा को देखकर सब मोहित हो जाते थे। उनकी यही प्रसिद्धि थी। यह सुनकर कि उनका विवाह होनेवाला है, भीष्म बड़े उल्लास के साथ धनुष-बाण लेकर रथ पर बैठे। शत्रुकुलों के नाशक गंगादत्त अनेक राजाओं को युद्ध में हराकर तीनों मुग्ध रमणियों को लेकर हस्तिनापुर चले आये। १-७ तब साल्व क्रुद्ध हुआ और उसको हार जाने की लज्जा भी हुई। जब भीष्म ने कोशिश की कि विचित्रवीर्य का तीनों से विवाह हो जाय तब भीतर विरोध रखनेवाली अंबा ने कहा। "मेरे पिता ने मुझे साल्व को देने का निश्चय किया था और साल्व भी मुझ को ही चाहते हैं। अगर मैं और किसी को स्वीकार करूँगी तो मेरा

अंबिकतन्नेयुमंबालिकतन्नेयुं कू-
टंबुधिपत्नीपुत्रन्तन्नुटे नियोगत्ताल् १२
विचित्रवीर्यन् वेट्टु सुखिच्चु मरुविनान् ।
विचित्रमत्रे पोयोरंबतन् वार्त्त केट्टाल् । १३
चेन्नु सात्वनेक्कण्टाळवनुमुपेक्षिच्चान्
वन्नु भीष्मरेक्कण्टु पेपरञ्ञितु पिन्ने । १४
आरोटुसममोळ्ळुकीटुन्न कण्णीरोटु-
मारुवत्सरं वाणाळारुतन् मकन्पिन्पे । १५
आरातोरुळच्चूटोटे नटन्नाळ् पिन्नेप्पो-
यीराण्टु तपस्सुचेय्तीटिनाळ् वळिपोले । १६
नीहाराचलपार्श्वे निर्म्मलदेशे तेळि-
ञ्ञाहारादिकळेयुं वेटिञ्ञु दिनंप्रति । १७
बाहुदानदीतीरे मरुवीटिनकालं
बाहुलेयनुमोरु मालये नल्कीटिनान् । १८
बाहुजन्मारिलेवन् मालये धरिक्कुन्न-
ताकवे कोल्लाय्वरुं भीष्मरेयवन्नेटो । १९
ईवण्णं वरं नल्कि मालयुं कोटुत्तुटन्
पार्व्वतीसुतन् मरञ्ञीटिनोरनन्तरं २०
ओरोरो राज्यन्तोरुं नटन्नाळ् मालयुमा-
यारुमे कैक्कोळ्ळाञ्ञार् भीष्मरेप्पेटिच्चेवं । २१

दोष होगा।" यह सुनकर भीष्म ने उसे छोड़ दिया और उनकी आज्ञा से विचित्रवीर्य ने अंबिका और अंबालिका के साथ विवाह किया और आनन्द से रहे। अंबा जो चली गयी उसकी कथा भी विचित्र है। वह साल्व के पास गयी, पर उसने स्वीकार नहीं किया। तब भीष्म के पास वापस आयी और शिकायत की। नदी के समान बहते आँसुओं के साथ छः वर्ष गंगा के पुत्र के पीछे लगी रही। तदनन्तर अपने अशान्त दुःख को लिये वह चली गयी और दो वर्ष तक उसने नियम से तपस्या की। ८-१६ हिमालय पर्वत के पास एक शुद्ध स्थान में बैठी और अपने आहार को प्रतिदिन कम करती गयी। जब वह बहुदा नदी के तट पर रहती थी, तब वाहुलेम (कार्त्तिकेय) ने उसको एक माला दी। क्षत्रियों में जो इस माला को पहनेगा वह अन्त में भीष्म को मारेगा। इस प्रकार वर देकर और माला को भी देकर पार्वती-पुत्र (कार्त्तिकेय) अदृश्य हो गये। तदनन्तर अंबा माला लिये देश-देश में घूमी पर भीष्म के डर से किसी ने

अञ्चु वत्सरं कळिञ्ञीटिनोरनन्तर-
मञ्चातें पाञ्चालमां नगरमकंपुक्काळ् । २२
सोमकन्तन्नोटवळू वृत्तान्तमोक्केच्चोन्नाळ्
भूमिपालकन्तानुमादरिच्चीलयेतुं । २३
द्रुपदपुरद्वारि मालयुं निक्षेपिच्चु
सपदि नटकोण्टाळंबयुमतुनेरं । २४
विज्ञानज्ञानबलवीर्यादिगुणं तेटुं
यज्ञसेननुमवळुपिन्नाले चेन्नु चोन्नान् । २५
माल नी कूटेक्कोण्टुपोय्क्कोळ्कवेणमोरु-
मूलमेन्तिविटे वच्चीटुवानितुकालं । २६
बाले निन्मनोरथमितिनाल् वन्नुकूटा
कालनुं पेटिक्केणं भीष्मरे मनोहरे ! २७
सोमकवाक्यमनादृत्य मालयु तत्र
कामिनि निक्षेपिच्चु वेगत्तिल् नटकोण्टाळ् । २८
मालयेप्पालिच्चितु भूपति चिरकालं
बालिक शिखण्डिनियाकिय राजपुत्रि २९
मौलौ चेर्त्तितु तातन्तानरियातेयप्पोळ् ।
भूलोकपतियुपेक्षिच्चितु भीष्मर्भयाल् । ३०
जनकत्यक्तयायोरवळु मृचीकन्टे-
क्कनिविनोटु कण्टु सेविच्चाळ् भूदेवनु । ३१

भी माला को न स्वीकार किया। पाँच वर्ष बीतने के बाद उसने पाञ्चाल नगर में प्रवेश किया और सोमक (पाञ्चाल राजा) को सारा वृत्तान्त सुनाया, पर राजा ने उसकी चिन्ता न की। १७-२३ तब अंबा माला को नगर के द्वार पर रख कर चली गयी। विज्ञान, ज्ञान, बल, वीर्य आदि गुणवाले यज्ञसेन (सोमक) उसके पीछे पीछे गये। उन्होंने कहा "तुम माला अपने साथ ले जाओ। यहाँ क्यों रखे जा रही हो? इससे तुम्हारी इच्छा की पूर्ति न होगी, हे सुन्दरि! यमराज भी भीष्म से डरता है।" सोमक की बात न सुनकर माला को वहीं छोड़कर कामिनी (अंबा) शीघ्र चली गयी। राजा ने माला की रक्षा की। पर राजपुत्री शिखंडिनी ने राजा से छिपाकर उसे अपने शीर्ष में पहन लिया। तब राजा ने भीष्म के डर से उसे त्याग कर दिया। पिता की त्यागी वह ऋचीक के पास गयी और उनकी सेवा करने लगी। २४-३१

चॊल्लिनान् गंगाद्वारे चॆन्नु नी सेविक्कणं
चॊल्लॆेळ्ळु गन्धर्व्वेशनाय तुंबुरुविनॆ। ३२
नल्लतु वरुत्तीटुं निनक्किन्नवन्तन्नॆ
कल्याणशीले ञानुं तुणच्चीटुवनल्लो । ३३
भूदेवन् परञ्ञतु केट्टवळ् गंगाद्वारे
सादरं चॆन्ननेरमविटॆक्काणाय्वन्नु ३४
गन्धर्व्व प्रवरन्मारिरुवर् किटक्कुन्नु-
तन्तिके कण्टनेरमॊरुत्तन् चॊन्नानतिल् । ३५
ऒन्नुटॆ पुल्लिङ्गं ञान् निनक्कु तन्नीटुवन्
निन्नुटॆ स्त्रीलिङ्गं नीयिनिक्कु तन्नीटेणं । ३६
अन्योन्यं लिङ्गविनिमयं चॆय्तिरुवरु-
मन्नुतॊट्टवळॊरु पुरुषनायुंवन्नु । ३७
याज्ञसेनियुमथ शिखण्डियायानल्लो
प्राज्ञनामवन् दिव्यास्त्रङ्ङळुं पाठं चॆय्तान् । ३८
तन्नुटॆ राज्यंपुक्कु जनकन्तन्नॆक्कूप्पि-
निन्नितु शिखण्डियुं वृत्तान्तमऱियिच्चान् । ३९
पेटिक्कवेण्ट भीष्मर् तन्नॆ नामिनियॆन्नु
गाढकौतुकं पूण्टु वसिच्चारवर्कळुं। ४०
अन्तरा पन्तीराण्टुकॊण्टवळ् मनोरथं
सन्धिक्कुमॆन्नु चिन्तिच्चात्मना यत्नत्तोटुं ४१

उस ब्राह्मण ने कहा—'तुम गंगाद्वार जाकर विख्यात गन्धर्वों के राजा तुंबुरु की सेवा करो। वह तुम्हारा भला करेगा। हे कल्याणशीले ! मैं भी सहायता करूँगा। ब्राह्मण की बात सुनकर वह सादर गंगाद्वार गयी। तब वहाँ दो प्रमुख गन्धर्व दिखाई दिये। उनमें एक ने कहा—"मैं अपना पुरुषत्व तुम्हें दूँगा और तुम अपना स्त्रीत्व मुझे दे दो।" दोनों ने लिंगविनिमय किया और उस दिन से वह (शिखंडिनी) पुरुष हो गयी। यज्ञसेनी (शिखंडिनी) शिखंडी हो गया और उसने दिव्य अस्त्रों का प्रयोग सीखा। तदनन्तर अपने देश लौटकर पिता जी को प्रणाम करके सारा वृत्तान्त सुनाया। ३२-३९ तदनन्तर यह समझकर कि अब भीष्म से डरने की आवश्यकता नहीं है, सब बड़े आनन्द से रहे। यह सोचकर कि बारह वर्ष में इच्छा की पूर्त्ति होगी, उसने बड़े प्रयत्न के साथ परशुराम की सेवा की। परशुराम ने भीष्म के साथ अठाईस दिन युद्ध

परशुरामन्तन्नेस्सेविच्चु भीष्मर्तन्नो-
टिरुपत्तेट्टु दिनं युद्धं चेय्तितु रामन् ४२
अरुतु जयिप्पतिनिवनेयोन्नुकोण्टुं
वरिक्कयिल्ल निन्नेयवनेन्नतु केट्टु । ४३
परिचिल् निनच्चवयोन्नुमे साधिक्काञ्ञु
वरवुं वाङ्ङिक्कोण्टाळ् परशुरामनोटु ४४
मरणं प्रापिच्चाळ् पोल् तपसा योगाग्निना ।
पुरुषत्ववुं किञ्चिल् गुह्यकनोटु वाङ्ङि ४५
तन्नुटेमूलं वेणं मरणं भीष्मक्केन्नु
तन्नुळ्ळिल् निनच्चतिनेन्तेल्लां वेल चेय्ताळ् । ४६

सत्यवतियुटे दुःखं

अक्कथयिरिक्कट्टे विचित्रवीर्यन्पिन्ने
मैक्कण्णिमारिलळिञ्ञुळ्ळक्कान्पु मरन्नवन् । १
पारमाय् रमिच्चितु बालनायिरुन्नन्ने
मारसंगरवेगाल् मरिच्चानेन्नेवेण्टू । २
राजयक्ष्मावेन्नारु व्याधियुण्टायमूलं
राजाविनोटु वेराय् वन्नितु कुरुराज्यं ३
दुःखिच्चु सत्यवति मक्कळुं मरिच्चुत-
न्नुळ्ळक्कान्पिल् निरूपिच्चाळीश्वरविलासङ्ङळ् । ४

किया । 'इसको हराना बिलकुल असंभव है, वे तुम से विवाह न करेंगे।' यह सुनकर और अपनी कोई भी इच्छा पूर्ण न होने के कारण परशुराम से वर लेकर, कहा जाता है, उसने तप और योगाग्नि के द्वारा मरण प्राप्त किया। इस प्रकार गन्धर्व से पुरुषत्व लेकर और इस विचार से कि अपने ही द्वारा भीष्म का मरण हो, उसने क्या क्या काम नहीं किया? ४०-४६

सत्यवती का दुःख

अब वह कथा रहने दीजिए । विचित्रवीर्य तो स्त्रियों में लीन होकर अपने को भूल गये और उसने इतना भोग-विलास किया कि यौवन में ही उसका स्वर्गवास हो गया, क्योंकि उसको राजयक्ष्मा नाम का रोग हो गया । कुरु राज्य का अब कोई राजा न रहा ।

मंगलं वरुत्तुवानेन्तोरु कळिवेन्नु
गंगानन्दनन्तन्ने रहसि विळिच्चुट- ५
निङ्ङनेवन्नितल्लो नम्मुटे कालमेन्नु
तङ्ङळिल् परकयुं कण्णुनीरोलिक्कयुं । ६
नारिमारिरुवक्कुं वैधव्यमकप्पेट्टु
पारितु परिपालिच्चीटुवानारुमिल्ल । ७
सोमवंशवुमिन्नु मुटिञ्ञुतेन्नुवन्नु
नामिरुवरुं तन्नेयिविटेयकप्पेट्टु । ८
इत्तरं सत्यवति सत्वरं चोन्ननेर-
मुत्तरमुरचेय्तीलोन्नुमे गंगादत्तन् । ९
अेन्तुण्णी ! मिण्टाञ्ञु निन् चिन्तितमेन्तु चोल्क
सन्ततियुण्टाक्कुवानेन्तोरु कळिविप्पोळ् । १०
मातावु परञ्ञप्पोळ् चोल्लिनान् देवव्रतन्
भूदेवन्मारालुळ्ळू नम्मुटे कुलं पण्टु- ११
मारणरवे मुन्नं कारणं नमुक्कोन्नाल्
नारिमारिरुवरुमारणरे प्रापिच्चु १२
पाराते कुलत्तिङ्कल् सन्ततियुण्टाक्कुक ।
कारणमितिन्नुण्टु चोल्लीटामतुमेङ्किल् । १३

सत्यवती दुःखित हुई, जिसके (दोनों) पुत्र मर चुके थे। वह अपने मन में ईश्वर की लीलाओं पर ध्यान करने लगी। 'क्या करें जिससे घर में फिर मंगल होजाय', यह सोचकर गंगादत्त को एकान्त में बुलाया और दोनों ने उस समय की स्थिति पर दुःख प्रकट करते हुए आँसू गिराये। सत्यवती ने कहा "दोनों स्त्रियाँ (अंबिका और अंबालिका) विधवा हो गयी हैं; पृथिवी का परिपालन करनेवाला कोई नहीं है। चन्द्रवंश अब समाप्त हो गया है और हम दोनों यहाँ फँस गये हैं।" १-८ जब सत्यवती ने आवेग के साथ इस प्रकार कहा तब गंगादत्त ने कोई उत्तर नहीं दिया। सत्यवती ने कहा "बेटा! तुम चुप क्यों हो? अपना विचार बतलाओ। सन्तान कैसे हो यह बतलाओ।" माता की बात सुनकर देवव्रत (भीष्म) ने कहा। "पूर्वकाल में ब्राह्मणों ने हमारे कुल का उद्धार किया। ब्राह्मण ही हमारे कुल का कारण है। इस लिए दोनों स्त्रियाँ ब्राह्मणों को प्राप्त करके शीघ्र कुल बढ़ानेवाली सन्तान पैदा करें। इसका भी एक कारण है जो मैं बतलाऊँगा। ९-१३

दीर्घतमस्सिन्टॆ चरितं

प्रशस्ततपोधननंगिरस्सिन्टॆ पुत्र-
नुचथ्यनॆऩ्ऩु नाममुटय महामुनि । १
अवन्टॆ पत्नियल्लो ममत मनोहरि-
यवन्तन्नवरजन् गीष्पति देवाचार्यन् । २
अवनु ममतयां पूर्व्वजपत्नितन्निल्
विवशनायानल्लो मन्मथविकारत्ताल् । ३
ममतादिकळ् दोषमकऩ्ऩा मुनिपत्नि
ममत पऱञ्ञतु निर्ब्बन्धं कण्ट मूलं । ४
देवरा ! जारवृत्ति नरकत्तिनायुळ्ळु
देवराजाचार्य ! ञान् पऱयुऩ्ऩतु केळ् नी । ५
देवमायकळॆल्लामोर्क्कणं मनक्कान्पिल्
देवदेवन्टॆयाज्ञ लंघिच्चीटरुतल्लो । ६
वेदवेदांगज्ञनां पूर्व्वजन्तन्टॆ बीजं
मोदेन धरिच्चिरिक्कुऩ्ऩितु ञानुमिप्पोळ् । ७
निन्नुटॆ बीजमतु निष्फलमाकयिल्ल
पिन्नॆ ञानतुकूटॆ धरिप्पानाळुल्लॆटो । ८
ऒऩ्ऩतु केट्टु बृहस्पतियुमुरचॆय्ता-
नॆऩ्ऩालुमिनिक्कॊन्ऩु पुणऩ्ऩॆ मतियावू । ९

दीर्घतमस् का चरित

प्रशस्त तपोधन अंगिरस् का एक पुत्र था, जो महामुनि था; उसका नाम था उचथ्य । मनोहारिणी ममता उसकी पत्नी थी और देवों का आचार्य गीष्पति (बृहस्पति) उसका भाई था । वह अपने बड़े भाई की पत्नी ममता के प्रति कामदेव के विकार के कारण विवश हुआ । गीष्पति (बृहस्पति) का हठ देखकर अंहकार आदि दोषरहित ममता ने कहा— हे मेरे देवर ! जार का कार्य नरक पहुँचानेवाला है । हे इन्द्र के आचार्य, मेरा कहना सुनो ! देवों का मायामय काम स्मरण रहे और इन्द्र की आज्ञा का उल्लंघन भी न होना चाहिए । वेद और वेदांग के विद्वान्, आप के बड़े भाई मेरे पति का बीज मैं अब धारण कर रही हूँ । 'यह आप का बीज व्यर्थ न जायगा । इसलिए दुबारा उसे मैं ग्रहण करनेवाली नहीं हूँ । १-८ यह सुनकर बृहस्पति ने उत्तर दिया—

निर्म्मलनाय मुनि मन्मथविवशनाय्
धर्म्मादि धैर्यङ्ङ्ळ्ळे वेटिञ्ञङ्ङणञ्ञप्पोळ् । १०
गर्भगनायिट्टुळ्ळोरर्भकनुरचेय्तान् ।
निर्ब्बन्धं मति मति केळ्क्केणमिवयेल्लां ११
मुन्नमे गर्भपात्रंतन्निल् ञानकप्पेट्टे-
निन्निनिन्निवकाशं पोरायेन्नरियेणं । १२
गर्भपात्रत्तिल् मेवुमर्भकन्वाक्कु केट्टि-
ट्टद्भुतंपूण्टु गुरु निर्भर्त्सिच्चुरचेय्तान् । १३
सद्भावमत्र पारमिप्पोळ्ळे मुळ्ळुत्त नी-
युद्भविच्चीटुंनाळिलेन्तेल्लां वरुमेंटो १४
दीर्घवीक्षणं निनक्केरेयुण्टतिनाले
दीर्घमांतमस्सिनेँ प्रापिक्केन्नतुनेरं १५
शपिच्चु देवाचार्यन् जनिच्चु कुमारनुं ।
तपिच्चु कण्णिल्लाञ्ञिट्टेन्नतु निमित्तमाय् १६
अवनु दीर्घतमावेन्नु पेरुण्टायितु ।
अवनुं प्रद्वेषियां ब्राह्मणितन्नेॅ वेट्टा- १७
नवळ् पेट्टुण्टाय्वन्नु गौतमादिकळेल्ला-
मवरुं प्रसिद्धन्माराय तापसरल्लो । १८
पुत्रलोभार्त्तयाकुं प्रद्वेषियतुकालं
भर्त्तृशुश्रूष वेटिञ्ञोटिनाळेन्नेवेण्टू । १९

"यह सब ठीक है, परंतु संभोग करके ही मेरा जी शान्त होगा।" निर्मल मुनि जब काम के विवश होकर संभोग कर ही रहा था तब गर्भाशय में स्थित बच्चे ने कहा। "अपना हठ समाप्त करो और सुनो। मैं पहले ही गर्भाशय में प्रविष्ट हुआ हूँ, इसलिए इस संभोग का कोई कारण नहीं है, जान लो।" गर्भ में स्थित बालक की बात सुनकर गुरु (बृहस्पति) चकित हुए और डाँट कर इस प्रकार कहा, "अभी से तुम्हारा सद्भाव इतना बढ़ा-चढ़ा है, जब तुम पैदा होगे तो क्या-क्या होगा? तुम तो दूर देखनेवाले हो, इस लिए तुम दीर्घतम (लम्बा अन्धकार) प्राप्त करो", इस प्रकार देवाचार्य ने शाप दिया। लड़का पैदा हुआ, किन्तु आँख न होने के कारण बड़ा दुःखित हुआ। इस लिए उसका नाम हुआ दीर्घतमा। उसने प्रद्वेषी नाम की ब्राह्मणी से विवाह किया जिसने गौतमादियों को जन्म दिया। ९-१७ वे भी विख्यात तापस हुए।

अँन्नै नीयुपेक्षिच्चालॅन्तॉरु गतियॅन्नि-
क्कॅन्निनितु पऱयेणमॅन्तुकेट्टवळ् चॉन्नाळ् । २०
भर्त्तावुं भार्ययॅन्नुं चॉल्लुन्न शब्दङ्ङळ्त-
न्नर्थंत्तॆ निरूपिच्चुवेणमॅन्नोटु चॉल्वान् । २१
निन्नॆयुं कुमारन्मार्तम्मॆयुं पालिक्कया-
लॅन्नुटॆ परिश्रमं नीयरिञ्ञीलयल्लो । २२
जात्यन्धनुटॆ पिन्पे वार्द्धक्यं पारमुण्टॊ-
रास्तिक्यमॊरुनेरमॊन्निनुमिल्लतानुं । २३
वृद्धनाकिय भवान् क्रुद्धिच्चालॅन्तु फलं
निर्द्धनन्माराय् वन्नाल् तङ्ङळॊट्टटङ्ङेणं । २४
प्रद्वेषि पलतरमीवण्णं पऱञ्ञप्पोळ्
विद्वानां दीर्घतमावुद्यल्कोपेन चॉन्नान् । २५
क्षत्रियकुलं प्रापिच्चर्त्थमर्त्थिक्क नीयॆ-
न्नुत्तमतपोधनन् पऱञ्ञोरनन्तरं । २६
श्रद्धयिल्लेतुं निन्नाल् दत्तमामर्त्थं निन-
क्कॊत्ततु चॆय्तालुं नीयॅन्नोटु पऱयेण्ट । २७
ञानिनिप्पण्टेप्पोलॆ शुश्रूषिक्कयुमिल्ल
दीनयाय् चमञ्ञुञान् कालवुमिल्लयॅन्नाळ् । २८

पुत्रलोभ से दुःखित हुई प्रद्वेषी ने अपने पति की सेवा बन्द कर दी। (पति ने कहा) "अगर तुम मेरी उपेक्षा करोगी तो मेरी क्या गति होगी, यह बतलाओ।" यह सुनकर उसने कहा, "भर्ता और भार्या, इन दो शब्दों का अर्थ ठीक से समझकर आप मुझसे बोलिए। आपका और लड़कों का पालन करने में मेरा कितना परिश्रम होता है, यह आप नहीं जानते हैं। जन्म से अन्धे आप के पीछे मैं बुड्ढी हो गयी हूँ, मुझे किसी पुण्यकार्य के लिये समय नहीं मिलता। आप वृद्ध के क्रुद्ध होने से क्या फल है? जो निर्धन होते हैं उनको अपनी सीमा के अन्दर रहना चाहिए। १८-२४ जब प्रद्वेषी ने इस प्रकार कहा तब विद्वान् दीर्घतमा ने बढ़ते कोप के साथ कहा, "किसी क्षत्रियकुल में जाकर धन माँगो।" उत्तम तपोधन की यह बात सुनकर प्रद्वेषी ने उत्तर दिया, "अब मेरी श्रद्धा बिलकुल नहीं है। आप जो चाहे करें, मुझ से कहने की आवश्यकता नहीं है। अब मैं पहले की तरह आपकी सेवा न करूँगी, मैं दीन होगयी हूँ और समय भी नहीं है।" तब

औचित्यमोर्त्तु पुनरन्नेरमवळ्तन्नो-
टौचत्थ्यनाय मुनि कोपत्तोटरुळ्चेय्तु । २९
भर्त्तावे वेटियुन्नोक्कर्त्थवुं व्यर्त्थमाय्पो-
केवयुं दुष्कीर्त्तियुमेत्तुकेन्नतुनेरं ३०
प्रद्वेषि कोपं पूण्टु पुत्रन्मारोटु चोन्नाळ्
वृद्धनेगंगतन्निल् प्रक्षेपिक्केणं निङ्ङळ् । ३१
लोभमोहादिपूण्ट गौतमादिकळप्पोळ्
तापसवरनाय तातने मटियाते ३२
गंगयिलोरु तोणितन्मेल् वच्चोळुक्किना-
ळंगनाजनङ्ङळ्क्कु तोन्नुमित्तरं पण्टे । ३३
एरियवळि कीळ्पोट्टोळुकिच्चेल्लुंनेरं
तीरत्तु कुळिप्पानाय् निल्क्कुन्न बलि नृपन् ३४
कण्टवन्तन्निलेटं कारुण्यमुण्टाकयाल्
कोण्टुपोयन्तःपुरे बहुमानिच्चु भक्त्या । ३५
वच्चुकोण्टनुदिनं पूजिच्चु लाळिक्कयाल्
विश्रान्तनाय मुनितन्नोटु नृपन् चोन्नान् । ३६
सन्ततियुण्टाक्केणं निन्तिरुवटि मम
पत्नीक्कुं मुलयाळामेन्नुटे पत्नितन्निल् । ३७
ऎन्तितिनोरु कुरवन्तरमिल्लयेन्नु
चिन्तिच्चु दीर्घतमा दीर्घदर्शियुं चोन्नान् । ३८

औचथ्य (दीर्घतमा) ने औचित्य का ध्यान रखकर कोप के साथ कहा— "जो अपने पति को छोड़ देती हैं उन (नारियों) का अर्थ व्यर्थ हो और उनकी घोर बदनामी हो।" यह सुनकर प्रद्वेषी ने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रों से कहा— "बुड्ढे को गंगा में फेंक दो।" तब लोभ, मोह आदि से युक्त गौतम आदि पुत्रों ने अपने तपस्वी पिता को एक नाव पर बैठाकर गंगा में बहा दिया। पूर्वकाल में कुछ स्त्रियों को इस प्रकार का काम सूझता था। २५-३३ जब नाव नीचे की ओर बह रही थी तब राजा बलि नदी के तट पर स्नान करने आये। दीर्घतमा को देखकर उनको बड़ी दया उत्पन्न हुई और वे दीर्घमता को अपने अन्तःपुर ले गये और भक्ति के साथ उनका बहुत सम्मान किया। जब मुनि की थकन मिट गई, तब राजा ने उनसे कहा, "कृपया आप मेरी सुन्दरी पत्नी में सन्तान पैदा कीजिए।" यह सोचकर कि इसमें कोई हानि नहीं है, दीर्घदर्शी दीर्घतमा

मन्नवन् सुदेष्णयां तन्नुटॆ पत्नि तन्नॆ-
द्धन्यनां मुनिवरन्तन्नॆ शुश्रूषिप्पानाय् ३९
सान्त्वनतरं परञ्ञयच्चोरनन्तरं
चान्तेलुंमुलयाळुं दासियोटुरचॆय्ताळ् । ४०
वृद्धनामन्धन्तन्नॆ श्रद्धयिल्लिनिक्केतुं
बद्धकौतुकत्तोटु नी चॆन्नु पुणरेणं । ४१
ओर्त्तु धात्रेयिकयां शूद्रयुमतुनेरं
चीर्त्तकौतुकत्तोटु पुणर्न्नाळ् मुनितन्नॆ । ४२
कक्षपनादियायिट्टक्कालं पतिनॊन्नु
मक्कळॆज्जनिप्पिच्चु शिक्षिच्चु विद्यकळुं ४३
ऒक्कवे पठिप्पिच्चु विख्यातगुणत्तोटुं
मुख्यन्माराय कुमारन्मारुं तेजोबल- ४४
विद्यायौवनरूपशीलविज्ञानङ्ङळाल्
रुद्रन्मारॆन्नपोलॆ भद्रन्मारायुण्टायार् । ४५
सांगोपांगाम्नायादिविद्ययुं पठिच्चुळ्ळो-
रांगिरस्सुकळॆक्कण्टन्नेरं बलिनृपन् । ४६
ऎन्नुटॆ पुत्रन्मारॆन्नुरचॆय्ततु केट्टु
निन्नुटॆ पुत्रन्मारल्लॆन्नु मामुनि चॊन्नान् । ४७
निन्नुटॆ पत्नि पुनरॆन्नॆप्पुल्कुवानरु-
च्चॆन्नुटॆयरिकत्तु दासियॆ नियोगिच्चाळ् । ४८

ने अपनी स्वीकृति दे दी। राजा ने अपनी पत्नी सुदेष्णा को बहुत समझाकर मुनि की सेवा करने के लिए भेज दिया। तब उस सुन्दरी ने अपनी दासी से कहा, ३४-४० "बुड्ढे और अन्धे मुनि के प्रति मेरी तनिक भी श्रद्धा नहीं है। तुम जाकर आनन्द से उनके साथ रमो।" तब उस शूद्रा धाई ने बड़े कौतुक के साथ मुनि का आलिङ्गन किया। इसके फलस्वरूप कक्षप आदि ग्यारह पुत्र हुए जिनको सभी विद्याएँ सिखा दीं और वे बड़े गुणवान् निकले। वे बालक अपने तेज, बल, विद्या, यौवन, रूप, शील, विज्ञान आदि के कारण रुद्रों की भाँति श्रेष्ठ हुए। अंगों और उपागों के साथ वेद पढ़े हुए इन श्रोत्रियों को देखकर राजा बलि ने "ये मेरे पुत्र हैं" कहा। यह सुनकर महामुनि ने कहा, "नहीं, ये आपके पुत्र नहीं हैं। आप की पत्नी को मेरे साथ रमने से घृणा हुई, इसलिए उसने अपनी दासी को मेरे पास भेजा। ४१-४८ यह सुनकर राजा

अन्तेरं बलिनृपन् खेदिच्चु रण्टामतुं
तन्नुटे सुदेष्णयां पत्नियें नियोगिच्चान् । ४९
चेन्नुटनरिकवे निन्नोरु सुदेष्णयें-
त्तन्नुटे करंकोंण्टु तप्पिक्कण्टुरचेय्तान् । ५०
अंगनाजनङ्ङळिल् भंगियुण्टिनिक्कोन्नु
श्रृंगारियल्ल वृद्धन् कुरुटनिवनेन्नु ५१
उळ्ळिलुण्टेट्टं निनक्केन्नतुमरिञ्ञु आ-
नुळ्ळतुतन्नेयल्लो निन्नुटे कुट्टमल्ल । ५२
अंगजरसं निन्निलेतुमे नमुक्किल्लि-
ङ्ङंगनासम्मेळनलाळनादिकळोन्नुं ५३
वेणमेन्निल्लिनिक्किल्ल भूमिपालनेच्चिन्ति-
च्चेणलोचने ! तव सन्ततियुन्टाक्कुन्नेन् । ५४
अंगस्पर्शनंकोंण्टे पोरुमेन्नतुं चोन्ना-
नंगनेन्नोरु नृपनुण्टायानतुनाळिल् । ५५
इङ्ङने पलपल मन्नवरुण्टु मुन्नं
तिङ्ङिन तेजस्सोटुं ब्राह्मण पुत्रन्माराय् । ५६
अङ्ङनेतन्ने नमुक्किविटेप्पुनरिप्पोळ्
मङ्ङाते पुत्रन्मारेयुण्टाक्कामरिञ्ञालुं । ५७
परशुरामन् मुन्नमोंटुक्किक्कळञ्ञनाळ्
परिचोटुण्टाय्वन्नु भूसुरन्मारालत्रे ५८

बलि दुःखित हुए और उन्होंने दुबारा अपनी पत्नी सुदेष्णा को भेजा। सुदेष्णा जल्दी मुनि के पास पहुँची। मुनि ने टटोलकर उसे पहचाना और कहा, "महिलाओं में मैं सुन्दरी हूँ, यह श्रृङ्गारी नहीं है, वृद्ध और अन्धा है", यही तुम सोचती हो, मैं जानता हूँ। यह सच भी है, इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, स्त्रियों का स्पर्श करना, उनके साथ खेलना, यह सब मुझे नहीं चाहिए। हे मृगनयने! केवल राजा के अनुरोध से मैं तुममें सन्तान पैदा करूँगा। इसके लिए तुम्हारा शरीर स्पर्श ही पर्याप्त होगा। उसमें (दीर्घतमा द्वारा रानी सुदेष्णा से) अंगन नाम के राजा का जन्म हुआ। ४९-५५ इस प्रकार पूर्वकाल में अनेक बड़े तेजस्वी राजा ब्राह्मणों के पुत्र थे। जान लो कि हम भी उसी प्रकार अपने लिए पुत्र पैदा करा सकते हैं। पूर्वकाल में जब परशुराम क्षत्रियों को समाप्त कर चुके थे तब भूसुरों (ब्राह्मणों) द्वारा ही फिर सन्तानें

पृथिव्यप्तेजोवाताकाशङ्ङळ् निजनिज-
गन्धादि विषयङ्ङळ् तङ्ङळॆ वॆटिकिलुं ५९
चन्द्रादित्यन्मार् शीतोष्णङ्ङळॆ वॆटिकिलुं
वृत्रनाशनन् निजविक्रमं वॆटिकिलुं ६०
धर्म्मराजनु निज धर्म्मत्तॆ वॆटिकिलुं
सत्यत्तॆ वॆटिकयिल्लॆन्नु ञानॊरुनाळुं । ६१
तङ्ङळिल् पलपल कथकळ् परञ्ञुट-
निङ्ङनॆतन्नॆयॆन्नु कल्पिच्च वऴि केळ्प्पिन् । ६२
ऎङ्किल्ञान् वेदव्यासन्तन्नॆक्कॊण्टुण्टाक्कुवन्
तिङ्कळ्तन्कुलमॆन्नु चॊल्लिनाळ् सत्यवति । ६३
दोषमिल्लतिनॆन्नु पलरुं चॊन्नशेषं
योषमारोटु चॆन्नु परञ्ञु सत्यवति । ६४
पण्टु ञान् तोणि कटत्तीटुन्न कालत्तिङ्क-
लुण्टायि पराशर पुत्रनायॊरु मुनि । ६५
दिव्यनॆत्रयुमवनवनॆ निरूपिच्चाल्
सर्व्वसङ्कटं तीरुं संशयमिल्लयेतुं । ६६
ऎङ्किलङ्ङनॆयाकॆन्नवरुमुरचॆय्तार्
सङ्कटंतीर्न्नु कुलसन्ततियुण्टावानाय् । ६७

पैदा हुईं। पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश भले ही अपने-अपने गन्ध आदि विषय छोड़ दें, चन्द्र और सूर्य भले ही अपना शैत्य (ठंडक) और ऊष्मा (गर्मी) छोड़ दें, वृत्र के नाशक (इन्द्र) भले ही अपना विक्रम छोड़ दें, धर्मराज भले ही अपना धर्म छोड़ दें, पर सत्य को मैं कभी न छोड़ूँगा। ५६-६१ (इस प्रकार) आपस में तरह-तरह कीबातें करने के बाद जो मार्ग निश्चित किया वह सुन लिजिए। सत्यवती ने कहा—अगर ऐसा है तो मैं वेदव्यास के द्वारा चन्द्रवंश की सन्तानें पैदा कराऊँगी। जब बहुतों ने कहा कि इसमें कोई दोष नहीं है तो सत्यवती ने अंबिका और अंबालिका से जाकर कहा। "पूर्वकाल में जब मैं नाव चलाती थी तब मुझसे पराशर के पुत्र के रूप में एक मुनि (व्यास) का जन्म हुआ। वह एक दिव्य पुरुष हैं। उनका ध्यान करो तो हमारा सारा दुःख समाप्त हो जायगा।" तब दोनों ने कुल को (बढ़ानेवाली) सन्तान हो, इस बुद्धि से कहा "ऐसा ही हो।" ६१-६७

धृतराष्ट्रादिकळुटॆ उल्पत्ति ।

अक्कालं जननियुं व्यासनॆ निरूपिच्चाळ्
भक्तियोटवन्वन्नु तॊऴुतु माताविनॆ १
तन्मतमऱियिच्चाळम्मयुमतुनेरं
कलुषमकन्नॊरु मामुनितानुं चॊन्नान् । २
सम्मतमल्लॆङ्किलुमम्म चॊन्नतु केट्टाल्
नन्म वन्नीटुमव्ने निर्म्मलन्माक्कुं नूनं । ३
धर्म्मत्तिन् गतियेतुमऱिवान् वशमल्ल
कर्म्मफुळ्ळवयॆल्लां वरुमॆन्नते वेण्टु । ४
मन्मथलीलकळिलॆन्मनमळिञ्ञीटा
वॆण्मतिमुखिमाक्र्कुमॆन्मेनि तॊट्टुकूटा । ५
ऎङ्किलुं कनिवोटु सन्ततियुण्टाक्कि ञान्
सङ्कटं तीर्प्पनॆन्नु मातावोटुरचॆय्तान् । ६
कृष्णद्वैपायननां मामुनि वेदव्यासन्
विष्णुतान्तन्नॆवन्नु पिऱन्न दिव्यमूर्त्ति ७
सोदरन् मुन्पिल्वेट्टॊरंबिकागृहंतन्नि-
लादरवोटु चॆन्नानाकातवेषत्तोटुं ८

धृतराष्ट्र आदियों की उत्पत्ति

उस समय माता सत्यवती ने व्यास का ध्यान किया। तब व्यास ने भक्ति के साथ आकर माता की वन्दना की। तब माता ने उनसे अपना विचार प्रकट किया और मुनि ने बिना व्याज के कहा— "कहते हैं कि सहमत न होने पर भी अगर कोई अपनी माता का कहना माने तो उस निर्मल व्यक्ति का भला होगा।" धर्म की गति जानना बहुत कठिन है; इतना तो अवश्य है कि अपने कर्मों का फल (अवश्य प्राप्त) होगा। कामदेव की लीलाओं में न तो मेरा मन लग सकता है और न चन्द्र-मुखियाँ (महिलाएँ) ही मुझे स्पर्श कर सकती हैं। और (आपका) दुःख समाप्त करूँगा।" फिर भी मैं सन्तान पैदा करूँगा अपनी माता से इस प्रकार कह कर महामुनि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास जो दिव्यमूर्त्ति भगवान् विष्णु ही का अवतार थे अपने भाई की पूर्वपत्नी अंबिका के घर विचित्र वेष धारण करके सादर पहुँचे। १-८ तब महिलाओं में रत्न अंबिका ने उनका वह विकृत वेष और दुर्गन्ध न सह सकने के कारण आँख

वेषवैरूप्यमोरु गन्धवुं सहियाञ्ञु
योषमार्मणियाकुमंबिकयतुनेरं । ९
कण्णुकळ् चिम्मिप्पूण्टाळतुकारणमायि-
क्कण्णुकुटातें पिऽन्नीटिनान् कुमारनुं । १०
पिन्नेयङ्ङंबालिकतन्नुटें गृहं तन्निल्
चॆन्नानन्नोरुदिनमवळुमतुनेऽं । ११
पाण्डुवर्णत्तोप्पूण्टु पुणन्नाळितुकोण्टु
पाण्डुवाय्त्तन्नेयोरु सुतनुमुण्टाय्वन्नु । १२
नन्नायिट्टोरु सुतनंबिक पेटुन्टावा-
निन्नोरु कळिवाक्कोन्नम्मतन् नियोगत्ताल् १३
पिन्नेयुमोरु निशि चॆन्नितु वेदव्यास-
नन्नवळ् दासितन्ने नन्नायिच्चमयिच्चु १४
चॆन्नालुमेन्नयच्चाळवळुं मुनितन्ने
वन्दिच्चुनिन्नु भावमऽिञ्ञु भक्तियोटे १५
चोव्वोटे परिलाळिच्चीटिनाळतुमूलं
दिव्यनायोरु सुतनवळ्क्कुमुन्टाय्वन्नु । १६
शूद्रयोनियिलाणीमाण्डव्यमुनिशापाल्
श्राद्धदेवनुं वन्नु पिऽन्नु विदुरराय् । १७
इत्थमाकर्ण्य जनमेजयन् चोद्यं चेय्तान्
उत्तमनाय वैशन्पायनमुनियोटु । १८

वन्द करके उनका आलिंगन किया, जिसके फलस्वरूप उसने एक अन्धे पुत्र को जन्म दिया। तदनन्तर वे एक दिन अंबालिका के घर गये। उन्हें देखकर वह पाण्डुरङ्ग की हो गयी और उसी स्थिति में संयोग होने के कारण पाण्डु रङ्ग के पुत्र का जन्म हुआ। जब माता (सत्यवती) ने आज्ञा दी कि ऐसा करो कि अंबिका का एक अच्छा पुत्र हो जाय तब एक रात वेदव्यास फिर उसके घर गये। उस दिन उसने अपनी दासी को अच्छी तरह सजाकर कहा कि तुम जाओ। वह गयी और मुनि का आशय समझकर भक्ति के साथ उनके सामने खड़ी हो गयी और अच्छी तरह से उनके साथ रमी, जिसके फलस्वरूप उसने एक दिव्य पुत्र को जन्म दिया। ९-१६ मुनि माण्डव्य के शाप के कारण श्राद्धदेव (यमराज) का शूद्रयोनि में यह विदुर के रूप में जन्म हुआ। यह सुनकर जनमेजय ने श्रेष्ठ मुनि वैशम्पायन से पूँछा— मुनितिलक माण्डव्य ने क्रुद्ध

माण्डव्यनाय मुनि तिलकन्कोपेन मा-
र्त्ताण्डपुत्रनेंश्शपिच्चीटुवानेंन्तु मूलं ? १९
अेंन्नतु केट्टु वैशम्पायननरुळ्चेंय्तान्
मन्नवनाय जनमेजयन्तन्नोटेंल्लां । २०
ओंन्नोंळियातें सूतन् शौनकादिकळोटु
नन्नायिप्पर्ञ्ञुकेळ्प्पिच्चितु वळिपोलें । २१
चोंल्लुवनेंङ्किलतु निङ्ङ्ळुं केट्टुकोंळ्विन्
नल्ल सत्कथ केट्टाल् नरकमुण्टाय्वरा । २२

माण्डव्य शापं

पाण्डित्यं कलन्नोंरु भूदेवन् पण्टुण्टायि
माण्डव्यनेंन्नु भुवि विश्रुतनामत्तोटु । १
वानप्रस्थाश्रमवुं पालिच्चु नानातीर्थ-
स्नानशुद्धात्मावायोराश्रममुपग्रामं २
काननदेशे तपोनिष्ठया चिरकालं
मौनवुंपूण्टु वाळुंकालमीश्वराज्ञया ३
तत्र संप्राप्तन्मारायार् चिल दस्युक्कळुं
वित्तरक्षिकळुमन्वेषिच्चु पिन्पे चेंन्नार् । ४

होकर-मार्तण्ड पुत्र (सूर्य के पुत्र यमराज) को क्यों शाप दिया। यह सुनकर वैशम्पायन ने राजा जनमेजय से सब कह दिया। सूत ने भी कुछ न छोड़ते हुए शौनक आदियों को सब सुना दिया। मैं भी उसको बता दूँगा, आप लोग सुन लीजिए। अच्छी कथा सुनने से नरक न जाना होगा। १७-२२

माण्डव्य का शाप

पूर्वकाल में एक विद्वान् ब्राह्मण थे जिनका पृथिवी में विख्यात नाम था माण्डव्य। वे वानप्रस्थ आश्रम का पालन करते हुए भिन्न-भिन्न तीर्थों में स्नान करने से शुद्ध होकर गाँव के पास एक वन में निष्ठा के साथ मौन का अवलंबन करते हुए बहुत दिन से रहते थे। ईश्वर की आज्ञा से वहाँ कुछ दस्यु (चोर) पहुँचे और धन की रक्षा करनेवाले आरक्षक भी उनके पीछे पीछे पहुँचे। भयभीत दस्युओं ने धन को वहीं कहीं छिपा दिया और वे भाग गये। तब एक कुटी के सामने जटा,

वित्रस्तन्मारायोरु दस्युक्कळर्त्थमॆल्लां
तत्र सन्निधानं चॆय्तविटॆ मऱन्नप्पोळ् ५
जटयुं वल्कलयुं भस्मवुं धरिच्चॊरु
विटपिमूले नल्लॊरुटजाङ्कणे कूप्पि- ६
त्तॊऴुतुनिल्क्कुन्नॊरु तापसश्रेष्ठन्तन्नॆ-
त्तॊऴुतु चोदिच्चितु नृपतिभटन्मारुं । ७
कळ्ळन्मारेतुवऴि पोयितॆन्नतुजङ्ङळ्-
क्कुळ्ळवण्णमेयरुळ्चॆय्येणमॆन्नु चॊन्नार् । ८
तापसन् समाधियिलुऱच्चु निल्कयाले
भूपतिभटन्मार् चोदिच्चतु केट्टीलतुं । ९
ऒन्नुमे मिण्टाय्कयाल् पिन्नॆयुमन्वेषिच्चु
चॆन्नु कळ्ळन्मारेयुं पिटिच्चु कॆट्टीटिनार् । १०
अर्त्थवुमॆल्लामॆटुत्तवनीश्वरन्मुन्पिल्
भृत्यन्मार् कॊण्टुवच्चु वृत्तान्तमॊक्कच्चान्नार् ११
किंकरन्मार्क्कु मुनीन्द्रं प्रति मनक्कान्पिल्
शङ्कयुळ्ळतु केट्टु भूपति नियोगिच्चान् । १२
चोरन्मारायवरॆयॊक्कवे शूलत्तिन्मे-
लारोपिच्चीटुकॆन्नु केट्टुटन् भटन्मारुं १३
चोरन्मारोटुकूटॆश्शूलाग्रत्तिन्मेलिट्टार्
धीरनां तपोधनन्तन्नॆयुमॆत्र कष्टं । १४
कॊल्लातॆ शूलत्तिन्मेलिट्ट तापसन् तनि-
क्किल्लेतुमाहारमॆन्नाकिलुमनेकं नाळ् १५

वल्कल और भस्म धारण किये हुए एक तापस हाथ जोड़े दिखाई दिया। आरक्षकों ने उससे हाथ जोड़कर पूछा। १-७ "चोर लोग किस रास्ते से भागे?"— यह हमको ठीक से बतला दो। तापस तो अपनी समाधि में स्थिर था, इस लिए उसको आरक्षकों की बात न सुनाई दी। जब उसने कुछ भी न कहा, तब उन्होंने फिर पूछा। तदनन्तर आरक्षकों ने चोरों को पकड़कर बाँध लिया। प्राप्त हुआ सारा धन राजा के सामने रखकर आरक्षकों ने सारा हाल कह सुनाया। यह जानकर कि आरक्षकों का मुनीन्द्र के प्रति भी संदेह है राजा ने इस प्रकार आज्ञा दी— "सभी चोरों को शूली पर चढ़ा दो।" यह सुनकर आरक्षकों ने चोरों के साथ धीर तापस को भी शूली पर चढ़ा दिया। कितना अन्याय है! ८-१४

चॆन्निट्टुं मरिच्चतिल्लॆन्नतु काण्ककॊण्टु
चन्नितु मुनिकळुं रात्रियिल् पक्षिकळाय् । १६
ऎन्तॊरु मूलं भवानिङ्ङनॆ वरुवानॆ-
न्नन्तरं कूटातॆकण्टरुळिच्चॆय्तीटणं १७
मल् कर्म्मफलमत्रे भूपतिप्रवरनु
दुष्कृतमेतुमिल्लॆन्नतु केट्टवर्कळुं १८.
पोयिनि वृत्तान्तङ्ङळरिञ्ञु रक्षिकळुं
नायकनाय नरपालकनोटु चॊन्नार् । १९
मन्त्रिकळोटुं कूटिच्चॆन्नु भूपालेन्द्रनु-
मन्धत्वं क्षमिच्चुकॊळ्कॆन्नभिवाद्यंचॆय्तान् । २०
शूलवुमिळकाञ्ञिट्टट्टत्तु मुरिच्चितु
भूलोकपतियेयुमयच्चु मुनीन्द्रनुं । २१
आणिमाण्डव्यनॆन्नु नामवुमुण्टाय्वन्नु
ज्ञानियां मुनि पिन्नॆ प्रापिच्चु कालधर्म्मं । २२
अन्तकन्तन्नोटॊन्नु चोदिच्चु माण्डव्यनु-
मॆन्तु कारणमॆन्नॆश्शूलत्तिन्मेलाक्कुवान् ? २३
ईर्क्किल् कूर्प्पिच्चु मुन्नमीच्चयॆक्कळुवेट्टि
तीर्क्कॆणमतिन्फलमॆन्नतिन्नत्रे चॆय्तु । २४

जीवित शूली पर चढ़े हुए (सजा पाये हुए) तापस को आहार तो मिलता ही नहीं था, इस पर भी अनेक दिन बीतने के बाद, भी नहीं मरा। यह देखकर मुनिगण पक्षि के रूप में रात को वहाँ गये और बोले—"आप को यह सब कैसे हुआ ? इसका तथ्य हम लोगों को बतला दीजिए।" "यह मेरे ही कर्म का फल है। राजवर का इसमें कोई अपराध नहीं है।" यह सुनकर वे चले गये। आरक्षकों को यह समाचार मालूम हुआ और उन्होंने अपने नायक राजा को सब बतला दिया। भूपाल अपने मन्त्रियों के साथ गये और वंदना करके कहा "मेरा (अपराध) क्षमा करो। शूल के न हिलने के कारण वह काटा गया और मुनीन्द्र ने राजा को बिदा किया। १५-२१ तब से तापस का नाम आणिमाण्डव्य हुआ। तत्पश्चात् उसने काल-धर्म (मृत्यु) प्राप्त किया। माण्डव्य ने यमराज से पूछा—"मैं क्यों शूल पर चढ़ाया गया ?" (यम ने उत्तर दिया) "पूर्वकाल में इषीका (सींक) की नोक तेज करके उससे तुमने मक्खी को बेधा था। उसी का यह फल है।" ठीक है, पर एक बात

ऐँङ्किलोँन्नरियेणं द्वादशवयस्सोळं
संक्रीडारतन्मारां बालन्मार् चेय्युं कर्म्मं २५
ओँन्निनुं फलं पिन्नेँयिल्लल्लो बुद्धिपूर्व्वं-
मोँन्नरिञ्ञल्लाय्कयाल् सूक्ष्मधर्म्मज्ञनल्ल । २६
केवलं भवानतुकारणं शूद्रयोनौ
सेवार्त्थं पिऱन्नु नूऱाण्टु वाळुकयेँन्नान् । २७
धर्म्मराजावुतन्नेँ पिऱन्नोरवन्तन्टे
धर्म्मनिष्ठकळेँल्लामेँन्तिनु पऱयुन्नु । २८
धृतराष्टरुं नल्ल पाण्डुवामनुजनुं
धृतियेऱीटुन्नोरु विदुरन् तानुमायि । २९
वळर्न्नुतुटङ्ङिनार् मूवरुमोरुमिच्चु ।
वळर्न्नु सन्तोषवुं पुरवासिकळ्क्केल्लां ३०
गान्धारराजन्तन्टे मकळाय् मरुविन
गान्धारितन्नेँ वेट्टू धृतराष्ट्रनुमन्नाळ् । ३१
वारेँळुं वसुदेवन्तन्नुटे भगिनियां
वारिजमिळियाळेँप्पाण्डुराजनुं वेट्टान् । ३२
माद्रियां मद्रराजन्तन्नुटे मकळ्तन्नेँ-
प्पार्थिववीरन् पाण्डु वेट्टितु रण्टामतुं । ३३
कुन्तिभोजन्टे मकळाकिय कुन्तिक्कु प-
ण्टन्तणनाय दुर्व्वासावुतान् पठिप्पिच्चान् ३४
अञ्चु मन्त्रङ्ङळतिलोँन्नवळ् परीक्षिप्पान्
नेञ्चकं तन्निल् सूर्यदेवनेँद्धयानं चेय्ताळ् । ३५

है। बारह बरस तक के बच्चे जो खेलते समय करते हैं उसका कोई फल नहीं है, क्योंकि वह जान बूझकर नहीं किया जाता। आप सूक्ष्मधर्म नहीं जानते हैं। इसलिए आप शूद्रयोनि में सेवा करने के लिए जन्म लें और सौ बरस जीवित रहें। जब धर्मराज स्वयं जन्म लेते हैं तो उनकी धर्मनिष्ठा क्या वर्णन करें ? इस प्रकार धृतराष्ट्र, छोटा भाई पाण्डु, बड़े धैर्यवाले विदुर, तीनों साथ-साथ बढ़ने लगे। नगरवासियों का आनन्द भी बढ़ा। २२-३० गान्धार के राजा की पुत्री गान्धारी से धृतराष्ट्र का विवाह हुआ। विख्यात वसुदेव की सुन्दरी बहन (कुन्ती) से राजा पाण्डु का विवाह हुआ। मद्रराजा की पुत्री माद्री से वीर राजा पाण्डु का दूसरा विवाह हुआ। कुन्तिभोज की पुत्री कुन्ती को पूर्वकाल में

कन्यकयॆन्नाकिलुमादित्यन् पुणर्न्नप्पोळ्
कर्णनॆन्नॊरु मकन्तन्नॆयुं पॆट्टाळवळ् । ३६
चण्डभानुविन्मकन् पिऱक्कुंनेरंतन्नॆ
कुण्डलङ्ङळुं नल्ल कवचमतुमुण्टु । ३७
कळ्ळक्काटॆन्नतवळुळ्ळिले निरूपिच्चु
वॆळ्ळत्तिल् कळञ्ञॊरु पैतलॆक्कण्टनेरं ३८
राधावल्लभनाय सूतनुमॆटुत्तुकॊ-
ण्टादरवोटु तन्टॆ मकनाय् वळर्त्तिनान् । ३९
कुण्डलकवचङ्ङ ळुण्टॆङ्किलवनॆभू-
मण्डलत्तिङ्कलार्क्कुं जयिच्चुकूटायल्लो । ४०
वासवन् मऱयवनाय् चॆन्नु मायत्ताले
वासराधीशसुतनोटव वाङ्ङिक्कॊण्टान् ४१
मार्त्तण्डसुतन् दानशीलरिल् मुन्पनल्लो
कूर्त्तमूर्त्तॊरु वेलुं कॊटुत्तानुम्परनाथन् ४२
अङ्ङनॆयुळ्ळवन्तन्नम्मया कुन्तितानुं
मंगलापाङ्गियाय माद्रियुमायिप्पाण्डु ४३
मन्मथलीलपूण्टु वसिक्कुं कालत्तिङ्कल्
नन्मयॆन्नियॆ मट्टु काण्मानिल्लॊरॆटत्तुं ४४

ब्राह्मण दुर्वासा ने पाँच मंत्र सिखाये थे। उनमें से एक की परीक्षा करने के लिए उसने सूर्य का ध्यान किया। तब सूर्य ने आकर उस कन्या का आलिंगन किया। फलस्वरूप उसने कर्ण नामक पुत्र को जन्म दिया। जन्म लेते समय ही सूर्यपुत्र कुण्डल और कवच पहने हुए था। ३१-३७
उसका जन्म अवैध समझकर माँ ने उसे नदी में फेंक दिया। उस बालक को बहते देखकर राधा के पति, सूत ने उसे ले लिया और आदर के साथ उसका पुत्र की तरह पालन किया। जब तक वह कुण्डल और कवच पहने रहता तब तक पृथिवी में कोई भी उस को हरा न सकता, (यह जान कर) इन्द्र ने अपनी माया से ब्राह्मण बनकर सूर्यपुत्र से (कुण्डल और कवच) दोनों ले लिये क्योंकि सूर्यपुत्र दानशीलों में श्रेष्ठ थे। बदले में देवराज ने कर्ण को एक शक्ति दी। इस प्रकार के पुरुष की माता कुन्ती और सुन्दर आँखवाली माद्री के साथ जब (पाण्डु) कामदेव की लीलाएँ करते हुए रहते थे, तब आनन्द के सिवाय और कुछ न दीखता था। ३८-४४
विख्यात भीष्म का कहना कभी न टालते हुए चारों दिशाओं को जीतकर

चौल्कौण्ट भीष्मर्तन्टॆ चौल्कल्निन्निळकातॆ
दिक्कुकळॊक्कॆज्जयिच्चग्रजन्तानुमायि ४५
मुख्यभोगेन सुखिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्क-
लुळ्क्कान्पिलॊन्नु तोन्नि पाण्डुविन्नापत्तिन्नाय् । ४६
कान्तियेरीटुन्नोरु कान्तमारोटु कूटि
कान्तारंतन्निल्प्पुक्कु नन्नायि रमिक्केणं । ४७
वाट्टमॆन्नियॆ मम नायाट्टिन्वैदग्ध्यवुं
काट्टणमिवर्क्कॆन्नुं कौतुकत्तोटुकूटि ४८
द्युमणितन्टॆ रश्मिपोलुमङ्ङणयात
हिमवान्तन्टॆ तॆक्कॊप्पुरत्तॊप्पॆरुं काट्टिल् ४९
पॆरिकॆ रसंपूण्टु कळिच्चु मरुविनान् ।
गिरिश्रृङ्गङ्ङळ्तोरुमतिकौतुकत्तोटे ५०
करिणीयुगमद्ध्यगतनाय् मदिच्चॊरु
करिवीरनॆप्पोलॆ मदनविवशनाय् ५१
करिणीगमनमाराकिय भार्यमारां
तरुणीमणिकळां कुन्तियुं माद्रितानुं ५२
सरसीरुहशरसमनां कान्तन्तन्नॆ-
श्शरतूणीरकराळोज्ज्वलल् करवाळ- ५३
धरनाय् शरासनकरनाय् काणुन्तोरुं
सरसीरुहशरनिकरपरवश- ५४
तरमानसमाराय् मरुवीटिननेरं
हरिण-हरि-करि-किरि-शार्दूलादिक- ५५

अपने बड़े भाई के साथ जब सुख से रहते थे तब पाण्डु को दुर्भाग्य लानेवाली एक बात सूझी। वह यह थी कि बड़ी कान्तिवाली अपनी पत्नियों के साथ वन में कामलीला करें। इस इच्छा से भी कि मैं शिकार खेलने में अपना कौशल इनको दिखलाऊँ, पाण्डु हिमालय के दक्षिण की ओर एक गहन वन में, जहाँ सूर्य की किरणें तक न प्रवेश कर सकती थीं, बड़े आनन्द से खेलते रहे। दो हथिनियों के साथ हर एक पर्वत-शिखर पर आनन्द के साथ खेलनेवाले हाथी के समान मदन से विवश हुए तथा कमलबाण (कामदेव) के तुल्य चमकती हुई भयानक तलवार को धारण करनेवाले अपने पति पाण्डु को देखकर हथिनी के समान गतिवाली तरुणियाँ कुन्ती और माद्री मदनबाणों की वर्षा से विवश हो गईं। ४५-५४

ळरिकॆ दरीमुखगतङ्ङळाय् काणुन्पोळ्
शरङ्ङळ्कॊण्टु वीणुं मरणभयंकॊण्टुं ५६
मरङ्ङळ् मऱ्ञ्ञु पोय्निन्नु नोक्कीटुन्नतुं
निष्कुटत्तिङ्कल् मुन्नमिरुन्नीटनपोलॆ ५७
मर्क्कटक्रीडकळ् कण्टुळ्क्कौतूहलं पून्टुं
कुक्कुटरतिक्रीडादिकळ् कण्टानन्दिच्चुं ५८
पॊल्क्कुटङ्ङळ्क्कुनेरां तैक्कॊङ्क नोक्किक्कण्टुं
कोकिल कोक केकी चातक शूकादि सं- ५९
भोगभेदङ्ङळ् कण्टु रसिच्चुमतिन्मद्ध्ये
वेगमोटन्पुकान्टु माळ्कि वीणीटुन्नतुं ६०
शोकमोटिणकूटिक्केणुवीणोटुन्नतुं
करटिक्कुलं तम्मिल् कटिच्चुकळिप्पतुं
करिणिकळॊप्पूण्टु करिकळ् पुळप्पतुं ६१
किटिकळ् पिटकळॊप्पिटिच्चु पुल्कुन्नतुं
पिटकळोटु चेर्न्नु पक्षिकळ् कळिप्पतुं ६२
कण्टु कौतुकं पूण्टु कण्टिवार्कुळलिकळ्
कण्ठाश्लेषवुं चॆय्तु कान्तनुं तङ्ङळुमाय् । ६३
कण्ट काननं तोऱुं रमिच्चु वसिक्कयुं
तण्टार्बाणनुमितु कण्टेट्टं हसिक्कयुं ६४

वे हिरण, सिंह, हाथी, जङ्गली सुअर, बाघ आदि को निकट ही गुहाओं के द्वार पर देखती थीं। किसी-किसी को बाणों के लगने से गिरते, औरों को प्राणभय से पेड़ों की आड़ में छिप जाते देखती थीं। दोनो कुतूहल के साथ-साथ बन्दरों के खेल देखती थीं, जैसे पहले अपने ही उपवन में देखती थीं। वे कुक्कुटों की कामलीलाएँ देखकर भी आनन्दित हुईं। सोने के कलश के समान अपने तरुण स्तनों को कोयल, चकवा, मोर, पपीहा, तोता आदियों के संभोग करने के प्रकारों को देखकर आनन्दित हुईं। उन्होंने बीच में जानवरों को तेज़ बाणों से घायल होकर गिरते भी देखा। ५५-६० जानवरों का अपने दुःख में साथ हो जाना और भागना, भालुओं का आपस में काटते हुए खेलना, हाथियों का हथिनियों के साथ रमना, सूअरों का अपनी स्त्रियों को पकड़कर उनके साथ खेलना, अपनी मादाओं के साथ चिड़ियों का खेलना, यह सब देखकर दोनों को बड़ा कौतुक हुआ और उन्होंने अपने प्रियतम का आलिंगन किया। कामदेव के समान

माकन्दमकरन्दबिन्दु पानवुं चेय्तु
कूकुन्नपिककुलपञ्चमं केट्टु केट्टुं ६५
वण्टुकळ् मधुपानं चेय्तु मत्तंतपूण्टु
कोन्टाटि मुरण्टुटन् कण्टु पुष्पङ्ङळ्तोरुं ६६
कुण्ठभाववुं नीक्किस्संभ्रमिच्चीटुन्नतुं
कण्टोरानन्दं पूण्टुमधरपानं चेय्तुं ६७
मन्मथलीलकोन्टु कण्मुन चान्पि चान्पि
सम्मोदं वळर्न्नुळ्ळिल् सम्मोहं पेरुकियुं ६८
वन्मलमुकळेरि निर्म्मलशिलातले
नन्मलर्मेत्ततन्मेलुन्मेषं पूण्टु वाणुं ६९
भामिनिमारुमायिस्सानन्दमिरिक्कुन्पोळ्
कामनु समनाय पान्डुवां नृपवीरन् ७०
कलयुं मानुं कूटिक्कमलशरमेट्टु
कळिक्कुन्नतुकण्टु कोट्टुत्तु शरंकोण्टु । ७१
शरमेट्टतुनेरं मृगवु मुनियायि
नरपालकन्तन्नेशशपिच्चु मरिक्कुन्पोळ् । ७२
कनत्तमुलमारेक्कळिच्चु तोटुन्नाकिल्
निनक्कुमेन्नेप्पोले वरिकयिनिमेलिल् । ७३
शपिच्चु मुनितानुं मरिच्चानतुकोण्टु
मरिच्चुमरियाते पाण्डुवां नृपन्तानुं । ७४

नृपवीर पाण्डु अपनी भामिनियों (पत्नियों) के साथ बन-बन में रमने लगे, जिसे देखकर कमलबाण (कामदेव) को बड़ा आनन्द आया। ६१-६६ माकन्द वृक्ष का रस पी-पी कर गानेवाली कोयलों का पञ्चम स्वर सुनते हुए चले, भँवरों का मधुपान से मत्त होकर फूलों में आनन्द के साथ संचार करना देखकर आनन्दित हुए और आपस में चुंबन और अन्य कामलीलाएँ कीं, ज़िससे उनको बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ, पर संमोह भी बढ़ा। एक पर्वत शिखर पर चढ़कर एक निर्मल शिलातल पर फूलों का बिस्तर बनाकर वे उस पर आनन्द से लेटे। उस समय कामदेव के समान पाण्डु ने हिरण के एक मिथुन (जोड़े) को कामदेव के बाणों से व्याकुल होकर रमण करते देखा और तत्क्षण ही उस पर अपना तीर चलाया। बाण के लगते ही हिरण एक मुनि बन गया और उसने मरते समय राजा को शाप दिया। ६७-७३ "अगर तुम कामलीला में

अत्तलपूण्टवन् चेन्नु हस्तिनपुरं पुक्कु
वृत्तान्तं सत्यवतितन्नोटुं भीष्मरोटुं ७५
बन्धुक्कळ् मट्टुळ्ळवर्तम्मोटुमरियिच्चु ।
वेन्तुवेन्तेंळुन्नोरु चिन्तयुमुळ्ळिल्वकोण्टु ७६
दानवुं मरयवर्क्कावोळं चेय्तु तन्टे-
याननं पत्मं ताळ्त्तिब्भार्यमारोटु कूटि ७७
उन्नतमाय शतश्रृंगमां मलतन्मेल्
संन्यासवृत्तियोटे मन्नवन् चेन्नु पुक्कान् । ७८

धार्त्तराष्ट्रोत्पत्ति ।

अन्नु गान्धारीतनिक्कुण्टायि गर्भमेन्नु
मन्नवन् पाण्डु केट्टु चिन्तिच्चु वाळुंकालं १
कुन्तियोटुरचेय्तु सन्ततियुण्टाक्कुवा—
नेन्तोरु कळिवेन्नु मन्त्रिच्चनेरमवळ् २
मन्त्रत्तिन् बलंकोण्टु धर्म्मराजने प्रापि-
च्चन्तरं कूटातोरु नन्दनन्तन्नेप्पेट्टाळ् । ३
कुन्तिक्कु नन्नायोरु सन्ततियुण्टायतु
चिन्तिच्चु गान्धारियुमुदरं कलक्किनाळ् । ४

स्त्री का स्पर्श करोगे तो तुम्हारी भी वही गति होगी जो इस समय मेरी हुई है।" यह शाप देकर मुनि मर गये और राजा पाण्डु भी (उस शाप को सुनकर मानो) वेमौत ही मर गये। वे दुःखित होकर हस्तिनापुर लौटे और सारा वृत्तान्त सत्यवती, भीष्म और अन्य बन्धुओं को सुनाया। चिन्ता से भीतर जलते हुए उन्होंने ब्राह्मणों को अपरिमित दान दिया और अपने मुखकमल को नीचा करके अपनी पत्नियों के साथ, संन्यास ग्रहण करके एक ऊँचे पर्वत शिखर पर जाकर रहने लगे। ७४-७९

धार्तराष्ट्रों की उत्पत्ति।

उन्हीं दिनों राजा पाण्डु ने सुना कि गान्धारी को बच्चा होने वाला है। उन्होंने चिन्तित होकर कुन्ती से कहा और उससे पूछा कि मेरे सन्तान होने का क्या उपाय है। कुन्ती ने अपने मन्त्र के बल से धर्मराज को प्राप्त किया और फलस्वरूप बिना विघ्न के एक पुत्र को जन्म दिया। यह सुनकर कि कुन्ती के एक अच्छी सन्तान हुई है, गान्धारी को बड़ी जलन हुई। १-४

गर्भवुमोरु मांसपिण्डमाय् पिरन्नितु
अप्पोळ् वेदव्यासनविटेक्कोळुन्नळ्ळि । ५
पिण्डत्ते मुनि नूरु खण्डमाय् खण्डिच्चोक्क-
क्कुण्डिकळ्तन्निलाक्किशेषिच्च लेशत्तेयुं ६
कुन्तियुं मन्त्रं कोण्टु मारुतदेवन्तन्ने-
च्चिन्तिच्चु पुणर्न्नप्पोळ् गर्भवुमुण्टाय्वन्नु ७
अवकालमोरुनिशि मांसखण्डत्तिलोन्नु
पोल्क्कलशवुंपोट्टिप्पुरत्तु पुरप्पेट्टु । ८
दुरियोधननायतवन्पोलतुनेरं
परिके दुर्न्निमित्तमुण्टायितेन्नु केळ्प्पू । ९
पिट्टेन्नाळुच्चयान्पोळ् कुन्तियुं भीमन्तन्ने-
प्पेट्टितु शुभमायि मरुवुं लग्नंकोण्टे । १०
ओरोरोदिनन्तोरुमोरोरो कुंभं भेदि-
च्चोरोरो तनयन्मार् गान्धारि क्कुण्टाय् वन्नु । ११
दुरियोधनन् ज्येष्ठननुजन् दुश्शासनन्
दुर्द्धर्षन् दुर्म्मुखनुं जलसन्धनुं सहन् १२
सांबनुं विन्दननुविन्दनुं दुष्प्रसहन्
चोल्लेळुं सुबाहुवुं दुष्प्रधर्षणन्तानुं १३
दुर्म्मदन् चित्रयोधि दुष्कर्ण्णन् कर्ण्णन् पिन्ने-
क्केट्टुकोण्टालुं विविंशतियुं विकर्ण्णनुं १४

गान्धारी का गर्भ एक मांसपिण्ड के रूप में निकला। उसी समय वेदव्यासजी वहाँ पधारे। उन्होंने मांसपिण्ड के सौ टुकड़े कर दिये और उनको और बचे अंश को कलशों में रख दिया। कुन्ती ने अपने मन्त्र के द्वारा वायुदेव का ध्यान किया और फलस्वरूप उसको गर्भ हुआ। उसी समय एक रात उन मांसपिण्ड के टुकड़ों में से एक अपने कलश को तोड़कर बाहर निकला। वही दुर्योधन था। सुना जाता है कि उस समय अनेक दुर्निमित्त (अशकुन) दिखायी दिये। १-९ दूसरे दिन मध्याह्न में कुन्ती ने एक शुभ लग्न में भीम को जन्म दिया। गान्धारी का तो प्रतिदिन एक-एक कलश फूटकर उनमें से एक-एक पुत्र पैदा हुआ। उनमें से ज्येष्ठ था दुर्योधन, उसका अनुज दुश्शासन, दुर्धर्ष, दुर्मुख, जलसन्ध, सह, सांब, विन्द, अनुविन्द, दुष्प्रसह, विख्यात सुबाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्म्मद, चित्रयोधि, दुष्कर्ण, कर्ण, और (नाम भी) सुन लीजिए, विविंशति, विकर्ण, जलसन्ध, सुलोचन, चित्र,

जळसन्धनुं सुलोचननुं चित्राख्यनुं
विचित्रन् चित्राक्षनुं पिन्नेवनायीट्टुन्नु । १५
चारुचित्रशरासनन्तानुं दुर्द्धर्षणन्
दुष्प्रधर्षाख्यन्तानु विवित्सु विकटनु १६
शमनुमूर्ण्णनाभन् पिन्नेवन् सुनाभनुं
नन्दनामावुमुपनन्दनु सेनापति । १७
केट्टालु सुषेणनुं पिन्नेक्कुण्डोदरनुं
चॊल्लुवन् महोदरन् पिन्नेवन् चित्रद्ध्वजन् १८
चित्ररथाख्यन् चित्रबाहुवुममित्रजिल्
छत्रबाहुवुं चित्रवर्म्मावुं सुवर्म्मावुं १९
दर्व्विमोचनन् चित्रसेननुं सुचित्रनुं
चित्रवर्म्मधृल् पराजितनु पण्डितकन् २०
पिन्नेवन् विशालाक्षनपरन् दुरावरन्
अजितन् जयन्तनुं जयत्सेननु पिन्ने- २१
द्दुर्ज्जयन् दृढहस्तन् सुहस्तन् वातवेगन्
सुवर्च्चस्सादित्यकेतुवुं बह्वाशितानुं २२
नागदन्तनुमग्रयायियुं कवचियुं
निषंगि पाशी, दण्डधारनुं धनुर्ग्रहन् २३
चॊल्लीटामुग्रन् भीमरथनुं भीमाख्यनुं
वीरबाहुवुमलोलुपनुं भीमकर्म्मा । २४
पिन्नेवन् सुबाहुवुं भीमविक्रमन्तानुं
अभयन् द्रुतकर्म्मावेन्नपरनु नामं २५

विचित्र, चित्राक्ष, चारुचित्र, शरासन, दुर्धर्षण, दुष्प्रधर्थ, विवित्सु, विकट, शम, ऊर्णनाभ, तदनन्तर सुनाभ, नन्द, उपनन्द, सेनापति, और सुनिए, सुषेण, फिर कुण्डोदर, महोदर, तदनन्तर चित्रध्वज, चित्ररथ, चित्रबाहु, अमित्रजित्, छत्रबाहु, चित्रवर्मा, सुवर्मा, दविमोचन, चित्रसेन, सुचित्र, चित्रवर्मधृत्, पराजित, पण्डितक, १०-२० विशालाक्ष, दुरावर, अजित, जयन्त, जयत्सेन, दुर्जय, दृढहस्त, सुहस्त, वातवेग, सुवर्चस्, आदित्यकेतु, नह्वाशि, नागदन्त, अग्रयायी, कवचि, निषंगी, पाशी, दण्डधार, धनुर्ग्रह, उग्र, भीमरथ, भीम, वीरबाहु, अलोलुप, भीमकर्मा, सुबाहु, भीमविक्रम, अभय, द्रुतकर्मा एक का नाम है, तीन पुत्रों का नाम है दृढरथ तदनन्तर अनाधृष्य, दूसरा कुण्डभेदी, विख्यात विरोधी, दीर्घलोचन, तदनन्तर दीर्घध्वज, फिर दीर्घभुज, फिर

मूवरॅच्चॊल्लुं दृढरथन्मारॅन्नुतन्नॆ
पिन्नॆवननाधृष्यनपरन् कुण्डभेदि २६
चॊल्लॆळुं विरोधियुं दीर्घलोचनन्तानुं
पिन्नॆवन् दीर्घद्ध्वजन् पिन्नॆवन् दीर्घभुजन् २७
पिन्नॆवनदीर्घनुं दीर्घनुं दीर्घबाहु
पिन्नॆवन् महाबाहु व्यूढोरस्कनुं पिन्नॆ २८
कनकद्ध्वजन् महाकुण्डनुं कुण्डन्तानुं
कुण्डजन् चित्रमनुमनस्वान् चित्रकनुं २९
नूट्टॊन्ऩामतु पिन्नॆद्दुश्शळयॆन्ऩु पेरा-
याट्लोटॊरु मकळ्तानुमुण्टायिवन्नु । ३०
धृतराष्ट्रनु पिन्नॆ वैश्यस्त्री पॆट्टिट्टॊरु-
सुतनुमुण्टाय्वन्नु युयुत्सुवॆन्नु पेराय् । ३१
कुन्तीदेविक्कु पिन्नॆ मून्ऩामतॊरु सुत-
निन्द्रनन्दननायिट्टर्ज्जुननुण्टाय्वन्नु । ३२
अर्भकन्मारिल्लाञ्ञु दुःखिच्च माद्रितनि-
क्कपॊळॆयॊरु मन्त्रं कुन्तियुं पठिप्पिच्चाळ् । ३३
अश्विनीदेवकळॆ ध्यानिच्चिट्टवळ्तानुं
विश्वासत्तोटु सेविच्चीटिनाळतुकालं ३४
नकुलसहदेवन्माराय कुमारन्मार्
निखिलगुणत्तोटुं माद्रिक्कुमुण्टाय्वन्नु । ३५
वैशम्पायननेव मरुळिच्चॆय्तनेरं
वैशिष्यमेऱुं जनमेजयन् चोद्यं चॆय्तान् ।३६

अदीर्घ, दीर्घ, दीर्घबाहु, तदनन्तर महाबाहु, फिर व्यूढोरस्क, कनकध्वज, महाकुण्ड, कुण्ड, कुण्डज, चित्रम, अनस्वान्, चित्रक, और एक सौएकवीं सन्तान के रूप में दुःशला नामक एक शान्त स्वभाव की पुत्री पैदा हुई । २१-३० धृतराष्ट्र का एक वैश्यस्त्री से एक पुत्र हुआ जिसका नाम था युयुत्सु । कुन्तीदेवी का एक तीसरा पुत्र हुआ जो इन्द्र का ही पुत्र था जिसका नाम था अर्जुन । पुत्र न होने के कारण दुःखित माद्री को कुन्ती ने उसी समय एक मन्त्र सिखाया । तब माद्री ने अश्विनीदेवों का ध्यान किया और बड़े विश्वास के साथ उनकी सेवा की । फलस्वरूप नकुल और सहदेव नामक समस्त गुणों से युक्त दो पुत्रों का जन्म हुआ । जब वैशम्पायन ने इस प्रकार कहा तब बड़े वैशिष्यवाले जनमेजय ने पूछा । "पाण्डुपुत्रों की

विस्तरिच्चरुळिच्चेय्तीटेणमल्लो पाण्डु-
पुत्रन्मारुटे परमोत्पत्ति वळिपोले । ३७
अेन्नतु केट्टु वैशम्पायननरुळ्चेय्तु
मन्नवा केट्टुकोळ्क पाण्डवोत्पत्तियेल्लां । ३८

पाण्डुपुत्रोत्पत्ति

तापसशापमेट्टु पाण्डुवाकिय नृपन्
तापमुळ्क्कोण्टु चेन्नु हस्तिनंपुक्क शेषं । १
आभरणादिकळुमोक्कवे दानं चेय्तु
शोभतेटीटुं निज भार्यमारोटुं कूटि २
तापसवेषं पूण्टु पोयथ शतशृंगं
प्रापिच्चु फलमूलाशननाय् वाळुंकालं ३
सिद्धचारण मुनिश्रेष्ठन्मार्क्केल्लावर्क्कुं
स्निग्द्धनाय् पाण्डु चिरकालं वाणोरुशेषं ४
मामुनीन्द्रन्मारमावासिनाळोक्कत्तक्क-
त्तामरसोद्भवनेक्काण्मानाय् पुरप्पेट्टार् । ५
चोदिच्चु पाण्डु मुनिश्रेष्ठन्मारोटु निङ्ङ-
ळेतोरु दिक्किन्नेळुन्नळ्ळुवान् तुटङ्ङुन्नु ? ६
तापसेन्द्रन्मारतु केट्टरुळ्चेय्तीटिनार्
भूपतिप्रवर ! नी केट्टुकोण्टालुमेङ्किल् ७

उत्पत्ति को कृपया विस्तर से बतला दीजिए।" यह सुनकर वैशम्पायन ने कहा, "हे भूपाल ! पाण्डवोत्पत्ति की पूरी कथा सुन लीजिए।" ३१-३८.

पाण्डुपुत्रों की उत्पत्ति

तापस का शाप लगने के बाद राजा पाण्डु बड़े दुःख के साथ हस्तिनापुर लौटे और अपने सभी आभूषणों को दान देकर अपनी सुन्दरी पत्नियों के साथ तापस का वेश पहनकर शतशृंग नामक पर्वत पर गये और वहाँ फल और मूल मात्र खाते हुए रहे। सिद्ध, चारण, मुनिश्रेष्ठ आदियों के प्यारे बनकर पाण्डु बहुत दिन वहाँ रहे। तदनन्तर महामुनि लोग अमावास्या के दिन कमलोद्भव (ब्रह्मा) का दर्शन करने के लिए जाने लगे। तब पाण्डु ने मुनिवरों से पूछा—"आप लोग कहाँ जाने के लिए तैयारी कर रहे हैं ?" १-६ यह सुनकर तापसवरों ने कहा—"भूपतिवर !

ब्रह्मलोकत्तिङ्कलुण्टिन्नोरु महायागं
ब्रह्मज्ञोत्तम! ञङ्ङळ् तत्र पोकुन्नु सखे! ८
देवकळ् पितृक्कळुमृषिकळ् सिद्धन्मारुं
सेविप्पान् वरुं कमलासनपादांभोजं। ९
ञङ्ङळुं ब्रह्माविनेक्काण्मानाय्प्पोकुन्नितु
मंगलात्मावे महीपालवृन्दोत्तंसमे! १०
पाण्डुवुं गन्तुकामनाय् समुत्थानंचेय्तान्
पाण्डित्यमेरु मुनिमारप्पोळरुळ्चेय्तार्। ११
ऎत्रयुं दुर्ग्गमार्ग्गं दुग्रावाग्रोग्रग्राह्यं
पृत्थ्वीशोत्तम! महल् पृत्थ्वीद्ध्रश्शृंगोद्देशं १२
उत्तुंगमुत्तमांगमुत्तरोत्तरहित-
मुत्तुंगस्तनिकळां पत्निमारेन्तु चेय्वू। १३
यक्षराक्षसगन्धर्व्वोरगनिषेवितं
पक्षिसञ्चारहीनं रहितमृगगणं १४
अप्सरस्त्रीकळोटुं देवकळ् कळिप्पेटं
पुष्पसौगन्ध्यंपूण्ट मन्दमारुतसेव्यं १५
नदिकळ् नितंबङ्ङळ् गह्वरङ्ङळुं पुन-
रतिशीतळहिमं दुष्प्रवेशारण्यवुं। १६
नटन्नुकूटायल्लो मामुनिजनङ्ङळ्क्कु
कटन्नुकूटान् पणियतिलुं शतश्शृंगं। १७

आप सुन लीजिए। आज ब्रह्मलोक में एक महायज्ञ होनेवाला है! हे ब्रह्मज्ञोत्तम! हे मित्र! हम लोग वहाँ जा रहे हैं। देव, पितृगण, ऋषिजन और सिद्ध ब्रह्मा के पादपद्म की सेवा करने आवेंगे। हे महीपालों के अलंकार! हम लोग भी ब्रह्मा का दर्शन करने जा रहे हैं। पाण्डु की भी जाने की इच्छा हुई और वे उठे। तब विद्वान् मुनियों ने कहा—"रास्ता बहुत खराब है, बुरे तीक्ष्ण नोकवाले पत्थरों से भरा हुआ! हे नृपोत्तम! वहाँ बड़े-बड़े पर्वतशिखर हैं जो बहुत ऊँचे हैं जहाँ अधिक से अधिक हिम भी है। उन्नत स्तनवाली आप की पत्नियाँ (वहाँ) कैसे जा सकेंगी? ७-१३ यक्ष, राक्षस, गन्धर्व और नाग वहाँ आते हैं, न वहाँ पक्षियों का सञ्चार होता है, न वहाँ हिरण होते हैं। वह देवों का अप्सराओं के साथ खेलने का स्थान है। वहाँ फूलों की सुगन्धि वाला वायु चलता है। वहाँ नदियाँ, पहाड़ के नितम्ब, गुफाएँ अत्यन्त शीतल हिम

ञङ्ङळोटॊक्कत्तन्नॆ पोय्कॊळ्ळामिन्नु पक्षे
मंगलात्मावेयितु केट्टिङ्ङु वसिच्चालुं । १८
ॲन्नतु केट्टु पाण्डु पिन्नॆयुमुरचॆय्तान्
खिन्नमानसनायि तापसवरन्मारे ! १९
सन्ततियिल्लातवर्क्किल्लपोल् परगति
सन्ततमतुतन्नॆ चिन्तिच्चु दुःखिक्कुन्नेन् । २०
इङ्ङनॆ पाण्डुनृपवाक्कुकळ् केट्टनेर-
मिंगितज्ञन्माराय तापसररुळ्चॆय्तु । २१
उण्टल्लो भवानॆङ्किल् सन्तति देवोपम । !
कण्टितु ञङ्ङळ् दिव्यचक्षुषा नृपोत्तम ! २२
विख्यातन्माराय् नल्ल पुत्रन्मारुण्टाक निन्
दुःखवुं तीर्न्नु पिन्नॆस्सल् गति लभिच्चालुं । २३
ॲन्नयच्चॊळ्ळुन्नळ्ळि तापसवरन्मारु-
मन्नेरमकतारिल् चिन्तिच्चु पाण्डुनृपन् । २४
सन्ततियुण्टाक्कॆण्टुं कर्म्ममॆङ्ङनॆ मम
चिन्तिच्चालुपायवुमेतुमे कण्टीलल्लो । २५
क्षुल्पिपासादि श्रान्तनाय वेदव्यासनॆ
शिल्पमाय् पूजिच्चितु गान्धारियॊरुदिनं । २६

और दुष्प्रवेश वन भी हैं। मुनिजनों के लिए वहाँ चलना फिरना ही कठिन है। फिर शतश्रृंग पहुँचना तो इससे भी कठिन है। यों तो आप हम लोगों के साथ जा सकते हैं पर, हे मंगलात्मन् ! यह सुनकर आप यहीं रह जाइए। यह सुनकर पाण्डु ने दुःखित होकर फिर कहा, "हे तापसवर ! कहा जाता है कि जिनके सन्तान नहीं है उनकी गति नहीं है। मैं सदैव इस बात की चिन्ता से दुःखित हूँ। १४-२० पाण्डु राजा की यह बात सुनकर संकेत समझनेवाले तापसों ने कहा, "हे देवतुल्य ! आप को संतान होगा। हे नृपोत्तम ! यह हमने अपनी दिव्य दृष्टि से जान लिया है। आप के अच्छे और विख्यात पुत्र हों ! आप दुःख पार करके सद्गति प्राप्त करें !" इस प्रकार पाण्डु को समझाकर तापसवर चले गये। राजा पाण्डु उस समय सोचने लगे। "सन्तान होने के लिए क्या कर्म करें ? सोचने पर भी कोई उपाय तो सूझता नहीं। भूख और प्यास से थके वेदव्यासजी की गान्धारी ने विधिपूर्वक पूजा की। २१-२६ सुना जाता है कि उनके प्रसाद से गान्धारी को वर मिला ओर फलस्वरूप

तल् प्रसादत्ताल् वरं किट्टिय गान्धारिक्कु
गर्भवुमुण्टायिपोलेन्नल्लो केट्टतिप्पोळ् । २७
इनिक्को गर्भाधानं चेय्वानो मुनिशापं
निनच्चालरुतातेवन्नितु विधिवशाल् । २८
नाल्कणत्तोटुकूटि मानवन् जनिक्कुन्नु
नालुं वीट्टियेे गतिवन्नीटू भुवि नृणां । २९
आस्तिक्यमोटु यज्ञंकोण्टु देवकळ्कटं
स्वाद्धयायतपस्सुकोण्दृषिकळ्क्कुळ्ळकटं ३०
श्राद्धादि पुत्रोलपत्या पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कटं
मानुषक्कुळ्ळ कटमानृशंस्येन वीट्टि
वेणं मानुषन्माक्कुं सल्गति वन्नीटुवान् । ३१
अन्नतिल् पितृक्कळ्क्कु वीट्टीलेन्नतु मूल-
मेन्नुळ्ळिल् परितापं मेल्क्कुमेल् वद्धिक्कुन्नु । ३२
इत्तरमोरोन्नोर्त्तु रहसि कुन्तियोटु
चित्तत्तिलुळ्ळ तापमेंप्पेरुमरियिच्चान् । ३३
अनपत्यनु गतियिल्ल मट्टोन्नुकोण्टु-
मनघशीले ! कुन्ति ! चिन्तिच्चीटुकवेणं । ३४
शारदण्डायनियां केकयनृपनुटे
भार्ययां श्रुतसेन नल्लोरु मुनीन्द्रने ३५

उसके गर्भ भी हुआ । मुझे तो विधिवश मुनि के शाप के कारण गर्भाधान करना भी असंभव हो गया । चार ऋण लेकर मानव पैदा होता है । चारों को चुकाने के बाद ही मनुष्यों की पृथ्वी पर अच्छी गति होती है । आस्तिक्य बुद्धि के साथ यज्ञ का अनुष्ठान करके देवों का ऋण, स्वाध्याय, रूप तप करके ऋषियों का ऋण, श्राद्ध आदि करके और पुत्र पैदा करके पितृगणों का ऋण, और सबके प्रति सद्भावना से मनुष्यों का ऋण चुकाने के बाद ही मानव की सद्गति हो सकती है । उनमें से मैंने अपना पितृगण का ऋण नहीं चुकाया, इसलिए मेरे भीतर परिताप (दुःख) बढ़ता जा रहा है । इस प्रकार की बातें सोचते हुए पाण्डु ने एकान्त में कुन्ती से अपने मन का सारा दुःख कह दिया । २७-३३ जिसके सन्तान नहीं हैं उसकी किसी भी प्रकार से गति नहीं है । हे पुण्यशील कुन्ति ! यह सोचने की बात है । केकय के राजा शारदण्डायनि की पत्नी श्रुतसेना ने एक अच्छे मुनीन्द्र को चुनकर उनसे दुर्जय आदि तीन पुत्र प्राप्त किये ।

वरिच्चु दुर्जयादि मून्नु मक्कळॅप्पॆट्राळ्
धरिक्क नीयुं गर्भं ब्राह्मणबीजत्तिनाल् । ३६
पुत्रन्माराऱुविधमुण्टल्लो मनुष्यक्कुं-
मॆत्रयु मुख्यनतिल् क्षेत्रजनरिञ्ञालुं । ३७
इङ्ङनॆ पाण्डुवाक्यं केट्टु कुन्तियुं चॊन्नाळ्
मंगलमते ! मम भर्त्तावे ! नृपोत्तम ! ३८
ऒन्नोटित्तरमुरियाटरुतॊरुनाळु-
मन्यसंगममॊरुनाळुं ञान् चॆय्कयिल्ल । ३९
पुरुवंशत्तिल् मुन्नं चॊल्लॆळुं व्यूषिताश्वन्
पारितु परिपालिच्चिरिक्कुंकालत्तिङ्कल् ४०
कैक्कॊण्टान् काक्षीवतियाकिय कन्यकयॆ-
स्सक्तियुं परस्परं वर्द्धिच्चितिरुवर्क्कुं ४१
पुष्करशरक्रीडातल्परत्वेन राज-
यक्ष्मणा मरिच्चितु भूपति प्रवरनुं । ४२
पुत्रन्मारुण्टायतुमिल्लिनिक्कय्यो ! पापं !
भर्त्तावे ! चतिक्कयो चॆय्ततॆन्नॆयुमिप्पोळ् । ४३
इत्तरं दुःखंपूण्टु करञ्ञु शवशरी-
रत्तॆयुमाश्लेषिच्चु किटक्कुं पत्नियोटुं ४४

तुम भी ब्राह्मण के बीज के द्वारा गर्भ धारण करो। मनुष्य के छः प्रकार के पुत्र होते हैं और जान लो कि उनमें क्षेत्रज[1] पुत्र एक मुख्य प्रकार से होता है। पाण्डु की यह बात सुनकर कुन्ती ने कहा—हे मंगलमते ! हे मेरे पतिदेव ! हे नृपोत्तम ! आप इस प्रकार मुझसे कभी बात न कीजिए। मैं परपुरुष से कभी संगम न करूँगी। ३४-३९ पूर्वकाल में पुरुवंश के राजा विख्यात व्युषिताश्व जब इस पृथ्वी का परिपालन करते थे, तब उन्होंने काक्षीवती नामक कन्या से विवाह किया। दोनों में परस्पर प्रेम बढ़ा। काम-क्रीडाओं में तत्पर हो जाने के कारण भूपतिवर की राजयक्ष्मा (क्षयरोग) से मृत्यु हो गयी। "हे पतिदेव ! आपने मुझे धोखा दिया, मेरे कोई पुत्र ही नहीं हुआ, हाय ! कैसी कष्ट की बात है !" इस प्रकार दुःखित होकर शव का आश्लेषण करती हुई लेटी पत्नी से (पति ने कहा) "दुःख मत करो, हे भद्रे! उठो, उठो! तुम्हारे महत्वपूर्ण पुत्र पैदा होंगे।

१ वह पुत्र जो किसी मृत या असमर्थ पुरुष की स्त्री ने दूसरे पुरुष के संयोग से उत्पन्न किया हो।

दुःखिक्कवेण्ट मुहुरुत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रे !
मुख्यन्मारायित्तव पुत्रन्मारुण्टाय्वरुं । ४५
निन्निलुल्पादिप्पिक्कुन्नुण्टु ञान् मरिच्चालुं
निर्ण्णयमतु मम तपसां बलंकोण्टे । ४६
इष्टमां तल्पत्तिन्मेल्ऋतुस्नानं चेय्तुट-
नष्टमां चतुर्द्दशीयेन्नुळ्ळ तिथिकळिल् ४७
ऍन्नेयु चिन्तिच्चुपोय् शयनं चेय्तीटेन्ना-
लेन्नुटे बीजंकोण्टु निनक्कु गर्भमुण्टां । ४८
ईवण्णं मरञ्ञुनिन्नीटिन जीवगिरं
लावण्यांगियुं केट्टिट्टव्वण्णमनुष्ठिच्चाळ् । ४९
मून्नु साल्वन्मारेयुं नालु माद्रन्मारेयुं
मान्यन्मारायिप्पेट्टाळ् भद्रयां काक्षीवति । ५०
त्वमपि तथा मयि मनसा जनयितुं
मम वल्लभ! शक्तस्तपसां बलवशाल् । ५१
इत्तरं कुन्तीदेवि चोन्नतुनेरमति-
नुत्तरमायिट्टवळ्तन्नोटु पाण्डु चोन्नान् । ५२
नी परञ्ञतु परमार्त्थमेन्नरिञ्ञालुं
भूपतीश्वरनवन् देवसन्निभनल्लो ५३
धर्म्मज्ञन्मारां मुनिश्रेष्ठन्मारुटे मतं
धर्म्मिष्ठे ! पुराणं नी केट्टुकोळ्‌ पुनरितुं । ५४

यद्यपि मैं मरा हूँ तथापि मैं तुममें सन्तान उत्पन्न करूँगा। अपने तप के बल से मैंने यही निर्णय किया है। ४०-४६ तुम ऋतुस्नान करके अष्टमी और चतुर्दशी, इन तिथियों में अपने इष्ट तल्प (बिस्तरे) पर मेरा ध्यान करती हुई लेटो, तब मेरे बीज से तुम्हारे गर्भ हो जायगा।" छिपे हुए जीव की इस प्रकार बात सुनकर उस लावण्याङ्गी (सुन्दरी) ने वैसा ही किया। साध्वी काक्षीवती ने तीन मान्य साल्वों और चार मान्य माद्रों को जन्म दिया। हे वल्लभ ! आप भी अपने तप के बल से मुझमें मन के द्वारा सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं। जब कुन्तीदेवी ने इस प्रकार कहा, तब उसके उत्तर में पाण्डु ने कहा—"तुमने जो कहा वह ठीक है, जान लो भूपतिवर तो देवतुल्य है ही। हे धर्मिष्ठे ! मुनिश्रेष्ठों का पुराना मत भी तो तुम सुन लो। ४७-५४ कहते हैं कि पूर्वकाल में स्त्रियाँ अरक्षित थीं, स्वेच्छाचारिणी और स्वतन्त्र थीं। आजकल तो केवल

नारिकळ् मुन्नमनावृतमारत्रे काम-
चारचारिणिकळाय् स्वतन्त्रमारायुळ्ळु । ५५
इक्कालमतु तिर्यग्योनिजङ्ङळ्क्केयावू
दुष्कृतमत्रे मनुष्यर्क्कॅल्लां धर्म्मवुम- ५६
ल्लुत्तरकुरुराज्यत्तिङ्कलिप्पोॅळुमतु
नित्यमां धर्म्ममत्रे निकृष्टमल्लयेतुं । ५७
इन्धनङ्ङळिल् तृप्तिवरुमारिल्लग्निक्कु
सिन्धुविनिल्ल तृप्ति वाहिनिकळिलेतुं । ५८
अन्तकनिल्ल सर्व्वजन्तुक्कळिलुं तृप्ति
बन्धुरांगिकळाय नारिमार्क्कतुपोले ५९
पुरुषन्मारिल् तृप्ति वरुमारिल्लयल्लो ।
पुरुषंप्रति पुरुषंप्रति नारिमार्क्कु ६०
करुतीटुकिल् तृष्ण वर्द्धिच्चुवरुमत्रे ।
वरुमारिल्ल सुरतत्तिलोॅरलंभावं । ६१
अगम्य गमनमॅन्नुळ्ळतिल्लंगनमार्-
क्कॅतारिङ्कलोॅरुनाळुमॅन्नरिञ्ञालुं । ६२
तातनाकिलुं निज पुत्रनॅन्निरिक्किलुं
भ्रातावाकिलुं मट्टु पौत्रादियॅन्नाकिलुं ६३
स्वेदिक्कुमल्लो योनि रहसि काणुन्नेरं ।
हेतुवेतुमे वेण्टा केवलं स्वाभाविकं । ६४

जानवरों में यह बात होती है । मनुष्यों में यह पाप समझा जाता है, धर्म नहीं । उत्तरकुरु देश में तो यह आज भी सनातन धर्म है, यह आचार निकृष्ट नहीं है । जिस प्रकार चाहे जितनी समिधायें दी जायें, अग्नि कभी तृप्त नहीं होता और समुद्र नदियों से तृप्त नहीं होता । चाहे जितने जन्तु मरें, किन्तु अन्तक (यमराज) की तृप्ति नहीं होती । इसी प्रकार सुन्दरी स्त्रियों की पुरुषों से कभी तृप्ति नहीं होती । विचार किया जाय तो पुरुषों के प्रति स्त्रियों की तृष्णा बढ़ती ही जाती है । उनकी सुरत से कभी तृप्ति नहीं होती । ५५-६१ जान लीजिए कि स्त्रियों के मन में यह विचार ही नहीं उठता कि कोई पुरुष अगम्य है । पिता हो या अपना ही पुत्र हो, या अपना भाई हो अथवा पौत्र आदि हों, उनको देखकर स्त्रियों की योनि गुप्त रूप में क्लिन्न हो जाती है । यह बिना हेतु होता है, यह उनके लिए स्वाभाविक है । इस युग में एक दिव्य पुरुष ने एक मर्यादा स्थापित

इक्कालमिविटॆ लोकत्तिङ्कल् मनुष्यक्कुं
दुष्कर्म्मं मुण्टाकाय्वानायॊरु मर्यादयुं ६५
वरुत्तीटिनानॊरु दिव्यनिन्नतिन्मूलं
चुरुक्किच्चॊल्लीटुवन् केट्टुकॊळ्ळुक भद्रे ! ६६

पातिव्रत्यनिष्ठापनं

पण्टॊरु तपोधनश्रेष्ठनामुद्दालक-
नुण्टायि तनयनाय् श्वेतकेतुवुं पुरा । १
तन्नुटॆ पत्नियोट्टुंकूटियन्नुद्दालकन्
पुण्यवर्द्धनमाय तपस्सुचेय्तान् चिरं । २
पञ्चाग्निमध्यस्थनाय् ग्रीष्मकालत्तु पुन-
रञ्चातॆ मळपॆय्युंकालत्तु ननञ्ञिट्टुं । ३
शिशिरकालत्तिङ्कल् सलिलमद्धचे निन्नुं
वशगेन्द्रियनायित्तपसा वाळु कालं ४
पुत्रनुं मातापिताक्कन्मारॆप्परिचरि-
च्चॆत्रयुं विनीतनाय् मरुवीटिननाळिल् ५
वन्नितु वयोधिकनायॊरु विप्रश्रेष्ठन्
नन्नायिप्पूजिच्चितु तापसप्रवरनुं । ६
स्वागतमृदुवचनासनपाद्यार्घ्यादि
शाकमूलाहारङ्ङळ्कॊण्टु पूजिच्चनेरं ७

की ताकि मनुष्यों को पाप न लग जाय। उसको मैं संक्षेप से बताऊँगा, सुन लो"। ६२-६६

पातिव्रत्य का स्थापन

"पूर्वकाल में एक उद्दालक नामक तपोधन थे और उनका पुत्र था श्वेतकेतु। उद्दालक ने अपनी पत्नी के साथ पुण्य को बढ़ानेवाला लम्बा तप किया। वे गर्मी के समय पाँच अग्नियों के बीच में स्थित रहते थे और धारावाहिक पानी बरसने के समय उसमें भीगते थे। सर्दी के समय पानी में खड़े होते थे। इस प्रकार इन्द्रियों को अपने बश में करके रहते थे। उनके पुत्र ने अपने माता-पिता की सेवा करते हुए बड़े विनीत भाव से समय व्यतीत किया। एक समय एक वृद्ध ब्राह्मण वहाँ पधारे, जिनका उन तापसवर ने अच्छा सत्कार किया। १-६ उनके स्वागत में मीठे वचन,

क्षुत्पिपासादितीर्न्नु विश्रान्तनायि विप्र-
नुत्पन्नप्रमोदमुद्दालकनोटु चोन्नान् । ८
अर्क्कसन्निभतेजोविग्रहत्तोटुं तेळि-
ञ्ञिवक्काणाकिय बालनारेन्नु परयणं । ९
मुख्यात्मावाय भवान्तन्नुटे तनयने-
न्नुळ्ळकान्पिल् कल्पिक्कुन्नेन् सत्यं चोल्लुकवेणं । १०
अन्नेरमुद्दालकनवनोटुरचेय्ता-
नेन्नुटे पत्नियाय कुशिकात्मज मम ११
छायेवानुगा पातिव्रत्यं कोण्टरुन्धति
मायकूटाते शुश्रूषिच्चु वर्त्तिक्कुंकालं १२
उद्भविच्चितु मम पुत्रनाय् श्वेतकेतु
सत्पुमान् तपोविद्याशीलादिगुणत्तोटुं १३
अन्नेरमुद्दालकनोटु चोल्लिनान् द्विज-
नेन्नेयुमृणविनिर्म्मुक्तनाक्केणं भवान् १४
मुन्नं ञान् विवाहवुं चेय्तुकोण्टीला पुन-
रिन्निप्पोळ् जरानरयुंपूण्टु वृद्धनायेन् । १५
कन्यादानवुमारुं चेय्कयिल्लिनिक्किनि-
द्धन्यनाकिय भवान् करुणाशालियल्लो । १६
पित्र्यमामृणत्तिङ्कल्निन्नु वेर्पेट्टुत्तिनि-
क्कुत्तमलोकप्राप्तियुण्टाक्कीटुकवेणं । १७

आसन, पाद्य, अर्घ्य, शाक, मूल आदि आहार, यह सब देकर उनकी सेवा की। तब उनकी भूख और प्यास शान्त हुई और वे विश्रान्त हुए। अति प्रसन्न होकर उद्दालक से कहा—'सूर्य के समान तेज धारण करनेवाला यह बालक कौन है, कृपया बतलाइए। मैं समझता हूँ कि वह आप महानुभाव का सुपुत्र है। मुझे तथ्य बतला दीजिए।' यह सुनकर उद्दालक ने उत्तर दिया—'मेरी पत्नी कुशिकात्मजा छाया के समान मेरा अनुसरण करती है, वह पातिव्रत्य में अरुन्धती है। जब वह निष्कपट मेरी सेवा करती थी, तब इस मेरे पुत्र श्वेतकेतु का जन्म हुआ, जो एक सत्पुरुष है और तप, विद्या, शील आदि गुणों से युक्त है।' ७-१३ यह सुनकर ब्राह्मण ने उद्दालक से कहा—'आप मुझे भी उऋण कर दीजिए। मैंने पहले विवाह नहीं किया, अब तो मेरे बाल सफ़ेद हो गये हैं और मैं वृद्ध हूँ। अब तो मुझको कोई कन्यादान भी नहीं करेगा। आप धन्य हैं और

ञान् तव पत्नितन्ने वहिच्चीटुन्नेनेन्नाल्
शान्तनाकिय भवान् क्षमिच्चीटुकवेणं । १८
इत्युक्त्वा कृष्णाजिनांबरयामवळतन्ने-
स्सत्वरं तदा त्रस्तगात्रनां द्विजोत्तमन् १९
मत्तनाय् भर्त्तृ पुत्रसमक्षमृषिपत्नी-
हस्तवुं पिटिपेट्टाननुवादं कूटाते । २०
क्रुद्धनाय् श्वेतकेतु मातावुतन्टे णट्टे-
हस्तवुं पिटिच्चुटनीवण्णमुरचॅय्तान् । २१
वृद्धनां द्विजाधम ! किमिदं मनोभव-
मत्तनाय् चमञ्ञनिन् बुद्धि राक्षसियत्रे । २२
मातावु मम पतिव्रतयन्नरियेणं
तातनुं क्षमापरन् ब्रह्मवित्तमनल्लो । २३
शापानुग्रहशक्तन् तूष्णीं भावत्तेप्पूण्टु
तापसकुलश्रेष्ठनेन्नतुमूलं भवान् २४
मातरं विमुञ्च मे मातरं विमुञ्च मे
भूसुराधम ! धर्म्ममल्लितेन्नुरचॅय्युं २५
श्वेतकेतुविनोटु भूसुरवरन् चॉन्नान् ।
श्वेतकेतो ञानपत्यार्त्थियेन्नरिक नी २६

दयाशील भी हैं। आप पितृऋण से मुझे मुक्त कराकर मेरे लिए उत्तम लोक प्राप्त करना संभव कर दीजिए। मैं आप की पत्नी को लिये जा रहा हूँ, आप शान्त पुरुष हैं, मुझे क्षमा करें।' १४-१८ यह कहकर उस काँपते हुए ब्राह्मण ने मत्त होकर कृष्णाजिन का वस्त्र पहने हुई उस ऋषि-पत्नी का हाथ पति और पुत्र के सामने ही बिना अनुमति के पकड़ लिया। तब क्रुद्ध होकर श्वेतकेतु ने अपनी माता का दूसरा हाथ पकड़कर इस प्रकार कहा—'हे बूढ़े द्विजाधम ! यह क्या है ? काम से अन्धे तुम्हारी बुद्धि राक्षसी है। जान लो कि मेरी माता पतिव्रता हैं और मेरे पिता क्षमाशील और ब्रह्मज्ञों में श्रेष्ठ हैं। वे शाप और अनुग्रह दोनों कर सकते हैं। उन तापसश्रेष्ठ ने मौन का अवलम्बन किया। इसीलिए तुम यह कर रहे हो। १९-२४ मेरी माता को छोड़ दो, मेरी माता को छोड़ दो। हे ब्राह्मणाधम ! यह धर्म नहीं है।' इस प्रकार कहनेवाले श्वेतकेतु से ब्राह्मण ने कहा—'हे श्वेतकेतु ! जानलो कि मैं सन्तान चाहता हूँ। यह न समझो कि मैं विचार करनेवाला नहीं हूँ। तुम्हारे द्वारा

चेतसि विचारमिल्लाय्कयुमल्ल मम ।
तातनो निन्नाल्वणनिर्म्मुक्तनायानल्लो । २७
वेदज्ञोत्तमवृद्धन् विगतस्पृहनहं ।
बोधमो भवानेट़मुण्टल्लो विशेषिच्चुं २८
पुत्रनुण्टायाल् पिन्ने निन्नुटे मातावित्रे-
येत्रयुं वैकात ञानयच्चीटुवन्तानुं । २९
इत्तरं वृद्धद्विजवाक्कुकळ् केळ्क्कुन्तोरुं
क्रुद्धनाय् चमञ्ञोरु पुत्रनेक्कण्टु तातन् ३०
कोपिक्कवेण्टा पुरातनमां धर्म्ममिदं
तापसद्विजदेवादिकळ्क्कुमनुमतं ३१
जनकवचनं केट्टळविल् श्वेतकेतु
मनसि वाच्च कोपमटङ्ङाञ्ञुरचेय्तान् ३२
ॲङ्किल् ञानिन्नेमुतल् मानुषर्क्केल्लावर्क्कुं
सङ्कटं तीरुवतिन्नायोरु मर्यादयुं ३३
स्थापिच्चीटुन्नेन् कर्म्मक्षेत्रत्तिल् विशेषिच्चुं ।
तापसद्विजदेवसम्मतमाक मेलिल् । ३४
पातिव्रत्यवुं वेणं नारिमार्क्केल्लावर्क्कुं
पातकमुण्टाय्वरिकल्लाय्किलिनिमेलिल् । ३५
वेदवेदाङ्गज्ञनायीटिन् तपोधनन्
श्वेतकेतुवुमेवं सेतुबन्धिच्चान् तदा । ३६

तुम्हारे पिता तो उऋण हो गये। मैं एक वेदज्ञों में श्रेष्ठ वृद्ध हूँ और इच्छाओं से मुक्त हूँ। तुम तो विशेष रूप से बहुत समझदार हो। पुत्र पैदा होते ही मैं तुम्हारी माता को बिना विलम्ब के वापस भेज दूँगा।' इस प्रकार बूढ़े ब्राह्मण की बातें सुनकर क्रुद्ध हुए अपने पुत्र को देखकर पिता ने कहा—'क्रुद्ध न हो। यह एक पुराना धर्म है और तापस, ब्राह्मण, और देवगण इसे मानते हैं। २५-३१ पिता का बचन सुनकर श्वेतकेतु अपना तीव्र कोप भीतर न पचा सके और बोले—'आज से मैं दुःख समाप्त करने के लिए मनुष्यों में एक मर्यादा स्थापित करता हूँ, विशेषतः इस कर्मक्षेत्र में। भविष्य में तापस, द्विज और देवगण इसे स्वीकार करें। सभी स्त्रियों को पातिव्रत्य धर्म अत्यावश्यक है। नहीं तो आज से उनको पाप लगेगा।' वेद और वेदाङ्गों के ज्ञाता और तपोधन श्वेतकेतु ने इस समय इस प्रकार सेतुबन्ध (मर्यादा) किया। 'उत्तर कुरु देश में आज भी

हेतुवतिप्पोंळुमिल्लुत्तरकुरुक्कळिल्
तिर्यग्योनिकळ्पोलेयाचारमविटेयाय् । ३७
मर्याद वेण्ट दोषमट्टिक्किलतिनिल्ल
कर्त्तव्यं नारिमाक्कुं भर्त्तृशासनं नूनं
पुत्रार्त्थं मम हितं भद्रे ! नी चेय्तीटणं ३८
सौदासन् मदयन्तियाकिय भार्यतन्नें
वेधाविन् मकनाय वसिष्ठन्कैयिल् नल्कि । ३९
वेदज्ञनाय मुनि तन्नुटे बीजंकोण्टु-
मेदिनीपति निज सन्तति लभिच्चितु । ४०
कश्मलमकन्नोरु नन्दननुण्टायवन्नि-
तश्मकनाय गोत्राधीश्वरनन्निञ्ञालुं । ४१
अस्माकं जननवुं वेदव्यासङ्कल्निन्नु
विस्मयमल्ल पण्टुमिप्पोंळुमतु धर्म्मं ४२
इत्तरं पल पल कथकळ् पाण्डु चोन्न-
तुत्तमयाय कुन्ति केट्टळवुरचेय्ताळ् ४३
पान्थन्मार्क्केल्लां वेच्चुविळम्पीटुवान् मुन्नं
शान्तनाकिय तातनेन्नेयुं नियोगिच्चान् । ४४
अक्कालमोरुदिनं दुर्व्वासावाय मुनि-
क्कुळ्क्कान्पु तेळिञ्ञितु मृष्टभोजनंकोण्टे । ४५

यह धर्म नहीं है, वहाँ के आचार पशुओं के जैसे हैं। ३२-३७ यह मर्यादा उनके लिए नहीं है, उस देश में यह दोष नहीं है। स्त्रियों को चाहिए कि पति का कहना मानें। इसलिए मेरा हित करो जिससे मेरे पुत्र हो जाय। सौदास ने अपनी पत्नी मदयन्ती को ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ के हाथ समर्पित किया। उस वेदज्ञ मुनि के बीज से राजा सौदास ने अपनी सन्तति प्राप्त की। उसके एक निर्दोष पुत्र का जन्म हुआ, जो अश्मक कहलाता है और जो उसके वंश का प्रवर्तक है। हमारा जन्म भी वेदव्यास के द्वारा हुआ। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यह पहले की तरह आज भी धर्म है।' इस प्रकार पाण्डु की कही भिन्न-भिन्न कथाएँ सुनकर कुन्ती ने कहा—'बहुत पहले पिताजी ने यात्रियों को भोजन बनाकर परोसने के लिए मुझे भी नियुक्त किया था। ३८-४४ एक दिन मुनि दुर्वासा स्वच्छ भोजन पाकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझे चार मन्त्र सिखाये और कहा—'बाले ! (इनको जपकर) जिस देव का भी आवाहन

नालु मन्त्रवुमुपदेशिच्चानेनिक्कप्पोळ्
बाले नीयावाहिच्चाल् वेण्टुं देवन्मार् वरुं । ४६
निनक्कु वशन्मारामेन्नतुमरुळ्चेय्तु
मुनिश्रेष्ठनुमेळुन्नळ्ळिनान् यथाकामं । ४७
अङ्ङनेयुळ्ळ मन्त्रंकोण्टु ञानावाहिच्चा-
लिङ्ङु वन्नेन्ने प्रापिच्चीटुमद्देवन् नूनं । ४८
इङ्ङन्ने नल्लगुणसम्पन्ननायुळ्ळोरु-
मंगलद्विजनेक्कोण्टुल्पादिप्पिक्कन्नतो । ४९
ॲङ्ङने वेण्टू मम भर्त्तावे! विधिच्चालु-
मिङ्ङिनिक्कोन्निनुमे वैमुख्यमिल्लयल्लो । ५०
दैवतं नारिमार्क्कु भर्त्तावुतन्नेयेन्नाल्
तावकं नियोगं ञान् केवलमनुष्ठिक्कां । ५१
देवं वा द्विजेन्द्रं वा भवता यथोद्दिष्टं
देवसन्निभ तथा कर्त्तास्मि क्षमापते । ५२
देवाल् सन्ततिफलं सद्यस्ससंभवेन्मही-
देवाल् संभविक्कुं कालान्तरे विधिवशाल् । ५३
आकयाल् देवकळिलारेयावाहिक्केण्टु
शोकं तीर्न्नोरु सुतनुण्टावानेन्नु चोल्क । ५४
भर्त्ताविन् मतमरिञ्ञेन्नियेयरुतेन्नि-
ट्टित्र पार्त्तितु ञानुमक्कर्म्मेत्तिनु नाथ ! ५५

करोगी वह आवेगा ।' 'और तुम्हारे वश में रहेगा', यह भी कहा । फिर मुनिश्रेष्ठ यथाकाम चले गये । अगर मैं उस मन्त्र के द्वारा किसी देव का आवाहन करूँ तो वह अवश्य मेरे पास पहुँच जायगा । क्या एक अच्छे गुणवाले ब्राह्मण के द्वारा सन्तान पैदा कराऊँ ? मेरे पतिदेव ! बताइए क्या होना चाहिए । मैं किसी भी बात से विमुख नहीं हूँ । ४५-५० स्त्रियों के लिए पति ही देवता है । मैं आप की आज्ञा का पालन करूँगी । देव हो या द्विजेन्द्र हो, हे देवतुल्य ! हे भूपाल ! जैसा आप कहेंगे, वैसा मैं करूँगी । देव के द्वारा तो सन्तान तत्क्षण ही हो जायगा, पर महीदेव (ब्राह्मण) के द्वारा कराने में तो समय लगेगा । इसलिए यह बतलाइए कि देवों में किसका आवाहन करूँ ताकि एक अच्छापुत्र पैदा हो जाय । पति का मत बिना जाने (कोई काम) न करना चाहिए, यह समझकर ही,

माधुर्यं कलर्न्नोरु कुन्तितन् वाक्कु केट्टु
चेतसि परमानन्दत्तोटुं पाण्डु चोन्नान् । ५६
धन्यनाय् चमञ्ञु ञानेत्रयुमनुग्रह-
मिन्नितु तोन्नियतु निनक्कु मनोहरे ! ५७
नम्मुटे वंशमिप्पोळुद्धरिच्चीटुन्नतु
निर्म्मले कुन्तीदेवी ! नीयेन्नु धरिच्चालुं । ५८
श्रीदुर्वाससे महामुनये तस्मै नमो
भूतनाथांशोत्भवायोग्राय नमो नमः । ५९
येन ते दत्तो वरो धर्म्मविच्छेदं विना
मानसतापंतीर्न्नु सन्तति लभिक्कयाल् । ६०
धर्म्मतल्परनायुण्टाकणमेन्नाकिलो
धर्म्मज्ञ ! निय्युमतिन्नोन्नु चेय्तीटवेणं । ६१
धर्म्मराजने वरिच्चीटुक राजावायाल्
धर्म्मिष्ठनल्लेन्नाकिलवनालेन्तु फलं । ६२
कुन्तियुं भर्त्तावुतन्नाज्ञये वाङ्ङिक्कोण्टु
सन्तोषत्तोटुमृतुकाले पोय् स्नानंचेय्तु । ६३
शुभ्रवस्त्रवुं पूण्टु सुभ्रुवां कुन्तीदेवि
विभ्रमं कलर्न्नुटन् दर्प्पकवशयायाळ् । ६४

हे नाथ ! मैंने इसमें इतनी देर की।' इस प्रकार कुन्ती की मीठी बातें सुनकर पाण्डु के मन में बड़ा आनन्द हुआ और वे बोले—५१-५६ "मैं धन्य हूँ और यह मेरा सौभाग्य है कि आज तुम्हें यह बात सूझी। हे सुन्दरि ! हे निर्मल कुन्तीदेवि। अब हमारे वंश का उद्धार करने वाली तुम्हीं हो। भूतनाथ शंकर के अंश से उत्पन्न उन उग्र महामुनि दुर्वासा को मैं बारंबार नमस्कार करता हूँ, जिन्होंने धर्म का विच्छेद न करके तुम्हें बर दिया, ताकि मन का दुःख दूर करनेवाला सन्तान हो जाय। अगर सन्तान धर्म में निष्ठावाली हो तो, हे धर्मज्ञे ! तुम्हें इसी प्रकार करना चाहिए। तुम धर्मराज का वरण (आवाहन) करो। यदि कोई राजा हो और धर्मनिष्ठ न हो तो उसका राजा होना व्यर्थ है।" ५७-६२ कुन्ती ने अपने पति की आज्ञा शिरोधार्य की और बड़े प्रमोद के साथ ऋतु के समय स्नान किया। तदनन्तर सुभ्रू (सुन्दर भौंहोंवाली) कुन्ती ने स्वच्छ वस्त्र पहन लिये और हाव-भाव के साथ कामवश हो गयी। निर्मल मन और वेश-भूषा के साथ कुन्ती ने धर्मदेव का ठीक प्रकार से आवाहन किया। तब कलापूर्ण ढंग

निर्म्मलमनोवेषालङ्कारादिकळोटुं
धर्म्मदेवनें नन्नायावाहिच्चितु कुन्ति । ६५
शिलपमायिरिप्पोरु पुष्पतल्पत्तिन्मेल्च्चें-
न्नुल्पलाक्षियुमप्पोळुल्पादिप्पतिन्नाये ६६
योगमूर्त्तिमानाय धर्म्मराजनेप्पुल्कि
रागवुमिरुवर्क्कुं पूर्ण्णमायुण्टायवन्नु । ६७
गर्भाधानवुं चेय्तु मरञ्ञु धर्म्मदेव-
नप्पोळे गर्भं धरिच्चीटिनाळ् कुन्तितानुं । ६८
पेट्टितु पौरन्दरतारगे ताराधीशे
कुट्मट्टीटुं कुमारन्तन्नेत्तेजोबलाल् । ६९
भास्करे दिवसमध्यस्थिते स्वतेजसा
भास्करतुल्यनायोरर्भकन् पिरन्नप्पोळ् । ७०
केळ्क्कायितशरीरवाक्यवुमेल्लावर्क्कुं
भाग्यवानिवन् धर्म्मज्ञन्मारिल् श्रेष्ठनल्लो । ७१
आख्यया युधिष्ठिरन् पाण्डुसीमन्तपुत्रन्
साक्षाल् श्रीनारायणपादभक्तरिल् मुन्पन् । ७२
ईवण्णमुण्टायवन्नु कुन्तिक्कु सुतनेन्नु
देवि गान्धारि केट्टु खेदिच्चु वाळुं कालं ७३
रण्टां वत्सरमायितिनिक्कु गर्भमिन्नु-
मुण्टायीलोरु सुतनेन्तन्तेन्तस्तापाल् ७४

से सजे हुए एक पुष्प-तल्प पर जाकर कमललोचना कुन्ती ने सन्तानोत्पत्ति के हेतु योगमूर्ति धर्मराज का आलिंगन किया। दोनों का परस्पर प्रेम संपूर्ण हुआ। गर्भाधान करके धर्मदेव अन्तर्धान हुए और कुन्ती ने तत्क्षण ही गर्भ धारण किया। ६३-६८ जब चन्द्र ज्येष्ठा नक्षत्र में था, तब कुन्ती ने एक तेजस्वी और निर्दोष पुत्र को जन्म दिया। जब सूर्य दिन के मध्य में था, तब उस सूर्यतुल्य तेजवाले कुमार का जन्म हुआ। उसी समय एक अशरीरिणी वाक् (आकाशवाणी) सबको सुनायी दी—"यह पुत्र अत्यन्त भाग्यशाली और धर्मज्ञों में श्रेष्ठ होगा।" पाण्डु के इस प्रथम पुत्र का नाम है युधिष्ठिर, भगवान् नारायण के भक्तों में यह श्रेष्ठ है। जब गान्धारी ने सुना कि कुन्ती के इस प्रकार एक पुत्र पैदा हुआ तो उसको खेद हुआ। (उसने सोचा) "यह मेरे गर्भ का दूसरा वर्ष है, अब तक कोई बच्चा नहीं पैदा हुआ, क्या बात है?" इस चिन्ता से उसने बिना

कुण्ठतं कैविट्टवळुदरं कलक्किना-
ळुण्टायि साष्ठीलयां मांसपेशियुमप्पोळ् । ७५
वऩ्ऩितु यदृच्छया मामुनि वेदव्यास-
नऩ्ऩेरमन्तर्ग्गतं चॊल्लिनाळ् गान्धारियुं । ७६
कलशशतमाज्यपूर्ण्णमाय् वरुत्तुक
सलिलंकॊण्टु मांसपेशियुं कऴुकुक । ७७
नूऱु पुत्रन्मारॆयुण्टाक्कुवानॆऩ्ऩु मुनि
नूऱु खण्डिच्चु घृतकलशङ्ङळिलिट्टान् । ७८
सूक्षिच्चुवच्चुकॊण्टु कुंभङ्ङळ् पॊट्टुऩ्ऩुतुं
नोक्किक्कॊण्टॆटुत्तु नी वळर्त्तिक्कॊळ्कयॆऩ्ऩाल् ७९
ऎऩ्ऩरुळ्चॆय्तु तपस्सिन्नॆऴुऩ्ऩळ्ळि मुनि ।
पिन्नॆग्गान्धारितानुं तॆळिञ्ञु मरुविना- ८०
ळुण्टाय कुमारनॆप्पाण्डुवुमोटिच्चॆऩ्ऩु
कण्टुटन् जातकर्म्मंचॆय्तितु यथाविधि । ८१
सन्तोषं पूण्टु मरुवीटुऩ्ऩाळॊरुदिनं
कुन्तियोटुरचॆय्तु पाण्डुवां नृपवरन् । ८२
ऎन्तॊरु कऴिविनि रण्टामतॊरु सुत-
नन्तमिल्लात बलमुण्टायुण्टावानॆटो । ८३

विचारे अपना पेट मल दिया। फलस्वरूप एक मांसपिण्ड निकल आया। ६९-७५ उसी समय संयोग से महामुनि वेदव्यास वहाँ पधारे और गान्धारी ने उनसे अपने मन की बात कही। (मुनिजी ने कहा) "घी से भरे सौ कलश मँगवाओ और मांसपिण्ड को पानी से धो दो।" तब मुनि ने मांसपिण्ड को सौ खण्डों में काटकर एक-एक खण्ड एक-एक कलश में रखा ताकि सौ पुत्र हो जायँ। और कहा इनकी देखभाल करो और एक-एक कलश के फूटने का समय देखते रहो। घड़ा फूटने से जो बच्चा निकलेगा उसका पालन करना।" इतना कहकर मुनि तपस्या करने के लिए चले गये। तदनन्तर गान्धारी सुख से रहने लगी। जो-जो पुत्र पैदा हुआ उसे पाण्डु देखने गया और विधि के अनुसार उसका जातकर्म भी करते रहे। जब सब सुख से रहते थे, तब एक दिन राजा पाण्डु ने कुन्ती से कहा—७६-८२ "अब क्या उपाय है कि जिससे हमारे निस्सीम शक्ति-युक्त एक और पुत्र हो जाय। जो क्षत्रियवंश में जन्म लेता है, उसे शक्तिशाली होना चाहिए, तभी तो उसका जन्म सफल होगा। जिस प्रकार यज्ञों में

क्षत्रियवंशत्तिङ्कल् जनिच्चीटुन्नताकिल्
शक्तनायिरिक्केणमेङ्किले फलमुळ्ळु । ८४
वाजिमेधत्तिनल्लो श्रेष्ठत्वं ऋतुक्कळिल्
तेजसां कुलश्रेष्ठनायतु दिनकरन् ८५
द्विपदां कुलश्रेष्ठन् ब्राह्मणनेन्नपोले ।
विबुधश्रेष्ठनल्लो मारुत देवनेंटो ८६
अेन्नाल् नी जगल्प्राणदेवनेयावाहिच्चु
नन्दनमुण्टाक्कुक बलवानायिट्टिन्नु । ८७
भर्त्ताविन् नियोगत्ताल् कुन्तियुं तेळिञ्ञुळ्ळल्
भक्ति पूण्टावाहिच्चाळ् मारुतदेवन्तन्ने । ८८
मन्त्रत्तिन् बलंकोण्टु वायुवुमप्पोळे व-
न्नन्तिके निन्ननेरं कुन्तियुं नाणं पूण्टाळ् । ८९
पुत्रने वरिच्चप्पोळ् गन्धवाहनुं तेळि-
ञ्ञुत्तमयायवळेप्पुणर्न्नु गाढं गाढं । ९०
अप्पोळुतुलपादिच्चु गर्भवुं तिकञ्ञप्पो-
ळर्भकन् पिरन्नितु तेळिञ्ञु लोकङ्ङळुं । ९१
अन्नेरमशरीरितन्नुटे वाक्कुकेट्टु
नन्दननिवन् बलिश्रेष्ठनेन्नेल्लाटवुं । ९२
भीमविक्रमनाय भीमसेननुमेवं
भूमिपालककुलश्रेष्ठनायुण्टाय्वन्नु । ९३
पट्लराय् मेवीटुं मट्टुळ्ळ भूपालन्मा-
र्क्किट्टिट्टुवीणीटुन्नु मूत्रवुमश्रुक्कळुं । ९४

अश्वमेध ही श्रेष्ठ है, ज्योतियों में सूर्य ही श्रेष्ठ है, द्विपदों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है, उसी प्रकार देवों में श्रेष्ठ वायु है। इसलिए तुम जगत् के प्राण वायुदेव का आवाहन करो और एक शक्तिशाली पुत्र को जन्म दो।" अपने पति की बात सुनकर कुन्ती प्रसन्न हुई और उसने बड़ी भक्ति के साथ वायुदेव का आवाहन किया। ८३-८८ मन्त्र के बल से तत्क्षण ही वायुदेव पधारकर समीप में खड़े हो गये, जिससे कुन्ती को लज्जा हुई। जब कुन्ती ने उनसे पुत्र की याचना की तब वायुदेव प्रसन्न हुए और उत्तम कुन्ती को प्रगाढ़ आलिङ्गन किया। तब कुन्ती के गर्भ हुआ और यथासमय एक पुत्र का जन्म हुआ, जिससे सभी लोग प्रसन्न हुए। उस समय सभी स्थानों में एक आकाशवाणी सुनायी दी कि यह पुत्र बलशालियों में श्रेष्ठ होगा।

कुन्तियुं पत्तांदिनं कुळिप्पान् पोयाळ् निज-
नन्दननन्तन्नॆप्पणिप्पॆट्टॆट्टुत्तु कॊण्टुटन् । ९५
कुळिच्चु कुमारनॆयॆट्टुत्तुकॊण्टु कुन्ति
तळर्च्चयोटुमाश्रमत्तिन्नु पोरुनेरं । ९६
पिटिच्चु तिन्मान् व्याघ्रमटुत्तु वेगत्तोटु
पटुत्वमेरुं पाण्डु कॊंटुत्तु शरंकॊण्टु ९७
मरिच्चु शार्द्दूलवुमीश्वरविधिवशाल् ।
स्मरिच्चु दुर्वासाविन्वरत्तॆ कुन्तियप्पोळ् ९८
अलरिवरुन्नोरु पुलियॆक्कण्टु वृथा
मलमेल् मेलपट्टॆक्कु पिटिच्चु करेरुन्पोळ् ९९
वीणुपोयितु बालन् कीळ्प्पट्टॆक्कुरुण्टुटन्
ताणोरु भागत्तोरु कल्लिन्मेलॆन्त कष्टं ! १००
चूर्णमाय्च्चमञ्ञितु शिलयुमतु कण्टु
पूर्णविस्मयपरमानन्दत्तोटु पाण्डु । १०१
भगवान् परमात्मा परमेश्वरन् विष्णु
जगतां पति परिपालिच्चुकॊळ्कयॆन्नान् । १०२
सचन्द्रे बृहस्पतौ सिंहगे मखान्विते
विजयमुहूर्त्तगे दिनमध्यगे सूर्ये १०३

इस प्रकार राजाओं में श्रेष्ठ और भीम विक्रमवाले भीमसेन का जन्म हुआ। और अन्य शत्रु राजाओं के मूत्र और आँसू बूंद-बूंद होकर गिरने लगे। जन्म के दसवें दिन कुन्ती अपने पुत्र को बड़े श्रम से गोद में लेकर नहाने गयी। ८९-९६ स्नान करके अपने पुत्र को लेकर थकी हुई कुन्ती जब अपने आश्रम को लौट रही थी तब उसको पकड़कर खाने के लिए एक बाघ निकट आया। कुशल पाण्डु ने उस पर तीर चलाया और भगवान् की विधि के अनुसार बाघ मर गया। उस समय कुन्ती ने दुर्वासा के वरदान का स्मरण किया था, और गरजते हुए निकट आनेवाले बाघ को देखकर डर के मारे कुन्ती पहाड़ पर चढ़ने लगी थी, तब बालक उसकी गोद से नीचे गिर गया। और नीचे की एक चट्टान पर जाकर गिरा, जिससे चट्टान चूर-चूर हो गयी। यह देखकर अत्यन्त विस्मित होकर पाण्डु बोले—"जगत्पति भगवान् परमात्मा परमेश्वर विष्णु ही हमारा परिपालन करें।" ९७-१०२ जब चन्द्रमा मघा नक्षत्र से युक्त था, जब बृहस्पति सिंह में था और जब सूर्य विजयमुहूर्त में और दिन के मध्य में था तब त्रयोदशी

पिऱन्नु भीमसेनन् विशदत्रयोदश्यां ।
निऱञ्ञ पातिरय्क्कुमुन्पिले सुयोधनन् १०४
पिऱन्नानतुनेरं करञ्ञु कुऱुनरि ।
चोरिञ्ञु मेघङ्ङळुं रुधिरवृष्टिकोण्टु १०५
वरुत्ति विप्रन्मारे धृतराष्ट्ररुमप्पोळ् ।
पेरुत्ततापत्तोटुं विदुररोटु चोन्नान् । १०६
दुर्न्निमित्तङ्ङळुटे कारणं चोल्केन्नप्पोळ्
मन्नवन्तन्नोटाशु विदुररुरचेय्तु । १०७
इन्निप्पोळुण्टायतु नम्मुटे कुलान्तक-
नेन्नतुं दैवमऱियिक्कचेय्ततु नूनं । १०८
त्यजिच्चीटेणमोरु पुरुषं कुलस्यार्त्थे
त्यजिच्चीटेणमोरु कुलत्ते ग्रामस्यार्त्थे १०९
त्यजिक्कां जनपदस्यार्त्थे केवलं ग्रामं
त्यजिक्कामात्मार्त्थे तन्नाटुमेन्नऱियेणं ११०
इत्तरं विदुररुं विप्ररुमुरचेय्ता-
रुत्तरं चोल्लीलेतुं पुत्रस्नेहत्ताल् नृपन् । १११
अङ्ङने नूरु मक्कळ् धृतराष्ट्रनुमुण्टाय् ।
तिङ्ङिन मोदत्तोटुं पिन्नेयुं पाण्डुनृपन् ११२
लोकविख्यातनायिट्टिनियुमोरु सुतन्
भागवतोत्तमनायुण्टावानेन्तु नल्लू । ११३

तिथि को भीमसेन का जन्म हुआ । आधी रात के समाप्त होने के पहले ही सुयोधन का जन्म हुआ—तब सियार बोले । मेघों ने रक्त की वृष्टि की । तब धृतराष्ट्र ने ब्राह्मणों को बुलाया और बड़े दुःख के साथ विदुर जी से पूछा कि इन दुर्निमित्तों का क्या कारण है ? तब विदुर ने राजा को उत्तर दिया—"आज जो हुआ है उसके द्वारा दैव ने बतलाया है कि हमारे कुल का नाश होनेवाला है । १०३-१०८ कुल के हित के लिए उसके एक अङ्ग को त्यागना चाहिए और गाँव के हित के लिए कुल छोड़ना चाहिए । देश के लिए गाँव को त्यागना ठीक है और जान लो कि अपनी आत्मा के हित के लिए देश को त्यागना भी ठीक है ।" जब विदुर और विप्रों ने इस प्रकार कहा तब राजा ने पुत्रस्नेह के कारण कुछ भी न कहा । इसी प्रकार धृतराष्ट्र के सौ पुत्र हुए । पाण्डु जो बड़े सुख से रहते थे, अब सोचने लगे कि क्या उपाय है कि जिससे मेरे एक और पुत्र हो जाय जो

त्रैलोक्याधिपनाय वासवन् देवश्रेष्ठन्
पौलोमीवरन्तन्नेस्सेविच्चालवनुटे ११४
वीर्यत्ताल् नमुक्कोरु नन्दननुण्टाय्वरुं ।
वीर्यवानायिट्टेन्नु कल्पिच्चु वळिपोले ११५
तापसश्रेष्ठन्मारुमाय् निरूपिच्चु कल्पि-
च्चाभोगानन्दंपूण्टु कुन्तियोटुरचेय्तान् । ११६
वल्लभे! नमुक्किन्नु नल्लोरु तनयने-
स्स्वर्ल्लोकाधिपसुतनायिट्टुण्टाक्कीटेणं ११७
आराधिच्चीटुन्नतुण्टिन्द्रने नीयुं ञानुं
पाराते वरिक्केणं मन्त्रंकोण्टेन्टे चोल्लाल् । ११८
इङ्ङने नियोगिच्चान् मंगलनाय पाण्डु-
वङ्ङनेतन्नेयेन्नु कुन्तियुमुरचेय्ताळ् । ११९
धीरात्मा नृपोत्तमनोरुकाल्कोण्टु निन्नु
घोरमायिरिप्पोरु तपस्सु तुटङ्ङिनान् । १२०
अक्कालं प्रत्यक्षनायीटिन महेन्द्रनु-
मुळ्क्कान्पु तेळिञ्ञु भूपालनोटरुळ्चेय्तु । १२१
मून्नु लोकत्तिङ्कलुं विश्रुतनायिट्टिप्पोळ्
ञान् निनक्कोरु सुतन्तन्नेयुण्टाक्कीटुवन् । १२२
अन्नतुकेट्टु तेळिञ्ञीटिनान् पाण्डुनृपन्
चेन्नु कुन्तियेप्पुणर्न्नीटिनान् महेन्द्रनुं १२३

लोक विख्यात और भागवतों में श्रेष्ठ निकले । तीनों लोकों का पति और देवों में श्रेष्ठ तो इन्द्र है । अतः उन पौलोमी (शची) के पति इन्द्र की ही सेवा की जाय तो उनके वीर्य (बीज) से हमारे एक पुत्र पैदा होगा जो अवश्य वीर्यवान् होगा । यह सोचकर श्रेष्ठ तापसों के साथ सलाह करके निर्णय पर पहुँचे और बड़े आनन्द के साथ कुन्ती से बोले—१०९-११६ "प्रिये! अब हमारे, स्वर्गलोक के अधिपति के पुत्र के रूप में एक अच्छा तनय पैदा होना चाहिए । इससे अब तुम और मैं इन्द्र की अराधना करें और मेरे कहने से तुम इन्द्र का मन्त्र द्वारा शीघ्र वरण (आवाहन) करो ।" मंगलमय पाण्डु ने इस प्रकार आज्ञा दी और कुन्ती ने भी स्वीकार किया । धीर राजा पाण्डु ने एक ही पैर पर खड़े होकर घोर तप करना प्रारम्भ किया । तब महेन्द्र प्रसन्न होकर प्रत्यक्ष हुए और राजा से बोले—"मैं तुम्हारे लिए ऐसा पुत्र दूँगा जो तीनों लोकों में विख्यात होगा ।" ११७-१२२

गर्भिणियाय कुन्तितन्नुटॆ तेजस्सुक-
ण्टत्भुतंपूण्टु चमञ्ञीटिनारॆल्लावरुं । १२४
अर्भकन् पिऱन्नितु फाल्गुनामासे पुन-
रप्पॊऴे फल्गुननॆन्नतिनाल् पेरुमिट्टान् १२५
केळ्क्कायितशरीरिवाक्कुमन्नेरं दिवि
साक्षाल् श्रीरामसमनाय्‌वरुमिवनॆन्न १२६
चेतसि शतशृंगवासिकळ्क्कॆल्लामप्पोळ्
प्रीतियुं वळर्न्नितु कुन्तियुं सन्तोषिच्चाल् १२७
देवकळ् पॆरुम्पऱयटिच्च नादघोष-
मेवमॆन्निनिक्किप्पोळ् चॊल्लुवानरुतल्लो १२८
कल्पान्तकालत्तिङ्कल् पॆय्युन्न मळपोलॆ
पुष्पङ्ङळ्कॊण्टु वृष्टियुण्टायतॆन्ते चॊल्वू । १२९
देवगन्धर्व्वन्मारुमप्सरस्त्रीवर्ग्गवुं
देविकळोटु पाट्टुमाट्टवुं तुटङ्ङिनार् । १३०
जयन्तोत्भवरचितोत्सवमित्रयिल्ल
भयं तीर्न्नितु देवादिकळ्क्कुमतुकालं । १३१
इङ्ङनॆ मून्नु कुमारन्मारुण्टाय कालं
मंगलशीलयाय माद्रियुमॊरु दिनं । १३२

यह सुनकर राजा पाण्डु प्रसन्न हुए और इन्द्र ने जाकर कुन्ती का आलिङ्गन किया। गर्भिणी कुन्ती का तेज देखकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। फाल्गुन के महीने में वह लड़का पैदा हुआ, अतएव उसका नाम फाल्गुन रखा गया। उस समय आकाश में यह अशरीरिणी वाक् (आकाशवाणी) सुनायी दी—"यह लड़का साक्षात् श्रीराम के समान होगा।" शतशृंग के निवासियों के मन में बड़ी प्रसन्नता हुई, और कुन्ती भी प्रसन्न हुई। देवों ने महादुन्दुभि को बजाया, जिसके नादघोष का वर्णन नहीं किया जा सकता है। कल्प के अन्त के समय की वर्षा के समान फूलों की वृष्टि हुई, जिसे कहाँ तक वर्णन किया जाय। १२३-१२९ देव, गन्धर्व और अप्सराओं ने देवियों के साथ नाचना-गाना आरम्भ किया। जयन्त (इन्द्र का पुत्र) के जन्म के अवसर पर जो उत्सव हुआ, वह इतना अच्छा न हुआ था। अतएव देवों का भय भी समाप्त हुआ। इस प्रकार जब तीन पुत्र पैदा हुए, तब एक दिन मंगलशील माद्री ने, जिसके अपने ही पुत्र नहीं थे, एकान्त में अपने पति पाण्डु से कहा—गान्धारी के सौ पुत्र हो गये, और शान्त मनवाली कुन्ती

पुत्रन्मार् तनिक्कु तान् पॆट्टॊन्नुमिल्लाय्कयाल्
भर्त्तावुतन्नोटॊरु रहसि चॊल्लीटिनाळ् । १३३
गान्धारी तनिक्कॊरु नूरु पुत्रन्मारुण्टु
शान्तमानसयाय कुन्तीदेविक्कुमिप्पोळ् १३४
पुत्रन्मारुण्टाय्वन्निनतीश्वरनियोगत्ताल्
सिद्धमल्लाय्कयाल् ञानॊन्नुण्टु चॊल्लीटुन्नु । १३५
स्त्रीकळ्क्कु तान्तान् पॆट्ट पुत्रन्मारिल्लॆन्नाकिल्
शोकत्तिन्नॊरिक्कलुमिल्लॊरु शान्ति नूनं । १३६
ऎन्निवयोर्त्तु कुरञ्ञोरु सन्तापमुळ्ळिल्
पिन्नेयुं वर्द्धिक्कुन्नु मूढतकॊण्टुतानुं । १३७
इत्तरं केट्टु पाण्डु कुन्तियोटॊरुदिनं
मद्रजामनोगतमरियिच्चतु केट्टु । १३८
कुन्तियुमॊरु मन्त्रं दानं चॆय्तितु माद्रि-
य्कन्तरात्मनि परमानन्दत्तोटुमवळ् १३९
अश्विनीदेवकळॆ वरिक्कनिमित्तमाय्
विश्रुतन्मारायवळ्क्किरुवरुण्टाय्वन्नु । १४०
निश्शेषनृपगुणयुक्तन्मारायिट्टवर्
विश्वनायकसमन्मारॆन्ने पर्याव् । १४१
नकुलनॆन्नुं सहदेवनॆन्नतुं नामं
निखिलजनमनोमोहनन्मारॆन्नयुं । १४२

के भी अब भगवान् की कृपा से (तीन) पुत्र पैदा हो गये। मेरे तो नहीं हैं। इसलिए मैं एक बात बताती हूँ। १३०-१३५ स्त्रियों के जब तक अपने ही उदर के पुत्र नहीं होते तब तक उनके शोक की कभी शान्ति नहीं हो सकती। यह सब सोचते हुए मेरे मन का सन्ताप बढ़ रहा है, भले ही यह मेरी मूढता हो। यह सुनकर एक दिन पाण्डु ने माद्री के मन की बात कुन्ती को बतलायी। उसे जानकर कुन्ती ने एक मन्त्र माद्री को प्रदान किया। माद्री ने बड़े आनन्द के साथ अश्विनी देवों का आवाहन किया, जिसके फलस्वरूप उसके दो विख्यात पुत्र पैदा हुए। वे सभी नृप गुणों से युक्त थे और देवों के तुल्य थे, इतना कहना पर्याप्त है। उनके नाम नकुल और सहदेव थे और वे सभी जनों के मन को हरनेवाले थे। १३६-१४२

पाण्डुविन्टॆ परमगति

अञ्चु पुत्रन्मारोटुं रण्टु पत्निकळोटुं
नॆञ्चकं तॆळिञ्ञारण्याश्रमे वाळुंकालं १
पञ्चसायकन्तन्टॆ बन्धुवां कालंवन्नु
पञ्चत्वं भविप्पानाय् पाण्डुविन्नतुकालं । २
इन्द्रपुत्रनु पतिन्नालु वत्सरं तिक-
युन्न जन्मर्क्षदिनमिन्नॆन्नु निरूपिच्चु ३
विप्रभोजनत्तिनु कोप्पिट्टु कुन्तीदेवी ।
तत्पदार्त्थङ्ङळॆल्लां संभरिच्चीरुक्कुन्पोळ् ४
पुष्पबाणनु समनाकिय नरपति ।
पुष्पितलता वृक्षशोभितवनभुवि ५
भद्रशीलांगियाय नारिमार्कुलमणि
माद्राधिपतिसुतयोटुं वैचित्रवीर्यन् ६
सञ्चरिच्चितु वसन्ताभयुं कण्टुकण्टु
चञ्चलमायि मनोधैर्यवुं विधिबलाल् । ७
मन्मथशरमेट्टु निर्म्मलनाय पाण्डु
कर्म्मवासनावशाल् सम्मोहं पूण्ट मूलं ८
माद्रियॆक्कण्टु चित्तमार्द्रमाय् चमकयाल्
पार्त्थिवन् तॆरुतॆरॆ पेर्त्तु पुल्कियनेरं । ९
मामुनिशापंकॊण्टु जीवनुं नटकॊण्टु
मामुनिमारुं कुन्तीदेवियुं दुःखंपूण्टार् । १०

पाण्डु की परम गति

पाँच पुत्रों और दो पत्नियों के साथ प्रसन्न होकर पाण्डु अरण्य के आश्रम में रहते थे, तब कामदेव के मित्र वसन्त का समय आया, क्योंकि उनके मरण की वेला निकट थी। "आज इन्द्रपुत्र (अर्जुन) के चौदह वर्ष पूरे होने का जन्म दिवस है", ऐसा सोचकर कुन्तीदेवी ने ब्राह्मण भोजन का प्रबन्ध किया। जब उसके लिए सब सामग्री इकट्ठा की जा रही थी, तब मदन के समान राजा सुन्दरी और सुशीला और नारीश्रेष्ठ माद्री के साथ पुष्पितलता और वृक्ष की शोभावाले वन में विचरते थे। वसन्त की शोभा को देख-देखकर विधिवश उनका धैर्य शिथिल हो गया। १-७ निर्मल पाण्डु मदन का बाण लगने से अपने ही कर्म की वासना के कारण मोह में

कामिनियाय माद्रि कूटवे तीयिल्च्चाटि
कामनु समनाय कामुकनोटु चेन्न्ऩाळ् । ११
मुन्नमे बालन्माक्कुं षोडशक्रियकळ्क्कु
धन्यनां वसुदेवन्तन्नुटे नियोगत्ताल् १२
वन्निरिक्कुन्न गर्गन् वृष्णिकळ् पुरोहित-
नोन्नोळियाते वेण्टुं कर्म्मङ्ङळ् चेय्यिच्चतुं १३
चिन्तया वेन्तु वेन्तु कुन्तियुं बालन्मारुं
सन्तापत्तोटु वेण्टुं कर्म्मङ्ङळोक्केच्चेय्तार् । १४
बालकन्मारेयुमम्मातावां कुन्तियेयुं
पालिप्पानिनियारुमिल्लेन्नु निरूपिच्चु १५
तापसन्मारुं कोण्टे हस्तिनपुरत्ताक्कि
तापवुं मऱच्चवरविटे वसिक्कुन्नाळ् १६
वेदव्यासनुं चेन्नु मेलिले विशेषङ्ङ-
ळादरवोटु सत्यवतियोटरुळ्चेय्तु । १७
अंबिकयोटुमंबालिकयामवळोटु-
मम्मयुं तपस्सिनाय् वनत्तिल् चेन्नुपुक्काळ् । १८
मूवरुं परलोकं प्रापिच्चारविटन्नु
चोव्वोटु शेषक्रियचेय्तितु बालन्मारुं । १९

आ गये । माद्री को देखकर उनका चित्त भाव-भरा हो गया और उन्होंने उसका आवेश के साथ आलिङ्गन किया । तब मुनि के शाप के कारण उनके प्राण निकल गये, और मुनिगण और कुन्तीदेवी सभी अत्यन्त दुःख-मग्न हो गये । कामिनी माद्री उनकी चिताग्नि में कूद पड़ी और अपने शरीर को भस्म करके अपने कामदेव के समान कामुक से मिलकर एकरूप हो गयी । पूज्य वसुदेव की आज्ञा से बालकों को सोलह संस्कार कराने के लिए पहिले ही से आये हुए वृष्णिकुल के पुरोहित गर्ग ने एक को भी न छोड़ते हुए सभी अन्त्येष्टि क्रियाएँ करायीं और दुःख से जलते हुए कुन्ती और बालकों ने सभी क्रियाएँ कीं । ८-१४ बालकों का और माता कुन्ती का पालन करनेवाला अब कोई नहीं है, ऐसा समझकर तापसों ने उनको हस्तिनापुर पहुँचाया । जब अपने दुःख को छिपाकर वे सभी वहाँ रहते थे, तभी एक बार वेदव्यास जी वहाँ पधारे और उन्होंने सत्यवती को सभी समाचार सुनाया । अंबिका और अंबालिका के साथ माताजी तप करने के लिए वन चली गयीं । तीनों का स्वर्गवास हो गया और बालकों ने ठीक तौर पर उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की । १५-१९

कुरुपाण्डववैरं

आट्ऱलोट्टुण्टाय्वन्न राजपुत्रन्मारॊरु-
नूट्ऱारुमॊरुमिच्चु कळिक्कुं कालत्तिङ्कल् १
सत्संगमेऱेयुळ्ळ पाण्डवन्मारोटॊरु-
मत्सरमुण्टाय्वन्नु धार्त्तराष्ट्रन्मार्क्कुळ्ळिल् । २
भीमसेननॆक्कुऱिच्चेऱेयुमुण्टु वैरं
भूमिपालात्मजनां दुरियोधननन्नाळ् । ३
उऱङ्ङुंनेरं कॆट्टिग्गंगयिलिट्टारव-
रिऱन्नीटुवान् विषं कॊटुत्तार् चोट्रिल्त्तन्नॆ । ४
पान्पिनॆक्कॊण्टु कटिप्पिच्चार् कॊल्लुवानव-
रां पणिचॆय्तारतु पऱञ्ञालॊटुङ्ङुमो । ५
बन्धुवाय् शकुनियुं कर्ण्णनुमवर्क्कुण्टु
कुन्तितान् तनयन्मार्क्कीश्वरन्तानुमुण्टु । ६
अक्कालं कुमारन्मार्क्कस्त्रङ्ङळ् पठिप्पिप्पा-
नक्कृपाचार्यन्तन्नॆक्कल्पिच्चु भीष्मर्चॊल्लाल् । ७
अस्त्रज्ञन्मारिल् मुन्पनाकिय कृपन्तन्टॆ-
युद्भवं पऱयुन्पोळत्भुतमॊटुङ्ङीटा । ८

कौरव और पाण्डवों का वैर

उन दिनों जब सभी एक सौ छः राजपुत्र साथ खेला करते थे। तब अधिक सत्संगवाले पाण्डवों से धृतराष्ट्र के पुत्रों को भीतर ही भीतर जलन होने लगी। राजपुत्र दुर्योधन का तो भीमसेन के प्रति अत्यधिक और विशेष वैमनस्य था। उन सब कौरवों ने सोये हुए भीम को बाँधकर गंगा में फेंका और उसके भात में विष मिला दिया ताकि वह मर जाय। साँप से उसे डँसवाया। इस प्रकार भीम को मारने के लिए उन्होंने अनेक प्रयत्न किये जिनका संपूर्ण वर्णन असंभव है। शकुनि और कर्ण उनके मित्र थे और कुन्ती के पुत्रों की ओर ईश्वर ही थे। उन दिनों भीष्म के कहने से कुमारों को अस्त्र-शस्त्र सिखाने के लिए कृपाचार्य रखे गये। अस्त्रज्ञों में श्रेष्ठ कृप के उद्भव का वर्णन करने में आश्चर्य का अन्त ही न होगा। १-८

शारद्वतोत्पत्ति

पद्मजतनयनामंगिरस्सिन्टॆ पुत्र-
रुल्भविच्चितु मूवरॆत्रयुं तेजस्सोटुं । १
उचत्थ्यन् बृहस्पति संवर्त्तन्मारॆन्नति-
लुचत्यतनयनायुण्टायि दीर्घतमा । २
अवन्टॆ सुतनल्लो गौतमतपोधन-
नवन्टॆ मकनल्लो शरद्वानॆन्न मुनि । ३
अवनु वेदत्तिङ्कल् वासन कुरकया-
लवशप्पॆट्टु तातन् जातकं निरूपिच्चु । ४
धनुर्व्वेदत्तॆप्पठिप्पिच्चितु जनकनुं
मुनिवीरनुं जामदग्न्यनु समनायान् । ५
चतुरनायानवनस्त्रङ्ङळ्क्कतुमूल-
मधिकं भीतिपूण्टु चमञ्ञु शतमखन् । ६
शारद्वानुटॆ तपोविघ्नत्तॆ वरुत्तुवान्
सुरश्रेष्ठनुं ज्वालापतियॆ नियोगिच्चान् । ७
चापास्त्रधरनायि निल्कुन्न शरद्वानुं
शोभयोटेकांबरयामवळ्तन्नॆक्कण्टान् । ८
अप्सरस्त्रीकळिल्वच्चल्भुतांगियॆक्कण्टि-
ट्टप्पॊळॆ विल्लुमम्पुं वीणुपोयितु बलाल् । ९

शारद्वत की उत्पति

ब्रह्मा के पुत्र अंगिरस् के तीन तेजस्वी पुत्र हुए—उचथ्य, बृहस्पति और संवर्तक। और उचथ्य का पुत्र दीर्घतमा भी हुआ। उसका पुत्र हुआ तपोधन गौतम जिसका पुत्र था मुनि शरद्वान्। उसकी वेद पढ़ने में रुचि कम थी, इसलिए पिता ने लाचार होकर उसका जन्मपत्र देखकर उसको धनुर्वेद सिखलाया जिससे मुनिवीर (शरद्वान्) जामदग्न्य (परशुराम) के तुल्य हो गये। वह शस्त्रों में बहुत ही कुशल हुए जिसके कारण शतमख (इन्द्र) अधिक डर गये। १-६ शरद्वान् के तप में बाधा पहुँचाने के लिए इन्द्र ने ज्वालापति[1] को आज्ञा दी। चाप और अस्त्र धारण किये हुए शरद्वान् ने शोभा के साथ एक वस्त्र पहनकर खड़ी उस अप्सरा को देखा। अप्सराओं में अद्भुत रूपवाली उसको देखकर तत्क्षण ही धनुष्बाण हाथ से गिर गये।

१ संस्कृत महाभारत में इस अप्सरा का नाम 'जालपदी' दिया गया है।

उण्टाय विकारत्ताल् वेपथुशरीरनाय्
पुण्डरीकेषु परवशनॆन्निन्निरिक्कलुं । १०
धैर्यज्ञानादि तपोबलङ्ङळुण्टाकयाल्
स्थैर्यत्तॊप्पूण्टु निन्न शरद्वानतुनेरं । ११
स्रविच्चु रेतस्सतुमरिञ्ञीलवनप्पोळ्
जवत्तोटविटुन्नु गमिच्चान् विवेकत्ताल् । १२
रण्टायि शरस्तंबत्तिङ्कल् वीणतुमूल-
मुण्टायि मिथुनवुमाश्रमसमीपत्तिल् । १३
कण्टितु नायाट्टिनायविटॆ वन्ननेरं
कण्टककालनाय शन्तनुसेनानाथन् । १४
अवनु कृष्णाजिनचापबाणङ्ङळोटु
मविटॆक्काणाय्वन्न मिथुनंतन्नॆयप्पोळ् । १५
अवनीदेवापत्यमॆन्नु कल्पिच्चु पुन-
रवनीश्वरनाय शन्तनुविनु नल्कि । १६
नृपनुं कॊण्टुपोयित्तन्नुटॆ राज्यत्तिङ्कल्
कृपया वळर्त्तितु तनिक्कु मक्कळाक्कि । १७
कृपया वळर्क्कयाल् नृपति पेरुमिट्टान्
कृपनॆन्नतु पिन्नॆ पॆण्णिनु कृपियॆन्नुं । १८

काम विकार के कारण उसका शरीर काँपने लगा। यद्यपि वह पुण्डरीकेषु (कामदेव) के वश में था, तथापि धैर्य, ज्ञान, तपोबल आदि होने के कारण शरद्वान् ने अपने को संभाला। पर उसका वीर्य गिर गया जिसका उसे पता ही न था। विवेक होने के कारण वह मुनि वहाँ से शीघ्र चले गये। उनके वीर्य के शरस्तम्ब पर दो भागों में गिरने के कारण आश्रम के निकट दो मिथुन (जुड़वाँ) बच्चे पैदा हुए। ७-१३ जब शान्तनु के शत्रुनाशक सेनापति वहाँ शिकार खेलने आये, तब उन्होंने उन बच्चों को देखा। बच्चों को कृष्णाजिन, चाप और बाण के निकट पाने के कारण उन्होंने निश्चय किया कि ये अवनीदेव (ब्राह्मण) के बच्चे हैं। सेनापति ने उन बच्चों को लाकर अवनीश्वर (राजा) शन्तनु को दिया। राजा उनको अपने राज्य में ले गये और अपने ही बच्चे बनाकर उनका बड़ी कृपा से पालन किया। कृपा से पालन करने के कारण राजा ने लड़के का कृप और लड़की का कृपी नाम रखा। शरद्वान् गौतम ने जान लिया कि ये बच्चे हमारे हैं इसलिए उन्होंने बड़े कौतुक के साथ राजा से सब हाल बतला

गौतमनरिञ्ञितु तन्नुटॆ मक्कळॆन्नु
कौतुकत्तोटु नृपनोटु चॆन्नरियिच्चु । १९
शरद्वान् चतुर्व्विधमाकिय धनुर्व्वेदं
सुरश्रेष्ठनुसमं तनिक्कु पठिप्पिच्चु । २०

विद्याभ्यासं

परमाचार्यनायानतिनाल् कृपरप्पोळ्
सुरवाहिनीसुतन्तन्नुटॆ नियोगत्ताल् । १
सुरवाहिनीपतिसमनां कृपन् मही-
सुरवृन्दाग्रेसरन् धनुर्व्वेदज्ञमुख्यन् । २
कुरुवीरात्मजन्मार्तम्मॆयु पठिप्पिच्चु
कुरुराज्यत्तिल् सुखिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल् । ३
अविटेक्कॊळ्ळुन्नतॊळिळयॊरुनाळ् द्रोणाचार्य-
नवनोटॊत्त विल्लाळिकळिल्लॊरुत्तरुं । ४
द्रोणराकुन्नतारॆन्नॆन्नोटु चोदिक्किल् ञान्
नाणवुं पूण्टु मण्टुं चॊल्लुवान् कालं पोरा । ५
द्रोणर्तानुण्टायतुमादिये चॆरुप्पत्तिल्
क्षोणीन्द्रनाकुं द्रुपदेन सख्यावाप्तियुं । ६
नल्लॊरु शारद्वतितन्नॆक्कैपिटिच्चतुं
चॊल्लेरुमश्वत्थामाववळ् पॆट्टुण्टायतुं । ७

दिया । शरद्वान् ने देव-श्रेष्ठ के समान राजा को चार प्रकार का धनुर्वेद सिखलाया । १४-२०

विद्याभ्यास

इस प्रकार कृप परमाचार्य हुए । और सुरवाहिनी पुत्र (गंगा के पुत्र भीष्म) की आज्ञा से सुरवाहिनीपति (गंगा के पति शन्तनु) के तुल्य, ब्राह्मणों में श्रेष्ठ, धनुर्वेदज्ञों में उत्तम कृप ने कुरुवीर के सन्तानों को धनुर्वेद सिखाया । जब इस प्रकार कुरुराज्य में सुख से रहते थे, तब एक दिन वहाँ द्रोणाचार्य पधारे, जिनके तुल्य धनुष चलानेवालों में कोई नहीं था । मुझसे अगर कोई पूछे कि द्रोण कौन है ? तो मैं लज्जित होकर चला जाऊँगा, कहने के लिए मेरे पास समय न होगा । १-५ द्रोण की उत्पत्ति, बाल्यावस्था ही में राजा द्रुपद के साथ उसकी मित्रता, शुभ कन्या शारद्वती

भार्ग्गवनोटु धनं चोदिप्पान् चेन्नवारुं
भार्ग्गवनर्त्थमिल्लाञ्ञस्त्रङ्ङळ् कोटुत्ततुं । ८
पाञ्चालनोटु पिन्नेप्पिणक्कमुण्टायतुं
ञान् चालेप्परयुन्पोळायुस्सु पोरायल्लो । ९
ऍङ्किलुं गुरुविन्टेयुल्भवमेन्नोटिप्पोळ्
संक्षेपिच्चरियिच्चीटेणमेङ्किलो केळ्क्कां । १०

भारद्वाजोल्पत्ति

ऒरुनाळ् भरद्वाजन् गंगयिल् कुळिप्पानाय्
विरविल् चेन्ननेरं कण्टितु घृताचियें । १
मारुतहृतांबरयामवळतन्नेक्कण्टु
मारनुवशनायि मामुनियतुनेरं । २
इन्द्रियस्खलनं वन्नतिने द्रोणंतन्नि-
लन्तेरमाक्किक्कोण्टानतिल्निन्नुण्टाकयाल् । ३
द्रोणनेन्नतुतन्ने नामधेयवुं चोन्ना-
नानन्दंपूण्टु सांगवेदवुं पठिप्पिच्चु । ४
भरद्वाजनु सखियाकिय पृषतनां
धरित्रीपतिसुतन् द्रुपदनतुकालं
द्रोणरोटोरुमिच्चु पठिच्चु विद्यकळुं । ५

(कृपी) के साथ उसका विवाह, उसका विख्यात अश्वत्थामा को जन्म देना, द्रोण का धन माँगने के लिए भार्गव के पास जाना, धन न होने के कारण भार्गव का अस्त्र दान करना, बाद में द्रुपद के साथ विरोध हो जाना, यह सब अगर विस्तार से कहने लगूँ तो आयु कम होगी। 'फिर भी गुरु जी का उद्भव मुझसे कह दीजिए।' 'अच्छा, तो सुन लीजिए।' ६-१०

भारद्वाज की उत्पत्ति

एक दिन जब भरद्वाज स्नान करने गंगाजी गये, तब वहाँ घृताची दिखायी दी। हवा से अपहृतवस्त्र घृताची को देखकर महामुनि मार (कामदेव) के वश में आ गये। फलस्वरूप वीर्य का स्खलन हुआ जिसे मुनि ने अपने द्रोण में समेट लिया। उससे जो बच्चा पैदा हुआ उसका 'द्रोण' नाम रखा और उसको आनन्द के साथ साङ्ग वेद पढ़ाया।

सुरलोकवुं पुक्कु पृषतमहीपति
नरपालकनायान् द्रुपदनतुकालं । ६
भारद्वाजनुं शारद्वतियें वेट्टु पिन्नें
भारद्वाजात्मजनायश्वत्थामावुमुण्टाय् । ७
पुत्रनें वळर्प्पतिन्नर्त्थमिल्लाय्कमूल-
मर्त्थिच्चु भार्ग्गवनोटवनुमतुनेरं । ८
अर्त्थमेंप्पेरुं दानंचेंय्तुपोयितु निन-
क्कस्त्रसंहार प्रयोगादिकळ् पठिप्पिक्कां । ९
ऍन्नतु केट्टु भारद्वाजनुं धनुर्व्वेदं
नन्नायिप्पठिच्चितु भार्ग्गवन्तन्नोटप्पोळ् । १०
द्रुपदन्तन्नेंच्चेंन्नु कण्टितु सखियेंन्नो-
त्तवनुमधिक्षेपिच्चुरचेंय्तितु पारं । ११
विद्यार्त्थश्रुतप्रज्ञाशौर्यादि गुणङ्ङळकों-
ण्टोंत्तवरोटे सख्यमुण्टावितेंल्लावक्कुं । १२
पुष्टनुं विपुष्टनुं तम्मिल् सख्यवुमिल्ल ।
रुष्टनां द्रुपदनुमिङ्ङनें पऱञ्ञप्पोळ् १३
पुत्रनुं शिष्यन्मारुमायवन् पुऱप्पेंट्टु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् चेंन्नु पुक्कतुनेरं । १४
बालन्मार् पलरुमाय् वीटया कळिक्कुन्पोळ्
कालजाङ्गुलीयकमन्धुविल् वीणुपोयि । १५

उस समय भरद्वाज के मित्र राजा पृषत के पुत्र द्रुपद ने भी द्रोण के साथ विद्याएँ पढ़ीं। तदनन्तर राजा पृषत का स्वर्गवास हुआ और द्रुपद राजा हुआ। भारद्वाज (द्रोण) ने शारद्वती (कृपी) के साथ विवाह किया और उनके अश्वत्थामा नामक पुत्र का जन्म हुआ। १-७ अपने पुत्र के पालन-पोषण के लिए द्रव्य न होने के कारण द्रोण ने भार्गव से याचना की। (भार्गव ने कहा) "मैंने द्रव्य सब दान में दे दिया है, इसलिए मैं तुम्हें अस्त्रों का प्रयोग और संहार सिखा दूँगा।" यह सुनकर द्रोण ने भार्गव से सारा धनुर्वेद अच्छी तरह से पढ़ा। इसके बाद पुराना मित्र समझकर द्रोण द्रुपद के पास गये। परंतु उसने अपमान करते हुए इस प्रकार कहा—"जो विद्या, अर्थ, शिक्षा, प्रज्ञा, शौर्य आदि गुणों में अपने बराबर हैं उन्हीं के साथ मित्रता होती है। समृद्ध और अकिंचन में मैत्री नहीं हो सकती है।" जब रुष्ट द्रुपद ने इस प्रकार कहा तब अपने पुत्र और शिष्यों को

वीटयुमतिनोटुकूटवे वीणनेरं
क्रीडयुं मतियाक्कियतिनेयेटुप्पानाय् । १६
अन्धुविन् करे सोल्क्कण्ठन्मारायेल्लावरु-
मन्धन्मारुपायमिल्लाञ्ञु निल्क्कुन्ननेरं १७
आसन्नपलितनाय् श्यामनाय् कृशांगनाय्
भूसुरोत्तमन् चिरिच्चवरोटुरचेय्तु । १८
वीटयुं मुद्रिकयुं ञानिषीकक्कळाले
पीडकूटातेयेटुत्तीटुवन् निङ्ङळ् मम । १९
भोजनं तन्नीटुविनेन्नतु केट्टु धर्म्म-
राजनन्दनन् चोन्नान् मृष्टाष्टि तरुवन् ञान् । २०
अन्नेरमिषीककळ् मेल्क्कुमेल् प्रयोगिच्चि-
ट्टन्योन्यसमायोगाल् वीटयुमेटुत्तितु २१
धन्यनां द्रोणाचार्यन् मुद्रयुमतुनेरं ।
वन्नितु कुमारन्मार्क्कुळ्ळिललभुतमेटं २२
अभिवाद्यवुं चेय्तु चोदिच्चु कुमारन्मा-
रभिलाषङ्ङळ् नल्कामारेन्नु परयेणं । २३
चोदिप्पिन् निङ्ङळ् चेन्नु भीष्मरोटवनेन्नाल्
बोधिप्पिच्चीटुमेन्ने निङ्ङळ्क्कु वळिपोले । २४

लेकर द्रोण हस्तिनापुर चले गये। उस समय अनेक बालक गुल्ली-डंडा खेल रहे थे। अचानक युधिष्ठिर की अँगूठी कुएँ में गिर गयी। ८-१५ और उसके साथ गुल्ली भी गिर गयी। अतएव उसे निकालने के लिए खेल बन्द किया गया। जब सभी बालक निकालने का उपाय न जानकर चिन्तित होकर अन्धों की तरह कुएँ के किनारे खड़े थे, तब एक ब्राह्मण श्रेष्ठ जिनके बाल सफ़ेद होने को थे, जो स्वयं साँवले रङ्ग के थे और दुबले थे, हँसकर बोले--"गुल्ली और मुद्रा को मैं दर्भों के द्वारा आसानी से निकाल दूँगा; पर आप लोग मुझे भोजन दिलाइए।" यह सुनकर धर्मराज के पुत्र (युधिष्ठर) ने कहा—"मैं यथेष्ट भोजन दूँगा।" तब पुण्यात्मा विप्र द्रोण ने दर्भ की इषीकों (सींकों) को एक के ऊपर एक करके प्रयोग किया और उनके संयोग से गुल्ली और मुद्रा दोनों निकाल दीं। बालकों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने अभिवादन करके कहा--"हम आपकी अभिलाषाओं की पूर्ति करेंगे। कहिए आप कौन हैं?" १६-२३ "आप लोग जाकर भीष्म से पूछिए। वे आप को मेरे संबन्ध में सब समझा देंगे।" जब उन्होंने

चॆऩ्ऩवर् चोदिच्चप्पोळ् भीष्मरुं द्रोणरॆऩ्ऩान्
चॊऩ्ऩिनि निङ्ङळ्कूट्टिक्कॊण्टिङ्ङुपोऩ्ऩीटुविन् । २५
चॆऩ्ऩितु कुमारन्मार्तम्मोटुं भारद्वाजन्
नऩ्ऩायि वऩ्ऩतॆऩ्ऩु चॊल्लिनान् गंगादत्तन् । २६
वऩ्ऩ कारणं चोदिच्चीटिनानतुनेरं
धन्यनां भारद्वाजन् चॊल्लिनान् परमार्त्थं । २७
अग्निवेशाख्यनाकुं मामुनितन्नोटु ञा-
नस्त्रङ्ङळ् पठिप्पानाय् चॆऩ्ऩिरुऩ्ऩतुकालं २८
पाञ्चालराजपुत्रनाकिय यज्ञसेनन्
वाञ्छया कूटॆप्पठिप्पिच्चिटिनान् मया पुरा । २९
सब्रह्मचारियाकुं यज्ञसेननुं ञानुं
सुब्रह्मण्यनुं जामदग्न्यनुमॆऩ्ऩपोलॆ । ३०
विद्ययुमभ्यसिच्चु मरुवीटिनकालं
विद्वानां नृपसुतनॆन्नोटु चॊल्लीटिनान् । ३१
ञानिनि राजावायालॆन्नुटॆ राज्यमॊक्क-
ज्ञानियां भवानधीनत्वमाक्कुवनल्लो । ३२
पिन्नॆ ञान् वेट्टु पुत्रनुण्टायोरनन्तरं
चॆऩ्ऩप्पोळवनॆन्नॆ धिक्करिक्कयुं चॆय्तान् । ३३
वऩ्ऩतुमविटॆनिऩ्ऩिप्पोळ् ञान् महामते !
धन्यनां भवान्तन्नॆक्काण्मानॆऩ्ऩत्रिञ्ञालुं । ३४

जाकर पूछा तो भीष्म ने कहा--"वे द्रोण हैं। आप लोग जाकर उनको साथ ले आइए।" भारद्वाज (द्रोण) कुमारों के साथ गये और गंगादत्त (भीष्म) ने उनसे कहा--'अच्छा हुआ कि आप आये।' भीष्म ने आने का कारण पूछा और पुण्यात्मा भारद्वाज ने सब यथार्थ बतला दिया--"अतीत में जब महामुनि अग्निवंश के पास मैं अस्त्र-शस्त्र सीखने गया था तब पाञ्चालों के राजा का पुत्र यज्ञसेन भी अपनी इच्छा से मेरे साथ अस्त्र विद्या सीखता था। २४-२९ स्कन्द और जामदग्न्य के समान यज्ञसेन और मैं दोनों सहपाठी थे। जब हम दोनों विद्या सीख रहे थे, तब विद्वान् राजपुत्र (यज्ञसेन) ने मुझसे कहा--"जब मैं राजा होऊँगा तब सारे राज्य आप ज्ञानी के अधीन कर दूँगा।" तदनन्तर विवाह तथा पुत्रजन्म होने के बाद जब मैं उनके पास गया तब उन्होंने मेरा अपमान किया। हे महामते! जान लीजिए कि मैं अब वहाँ से पुण्यात्मा आपके दर्शन के

ऎन्नतु केट्टु भीष्मर् तन्नुटॆ पौत्रन्मारॆ
नन्नायिप्पठिप्पिप्पानविटॆ वच्चुकॊण्टान् । ३५
अक्कालं बालन्मारॆशिशक्षिच्चु पठिप्पिच्चु
विख्यातकीर्त्तियोटुमविटॆ वाळुंकालं ३६
ऒरुनाळ् भारद्वाजन् रहसिविळिच्चुटन्
कुरुवीरन्माराकुं शिष्यरोटुरचॆय्तु । ३७
ऎन्नुटॆ मनोरथं निङ्ङळ् साधिप्पिक्केण-
मॆन्नतु केट्टु धार्त्तराष्ट्रन्मार् मिण्टीलेतुं । ३८
अन्नेरं धर्म्मपुत्रन्तन्नुटॆ मुखं नोक्कि
निन्नॊरु सव्यसाचि चॊल्लिनान् तॆळिवोटे । ३९
निन्तिरुवटियुटॆ कारुण्यमुण्टॆङ्किल् आ-
नन्तरमिल्ल साधिप्पिच्चुकूट्टुवनल्लो । ४०
तॆळिञ्ञु भारद्वाजनतु केटटुर्ज्जुननॆ
प्पुणर्न्नु गाढं गाढं मुकर्न्नु शिरस्सिङ्कल् । ४१
आनन्दाश्रुक्कळोटुमश्वत्थामावुतन्नॆ
मानमेरीटुं जिष्णुतन्नुटॆ कैयिल् नल्कि ४२
निनक्कु सखियिवनॆन्नतुमरुळ्चॆय्तान्
कनक्कॆ मोदंपूण्टु पुणर्न्नान् पार्त्थनप्पोळ् । ४३
नानादेशयन्माराय राजपुत्रन्मारोटुं
द्रोणरुं पठिप्पिच्चु कौरवन्मारॆयॆल्लां । ४४

लिए आया हूँ।" यह सुनकर भीष्म ने अपने पौत्रों को धनुर्वेद पढ़वाने के लिए द्रोण को वहीं रख लिया। ३०-३५ द्रोण भी बालकों को शिक्षा देते हुए और पढ़ाते हुए बड़ी कीर्ति के साथ वहाँ रहे। एक दिन उन्होंने (द्रोण ने) अपने कुरुवीर शिष्यों को एकान्त में बुलाकर उनसे कहा--"आप लोग मेरे मनोरथ (अभिलाषा) को सिद्ध कीजिए।" यह सुनकर धृतराष्ट्र के पुत्रों ने कुछ नहीं कहा। तब युधिष्ठिर का मुँह देखते हुए सव्यसाची (अर्जुन ने) प्रसन्नता के साथ कहा, "अगर गुरुचरणों की कृपा होगी तो, सन्देह नहीं, मैं आपकी अभिलाषा पूरी कर दूँगा।" यह सुनकर भारद्वाज (द्रोण) प्रसन्न हुए और उन्होंने अर्जुन का प्रगाढ़ आलिङ्गन किया और उनके शीर्ष को सूँघ लिया। ३६-४१ आनन्द के आँसू बहाते हुए अश्वत्थामा को अतिमान्य अर्जुन के हाथों में समर्पित किया और कहा--'यह तुम्हारा मित्र है' अर्जुन ने भी बड़ा प्रमोद प्राप्त करके अश्वत्थामा को

पार्त्थनोट्टुळ्ळिल् स्पर्द्ध राधेयनुण्टाय्वन्नु
धार्त्तराष्ट्रन्मार्तम्मेयाश्रयिच्चिरिक्कयाल् । ४५
गुरुशुश्रूषारतनाकिय विजयनो
ट्टेरिके स्नेहमुण्टाय्वन्नितु गुरुविनु । ४६
अन्नं फल्गुननिरुट्टत्तु नी कोट्टुक्करु-
तेन्नु पाचकन्तन्नोटाचार्यनरुळ्चेय्तान् । ४७
अन्नोरु निशि पार्त्थन् भुजिप्पानिरिक्कुन्पोळ्
वन्नु दीपत्तेप्पोलिच्चीटिनान् चण्डवातं । ४८
अभ्यासबलंकोण्टु हस्तवु वाय्कल् चेन्नि-
तप्पोळुततुकण्टु नित्यवु पिन्नेप्पार्त्थन् । ४९
रात्रियिल् तानेनिन्नु साधिच्चीटुन्न कालं
पार्त्थन्टे गुणनादं केट्टाशु भारद्वाजन् । ५०
सन्तोषत्तोटुकूटिच्चेन्नुटनाश्लेषिच्चु
कुन्तीनन्दनन्तन्नोटीवण्णमरुळ् चेय्तान् । ५१
उत्साहमित्रयुण्टाय् मट्टोरु धनुर्द्धरन्
त्वत्समनायिट्टिल्ल सत्यमेन्नतुनेरं । ५२
तेरिलुमानमेलु कुतिरमेलु पिन्ने-
प्पारिलु निन्नु युद्धं चेय्येण्टु प्रकारङ्ङळ् । ५३
गदयुमसिचर्म्मं तोमरप्रासशक्ति
मुसलमायुधङ्ङळ् सङ्कीर्ण्णयुद्धत्तिलु । ५४

छाती से लगा लिया। द्रोण ने भिन्न-भिन्न देशों के राजपुत्रों के साथ सभी कौरवों को पढ़ाया। राधेय (कर्ण) के धार्तराष्ट्रों के आश्रम में रहने के कारण अर्जुन के प्रति उसकी भीतरी स्पर्धा रही। गुरु की सेवा में तत्पर विजय (अर्जुन) के प्रति गुरु का बड़ा ही स्नेह था। 'फाल्गुन (अर्जुन) को अन्धेरे में भोजन नहीं दो,' ऐसा आचार्य ने रसोइया से कहा। एक रात जब अर्जुन बैठकर खा रहा था, तब आँधी आयी और दीप बुझ गया। ४२-४८ अभ्यास के कारण हाथ मुँह ही में गया। यह देखकर तब से प्रतिदिन अर्जुन रात को अकेला शस्त्राभ्यास करने लगा। अर्जुन के धनुष की डोरी की ध्वनि सुनकर द्रोण बड़े प्रमोद के साथ वहाँ गये, अर्जुन को छाती से लगाया और उससे इस प्रकार कहा—"तुम-जैसा इतना उत्साही धनुर्धर कभी हुआ ही नहीं, सच कहता हूँ"। ऐसा कहकर रथ पर, हाथी पर, घोड़े पर और पृथ्वी पर खड़े होकर युद्ध करने के प्रकार,

सुखमे परिश्रमिप्पिच्चितु पलतरं
निखिलराजकुमारन्मार्क्कुमव्वण्णमे । ५५
पर॒ञ्ञान् निषादराजावायि मरुवुन्न-
हिरण्यधनुस्सिन्टॆ तनयनेकलव्यन् । ५६
अटियनेयुंकूटिप्पठिप्पिक्केणमॆन्न-
तुटनॆ केट्टु भारद्वाजनुमुरचॆय्तु । ५७
ऒन्नोटुकूटि नित्यमभ्यसिक्कयु वेण्ट
निन्नॆ ञाननुग्रहिच्चीटुवनॆन्नाल् मति । ५८
ऒन्नुटॆ शिष्यन् तन्नॆ नीयॆन्नु धरिच्चालु-
मिन्नुतॊट्टिनियङ्ङु पॊय्क्कॊळ्के वेण्टुतानुं । ५९
वन्दिच्चु पोयिट्टवनरण्यं तन्निल्च्चॆन्नु
मण्णुकॊण्टात्मगुरुतन्नुटॆ रूपंतीर्त्तु । ६०
गुरुवॆ सङ्कल्पिच्चिट्टभ्यसिच्चीटुं कालं
पॆरिकॆ विदग्धनाय् वन्नानॆन्नतेवेण्टू । ६१
अक्कालं नायाट्टिनायाचार्यनियोगत्ताल्
पुक्कितु युधिष्ठिरनादिकळ् वनदेशं । ६२
एकलव्यनॆक्कण्टु कुरच्चु सारमेयं
वेगमोटेळुशरमवनुं प्रयोगिच्चा- ६३

गदा, तलवार, चर्म (ढाल), तोमर, प्रास, शक्ति, मुसल आदि हथियारों के युद्ध, और संमिश्र युद्ध, के अनेक प्रकार आराम से द्रोण ने अर्जुन को अभ्यास कराये। सभी राजकुमारों को द्रोण ने इसी प्रकार सिखाया। ४९-५५ उन्हीं दिनों निषादों के अधिपति हिरण्यधनुष के पुत्र एकलव्य ने आकर कहा--"मुझ सेवक को भी कृपया अस्त्रविद्या पढ़ाइए," यह सुनकर द्रोण ने उत्तर दिया--"मेरे साथ प्रतिदिन अभ्यास करने की आवश्यकता नहीं, मैं तुम पर अनुग्रह करूँगा, इतना ही पर्याप्त होगा। जान लो कि तुम मेरे शिष्य हो, और तुम आज ही जा सकते हो।" तब उनकी वन्दना करके एकलव्य अपने वन में चला गया और अपने गुरु की एक मिट्टी की मूर्ति बनाकर उनका ध्यान करते हुए बाणविद्या का अभ्यास करता रहा। बहुत कहने से क्या लाभ, वह अत्यन्त विदग्ध (चतुर) बन गया। एक बार आचार्य की आज्ञा से युधिष्ठिर आदि ने शिकार खेलने के लिए वन में प्रवेश किया। ५६-६२ वहाँ एकलव्य को देखकर उनका कुत्ता भौंका। उसने उस कुत्ते पर सात बाण चलाये। बाणों से पीड़ित होकर कुत्ता भाग आया।

नन्पुकॊण्टळल्पूण्टु मुन्पिल् वन्नितु नायुं
वन्परां कुमारन्मारन्पुपूण्टतुनेरं । ६४
आरॆन्नु तिरयुन्पोळेकलव्यनॆक्कण्टु
वीरन्मार् चोदिच्चितु नीयारॆन्नतुनेरं । ६५
हिरण्यधनुस्सिन्टॆ तनयनेकलव्यन्
भरद्वाजात्मजन्टॆ शिष्यरिल् मुन्पनल्लो । ६६
अतु केट्टॊरु कुमारन्मारुं पुरंपुक्कार्
तदनु धनञ्जयन् द्रोणरोटुणर्त्तिच्चान् । ६७
निनक्कु समनायिट्टिनिक्कु शिष्यरिल्लॆ-
न्ननुज्ञ तन्नतिप्पोळसत्यमायुंवन्नु । ६८
कण्टितु वनत्तिल्निन्नेकलव्यनॆ यव-
नुण्टाक्कि परिभवंञङ्ङळ्क्कॆन्नरिञ्ञालुं । ६९
अतुकेट्टॊरु दिनमर्ज्जुननोटुंकूटि
कुतुकालटविपुक्कीटिनान् द्रोणाचार्यन् । ७०
नमस्कारवुं चय्तान् भक्तियोटेकलव्यन्
क्रमत्तालटवुकळ् काट्टियान् कुटं तीर्प्पान् । ७१
श्रमिच्चतॆल्लां नन्नु पिळच्चीलॊन्नुमिनि
नमुक्कु शिष्यनॆङ्किल् दक्षिण चॆय्तीटॆन्नान् ७२
दक्षिण वेण्टुन्नतॆन्तॆन्नवन् चॊदिच्चप्पोळ्
दक्षिणाङ्गुष्ठं मुरिच्चॆनिकु नल्कीटॆन्नान् । ७३
दक्षिणचॆय्तानवन् दक्षिणाङ्गुष्ठमप्पोळ्
दक्षनाय्वन्नानवन् मुन्नेतिलेटमप्पोळ् । ७४

तब कुशल राजकुमार धनुषबाण लेकर ढूँढ़ने लगे और एकलव्य को देखकर वीरों ने पूछा "तुम कौन हो" ? "मैं हिरण्यधनुष का पुत्र एकलव्य हूँ और मैं भारद्वाज (द्रोण) के शिष्यों में प्रमुख हूँ ।" यह सुनकर सब राजकुमार अपने नगर को चले गये । तदनन्तर अर्जुन ने द्रोण से निवेदन किया--"तुम्हारे समान मेरा कोई शिष्य नहीं--यह आप का आशीर्वाद अब असत्य निकला । मैंने वन में एकलव्य को देखा है, उसने हम लोगों को नीचा दिखाया है ।" ६३-६९ यह सुनकर एकदिन द्रोणचार्य कौतुक से अर्जुन के साथ वन गये । वहाँ एकलव्य ने भक्ति के साथ गुरु को नमस्कार किया और क्रम से अपने कौशल दिखाये ताकि गुरु दोष बतला दें । (तब द्रोण ने कहा) "जो कुछ भी दिखलाया ठीक है । दोष कहीं नहीं

सत्यतल्परत्ववुं भक्तियुं कण्टु पार्त्थ-
नेन्त्रयुं बहुमानिच्चीटिनानवनेयुं । ७५
यात्रयुं चॊल्लिप्पुनरास्थया वरं नल्कि-
प्पार्त्थनुमायिच्चेन्नु हस्तिनपुरं पुक्कान् । ७६

अभ्यासपरीक्ष

आक्कुंवासनयेऱ धनुस्सिङ्कलेक्कॆन्नु
पाक्कणमॆन्नु कल्पिच्चॊरुनाळ् द्रोणाचार्यन् । १
वृक्षाग्रत्तिङ्कलॊरु कृत्रिमक्किळियेयुं
निक्षेपिच्चाचार्यनुं शिष्यरोटॊक्कच्चॊन्नान् । २
लक्षणस्थितिप्रयोगङ्ङळ् ञान् चॊन्नवण्णं
लक्ष्यत्ते भेदिक्कणं निङ्ङळिन्नॆल्लावरुं । ३
लक्ष्यत्तॆप्पार्त्तु वलिकूट्टि निर्त्तिनानल्लो
शिक्षिच्चु युधिष्ठिरन्तन्ने मुन्पिनालवन् । ४
वृक्षवुं लक्ष्यवुमिन्निल्क्कुन्न जनङ्ङळु-
मक्षिगोचरमोञान्तानुमॆन्नतु चॊल् नी । ५

है। अगर तुम हमारे शिष्य हो तो हमें गुरुदक्षिणा दो।" जब उसने पूछा 'दक्षिणा क्या दूँ', तो द्रोण ने कहा 'अपना दायें हाथ का अङ्गूठा काटकर दो।' तदनुसार उसने अपना दायाँ अङ्गुठा काटकर दक्षिणा दी और वह पहले से भी कहीं अधिक दक्ष (कुशल) हुआ। उसकी सत्यनिष्ठा और भक्ति देखकर अर्जुन ने उसका बड़ा आदर किया। द्रोणाचार्य उसको सादर वर प्रदान उससे बिदा हुए और अर्जुन के साथ हस्तिनापुर लौटे। ७०-७६

अभ्यास की परीक्षा

द्रोणाचार्य ने निश्चय किया कि यह देखना चाहिए कि धनुर्विद्या में किसका अधिक कौशल है। इसलिए एक दिन एक पेड़ के उच्च भाग में एक कृत्रिम चिड़िया रखकर आचार्य ने अपने सभी शिष्यों से कहा--मेरे बताये हुए लक्षण, स्थिति और प्रयोग के अनुसार आप सब लोग यह निशाना मारिए। लक्ष्य (निशाने) को देखकर उसे ठीक स्थान पर बैठाया, फिर आचार्य ने पहिले युधिष्ठिर को सब बतलाया और पूछा, ''यह वृक्ष, यह निशाना, ये खड़े देखनेवाले लोग और मैं,

दक्षनांगुरुवरनिङ्ङनें चोदिच्चप्पो-
ळॊक्कवे काणामॆन्नु धर्म्मजन् चॊल्लीटिनान् । ६
ऒंङ्किल् नी वाङ्ङिनिन्नीटन्पयय्क्केण्टयॆन्ना-
नङ्ङने निर्त्ति मट्टॆल्लारोटुं चोद्यं चॆय्तान् । ७
ओरोरोतरमीषल्भेदेन चोन्नारव-
रारुमे सूक्ष्मलक्ष्यंमात्रं कण्टीलयल्लो । ८
पिन्नॆप्फल्गुनन्तन्नोटव्वण्णं चोदिच्चप्पो-
ळॊन्नुमे कण्टुकूटा लक्ष्यमॆन्नियॆयॆन्नान् । ९
लक्ष्यमां पक्षिरूपमॊक्कवे कण्टायो नी
ऒक्कवे कण्टुकूटा तल्क्कण्ठं काणामॆन्नान् । १०
ऒंङ्किलॆय्तीटॆन्नप्पोळ् पार्त्थनु प्रयोगिच्चान् ।
भंगं वन्नितु गळमतुकण्टाचार्यनुं ११
विश्वैकधनुर्द्धरनाय् वरिकॆन्नु चोन्नान्
विश्वासं वन्नुकूटि मट्टुळ्ळजनङ्ङळ्क्कुं । १२
अक्कालं गुरुवरन् गंगयिल् मुळ्कुन्पोळ्
नक्रवुं जंघतन्मेल् पिटिच्चान् द्रोणरप्पोळ् । १३
तन्नुटॆ शिष्यरोटु नक्रत्तॆक्कॊल्वान् चॊन्नान्
निन्नितु विषण्णरायॆल्लारुमतुनेरं । १४

क्या ये सब दिखायी दे रहे हैं ?" जब कुशल गुरुवर ने इस प्रकार पूछा, तब धर्मज्ञ (युधिष्ठिर) ने कहा—'हाँ, सब दिखायी दे रहे हैं" १-६ तब गुरु ने कहा—'अच्छा, तुम अलग खड़े हो जाओ, तीर न चलाओ"। औरों को भी इसी प्रकार खड़ा करके पूछा। सबने थोड़ा बहुत परिवर्तन के साथ यही उत्तर दिया, किसी ने भी केवल लक्ष्य को नहीं देखा। जब अर्जुन से उसी प्रकार पूछा गया तो उसने कहा—'लक्ष्य के सिवाय और कुछ भी नहीं दिखायी देता', फिर पूछा 'क्या लक्ष्य पूरी चिड़िया देख रहे हो ?" अर्जुन ने कहा—'सारी चिड़िया को नहीं, सिर्फ़ उसकी गर्दन देखता हूँ।' 'तो बाण चलाओ', गुरु ने कहा और पार्थ (अर्जुन) ने तीर चलाया। चिड़िया की गर्दन कट गयी। यह देखकर आचार्य ने आशीर्वाद दिया—'तुम विश्व के सर्वोत्कृष्ट धनुर्धर बनो।' देखनेवाली जनता को भी पूरा विश्वास हो गया। एक दिन जब गुरुवर गंगा में स्नान कर रहे थे, तब एक मगर ने उनकी जाँघ को पकड़ लिया। ७-१३ उन्होंने अपने शिष्यों से मगर को मारने के लिए कहा; पर सब विषण्ण होकर

आळवे किटन्नीटुं ग्राहत्तेक्कौन्तुपार्त्थन्
तोषवुं पूण्टीटिनानाचार्यनतुकण्टु । १५
ताळत्तुं मेलुं समत्तिङ्ङ्कलुमोरुपोले
दोषत्ते वेटिञ्ञु वेधिक्कामेन्नतु मूलं । १६
ब्रह्मास्त्रमुपदेशिच्चीटिनान् पार्त्थनप्पोळ्
निर्म्मलनिवनेन्नु निर्ण्णयिच्चाचार्यनुं । १७
तेरिलेक्कधिकनाय् वन्नितु युधिष्ठिरन्
मारुतिसुयोधनन्मार् गदय्क्कधिकन्मार् । १८
यमन्मारसिचर्म्मत्तिङ्ङ्कलेक्कधिकन्मा-
रमितमहास्त्रङ्ङळ्क्कश्वत्थामावु मुन्पन् । १९
अर्ज्जुननेल्लाट्टिनुं दक्षनाय् चमञ्ञितु
सज्जनमतु कण्टिट्टवनेस्सम्मानिच्चार् । २०
द्रोणरोटस्त्रङ्ङळुमभ्यसिच्चेल्लावरुं
काणेणं दण्डिप्पेन्नु रंगवुं पणिचेय्तु । २१
वेव्वेरे कुमारन्मारेल्लारुं प्रयोगिच्चार्
सर्व्वलोकरुं कण्टु विस्मयप्पेट्टु निन्नार् । २२
सव्यसाचियोटु नेरारुमिल्लेन्नुतन्ने
दिव्यन्मार् पऱयुन्पोळ् कर्ण्णनुं पोन्नुवन्नान् २३

देखते रहे। लेकिन अर्जुन ने गहराई में स्थित मगर को मार डाला; जिससे आचार्य बहुत ही प्रसन्न हुए। 'यह नीचे, ऊपर और बराबर में समान रूप से निशाना निर्दोष मार सकता है,' ऐसा समझकर और यह भी निश्चय करके कि इसकी आत्मा निर्मल है, आचार्य ने पार्थ (अर्जुन) को ब्रह्मास्त्र का उपदेश दिया। युधिष्ठिर रथयुद्ध में औरों से अधिक कुशल हुए, भीमसेन और सुयोधन गदायुद्ध में प्रवीण हुए, यमल भाई (नकुल और सहदेव) तलवार चलाने में दक्ष हुए, और अश्वत्थामा असंख्य महास्त्रों के प्रयोग में सर्व-श्रेष्ठ थे। अर्जुन तो सभी में दक्ष निकले। सभी सज्जनों ने इसी कारण उनका सबसे बढ़कर सम्मान किया। सबने द्रोणाचार्य से अस्त्र-शस्त्र सीखे। उनका कौशल देखने के लिए एक अखाड़ा बनाया गया। उसमें कुमारों ने अलग-अलग अपना-अपना प्रयोग दिखलाया और सब लोग देखकर बहुत विस्मित हुए। १४-२२ 'सव्यसाची (अर्जुन) के तुल्य कोई नहीं,' ऐसा सभी देवगण कह ही रहे थे कि कर्ण वहाँ आ पहुँचा, तब धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) ने कहा कि कर्ण और अर्जुन की आपस में स्पर्धा हो। उस

अन्नेरं धृतराष्ट्रनन्दननुरचॆय्तान्
कर्ण्णनुमर्ज्जुननुं तङ्ङळिल् प्रयोगिप्पान् । २४
अॆन्नप्पोळ् कृपाचार्यन् चॊल्लिनान् निल्लुनिल्लु
मन्नवन्मार्क्कुं तॊळियुन्नते पऱयावू । २५
कुलवुं महिमयुमुटय पार्त्थनोटु
कुलहीनतयुळ्ळोराभासनॆतिर्क्कामो । २६
आभासनॆन्न वाक्कु केट्टिट्टु सुयोधन-
नाभिजात्यत्तिन्निवनन्तरमिल्लयॆन्नान् । २७
अभिषेकवुं चॆय्तानंगराजावॆन्नप्पो-
ळभिमानिच्चु कर्ण्णन् भर्त्सिच्चु कुत्सिच्चेटं । २८
अभिजन्मत्वमॆल्लां ञानऱिञ्ञिरिक्कुन्नु
अभिमानित्वं तम्मिलङ्कुरिच्चितु पारं । २९
अर्ज्जुनन्तन्नॆक्कॊल्वन् निश्चयं युधि ञानॆ-
न्नुज्ज्वलिच्चवनोटु कर्ण्णनुमुरचॆय्तान् । ३०
कण्टुनिन्नवर्कळुमोरोन्ने पऱयुन्नु
पण्टु नामुण्टो कण्टितीवण्णं बालन्मारॆ । ३१
पठिप्पिच्चतुं नन्नु पठिच्चवारुं नन्नु
नटिच्चु पक्षपातमायतु पऱकयुं । ३२
कॊटुत्ताल् पिळवरा गुरुभूतन्मार्क्कॆन्नुं
कॊटुप्पानिल्ला धनं पाण्डुपुत्रन्मार्क्कॆन्नुं । ३३

समय कृपाचार्य ने कहा, 'रुक जाओ, रुक जाओ। ऐसी बात करना चाहिए जिससे राजा लोग सहमत हों'। 'कुलीन और गौरव-युक्त अर्जुन का एक कुलहीन पुरुषाभास कैसे सामना कर सकता है ?' 'आभास' शब्द सुनकर सुयोधन ने कहा—'कुलीनता में इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। और कर्ण का अंग देश के राजा के रूप में अभिषेक किया। तब कर्ण को बड़ा अभिमान हुआ और उसने गाली देते हुए डाँटा; और कहा—'मैं जानता हूँ, क्या उसकी कुलीनता है।' उन दोनों का एक-दूसरे के प्रति अभिमान बढ़ा। २२-२९ 'मैं निश्चय ही अर्जुन को युद्ध में मार डालूँगा,' क्रोधित होकर कर्ण ने ऐसा कहा। देखनेवालों ने तरह-तरह की बातें कीं। 'हम लोगों ने ऐसे बालकों को क्या पहले कभी देखा है ? अच्छा पढ़ाया गया और अच्छा पढ़ा भी गया।' इस प्रकार लोगों ने पक्षपात करके कहा। गुरुओं को देते रहने से कोई दोष न होगा, परन्तु पाण्डु

कॊट्टुत्तीटेण्ट भक्तियुळ्ळवर् नन्नायवरुं
कॊट्टुत्तीटिलुं भक्तियिल्लाय्किल् फलं वरा । ३४
धर्म्मसत्यादि तपोनिष्ठयुं नीतिकळुं
धर्म्मजादिकळोळं मट्राक्कुमिल्लॆन्नॆल्लां । ३५
परञ्ञुपरञ्ञवर् पोयोरुशेषत्तिङ्कल्
परञ्ञार् कुमारन्माराचार्यन्तन्नॆ नोक्कि । ३६

गुरुदक्षिण

दक्षिण कळिक्केणं वैकातॆयिनियिप्पोळ्
पक्षमाकुन्नतॆन्तॆन्नरुळिच्चॆय्केवेण्टू । १
तल्क्षणं द्रोणाचार्यनवरोटरुळ्चॆय्तु ।
दक्षिण वेणुन्नतु चॆय्यामॆन्निरिक्किलो २
पण्टु पाञ्चालनृपन् सन्ततियिल्लाय्कया-
लिण्टल् पूण्टवियिलिरुन्नु तपस्सोटुं । ३
मेनक तन्नॆ तत्र काणायितॊरुदिनं
मानसधैर्यंपोयि मारनु वशनायान् । ४
शुक्लवुं पतिच्चितु भूमियिलतुनेरं
शुक्लत्तालार्द्र पदनायितु नृपतियुं ५

के पुत्रों के पास देने लिए धन कहाँ ? कुछ भी न दें, परन्तु जिनमें भक्ति है, वे शिष्य ठीक निकलेंगे। जितना भी दें, अगर भक्ति नहीं है, तो सब निष्फल होगा। धर्म, सत्य, तपोनिष्ठा, नीति--ये गुण जितना युधिष्ठिर आदि में हैं उतना औरों में नहीं।' देखनेवालों के इस प्रकार कहकर जाने के बाद कुमारों ने आचार्य का मुँह देखकर कहा। ३०-३६

गुरुदक्षिणा

'हम चाहते हैं कि हम अब आपको बिना विलम्ब के दक्षिणा दें। आप क्या पसन्द करेंगे, यह बतलाने का कष्ट करें।'' तब द्रोणाचार्य ने उनसे कहा--''अगर आप सचमुच हमारे पसन्द की दक्षिणा देना चाहते हैं (तो सुनिए) पूर्वकाल में पाञ्चालों के राजा के सन्तान नहीं हुई। दुःखित होकर वे वन चले गये और वहाँ तपस्या की। उस समय उन्हें वहाँ मेनका दिखायी दी। राजा अपना धैर्य खो बैठे और मदन के वश में आ गये। उनका वीर्य भूमि पर स्खलित हुआ और उससे उनका पैर

तापसा पाञ्चालनु सुतनाय् वन्नितनु
द्रुपदनॆन्न नाममतिनालुण्टायितु । ६
अक्कुमारनेयुमन्नच्छन्टॆ कैयिल् नल्कि-
शिशक्षिच्चु पठिप्पिच्चु विद्यकळतुकालं ७
पुक्कितु पाञ्चालनुं तन्नुटॆ राज्यं पिन्नॆ-
यॊक्कत्तक्कवे अङ्ङळ् विद्याभ्यासवुं चॆय्तु । ८
पाञ्चालन् परेतनाय्त्तीर्न्नॊरु शेषत्तिङ्कल्
तान चॆन्नु राजावायि वसिच्चु पुनरवन् । ९
नृपतिकुलश्रेष्ठन् द्रुपदनॆन्नॆप्पण्टु-
कुपितनायिच्चिल दुर्व्वचनङ्ङळ् चॊन्नान् । १०
पिटिच्चु कॆट्टियवन्तन्नॆयॆन् काल्क्कल् वय्क्किल्
पटुत्वं निङ्ङळ्क्कित्तुं मेल्क्कुमेलुण्टामॆन्नान् । ११
दुरियोधनन्तानुं पटयुंकूटिच्चॆन्नु
पॊरुतु तोट्टु पोन्नतरिञ्ञु पाण्डवन्मार् । १२
युद्धसन्नद्धन्मारायच्चॆन्नॆतिर्त्तुनेरं
क्रुद्धनां धनञ्जयनस्त्रङ्ङळ्कॊण्टु कॆट्टि । १३
द्रोणरामाचार्यन्तन् काल्क्कल् वॆच्चळकोटे
वीणुटन् नमस्करिच्चीटिनान् ससोदरं । १४

(पद) भीग गया (आर्द्र हुआ)। उनके तपोबल के कारण वही उनकी सन्तान बन गया। अतएव सन्तान का नाम 'द्रुपद' हो गया। उस बच्चे को उन्होंने मेरे पिता के हाथ सौंप दिया। मेरे पिता द्वारा उसको शिक्षा दी गयी और सभी विद्याएँ पढ़ायी गयीं। १-७ तदनन्तर पाञ्चाल (राजा) अपने राज्य चले गये और हम दोनों ने साथ-साथ विद्याभ्यास किया। पाञ्चाल राजा के स्वर्गवासी होने के बाद द्रुपद राजा बने और सुख से रहने लगे। राजकुल के श्रेष्ठ इसी द्रुपद ने क्रुद्ध होकर मुझे गालियाँ दीं। अगर आप लोग उनको पकड़कर और बाँधकर मेरे चरणों में रखेंगे तो आप (लोगों) का कौशल उत्तरोत्तर बढ़ता ही जायगा। (और जब) पाण्डवों को (यह) मालूम हुआ कि दुर्योधन एक सेना के साथ गया और युद्ध में हारकर वापस आया है। तब वे युद्ध के लिए तैयार होकर गये और लड़े। कुपित अर्जुन ने अस्त्रों से द्रुपद को बाँधकर द्रोणाचार्य के चरणों में भक्तिपूर्वक रख दिया और फिर अपने भाइयों के साथ उनको नमस्कार किया। ८-१४ प्रसन्न होकर आचार्य ने उन्हें

सन्तोषिच्चाशीर्व्वादमाचार्यनरुळ् चेय्तु
बन्धनत्तिङ्कल्निन्नु मळिच्चान् धर्म्मात्मजन् । १५
नाणवुंपूण्टु निल्क्कुं द्रुपदन्तन्नें नोक्कि
द्रोणरुमुरचेय्तानेन्ने नी मऱन्नितो ? १६
नी समनल्लेन्नेन्नोटल्लयो चोल्ली मुन्नं
नी समनल्लेन्नतो निर्ण्णयमायितिप्पोळ् १७
इत्तरं परञ्ञतिनुत्तरं परयाते
सत्वरमवन् चेन्नु तन् पुरमकं पुक्कान् । १८

धृष्टद्युम्नोल्पत्ति

दुर्ज्जयनायि मेवुं द्रोणरेक्कोल्वानोरु
निर्ज्जरवरसमनाकिय तनयनुं । १
अर्ज्जुनन् तनिक्कु नल्कीटुवानोरु पेण्णु-
मिज्जनत्तिनु लभिच्चीटुवान्तक्कतोरु । २
यज्ञं चेय्येणमेन्नु मामुनिमारे नोक्कि
विज्ञानमुळ्ळ नृपन् परञ्ञोरनन्तरं । ३
यागवुं तुटङ्ङिनारागममरिञ्ञव-
रागमिच्चितु विण्णोराहुति भुजिप्पानाय् । ४
कुण्डत्तिल्निन्नु नेरे पोङ्ङिनानोरु पुमान्
चण्डभानुविनुनेराकिय कान्तियोटुं । ५

आशीर्वाद दिया और युधिष्ठिर ने द्रुपद को बन्धन से छुड़वा दिया। लज्जित होकर खड़े द्रुपद से द्रोणाचार्य ने कहा, "क्या तुम मुझे भूल गये ? तुमने मुझसे कहा था—'तुम मेरे तुल्य नहीं हो', अब निर्णय हो गया है कि तुम मेरे बराबर नहीं हो।" इसका कोई उत्तर न देकर वह शीघ्र अपने नगर चले गये। १५-१८

धृष्टद्युम्न की उत्पत्ति

विद्वान् राजा (द्रुपद) ने महामुनियों से कहा—"एक ऐसा यज्ञ कराइए कि मुझे दुर्जय द्रोण को मार सकनेवाला देवों के तुल्य एक पुत्र और अर्जुन को देने योग्य एक कन्या प्राप्त हो जाय।" तदनन्तर वेदों के विद्वानों ने एक यज्ञ प्रारम्भ किया और आहुति लेने के लिए देवगण पधारे। तब अग्निकुण्ड से सीधे एक पुरुष उठा, जो सूर्य के समान तेजस्वी था।

खड्गचापेषुकिरीटादिवर्म्मङ्ङळोटु-
मुल्गमिच्चितु कण्टु तॊळिञ्ञारेल्लावरुं । ६
रण्टामतॊरु पॆण्णुमुण्टायितवळ् कण्टाल्
तण्टार्मानिनियॆन्नु कॊण्टाटिप्परञ्ञीटां । ७
पिन्नॆयुमाणुं पॆण्णुमल्लातॆयॊन्नुण्टायि
मुन्नमर्ण्णवंतन्निल् ज्येष्ठयुण्टायपोलॆ । ८
धृष्टद्युम्ननुं नल्ल कृष्णयुं शिखण्डियुं
पुष्टकौतकत्तोटुं वळर्न्नुतुटङ्ङिनार् । ९
कृपरुं द्रोणरुमा भीष्मरुं विदुररुं
नृपतिवरनाकुं धृतराष्ट्ररुं कूटि- १०
यिळकीटात चित्तमुटय धर्म्मजनॆ-
यिळयराजावाक्कियभिषेकवुं चॆय्तु । ११
कलितान् वन्नु पिरन्नीटिन सुयोधनन्
कुलनाशननतु सहियाञ्ञतुमूलं १२
दुर्न्नयमेरॆयुळ्ळ कर्ण्णनुं शकुनियुं
पिन्नॆयक्कणिङ्कनुमायिट्टु निरूपिच्चार् । १३
अवनि नमुक्काक्किच्चमय्क्क वेणमॆङ्कि-
लिवरॆप्पिळुक्केणमतिनॆन्तुपायङ्ङळ् । १४

खड्ग, धनुषबाण, किरीट (मुकुट) और वर्म (कवच) धारण किये हुए उसे उठते देख सब प्रसन्न हुए। फिर एक कन्या निकली, जिसे देखकर विश्वास के साथ कहा जा सकता था कि वह स्त्रियों में श्रेष्ठ थी। १-७ तदनन्तर जो निकला, वह न पुरुष था और न स्त्री, जैसे पहले समुद्र से ज्येष्ठा[1] निकल आयी थी। इस प्रकार धृष्टद्युम्न, कृष्णा और शिखण्डी ये तीनों बड़े कौतुक के साथ बढ़ने लगे। कृप, द्रोण, भीष्म, विदुर, नृपवर धृतराष्ट्र इन सबने मिलकर स्थिर चित्तवाले धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) का युवराज रूप में अभिषेक किया। कुलनाशन दुर्योधन, जो कलि ही का अवतार था, यह सह न सका। इसलिए कुनीति का अनुसरण करनेवाला कर्ण, शकुनि और वह कणिक[2], इन्होंने आपस में सलाह की (कि) अगर हमको सारी पृथिवी अपने वश में लाना है तो इन पाण्डवों को दबाना है।

१ समुद्र-मन्थन के अवसर पर कालकूट विष के बाद और लक्ष्मी से पहले अलक्ष्मी निकली थीं। लक्ष्मी से पहले उत्पन्न होने के कारण उसका ज्येष्ठा नाम हुआ।

२ धृतराष्ट्र का ब्राह्मण मन्त्री।

पिळ्ळुक्किक्कूटा नमुक्कोतिर्क्किकलवरेतुं
वळुक्कुन्नवरल्ल चतिक्केयुळ्ळु पक्षे । १५
निरप्पिलोरुमिच्चु तातनोटरियिच्चि-
ट्टिरिप्पानवक्कोरु पुरत्तो निर्म्मिक्केणं । १६
अटच्चु कोळ्ळिवच्चिट्टम्मयुं मक्कळेयुं
मुटिच्चुकळयेणं नटिप्पु काणां पिन्नो । १७
इङ्ङने निरूपिच्चु कल्पिच्चु सुयोधन-
नङ्ङने चेय्तानेन्नेयिनिक्कु परयावू । १८
दुष्टन्मार् चेय्तीटुन्नतोट्टोळ्ळियातेयोक्क-
स्पष्टमायुरचेय्वानेत्रयुं मटियाकुं । १९
राजावु धृतराष्ट्रन्तन्नुळ्ळिल् मरुवीटुं
व्याजवुं मरच्चु धर्म्मात्मजनोटु चोन्नान् । २०
दुस्स्वभाविकळ् मम पुत्रन्मार् निङ्ङळोटु
मत्सरमवर्क्कुण्टु ञानरिञ्ञिरिक्कुन्नु । २१
निङ्ङळुमवरुमायिविटे वसिक्कीलो
मंगलं वरिकयिल्लापत्तु भविच्चीटुं । २२
आकयाल् ञानुण्टोन्नु नल्लतु चोल्लीटुन्नु
नागकेतनन्तनिक्किष्टमल्लेन्नाकिलुं । २३

इसके उपाय क्या हैं ? उनको दबाना (तो) कठिन है। अगर कहीं वे हमारा सामना करें, (तो) वे गिरनेवाले नहीं, हमें ही धोखा देंगे । ८-१५ हम सब जाकर पिताजी (धृतराष्ट्र) को सारी बात समझावें और उनके रहने के लिए एक स्थान बनवावें। उनको उसमें बन्द करके जलाना चाहिए, जिससे माँ और बेटे समाप्त हो जायँ। फिर देखें उनकी चालें ! इस प्रकार निश्चय करके सुयोधन ने वैसा ही किया। मैं इतना ही कहूँगा। दुष्टों की करतूतों को पूर्ण रूप से स्पष्ट वर्णन करने में जी नहीं लगता। राजा धृतराष्ट्र ने अपना भीतर का कपट छिपाकर धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) से कहा—"मेरे पुत्र दुःस्वभाव के हैं, तुम लोगों के प्रति उनका वैर है, यह मैं जानता हूँ। आप लोग उनके साथ अगर यहीं रहेंगे तो इसमें मंगल नहीं होगा, इसमें खतरा है। इसलिए मैं आप लोगों के हित की एक बात कहता हूँ, यद्यपि वह दुर्योधन को पसन्द नहीं है। १६-२३

जतुगृहनिर्म्माणं

कौरवन्मार्क्कु पण्टुपण्टेयुळ्ळोरु कोट्ट
वारणावतमिप्पोळॊळिञ्ञु किटक्कुन्नु । १
अविटं पुतुतायिप्पणिचेय्तिरिप्पानाय्
भवनमुण्टाक्किच्चु तरुवन् विचित्रमाय् । २
अतिनु शिल्पिकळॆ वरुत्ति श्रमिप्पाना-
यधुना पुरोचनन्तन्नेयु नियोगिप्पन् । ३
अर्त्थवु वेण्टुवोळं तरुवन् कॊण्टुपोयि-
त्तत्र वाळुविन् निङ्ङळैवरुं जननियुं । ४
भृत्यनाय् पुरोचनन्तन्नेयु निङ्ङळ्क्कु ञान्
नित्यसौख्यार्थं नियोगिप्पनॆन्नरिञ्ञालुं । ५
अविटॆ वसिप्पवर्क्कवनियटङ्ङिटु-
मवनीशन्मार् मुन्नमविटॆ वसिच्चत्रे । ६
भुवनप्रसिद्धन्मारायवन्नु पलरुमॆ-
न्नवनीदेवेन्द्रमार् परञ्ञु केळ्प्पुण्टु ञान् । ७
अत्रयल्लिप्पोळ् ञान् चॊल्लुन्नतु केळ्क्कयालुं
शत्रुसंहारंवरुं निङ्ङळ्क्कॆन्नरिञ्ञालुं । ८
आचार्यनियोगत्तॆप्पालिक्कुं जनङ्ङळ्क्कु
नाशङ्ङळॊन्नुमनुभविक्कयिल्लयल्लो । ९

जतुगृह का निर्माण

कौरवों का बहुत पुराना दुर्ग वारणावत आजकल खाली पड़ा है। वहाँ पर रहने के लिए मैं एक सुन्दर नया भवन बनवा दूँगा। तदर्थ शिल्पियों को बुलाने के लिए मैं अब पुरोचन को आज्ञा दूँगा। यथेष्ट धन भी दूँगा। आप पाँचों (भाई) माता के साथ वहाँ आराम से रहिए। और आप की सुविधा के लिए पुरोचन को ही मैं भृत्य के रूप में दूँगा। पृथिवी वहाँ रहनेवालों के अधीन हो जाती है। पूर्वकाल में राजा वहीं रहा करते थे, जो कि तीनों भुवनों में विख्यात हुए। इस प्रकार ब्राह्मण लोगों को कहते हुए मैंने सुना है। इतना ही नहीं। जो मैं कहनेवाला हूँ उसे भी सुनलो। यह तो निश्चित है कि आपके शत्रुओं का नाश होगा। १-८ जो आचार्य की आज्ञा का पालन करते हैं, वे किसी प्रकार की हानि का अनुभव नहीं करते।" राजा की इस प्रकार की आज्ञा के कारण बुद्धिमान् पुरोचन ने शीघ्र ही

इत्थं भूपति नियोगिक्कयालरक्किकल्लं
सत्वरं तीर्प्पिच्चितु बुद्धिमान् पुरोचनन् । १०
मतिमानायुळ्ळोरु विदुररतुकालं
चतियॆन्तरिञ्ञोरु शिल्पियॆ नियोगिच्चान् । ११
निर्म्मिच्चानोरु विलं धर्म्मिष्ठनाकुमवन्
दुर्म्मति पुरोचननेतुमेयरिञ्ञील । १२
धर्म्मजादिकळोटु विदुरनियोगङ्ङळ्
निर्म्मलनाय खनकोत्तमनरियिच्चान् । १३
चॆन्नु पाण्डवन्मारुमम्मयुं कुटिपुक्का-
रन्नदानादिकळुं भूदेवन्मार्क्कु चॆय्तु । १४
घोषिच्चु वास्तुबलि कळिच्चुत्सवत्तोटुं
दोषत्तॆ नीक्कि वसिच्चीटिनारवर्कळुं । १५
सेविच्चु पुरोचनन् वसिच्चानविटॆक्कू-
टैवर्क्कु विश्वासवुं वरुत्तिस्सदाकालं । १६
तिङ्कळ्तन् कुलजातन्माराय पाण्डवन्मार्
शङ्किच्चु शङ्किच्चोराण्टिङ्ङने वाळुंकालं । १७
मुन्नमे विलंतीर्त्त खनकनोरुदिनं
वन्नु चॊल्लिनान् विदुरोक्तिकळ् विश्वासत्ताल् । १८
श्यामळचतुर्द्दशियाकुन्न दिनमर्द्ध-
यामिनिक्कग्नि कॊळुत्तीटुमिप्पुरोचनन् । १९

एक जतुगृह (लाक्षागृह) तैयार कर दिया। बुद्धिमान् विदुर ने समझ लिया कि इसमें कोई धोखे की बात है और उन्होंने एक कारीगर को नियुक्त किया। उस धर्मिष्ठ ने उस भवन में एक सुरंग बना दी, जिसका दुर्मति पुरोचन को कोई पता ही न था। निर्मल खनक ने युधिष्ठिर और उनके भाइयों को विदुर के सभी निर्देशों को समझाया। पाण्डव अपनी माता के साथ वहाँ रहने लगे और ब्राह्मणों को अन्नदान किया गया। बड़े समारोह के साथ वास्तुबलि का उत्सव मनाया गया। इस प्रकार दोषों का निवारण करके उन्होंने वहाँ निवास किया। ९-१५ पुरोचन भी सेवा करता हुआ उनके साथ रहा और पाँचों भाइयों का विश्वासपात्र बना। चन्द्रवंशी पाण्डवों को इस प्रकार शङ्का करते-करते एक पूरा वर्ष बीत गया। तब एक दिन खनक आया, जिसने पहले ही सुरंग तैयार किया था और उसने विदुर का संदेश सविश्वास समझाया। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के

ऄन्नल्लो कलिपच्चिरिक्कुन्निनतस्सुयोधनन्
तन्नुटे नियोगत्ताल् निङ्ङळतरियाते । २०
वन्नुपोकरुतापत्तुळ्ळितोर्त्तुकोण्टु
नन्नायिस्सूक्षिच्चुकोण्टिरिक्केन्निवयेल्लां । २१
आरुमेयरियाते निश्शेषमरियिच्चु
पाराते पोयानवन् वन्नितद्दिवसवुं । २२
विप्रभोजनं वेणमेन्नु चिन्तिच्चु कुन्ति
चिल्पमायन्नं कोंटुत्तीटिनाळेल्लावर्क्कुं । २३
अन्नु भोजनत्तिन्नाय् वन्नितु निषादियुं
तन्नुटे तनयन्मारञ्चुपेरोटुं कूटे । २४
मद्यपानवुं चेय्तङ्ङवरुमुरङ्ङिङ्ङनार्
शक्तनां भीमन् विलशोधनं चेय्तान् मुन्पे । २५
निद्रय्क्कु पुरोचनन्तन्नुटेयरिके चे-
न्नोत्रयुं विश्वासेन किटन्नु वृकोदरन् । २६
अम्मयुं बालन्मारुं मुन्पिले विलंपुक्कार्
पिन्नाले तीयुंवच्चु भीमनुमिरङ्ङिङ्ङनान् । २७
अप्पुरं वेकुन्नेरं मुप्पुरं वेकुंपोले
मुप्पारुं निरञ्ञितोरोच्चयुं वेळिच्चवुं । २८

दिन आधी रात को यह पुरोचन इस भवन को जला देगा। दुर्योधन की आज्ञा से यही काम उसको बतलाया गया है। यह न हो कि आपसे यह बात छिपी रह जाय। इस बात को ध्यान में रखते हुए बड़ी होशियारी से काम लेना। सभी बातों को बतलाकर खनक बिना किसी के जाने बिदा हो गया। अन्त में वह दिन आया। १६-२२ यह समझकर कि ब्राह्मणभोज होना चाहिए, कुन्ती ने सबको ढंग से भोजन कराया। उस दिन एक निषादी भी अपने पाँच पुत्रों के साथ भोजन के लिए आयी। वे सब मद्यपान करके सो गये। शक्तिशाली भीम ने पहले ही सुरंग की परीक्षा करली। तदनन्तर सोने के लिए विश्वास के साथ पुरोचन के पास ही जाकर लेटे। माता (कुन्ती) और बालक (भीम के अन्य भाई) पहले ही सुरंग के अन्दर घुस गये और भीम आग लगाकर उनके पीछे-पीछे चले गये। जब त्रिपुर के समान वह भवन जल रहा था उसकी आवाज़ और उसकी रोशनी तीनों लोकों में फैल गयी। २३-२८

कानन प्रवेशं

अम्मयां कुन्तितानुं धर्म्मजनादिकळुं
तन्मनमळल्पूण्टु पाताळत्तूटे पोन्पोळ् । १
वाच्च सङ्कटं चॊल्किलीश्वरन् नटुङ्ङीटु-
मीश्वरविलासङ्ङळाक्कुंपोल् तटुक्कावू ! २
नीटॆळुं विलत्तूटे काटकं पुक्कारवर्
पाटे वॆन्तॊरिञ्ञितु जातुषमाय पुरं । ३
पेटियुमुरक्कवुं खेदवुंकूटियवर्
काटकंपुक्कनेरं नटन्नुकूटाय्कयाल् । ४
अम्मयॆ वृकोदरन् चुमलिलॆटुत्तुटन्
धर्म्मपुत्रनेयुं पार्त्थनेयुं कैकळ्कॊण्टुं । ५
तन्पिमारॆयुमवन् तट्टिक्कॊण्टॊक्कुतन्मेल्
संभ्रमं कूटातॆकण्टिरुट्टिल् वनत्तूटे । ६
चुटुन्न चित्ततोटे करञ्ञुमिटयिटॆ
नटन्नङ्ङॊरुदिक्किलिरिक्कुन्नतुनेरं । ७
कुन्तियुं तनयरुं वॆन्तीलयल्लीयॆन्नु
चिन्तिच्चु परमार्त्थमरिवान् विदुररुं । ८
बन्धुवायिरिप्पोरु दूतनॆययच्चप्पोळ्
वॆन्तीलॆन्नरिञ्ञुळ्ळिल् सन्तोषमुण्टायवन्नु । ९

वन में प्रवेश

माता कुन्ती धर्मपुत्र आदियों के साथ दुःखित होकर जब पाताल मार्ग से जा रही थीं, तब उन्होंने बड़ा शोक अनुभव किया। वह कहा जाय तो ईश्वर भी चकित हो जाय। ईश्वर की लीला कौन रोक सकता है ? लम्बी सुरंग से जाते हुए उन्होंने वन में प्रवेश किया। और लाक्षा-गृह तो पूरा जल गया। डर, नींद और दुःख के कारण वन में प्रविष्ट होने के बाद वे चल न सके। इसलिए वृकोदर (भीम) ने अपनी माता को कन्धे पर बिठा लिया, धर्मपुत्र और अर्जुन को एक-एक हाथ में उठा लिया और छोटे भाइयों को उनकी कमर पर ठोंकते हुए बिना घबराहट के अन्धेरे में, वन के भीतर दुःखित हृदय के साथ, बीच-बीच में रोते हुए चले और अन्त में एक स्थान पर बैठ गये। १-७ इतने में विदुरजी को चिन्ता हुई कि कुन्ती और उनके पुत्र जल तो नहीं गये। अतएव उन्होंने एक

सन्तापमुण्टॆन्नतु पुरमे भाविक्कयुं
सन्तापत्तोटॆयवर् गंगयुं कटन्नितु । १०
बन्धुक्कळ् चॆय्ततॆल्लां चिन्तिच्चु वाळुंकालं
कुन्तियुं बालन्मारुं वॆन्ततु कण्टु वन्नु । ११
धृतराष्ट्ररुं नल्ल मक्कळुं दुःखं कैक्कॊ-
ण्टुदकक्रियादिकळ्चॆय्तु वाणितु पुरे । १२
सन्देहमुण्टायतिल्लाक्कुमे निषादियुं
नन्दनन्मारुं वॆन्तुकिटक्कुं शवं कण्टु । १३
निन्दिच्चु परयुन्नु सज्जनं गान्धारितन्-
नन्दनन्मारेयुं तातनेयुमतुकालं । १४
अन्धनां नृपनऱिञ्ञिल्लॆन्नुमऱिञ्ञॆन्नुं ।
सन्ततं विवादिच्चीटुन्नितु महाजनं । १५
पाण्डवन्मारुं गंग कटन्नु नटन्नु मा-
र्त्ताण्डनॆप्पोलुं काण्मानिल्लात वनत्तूटॆ । १६
पैदाहंकॊण्टु मम कैकालुं तळरुन्नु
पैतङ्ङळाय माद्रितन्नुटॆ सुतन्माक्कुं । १७
ऎन्नतु कुन्तीदेवी चॊन्नतु केट्टु भीमन्
वन्न वेदनयोटुमस्मयोटुरचॆय्तान् । १८

मित्र को मालूम करने के लिए दूत के रूप में भेजा। उससे जब मालूम हुआ कि नहीं जले तो उनको बड़ा हर्ष हुआ, पर बाहर से बड़ा दुःख दिखलाया। इतने में पाण्डवों ने गंगा को पार किया। वे अपने बन्धुवों की करतूतों पर विचार करते हुए रह रहे थे। धृतराष्ट्र और उनके पुत्र आये और कुन्ती और उनके पुत्रों को जला देखकर उन्होंने उनकी उदक-क्रिया की और नगर में सुख से रहने लगे। निषादी और उसके पुत्रों के शव को देखकर किसी को शक ही न हुआ। सज्जन लोग गान्धारी के पुत्रों की और उनके पिता (धृतराष्ट्र) की निन्दा करने लगे। ८-१४ जनता में सदैव विवाद चलता रहा कि अन्धे राजा को बात मालूम थी या नहीं मालूम थी। पाण्डव गंगा पार करके वन से चले, जहाँ सूर्य तक नहीं दिखायी देता था। "भूख और प्यास से मेरे और माद्री के पुत्रों के, जो अब भी बच्चे ही थे, हाथ-पैर क्षीण हो गये।" —कुन्तीदेवी का यह कहना सुनकर भीम दुःखित हुए और माता से बोले—"यहाँ एक बड़ा पीपल का पेड़ दिखायी दे रहा है। मैं कुछ जल ढूँढ़ लाऊँगा। तब तक बड़े भाई

वलियोररयालुण्टिविटॆक्काणाकुन्नु
सलिलं तिरञ्ञुकॊण्टिङ्ङु कॊण्टरुवन् ञान् । १९
ज्येष्ठनुमुण्णिकळुमम्मयुमत्तणलिल्
वाट्टमॆन्नियेयिरुन्नीटुक कुऱञ्ञॊन्नु । २०
ॲन्नतु पऱञ्ञवन् कूवीटुवळि पोयि
चॆन्नतुनेरमॊरु तामरप्पोय्क कण्टान् । २१
कुळिच्चु तण्णीरॊट्टु कुटिच्चु दाहं तीर्त्तु
विळिच्चु विळिच्चवन् वन्नितु वेगत्तोटे । २२
तामरयिलयिलुमुत्तरीयत्तिलुंकू-
टामोदं वरुमाऱु तण्णीरुं कॊण्टुवन्नान् । २३
उऱक्कमिळय्क्कयुं विशप्पु पॆरुक्कयु-
मुऱक्कॆ नटक्कयुं चॆय्कयालवरप्पोळ् २४
तळर्न्नु किटन्नुटनुऱङ्ङुन्नतु कण्टु
वळर्न्न दुःखत्तोटे करञ्ञान् ताने निन्नु । २५
पॆरुत्त काट्टिल् वॆऱुंनिलत्तु किटक्कॆन्नु
वरुत्ति दैवमतुं पॊऱुक्कयल्लेयुळ्ळु । २६
उळ्ळवुमळल् पूण्टु दीर्घश्वासवुमिट्टु
वॆळ्ळवुमवर्मेय्यिल् तळिच्चुमेवुन्नेरं । २७

और माताजी वहाँ छाँह में आराम से थोड़ी देर बैठे रहें।" इतना कहकर भीम थोड़ी दूर चला गया जहाँ एक कमलसरोवर दिखायी दिया। १५-२१ उसमें स्नान करके, फिर ज़रा पानी पीकर पुकारते-पुकारते वह शीघ्र वापस आया। कमल के पत्ते में और अपने उत्तरीय में आनन्द देनेवाला पानी लेकर आया। नींद की कमी से, भूख के आधिक्य से तथा अत्यधिक चलने से सब बहुत थक गये थे; इसलिए सभी सो गये। यह देखकर भीम बहुत दुःखित हुआ और रोने लगा। इस घोर वन में खुली ज़मीन पर लेटना, यही भगवान् ने कराया है। चुप-चाप सहने के अलावा क्या किया जाय? (उसके मन के) भीतर बड़ा दुःख हुआ। दीर्घ निःश्वास लेते हुए भीम ने उन पर जल छिड़क दिया। २२-२७

हिडिम्बवधं-घटोल्क्कचोत्पत्ति

हिडिम्बनाय निशाचरन्टॆ नियोगत्ताल्
हिडिम्बि पोन्नुवन्नाळ् कॊन्नुकॊण्टङ्ङु चॆल्वान् । १
मारुतसुतन्तन्नॆक्कण्टिट्टु निशाचरि
मारमाल्पूण्टु मोहिच्चातुरयाकमूलं । २
वैकियनेरं वन्नु हिडिम्बन् वेगत्तोटॆ
कैकळुं तम्मिलटिच्चवळोटटुत्तप्पोळ् । ३
भीमसेननुं चॆरुत्तवनॆत्तच्चुकॊन्नान्
भीमनादङ्ङळ् केट्टिट्टुणर्न्नारवर्कळुं । ४
तण्णीरुं कुटिच्चवरॆल्लारुमॊरुमिच्चु
सन्नाहमोटु पोयारवळुं कूटॆयप्पोळ् । ५
वेदव्यासनॆक्कण्टारन्नवर् वळियिन्नु
वेदन परकयु वीळ्कयु करकयुं । ६
आतुरन्मारायॊरु पाण्डुपुत्रन्मारॆयुं
मातावुतन्नॆयुं कण्टाकुलप्पॆट्टु मुनि । ७
खेदिक्क वेण्ट निङ्ङळ् नल्लतुवरुं मेलिल्
खेदिप्पिच्चीटवेण्ट हिडिबितन्नॆक्कॊण्टुं । ८
आपत्तु वरुंकालं तापत्तिल् मुळुकाय्क
पापत्तॆक्कळवानायीश्वरसेवचॆय्क । ९

हिडिम्ब का वध और घटोत्कच की उत्पत्ति

इतने में राक्षस हिडिंब की आज्ञा से उन सबको मारकर ले जाने के लिए हिडिंबी पहुँची । मारुत के पुत्र (भीम) को देखकर राक्षसी कामदेव के वश में आकर बहुत परेशान हुई । उसके वापस जाने में देर होने के कारण हिडिंब (क्रोध से) हाथ पीटते हुए तुरन्त उसके पास आया । तब भीमसेन ने उसको मार डाला और घोर ध्वनियों को सुनकर वे सब जग गये । और (फिर) जल पीकर सब साथ चले गये और हिडिंबी भी उनके साथ गयी । रास्ते में उन्होंने वेदव्यासजी का दर्शन किया, उनको अपना दुःख बतलाया, उनके चरणों पर पड़े और रोये । १-६ दुःखित पाण्डवों और उनकी माता को देखकर मुनि बहुत घबराये और बोले— ''खेद मत करना, आगे सब ठीक हो जायगा, और हिडिम्बी को भी खेद नहीं पहुँचाना । विपत्ति के समय दुःख में न डूब जाना और पापों से

सम्पत्तुवरुंकालं सन्तोषिक्कयुं वेण्ट
तन्पुरान्तन्टेयोरु लीलकळल्लेयल्लो । १०
परञ्ञीवण्णं मुनि मरञ्ञु हिडिंबियुं
निरञ्ञ रागत्तोटुं पुणर्न्नाळ् भीमन्तन्नें । ११
पिरन्नु घटोत्कचनाकिय तनयनुं
निरञ्ञु सन्तोषवुमतिनालेल्लावर्क्कुं । १२
इरुन्नु शालिहोत्रन् तन्नुटेयाश्रमत्ति-
लोरुनाळविटेयुं वेदव्यासनेक्कण्टु । १३

बकवधं

जटयुं वल्क्कलवुं धरिच्चु पाण्डवन्मा-
रटविकळुं पल नदियुं गिरिकळुं १
कटन्नु पोन्निङ्ङेकचक्रयां ग्रामं पुक्कार् ।
नटन्नारविटेयुं भिक्षयेट्टोट्टुकालं । २
पुत्रनुं पत्नितानुं पुत्रभार्ययुं कूटि-
ट्टेत्रयुं दुःखिक्कुन्न विप्रन्टे गृहंतन्निल् ३
कुन्तियुं चेन्नु केट्टाळेन्तिनु शोकिक्कुन्नु ।
सन्तापत्तिन्टे मूलं ब्राह्मणनरियिच्चान् । ४

मुक्त होने के लिए भगवान् की प्रार्थना करना । समृद्धि के समय अधिक प्रसन्न न हो जाना क्योंकि यह सब भगवान् की लीला है ।" इस प्रकार कहकर मुनिजी अन्तर्धान हुए । हिडिंबी ने बड़े प्रेम के साथ भीमसेन का आलिंगन किया । फलस्वरूप पुत्र घटोत्कच का जन्म हुआ और सब बहुत प्रसन्न हुए । एक दिन वे ऋषि शालिहोत्र के आश्रम में ठहरे, जहाँ फिर व्यासजी का दर्शन हुआ । ७-१३

बकासुर का वध

जटा, वल्कल धारण करके पाण्डव अनेक पर्वत, वन और नदियाँ पार करके अन्त में एक चक्र नामक ग्राम में पहुँचे और वहाँ भिक्षा माँग-कर कुछ दिन तक अपना निर्वाह करते रहे । वहाँ एक ब्राह्मण था, जो अपने पुत्र, पत्नी और पुत्रवधू के साथ बड़ा दुःखित था । उसके घर जाकर कुन्ती ने पूछा, 'क्यों दुःखित हो ?' ब्राह्मण ने दुःख का कारण बतलाया । यहाँ एक बक नामक असुर है, जो आकर सबको खा जाने के

बकनेन्नोरु निशाचरनुण्टवन् वन्नु ।
सकलजनत्तेयुं भक्षिप्पानोरुम्पेट्टान् । ५
अतिनाल् ग्रामत्तिङ्कलुळ्ळोरु ञङ्ङळेल्ला-
मधिकं दुःखं पूण्टु समयं चेय्तु मुन्नं ६
ओरुनाळ् तन्नेयोक्क मुटिच्चु कळयेण्टा ।
पेरिकनाळेक्कुळ्ळ पोरुतियुण्टाक्कीटां । ७
ओरोरोदिनं ञङ्ङळ् नी वाळुं वनंतन्नि-
लोरोरो पुरुषन्मारङ्ङु वन्नीटामल्लो । ८
ऎन्नतु केट्टु बकनन्नेरमुरचेय्तान् ।
अन्नवुं वेणमेनिक्कायिरं नाळियरि- ९
वेच्चोरु नूरुकुटं नल्केणं रसाळवुं ।
पच्चमांसवुं वेणमीरण्टु पोत्तु नित्यं १०
मृष्टमायुण्मानितु कोण्टुवन्नोरु पुमान्
मुट्टाते तन्नीटुकिल् मतियेन्नरिञ्ञालुं । ११
ऎङ्किलङ्ङनेयामेन्नवनोटुरचेय्तु
सङ्कटत्तोटु ञङ्ङळिङ्ङने चेय्तु ञायं । १२
इन्नलेयोळमित्थं चेन्नितु मुट्टाते क-
ण्टिन्निनियिविटेनिन्नोरुत्तन् पोयीटेणं । १३
भक्तवुं रसाळवुं पोत्तुमुण्टायितिनि-
प्पुत्रनेययक्केन्नतोर्त्तेट् दुःखंतानुं । १४

लिए तैयार हो गया । अतएव हम ग्रामनिवासियों ने दुःखित होकर उससे पहले समझौता कर लिया कि तुम एक ही दिन हम सबको समाप्त न करो । हम ऐसा करेंगे कि बहुत दिनों के लिए तुम निश्चिन्त हो जाओगे । १-७ प्रतिदिन हम लोगों में से कोई वन में आयेगा, जहाँ तुम रहते हो । यह सुनकर बक ने कहा—"मुझे प्रतिदिन एक हज़ार सेर चावल का भात चाहिए, उसके साथ सौ घड़ों की रसेदार सब्ज़ी भी चाहिए । और मांस के लिए मुझे प्रतिदिन दो भैंसे चाहिए । पेट-भर खाने के लिए अगर कोई प्रतिदिन इतना (एवं स्वयं को) लायेगा तो पर्याप्त होगा, जान लीजिए ।" हम लोगों ने 'हाँ' कह दिया । बड़े दुःख के साथ हमने यह समझौता किया । कल तक यह प्रबन्ध निरन्तर चला है और आज इस घर से किसी को जाना है । ८-१३ भात, रसेदार सब्ज़ी और भैंसे तो तैयार हैं, पर पुत्र को भेजना है, यह सोचकर बड़ा दुःख है । अगर मैं चला जाऊँ तो इनका

ञान् पोयालिवक्कुमिल्लाश्रयमेतुं मन-
क्कान्पिलुळ्ळलेन्तु चोल्वतु दैवमल्लो । १५
पोकाञ्ञाल् ञान् मूलमाय् ग्रामवुं मुटिञ्ञीटुं
वेकुन्नु चित्तमिवयोर्त्तिनिक्कय्यो पापं । १६
भूदेवन् पऱञ्ञतुकेट्टु कुन्तियुमप्पो-
ळातुरयायाळल्लो कारुण्यमेऱुकयाल् । १७
प्राणिकळ्विषयमायोरनुकम्पकोण्टुं
केणुकेणवरिरिक्कुन्नतुं कण्टु कुन्ति । १८
चेतसि विचारिच्चु भूसुरनोटु चोन्नाळ्
खेदिक्क वेण्टा ञानीस्सङ्कटं तीर्प्पनल्लो । १९
पुत्रनायोरुवनेयुळ्ळतु भवानिप्पोळ्
पुत्रन्मारञ्चुपेरुण्टिनिक्केन्नरिञ्ञालुं । २०
इन्नु ञानोरुत्तनॆ निङ्ङळक्कु दुःखं तीर्प्पान्
तन्नीटुन्नतुमुण्टु निर्णयं करयेण्टा । २१
नन्नाक मेलिल् निनक्केन्नोळिञ्ञनिक्कोन्नु
तन्नीटु वतिनिल्लेन्नुरचेय्तितु विप्रन् । २२
वकन्टे वृत्तान्तङ्ङळरिञ्ञु कुन्तीदेवि
मकन्टे कैयालतु तीर्प्पानाय् निरूपिच्चाळ् । २३
भीमसेननॆ विळिच्चुरचेय्तितु कुन्ति
भीमनां निशाचरन्तन्नॆ नी कोल्कवेणं । २४

कोई आश्रय न रह जायगा। अपने मन का दुःख मैं कहाँ तक बताऊँ, ईश्वर की लीला है। अगर कोई न जाय तो मेरे कारण सारा गाँव समाप्त हो जायगा। यह सब सोचकर मेरा चित्त जला जा रहा है, कैसा कष्ट है ? ब्राह्मण का कहना सुनकर कुन्ती दुःखित हुई, क्योंकि उसके मन में दया थी। प्राणियों के प्रति सहानुभूति के कारण और उनके निरन्तर सिसकने के कारण कुन्ती सोचकर ब्राह्मण से बोली। आप खेद न करें, मैं आपका दुःख दूर करूँगी। १४-१९ आपका एक ही पुत्र है, पर जान लीजिए, मेरे पाँच-पाँच पुत्र हैं। उनमें से मैं एक (पुत्र) (आपका) दुःख समाप्त करने के लिए दूँगी, इसमें सन्देह नहीं; आप न रोयें। तब ब्राह्मण ने कहा—तुम्हारा आगे भला ही हो, क्योंकि तुम अपना एक पुत्र मुझको दे रही हो। बक के वृत्तान्त सुनकर कुन्तीदेवी ने अपने ही पुत्र के द्वारा उसको समाप्त करने के लिए निश्चय किया। (और)

भूमिपालक कुलधर्म्ममाकुन्नतल्लो
भूमिदेवन्मारॆप्पालिक्केणमॆन्नतॆल्लां । २५
ग्रामत्तॆक्कूटॆप्परिपालिच्चाल् नमुक्किनि-
क्कामत्तॆस्साधिच्चीटामिल्ल संशयमेतुं । २६
भीमनुमॆङ्किल् चोरु़ं करि़युं तरिकॆन्ना-
नामोदत्तोटु कॊटुत्तीटिनान् भूदेवनुं । २७
कौन्तेयनतुंकॊण्टु कान्तारमकं पुक्कु
तान्तन्नॆ भुजिक्कुन्ननेरत्तु निशाचरन् । २८
कुद्धनायणञ्ञतु कण्टु मारुतितानुं
बद्धकोपत्तोटूणुंकऴिच्चु पुऱप्पॆट्टु । २९
घोरमाय् पॊरुत पोरॆङ्ङनॆ पऱयुन्नु
मारुति बकन्तन्नॆक्कॊन्नानॆन्नऱिञ्ञालुं । ३०

पाञ्चालीस्वयंवरं-वार्त्ताकर्ण्णनं

अङ्ङनॆ नालञ्चुनाळविटॆयिरिक्कुन्पो-
ळॆङ्ङानुं पोन्नुवन्नान् नल्लॊरु वऴिपोक्कन् । १
आरणनत्ताऴमुण्टविटॆक्किटन्नपो-
तोरोरो विशेषङ्ङळ् चोदिच्चु पाण्डवन्मार् । २

भीमसेन को बुलाकर कहा—"तुम इस क्रूर राक्षस का वध करो। क्षत्रियों का यह कुलधर्म है कि वे ब्राह्मणों की रक्षा करें। २०-२५ यदि सारे ग्राम की रक्षा होजायगी तो हमारी इच्छाएँ पूरी हो जायेंगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है।" भीम ने कहा—'अच्छा तो भात और भाजी लाओ'। ब्राह्मण ने हर्ष से दोनों दे दिये। वह सब लेकर कुन्ती का पुत्र भीम वन में घुसा और स्वयं खाने लगा, जिसे देख राक्षस अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। तब भीम भी क्रुद्ध हुआ और भोजन समाप्त करके युद्ध करने के लिए तैयार हुआ। तब जो युद्ध हुआ उसका कैसे वर्णन किया जाय? अन्त में मारुति (भीम) ने बक को मार डाला। २६-३०

पाञ्चाली-स्वयंवर का समाचार सुनना

इस प्रकार चार-पाँच दिन वहाँ ठहरते समय एक सज्जन यात्री कहीं से आया। जब यात्री ब्राह्मण शाम को भोजन करके आराम कर रहा था तब पाण्डव उससे समाचार पूछने लगे। कहाँ से आये हो और यहाँ से कहाँ

ऍविटॆनिऩ्ऩुवऩ्ऩु तानिनिप्पोकुऩ्ऩतु-
मॆविटेक्कॆऩ्ऩु परञ्ञीटेणमॆऩ्ऩु केट्टु ३
पाञ्चालपुरत्तिङ्कलुण्टुपोल् स्वयंवरं
वाञ्छितमायतॆल्लां किट्टुंपोल् नमुक्कॆल्लां । ४
आर्क्कु पॆण्णिनॆक्कॊटुक्कुन्नतॆन्नुण्टो केट्टु
चेल्क्कण्णाळ् कण्टालॊट्टु नन्नो केळियो सखे । ५
ऍन्नतु केट्टु चॊन्नानन्नेरं वळिप्पोक्क-
निन्नवर्क्कॆन्नु दैवमॆन्नियेयरिञ्ञीला । ६
पार्त्थनु कॊटुप्पानाय् कल्पिच्चु नृपवर-
नास्थया कर्म्मं चॆय्तिट्टुण्टाय नारियल्लो । ७
धार्त्तराष्ट्रन्माररक्किल्लत्तिलिट्टु चुट्टु
पार्त्थन्मार् वॆन्तुपोयारॆन्नतो केट्टुतल्लो । ८
द्रोणरॆक्कॊल्वानायिट्टुण्टायि धृष्टद्युम्नन्
काणामॆन्नते वेण्टू केवलमतुमिनि । ९
पञ्चबाणवुं विल्लुमुण्टुपोलुण्टाक्कीट्टु
पञ्चवर्णत्तिलॊरु कृत्रिमक्किळियेयुं । १०
तिरिञ्ञु तिरिञ्ञु निन्नीटिन यन्त्रत्तिन्मे-
लिरुन्नीटिन किळितन्नुटॆ कण्ठत्तिङ्कल् ११
विल्लतु कुलच्चॆय्तु मुरिक्किलवन्तन्नॆ
वल्लभनाकुन्नतु कन्यकय्क्कॆन्नु केट्टु । १२

जाओगे, यह बतलाओ । यह सुनकर उसने कहा—'सुना है कि पाञ्चालों के नगर में एक स्वयंवर होनेवाला है । यह भी सुना है कि वहाँ अपनी इच्छा के सभी पदार्थ मिल जायेंगे । (पाण्डवों ने पूछा) क्या यह भी सुना है कि कन्या किसको दे रहे हैं ? और वह देखने में अच्छी है या केवल तमाशा है ?' यह सुनकर यात्री ने कहा—"ईश्वर ही जाने किसको देंगे । राजा ने तो अर्जुन को देने के लिए निश्चय किया था, क्योंकि कन्या तो श्रद्धा के साथ कर्म करने के बाद पैदा हुई थी । १-७ परन्तु सुना है कि धृतराष्ट्र के पुत्रों ने पाण्डवों को लाक्षागृह में जलाकर नष्ट कर दिया है । द्रोणाचार्य को मारने के लिए धृष्टद्युम्न पैदा हुआ है । अब देखना है, क्या होगा ? एक धनुष और पाँच बाण बनाये गये हैं, साथ-साथ पाँच रंगवाली एक कृत्रिम चिड़िया भी । एक घूमते हुए यन्त्र पर बैठी इस चिड़िया के गर्दन पर निशाना मारकर जो उसे काट दे, वही

भूमियिलुळ्ळमन्नोरोक्कवे पोयिट्टुण्टु
भूमिदेवेन्द्रन्मारुमट्टमिल्लातेयुण्टु । १३
आन तेर् कुतिर कालाळाय पटयुमु-
ण्टानकपटहादिवाद्यघोषवुमुण्टु । १४
सानन्दं बहुरसभोजनमतुमुण्टु
मानसत्तिङ्कल् निरूपिच्चवयोक्कक्किट्टुं । १५
मल्लाक्षितन्नेयुं काणेण्टुकयुण्टुपोले-
न्नेल्लारुं चोल्लुन्नितुमेन्तिनु नमुक्कतु । १६
कल्याणं काणवेणं पोरुविन् पक्षे निङ्ङ-
ळिल्लोरु काळ्चयेङ्ङुमिङ्ङनेयेन्नुवरुं । १७
आरणरायमेवीटुं पाण्डवरतु केट्टु
कारणमरिञ्ञु सन्तोषिच्चु पुरप्पेट्टार् । १८
वन्नितु वेदव्यासनन्नेरमविटेक्कु
नन्नितु तोन्नियतु चेन्नालुं मटियाते । १९
नल्लते वन्नुकूटू पाञ्चालितन्ने निङ्ङ
ळेल्लारुं कूटि वेट्टुकोळ्ळुविनेन्नेवेण्टू । २०
पण्टोरु तपोधनन्तन्नुटे पुत्रि तनि-
क्कुण्टायीलोरु भर्त्तावेन्नवळ् महेशने २१

कन्या का वर होगा, ऐसा मैंने सुना है। पृथिवी के सभी राजा वहाँ पहुँच गये हैं ओर असंख्य ब्राह्मण भी वहाँ उपस्थित हैं। हाथी, रथ, घोड़े, पैदल सेना भी है और आनक, पटह आदि अनेक वाद्यों का घोष भी है। ८-१४ वहाँ सानन्द बहुरस भोजन किया जा सकता है, और मन में जिन-जिन चीज़ों की अभिलाषा हो सभी मिल सकती हैं। सब लोग कहते हैं कि सुन्दरी कन्या भी देखने को मिलेगी, परंतु इससे हमारा क्या मतलब है ? विवाह देखना है, बस। आप लोग भी आइए। इतना अच्छा दृश्य और कहीं न मिलेगा, यह सिद्ध होगा।" ब्राह्मण के रूप में वहाँ रहनेवाले पाण्डवों ने यह सुनकर, मामला समझकर, प्रसन्नता के साथ जाने की तैयारी की। उस समय देदव्यासजी वहाँ पहुँच कर बोले—"यह तो आपको अच्छा सूझा, आप अवश्य चलें। इसका परिणाम अच्छा ही होगा। और आप पाँचों मिलकर पाञ्चाली से विवाह करो। १५-२० पूर्वकाल में एक तपोधन की पुत्री का कोई पति न हुआ था। तब उसने महेश की सेवा की और महेश प्रत्यक्ष होकर बोले—'हे वाले ! बतलाओ,

सेविच्चु महेशनुं प्रत्यक्षनायिच्चोन्नान्
तावकमभिमतमेन्तु चोल्लुक बाले ! २२
ऍन्तोरु वरं वेण्टतेन्नु केट्टवळप्पोळ्
सन्तोषं पूण्टुचोन्नाळ् संभ्रमत्तोटुमेवं । २३
भर्त्तारं देहियेन्नतञ्चुरु चोन्नमूलं
भर्त्ताक्कन्मारुं निनक्कञ्चुपेरुण्टाकेन्नान् । २४
यज्ञसेनन्टे मकळाय् पिरन्नितुमवळ्
विज्ञानज्ञानवतियाकयुमुण्टु पारं । २५
इत्तरं पल पल कथकळरुळ्चेय्तु
चित्ततापवुं तीर्न्नु पोवानाय् नियोगिच्चान् । २६
आशीर्व्वादवुं चेय्तु मरञ्ञु मुनितानु-
माशु पाण्डवन्मारुं मातावुं नटकोण्टार् । २७
ब्राह्मणरतुनेरं चोदिच्चारवरोटु
धार्म्मिकन्मारे ! निङ्ङळेविटेनिन्नु वन्नु ? २८
एकचक्रयिल्निन्नु वरुन्नु ञङ्ङळिप्पोळ्
पोकुन्नु पञ्चालनां विषयं काण्मानल्लो । २९
ञङ्ङळो सोदर्यन्मार् मातृचारिकळ् तानुं
ञङ्ङळेक्कूट्टिक्कोण्टु पोकेणं पक्षे निङ्ङळ् । ३०
अङ्ङनेतन्ने ञङ्ङळ् पोकुन्नितविटेक्कु
ञङ्ङळ्क्कु निङ्ङळ् तुण निङ्ङळ्क्कु तुणञङ्ङळ् । ३१

तुम्हारी अभिलाषा क्या है ? तुम्हें क्या वर चाहिए ?' —यह सुनकर वह प्रसन्न हुई और उसने संभ्रम के साथ कहा—'मुझे पति दो, पति दो, पति दो, पति दो, पति दो ।' इस प्रकार पाँच बार कहने के कारण महेशजी ने कहा—'तुम्हें पाँच पति प्राप्त हो जायँ !' उसी ने अब यज्ञसेन की पुत्री के रूप में जन्म लिया है । उसके पास विज्ञान और ज्ञान बहुत है ।" इस प्रकार की अनेक कथाएँ सुनाकर और दुःख दूर करके व्यासजी ने जाने के लिए निर्देश दिया; और आशीर्वाद देकर मुनिजी अन्तर्धान हो गये । तत्क्षण ही पाँचों पाण्डव माता के साथ चल पड़े । २१-२७
उस समय (रास्ते में) ब्राह्मणों ने उनसे पूछा—"हे धर्मनिष्ठ ! आप कहाँ से आ रहे हैं ?" (उन्होंने उत्तर दिया) "हम लोग अब एकचक्र से आ रहे हैं और पांचाल देश देखने जा रहे हैं । हम भाई-भाई हैं और माता की सेवा करते हैं और आप लोग हमको साथ ले चलिए ।" "(ब्राह्मणों ने कहा)

इङ्ङनॆ परन्ञवर् भूदेवन्मारुमायि
मंगलचित्तन्मारां धर्म्मपुत्रादिकळां ३२
चन्द्रवंशोल्भवन्मार् गंगातीरत्तु चॆन्नार्
चन्द्रनुमस्तमिच्चु रात्रियुं पाति चॆन्नु । ३३

अङ्गारवर्णोपाख्यानं

अर्ज्जुनन् मुन्पिलॊरु कॊळ्ळियुं मिन्नि मिन्नि
निर्ज्जरनदि कटन्नीटुवान् तुटङ्ङुन्पोळ् । १
मज्जनं चॆय्युन्नॊरु गन्धर्व्वन्तन्नॆक्कण्टु
निर्ज्जराधिपतनयादिकळ् निन्ननेरं । २
अंगनाजनवुमायंगजविवशनाय्
श्रृंगाररसंपूण्टु श्रृंगारयोनिसमन् ३
गंगयिल् सोमश्रवायणमां तीर्थत्तिङ्क-
लंगारवर्ण्णनॆन्न गन्धर्व्वन् क्रीडिक्कुन्पोळ् । ४
कोपवुं कलर्न्नवन् चापवुं कुलयेट्टि
भूपतिवरन्मारां पाण्डवरोटु चॊन्नान् । ५
पूर्व्वरात्रादियिङ्कल् घोरमायुळ्ळ सन्ध्या-
कालत्तु मनुष्यर्क्कु सञ्चरिक्करुतल्लो । ६

हाँ, हम लोग भी वहीं जा रहे हैं। आप लोग हमारे साथी रहें और हम आपके साथी होंगे।" इस प्रकार कहकर मंगल चित्तवाले चन्द्रवंश के भूषण युधिष्ठिर आदि भाई, ब्राह्मणों के साथ गंगा के तट पर पहुँचे। चन्द्र अस्त हो गया और आधी रात बीत गयी। २८-३३

अङ्गारवर्ण का उपाख्यान

अर्जुन जब एक लकड़ी की रोशनी में निर्जर नदी (देव नदी गंगा) पार करने लगे तब उसमें स्नान करनेवाला एक गन्धर्व दिखायी दिया, जिससे अर्जुन आदि रुक गये। अंगारवर्ण नामक वह गन्धर्व गंगा तट पर स्थित सोमश्रवायण तीर्थ में कामदेव के वश में आकर, श्रृंगारस से मत्त होकर मदन के तुल्य, अपनी स्त्रियों के साथ खेल रहा था। तब क्रुद्ध होकर, धनुष पर बाण चढ़ाकर भूपालवर पाण्डवों से उसने कहा—रात्रि के पूर्वभाग के आरंभ में, घोर सन्ध्या के समय मनुष्यों को सञ्चार ही न करना चाहिए। यह यक्ष, राक्षस, गन्धर्व आदियों का समय है। इसका

यक्षराक्षसगन्धर्व्वादिकळ्क्कुळ्ळ कालं
धिक्करिच्चतिलोभं कैक्कोण्टु नटक्किलो ७
भक्षिक्कुं मनुष्यरे रक्षसांपरिषकळ्
रक्षिप्पान् पोरुमेङ्किलेतुमे मटिक्केण्ट । ८
अङ्गारवर्ण्णनेन्न गन्धर्व्वप्रवरन् ञा-
नङ्गारवर्ण्णं मम नामत्ताल् वनमितु । ९
औषधनाकुन्नतु धनदसखि ञानुं
रोषवुमेन्नोळमिल्लार्क्कुमेन्नरिञ्ञालुं । १०
कौणपादिकळ्पोलुमिविटे वरुवीला
प्राणने वेटिञ्ञु वन्नीटुवानेन्तु निङ्ङळ् । ११
ॲन्नतु केट्टनेरं चॊल्लिनान् किरीटियुं
नन्नुनन्नेत्रयुं नी चॊन्नतु नन्नु पारं । १२
हिमवल्गिरि गंगा समुद्रमिवट्टिङ्कल्
पकलुं रावुं सन्ध्यानेरवुं नटन्नीटां । १३
ॲल्लार्क्कुं गमिच्चीटामॆल्लानेरवुमति-
निल्लॊरु तटवेतुं दुष्टजन्तुक्कळाले । १४
ॲन्नल्लो मुनिवरनाकिय वेदव्यासन्
चॊल्लियतसत्यमल्लेन्नु नीयरिञ्ञीले ? १५
क्षुद्रन्मारल्लञङ्ङळ् निङ्ङळॆप्पेटिप्पति-
न्नद्रिसागरादियुं भेदिप्पन् दिव्यास्त्रत्ताल् । १६

अनादर करके लोभ के कारण अगर सञ्चार करोगे तो राक्षस-गण मनुष्यों को खा लेंगे। अगर तुममें अपनी रक्षा करने की शक्ति है तो फिर तुम्हारी खुशी है। १-८ मैं अङ्गारवर्ण नाम का गन्धर्वप्रवर हूँ और मेरे नाम से यह वन भी अङ्गारवर्ण कहलाता है। कुबेर का मित्र औषध मैं ही हूँ और जानलो कि मेरा जैसा क्रोध और किसी का नहीं है। राक्षस आदि भी यहाँ नहीं आते हैं। क्या कारण है कि प्राणभय की परवा न करके आप लोग यहाँ आये। यह सुनकर किरीटी (अर्जुन) ने कहा—जो तुमने कहा वह बहुत ठीक है, हिमालय पर्वत, गंगा, समुद्र, इन सबमें दिन, रात, सन्ध्या, सभी समय मैं संचार कर सकता हूँ। (हम) सब सभी समय घूम सकते हैं, दुष्ट जन्तुओं की ओर से कोई रोक न होगी। यही मुनिवर वेदव्यासजी ने कहा है; उनका कहना असत्य नहीं हो सकता है, जानते नहीं हो ? हम क्षुद्र लोग नहीं हैं कि तुमसे डर जायँ। मैं अपने दिव्यास्त्र से

दुर्ब्बलन्माराय् भीतन्माराय मनुष्यरे-
क्कर्ब्बुरादिकळ् पोंटिच्चीटुकॆन्नतेवरू । १७
दुर्म्मदं कलन्नोरु गन्धर्व्ववीरनप्पोळ्
निर्म्मलतरमाय शस्त्रौघं प्रयोगिच्चान् । १८
उन्मुकंकोण्टु तट्टुत्तीटिनान् किरीटियुं
पोन्मयमाय रथंतन्नेयुं दहिप्पिच्चा- १९
नर्ज्जुनन् प्रयोगिच्चोराग्नेयास्त्रत्तालप्पोळ्
सज्वरनाय् मोहिच्चु वीणितु गन्धर्व्वनुं । २०
कैशिकं चुट्टिप्पिटिच्चप्पोळे वधिप्पाना-
याशु फल्गुनन् तुनिञ्ञतुकण्टवन् भार्य- २१
सुन्दरी कुंभीनसि धर्म्मनन्दनन्काक्कल्
क्रन्दनं चेय्तु वीणु शरणं प्रापिच्चप्पोळ् । २२
स्त्रीनाथन् पराजितन् कीर्तिहीननुमायि
मानवुंवेटिञ्ञवन्तन्ने नी कॊन्नीटोल्ला २३
अभयं कॊटुक्कॆन्नु धर्म्मजन् चॊन्ननेर-
मभिमानिकळुमुन्पनर्ज्जुनन् चॊल्लीटिनान् । २४
धर्म्मात्मा धर्म्मात्मजनभयं तन्नमूलं
निर्म्मलनाय निन्नेक्कॊल्लुन्निल्लिनि ञानो २५
पोय्क्कॊळ्क पेटिक्केण्ट निय्यिनियॆन्ननेरं
काक्कल्वीणुरचेय्तान् गन्धर्व्वप्रवरनुं । २६

पर्वत और सागर तक तोड़ सकता हूँ । ९-१६ यह हो सकता है कि राक्षस आदि दुर्बल और भयभीत मनुष्यों को नष्ट कर दें ।" यह सुनकर दुर्मद-युक्त गन्धर्व वीर ने अपने निर्मल शस्त्रों का प्रयोग किया । अर्जुन ने उल्मुक से उनको रोका और उसके सुवर्णमय रथ को जला डाला । अर्जुन के आग्नेयास्त्र के प्रहार से गन्धर्व जल गया और बेहोश होकर गिर गया । अर्जुन को अपने केश सँभालकर (उसका) वध करने के लिए तैयार होते देखकर, गन्धर्व की पत्नी सुन्दरी कुंभीनसी युधिष्ठिर के पैरों पड़ी और रोने लगी और उनके शरण में आयी । तब युधिष्ठिर ने कहा—'यह स्त्री का नाथ है, हार गया है, अपनी कीर्ति खो बैठा है, इसका मान भी नष्ट है, इसका वध न करो, इसको अभय दो' । यह सुनकर अभिमानियों में श्रेष्ठ अर्जुन ने कहा—'धर्मात्मा और धर्म के पुत्र ने तुम्हें अभय दिया है, इसलिए हे निर्मल ! तुझको मैं न मारूँगा । १७-२५ चले जाओ, मत

अङ्गारवर्ण्णनॆन्नु पेरिनिक्किनि वेण्ट
संगरत्तिङ्कल् निन्नाल् जितनाय् वन्नमूलं । २७
मानियां निनक्कु ञान् चाक्षुषियॆन्न विद्य
दानं चॆय्युन्नतुण्टिप्राणनॆ रक्षिक्कयाल् । २८
कामदरथाश्वसूतायुधादिकळुण्टां
सोमवंशोल्भूतनां निनक्कु धनञ्जय ! २९
उत्तमं प्रीतिदत्तमतिलुं विद्यादत्त-
मॆन्नयुं शुभं पुनरॆङ्किलुमितु केळ्नी । ३०
प्राणरक्षणत्तिनु कूलि वाङ्ङुकयिल्ल
मानिकळाय नृपवीरन्मारऱिक नी । ३१
ऎङ्किलाग्नेयमस्त्रमिनिक्कु पठिक्केण-
मॆङ्कल्निन्नॆन्टॆ विद्य वाङ्ङिक्कॊळ्कयुं वेणं । ३२
सख्यवुं नम्मिलिनि वेऱिटातिरिक्केणं
विख्यातयाय कीर्त्ति वर्द्धिप्पिक्कयुं वेणं । ३३
गन्धर्व्वन् चॊन्नवण्णमन्योन्यं पठिच्चुटन्
कुन्तीनन्दनन् पुनरवनोटुर चॆय्तान् । ३४
ऎन्तॊरु मूलं भवान् ञङ्ङळॆ विरोधिप्पान्
बन्धमिल्लॊन्नुकॊण्टुं साधुक्कळल्लो ञङ्ङळ् । ३५

डरो'। ऐसा कहने पर गन्धर्ववर अर्जुन के पैरों पड़ा और बोला—"अब यह नाम अङ्गारवर्ण मुझे नहीं चाहिए, क्योंकि मैं युद्ध में हार गया हूँ। चूँकि तुमने मेरे प्राणों की रक्षा की, (अतः) मैं मानयुक्त तुमको चाक्षुषी नामक विद्या का दान करता हूँ। हे सोमवंश में उत्पन्न धनञ्जय! तुम्हारे लिए कामद रथ, अश्व, सूत और आयुध प्राप्त हो जायेंगे। प्रीति से जो दिया जाता है, वह सबसे उत्तम है, उसमें भी अगर विद्या ही दी जाय, तो क्या कहना है। फिर भी सुन लो! जान लो कि मानी नृपवीर प्राणरक्षा के बदले मजदूरी नहीं लेते हैं। (गन्धर्व ने कहा) मैं आग्नेय अस्त्र सीखना चाहता हूँ और मुझसे मेरी विद्या तुम्हें लेनी चाहिए। अब हम दोनों की अटूट मित्रता होनी चाहिए। (हमें) अपनी विख्यात कीर्ति को बढ़ाना भी चाहिए।" गन्धर्व के कहने के अनुसार एक-दूसरे की विद्या पढ़ने के बाद कुन्तीपुत्र (अर्जुन) ने उससे पूछा—"क्या कारण है कि तुमने हम लोगों का विरोध किया? मैं कोई कारण नहीं देखता हूँ, हम लोग तो सज्जन हैं।" २६-३५ (गन्धर्व ने उत्तर दिया) "अगर जानना

अेङ्किलो धनञ्जय ! केट्टालुमतिन्मूलं
सङ्कटमिनि मेल्नाळुण्टाकातिरिप्पानाय् । ३६
ब्राह्मणपुरस्कृतन्मारायिट्टिरिक्केणं
धार्म्मिकन्माराकिलुं मट्टुळ्ळजातियेल्लां । ३७
यक्षराक्षसगन्धर्व्वोरगपिशाचादि-
दुःखङ्ङळ् नल्कुं पलरक्षयुण्टेन्नाकिलुं । ३८
निश्चयमब्रह्मण्यमभयङ्करमल्ल
सद्विजार्च्चनयुळ्ळोर्क्किल्लोरु भयमेङ्ङुं । ३९
नल्लोरु पुरोहितन् वेणं भूपतियाया-
लल्लल् कूटातवण्णमैहिक पारत्रिकं ।
अल्लायि्कल् साधिप्पतिन्नामल्लेन्नरियणं ४०
तापत्यागार्थमोरु तापसोत्तमन् तन्ने-
त्तापत्यन्मारे ! निङ्ङळ् गुरुवाय् वरिक्केणं । ४१
तापत्यन्मारेन्नतु केट्टु चोदिच्चु जिष्णु
तापत्यन्मारेन्नतु चोल्लुवान् मूलं चोल् नी । ४२

चाहते हो तो, हे धनञ्जय ! सुन लो ताकि भविष्य में कोई बाधा न पैदा हो जाय। आप लोगों को चाहिए कि आप ब्राह्मण के नेतृत्व में रहें, यद्यपि और जातियाँ भी धर्म का अनुकरण करनेवाली हैं। यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, नाग, पिशाच आदि सुरक्षित लोगों को भी दुःख पहुँचाने वाले हैं। ब्राह्मण-रहित रहने में अभय नहीं है, अच्छे ब्राह्मणों की पूजा करनेवालों को किसी बात का डर नहीं है। राजा को एक अच्छा पुरोहित चाहिए ताकि ऐहिक और पारलौकिक कार्य बिना बाधा के सिद्ध हो जायँ। नहीं तो उनकी सिद्धि नहीं हो सकती है, जान लो। हे तपती[1] के सन्तान ! दुःख दूर करने के लिए एक उत्तम तापस को अपना गुरु बनाओ।" 'तापत्य' नाम सुनकर अर्जुन ने कहा—"हम लोगों को तापत्य कहने का कारण बतलाओ"। ३६-४२

---

१ तपती राजा संवरण की पत्नी थी। उसका ही पुत्र कुरु था, जिसके वंश में धृतराष्ट्र और पाण्डु दोनों उत्पन्न हुए।

संवरणोपाख्यानं

चौल्लुवन् चुरुक्कि ञान् केळ्क्क नी धनञ्जय !
चौल्लॆळुमादित्यन्टॆ पुत्रियायुण्टाय्वन्नु १
सावित्रिक्कवरजयायॊरु मनोहरी
देवस्त्रीकळुमवळ्क्कॊत्तवरारुमिल्ल । २
तल्क्कालमृक्षपुत्रनाकिय संवरण—
नर्क्कनॆ वळिपोलॆ सेविच्चान् पलकालं । ३
तन्नुटॆ भक्तनाय चन्द्रवंशोल्भूतनां
मन्नवर्कुलवरनाकिय संवरणन् । ४
ऎन्नुटॆ मकळ्क्कनुरूपनॆन्नुळ्ळिल् नण्णि-
क्कन्यकय्क्कीरॆट्टाण्टु वयस्सुचॆन्नकालं ५
अद्रितन्नुपवन सीमनि नायाट्टिन्नाय्
विद्रुतं नरपति नटन्नानॊरुदिनं । ६
क्षुल्पिपासादि पूण्टु मरिच्चु कुतिरयुं
पिल्पाटु वनभुवि नटन्नु नरेन्द्रनुं । ७
अन्नेरं काणाय्वन्नु कन्यकारत्नं तन्नॆ
मन्नवन् मऽन्नितु तन्नॆयुमतुनेरं । ८
नामधेयादिकळॆच्चोदिच्चु नरपति
वामलोचन पुनरुत्तरं पऽयातॆ ९

संवरण का उपाख्यान

(गन्धर्व बोला)—"अच्छा तो संक्षेप में कहूँगा, धनञ्जय ! सुन लो। विख्यात सूर्य की एक पुत्री थी, जो सावित्री की छोटी बहिन थी और बड़ी मनोहारिणी थी। अप्सराओं में उसके समान कोई न थी। उन दिनों ऋक्ष के पुत्र संवरण ने नियमानुसार सूर्य की दीर्घकाल तक सेवा की। जब अपनी पुत्री के सोलह बरस पूरे हुए तब सूर्य ने अपने मन में सोचा—'यह मेरा भक्त, चन्द्रवंश के राजाओं में श्रेष्ठ, संवरण मेरी पुत्री के अनुरूप है'। एक दिन राजा पर्वत के निकट के उपवन में शिकार खेलने के लिए सोत्साह गया। भूख और प्यास से उसका घोड़ा मर गया, तदनन्तर राजा वन में पैदल ही घूमने लगा। तब उसे एक कन्यारत्न दिखायी दिया, जिसे देखकर राजा अपने ही को भूल बैठा। १-८ राजा ने उसका नाम आदि पूछा, परंतु वह सुन्दरी तो बिना उत्तर दिये ही अन्तर्धान हो

मङ्ङाळतुनेरं नृपनुं मनक्कान्पिल्
निङ्ङशोकं पूण्टु मन्मथविवशनाय् १०
मोहिच्चु वीणु क्किटन्नीटिनोरनन्तरं
मोहनगात्रियाय तपती पोन्नुवन्नाळ् । ११
शीतांशुकुलोल्भवनाकिय नृपोत्तम !
चेतसि वळर्न्नोरु शोकत्तेक्कळञ्ञालु- १२
मेतुमे विषादमुण्टाकरुतेळुनेल्कक
खेदिप्पान् पात्रमल्ल केवलं भवानोट्टुं । १३
तपनन्तन्टे मकळाकिय तपति ञान्
तपसा तातन्तन्नेस्सेविक्क विरये नी । १४
जनकन् भवानायिट्टेन्ने नल्कीटुन्नाकि-
लनुवर्त्तनं चेय्वनेतुमे मटियाते । १५
ञाननुकूलयल्लेन्नोर्त्तेतुं खेदिक्केण्टा
मानवशिखामणे ! रागमेल्लार्क्कुमोक्कुं । १६
ऎन्नुरचेय्तु मङ्ञीटिनाळ् तपतियुं
मन्नवन्तानुं पिन्ने मन्मथविवशनाय् १७
तपति तपतियेन्नधिकं परितापाल्
नृपतिवरन् भुवि पतनंचेय्तु मोहाल् । १८
सचिवन् तिरञ्ञुवन्नवनीशनेक्कण्टु
कुशलोक्तिकळ्कोण्टुं शीतोपचारंकोण्टुं १९

गयी । राजा का मन शोक से भर गया और वह कामदेव के वश में हो गया । जब वह बेहोश होकर गिर पड़ा, तब मोह करनेवाली तपती उसके पास आयी और बोली—'हे चन्द्रवंश के नृपोत्तम ! आप अपने मन का बढ़ा-चढ़ा दुःख त्याग दीजिए । आपको तनिक भी विषाद नहीं होना चाहिए, उठिए । आप खेद के बिलकुल पात्र नहीं हैं । मैं सूर्य की पुत्री तपती हूँ, आप अपने तप से शीघ्र पिताजी की सेवा कीजिए । अगर पिताजी मुझे आपको दे देंगे तो बिना हिचक के मैं आप के साथ चलूँगी । हे मानवों में श्रेष्ठ! यह समझकर कि मैं अनुकूल नहीं हूँ, आप खेद न करें । अनुराग सबको पसन्द होता है ।' ९-१६ इतना कहकर तपती अन्तर्धान हो गयी । (तब) राजा पूर्णरूप से मदन के वश में आ गये और तपती-तपती चिल्लाते हुए बेहोश होकर गिर पड़ें । तब राजा को ढूँढ़ते हुए मन्त्री आये और उन्होंने मंगलमय बातें सुनाकर और शीतल उपचार करके

उर्णत्ति राजाविन्टे सङ्कटमेल्लांकण्टु
गणिच्चु बुद्धिकोण्टु कल्पिच्चु सचिवनुं । २०
राज्यत्तिन्नयच्चितु निश्शेषसैन्यमेल्लां
पूज्यनां वसिष्ठनेस्सेविच्चु नरेन्द्रनुं । २१
द्वादशदिनंकोण्टु वन्नितु वसिष्ठनुं
सादरं वीणु नमस्करिच्चु नृपतियुं । २२
मेदिनीश्वरन् मुनितन्नोटु मनोरथ-
माधि तीर्त्तीटुवतिन्नायरियिच्चनेरं । २३
चेतसि विचारिच्चु भूपति परितापं
द्वादशात्माविन् मकळ्मूलमेन्नरिञ्ञप्पोळ् । २४
अब्जसंभवसुतनाकिय वसिष्ठनु-
मब्जबान्धवन्तन्नें स्तुतिच्चानतुनेरं । २५
चित्रभानवे नमः सूर्याय मार्त्ताण्डाय
मित्राय दिनेशाय भास्वते नमोनमः । २६
वेदरूपाय वेदवेद्याय वेदान्तार्थबोध-
रूपाय जगन्नाथाय नमोनमः । २७
प्रकृतियुटेगुणङ्ङळ्क्कनुरूपमाय-
विकृति पूण्टरूपनामवर्णङ्ङळोटुं २८

राजा को जगाया और उनका दुःख देखकर विचार किया, और क्या करना चाहिए—यह निश्चय किया। उन्होंने सारी सेना को वापस कर दिया। राजा पूज्य वसिष्ठजी की सेवा करने लगे। बारह दिनों में वसिष्ठजी पधारे और राजा ने उनके चरणों पर गिर कर सादर नमस्कार किया। राजा ने अपना दुःख दूर करने के लिए मुनिजी को अपनी अभिलाषा सुना दी। विचार करने के बाद वसिष्ठजी ने जान लिया कि राजा का दुःख सूर्य की पुत्री के कारण है। १७-२४ तब अब्जसंभव (ब्रह्मा) के पुत्र वसिष्ठ ने सूर्य की स्तुति की। 'चित्रभानवे नमः, सूर्याय नमः, मार्त्ताण्डाय नमः, मित्राय नमः, दिनेशाय नमः, भास्वते नमोनमः। वेदरूपाय नमः, वेदवेद्याय नमः, वेदान्तार्थ—बोधरूपाय नमः, जगन्नाथाय नमोनमः'[1]। जो प्रपञ्च

[1] इन मंत्रों और स्तोत्रों से चित्रभानु को नमस्कार, सूर्य को नमस्कार, मार्तण्ड को नमस्कार, मित्र को नमस्कार, दिनेश को नमस्कार, भास्वान् को नमस्कार, वेदरूप-वाले को नमस्कार, वेद-वेद्य को नमस्कार, वेदान्त के अर्थ के ज्ञान स्वरूपवाले को नमस्कार, जगन्नाथ को बारंबार नमस्कार।

प्रपञ्चसृष्टिस्थितिसंहारङ्ङळॆच्चॆय्वान्
विरिञ्चविष्णुरुद्रन्माराये चमञ्ञीटुं २९
परमात्मने परब्रह्मणे नमो नमः
परमानन्दात्मने रवये नमो नमः । ३०
भास्करन् तानुमरुळ्चॆय्तितु वसिष्ठनो-
टाग्रहंतन्नॆ परञ्ञीटुक मटियातॆ । ३१
ऎङ्किलो चॊल्लीटुवन् वन्न कारणमॊरु
सङ्कटमुण्टु दण्डं पोक्कुवानिल्लतानुं । ३२
तिङ्कळ्तन् कुलत्तिङ्कलुळ्ळ संवरणनु
पङ्कजशरतापं पारं त्वल्पुत्रिमूलं । ३३
अवनीश्वरनाय संवरणनु भवा-
नवळॆक्कॊटुक्केणमॆन्नतु चॊल्वान् वन्नेन् । ३४
सन्देहमन्तु भवान् कल्पिच्चालॆङ्किल् मम
नन्दने ! तपति नी पोकणं वैकीटातॆ । ३५
मुन्नमे कल्पिच्चिरिक्कुन्नितु मकळे ञान्
निन्नॆस्संवरणनु कॊटुक्कामॆन्नुतन्नॆ । ३६
वसिष्ठनरुळ्चॆय्युंवण्णं नी भूमितन्निल्
वसिक्क पलकालं सुखिच्चु भर्त्तावुमाय् । ३७
जनिक्क तनयनुं भुवनप्रसिद्धनाय्
निनक्कु गुणङ्ङळुं वर्द्धिक्क दिनंतोरुं । ३८

की सृष्टि, स्थिति और संहार करने के लिए प्रकृति के गुणों के अनुरूप विकृत होकर नाम, रूप और वर्ण धारण करनेवाले ब्रह्मा, विष्णु और महेश बनता है। उस परमात्मा को, परब्रह्म को नमस्कार है। परमानन्द जिसका स्वरूप है, उस रवि को नमस्कार है।' तब भास्कर (सूर्य) ने वसिष्ठ से कहा—'बिना हिचक के अपनी अभिलाषा बतलाइए'। 'अच्छा तो मैं आने का कारण बतलाऊँगा। एक चिन्ता की बात है, जिसे दूर करना है। २५-३२ चन्द्रवंश में समुत्पन्न संवरण का हृदय तुम्हारी पुत्री के कारण मदनताप से संतप्त हो गया है। आप राजा संवरण को अपनी पुत्री दे दें, यह कहने के लिए मैं आया हूँ।' तब सूर्य बोले—'अगर यही आप की आज्ञा है तो मुझे कुछ कहना ही नहीं है। बेटी तपती ! तुम शीघ्र तैयार हो जाओ, तुम्हें संवरण को देने के लिए मैंने पहले ही निश्चय किया था। वसिष्ठजी के कहने के अनुसार तुम पृथिवी पर अपने पति के

ईवण्णमनुग्रहिच्चयच्चू जनकनुं
लावण्याङ्गियुं वन्दिच्चनुवादत्तेच्चेय्ताळ् । ३९
तपतियाय दिव्यकन्यका मनोहरी
तपनात्मजामनोरथवुं वन्नुकूटि । ४०
कन्यकयोटुकूटि यात्रयुं चोल्लि मुनि
मन्नवन् वसिच्चीटुं काननभुवि वन्नु । ४१
अब्जलोचनयाय तपतितन्नेक्कनि-
ञ्ञब्जनाशनकुलनाथनु नल्कीटिनान् । ४२
अब्जसायकरसंपूण्टवनटवियि-
लब्जकान्ताब्दं वसिच्चीटिनानवळुमाय् । ४३
पिन्ने वैरिकळेयुमोक्कवे निग्रहिच्चु
तन्नुटे नाटुं तनिक्कटङ्ङियतुकालं ४४
वसिष्ठन्तन्नेप्पुरोहितनाय् वरिक्कयाल्
सुखिच्चु राज्यं वाणु पलनाळ् संवरणन् । ४५
वसिष्ठमुनियुटे वरिष्ठगुणमेल्लाम्
प्रकृष्टमेन्नतोळिञ्ञिनिक्कु पऱयामो । ४६

साथ बहुत दिन सुख से रहो। तुम्हारा एक भुवनविख्यात पुत्र होगा, जिससे तुम्हारे गुण प्रतिदिन बढ़ते जायेंगे।' पिता ने इस प्रकार अनुग्रह करके भेजा और सुन्दरी (तपती) ने वसिष्ठ की वन्दना करके अपनी अनुमति दी। इस प्रकार सूर्य की पुत्री मनोहारिणी दिव्यकन्या तपती की इच्छा पूरी हुई। ३३-४० मुनि वसिष्ठ विदा होकर कन्या के साथ उस वन में आये, जहाँ राजा रहते थे। और कमललोचना तपती को उन्होंने चन्द्रवंश के संवरण को दे दिया। और वह मदनरस (श्रृंगार) के प्रभाव में आकर तपती के साथ पूरा एक सौर वर्ष वन में रहे। तत्पश्चात् शत्रुओं का निग्रह करके अपने देश को अपने वश में कर लिया। संवरण ने वसिष्ठजी को अपना पुरोहित बनाया और बहुत दिन तक सुख से अपने राज्य का परिपालन किया। मुनि वसिष्ठ के सभी भले गुण सर्वोत्कृष्ट ही थे, इससे अधिक मैं क्या कहूँ ? ४१-४६

वासिष्ठं उपाख्यानं

वासवि चोदिच्चितु गन्धर्व्वन्तन्नोटप्पोळ्
वासिष्ठमुपाख्यानं केळ्क्कणमिनिक्कें्ङ्किल् । १
विश्वसृक्तनयनु विश्वामित्रनु तम्मिल्
विश्वान्तकारणमां वैरमुण्टावान् मूलं । २
निश्शेषं परयेणमेंन्तु चोंन्नतु केट्टु
विश्वैकधनुर्द्धरन्तन्नोटु चोंन्नानवन् । ३
ऒंङ्किलो कन्याकुब्जनाकिय नृपश्रेष्ठन्
मंगलशीलन् गाथियेंन्नु पेरुटयवन् । ४
तन्नुटॆ पुत्रनाय मन्नवन् विश्वामित्र-
नुन्नतनोंरुदिनं मृगयाविवशनाय्- ५
च्चेंन्नितु पटयोटुं वसिष्ठाश्रमत्तिङ्क-
लन्तु सल्क्कारंचेय्तु नृपनॆ मुनिश्रेष्ठन् । ६
अमरावतिपोलॆ चमञ्ञितटवियु-
ममृतोपममाय भोज्यपेयादिकळुं । ७
नन्दितनाय नृपन् विश्वामित्रनुमप्पोळ्
नन्दिनितन्नॆ मम नल्केणमेंन्तु चोंन्नान् । ८

वसिष्ठ का उपाख्यान

अर्जुन ने गन्धर्व से कहा—"मैं वसिष्ठ की कथा सुनना चाहता हूँ। ब्रह्मा का पुत्र (वसिष्ठ) और विश्वामित्र में सारे जगत् का अन्त करनेवाला वैर कैसे हुआ, यह बतलाइए।" यह सुनकर (गन्धर्व ने) विश्व के सबसे श्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन से कहा—"कन्याकुब्ज (कान्यकुब्ज) देश का एक श्रेष्ठ राजा था, उस मंगलशील का नाम गाधि (गाधि) था। उनके उत्तम पुत्र राजा विश्वामित्र एक दिन शिकार खेलने की इच्छा के वश में आकर अपनी सेना के साथ वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे। मुनिवर ने वन में राजा का बहुत सत्कार किया। तब वह वन अमरावती के समान हो गया और वहाँ खाने-पीने के सब पदार्थ अमृत के तुल्य थे। उस समय राजा विश्वामित्र बहुत प्रसन्न होकर बोले—"इस नन्दिनी (कामधेनु) को आप मुझे दे दीजिए। सभी रत्न राजा ही के पास रहने चाहिए, तापस जनों के लिए तो केवल पूजा के साधन चाहिए।" (वसिष्ठ ने उत्तर दिया)—इसमें क्या संदेह है ? आपको कहने की आवश्यकता नहीं। यहाँ तो इनकार करनेवाला कोई नहीं है।" १-१० जब राजा के मन्दमति नौकरों

राजाविनत्ते वेण्टू रत्नभूतङ्ङळॆल्लां
पूजासाधनङ्ङळे तापसन्मार्क्कु वेण्टू । ९
ऎन्तु संशयमतु पऱयेणमो भवान्
चिन्तिच्चालरुतॆन्नु चॊल्वानिल्लारुमिप्पोळ् । १०
नन्दिनितन्नॆयुटन् बन्धिच्चु कॊण्टुपोवान्
मन्दप्रज्ञन्मार् नृपभृत्यन्मार् तुटङ्ङुन्पोळ् । ११
नन्दिनियुटॆयवयवङ्ङळ्तोऱुं निन्नु
नन्दनन्माराय् पलवंशङ्ङळुण्टायवन्नु । १२
वल्लवन्मारुं शबरन्मारुं शकन्मारुं
वल्लभमेऱुं यवनन्मारुं किरातन्मार् । १३
सिंहळन्मारुं द्रमिळन्मारुं पुण्ड्रन्मारुं
सिंहविक्रमबलवान्मारां म्लेच्छन्मारुं । १४
कर्ब्बुरप्रवरन्मारोटु तुल्यन्माराय
बर्ब्बरन्मारुं नल्ल दुर्द्दरन्मारुमॆल्लां । १५
अवरुं विश्वामित्रन्तन्नुटॆ पटयुमा-
यवनि नटुङ्ङुमाऱुण्टाय युद्धत्तिङ्कल् । १६
मून्नुयोजनवऴि पाञ्ञितु नृपसैन्यं
पोन्नु नन्दिनि मुनितन्नुटॆ मुन्पिल् वन्नु । १७
पृथ्वीशन् विश्वामित्रन् चित्तत्तिल् निरूपिच्चान्
क्षत्रियबलमतिक्षुद्रमॆन्नतु नूनं । १८
ब्राह्मणतेजोबलं बलमॆन्नुऱच्चवन्
तान् मॆल्लॆत्तपस्सिनु कॊप्पिट्टानतुकालं । १९

ने नन्दिनी को बाँधकर ले जाने की तैयारी की, तब नन्दिनी के एक-एक अङ्ग से उसके सन्तान के रूप में अनेक जातियों के मनुष्य पैदा हुए—पल्लव, यवन, शक, अधिक वल्लभवाले यवन, किरात, सिंहल, द्रमिळ, (द्रविड़), पुण्ड्र सिंह की शक्ति और शौर्यवाले म्लेच्छ, कर्बुर प्रवरों (राक्षस-प्रवरों) के तुल्य बर्बर अच्छे-अच्छे दुर्द्दर, ये सब विश्वामित्र की सेना के साथ ऐसे लड़े कि पृथिवी काँपने लगी। राजा की सेना तीन योजन तक भागी। अन्त में नन्दिनी मुनि के सामने आकर खड़ी हुई। राजा विश्वामित्र ने अपने मन में निश्चय किया कि क्षत्रिय का बल अत्यन्त क्षुद्र है, ब्रह्मतेज का बल ही बल है। अतएव वे धीरे-धीरे तप करने की तैयारियाँ करने लगे। ११-१९

कल्माषपादचरितं

मार्त्ताण्डकुलजातन् कल्माषपादनेन्न
धात्रीशन् नायाट्टिनाय् पोयिट्टुवरुन्नेरं । १
अंतिर्त्तुचेन्नु वसिष्ठात्मजन् शक्तिमुनि
मदत्तोटुर्व्वीशनु नेर्व्वऴि चोन्नानल्लो । २
नीङ्ङुक वऴियिल्निन्नेन्नितु नृपश्रेष्ठन्
नीङ्ङु नी वऴि नमुक्कॆन्नितु मुनिश्रेष्ठन् । ३
मार्ग्गं ब्राह्मणन्नु नल्केणं भूपालादिकळ्
मार्ग्गमिङ्ङने सनातनमॆन्नतुनेरं । ४
कुतिरच्चम्मट्टिकॊण्टटिच्चान् मुनितन्ने
क्षितिपालकन्तन्नेश्शपिच्चान् वसिष्ठनु । ५
राजधर्म्मत्ते नीक्कि राक्षसधर्म्मं निन्ना-
लाचरिक्कप्पॆट्टतुकारणमिन्नेमुतल् । ६
राक्षसनाय् पोक नीयॆन्नतु केट्टनेरं
मोक्षत्ते नृपतियु याचिच्चोरनन्तरं । ७
विश्वामित्रोपायत्ताल् किङ्करनाय रक्ष-
स्सप्पोळ् चेन्नकंपुक्कु भूपतिमनस्सिङ्कल् । ८
अङ्ङने वाऴुंकालमॊरुनाळॊरु मुनि
तिङ्ङीटुं पैदाहत्ताल् भूपतियोटु चोन्नान् । ९

कल्माषपाद का चरित

सूर्य वंश के राजा कल्माषपाद जब शिकार खेलकर लौट रहे थे, तब सामने से वसिष्ठ के पुत्र मुनि शक्ति सीधे आ रहे थे। राजा गर्व के के साथ बोले—"मेरा रास्ता सामने सीधे पड़ता है।" (और) नृपश्रेष्ठ ने (पुनः) कहा—"रास्ते से हटो।" मुनिश्रेष्ठ ने कहा—"तुम हटो, रास्ता मेरा है। राजा आदियों को चाहिए कि वे ब्राह्मण को रास्ता दें, यही सनातन रीति है।" यह सुनकर राजा ने घोड़े के कोड़े से मुनि को मारा और वसिष्ठ ने राजा (कलमाषपाद) को शाप दिया—"चूँकि तुमने राजधर्म को त्यागकर राक्षस-धर्म का आश्रय लिया, इसलिए आज से तुम राक्षस हो जाओ।" ऐसा शाप सुनकर राजा ने शाप से मोक्ष की याचना की। उस समय विश्वामित्र के उपाय से एक आज्ञाकारी राक्षस ने भूपति के मन में प्रवेश किया। १-८ इस स्थिति में एक दिन एक मुनि ने, जो भूख और

नल्ल मांसवुं चोरुं नल्केणमेन्निक्कोन्नु
चौल्लिनान् नृपतियुं रण्टुनाळिक पार्प्पान् । १०
भूपालनन्तःपुरंपुक्किरुन्नोरुशेषं
तापसन् परञ्ञतु मरन्नु पोयी बलाल् । ११
रात्रियिलोर्त्तनेरं पाचकनोटु चौन्नान्
पार्त्तिरिक्कुन्नितोरु तापसन् भुजिप्पानाय् । १२
व्यञ्जनमांसादियाल् मृष्टमायूट्टेणं नी-
यञ्जसा बहुमानिच्चादरवोटुमेन्नान् । १३
करियुं चोरुमेल्लामुण्टाक्कीट्टवन् चेन्नु
नरपालकनोटु मांसमिल्लेन्नु चौन्नान् । १४
मनुष्यमांसंतन्ने कोटुक्केन्नुरचेय्तु
मनुष्येन्द्रनुमप्पोळ् सूदनुमतुचेय्तान् । १५
अन्नेरमभोज्यमायुळ्ळोरु नरमांसं
नन्नायि विळम्पियतेन्नुरचेय्तु मुनि । १६
मानवन्मारेप्पिटिच्चन्पोटु भक्षिच्चु नी
कानने चरिक्कोरु राक्षसनायिट्टेन्नु । १७
मुन्नमे शक्तिमुनितन्नुटे शापंतन्ने
नन्नायिप्पूरिप्पिच्चानेन्नते परयेण्टु । १८
शक्तिमुख्यन्माराय नूरुपेर् वसिष्ठन्तन्-
पुत्रन्मारवर्कळेयोक्कवे तिन्नानवन् । १९

प्यास से बहुत पीड़ित थे, राजा से कहा—'मुझे अच्छा मांस और भात खिलाइए'। तब राजा ने दो घड़ी ठहरने के लिए कहा और अपने अन्तःपुर चला गया तथा मुनि की याचना बिलकुल भूल गया। जब रात को स्मरण आया, तब राजा ने रसोइये से कहा—"एक तापस भोजन की प्रतीक्षा में बैठा हुआ है, सब्जी और मांस-सहित पर्याप्त भोजन जल्दी तैयार करके बहुत आदर-मान के साथ उसको खिलाओ।" भात और भाजी तैयार करके रसोइया राजा के पास गया और बोला कि मांस नहीं है। तब राजा ने कहा—'नरमांस दे दो'। और रसोइये ने वैसा ही किया। चूँकि खाने के अयोग्य नरमांस परोसा गया, इसलिए मुनि ने राजा को शाप दिया—"तुम मनुष्यों को पकड़कर प्रीति से खानेवाले और वन में विचरनेवाले राक्षस हो जाओ।" ९-१७ इस प्रकार शक्ति मुनि ने जो पहले ही शाप दिया था, उसी को अब फिर इस ब्राह्मण ने दृढ़ कर

पुत्रशोकत्ताल् महामेरुविन्मुकळेरि
मुक्ति वन्नीटुवतिनुरुण्टु वसिष्ठनुं । २०
अग्नियिल् चाटिप्पिन्नेस्समुद्रंतन्निल्च्चाटि
विघ्नं वन्नील देहदेहिकळ्क्कोन्निनालुं । २१
पाशत्ताल् कैकाल्केट्टिप्पुळयिल् चाटीतप्पोळ्
पाशत्तेच्छेदिक्कयालायितु विपाशयुं । २२
पिन्नेयुं हैमवतियाकिय नदितन्निल्
चेन्नु चाटिनानवळ् नूरु कैवळियायाळ् । २३
अतिनाल् शतद्रुवेन्नवळ्क्कु पेरुण्टायि
मृति वन्नील जलं नीङ्ङिप्पोयतुमूलं । २४
ओरुजातियुं वरा मरणमेन्नु कण्टु
सरसीरुहभवनन्दनन् वसिष्ठनुं । २५
आश्रमत्तिङ्कल् चेन्नुपुक्कप्पोळदृश्यन्ति-
याश्वसिप्पिच्चु गर्भपात्रस्थनाय बालन् । २६
तन्नुटे वेदनादं केट्टाशु वसिष्ठनु-
मेन्नुटे शक्तितन्टे नादमेन्नतुपोले । २७
केट्टतेन्तोरु वेदद्ध्वनियेन्नतुनेरं
वाट्टमिल्लाते शक्तिपत्नियुमुरचेय्ताळ् । २८

दिया। राक्षस बने राजा ने वसिष्ठ के शक्ति आदि सौ पुत्रों को पहले ही खा लिया। पुत्र-शोक के कारण महामेरु पर्वत पर चढ़कर वसिष्ठ मुक्ति प्राप्त करने के लिए वहाँ से गिरे। तदनन्तर अग्नि में कूद पड़े, और समुद्र में डूबे, पर इन उपायों से न उनके शरीर की, न उनकी आत्मा की हानि हुई। तत्पश्चात् वे हाथ-पैर बाँधकर नदी में कूद पड़े, पर रस्सी टूट गयी और वे मुक्त हो गये। फिर हैमवती नदी में कूद पड़े; वह नदी सौ दिशाओं में बिखर गयी। इसलिए उसका नाम हुआ शतद्रु (सतलज)। वसिष्ठ तो नहीं मरे, क्योंकि जल हट गया था। १८-२४ किसी भी प्रकार मृत्यु नहीं होती, यह देखकर ब्रह्मा के पुत्र वसिष्ठ अपने आश्रम गये, जहाँ अदृश्यन्ती[1] ने उनको आश्वासन दिया। उसके गर्भ में स्थित बालक का वेदपाठ सुनकर वसिष्ठ ने कहा--"मेरे पुत्र शक्ति की वेदध्वनि के समान यह वेदध्वनि कहाँ से निकल रही है?" तब बिना हिचक के शक्ति की पत्नी ने उत्तर दिया--"जब मेरे पति का स्वर्गवास हुआ तो मेरे गर्भ हो

१ अदृश्यन्ती वसिष्ठपुत्र शक्ति की पत्नी थी।

गर्भमुण्टिनिक्कॆन्टॆ भर्त्तावु मरिक्कुन्पो-
ळर्भकनवनुटॆ नादमॆन्नतेवरू । २९
ऒन्नुकेट्टवळुमाय् पिन्नॆयुं पुऱप्पॆट्टु
चॆन्नप्पोळ् वनभुवि कल्माषपादन् कण्टु । ३०
भक्षिप्पानटुत्तॊरु रक्षस्सिन् वेगं कण्टु
दक्षनां विधिपुत्रन् तळिच्चुजलं कॊण्टे । ३१
शापमोक्षवुं वन्नु राजावुं तॆळिञ्ञितु
तापवुमकन्नितु पुरवासिकळ्क्कॆल्लां । ३२
कल्माषपादन्तन्नॆक्कॊण्टुपोययोद्धययिल्
कल्मषमकन्नु वाळिच्चितु वसिष्ठनुं । ३३
भूपतिपत्नियायि वाळुन्न सुदेष्णयिल्
भूपरित्राणार्त्थमाय् गर्भवुमुल्पादिच्चान् । ३४
द्वादशसंवत्सरं चॆन्निट्टुं पॆऱाय्कयाल्
मातावु सुदेष्णयुमुदरमश्मत्तिनाल् ३५
भेदिच्चनेरमॊरु बालकनुण्टाय्वन्नु ।
मेदिनीपतियवनश्मकनायतॆटो । ३६
शक्तितन् पत्नियायोरदृश्यन्तियुं पॆऱा-
ळुत्तमनाय पराशरनां मुनितन्नॆ । ३७
तातन्टॆ मरणत्तिन् हेतुक्कळ् केट्टिट्टवन्
क्रोधत्ताल् सर्व्वलोकं दहिप्पानॊरुन्पॆट्टान् । ३८

गया था । यह उसी बालक की वेदध्वनि है, और कुछ नहीं हो सकता है ।" यह सुनकर उसके साथ फिर बाहर निकले । वन पहुँचने पर वहाँ उनको कल्माषपाद ने देखा । पकड़कर खाने के लिए आनेवाले राक्षस की तेजी देखकर कुशल वसिष्ठ ने उस पर जल छिड़क दिया । तब शाप से मुक्ति हुई, राजा भी प्रसन्न हुए और नगर के निवासियों का दुःख समाप्त हुआ । २५-३२ तदनन्तर वसिष्ठ कल्माषपाद को अयोध्या ले गये और पाप दूर करके उनसे राज कराया । राजा की पत्नी सुदेष्णा में भूमि की रक्षा के लिए गर्भाधान भी कराया । बारह बरस बीतने पर (भी) प्रसव न होने के कारण माता सुदेष्णा ने अपने पेट को पत्थर (अश्म) से पीटा, जिससे एक बालक पैदा हुआ, वही राजा अश्मक के नाम से प्रसिद्ध हुआ । शक्ति की पत्नी अदृश्यन्ती ने श्रेष्ठ पराशर ऋषि को जन्म दिया । अपने पिता की मृत्यु का कारण सुनकर वह क्रोध में आकर सारे जगत् को

अतु कण्टोरु पितामहनां वसिष्ठनु
मतिमानाय निज पौत्रनोटरुळ्चेय्तु । ३९

और्व्वोल्भववुं शान्तिमहत्ववुं

केळ्क्क नी कृतवीर्यनाकिय महीपति
साक्षालिन्द्रनेप्पोले चेय्तितु पलयागं । १
अन्नवनुपाध्यायन् भार्ग्गवनवन्तनि-
क्कन्यूनधनराशि दक्षिणचेय्तु नृपन् । २
पिन्नेप्पोय् सुरलोकं प्रापिच्चनेरमवन्-
तन्नुटे कुलत्तिङ्ङ्कलुण्टाय भूपालन्मार् ३
अर्त्थलोलुपन्मारायुच्चमञ्ञारतुमूलं
चित्तशान्तियुंवेच्चु भार्ग्गवन्मारोटेल्लां । ४
तुटङ्ङि विरोधमेन्नरिञ्ञु मऱयव-
रोटुङ्ङातोरु धनं कुळिच्चुवच्चारल्लो । ५
अवरुं द्विजालयं कुळिच्चु निधियेटु-
त्तवनीदेवन्मारे वधिच्चार् मटियाते । ६
स्त्रीबालवृद्धावधि वधिच्चारतुकालं
भूपालभयंकोण्टु भूदेवस्त्रीकळेल्लां । ७
पर्व्वतगुहकळिलोळिच्चारतिलोरु-
दिव्यस्त्री तनिक्कुण्टु गर्भमेन्नरिकयाल् । ८

जला देने को तैयार हो गये। यह देखकर पितामह वसिष्ठ ने अपने बुद्धिशाली पौत्र से कहा— ३३-३९

और्व का उद्भव और शान्ति का महत्त्व

"सुनो राजा कृतवीर्य ने साक्षात् इन्द्र के समान अनेक यज्ञ किये। उस अवसर पर उनके उपाध्याय भार्गव थे, जिनको राजा ने विपुल धन-राशि दक्षिणा के रूप में दी। तत्पश्चात् राजा को स्वर्ग प्राप्त हुआ। उनके वंश में जो भूपाल हुए, वे अर्थलोलुप निकले। अतएव उन्होंने भार्गवों के प्रति अपनी चित्तशान्ति को त्याग दिया। यह जानकर कि अब विरोध प्रारम्भ हो गया है, ब्राह्मणों ने बहुत धन गाड़ दिया। राजाओं ने ब्राह्मणों के घर भी खोदकर धन निकाला और बिना हिचक के उनका वध किया। स्त्री, बाल, और वृद्धों तक की हत्या की। तब राजाओं के डर

नारियुमूरुविङ्कल् मरच्चाळ् तन्टे गर्भं
नूरु वत्सरं तिकञ्ञीटिनकालत्तिङ्कल् । ९
क्रूरन्माराय नृपवीरन्मार् कोल्वान् चेन्ना-
रूरुवुं पिळर्न्नुटन् पिरन्नु कुमारनुं । १०
अक्कुमारन्टे तेजस्सतुकण्टवक्कॅल्ला-
मक्षिकळ् पॊट्टित्तॆरिच्चन्धन्मारायारल्लो । ११
ञङ्ङळ् चॆय्तपराधमॊक्कवे पॊरुत्तु नी
ञङ्ङळ्क्कु कण्णुण्टाक्किक्कत्तरिकॆन्नवर्कळुं १२
काल्क्कल् वीणतुकण्टु नल्किनाननुग्रहं
भोष्कल्ल कण्णुकळुमुण्टायि नृपन्माक्कुं । १३
उग्रमां तपस्सिनु कोप्पिट्टानौर्व्वन्तानुं
निग्रहिच्चीटुं लोकमॆल्लामॆन्नतुं तोन्नि । १४
भार्गवन्मारामौर्व्वन्तन्नुटॆ पितृक्कळ् व-
न्नाख्यानं चॆय्तारात्मज्ञानमायुळ्ळतॆल्लां । १५
कर्म्मत्तिन्फलं जीवात्मावनुभविच्चीटुं
सम्मोहमुण्टां कामक्रोधङ्ङळ्कॊण्टु मेन्मेल् । १६
आरुमे कॊल्लुकयिल्लारॆयुमोक्कुन्नाकिल्
नेरोटे निरूपिक्किलॊन्नॊळिञ्ञिल्ला वरं । १७
शान्तिये नल्लतुळ्ळु नमुक्कु विशेषिच्चु
भ्रान्तियॆक्कळञ्ञु नी शमत्तॆ प्रापिच्चालुं । १८

से ब्राह्मणस्त्रियाँ पर्वतों की गुहाओं में जाकर छिप गयीं। उनमें से एक दिव्य स्त्री गर्भिणी थी। १-८ उसने अपने गर्भ को अपनी जंघा में छिपा दिया। एक सौ बरस के बाद जब क्रूर भूपाल उसे मारने गये तब बालक जंघा को फाड़कर पैदा हुआ। उसका तीव्र तेज देखकर राजाओं की आँखें फूट गयीं और वे सब अन्धे हो गये। तब उन्होंने उसके पैरों पड़कर कहा--"हमारे सब अपराध क्षमा करके हमको फिर आँखें दे दीजिए"। बालक ने उन पर अनुग्रह किया। इसे झूठ न समझो, उन राजाओं की आँखें फिर ठीक हो गयीं। और्व ने उग्र तप करने की तैयारी की। ऐसा प्रतीत हुआ कि वह जगत् का निग्रह कर देगा। और्व के भार्गव पितृगण आये और उन्होंने उसको आत्मज्ञान का उपदेश दिया—"जीवात्मा तो कर्म-फल का भोग करेगा ही और काम, क्रोध आदि से उत्तरोत्तर मोह ही होगा। सोचो, कोई किसी को नहीं मार सकता है। विचार किया जाय तो ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है,

और्व्वनुमतुकेट्टु पितृक्कळोटु चोन्नान्
दुर्व्वारमायुळ्ळमल्क्रोधत्तेयेन्तुचेय्वू ? १९
लोकोपकारार्त्थमायब्धियिलाक्कीटुक
सागरं भूमण्डलमाक्रमियातेकोळ्वान् । २०
समत्वं पितृक्कळ् चोन्नतुकेट्टौर्व्वन्तानुं
समुद्रंतन्निलाक्कित्तन्नुटे कोपाग्नियें । २१
शमत्तें प्रापिच्चुग्रतपस्सुं कृपयाले
सर्म्प्पिच्चात्मज्ञानपरनायतु कालं । २२
समस्तलोकङ्ङळुमाश्वसिक्कयुं चेय्तु
रमिच्चीटुक परमात्मनि कुमारा नी । २३
तापसन्मारां नमुक्कोक्कयुं क्षमिक्केणं
कोपमाकुन्नतोट्टुमाकातेन्नरिञ्ञालुं । २४
एन्नतु केट्टु पराशरनां कुमारनुं
पिन्ने राक्षससत्रं तुटङ्ङियतिनाले । २५
पेरिके रक्षोगणं मरिच्चोरनन्तरं
निर्ऋतिनियोगत्ताल् पुलस्त्यनेळुन्नळ्ळि । २६
सामभेदोक्तिकळ्कोण्टुपदेशिच्चीटिनान्
तामसशीलमल्लो वैरानुबन्धं नृणां । २७

जिसकी अपेक्षा शान्ति उत्तम न हो, विशेषतः हम लोगों के लिए। इसलिए भ्रम का त्याग करो और शम प्राप्त करो।" ९-१८ यह सुनकर और्व ने अपने पितरों से कहा—"यह जो मेरा असह्य क्रोध है, उसे मैं क्या करूँ ?" तब पितरों ने कहा—"लोकोपकार के लिए उसे समुद्र में फेंक दो ताकि समुद्र भूमण्डल का आक्रमण (उल्लंघन) न करे।" पितरों के द्वारा समत्व (शान्ति) का उपदेश सुनकर और्व ने अपने कोपाग्नि को समुद्र में त्याग दिया। और शान्ति प्राप्त करके और दया के कारण अपने तीव्र तप को अलग रखकर आत्मज्ञान में तत्पर हो गये। सभी लोगों को आश्वासन प्राप्त हुआ। हे कुमार ! इसी प्रकार तुम परमात्मा ही में तत्पर रहो। हम तापसों के लिए क्षमा करना ही उचित है तथा क्रोध बिलकुल ही अनुचित है।" यह सब सुनने के बाद भी कुमार पराशर ने राक्षस-सत्र[1] प्रारम्भ किया। बहुत राक्षसों के मरने के बाद निर्ऋति की आज्ञा से पुलस्त्य पधारे। उन्होंने साम और भेद की बातों द्वारा उपदेश दिया—"मनुष्यों का परस्पर

---

१ राक्षसों को मारने की योजनावाला यज्ञ।

कामक्रोधादिकळे त्यजिच्चीटुकवेणं
प्रेमद्वेषादिकळुमावोळं वेण्टीलल्लो । २८
मल्क्कुलजातन्मारायुळ्ळोरु जातियल्लो
रक्षसांगणमॆन्न वात्सल्यमिल्लॆन्निल्ल । २९
नल्लतिल्लहिंसय्क्कु तुल्यमायॊन्नुमॆन्नु
चॊल्लुवान् वन्नेनिनिस्समर्प्पिक्कणं सत्रं । ३०
पुलस्त्योक्तिकळ्केट्टु शक्तिपुत्रनुमितु
पलर्क्कुं मतमॆङ्किलङ्ङनॆतन्नॆयॆन्नान् । ३१
अग्नियॆ हिमवान्टॆ ताळ्वरतङ्कलाक्कि-
यग्निमान् पराशरनतिनाल् वावुतोरुं । ३२
दहिच्चीटुन्नु वनमिन्नुमॆन्नरिञ्ञालु
सहिच्चीटेणं कोपं तापसन्मारायवन्ना- ३३
लॆन्नॆल्लां गन्धर्व्वेशन् चॊन्नतु केट्टु पार्त्थन्
पिन्नॆयुमवनोटु चिरिच्चु चोद्यं चॆय्तु । ३४
निर्म्मलनाय मुनि वसिष्ठनॆन्तुमूलं
कल्माषपादपत्नितन्नॆ प्रापिच्चतॆटो । ३५
चॊल्लुवनतुमॆङ्किल् केट्टालुं धनञ्जय !
चॊल्लॆळुं सूर्यान्वयजातनां नृपवीरन् । ३६
कल्माषपादन् शापग्रस्तनाय् पोकुन्नेरं
तन्मनोवल्लभयायुळ्ळोरु सुदेष्णयुं । ३७

वैर बनाये रखना उनके तामसशील का लक्षण है। १९-२७ काम, क्रोध आदि दोषों को त्याग देना चाहिए। राग, द्वेष आदि को जितना हो सके, उतना त्याग देना चाहिए। वह राक्षसजाति मेरे ही वंश में पैदा हुई है, उसके प्रति मेरा वात्सल्य नहीं है, यह मैं न कहूँगा। अहिंसा के समान कुछ भी नहीं है, यह मैं कहने आया हूँ। अब यह सत्र समाप्त होना चाहिए। पुलस्त्य की बातें सुनकर शक्ति-पुत्र (पराशर) ने कहा—"अगर बहुतों का यही मत है तो मैं उसे स्वीकार करता हूँ।" तब पराशर ने अग्नि को हिमालय के समतल प्रदेश में रख दिया। यही कारण है कि हर एक पञ्चदशी को वही अग्नि आज भी बन को जलाता है। तापस होकर कोप का नियन्त्रण करना चाहिए।" गन्धर्व की ये सब बातें सुनकर अर्जुन ने हँसकर फिर उससे पूछा—"निर्मल मुनि वसिष्ठ का कल्माषपाद की पत्नी से कैसे संयोग हुआ?" २८-३५ "वह भी कहूँगा, सुन लो हे अर्जुन !

पिन्नाले खेदंपूण्टु कानने नटक्कुन्पोऴ्
नग्नमाय् क्रीडीक्कुन्न भूसुरमिथुनत्तिल् । ३८
पुरुषन्तन्नॆक्कॊन्नु तिन्नतु कण्टु पत्नि
परितापत्ताल् शपिच्चीटिनाऴ् नरेन्द्रनॆ । ३९
नीयुं निन् पत्नितन्नॆ तॊट्टुकिल् मरिक्कॆन्नान् ।
तीयिल् पाञ्ञुटन् मरिच्चीटिनाळवळ्तानुं । ४०
अप्पॊऴे सूर्यवंशं मुटियुमॆन्नुकण्टो-
रुल्पलोत्भवात्मजनुल्पादिच्चतुमॆटो । ४१
तन्नुटॆ पुत्रन्मारॆक्कॊल्लिच्च विश्वामित्रन्-
तन्नोटुं कॊन्नुतिन्न कल्माषपादनोटुं । ४२
उण्टायीलॊरु कोपं वसिष्ठनत्रयुम-
ल्लुण्टायितवर्कळिल् कारुण्यमरिञ्ञालुं । ४३
ऎन्नु मामुनितन्नॆग्गुरुवाक्किय मूलं
वन्नितु संवरणनभ्युदयङ्ङळॆल्लां । ४४

धौम्योपाध्यायलब्धि

अर्ज्जुनन् गन्धर्व्वनोटप्पॊऴे चोद्यं चॆय्ता-
निज्जनत्तिनुतक्कॊरुत्तमनुपाध्यायन् । १

विख्यात सूर्यवंश में उत्पन्न राजवर कल्माषपाद जब शापग्रस्त होकर घूम रहा था और उसकी प्रियतमा सुदेष्णा भी दुःखित होकर उसके पीछे चल रही थी तब नंगे होकर रतिक्रीड़ा करते हुए एक ब्राह्मण मिथुन में से पुरुष (ब्राह्मण) को मारकर खाते हुए देखकर उसकी पत्नी ने दुःख के कारण राजा को शाप दिया—(जब तुम) 'अपनी पत्नी का स्पर्श करोगे तो तुम्हारी भी मृत्यु हो'। तदनन्तर वह स्वयं आग में कूद पड़ी। इस शाप से सूर्यवंश की समाप्ति हो जाने के डर से ब्रह्मा के पुत्र (वसिष्ठ) ने राजा की रानी द्वारा सन्तान पैदा किया। जिसने उनके (वसिष्ठ के) पुत्रों को मरवाया, उस विश्वामित्र के प्रति और जिसने मारकर खाया, उस कल्माषपाद के प्रति वसिष्ठ को कोप नहीं हुआ, (बल्कि) उलटे ही उनके प्रति दया आयी। ऐसे महामुनि को अपने गुरु बनाने के कारण संवरण का बड़ा अभ्युदय हुआ। ३६-४४

उपाध्याय धौम्य की प्राप्ति

तब अर्जुन ने गन्धर्व से पूछा—"हम लोगों के लिए योग्य उपाध्याय

आराकनल्लू चॊल्लितॆन्नतु केट्टु चॊन्ना-
नारायक्वेण्ट निङ्ङळ् पारमॆन्नरिञ्ञालुं । २
उत्क्कचकाख्यतीर्थत्तिङ्कलुण्टिरिक्कुन्न-
तुत्क्कटतपोबलमुळ्ळ मामुनि धौम्यन् । ३
देवलसहोदरन् देवाचार्यनु समन्
सेविच्चीटेणं निङ्ङळवनॆयॆन्नालवन् ४
साधिप्पिच्चीटुमल्लो निङ्ङळ्क्कु वेण्टतॆल्लां
खेदिक्कवेण्ट पोकॆन्नवनुमुरचॆय्तान् । ५
अविटॆत्तम्मिल् पलकथयुं परञ्ञुपो-
यविटॆक्कण्टुकिट्टि धौम्यनां मुनितन्नॆ । ६
श्रीपादङ्ङळिल्वीणु नमस्कारवुं चॆय्तु
तापसेन्द्रनॆक्कूप्पिनिन्नु पाण्डवन्मारुं । ७
स्वागतमॆन्नु चॊल्लि कुशलप्रश्नङ्ङळुं
वेगेन चॆय्तु मुदा सल्क्करिच्चितुनन्नाय् । ८
चन्द्रवंशोत्भूतनां पाण्डुभूपालेन्द्रनु
पाण्डवन्माराय् ञङ्ङळैवरुमुण्टाय्वन्नु । ९
धार्त्तराष्ट्रन्मारुटॆ दुर्व्यापारङ्ङळ्कॊण्टु
धात्रियिल् वेषच्छन्नन्माराय् सञ्चरिक्कुन्नु । १०
पाञ्चालपुरं पुक्कु कल्याणं काण्मानुळ्ळिल्
वाञ्छयुमुण्टु पारं कारुण्यवारान्निधे ! ११

कौन हो सकता है ? कृपया बतलाइए !" यह सुनकर गन्धर्व ने कहा--"समझ लीजिए कि आपको ढूँढ़ने की आवश्यकता ही नहीं। उत्कचक (उत्कोचक) नामक तीर्थ में उत्कट तपोबल-वाले महामुनि धौम्य रहते हैं। वे देवल के भाई हैं और बृहस्पति के तुल्य हैं। आप लोग उनकी सेवा कीजिए। तब वे आपकी अभिलाषाओं को सिद्ध कर देंगे। खेद न कीजिए, उनके पास जाइए।" तब आपस में तरह-तरह की कथाएँ कहते हुए पाण्डव गये और वहाँ उनको धौम्य मिले। पाडण्व उनके चरणों में पड़े और नमस्कार करके उनके सामने हाथ जोड़े खड़े हो गये। धौम्य ने उनका स्वागत करके कुशल पूछकर बड़े हर्ष से उनका सत्कार किया। १-८ चन्द्रवंश के राजा पाण्डु के हम पाँचों पुत्र हैं और पाण्डव कहलाते हैं। धृतराष्ट्र के पुत्रों के कुकर्मों के कारण हम पृथिवी में गुप्त रूप में सञ्चार कर रहे है। हे कारुण्यसागर ! पाञ्चालनगर जाकर विवाह देखने की हमारे

निन्तिरुवटियुटे शिष्यर्कळल्लो ञङ्ङळ्
सन्ततं परिपालिच्चीटणं तपोनिधे ! १२
मङ्गलं वरुत्तुवान् निन्तिरुवटितन्ने
ञङ्ङळ्क्कु पुरोहितनायिरुन्नरुळेणं । १३
अन्नेरं मुनीन्द्रनुमुळ्ळिलेक्कण्णुकोण्टु
नन्नाय्क्कण्टितु महाभारतोदन्तमेल्लां । १४
अङ्ङनेतन्नेयोरु संशयमतिनिल्ल
निङ्ङळ्क्कु पुरोहितन् ञान्तन्ने नटन्नालुं । १५

पाञ्चालीस्वयंवरं

धौम्यनेप्पुरोहितनाय् वरिच्चवर्कळुं
ब्राह्मणरोटुचेर्न्नु तापसवरनोटुं । १
दक्षिणपाञ्चालमां नगरमकंपुक्कु
रक्षिप्पान् माताविनेक्कुंभकारालयत्तिल् । २
शिक्षिच्चु परञ्ञाक्किग्गोपुरमकंपुक्का-
रक्षणं वन्नु वन्नु निरञ्ञु राजाक्कन्मार् । ३
वेण्माटं तोरुमेरेस्सम्मानिच्चितु धृष्ट-
द्युम्ननुं नृपन्मारेयिरुत्ति यथायोग्यं । ४

मन में बड़ी अभिलाषा है । हम लोग तो आप के शिष्य हैं, हे तपोनिधि ! इसलिए आप निरन्तर हमारा परिपलान करें । हमारे हित के लिए आप ही हमारे पुरोहित बनकर हमारा शासन कीजिए । तब मुनिवर ने अपनी भीतरी दृष्टि से महाभारत के सभी वृत्तान्त देखे । (और तब बोले) 'वैसा ही होगा, सन्देह नहीं । मैं ही आपका पुरोहित हूँ, आप जा सकते हैं । ९-१५

पाञ्चाली का स्वयंवर

धौम्य को पुरोहित चुनने के बाद पाण्डव उनके और ब्राह्मणों के साथ दक्षिण पाञ्चालनगर पहुँचे, जहाँ उन्होंने माता को एक कुम्हार के घर में रक्षा के लिए अपेक्षि निर्देश देकर ठहराया और फिर गोपुर के अन्दर प्रवेश किया। उस समय आये हुए भूपालों से वह स्थान भर गया । धृष्टद्युम्न ने राजाओं को (उनके लिए नियत) अपने-अपने भवनों में यथायोग्य सत्कार करके बैठाया । एक बड़े धनुषबाण को सजे हुए रंगमंच पर रखवाकर आये हुए

पॆरुत्त विल्लुमन्पुं चमच्च रंगत्तिङ्कल्
वरुत्ति वन्न नृपन्मारॆल्लां केळ्क्कॆक्चॊन्नान् । ५
विल्लितु कॊलयेट्टिब्बाणङ्ङळिवकॊण्टु
चॊल्लिक्कॊण्टॆय्तु यन्त्वं मुरिक्कुन्नवन्तन्टे । ६
वल्लभयल्लो नूनमॆन्तुटॆ भगिनिता-
नल्लातॆ बलं निङ्ङळ् काट्टुकिलप्पोळ्त्तन्नॆ । ७
वल्लाय्मयॆन्नु वरुत्तीटुवनल्लायिकल् ञा-
निल्लातॆयाकवेणमॆन्नुटॆयच्छनाणे । ८
पिन्नॆत्तन्भगिनियोटीवण्णमुरचॆय्तु
निन्नॆक्कामिच्चुवन्न मन्नवन्मारॆक्काण् नी । ९
कुरुराजावायुळ्ळ दुरियोधनन्तानु-
मरिके मरुविन नूरनुजन्मारोटुं । १०
शकुनितानुं पुनरचलन् वृषकनुं
गान्धारराजावुतन्मक्कळॆन्नरिक नी । ११
अश्वत्थामावु भोजन् बृहन्तन् मणिमानुं
दन्डधारनुं सहदेवनुं यज्ञसेनन् । १२
मागधन् मेघसन्धि वीरनां विराटनुं
शंखनुमुत्तरनुमायवन् पुत्रन्मारुं । १३
वसुधाधिपनाकुमभिभूनृपनॆक्काण्
सुमित्रन् सुकुमारन् वृकनुं सत्यधृति । १४

राजाओं के सामने यह घोषणा की—"जो इस धनुष पर डोरी चढ़ाकर इन बाणों को ठीक तरह से लगाकर यन्त्र को तोड़ देगा, मेरी बहन उसी की पत्नी होगी। अगर आप लोग केवल अपना बल दिखलावेंगे तो मैं आपकी पराजय समझूँगा; नहीं तो मेरे पिताजी मुझसे वर्जित हो जायेंगे।" १-८ तदनन्तर धृष्टद्युम्न ने अपनी बहन से इस प्रकार कहा—"इन राजाओं को देखो, जो तुम्हें पाने के लिए यहाँ आये हैं। कुरुओं का राजा दुर्योधन, उसके पास उसके सौ भाई, शकुनि, फिर अचल, वृषक जो, जान लो, गान्धारराजा के पुत्र हैं। अश्वत्थामा, भोज, बृहन्त, मणिमान्, दण्डधार, सहदेव, यज्ञसेन, मागध, मेघसन्धि, वीर विराट, शंख, और उत्तर जो विराट के पुत्र हैं। अभिभू को देखो, जो एक राजा है, सुमित्र, सुकुमार, वृक, सत्यधृति, रोचमान, सूर्यध्वज, चित्रायुध, श्रेणिमान्, अंशुमान्, चेकितान, नील, समुद्रसेन का पुत्र चन्द्रसेन, समर्थ जरासन्ध

रोचमाननुं सूर्यध्वजनुं चित्रायुधन्
श्रेणिमानंशुमानुं चेकिताननुं नीलन् । १५
समुद्रसेनपुत्रनाकिय चन्द्रसेनन्
समर्थन् जरासन्धन्तानुं तन् पुत्रन्मारुं । १६
दण्डनुं सुदण्डनुं पौण्ड्रकवासुदेवन्
ताम्रलिप्तनुं भगदत्तनुं कलिंगनुं । १७
पत्तनाधिपन्तानुं माद्रराजावाय्मेवुं
शल्यरुमरिके काणवन्टे पुत्रन्मारुं । १८
रौरव्यन्तानुं रुग्मांगदनां तनयनु-
मवन्तन्ननुजनुमरिके रुग्मरथन् । १९
भूरियुं भूरिश्रवा शलनुमेन्नु मून्नु
पुत्रन्मारोट्टुंकूटेक्कण्टतु सोमदत्तन् । २०
कांबोजन् सुदक्षिणन् दृढधन्वावुतानुं
कौरवन् बृहल्ब्बलन् शिबियुं सुषेणनुं । २१
शूरनामौशीनरन् सैन्धवन् जयद्रथन्
बृहल्क्षेत्रनुं बृहद्रथनुं बाल्हीकनुं । २२
कितवन् भगीरथन् वीरवानुलूकनुं
कोसलाधिपन् मत्स्यराजनुं श्रुतायुस्सुं । २३
अरिके चित्रांगदनङ्ङेतु शुभांगद-
नंगराजावु कर्ण्णन्तन्मकन् वृषसेनन् । २४
बृहल्कीर्त्तियुं बृहल्ब्बलनुं दुर्ज्जयनुं
बलवान् चेदिराजावाकिय शिशुपालन् । २५

और उसके पुत्र दण्ड, सुदण्ड, पौण्ड्रक वासुदेव, ताम्रलिप्त, भगदत्त, कलिंग देश का राजा, मद्रराज शल्य और उसके पास उसके पुत्रों को देखो । ९-१८ रौरव्य, उसका पुत्र रुग्माङ्गद, उसके पास उसका अनुज रुग्मरथ । भूरि, भूरिश्रवा, शल, इन तीन पुत्रों के साथ सोमदत्त को देखो । काम्बोज, सुदक्षिण, दृढधन्वा, कौरव, बृहद्बल, शिबि, सुषेण । शूर औशीनर, सैन्धव, जयद्रथ, बृहत्क्षेत्र, बृहद्रथ, बाल्हीक । कितव, भगीरथ, वीरवान्, उलूक कोसलाधिप, मत्स्यराजा, श्रुतायु । उसके पास चित्राङ्गद, कुछ दूर पर शुभाङ्गद, अङ्गराज कर्ण और उसका पुत्र वृषसेन । बृहत्कीर्ति बृहद्बल, दुर्जय, शक्तिशाली चेदिराज शिशुपाल जो दमघोष का पुत्र है और जिसके तुल्य कोई भी नहीं है । दक्षिण दिशा के तीन अग्नियों के समान

दमघोषात्मजनिल्लवनोटॊत्तोरारु-
मग्निकळ् मून्नुपोलॆ दक्षिणाशाधीशन्मार् ।
पाण्ड्यनुं केरळनुं चोळनुमट्टुत्तुकाण् २६
वृष्णिकळाय नरवीररॆक्कण्टायो नी ।
कृष्णनालनुदिनं पालितरिवरॆल्लां । २७
शुक्लवर्ण्णवुं नीलवस्त्रवुं धरिच्चति-
शक्तिमानन्ततेजोमयन् कामपालन् । २८
मद्यपानवुं चॆय्तु मत्तनाय् मधुगिरा
चित्तवुमॆतिर्प्पवर्तम्मेयुं पॊटिप्पवन् । २९
वल्लवीवल्लभनां मल्लारि कल्याणात्मा
तुल्यमिल्लात परन्पुरुषन् वासुदेवन् । ३०
सांबनुं चारुदेष्णन् सारणन् गदन्तानु-
मक्रूरन् सत्यकनुं सात्यकि युयुधानन् । ३१
पृथुवुं विपृथुवुं हार्द्दिक्यन् कृतवर्म्मा
कह्वनुं समीकनुं सारिमेजयन्तानुं । ३२
झिल्लियुं दानपति पिंगलकनुं पिन्नॆ
कीर्त्तिमानुशीनरन् पार्त्थिवन् विढूरथन् । ३३
मट्टुं काण् पल नृपन्मारिरिक्कुन्नतिवर्
मुट्टुं निन् गुणं केट्टु वन्नारॆन्नरिञ्ञालुं । ३४
इवरिलेकनिन्नु यन्त्रत्तॆ मुरिक्कुन्न-
तवनॆ मालयिट्टुकॊळ्ळुक नीयुं बाले ! । ३५

तीन भूपाल पाण्डय, केरल और चोल को पास ही में देखो । १९-२६ क्या नरवीर वृष्णियों को तुमने देखा ? वे प्रतिदिन कृष्ण की रक्षा में रहते हैं । नील वस्त्र धारण करता हुआ, गोरे-गोरे रङ्ग का शक्तिमान् अनन्त तेजवाला कामपाल (बलराम), जो मद्य पीकर मत्त रहता है और शत्रुओं का नाशक है । वल्लवीवल्लभ मल्लारि कल्याणात्मा निरुपम पर पुरुष वासुदेव । सांब, चारुदेष्ण, सारण, गद, अक्रूर, सत्यक, सात्यकि, युयुधान, पृथु, विपृथु, हार्दिक, कृतवर्मा, कह्व, समीक, सारिमेजय, झिल्लि, दानपति, पिंगलक, कीर्त्तिमान्, उशीनर, पार्थिव और विढूरथ । और भी राजाओं को देखो, जो यहाँ बैठे हुए हैं । जान लो कि ये सब तुम्हारे गुण सुनकर आये हैं । हे बाले! इनमें से जो आज यन्त्र तोड़े, उसी को वरमाला पहनाओ । २७-३५ इस प्रकार समझाकर धृष्टद्युम्न ने परदा हटाया और

धृष्टद्युम्ननुमेवं पऱञ्ञु बोधिप्पिच्चु
पेट्टेन्नु मूटुपटमेट्टुत्तु पिन्वाङ्ङिनान् । ३६
अन्तेरं काणाय्वन्नु कन्यकनिमित्तमाय्
मन्नवर् काट्टियोरु गोष्ठिकळ् पऱयुन्पो- ३७
ळिन्नवयन्नु कामदेवनेयऱियावू
वन्नितङ्ङवळ्तन्नाल् वेन्टुन्नतवक्कॆल्लां । ३८
मकुटमणिमय कुण्डलांगदहार-
कटककटिसूत्रवलयादिकळाकु- ३९
मखिलविभूषणलेपनांबरङ्ङळाल्
परिशोभितन्माराय् स्वायुधपाणिकळाय् । ४०
छत्रचामरव्यजनादिकळ्कॊण्टु शोभि-
च्चॆत्रयुं मनोहरमाय वेषवुं पूण्टु । ४१
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळोरु विरुतुं वाद्यङ्ङळुं
मङ्ङीटातॊरु चतुरंगवाहिनियोटुं । ४२
पार्त्थिवेन्द्रन्मारॆल्लामास्थया कोप्पिट्टुळ्ळिल्
प्रीत्या वन्नकंपुक्कु कल्याणं साधिप्पानाय् । ४३
स्पर्द्धयुं परस्परं वर्द्धिच्चितॊल्लावर्क्कुं
श्रद्धयुमॊरुपोले वर्द्धिच्चु मनक्कान्पिल् । ४४
क्रुद्धिच्चु नोक्कीटिनारन्योन्यं पण्टेयुळ्ळिल्
स्निग्धन्मारायुळ्ळवर्तङ्ङळुमंतुकालं । ४५

वह अलग हो गया। उस समय उस कन्या के कारण राजाओं की तरह-तरह की चेष्टाएँ दिखायी दीं। वे क्या-क्या थीं, यह केवल कामदेव ही जानता है और इसका वर्णन करने के लिए (वही समर्थ है)। कन्या के कारण उनको सभी आवश्यक बातें सूझीं। मुकुट, रत्नों के कुण्डल, बाजूबन्द, हार, कंकण, मेखला, वलय आदि समस्त आभूषणों से, लेपन और वस्त्रों से परिशोभित, हाथ में अपने-अपने आयुध लिये हुए, छत्र, चँवर, पंखा आदियों से अति मनोहर वेष धारण किये हुए, अपने-अपने वाद्य बजाते हुए, अपनी तेजस्वी चतुरंग सेना के साथ सभी भूपाल बड़ी आस्था के साथ तैयार होकर बड़े हर्ष से विवाह देखने के लिए प्रविष्ट हुए। सबकी परस्पर स्पर्द्धा बढ़ी, साथ-साथ भीतर श्रद्धा भी बढ़ी। ३६-४४ जो पहले आपस में प्रेम करते थे, वे अब एक-दूसरे को क्रोध की दृष्टि से देखने लगे। (वे सोचने लगे) "विद्या, कुल, धन, सौन्दर्य, औदार्य, सारस्य आदि गुण

विद्याभिजात्यवित्तसौन्दर्यौदार्यसार-
स्याद्यङ्ङळ् गुणङ्ङळ् वेव्वेरे चिन्तिक्कुन्नेरं । ४६
इन्निवळिनिक्कनुरूपयेन्नतुतन्ने
वन्नुकूटीटुमत्ते निर्णयमेल्लां कोण्टुं । ४७
कुलवुं महिमयुं विद्ययुं पराक्रम-
बलशीलार्थराज्यसमृद्धि भण्डारवुं । ४८
रूपयौवनगृहसेनयुं पटवीटुं
शोभयुं गुणजालमोरोन्ने काणुन्तोरुं । ४९
पाञ्चालि नमुक्कनुरूपयेन्नतिन्नोरु-
चाञ्चल्यमुण्टाय्वरा शत्रुक्कळायुळ्ळोर्क्कुं । ५०
अन्योन्यं सुहृत्भावं मुन्नमेयुळ्ळवर्क्कुं
कन्यकानिमित्तमायुळ्ळिल् वाच्चितु वैरं । ५१
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चु पाञ्चालपुत्रियाय
दिव्यकन्यकतन्नेक्कोण्टुपोय्क्कोळ्वानिप्पोळ् ५२
ऎन्तोरु कळिवेन्नतोळिञ्ञु नृपन्मार्क्कु-
चिन्तयिल्लेतुं मट्टु सन्ततं मनक्कान्पिल् । ५३
देवकळ् विमानङ्ङळ्तोरुमाकाशमार्ग्गे
देविकळोटुं वन्नु निरञ्ञु मुनिकळुं । ५४
हरियुं हलियुं वृष्ण्यन्धकभोजन्मारु-
मरिके यदुकुलनृपतियोटुं तत्र । ५५

अगर अलग-अलग देखे जायँ तो सब इसी निर्णय पर पहुँचेंगे कि यह कन्या मेरे ही अनुरूप है। कुल, महिमा, विद्या पराक्रम, बल, शील, अर्थ, राज्य-समृद्धि, भण्डार, रूप, यौवन, सेना, सेनालय, शोभा—ये सब गुण अगर एक-एक करके देखे जायँ तो पाञ्चाली मेरे ही अनुरूप है, इसमें मेरे शत्रुओं का भी मतभेद न होगा। जिनका पहले परस्पर सुहृद्भाव था, उनमें अब कन्या के कारण बैर पैदा हो गया। ४५-५१ और सभी बातों की उपेक्षा करके अब एक ही चिन्ता राजाओं के सिर पर सवार हो गयी कि "इस दिव्य कन्या को ले जाने का क्या उपाय है, और कोई चिन्ता उन्हें न रही। देवियों के साथ विमानों में बैठकर आकाश-मार्ग से बड़ी संख्या में देवगण तथा मुनिगण आये। वहाँ कृष्ण, बलराम, वृष्णि, अन्धक, भोज थे और उनके साथ यदुकुल के राजा भी थे। भस्म के अन्दर छिपे अंगारों के समान ब्राह्मणों का रूप धारण करनेवाले पाण्डवों को माधव (कृष्ण)

भूतितन्नुळ्ळिल् मेवुं कनल्क्कट्टकळ्पोलें
भूदेवन्मारायुमेवुं पाण्डुनन्दनन्मारें
माधवनऱिञ्ञु तन्नग्रजन्तन्नेंक्काट्टि- ५६
च्चेतसि सन्तोष मुण्टायितु मुसलिक्कुं ।
वाद्यनादङ्ङळ्कोंण्टु लोकवुं मुळङ्ङुन्नु
पार्त्थिवन्मारुं मदनार्त्तन्मारायारल्लो । ५७
विल्लेंटुत्ताक्कुं कोंलय्क्कायील नृपन्मार्क्कु
वल्लातें तम्मिल् तम्मिल् नोक्कियङ्ङटङ्ङिनार् । ५८
चेदीशनाय दमघोषजन् शिशुपालन्
मेदिनीपतिवीरन् वेगमोटेंळुनेट्टु । ५९
विल्लेंटुत्ताशु कोंलच्चीटुवानोंरुम्पेंट्ट्टु
मेंल्लवे माषमात्रमट्टुत्तोरनन्तरं । ६०
कोंलच्चु कूटाञ्ञंगं वियर्त्तु वशंकेंट्ट्टु
निलत्तुवच्चु वाङ्ङिप्पोयवनटङ्ङिनान् । ६१
वन्पनां जरासन्धन् कोप्पिट्टु चेंन्नु नेरे
गंभीरभावत्तोटुं विल्लतु कोंलप्पानाय् । ६२
अेंटुत्तु वळच्चोंरु कटुकिन्मणिमात्र-
मट्टुत्तनेरं दूरें मऱिञ्ञुवीणीटिनान् । ६३
अेंल्लल्लां नुरुङ्ङित्तान् मुळङ्कालतुं पोंट्टि-
प्पल्लेंल्लामिळकिवन्नोरु चोरयुं तुप्पि । ६४

ने पहचान लिया और अपने बड़े भाई को दिखलाया, जिससे मुसली (बलराम) को बड़ा हर्ष हुआ। वाद्यों की ध्वनि से सारा संसार गूँज उठा। सभी राजागण मदन से पीडित हो गये। पर वे धनुष लेकर उस पर बाण न चढ़ा सके, वे आपस में एक-दूसरे का मुँह देखकर रह गये। चेदिराजा, दमघोष का पुत्र, भूपालों में वीर शिशुपाल जल्दी से उठा और धनुष पर बाण चढ़ाने के लिए तैयार हुआ। धीरे-धीरे उसके पास गया। ५२-६० परन्तु बाण न चढ़ा सका, उसको पसीना आ गया। लाचार होकर उसने धनुष रख दिया और अपने स्थान पर जाकर बैठ गया। फिर शक्तिशाली जरासन्ध बड़ी तैयारी करके गंभीरभाव से बाण संधानने गया। वह धनुष को रत्ती-भर भी न झुका पाया था कि उलटकर गिर पड़ा। उसकी सभी हड्डियाँ दब गयीं, पैर टूट गये, सभी दाँत हिल गये और (वह) ख़ून थूकने लगा। उसने धनुष रख दिया, वह

विल्लुं वेच्चतुनेरं नाणिच्चु वाङ्ङिप्पोन्ना-
नल्लल्पूण्टप्पोळ्त्तन्ने पोयवन् पुरिपुक्कान् । ६५
शल्यरुं चेन्नु कोलच्चीटुवान् मुलगमात्रं
मेल्लवेयटुत्तप्पोळ् साद्ध्यमल्लेन्नु कण्टु ।
विल्लुं वेच्चटङ्ङिनानन्नेरं वैकर्त्तन- ६६
नेटुत्तु रोममात्रमटुत्तु गुणमप्पोळ्
पटुत्वं कुरञ्ञवन् मरिञ्ञुवीणीटिनान् । ६७
इत्तरं विल्लाळिकळाकिय नृपेन्द्रन्मा-
रत्तल्पूण्टेल्लावरुं पिन्नेयङ्ङटङ्ङिनार् । ६८
भूसुरजनं पृत्थ्वीनायकन्मारेप्परि-
हासमोटोरोतरं भर्त्सिच्चुतुटङ्ङिनार् । ६९
कूटिय नृपन्मारिल् केवलमोरुवनुं
पाटवमेरुमेन्नु वन्नील चित्रं चित्रं । ७०
विल्लितु कोलय्क्कायीलार्क्कुमे नृपेन्द्रन्मा-
रेल्लारुमोरुपोले वन्नतुं नन्नु नन्नु । ७१
तुल्यन्मारत्रेयिवरेल्लारुं नल्लरल्लो
वल्लभत्तिनु कुरविल्लोरुवर्क्कुमेटो । ७२
कल्लुकळ् कनकवुमेन्तिनु चुमक्कुन्नि-
तल्लल्पूण्टेल्लुनुरुङ्ङीटुवान् सुयोधनन् । ७३

लज्जा के कारण हट गया और बड़े दुःख के साथ अपने नगर चला गया। ६१-६५ तब शल्य बाण सन्धानने गया। धनुष को तिल-मूँग भर (तिल-भर) उठाने पर उसे प्रतीत हुआ कि यह काम उसके लिए असाध्य है। अतएव वह धनुष रखकर हट गया। तदनन्तर वैकर्त्तन उठा और डोरी को बाल-भर ही खींचने पर पटुत्व (कौशल) कम होने के कारण वह भी उलटकर गिर पड़ा। इस प्रकार सभी धनुर्धर भूपाल हार गये और दुःखित होकर दब गये। तब ब्राह्मण लोग राजाओं की तरह-तरह की हँसी उड़ाने लगे। इकट्ठे हुए इतने राजाओं में एक भी पर्याप्त पटु (चतुर) न निकला! कैसा आश्चर्य है! इन राजाओं में कोई भी धनुष संधान न कर सका! सब बराबर निकले! शाबास! ये सभी भले भूपाल परस्पर तुल्य हैं! प्रेम में तो कोई भी कम नहीं हैं। यह सुयोधन क्यों मणि और काञ्चन का बोझ उठाता है, (क्या) अपनी हड्डी तुड़वाने के लिए? ६६-७३ जरासन्ध तो अपनी प्रतिष्ठा और दाँत खोकर भाग

पोयितु जरासन्धन् नाणवुं कॆट्टु दन्तं
पोयितु महाजनमारुमेयरियाय्वान् । ७४
इत्तरं बहुविधं ब्राह्मणरोरो दिशि
पृत्थ्वीशन्मारॆ प्रशंसिच्चाक्षेपिक्कुं नेरं । ७५
उत्तमनाय पार्त्थनुत्थानं चॆय्तु चॊन्नान्
पृत्थ्वीदेवन्मारॆल्लां केळ्क्केणमॆन्टॆ वाक्यं । ७६
क्षत्रियवीरन्मार्क्कु विल्लितु कॊलयेट्टि-
श्शस्त्रङ्ङळ्कॊण्टु यन्त्रं छेदिप्पानरुतॆङ्किल् ७७
कन्यकतन्नॆ विवाहं चॆय्कॆन्नतुमिल्ल
निर्णयमॆन्नुवन्नाल् नन्नल्लितॊन्नुकॊण्टुं । ७८
मन्नवन्माराल् साध्यमल्लॆन्नुवरिकिल् ना-
मॊन्नुण्टु वेण्टु पुनरेतुमे मटियातॆ । ७९
नम्मळारॆट्टु विल् कॊलच्चु यन्त्रं भेदि-
च्चिम्मधुमॊळिविवाहं कळिक्कयुं वेणं । ८०
निर्ज्जरपतिसुत नर्ज्जुननतुनेरं
विज्वरमनसा बाणासनं सज्जं कर्त्तुं ८१
सज्जनसभ वन्दिच्चुत्थानं चॆय्तीटिना-
नुज्ज्वलिच्चग्निज्वाल सत्वरं पॊङ्ङु पोलॆ । ८२
विप्रन्मारतुनेरं मेल्प्पुटवयुं वीशि
विभ्रमं द्विजकुमारनॆन्तुण्टावानॆन्नार् । ८३

गया ताकि जनता में कोई न जान ले ! जब इस प्रकार ब्राह्मण जगह-जगह राजाओं पर आक्षेप और (उनका) परिहास कर रहे थे, तब उत्तम अर्जुन उठकर बोला— ब्राह्मण लोग मेरी बात सुन लें! अगर क्षत्रिय वीर इस धनुष का सन्धान करके शस्त्रों द्वारा यन्त्र नहीं तोड़ सकते हैं, तो निस्सन्देह कन्या का विवाह न होगा; जो किसी भी दृष्टि से ठीक नहीं है। अगर राजाओं के द्वारा यह काम नहीं हो सकता तो फिर हम लोग एक काम अवश्य करें। हम लोगों में से कोई धनुष का सन्धान करके यन्त्र तोड़कर इस कन्या से विवाह करे। ७४-८० उस समय इन्द्र के पुत्र अर्जुन बिना घबड़ाये सज्जनसभा की वन्दना करके धनुष संधानने के लिए इस प्रकार उठे जैसे एक उज्ज्वल अग्निज्वाला उठती हो। तब ब्राह्मणों ने अपना उत्तरीय हिलाते हुए कहा—'इस ब्राह्मणकुमार को यह मोह कैसे हुआ ? स्वभाव से ही दुर्बल इस ब्राह्मणकुमार को—क्या करने

अकृत्यमिदमिदं कृत्यमॆन्नुळ्ळतॊन्नुं
प्रकृत्या बलहीननामिवन्नऱिविल्ल । ८४
बालकननागतश्मश्रुवां वटुविनु
कालदेशावस्थादि भेदबुद्धियुमिल्ल । ८५
शल्यकर्णादिकळाल् साध्यमल्लातॆयुळ्ळ
विल्लितु कॊलचॆय्तु यन्त्रत्तॆ मुऱिप्पानाय् । ८६
विल्लॊरुनाळुं तॊट्टिट्टिल्लात भूमिदेवन्
निर्लज्जन् तुनिञ्ञतुमॆत्रयुमन्धकारं । ८७
अस्त्रज्ञन्मारां धनुर्व्वेदपारगन्मारि-
क्षत्रिय वीरन्मार्क्कु परिहासत्तिनुळ्ळु । ८८
नम्मळारॊक्कॆप्परिहास्यन्माराय् वन्नीटुं
दुर्म्मदमेऱुं द्विजबालक भ्रान्तुमूलं । ८९
ब्रह्मचापल्यं वलुतॆन्नतुकॊण्टु नामि-
ब्रह्मवादियॆप्परञ्ञटक्कीटुकवेणं । ९०
साधिक्कुमिवन्तनिक्कॊङ्किलुं भूपालन्मार्
बाधिक्कुं नम्मॆप्पुनरॆन्तिनुवेण्टियतुं । ९१
पॊण्णिनॆयिवन्नु किट्टीटुकयिल्लयल्लो
निर्णयं यन्त्रमॆय्तु मुऱिच्चानॆन्नाकिलुं । ९२
दोषमेयॆल्लां कॊण्टुं शेषमुळ्ळतु नम्मॆ
द्वेषवुमुण्टाय्वरुं भूपतिवीरर्क्कॆल्लां । ९३

योग्य है, क्या नहीं है--इस बात का पता नहीं है। इस बिना मूँछ के बालक को काल, देश, अवस्था आदि के भेद का बोध नहीं है। शल्य, कर्ण आदि के लिए भी असाध्य इस धनुष का सन्धान करके यन्त्र तोड़ने के लिए कभी धनुष का स्पर्श भी न करनेवाला यह निर्लज्ज ब्राह्मण जो उद्यत हो गया है, यह अन्धेर है। यह अस्त्रज्ञ और धनुर्वेद के पारंगत क्षत्रियवीरों के उपहास का पात्र होगा, और क्या हो सकता है ? ८१-८८ इस दुर्मदवाले ब्राह्मण बालक के कारण हम सब की हँसी उड़ायी जायेगी। इसका यह चापल्य बहुत अधिक बढ़ गया है इसलिए हमलोगों को चाहिए कि हम इस ब्रह्मवादी को बैठावें। यह काम इससे हो भी जाय तो भी भूपाल हम लोगों की हर चीज़ में बाधा डालते रहेंगे। अगर यह निशाना मारकर यन्त्र तोड़ देगा तब भी कन्या इसको मिलनेवाली नहीं है। हर एक दृष्टि से इसमें दोष ही दिखायी देता है। ऊपर से

इत्तरं चिलर् परञ्ञीटिननेरं पुन-
रुत्तरमतिल् चिलर् सत्वरं चॊल्लीटिनार् । ९४
वेदङ्ङळ् कॊण्टु साद्धयमल्लातॆ यॆन्तॊन्नुळ्ळु
वेदज्ञन्मार्क्कु किञ्चिल् कार्यमिल्लसाद्धयमाय् । ९५
ऎन्तयुं श्रीमानिवन् नाकेन्द्रसमनल्लो
सुस्थिरन् यीनस्कन्धनाजानुबाहुयुगन् । ९६
विस्तृतवक्षःस्थलन् वृत्तोरुद्वन्द्वधरन्
शक्तिमान् ब्रह्मक्षत्रतेजस्वी युवावेट्टं । ९७
शक्तियिल्लाय्किलितु भाविक्कयिल्लयॆन्नुं
सिद्धमल्लाय्कतन्नॆयल्लॆन्नु धरिच्चालुं । ९८
ब्राह्मणर्क्कसाद्धयमायिल्लॊरु कर्म्मङ्ङळुं
साम्यमिल्लवरुटॆ माहात्म्यत्तिनुमेतुं । ९९
जल मारुत फलमूलाहारन्मारिवर्
बलहीनन्मारतुकॊण्टॆन्नु निनय्क्कॆण्टा । १००
बलमाकुन्नतॆल्लां ब्रह्मतेजस्सिन् बलं
फलमिल्लब्रह्मतेजस्विनां बलं कॊण्टुं । १०१
ब्राह्मणनॊन्नुकॊण्टुमवमन्तव्यनल्ल
कार्म्मुकवेदोपदेशङ्ङळुमवर्क्कत्रे । १०२

राजाओं का हम लोगों के प्रति द्वेष हो जायगा। जब कुछ लोगों ने इस प्रकार कहा, तब औरों ने इसका तुरन्त यों उत्तर दिया— ८८-९४ "ऐसी कौन बात है जो वेदों के द्वारा असाध्य हो? वेदज्ञों के लिए कोई भी काम कठिन नहीं है। यह बालक अत्यन्त श्रीयुक्त है, इन्द्र के समान है, सुस्थिर, पीनस्कन्ध और आजानुबाहु है। इस युवक का वक्षःस्थल विस्तृत है, इसके जाँघ मोटे हैं, यह शक्तिमान् है, ब्रह्म और क्षात्र दोनों तेजों से युक्त है। उसके शक्ति न होती तो इस कार्य के लिए उद्यत न होता, यह काम इससे न होगा, ऐसा न समझिए। कोई काम नहीं है जो ब्राह्मणों के लिए असाध्य हो उनके माहात्म्य के समान कुछ नहीं है। हाँ, जल, वायु, फल, भूल आदि ही इनका आहार होता है, पर इस कारण इनको बलहीन न समझिए। इनका बल इनके ब्रह्मतेज का बल है, और ब्रह्मतेजवालों के लिये (शारीरिक) बल से कोई प्रयोजन नहीं है। किसी भी तरह ब्राह्मणों की अवज्ञा न होनी चाहिए, उनके पास अस्त्र-ज्ञान और वेदज्ञान, दोनों हैं।" ९५-१०२ जब ब्राह्मण इस प्रकार की बातें कर

ईवण्णं बहुविधं ब्राह्मणर् परयुन्पोळ्
कार्व्वर्ण्णन्मुखांबुजं पार्त्तु देवेन्द्रात्मजन् । १०३
अग्रजन्मारोटनुवादवुंकॊण्टु माद्रे-
याग्रजन् कनिष्ठन्मार्तम्मॆयुं कटाक्षिच्चान् । १०४
रंगत्तॆ प्रवेशिच्चु चॆय्तुटन् प्रदक्षिण-
मंगजारातिशिष्यशिष्यनां द्रोणाचार्यन् । १०५
तन् कळलिण भक्त्या वन्दिच्चु नमस्करि-
च्चंगजन् करिन्पुविल्लॆटुत्तु कॊलयेटि । १०६
बाणङ्ङळञ्चुं तॊटुत्तॆय्ततुपोलॆ पार्त्थन्
काणिकळ् चित्रं चित्रमॆन्नु चॊल्लीटुंनेरं । १०७
ऎटुत्तु चापं पॊटि तुटच्चु कॊलच्चुटन्
तॊटुत्तु बाणमञ्चुं वलिच्चु यन्त्रमॆय्तु । १०८
मुरिच्चु जितश्रमं निन्नीटुन्नतुनेरं
करुत्तु भावं नाना धरित्रीशन्मार्क्कॆल्लां । १०९
पुष्पवृष्टियुं चॆय्तार् शिरसि देवगण-
मप्पोळॆ पाञ्चालियुं मालयुमिट्टीटिनाळ् । ११०
चिल्पुरुषानुग्रहाल् सल्प्पुरुषेन्द्रन् पार्त्थन्
क्षिप्रं द्रौपदियोटुं ब्राह्मणरोटुं कूटि । १११
निर्ग्गमिच्चितु रङ्गत्तिङ्कल्निन्नुटन् नृप-
वर्ग्गवुं क्रुद्धिच्चितु वॆरुते वॆरुप्पोटे । ११२

रहे थे तब अर्जुन ने पहले श्रीकृष्ण का मुखकमल देखा, फिर अपने बड़े भाइयों की आज्ञा लेकर अपने छोटे भाइयों को भी देखा। फिर प्रदक्षिणा करके रंग-मंच में प्रवेश किया। शिवजी के शिष्य के शिष्य द्रोणाचार्य के चरणकमलों की भक्ति के साथ वन्दना करके पार्थ (अर्जुन) ने धनुष उठा लिया, फिर पाँचों बाणों का सन्धान कर के चलाया। देखनेवालों ने 'आश्चर्य, आश्चर्य' चिल्लाया। फिर धनुष को लेकर, सन्धान कर, कामदेव के अपने गन्ने के चाप पर पांचों बाण चढ़ाकर चलाने के समान पाँचों बाणों को लगाकर यन्त्र पर निशाना मारकर उसे तोड़ डाला। अपना उद्देश्य पूरा करके जब वे खड़े हो गये तब अर्जुन के प्रति सभी राजाओं का भाव कलुषित हो गया। १०३-१०९। उस समय एक ओर तो देवों ने पुष्पवृष्टि की और दूसरी ओर पाञ्चाली (द्रौपदी) ने अर्जुन को माला पहनायी। चित्पुरुष (श्रीकृष्ण) के अनुग्रह से सत्पुरुषों में श्रेष्ठ अर्जुन द्रौपदी और ब्राह्मणों के साथ रङ्गमञ्च से बाहर निकल आये।

पाञ्चालन् पटयोटुं पार्त्थनु सहायमाय्
वाञ्छया कूटेक्कनिञ्ञरिके मरुविनान् । ११३

राजसञ्चय विजयं

कल्याणत्तिनु नम्मे वरुत्तिक्कालत्तोरु-
पुल्लोळं बहुमानियाते पाञ्चालनृपन् । १
विप्रनु कन्यारत्नं कोटुत्तीटुन्नताकिल्
विप्रने वधिक्केणमेन्नतुमरुतल्लो । २
सल्क्कारपूर्व्वं नम्मे वरुत्ति स्वयंवरे
धिक्कारं काट्टियोरु पाञ्चालन्तन्नेक्कोल्वू । ३
धृष्टनां धृष्टद्युम्नन्तन्नेयुं वधिक्केणं
कष्टमेत्रयुमवन् काट्टिय दुराचारं । ४
चेरुप्पंकोण्टु मोहाल् ब्राह्मणन् काट्टियतु
पोरुक्केयुळ्ळु नमुक्कवनोटेल्लां कोण्टुं । ५
नम्मुटे राज्यधन सन्ततिशौर्यादियुं
ब्रह्मरक्षार्त्थमत्रे निर्ण्णयमरिञ्ञालुं । ६
ऒन्नु कलिपच्चुनिन्न मन्नवरेल्लावरु-
मन्योन्यमोरुमिच्चु युद्धत्तिन्नोरुन्पेट्टार् । ७

तत्काल ही सभी भूपाल निराश होकर व्यर्थ क्रुद्ध हुए। पाञ्चालराज तो अर्जुन की सहायता के लिए अपनी सेना के साथ उन्हीं के पास रहे। ११०-११३

राजसमूह का पराजय

"पाञ्चाल ने हमको विवाह में निमन्त्रित किया परंतु तृण-भर भी हमारा सम्मान न किया। और कन्या को तो ब्राह्मण को दे दिया। लेकिन ब्राह्मण की तो हम लोग हत्या भी नहीं कर सकते हैं। जिसने हमको विवाह में बुलाकर अपमान किया उस पाञ्चाल का ही वध करना चाहिए। इस धृष्ट धृष्टद्युम्न को भी मारना चाहिए, क्योंकि उसका दिखाया दुराचार तो असह्य है। उस नवयुवक ब्राह्मण ने जो कुछ किया है उसे हम लोगों को किसी तरह सहना ही है। आखिर हमारा राज्य, धन, सन्तान, शौर्य, यह सब ब्राह्मणों की रक्षा ही के लिए है।" १-६ इस प्रकार सोचते हुए सभी भूपाल मिलकर युद्ध करने के लिए तैयार

सन्नद्धन्मारायतुकण्टु पाञ्चालनृपन्
चेन्नु भूदेवन्मारे शरणं प्रापिच्चप्पोळ् । ८
विप्रवेषवुं पूण्टु तत्सभामध्ये मेवु-
मद्भुतविक्रमन्माराय भीमार्ज्जुनन्मार् ९
कॆल्प्पोटु पुऱप्पॆट्टु युद्धत्तिन्नॊरुमिच्चु
विभ्रान्तन्मारायट्टुत्तीटिनारतुनेरं । १०
उन्नतमाय वृक्षं कण्टु भीमनुमतु
चॆन्नुटन् पऱिच्चिलयूरियायुधमाक्कि । ११
निन्नतु कण्टु कृष्णन् रामनोटरुळ्चॆय्तु
निर्ण्णयमितु भीमनतिमानुषकर्म्मा । १२
पिन्नाले निल्क्कुन्नतु फल्गुनन्तन्ने नूनं
मुक्तन्मारायार् पाण्डुपुत्रन्मार् मातावोटुं
व्यक्तं जातुषगेहत्तिङ्कल्निन्नरिञ्ञालुं । १३
दैवानुग्रहमॆङ्किल् नम्मुटे पितृष्वसा
जीविच्चितात्मजन्मारोटुमॆन्नाकिलिप्पोळ् १४
ऎन्नयुं सुखं वन्नु चित्तत्तिलॆङ्किलिनि
युद्धकौशलं कण्टुकॊळ्क नामॆन्ने वेण्टू । १५
रामकृष्णन्मारित्थं पऱञ्ञुनिल्क्कुन्नेरं
भूमिपालेन्द्रन्मारुं पोरिनायॊरुमिच्चु । १६
नामेतुं कुऱयरुतितिनॆन्नतुनेरं
भूमिदेवेन्द्रन्मारुं पोरिनायॊरुन्पॆट्टार् । १७

हुए। उनको युद्ध के लिए तैयार देखकर पाञ्चालराज ब्राह्मणों की शरण में गये। उस सभा में जो ब्राह्मण-वेषधारी और अद्भुत प्रतापवाले भीम अर्जुन आदि थे, वे भी झट से उत्तेजित होकर मिलकर युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गये। भीम ने एक ऊँचा पेड़ उखाड़कर उसके पत्ते निकाल-फेंककर उसे एक आयुध बनाया। यह देखकर कृष्ण ने बलराम से कहा—निःसन्देह यह भीम है, इसका यह अमानुष कार्य देखो। उसके पीछे जो खड़ा है, वह अर्जुन है। इससे यह स्पष्ट है कि पाण्डव अपनी माता के साथ लाक्षागृह से निकल गये थे। यह ईश्वर का अनुग्रह है कि हमारी फूफी अपने पुत्रों के साथ अभी जीवित है। यह हमारे लिए बड़े हर्ष की बात है। अब हम दोनों इनका युद्ध-कौशल देखें।७-१५ बलराम और कृष्ण इस प्रकार जब बात कर रहे थे तब सभी भूपालश्रेष्ठ भी युद्ध

छत्रत्तिन् दण्डङ्ङळुं पादुकङ्ङळुं पुन-
रुत्तरीयङ्ङळ् करकङ्ङळेन्तिवयुमाय् । १८
हस्तवुमुर्यत्तिनिन्नुद्योगं कण्टनेरं
मुग्धहासवुं पूण्टु फल्गुननुरचेय्तान् । १९
कुण्ठभाववुं नीक्कि रण्टुभागवुं निन्नु
कण्टुकोळ्ळुविन् निङ्ङळेल्लारुं द्विजन्मारे ! । २०
कण्ठङ्ङळ् करङ्ङळ् कालेन्निव बाणङ्ङळे-
क्कोण्टुञान् तेरुतेरेक्खण्डिच्चु नृपन्मारे । २१
दन्डहस्तन्टे पुरत्तिङ्कलाक्कीटुन्नुण्टु
दण्डमिल्लिनिक्कतिनरिविन् निङ्ङळेल्लां । २२
इत्थमर्ज्जुनन् परञ्ञीटिनोरनन्तरं
युद्धत्तिन्नटुत्तितु मित्रनन्दनन् कर्णन् । २३
तुटङ्ङी शरङ्ङळाल् वरिषं विजयनुं
नटुङ्ङी भुवनवुं चेरुञार्णोलिकळाल् । २४
रुद्रनोटन्तकन्तानटुत्तपोले नेरे
माद्राधिपति शल्यर् भीमनोटटुत्तितु । २५
मटुळ्ळ विप्रन्मारुं धार्तराष्ट्रन्मारुमा-
येट्टियुमेरिञ्ञुमोट्टेय्तुं निन्नितु तम्मिल् । २६
विस्तरिच्चेन्तिनेरेप्परयुन्नितु पार्त्थन्
मित्रपुत्रनेज्जयिच्चीटिनानतुनेरं । २७

के लिए तैयार हुए। इस मामले में हम औरों से कम न निकलें, ऐसा समझकर ब्राह्मण भी युद्ध के लिए तैयार हुए। अपनी छतरियों के दण्ड, अपनी खड़ाऊँ अपने उत्तरीय लेकर अथवा खाली हाथ ही आकर उन्होंने हाथ उठाया। यह देखकर अर्जुन मुस्कराये और बोले—हे ब्राह्मणो ! अब आप लोग मत घबड़ाइए ! आप दोनों ओर खड़े होकर देखिए ! मैं अपने बाणों से इनके कण्ठ, हाथ, पैर आदि लगातार काटता जाऊँगा। और इन राजाओं को यम-सदन भेजता जाऊँगा। मुझे इसमें कोई कठिनाई न होगी, जान लीजिए। १६-२२ अर्जुन के इस प्रकार कहने के बाद सूर्य का पुत्र कर्ण युद्ध के लिए चला आया। अर्जुन ने शरवर्षा प्रारम्भ की और सारा संसार जयघोष से गूंज उठा। मद्राधिपति शल्य ने भीम का इस प्रकार सामना किया जैसे यमराज ने रुद्र का। और ब्राह्मणों और धार्तराष्ट्रों ने आपस में मारकाट प्रारंभ करदी, अस्त्र-शस्त्र

शल्यरे मुष्टियुद्धं चेय्तु मारुतपुत्रन्
कोल्लाते कोन्नानतु कण्टु मट्टुळ्ळ नृपर् । २८
ॲल्लारुं भयप्पेट्ट् वाङ्ङिनार् मट्यव-
क्कॅल्लालोकवुं जयिक्कामवर् वलुतल्लो । २९
तोट्टितु विश्वामित्रन् वसिष्ठनोटु मुन्नं
तोट्टितु राजाक्कन्मार् भार्ग्गवरामनोटुं । ३०
तोट्टतु कुट्टमल्ला भूसुरन्मारोटु ना-
मेट्टोरविवेकमॅन्नोर्त्तु वाङ्ङीटिनार् । ३१
मन्दभाववुंपूण्टु भूपालर् निजनिज-
मन्दिरमकंपुक्कु वसिच्चु यथापूर्व्वं । ३२
विजयत्तोटुं द्रुपदात्मजयोटुं कूटि
विजयवृकोदर वीरन्मार् नटकॊण्टार् । ३३

कुन्तीवाक्यं (मुळुस्संस्कृतं)

कुन्तियुं भैक्षकाले काणाञ्ञु सुतन्मारे-
च्चिन्तिच्चु तुटङ्ङिनाळन्तरायङ्ङळॆल्लां । १
धार्तराष्ट्रन्मार् बलालरिञ्ञु वधिच्चारो
रात्रिचारिकळ् मायकोण्टु निग्रहिच्चारो । २

फेंके और बाण चलाये। विस्तार से क्या वर्णन किया जाय, अर्जुन ने सूर्यपुत्र कर्ण को हराया। शल्य और भीमसेन का मुष्टि-युद्ध हुआ, जिसमें शल्य मरने से बचा। यह देखकर और सभी भूपाल डर गये और हट गये। (और बोले) "ब्राह्मण तो सभी लोकों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं, आख़िर वे ही उत्कृष्ट हैं। विश्वामित्र, वसिष्ठ से हार गये और सभी भूपाल, परशुराम भार्गव से हार गये। हार जाने में कोई दोष नहीं है। उनका जो हमने सामना किया वही अविवेक था।" यह सोचकर हट गये। सभी भूपाल उदास होकर अपने-अपने घर चले गये और पहले की तरह रहने लगे। अर्ज्जुन, भीम आदि वीर विजय और द्रोपदी के साथ चले गये। २३-३३

कुन्ती का कथन (शुद्ध संस्कृत में)

जब भिक्षा के समय कुन्ती ने अपने पुत्रों को न देखा तब सोचने लगी—क्या विघ्न पैदा हो गया है ? क्या धार्तराष्ट्रों ने पहचानकर उनकी

पार्त्थिवेन्द्रन्मार् पराभूतन्माराकयाले
चीर्त्त मत्सरंकोंण्टु पार्त्तु निग्रहिच्चारो । ३
नित्यवुं भैक्ष्यमेट्टु वरुन्न कालमिन्नों-
रित्तिरिनेरमुण्टु कळिञ्ञु कण्टीलिन्नुं । ४
शक्तिजपुत्रवाक्यं व्यर्त्थमाय्वन्नीटुमो
सत्यवादिकळिल्वच्चुत्तमोत्तमनल्लो । ५
तत्त्वज्ञन् सत्यवतीपुत्रनेन्नतु नूनं
इत्थमोरोन्ने कुन्ति चित्तत्तिलोर्क्कुन्नेरं । ६
गत्वा भार्ग्गवकर्म्मशालां तां पार्थौ पृथां
नत्वा तां याज्ञसेनीमर्ज्जुनवृकोदरौ । ७
लब्धेयमद्य भिक्षेत्युक्त्वाथ वेदयतां
तत्रैव कुटिं गत्वा सा त्वनपेक्ष्य कुन्ती । ८
पुत्रान् भुञ्जीध्वमिति प्रोवाच सप्रमोदं
पश्चाल् सा कुन्ती प्रसमीक्ष्य कन्यकां कृष्णा- ९
मच्छाङ्गीं कष्टं मया भाषितमित्युवाच
स्वच्छवादिनी कुन्ती तदनु चिन्तयन्ती । १०
साधर्म्मभीता चापि विलज्जमाना कुन्ती
सादरं पाणौ गृहीत्वोपजगाम कन्यां । ११

हत्या कर दी है ? या राक्षसों ने अपनी माया से उनका निग्रह किया है ? क्या हार जाने के कारण भूपालों ने बढ़े हुए बैर के कारण मौका पाकर उनको मार डाला है ? उनका प्रतिदिन भिक्षा लेकर आने का समय बीत चुका, अब कुछ विलम्ब हो गया है, पर आये नहीं। क्या शक्ति ऋषि के पुत्र (व्यास) का वचन व्यर्थ निकलनेवाला है, पर हैं तो वे सत्यवादियों में सबसे श्रेष्ठ। सत्यवती के पुत्र (व्यास) तत्त्वज्ञ हैं, इसमें सन्देह नहीं है। जब कुन्ती इस प्रकार तरह-तरह की बातें सोच रही थी, तब पार्थ (अर्जुन) और भीमसेन ने भार्गव-कर्मशाला में जाकर, कुन्ती की वन्दना करके 'आज हमको यह भिक्षा मिली है'—यह कहकर याज्ञसेनी (द्रौपदी) को सामने (प्रस्तुत) किया। कुन्ती जो भीतर थी, बिना देखे पुत्रों से बोली— १-८ 'उसे भोग लो'। तत्पश्चात् कन्या द्रौपदी को देखकर बोली—हाय् ! मैंने क्या कह दिया ! सच बोलनेवाली कुन्ती, अधर्म से डरनेवाली, लज्जा का अनुभव करती हुई फिर सोचने लगी। कन्या को सादर अपने हाथ में लिये अपने पुत्र युधिष्ठर से बोली—"राजा

नन्दनं युधिष्ठिरं वचनमुवाचेदं
सुन्दरी द्रुपदराजात्मजा कन्यकेयं । १२
त्वल् कनिष्ठाभ्यां मयि निःसृष्टा यथोचितं
तल्कथां निशम्य भुञ्जीध्वमित्युक्तं मया । १३
नानृतमुक्तं मयाप्यद्यैवं कथं भवेल्
मानवश्रेष्ठ ! ब्रवीहि द्रुपदजामिमां । १४
अधर्म्मो न चोपवर्त्तेत न भूतपूर्व्व-
स्स धर्म्मात्मजो विचिन्त्याशु मुहूर्त्तमात्रं । १५
मातरं समाश्वास्य भ्रातरं धनञ्जयं
सादरं बभाषे वाक्यं परमिदं तदा । १६
भवता जिता पार्त्थ ! द्रुपदात्मजा चेयं
भवता तोषिष्यति पावकः प्रज्ज्वाल्यतां । १७
हूयतामस्याः पाणिं विधिवल् गृहाण त्वं
भार्येयं तवैवेति श्रुत्वा पूर्व्वजवाक्यं । १८
जिष्णुरग्रजं प्रोवाचोक्तमयुक्तं वाक्यं
कृष्णेयं मया जिता चापि वा शृणु भवान् । १९
मा मा मामधर्म्मभाजं कृथाह्यधर्म्मोयं
भूमिपालेन्द्र ! भवान् प्रथमं प्रणिवेश्यः । २०

द्रुपद की पुत्री यह सुन्दरी कन्या तुम्हारे छोटे भाइयों ने यथोचित मेरे हाथ सौंप दी। उसका वृत्तान्त सुनकर मैंने--'उसे भोग लो'--कह दिया। मैंने कभी झूठ नहीं बोला है, अब क्या हो ? हे मानव-श्रेष्ठ ! कहो जैसे इस द्रुपद-पुत्री हर अधर्म न लग जाय। इसका पहले कभी अधर्म नहीं हुआ है। धर्मपुत्र ने थोड़ी देर सोचकर अपनी माता को आश्वासन दिया और भाई अर्जुन से सादर इस प्रकार कहा-- ९-१६ "हे पार्थ ! द्रौपदी को तुमने ही जीता है, तुमसे वह खुश रहेगी। आग जलाओ और हवन करो और विधिवत् इसका पाणिग्रहण करो। यह तुम्हारी ही पत्नी है।" अपने बड़े भाई की बात सुनकर अर्जुन ने कहा--"आप ने ठीक नहीं कहा है। यह द्रौपदी तो अवश्य मैंने ही जीती है, फिर भी मेरी बात सुनिए। आप मुझसे अधर्म न कराइए, यह अधर्म होगा। हे राजन् ! पहले आप का विवाह होना चाहिए, तदनन्तर बड़े भाई भीम का, तत्पश्चात् मेरा, तदनन्तर, माद्रीपुत्र नकुल और सहदेव का। यह सुन्दरी कन्या और हम सब आपके हैं। अब जो करना

तदनु वृकोदरः पूर्व्वजः पुनरहं
तदनु माद्रीसुतौ नकुलस्सहदेवौ ।
मदिरेक्षणाचेयं भवतस्सर्व्वे वयं । २१
यल् करणीयमत्रैवं गते भवानिह
तल् कुरु धर्म्म्यं यशश्यं विचार्यात्महितं । २२
यल् प्रियं भवेद् द्रुपदस्य राजेन्द्रस्य वा
तल् ब्रूहि सर्व्वे स्थितास्त्वद्वशे युधिष्ठिर ! । २३
द्रौपदीं दृष्ट्वा तत्र तिष्ठन्तीं शुचिस्मितां
भूपतिप्रवराणां पञ्चानां पाण्डवानां । २४
मन्मथः प्रादुरासीन्मानसे धैर्यात्मनां ।
सम्मथ्त्येन्द्रियग्रामं विहितं स्वयंभुवा । २५
तेषामिङ्गिताकारभावज्ञो युधिष्ठिरो
दोषज्ञो वेदव्यासवचनमनुस्मरन् । २६
अब्रवील् समेतान् भ्रातॄन्मिथो भेदभयात्
सुप्रियं सर्व्वेषां नो भार्येयं भविष्यति । २७
शोभितकळेबरा पाञ्चालनृपात्मजा
द्रौपदी मनोहरी सुन्दरी कृष्णा सती । २८
पूर्व्वजन् परञ्ञतु केट्टु सोदरन्मारु-
मेवमोन्ननुवदिच्चविटे वाळुंकालं । २९
देवकीसुतन् जगदीश्वरन् वासुदेवन्
रेवतीरमणनुमायुटनोळुन्तळिळ । ३०

उचित हो, धर्म हो, यशस्य हो, वह आप सोचकर करें। राजा द्रुपद को जो प्रिय हो, वह बतलाइए, हम सब आपके वश में हैं।" १७-२३ मुस्कराती हुई द्रौपदी को देखकर धैर्यवालों में श्रेष्ठ पाँचों पाण्डव भूपालों के हृदय में कामदेव जाग उठा। इन्द्रियों का निग्रह करने पर भी स्वयंभू (कामदेव) ने यही किया। उनके इङ्गित आकार और भाव समझकर दोषज्ञ युधिष्ठिर ने वेदव्यास के कथन को याद किया। तब भाइयों के आपस में भेद हो जाने के डर से बोले—"यह हम सबकी भार्या होगी, यही सर्वप्रिय होगा। यह पाञ्चालराज की पुत्री कृष्णा, शोभित अङ्ग-वाली है, मनोहरी है, सुन्दरी है और सती है।" बड़े भाई की बात सुनकर सभी भाई स्वीकृति प्रकट करके सुख से रहने लगे। उस अवसर पर देवकी के पुत्र जगदीश्वर वासुदेव अपने भाई रेवतीरमण (बलराम)

भार्ग्गव कर्म्मशालतन्निल् वाणीटुन्नोरु
भाग्यपूरुषन्मारां पाण्डवन्मारेक्कण्टु । ३१
ऐङ्ङनेयरिञ्ञवारेन्नितु युधिष्ठिर-
नङ्ङनेयरिवन् ञानेन्नितु मुकुन्दनुं ३२ ।
तङ्ङळिल् जतुगृहमोचनवृत्तान्तवुं
तिङ्ङिङन सन्तोषत्तोटन्योन्यं परञ्ञुटन् । ३३
कल्याणं मेलिल् वरेण्टुं प्रकारवुं पुन-
रेल्लारुं कूटिक्कण्टु परञ्ञुयात्रचोल्लि । ३४
वेगेन मुकुन्दनुं रामनुमेळुन्नळ्ळि
लोकपालन्मारोटु तुल्यरां पाण्डवरुं । ३५
भार्ग्गवनिकेतने वसिच्चारविटेयुं
मार्ग्गमाय् भिक्षयेटुकळिच्चु दिवसवुं । ३६
भार्ग्गवकर्म्मशालासन्निधौ चेन्नुनिन्नु
भाग्यवान् धृष्टद्युम्नन् रात्रियिलवरुटे । ३७
वाक्कु केट्टरिञ्ञितु पाण्डवन्मारेन्नुळ्ळल्
वाय्क्कमानन्दं पूण्टु तातनोटेल्लां चोन्नान् । ३८
पाञ्चाल नृपेन्द्रनुं तन्नुळ्ळलुण्टायोरु
चाञ्चल्यमकन्नानन्दाकुलनायानल्लो । ३९
अन्नेरमुपाध्यायन्तन्नेयङ्ङयच्चितु
मन्नवन् द्रुपदनुमरिवान् परमार्त्थं । ४०

के साथ पधारे। भार्गव-कर्मशाला में जो पाण्डव रहते थे, उन भाग्य-शालियों से उनकी भेंट हुई। २४-३१ युधिष्ठिर ने पूछा—कैसे मालूम हुआ—हम कौन हैं और कहाँ रहते हैं? मुकुन्द ने कहा—हमको ऐसे ही मालूम हो गया। फिर लाक्षागृह से कैसे निकल गये, इस विषय पर आपस में बड़े हर्ष के साथ बातचीत हुई। आगे विवाह किस प्रकार होगा, इस पर चर्चा हुई। अन्त में पाण्डवों से बिदा होकर कृष्ण और बलराम चले गये। लोकपालों के तुल्य पाण्डव भार्गव-निकेतन में निवास करने लगे और भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह करने लगे। ३२-३६ एक दिन भाग्यशाली धृष्टद्युम्न ने भार्गव-कर्मशाला के पास जाकर रात को उनकी बातचीत से मालूम कर लिया कि ये पाण्डव हैं। बहुत प्रसन्न होकर अपने पिता को सब बतला दिया। पाञ्चालराज को जो सन्देह था, वह नष्ट हो गया और वे बहुत आनन्दित हुए; और परमार्थ जानने

चेन्नु पाण्डवन्मारेक्कण्टोरु विप्रेन्द्रने
नन्नाय् पूजिच्चु भीमन् धर्म्मजनियोगत्ताल् । ४१
द्रुपदपुरोहितनाकिय भूदेवनु
नृपतिकुलवरनामजातारातियुं । ४२
अन्योन्यं वृत्तान्तङ्ङळ् परञ्ञु वसिक्कुन्पो-
ळन्यनायिरिप्पोरु पुरुषन् वन्नानल्लो । ४३
पिन्नेयुं पाञ्चाल भूपालकनियोगत्ताल्
कन्यार्त्थं द्रुपदनालुपसंस्कृतमायो-
रन्नवुं विवाहहेतोरपि वहिच्चवन् ४४
चोल्लिनान् निङ्ङळिनि वैकाते पोरणं पो-
लेल्लारुं कूटि राजाधानिक्कु मटियाते ४५
नल्ल तेरितु वसुधाधिपयोग्यमिनि-
क्कल्याणं कळिक्कणमेन्नवन् चोन्ननेरं ४६
पाराते पुरोहितन्तन्नेयुमयच्चिट्टु ।
वीरन्माराय पाण्डुराजनन्दनन्मारुं ४७
तेरतिल् करयेरि वेगत्तिल् नटकोण्टु
कारुण्यं पूण्टु कुन्तितन्नोटुं कृष्णयोटुं । ४८
धर्म्मजमतमेल्लामन्नेरं पुरोहितन्
सम्मोदं कलर्न्नवनीश्वरनोटु चोन्नान् । ४९
निर्व्याजं जिज्ञासया पाञ्चालन् बहुविधं
द्रव्यवुं दानं चेय्तान् पाण्डवन्माक्कर्य्क्कोण्टु । ५०

के लिए अपने उपाध्याय को भेजा। जब वह ब्राह्मण पाण्डवों से मिलने आये, तब युधिष्ठिर की आज्ञा से भीम ने उनका सत्कार किया। जब द्रुपद का पुरोहित ब्राह्मण और राजवर अजातशत्रु युधिष्ठर बैठकर आपस में बातचीत कर रहे थे, तब एक और पुरुष वहाँ आया। ३७-४३ वह भी पाञ्चालराजा की ही आज्ञा से कन्या के विवाह के हेतु द्रुपद का संस्कृत अन्न लेकर आया था। वह बोला—"अब बिना विलम्ब आप लोग आइए, सब मिलकर राजधानी चलिए, यह राजाओं के योग्य श्रेष्ठ रथ है; अब विवाह-संस्कार होना चाहिए।" यह सुनकर वीर पाण्डवों ने पुरोहित को शीघ्र भेज दिया, और प्रेम से कुन्ती और द्रौपदी के साथ रथ पर बैठकर चल पड़े। वहाँ पुरोहित ने युधिष्ठर का सारा अभिप्राय हर्ष के साथ राजा को बतला दिया। पाञ्चालराज ने पाण्डवों को अनेक प्रकार के

मत्तहस्तिकळ् मनोवेगमुळ्ळश्वङ्ङळुं
चित्रमां रथं कालाळ् दासिकळ् दासन्मारुं । ५१
आसनशयनयानङ्ङळुं वर्म्मङ्ङळ् बा-
णासनङ्ङळुं चर्म्मनिकरं खड्गङ्ङळुं । ५२
अस्त्रशस्त्रङ्ङळ् फलमूलङ्ङळ् माल्यङ्ङळुं
वस्त्रङ्ङळ् नल्लनल्ल पाट्टुक पादुकङ्ङळ् । ५३
वॆण्कॊट्टक्कुट तळ वॆण्चमरिकळ् नल्ल-
कुङ्कुममलयज कस्तूरि कळभवुं । ५४
कॊटिकळ् नल्ल कॊटिक्कूरकळ् वाद्यङ्ङळुं
कुटकळालवट्टं दर्प्पणं चॊट्टकळुं । ५५
मुत्तुमालकळ् मुत्तुक्कॊटिकळ् मुत्तुक्कुट
मुग्द्धङ्ङळाय मेलाप्पुकळुं तिरकळुं ५६
आभरणङ्ङळ् किरीटादिकळ् पलतर-
मापादचूडमणिञ्ञीटुवानुळ्ळवयुं । ५७
आभतेटीटुं कुप्पायङ्ङळुं तॊप्पिकळु-
माभोगमार्न्न पॊन्निन् पात्रङ्ङळ् पशुक्कळुं । ५८
धनधान्यङ्ङळॆल्लामवधियिल्लातोळं
मनसि कनिवोटु कॊटुत्तु पाञ्चालनुं । ५९
ऎल्लामे परिग्रहिच्चानन्दमियन्नुट-
नुल्लासमोटु कुन्तीदेवियुमतुनेरं ६०

द्रव्य दिये । ४४-५० मत्त हाथी, मनोवेगवाले घोड़े, देखने-योग्य रथ, पैदल सैनिक, दास-दासियाँ, आसन, शयन, यान, कवच, धनुष, अनेक चर्म और खड्ग, अस्त्र-शस्त्र, फल और मूल, मालाएँ, कपड़े, अच्छे-अच्छे रेशमी वस्त्र, पादुकाएँ, चाँदी के दण्डवाले छत्र, सफ़ेद-चँवर अच्छे-अच्छे कुङ्कुम, चन्दन, कस्तूरी, आठों सुगन्ध-द्रव्य, झण्डे, झण्डे के कपड़े, बाजे, छत्र, मोरपंख के पंखे, दर्पण, तलवार, मोती के हार, मोती के झण्डे, मोती की लकड़ीवाले (मोती से जुड़ा हुआ छत्रदण्ड) छत्र, सुन्दर शामियाने और परदे, अनेक प्रकार के आभूषण और किरीट, सिर से पैर तक पहनने के सामान, सुन्दर कोट और टोपियाँ, ऐश्वर्य व्यक्त करनेवाले सोने के बरतन और पशु तथा निस्सीम धन एवं धान्य—यह सब पाञ्चालराज ने प्रेम से दिये । ५१-५९ उस समय आनन्द से (ये) सब स्वीकार करके बड़े उल्लास के साथ पुष्कर-दल के समान विलोल आँखवाली द्रौपदी को लेकर कुन्ती ने हर्ष से अन्तःपुर में प्रवेश

पुष्करदलाविलोलाक्षियां कृष्णयोटुं
पुक्कितङ्ङन्तः पुरत्तिङ्कलाम्मारु मोदाल् । ६१
सर्व्वलक्षणयुक्तन्माराय पाण्डवरें-
द्दिव्यवेषत्तोटु कण्टीटिन जनमेल्ला- ६२
मल्भुतं पूण्टु निन्नार् निश्चलन्माराय् तत्र
कल्पित सभास्थपीठासने यथा पुरा । ६३
इरुन्नार् पिन्नें स्नानं कळिच्चु वळिपोलें
विरुन्नुं परिग्रहिच्चशनं कळिञ्ञप्पोळ् । ६४
दृक्परमानन्दरूपन्मारामिवरोरो
दिक्पालकन्मारो गन्धर्व्वन्मार् सिद्धन्मारो । ६५
निर्म्मलन्मारां दिव्यन्मारेंक्काणाय्वन्नतुं
नम्मुटे भाग्यमेन्न चोंल्लिनारेल्लावरुं । ६६
द्रौपदितन्नेप्पोलें नालुपुत्रिकळिन्नुं
भूपालनुण्टाय् वरुन्नाकिलेन्तोरु भाग्यं । ६७
द्रौपदिक्कनुरूपन्मारिवरञ्चुपेरुं
रूपलावण्यादिकोंण्टितिन्नु वृथाभवं । ६८
चोदिच्चु पाञ्चालनुं निङ्ङळारेन्नु नेरे
वोधिप्पिच्चीटवेणं ञङ्ङळेयिनियिप्पोळ् । ६९
ऍङ्किलो केट्टुकोंळ्क चोंल्लीटां परमार्त्थं
शङ्कयेंक्कळञ्ञालुमेन्नु धर्म्मजन् चोंन्नान् । ७०

किया। सभी लक्षणों से सम्पन्न पाण्डवों को दिव्य वस्त्र पहनते हुए देखकर सभी लोग आश्चर्य चकित हुए और निश्चल खड़े हुए। तत्पश्चात् पाण्डव, सभा में सजे पीठासन पर पहले की तरह बैठे। फिर स्नान करके आतिथ्य स्वीकार करने के बाद भोजन किया। देखने में आनन्द देनेवाले ये कौन हैं ? क्या दिक्पाल हैं, या गन्धर्व या सिद्ध ? सबने कहा कि यह हमारा भाग्य है कि हमको ये निर्मल दिव्य पुरुष देखने को मिले। ६०-६६ अगर राजा की द्रौपदी के समान चार और पुत्रियाँ हो जायँ तो कितनी सौभाग्य की बात होगी ! ये पाँचों द्रौपदी के अनुरूप हैं रूप और लावण्य में पाञ्चालराज ने पूछा—"आप लोग कौन हैं ? हम लोगों को सच बतलाइए।" युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—"सुन लीजिए ! मैं परमार्थ कह दूँगा। आप शङ्का न करें। हम पाँचों का चन्द्रवंश के पुरु की परम्परा में पाण्डुपुत्र के रूप में जन्म हुआ। मैं ही ज्येष्ठ हूँ, मेरे

चन्द्रवंशत्तिल् वन्नु पौरवन्माराय् पाण्डु-
नन्दनन्माराय् ञङ्ङळैवरुमुण्टाय्वन्नु । ७१
अग्रजनायतु ञान् भीमसेननुं पिन्ने-
प्फल्गुननाय पाकशासनपुत्रनिवन् । ७२
नकुलन्तानुं सहदेवनुं माद्रीपुत्र-
रखिलगुणनिधे! सत्यमॆन्नरिञ्ञालुं । ७३
धर्म्मजवाक्कुकेट्टु सन्तोषत्तोटुकूटॆ
निर्म्मलन् पाञ्चालनुं चॊल्लिनानतिन्शेषं । ७४
यन्त्रवुं मुरिच्चु भूपन्मारॆज्जयिच्चोरु
कुन्तीनन्दननाय फल्गुननिनियिप्पोळ् ७५
ऎन्मकळुटॆ पाणिग्रहणं कळिक्केण-
मॆन्मनोरथं परिपूर्ण्णमाय्वन्नितॆन्नाल् । ७६
अक्कथ केट्टु धर्म्मनन्दननुरचॆय्ता-
नग्रजन्माराय् ञङ्ङळिरुवरिरिक्कवे ७७
फल्गुनन् विवाहं चॆय्कॆन्नतुमरुतल्लो
सल्गुणनिधे! मुन्पिल् ञान् वेळ्क्कॆन्नतेवरू । ७८
चिन्तिच्चु पाञ्चालनुमन्नेरमुरचॆय्तु
सन्तोषमितिलपरमिल्लॆङ्क्लिनिक्कॆटो । ७९
मन्दहासवुं चॆय्तु धर्म्मजन् चॊन्नानप्पोळ्
सुन्दरियाय तव कन्यकतन्नॆ ञङ्ङ- ८०

बाद यह भीमसेन, तदनन्तर यह इन्द्रपुत्र फल्गुन (अर्जुन) हैं। नकुल और सहदेव माद्री के पुत्र हैं। हे सकलगुणनिधे! यही सत्य है।" युधिष्ठिर की बात सुनकर प्रसन्नता के साथ निर्मल पाञ्चालराज ने कहा—"हम चाहते हैं कि जिन फल्गुन ने यन्त्र को तोड़ा और राजाओं को पराजित किया, वे हमारी पुत्री का पाणिग्रहण करें। तभी तो हमारा मनोरथ पूरा होगा।" ६७-७६ यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा—"आप जानते ही हैं कि हम दोनों बड़े भाइयों के अविवाहित रहते अर्जुन का विवाह करना अनुचित होगा। हे सद्गुणों के निधि! मैं पहले विवाह करूँगा।" तब पाञ्चालराज ने सोचकर कहा—"इससे बढ़कर मेरे हर्ष का कारण और कुछ नहीं हो सकता।" तब युधिष्ठिर ने मुस्कराकर कहा—"हम पाँचों मिलकर आपकी सुन्दरी पुत्री के साथ विवाह करेंगे, यही हो सकता है। ईश्वर की इच्छा को कोई रोक नहीं सकता।" (तब पाञ्चाल-

ळैवरुं कूटि विवाहं चेय्कॆन्नतेवरू
दैवकल्पितमाक्कुं तटुक्कावॊन्नुमल्ल । ८१
कष्टमाहन्त कष्टं ! ञानतु केट्टिट्टिल्ल
दृष्टमायिट्टुमिल्लॆन्नालतु धर्म्ममल्ल । ८२
निश्चयं दैवलोकविरुद्धमितु पार्त्तालु्
दुश्चरित्रङ्ङळ् निङ्ङळ्क्कलिव तोन्नीटेण्टू । ८३
ऒरुत्तननेकं भार्याक्कळॆयुण्टाक्कीटा-
मॊरुत्तिक्कनेकं भर्त्ताक्कन्माररुतल्लो । ८४
वेदत्तिल् विधिच्चतुतन्नॆयल्लॆन्नाकिलुं
लोकर्क्कुं केट्टाल् मतमायिरिक्केणमल्लो । ८५
वेदत्तिन् विधियल्ल लोकर्क्कु मतमल्ल
पातित्यं वरुमॆन्नाल् नरकमतुमुण्टां । ८६
धन्यनां धर्म्मात्मजनन्नेरमुरचेय्तान्
मन्नव ! देवलोकविरुद्धमॆन्नाकिलुं । ८७
सूक्ष्मधर्म्मत्तॆप्पार्त्तु ञानिव परञ्ञतु
भोष्कल्ल धर्म्मेतरबुद्धियुमिनिक्किल्ल । ८८
माताविन्मतमितु दैवसङ्कल्पं तानुं
चेतसि मम हितमाकयुमुण्टितॆन्नाल् । ८९
धर्म्ममल्लॆन्नु वरा निर्णयमॆन्नुतन्ने
धर्म्मजन् चॊन्ननेरं द्रुपदन्तानुं चॊन्नान् । ९०

राज ने कहा—) "हा ! कष्ट ! हन्त कष्ट ! यह मैंने कभी न सुना है और न कहीं देखा है। और यह धर्म नहीं है। ७७-८२ निश्चय ही यह ईश्वरविरुद्ध और लोकविरुद्ध है, ऐसे दुश्चरित्र आप जैसे लोगों को कैसे सूझे ? एक पुरुष की अनेक पत्नियाँ हो सकती हैं पर एक स्त्री के अनेक पति नहीं हो सकते हैं। कोई बात अगर वेदविहित नहीं है तो कम से कम लोकसम्मत तो होनी चाहिए। यह तो न वेदविहित है और न लोकसम्मत है। इससे हम पतित हो जायेंगे और नरक जाने की नौबत आवेगी।" यह सुनकर धन्य युधिष्ठिर ने कहा—हे भूपाल ! मैं मानता हूँ कि यह वेदविरुद्ध और लोकविरुद्ध है, परन्तु मैंने सूक्ष्म धर्म का ध्यान रखते हुए यह कहा है। यह तुच्छ बात नहीं है, अधर्म की बात मैं कभी नहीं कहता। यह हमारी माता की सम्मति है, दैवसङ्कल्प के समान है, मेरे अभिप्राय में यह हितकर निकलेगा। निश्चय ही यह अधर्म न सिद्ध

कुन्तियुं नीयुं मम धृष्टद्युम्ननुं कूटि-
च्चिन्तिच्चिट्टिनि नाळेक्कलिपक्कामेन्नेवेण्टू । ९१
पिट्टन्नाळेल्लावरुमोन्निच्चु विचारिप्पा-
नुट्बन्धुक्कळुमाय् वसिच्चीटिननेरं । ९२
वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळिनान् यदृच्छया
सादरं मुनि तन्नेप्पूजिच्चारवर्कळुं । ९३
काञ्चनासने मरुवीटिन मुनियोटु
पाञ्चालनृपतियुं तोळुतु चोल्लीटिनान् । ९४
ओरु नारियेप्पलर्कूटि वेळ्क्कोन्नुळ्ळति-
ल्लोरुकालत्तुमोरुदिक्किलुमोरुवक्कुं । ९५
इन्निप्पोळ् पाण्डवन्मारैवरुं कूटि मम
कन्यकतन्नें वेळ्प्पान् भाविक्कुन्नतुमामो ? ९६
निन्तिरुवटियरुळ्चेय्यणं विचारिच्चु
सन्तापमतुकोण्टु पारमुण्टेन्नु नृपन् । ९७
चोन्नतु केट्टनेरं मुनियुमरुळ् चेय्तु
निन्नुटे कुट्मलल धर्म्ममल्लेन्नु तोन्नुं । ९८
भूपतियुटे कैयुंपिटिच्चु मुनिवरन्
शोभतेटीटुं मणियरयिलकंपुक्कु । ९९

होगा।'' युधिष्ठिर की यह बात सुनकर राजा द्रुपद ने उत्तर दिया—''कुन्ती, आप और मेरे पुत्र धृष्टद्युम्न इस पर साथ विचार करें। निर्णय कल होगा।'' ८३-९१ दूसरे दिन जब वे साथ विचार करने के लिए निकट के बन्धुओं के साथ बैठे, तब संयोग से वेदव्यासजी पधारे और सबने उनका सादर सत्कार किया। तदनन्तर पाञ्चालराज ने सोने के आसन पर बैठे हुए मुनिजी की वन्दना करके कहा—''अनेक पुरुषों का मिलकर एक स्त्री के साथ विवाह करना, यह कभी, कहीं, किसी भी वर्ग में नहीं देखा गया है। आज ये पाँचों पाण्डव मिलकर मेरी कन्या के साथ विवाह करने के लिए सोच रहे हैं। क्या यह ठीक है ? आप सोचकर कृपया बतला दीजिए, क्योंकि इस विषय में मुझे बड़ा दुःख हो रहा है।'' यह सुनकर मुनि ने कहा—''यह तुम्हारा दोष नहीं है कि यह तुम्हें अधर्म लगता है।'' तत्पश्चात् राजा का हाथ पकड़कर मुनिजी ने एक भीतर अलंकृत कमरे में प्रवेश किया। ९२-९९

पाञ्चालियुटे पूर्व्वजन्मवृत्तान्तं

रहस्यमायुळ्ळॊरु धर्म्मं ञान् चॊल्लुन्नुण्टु
महत्वमेरुं भवान् केट्टुकॊळ्ळुकवेणं । १
निन्नुटे मकळिवळ्तन्नुटे पूर्व्वजन्मं
निन्नोटु चॊल्लां महीवल्लभतिलकमे । २
भोष्कल्ल नाळायणियॆन्नु पेरिवळ्क्कन्नु
मौल्गल्यनॆन्नु नामं भर्त्ताविन्नरिञ्ञालुं । ३
अॆत्रयुं वृद्धन् कोपशीलनाकयुमुण्टु
भर्त्तव्यनल्ल तोलुं ञान्नुकॊण्टॆल्लुं पॊङ्ङि । ४
कष्टं कॊण्टॊक्क मुरटिक्किटक्कुन्नु देहं
निष्ठुरमाय वाक्कुमट्टमिल्लातॆयुण्टु । ५
जरयुं नरयुमिल्लीवण्णमाक्कुं मट्टु
कुरयुं पारमुण्टु कृमिपीडयुमुण्टु । ६
दुर्ग्गन्धमेरुकयालटुत्तु चॆन्नुकूटा
निर्ग्गुणरूपशीलयुक्तनां विप्रन् सदा । ७
वर्त्तिक्कुं कालमॊरु दिवसमुण्णुन्नेरं
भुक्तत्तिलंगुष्ठवुं मुरिञ्ञुवीणु बलाल् । ८
कुष्ठितानुण्टशेषं चॊरतिल् किटन्नोरं-
गुष्ठवुं कळञ्ञुपजीविच्चाळ् पतिशेषं । ९

पाञ्चाली के पूर्वजन्म की कथा

(मुनि ने कहा) मैं एक महत्त्वपूर्ण रहस्य बतला रहा हूँ, आप सुनने की कृपा करें। हे भूपालों में श्रेष्ठ! मैं तुम्हारी इस पुत्री के पूर्वजन्म का वर्णन करूँगा। यह जल्प (गप्प) नहीं है। उस समय इसका नाम था—नालायणि और इसके पति का नाम था—मौद्गल्य। वह अत्यन्त वृद्ध था और बहुत ही कोपशील। उसका चर्म लटक रहा था और हड्डियाँ उठी हुई थीं, उसका पालन कठिन था, उसका शरीर कष्ट सहने के कारण सूख गया था। उसकी निठुर-निठुर बातों की सीमा न थी, इतने अधिक बुढ़ापे के चिह्न और किसी के न थे। ऊपर से वह बहुत खाँसता था और उसको कीड़ों की बीमारी भी थी। दुर्गन्ध के कारण उसके पास जाना असंभव था। वह एक रूपहीन और शीलहीन ब्राह्मण था। १-७
जब वह इस प्रकार रहता था, तब एक दिन खाने के समय उसका अंगूठा

शङ्कूटातॆयतुमुण्टवळॊ्ुनेट्टु
तन्कळ्ळल् तलोट्टुवान् चॆन्नुनिल्कुन्ननेरं । १०
भार्ययोटरुळ्चॆय्तु मौल्गल्यन् पतिव्रत-
माराय नारिमारिल् निन्नोळं नन्नल्लारुं । ११
ॲन्तॊरु वरं निनक्किच्छयॆन्नुरचॆय्ता-
लन्तरमेतुमिल्ल तरुवनिप्पोळ्त्तन्नॆ । १२
वृद्धनुं कट्टुकनुमीर्ष्यनुं लोलुपनुं
क्रुद्धनुं दुर्गन्धियुमल्ल ञानॆन्टो बाले ! । १३
ॲङ्ङनॆ रमिक्केण्टू निनक्कॆन्नतु चॊन्ना-
लङ्ङनॆ रमिप्पिप्पनिल्ल संशयमेतुं । १४
कल्याणशीले ! मनोवल्लभे ! नाळायणी !
फुल्लपङ्कजमुखि ! चॊल्लुनिन् मनोरथं । १५
भर्तृवाक्यङ्ङळ् मुहुरित्तरं केट्टनेर-
मुत्तमशीलतानुमुत्तरमुरचॆय्ताळ् । १६
पञ्चधा विभक्तात्मा रमय त्वं मां भवान्
पञ्चसायकसमरूप लावण्यसिन्धो ! । १७
मौल्गल्यनतु केट्टु कामरूपवुं पूण्टु
भार्ग्गवितनिक्कुनेराकिय पत्नियोटुं । १८
आश्रमङ्ङळिल् तपोधनरायनुभवि-
च्चाश्चर्यमवळ्क्कु चेर्त्तानन्दिप्पिच्चु नन्नाय् । १९

टूटकर खाने में गिर गया। कोढ़ी के खाने के बाद उसकी स्त्री ने भात में पड़े अंगूठे को निकाल फेंककर शेष बिना हिचक के खा लिया। खाने के बाद उठी और पति के पैर दबाने के लिए उसके पास गयी। पति मौद्गल्य ने कहा--पतिव्रता स्त्रियों में तुम्हारे समान कोई भी नहीं। मुझसे क्या वर चाहती हो, यह बतलाओ और मैं तुम्हें तुरन्त ही दे दूँगा। मैं वृद्ध, कड़ुआ, ईर्ष्यालु, लालची, क्रुद्ध और दुर्गन्धी नहीं हूँ। कहो किस प्रकार रमना चाहती हो, उसी प्रकार तुमको भोग-विलास करा दूँगा, इसमें सन्देह नहीं। हे कल्याणशीले! विकसित कमल के समान मुखवाली! मेरी प्यारी नालायणि! अपनी इच्छा बतलाओ। ८-१५ पति की यह बात बार-बार सुनकर उत्तम शीलवाली पत्नी ने इस प्रकार उत्तर दिया—"हे कामदेव के समान रूप और लावण्यवाले! अपने को पाँच भागों में बाँटकर मुझसे रमो।" यह सुनकर मौद्गल्य कामदेव के समान रूप धारण करके लक्ष्मी के समान अपनी पत्नी के साथ अनेक आश्रमों में तपोधन बनकर

त्रिदशालयं प्रापिच्चमृताहारं चेय्तु
मदनरसंपूण्टु सुखिच्चु मरुविनान् । २०
पौलोमियालुं पूज्यमाननाय् तत्र चिर-
कालं सञ्चरिक्कुंनाळिन्द्रसेनया साकं । २१
आदितेयेन्द्रगृहं प्रापिच्चु रमिप्पिच्चा-
नादित्यरथं परमारुह्य दिवं पिन्नें ।
मोदत्तोटिरुन्नितु मेरुविङ्कलुमन्ना- २२
ळाकाशगंगां द्रुतमाप्लुत्य तया सह
स्वाकांक्षासमं परमानन्दिप्पिच्चु नन्नाय् । २३
चन्द्ररश्मिकळ्मद्ध्ये वसिच्चु पुनरथ ।
मन्दमारुतवेषं कैक्कोण्टु चिरकाल- २४
मद्रियाय् चमञ्ञितु मौल्गल्यन् नाळायणि
तत्र निम्नगयायि रमिच्चु चिरकालं । २५
पुष्पितसालरूपं पूण्टितु मौल्गल्यनु-
मप्पोंळ् लतारूपं पूण्टु वेष्टिच्चाळवळ् । २६
यातोंरु रूपं कैक्कोंळ्ळुन्नितु मौल्गल्यनुं ।
तादृशियाय् वन्नीटुमन्नु नाळायणियुं । २७

रहे और अपनी पत्नी को आश्चर्य और आनन्द का अनुभव कराया। तदनन्तर वह देवलोक पहुँचा और वहाँ अमृत खाकर कामदेव के वश में आकर दोनों सुख से रहे। वहाँ पौलोमी ने उनका आदर-सत्कार किया। बहुत दिन तक इन्द्रसेना (नालायणि का दूसरा नाम) के साथ वहाँ घूमते रहे। १६-२१ तदनन्तर देवों के राजा इन्द्र के निवास-स्थान में पहुँचकर वहाँ भी रमे। सूर्य के रथ पर बैठकर द्युलोक पहुँचे और बड़े हर्ष के साथ मेरु पर्वत पर बैठे। तदनन्तर अपनी पत्नी के साथ आकाश-गंगा में नहाया, और उसकी इच्छा के अनुसार उसे आनन्द का अनुभव कराया। उसके बाद चन्द्र की किरणों के बीच में निवास किया। मन्द मारुत का वेश बहुत दिन तक धारण करने के बाद मौद्गल्य एक पर्वत हुआ और नालयणि वहाँ एक नदी बनकर बहुत दिन तक सुख से रही। तदनन्तर मौद्गल्य एक फूलों से भरा शाल का पेड़ हुआ तो उसकी पत्नी लता का रूप धारण करके उससे लिपट गयी। मौद्गल्य ने जो रूप धारण किया नालायणि ने भी उसी के तुल्य रूप धारण किया। २२-२७ वही नालायणि आज निस्सन्देह तुम्हारी पुत्री है।

इन्निप्पोळ् निन्टे मकळायतुमवळ्तन्नॆ ।
निर्णयमॆन्नु कृष्णनरुळ्चॆय्ततुनेरं २८
ऒन्नुटॆ मकळाय् वन्नीटुवानॆन्तु मूल-
मॆन्नतुमिनियरुळ् चॆय्यणमॆन्नीवण्णं २९
चोदिच्च पाञ्चालनोटन्नेरं वेदव्यासन्
कौतुकं पूण्टु केट्टुकॊळ्ळुकॆन्नरुळ् चॆय्तु । ३०
चॊल्लॆळुमिन्द्रसेनयाकिय नाळायणि
वल्लभनाय मौल्गल्यन्तन्नॆ शुश्रूषिच्चु । ३१
पलनाळ् कळिञ्ञतु दिव्यभोगङ्ङळोटु-
मलसापांगितन्नेशमिप्पिच्चनारतं । ३२
विरक्तिवन्नु कामभोगसौख्यङ्ङळेयुं
परित्यागवुं चॆय्तु कोप्पिट्टु तपस्सिन्नाय् । ३३
अन्नेरं नाळायणि मौल्गल्यनोटु चॊन्ना-
ळॆन्नॆ नी वॆटियातॆ भर्त्तावियॆनिक्कुळ्ळिल् । ३४
तृप्ति वन्नीला कामभोगत्तिनतिनाल् स-
न्तप्तयाय् चमञ्ञतु ञानॆन्नु केट्टनेरं । ३५
मौल्गल्यनरुळ्चॆय्तु शङ्ककूटातॆयॆन्नो-
राग्रहंकॊण्टु चॊन्नाळॆन्तिप्पोळवक्तव्यं ? । ३६
मत्तपोविघ्नं चॆय्वान् कामसायकमेट्टु
मत्तयाय् चमञ्ञ नी भूमियिल् पिरक्क पोय् । ३७

जब कृष्णद्वैपायन ने इस प्रकार कहा, तब राजा ने पूछा—'मेरी पुत्री होने का क्या कारण है,' यह भी कृपया बतला दीजिए। इस प्रकार प्रश्न करनेवाले पाञ्चालराज से वेदव्यासजी ने कहा—'अच्छा, तो वह भी सुन लीजिए। विख्यात इन्द्रसेना नालायणि ने अपने प्यारे पति की शुश्रूषा (सेवा) की। मौद्गल्य ने उससे बहुत दिनों तक क्रीडाएँ करके उसको दिव्य भोगों का आनन्द दिया। अन्त में मौद्गल्य विरक्त हो गया और कामभोग का त्याग करके वह तपस्या करने की तैयारियाँ करने लगा। २८-३३ तब नालायणि ने मौद्गल्य से कहा—"पतिदेव ! मुझे न छोड़ दीजिए, अभी तो मेरी कामभोगों से तृप्ति नहीं हुई। इसलिए मैं काम की अग्नि से भीतर जल रही हूँ।" यह सुनकर मौद्गल्य ने कहा—"तुमने क्यों निश्शङ्क होकर काम के कारण मुझसे यह अनुचित बात कहीं ?" मेरे तप का विघ्न पैदा करने के लिए कामान्ध हो गयी

पार्त्थिवनन्दनयाय्क्कामभोगङ्ङळेल्ला-
मास्थतीर्न्नीट्टुवोळं भुजिक्क यथासुखं । ३८
द्रुपदनृपतितन्मकळाय् तत्र तव
नृपतिवीरन्मारायञ्चु भर्त्ताक्कन्मारुं । ३९
उण्टाकेन्नरुळ्चेय्तु मौलगल्यमहामुनि
वण्टार् पूङ्कुळलाळुं तपसे वनं पुक्काळ् । ४०
तण्टलर्बाणवैरि चन्द्रशेखरन् नील-
कण्ठनु प्रत्यक्षनायरुळिच्चेय्तीटिनान् । ४१
भूमियिलोरु नृपश्रेष्ठनु मकळायि
कोमळरूपिणियाय्पिरक्क नीयुं बाले ! ४२
भर्त्ताक्कन्मारुं निनक्कञ्चुपेरुण्टाय्वरि-
कुत्तमन्मारायेट्मुत्तमगुणशीले ! ४३
देवकार्यवुं साधिप्पिक्क नीयेन्नीवण्णं
देवदेवेशनरुळ्चेय्ततु केट्टनेरं । ४४
पञ्चभर्त्ताक्कळोरु नारिक्कुण्टामो नाथ
पञ्चबाणारेयतु धर्म्ममल्लेन्नु केळ्प्पू । ४५
वामदेवनु चिरिच्चरुळिच्चेय्तीटिनान् ।
वामलोचने ! केळ्क्क कारणमतिन्नु नी । ४६
भर्त्तारं देहीति भूयो भूयो भूयो मुदा
सत्वरमत्याग्रहालञ्चुरु प्रार्त्थिक्कयाल् । ४७

हो, इसलिए पृथ्वी पर जाकर जन्मो। एक राजपुत्री होकर तृप्ति होने तक सभी कामभोगों का यथेष्ट अनुभव करो। राजा द्रुपद की पुत्री हो जाओ और वहाँ पाँच भूपालवीर तुम्हारे पति हो जायँ।" ३४-३९ महामुनि मौद्गल्य ने जब इस प्रकार कहा, तब भवँर की तरह काले-काले केशवाली (नालायणि) तप करने बन चली गयी। कामदेव के शत्रु चन्द्रशेखर, नीलकण्ठ, शिवजी प्रत्यक्ष हुए और बोले। "हे बाले! तुम पृथ्वी पर एक नृपश्रेष्ठ की कोमलरूपवाली पुत्री के रूप में जन्म लो। और हे उत्तम गुणवाली! तुम्हारे उत्तम गुणवाले पाँच पति भी हों। तुम देवों का कार्य सिद्ध करो।" देवदेवेश (शिव) की यह बात सुनकर उसने कहा "हे नाथ! एक स्त्री के पाँच पति कैसे हो सकते हैं? ४०-४५ तब वामदेव (शिवजी) ने हँसकर कहा—"हे सुन्दरि! इसका कारण सुन लो। तुमने जो पाँच बार बड़े संभ्रम के साथ 'पति दो' 'पति

भर्त्ताक्कन्मारञ्चु पेरुण्टावानवकाशं
भद्रे वन्नीटुमतिनेतुमे दोषमिल्ल । ४८
चॊल्लिनाळ् नाळायणि शङ्करन्तन्नोटप्पो-
ळिल्लल्लो विधियतु वेदत्तिलॆन्नु केळ्प्पू । ४९
ऒरुत्तिक्कॊरु भर्त्तावॊळ्ळिञ्ञु विधिच्चति-
ल्लॊरुत्तन्ननेकं नारिकळॆक्कॊळ्ळांतानुं । ५०
वामलोचनमार्क्कु केवलमॊरु वरन्
कौमारमायिट्टुळ्ळ लौकिकमॆन्नाकुन्नु । ५१
पुत्रार्थं भर्तृ नियोगत्तालापदि कॊळ्ळा-
मन्ने मट्टॊरुत्तनॆ केवलमुल्पादिप्पान् । ५२
मून्नामतॊरुत्तनॆ प्रापिच्चाल् प्रायश्चित्तं
मान्यन्मार् विधिच्चवण्णं चॆय्ते मतियावू । ५३
नालामतॊरुवनॆ प्रापिच्चाल् पतितयां
नीलवेणिकळॆन्नु निर्ण्णयमरिञ्ञालुं । ५४
वन्धकियाय् वन्नीटुमञ्चामतॊरुवनॆ
चिन्तिक्किलन्नॆल्लामुण्टॆन्नु केट्टिरिप्पु ञान् । ५५
आकयालनेकं भर्त्ताक्कन्मारुण्टाकेण्टा
लौकिकमल्ला नूनं वैदिकमतुमल्ल । ५६

दो' की प्रार्थना को दोहराया[1], इसलिए तुम्हारे पाँच पति होंगे, इसमें कोई दोष नहीं है। तब नालायणि ने शिवजी से कहा--"सुना है कि वेदों में ऐसी कोई विधि नहीं है। स्त्री के लिए एक ही पति विहित है, पुरुष को तो अनेक स्त्रियाँ हो सकती हैं। महिला के लिए एक ही जवान पति लोक में माना गया है। ४६-५१ सुना है कि संकट के समय, पति के नियोग से केवल पुत्रोत्पत्ति के लिए दूसरे से संबन्ध हो सकता है। अगर किसी तीसरे पुरुष से सम्बन्ध हो जाय तो पाप समझा जाता है और विहित प्रायश्चित करना अनिवार्य है। स्त्री अगर एक चौथे पुरुष को ग्रहण कर ले तो निस्सन्देह पतित हो जाती है। पाँचवें पुरुष को केवल सोचने पर ही स्त्री वेश्या हो जाती है। यह सब नियम मैंने सुन रखा है। इसलिए अनेक पति होना ही न चाहिए, वह न लोकसम्मत है और न वेदसम्मत। मैंने यह भी सुना है कि इससे सङ्कर का दोष हो जायगा।" उस पर शिवजी ने नालायणि से कहा—

१ यह द्रौपदी के पूर्वजन्म में हुआ था।

सङ्करदोषमिनिक्कुण्टाकॆन्नतु केट्टु
शङ्करन् नाळायणियोटरुळ्चॆय्तीटिनान् । ५७
पण्टु नारिकळनावृतमारत्रे निन-
क्कुण्टाकयिल्ल दोषमतिनालॊन्नुकॊण्टुं । ५८
ऎङ्किलुमिनिक्कञ्चु भर्त्ताक्कन्मारुण्टायाल्
संगमे पुनरपि कौमारं भविक्कणं । ५९
भर्त्तृशुश्रूषकॊण्टु सिद्धियॆ प्रापिच्चेन् ञा-
नॆत्तॆणमिनिक्किनिस्सिद्धियुमितिनाले । ६०
सिद्धियुं रतियुं केळन्योन्यं भविक्कयि-
ल्लुत्तमे सिद्धि लभिच्चीटा दुर्भगयाकिल् । ६१
सिद्धिक्कुं रतिगुणं सुभगय्क्कॆन्नु नूनं
सिद्धिक्कुं विरोधमिल्लेतुमे निनक्कॆटो । ६२
कौमारमञ्चु भर्त्ताक्कन्मारॆक्कॊण्टु प्रापि-
च्चामोदं पूण्टु महाभागयाय् भविक्क नी । ६३
चॆन्नु नी गंगाजलंतन्निल् निल्क्कॆन्नाल् काणा-
य्वन्नीटुमॊरु पुमान्तन्नॆयॆन्नरिञ्ञालुं । ६४
विण्णवर् नाथनवनाकुन्नतवने नी-
यॆन्नुटॆ मुन्पिल् कॊण्टुवन्नीटु मटियातॆ । ६५
अन्नेरं प्रदक्षिणंचॆय्तु वन्दिच्चु पोयि
कन्यकतानुं गंगतन्नॆ प्रापिच्चाळल्लो । ६६

"पूर्वकाल में स्त्रियाँ बिलकुल स्वतन्त्र थीं। इस विवाह से तुम्हारी कोई हानि न होगी।" ५२-५८ "फिर भी मुझे अगर पाँच पति होने हैं। (तो) ऐसा कीजिए कि संगम के बाद भी मेरा कौमार्य सुरक्षित रहे मैंने पति की सेवा करके ही सिद्धि प्राप्त कर ली है, यह करने के बाद भी मैं सिद्धि प्राप्त करना चाहती हूँ।" (शिवजी ने कहा) "हे महिलोत्तम! सुनो। सिद्धि और रति दोनों मेल नहीं खा सकती हैं। जो दुर्भगा (भाग्यहीना) है उसको सिद्धि प्राप्त न होगी। जो सुभगा (भाग्यवती) है, उसके लिए रतिगुण तो होगा ही। तुम सिद्धि भी अवश्य प्राप्त करोगी। पाँच पतियों के होते हुए भी तुम कौमार्य-सहित रहो और बड़े प्रमोद के साथ सौभाग्यवती हो जाओ। अब चलो और गंगा के जल में खड़ी हो जाओ। तब तुम्हें एक पुरुष दिखायी देगा। वह देवों का अधिपति ही होगा, उसे मेरे सामने अविलम्ब ले आओ।" यह सुनकर कन्या शिवजी की प्रदक्षिणा करके और वन्दना करके निकली और गंगाजी के पास पहुँची। ५९-६६

पञ्चेन्द्रोपाख्यानं

मुन्नं देवकळॆल्लां नैमिशारण्यत्तिङ्कल्
निन्नॊरु सत्रमारंभिच्चितु नरपते ! १
नल्लॊरु पत्नियेयुमुण्टाक्कि वैवस्वतन्
कल्याणं वन्नीटुवान् तापसेन्द्रन्मारोटुं । २
यागवुं दीक्षिच्चिरुन्नीटिनानतुकालं
रोगादि मरणवुं मनुष्यर्क्किल्लातॆयाय् । ३
मर्त्त्यन्मार्क्कवनियिल् मरणमिल्लाय्कयाल्
वर्द्धिच्चुचमञ्ञितु देवकळतुकॊण्टु । ४
सुत्रामादिकळ् पोयि ब्रह्मनॆच्चॆन्नु कण्टा-
रॆन्नयुं भयमायिच्चमञ्ञु ञङ्ङळ्क्किप्पोळ् । ५
मर्त्त्यरुममर्त्त्यरुं भेदमिल्लॆन्नाय् वन्नु
सत्रवुं पितृदेवादिकळ्क्किल्लॆन्नाय् वरुं । ६
सन्तापमतुकॊण्टु चित्तत्तिलुण्टाकुन्नु
निन्तिरुवटियॆन्नि शरणं ञङ्ङळ्क्किल्ल । ७
शक्रादि देवगणमित्थं चॊन्नतु केट्टु
पुष्करभवननुं पुञ्चिरिपूण्टु चॊन्नान् । ८
अमरन्मारां निङ्ङळॆन्तिनु पेटिक्कुन्नु
शमनवशन्मारां मानुषजनङ्ङळॆ ? ९

पाँच इन्द्रों का उपाख्यान

हे राजवर ! पूर्वकाल में देवों ने नैमिषारण्य में एक सत्र (यज्ञ) प्रारंभ किया। तब वैवस्वत (यमराज) ने अपनी अच्छी पत्नी के साथ लोक का कल्याण साधने के लिए तापसवरों के अनुग्रह-सहित यज्ञ दीक्षा ले ली, और मनुष्यों में व्याधि और मृत्यु का अभाव हो गया। पृथ्वी पर मनुष्यों का मरण न होने से उनकी संख्या बढ़ी। अतएव इन्द्र आदि देवगण ब्रह्मा के पास पहुँचे और बोले—ब्रह्माजी ! अब हमारे सामने एक बड़ा भय उपस्थित है। क्योंकि अब मनुष्य और देवों में कोई भेद न रहा ! अब पितरों और देवों के लिये सत्र न होने की दशा हो जायगी। इसलिए हम लोग बहुत दुःखित हैं और आप ही लोगों के शरण हैं। शक्र(इन्द्र) आदि देवों की यह बात सुनकर ब्रह्मा ने मुस्कराकर कहा-- १-८
आप लोग अमर होकर यमराज के वश में स्थित मनुष्यों से क्यों डरते हैं ?

अन्तकनिङ्ङु यागं दीक्षिच्चु वसिक्कया-
लन्तं मानुषजनङ्ङळ्क्किप्पोळिल्लात्ततुं । १०
निङ्ङळुं निङ्ङळुटे वीर्यकोण्टवनुटे-
यंगमाय् भविच्चिट्टु कोल्लुविन् मनुष्यरे । ११
धाताविन्नरुळप्पाटिङ्ङने केट्टशेष-
मादितेयन्मारेल्लां पोयितु यागत्तिङ्कल् । १२
चेन्नवर् मन्दाकिनितङ्कल् वाणीटुं नेरं
स्वर्ण्णवर्ण्णत्तोटोरु पुण्डरीकत्तेक्कण्टार् । १३
चित्रमेत्रयुमतेन्नोर्त्तवरेल्लारिलु-
मेत्रयुं शूरनाय सुत्रामावतुनेरं । १४
तत्र चेन्नीटुन्नेरं काणायितोरुत्तिये-
च्चित्रभानुविनुनेराकिय तेजस्सोटुं । १५
अन्नेरं जलार्त्थिनियायेटं करयुन्न
तन्वितन् कण्णुनीरुं वीणितु जलंतन्निल् । १६
अविटेयुण्टायोरु काञ्चनपद्मं कण्टि-
ट्टवळोटमरेन्द्रन् चोदिच्चु मधुरमाय् । १७
आरेटो नीयेन्तेन्नोटादराल् पऱयणं
नेरोटे करयुन्नतेन्तिनेन्नतु चोल् नी । १८
ऒन्नतु केट्टनेरमवळुं चोल्लीटिना-
ळेन्ने नीयऱियुन्नतिल्लयो देवपते । १९

इधर यमराज यज्ञदीक्षा लिए हुए हैं। यही कारण है कि मानव आज कल नहीं मर रहे हैं। आप लोग अपने वीर्य से यमराज का अंग बनकर मनुष्यों का नाश कर दीजिए। जब इन्द्र आदि ने ब्रह्मा की यह आज्ञा सुनी तब वे सब यज्ञ में गये। जब वे गंगा के तट पर पहुँचे तब उन्होंने सुवर्ण के रंग का एक पुण्डरीक देखा। यह कितना सुन्दर है! ऐसा समझकर उनमें से सबसे अधिक शूर इन्द्र जब उसे देखने गया तब सूर्य के समान तेज धारण करनेवाली एक स्त्री दिखायी दी। ९-१५ जल की प्यास के कारण रोनेवाली उस महिला के आँसू जल में गिरे। तत्काल ही वहाँ एक सुवर्ण-वर्ण का कमल पैदा हुआ। उसे देखकर इन्द्र ने मधुर स्वर से स्त्री से पूछा--कहो, तुम कौन हो और क्यों रो रही हो, यह भी बतलाओ। यह सुनकर उसने उत्तर दिया--हे देवों के नाथ, क्या आप मुझे नहीं पहचानते? मेरे साथ चलिए तो मैं अभागिनी अपने दुःख का कारण

निर्भाग्यवतियायोरेन्नुटे दुःखमूल-
मिप्पोळ् ञानरियिक्कामेन्नोटुकूटेप्पोन्नाल् । २०
उन्परिल् वन्पुं मुन्पुमुळ्ळ नी पोन्नीटुक
मुन्पिल् ञान् नटन्नीटामेतुमे मटिक्केण्टा । २१
अेन् परितापत्तिन्टे मूलवुमरिञ्ञीटां
निन् प्रियमतुं वरुमेन्नवळ् चॊल्लीटिनाळ् । २२
अन्नेरमवळुटे पिन्नाले चेन्ननेरं
विण्णवर् नायकनु काणाय् वन्नितु नेरे २३
दिव्यनायिरिप्पोरु पुरुषन्तन्ने पूर्णं-
यौवनत्तोटुमोरु युवतीरत्नत्तोटुं । २४
पर्व्वतशिरसि सिंहासनत्तिन्मेलति-
गर्व्वेण चूतुं पोरुतिरुन्नीटुन्नतप्पोळ् । २५
अभ्युत्थानादि सल्कारङ्ङळ् चेय्याय्कमूल-
मभ्रवाहनन् कोपिच्चळवु विश्वनाथन् २६
मन्दहासवुंचेय्तु तृक्कण्पार्त्ततुनेर-
मिन्द्रनुमिळकाते निन्नितु कुरञ्ञोन्नु । २७
देवनुमक्षक्रीड कळिञ्ञोरनन्तरं
देवियोटरुळ्चेय्तु नीयिनियोन्नुवेणं २८
इप्पोळे पुरन्दरदर्प्पत्तेक्कळयेणं
पिलपाटु नन्नाय्वरुमिल्ल संशयमेतुं । २९

बतला दूँगी । देवों में सबसे शक्तिशाली आप चलें, मैं आगे-आगे चलूंगी, आप बिना हिचक के आइए। मेरे दुःख का कारण भी मालूम हो जायगा और आपका भी हित हो जायगा। उसने इतना कहा । १६-२२ जब देवों के राजा उसके पीछे-पीछे जा रहे थे तब ठीक सामने एक यौवन-से विराजमान दिव्यपुरुष और एक स्त्रीरत्न दिखायी दिये । पर्वत के शिखर पर दोनों एक सिंहासन पर बैठे बड़े गर्व के साथ जुआ खेल रहे थे । जब उन्होंने उठकर सत्कार नहीं किया तब इन्द्र क्रुद्ध हुआ । शिवजी मुस्कराये और अपने तृतीय नेत्र से देखते रहे । इन्द्र भी बिना हिले थोड़ी देर खड़ा देखता रहा । जुआ का खेल समाप्त होने के बाद शिवजी ने देवी से कहा "तुम्हें एक काम करना है । इन्द्र के घमंड को अभी नष्ट करना चाहिए, आगे इसका फल अच्छा होगा, इसमें सन्देह नहीं ।" २३-२९ जब देवी ने इन्द्र का स्पर्श किया, तत्क्षण ही इन्द्र

देवियाल् संस्पृष्टनायोरुनेरत्तुतन्ने
देवेन्द्रन् वित्रस्तङ्ङ्ळाकुमंगङ्ङ्ळोटुं । ३०
वीणितु भूमितन्निलन्नेरं पशुपति
वानवर्कोनोटित्थमरुळिच्चेय्तीटिनान् । ३१
पर्व्वतोत्तमन्तन्ने पोय् विवर्त्तनं चेय्क
दुर्व्वीर्यमुळ्ळ भवानन्नेरं काणामल्लो । ३२
निन्तोटु तुल्यन्माराय् नालुपेरेयुमवर्
विण्णवर् नायकन्मारायतेन्नरिक नी । ३३
ऎन्नतु केट्टु शक्रन् पर्व्वतोत्तमन्तन्ने
चॆन्नुटन् विवर्त्तनंचेय्तप्पोळ् काणाय्वन्नु । ३४
तुल्यतेजसा नालिन्द्रन्मारेयोरुपोले
स्वर्लोकनाथन्तानुं वेपथुपूण्टानप्पोळ् । ३५
ञानुमिन्निवर्कळेप्पोलेयाय् चमञ्ञीटुं
नूनमॆन्नोर्त्तु भयप्पॆट्टितु पुरन्दरन् । ३६
वज्रपाणिये नोक्किक्कोपिच्चु गिरीशनु-
मुज्ज्वलिच्चेटं दीप्तिपूण्टुटनरुळ्चेय्तु । ३७
धिक्करिच्चतु मूलं शक्रन्मारायनिङ्ङळ्
निष्कृतियाय् मानुषयोनियिल् पिरक्कपोय् । ३८
भार्य्ययाय्वरुमिवळ् निङ्ङळ्क्कैवक्कुं कूटि-
क्कार्यङ्ङळ् पलतुण्टु निङ्ङळाल् साधिप्पानुं । ३९

काँपता हुआ भूमि पर गिर पड़ा और तब शिवजी ने देवों के नाथ से इस प्रकार कहा—"आप जाकर पर्वतोत्तम को उलट दीजिए, तब दुर्वीर्यवाले आपको आपके तुल्य वीर्यवाले चार और इन्द्र दिखायी देंगे। जान लीजिए वे भी देवों के नायक ही हैं।" यह सुनकर शक्र (इन्द्र) ने पर्वतोत्तम को उलट दिया। उस समय समान तेजवाले चार और इन्द्र दिखायी दिये, उन्हें देखकर स्वर्गलोक के नाथ इन्द्र काँपने लगे। ३०-३५ (और सोचने लगे कि) "मैं भी इन्हीं की तरह हो जाऊंगा इसमें सन्देह नही।" यह सोचकर पुरन्दर (इन्द्र) डर गये। वज्रपाणि (इन्द्र) को देखकर शिवजी क्रुद्ध हुए और जाज्वल्यमान होकर बोले—"चूँकि आपने मेरा अपमान किया, इसलिए आप पाँचों इन्द्र जाकर मानुष-योनि में जन्म लो। यह आप पाँचों की पत्नी हो जायगी। आप लोगों से बहुत कुछ कार्य कराना है। दिव्य अस्त्रों और शस्त्रों के द्वारा दुष्टों का निग्रह करके,

दिव्यशस्त्रास्त्रङ्ङळाल् दुष्टरेयोक्क वधि-
च्चुर्व्वीभारवुं तीर्त्तु वरुविन् निङ्ङळेल्लां । ४०
पूर्व्वेन्द्रन्मारुमतुकेट्टुरचेय्तीटिनार्
पार्व्वतीपते ! मोक्षं ञङ्ङळ्क्कु तन्नीटेणं । ४१
वीर्यकर्त्ताक्कन्माराय् वरिकवेणं धर्म्म-
राजनुमनिलनुमिन्द्रनुं दस्रन्मारुं । ४२
पिन्नेयुं वज्रपाणि चोल्लिनान् भगवानो-
टोन्ननुग्रहिक्केणमिनियुं दयानिधे ! ४३
कार्यकारणालिनि ञानोरु पुरुषने
वीर्यंकोण्टुण्टाक्कुवनतिनुण्टोन्नुवेण्टु । ४४
पञ्चमं मल् प्रसूतमाक्केणमिवरिल् वे-
च्चञ्चिततेजोबलवीर्यश्रीकीर्त्तियोटे । ४५
अतु केट्टवनोटुं कूटि विश्वेशन् चेन्नु
मधुसूदननन्तन्ने प्रार्त्थिच्चु वृत्तान्तवुं । ४६
अरियिच्चुतुनेरं नरनारायणन्मार्-
पिरविकूटेयुण्टामेन्नालिन्द्रन्टे वीर्यं । ४७
नरन्तन्नुटेयंशमाय्क्कोळ्ळामत्रयल्ल
नरकवैरिकेशयुगळांशवुमिप्पोळ् । ४८
शुल्कमां वर्णमोन्नु मटेतु कृष्णवर्णं
तल्केशयुगळं तल्क्षेत्रङ्ङळाकुन्नतुं । ४९

पृथ्वी का भार थोड़ा हल्का करके आप लोग वापस आवें। यह सुनकर पहलेवाले चारों इन्द्रों ने कहा—"हे पार्वतीपते! हम लोगों को मोक्ष दे दीजिए। यमराज, वायुदेव, इन्द्र और अश्विनीकुमार वीर्य (पराक्रम) के काम करनेवाले हो जायँ! ३६-४२ फिर वज्रपाणि इन्द्र ने शिवजी से कहा—हे दयानिधे! कृपया एक और अनुग्रह कर दीजिए। कार्य-सिद्धि की दृष्टि से मैं अपने वीर्य से एक पुरुष की सृष्टि करनेवाला हूँ। उसमें आपकी सहायता चाहिए। इनमें से पाँचवाँ मेरा ही पुत्र हो अत्यन्त तेज, बल, वीर्य और कीर्त्ति से सम्पन्न हो। यह सुनकर विश्वेश (शिवजी) उसके (इन्द्र के) साथ मधुसूदन (विष्णु) के पास गये और उनको सारा वृत्तान्त सुनाया। तब उन्होंने कहा—'नर और नारायण का भी जन्म होगा। इन्द्र का वीर्य नर का अंश बन जायगा। इतना ही नहीं। नरकवैरि (कृष्ण-विष्णु) के दो बालों (एक सफ़ेद और दूसराकाला) का भी

अवयुं यदुकुले नारिकळाय्वन्नीटु-
मवक्कुं नामधेयं रोहिणि देवकियुं । ५०
अवरिल् शुल्कं बलदेवनाय् भविच्चीटु-
मवनीपते! पिन्नेक्केशवन् कृष्णांशवुं । ५१
इत्थमञ्चिन्द्रन्माक्कुंळ्ळभिमानांशं वन्नु
पृत्थ्वियिल् पाण्डवन्मारायतु नरपते ! ५२
लक्ष्मितन्नंशव्यक्तिरूपयां कृष्णतानु-
मिक्षितितन्निल् तव पुत्रियाय् पिरन्नतुं । ५३
व्यक्तमाय्क्काण्मान् दिव्यलोचनं नल्कीटुव-
नोंक्कवे तीरुं तव संशयमेन्नालिप्पोळ् । ५४
उळ्क्कान्पु तेंळियेणमेन्नरुळ्चेय्तु मुनि-
मुख्यनुं दिव्यचक्षुस्सवनु नल्कीटिनान् । ५५
पञ्चपूर्व्वेन्द्रन्मार् तन्नभिमानांशं पोन्नु
पञ्चपाण्डवन्मारायक्काणायि पाञ्चालनुं । ५६
ओंरुत्तन् पलरायिट्टिरिक्कुन्नतुमेन्न-
न्नङ्ङुरच्चु मनसि पाञ्चालनुमतुनेरं । ५७
पादपङ्कजङ्ङळिल् वणङ्ङिच्चोंल्लीटिनान्
वेदव्यासनें नोक्कित्तेंळिञ्ञु भक्तियोटे । ५८

जन्म होगा। वे पत्नी बन जायेंगे। वे यदुकुल में महिलाएँ हो जायेंगे। उनके नाम होंगे रोहिणी और देवकी। हे भूपाल! उनमें सफ़ेद बाल का जन्म बलदेव के रूप में और काले बाल का जन्म कृष्ण के रूप में होगा।" ४३-५१
हे राजन्! इस प्रकार पाँच इन्द्रों के अभिमानांश ही पाँच पाण्डवों के रूप में इस पृथिवी में आये हैं। और कृष्णा (द्रौपदी) जो लक्ष्मी के अंश का प्रकाश है वही इस पृथ्वी में तुम्हारी पुत्री के रूप में जन्मी है। यह सब स्पष्ट देखने के लिए मैं आपको दिव्य दृष्टि दूँगा ताकि आपका सारा सन्देह नष्ट हो जाय। यह आवश्यक है कि चित्त निस्सन्देह हो। इतना कहकर मुनिवर ने दिव्यचक्षु दे दिये। तब पाञ्चालराजा को पहलेवाले पाँचों इन्द्र पाँच पाण्डवों के रूप में दिखायी दिये। तब पाञ्चालराजा को मन में विश्वास हुआ कि एक ही व्यक्ति पाँच रूप धारण किये हुए है। तदनन्तर पाञ्चालराज वेदव्यासजी के चरणों पर गिर पड़े और भक्ति के साथ बोले—"ज्ञानरहित हम लोग क्या जानते हैं? आप ज्ञानी लोगों का कहना मानने के अतिरिक्त हम क्या करें? जैसे आप महानुभाव बतावेंगे

ज्ञानमिल्लात ञङ्ङळॆन्तरिञ्ञिरिक्कुन्नु
ज्ञानिकळाय निङ्ङळ् चॊन्नतु केळ्क्कयॆन्नि ? ५९
ऎल्लां निन्तिरुवटियरुळिच्चॆय्युंवण्ण-
मिल्लल्लो ञङ्ङळ्क्कु मट़ाधारं तपोनिधे ६०

पञ्चनैतन्तवचरितं

बादरायणमुनि पिन्नॆयुमरुळ्चॆय्तु
सादरं द्रुपदभूपालनोटतुनेरं । १
केळ्क्कणं पुरावृत्तं चॊल्लुवन् नृपाधिप !
भाग्यवारिधे विषादिक्कॊला वॆरुते नी । २
पण्टॊरु राजर्षि नितन्तुवॆन्नुळ्ळ पेरा-
युण्टायानवनञ्चु पुत्ररुमुण्टाय्वन्नु । ३
साल्वेयन्तानुं शूरसेननुं श्रुतसेनन्
बाल्यज्ञानिकळ् तिन्दुसारनुं मतिसारन् । ४
अश्वमेधादिकळुं चॆय्तवरैवरुमाय्
विश्वासमन्योन्यं पूण्टेकमानसन्माराय् । ५
विश्रुतकीर्त्तियोटुमॊरुमिच्चनुदिनं
विश्वपालनंचॆय्तु मरुवीटिनकालं । ६
भौमाश्वियॆन्नवळॆ वेट्टितैवरुं कूटि-
क्कौमारवयस्सिङ्कल् सुखिच्चु भार्ययोटुं । ७

वैसे ही हम सब करेंगे, हे तपोनिधे ! हमारा और कोई आश्रय नहीं है ।" ५२-६०

पाँच नैतन्तवों का चरित

मुनि बादरायण ने फिर राजा द्रुपद से सादर इस प्रकार कहा—"हे राजन् ! मैं एक और प्राचीन कथा कहूँगा, सुन लीजिए । हे भाग्य के समुद्र ! आप व्यर्थ विषाद न कीजिए । पूर्वकाल में नितन्तु नामक एक राजर्षि थे । उनके पाँच पुत्र हुए, जिनके नाम थे—साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार, मतिसार । पाँचों बचपन से ही बड़े विद्वान् थे । पाँचों ने अश्वमेध आदि यज्ञ किये । परस्पर विश्वास के कारण उन पाँचों का मन एक था । पाँचों ने बड़ी कीर्त्ति के साथ प्रतिदिन मिल-जुलकर पृथ्वी का पालन किया । पाँचों ने मिलकर भौमाश्वी से विवाह किया और

पञ्चभूतङ्ङळो पञ्चेन्द्रियङ्ङळो बत
पञ्चगोचरङ्ङळो पञ्चमारुतन्मारो । ८
पञ्चमूर्त्तिकळो भूपालकन्मारामिवर्
किञ्चन भेदमिल्ल तङ्ङळिलॊरुनेरं । ९
विख्यातगुणंकॊण्टु लोकरुं प्रशंसिच्चु
दुःखवुमकन्नवरैवरुं कूटि वाणार् । १०
अक्कालमैवर्क्कुमायञ्चु नन्दनन्मारुं
विख्यातन्मारायुण्टाय्वन्नितु धरापते ! ११
चॊल्लुन्नु नैतन्तवन्मारॆन्नु नाममव-
र्क्कॆल्लावर्क्कुमोरो राज्यं वॆव्वेरेयुण्टायवन्नु । १२
भूमियिल् नैतन्तवन्मारुटॆ पारम्पर्यं
भूमिपालक ! पञ्चमात्स्यन्मारिञ्ञालुं । १३
नल्ल साल्वेयन्मारुं शूरसेनन्मारॆन्नुं
चॊल्लुन्नु श्रुतसेनन्मारॆन्नुमवर्कळॆ । १४
तिन्दुसारन्मारॆन्नु मतिसारन्मारॆन्नु-
मिन्द्रसम्मितसमाज्ञाकरन्मारायिन्नुं । १५
ओरोरोमूलमिव वॆव्वेरॆ निरूपिच्चा-
लारालुं तटुक्कावॊन्नतल्लीश्वरमतं । १६
पन्नगाभरणनुमरुळिच्चेय्तानिवळ्-
तन्नुटॆ पूर्व्वजन्मत्तिङ्कल् सेविच्चमूलं । १७

पत्नी के साथ यौवन में सुखमय जीवन व्यतीत किया । १-७ ये पाँच भूपाल क्या पाँच महाभूत हैं, या पाँचों इन्द्रिय हैं, या पाँचों इन्द्रिय-विषय हैं, या पाँचों वायु हैं, या पाँच मूर्तियाँ हैं ? उनका आपस में कोई भेद नहीं है । उनके विख्यात गुणों के कारण लोगों ने उनकी प्रशंसा की । वे दुःख को दूर करके सुख से रहे । हे धरापते ! उस समय उन पाँचों के, पाँच विख्यात पुत्र पैदा हुए । वे नैतन्तव कहलाते हैं । उनमें हर एक का अपना अलग राज्य हुआ । हे भूपाल, जान लीजिए कि पृथ्वी में ये पाँच मात्स्य नैतन्तवों की परम्परा में हैं । उनको साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार और मतिसार कहते हैं और वे उनको इन्द्र के समान राजा समझते हैं । ८-१५ इन भिन्न-भिन्न कारणों पर अगर अलग-अलग विचार किया जाय तो स्पष्ट है कि ईश्वर का मत कोई नहीं रोक सकता । पन्नगाभरण (शिवजी) ने भी ऐसा ही कहा है । इस आपकी कन्या द्वारा

पिन्नेयुं पिन्नेयुं नी भर्त्तारं देहियॆन्न-
तॆन्नोटञ्चुरु वरिच्चीट्टुकनिमित्तमाय् । १८
पञ्च भर्त्ताक्कन्मारुण्टाकॆन्नोरनुग्रहं
पञ्चबाणारितानुं कॊटुत्तानल्लो मुन्नं । १९
मुनिकन्यकयवळ् निन्नुटॆ मकळाय-
तनवद्यांगि कृष्णयॆन्नतुमरिञ्ञालुं । २०
ऒन्निवयॆल्लामोर्त्ताल् पाण्डवरैवरुमाय्
निन्मकळ्तन्नॆ वेट्टुकॊळ्ळुक मटियातॆ । २१
वेदव्यासनुं पाञ्चालनुमन्योन्यं पर-
ञ्ञेतुमे दोषमिल्लॆन्नुरच्चु पुरप्पॆट्टु । २२
कुन्तियुं पुत्रन्मारुं धृष्टद्युम्ननुं वाळुं
मन्तशालयिल्च्चॆन्नु परञ्ञु वैकियातॆ । २३
दैवकल्पितमॊळिक्कावतल्लॊरुवक्कुं-
मैवरुंकूटि वेट्टुकॊण्टालुमॆन्नारवर् । २४
काञ्चनाभरणालेपनवस्त्रादिकळाल्
पाञ्चालितन्नॆयलङ्करिप्पिच्चंगनमार् । २५
मोहनमाकियॊरु देहंपूण्टवळ्तन्नॆ
रोहिणियोटु चेर्न्नु शीतांशु मरुवुन्नाळ् । २६
सव्यसाचियुं ज्येष्ठकनिष्ठन्मारुं कूटि-
द्दिव्यवेषत्तॊप्पूण्टु दानङ्ङळॆल्लांचॆय्तु । २७

पूर्वजन्म में सेवा करने के कारण, तथा 'मुझे पति दो' इस प्रकार पाँच बार याचना करने के कारण भी, पञ्चबाण (कामदेव) के शत्रु शिवजी ने इसे 'तुम्हारे पाँच पति हों' इस प्रकार वर दिया है। जान लीजिए कि वही कन्या आपकी सुन्दरी पुत्री कृष्णा (द्रौपदी) के रूप में जन्मी है। इन सब बातों पर विचार किया जाय तो पाँचों पाण्डव मिलकर आपकी पुत्री से विवाह कर सकते हैं।" १६-२१ इस प्रकार वेदव्यासजी और पाञ्चालराज ने आपस में बातचीत करके निश्चय किया कि इसमें कोई दोष नहीं है। तदनन्तर वे वहाँ गये, जहाँ कुन्ती, उनके पुत्र और धृष्टद्युम्न थे और उनसे सब कह दिया। और उन्होंने कहा—"ईश्वर जो चाहता है, उससे कोई बच नहीं सकता। पाँचों मिलकर विवाह करो।" महिलाओं ने सोने के आभूषणों और आलेपन तथा वस्त्रों से पाञ्चाली को सजाया। और उसने ऐसा मोहन रूप धारण किया, जैसे चन्द्रमा रोहिणी के साथ

धौम्यनां पुरोहितन्तन्नुटॆ नियोगत्ताल्
काम्याङ्गियुटॆ पाणिग्रहणं क्रमत्ताले । २८
विधिच्चवण्णं चॆय्तु वसिच्चीटिनकालं
कीर्तिच्चवण्णंतन्नॆ योगं वन्नतुमूलं । २९
स्त्रीधनं कॊटुत्तितु पाञ्चालननवधि
गोधनधान्यरथतुरगगजनर- ३०
साधनान्वितदासदासीयानादिकळ्
मोदेन परिग्रहिच्चीटिनान् धर्म्मात्मजन् । ३१
सन्तोषं कैक्कॊण्टाशीर्व्वचनङ्ङळ् चॊल्लि
कुन्तियुं द्रौपदिक्कु चॊल्लिनाळुपदेशं । ३२
ओरोरो पतिव्रता धर्म्मङ्ङळ् परञ्ञुळ्ळि-
लारूढ़ानन्दंपूण्टु सुखिच्चुवाळुंकालं । ३३
श्रीवासुदेवन् जगन्नायकन् नारायणन्
देवदेवेशन् भक्तवत्सलन् जनार्द्दनन् ३४
कार्व्वर्ण्णन् कारुण्याब्धि माधवन् प्रीतिपूर्व्व-
मावोळं धनरत्नमाशु सत्कारं चॆय्तु । ३५
पटयुं भण्डारवुमाभरणादिकळुं
कुटयुं तळकळुं तालवृन्तादिकळुं । ३६

रहते समय धारण करता है। अर्जुन ने अपने ज्येष्ठ और कनिष्ठ भाइयों के साथ द्विव्य वेष पहन लिया और विविध दान किये। २२-२७ पुरोहित धौम्य के निर्देशानुसार सुन्दरी द्रौपदी का पाणिग्रहण क्रम से विधिवत् सम्पन्न हुआ और सब सुख से रहने लगे। सब काम अपनी इच्छा के अनुसार हो जाने के कारण पाञ्चालराज ने बहुत स्त्रीधन (दहेज) दिया। और युधिष्ठिर ने भी अनेक गायें, धान्य, रथ, घोड़े, हाथी, भृत्य, प्रभूत साधन-सहित दास, दासियाँ और अनेक दान स्वीकार किये। कुन्ती को बड़ा हर्ष हुआ। उन्होंने द्रौपदी को आशीर्वाद देकर उपदेश भी किया। उन्होंने उसको पातिव्रत धर्म समझा दिये। इस प्रकार सब सुख से रहने लगे। २८-३३ उस अवसर पर श्रीवासुदेव, जगत् के नायक, नारायण, देवों के ईश, भक्तवत्सल, जनार्दन, कृष्णवर्ण, कारुण्य के समुद्र, माधव ने बड़ी प्रीति के साथ वहुत धन और रत्न का पुरस्कार दिया। सेना, भण्डार, अनेक आभूषण, छत्रियाँ, झण्डे, पंखे, पटह, मुँह से बजाने योग्य अनेक वाद्य, दिव्यध्वज, तोरण, चामर और अनेक राजाओं के योग्य वस्तुएँ

पटहमुखवाद्यादिकळुं दिव्यङ्ङळां
कोटिकळ् तोरणङ्ङळ् चामरङ्ङळुं मट्टुं । ३७
पार्त्थिवोचितङ्ङळायुळ्ळव पलतर-
मास्थया कोट्टुत्तितु पेर्त्तुमानन्दमूर्त्ति । ३८
पार्त्थन्मार् भक्तियोटे वाङ्ङिनारवयेल्लां
चीर्त्तकौतुकत्तोटे वसिच्चु पाञ्चालियुं । ३९

धार्त्तराष्ट्रन्मारुटे कुण्ठितं

कुन्तीपुत्रन्मारुटे परमार्त्थङ्ङळ् परि-
पन्थिकळरिञ्ञप्पोळन्तस्तापवुं पूण्टार् । १
वेन्तुपोयवरेल्लामिङ्ङने चमञ्ञवा-
रेन्तोरु कष्टमतु चिन्तिच्चाल् चित्रं चित्रं । २
नन्दितन्मारायोरु सज्जनङ्ङळालति-
नन्दितन्मारायवन्नु धार्त्तराष्ट्रन्मारेल्लां । ३
चिन्तिच्चु कर्ण्णगान्धारादिकळोटुं चेर्न्नु
मन्त्रवुं तुटङ्ङिनार् दुरियोधनादिकळ् । ४
अन्नेरं शकुनियुं परञ्ञारिवरे ना-
मिन्निनियोटुक्केणमेतुमे वैकियाते । ५
पार्त्तोळं पिळयत्रे नमुक्कोन्नरिञ्ञालुं
कीर्त्तियुमुण्टायवन्नितवर्क्किन्नतुमूलं । ६

आनन्दमूर्ति नारायण ने बड़े आदर के भेंट कीं। पाण्डवों ने बड़ी भक्ति के साथ सब स्वीकार किया और पाञ्चाली बड़ी प्रीति के साथ वहाँ रहने लगी। ३४-३९

धृतराष्ट्र के पुत्रों का नैराश्य

कुन्ती के पुत्रों के संबन्ध में सभी वास्तविक वृत्तान्त जानकर उनके शत्रु अत्यन्त खिन्न हुए। उनके इस स्थिति पर पहुँचने पर वे सब जल उठे। कैसी कष्ट की बात है! सोचने पर विचित्र मालूम होता है। जो सज्जन उनकी स्थिति पर प्रसन्न हुए उन्होंने धार्तराष्ट्रों की निन्दा की। दुर्योधन और उनके साथी कर्ण और गान्धार के साथ विचार-विमर्श करने लगे। तब शकुनि ने कहा—"अब बिना विलम्ब के इन पाण्डवों को समाप्त करना चाहिए। विलम्ब करके हम लोगों ने गलती की, इसीलिए

अल्पवीर्यवानाकुं पाञ्चालनाश्रयमा-
यिप्पोंळिप्पाण्डवन्मारविटे वसिक्कुन्नु । ७
पाञ्चालपुरमेल्लां तकर्त्तु पाण्डवरे-
प्पाञ्चालनोटुंकूटे वधिक्कवेणमिप्पोळ् । ८
इत्तरं पलवाक्कु शकुनि परञ्ञप्पो-
ळुत्तरं सोमदत्तपुत्रनुमुरचेय्तान् । ९
ऍत्रयुं पणियतु साध्यमल्लिप्पोळ् नम्माल्
शक्तन्मारल्लो पाण्डुपुत्रन्मारेल्लांकोण्टुं । १०
अर्त्थमित्रास्त्रसम्पत्तिकळुण्टवर्क्केन्नाल्
शत्रुसंहारं चेय्वानर्ज्जुनन्तन्ने पोरुं । ११
बन्धुक्कळायुळ्ळ नामिवर् तङ्ङळिलिन्नु
सन्धियें चेय्यिप्पिच्चु पोकेणमते नल्लू । १२
ऍन्नुटे मतमितेन्निङ्ङने सौमदत्ति
चोन्नतु केट्टनेरं कर्ण्णनुमुरचेय्तान् । १३
अप्पुरं तकर्क्कुम्पोळरियां बलाबलं
कॆल्पोटु पटक्कोप्पु कूट्टुक मटियाते । १४
कर्ण्णनिङ्ङने परञ्ञीटिनोरनन्तरं
पिन्नेयुं सोमदत्तनन्दननुरचेय्तान् । १५
मूर्खनायीटुन्न ञान् चोल्लीटुं वचनङ्ङळ्
केळ्क्कणं महत्तुक्कळायुळ्ळ निङ्ङळेल्लां । १६

उन्होंने कीर्त्ति भी कमा ली। ये पाण्डव आजकल अल्पवीर्यवाले पाञ्चाल के आश्रय में रह रहे हैं। हमको चाहिए कि हम पाञ्चाल-नगरी को नष्ट करें और पाञ्चालराजा के साथ पाण्डवों को समाप्त कर दें।" १-८ जब शकुनि ने इस प्रकार की बातें कीं, तब सोमदत्त के पुत्र ने उत्तर दिया। यह कठिन काम है, यह हमलोगों से न हो सकेगा। हर एक दृष्टि से पाण्डव शक्तिशाली हैं। उनके पास अर्थ, मित्र, शस्त्र और सम्पत्ति सब हैं। यों तो शत्रुओं का नाश करने के लिए केवल अर्जुन ही पर्याप्त है। अच्छा तो यही होगा कि हम इन बन्धुओं में सन्धि कराके चले जायँ। सोमदत्त के पुत्र का यह मत सुनकर कर्ण ने इस प्रकार उत्तर दिया— ९-१३ "जब हम उस नगरी का नाश कर देंगे तो पता चलेगा बल किसमें है, और किसमें नहीं है। अविलम्ब सेना तैयार हो जाय।" जब कर्ण ने इस प्रकार कहा, तब सोमदत्त के पुत्र ने फिर

धन्यन्मारोटु पारं मत्सरमुण्टाय्वरुं
दुर्न्नयमुळ्ळिलेरुं दुर्भगन्मार्क्कु नित्यं । १७
विद्याभिजात्यवित्तवृत्तशीलौदार्यास्त्र-
मित्ररूपादिगुणकीर्त्तिकळ् काणुंतोरुं । १८
मानसे सहियाञ्ञु साधुक्कळ्क्कुळ्ळ गुण-
हानियें वरुत्तुवानेन्तावतेन्नुतन्ने । १९
सन्ततं चिन्तिच्चोळं साध्यमल्लेन्नु कण्टा-
लन्तरं पार्त्तुपार्त्तु मरुवीटिनकालं । २०
छिद्रमेतानु काणाय्वन्नीटुमप्पोळेट्-
मुद्योगं कैक्कोण्टतिसाहसचेतस्सोटुं । २१
तन्नेक्काळ् वलियवन्तन्नेयुं भेदिप्पिच्चु
तन्नेत्तान् प्रशंसिच्चुळ्ळन्यायकर्म्मं चेय्ताल् । २२
तन्नुटे मित्रत्तोटुकूटवे तानुं वीणु
सन्नमाय् पोकुमल्लो पिन्नेयेन्नतुनेरं । २३
नन्नल्ल महद्वैरमार्क्कुमेन्नरियेणं
वन्द्यन्मारायवरें वन्दिच्चीटुक नल्लू । २४
निन्द्यन्मारायुळ्ळोरें निन्दिच्चिटेण्टतानु
निन्द्यनाय् वरिकयिल्लारालुमेन्नालवन् । २५
इत्तरं सौमदत्ति चोन्नतु तेळियाञ्ञ-
ट्टुत्तरमुरचेय्तीलारुमेन्नतुनेरं । २६

निवेदन किया—"मुझ मूर्ख की बातें आप वड़े लोग सुनने की कृपा करें। दुर्जनों का सज्जन लोगों के साथ बहुत बैर हो जाता है, और उनकी दुष्टता रोज़ बढ़ती जाती है। विद्या, कुल, धन, चरित्र, शील, औदार्य, अस्त्र-शस्त्र, मित्र, रूप, गुण, कीर्त्ति आदि औरों के गुणों को वे सह नहीं सकते, सज्जनों को हानि कैसे पहुँचायी जाय—यही निरन्तर सोचते रहते हैं। जब उन्हें कोई उपाय नहीं सूझता है तो वे मौक़ा देखते रहते हैं। १४-२० जब कोई छिद्र दिखायी देता है, तब साहस के साथ बड़ा प्रयत्न करते हैं और अपने से बड़ों से लड़ बैठते हैं तथा अपनी ही प्रशंसा करते हुए अन्याय करते हैं। तब (वे) अपने मित्रों के साथ गिरते हैं और नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। इसलिए जान लीजिए कि बड़ों के साथ बैर करना अच्छा नहीं है। जो वन्द्य हैं, उनकी वन्दना करना ही अच्छा है, और जो निन्द्य हैं, उनकी निन्दा करने की आवश्यकता भी नहीं है। जो ऐसा करता है, वह कभी किसी के द्वारा

सिद्धमल्लात मम वाक्कुकळ् कैक्कोळ्ळेण्ट
युद्धत्तिन्निनियेतुं पार्क्करुतेन्निङ्ङने २७
मन्युभावेन सौमदत्ति चोन्नतुनेरं
सन्नाहमोटु पटक्कूट्टवुमोरुमिच्चु । २८

कौरवपाञ्चालयुद्धं

किटङ्ङुं तीर्त्तु कोट्टयळिप्पान् कुरुसैन्यं
तुटङ्ङुनेरमतु कण्टु पाञ्चालनृपन् । १
धृष्टद्युम्नादिकळां तन्नुटे पुत्रन्मारुं
पेट्टेन्नु पुऱप्पेट्टु नालंगप्पटयोटुं । २
भैरवतरतुमुलारवकोलाहल-
भेरीनादत्तोटिटचेर्न्नितु पेरुंपट । ३
कौरवपाञ्चाल भूपालकबलं तम्मिल्
घोरमायीटुंवण्णमेट्टतिन्ननन्तरं । ४
युद्धसन्नद्धन्माराय् पुऱप्पेट्टितु पाण्डु-
पुत्रन्मारतुकण्टु वेपथु पूण्टीटिनार्
धार्त्तराष्ट्रन्मार् मोदं पूण्टितु पाञ्चालन्मार् । ५

निन्द्य नहीं ।" जब सोमदत्त के पुत्र ने इस प्रकार कहा, तो किसी को भी अच्छा न लगा और किसी ने कुछ न कहा। तब सोमदत्त के पुत्र ने रुष्टता के साथ कहा—"अगर मेरी बात अच्छी नहीं लगती है, तो कोई न सुने। युद्ध करने में अब और विलम्ब न किया जाय।" इस पर सेना इकट्ठी की गयी । २१-२८

कौरव और पाञ्चाल का युद्ध

दुर्ग के चारों ओर खाई पार करके कौरवों की सेना उससे निकलने लगी। यह देखकर पाञ्चालराज अपने पुत्र धृष्टद्युम्न आदिकों और चारों अंगवाली अपनी सेना के साथ उठे। घोर और तुमुल सिंहनाद, कोलाहल और भेरीनाद करती हुई वह बड़ी सेना शत्रुसेना से मिली। कौरव और पाञ्चाल सेनाओं का घोर युद्ध प्रारम्भ होने के बाद, पाण्डव युद्ध के लिए तैयार होकर निकले, जिन्हें देखकर धृतराष्ट के पुत्र काँपने लगे और पाञ्चालराज के पक्षवाले प्रसन्न हुए। १-५ धृष्टद्युम्न, शिखण्डी,

धृष्टद्युम्ननुं पिन्नेशिशखण्डि सुमित्रनुं
पुष्टवीर्यवानाकुं प्रियदर्शनन् तानुं । ६
चित्रकेतुवुं सुकेतुध्वजसेनन्मारुं
पुत्रन्मारेळुपेरुं द्रुपदनृपेन्द्रनुं । ७
क्रुद्धन्मारायङ्ङट्टुत्तीटिनारतुनेरं
कर्ण्णनुं जयद्रथन् तानुमार्योरुमिच्चु
कौन्तितु सुमित्रनें प्रियदर्शननेयुं । ८
वृत्रारिपुत्रनप्पोळ् कौन्तितु जयद्रथ-
पुत्रनें कर्ण्णात्मजनां सुभानुविनेयुं ९
सिन्धुभूपनुमंगाधिपनुमतुकण्टु ।
कुन्तीनन्दनरथं पूट्टीटुमश्वङ्ङळे १०
मून्तिनेक्कोन्नारतुकण्टु भीमनुमतु ।
मून्नुं वेगेन योजिप्पिच्चतुकण्टु पार्त्थन् ११
वायुवेगत्तोटट्टुत्तीटिनानतुनेरं ।
सायकावलि सहियाञ्ञु कौरवरेल्लां १२
सायुधन्मारायोरोरोदिक्किले पाञ्ञीटिनार्
वायुनुन्नङ्ङळाय मेघङ्ङळेन्नपोले । १३
मन्नवनाय दुरियोधनन्तन्नेक्कण्टि-
ट्टुन्नतमाय वृक्षं परिच्चङ्ङिलयूरि १४
सन्नद्धनायङ्ङट्टुत्तीटिनान् वृकोदरन् ।
खिन्ननायोटि मरञ्ञीटिनान् सुयोधनन् । १५

सुमित्र, अत्यन्तवीर्य प्रियदर्शन, चित्रकेतु, सुकेतु, ध्वजसेन—इन सात पुत्रों के साथ द्रुपदराज क्रुद्ध होकर युद्धभूमि में आये। कर्ण और जयद्रथ ने मिलकर सुमित्र और प्रियदर्शन का वध किया। तब वृत्रारि (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) ने जयद्रथ के पुत्र और कर्ण के पुत्र सुभानु की हत्या की। यह देखक़र सिन्धुराज और अंगराज ने कुन्तीपुत्र के रथ में लगे घोड़ों में से तीन को मार डाला। यह देखकर भीम ने तीनों को फिर जोत दिया। तब अर्जुन वायु के समान वेग के साथ वहाँ पहुँचा। उसकी शर वर्षा सह न सकने के कारण सब कौरव इधर-उधर अपने आयुध लिये भाग गये; जैसे कि वायुवेग से बादल इधर-उधर भागते हैं। ६-१३ भूपाल दुर्योधन को देखकर भीम ने एक ऊँचे पेड़ को उखाड़ा और पत्ते सब निकालकर युद्ध के लिये तैयारी करके उसकी ओर दौड़े। सुयोधन (दुर्योधन)

मुन्पिले कुरुसैन्यं पाञ्चालपुरमेल्लां
वन्पोटु वळञ्ञप्पोळयच्चु पाण्डवन्मार् १६
वृष्णिकळोटुं बलदेवादि वीररोटुं
कृष्णन्तन्नोटुं वृत्तान्तङ्ङळेयरियिप्पान् । १७
रामकृष्णन्मारतुकेट्टुटनोटिवन्ना-
रामोदंपूण्टु चतुरङ्गवाहिनियोटुं १८
धार्त्तराष्ट्रन्मारेल्लां साद्ध्वसन्माराय् पर-
मार्त्तिपूण्टोक्कत्तक्क हस्तिनपुरं पुक्कार् । १९
पोकुन्पोळ् दुश्शासनन्तन्नोटु सुयोधन-
नाकुलप्पेट्टु मन्दं मन्दमोरोन्नु चोन्नान् । २०
कुन्तियुं पुत्रन्मारुं जातुषगेहे मुन्नं
वेन्तीलेन्नतुमिप्पोळ् निश्चयं वन्नतल्लो । २१
बन्धुक्कळवर्क्किप्पोळुण्टायि पाञ्चालनु-
मन्धकवृष्णिकळां रामकृष्णादिकळुं । २२
ऎन्तोन्नु पुरोचनन् चेय्ततु भोषत्वंकों-
ण्टेन्तेल्लां वरुमिनि मेलिलेन्नरिञ्ञील । २३
नम्मुटे पौरुषवुमेटं धिक्करिक्केणं
निर्म्मलगात्रितन्नेक्कोण्टवर् पोयारल्लो । २४
इत्तरं परञ्ञवर् मन्दं पोयकंपुक्कु
हस्तिनपुरत्तिङ्कल् बन्धुवर्ग्गङ्ङळोटुं । २५

घबड़ाता हुआ भागा और छिप गया। जब कुरुसेना ने पाञ्चालनगर को घेर लिया तब पाण्डवों ने वृष्णियों, बलदेव आदि वीरों और श्रीकृष्ण को समाचार कहने के लिए आदमी भेजा। समाचार सुनकर बलराम और कृष्ण चतुरङ्ग सेना के साथ सोत्साह दौड़े आये। यह देखकर सभी धार्त्तराष्ट्र बड़े खिन्न हुए और बड़े दुःख के साथ हस्तिनापुर लौट गये। जाते समय सुयोधन ने विषण्ण होकर दुश्शासन से धीरे-धीरे विविध बातें कीं। १४-२० जैसे—अब स्पष्ट हो गया है कि कुन्ती और उसके पुत्र लाक्षा-गृह में जल नहीं गये थे। अब उनके बन्धु भी हो गये हैं जैसे पाञ्चाल-राज, राम, कृष्ण, अन्धक और वृष्णि। पुरोचन ने अवश्य कोई मूर्खता की है, उसके फलस्वरूप आगे क्या-क्या होगा, यह समझ में नहीं आता है। हमारे शौर्य को धिक्कार है! आख़िर पाण्डव सुन्दरी द्रौपदी को ले ही गये! इस प्रकार की बातें करते हुए वे धीरे-धीरे अपने बन्धुओं के साथ हस्तिनापुर

पार्त्थंण्मार् पाञ्चालियें वेट्टतुं जयिच्चतुं
धार्त्तराष्ट्रन्मार् नाणंकेंट्टु पोन्नतुमेंल्लां २६
केट्टु सन्तोषं पूण्टु विदुरर् चेंन्नु धृत-
राष्ट्रभूपतितन्नोटीवण्णमरियिच्चान् । २७
नाट्टिलुळ्ळवर्क्कें ल्लां सन्तोषं वाय्क्कुंवण्णं
वेट्टितु नराधिप! निन्नुटें पुत्रन्मारिल् ।२८
ज्येष्ठनामवन् द्रुपदात्मजतन्नेयिप्पोळ्
वाट्टमेंन्निये कुरुवंशवुं वर्द्धिच्चीटुं । २९
विदुरवाक्यं केट्टु धृतराष्ट्ररुमति-
कुतुकंपूण्टु दैवानुग्रहमेंन्नु चोंन्नान् । ३०
तनयन्मारिल् ज्येष्ठनेंन्नतुकेट्टु सुयो-
धननेंन्नोर्त्तु पुनरन्धनुमुरचेंय्तान् । ३१
आभरणङ्ङळेंल्लां कोंटुत्तीटुक वेणं
द्रौपदिक्कलङ्करिच्चीटुवान् वैकियातें । ३२
वाञ्छया मत्सन्निधौ दुरियोधननोटुं
पाञ्चालितन्नें कूट्टिक्कोंण्टिङ्ङु पोन्नीटेणं । ३३
चोंल्लिनान् मन्दस्मितं पूण्टुटन् विदुररु-
मल्लल्ल धर्म्मात्मजन् वेट्टितेंन्नल्लो केट्टू । ३४
स्वाकाराच्छादनार्त्थं धृतराष्ट्ररुमेंङ्किल्
भागधेयं पाण्डवन्मार् जीविच्चतुमेंन्नान् । ३५

चले गये। पाण्डवों का पाञ्चाली के साथ विवाह करना, युद्ध में विजय प्राप्त करना, धार्त्तराष्ट्रों का अपयश प्राप्तकर लौटना, यह सब समाचार सुनकर विदुर प्रसन्न हुए और धृतराष्ट्र के पास जाकर इस प्रकार बोले— २१-२७ "देश के रहनेवालों के मन में हर्ष उत्पन्न करते हुए तुम्हारे ज्येष्ठ पुत्र ने द्रुपदराज की पुत्री से विवाह कर लिया है। अब बिना रुकावट के कुरुवंश की वृद्धि होगी।" विदुर की बात सुनकर धृतराष्ट्र को प्रसन्नता हुई और बोले—"यह भगवान् का अनुग्रह हुआ"। २८-३० पुत्रों में 'ज्येष्ठ का निर्देश' सुनकर अन्धे धृतराष्ट्र ने (अपने ज्येष्ठ पुत्र) सुयोधन को समझा और कहा, "अविलम्ब ही द्रौपदी को सभी आभूषण देना चाहिए, ताकि वह अपने को सजा सके। और फिर दुर्योधन अपनी इच्छा से पाञ्चाली को लेकर मेरे पास आये।" तब मुस्कराते हुए विदुरजी ने कहा, "नहीं नहीं, युधिष्ठर ने उससे विवाह किया, यही मैंने सुना।"

कुन्तियुं पाण्डवरुं पाञ्चालन् तन्नुटे सं-
बन्धिकळायिवन्नितु नन्नायितेन्नु चोन्नान् । ३६
कर्णनुं सुयोधनन्तानुमाय् विदुरर् पो-
येन्नतुकण्टु चेन्नु मन्नवनोटु चोन्नार् । ३७
ञङ्ङळ्क्कु तिरुमुन्पिल् विदुररुण्टाकया-
लिङ्ङु वन्नुणर्त्तिप्पानिल्लाञ्ञितवसरं । ३८
शत्रुक्कळ् वर्द्धिच्चतुं नामेल्लां क्षयिच्चतुं
क्षत्ताविनुळ्ळिल् मोदमेन्नतुमरिञ्ञितो ? । ३९
कुन्तीनन्दनन्मारे वैकातेयोटुक्कुवा-
नेन्तोरु कळिवेन्नु पलरुमोरुमिच्चु । ४०
चिन्तिक्कवेणमेन्ने मनसि नमुक्केल्लां
सन्तोषं वरू पुनरल्लाय्किल् तोलि पारं । ४१
कर्णनुं शकुनियुं दुरियोधननुमा-
य्क्कर्णे भूपतियोटु मन्त्रिच्चार् पलतरं । ४२
दुर्नयं नरपतितन्नोटु दुर्म्मन्त्रिकळ्
चेन्नुपदेशिक्कुन्नतरिञ्ञ भीष्मादिकळ् ४३
पुरुवंशत्तिङ्कलेक्कापत्तु वराय्वानाय्
दूरवीक्षणमुळ्ळ शन्तनुतनयनुं । ४४
भारद्वाजनुं कृपाचार्यनुं विदुररुं
सारज्ञन्मारायमट्टुमुळ्ळ सज्जनङ्ङळुं । ४५

धृतराष्ट्र ने अपना आकार छिपाकर कहा, "यह सौभाग्य की बात है कि पाण्डव अभी जीवित हैं। यह भी अच्छा हुआ कि अब कुन्ती और पाण्डव पाञ्चालराज के संबन्धी हो गये हैं।" ३१-३६ जब विदुरजी चले गये, तब कर्ण और सुयोधन राजा के पास जाकर बोले, "विदुर आपकी सन्निधि में थे। इसलिए हमको आपके पास आकर कहने का अवसर न मिला। शत्रुओं की जो वृद्धि हुई और हमारी जो हार हुई, इससे क्षत्ता (विदुर) भीतर ही भीतर प्रसन्न हैं, आपको मालूम है ? अब हम सब मिलकर सोचें, कुन्ती के पुत्रों को अविलम्ब ही कैसे नष्ट किया जाय ? तभी तो हमारे मन को आश्वासन प्राप्त होगा, नहीं तो हमारी हार ही समझिए।" कर्ण, शकुनि और दुर्योधन ने राजा के कान में विविध रायें दीं। बुरे मन्त्री राजा को बुरी नीति का उपदेश दे रहे हैं, यह जानकर दूरदर्शी शान्तनु-पुत्र भीष्म, भारद्वाज (द्रोण), कृपाचार्य, विदुर, और अन्य सारज्ञ सज्जनों ने

मेदिनीपतियाय धृतराष्ट्रन् तन्नोटु
सादरं धर्म्माधर्म्मङ्ङळुं नीतियुमॆल्लां । ४६
कर्ण्णगान्धारगान्धारीतनयन्मारेयुं
मुन्निलाम्मारु वरुत्तिप्परञ्ञतुनेरं । ४७
मन्नवन् धृतराष्ट्रन् तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु
नन्नल्ल महद्वाक्यमाचरियाञ्ञालिप्पोळ् । ४८
ऒन्नुटॆ मतं वॆळिच्चत्तु काट्टुन्नील ञा-
नॆन्नोटु वॆरुप्पुण्टां पुत्रन्माक्कॆन्नाकिलुं । ४९
ञङ्ङळ्क्कु नाशं भविक्कुन्नतुमिवर्क्कुळ्ळि-
लॊन्नुमे चॆन्नीलॆन्नाल् ञानिप्पोळॆल्लांकॊण्टुं । ५०
नम्मुटॆ कुलत्तिनु नल्लतु चॊल्लीटुन्न-
धर्म्मिष्ठन्मार्वाक्कुकळ् कैक्कॊळ्ळुन्नतेयुळ्ळु । ५१
इत्थमात्मनि कल्पिच्चवरोटुरचॆय्तु
सिद्धान्तं निङ्ङळ्क्कॆल्लामॆन्तॆन्नु चॊल्लीटुविन् । ५२
भद्रमाकुन्नतिप्पोळिविटॆ नमुक्कॆन्तु
विद्वल्प्रौढन्मार् निङ्ङळ् चिन्तिच्चु कल्पिक्कुन्न । ५३
तुत्तममतिन्नु मट्टेप्पुरमॊरुनाळुं
वर्त्तिच्चीटुकयिल्ल ञानॆन्नु धरिच्चालुं । ५४
तापवुं मरच्चुळ्ळिल् पुरमे सन्तोषवुं
भूपति भाविच्चवरोटितु चॊन्ननेरं । ५५

कर्ण, गान्धार और गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) को भी बुलवाकर, उनके सामने राजा धृतराष्ट्र को, पुरुवंश को विपत्ति से बचाने के लिए धर्म, अधर्म और नीति का सादर उपदेश दिया। ३७-४७ तब राजा धृतराष्ट्र ने मन ही मन सोचा, 'बड़ों की बात का उल्लङ्घन करना ठीक नहीं होगा। मैं अपना मत प्रगट नहीं करूँगा क्योंकि मेरे पुत्र मुझसे अप्रसन्न होंगे। उन्होंने समझा ही नहीं कि हमारा नाश हो जायगा। इसलिए सब सोचने के बाद हमारे कुल के हित के लिए जो ये धर्मिष्ठ लोग कह रहे हैं, मैं उसी को स्वीकार करूँगा।' इस प्रकार अपने मन में निश्चय करके बोले, "आप लोग अपना निश्चित मत बतला दीजिए कि मेरे लिए उचित बात क्या होगी। आप विद्वान् और प्रौढ़ हैं। आप सोचकर जो कुछ भी आज्ञा देंगे, उसे टालकर मैं और कुछ कभी नहीं करूँगा, जान लीजिए।" ४८-५४ जब राजा ने अपना दुःख छिपाकर ऊपर से प्रसन्नता दिखाते हुए इस

द्रोणरुं विदुररुं भीष्मरुं कृपरुमाय्
क्षीणलोचननाय नृपनोटरियिच्चार् । ५६
विरयें वरुत्तुक पाण्डवन्मारेयेन्नाल्
पेरिकें नाशमिल्लतल्लाय्किल् मुट्टिञ्ञुपों । ५७
ॲङ्किलो विदुरर् पोय् वरुत्तीट्टुकयेन्नु
सङ्कटं मरच्चाशु धृतराष्ट्ररुं चोन्नान् । ५८
विदुररतुकेट्टु द्रुपदपुरंपुक्कु
पृथयुं पुत्रन्मारुं पोरिकेन्तुरचेय्तु । ५९
कृष्णनुं विदुररुं कुन्तियुं द्रुपदनुं
कृष्णयुं पाण्डुसुतन्मारुमाय् निरूपिच्चार् । ६०
हस्तिनपुरंपुक्कु कल्याणघोषत्तोटु-
मेत्रयुं तेळिञ्ञितु नगरवासिकळ्क्कुं । ६१
पाण्डवन्मारुं नल्ल पत्नियुं जननियुं
पाण्डुपूर्व्वजनादियाय बन्धुक्कळेयुं । ६२
वणङ्ङियोरुमिच्चु पाण्डुविन्गृहं तन्निल्
गुणङ्ङळोटुं सुखिच्चिरिक्कुं कालत्तिङ्कल् । ६३

अर्द्धराज्याभिषेकं

वरुत्ति युधिष्ठिरन्तन्नेयुं कृष्णनेयुं
निरत्तीट्टुवानायिप्परञ्ञु धृतराष्ट्रन् । १

प्रकार कहा, तब द्रोण, विदुर, भीष्म और कृप ने दुःखित राजा से निवेदन किया—"तो फिर पाण्डवों को जल्दी बुलवाइए। अब भी तो कुछ बिगड़ा नहीं है, नहीं तो सब नष्ट हो जायगा।" उस पर धृतराष्ट्र ने अपना खेद छिपाकर कहा—"अगर ऐसा है तो विदुरजी जाकर बुला लावें।" यह सुनकर विदुर पाञ्चालपुर गये और कुन्ती और उनके पुत्रों से चलने के लिए कहा। कृष्ण, विदुर, कुन्ती, द्रुपद, द्रौपदी और पाण्डवों ने आपस में परामर्श किया। तदनन्तर विवाह के धूम-धाम के साथ सब हस्तिनापुर गये और (सभी) नगरवासी बहुत ही प्रसन्न हुए। पाण्डव, उनकी अच्छी पत्नी और माता, पाण्डु के ज्येष्ठ भ्राता (धृतराष्ट्र) आदि बन्धुओं की वन्दना करके पाण्डु के घर में अपने-अपने गुणों के साथ सुख से रहने लगे। ५५-६३

अर्धराज्य का अभिषेक

धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर और कृष्ण को बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा, "बेटा युधिष्ठिर! जैसे मेरा छोटा भाई राज करता था, वैसे ही तुम भी

ऍन्नुटॆयनुजनां पाण्डु वाणतुपोलॆ
मन्नवनाये वाऴ्क नीयुण्णि युधिष्ठिर ! २
ऍन्नुटॆ तनयन्मारॆल्लारुं दुरात्माक्क-
ळॊन्नुमे केळ्क्कयिल्ल ञान् परञ्ञवयुण्णी ! ३
पाण्डवन्मारे निङ्ङळ् तङ्ङळिल् पिणङ्ङातॆ
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कल् नाटुवाणिरिक्क पोय् । ४
पातिनाट्टिनु पुनरभिषेकवुं चॆय्क
माधवन्तनिक्कुळ्ळिल् चेर्न्नतो चोदिक्केणं । ५
ऍन्नतु केट्टु दामोदरनुमरुळ्चॆय्तु
मन्नव! कणक्किनिक्कॆल्लामॆन्नरिञ्ञालुं । ६
वारणावतत्तिङ्कल् पण्टिरुन्नतुपोलॆ
पारितु पाति परिपालिच्चु वसिच्चालुं । ७
ऍल्लामानन्दमिनिक्कॊळ्ळॊळं खेदमुळ्ळि-
लिल्लल्लो ममत्वमिल्लॊन्निनुमतुमूलं । ८
मन्नवन् चॊन्नवण्णमभिषेकवुं चॆय्तु
चॆन्नुटनिन्द्रप्रस्थंपुक्कितु पाण्डवरुं । ९
नारदनतुकालं धर्म्मजन्तन्नॆक्कण्टु
नारियॆक्कॊण्टुतम्मिल् पिणक्कमुण्टाकाय्वान् । १०
ओरोरो संवत्सरमोरोरुत्तरोटुकू-
टारेयुं भेदमॆन्नियिरिप्पान् नियोगिच्चु । ११

राज करो। मेरे पुत्र सब दुष्ट हैं, कोई भी मेरा कहना नहीं सुनता है। हे पाण्डु के पुत्र ! तुम लोग आपस में बिना झगड़ा किये खाण्डवप्रस्थ चले जाओ और वहाँ से राज करो। आधे राज्य का अभिषेक भी करवा लो। मैं पूछता हूँ, क्या माधव इससे सहमत हैं ?" यह सुनकर दामोदर (कृष्ण) ने कहा, "हे महाराज ! जान लीजिए कि मेरे मत में सब ठीक ही है। पहले की भाँति वारणावत में रहकर (पाण्डव लोग) आधे राज्य का परिपालन करें। मेरे लिए सब आनन्द ही है, मेरे मन में खेद तनिक भी नहीं है, किसी भी चीज़ के प्रति मेरी ममता नहीं है।" १-८ जैसे राजा ने कहा, वैसे ही अभिषेक हुआ और पाण्डवों ने इन्द्रप्रस्थ में प्रवेश किया। उस समय नारदजी (वहाँ) पहुँचे, और स्त्री के कारण पाण्डवों का आपस में वैमनस्य न हो जाय, इसलिए युधिष्ठिर से बोले, "द्रौपदी एक-एक वर्ष एक-एक भाई के साथ बिना भेद-भाव के रहा करे। जब एक भाई के

मट्टौरुत्तनुमायि वाळुन्नकालत्तिङ्कल्
मट्टौरुत्तुनु चेन्नानविटेयेन्नाकिलो । १२
अप्पोळ् तीर्थयात्र चेय्येणमोराण्टव-
निप्पोलेयल्लेन्नाकिल् निश्चयं नाशमुण्टां । १३
सुन्दरियाय तिलोत्तम कारणं मुन्नं
सुन्दरन्मारायोरु सुन्दोपसुन्दन्मारुं । १४
तङ्ङळिल् तच्चु मरिच्चीटिनारतुपोले
निङ्ङळालितुकालमुण्टाकातिरिक्केणं । १५
नन्दिच्चु नृपेन्द्रनुं नारदनोटु चोन्नान्
सुन्दोपसुन्दोपाख्यानं मम केळ्प्पिक्केणं । १६
मन्दहासवुं चेय्तु नारदन् पितृपति-
नन्दन ! केट्टुकोळ्क सोदरन्मारोटुं नी । १७

सुन्दोपसुन्दोपाख्यानं

हिरण्यकशिपुतन् कुलत्तिल् वन्नु मुन्नं
पिरन्नु निकुंभनामसुरवरनुटे । १
नन्दनन्मारायवन्नितु वीरन्माराय्
सुन्दोपसुन्दन्मारेन्निरुवरतुकालं । २
वृन्दारकारिकळाय् मुन्नमुण्टायिवन्न-
सुन्दोपसुन्दन्मारुं वयस्यन्मारेप्पोले ३

साथ रहे तब दूसरा कोई भाई उसके पास न जाये। अगर जायेगा तो उसको तत्काल ही साल-भर के लिए तीर्थयात्रा में जाना पड़ेगा। ऐसा प्रबन्ध अगर न होगा तो नाश होगा। पूर्वकाल में सुन्दरी तिलोत्तमा के कारण अभिरूप भाई सुन्द और उपसुन्द आपस में लड़कर मर गये। ऐसा न हो कि इस युग में आप भाइयों में यह बात हो जाय।" खुश होकर राजा ने नारद जी से कहा— कृपया मुझे सुन्द और उपसुन्द का उपाख्यान सुनाइए। नारद ने मुस्कराकर कहा, "हे पितृपतिनन्दन (युधिष्ठिर!) अपने भाइयों के साथ वह कथा सुन लो।" ९-१६

सुन्द और उपसुन्द का उपाख्यान

पूर्वकाल में हिरण्यकशिपु के कुल में निकुम्भ नामक असुर का जन्म हुआ। उसके दो वीर पुत्र हुए, जिनके नाम थे—सुन्द और उपसुन्द। पहले ही से देवों के शत्रु बनकर ये दोनों भाई—सुन्द और उपसुन्द आपस में मित्रों की तरह रहे और सदा ही रहते थे, कभी अलग न होते थे।

अन्योन्यं भ्राताक्कन्मारामवरिरुवरु-
मौन्निच्चु तम्मिल् पिरियाते वाळुन्नकालं । ४
त्रैलोक्यं जयिक्केणं नमुक्केन्नुरच्चवर्
शैलाढ्यनाय विन्ध्यन्तन्नुटे मुकळिल् पोय् । ५
सन्ततं पितामहन्तन्नुटे पादांबुजं
चिन्तिच्चु घोरमाय तपस्सु तुटङ्ङिनार् । ६
वायुभक्षणं चेय्तु पादाङ्गुष्ठवुमून्नि-
क्कायवुं मलं पूण्टु जटयुं वल्कलवुं । ७
धरिच्चु कूप्पित्तोळुतक्षिकळिळकाते
निरस्ताशया नित्यं व्रतत्तोटोरुपोले । ८
चेन्नितु कालमप्पोळ् पोङ्ङिय धूमंकोण्टु
नन्नायि निरच्चितु विन्ध्यनां मलयेल्लां । ९
उग्रमां तपस्सुकोण्टक्कालं देवकळुं
व्यग्रिच्चु भयप्पेट्टु चिन्तिच्चार् पलतरं । १०
ऐन्तोन्नुकोण्टु तपोविघ्नत्ते वरुत्तावू
पन्तोक्कुं मुलमारालेतुमिल्लोरु फलं । ११
शूलवुमोङ्ङियोरु राक्षसनटुत्तितु
कालनेप्पोले देवन्मारुटे माययाले । १२
सुन्दोपसुन्दन्मारामसुरेन्द्रन्मारुटे
सुन्दरिमारां भार्याभगिनीजननिमार् १३

उन्होंने त्रैलोक्य जीतने का निश्चय किया । तदनुसार पर्वतवर विन्ध्य के शिखर पर गये और सदा ही ब्रह्मा के पादाम्बुज का ध्यान करते हुए वहाँ घोर तप करने लगे । १-६ केवल वायु ही उनका आहार था । अपना पादाङ्गुष्ठ भूमि में गाड़कर, मलयुक्त शरीर के साथ जटा और वल्कल धारण करते हुए, हाथ जोड़े, बिना आँख हिलाये, सभी इच्छाएँ त्यागकर व्रत करते रहे । समय बहुत बीता । उठते धुएँ से सारा विन्ध्यपर्वत निरन्तर भर गया । इस उग्र तप के कारण उस समय देवगण घबड़ाये और डर गये तथा सोचने लगे—इनके तप में विघ्न कैसे पहुँचावें । कन्दुक-समान स्तनवालियों से कुछ काम न बनेगा । देवों की माया के द्वारा यमराज के समान एक राक्षस शूल उठाते पहुँचा । सुन्द और उपसुन्द की पत्नियाँ, भगिनियाँ और माता जो सुन्दरी थीं भयभीत होकर 'हमारी रक्षा करो,' ऐसा चिल्लाती हुई भागीं । इसे देखकर भी वे दोनों भाई न

पेटिच्चु परिपालिच्चीटणमेन्तु चौलिल-
योटिच्चेन्ततुकण्टुमिळकीलवरेतुं । १४
ओन्तुकोण्टुमे तपोभंगत्तेच्चेय्तुकूटा-
त्तिन्द्रादि देवगणमाकुलप्पेट्टशेषं १५
मुन्पिलाम्माऱङ्ङेळुन्तळ्ळिनान् पितामह-
नन्पोटु वेण्टुं वरं तरुवनेन्तु चोन्नान् । १६
वन्दिच्चु सुन्दोपसुन्दन्मारुमरविन्द-
नन्दनन्तन्नोटत्यानन्दमायुरचेय्तार् । १७
निन्तिरुवटिक्कु कारुण्यमुण्टेङ्किल् जङ्ङळ्-
क्कन्तरं वरातोरु देवत्वं तन्नीटेणं । १८
अन्नेरं विधातावुमवरोटरुळ्चेय्तु
तन्नुकूटामो मम देवत्वं निङ्ङळ्क्किप्पोळ् । १९
मट्टु वेण्टुन्नतेल्लां नल्कुवनुरचेय्विन्
कुटमुण्टमरत्वं निङ्ङळ्क्कु तन्नीटिनाल् । २०
अन्नतु केट्टनेरं सुन्दोपसुन्दन्मारुं
नन्नायिक्कूप्पित्तोळुतजनोटरियिच्चार् । २१
स्थावरजंगमङ्ङळायुळ्ळ भूतङ्ङळा-
लावयोरोरुनाळुं मरणमरुतल्लो । २२
लोकङ्ङळ् मून्तिङ्कलुमुळ्ळोरु जन्तुक्कळा-
लेकदा मृत्यु भविच्चीटरुतोरुनाळुं । २३

हिले । ७-१४ किसी भी प्रकार तपोभंग न कर सकने से इन्द्र आदि देव-गण व्याकुल हुए । तब पहले की तरह ब्रह्मा पधारे और उन्होंने यथेष्ट वर देने की प्रतिज्ञा की । सुन्द और उपसुन्द ने वन्दना करके ब्रह्माजी से सानन्द इस प्रकार कहा, "अगर आपको हमारे प्रति कारुण्य हो तो हमको निर्बाध देवत्व दे दीजिए ।" उस पर विधाता (ब्रह्मा) ने उनसे कहा, "मैं आपको देवत्व कैसे दे सकता हूँ ? और जो कुछ भी चाहिए सो माँग लीजिए । अमरत्व (देवत्व) देने में मुझे दोष लगेगा ।" यह सुनकर सुन्द और उपसुन्द ने बड़ी नम्रता के साथ हाथ जोड़कर कहा, "किसी भी भूत के द्वारा, चाहे वह स्थावर हो या जङ्गम, हम दोनो की मृत्यु तो नहीं हो सकती है । तीनो लोकों में जो प्राणी हैं, उनके द्वारा हमारी कभी मृत्यु न हो । हम पर ऐसा अनुग्रह कर दीजिए कि हमी को छोड़कर और किसी से भी हमारा नाश न हो ।" उस पर ब्रह्माजी ने कह दिया, "तुम दोनों को छोड़कर और किसी से भी तुम्हारा नाश न होगा ।" यह कहकर ब्रह्मा

अन्योन्यमों ळिञ्ञु मट़ारालुमोंरुनाशं
वऩ्ऩुकूटातवण्णं नल्केणमनुग्रहं । २४
धातावुं नाशं निङ्ङ्ळ्तङ्ङळिलों ळिञ्ञोंरु-
भूतङ्ङ्ङळालुं वऩ्ऩुकूटायकॆऩ्ऩु रचॆय्तान् । २५
आस्थया मरञ्ञरुळीटिनान् विरिञ्चनुं
दैत्यन्मार् तपस्सुमऩ्ऩेरत्तु समर्प्पिच्चार् । २६
सर्व्वजन्तुक्कळालुमवद्ध्यन्मारायति-
गर्व्वितन्माराय् निजमन्दिरं पुक्कारवर् । २७
सन्तोषमुण्टायवऩ्ऩु बन्धुक्कळ्क्कॆल्लामुळ्ळिल्-
चिन्तिच्चवण्णं वरं किट्टुकनिमित्तमाय् । २८
तापसवेषं परित्यजिच्चु दिव्यङ्ङ्ळा-
माभरणादिकळुं धरिच्चु दीपिच्चेट़ं । २९
सल्क्कारं चॆय्तीटिनारत्यर्थं सुहृज्जनं
तल्क्कार्यमवर्क्कॆल्लां साधिप्पिच्चतनुदिनं । ३०
भक्ष्यतां पुनरपि भुज्यतां यथासुखं
वक्ष्यतां बहुविधं रम्यतामिहैव मे । ३१
पीयतां यथाकामं गीयतामुच्चैस्तरं
नीयतामिति गेहेगेहे केळ्क्कायि वाक्कुं । ३२
तत्र तत्रैव पानमत्तचित्तन्मारव-
रॆत्रयुं विहरिच्चुकळिञ्ञु पलकालं । ३३
हिरण्यकशिपुतन् कुलत्तिल् वऩ्ऩु मुऩ्ऩं
पिऱऩ्ऩ निकुंभन्तन् पुत्रन्मारायुण्टाय । ३४

अन्तर्धान हो गये और दोनों दैत्यों ने अपनी तपस्या समाप्त कर दी। सभी जन्तुओं से अवध्यता प्राप्त करके और अत्यन्त गर्वित होकर वे अपने घर लौटे। अपनी इच्छा के अनुसार वर प्राप्त होने के कारण उनके सभी बन्धु अत्यन्त प्रसन्न हुए। अपने तापस का वेष त्यागकर, दिव्य आभूषण पहनकर दोनों विराजे। २१-२९ मित्रों ने उनका बहुत सत्कार किया, क्योंकि उन्होंने सब के लिए वह कार्य सम्पन्न किया था। "आओ, खाओ और फिर खाओ, सुख से भोजन करो, तरह-तरह की बातें करो, यहीं पर ख़ूब रमो। यथाकाम पियो, ऊँचे स्वर में गाओ", घर-घर इस प्रकार की बातें सुनायी देने लगीं। जगह-जगह मद्य पीकर लोग मत्त हुए और बहुत दिन तक भोग-विलास करते रहे। पहले हिरण्यकशिपु के वंश में जो

सुन्दोपसुन्दन्मारुं दैत्यवाहिनियुमाय्
विण्णवर् पुरं पुक्कु देवेन्द्रादिकळेयुं । ३५
वेन्नुटनाट्टिक्कळञ्ञीटिनानवर्कळुं
चेन्नु पुक्कितु विधातावुतन्नुटे लोकं । ३६
दन्दशूकन्मारेयुं जयिच्चु पाताळवुं
चेन्नवर् जयिच्चितु समुद्रद्वीपङ्ङळुं । ३७
म्लेच्छजातिकळेयुं जयिच्चु वशत्ताक्कि
वाच्च शौर्य्येण भूमिजयिप्पानोरुन्पेट्टार् । ३८
यागादिकर्म्मङ्ङळुमोक्कवे मुटक्कियार्
शोकंपूण्टितु मुनिवर्ग्गवुं द्विजन्मारुं । ३९
कृषि गोरक्षादियुं मुटक्कि कृपाहीन-
मृषिकळ्तम्मे वधिच्चीटिनार् मटियाते । ४०
पितृकर्म्मवुं देवपूजयुमिल्लातेयाय्
दितिजप्रवरन्मारटक्की भूचक्रवुं । ४१
लोकवासिकळेयुमोक्कवेयाट्टिक्कळ-
ञ्ञेकमानसन्मारायवर्कळिरुवरुं । ४२
पर्व्वतवनग्रामनगरद्वीपान्तरे
सर्व्वदा दिव्याङ्गनमारुमाय् क्रीडक्कयुं । ४३

निकुम्भ पैदा हुआ था, उसके पुत्र सुन्द और उपसुन्द ने दैत्य-सेना के साथ देवों के नगर में प्रवेश किया। फिर इन्द्र आदि देवों से युद्ध करके उनको वहाँ से भगा दिया। वे सब ब्रह्मलोक चले गये। ३०-३६ तदनन्तर नागों को जीतकर पाताल को वश में कर लिया, तत्पश्चात् समुद्र और द्वीपों को भी जीत लिया। म्लेच्छ जातियों को भी हराकर अपने वश में कर लिया और बड़े शौर्य के साथ सारी पृथिवी को जीतने के लिए उद्यत हुए। याग (यज्ञ) आदि कर्म सब बन्द हो गये और सारा मुनिवर्ग और ब्राह्मण-वर्ग दुःखित हुए। कृषि-गोरक्षा आदि कार्यों को भी बन्द करा दिया गया। बिना हिचक के ऋषियों की भी हत्या की गयी। श्राद्ध आदि क्रियाएँ और देवों की पूजा समाप्त हो गयी और दैत्यों ने सारी पृथिवी को दबा दिया। दोनों ने एक मन होकर सभी लोकनिवासियों को भगा दिया। पर्वतों, वनों, ग्रामों, नगरों और द्वीपों में सदैव दिव्याङ्गनाओं के साथ क्रीडा करते हुए, सभी रत्नों को अपने अधिकार में करके, देवों की पत्नियों को भी उन्होंने पकड़ लिया। ३७-४४ तापसवर, तथा आकाश

रत्नभूतङ्ङळेल्लामटक्किक्कॊण्टु देव-
पत्निकळेयुमाट्टिप्पिटिच्चु कॊण्टारल्लो । ४४
तापसप्रवररुमंबरचारिकळुं
तापमुळ्क्कॊण्टु पुरुहूतादिदेवकळुं । ४५
सत्यलोकेत्तॆ प्रापिच्चॆन्नयुं खिन्नन्माराय्
चित्ततापं पूण्टेट्मत्तलायापत्तुकळ् । ४६
अंबुजसंभवनोटरियिच्चतुनेर-
मंबरचारिकळोटरुळिच्चॆय्तु देवन् । ४७
विश्वसिच्चालुं मम वचनं वैकातॆ ञान्
निश्शेषपरितापं निङ्ङळ्क्कु तीर्त्तीटुवन् । ४८
विश्वकर्त्तावुतानुमुळ्क्कान्पिल् निरूपिच्चु
विश्वकर्म्मावुतन्नॆ विळिच्चु नियोगिच्चु । ४९
निर्म्मलमाय रूपलावण्यत्तोटुमिप्पोळ्
निर्म्मिक्कवेणमॊरु तरुणीरत्नत्तॆ नी । ५०
विश्वकर्म्मावुं नमस्करिच्चु धाताविनॆ
विश्वमोहनमाय नारीरूपवुं तीर्त्तु । ५१
चारुतकलर्न्नुळ्ळ मोहनवस्तुक्कळि-
लोरोरो तिलत्तोळमॆटुत्तु सारांशत्तॆ- । ५२

में चलनेवाले, इन्द्र आदि देव सभी दुःखित होकर सत्यलोक पहुँचे और बड़ी मानस-पीड़ा अनुभव करते हुए (उन्होंने) सभी विपत्तियों को ब्रह्मा से निवेदन कर दिया। तब ब्रह्मा ने देवों से कहा, "आप लोग मेरी बात पर विश्वास कीजिए, बिना विलम्ब के मैं आपका दुःख समाप्त कर दूँगा।" विधाता ने अपने मन में सोचकर विश्वकर्मा को बुलाया और आज्ञा दी— "निर्मल रूप और लावण्यवाली एक कन्यारत्न का अभी-अभी निर्माण करो।" विश्वकर्मा ने ब्रह्मा की वन्दना करके विश्व को मोहित करनेवाली एक स्त्री का निर्माण किया। ४५-५१ जगत् की सभी सुन्दर और मोहन वस्तुओं में से तिल-तिल भर का अंश लेकर उन सबको मिलाकर एक दिव्य रूप की सृष्टि की, जो जगत् के मन को मोहित करने-योग्य था। जगत् के अद्‌भुत पदार्थों को इकट्ठा करके, उनके तिल-तिलभर सारांश का मन्थन करके विश्वकर्मा के शिल्प से निकाले गये उस (सौन्दर्य-राशि) से यह कल्पित रूप तैयार हुआ। कमलोद्भव (ब्रह्मा) ने उसको तिलोत्तमा नाम दिया। (उसे देखकर) अन्य महिलाएँ बोलीं कम और लज्जित हुईं।

च्चेर्त्तु कॊण्टॊरुक्कूट्टित्तीर्त्तॊरु दिव्यरूपं
पार्त्तोळां जगन्मनोमोहनतरमल्लो । ५३
अद्भुतमाय पदार्त्थङ्ङळ् सन्पादिच्चति-
लुल्पन्नमाय सारांशं कटञ्ञॆटुत्तितु ५४
शिल्पमार्यॊरु तिलमात्रमङ्ङतुकॊण्टु-
कल्पितमाय रूपं पूर्ण्णमायतुनेरं ५५
उल्पलोद्भवन् तिलोत्तमयॆन्निट्टु पेरु-
मल्पभाषिणिकळ् मट्टुळ्वर् नाण पूण्टार् । ५६
उल्पलोद्भवयाय लक्ष्मियुं रुद्राणियुं
कर्प्पूरशुभ्रगात्रियाकिय भारतियुं । ५७
दर्प्पकप्राणनाथयाकिय रतितानुं
दर्प्पमुळ्ळकान्पिलेरुमप्सरस्त्रीवर्ग्गवुं ५८
सर्प्पभूषणप्रिययाकिय गंगतानुं
सुप्रभांगियॆक्कण्टु मोहिच्चारसूयया । ५९
विश्वकर्म्मावुतानुं विस्मयप्पॆट्टानेटं
विश्वकर्त्तावुं तलकुलुक्कि तृक्कण्पार्त्तु । ६०
कण्टॊरु पुरुषन्माक्कुंण्टाय परवशं
तण्टलर्बाणन्तानुं मुळुवनरिञ्ञील । ६१
कुण्ठनायितु नीलकण्ठनुमतुनेरं
कॊण्टल्नेर्व्वर्ण्णन्तानुं कॊण्टाटि स्तुतिचॆय्तान् ६२
धातावु तिलोत्तमयोटरुळ्चॆय्तीटिना-
नेतुमे मटियातॆ नीयॊरु कार्यं वेणं । ६३

कमल से उत्पन्न लक्ष्मी, पार्वती, कपूर के समान श्वेतवर्ण-युक्त सरस्वती, मदन की प्रियतमा रति, अत्यन्त गर्ववाली अप्सराएँ, शिवजी की प्यारी गंगा, ये सभी उस चमकनेवाली स्त्री को देखकर उससे मोहवश डाह करने लगीं। ५२-५९ स्वयं विश्वकर्मा तक अत्यन्त विस्मित हुए और विश्व के स्रष्टा ने भी सिर हिलाया तथा अपनी तृतीय आँख से देखा। जो विवशता देखनेवाले पुरुषों को हुई, उसका पूरा पता कामदेव तक को न था। उस समय नीलकण्ठ (शिवजी) भी पीड़ित हुए, मेघों के-से वर्णवाले श्रीकृष्ण भी उनकी प्रशंसा करने लगे। ब्रह्मा ने तिलोत्तमा से कहा—"एक काम है, जिसे तुम बिना हिचक के कर दो। हे सुन्दरि! तुम बिना विलम्ब के वहाँ चली जाओ, जहाँ असुरेन्द्र सुन्द और उपसुन्द रहते हैं।

सुन्दररूपे ! पोयीटेणं वैकातें चॆल्क
सुन्दोपसुन्दासुरेन्द्रन्मारुळ्ळविटॆ नी । ६४
निन्नुटॆ रूपशोभालावण्यं कॊण्टु तयो-
रन्योन्यविरोधवुमुण्टाक्किच्चमय्क्केणं । ६५
निन्नाले साद्ध्यमिनिद्देवकळुटॆ कार्यं
पिन्नॆ नी वैकातॆकण्टिङ्ङु पोरिक बाले ! ६६
लोकेशनियोगवु कैक्कॊण्टु तिलोत्तम
नाकेशकुलत्तेयुं चॆय्तुटन् प्रदक्षिणं ६७
आकाशमार्गे मन्दं मन्दं पोय् चॆल्लुन्नेरं
पाकशासनवैरिमारेयुं काणाय्वन्नु । ६८
गन्धमाल्यालंकृतमाराय् नर्त्तकीजन-
मन्तिके पाटिक्कूत्ताटुन्नतु कण्टुकण्टु ६९
भक्ष्यभोज्यङ्ङळोटुं सेवकजनत्तोटुं
पुष्कलमाय भोगत्तोटुमन्योन्यं चेर्न्नु । ७०
हृद्यमायीटुन्नोरु मद्यपानवुं चॆय्त-
ङ्ङुद्यानदेशे विन्ध्यसानुनि शिलातले । ७१
स्निग्द्धमायीटुन्न भद्रासने वाळुन्नेरं
मुग्द्धयायॊरु तिलोत्तमयुं मन्दं मन्दं । ७२
रक्तवस्त्रवुं पूण्टु मुक्ताहारादिकळुं
रक्तमाल्यानुलेपनादियुमलङ्करि- ७३

अपने रूप, शोभा और लावण्य के द्वारा उनमें परस्पर विरोध पैदा कर दो। यह देवों का कार्य है, जो तुमसे ही साध्य है। तदनन्तर जल्दी वापस चली आना।" ६०-६६ तिलोत्तमा ने जगत् के प्रभु की आज्ञा स्वीकार की और देवकुलों की प्रदक्षिणा करके जब धीरे-धीरे आकाश-मार्ग से चलने लगी, तब उसे इन्द्र के शत्रु (सुन्द और उपसुन्द दोनों दैत्य) दिखायी दिये। वे गन्ध और मालाओं से अलङ्कृत थे। नर्तकियों का गाना और नाचना देखते हुए, सेवकजनों द्वारा तैयार किये हुए अनेक प्रकार के भक्ष्य और भोज्य तथा विपुल भोग का आस्वादन करते हुए और हृद्य (मन-चाहा) मद्य पीते हुए, विन्ध्यपर्वत के शिखर पर एक उद्यान में शिलातल पर सजे हुए एक भद्रासन पर वे दोनों विराजमान थे। मुग्धा तिलोत्तमा तो, धीरे-धीरे, लाल रंग का वस्त्र पहने हुए और मोतियों का हार आदि आभूषण, लाल माला, चन्दन आदि से युक्त मनोहर वेष के साथ,

च्चेत्तयुं मनोहरमायोरु वेषत्तोटुं
चित्तमायिरिप्पोरु मन्दसञ्चारत्तोटुं । ७४
कर्णिणकारवुमरुत्तुन्नतस्तनङ्ङळुं
तन्वंगि मद्ध्ये मद्ध्ये चेरुतु काट्टिक्काट्टि । ७५
निन्नुमङ्ङोट्टु चेन्नु मेल्लवे कटाक्षिच्चुं
पिन्नेयुमिटेयिटेप्पिन्नोक्कि वाङ्ङिप्पोन्नुं । ७६
वाहिनीतीरे विळयाटुन्न नारीमणि-
मोहनरूपं कण्टु सुन्दोपसुन्दन्मारुं । ७७
काञ्ञनचषकवुं वेटिञ्ञु ससंभ्रमं
वाञ्छया मतिमरन्नसुरप्रवरन्मार् । ७८
चञ्चाटिच्चेन्नारवळ्तन्नुटे मुन्पिलोरु-
चाञ्चल्यं कलर्न्नतिल् सुन्दनां ज्येष्ठनप्पोळ् । ७९
दक्षिणकरं पिटिच्चीटिनानुपसुन्दन्
दक्षिणेतरकरमप्पोळे पिटिपेट्टान् ८०
मत्तचित्तन्माराय दैत्यन्मारवळुटे
हस्तपङ्कजं रण्टुं पिटिच्चु निल्कुन्नेरं । ८१
सुन्दनुमुपसुन्दन्तन्नोटु चोल्लीटिनान्
सुन्दरियाकुमिवळेन्नुटे भार्ययल्लो । ८२
निन्नुटे गुरुभूतयाकुन्नतोर्त्तीटिवळ्-
तन्नुटे करांबुजमयच्चु दूरेप्पो नी । ८३

सञ्चार करने लगी । ६७-७४ उसके उन्नत स्तन कर्णिकार के पुष्पों से अलंकृत थे । वह सुन्दरी बीच-बीच में कुछ अपने विलास को दिखाती हुई खड़ी होती थी, फिर आगे जाकर कटाक्ष करती थी, और फिर पीछे की तरफ़ देखती थी । इस प्रकार नदी के किनारे खेलती हुई उस महिलारत्न के मोहन रूप को देखकर असुरप्रवर सुन्द और उपसुन्द अपने सोने के चषक (प्याले) का मद्य समाप्त करके संभ्रम के साथ काम से प्रेरित होकर और अपना विवेक खोकर कूदकर उठे और चाञ्चल्य के साथ उसके सामने खड़े हुए । ज्येष्ठ सुन्द ने उसका दाहिना हाथ पकड़ लिया और उपसुन्द ने उसका बायाँ हाथ पकड़ लिया । ७५-८० जब मत्तचित्त वाले दोनों असुर उसके करकमलों को पकड़े खड़े थे, तब सुन्द ने उपसुन्द से कहा, "यह सुन्दरी मेरी पत्नी है, इसलिए तुम्हारी गुरु हुई । ऐसा ठीक से समझकर उसका करकमल छोड़कर दूर चले जाओ ।" यह सुनकर

ऒन्नतु केट्टनेरमुपसुन्दनुं चॊन्ना-
नॆन्नुटॆ भार्ययिवळ् कैत्तळिरयच्चालुं । ८४
चिन्तिच्चीटुकिल् वधुवाय्वरुं भवानिव-
ळॆन्तरियातॆ काट्टीटुन्नतन्धतयाले ? ८५
ऒन्नुटॆ भार्ययिवळ् मट्टुळ्ळतॆल्लां भवा-
नन्यायं काट्टीटातॆ कैययच्चीटुकॆन्नान् । ८६
मून्नु लोकत्तुं ज्येष्ठनुटयतल्लो धन-
धान्यरत्नादिकळुमिनिक्कु वेण्टयल्लो । ८७
दैवानुग्रहं कॊण्टिन्निनिक्कु कट्टियोरु
पार्व्वणशशिमुखितन्नॆयिङ्ङयय्क्केणं । ८८
ऒङ्ङनॆ किट्टि निनक्कॆन्नतु परयेणं
तिङ्ङिनमदं कॊण्टु पेपरयाय्कवेणं । ८९
अङ्ङुळ्ळ मदत्तॆक्काळेरॆयिल्लिनिक्केतु-
मंगनारत्नत्तॆ ञानयय्क्कयिल्लयॆन्नुं । ९०
नीययच्चीटेणमो मल्प्रणयिनितन्नॆ-
प्पेयाय वाक्कु परयातॆ कैययय्क्क नी । ९१
पेयल्ल परयुन्नतेतुं ञानॆन्टॆ जीव-
नायिकयुटॆ करं पिटिप्पानॆन्तु मूलं ? । ९२
जीवनायिकयुण्टो निनक्कॆन्नाशु सुन्द-
नावोळं वेगाल् गदयॆटुत्तानॊरुकैयाल् ९३

उपसुन्द ने कहा, "यह मेरी पत्नी है, उसका करकिसलय छोड़ दो । विचार किया जाय तो यह तुम्हारी बहू ठहरती है । क्या तुम अन्धे हो गये जो इस प्रकार का व्यवहार करते हो ? यह मेरी स्त्री है । इसलिए तुम बातें न करके, अन्याय भी न करके, इसका हाथ छोड़ो" । ८१-८६ (तब सुन्द ने कहा—) "तीनों लोकों में धन, धान्य और रत्न ज्येष्ठ के होते हैं, इसलिए यह मेरी है । भगवान् के अनुग्रह से यह चन्द्रमुखी मुझे मिली है । इसे तुम छोड़ दो ।" (तब उपसुन्द ने उत्तर दिया,) "यह पहले बतलाओ कि यह तुम्हें मिली कैसे ? अपने मद के कारण बकना मत" । "तुमसे बढ़कर मैं मत्त नहीं हूँ, इस स्त्री-रत्न को मैं नहीं छोड़ूँगा", सुन्द ने कहा । "मेरी प्रियतमा को भेजनेवाले तुम कौन हो, पागल की तरह बातें न करके इसका हाथ छोड़ो", उपसुन्द ने जवाब दिया । "मैं पागलपन की बातें नहीं कर रहा हूँ । तुमने क्यों मेरी जीवन की नायिका का हाथ पकड़

सोदरन्तानुं गदयॆटुत्तानॊरुकैयाल्
क्रोधं पूण्टिरुवरुमन्योन्यं प्रहरिच्चार् । ९४
तल्लुकॊण्टवनियिल् वन्मलपोलॆ वीणा-
रल्लो सुन्दनुमुपसुन्दनुमतुनेरं । ९५
अन्तकपुरिपुक्कारप्पॊळॆ देवारिकळ्
सन्तोषंवन्नु जगद्वासिकळ्क्कतुमूलं । ९६
सन्तापत्तोटॆ परिचारकन्मारुं पोयार्
सन्धिप्पिच्चितु तिलोत्तमयुं देवकार्यं । ९७
पाताळं पुक्कीटिनार् मट्टुळ्ळ दैत्यन्मारुं
पाथोजभवननुमिन्द्रादिदेवकळुं ९८
प्रीतिपूण्टनुग्रहं कॊटुत्तु तिलोत्तम-
य्क्कादराल् सूर्यपथं प्रापिच्चाळवळ्तानुं । ९९
इन्द्रनुमटक्कि वाणीटिनान् त्रिभुवनं
नन्दिच्चु सत्यलोकं पुक्कितु विरिञ्चनुं । १००
सुन्दरी तिलोत्तम कारणं मरिच्चितु
सुन्दोपसुन्दन्मारुमन्योन्यं प्रहरत्ताल् । १०१
निङ्ङळुमतु पोलॆ पाञ्चालिनिमित्तमाय्
तङ्ङळिल् कलहमुण्टाकातॆयिरिक्केणं । १०२

लिया ? तुम्हारी कहाँ जीवन की नायिका ?" यह कहकर सुन्द ने एक हाथ में झट से गदा ले ली, तब भाई ने भी एक हाथ में गदा ले ली और क्रोध में आकर दोनों ने एक-दूसरे को मारा । ८७-९४ सुन्द और उपसुन्द दोनों चोट खाकर पहाड़ की भाँति पृथिवी पर गिरे । तत्क्षण ही दोनों देव-शत्रु यमलोक सिधारे और सभी जगत् के निवासियों को (बड़ा) हर्ष हुआ । उन दोनों के परिचारक दुःख के साथ चले गये । इस प्रकार तिलोत्तमा ने देवकार्य को सम्पन्न कर दिया । (और) जितने दैत्य थे, सब पाताल चले गये । ब्रह्मा, और इन्द्र आदि देवगणों ने तिलोत्तमा पर बड़ी प्रीति के साथ अनुग्रह किया जिससे वह भी सूर्य के मार्ग पर चली गयी । इन्द्र ने त्रिभुवन को अपने अधीन कर लिया और ब्रह्माजी ने हर्ष के साथ सत्यलोक में प्रवेश किया । इस प्रकार सुन्दरी तिलोत्तमा के कारण सुन्द और उपसुन्द आपस में लड़कर मर गये । ९५-१०१ आप लोग भी पाञ्चाली के कारण आपस में कलह न कर बैठें । यद्यपि आप लोगों का आपस में सुहृदभाव है फिर भी, कहते हैं, कि स्त्रियों के कारण वैर

अन्योन्यं सुहृद्भावमुळ्ळवरॆन्नाकिलुं
पॆण्णुङ्ङळ्मूलं वैरं वर्द्धिच्चुवरुमत्रे । १०३
निङ्ङळॆक्कुरिच्चुळ्ळिल् स्नेहमेरुकुयाल् ञा-
निङ्ङनॆ वन्नु चॊन्नेन् निङ्ङळोटरिञ्ञालुं । १०४
इत्तरमरुळ्चॆय्तु नारदनॆळुन्नळ्ळि
पृत्थ्वीपालकन्मारुमप्पोळॆ वाळुंकालं । १०५

अर्ज्जुनन्टॆ तीर्त्थयात्रा

कुरुराज्यत्तिलॊरु धरणीदेवेन्द्रनु
पॆरिकॊप्पशुक्कळॆक्कळ्ळन्मार् कॊण्टुपोयार् । १
अतु चॆन्निन्द्रप्रस्थगोपुरद्वारत्तिङ्क-
लतिवेदनयोटु परञ्ञु भूदेवनुं । २
अप्पॊळॆ धनञ्जयनाश्वसिप्पिच्चान् पिन्नॆ-
क्कॊल्पेरुमायुधङ्ङळॆटुप्पान् चॆन्ननेरं । ३
आयतमिळियाळुं धर्म्मपुत्ररुं पञ्च-
सायकरसं पूण्टु मरुवुन्नतु कण्टान् । ४
आयुधशालतन्निलर्ज्जुननवन्तानुं
पोयानन्नेरंतन्नॆ भूसुरोत्तमनोटुं । ५
तस्करन्मारॆयॊक्क निग्रहिक्कयुं चॆय्तु
सल्ककरिक्कयुं चॆय्तान् विप्रनु पशुक्कळॆ । ६

हो जाता है। आप लोगों के प्रति मेरा स्नेह है, इसलिए, जान लीजिए, मैंने आपसे इस प्रकार कहा। यह कहकर नारदजी सिधारे और भूपाल-गण भी उनके कहने के अनुसार रहने लगे। १०२-१०५

अर्जुन की तीर्थयात्रा

(एक बार) कुरुओं के राज्य में चोर एक ब्राह्मण की बहुत गायें चुरा ले गये। तब इन्द्रप्रस्थ के गोपुरद्वार पर जाकर ब्राह्मण ने दुःख के साथ सब बतला दिया। अर्जुन ने ब्राह्मण को आश्वासन दिया। तदनन्तर मजबूत आयुध लेने के लिए अन्दर गये। उस समय अर्जुन ने युधिष्ठिर और द्रौपदी को आयुधशाला ही में बैठकर कामदेव की लीलाएँ करते हुए देखा। फिर वह ब्राह्मण के साथ निकल गये। अर्जुन ने चोरों का निग्रह करके ब्राह्मण की गायें वापस करा दीं। तदनन्तर इस उद्देश्य से

पिन्नॆत्तन् गुरुभूतन्मारॆयुं वणङ्ङीट्टु
तन्नुटॆ समयत्तिन्नन्तरं वराय्वानुं । ७
सन्नाहमोटु तीर्त्थयात्रयुं तुटङ्ङिनान्
पिन्नाले कूटॆप्पोयार् विप्रादि साधुक्कळुं । ८
सागर सरिल् सरो वन शैलङ्ङळ् कण्टु
वेगेन गंगाद्वारे चॆन्निरुन्नितु पार्त्थन् । ९
गंगयिल् मुळुकिनान् मंगलमनस्कना-
यंगजतापंपूण्ट पन्नगतरुणियुं । १०
वॆळ्ळत्तिल् ताऴ्त्तिक्कॊण्टाळुळ्ळवुं ताऴ्त्तिक्कॊण्टा-
ळुळ्ळलिञ्ञुलूपियुमायॊरु निशि वाणान् । ११
उण्टायितिरावानॆन्नात्मजनवळ् पॆट्टु
तण्टलर्बाणसमनाय पाण्डवन् पिन्नॆ । १२
हिमवल्पार्श्वं पुक्कानगस्त्यवाटं कण्टान्
हिमवन्मूद्धिन बिन्दुसरस्सुं कण्टु पार्त्थन् । १३
भृगुतुन्दवुं कण्टान् पलदानङ्ङळ् चॆय्तान्
भगवल्भक्तनाय फल्गुनन् पाण्डुपत्रन् । १४
हरिद्वारवुं कण्टु विस्मयप्पॆट्टु कूप्पि
हिरण्यविन्दुविन्टॆ तीर्त्थङ्ङळॆल्लामाटि १५
पर्व्वतङ्ङळुं कण्टान् पुण्यक्षेत्रङ्ङळ् कण्टान्
दिव्यङ्ङळाय तीर्त्थङ्ङळिलुं मुळुकिनान् । १६

कि पहले के ठहराव (निश्चय) का उल्लङ्घन न हो, गुरुजनों की वन्दना करके बड़े समारोह के साथ तीर्थयात्रा में जाने लगे। (और) ब्राह्मणों तथा अन्य सज्जनों ने उनका अनुसरण किया। १-८ अनेक सागर, नदियाँ, सरोवर और पर्वत देखने के बाद अर्जुन गंगाद्वार पर जाकर बैठे। जब मंगलमय चित्त के साथ गंगा में मज्जन किया तब उलूपी नामक एक नाग-कन्या, जो कामदेव से विवश हो गयी थी, अर्जुन को नीचे खींच ले गयी। वह उससे प्रेम करती थी, और अर्जुन ने भी, प्रेमार्द्र होकर, उसके साथ एक रात बितायी। फलस्वरूप उलूपी ने इरावान् नामक पुत्र को जन्म दिया। तदनन्तर मदन के समान सुन्दर अर्जुन ने हिमालय पर्वत के घाटों में प्रवेश किया और अगस्त्य का आश्रम देखने के बाद हिमालय के शिखर पर बिन्दुसर भी देखा। भगवान् के भक्त अर्जुन ने भृगुतुन्द देखा और अनेक प्रकार के दान किये। हरिद्वार देखकर विस्मित हुए और हाथ

अविटेनिन्नु नेरे किळक्कोट्टिरङ्ङीट्टु
भुवनप्रसिद्धयामुल्पलिनियेक्कण्टान् । १७
नैमिशारण्यं कण्टान् प्रतिनन्दयुं कण्टान्
वैमल्यं कलर्न्नीटुमपरनन्द कण्टान् । १८
नल्ल कौशिकी गय, गंगयुमाटिप्पिन्ने
चौल्लेळुमङ्गराज्यं वंगवुं कलिङ्गवुं । १९
कण्टितु महार्ण्णवमविटे स्नानं चेय्तु
कण्टितु महेन्द्रमां पर्व्वतं धनञ्जयन् । २०
चौल्लेळुं गोदावरियाटिनान् कावेरियुं
कल्याणालयमाय रंगवुं वणङ्ङिनान् । २१
सत्वरं मणलूरमाकिय पुरिपुक्कु
चित्रवाहननाय राजावुतन्नेक्कण्टान् । २२
अवनु चित्रांगदयेन्नोरु मकळुमु-
ण्टवळे वेट्टुकोण्टानविटेयिरुन्नना- २३
ळप्पुरितन्निल्निन्नु केल्पोटे पुरप्पेट्टा-
नप्पोळे पञ्चतीर्त्थमाटिनान् पेटि नीक्कि । २४
अल्भुतांगिकळाय नालु दासिकळोटु-
मप्सरस्त्रीयायोरु वन्दयुमोरु शापाल् । २५

जोड़े, तदनन्तर हिरण्यबिन्दु के तीर्थों का दर्शन किया। ९-१५ अनेक पर्वत देखे, पुण्यक्षेत्र देखे और दिव्य क्षेत्रों में स्नान किया। वहाँ से सीधे पूरब की ओर उतरकर लोकविख्यात उत्पलिनी को देखा। तदनन्तर नैमिषारण्य, फिर प्रतिनन्दा, तत्पश्चात् शुद्ध अपरनन्दा को भी देखा। निर्मल कौशिकी और गया देखकर गंगा में स्नान किया। तदनन्तर विख्यात अङ्गदेश तथा वङ्ग, कलिङ्ग आदि देशों को देखकर समुद्र में स्नान किया। फिर अर्जुन ने महेन्द्र पर्वत देखा ओर सुप्रसिद्ध गोदावरी और कावेरी में स्नान किया। और कल्याण के केन्द्र रंग (नाथ महादेव) की भी वन्दना की। तदनन्तर मणलूर नगर में प्रवेश करके वहाँ के राजा चित्रवाहन का दर्शन किया। उनके चित्रांगदा नामक एक पुत्री थी, जिससे अर्जुन ने वहाँ रहते समय विवाह किया। तत्पश्चात् उस नगर से धूमधाम से निकले और पञ्चतीर्थों का दर्शन किया। १६-२४ वहाँ वन्दा नामक अतिसुन्दरी अप्सरा और उसकी उतनी ही सुन्दरी चार दासियाँ किसी के शाप के कारण घड़ियाल के रूप में परिणत होकर उन पञ्चतीर्थों में रहती

नक्ररूपिणिकळायञ्चु तीर्थङ्ङळिलु
पुक्कु वाळ्कयालारुं तीर्थङ्ङळाटुमारि २६
ल्लुग्रवेगेन भक्षिच्चीटुमेन्नुळ्ळ भयाल् ।
अन्ततु केट्टु पात्र्थ लोकोपकारार्त्थमाय् २७
पञ्चतीर्थङ्ङळिलुं कुळिच्चु तर्प्पिच्चितु ।
पञ्चनक्रङ्ङळेयुं पञ्चत्वं चेर्त्तानल्लो । २८
वन्दय्क्कुं सखिकळ्क्कुं शापमोक्षवुं वन्नु
वन्दिच्चु पाण्डवने स्तुतिच्चु पोयारल्लो । २९
पिन्नेयुं चित्रांगदतन्नेक्काण्मतिन्नायि-
च्चेन्नितु मणलूरपुरियिलिन्द्रपुत्रन् । ३०
विभ्रमं कलर्न्नवळोटु चेर्न्निरिक्कुंनाळ्
बभ्रुवाहननेन्नोरर्भकनुण्टायवन्नु । ३१
पश्चिमसमुद्रतीरत्तुकूटवन् पिन्ने
स्वच्छमां प्रभासतीर्थत्तिङ्कल् चेन्नु पुक्कान् । ३२

सुभद्राहरणं

यादवनाय गदन् परञ्ञु केट्टानन्नु
माधवभगिनियां सुभद्रागुणमेल्लां । १
पण्डितनाय पाण्डुनन्दन नवळ्मूलं
मुण्डितनायिक्कुण्डियाय् त्रिदण्डियुमायान् । २

थीं। इस डर से कि वे तुरन्त ही पकड़कर खा लेंगी, कोई भी उनमें स्नान न करता था। यह सुनकर, लोकोपकार के उद्देश्य से अर्जुन ने पाँचों में स्नान करके तर्पण किया। (और उन) पाँचों घड़ियालों को यमलोक भेज दिया। वन्दा और उसकी सखियाँ शाप से मुक्त हुईं। पाँचों अर्जुन की वन्दना और स्तुति करके चली गयीं। तदनन्तर अर्जुन चित्रांगदा को देखने के लिए फिर मणलूर नगर चले गये। जब वे उसके साथ प्रेम से रहते थे, तब उसके वभ्रुवाहन नामक पुत्र का जन्म हुआ। तदनन्तर पश्चिम समुद्र के किनारे से जाते हुए अर्जुन स्वच्छ प्रभासतीर्थ पहुँचे। २५-३२

सुभद्रा-हरण

उन दिनों यादव गद ने श्रीकृष्ण की भगिनी सुभद्रा के गुणों का अर्जुन के सामने वर्णन किया। उसके कारण विद्वान् अर्जुन अपना सिर मुँड़वाकर

अक्षमाल्यांगुलीययोगभारवुं वहि-
च्चक्षिकळिळकातॆ मुख्यमां ध्यानत्तोटुं ३
वृक्षेशनाय वटकोटरच्छायतङ्कल्
पुक्कितु लक्ष्मीपतियाकिय वासुदेवन् ४
पुष्करनेत्रन्तन्नॆ चिन्तिच्चु चिलदिनं
पुष्करविशिखनुं पुक्कितु सन्नद्धनाय् । ५
अव्ययन् नारायणनव्यक्तनतुकालं
दिव्यज्ञानेन कण्टु सव्यसाचियॆयप्पोळ् । ६
सत्यभामयुमायित्तत्र चॆन्नीटुन्नेरं
सुप्तनाय् किटक्कुन्न भक्तनॆक्कण्टु कृष्णन् । ७
आनन्दविवशनायेट्टवुं चिरिच्चप्पोळ्
मानिनी सत्यभाम चोदिच्चाळतिन्मूलं । ८
अत्यर्थं चिरिच्चतिनॆन्तु कारणं नाथ !
सत्यमॆन्नोटु परञ्ञीटेणमॆन्नीवण्णं । ९
सत्यभामोक्ति केट्टु भगवान् पद्मेक्षणन्
सत्यपूरुषन् सकलेश्वरन् सनातनन् १०
सत्यमायुळ्ळ वृत्तमवळोटुरचॆय्तु
सत्यभामय्क्कुमेट्टमानन्दं वन्नितप्पोळ् । ११
पुण्यवानॆयुमुणर्त्तीटिनान् जगन्नाथ-
नन्योन्यं कण्टु गाढाश्लेषवुं चॆय्तु पिन्नॆ १२

दण्डी बन गये । अक्षमाला और अङ्गुलीयक पहने हुए, आँखों को निश्चल रखते हुए एक वृक्षराज बट की छाया में बैठकर ध्यान करने लगे। लक्ष्मीपति और कमलाक्ष वासुदेव का ही कभी-कभी स्मरण किया। कमलबाण कामदेव ने भी सन्नद्ध होकर प्रवेश किया। उस समय अव्यय, अव्यक्त, नारायण ने अपनी दिव्यदृष्टि से सव्यसाची (अर्जुन) को देखा। सत्यभामा के साथ कृष्ण जब वहाँ पधारे तब उन्होंने अपने भक्त को सोते हुए देखा। १-७ आनन्द से विवश होकर जब कृष्ण ऊँची आवाज़ में हँसे, तब मानिनी सत्यभामा ने कारण पूछा, "हे नाथ ! क्या कारण है कि आप इतना हँसे ! मुझसे सच बतलाइए।" सत्यभामा की यह बात सुनकर भगवान् कमलेक्षण, सत्यपुरुष, सकलेश्वर, सनातन ने उससे सही बात कह दी (जिसे) सुनकर सत्यभामा को बड़ा आनन्द हुआ। जगन्नाथ ने अर्जुन को ज़गाया। दोनों एक-दूसरे को देखकर गले लग गये। तदनन्तर अर्जुन

रैवतकाख्याचलं पुक्कितु वसिप्पानाय्
दैवतसहायनाय् चमञ्ञु विजयनुं । १३
पिन्नेप्पोय् द्वारवतिपुक्कितु भगवानुं
वन्नीटुं मनोरथमेन्नायी किरीटिक्कुं । १४
अक्कालं रैवतकमाय पर्व्वतत्तिङ्कल्
चोल्क्कोण्ट महोत्सवं कल्पिच्चु वासुदेवन् । १५
भोजवृष्ण्यन्धकन्मारोक्कच्चेन्नोरुमिच्चु
भोजनादिकळ् महादानङ्ङळापूरिच्चु । १६
वादित्रादिकळ् नादमेट्टवुमाघोषिच्चु
मोदत्तोटोरो दिव्यमेळङ्ङळ् मेळिप्पिच्चु । १७
वृक्षाग्रं तोरुं दीपं वच्चोक्कज्ज्वलिप्पिच्चु
पुष्कराक्षिकळ् कोप्पिट्टेट्टवुं फलिप्पिच्चु । १८
रेवतियोटुं कूटे क्षीबनां बलभद्रन्
सेवकन्मारुमायिच्चमञ्ञु वन्नीटिनान् । १९
उग्रसेननुं नारीसहस्रसहितना-
यग्रे वन्नितु चतुरंगवाहिनियोटुं । २०
प्रद्युम्नन् सांबन् पुनरक्रूरन् सारणनुं
सत्यकन् सहावरन् सात्यकि भंगकरन् २१
चारुदेष्णनुं पृथु विपृथु कृतवर्म्मा
वीरनां विदूरथन् निशठन् भानु गदन् २२

रहने के लिए रैवतक पर्वत पर चले गये। इस प्रकार अर्जुन को भगवान् का साहाय्य प्राप्त हुआ। भगवान् तो द्वारवती सिधारे और किरीटी (अर्जुन) को विश्वास हो गया कि अपना मनोरथ सिद्ध हो जायगा। ८-१४ उन दिनों वासुदेव ने रैवतक पर्वत पर एक महोत्सव का प्रबन्ध किया। भोज, वृष्णि, अन्धक आदि सब साथ गये और भोजनों और महादानों की वहाँ भरमार हुई। वाद्यों का वहाँ बड़ा ही आघोष हुआ। बड़े प्रमोद के साथ विविध दिव्य बाजे बजाये गये। वृक्षों के शिखरों पर दीप जलाये गये और कमलाक्षियों ने ख़ूब अलंकृत होकर अपना प्रभाव डाला। और बलभद्र मत्त होकर रेवती के साथ और अपने सेवकों को साथ लिये पधारे। और सहस्र महिलाओं-सहित उग्रसेन भी आये, उनके साथ चतुरंग सेना भी थी। १५-२० प्रद्युम्न, सांब, अक्रूर, सारण, सत्यक, सहावर, सात्यकि, भंगकर, चारुदेष्ण, पृथु, विपृथु, कृतवर्म्मा, वीर विदूरथ, निशठ, भानु, गद,

मट्टुमिङ्ङनेयुळ्ळ वीरन्मारोक्कत्तक्क-
प्पुक्कितु पुष्कराक्षनुत्सवं पालिप्पानाय् । २३
संन्यासवेषंपूण्ट धन्यनां पार्त्थनोटुं
नन्नायुत्सवं कण्टु नटन्नीटिननेरं २४
कन्यकसुभद्रयुं तन्नुटे सखीमध्ये
मिन्नलेन्नतुपोले काणायि संन्यासिक्कुं । २५
तन्नेत्तान् मऱन्नितु संन्यासि कन्यकयाल्
पिन्नेयुण्टाय कुळप्पङ्ङळ् आर्न्नेन्तु चोल्लू ! २६
वासुदेवनुमुपदेशिच्चानुपायङ्ङळ्
वासवतनयनुमव्वण्णमारंभिच्चान् । २७
उत्सवं कऴिञ्ञप्पोळ् वृष्णिकळेल्लावरुं
सत्सभावन्दनं चेय्तोक्कवे पुऱप्पेट्टार् । २८
सुभद्रतानुं पिन्ने रैवताद्रीन्द्रने-
स्सुभक्त्या वलत्तुवच्चर्च्चिच्चु वन्दिच्चुटन् २९
दैवतभूदेवेन्द्रन्मारेयुं वणङ्ङीट्टु
कैवरेणमे मम कांक्षितमेन्नु नण्णि । ३०
श्रीमद्वारकापुरिपूवानाय् पुऱप्पेट्टाळ्
भीमसेनानुजनुं पुक्कितु मद्ध्येमार्ग्गं । ३१
भद्रयां सुभद्रये चिन्तिच्चु चिन्तिच्चवन्
निद्रयुं वेटिञ्ञुपोयद्रिपुंगवतटे ३२

और इनके सदृश अन्य वीर भी कृष्ण का उत्सव मनाने के लिए पधारे। संन्यासी का वेष धारण किये हुए अर्जुन के साथ जब लोग उत्सव देख रहे थे तब संन्यासी को कन्यका (युवती) सुभद्रा अपनी सखियों के बीच में बिजली के समान दिखायी पड़ी। कन्या के कारण संन्यासी अपने को भूल ही गये। तदनन्तर जो कोलाहल हुआ, उसका कैसे वर्णन किया जाय? वासुदेव ने तरह-तरह के उपाय बतला दिये और अर्जुन ने तदनुसार ही काम किया। २१-२७ उत्सव के समाप्त होने के बाद वृष्णि लोग सभा का वन्दन करके जाने के लिए तैयार हुए। सुभद्रा ने भी रैवतक पर्वत के देवता की भक्तिपूर्वक प्रदक्षिणा करके आराधना की। तत्पश्चात् देवों और ब्राह्मणों की वन्दना करके 'मेरी अभिलाषा पूरी हो जाय', ऐसी प्रार्थना की, और द्वारका नगरी में प्रवेश करने के लिए चली। भीमसेन के अनुज (अर्जुन) भी उसी मार्ग के बीच में प्रविष्ट हो गये। उनका

रम्यकाननदेशे निर्म्मलशिलातले
मन्मथविवशनाय् धर्म्मजानुजन् पुक्कान् । ३३
अर्ज्जुनसालताल बकुळतमालङ्ङ-
ळश्वकर्ण्णङ्ङळ् चम्पकाशोकपुन्नागङ्ङळ् ३४
केतकपाटलङ्ङळ् कर्णिणकारङ्ङळ् नल्ल-
चूतङ्ङळङ्कोलङ्ङळतिमुक्तकङ्ङळ् ३५
इत्यादि वृक्षङ्ङळ्कोंण्टेत्रयुं मनोज्ञमां
सुस्थले वसिक्कुन्न संन्यासितन्नेक्कण्टु- ३६
पोकुन्न वृष्णिवीरन्मारोटु परञ्ञितु
साकं नम्मोटुमत्र निङ्ङळ् चेट्टिरिक्केणं । ३७
रेवतीरमणनुं सांबनुं प्रद्युम्ननुं
सारणन् कृतवर्म्मा चारुदेष्णनुं गदन् ३८
भानुवं विढूरथन् निशठन् विपृथुवुं
पृथुवुमित्यादिकळाकिय वृष्णिकळुं ३९
यदुवीरन्मारुमाय् संन्यासितन्नेक्कण्टु
कुतुकं पूण्टु नमस्करिच्चु भक्तियोटे । ४०
मृदुपल्लवङ्ङळिलिरुन्नारेल्लावरुं
कुशलप्रश्नङ्ङळुं चेय्तितु संन्यासियुं ।
कुशलमत्रेयेन्नु परञ्ञु मुसलियुं ४१

मन साध्वी सुभद्रा ही पर निरन्तर लगा रहा। वे सो न सके। इसलिए पर्वत के तट पर रमणीय बन-प्रदेश में, निर्मल शिलातल पर कामदेव से विवश होकर आराम करने लगे। २८-३३ अर्ज्जुन, साल, ताल, बकुल, तमाल, अश्वकर्ण, चम्पक, अशोक, पुन्नाग, केतक, पाटल, कर्णिकार, अच्छे-अच्छे आम के वृक्ष, अङ्कोल, अतिमुक्त, इस प्रकार के वृक्षों से मनोज्ञ स्थान में वह संन्यासी आराम करते थे। उन्हें देखते जानेवाले वृष्णिवीरों से अर्जुन ने कहा, "आप मेरे साथ थोड़ी देर बैठें।" ३४-३७ रेवतीरमण (बलराम), सांब, प्रद्युम्न, सारण, कृतवर्मा, चारुदेष्ण, गद, भानु, विढूरथ, निशठ, विपृथु, पृथु आदि अनेकानेक वृष्णियों और यदुवीरों ने संन्यासी का दर्शन किया और प्रसन्न होकर उनकी भक्ति-सहित वन्दना की। सब मुलायम पल्लवों पर बैठे रहे और संन्यासी ने कुशल-प्रश्न पूछे। मुसली (बलराम) ने कहा, "सब कुशल ही है। हम लोगों के प्रति आपकी कृपा बनी रहे। आप कहाँ से आ रहे हैं, यह भी हम सुनना चाहते हैं। आप

ञङ्ङळेक्कुरिच्चेट्टं कारुण्यमुण्टाकेण-
मेङ्ङुनिन्नेळुन्नळ्ळतेन्नतु केट्टीटेणं । ४२
निन्तिरुवटिकण्ट पुण्यदेशङ्ङळेल्ला-
मन्तरं कूटातेकण्टरुळिच्चेय्तीटेणं । ४३
क्षेत्रङ्ङळ् पर्व्वतङ्ङळ् वनङ्ङळ् नदिकळुं
तीर्थङ्ङळ् दिग्वृत्तान्तभेदङ्ङळोक्कचर्चोन्नान् । ४४
मोक्षधर्म्मङ्ङळेल्लामाख्यानं चेय्तानिवन् ।
साक्षाल् ज्ञानार्त्थि भिक्षु मुमुक्षुश्रेष्ठनेन्नार् । ४५
संन्यासिक्कुपद्रवंकूटाते वसिप्पति-
न्निन्नु नामोरु निलं कल्पिच्चीटुकवेणं । ४६
ऎन्नु वृष्णिकळ् बलनोटु चोल्लियनेरं
वन्नितु वसुदेवनन्दनन् नारायणन् । ४७
पेरिकेस्सन्तोषिच्चु बलभद्ररं चोन्नान्
वरिक कृष्ण ! वरिकोन्नु चोल्लेणमिप्पोळ् । ४८
दिव्यनायिरिप्पोरु संन्यासिवरनिवन्
निर्व्व्याजं सेविक्केणमिवने नामेल्लारुं । ४९
इविटेच्चातुर्मास्यमिरिप्पानोरु निल-
मेविटं नल्लतेन्नु चिन्तिच्चु चोल्लेणं नी । ५०
निन्तिरुवटिक्कुळ्ळिल् तोळिञ्ञ देशंतन्ने
सन्तोषं मट्टेल्लाक्कुंमेन्ततु विचारिप्पान् । ५१

महानुभाव ने कौन-कौन पुण्यदेश देखे, यह भी बिना विलम्ब के बतलाने की कृपा करें।" तब अर्जुन ने सभी क्षेत्रों, पर्व्वतों, वनों, नदियों तीर्थ-स्थानों और विविध दिशाओं के वृत्तान्तों को कह सुनाया। ३८-४४ (पुनः) ऊपर से मोक्षधर्म का उपदेश किया। सबने कहा, "यह भिक्षु वास्तविक ज्ञानार्थी और मुमुक्षुओं में श्रेष्ठ है। आज हमें चाहिए कि हम एक भूमि ढूँढ़ निकालें, जहाँ संन्यासी बिना बाधा के रह सकें।" जब वृष्णियों ने इस प्रकार बलभद्र से कहा तब वसुदेव के पुत्र नारायण वहाँ पधारे। तब बहुत प्रसन्न होकर बलभद्र ने कहा—आओ, कृष्ण ! आओ! एक बात बतलाओ। यह संन्यासी तो बहुत ही अच्छे मालूम होते हैं। हम सबको चाहिए कि इनकी निष्कपट सेवा करें। इनको अपना चातु-र्मास्य बिताने के लिए कौन सा स्थान उपयुक्त होगा, ज़रा सोचकर बतलाओ।" ४५-५० तब कृष्ण ने कहा, "जो स्थान आप को उचित प्रतीत

अन्तम्मोदेन पुणर्न्ननुजन्तन्नें नोक्कि-
च्चिन्तिच्चु कामपालन् कृष्णनोटरुळ्चेय्तु ५२
आरामत्तिङ्कलति कोमळलतागृहे
धीरनां संन्यासिक्कु वसिप्पान् सुखमुळ्ळु । ५३
भोजनत्तिन्नु कन्यकागृहमुण्टट्टुत्तेन्नाल्
भोजन्माक्कनुवादं नीकूटेक्कल्पिक्कुन्पोळ् । ५४
बलदेवोक्तिकेट्टु परञ्ञु माधवनुं
बलवानिवनतिसुन्दरन् वाग्मी युवा । ५५
कन्यकापुर समीपत्तिङ्कलाक्कीटुवा-
निन्नवन् योग्यनल्लेन्नेन्नुटे मतं पिन्ने ५६
शास्त्रज्ञन् गुरु धर्म्मज्ञोत्तमन् नेतावाय ।
शास्ता निन्तिरुवटि अङ्ङळ्क्किन्नेल्लावर्क्कुं । ५७
भवता समुक्तमायतिनें विरोधिप्पा-
निविटे मट्टारुमिल्लित्र पोन्निट्टु पिन्ने ५८
चिन्तिच्चाल् शुभाशुभमरिवानोरुत्तरुं
निन्तिरुवटिक्कुनेरिल्लेन्नु धरिक्कणं । ५९
इत्तरं कृष्णवाक्यं केट्टु रामनुं चोन्नान्
सत्यवान् जितेन्द्रियन् धृतिमान् विनयवान् ६०
उत्तमनाय भिक्षु विद्वानेत्रयुमिवन् ।
भक्त्या नी कूट्टिक्कोण्टु पोकेणं कन्यागृहे ६१

होगा वही सब लोग पसन्द करेंगे, इसमें क्या सोचना है ?" उस पर बहुत प्रसन्न होकर कामपाल (बलराम) ने सोचा और अपने अनुज कृष्ण से कहा, "किसी उद्यान के कोमल लतागृह में ही यह धीर संन्यासी सुख से ठहर सकते हैं। भोजन के लिए पास में अगर कोई कन्यागृह भी होगा तो भोजन लेना वे स्वीकार कर लेंगे, विशेषतः जब तुम आदेश दोगे।" बलदेव की बात सुनकर कृष्ण ने कहा, "यह शक्तिशाली हैं, सुन्दर हैं, वाग्मी हैं, जवान हैं। यह कन्यापुरी के पास ठहराने-योग्य नहीं हैं, यह मेरा अभिप्राय है। परंतु आप शास्त्रज्ञ हैं, गुरु हैं, धर्मज्ञों में उत्तम हैं। आप ही हम सबके उपदेशक हैं। आपके कहने का विरोध करनेवाला यहाँ कोई भी नहीं है। ऊपर से विचार करके शुभ और अशुभ को समझनेवाला आप के तुल्य यहाँ कोई भी नहीं है, यह भी जानना चाहिए।" ५१-५९ कृष्ण की यह बात सुनकर बलराम बोले, "यह उत्तम भिक्षु सत्यवान्,

भद्रयां सुभद्रयोटिङ्ङनें पऱयेणं
भद्रनायिरिप्पोरु संन्यासिप्रवरनुं ६२
भक्ष्यङ्ङळ् भोज्यङ्ङळुं पेयङ्ङळिवयेल्लां
नित्यवुं शिक्षयोटे भिक्षयिट्टीटवेण-
मत्युदारतयोटु ञान् चॊन्नतॆन्नु चॊल्क । ६३
कोमळनाय कृष्णनङ्ङनॆतन्नॆयॆन्नु-
कामपालानुज्ञयुं कैक्कॊण्टु वळिपोलॆ । ६४
संन्यासियाय पार्त्थन्तन्नुटॆ कैयुं पिटि-
च्चन्यूनकौतूहलंपूण्टु तन् गृहं पुक्कान् । ६५
रुग्मिणियोटुं सत्यभामयां कान्तयोटुं
पद्मलोचनन् परमार्त्थवुमऱियिच्चान् । ६६
पार्त्थनागतनाय वार्त्त केट्टवर्कळुं
पूर्त्तियां मनोरथमॆन्नु सन्तोषं पूण्टार् । ६७
संन्यासियोटुं कूटिक्कन्यकागृहं पुक्कु
धन्ययां भगिनियोटीवण्णमरुळ्चॆय्तु । ६८
भद्रयां सुभद्रे नी केळार्यन्टॆ नियोगं नी
भद्रनायिरिप्पोरु संन्यासिवरनिवन् । ६९
भक्ष्यभोज्यादिकळां भिक्षा नल्कीटवेणं
भिक्षुविन्ननुग्रहं सिद्धिप्पान् नमुक्कॆल्लां । ७०
नित्यवुं भिक्षुवशवर्त्तिनियाकवेणं
सिद्धिक्कुमभिमतमॆन्नाल् निश्चयं बाले ! । ७१

जितेन्द्रिय, धृतिमान्, विनयवान् और उच्च कोटि के विद्वान् भी हैं। तुम उनको भक्ति के साथ कन्यागृह ले जाओ और साध्वी सुभद्रा से इस प्रकार कहो, 'इस शिष्ट संन्यासिवर के भिक्षापात्र में भक्ष्य, भोज्य और पेय बड़ी उदारता के साथ ढंग से डाल देना' और कहना कि मैंने ही ऐसा कहा है। कोमल कृष्ण ने 'ऐसा ही करूँगा', कहते हुए कामपाल (बलराम) की आज्ञा स्वीकार की और संन्यासी अर्जुन का हाथ पकड़ते हुए बड़े कुतूहल के साथ अपने घर में प्रवेश किया। ६०-६५ वहाँ कमलाक्ष (कृष्ण) ने रुक्मिणी और सत्यभामा को यथार्थ बतला दिया। अर्जुन के आने की वार्ता सुनकर लोग अपने मनोरथ के सिद्ध होने की आशा से प्रसन्न हुए। तदनन्तर कृष्ण संन्यासी के साथ कन्यागृह गये और अपनी बहन से इस प्रकार बोले, "हे भद्रे सुभद्रे! आर्य (बलराम) की आज्ञा सुनो—यह एक सज्जन संन्यासी हैं।

मुन्नं वन्नितु चिल संन्यासिवररव-
रिन्निप्पोळ् दाशार्हन्तन् पुत्रिकळायुण्टाय- ७२
कन्यकागृहङ्ङळिलिरुन्नीटुन्नु बाले !
नन्नायि शुश्रूषिच्चीटुन्नितु भक्त्या नित्यं । ७३
ॲन्नॆल्लां बोधिप्पिच्चु माधवनॆळुन्नळ्ळि
संन्यासि कन्यागृहं तन्निलुं पुक्कानल्लो । ७४
रम्यगात्रियॆक्कण्टु मन्मथविवशनाय्
धर्म्मजसहोदरनॆत्रयुं तापं पूण्टान् । ७५
निद्रयुमिल्ल पुनरूणुमिल्लॆन्नु वन्नु
नित्यवुं ध्यानत्तिनु निष्ठयुमुण्टाय्वन्नु । ७६
मट्टॊरु चिन्तयुमिल्लुट्वरिलुंकूटॆ
मुट्टुमस्सुभद्रयिलॆन्निये नक्तन्दिवं । ७७
आळिकळोटुं कूटिक्केळिकळ् कोलुन्पोळुं
व्रीळादिमनोहरभावङ्ङळ् काणुन्पोळुं । ७८
पन्ताटुन्नतु कण्टुं पन्परक्कळिकळुं
चिन्तुकळ् पाटुन्नतुं चन्तमायाटुन्नतुं ७९
चातुर्यं कण्टुं वेणुवीणादिकळिल् शील-
माधुर्यं कण्टुं भावगांभीर्यं कण्टुं नेत्र- ८०

हम सबके लिए इस भिक्षु का अनुग्रह प्राप्त करने के लिए उनको विविध भक्ष्य और भोज्य आदि की भिक्षा देना चाहिए। हे बाले ! निरन्तर इस भिक्षु की शुश्रूषा करो। इससे अवश्य ही तुम्हारी अभिलाषा सिद्ध होगी। पहले भी कुछ संन्यासी आये थे, वे अब दाशार्ह (कृष्ण) की जो पुत्रियां हैं उन कन्याओं के घर ठहरे हुए हैं। उनकी भक्ति के साथ शुश्रूषा की जा रही है।'' ६६-७३ ऐसा समझाकर कृष्ण सिधारे और संन्यासी ने कन्यागृह में प्रवेश किया। सुन्दरी को देखकर युधिष्ठिर के अनुज कामदेव से विवश हुए और परेशान हुए। ऐसी दशा हुई कि वे न सो सके और न खा सके, निरन्तर उसी का ध्यान करने ही में उनका मन लगा रहा। रात-दिन उस सुभद्रा को छोड़कर और किसी भी वस्तु पर, अपने बन्धु-मित्रों पर भी, उनका ध्यान नहीं गया। अपनी सखियों के साथ होनेवाले उसके खेलों को, उसके व्रीडा (लज्जा) आदि मनोहर भावों को, उसकी गेंदों और लट्टुओं की क्रीडा को, उसके धीमे-धीमे गानों को, मनोहर नाच को, उसके बाँसुरी और वीणा-वादन के चातुर्य को, उसके शील-माधुर्य

कातर्यं कण्टुं चेतोवैधुर्यं कण्टुं मार-
वैकार्यं कण्टुं वाञ्छासौकर्यं कण्टुं वेष- ८१
सौकुमार्यं कण्टुं तल्लावण्यं कण्टुं वृत्ति-
दाक्षिण्यं कण्टुमुळ्ळिल् कारुण्यं कण्टुं नल्ल- ८२
तारुण्यं कण्टुं स्मितभाषितं केट्टुं भाव-
वैवर्ण्यं कलर्न्नितु सव्यसाचिक्कु मेन्मेल् । ८३
माधवभगिनियुं शैशवत्तिङ्कल्त्तन्ने
माधवसखियाय फल्गुनगुणङ्ङळ्के- ८४
ट्टादरवोटु मन्मथातुरयायाळल्लो ।
कण्टवर् परञ्ञुकेट्टर्ज्जुनरूपगुणं ८५
कण्टतुपोलेतन्नेयुण्टल्लो सुभद्रय्क्कुं ।
रण्टुकैकळ्क्कुमुण्टु ञाण्तळम्पतु कण्टु-
मुण्टायि संन्यासियिल् कौतुकं दिनंतोरुं । ८६
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चुळ्ळिल् संशयं मुळुक्कयाल्
पन्तोक्कुं मुलयाळां माधवियोरुदिनं ८७
मृष्टभोजनं कळिञ्ञिष्टमोटिरिक्कुम्पोळ्
पुष्टकौतुकत्तोटुं मट्टोलुंमोळियाळुं ८८
तुष्टनायिरिप्पोरु शिष्टनां यतियोटु
कष्टमेन्निरिक्कलुं मट्टलर्बाणन्चोल्लाल् ८९

को, भावों की गम्भीरता को, आँखों की कातरता को, चित्त के वैधुर्य को, कामदेव-कृत विकारों को, अभिलाषाओं के सौकर्य को, वेष के सौकुमार्य को, उसके लावण्य को, उसके व्यवहार के दाक्षिण्य को, उसके भीतरी कारुण्य को, और उसके शोभन यौवन को देखकर और उसके स्मितपूर्वक भाषण को सुनकर सव्यसाची (अर्जुन) के भावविकार उत्तरोत्तर बढ़े । ७४-८३ माधव की बहिन भी, बचपन से ही कृष्ण के मित्र फल्गुन (अर्जुन) के गुणों को सुनने के कारण आदर करती हुई कामदेव से पीड़ित हुई । अर्जुन के रूप और गुण, जिनका द्रष्टाओं ने वर्णन किया था, सुभद्रा को ऐसे लगें, मानों उससे स्वयं देखे हों । संन्यासी के दोनों हाथों में धनुष की डोरी का निशान देखकर उसके प्रति कौतुक दिन-पर-दिन बढ़ता गया । जब बहुत विचार करने पर भी संशय बढ़ता गया तब एक दिन कन्दुक के समान स्तनवाली मृदुभाषिणी सुभद्रा यथेष्ट भोजन करने के बाद अत्यंत कौतुक के साथ वहाँ गयी (जहाँ) तुष्ट और शिष्ट संन्यासी (-रूपधारी अर्जुन बैठे

वट्टोत्त मुलकळुं दृष्टियुं कवाटंको-
ण्टॊट्टोट्टु मऱच्चिचट्टु निन्नवळ् विचारिच्चाळ् ९०
चेरुतु पऱयुम्पोळऱियामल्लो पक्षे ।
वेरुते चिल चोद्यं चॆय्ततॆन्नते वरू ९१
भगवन् प्रसीद मे ! भगवन् प्रसीद मे !
सुकृतमल्लो मम भवत्संगममिप्पोळ् ९२
शैशवं कॊण्टु चिल कौतुकमुण्टाकयाल्
वैशिष्यमेरुं भवानोट्टु ञान् चोदिक्कुन्नु । ९३
देशङ्ङळ् सरित्तुकळ् शैलङ्ङळ् सरस्सुकळ्
ग्रामङ्ङळ् नानाजनपदङ्ङळ् नगरङ्ङळ् ९४
राज्यङ्ङळरण्यङ्ङळॆन्निवयॆल्लामॊक्क-
प्पूज्यनां भवान्तानो नटन्नु कण्टुवल्लो ९५
भोज्यङ्ङळिन्नदिक्किलिन्नवयॆन्तुं पिन्नॆ-
त्याज्यङ्ङळिन्नदिक्किलिन्नवयॆन्तुमॆल्लां ९६
अरुळिच्चॆय्तीटेणमऱिवान् तक्कवण्ण-
मरुणाधरि मन्दमीवण्णं चोदिच्चप्पो- ९७
ळरुणेतरकुलजातनाकिय पार्थन्
करुणारसपरवशमानसनाये ९८
सन्तोषबहुमान स्नेह कौतुक राग-
मन्दाक्ष वात्सल्यानन्दाकुलदयारस- ९९

हुए) थे । ८४-८९ यद्यपि बात अनुचित थी, तथापि कामदेव की प्रेरणा से अपने गोल स्तनों और आँखों को किवाड़ की आड़ में तनिक छिपाकर सोचने लगी । छोटी बातों से स्थिति मालूम हो जाती है । यों ही कुछ प्रश्न पूछूँ ऐसा सोचकर उससे कहा—हे भगवन् ! मुझ पर कृपा करो! मुझ पर कृपा करो ! मेरा बड़ा पुण्य है कि आपका दर्शन हुआ । शैशव के कारण मुझे कौतूहल हो गया है, इसलिए आप महानुभाव से मैं पूछ रही हूँ । ९०-९३ आप पूज्य ने देशों, सरिताओं, पर्वतों, सरोवरों, ग्रामों, विविध जनपदों, नगरों, राज्यों, बनों आदियों में पर्यटन करके बहुत कुछ देखा है । किस देश में क्या-क्या भोज्य है और किस देश में क्या-क्या त्याज्य है, यह सब आप बतला दें, ताकि हम जान लें । जब लाल अधर-वाली (उस सुभद्रा) ने धीरे-धीरे इस प्रकार पूछा, तब चन्द्रवंशी पार्थ (अर्जुन) ने, करुणारस से विवश होकर, सन्तोष, बहुमान, स्नेह, कौतुक,

प्रणयसुखपरमास्तिक्यमोटु चॊन्नान्
गुणशालिनियोटु सकल वृत्तान्तवुं । १००
अन्योन्यसल्लापवुं चॆय्तु मेवीटुं नेर-
मन्योन्यं कौतूहलं पूण्टु पुञ्चिरिक्कॊण्टु १०१
संन्यासितन्नॆ नोक्किक्प्पिन्नॆयुं सुभद्रयां
कन्यक सगद्गदं मॆल्लवे चॊल्लीटिनाळ् १०२
अन्यायमल्लो रहस्सल्लापं नम्मिल् भवान्
धन्यनाकयालतुं योग्यमॆन्नते वरू । १०३
अन्यमायिरिप्पॊरु वृत्तान्तं चोदिक्कुन्नु-
ण्टॆन्नोटु परमार्त्थमरुळिच्चॆय्तीटेणं १०४
खाण्डवप्रस्थत्तिङ्कलॆळुन्नळ्ळियो मम
पाण्डवमातावाय कुन्तियॆयुण्टो कण्टु ? १०५
ऎन्नुटॆ पितृष्वसावाकुन्नतरिञ्ञितो
मन्नवन् युधिष्ठिरन्तन्नॆयुमुण्टो कण्टु ? १०६
सोदरन्मारुमायि स्वैरमाय् वाळुन्नोरो ?
वातनन्दननाय भीमनु सुखमल्ली ? १०७
फल्गुननपराधं पोक्कुवान् तीर्त्थत्तिनु-
निर्ग्गमिच्चिरिक्कुन्नितॆन्नतो केट्टुतल्लो । १०८
इक्कालमेतु दिक्किल् सञ्चरिक्कुन्नितवन् ?
दुःखिप्पान् पात्रमल्ल भाग्यवानल्लो पार्त्थन् । १०९

राग, मन्दाक्ष (लज्जा) वात्सल्य, आनन्द, दयारस, प्रणयसुख और आस्तिक्य के साथ उस गुणशालिनी से सभी वृत्तान्त बतलाये । ९४-१०० तदनन्तर दोनों वार्तालाप करते रहे । दोनों का कौतूहल बढ़ा और दोनों ने स्मित-पूर्वक भाषण किया । तब कन्या सुभद्रा संन्यासी को देखती हुई गद्गद स्वर के साथ धीरे-धीरे बोली, "हम दोनों को इस प्रकार का एकान्त में वार्तालाप करना उचित नहीं है । आप शिष्ट हैं, इसलिए यह कदाचित् अनुचित न समझा जाय । मैं एक और वृत्तान्त पूछ रही हूँ, कृपया मुझसे सही-सही आप बतला दें । क्या आप खाण्डवप्रस्थ गये थे और वहाँ आपने पाण्डवों की माता कुन्ती का दर्शन किया है ? क्या आप जानते हैं कि वह मेरी बुआ हैं ? क्या आपने राजा युधिष्ठिर को भी देखा है ? क्या वे अपने भाइयों के साथ सुख से राज्य कर रहे हैं ? क्या पवन-पुत्र भीम अच्छी तरह से हैं ? सुना है कि फल्गुन (अर्जुन) अपना अपराध मिटाने

अवनेयुण्टो कण्टु केट्टितो विशेषङ्ङळ् ?
विवशभावत्तोटुमीवण्णं चोदिच्चप्पोळ् । ११०
अवळोटुरचेय्तु मन्दहासवुं पूण्टु
पवनात्मजसहोदरनां विजयनुं । १११
आर्ययां कुन्ति कुरुक्षेत्रत्तिङ्कलुं तत्र
स्वैरक्केटिल्ल विशेषिच्चेतुमेन्नु केट्टू । ११२
धर्म्मजन्मावुमनुजन्मारुमिन्द्रप्रस्थं
धर्म्मेण परिपालिच्चिरिक्कुन्नितु बाले ! ११३
भ्रातावक्कन्मारुं कुन्तियाकिय् जननियु-
मेतुमे धरिच्चितिल्लजर्ज्जुनविशेषङ्ङळ् । ११४
बालिके ञानिन्नोरु किंवदन्तियुं केट्टेन्
कालं वैकाते परमार्त्थवुमरिञ्ञीटां । ११५
रहस्यं चोल्लीटरुतंगनमारोटेन्नु
महल्संवादमेन्नाकिलुं ञान् चोल्लीटुवन् । ११६
द्वारकापुरंतन्निल् संन्यासवेषंपूण्टु
मारमाल् कलर्न्निरिक्कुन्नितु धनञ्जयन् । ११७
कृष्णसोदरियाय सुभद्रतन्निलति-
तृष्णपूण्टिरिक्कुन्नोनर्ज्जुननेन्नु केट्टु । ११८
मन्दाक्षभावंकोण्टुं प्रेमानुरागंकाण्टुं
सुन्दरिसुभद्रयुं कुन्पिट्टाळप्पोळत्तन्ने । ११९

के लिए तीर्थयात्रा में निकले हैं। वे इस समय कहाँ भ्रमण कर रहे हैं ! घबड़ाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि पार्थ भाग्यशाली हैं। आपने उनको देखा है या उनके संबन्ध में कुछ सुना है ?" १०१-१०९ जब विवश होकर सुभद्रा ने इस प्रकार पूछा, तब भीमसेन के अनुज (अर्जुन) ने मन्दहास के साथ उससे कहा, "आर्या कुन्ती कुरुक्षेत्र में हैं। सुना है कि वे प्रसन्न हैं, कोई विशेष बाधा नहीं है। हे बाले ! धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) अपने भाइयों के साथ इन्द्रप्रस्थ में धर्मपूर्वक राज्य कर रहे हैं। उनके भाइयों को और उनकी माता कुन्ती को अर्जुन के समाचार बिलकुल अविदित हैं। हे बालिके! मैंने आज एक अफ़वाह सुनी है, वह ठीक है या नहीं, (शीघ्र ही) मालूम हो जायगा। बड़ों की एक राय है कि महिलाओं को रहस्य न बतलाना चाहिए, फिर भी मैं बतलाऊँगा। ११०-११६ सुना है कि अर्जुन संन्यासी का वेश धारण करते हुए, कामदेव से विवश

काल्विरल्कॊण्टु भुवि वरच्चुवरच्चुटन्
कोळ्मयिक्कॊण्टु चॆट्टु विऱच्चुविऱच्चेवं १२०
निल्क्कुन्न सुभद्रयिल् चॆल्लुन्न चित्तंतन्नॆ
निल्क्कॆन्तु विलक्कीट्टु पिन्नॆयुं चॊन्नान् पार्त्थन् । १२१
ञान्तन्नॆ धनञ्जयनाकुन्नतरिक नी
तान्तन्नॆ वरिक्केणमॆन्नॆयॆन्नरिञ्ञालुं । १२२
पिन्नॆप्पोय् लतागृहंपुक्कितु धनञ्जयन्
कन्यक सुभद्रयुं मन्मथातुरयायाळ् । १२३
शिल्पमायिरिप्पोरु पुष्पतल्पत्तिन्मेल्चॆ-
न्नल्भुतांगियुं वीणु मोहिच्चाळतुनेरं । १२४
कन्यकागृहत्तिङ्कलुण्टाय वृत्तान्तङ्ङ-
ळण्णोंजनेत्रन् दिव्यचक्षुस्सुकॊण्टु कण्टान् । १२५
पत्मसंभवयाकुं विदर्भपुत्रियाय
रुक्मिणितन्नॆ नियोगिच्चितु भगवानुं । १२६
भिक्षुविन् भिक्षात्र्थमायन्नुतॊट्टर्ज्जुननुं
भक्ष्यभोज्यादिकळिल् वैराग्यमुण्टायवन्नु । १२७
स्वस्थयल्लातॆवन्नु भद्रयां सुभद्रयुं-
मॆत्रथुं कृशांगियाय् विवर्ण्णवदनयाय् । १२८
शोकचिन्तादिकॊण्टु निश्वासमुण्टाकयुं
भोगसाधनङ्ङळिल् वैमुख्यमेऱुकयुं । १२९

होकर द्वारका नगर में रहते हैं और कृष्ण की बहन सुभद्रा के प्रति उनका प्रेम हो गया है।" यह सुनकर लज्जा, प्रेम और अनुराग के कारण सुन्दरी सुभद्रा ने प्रणाम किया। पाँव के अँगूठे से भूमि पर लिखती हुई और रोमांच के साथ कुछ काँपती हुई सुभद्रा की ओर आकर्षित होते अपने मन को दबाकर अर्जुन ने फिर कहा, "जान लो कि मैं ही धनञ्जय हूँ, और तुम मुझसे विवाह करो।" ११७-१२२ तदनन्तर धनञ्जय ने लतागृह में प्रवेश किया। और कन्यका सुभद्रा मन्मथ से पीड़ित हो गयी। वह अद्भुत अङ्गवाली सुभद्रा ढंग से सजी हुई एक पुष्पशय्या पर जाकर लेटी और बेहोश हो गयी। कन्यागृह में जो वृत्तान्त हुआ उसे अर्णोजनेत्र (कमलाक्ष = कृष्ण) ने अपने दिव्यनेत्रों से देखा। कमल से उत्पन्न[1] विदर्भराज की पुत्री रुक्मिणी को भगवान् ने निर्देश दिया। भिक्षु की

1 लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न होने के कारण।

राप्पकल् किटक्कुन्नु बाष्पवुं वार्त्तु वार्त्तु
कोप्पुकळ् कण्टु मकळोटु देवकि चोन्नाळ् । १३०
दुःखिक्कवेण्ट बाले ! कैक्कोळ्क धैर्यमिप्पो-
ळुळ्ळकान्पिल् निनच्चवर्योक्कवे साधिप्पिप्पन् । १३१
रामकृष्णन्मारोटुं ञान् परञ्ञिनि निन्टे
कामत्तॆ वरुत्तुवनिल्ल संशयमेतुं । १३२
इत्तरं परञ्ञवळ् दुःखवुमोट्टु पोक्कि-
स्सत्वरं वसुदेवरोटु देवकि चोन्नाळ् । १३३
वसुदेवनुं पुनराहुकनक्रूरनुं
वसुदेवात्मजनां कृष्णनुमोरुमिच्चु १३४
उग्रसेननुं शिनि गदनुमोरुमिच्चु
रुग्मिणीसत्यभामारोहिणीदेवाकियुं १३५
ओन्निच्चु परोहितन्तन्नेयुं कूट्टिक्कोण्टु
नन्नायि निरूपिच्चु कल्पिच्चु विवाहवुं । १३६
उद्धवर्तानुं बलभद्ररुमरियातॆ
सत्वरं कळिक्केणमतिनुण्टुपायवुं । १३७
अन्तकान्तकन् तनिक्कुत्सवमुण्टाक्केण-
मन्तर्द्वीपत्तिङ्कल् नां नालांनाळ् पोकवेणं । १३८

भिक्षा के रूप में दिये गये भक्ष्य और भोज्य पदार्थों में उस दिन से अर्जुन का वैराग्य हो गया। भद्रा सुभद्रा भी अस्वस्थ हो गयी, अत्यन्त दुबली हो गयी, उसके मुँह का रंग फीका हो गया। शोक और चिन्ता के कारण निःश्वास छोड़ती रही और सभी भोग-साधनों से उसने मुँह मोड़ लिया। १२३-१२९ दिन-रात लेटी हुई आँसू बहाती रही। इन विकारों को देखकर देवकी ने अपनी बेटी से कहा, "बेटी ! दुःख मत करो, धैर्य का सहारा लो। जो तुम्हारी अभिलाषा है, उसे मैं पूरा कर दूँगी। कृष्ण और बलराम से कहकर मैं तुम्हारी इच्छा साध दूँगी (पूर्ण करूँगी), इसमें सन्देह नहीं है।" इस प्रकार कहकर थोड़ा बहुत (उसका दुःख) दूर किया। फिर बिना विलम्ब के देवकी ने वसुदेवजी से कहा, वसुदेव, आहुत, अक्रूर, वसुदेव के पुत्र कृष्ण के साथ, उग्रसेन, निशि और गद एक होकर, रुक्मिणी, सत्यभामा, रोहिणी, देवकी, इन सबने पुरोहित के साथ बैठकर विवाह का दिन निश्चित किया। १३०-१३६ उद्धव और बलभद्र के बिना जाने ही तुरन्त विवाह सम्पन्न होना चाहिए। इसके लिए उपाय

पुत्रमित्रादि कळत्रङ्ङ्ळोटोंरुमिच्चु
मित्रमाय्च्चातुर्व्वर्ण्ण्यत्तोटे पोकयुं वेणं । १३९
पुष्पबाणारितनिक्कल्भुतमहोत्सवं
मुप्पत्तुनालुदिवसत्तिनु वेणंतानुं । १४०
कृष्णरामाक्रूरप्रद्युम्नसत्यकमुख्य-
वृष्णिकळोंक्कत्तक्क विक्रमत्तोटुं कूटि । १४१
तोणिकळ् चङ्ङाटङ्ङ्ळ् वञ्चिकळ् पटवुक-
ळाणुपोकात वळर्क्कप्पलुं पलतरं १४२
आयतमिळिमारुमायुधजालङ्ङ्ळु-
मावोळमुपकरणङ्ङ्ळुं द्विजन्यारुं १४३
पोवानायोंरुमिच्चनेरत्तु सुभद्रयुं
देवकीसुतनोटु मेंल्लवे चोंल्लीटिनाळ् । १४४
द्वादशदिनं चेंन्तु संन्यासि वन्तिट्टिप्पोळ्
भ्रातावे वेण्टतु ञानेंन्तरुळ्चेंय्तीटणं । १४५
प्रीतियुं विनयवुं भक्तियुं विश्वासवुं
भीतियुं कुतुकवुं लज्जयुंपूण्टु निल्क्कुं १४६
सोदरितन्नें नोक्कि मन्दहासवुं चेंय्तु
सादरमरुळ्चेंय्तु माधवन्तिरुवटि । १४७
एन्तोन्तु संन्यासितन् चिन्तितमेंन्नालति-
नन्तरंवरातें नी वशयाय् वर्त्तिक्केणं । १४८

है। शिवजी का उत्सव मनाया जाय और आज से चौथे दिन हम सब द्वीप चले चलें। पुत्र, मित्र और कलत्रों के साथ और चारों वर्णों को अनुकूल बनाकर जाना चाहिए। पुष्पबाण (कामदेव) के शत्रु (शिवजी) का महोत्सव चौंतीस दिन अवश्य चलेगा। कृष्ण, बलराम, अक्रूर, प्रद्युम्न, सत्यक आदि वृष्णिलोग बड़े विक्रम के साथ तोणि, चङ्ङाट, वञ्चि, पटवु, वळर्कप्पल् आदि अनेक प्रकार की नावों पर बैठकर और महिलाओं और विविध हथियारों, अन्य यथेष्ट उपकरणों और ब्राह्मणों को लेकर जब जाने के लिए एकत्रित हुए तब सुभद्रा ने देवकीपुत्र (कृष्ण) से धीरे-धीरे कहा, "संन्यासी को आये बारह दिन बीत गये हैं। भाईजी, कृपया बतलाइए अब मुझे क्या करना है?" १३७-१४५ प्रीति, विनय, भक्ति, विश्वास, भीति, कौतुक और लज्जा अनुभव करती हुई अपनी बहिन को देखकर पूज्य माधव मुस्कराये और सादर बोले, "संन्यासी की जो इच्छा हो,

इनिक्कुं संन्यासिक्कुमिक्कण्ट बन्धुक्कळ्क्कुं
निनक्कुं कल्याणमाय्वरुमेन्नरिक नी। १४९
संन्यासिवरनिवनेन्नरिञ्ञीले नीयुं
चेन्निनि शुश्रूषिच्चीटेन्नयच्चितु कृष्णन्। १५०
चित्रमाल्यानुलेपनांबराभरणङ्ङ-
ळेत्रयुं वळरेस्संभरिच्चु यदुक्कळुं। १५१
विळिच्चु पाञ्चजन्यं भगवान्तुनेरं
कळिच्चुविळिच्चोक्कॆप्पुळच्चु पुरप्पेट्टार्। १५२
ओळिच्चु कोण्टुपोवानुरच्चु किरीटियुं
मुळच्च मनोरथं फलिच्चु सुभद्रय्क्कुं। १५३
विपृथुतन्ने वेरे विळिच्चुकोण्टु मधु-
रिपुतन्नन्तर्गतमखिलमरुळ्चेय्तु। १५४
परिपालिच्चुकोळ्क राज्यं नी वळ्पोले
वरुवन् वैकाते ञानेङ्ङिलङ्ङनेयेन्नान्। १५५
कृष्णनेप्पुरस्करिच्चोक्कवे पुरप्पेट्टार्
वृष्णिकळ् महोत्सवं पालिप्पानतुकालं। १५६
सुभद्रतन्ने मेल्ले विळिच्चु चोन्नान् पार्थन्
सुभद्रं भविक्केणं नमुक्कुमिनिब्बाले ! । १५७
जनकन् भ्राता माता मातुलन् पितृभ्राता
गुरुवेन्नेवं कन्यादानकर्त्तृ कक्रमं। १५८

उसमें कोई बाधा न हो, ऐसा तुम उसके साथ बर्ताव करो ! जान लो कि इससे मेरा, संन्यासी का, इन सभी बन्धुओं का और तुम्हारा (कल्याण) भला[1] ही होगा। क्या तुम नहीं जानती हो कि यह संन्यासिश्रेष्ठ[2] हैं ?" कृष्ण ने कहा, "अब जाओ और उनकी सेवा करो।" यदुओं ने सुन्दर-सुन्दर मालाएँ, अनुलेप, वस्त्र और आभूषण विपुल संख्या में एकत्रित किये। तब भगवान् ने अपना पाञ्चजन्य नामक शङ्ख बजाया। खेलते हुए और विविध नाद करते हुए सब लोग यात्रा के लिए चल पड़े। १४६-१५२ किरीटी (अर्जुन) ने छिपाकर ले जाने के लिए निश्चय किया। और सुभद्रा का उगा हुआ मनोरथ फलने लगा। विपृथु को एकान्त में ले जाकर मधुरिपु (श्रीकृष्ण) ने अपना सारा अन्तर्गत का अभिप्राय उसको

१ मलयाळम में 'कल्याण' शब्द का दूसरा अर्थ है 'विवाह'। २ 'वर' के भी दो अर्थ हैं—श्रेष्ठ और विवाह करनेवाला।

निन्नुटे पित्रादिकळ् पुत्रमित्रादियोटु-
मर्णवमध्ये मेवुमन्तद्द्वीपवु पुक्कार् । १५९
ऎन्नुटे बन्धुक्कळुमिविटॆयटुत्तिल्ल
निन्नोटॊन्नुण्टु परयुन्नु ञानतुमूलं । १६०
गान्धर्व्वविवाहमञ्चामतॊत्रयु मुख्यं
कान्तलोचने ! पुनरेतुमे मटिक्केण्टा । १६१
मन्त्रतन्त्रङ्ङळॆल्लामन्योन्यरागं कॊण्टे
सन्धिक्कू सन्ततियुमॆन्नल्लो चॊल्ली मनु । १६२
पक्षवुं मासं तिथि करणमयनवु-
मृक्षवुं शुभलग्नमॆन्निव वेणं तानुं । १६३
उत्तरायणमिप्पोळ् वैशाखमल्लो मास-
मत्तमां नक्षत्रवुं शुक्लपक्षवुं वन्नु । १६४
तिथियुं तृतीय केळ् वारणक्करणवुं
मधुराधरीकुलमौलिमालिके ! बाले ! १६५
मकरमल्लो लग्नं पॆरिकॆ शुभमतुं
मकरविलोचने ! मकनुमुण्टाय्वरुं । १६६
अस्तमिच्चितु सूर्यनटुत्तु मुहूर्त्तवु-
मुत्तरं परयेणमुत्तमे ! सुभद्रे ! नी । १६७

बतला दिया । "तुम यथाविधि राज्य का परिपालन करो । मैं बिना विलम्ब के लौटूँगा ।" उसने उत्तर दिया—"मैं ऐसा ही करूँगा ।" तदनन्तर सभी वृष्णिगण श्रीकृष्ण के नेतृत्व में महोत्सव को मनाने के लिए निकले । अर्जुन ने सुभद्रा को एकान्त में बुलाकर कहा, "हे बाले ! अब हम दोनों का कल्याण हो ! पिता, भाई, माता, मामा, चाचा, गुरु, कन्या-दान करने का अधिकार रखनेवालों का यही क्रम है । तुम्हारे पिता आदि अपने पुत्र और मित्रों-सहित समुद्र के बीच में स्थित द्वीप को चले गये हैं । मेरा बन्धु-वर्ग भी यहाँ पास में नहीं है । इसलिए मैं तुमसे एक बात बतला रहा हूँ । १५३-१६० विवाहों में गान्धर्व नामक जो पाँचवाँ (विवाह) है, वह अत्युत्तम है ! इसलिए हे कान्तलोचने ! तुम्हें किसी प्रकार की शङ्का न होनी चाहिए । मनु ने कहा भी है कि मन्त्र और तन्त्र का वहीं प्रयोग होता है, जहाँ अनुराग हो और सन्तान-उत्पत्ति तभी होती है । पक्ष, मास, तिथि, करण, अयन, नक्षत्र, लग्न, ये सब तो ठीक होने चाहिए । अब उत्तरायण है, माह वैशाख, हस्त नक्षत्र और शुक्ल पक्ष चल रहे हैं ।

मौनानुवादमोटे निन्नितु सुभद्रयुं
मानसे जनकनेद्ध्यानिच्चु किरीटियुं । १६८
वन्नितु शचीदेवितन्नोटुं विण्णोर्नाथन्
पिन्नेयुमुळ्ळ देवस्त्रीकळुमोक्क वन्नार् । १६९
वसिष्ठनरुन्धतितन्नोटुं कूटि वन्नु
वसिच्चु देवमुनि नारदनुतानुं वन्नु । १७०
भगिनीमनोरथमरिञ्ञिट्टेळुन्नळ्ळि
भगवान् बलभद्ररुरक्कंपुक्कशेषं । १७१
देवकीवसुदेव सात्यकादिकळोटुं
देवदेवेशनेळुन्नळ्ळियोरनन्तरं । १७२
काश्यपमहामुनि होतावायतु पिन्ने-
क्काश्यपीदेवप्रौढन्मार् परिकर्म्मं चेय्तार् । १७३
सदस्यादिकळेल्लां नारदादिकळल्लो
तदत्यल्भुततरं सुभद्रास्वयंवरं । १७४
मंगलस्त्रीकळ् वेण्टुं कर्म्मङ्ङळरुन्धति
मंगलदेवतयुं पौलोमी देवकियुं १७५
देवकळोटुं लोकपालन्मारोटुं कूटि
देवेन्द्रनभिषेकं चेय्तितु तनयनुं । १७६
देवनारिकळ् पाट्टुमाट्टवुं तुटङ्ङिनार्
देवदुन्दुभिकळुं घोषिच्चु नादंपूण्टु । १७७

अब तिथि तृतीया है, करण है वारण। हे बाले ! मधुर अधरवालियों के कुल की शिरोमालिके ! अब मकर लग्न है, जो अत्यन्त शुभ है। हे मकरबिलोचने ! इसमें पुत्रजन्म की संभावना है। अब सूर्य अस्त हो गया है और शुभ मुहूर्त्त निकट हो गया है। हे उत्तम सुभद्रे ! मुझे उत्तर दो।" १६१-१६७ मौन के द्वारा अनुमति देती हुई सुभद्रा खड़ी थी और अर्जुन ने अपने पिता का ध्यान किया। तब देवों के पति शचीदेवी के साथ पधारे और अन्य देवस्त्रियाँ भी आयीं। वसिष्ठजी अरुन्धती के साथ पधारे और देवमुनि नारद भी चले आये। अपनी बहिन की इच्छा को जानकर भगवान् बलभद्र सबके सो जाने के बाद पधारे। देवकी, वसुदेव, सात्यकि आदिकों के साथ देवदेवेश (श्रीकृष्ण) के पधारने के बाद महामुनि काश्यप होता हुए और तदनन्तर ब्राह्मणश्रेष्ठों ने कर्म का अनुष्ठान किया। १६८-१७३ उसमें नारद आदि ही सदस्य थे। सुभद्रा का

मकुटांगदहारकुण्डलकटकादि
मकनु शतमखनणिञ्ञाननवधि । १७८
ईवण्णं स्वयंवरमुण्टायिट्टिल्लयेन्नु
देवकळ्पोलुमोक्क स्तुतिच्चारतुनेरं । १७९
देवदेवेशनाय कृष्णन्टे नियोगत्ताल्
देवेन्द्रादिकळ् चेन्नु नाकलोकवु पुक्कार् । १८०
अजनव्ययन् परमानन्दमूर्त्ति कृष्णन्
विजयनोटु मेल्ले रहसि चोल्लीटिनान् । १८१
इरिक्कामिरुपत्तुरण्टुनाळेक्कु पिन्ने
वरुत्तित्तरुवन् ञानेन्नुटे रथंतन्ने । १८२
सत्वरमन्नुतन्ने गमिच्चीटेन्नाल् निन्नो-
टेत्तुकयिल्ल तट्टुत्तीटुवानोरुत्तरुं । १८३
पिन्ने ञान् बन्धुक्कळुमायट्टत्तोरु दिन-
मिन्द्रप्रस्थत्तिङ्कलेक्काम्मारु वन्नीटुवन् । १८४
कुन्तीनन्दनन्तन्नोटीवण्णमरुळिच्चे-
य्तन्द्द्वीपत्तिन्नेळुन्नळ्ळिनान् भगवानुं । १८५
श्रीरामन्तिरुवटि सीतयोटेन्नपोले
पौरवन् सुभद्रयोटोन्निच्चु मरुविनान् । १८६
विंशतिपरं दिनद्वितयं चेन्नतिनि-
स्संशयमिल्ल पुरप्पेट्टुक वैकीटाते । १८७

स्वयंवर सचमुच अद्भुत था। मंगलस्त्रियों के करने योग्य कर्मों को मंगल-देवता पौलोमी (इन्द्राणी) ने और देवकी ने किया। देवों और लोकपालों के साथ इन्द्र ने अपने पुत्र (अर्जुन) का अभिषेक किया। अप्सराएँ गाने और नाचने लगीं और देववृन्द दुन्दुभि बजाने लगे। शतमख (इन्द्र) ने अपने पुत्र को मुकुट, अंगद, हार, कुण्डल, कटक आदि अनेक आभूषण पहनाये। "ऐसा स्वयंवर कभी भी नहीं हुआ है", इस प्रकार (कहकर) सभी देवों ने उसकी प्रशंसा की। १७४-१७९ देवदेवेश श्रीकृष्ण की आज्ञा से इन्द्र आदि देवों ने स्वर्ग में प्रवेश किया। तदनन्तर अज, अव्यय, परमानन्दमूर्त्ति कृष्ण ने अर्जुन से एकान्त में कहा, "बाईस दिन यहीं रहना। तदनन्तर मैं अपना ही रथ मँगवा दूँगा। तुरन्त उसी दिन चले जाना ताकि कोई भी तुम्हें रोकने के लिए पहुँच ही न सके। फिर मैं बन्धुओं के साथ एक दिन इन्द्रप्रस्थ चला आऊँगा।" कुन्तीनन्दन (अर्जुन)

विप्रभोजनं वेणं मृष्टमायेन्नु पार्थ-
नुल्पलनेत्रयाय सुभद्रयोटु चोन्नान् । १८८
विप्रभोजनं नल्कि सुभ्रुवां सुभद्रयुं
विभ्रमत्तोटे कोप्पिट्टप्पोळे पुऱप्पेट्टाळ् । १८९
उग्रमां व्रतसमाप्तिक्कु पोकेणमति-
न्नुग्रसेनन्टे रथं वेणमेन्नपेक्षिच्चाळ् । १९०
रक्षिकळतुकेट्टु रथवुं योजिप्पिच्चु
तल्क्षणे नल्कीटिनार् कन्यकतानुमप्पोळ् १९१
भर्त्तावुतन्टे मुन्पिल् निर्त्तिनाळ् महारथं
वस्त्रधान्यौघधनदानवुं चेय्तु नन्नाय् । १९२
तेळिच्चीटेणं तेरिन्निनिक्कु सुभद्रे ! आ-
नोळिच्चुकोण्टुपोयीतेन्नतुमरुतल्लो । १९३
विळिच्चु पऱयेणं विपृथु तन्नोटु आन्
कळिच्चु युद्धं चेय्युन्नतु नी कण्टुकोळ्क । १९४
माधवि मन्दस्मितं चेय्तु कुन्पिट्टु निन्नु
माधुर्यतरवाचा वासवियोटु चोन्नाळ् । १९५

से इस प्रकार कहकर भगवान् अन्तर्द्वीप को सिधारे। १८०-१८५ पौरव (अर्जुन) सुभद्रा के साथ सुख से रहे, जैसे कि श्रीरामचन्द्रजी सीता के साथ रहे थे। बाईस दिन बीतने के बाद अर्जुन ने सुभद्रा से कहा, "अब कोई सन्देह नहीं, जाने के लिए तैयार हो जाओ।" फिर पार्थ ने कमलाक्षी सुभद्रा से निवेदन किया, "ब्राह्मणों को अच्छा भोजन खिलाना चाहिए।" सुन्दर भौंहवाली सुभद्रा ने ब्राह्मणों को भोजन दिया। तदनन्तर शोभन वस्त्र धारण करके जाने के लिए तैयार हुई। 'उग्र व्रत की समाप्ति के अवसर पर जाना चाहिए, यह कहकर उग्रसेन के रथ को माँगा। रक्षकों ने रथ को सजाकर उसी समय दे दिया। और कन्यका सुभद्रा ने रथ को अपने भर्त्ता के सामने खड़ा करवाया और वस्त्र, धान्य का ढेर और धन का दान किया। (अर्जुन ने कहा,) "हे सुभद्रे ! मैं ही आज रथ को चलाऊँगा ताकि लोग न कहें कि मैं तुमको छिपाकर ले गया। और विपृथु को बुलाकर कह देना कि मुझे लीला में युद्ध करते हुए देख लेना।" १८६-१९४ माधवी[1] ने मुस्कराकर, हाथ जोड़कर मीठी आवाज़ में वासवि (अर्जुन) से कहा, 'जितना हो सके, युद्ध करना, मैं सह सकती

---

१ सुभद्रा पूर्वजन्म में ऋषि गालव की कन्या माधवी थी।

चेय्तालुमाकुंवण्णं जन्यं ञान् पात्रमत्रे
चैतन्यमेतुमिनिक्किल्लेन्नो निरूपिच्चु । १९६
वाहुकवंशं तन्निलल्लयो पिरन्नु ञान्
बाहुवीर्यं पारमुण्टल्लो मल्भ्राताक्कळ्क्कुं । १९७
बाहुलेयोपमनां भर्त्तावे ! धराधर-
वाहनसूनो ! पाण्डुनन्दन ! कुन्तीसुत ! १९८
भागत्तिल् समरसंयोगत्तिनोत्तवण्णं
वेगत्तिल् कूट्टीटुवन् काट्टिक्कोण्टालुं शौर्यं । १९९
एतुमे कुरुयुन्नीलिनिक्कु पठिच्चतेन्
भ्रातावाकिय कृष्णन् माधवनरिञ्ञालुम् । २००
मेघनिर्घोषंपोले तेरुरुळ्नादं केट्टु
वेगत्तिलटुत्तितु पुरपालन्मारप्पोळ् । २०१
मिटुक्कु काट्टुन्नवनेवनेन्नरियेण-
मटुक्क वैकाते नामोरुमिच्चोक्कत्तक्क- । २०२
त्तटुक्क मुन्पिल् पुक्कु तिरिच्चु नटक्किलो
पिटिच्चु कॆट्टिक्कोळ्क पटय्क्कु भाविक्किलो २०३
कोटुक्क वेट्टुं कुत्तुं कटुक्कोन्निनियेन्नु
नटिच्चु चेन्नु शरं पोळिच्चारतुनेरं । २०४
तटुत्तु शरङ्ङळाल् मुरिच्चुकळञ्ञवन्
पट्टुत्वमोटु शरं पोळिच्चुतुटङ्ङिनान् । २०५

हूँ। क्या आपने सोचा है कि मुझमें चैतन्य बिलकुल नहीं है ? मेरा जन्म तो बाहुक[2] के वंश में हुआ है और मेरे भाई बड़े बाहुवीर्य (बलिष्ठ भुजाओं वाले) हैं। हे बाहुलेय (स्कन्द, कार्तिकेय) के समान मेरे पति ! हे धराधरवाहन (इन्द्र) के पुत्र ! पाण्डुनन्दन ! कुन्तीसुत ! युद्ध के संयोग के अनुसार मैं तुरन्त ही उपस्थित हो जाऊँगी। आप अपना शौर्य दिखलाइए। जो मैंने सीखा, वह अब भी जानती हूँ, (मैं) कम नहीं (हूँ)। और फिर जान लीजिए कि माधव कृष्ण मेरे भाई हैं।" १९५-२०० मेघनिर्घोष के समान रथों के चलने का नाद सुनकर नगर के रक्षक सब तुरन्त ही निकट आये। (और बोले), "देखें कौन अपना कौशल दिखाना चाहता है ? तुरन्त ही सब हम मिलकर उनके पास पहुँचें; सामने जाकर रोको, और वापस लौटाकर पकड़कर बाँधो, अगर लड़ने लगें तो तुरन्त ही

२ एक वृष्णिवंश का वीर, जो बड़ा ही पराक्रमी था।

प्रासादध्वजस्तम्भहर्म्म्यगेहङ्ङळ्तोरु
मासारं तुटङ्ङिनान् बाणङ्ङळ्कोण्टु पार्त्थन् । २०६
ओक्कयॊन्निळक्किनान् तलपुरमतुनेरं
पक्षिनायकन् ताक्ष्यर्नंबुधियॆन्नपोलॆ । २०७
रैवतकाद्रिद्वारं प्रापिच्चु धनञ्जयन्
देवताज्ञया कूटॆ देवनायकसुतन् । २०८
विपृथु पृथासुतन्पिऩ्कॆ चॆन्नु वृथा-
निभृतं विपाठङ्ङळवनु प्रयोगिच्चान् । २०९
अस्त्रङ्ङळ् वरूथङ्ङळीषकळ् युगङ्ङळुं
कृन्तनं चॆय्तान् दृढबन्धनसूत्रङ्ङळुं । २१०
आभरणादिकळुमायुधजालङ्ङळुं
कोपेन कळञ्ञितु सव्यसाचियुमप्पोळ् । २११
विधनुष्कन्मारायि विरथन्मारुमायार्
विधियालाशु वीतकवचन्मारुमायार् । २१२
वाङ्ङिच्चु पटयॆल्लां विपृथु पिन्नॆच्चॊन्नु
पाङ्ङाय्निन्नुरचॆय्तान् माधवनियोगङ्ङळ् । २१३
तेरितु भगवान्टेताकुन्नतरिञ्ञालुं
पारातॆ भवानु मल्कीटुवानरुळ्चॆय्तु । २१४

काटो और घूँसे जमाओ।" —ऐसा कहते हुए सब आगे गये और शरों की वर्षा करने लगे। तब अर्जुन ने अपने शरों से सबको रोका और मारा। (वे) बड़े कौशल के साथ शरवर्षा करने लगे। सभी प्रासादों, ध्वजस्तम्भों, महलों और घरों पर पार्थ शरों की वर्षा करने लगे। २०१-२०६ सारे शहर को उन्होंने हिला दिया, जैसे पक्षिनायक ताक्ष्र्य (गरुड) ने समुद्र को कँपा दिया था। देवताओं की आज्ञा से इन्द्रपुत्र धनञ्जय रैवतक पर्वत के पास पहुँचे। अर्जुन के पीछे-पीछे जाकर विपृथु ने उनके ऊपर छिपकर शरों का प्रयोग किया। (उसने उनके) अस्त्रों, वरूथों (रथों के रक्षक चादरों), शरों, और बाँधने की दृढ़ रस्सियों को भी काट डाला। तब सव्यसाचि (अर्जुन) ने आभूषणों, और हथियारों को गुस्से में फेंक दिया। दोनों धनुष-रहित रथहीन और विधि-वश कवचहीन भी हुए। २०७-२१२ तब विपृथु ने (अपनी) सेना को (अलग) हटा दिया और माधव की आज्ञाओं को यथावसर (पाकर) कहा, "जान लीजिए कि यह रथ भगवान् का है और तुरन्त ही आपको समर्पित करने के लिए कहा

वासवतनयनुं वन्दिच्चु वाङ्ङिक्कॊण्टु
वासुदेवन्टे तेरिलाम्मारु करेरिनान् । २१५
पार्त्थविक्रमं चॆन्नु तोट्वररियिच्चार्
पार्त्तॊरु सभापालन् भेरियुमटिप्पिच्चान् । २१६
वन्पिच्च पॆरुन्परनादत्तॆक्केट्टनेरं
वन्परां वृष्ण्यन्धकभोजन्मारोटिवन्नार् । २१७
माधवनवरेयुं परञ्ञु पठिप्पिच्चान्
माधवियोटुंकूटि वासवि तानुं पोयान् । २१८
रैवतकवुं पुरोद्यानवुं कटन्नथ
दिव्यनां सव्यसाचि कटन्नान् गिरिव्रजं । २१९
उज्जयिनियुमुपवनङ्ङळ् वनङ्ङळुं
निर्ज्जरालयं तोल्क्कुमानर्त्तविषयवुं । २२०
सज्जनबहुलमां दिक्कुकळ् पलवुं क-
ण्टर्ज्जुनन् धेनुमतियाकिय तीर्त्थं कण्टु । २२१
मज्जनंचॆय्तु तत्र पिन्नेयुं नटकॊण्टान्
दुर्ज्जनकुलकालन् दुष्कृतमॊक्क नीक्कि । २२२
निर्ज्जरवरसुतन् विज्ज्वरतेजस्सोटुं
सज्जमां धनुस्सोटुं सत्वरं पोकुन्नेरं २२३
कण्टितङ्ङश्वरोधसरस्सुं धनञ्जयन्
विण्टलर्कुलवैरि पुण्टरीकाक्षप्रियन् २२४
अर्बुदमद्रिकळ् कण्टल्भुतं पूण्टु पार्त्थन्
चॊल्पॊङ्ङु करवतीनदियुं कटन्नुपोय् २२५

है ।" अर्जुन भी उसे सादर स्वीकार करके वासुदेव के रथ पर बैठ गये । जो हार गये उन्होंने दौड़कर अर्जुन के पराक्रम को घोषित किया और एक सभापाल ने भेरी पिटवा दी । बड़ी भेरी का नाद सुनकर वृष्णि, अन्धक और भोजों के नायक दौड़कर आये । माधव ने उनको समझाया । तब अर्जुन सुभद्रा के साथ चले गये । २१३-२१८ रैवतक, नगर और उद्यान पार करके सव्यसाचि (अर्जुन) गिरिव्रज के भी आगे चले गये । उज्जयिनी, उपवन, वन, स्वर्ग को भी हरानेवाला आनर्त्त देश, और सज्जनों से भरी विविध दिशाएँ देखकर धेनुमती नामक तीर्थ में पहुँचे । वहाँ स्नान करके और पापों को दूर करके दुर्जनों के नाशक (अर्जुन) वहाँ से चल दिये । जब देवों के नायक के पुत्र धनञ्जय अपने परिपूर्ण तेज के साथ सज्य

साल्वेयराष्ट्रङ्ङळुं निषधविषयवुं
पाल्यमां देवपथपुरवुं कटन्तुपोय् २२६
चेन्नितु देवारण्यंतङ्कलेन्नरिञ्ञालुं
वन्नु सल्क्कारंचेय्तार् मामुनिजनङ्ङळुं । २२७
कौरवविषयं प्रापिच्चितु धनञ्जयन्
पौरन्मार-रिञ्ञतिल्लद्दिनमोरुवरुं । २२८
पुरत्तिल् क्रोशमात्रमट्टुत्तुण्टोरु गोष्ठं
सुरश्रेष्ठात्मजनुमविटे विश्रमिच्चान् । २२९
बालिकाकुलमौलिमालिके ! सुभद्रे ! गो-
पालिकवेषं पूण्टु नीयिनि राज्यं पुक्कु २३०
वन्दिक्क कुन्तियेयुं पाञ्चालपुत्रियेयुं
सुन्दरगात्रि ! परीक्षार्थमामोदपूर्व्वं । २३१
गोपालनारियुटे वेषं पूण्टवळप्पोळ्
गोपालनारिमारुमायकं पुक्कनेरं । २३२
कुन्तियच्चेन्नुकण्टु वन्दिच्चाळवळेट्टं
सन्तोषं पूण्टु पूण्टु गाढाश्लेषवुं चेय्ताळ् । २३३
कृष्णनिल् भक्तिपूण्ट कृष्णयुमतुपोले
कृष्णसोदरितन्निलेत्रयुं प्रेमं पूण्टाळ् । २३४

धनुष लिये हुए जल्दी-जल्दी जा रहे थे, तब असुरों के शत्रु और कृष्ण के प्रिय (उन अर्जुन) ने अश्वरोध नामक सर देखा। असंख्य पर्वतों को देखकर अर्जुन आश्चर्य-चकित हुए। फिर विख्यात करवती नदी को पार करके, तदनन्तर साल्वेयराष्ट्र और निषध देश और रमणीय देवपथपुर को भी छोड़कर आगे गये, और जान लीजिए कि देवारण्य पहुँचे। वहाँ पर महामुनि लोगों ने आकर उनका सत्कार किया। तदनन्तर अर्जुन कौरवों के देश में पहुँचे, पर उस दिन नागरिकों को इसका पता न चला। २१९-२२८ नगर से एक कोस की दूरी पर एक गोष्ठ था, जहाँ देवों के पति (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) ने विश्राम किया। (अर्जुन ने कहा,) "हे बालिकाकुल की शिरोमालिके ! सुभद्रे ! तुम गोपालिका का वेष धारण करके नगर में प्रवेश करो और कुन्ती तथा पाञ्चालपुत्री (द्रौपदी) की, हे सुन्दरगात्रि ! सादर वंदना करो, देखें क्या होता है ?" तब गोपियों का वेष धारण करके सुभद्रा ने नगर में प्रवेश किया। फिर कुन्ती का दर्शन करके उनकी बहुत वन्दना की और बड़े हर्ष के साथ उनका प्रगाढ़ आलिङ्गन

पात्थिर्वन् धर्म्मपुत्रादियां महाजनं
पार्त्थवृत्तान्तपरमार्त्थङ्ङळरिञ्ञप्पोळ् । २३५
आर्त्तु नालङ्गप्पटयोटुं चेन्नेतिरेट्टु
चीर्त्त कल्याणघोषत्तोटकंकोण्टशेषं । २३६
आर्त्ति तीर्न्नानन्दिच्चारग्रजानुजादिकळ्
तीर्त्थयात्रयुं कळिञ्ञास्थया धनञ्जयन्
पेर्त्तु तन् गुरुभूतन्मारेयुं वणङ्ङिनान् । २३७
माद्रीनन्दनन्मारुं पार्त्थनें वणङ्ङिनार् ।
आर्द्रमानसत्तोटुं पुल्किनान् किरीटियुं । २३८
प्रेममानसयाय पाञ्चालितनिक्कुळ्ळि-
लामयमतुं तीर्त्तु बन्धुवर्ग्गङ्ङळोटुं २३९
नेत्रमोहनतरगात्रियां सुभद्रयें
पेर्त्तुमाश्लेषंचेय्तु सुखिच्चु मरुविनान् । २४०

स्त्रीधनं कोटुक्कुवान् श्रीकृष्णादिकळुटे आगमनं

अक्कालं बलभद्रादियां यदुक्कळुं
पुष्करविलोचननाकिय भगवानुं १

किया । कृष्ण-भक्ता कृष्णा (द्रौपदी) ने भी कृष्ण की वहिन (सुभद्रा) के प्रति अत्यन्त प्रेम दिखाया।२२९-२३४ राजा धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) आदि गुरुजन अर्जुन के परमार्थ (-पूर्ण) वृत्तान्त को जानकर, हर्षनाद करके, चतुरंङ्ग सेना के साथ, उनके स्वागत में निकले और कल्याण-ध्वनि के साथ उनको (घर) ले आये। उनके बड़े और छोटे भाई पूरी तृप्ति होने तक आनन्दित हुए। अर्जुन ने भी तीर्थयात्रा समाप्त होने पर अपने गुरुजनों की वन्दना की। माद्री के पुत्रों ने अर्जुन को प्रणाम किया। अर्जुन ने भी प्रेम के साथ उनको छाती से लगा लिया। स्नेह करनेवाली द्रौपदी के हृदय का खेद शान्त करके, अपने बन्धुवर्ग के साथ, नेत्रों को मोहित करनेवाले शरीर से युक्त सुभद्रा को, फिर आश्लेष करके अर्जुन सुख से रहे। २३५-२४०

स्त्रीधन देने के लिए श्रीकृष्ण आदि का आगमन

उन दिनों बलभद्र आदि यदुवर्ग और कमललोचन भगवान् श्रीकृष्ण पाण्डवों को स्त्रीधन देने के लिए दिव्य श्री और धन के साथ बड़े हर्ष से

स्त्रीधनं कॊटुप्पानाय् पाण्डवन्मारक्कु दिव्य-
श्रीधनादिकळोटुं वन्नितु सन्तोषत्ताल् । २
वेरिट्टुपोय जीवन् पिन्नेयुं वन्नपोलें ।
पारिच्च मोदंपूण्टु वेगत्तोटॆतिरेटान् ३
अन्तिके काणाय्वन्नारन्तरात्मानं नित्यं
बन्धुवां कृष्णन्तन्नॆच्चिन्तिच्चवण्णंतन्ने । ४
सन्तापमकन्नुळ्ळिल् सन्तोषं वायक्कुंवण्णं
सन्ततानन्दं पूण्टु कुन्तीनन्दनन्मारुं । ५
सहस्रं रथङ्ङळुं सहस्रं गजङ्ङळुं
सहस्रं शिबिककळ् सहस्रं दासिकळुं ६
प्रीत्या नल्कियशेषं पिन्नेयुं कोटुत्तितु
जात्याश्वरथिकळुं नूट्रिरुपत्तञ्चल्लो । ७
नियुतं शीलगुणमेरिय पशुक्कळुं
प्रयुतं नरन्माराल् चुमन्निट्टुळ्ळ पॊन्नुं ८
उत्तमतरमाय भूषणं नूरुभारं
मुत्तुमालकळनर्घङ्ङळायव नूरुं ९
पविळमालकळुमायिरमतुपोलॆ
सुवर्णपादपीठङ्ङळुमास्तरणङ्ङळ् १०
दिव्यङ्ङळायिट्टुळ्ळ वस्त्रकंबळङ्ङळुं
सर्व्वविस्मयकरं काञ्चनपात्रङ्ङळुं ११
रामकृष्णन्मार् महाधनरत्नौघङ्ङळुं
सोमवंशोल्भूतनां भूमिपालनु नल्कि । १२

पधारे, मानों अलग किया हुआ प्राण फिर चला आया हो। तुरन्त ही अर्जुन बड़े प्रमोद से उनका स्वागत करने उठे। तब निकट ही में सदैव सबके अन्तरात्मा, बन्धु श्रीकृष्ण दिखायी दिये। कुन्ती के पुत्र दुःख छोड़कर और अपना हर्ष बढ़ाते हुए, निरन्तर आनन्द अनुभव करने लगे। १-५ एक हज़ार रथ, एक हज़ार हाथी, एक हज़ार शय्याएँ और एक हज़ार दासियाँ बड़ी प्रीति के साथ देने के बाद उच्च जाति के एक सौ पच्चीस घोड़े और सारथि दिये गये। बलराम और श्रीकृष्ण ने चन्द्रवंश के राजा को शील और गुणवाली एक लाख गायें, दस लाख आदमियों से ढोया हुआ सुवर्ण, सर्वोत्तम आभूषणों के सौ बोझ, एक सौ बहुमूल्य मोती के हार, एक हज़ार मूँगे के हार और सोने के पादपीठ, अनेक आस्तरण, (बिछौने) दिव्य

चॊल्लॆऴुमजातशत्रुक्षितिपतिवीर-
नॆल्लामे परिग्रहिच्चवरॆस्सम्मानिच्चान् । १३
पानभोजनकळभादिभोगङ्ङळ्कॊण्टु-
मानन्दिच्चेऴुदिनं कल्याणघोषत्तोटुं । १४
कऴिञ्ञोरनन्तरं रामादि यदुक्कळु-
मऴिञ्ञु पुरुञ्ञुटन् पोवानाय्पुरप्पॆट्टार् । १५
परिरंभणं चॆय्तु भगिनितन्नॆ रामन्
भरिच्चुकॊळ् नीयॆन्नु पाञ्चालियोटु चॊल्लि । १६
तॊऴिञ्ञु पितृष्वसाविनॆयुं वणङ्ङिप्पोय्-
विळङ्ङुं द्वारवतिपुक्कितु पटयोटे । १७
उत्पलविलोचनन् चिल्पुमान् नारायणन्
मुप्पत्तुनालुदिनं फल्गुननोटुं कूटि । १८
शक्रप्रस्थत्तिङ्कल् वाणरुळि सुखत्तोटे
शक्रनन्दनन्तानुमतिनालानन्दिच्चान् । १९
अभिमन्युविनेयुं पॆट्टितु सुभद्रयुं
द्रुपदपुत्रितानुमञ्चु मक्कळॆप्पॆट्टाळ् । २०
धर्म्मजात्मजन् प्रतिविन्ध्यनॆन्नरिञ्ञालुं
धर्म्मात्मा भीमात्मजनायतु सुतसोमन् २१
मघवत्पुत्रात्मजन् कृतवर्म्मावुतानु
नकुलतनयनाकुन्नतु शतानीकन् २२

वस्त्र और कम्बल, सबका आश्चर्य बढ़ानेवाले सोने के बर्तन, धन और रत्नों के बड़े ढेर—ये सभी पदार्थ दिये। ६-१२ विख्यात राजा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) ने सादर स्वीकार करके दाताओं का सम्मान किया। पान, भोजन, आठों प्रकार के सुगन्धि द्रव्य और अन्य भोगों से आनन्द लेते हुए सात दिन बड़े धूमधाम से बिताने के बाद बलराम आदि यदुवर्ग कुछ शिथिल हुए और बिदा होने के तैयार हुए। बलराम ने अपनी बहिन को छाती से लगाकर, द्रौपदी से 'सब ठीक से चलाओ' ऐसा कहकर, प्रसन्नता के साथ अपनी फूफीजी की वन्दना करके अपनी सेना के साथ चमकती हुई द्वारवती में प्रवेश किया। १३-१७ कमलाक्ष, चित्पुमान् श्रीकृष्ण तो चौंतीस दिन अर्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ में सुख से विराजे, जिससे अर्जुन अत्यन्त प्रसन्न हुए। सुभद्रा ने अभिमन्यु को जन्म दिया और द्रौपदी ने पाँच पुत्रों को जनाया। जान लीजिए कि युधिष्ठिर का पुत्र था प्रतिविन्ध्य,

सहदेवन्टे पुत्रन् श्रुतसेननुमल्लो ।
एकवत्सरं वयस्सन्तरमुण्टु तम्मि-
लेकिनानाभीष्टदानङ्ङळुं युधिष्ठिरन् । २३

खाण्डवदाहं

सुभद्राविवाहवुं कळिञ्ञु धनञ्जयन्
निबद्धानन्दं सुखिच्चिरुन्नीटिनकालं १
उळ्क्कमलत्तिल्वाळुं माधवनोटुंकूटि
निर्ग्गमिच्चितु वनक्रीडय्क्कु वनन्तोरुं । २
आळिकळोटु चेर्न्नु भार्य्यमारोटुं कूटि-
क्काळिन्दीतीरत्तिङ्कल् कळिपूण्टिरिक्कुन्नाळ् ३
कृष्णवस्त्रवुं धरिच्चोत्रयुं तेजस्सोटुं
कृष्णन्मारोटु परञ्ञीटिनानोरु विप्रन् । ४
ब्राह्मणश्रेष्ठन् बहुभोक्तावेन्नरिकेन्ने-
द्धार्म्मिकन्मारे ! निङ्ङळोन्नुण्टु वेण्टतिप्पोळ् । ५
ओरुनाळुमे तृप्तिवरुमारिल्ल मम
तरुविन् तृप्तिवरुवोळवुमन्नं निङ्ङळ् । ६
अत्र चोरुण्णामेन्नालत्र चोरुण्टाक्कीटा-
मेत्रयुण्टपेक्षयेन्नवरुं चोद्यं चेय्तार् । ७

भीमसेन का पुत्र हुआ धर्मात्मा सुतसोम, अर्जुन के पुत्र का नाम था कृतवर्मा, नकुल का शतानीक नामक पुत्र हुआ और अन्त में सहदेव का पुत्र श्रुतसेन हुआ। उन पाँचों में एक-एक वर्ष का अन्तर है। उनके जन्म के उपलक्ष में युधिष्ठिर ने यथेष्ट दान दिया। १८-२३

खाण्डव का दाह

सुभद्रा के विवाह के बाद अर्जुन जब बड़े आनन्द से रह रहे थे तब एक दिन वे अपने हृदयकमल में विराजमान माधव के साथ बन-वन में क्रीड़ा करने निकले। जब सखियों से युक्त अपनी पत्नियों के साथ यमुना के के तट पर विहारकर रहे थे तब काले कपड़े पहने हुए एक तेजस्वी ब्राह्मण ने श्रीकृष्ण और अर्जुन से इस प्रकार कहा। "जान लीजिये कि मैं एक ब्राह्मणश्रेष्ठ हूँ और खाता बहुत हूँ। हे धार्मिक ! मैं चाहता हूँ कि आप एक काम करें। खाते-खाते मुझे किसी भी दिन तृप्ति नहीं होती है। आप तृप्ति हो जाने तक मुझे भोजन खिलाइये।" १-६ 'जितना भात आप

ऍङ्किल् ञानग्नियल्लो खाण्डवं वनमॊक्क-
त्तिङ्कयिलपेक्षयुण्टॆन्नतुमरियेणं । ८
तक्षकनिरिक्कुन्न काननमाककॊण्टु
रक्षिच्चीटुन्नु शक्रन् सख्यमन्योन्यं तम्मिल् । ९
दहिप्पान् तुटङ्ङुन्पोळ् वर्षिप्पिक्किलुमिन्द्रन्
महत्वमुळ्ळ निङ्ङळतिनॆत्तटुक्केणं । १०
हव्यवाहननाकुमिनिक्किल्लावतेतुं
दिव्यास्त्रज्ञन्मार् निङ्ङळॆन्नु ञान् केळ्प्पु पण्टे । ११
सव्यसाचियुमतु केट्टवनोटु चॊन्नान्
दिव्यास्त्रङ्ङळिल् चिलतरिञ्ञिजट्टिल्लॆन्निल्ल । १२
इल्लल्लो तेरुं विल्लुमावनाळिकयतुं
नल्ल वाजिकळुमिल्लॆङ्ङनॆ तटुप्पू ञान् । १३
ऍन्नॆल्लां धनञ्जयन् चॊन्नतु केट्टनेरं
निन्नॊरु धनञ्जयन् ध्यानिच्चु वरुणनॆ । १४
वन्नितु वरुणनुमवनोटग्नि चॊन्ना-
निन्नॊरु कार्यं चिन्तिच्चोर्त्तितु भवानॆ ञान् । १५
कपिलक्षणद्ध्वजरथवुं मनोवायु-
जवङ्ङळाय सिततुरगवरङ्ङळुं १६
शरङ्ङळॊटुङ्ङातॊरावनाळिकयतुं
परन्मारॊटुङ्ङीटुमायुधजालङ्ङळुं १७

खा सकते हैं उतना तैयार कराएँगे, इसलिए बतलाइये कितना चाहिये' ऐसा पाण्डवों ने कहा। (तब) ब्राह्मण ने उत्तर दिया, 'मैं तो अग्नि हूँ। इसलिए जान लीजिये कि मैं सारा खाण्डव वन खाना चाहता हूँ। तक्षक का निवास-स्थान होने के कारण इन्द्र उसकी रक्षा कर रहा है। उनका आपस में सख्य है। मैं जब जलाना प्रारंभ करूँगा तब हो सकता है कि इन्द्र वर्षा शुरू करे! आप बड़े हैं। आपको उसे रोकना पड़ेगा। मैं केवल हव्यवाहन हूँ, मेरे पास कुछ (कोई शस्त्र) नहीं है और मैंने पहले ही सुन रखा है कि आप दिव्यास्त्र जानते हैं।' यह सुनकर अर्जुन ने उनसे कहा— 'हाँ, दिव्यास्त्रों में एक आध जानता ही हूँ। ७-१२ परंतु न मेरे पास रथ है, न शर, न तूणीर, अच्छे घोड़े भी नहीं। रोकूँ कैसे?' अर्जुन की यह बात सुनकर धनञ्जय (अग्नि) ने वरुण का ध्यान किया। वरुण तत्क्षण ही आ गये। तब अग्नि ने कहा। 'एक काम है। इसलिए आपको

गाण्डीवमाय धनूरत्नवुं कौटुवक्केणं
पाण्डवनाय धनञ्जयनु मटियातें । १८
ऒङ्किलो नल्कामॆन्नु चॊल्लिनान् वरुणनुं
पङ्कजनेत्राज्ञया वाङ्ङिनान् किरीटियुं । १९
रथत्ते प्रदक्षिणं चॆय्तु कुन्पिट्टु कूप्पि-
स्तुतिच्चु गुरुविनॆ स्मरिच्चु वळिपोलॆ । २०
देवतमारॆयोक्क वॆव्वेरे वणङ्ङीट्टु
देवराजात्मजनुं तेरतिल् करेऱिनान् । २१
बद्धगोधाङ्गुलित्रयुक्तनाय् खड्गियाय् स-
न्नद्धनाय् कवचियाय् ब्रह्मनिर्म्मितमाय २२
गाण्डीवं धनुस्सुमाय् शोभिच्चानतुनेरं
पाण्डुनन्दननाय कौन्तेयनिन्द्रपुत्रन् । २३
ऒङ्किलो दहिच्चालुं खाण्डवारण्यमॆन्नान्
पङ्कजनेत्रनोटुं कूटवे किरीटियुं । २४
पिटिच्चु दहननुं दहिच्चुतुटङ्ङिनान्
पिटच्चिल् तुटङ्ङिनार् दुष्टजन्तुक्कळॆल्लां । २५
पाण्डवकरगतगाण्डीवविलासवुं
खाण्डवारण्यगतपावकविलासवुं २६

याद किया। आप पाण्डव अर्जुन को कपिध्वजवाला रथ, मन और वायु के समान वेगवाले सफ़ेद घोड़े, शर समाप्त न होनेवाला तूणीर, शत्रुओं को नाश करनेवाले हथियार, गाण्डीव नाम धनुष, यह सब बिना विलम्ब के दे दीजिए।' १३-१८ वरुण ने देने की प्रतिज्ञा की और श्रीकृष्ण की आज्ञा से अर्जुन ने स्वीकार भी किया। फिर रथ की प्रदक्षिणा करके, नमस्कार करके हाथ जोड़कर अपने गुरु का स्मरण किया और उनकी स्तुति की। देवों को अलग-अलग नमस्कार करने के बाद इन्द्र के पुत्र (अर्जुन) रथ पर चढ़े। उस समय पाण्डुनन्दन, कौन्तेय और इन्द्रपुत्र अर्जुन गोह की खाल से बने हुए अङ्गुलित्र (अंगुलियों के कवच) पहने हुए, खड्ग और कवच धारण करके तैयार हुए तथा ब्रह्मा द्वारा बनाये हुए गाण्डीव धनुष के साथ शोभायमान हुए। तब किरीटी और कमलाक्ष, दोनों ने कहा—'अच्छा, तो खाण्डव वन को जलाइये।' १९-२४ तब अग्नि सारे वन को जलाने लगा और सभी दुष्ट मृग तड़पने लगे। अर्जुन के हाथ में विद्यमान गाण्डीव के विलास को, खाण्डव वन को जलानेवाले अग्नि के विलास को, सांप, पक्षि, हिरण आदि मृगवर्ग के जलकर गिरने के समय के विलाप को, अन्तरिक्ष में

पन्नग पक्षि मृगजालङ्ङळ् दहिच्चोंक्क-
स्सन्नङ्ङळाकुन्नोरमुण्टाय विलापवुं २७
पक्षिकळ् परन्नन्तरीक्षे पोंङ्ङीटुन्नेरं
पक्षङ्ङळ् करिञ्ञु वेंन्तग्नियिल् पतिक्कयुं २८
वृक्षङ्ङळ् वेंन्तु पोंट्टियलरिवीळुन्नतु-
मृक्षङ्ङळ्च्चाटिच्चाटिप्पिटञ्ञु केळुन्नतुं २९
ओंट्टोंळियातें केट्टु रुष्टनाय् शतक्रतु
पुष्टमेघङ्ङळोटुं निष्ठुरनादत्तोटुं ३०
दृष्टिकळ् चुवप्पिच्चु देववाहिनियोटुं
नष्टमाक्कुवनग्नितन्नें ञान् कण्टुकोंळ्विन् । ३१
नन्दननेन्नाकिलुं सोदरनेन्नाकिलुं
निन्दिच्चालोंटुक्कुवनिल्ल संशयमेतुं । ३२
इत्तरं परञ्ञु तन् मत्तेभन्कळुत्तेरि-
स्सत्वरं वज्रमोङ्ङि क्रुद्धनां वृत्राराति ३३
कोंल्पोटु पुरप्पेट्टु सेनानायकनोटुं
कल्पान्तवरिषवुं तुटङ्ङियतुनेरं । ३४
निष्ठुरतरमिटिवेंट्टियुं त्रिभुवनं
ञेंट्टियुं मरं वेंन्तु पोंट्टियुं तेरुतेरें । ३५
दृष्टिकळ् मिन्नल्कोंण्टु नष्टमाय् चमकयुं
वृष्टिकळ् करिकराकारमाय् चोंरिकयुं ३६

उड़ते हुए पक्षियों के पक्ष जल जाने से उनकी अग्नि में गिरने की ध्वनि को, वृक्षों के जलकर और फूटकर गिरने के शब्द को, भालुओं के कूद-कूद कर गिरने और तड़पने की आवाज़ को इन्द्र ने सुना और वे रुष्ट हुए। (और बोले) 'क्रोध से लाल आँखोंवाला मैं, जल भरे मेघों, भयङ्कर नादों, और आकाशगङ्गा के द्वारा, इस अग्नि को नष्ट कर दूँगा, देख लीजिये। २५-३१ चाहे पुत्र हो, चाहे भाई हो, जो मेरी निन्दा करेगा उसे मैं समाप्त कर दूँगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।' इस प्रकार कहकर, अपने मत्त हाथी के कन्धे पर चढ़कर क्रुद्ध वृत्राराति (इन्द्र) ने अपना वज्र उठाया और अपने सेनापति के साथ जल्दी से चल पड़े; और कल्प के अन्त की सी वर्षा प्रारंभ कर दी। निठुर-स्तनित (घनगर्जन) फूटे, त्रिभुवन चकित हुआ, वृक्ष जलकर फूटे, निरन्तर बिजली के कारण आँखें नष्ट हुईं, मूसलाधार वर्षा हुई, वात के तीव्र वेग से सभी दिशाएँ उलट गयीं, और समुद्र

घोरमारुतवेगालोरोरो दिक्कुकळुं
वारिधिपूरङ्ङळुमिळकिमरियुन्नु । ३७
अभ्रसञ्चयं परन्नभ्रवुं मरयुन्नु
विभ्रमंपूण्टु जगद्वासिकळ् मरुकुन्नु । ३८
श्वभ्रकीलङ्ङळेट्टु सर्प्पङ्ङळुरुकुन्नु
श्वभ्रङ्ङळ् तोरुमुष्णमुळ्प्पुक्कु पिटयुन्नु । ३९
गन्धवाहननग्नितनिक्कुं देवेन्द्रनुं
बन्धुवाय्निन्नान् विदग्धन्मारङ्ङनेयुळ्ळु । ४०
पेय्तोरु मळ कण्टनेरत्तु शरकूटं
चेय्तोरु जिष्णुतन्टे चैतन्यमेन्ते चोल्लू । ४१
कैतवमूर्त्ति कृष्णन् तन्नुटे वैभवत्ताल्
कै तळर्न्नितु काळमेघङ्ङळ्क्कोल्लामप्पोळ् । ४२
प्रथनं पृथात्मजनोट्टु चेय्तमरेन्द्रन्
पृतन तोट्टु वृथाफलमाय् चमञ्ञप्पोळ् । ४३
कृष्णसारथियाय जिष्णु दिव्यास्त्रङ्ङळाल्
जिष्णुतन् मदमटक्कीटिनानतुनेरं । ४४
जिष्णुताननुवदिच्चीटिनान् धनञ्जयन्
जिष्णुवेन्नग्निभवादिकळ् तोट्टतुमूलं । ४५
अन्नेरमशरीरिवाणियुमुण्टाय्वन्नु ।
विण्णवर्कोने ! नी पोयटङ्ङिक्कोळ्क नल्लू ४६

की लहरें ऊँची-ऊँची उठकर गिरने लगीं। मेघों के समूह सारे आकाश में फैले और जगत् के सभी निवासी घबड़ाए। ३२-३८ अपने बिलों में ज्वाला लगने से सांप पिघले, क्योंकि एक-एक बिल में आग घुस गयी। गन्धवाहन (वायु) तो अग्नि और इन्द्र दोनों का मित्र बनकर रहा। चतुर लोग तो ऐसा ही करते हैं। घोर वर्षा को देखकर जिस जिष्णु (अर्जुन) ने पानी रोकने के लिए शरों का भवन बनाया उसके चैतन्य का कैसे वर्णन करूँ। कैतवमूर्त्ति (छली) श्रीकृष्ण के वैभव के कारण उस समय काले-काले मेघों के, पानी बरसाते-बरसाते हाथ थक गये। पृथा (कुन्ती) के पुत्र (अर्जुन) के साथ युद्ध करनेवाली इन्द्र की सेना हारी और इन्द्र सफल नहीं हुए। जिनके श्रीकृष्ण सारथि थे, ऐसे अर्जुन ने अपने दिव्यास्त्रों के द्वारा इन्द्र के मद को नष्ट किया। हार जाने के कारण इन्द्र ने अर्जुन की जीत मान ली। ३९-४५ उसी समय एक अशरीरी वाक्

तक्षकन् कुरुक्षेत्रं पुक्कितेन्तरिक नी
सख्यत्तिन्नेतुमोरु विघ्नवुं वन्नीलल्लो । ४७
कृष्णपाण्डवन्मारेज्जयिप्पानरुतावर्क्कुं
कृष्णपादाब्जङ्ङळिल् वन्दिच्चुकोळ्क नल्लू । ४८
नरनारायणन्मारोटभिमानिप्पानें-
न्तोरु कारणमतुमैश्वर्यमदमल्लो । ४९
ऐन्नतु केट्टु वाङ्ङिप्पोन्नितु महेन्द्रनुं
वह्नियुं पिन्ने नन्नाय् दहिच्चुतुटङ्ङिनान् । ५०
वारण व्याघ्र हरि सूकर सर्प्पादिया-
मारण्यजन्तुवर्ग्गमारणकारणमां ५१
दारुणवह्निज्वालामालकळ् कत्तिप्पोंङ्ङि-
श्शोभिच्चु भुवनवुं फल्गुनकृष्णन्मारुं । ५२
क्षोभिच्चु समुद्रद्वीपाद्रिवृन्दवुमेल्लां
तक्षकालयत्तिङ्कलिरुन्न मयासुरन्
तल्क्षणे पुरप्पेट्टु मण्डिनान् भयत्तोटे । ५३
भक्षणमिनिक्किकतिन्नयय्क्कुन्निल्लेन्नाशु-
शुक्षणितानुमाशु चेन्नितु बुभुक्षया । ५४
कृष्णवर्त्मावु शीघ्रं पिन्नाले चेल्लुन्नेरं
कृष्णन् तृच्चक्रवुमायटुत्तानतु पारं ५५

(आकाशवाणी) सुनाई दी—"हे देवों के नाथ ! अच्छा यही होगा कि आप अपनी पराजय मान लें। तक्षक तो कुरुक्षेत्र में प्रवेश कर चुका है और अब सख्य करने में कोई विघ्न नहीं है। कृष्ण और पाण्डवों को कोई भी हरा नहीं सकता है और अच्छा यही होगा कि आप श्रीकृष्ण के पादपद्मों की वन्दना करें। नर और नारायण के साथ अभिमान क्यों करते हैं ? यह तो आपका ऐश्वर्य मद है।" यह सुनकर महेन्द्र पीछे हट गये और अग्नि-देव अच्छी तरह से जलने लगे। हाथी, बाघ, सिंह, सूकर, साँप आदि जंगल के प्राणियों के जलाने के कारण भीषण वह्नि की ज्वालाएँ उठीं और कृष्ण एवं अर्जुन के साथ सारा भुवन शोभायमान हुआ। ४६-५२ समुद्र, द्वीप और पर्वतवृन्द क्षुब्ध हुए। मयासुर जो तक्षकालय में था, उसी क्षण वहाँ से निकला और बहुत डर गया। यह सोचकर कि यह मेरा भोजन है अग्नि खाने की इच्छा से उसके पास गया। जब कृष्णवर्त्मा (अग्नि) उसके पीछे-पीछे जा रहा था तब कृष्ण अपना चक्र लिये उसके निकट पहुँचे।

रक्षणत्तिन्नारेयुं काणाञ्ञु मयासुर-
नक्षीणभयं पूण्टु शरणं पुक्कीटिनान् । ५६
हाहा ! पाण्डव ! पार्त्थ ! हाहा ! फल्गुन ! जिष्णो !
पाहि मां भवानहो ! पाहि मां भवानहो ! ५७
पार्त्थनुमार्त्तनादं केट्टपोतुरचॆय्ता-
नास्थया पेटिक्केण्ट नीयॆन्नतुटनुटन् । ५८
नमुचिभ्रातावाकुं मयनां दनुजेन्द्र-
न्नमरप्रौढात्मजनभयं नल्कीटिनान् । ५९
वह्नियुं दहिप्पतिन्निच्छिच्चीलतुनेरं
पिन्नॆयुमञ्चुजनमुण्टल्लो दहियातॆ । ६०
अश्वसेननुं पिन्नॆ नालु शार्ङ्गकङ्ङळुं
निश्शेषं दहिच्चितु खाण्डवं मट्ल्लामे । ६१
मुनिनायकनाय वैशन्पायननोटु
जनमेजयनृपन्नेरं चोद्यं चॆय्तान् । ६२
शार्ङ्गपक्षिकळ् नालुं काननं दहिच्चप्पोळ्
वाङ्ङिप्पोयतिनॆन्तु कारणं दहियातॆ ? ६३
ऎन्नतु केट्टु मुनि वैशन्पायनन् चॊन्नान्
मन्नव ! शार्ङ्गङ्ङळ् वेकाञ्ञतिन्मूलं चॊल्लां । ६४

अपनी रक्षा करनेवाले किसी को न देखकर मयासुर बहुत भयभीत होकर अर्जुन की शरण में गया । 'हा हा ! हे पाण्डव ! हे पार्त्थ ! हा हा ! हे फल्गुन ! हे जिष्णु ! आप मुझे बचाइये ! आप मुझे बचाइये !' यह आर्त्त-नाद (पीडित की पुकार) सुनकर अर्जुन सहानुभूति से तत्क्षण ही बोले— 'डरो मत,' 'डरो मत' । ५३-५८ नमुचि के भाई दनुजेन्द्र मय को देवों के नाथ के पुत्र ने अभय प्रदान किया । अग्नि को भी जलाने की इच्छा न हुई । पाँच और व्यक्ति इस प्रकार ज़लने से बचे । अश्वसेन और चार शाङ्र्गक—इनको छोड़कर सारा खाण्डव वन जल गया । उस समय राजा जनमेजय ने मुनियों के नायक वैशम्पायन से पूछा—'जब सारा वन जल गया तो क्या कारण है कि ये चार शाङ्र्ग पक्षी बच गये ?' 'हे भूपाल ! शाङ्र्गकों के न जलने का अब मैं कारण बतला दूंगा ।' ५९-६४

मन्दपालोपाख्यानं

धर्म्मज्ञन्मारिल् मुख्यनाकिय तपोनिधि
निर्म्मलन् मन्दपालनाकिय महामुनि । १
ब्रह्मचर्यवुं दीक्षिच्चिरुन्नु चिरकालं
ब्रह्मज्ञानवुं पूण्टु पितृलोकवुं पुक्कान् । २
अक्कालं सुखलेशं सिद्धियाञ्ञतु कण्टु
दुःखिच्चु मन्दपालन् देवकळोटु चोन्नान् । ३
अन्तरं तपस्सिनु ञानेतुं वरुत्तीति-
ल्लॆन्तॊरु कर्म्ममिनिक्किङ्ङने वन्नतोर्त्ताल् । ४
देवकळ् विचारिच्चु चॊल्लिनारतु केट्टु
तावकमाय दुःखकारणं केट्टालुं नी ५
मून्नृणत्तोटुकूटि मानवन् जनिक्कुन्नु
मून्नुं वीट्टीटुन्नवनूर्द्ध्वलोकङ्ङळुण्टां । ६
ब्रह्मचर्य्यत्तेक्कॊण्टुं नित्ययज्ञत्तेक्कॊण्टुं
निर्म्मलप्रजकॊण्टुं वीट्टेणमवमून्नुं । ७
ॲन्नतिल् पुत्रोल्पत्ति चॆय्तील भवान् मुन्न-
मॆन्नतु विरोधमाकुन्नतु गतिक्किप्पोळ् । ८
ॲङ्किल् ञान् भूमितन्निल् चॆन्निनि प्रजकळॆ-
स्सङ्कटं तीर्त्तीटुवानुल्पादिक्कुन्नेन् द्रुतं । ९

मन्दपाल का उपाख्यान

धर्मज्ञों में प्रमुख और तपोनिधि निर्मल महामुनि मन्दपाल चिरकाल तक ब्रह्मचर्य का पालन करते रहे और अन्त में ब्रह्मज्ञान प्राप्त करके पितृलोक सिधारे। उस समय भी सुखलेश न प्राप्त होने के कारण दुःखित मन्दपाल ने देवों से कहा—"मेरे तप में कोई भी अन्तर नहीं हुआ, फिर मैंने क्या पाप किया था कि अब यह हाल हो गया ?" यह सुनकर देवों ने सोचकर कहा—"अपने दुःख का कारण सुन लो। तीन ऋणों को लेकर मनुष्य जन्म लेता है, जो उन तीनों को चुका देता है वही ऊँची गति प्राप्त करता है। १-६ ब्रह्मचर्य का पालन, सदैव यज्ञों का अनुष्ठान और निर्मल प्रजा का जनन, ये ही उनको चुकाने के उपाय हैं। इनमें से आपने पुत्रोत्पत्ति नहीं की, यही आपकी अच्छी गति में बाधा बन गयी।" (मन्दपाल ने सोचा—)"अच्छा तो फिर मैं जल्दी पृथिवी जाऊँगा और अपना दुःख दूर करने के लिए सन्तान पैदा करूँगा।" "अल्प समय में अधिक सन्तान

कुरङ्ङकालंकोण्टु वळरे प्रजकळे-
प्पेरुन्न जन्तुक्कळेतेन्नतु निनच्चवन् १०
पक्षिवर्गत्तिल् शार्ङ्गमाय् जनिच्चात्मज्ञान-
मुळ्क्कान्पिलुरप्पिच्चु पितृक्कळ्कटं तीर्प्पान् । ११
जरितयेन्नु पेरां पत्नितन्नोटु कूटि-
प्पेरिकेस्सुखंपूण्टु खाण्डवंतन्निल् वाणान् । १२
नालु पुत्रन्मारेयुं जनिप्पिच्चतुकालं
बालन्मारेयुमवळ्तन्नेयुमुपेक्षिच्चान् । १३
लपितयोटुं कूटि वसिच्चु मन्दपालन्
विपिने बालन्मारेब्भरिच्चु जरितयुं । १४
पावकनतुकालं खाण्डवं दहिप्पानाय्
पोवतु कण्टु मन्दपालनुमरुळ्चेय्तु । १५
देवकळ्क्केल्लां मुखमाकुन्न भगवाने !
पावकदेव ! भवानोन्नु चेय्येणमिप्पोळ् । १६
ऍन्नुटे सुतन्मारेद्दहियातिरिक्केणं
निन्नुटे कारुण्यत्तालेन्नतु केट्टनेरं । १७
अङ्ङनेतन्नेयेन्नु पावकनुरचेय्तु
मङ्ङात कान्तियोटे नटन्नु दहननुं । १८
अरण्यं तन्निल् पिटिपेट्टितु वह्निदेवन्
करञ्ञु तुटङ्ङिनाळ् जरिततानुमप्पोळ् । १९

पैदा करनेवाले प्राणी कौन हैं" ऐसा सोचकर पक्षियों में शार्ङ्ग जाति में पैदा होकर पितरों का ऋण चुकाने के लिए उसने आत्मज्ञान प्राप्त किया। जरिता नामक अपनी पत्नि के साथ खाण्डववन में बड़े सुख से रहने लगा। चार पुत्रों के जन्म लेने के बाद उसने बच्चों को और अपनी स्त्री को त्याग दिया। ७-१३ तदनन्तर मन्दपाल लपिता के साथ रहने लगा और बेचारी जरिता ने बच्चों का पालन-पोषण किया। तब एक दिन मन्दपाल ने अग्नि को खाण्डव जलाने के लिए जाते देखकर कहा—"हे भगवन् ! पावक-देव ! आप देवों का मुख हो ! आप कृपया एक काम करें ! । आप अपने कारुण्य (दया) से मेरे पुत्रों को न जला डालें।" यह सुनकर अग्नि ने कहा—"अच्छा ! ऐसा ही होगा" और अपनी पूरी कान्ति के साथ चले गये। जब वन में आग लग गयी तब जरिता रोने लगी। इनके दयाहीन पिता ने इनको छोड़ दिया और इनके साथ रोना ही मेरे भाग्य में

निर्घृणनाय पिताविवट्टेयुपेक्षिच्चान्
दु:खिक्कुमाराायि ञान् पैतङ्ङळिवरोटुं । २०
पऱक्कप्पोकातेयुं वन्नितु बालन्मावर्कुं
निरक्कप्पिटिपॆट्टु वनत्तिलग्नितानुं । २१
ञानिनियिवट्टेयॆन्तोर्त्तेन् तन्पुराने !
काननत्तिङ्कलग्नि पिटिच्चु नालुपाटुं । २२
इङ्ङने करयुन्पोळ् पैतङ्ङळुरचॆय्ता-
रॆङ्ङानुं पोय्क्कोळ्कम्मे नीकूटे मरिक्कॆण्टा । २३
ञङ्ङळ् चाकिलो पिन्नेप्पेट्टु सन्ततियुण्टा-
मॆङ्ङनेयुण्टाकुन्नु नीकूटे मरिक्किलो ? २४
ञङ्ङळे स्नेहिच्चु नी सन्तानं मुटिक्कॆण्टा
मंगलं वन्नुकूटुं पिन्नेयुमॆन्नेवरू । २५
अल्लाय्किल् तातन् चॆय्ततॊक्क निष्फलमल्लो
नल्ल लोकङ्ङळ् किट्टा तातनॆन्नतुं वरुं । २६
ऒन्नतु केट्टु पऱञ्ञीटिनाळ् जरितयु-
मॆन्नुटे पैतङ्ङळे ! निङ्ङळुमॊन्नुवेणं २७
इक्कण्ट मरत्तिन्कीऴुण्टेलिमटयतिल्
पुक्कुकोळ्ळुविन् निङ्ङळॆन्नाल् ञानॊन्नुचॆय्वन् २८
पूऴिक्कॊण्टतिन्मुखं मूटिवय्क्कयुं चॆय्या-
मूऴितन् ताऴे तीयुं तट्टुकयिल्लयल्लो । २९

है । १४-२० ये मेरे बच्चे उड़कर भी नहीं चले जा सकते हैं क्योंकि आग तो सारे वन में व्याप्त है । हे प्रभो ! अब मैं इनके लिए क्या करूँ ? अग्नि तो वन में चारों तरफ़ फैल गया । जब वह इस प्रकार रो रही थी तब बच्चों ने कहा--"माँ ! तुम कहीं चली जाओ । नहीं तो तुम भी मर जाओगी । अगर हम लोग मरेंगे तो तुम फिर बच्चों को जन्म देकर सन्तान उत्पन्न कर सकोगी । अगर तुम ही मर जाओगी तो फिर सन्तान कैसे होगा ? हम लोगों से प्रेम करके सन्तान का विच्छेद न करो । (अगर तुम भाग जाओगी) तो बाद में फिर मंगल हो जायगा । नहीं तो जो कुछ भी पिता ने किया था वह सब व्यर्थ हो जायगा और वह फिर कोई अच्छा लोक प्राप्त नहीं करेंगे ।" २१-२६ यह सुनकर जरिता ने कहा--'मेरे बच्चो ! तुम्हें एक काम करना है । इस पेड़ के नीचे एक मूसे का बिल है, तुम सब उसके अन्दर चले जाओ । तब मैं एक काम करूँगी ।

कीऴेपोय्क्किटन्नुकोण्टीट्टुविन् तीयाऱियाल्-
पूऴियुं नीक्किक्कोण्टु पोन्नुकोळ्ळुवनल्लो । ३०
पैतङ्ङळतुकेट्टु मातावोट्टुरच्चेय्तार्
पैदाहत्तोटु मेवुमेलियुण्टतिलम्मे ! ३१
पऱप्पान् चिऱकिल्ल नटप्पानिल्ल कालु-
मिऱच्चि कण्टालेलि पिटिच्चु तिन्नुमल्लो । ३२
जन्तुक्कळ् भक्षिच्चिट्टु मरिक्कुन्नतिनेक्काळ्
वेन्तु चाकुन्नतत्रे गतियेन्नरिञ्ञालुं । ३३
भर्त्तावुतन्ने प्रापिच्चुत्तमन्मारायुळ्ळ
पुत्रन्मारेयुं लभिच्चीटुक मातावे ! नी । ३४
अन्नतु केट्टनेरं वन्नोरु शोकत्तोटे
तन्नुटे पैतङ्ङळे नोक्कियुं करञ्ञिट्टुं ३५
पिन्नेत्तान् पऱक्कयुं मरिञ्ञु नोक्कुकयु-
मेन्नुटे कर्म्ममेन्नु कलिपच्चु पोयाळवळ् । ३६
अग्नियुं कत्तिक्कत्तिच्चेन्नटुत्तितु ताप-
मग्नन्माराय पक्षिपोतङ्ङळ् चोन्नारप्पोळ् । ३७
अग्रजन् जरितारि शारिसृक्पनुं पिन्ने-
च्चोल्क्कोळ्ळुं स्तंबमित्रन् द्रोणनुमोरुमिच्चु ३८
नालु दिक्किलुं कूटिक्कत्तिप्पोङ्ङीटुमग्नि-
ज्वालामालकळ् कण्टिट्टाकुलप्पेट्टनेरं । ३९

मैं उसका मुँह मिट्टी से ढक दूँगी ताकि मिट्टी के नीचे आग न लग जाय। तुम सब नीचे जाकर लेट जाओ। जब आग बुझ जायगी तब मिट्टी हटाकर निकल आना।" यह सुनकर बच्चों ने कहा—"मगर माँ! उसके अन्दर एक भूखा प्यासा मूसा बैठा है। हम लोगों के तो न उड़ने के लिए पंख हैं, न चलने के लिए पैर। मांस देखकर मूसा तो अवश्य पकड़कर खायेगा। जानवरों द्वारा खाये जाकर मरने से जलकर मरना कहीं अच्छा है। २७-३३ अतएव माताजी! अपने पति से मिलकर फिर उत्तम पुत्र प्राप्त करो। यह सुनकर उसको बड़ा शोक हुआ। अपने बच्चों को देख-देख रोती हुई वह उड़कर गयी और पीछे देखकर "यह सब मेरे ही कर्म का फल है" ऐसा कहकर चली गयी। अग्नि तो जलते-जलते बच्चों के निकट पहुँच गया। तब दुःख में मग्न चिड़िया के बच्चों ने कहा। उनमें सबसे ज्येष्ठ था जरितारि, उसके बाद शारिसृक्प, फिर स्तंबमित्र और चौथा था द्रोण।

हिरण्यरेतस्सिनें स्तुतिच्चुतुटङ्ङनान्
जरितारियुं तोंळुतधिकं भक्तियोटे । ४०

शार्ङ्गपक्षिकळुटे जातवेदःस्तुति

लोकङ्ङळ्क्कॆल्लां प्राणनाकिय वायुतनि-
क्केकात्मावाय चैतन्यात्मकन् भवानल्लो । १
जीवनमायोरमृतत्तिनु योनियाय
पावकनाकुन्नतु निन्तिरुवटियल्लो । २
देवकळुटे मुखमायतु भवानल्लो
स्थावरजंगमङ्ङळ्ळिल् वाणीटुन्नतुं । ३
केवलभूतनाय निन्तिरुवटियल्लो
तावकमहिमानमार्क्करियावू नाथा ! ४
पक्षिपोतङ्ङळाय ञङ्ङळॆद्दहियातॆ
रक्षिक्चीटुकवेणं कारुण्यमूर्त्ते ! पोट्री ! ५
ईवण्णं जरितारि देवनें स्तुतिचॆय्ता-
नावोळं भक्तिपूण्टु तत्सहोदरनाकुं- ६
शारिसृक्पनुं वह्निदेवनें स्तुतिचॆय्तान्
पारिच्च भयंतीत्तु पालिच्चु कोंळ्वानाये ७

जब उन्होंने चारों ओर जलनेवाली आग की ज्वालाएँ देखी तब वे बहुत व्याकुल हुए। तब जरितारि बड़ी भक्ति के साथ वन्दना करके हिरण्यरेता (अग्नि) की स्तुति करने लगा। ३४-४०

शार्ङ्गपक्षियों की अग्निस्तुति

"सभी लोकों का प्राण जो वायु है उसकी आत्मा चैतन्यस्वरूप आप हैं। अमृत जो जीवन है उसकी योनि पावक भी आप ही हैं। देवों का मुख आप हैं और सभी स्थावर और जङ्गमों के भीतर आप ही हैं। केवल भूत भी आप महानुभाव हैं। हे नाथ! आपकी महिमा का कौन वर्णन कर सकता है? हे कारुण्यमूर्त्ते! हे पालक! हम पक्षी के बच्चों की रक्षा करो ताकि हम जल न जायँ।" १-५ जरितारि ने इस प्रकार अग्निदेव की स्तुति की। उसके भाई शारिस्पृक्प ने भी बड़ी भक्ति के साथ वह्निदेव की इस प्रकार स्तुति की। "बड़े-बड़े भयों को नष्ट कराकर रक्षा करनेवाले आप हव्यवाहन[1] ही हैं। देवों और पितरों को दिये जानेवाले बलि, गव्य आदि नानाप्रकार के

१ हव्य को देवों के पास ले जानेवाला अग्नि।

हव्यवाहननाय निन्तिरुवटियल्लो
हव्यमायीटुन्नतुं कव्यमायीटुन्नतुं ८
गव्यादि बहुविध द्रव्यङ्ङळाकुन्नतुं
दिव्यन्मारुळ्ळिलुळ्ळोरन्धकारङ्ङळ् नीक्कि ९
निर्व्याजमात्मज्ञानात्मकनाय् शोभिच्चीटु-
मव्ययानन्दनायोरव्यक्तनाकुन्नतुं १०
सुव्यक्तं सकललोकव्याप्तनाकुन्नतुं
भव्याकारत्तोंप्पूण्ट निन्तिरुवटियल्लो । ११
आधारं मटु ञङ्ङळ्क्कारुमिल्लय्यो भुव-
नाधारमूर्त्ते ! परिपालय कारुण्याब्धे ! १२
स्तंबमित्रनुं पुनरन्नेरं स्तुतिचेय्ता-
नम्मयायीटुन्नतुं तातनायीटुन्नतुं १३
प्रकृतियाकुन्नतुं पुरुषनाकुन्नतुं
सकलात्मावायीटुं निन्तिरुवटियल्लो । १४
वेदमायीटुन्नतुं वेदार्त्थमाकुन्नतुं
आदितेयास्याकृते ! निन्तिरुवटियल्लो । १५
पालय कृपालय ! पावक ! परमात्मन् !
बालकानस्माननालंबनान् नमोस्तु ते । १६
द्रोणनुं वैश्वानरदेवनें स्तुतिचेय्तान्
प्राणसंकटत्तोटुमत्यर्त्थं भक्तियोटे । १७

द्रव्य हो जानेवाले, देवों के भीतर के अन्धकार को दूर करके व्याजरहित आत्मज्ञानात्मक होकर चमकनेवाले, अव्यय आनन्द होकर अव्यक्त बन जानेवाले, स्पष्ट रूप से समस्त लोकों को व्याप्त करनेवाले और एक भव्य आकार धारण करके शोभायमान आप ही महानुभाव हैं। हम लोगों के लिए और कोई आधार नहीं है। हे भुवन की आधारमूर्त्ति ! हे दयासागर ! रक्षा करो।" ६-१२ उस समय स्तंबमित्र ने भी स्तुति की—"माता बन जानेवाले, पिता बन जानेवाले, प्रकृति हो जानेवाले, पुरुष हो जानेवाले, और सबकी आत्मा बन जानेवाले आप ही हैं। वेद बन जानेवाले, वेदार्थ हो जानेवाले, तथा देवों का मुखस्वरूप रखनेवाले महानुभाव आप ही हैं। हे दयानिधे ! हे पावक ! हे परमात्मन् ! हम अनाथ बालकों की रक्षा करो ! आपको प्रणाम हो !" द्रोण ने भी प्राणसंकट में आकर बड़ी भक्ति के साथ वैश्वानर (अग्नि) देव की स्तुति की। "कर्मों के आधारभूत, ज्योतिरूप केश

कर्म्मणामाधारभूताय ! शोचिष्केशाय
कर्म्मसाक्षिणे ! करुणाय ! ते नमोनमः १८
कर्त्रे ! लोकैकभर्त्रे ! संहर्त्रे ! नमोनमः
कस्तव वेत्ति परमार्त्थमाद्याय ! नमः । १९
मर्त्त्यन्मार् पितृदेवादिकळॆस्सङ्कल्पिच्चु
नित्यवुं नल्कीटुमाहुतियॆप्परिग्रहि २०
च्चत्तल् तीर्त्तल्लावर्क्कु तृप्तियॆ वरुत्तीटुं
नित्याय ! जगत्प्रदीपाय ! तेजसे ! नमः । २१
सत्यसाक्षिणे ! पवित्राय ! भास्वते ! नमः
तत्त्वमूर्त्तये ! परमात्मने ! नमोनमः २२
कुन्पिट्टु जरितारि शारिसृक्‍पनुं पिन्नॆ-
स्तंबमित्रनुं द्रोणन्तानुमायॊरुमिच्चु २३
पक्षिकळाय मन्दपालपुत्रन्माराशु-
शुक्षिणितन्नॆ स्तुतिच्चोरुनेरत्तु देवन् २४
सन्तुष्टनायेनहं निङ्ङळॆक्कुरिच्चॊरु
सन्तापमिनि निङ्ङळ्क्कुण्टाकयिल्ल नूनं । २५
सन्तोषं पूण्टु जननीजनकन्मारोटुं
सन्ततं वसिच्चालुमिविटॆत्तन्नॆ निङ्ङळ् । २६
अन्तरात्मनि परमानन्दत्तोटुमॆन्नॆ-
च्चिन्तिच्चु वसिच्चुकॊळ्कॆप्पॊळुमॆन्नाल् निङ्ङळ् २७

धारण करनेवाले, कर्मसाक्षी और दयालु आपको नमोनमः । लोकों के कर्ता, लोकों के एकमात्र भर्ता, और लोकों के संहर्ता आपको नमोनमः । आपका रहस्य कौन जानता है ? आदिभूत आपको नमः । १३-१९ पितरों और देवों का संकल्प करके जो आहुति मनुष्य प्रतिदिन देते हैं उनको आप स्वीकार करते हैं और सबका दुःख दूर करके उनकी तृप्ति करते हैं । ऐसे नित्य और जगत् के प्रदीपस्वरूप तेज को नमोनमः । सच्चे साक्षी को, पवित्र, शोभायमान, तत्त्वमूर्त्ति परमातमा आपको नमः ।" जब (मन्दपाल के चारों पुत्रों) जरितारि, शारिसृक्‍प तथा स्तंबमित्र और द्रोण ने एक होकर आशुशुक्षणि (अग्नि) की स्तुति की तब अग्निदेव ने कहा--"मैं आप लोगों से प्रसन्न हूँ । अब आपको कोई दुःख नहीं होगा । २०-२५ आप प्रसन्न होकर अपने माता-पिता के साथ यहीं हमेशा के लिए निवास कीजिये । अपने भीतर परम आनन्द के साथ सदा मेरा ध्यान करते हुए रहो । तुम्हें जल जाने का डर

वेन्तुपोमेन्नोर्त्तोरु भीतियुमुण्टाकेण्ट
बन्धु ञानुण्टु निङ्ङळ्क्कतिनु किल्लिल्लेतुं । २८
एतुमे दुःखिक्केण्ट तापमुण्टाकयिल्ल
जातवेदस्सुमित्थं नल्किनानुग्रहं । २९
काननं दहिक्कुन्पोळ् मन्दपालनुमेरे
मानसतापं पूण्टान् पुत्ररे निनय्क्कयाल् । ३०
जरिततानुमेन्टे चेरिय पैतङ्ङळु-
मेरिञ्ञुपोयितेन्नु दुःखिच्चु चोन्ननेरं ३१
परञ्ञु लपितयाय्मेवुन्न सपत्नियुं
परञ्ञीलयो दहिक्कुन्नतिल्लेन्नु वह्नि । ३२
मक्कळुं दिव्यन्मारेन्नल्लयो चोल्ली भवान्
दुःखिप्पानवकाशमेन्तिनियितुमूलं ? ३३
सापत्न्यं तोन्निच्चोरु लपितन्निलप्पोळ्
तापसश्रेष्ठनुळ्ळिल् वैराग्यमुण्टायवन्नु । ३४
जरिततानुं वन्नु पैतङ्ङळतम्मेक्कण्टु
पेरिकेस्सन्तोषिच्चु मन्दपालनुं वन्नु । ३५
पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कटं तीर्त्तवनतुकालं
मुतिर्न्नान् पिन्नेश्शुभलोकत्ते गमिप्पानाय् । ३६
पतुक्केप्पतुक्केप्पोयटङ्ङि दहननु-
मेतित्तं महेन्द्रनुं पटयुं मेघङ्ङळुं ३७

कभी पैदा नहीं होगा । मैं आपका बन्धु हूँ, इसमें कोई सन्देह नहीं है । अब चिन्ता बिलकुल न करना, कोई दुःख न होगा । जातवेदा (अग्नि) ने इस प्रकार उन पर अनुग्रह दिया । जब बन जल रहा था तब अपने पुत्रों का स्मरण करते हुए मन्दपाल को भी बड़ा दुःख हुआ । जब उसने दुःख के साथ कहा--"मेरी जरिता और मेरे छोटे-छोटे बच्चे जल गये होंगे" तब लपिता, जो (जरिता की) सौत थी, बोली--"अग्नि ने तो कहा है कि उनको न जलावेंगे" । २८-३२ आपने भी कहा है कि आपके बच्चे सब देव हैं । फिर दुःखित होने की क्या आवश्यकता है ? ।" उस समय सपत्नी का भाव दिखलानेवाली लपिता के प्रति तापसश्रेष्ठ (मन्दपाल) की विरक्ति हुई । उस समय जरिता भी आयी । मन्दपाल तो बच्चों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए । इस प्रकार पितरों का ऋण चुकाकर वह शुभलोक प्राप्त करने के लिए तैयार हो गये। अग्नि भी धीरे-धीरे शान्त हुआ ।

तळर्न्नु चमञ्ञतु पार्त्थनुमश्वङ्ङळुं
तळर्न्नीलेतुमतुकण्टु देवेन्द्रनप्पोळ् ३८
भगवत्पादं कूप्पि स्तुतिच्चान् पलतरं
भगवल्प्रसादत्तें लभिप्पान् प्रीतियोटे । ३९

देवेन्द्रन्टे भगवल्स्तुति

भगवन् ! प्रसीद मे भगवन् ! प्रसीद मे
भगवन् ! जय जय भगवन् ! जय जय १
वैकुण्ठ ! जय जय गोविन्द जय जय
श्रीकण्ठसेव्य ! जय श्रीपते ! जय जय । २
श्रीवत्सचिह्न ! जय श्रीरामकृष्णा ! जय
श्रीवासुदेव ! जय मुकुन्द ! जय जय । ३
निन्मायामोहग्रस्तं निखिलं त्रिभुवनं
दुर्म्मदमतुमूलमेनिक्कुमुण्टायवन्नू । ४
निन्मायतन्नेज्जयिच्चीटुवानरुतल्लो
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ तापसवरन्मार्क्कुं ५
ब्रह्मादिस्तंबान्तमायुळ्ळोरु जन्तुक्कळुं
मन्मथवैरितानुमाम्नायङ्ङळुमेल्लां ६

महेन्द्र, उनकी सेना और मेघ तो क्षीण हुए, परंतु अर्जुन और उनके घोड़े बिलकुल नहीं थके। यह देखकर उस समय इन्द्र भगवान् के चरणों पर गिर पड़े और भगवान् का प्रसाद प्राप्त करने के लिए उनकी स्तुति करने लगे। ३३-३९

देवेन्द्र की भगवत्स्तुति

हे भगवन् ! मुझ पर प्रसाद (कृपा) करो, हे भगवन् ! मुझ पर प्रसाद (कृपा) करो। हे भगवन् ! जय जय ! हे भगवन् ! जय जय ! हे वैकुण्ठ ! जय जय ! हे गोविन्द जय जय ! हे श्रीकण्ठ के सेव्य ! जय ! जय ! हे श्रीपते ! जय ! जय ! हे श्रीवत्सचिह्न[1] ! जय ! हे श्रीरामकृष्ण ! जय ! हे श्रीवासुदेव ! जय ! हे मुकुन्द जय ! जय ! यह सारा त्रिभुवन तुम्हारी माया के मोह से ग्रस्त है। यही कारण है कि मेरे मन में दुर्मद उत्पन्न हो गया। जो निर्मल तापस लोग हैं वे भी तुम्हारी माया को जीत नहीं

1 विष्णु के वक्षस्थल का महर्षि भृगु के लात मारने का चिह्न।

निन्तिरुवटियुटॆ तत्त्वमाराञ्ञु नित्यं
चिन्तिच्चु चिन्तिच्चरियाञ्ञुऴलुन्नुतल्लो । ७
नन्दनवनत्तिङ्कल् सुन्दरीजनत्तोटुं
मन्दमारुतमेट्टु कन्दर्प्पवशन्मारां ८
मन्दन्माराय ञङ्ङळॆङ्ङनॆयरियुन्नु
नन्दनन्दन ! नाथ ! निन्महिमानमोर्त्ताल् । ९
निन्मायामोहांबुधौ वीणुऴन्नुऴल् पूण्टु
जन्मवुं मरणवुं सुखदुःखादिकळुं १०
कैक्कॊण्टु वलयुन्नतॊक्कवे माट्टित्तव-
तृक्कळ्ळलोटु चेर्त्तुकॊळ्ळेणं दयानिधे ! ११
देवेन्द्रन् त्रिभुवननाथनॆन्नभिमानि-
च्चीवण्णमुळ्ळ जाळ्यमिनियुमुण्टाकाते १२
देवदेवेश ! तव पादारविन्दङ्ङळॆ-
स्सेविप्पानॆत्तीट्टुवान् नल्केणमनुग्रहं । १३
शक्रनीवण्णं कूप्पिस्तुतिच्चु नमस्कारं
तृक्काक्कल् वीणुचेय्तु तॊऴुतोरनन्तरं १४
मघवान् मकनेयुमाश्लेषं चेय्तु मोदाल्
सकलास्त्रङ्ङळेयुं कॊटुत्तु वरं नल्कि । १५

सकते हैं । ब्रह्मा से लेकर गुल्म तक के सभी प्राणी, मदन के शत्रु (शिवजी), सभी वेद आप के तत्त्व को न समझने के कारण लगातार विचार करते रहते हैं और फिर भी न समझकर दुःखित होते हैं । हम लोग तो मन्दबुद्धिवाले नन्दनवन में सुन्दरियों के साथ मन्दमारुत खाते हुए, कामदेव के शरों के शिकार बनते हैं । १-८ हम क्या समझ सकते हैं ? । हे नन्द के पुत्र ! हे नाथ ! हे दयानिधे ! आपकी महिमा का हम ध्यान करते हैं । हम आपकी माया के मोहसागर में गिरकर जन्म, मरण, सुख, दुःख आदि अनुभव करते हुए दुःखित हैं । यह सब दूर करके हमें अपने श्रीचरणों से मिला लो । हे देवदेवेश ! ऐसा अनुग्रह कीजिए कि हम आपके चरणकमलों की सेवा कर सकें ताकि मुझमें फिर देवेन्द्र और त्रिभुवननाथ होने का अभिमान न हो और मैं फिर जाड्य (मूर्खता) न कर बैठूँ । इस प्रकार इन्द्र ने हाथ जोड़कर, स्तुति करके पैरों पर पड़कर नमस्कार किया और पूजा की । तदनन्तर अपने पुत्र से हर्ष के साथ गले लगाकर उसको सभी अस्त्र दे दिये और वर प्रदान किया । ९-१५ इक्कीस दिन में खाण्डव वन

इरुपत्तोन्तु दिनंकोण्टु खाण्डववन-
मेरिञ्ञु तेळिञ्ञनुग्रहिच्चु वह्निदेवन् । १६
तोळुतु धनञ्जयनाशीर्व्वादवुं चोल्लि-
त्तोळुतु भगवानें मरुञ्ञु धनञ्जयन् । १७
इन्द्रादिदेवगणं वानुलकवुं पुक्का-
रिन्द्रसोदरनाकुमिन्दिरावरनोटुं १८
इन्द्रारिशिल्पिश्रेष्ठनाकिय मयनोटु-
मिन्द्रनन्दननाय पाण्डवन् विजयनुं । १९
काळिन्दियुटे तीरं पुक्कारेन्नरिञ्ञालुं
केळेन्नु नृपनोटु मामुनियरुळ्चेय्तु । २०
नाळेयामिनिश्शेषं चोल्लुवान् पक्षेयेन्नाळ्
मेळमेरीटुन्नोरु पैङ्किळिमकळप्पोळ् । २१

॥ संभवं समाप्तं ॥

जला । तदनन्तर प्रसन्न होकर अग्निदेव ने अनुग्रह किया । अर्जुन ने भी अग्नि की वन्दना की और आशीर्वाद दिया । तदनन्तर भगवान् की वन्दना करके अर्जुन चले गये । इन्द्र आदि देवगण ने देवलोक में प्रवेश किया । तब इन्द्र के भाई और इन्दिरा के पति के साथ, तथा इन्द्र के शत्रुओं के शिल्पिवर मय के साथ इन्द्र के पुत्र पाण्डव अर्जुन यमुना के तट पर पहुँचे, यह जान लीजिए । महामुनि ने राजा से कहा--"और पूछ लीजिए ।" परन्तु मीठे स्वरवाली शुकी ने कहा--"अब शेष तो कल बतलाऊँगी" । १६-२१

॥ संभव पर्व समाप्त ॥

सभा पर्व

तत्ते ! वरिकरिकत्तङ्ङिरि मम
चित्तं मुहुरपि तेॅळिञ्ञितल्लो । १
नित्यं निरुपमभक्त्या कनिविनोॅटि-
त्थं चरितङ्ङळुरचेॅय्क नी । २
नारायणङ्कथ केट्टोळवुमति-
लेरुन्नितु रुचि किळिमकळे ३
पारातिनियितु शेषं परवति-
नारुं पळि तव परकयिल्ले । ४
पारं पळिक्किलुं भारतं चॉल्लुवा-
नारुं मटिक्केण्ट नीङ्ङु दुरितङ्ङळ् । ५
नारायणलील केळ्क्कयुं चॉल्कयुं
पारिल् नरनाय् पिरन्नाल् वरेण्टतुं । ६
ताल्परियमतिलुण्टु निङ्ङळ्क्केॅङ्किल्
केळ्प्पिन् कथ परञ्ञीटुवन् चेॅट्टु ञान् । ७
नारायणनुं नरनां विजयनुं
नारिमारोॅटुं द्विजवरन्मारोॅटुं ८
पारेॅळुरण्टुं निरञ्ञ पुकळोॅटुं
तेरिलेरिप्पोन्नु वाणु पुरिपुक्कु । ९

सभा पर्व

हे शुकि ! आओ और पास बैठो। मेरा चित्त तो फिर प्रसन्न हो गया है। सदा ही इस प्रकार निरुपम भक्ति के साथ कृपया तरह-तरह के चरित बतलाती जाओ। हे शुककन्ये ! नारायण की कथा जितनी भी सुनी जाय उसमें रुचि बढ़ती है। अगर तुम उसे बिना विलम्ब के सुनाओगी तो कोई भी तुम्हें दोषी न बतलावेगा। पाप बहुत करने के बाद भी भारत-कथा सुनाने में कोई न हिचके। पाप सब मिट जायेंगे। जो पृथिवी पर मनुष्य बनकर जन्म ले उसे चाहिए कि वह नारायण की कथा सुने और सुनावे। अगर आपकी उसमें इच्छा हो तो कथा सुन लीजिए। मैं सब कुछ बतलाऊँगी। १-७ नारायण और नर, अर्थात् अर्जुन स्त्रियों और ब्राह्मणवरों के साथ चौदहों लोकों में व्याप्त अपनी कीर्ति के साथ रथ पर बैठकर चले और नगर में प्रवेश करके विराजे। मायायुत मय ने युधिष्ठिर

मायामयनां मयन् धर्म्मनन्दन-
नायङ्ङौरु सभ निर्म्मिच्चु नल्किनान् । १०
मेघपुष्पस्थलभ्रान्तिकळादियां
मोहनशिल्पङ्ङळाक्कुं परयावू ! ११
वासुदेवन् निजबन्धुक्कळुमायि
वासवसूनुविनोटुमौरुमिच्चु १२
वासवुंचेय्तु युधिष्ठिरन् चौल्लाले
वासवप्रस्थमाकुन्न पुरितन्निल् । १३
मासवुमञ्चारु पोयितङ्ङञ्चारु-
वासरं पोयपोले पिन्ने माधवन् १४
नारायणन् परन् दामोदरनीशन्
नारदनादिकळ्क्कुं तिरियातवन् १५
नारीजनमनोमोहनन् केशवन्
नारकनाशनन् नाथन् नरकारि १६
निष्कळन् निर्ग्गुणन् निश्चलन्
निर्म्ममन् निष्कळङ्कन् निरातङ्कन् निरुपमन् १७
नित्यन् निरामयरूपन् निराकुलन्
भक्तप्रियन् पुमान् भुक्तिमुक्तिप्रदन् १८
भक्तिसाद्ध्यन् पत्मनाभन् परापरन्
शक्तियुक्तन् सकळानन्दविग्रह- १९
नद्वयनव्ययनव्यक्तनत्भुत-
नध्ययनप्रियनाम्नायगोचरन् २०

के लिए एक सभा रचा दी। उसके मेघ, पुष्प, थल का भ्रम पैदा करनेवाले मोहन शिल्पों का कौन वर्णन कर सकता है ? युधिष्ठिर के कहने पर वासुदेव अपने वन्धुओं के साथ, इन्द्रपुत्र अर्जुन के साथ, इन्द्रप्रस्थ नामक नगर में निवास करने लगे। ८-१३ पाँच छ महीने पाँच छ दिनों के समान बीत गये। तदनन्तर माधव, नारायण, पर, दामोदर, ईश, नारद आदियों के लिए भी अज्ञेय, नारीजनों के मन के मोहन, केशव, नरक के नाशक, नाथ, नरकासुर के शत्रु, निष्कलङ्क, निर्गुण, निश्चल, निर्मम, निष्कलङ्क, निरातङ्क, निराकुल, भक्तप्रिय, पुमान्, भक्ति और मुक्ति देनेवाले, भक्ति से प्राप्त करने योग्य, पद्मनाथ, परुत्पर, शक्तियुक्त, सभी आनन्दों की मूर्ति, अद्वय, अव्यय, अव्यक्त, अद्भुत, अध्ययनप्रिय, श्रुति द्वारा वेद्य, सभी तत्त्वों

तत्त्वङ्ङळेल्लाट्िनुं मूलमायवन्
सत्यस्वरूपन् सकलजगन्मयन् २१
सच्चिल्परब्रह्ममाय सनातन-
नच्युतनेकनात्मारामनीश्वरन् २२
आनन्दपूर्णननन्तन् जनिमृति-
हीनन् दयानिधि विष्णु निरञ्जनन् २३
नानाजगल्परिपूर्णन् सदाशिवन्
न्यूनातिरेकप्रवीणन् जनार्द्दनन् २४
गोविन्दनिन्द्रानुजन् मुकुन्दन् हरि
देवन् दिनाधिपचन्द्रविलोचनन् २५
भूतपञ्चात्मकन् भूतिभूषार्च्चितन्
भूतङ्ङळुळ्ळिले जीवनाकुन्नवन् २६
पूतनतन्नुटे जीवनमुण्टवन्
पूतन् पुराणपुमान् पुरुषोत्तमन् २७
एन्नुटेयुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न तन्पुरान्
तन्नुटे भक्तर्क्कु सङ्कटं तीर्प्पवन् २८
पन्नगनाथशयनन् परमात्मा
पन्नगव्राताशनद्ध्वजन् माधवन् २९
पार्त्थन्मारोटुं द्रुपदात्मजयोटुं
यात्रयुं चॊल्लिप्पुरप्पॆट्टु तेरेरि । ३०
यात्र तुटङ्ङियनेरत्तु पाण्डवर्
नेत्रांबुवुं वार्त्तनुयात्रयुं चेय्तार् । ३१

के मूलभूत, सत्य स्वरूप, सकल जगन्मय, सच्चित्परब्रह्म, सनातन, अच्युत, एक, आत्माराम, ईश्वर, आनन्दपूर्ण, अनन्त, जन्म और मृत्यु से रहित, दयानिधि, विष्णु, निरञ्जन, विविध जगों से परिपूर्ण, सदाशिव, अपने को कम या अधिक बनाने में कुशल, जनार्दन, गोविन्द, इन्द्रानुज, मुकुन्द, हरि, देव, सूर्य और चन्द्र-रूपी आँखवाले, पञ्चभूतात्मक, भस्मालंकार से अर्चित, भूतों के भीतर स्थित प्राण, पूतना के प्राण को चूसनेवाले, पवित्र, पुराण-पुरुष, पुरषोत्तम, मेरे मन में विराजमान प्रभु, अपने भक्तों का दुःख दूर करनेवाले, २२-२८ पन्नगनाथ (शेषनाग) पर लेटनेवाले, परमात्मा, साँपों को खानेवाला (गरुड) जिनका ध्वज है, माधव (कृष्ण) पार्थों (पाण्डवों) और द्रौपदी से बिदा होकर प्रस्थान के लिए रथ पर बैठे। जब यात्रा

नेरत्तिनियुं वरुन्नतुण्टेन्नति-
सारस्यमोटरुळिच्चेय्तु सत्वरं । ३२
द्वारवतियिलेळुन्नळ्ळि मेविनान्
दारङ्ङळोटुं रमिच्चु निरन्तरं । ३३
कारुण्यवारिधियेक्कण्टनुदिनं
द्वारकावासिकळुं सुखिच्चीटिनार् । ३४

राजसूयं

निर्म्मलनाकिय धर्म्मतनयनुं
धर्म्मं पिळयाते भूमियें रक्षिच्चान् । १
कर्म्मङ्ङळुं चेय्तु कीर्त्तियुं पोङ्ङिच्चु
रम्यङ्ङळाय भोगङ्ङळोटुं मुदा । २
सन्मार्ग्गचारिकळाय् मरुवीटिन
सन्मतिवीररां मन्त्रिजनत्तोटुं ३
दुर्म्मदमेऱिन वैरिकुलत्तिनु
धर्म्मराजोपमन्मारायविळङ्ङिन ४
सोदरन्मारोटुमात्मजन्मारोटु-
मादरमेऱिन भामिनितन्नोटुं ५
यादववीरनाकुन्न मुकुन्दन्टे
पादपत्मत्तिलुऱच्च मनस्सोटुं ६

प्रारम्भ हुई तब पाण्डव आँसू गिराते हुए थोड़ी दूर साथ चले । 'यथासमय फिर आऊँगा' ऐसा बड़ी प्रीति के साथ श्रीकृष्ण ने कहा । तदनन्तर द्वारवती पहुँचकर वहाँ अपनी स्त्रियों के साथ निरन्तर सुख से रहे । और द्वारका के निवासी भी दयासागर (श्रीकृष्ण) को प्रतिदिन देखते हुए बड़े सुख से रहे । २९-३४

राजसूय

और निर्मल धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) ने भी बिना धर्म के उल्लङ्घन के भूमि की रक्षा की । अनेक कर्म करके अपनी कीर्ति बढ़ा दी । रम्य भोगों का अनुभव करते हुए आनन्द से रहे । धर्मराज के पुत्र, अजातशत्रु और प्रभु (युधिष्ठिर) अपने सन्मार्ग के अनुयायी और सन्मति देने में कुशल मन्त्रियों के, दुर्मद शत्रुओं के लिए यमराज के तुल्य अपने भाइयों और पुत्रों

नालुवेदत्तिनु मूलमायुळ्ळवन्
नीलविलोचनन् पीतांबरधरन् ७
पालाळियिल्त्तुयिर्कोळ्ळुन्न नाथन्ट्रे
लीलकळ् चिन्तिच्चु सन्तुष्टनायवन् ८
नालाळिचूळुमूळिक्केकनाथनाय्
पालनवुं चेय्तु बन्धुक्कळुमायि ९
कालदेशावस्थकळ्क्कनुरूपेण
कालात्मजनामजातशत्रुप्रभु । १०
राजप्रवरनाय् वाळुन्नकालत्तु
राजसूयं वेणमेन्नु तोन्नीयुळ्ळिल् । ११
राजीवलोचनन्तन्ट्रे तिरुवुळ्ळं
व्याजमोळिच्चेन्निलुण्टाकिलेन्नुमे १२
दण्डमुण्टाकयिल्लेन्नु निरूपिच्चु
दण्डधरात्मजन् वाळुन्ननेरत्तु । १३
पण्डितनाकिय मामुनि नारदन्
चण्डभानुप्रभन्तानुमेळुन्नळ्ळि । १४
दण्डनमस्कारवुं चेय्तु भूपति
मण्डनन् पाद्यासनार्घ्यङ्ङळुं नल्कि । १५
पुण्डरीकोत्भवपुत्रनियोगेन
पुण्डरीकप्रियनन्दननन्दनन् १६

के साथ, अपनी बहुत आदरणीय भामिनियों (स्त्रियों) के साथ यादववीर मुकुन्द के चरणकमलों का ध्यान करते हुए, चारों वेदों के मूल, नील-विलोचन, पीतांबर धारण करनेवाले क्षीरसागर में शयन करनेवाले नाथ (विष्णु) की लीलाओं के ध्यान से सन्तुष्ट होकर चारों समुद्रों से घिरी पृथिवी के एकमात्र नाथ बनकर अपने बन्धुओं के साथ काल, देश और अवस्था के अनुसार उस (पृथ्वी) का पालन करने लगे। १-१० तब उन्हें यह बात सूझी कि राजसूय यज्ञ का अनुष्ठान होना चाहिए। जब धर्मपुत्र यह सोच रहे थे कि 'अगर मैं बिना व्याज (कपट) के राजीवलोचन (श्रीकृष्ण) का ध्यान करूँ तो मुझे कभी दुःख नहीं प्राप्त होगा' तभी सूर्य के समान प्रभा रखनेवाले विद्वान् महामुनि नारदजी पधारे। राजा ने साष्टाङ्ग प्रणाम किया और पाद्य, आसन और अर्घ्य दिए। पुण्डरी-कोद्भवपुत्र (ब्रह्मा के पुत्र) नारद की आज्ञा से पुण्डरीकप्रिय (सूर्य) के पुत्र

आस्थानमण्डपे सिंहासने वसि-
च्चास्थयोटोरो कथकळ् परयुन्पोळ् । १७
अच्युतभक्तप्रवरन् तपोनिधि
स्वच्छवाचा नृपन्तन्नोटु चोदिच्चु । १८
कच्चिदद्ध्यायोक्ति चॊल्लुवानर्त्थवुं
निश्चयिच्चीटुवान् वेलयुण्टॆत्रयुं । १९
राजसूयं चॆय्वानाग्रहमुण्टॆन्नु
राजावु मामुनियोटु परञ्ञप्पोळ् २०
तेजोनिधियां तपोनिधि भूपति-
पूजितन् नारदन् नीरजोल्भूतजन् २१
तानॊरु कार्यं निरूपिच्चु वन्नतु
मानववीरनङ्ङोट्टु परकयाल् २२
मानसतारिल् निरञ्ञॊरु कौतुक-
माननमायिरमुळ्ळवन् चॊल्किलां । २३
चिन्तिच्चु मन्दस्मितं चॆय्तु वीणतन्
तन्त्रि विरल्कॊण्टु मॆल्लॆन्निळक्किनान् २४
सन्तोषमॆल्लावनुं वळरुं निज
बन्धुक्कळॆक्कण्टालॆन्नतिलुं परं २५

(यमराज) के पुत्र (युधिष्ठिर) आस्थान-(सभा) मण्डप में सिंहासन पर बैठे हुए बड़ी भक्ति के साथ विविध बातें करने लगे। ११-१७ तब अच्युत के भक्तों में श्रेष्ठ, तपोनिधि नारद ने अपनी स्वच्छ वाणी द्वारा राजा से पूँछा[1]—"कच्चिदध्याय को सुनाना और उसके अर्थ का निर्णय करना कठिन काम है। जब राजा ने महामुनि से कहा कि मेरी राजसूय करने की इच्छा है तब स्वयं सोचे हुए कार्य को राजा द्वारा पहले कह देने के कारण तेजोनिधि, तपोनिधि तथा राजा द्वारा पूजित ब्रह्मा के पुत्र नारद के मन में जो भरा-पूरा कौतुक (प्रीति) हुआ उसे हजार मुखवाले शेषनाग ही वर्णन कर सकते हैं। १८-२३ तदनन्तर विचार करके मुस्कराकर (नारद ने) अपनी वीणा के तारों को उंगलियों से धीरे-धीरे हिलाया। (और कहा), अपने बन्धुओं को देखकर सबको सुख होता ही है। ऊपर से यह हर्ष की

१ नारदजी ने जो प्रश्न पूछे वे महाभारत के सभापर्व के पाँचवें अध्याय में दिए हैं। उनके हर एक श्लोक का प्रथम पद है 'कच्चित्'। इसलिए उसे कच्चिदध्याय कहते हैं।

अँन्ते सुखमे परञ्ञतु नन्निनतु ।
मन्नवा ! ञानतु चॉल्लुवान् वन्नतुं । २६
निन्नुटॆ तातनां पाण्डुवुं वानिल्नि-
न्नॆन्नोटु चॉल्लिनान् निन्नोटु चॉल्लुवान् । २७
राजा हरिश्चन्द्रनिन्नुं तॆळिवोटु
राजसूयं चॆय्क कारणमायल्लो २८
तेजोमयनाय् सुरमुनिवृन्देन
पूजितनाय् महाभोगसमन्वितं २९
वानिल् सुखिच्चु वसिक्कुन्नतॆन्नतु ।
तानादरवोटु कण्टतुकॊण्टॆटो । ३०
दानयागादिकळ्क्कुळ्ळ फलं कण्टु
मानसे विस्मयं वर्द्धिच्चितॆत्रयुं । ३१
कर्म्मङ्ङळुण्टु पलवयॆल्लाट्टिलुं
नन्मयुळ्ळोन्नहो राजसूयमॆन्नु ३२
तन्मकनाकिय निन्नोटु चॉल्लुवान् ।
नम्मोटु चॊन्नतु चॊन्नेनरिकॆटो ३३
अप्पोळ् नरपति चोदिच्चितादराल् ।
तल्प्रकारङ्ङळरुळ्चॆय्तु केळ्क्कणं । ३४
तल्प्रसङ्गेन हरिश्चन्द्रोपाख्यान-
मॆप्पेरुमेयरुळ्चयितु नारदन् । ३५
एतुमे संशयिच्चीटरुतिक्कालं
साधिक्कुमॆन्नरुळ्चॆय्तु विधिसुतन् । ३६

बात है कि आप सदा सुख से रहे हैं। हे भूपाल ! मैं भी आपके सुख की बात कहने आया हूँ। तुम्हारे पिता पाण्डु ने तुम्हें बतलाने के लिए मुझसे एक बात कही है। राजा हरिश्चन्द्र आज भी, राजसूय करने के कारण, स्वर्ग में, तेजोमय होकर, देवों और मुनियों से पूजा पाते हुए बड़े-बड़े भोगों का अनुभव करते हुए सुख से रह रहे हैं। यह मैंने आदर के साथ देखा है। २४-३० अतएव दान, याग आदि के फल देखकर मेरे मन में बड़ा आश्चर्य हुआ। कर्म अनेक प्रकार के हैं, उनमें राजसूय ही श्रेष्ठ है। इस बात को अपने पुत्र तुझसे कह देने के लिए मुझसे कहा गया है। और मैंने कह दिया। तब नरेन्द्र ने सादर पूछा—कृपया विस्तार से उसका वर्णन कीजिए। उसी प्रसङ्ग में नारद ने संपूर्ण हरिश्चन्द्रोपाख्यान सुना

माधवन्तन्ने वरुत्तुवन् ञानेन्नु
माधुरियंचेर्न्नु वीणयुं वायिच्चु ३७
नारायणा ! शिव राम हरे ! जय
नारकनाशन ! नाथ ! दयापरा ! ३८
नीरजनेत्र ! निरञ्जन ! निर्म्मल !
नीरदविग्रह ! नीतिपरायण ! ३९
वृष्णिकुलोत्भव ! कृष्णा ! जगन्मय !
विष्णो ! मुकुन्द ! दामोदर ! गोविन्द ! ४०
जिष्णुमुखामरवन्दित ! श्रीपते !
जिष्णुप्रिय ! जगन्मङ्गल ! गोपते ! ४१
सक्तिविनाशन ! रक्तपत्मानन-
युक्तरभानुरक्त ! त्रिलोकीपते ! ४२
भक्तजनप्रिय ! भुक्तिमुक्तिप्रद !
शक्तियुक्तप्रभो ! पाहि निरन्तरं । ४३
इत्तरं नामसङ्कीर्त्तनवुं चैय्तु
सत्वरं द्वारावतियिलकं पुक्कान् । ४४
उद्धवर् सात्यकियेन्नु तुटङ्ङियु-
ळ्ळुत्तमन्मारोटुंकूटि सभान्तरे ४५
मायामयनाय् मरुवुन्न गोविन्दन्
मायारहितन् मनोहरन् माधवन् ४६

दिया । ३१-३५ विधिसुत (नारद) ने कहा—"संदेह बिलकुल न करो। कार्य-सिद्धि अवश्य हो जायगी।" 'मैं माधव को बुलाऊँगा', ऐसा कहकर माधुर्य के साथ वीणा बजायी। हे नारायण ! हे शिवराम ! हे हरे जय! हे नरक का नाश करनेवाले ! हे नाथ, हे दयानिधे ! हे कमलाक्ष ! हे निरञ्जन ! हे निर्म्मल ! हे मेघ के समान शरीरवाले ! हे नीतिपरायण ! हे वृष्णिकुलोद्भव ! हे मुकुन्द ! हे दामोदर ! हे गोविन्द ! हे इन्द्र आदि देवों द्वारा पूजित ! हे श्रीपते ! हे अर्जुन के प्यारे ! हे जगन्मङ्गल ! हे गोपते ! हे विषयासक्ति का नाश करनेवाले ! हे लालकमल सदृश मुख-वाली स्त्रियों के प्रिय ! हे त्रिलोकीपते ! ३६-४२ हे भक्तजनप्रिय ! हे भुक्तिमुक्तिप्रद ! हे शक्तिशाली प्रभु ! तुम निरन्तर हमारी रक्षा करो ! इस प्रकार नाम-सङ्कीर्त्तन करते हुए नारदजी ने द्वारवती में प्रवेश किया। उद्धव, सात्यकि आदि प्रमुख व्यक्तियों के साथ मायामय,

कायाविन्पूविन्निऽमुळ्ळ गोविन्दन्
मायावरन् परन् कारणमानुषन् ४७
मेवुन्ननेरत्तु सौदामिनिपोलें
देवन्मुनीन्द्रप्रभया दिगन्तरं ४८
धावळ्यशोभया व्यापिच्चु काणायि
देवनुं विष्णुपदत्तिङ्कल्निन्नु की- ४९
ळाविर्भविच्चोरु चन्द्रबिंबपोलें ।
देवदेवन् जगदीश्वरन् शाश्वतन् ५०
देवकीनन्दनन् वासुदेवन् विभु
गोविन्दनिन्दीवरेक्षणनच्युतन् ५१
कार्व्वर्ण्णनन्तिके नारदनेक्कण्टु ।
भाविच्चु भक्त्या नमस्करिच्चीटिनान् ५२
वन्दिच्चु निन्नार् सभयिङ्कलुळ्ळोरुं ।
नन्दिच्चिरुन्नरुळुं मुनिश्रेष्ठनुं ५३
नन्दजनिन्द्रादि वृन्दारकवृन्द-
वन्द्यनानन्दन् मुकुन्दनिन्द्रानुजन् ५४
नारायणन्तानुं नारदनुं तम्मि-
लोरो विशेषङ्ङळुं पऽञ्ञित्तिरि- ५५
नेरमिरुन्नवाऽ मुनि नारदन्
नेरे पऽञ्ञितु तान् चेन्न कारियं । ५६

मायारहित, मायावर, 'काया' पुष्प के समान नीलवर्ण शरीरवाले, केशव, पर, कारणपुरुष, माधव, गोविन्द जब सभा में विराजमान थे तब देवर्षि नारद की धवल प्रभा से चारों दिशाएँ व्याप्त हो गयीं। मानो देव चन्द्र विष्णु-पद को छोड़कर नीचे उतर आया हो। ४३-४९ देव-देव, जगदीश्वर, शाश्वत, देवकीनन्दन, वासुदेव, विभु, गोविन्द, कमललोचन, अच्युत श्रीकृष्ण ने नारदजी को अपने निकट देखा और बड़ी भक्ति के साथ नमस्कार किया सभी सदस्यों ने भी वन्दना की। मुनिश्रेष्ठ भी प्रसन्न होकर विराजे। नन्द के पुत्र, इन्द्र आदि देवों के वन्द्य, आनन्दमय, मुकुन्द, इन्द्र के अनुज नारायण और नारद ने आपस में तरह-तरह की बातें करते हुए थोड़ा समय व्यतीत किया। तत्पश्चात् मुनि नारद ने अपने आने का प्रयोजन बतलाया। ५०-५६ "तुम्हारे भक्तों में प्रमुख राजाओं के राजा युधिष्ठिर के कहने से मैं आज यहाँ आया हूँ। इसका कारण भी

निन्नुटॆ भक्तरिल् मुन्पनायुळ्ळवन्
मन्नवर्मन्नवनाय युधिष्ठिरन्- ५७
तन्नुटॆ चॊल्लिलनालिन्निविटेक्कु ञान्
वन्नततिनुळ्ळ कारणवुं चॊल्लां ५८
उण्टॊरु यागं कळिक्कयिलाग्रहं ।
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनॆक्कण्टु पऱञ्ञाकिल् । ५९
रण्टुं तिरिक्कायिरुन्निन्तॆन्नोटु
षण्डतयोटवन् चॊन्नानऱिञ्ञालुं । ६०
अत्तॊळिलॆल्लां पऱञ्ञिरिक्कुन्नति-
न्मद्ध्येयॊरन्तणन् वन्नतुं काणायि । ६१
ऒन्नयुं निर्म्मलन् पृथ्वीसुरोत्तमन्
सत्तमन् वृत्तवान् बुद्धिमान् केवलं । ६२
पण्टॊरु नाळुमे कण्टऱियायॆकिलुं
कॊण्टल्नेर्व्वर्ण्णनॆक्कण्टवन् चॊल्लिनान् ६३
कण्टाल् मनोहरमायॊरु रूपमुळ्-
ळॊण्टु पिऱन्न वैकुण्ठ ! दयानिधे ! ६४
साधुजनङ्ङळ्क्कॊराधारमाकिय ।
माधवने ! जय ! नारायणा ! जय ! ६५
वेधाविनुं विचारिच्चाल् तिरियात ।
वेदान्तवेद्य ! वेदात्मकने ! जय ! ६६
धीरपराशरनन्दनवर्ण्णित
शौरे ! चराचराचार्य ! चतुर्भुज ! ६७

बतलाऊँगा । 'मेरी एक यज्ञ करने की इच्छा है । यह बात अगर आप श्रीकृष्णजी से जाकर कहेंगे तो दोनों बात स्पष्ट हो जायेंगी ।' ऐसा उन्होंने षण्डता के साथ मुझसे कहा—जान लीजिए ।" जब उस विषय पर बातचीत हो रही थी तब वहाँ एक ब्राह्मण आया हुआ दिखाई दिया । वह एक अत्यन्त निर्मल, सत्तम, चरित्रवान् और बुद्धिमान् ब्राह्मण था । ५७-६२ यद्यपि वह बिलकुल अपरिचित था फिर भी उसने श्रीकृष्ण को देखकर कहा । "हे देखने में मनोहर रूप धारण करके पृथ्वी में अवतीर्ण वैकुण्ठ ! हे दयानिधे ! हे साधु जनों के एकमात्र आधार, हे माधव ! जय ! हे नारायण ! जय ! हे विचार करने पर ब्रह्मा द्वारा भी अवेद्य ! वेदान्त के द्वारा ही वेद्य ! हे वेदात्मक ! जय ! हे धीर व्यासजी के

शूरसुरासुरवन्दितसुन्दर !
वीर ! रमावर ! विश्वंभरावरा ! ६८
भूरिधराधराधीशधर ! हरे !
घोरधराभारभूतभूपान्तक ! ६९
क्रूरासुरवर ! शूरात्मज ! प्रभो !
मारशरातुरगोपिकावल्लभ ! ७०
क्षीररत्नाकरवास ! ऋषीकेश !
क्षीररत्नाकरनन्दनावल्लभ ! ७१
सारससंभव मारहर ! मुनि-
श्रेष्ठ विद्याधरचारणसेवित ! ७२
धाराधराभ ! धरापते ! गोपते !
धाराधरवाहनाराधित ! जय ! ७३
चारुतराकृते ! कारुण्यवारिधे !
दारुकसारथे ! नाथा ! यदुपते ! ७४
राधापयोधराधारमायुळ्ळ मा-
ऽाधारमायुळ्ळ सारसमानिनि- ७५
क्काधि तीर्त्तीटुमरुणाधरामृत-
दीधितिमण्डलतुल्यमामाननं ७६
दीननायन्वहं दासनां मां प्रति
दीनदयानिधे ! चेॅट्टिङ्ङरुळणं । ७७

वर्णित ! हे शूरपुत्र ! हे चर और अचर के नाथ ! हे चतुर्भुज ! हे शूर देवों और असुरों द्वारा वन्दित ! हे सुन्दर ! हे वीर ! हे लक्ष्मीपते ! हे पृथ्वीपते ! हे अनेक सम्राटों के नाथ ! हे हरि ! हे घोर पृथ्वी के भारभूत राजाओं के नाशक ! हे क्रूर असुरों में श्रेष्ठ ! (?) हे शूरपुत्र ! हे प्रभो! हे मदन के बाणों से आतुर गोपियों के प्रिय ! ६३-७० हे क्षीरसागर में निवास करनेवाले ! हे इन्द्रियों का निग्रह करनेवाले ! हे क्षीरसागर की पुत्री (लक्ष्मी) के वल्लभ ! हे सारससंभव ! हे मदन का निग्रह करने-वाले ! हे मुनियों में श्रेष्ठ ! हे विद्याधर और चारणों द्वारा सेवित ! हे घनश्याम ! हे पृथ्वीपते ! हे गोपते ! हे मेघवाहन (इन्द्र) के आराधित ! जय ! हे सुन्दर आकृतिवाले ! हे दयासागर ! हे दारुक नामक सारथि-वाले! हे नाथ! हे यदुपते ! हे राधा के पयोधर को आश्रय देनेवाले, आपके वक्षःस्थल पर आश्रित लक्ष्मी का खेद मिटानेवाले तथा लाल ओठों के

मान काम क्रोध लोभ मोहग्रस्त
मानसन्मारल्लो मानुषजातिकळ् । ७८
दुष्टनां मागधनाय जरासन्ध-
निष्टन्मारल्लात राजाक्कळॆयॆल्लां । ७९
कॆट्टियिट्टीटिनान् कारागृहंतन्नि-
लॊट्टुनाळुण्टवरङ्ङने वाळुन्नु । ८०
कष्टमिरुपतिनायिरत्तॊण्णूरु
शिष्टरायुळ्ळ नृपवरन्मारवर् । ८१
नष्टाशनस्नानयानभोगैरति-
क्लिष्टन्माराय् वलञ्ञीटुन्नितॆन्नयुं । ८२
ऎल्लावरुमॊरुमिच्चु निरूपिच्चि-
ट्टल्लल् कॆटुप्पतिनॆन्नोटु चॊल्लिनार् । ८३
मल्लन्मारोटुं करिवरन्तन्नोटुं
कॊल्लुवान् भाविच्च कंसनेक्कॊन्नवन् ८४
मल्लीशरवीरबाणङ्ङळ्कॊण्टु कॊ-
ण्टल्ललल्पूण्टेट्टमुळन्नुचमञ्ञोरु ८५
वल्लवमानिनिमारुटॆ सन्ताप-
मॆल्लां कळञ्ञु सुखेन रक्षिच्चवन् । ८६
फुल्लांबुजाभिरामाननन् मन्मथ-
तुल्यन् सुकुमारन् सुन्दरविग्रहन् ८७

किरणमण्डल से सुशोभित अपने मुख को, हे दीनों पर दया करनेवाले ! मुझ दीन दास की ओर ज़रा कर दीजिए। ७१-७७ मनुष्य जाति तो मान, काम, क्रोध, लोभ, मोह में ग्रस्त मनवाली होती है। मगध के राजा दुष्ट जरासन्ध ने अपने मित्रों के अतिरिक्त राजाओं को बाँधकर कारागृह में डाल दिया। कुछ समय हो गया है जब से उनकी यह स्थिति है। यह बड़े विषाद की बाद है कि ये अत्यन्त शिष्ट बीस हज़ार आठ सौ राजवर बिना भोजन, स्नान, यान आदि भोगों के बड़े दुःख में समय व्यतीत कर रहे हैं। सबने आपस में सलाह कर के अपने दुःख को दूर करने के लिए मुझसे यों कहा है— ७८-८३ मल्लों और करिवर द्वारा मरवाने का प्रयत्न करने वाले कंस के नाशक, कामदेव के बाणों के लगने से अत्यन्त पीड़ित हुई गोपियों का सन्ताप दूर करके रक्षा करनेवाले, विकसित कमल के सदृश, मदन के तुल्य, सुकुमार, सुन्दर शरीरवाले,

कल्याणदेवतयाय पत्मालया-
वल्लभन् नारायणन् मधुसूदनन् ८८
काश्यपीकामुकन् कामारिसेवितन्
शाश्वतन् शंखचक्राब्जगदाधर- ८९
नाश्रितन्माक्कु शरणमाय् मेविनो-
रीश्वरनाकिय कृष्णन् दयानिधि ९०
कारुण्यलेशमिल्लाय्किलितुकाल-
मारुं नमुक्कु तुणयिल्ल दैवमे ! ९१
घोरनां मागधन् निद्र्दयन् बन्धिच्चु
पारं वलयुन्निितन्वहं गोपते ! ९२
इङ्ङनॆ वन्नरकंतन्निल् वीणॊरु-
ञङ्ङळॆयाशु करेट्टणमे पोट्टि ! ९३
इङ्ङनॆ ञङ्ङळ् परयुन्निितॆन्नतु-
मङ्ङुणर्त्तिक्कयॆन्नॆन्नोटु चॊल्लिनार् । ९४
गर्वं कलर्न्न जरासन्धभूपति
दुर्व्वीर्यकर्म्मं पॊरुाञ्ञळल्पूण्टॊळुं । ९५
उर्व्वीश्वरन्मार् परञ्ञोरुकारणं
निर्वैरमानसनाकयालिङ्ङनॆ ९६
निर्व्रीळनायुणर्त्तिच्चतॆल्लामिनि
सर्व्वभूतात्मकनां निन्तिरुवटि ९७
सर्व्वज्ञनाकयालॊक्क क्षमिक्कणं
दर्व्वीकरेन्द्रशयन ! दयानिधे ! ९८

कल्याण करनेवाली पद्मालया (लक्ष्मी) के वल्लभ, नारायण, मधुसूदन, पृथिवी के पति, कामदेव के शत्रु (शिव) द्वारा पूजित, शाश्वत, शंख, चक्र, कमल और गदा को धारण करनेवाले, आश्रितों को शरण देनेवाले, ईश्वर, कृष्ण ! दयानिधि की दया यदि न होगी तो, हे भगवन् ! हमारी सहायता करनेवाला कोई नहीं है। ८४-९१ घोर मागध (जरासन्ध) के बांध दिये जाने से हम अत्यन्त दुःखित हैं, हे नाथ ! हे गोपते ! इस प्रकार घोर नरक में गिरे हुए हमको, जल्दी उठाइए ! उन्होंने मुझसे कहा—भगवान् से जाकर कहो कि हम लोग ऐसा कह रहे हैं। घमंडी राजा जरासन्ध के कुवीर्य की करतूत न सह सकने से अति दुःखित अन्य राजाओं के कहने से वैररहित मैंने इस प्रकार निःसंकोच सूचना

इप्रकारं परञ्ञीटिन विप्रनो-
टप्पोंळे चिल्पुमानत्भुतविक्रमन् ९९
अप्रमेयप्रभावप्रकाशात्मकन्
कुप्रभुत्वभूमप्रौढिविनाशनन् १००
पङ्कजमङ्कतन् कोङ्कत्तटङ्ङळिल्
तङ्कुन्न कुङ्कुमपङ्कमलङ्करि- १०१
च्चेङ्कल् विळङ्ङुन्न पङ्कजलोचनन्
शङ्कवेंटिञ्ञरुळिच्चेय्तानिवण्णं । १०२
हुंकृतिपूण्ट जरासन्धनिक्कालं
शृङ्खलकोण्टु तळच्च नृपरुटे- १०३
सङ्कटं तीर्प्पनतिनिल्ल संशयं
शङ्करन्तन्नाणे ! पोयालुमेङ्ङिलो । १०४
ऎन्नतु केट्टु तेळिञ्ञवनुं पोयान्
वन्न महामुनि नारदनुं पोयि । १०५
पिन्ने मुकुन्दनानन्दरूपन् नन्द-
नन्दनन् गोविन्दनिन्दुबिंबाननन् १०६
ऎन्तिनि वेण्टतु मुन्पिल् नामेन्नतुं
चिन्तिच्चु कल्पिक्क निङ्ङळिनियेन्नु १०७
मन्त्रिकळोटुरचेय्तवारे सुर-
मन्त्रिसमनाकुमुद्धवर् चोल्लिनान् १०८
रण्टेन्न भावमिल्लात लोकेश ! वै-
कुण्ठ ! ञान् कुण्ठनेन्नाकिलुं चोल्लुवन् १०९

दी। ९२-९६ अब आप सर्वभूतात्मा और सर्वज्ञ मुझे क्षमा करें। हे शेषनाग पर सोनेवाले ! हे दयानिधे ! इस प्रकार जब ब्राह्मण ने सूचना दी तब चित्पुरुष, अद्भुतविक्रम, निस्सीम प्रभाववाले, प्रकाशात्मक, कुप्रभुत्व के कारण होनेवाले घमंड के नाशक, लक्ष्मीदेवी के स्तनों पर स्थित कुङ्कुम से सुशोभित, मुझमें विराजमान कमललोचन ने निःशंक होकर यों कहा— घमंडी जरासन्ध के द्वारा इस समय जंजीर से बांधे गये राजाओं का दुःख मैं दूर करूँगा, इसमें संदेह नहीं। आप जा सकते हैं। ९७-१०४ यह सुनकर ब्राह्मण प्रसन्न हुए और चले गये। तदनन्तर मुकुन्द, आनन्द-रूप, नन्दपुत्र, चन्द्रमुख गोविन्द ने अपने मन्त्रियों से कहा—अब हमको क्या करना चाहिये, यह सोचकर बतलाइए। तब देवगुरु बृहस्पति के समान

रण्टुमॊन्नायित्तटुक्कामितिन्निप्पॊ-
ऴुण्टॊरुपायवु कण्टिट्टतु चॊल्लां । ११०
राजसूयत्तिनु दिग्जयं चेय्युन्पोळ्
राजप्रवरनायुळ्ळ जरासन्धन् १११
राजीवनेत्र ! पुरैव नम्मोटेट्टो-
राजियिल् तोट्टान् पलवट्टमाकयाल् ११२
ऎन्नु तिर कॊटुत्तीटुकयिल्लिप्पोळ्
कॊन्निट्टु यागं कऴिक्कॆन्नतु वरुं । ११३
नन्नितु तोन्नियतङ्ङनॆतन्नॆयॆ-
न्निन्दिरावल्लभन्तानुमरुळ्चॆय्तु । ११४
इन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्द्यना-
मिन्द्रावरजनिन्दीवरलोचनन् । ११५
इन्दुकुलोद्भवनिन्दुबिबाननन्
नन्दजन् सुन्दरन् देवकीनन्दनन् । ११६
नान्दकपाणि सनन्दादिवन्दितन्
दन्दशूकेन्द्रशयननरविन्द- । ११७
मन्दिरकन्दर्प्पवैरिमुखनतन्
इन्द्रात्मजप्रियनिन्द्रप्रस्थं पुक्कान् । ११८
धर्म्मजन्मावुमवरजन्मारुमाय्
सम्मोदमुळ्क्कॊण्टॆतिरेट्टु वन्दिच्चान् । ११९

उद्धवजी ने निवेदन किया—हे द्वैतभाव से रहित लोकेश ! वैकुण्ठ ! मैं मन्दमति हूँ, फिर भी कहूँगा। हम दोनों को एक साथ रोक सकेंगे, इसका एक उपाय मैंने सोचा है, उसे बतला दूँगा। १०५-११० हे कमल-लोचन ! राजसूय के लिए दिग्विजय करने के अवसर पर यह राजप्रवर जरासन्ध, जो पहले कई वार हम लोगों से युद्ध में हार चुका है, कभी कर नहीं देगा। इसलिए उसका वध करके ही याग करना पड़ेगा। इन्दिरा-वल्लभ (विष्णु, कृष्ण) ने कहा—यह आपको अच्छा सूझा। ऐसा ही हो ! तब इन्द्र आदि देवगण द्वारा वन्दनीय, इन्द्र के अनुज, कमल-लोचन, चन्द्रवंशोद्भव, चन्द्रमुख, नन्दपुत्र, सुन्दर, देवकीपुत्र, हाथ में नन्दक खड्ग धारण करनेवाले, सनन्द आदि के वन्दनीय, शेषनाग पर शयन करनेवाले, ब्रह्मा, शिव आदि के वन्दनीय और इन्द्रपुत्र (अर्जुन) के प्रिय श्रीकृष्ण ने इन्द्रप्रस्थ में प्रवेश किया। युधिष्ठिर ने, अपने अनुजों के

कर्म्मणामाधारभूतनां निर्म्मलन्
कल्मषनाशनन् प्रीतिपूण्टीटिनान् । १२०
अल्ललुं तीर्न्नवरेल्लावरुं कूटि
सल्लापवुं चेय्तिरिक्कुन्ननेरत्तु । १२१
मल्लारियोटुणर्त्तिच्चु युधिष्ठिरन्
कल्याणशीलन् कळल् तोळुतादराल् । १२२
दुर्ल्लभ्यमाय विषयङ्ङळिल् मन-
स्सेल्लावनुं चेल्लुमल्लो दयानिधे । १२३
निर्ल्लज्जनाय ञान् चोल्लुन्न कारियं
वल्लाय्कयाकिल् क्षमिच्चुकोळ्ळेणमे । १२४
राजत्वमुण्टेनिक्केन्न मौढ्यंकोण्टु
राजसूयं चेय्कयल्लयल्लीयेन्नो- १२५
राशयेनिक्कुमुण्टुळ्ळिलुण्टाकुन्नु
केशव ! कृष्ण ! कृपालय ! दैवमे ! १२६
निन् कृपयेङ्कलुण्टेङ्किलेनिक्कोरु
सङ्कटमायुळ्ळ वङ्कटल्तङ्करे १२७
शङ्ककूटाते करेऽामहो ! तव
किङ्करनाकयाल् सौख्यपदं मम १२८
कण्टुवसिक्कामतिल्लयेन्नाकिलो
कुण्टिल् वीणेन्नयुं कुण्ठनायीटुं ञान् । १२९

साथ, बड़े प्रमोद (प्रसन्नता) के साथ उनका स्वागत किया। १११-११९ तब कर्मों के एक ही आधार, निर्मल और पापों के नाशक श्रीकृष्ण बड़े प्रसन्न हुए। जब निश्चिन्त होकर सब एक साथ बैठकर बातचीत कर रहे थे तब कल्याणशील युधिष्ठिर ने मल्ल के शत्रु (श्रीकृष्ण) के चरणों की सादर वन्दना करके कहा—हे दयानिधे ! यह स्वाभाविक है कि सभी का मन दुर्लभ वस्तुओं की ओर झुके। जो कार्य मैं निर्लज्ज भाव से कहनेवाला हूँ अगर वह असाध्य है तो क्षमा करना। "मैं राजा हूँ" इस मूढ भावना के कारण, हे केशव ! हे कृष्ण ! हे कृपालय ! हे भगवन् ! मेरी यह इच्छा हो रही है कि मैं एक राजसूय याग करूँ। १२०-१२६ मुझ पर आपकी कृपा है तो मैं बिना किसी शङ्का के दुर्गम महासागर के तट तक पहुँच जाऊँगा क्योंकि मैं आपका सेवक हूँ। मैं अपना सुख प्राप्त कर सकूँ। यदि आपकी कृपा नहीं है तो मैं गर्त

पुण्डरीकोत्भवनादिकळ्क्कुं नील-
कण्ठनुमाधारमल्लो भवत्पदं । १३०
कुन्तीसुतनितु चॊन्नतु केट्टॊरु
चेन्तामराक्षन् चिरिच्चरुळिच्चेय्तु । १३१
ऎन्तिनु सन्तापमुळ्ळिलुण्टाकुन्नु
पिन्तुणयुण्टु ञानन्तणरुमुण्टु १३२
राजशिखामणियायुळ्ळ नीयिप्पोळ्
राजसूयं चेय्वानेतुं मटिक्केण्ट । १३३
व्याजमॊऴिञ्ञु वेण्टुन्न कर्म्मङ्ङळ्क्कु
राजप्रवररटिमप्पणिचेय्युं । १३४
ऒन्ने विषममायुळ्ळु नमुक्कतु-
मिन्नतॆन्नन्पोटु चॊल्लुवन् ञानेटो । १३५

जरासन्धवधं

पण्टु भृगुमुनियॆच्चॆन्नु मागधन्
कण्टु सेविच्चितु सन्ततियुण्टावान् । १
अम्मुनितन्मटितन्निलप्पोळ् देव-
निर्म्मितमायॊरु मान्पळवुं वीणु । २
पत्निक्कितु कॊटुत्तीटुकॆन्नाल्
पुत्ररत्नमुण्टामॆन्नु नल्कि महामुनि । ३

में गिर कर विषण्ण होजाऊँगा। आपके चरण ही ब्रह्मा आदि देवों के और नीलकण्ठ (शिव) के आश्रयदाता हैं। कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) का यह कहना सुनकर कमलाक्ष (श्रीकृष्ण) हँसे और बोले—१२७-१३१ तुम्हारे मन में सन्ताप क्यों होता है ? मैं और ब्राह्मण लोग तुम्हारे सहायक हैं। राजाओं के शिखामणि आप अब बिना संकोच के राजसूय अवश्य कीजिये। और जो भूपाल हैं वे अपेक्षित कर्मों में विना कपट के आपकी सेवा करेंगे। हमारा एक ही प्रतिबन्ध होगा। वह क्या है यह भी मैं प्रेम के साथ कहूँगा। १३२-१३५

जरासन्ध का वध

पूर्वकाल में मगध के राजा ने सन्तानोत्पत्ति के हेतु भृगु मुनि की सेवा की। तब उन मुनि के गोद में देवों का निर्मित एक आम गिर पड़ा। महामुनि ने, यह कहकर कि इसे अपनी पत्नी को दो तो तुम्हारे एक

नारिमारुमुण्टिरुवरवर्कळ्क्कु
नेरे पकुत्तु कोंटुत्तितु भूपनु । ४
पप्पातियायुळ्ळ देहवुमोरोरो
दुष्प्रज पेटारिरुवरुमप्पोळे । ५
कोण्टप्पुरत्तु कळञ्ञतिनेज्जर-
कण्टङ्ङेटुत्तिट्टु सन्धिच्चनेरत्तु । ६
रण्टुमोरुमिच्चुकूटीततुकण्टु
मण्टी जरयां पिशाचि कुमारनुं ७
अन्नु जरासन्धनेन्नु पेरुण्टायि-
तिन्नुळ्ळ मन्नरिल् मुन्पनवनल्लो । ८
मुष्करनेन्नोटु पोर्क्किरुपत्तिमू-
न्नक्षौहिणिप्पटयोटुमोरुमिच्चु । ९
वन्नान् पतिनेळुवट्टमतिन्नु ञान्
वन्न पटयोक्कक्कोन्नयच्चीटिनेन् । १०
अङ्ङनेयुळ्ळोरु वैरमुण्टेन्नोटु
निङ्ङळ्क्कुमेन्नुं तिरु तरिकिल्लवन् । ११
कोन्नु कळञ्ञु यागं कळिक्केन्नते
वन्नुकूटूवतिनर्ज्जुननुं ञानुं । १२
भीमनुमायिट्टु पोकणं वैकाते
भूमीपते ! विट नल्कीटुकेन्नप्पोळ् । १३

पुत्र-रत्न पैदा होगा, उसे मागध को दे दिया। राजा की दो पत्नियाँ थीं। इसलिए उसके ठीक दो विभाग करके उनको दे दिये गये। तब दोनों पत्नियों ने आधी-आधी देहवाले एक एक विकृत सन्तान को जन्म दिया।१-५ पत्नियों ने उनको बाहर फेंक दिया। तब जरा नाम की पिशाची ने उन अर्द्धों को जोड़ दिया। दोनों एक हो गये। यह देखकर जरा भाग गयी। उस कुमार का जरासन्ध नाम हुआ। आज के राजाओं में सबसे शक्तिशाली वही है। वह घमण्डी तेईस अक्षौहिणी सेना के साथ मेरे साथ लड़ने आया था। मैंने सत्तरह बार उन सेनाओं को नष्ट करके भगा दिया। उसका मेरे साथ इतना बैर है। वह आप लोगों को कभी कर नहीं देगा। उसका वध करने के बाद ही याग करना चाहिये। अतएव आवश्यक है कि अर्जुन, भीम और मैं जल्दी चलें। हे भूपाल हम लोगों को आज्ञा दीजिये। ६-१३ यह सुनकर

धर्म्मजनुं विट नल्किनान् वैकातॆ
विप्ररायुन्मदमोटवरेवरुं १४
नन्मतिलुमेऱि वन्मरवु तक-
र्त्तु विळिच्चुं कळिच्चु पुळच्चुचॆ-
न्ऩम्मागधन्ऱॆ नगरमकं पुक्कार् १५
अर्घ्यपाद्यादिकळ्कॊण्टवर् तङ्ङळॆ-
स्सल्क्कारवुंचॆय्तु चोदिच्चु मन्नवन् । १६
उळ्ळिलहङ्कारमुळ्ळारणर् निङ्ङ-
ळुळ्ळवण्णं पऱञ्ञीटुविनॆन्न्प्पोळ् । १७
माधवन् मन्दस्मितं चॆय्तु चॊल्लिना-
न्मागधनाय जरासन्धभूपते ! १८
चॊल्लियतॆल्लां कॊटुक्कुंपोलन्तण-
र्क्किल्ल विकल्पमॆन्नॆल्लारुं चॊल्लुन्नु । १९
तळ्ळलुण्टायतुमुळ्ळिलतुतन्नॆ
कळ्ळमॊळिञ्ञतु मुन्पे पऱयणं । २०
चॊल्लुविन् वाञ्छितं नल्कुवन् निङ्ङळुं
चॊल्लणमारॆन्नु नेरे मटियातॆ । २१
पिन्नॆयुं कृष्णनॆस्सूक्षिच्चु मागधन्
चॊन्नान् तनिक्कॊरु शङ्क मुळुक्कयाल् । २२
पण्टॊरेटत्तिन्नु कण्टवाऱुण्टॆन्न-
तुन्टु तव मुखं कण्टु तोन्नुन्नतुं । २३

युधिष्ठिर ने तुरन्त ही आज्ञा दी। तब ब्राह्मणों का वेष धारण करके तीनों निकले। बड़े-बड़े प्राकारों को लाँघते हुए, बड़े पेड़ों को नष्ट करते हुए, सिंहनाद करते हुए, खेलते हुए और गर्व दिखलाते हुए वे मागध (जरासन्ध) के नगर में पहुँचे। तब राजा ने उनका अर्घ्य पाद्य आदि से सत्कार करके पूँछा। आप लोग भीतर अहङ्कार रखनेवाले ब्राह्मण हैं। आप क्या चाहते हैं? सच कहिए। तब श्रीकृष्ण मुस्कराकर बोले, हे मगध के राजा जरासन्ध! ब्राह्मण जो कुछ भी माँगें आप तुरन्त दे देते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं, सब लोग यही कहते हैं। १४-१९ इसी कारण हम लोग भी भीतर से प्रेरित हुए। बिना कपट के पहले ही कह दीजिए। (राजा ने कहा) अपनी इच्छा बतलाइए। मैं दे दूँगा। आप लोग कौन हैं यह भी बिना छिपाये बतलाइए। फिर कृष्ण

इन्न निलत्तुनिन्नॆन्ततुमिन्नना-
ळॆन्ततुमॊन्नुमे तोन्नुन्नतुमिल्ल २४
अक्कथ केट्टरुळ्चॆय्तितु कृष्णनु-
मॊक्कुमॊक्कुमतिनुण्टवकाशवुं । २५
पण्टु मधुरय्क्कु कृष्णनोटु पट
कॊण्टु चॆन्नोरुनाळ् मण्टुन्ननेरत्तु । २६
कण्टुनिल्क्कुन्नितु ञानुमॆन्नाकिलां
कण्टीटुवानवकाशं धरापते ! २७
ऎन्नतुकेट्टु चॊन्नान् जरासन्धनु-
मन्नु मम बलं कण्टतल्ली भवान् ? २८
वीररॆ मण्टिच्चुपोरुन्न कृष्णनुं
पाराते पाञ्ञुकळञ्ञतु कण्टीले ? २९
कण्टेनटुत्तङ्ङॆतिर्त्तोरुनेरत्तु
कॊण्टल्नेर्व्वर्णननुं नीयुमोटुन्नतुं । ३०
ओटिच्चतारन्नुमोटियतारॆन्नु-
मूटॆ तिरिच्चुपोन्नेतुं तिरिञ्ञील । ३१
संशयमुण्टु भवानुळ्ळिलॆङ्किलो
संशयं तीर्क्कामन्नुण्टायतु केळ्क्क । ३२
केळ्क्किलुं केळाय्किलुमिनिक्किन्नियुं
पोर्क्कळत्तिङ्कले संशयं वेरिट्टू । ३३

को ध्यान से देखकर मागध (जरासन्ध) को शंका हुई और वह बोला—"तुम्हारा चेहरा देखकर मुझे लगता है कि मैंने तुम्हें पहले कहीं देखा था। परन्तु कहाँ देखा था और किस दिन देखा था यह मुझे बिलकुल ही नहीं याद आता है।" यह सुनकर कृष्ण ने कहा—"ठीक है और कारण भी है कि आपको ऐसा लगता है। पहले एक दिन आप सेना के साथ कृष्ण का सामना करने के लिए मथुरा गये। २०-२६ जब आप भाग रहे थे तब मैं खड़ा सब देख रहा था। यही अवसर होगा जब आपने मुझे देखा था।" यह सुनकर जरासन्ध ने कहा, "उस दिन आपने मेरा बल नहीं देखा था? जो कृष्ण वीरों को भगाता है वही उस दिन जल्दी भाग गया, देखा नहीं? जब निकट से युद्ध हुआ तब मैंने मेघवर्ण को और तुझको भागते देखा। लौटकर यह भी न मालूम किया कि किसने भगाया और कौन भागा।" (मागध ने फिर कहा) "अगर आपको इस विषय में

निल्क्कतेल्लामवकाशं वरुन्नना-
ळोक्कवे तीरुं पऽविनारेन्नतु । ३४
अङ्ङळपेक्षिच्चतु तरामेन्नतु-
मिङ्ङोट्टोरु सत्यं चेय्तुतरुन्नाकिल् । ३५
अङ्ङळु सत्यं पऽयुन्नतुण्टेन्नु
मंगलदेवताकामुकनुं चोन्नान् । ३६
जीवनेन्तन्ने तरेणमिनिक्कोन्नु
पावननायोरु भूसुरन् चोल्लुकिल् । ३७
एतुं मटियाते ञान् कोटुत्तीटुवन्
भूतेश्वरनाय शङ्करन् तन्नाणे । ३८
सत्यमितेन्नाशु केट्टवाऽे पुरु-
षोत्तमनाकिय कृष्णनुं चोल्लिनान् । ३९
नेरे पऽयां परमार्त्थमेङ्किलो
पोरिल् पतिनेळुरु निन्नेत्तोलिपच्च । ४०
कृष्णनहमयं जिष्णु शक्रात्मजन्
जिष्णुतन्नग्रजन् भीमनिवनेटो । ४१
मन्नवनाकिय धर्म्मजन् चोल्कयाल्
निन्नोटु युद्धमपेक्षिच्चु वन्नितु । ४२
देहि युद्धं नृपवीरशिखामणे !
मोहमतिङ्कल् अङ्ङळ्क्कोन्नयुं पारं । ४३

सन्देह हो तो मैं उसे दूर करूँगा । उस दिन का किस्सा सुनिये ।" २७-३२ मैं सुनूँ या न सुनूँ । इस विषय में सन्देह तो रणक्षेत्र में ही दूर हो सकता है (ऐसा कृष्ण ने कहा) । अच्छा फिर ठहरिये । "अवसर आने पर सब स्पष्ट हो जायगा । अब कहिये आप लोग कौन हैं ?" तब मंगल देवता (लक्ष्मी) के वल्लभ (कृष्ण) ने कहा—"अगर आप प्रतिज्ञा करेंगे कि जो कुछ भी हम माँगें आप देंगे तो हम भी सच्ची बात कहेंगे ।" (तब मागध बोले) "अगर एक पावन ब्राह्मण हमारे प्राण ही को माँग बैठे तो मैं तुरन्त ही देदूँगा, भूतेश्वर शंकर की कसम !" ऐसा सुनकर पुरुषोत्तम कृष्ण ने निवेदन किया । ३३-३९ "अच्छा तो मैं सीधी बात कहूँगा । मैं वही कृष्ण हूँ जिसने तुम्हें सत्तरह बार युद्ध में हराया था, यह इन्द्रपुत्र अर्जुन है और उसका बड़ा भाई भीम यह विराज रहे हैं । राजा युधिष्ठिर की आज्ञा से हम लोग तुमसे युद्ध माँगने आये हैं । हमको युद्ध दे दो, हे

ऎन्नोटो फल्गुननोटो वृकोदरन्
तन्नोटो युद्धं तुटङ्ङुन्नु नीयिप्पोळ् ? ४४
एवं जगन्मयभाषितं केट्टुटन्
भावं पकर्न्नु पऱञ्ञितु मागधन् । ४५
गोपन् भवान् जिष्णु कोमळनेन्नुटे
कोपं पॊरुप्पान् वृकोदरनाकिलां । ४६
ऎन्नु पऱञ्ञॊरु मन्नवन् मागधन्
चॆन्नुटनायुधशालयकं पुक्कान् । ४७
रण्टु गदकळॆटुत्तुकॊण्टुवन्नु
रण्टिलुं वेण्टतॆटुत्तुकॊळ् भीम ! नी । ४८
ऎन्नवन् चॊन्नप्पोळ् माधवन् भीमनॆ
चॆन्नालुमॆन्नॊन्नु तट्टि करं कॊण्टु । ४९
पिन्नेयुण्टाय विशेषं पऱवति-
नॆन्नाल् पणि पणि चित्रं निरूपिच्चाल् । ५०
वट्टत्तिल्निन्नु पॆरुमाऱियुं गद-
तट्टियुं तङ्ङळिल् दृष्टि पऱियातॆ । ५१
तप्पान् पळुतुकळ् नोक्कियुमॆत्रयुं
कॆल्प्पुकलन्नवरत्भुतमांवण्णं । ५२
मुप्पुरवैरियुमन्तकनुं पण्टु
मुप्पार् नटुङ्ङुमारुण्टाय पोर्पोलॆ । ५३

राजवीरों में श्रेष्ठ ! उसी युद्ध पर हम लोगों का बड़ा मोह हो गया है। किसके साथ तुम युद्ध प्रारम्भ करोगे; मुझसे, फल्गुन (अर्जुन) से या वृकोदर (भीम) के साथ ?" जगन्मय (कृष्ण) की यह बात सुनकर मागध ने भावावेश में आकर कहा। आप केवल एक गोप हैं, अर्जुन तो कोमल शरीरवाला है, भीम ही एक हैं जो हमारा क्रोध सह सकते हैं। ४०-४६ यह कहकर राजा मागध ने तुरन्त ही अपनी आयुधशाला में प्रवेश किया। वहाँ से दो गदाएँ लाकर भीम से कहा—'इनमें से जो तुम्हें पसन्द है, ले लो"। यह कहकर मागध ने भीम को हाथ से थपथपाते हुए कहा—"अच्छा फिर चलो"। उसके बाद जो हुआ है उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन काम है। सोचने पर अद्भुत प्रतीत होता है। उन दोनों का कभी चक्राकार घूमना, उनकी गदाओं का टक्कर खाना, उनका अपने को न देखकर दूसरे की गलतियाँ पकड़ना, उन दोनों का

भीमनुं भीमनाकुं जरासन्धनुं
भूमि कुलुङ्ङुमाऱोत्ति वीळुन्नतुं । ५४
नीङ्ङिक्कळकयुं वाङ्ङिच्चुरुङ्ङियुं
तूङ्ङियटुक्कयुं नीङ्ङातें निल्क्कयुं । ५५
चालनापातनोत्थापनभ्रामण-
चालनालोकनालेपनाद्यङ्ङळां ५६
ओरो तोंळिलुकळ् काट्टुन्ननेरत्तु
वीररायुळ्ळवर् कण्णु कुळुर्क्कुन्नू । ५७
वारिजलोचननुं विजयन् मुख-
वारिजं पार्त्तुकोंण्टाटिच्चिरिक्कुन्नु । ५८
मुष्करमाय गदकळ् तम्मिल्क्कोंण्टु
पुष्करं पोंट्टुमारुळ्ळोरु शब्दवुं । ५९
सिंहवुमानयुमेट् कणक्किनें
सिंहनादङ्ङळुं चेंय्तुचेंय्तङ्ङनें । ६०
पारमटिक्कयुं चोरयोंलिक्कयुं
वीरर्तोंळिल् कण्टु कण्णु कुळुर्क्कयुं । ६१
कूटक्कोंटुक्कयुं मूटित्तटुक्कयुं
चाटिक्कळिक्कयुं केटिल्प्पळिक्कयुं । ६२
कोटियोंळिक्कयुं माटिविळिक्कयुं
वाटिवियर्क्कयुमोटिक्कळिक्कयुं । ६३

बड़ी शक्ति के साथ ऐसा लड़ना जैसा पहले त्रिपुरारि (शिव) और यमराज तीनों लोकों को हिलाते हुए लड़े थे, ४७-५३ भीम और भयंकर जरासन्ध का पृथिवी को कँपाते हुए साथ गिरना, कभी एक दूसरे से हटना, कभी झुकना, कभी आगे को झुककर पास जाना, कभी एक ही स्थान पर डट जाना, चालन, आपातन, उत्थापन, भ्रामण, पालन, आलोकन, आलेपन आदि तरह-तरह की चाल दिखलाते समय वीर प्रेक्षकों की आँखों को बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। कमलाक्ष (श्रीकृष्ण) तो अर्जुन का कमलमुख देखते हुए हँसते रहे। जब उनकी बड़ी गदाएँ टक्कर खातीं तो वायुमण्डल को तोड़ने-योग्य शब्द होता। ५४-५९ सिंह और हाथी के युद्ध के समान सिंहनाद होते रहे। लोहे के आयुधों का प्रयोग, बहुत रक्तपात, ऐसे वीरकार्यों को देखकर प्रेक्षकों को नयनानन्द प्राप्त हुआ। इनके लगातार परस्पर आघात होते रहे और इनसे बचते भी रहे। वे कभी कूदते, कभी शत्रु

निल्लेटा निल्लुनिल्लेन्न ङ्ङुरय्क्कयुं
तल्लु वरक्कण्टु तुळ्ळिप्पतिक्कयुं । ६४
वल्लभं कैक्कोण्टु वेगालोळिक्कयुं
चोल्लिक्कोण्टन्योन्यमाशु ताडिक्कयुं । ६५
इङ्ङने चेन्नू पतिनञ्चु नाळप्पोळ्
ऎङ्ङने वन्नु ञायमेन्नु संशयं । ६६
अर्ज्जुननुण्टायितुळ्ळलतुनेर-
मच्युतनोटु चोदिच्चरुळीटिनान् । ६७
कोण्टल्नेर्व्वर्ण्णनुपदेशवुं चोन्नान्
रण्टाय् पोळिच्चु मरिच्चिट्टुवानप्पोळ् । ६८
पच्चिल कीरि मरिच्चिट्टानर्ज्जुनन्
विच्चयाय् मारुति मागधन्तन्नेयुं । ६९
तच्चुनिलत्तु पतिप्पिच्चोरु पदं
निश्चलमाकच्चवुट्टिनिन्नप्पोळे । ७०
मट्टेच्चरणं पिटिच्चङ्ङुयर्त्तीट्टु
पेट्टेन्नु चीन्तिनान् मारुतपुत्रनुं । ७१
क्षुत्तुकोण्टेट्टवुं मत्तनाय् मेवुन्न
हस्तिवरन् पन चीन्तुन्नतुपोले । ७२
क्रुद्धतयोटतिशक्तनां भीमनुं
मृत्युपुरत्तिनयच्चानवनेयुं । ७३

के छिद्रों पर मारते, कभी आयुधों की नोक से बचते, कभी ताल बजाकर पुकारते। उनको कभी थकावट हो जाती, कभी पसीना आजाता। वे कभी, दौड़ते हुए लड़ते, कभी 'ठहरो' 'ठहरो' ऐसा चिल्लाते, कभी आघात को आता देखकर बचने के लिए कूदते, कभी वल्लभ (एक प्रकार का आयुध) लेकर रोकते और कभी आपस में बोलते हुए मारते जाते थे। इस प्रकार पन्द्रह दिन बीत गये। अन्त में बोध कैसे हुआ, यह कहना कठिन है। ६०-६६ अर्जुन को एक बात सूझी, जिसे उन्होंने कृष्ण से पूँछा। उस पर मेघवर्ण (कृष्ण) ने उपदेश दिया कि जरासन्ध को फाड़कर फेंक दिया। तब भीम ने (कुशलता के साथ) मागध को मारकर नीचे गिराया और उसके एक पाँव को अपने पैर से दबाकर निश्चल करके दूसरे पाँव को पकड़कर उठाया और झट से फाड़ डाला जैसे कि एक घायल और पीड़ित हाथी तालवृक्ष को फाड़ डालता है। इस प्रकार

दुष्टन् पिटिच्चु कॆट्टीटुन्न मन्नरॆ
पॆट्टॆन्नऴिच्चुविट्टीटिनान् कृष्णनुं । ७४
नारायणा जय ! नाथा हरे जय !
नारदसेवित नारकनाशन ! ७५
नारीजनमनोमोहन ! माधव !
पारेऴुरण्टिनु कारणने ! जय ! ७६
दामोदरा ! जय ! पीताम्बर ! जय !
नामसहस्रमियन्नवने ! जय ! ७७
रामा ! रमारमण ! त्रिलोकीशा-
त्माराम ! लोकाभिराम ! त्रिदशेश्वर ! ७८
विष्णो ! जय जय ! विश्वंभरापते !
वृष्णिकुलाधिप ! कंसान्तका ! जय ! ७९
विष्णुमुखामरसञ्चयवन्दित !
जिष्णुवयस्य ! मुकुन्द ! जय जय ! ८०
कुन्दप्रसूनमन्दस्मितास्य ! मुचु-
कुन्दनृपाधिपवन्दितपादार- ८१
विन्द ! गोविन्दारविन्दविलोचन !
नन्दसुतारविन्दोदरसुन्दर ! ८२
दन्दशूकेन्द्रशयन ! जयजय !
इन्दुचूडप्रिय ! वन्दामहेपद- ८३

अत्यन्त क्रुद्ध होकर शक्तिशाली भीम ने जरासन्ध को यमपुरी भेज दिया । ६७-७३ और कृष्ण ने तुरन्त ही उन राजाओं को मुक्त कर दिया जिनको उस दुष्ट ने बाँध दिया था । हे नारायण ! हे नाथ ! हे हरि तुम्हारी जय हो ! हे नारद द्वारा सेवित! हे नरक को नष्ट करनेवाले ! हे नारियों के मन के मोहन! हे माधव! हे चौदहों लोकों के कारण! तुम्हारी जय हो! हे दामोदर! हे पीताम्बर! तुम्हारी जय हो ! हे हजार नाम रखने वाले ! जय ! हे राम ! हे रमारमण ! हे त्रिलोकीश ! हे आत्माराम ! हे लोकाभिराम ! हे देवों के ईश्वर ! हे विष्णो ! हे पृथिवीपते ! जय जय ! हे वृष्णिकुल के नाथ ! हे कंस के नाशक ! तुम्हारी जय हो ! हे विष्णु आदि देवगण द्वारा वन्दित ! हे अर्जुन के मित्र ! हे मुकुन्द ! तुम्हारी जय हो ! ७४-८० हे कुन्दपुष्प के समान मन्दस्मित (मुसकान) वाले ! हे मुचुकुन्द राजवर द्वारा वन्दित चरणवाले ! हे

मिन्दिरावासवक्षःस्थल ! सन्ततं ।
इन्दीवरेक्षण ! वन्दामहे वय- ८४
मिन्दिन्दिराळका ! वृन्दारकमुनि-
वृन्दनिषेवित ! चन्द्रकुलोत्भव- ८५
च्छन्दस्स्वरूप ! सततमरविन्द-
मन्दिरावन्द्य ! जय परमानन्द ! ८६
वन्दारुवृन्दमन्दारतरो ! जय !
वृन्दावनवास ! वल्लवसुन्दरी- ८७
कन्दर्प्पविष्टपकुन्द ! जय जय !
विन्दुनादात्मक ! कृष्णा जय जय ! ८८
मुट्टुं निनक्कॊळिञ्ञङ्ङने केवलं ।
मट्टॊरुवर्क्कुमिल्लाश्रितवात्सल्यं ८९
तामसमाय गुणोत्भवमायुळ्ळ ।
काममोहक्रोधलोभमानादियुं ९०
भूमिपालभूमाहंकारभाववुं ।
कामिनिमारिलुळ्ळोरहङ्कारवुं ९१
माधव ! त्वन्महामायतन् वैभवं ।
बाधिक्करुतिनि ञङ्ङळॆ दैवमे ! ९२
जन्मनि जन्मनि निन्पादपङ्कजं ।
ब्रह्मादिसेवितं सेविच्चुकॊळ्ळुवान् ९३

गोविन्द ! हे कमलाक्ष ! हे नन्दनपुत्र ! हे अरविन्द के अभ्यन्तर (भीतरी भाग) के समान सुन्दर ! हे सर्पराज पर सोनेवाले ! तुम्हारी जय हो ! हे शिवजी के प्रिय ! हे लक्ष्मी के अपने वक्षःस्थल पर धारणकरनेवाले ! हम आपके पादपद्म की वन्दना करते हैं। हे कमललोचन ! हम वन्दना करते हैं। हे भँवर के समान केशवाले ! हे देवगण और मुनियों के वन्दित ! हे चन्द्रकुलोद्भव ! हे छन्दःस्वरूप ! हे निरन्तर अरविन्द-मन्दिरा (लक्ष्मी) के वन्द्य ! हे परमानन्द ! तुम्हारी जय हो ! हे स्तुति करनेवाले भक्तों के मन्दारवृक्ष ! जय ! हे वृन्दावन के रहनेवाले ! गोपियों के मदनस्वर्ग के कन्द ! जय जय ! हे विन्दुनादात्मक ! हे कृष्ण जय ! जय ! सभी देवताओं में आपको छोड़कर और किसी का आश्रितों के प्रति इतना वात्सल्य नहीं है। ८१-८९ तमोगुण से उत्पन्न काम, मोह, क्रोध, लोभ, मान आदि और राजाओं का बड़ा अहंकार और कामिनियों

कल्मषनाशन ! निन्नुटे कारुण्यं ।
नम्मेक्कुरिच्चिवन्नुमुण्टायिरिक्कणं ९४
दुःखसुखादिकळोक्कक्कळञ्ञिनि
तृक्कालिणयोटु चेर्त्तुकोळ्ळेणमे ! ९५
इङ्ङने कूप्पि स्तुतिच्चु तेळिञ्ञवर्
तिङ्ङिन भक्त्या नमस्करिक्कुनेरं । ९६
मंगलदेवतावल्लभन् चोल्लिनान्
निङ्ङळिनियङ्ङु वैकाते पोयालुं । ९७
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळ राज्यमकंपुक्कु
मंगलत्तोटे वसिच्चालुमेवरुं । ९८
अङ्ङने नालञ्चुनाळ् कळिञ्ञाल्प्पिन्ने
मङ्ङात वन्पटयोटुं वन्नीटणं । ९९
उत्तमनाय धर्म्मात्मजन्तन्नुटे
सत्त्रत्तिनाशु कोप्पिट्टु वन्नीटुविन् । १००
इत्थं नियोगिच्चु मागधन्तन्नुटे
पुत्रनायोरु सहदेवनेक्कोण्टु १०१
पित्रार्थमाय शेषक्रिय चेय्यिच्चु
पृथ्वीपतियायभिषेकवुं चेय्तु । १०२
मुन्नंजनकनिरुद्धन्मारायोरु
मन्नवन्मारेयुं सल्क्करिच्चीटिनान् । १०३

का अहंकार यह सब, हे माधव ! तुम्हारी माया का वैभव है । और यह अब हमारी बाधा न करे ! हे पापनाशन ! हम लोगों के प्रति सदैव तुम्हारी दया हो ताकि हम हरएक जन्म में तुम्हारे ब्रह्मादिसेवित पादपंकज की सेवा कर सकें । ९०-९४ हमारे दुःख सुख आदि को दूर करके हमें अपने पूज्य पादपद्मों में लीन होने दीजिए । इस प्रकार वे हाथ जोड़कर स्तुति करके प्रसन्न हुए और बड़ी भक्ति के साथ उन्होंने नमस्कार किया । तब मंगलदेवता (लक्ष्मी) के वल्लभ (श्रीकृष्ण) ने कहा, "अब आप लोग बिना विलम्ब के अपने-अपने राज्य में प्रवेश कीजिए और सुख-मंगल के साथ रहिये । इस प्रकार चार पाँच दिन बीतने के बाद एक बड़ी सेना के साथ आइए । उत्तम युधिष्ठिर के यज्ञ के लिए तैयार होकर आ जाइए । ९५-१०० इस प्रकार आज्ञा देकर कृष्ण ने जरासन्ध के पुत्र सहदेव के द्वारा अपने पिता की शेषक्रियाएँ कराकर उसका राजा के रूप

अभ्यंगस्नानादि वस्त्राभरणङ्ङळ्
पिल्पाटु मृष्टाशनं कळिच्चादराल् । १०४
यात्रयुं चॊल्लि मुकुन्दनॆयुं नन्नाय्
वाळ्त्ति वणङ्ङि स्तुतिच्चवरुं पोयार् । १०५

दिग्जयं

मागधन्तन्नॆयुं कॊन्नु जयत्तोटे
माधवन्मार् वन्नु मन्ननॆयुं कण्टार् । १
दिक्कुकळ् नालिलुमोरोरनुजन्मा-
रुग्रमायुळ्ळ पटयोटॆ पोकणं । २
मक्कळुं मट्टुळ्ळ बन्धुक्कळुमायि
मुख्यबलेन वरुन्नतुमुण्टु ञान् । ३
इत्थमरुळ्चॆय्तु मुग्धविलोचनन्
नित्यन् निरामयन् निर्म्मलनीश्वरन् ४
दुग्धांबुराशितिरुमकळ्वल्लभन्
भक्तप्रियन् पद्मनाभनॆळुन्नळ्ळि । ५
पार्त्थनुमुत्तरदिक्कु जयिप्पति-
न्नार्त्तु नालंगबलेन पुरप्पॆट्टान् । ६
मेरुमहामलयोळवुं चॆन्नवन्
नेरे पॊरुतु जयिच्चु तिर कॊण्टान् । ७

में अभिषेक भी किया। उसने पहले अपने पिता के द्वारा निरुद्ध राजाओं का सत्कार किया। वे भी अभ्यङ्ग स्नान (तेल लगाकर स्नान) करके वस्त्र और आभूषण पहनकर फिर यथेष्ट भोजन करके बड़ी प्रसन्नता के साथ चले गये। १०१-१०५

दिग्विजय

मागध (जरासन्ध) का वध करके विजय के साथ माधव आदिकों ने राजा का दर्शन किया। "आप का एक-एक भाई उग्र सेना के साथ एक-एक दिशा को चला जाय। मैं भी अपने पुत्रों और अन्य बन्धुओं के साथ एक बड़ी सेना के साथ आऊँगा।" ऐसा कहकर मुग्धविलोचन, नित्य, निरामय, निर्मल, ईश्वर, क्षीरसागर की पूज्य पुत्री के वल्लभ, भक्त-प्रिय पद्मनाभ (कृष्ण) सिधारे। अर्जुन भी उत्तर दिशा को जीतने के

वेगेन चेन्नुत्तरकुरुराज्यवु-
मार्के जयिच्चु रत्नङ्ङळ् वाङ्ङीटिनान् । ८
अट्टमिल्लातोळं दिव्यरत्नङ्ङळुं
कोण्ट्वनाय नृपनु नल्कीटिनान् । ९
भीमन् किळक्कोट्टु पोयिप्पटयुमाय्
भूमिपालन्मारेयोक्कज्जयिच्चवन् । १०
अर्त्थमनेकं चुमप्पिच्चुकोण्टुव-
न्नुत्तमनां धर्म्मपुत्रक्कु नल्किनान् । ११
तेक्कुदिशि सहदेवनुं पोयोरो-
मुष्करन्माराय राजाक्कळे वेन्नान् । १२
लङ्कयिल् चेन्नु विभीषणन् तन्नोट्टु
शङ्ककूटाते घटोत्क्कचन् चोल्लिनान् । १३
पुण्डरीकेक्षणन्तन् कृपयुण्टाक-
कोण्टु युधिष्ठिरनाकुन्न मन्नवन् १४
राजसूयत्तिनु कोप्पिट्टितिक्कालं
पूजितनाय नीयुं तिरु नल्कुक । १५
कृष्णनामं केट्टु भक्तन् विभीषणन्
रत्नङ्ङळट्टमिल्लातोळं नल्किनान् । १६
उण्टाय रत्नङ्ङळोक्कस्सहदेवन्
कोण्टन्नु धर्म्मजन्कालक्कल् वच्चीटिनान् । १७
पश्चिमदिक्किनु पोयि नकुलनुं
निश्चलनाय्पेरिकत्र्थवुमाय् वन्नान् । १८

लिए चतुरंग सेना के साथ निकले। मेरु पर्वत तक जाकर युद्ध में विजय पाकर (वहाँ के राजाओं से) कर ले लिया। १-७ फिर उत्तरकुरु राज्य जाकर उसे जीतकर असंख्य रत्न ले लिये। अनन्त दिव्यरत्न विजयी राजा (युधिष्ठर) को दे दिये। भीम तो पूरब की तरफ़ सेना के साथ गये और वहाँ के राजाओं को जीतकर विपुल धन लदवाकर लाये और उत्तम धर्मपुत्र को उन्होंने दे दिया। दक्षिण दिशा में जाकर सहदेव ने अनेक शक्तिशाली राजाओं का वध किया। घटोत्कच तो लङ्का गया और वहाँ निःशङ्क विभीषण से बोला। ८-१३ कमललोचन (कृष्ण) की कृपा के कारण राजा युधिष्ठिर ने अब राजसूय यज्ञ करने के लिये तैयारी की है। पूज्य! आप भी कर देदें। कृष्ण का नाम सुनकर भक्त विभीषण ने निस्सीम

भूमियेयोक्कज्जयिच्चु तिरु वाङ्ङि
सोमकुलोत्भवनाय युधिष्ठिरन् १९
कोमळन्मारामवरजन्मारोटुं
वामांगियायुळ्ळ पाञ्चालितन्नोटुं २०
कञ्जविलोचनन् पादपत्मङ्ङळि-
लञ्जलिचेर्त्तिरिक्कुन्न करत्तोटुं २१
तल्गुणनामङ्ङळाय जपत्तोटुं
निर्गुणत्तिङ्कलुरच्च मनस्सोटुं २२
वाळुन्न कालत्तु कृष्णन् तिरुवटि-
याळिमाताकुन्न रुक्मिमणियादियां २३
वल्लविमार् पतिनारायिरत्तेण्व-
रेल्लावरुं पतुप्पत्तु पेटुण्टायि २४
चोल्लुवानावतल्लात सुतरोटुं
वल्लवीवल्लभन् वल्लभमारोटुं २५
उद्धवर् सात्यकियेन्नु तुटङ्ङियु-
ळ्ळुत्तमन्माराममात्यजनत्तोटुं २६
मन्त्रिकळ् सेनापतिकळोटुं निज
बन्धुवर्गत्तोटुं भृत्यजनत्तोटुं २७
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटयोटुं
आनकशंख पटहादिकळोटुं २८
अेन्तोरु घोषं परवानेळुन्नळ्ळ-
त्तन्तणरोटुं मुनिवरन्मारोटुं २९

रत्न दे दिये। जितने भी रत्न मिले सहदेव ने सब लाकर युधिष्ठिर के चरणों पर समर्पित किये। नकुल तो पश्चिम दिशा को चले और विपुल धन के साथ निश्चल होकर वापस आये। १४-१८ इस प्रकार सारी पृथिवी को जीतकर चन्द्रवंश के राजा युधिष्ठिर अपने सुकुमार भाइयों के साथ, और वामांगी (सुन्दरी) पाञ्चाली के साथ, कमललोचन कृष्ण के चरणकमलों पर अञ्जलि के रूप में लगे हाथों के साथ, उनका नाम संकीर्तन करते हुए, निर्गुण का निरन्तर ध्यान करते हुए जब विराज रहे थे तब समुद्र की पुत्री लक्ष्मी की ही दूसरे रूप रुक्मिणी के साथ, तथा सोलह हज़ार एक सौ आठ गोपियों में प्रत्येक के दस-दस के हिसाब से जिनकी गिनती करना असंभव है इतने पुत्रों के साथ, अपनी वल्लभाओं

अन्धकवृष्णिभोजादिकळ्तम्मोटुं
चेन्तारिल्मानिनितन्नुटे वल्लभन् । ३०
नन्दनु नन्दननिन्दिरामन्दिर-
निन्द्रादिवृन्दारकवृन्दवन्दित ३१
निन्दुकलाधरवन्द्यन् मुकुन्दना-
नन्दस्वरूपन् जगन्मयन् गोविन्दन् ३२
अव्ययनव्यक्तनद्वयनीश्वरन्
दिव्यजनङ्ङळ्मनसि वसिप्पवन् ३३
सव्यसाचिप्रियन् हव्यवाहप्रभन्
क्रव्यादनाशननुर्व्वीधरधरन् ३४
उन्पर्कोन्तन्पुरानंभोजलोचनन्
उन्परिलन्पन् परन्पुरुषन् कृष्णन् ३५
कुंभीन्द्रडंभंकेटुत्त वन्पन् विभ
कुंभीन्द्रतापापहारी मधुवैरि ३६
पाण्डवन्तन्नुटे राजसूयत्तिनु
खाण्डवप्रस्थमाकुन्न पुरिपुक्कान् । ३७
आनन्दमुळ्क्कोण्टु वन्दिच्चवर्कळुं
वेणुन्नतेल्लामोरुक्कित्तुटङ्ङिनार् । ३८
हस्तिनं पुक्कु नकुलन् वरुत्तणं
मित्रमायुळ्ळ जनत्तेयुं वैकाते । ३९

और उद्धव, सात्यकि आदि उत्तम मन्त्रियों के साथ, १९-२६ अमात्यों, सेनापतियों, अपने बन्धुओं, भृत्यों, हाथियों, रथों, सैनिकों, घोड़ों, आनक, शंख, परह आदि वाद्यों, ब्राह्मणों, मुनिवरों, और अन्धक, वृष्णि, भोज आदिकों के साथ लक्ष्मीदेवी के वल्लभ, नन्दपुत्र, इन्दिरा के पति, इन्द्र आदि देवों के द्वारा पूजित, चन्द्रकला को धारण करनेवाले (शिव) के वन्द्य, मुकुन्द, आनन्दस्वरूप, जगन्मय, गोविन्द, २७-३२ अव्यय, अव्यक्त, अद्वय, ईश्वर, भक्तजनों के मन में निवास करनेवाले, सव्यसाचि (अर्जुन) के प्रिय, अग्नि के समान तेजवाले, राक्षसों के नाशक, पर्वत को धारण करनेवाले, देवों के पति कमललोचन, देवों के नाथ, परमपुरुष, कृष्ण, कुंभीन्द्र (गजराज) का गर्व मिटानेवाले, विभु, कुंभीन्द्र (गजेन्द्र) का दुःख दूर करनेवाले, मधु के शत्रु, युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित होने के लिए खाण्डवप्रस्थ नामक नगर पहुँचे। पाण्डवों ने बड़े आनन्द के साथ

गान्धारिमुत्पाय मातृजनत्तेयुं
गान्धारनादियां बन्धुवर्गङ्ङळुं ४०
अच्छन् दुरियोधनादिकळ् कर्णनुं
स्वच्छचित्तन्मारां द्रोणरुं भीष्मरुं ४१
विश्वविल्लाळियायुळ्ळ कृपर्तानु-
मश्वत्थामावुममात्यवरन्मारुं ४२
विश्वासमुळ्ळ विदुररुं वैकाते
निश्शेषमाय पटयुमायादराल् । ४३
दुश्शासननोटु वेरे पर्ञ्ञिङ्ङु
निश्शङ्कमिन्नु कणिकनुमाय् वन्नु ४४
यागं कळिक्केन्नु चोन्नान् नकुलनु-
मागमिच्चारवरव्वण्णमेवरुं । ४५
आनर्त्तवीरन्मार् पाञ्चालभूपरुं
मानिच्चु साल्वन्मार् वीरन् विदर्भनुं ४६
सृञ्जयभूपनुं माद्रराजाक्कळुं
कुञ्जरवीररुं कोङ्कणमन्नरुं ४७
वन्पु नटिक्कुन्न सुंभन्मार् मागधन्
कन्पमिल्लातोरु काशिनृपन्तानु- ४८
मंगरुं वंगरुं वीरर् कलिंगरुं
मंगलनाकिय पुंड्रनृपन्तानुं ४९
कुन्तळवीरनुं कारूषभूपरुं
सिन्धुरभूपरुं नैषधवीररुं ५०

उनका स्वागत किया और आवश्यक पदार्थों का संग्रह करने लगे । ३३-३८ नकुल हस्तिनपुर चला जाय और मित्रजनों को निमन्त्रण दे । गान्धारी आदि मातृजनों को, गान्धार आदि बन्धुवर्गों को, पिता धृतराष्ट्र, दुर्योधन आदि, कर्ण, शुद्धचित्तवाले द्रोण, भीष्म, विश्व के एकमात्र धानुष्क (धनुर्धर) कृपाचार्य, अश्वत्थामा अमात्यवर, और विश्वास के पात्र विदुर, इन सबको बुलावे और कहे कि वे संपूर्ण सेना के साथ पधारें । दुश्शासन से अलग से कहे कि वह आज ही कणिक के साथ निश्शङ्क आवे और याग करावे । नकुल ने ऐसा ही कहा और उसी प्रकार सब लोग चले आये । ३९-४५ आनर्त्त देश के वीर, पाञ्चाल के भूपाल, मान्य साल्वभूपाल, वीर विदर्भ-पति, राजा सृञ्जय, मद्रदेश के भूपाल, कुञ्जर देश के वीर, काङ्कण के

कोसल केकय चेदिनृपन्मारुं
मेदुरन्मारां विराटराजाक्कळुं ५१
माळवन् चोळनु केरळन् पाण्डचनु
केळियेरुन्न मट्ठुळ्ळ नृपन्मारुं ५२
नारद व्यास धौम्यादिकळायुळ्ळ
घोरतपोधनन्मारोंटु शिष्यरुं ५३
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रादियुं
धार्म्मिकनायुळ्ळ धर्म्मजन्तन्नुटे ५४
राजसूयत्तिनु वन्नु निरञ्ञितु
राजितयाय महाराजधानियिल् । ५५
तङ्ङळाल् तङ्ङळालाय सत्कारङ्ङळ् ।
तङ्ङळ्तङ्ङक्कुळ्ळ कोप्पुं पदवियुं ५६
तिङ्ङिविळङ्ङिन वन्पटक्कोप्पुमा-
यिङ्ङने भूमियिलुळ्ळ राजाक्कन्मार् । ५७
कुंभत्तुं कॊन्पुं पॊतिञ्ञ चॆन्पॊन्निनाल्
वन्पुळ्ळ कुंभिकळ् मुन्पिलकन्पटि ५८
कल्लोलमालकळ् चॆल्लुन्नतुपोले ।
तुळ्ळिनटक्कुन्न वॆळ्ळक्कुतिरकळ् ५९
तेराळिकळाय पोराळिवीररुं
कालायमेरुन्न कालाळ्प्पटकळुं ६०

भूपाल, घमंडी सुंभ, मगध के राजा, निष्कम्प काशिराज, अंग, बंग और कलिङ्ग के वीर, मांगलिक पुंड्रदेश के राजा, कुन्तलदेश का वीर, कारूष के राजा सिन्धुभूपाल, नैषधवीर, ४६-५० कोसल, केकय, और चेदि के भूपाल, हृष्टपुष्ट विराट के राजा, मालव, चोल, केरल और पांड्य के नृपवर, और भी उल्लासवाले भूपाल, नारद, व्यास, धौम्य आदि घोर तपोधन और उनके शिष्य, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये सभी धार्मिक धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) के राजसूय में आये और उनसे राजधानी भर गयी। सब अपनी-अपनी पदवी के योग्य उपहार लाये और अपने-अपने योग्य आडम्बर के साथ रहे। इस प्रकार पृथ्वी के सभी भूपाल चमकनेवाली सेना के साथ पधारे। ५१-५७ बड़े-बड़े हाथी जिनके कुंभ (मस्तक) और दाँत चमकनेवाले सोने से ढके थे, आगे-आगे चल रहे थे मानो समुद्र के तरङ्ग आगे जा रहे हों। कूदते हुए सफ़ेद घोड़े, महारथी सैनिक वीर,

कण्टु तुटरॆत्तुटरॆ वरुन्नतु ।
कण्टु कूटातॊळमुळ्ळ पॆरुम्पट । ६१
शंखङ्ङळ् भेरि पॆरुंपऱ मद्दळं
दुन्दुभि नक्रयिटय्क्कयुट्टुक्कुकळ् ६२
कॊम्पुं कुळलुकळ् ताळवुं वीणयुं
तम्पुराने ! शिवशङ्करायॆन्नते ६३
चॊल्लावतुण्टाय घोषं निरूपिक्किल् ।
ऎल्लारॆयुमॊक्क सल्क्कारवुं चॆय्तु ६४
नल्ल वॆण्माळिकतोऱमिरुत्तिनान्
कल्याणमोटमात्यानुजन्मादिकळ् । ६५
कूपतटाकङ्ङळ् वेण्टुवोळमुण्टु ।
शोभकलन्नं नेटुं कोणिकळुण्टु ६६
किङ्करन्मारुण्टु वेण्टतॊरुक्कुवान्
सङ्कटमॊन्निनु मिल्लॊरुवर्क्कुमे । ६७
इप्रभावङ्ङळ् कण्टुळ्ळ्पूविलॆन्नयु-
मत्भुतमान्नॊरु धर्म्मजन्मानसं ६८
चिल्पुरुषङ्कलुऱच्चितु शान्तमाय् ।
तल्प्रभावङ्ङळितॊक्कयॆन्नोर्त्तिट्टु ६९
तल्पादपत्मङ्ङळुळ्ळ्पूविलाक्किनान्
पॊल्प्पूविल्मानिनितन् विळयाट्टवु- ७०

वेग से चलनेवाले पैदल सैनिक, जल्दी-जल्दी आते दिखाई दिये। इतनी बड़ी सेना थी कि उसका अन्त अदृश्य था। हे प्रभो! शंख, भेरी, बड़े बड़े नगाड़े, मर्द्दल, दुन्दुभि, नक्र, इटय्क्क, उटुक्कु, आदि वाद्यविशेष, सिंगियाँ, तुरहियाँ ताल, वीणाएँ इन सभी बाजों का ऐसा शब्द निकला कि सोचने पर 'हे शिव!' हे शङ्कर' के सिवाय और कुछ नहीं कहा जा सकता था। सबका यथोचित सत्कार करके अच्छे-अच्छे महलों में अमात्यों और अनुजों ने उनको ठहराया ताकि वे सुख से रहें। ५८-६५ वहाँ यथेष्ट कुएँ और तालाब थे और देखने योग्य लम्बें-लम्बे जीने थे। आवश्यक वस्तुएँ लाने के लिए पर्याप्त नौकर थे। किसी को भी किसी प्रकार की असुविधा नहीं हुई। इन प्रभावों को देखकर धर्मज (युधिष्ठिर) आश्चर्यचकित हुए और उनका मन शान्त होकर चित्पुरुष ही में स्थिर हुआ। उनके ये सब प्रभाव हैं, ऐसा समझकर उनके चरणकमलों को

मुल्पलनेत्राधिवासमुण्टाकया-
लिप्पोळ्िविटेयुण्टायतु निर्ण्णयं । ७१
शान्तनायुळ्ळ युधिष्ठिरनन्तेरं
शान्तनवन्तन्नॊ वन्दिच्चु चॊल्लिनान् । ७२
ताता ! विदुरा ! सुयोधना ! निङ्ङळि-
न्नादरवोटिनिक्कुळ्ळ धनं काण्क । ७३
निङ्ङळुटेयतिवयॊक्क निर्ण्णय-
मिङ्ङु वेणुन्नतु चॆय्क चोदिक्केण्ट । ७४
अच्छनिवयॊक्क सूक्षिच्चिरिक्कणं
वेच्चॊरु काळ्चयेटुक्क सुयोधनन् । ७५
मन्नवन्मार्क्कु वेणुन्नतु सञ्जय-
नॊन्नॊळियातॆयॊरुविक्कॊटुक्कणं । ७६
कृत्यमकृत्यमपकृत्यमॆन्निव
नित्यवुं भीष्मरुं द्रोणरुं चॊल्लणं । ७७
अश्वत्थामावरियेणं द्विजन्मारॆ
दुश्शासननिल पन्तियिल् वय्क्कण- ७८
मॆच्चिलॆटुप्पिच्चटिच्चुतळिप्पिच्चु
निश्शेषशुद्धिवरुत्तुकयुं वेणं । ७९
सज्जनपूजकळर्ज्जुनन् चॆय्यण-
मच्युतन् विप्ररॆ काल्कळुकिक्कणं । ८०

अपने मन में रख लिया। और सोचने लगे कि यहाँ जो महालक्ष्मी की कृपा हुई है वह कमललोचन के यहाँ रहने के कारण ही हुआ है, इसमें कोई सन्देह नहीं। ६६-७१ उस समय शान्त युधिष्ठिर ने शान्तनव (भीष्म) से कहा, "हे दादाजी ! हे विदुरजी ! हे सुयोधन ! आप लोग आज मेरा धन सादर देख लीजिए। यह सब आप लोगों का ही है। इससे जो कुछ करना है कर लीजिये, पूँछने की आवश्यकता नहीं। पिताजी इन सबका देखभाल करें और यह जो उपहार दिया गया है उसे सुयोधन ले लें। राजाओं को जो कुछ चाहिये वह उनको सञ्जय पहुँचा दे। और भीष्म और द्रोण मुझे सदैव बताते रहें कि क्या करना है, क्या न करना है और क्या गलती हुई है। ७२-७७ अश्वत्थामा ब्राह्मणों की सेवा करें और दुश्शासन को भोजन के लिए पंक्ति में बैठाया जाय। और जूठा उठवाकर सफ़ाई कर दी जाय और सभी स्थानों में शुद्धि रहनी

पाचकन्मारोटटुक्कळयिल् वेण्टता-
चरिच्चीटणं भीमन् मटियाते । ८१
स्वर्ण्णङ्ङळ् कोण्टुळ्ळ दानङ्ङळ् चेय्यणं
कर्ण्णनुमाचार्यनाय कृपरुमाय् । ८२
इन्नि वेणुन्नतु भीष्मरोटेल्लारुं
चेन्नु चोदिच्चुकोळ्केन्नते वेणुन्नु । ८३
इत्थं नियोगिच्चु धर्म्मजन्तानन्नु
शुद्धमनस्सोटु यागवुं दीक्षिच्चान् । ८४
ऋत्विक्कुकळ् सदस्यादिकळुं क्रिया-
बद्धत कैक्कोण्टु कर्म्मं तुटङ्ङिनार् । ८५
वेदद्ध्वनिकळुमाहुतिशब्दवुं
वेदियर् तम्मिल् पऱञ्ञुळ्ळ घोषवुं ८६
होमधूमङ्ङळुं पावकज्ज्वालयुं
सामगानप्रभेदद्ध्वनिपूरवुं । ८७
वेऱे पलतरमोरो रसङ्ङळिल्
चोऱुं करिकळुमुण्टङ्ङोरु दिशि ८८
वाद्यघोषं चतुरंगसेनारवं
चोद्योत्तरंकोण्टु संबन्धशब्दवुं ८९
घोषिच्चिवण्णं तुटङ्ङि महाक्रतु
पोषिच्चु देवकळुं मनुजादियुं । ९०

चाहिये । सज्जनों की पूजा अर्जुन करे और अच्युतजी ब्राह्मणों का पाद-प्रक्षालन करें । और भीम रसोई में जाकर याचकों से आवश्यक काम करावे । कर्ण तो आचार्य कृप के साथ उचित स्वर्णदान करें । और क्या होना चाहिये इसके संबन्ध में सब लोग भीष्मजी से जाकर पूँछें । इस प्रकार आज्ञा देकर युधिष्ठिर जी ने उस दिन शुद्ध चित्त के साथ यागदीक्षा ली । ७८-८४ ऋत्विक्लोगों और सदस्यों ने अपनी-अपनी जिम्मेदारी स्वीकार कर याग प्रारम्भ किया । वेदध्वनि, आहुतियों के शब्द, और वैदिकों के आपस में चर्चा करने के घोष होने लगे । होम के धुएँ, अग्नि की ज्वालाओं, और तरह-तरह के सामगानों की ध्वनि भी होने लगी । दूसरी तरफ़ भात और तरह-तरह की रसवाली भाजी आदि खाद्य पदार्थ तैयार हुए । वाद्यघोष, चतुरंग सेना का शब्द, प्रश्नों और उत्तरों के कारण लोगों का पारस्परिक शब्द, इस प्रकार के घोष के बीच

पञ्चेन्द्रियङ्ङळुमन्तक्करणवुं
पञ्चजनादितेयादि शरीरिणां ९१
प्रीतिवळर्न्नु तुटङ्ङि दिनंप्रति
नीतियिलिङ्ङने कर्म्मङ्ङळ् चेय्कयाल् । ९२
मुप्पत्तुनालु मासंकोण्टोटुङ्ङुवो-
रत्भुतराजसूयान्तःक्रियान्तरे ९३
योग्यमाकुन्नतारग्र्यपूजय्क्कॆन्नु
योग्यन्मारॆल्लारुं कूटि निरूपिच्चु । ९४
श्रोत्रियरुं नल्ल शास्त्रिकळुंकूटि
पात्रमितिन्नारॆन्नारुं तिरिच्चील । ९५
माद्रीतनयनाकुं सहदेवनु-
मार्द्रमनस्सोटु शान्तनवन् तानु- ९६
माद्यनजन् परमात्मा जगन्मयन्
वेद्यनल्लातनारायणन् वैकुण्ठन् ९७
मून्नु लोकत्तिनुं मूलमामीश्वरन्
मून्नाय मूर्त्तिकळॊन्नायि निल्पवन्- ९८
तानिरिक्कॆयॆन्तु संशयमुण्टावान्
नूनमवन्तन्ने योग्यनॆन्नारवर् । ९९
शाखिमुरट्टु ननच्चाल् मतियल्लो
शाखकळ्तोऱुं ननय्क्कुमऱिल्लल्लो । १००

में वह बड़ा यज्ञ प्रारम्भ हुआ। देवों और मनुष्यों की पञ्चेन्द्रियों और अन्तःकरण की पुष्टि हुई। पञ्चजन और आदितेय (देव) आदि शरीरियों की प्रीति प्रतिदिन बढ़ने लगी, नियम के अनुसार सब कर्म होने लगे। ८५-९२ चौंतीस महीनों में समाप्त होनेवाले इस अद्भुत राजसूय यज्ञ के बीच में योग्य अभ्यागतों में यह विचार होने लगा कि अग्र्यपूजा के लिए कौन योग्य है? अनेक श्रोत्रियों और शास्त्रियों के विचार करने पर भी यह निर्णय न हो सका कि अग्र्यपूजा का पात्र कौन है। तब माद्री पुत्र सहदेव और प्रेमवंत भीष्मजी ने कहा—"जब आद्य, अज, परमात्मा, जगन्मय, अवेद्य, नारायण, वैकुण्ठ, तीनों लोकों के मूल ईश्वर, तीनों मूर्त्तियों के एकीभूत स्वरूप, स्वयं यहाँ विद्यमान हैं, तब सन्देह का क्या स्थान है? वही अग्र्यपूजा के पात्र हैं। ९३-९९ यदि वृक्ष की जड़ को सींचा जाय तो हर एक शाखा को सींचने की आवश्यकता नहीं है"। जब राजा

गूढमायुळ्ळोरु गोविन्दमूर्त्तियॆ
पीठत्तिन्मेल्वच्चु तृक्काल् कळुकिच्चु १०१
पूजिच्चु वन्दिच्चु वीणुनमस्करि-
च्चाचारवुंचॆय्तु राजावु निन्नप्पोळ्- १०२
क्रुद्धनायोरु शिशुपालमन्नव-
नुत्थानवुं चॊय्तिट्टुच्चत्तिल् चॊल्लिनान् । १०३
कुण्डिनं तन्निल् निन्नुण्टायतोक्कुंन्पोळ्
कुण्डन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारॆयुं १०४
ऒन्नॊण्टु तोन्नुन्नितॆन्नुळ्ळिलॆन्नतु
नन्नल्ल चॊल्लिकिलो निर्णयमॆङ्किलुं १०५
उळ्ळलरिविल्लयातॊरु निङ्ङळि-
क्कळ्ळनायुळ्ळोरु गोपालकन्तन्नॆ १०६
कालुं कळुकिच्चु पूजिच्चतोक्कुंन्पोळ्
बालन्मारे ! पळुतायवन्नु यागवुं । १०७
इन्नवनेन्नुमिल्लिल्लवुमिल्लिव-
नॊन्नुमॊरुगुणमिल्ला निरूपिच्चाल् । १०८
मातरुमिन्नवरॆन्निल्ल भोगिप्पान्
मातुलनॆक्कॊन्न पातकवुमुण्टु । १०९
पॆण्कॊलयुं चॆय्तु साधुक्कळॆयॊरु
संशयंकूटातॆ तान्तोन्नियायवन् ११०

युधिष्ठिर ने गूढ़ गोविन्द की मूर्त्ति को पीठ पर बैठाकर पादप्रक्षालन करके उसकी पूजा, वन्दना और साष्टाङ्ग नमस्कार और अन्य उपचार किया तब क्रोधित होकर राजा शिशुपाल उठा और उच्च स्वर में बोला। "कुण्डिन में जो हुआ है उसे जब मैं याद करता हूँ तब इन मोटे पाण्डवों के संबन्ध में जो बात मुझे सूझ रही हैं वह निस्सन्देह कहने योग्य नहीं है। हे मूर्खो ! फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि आप लोगों के इस कोरे अज्ञ, कपटी ग्वाले के पादप्रक्षालन और पूजन से यह सारा याग व्यर्थ हो गया है। १००-१०७ कोई नहीं जानता है कि यह कौन है, न इसका कोई मकान है, सोचिये तो इसमें कोई भी गुण नहीं है। स्त्री संभोग के विषय में इसका कोई नियन्त्रण नहीं है; और अपने मामा के वध का पाप भी इस पर लगा है। इसने स्त्रीवध किया है, और यह साधुजनों के साथ निश्शंक मनमाना करनेवाला है। सोचिये तो इसके मन में एक

ब्राह्मणश्रेष्ठनुं पिन्नें श्वपचनुं
साम्यमत्रेयिवनुळ्ळिलोक्कुंविधौ । १११
श्वाक्कळुं गोक्कळुमोक्कुमिवन्तनि-
क्काक्कुंमरियावतल्लिवन्मायकळ् । ११२
इल्लात्ततुण्टाक्कुमुळ्ळतिल्लाताक्कुं
नल्लतुमाकात्ततुं भेदमिल्लेतुं । ११३
वर्ण्णविशेषवुमिल्लिवन्नेतुमे
पुण्यपापङ्ङळुं चिन्तिक्कयिल्लिवन् । ११४
निष्किञ्चनप्रियन् निर्ल्लज्जनेत्रयुं
निष्कुलजातनां निष्कामनें निङ्ङळ् ११५
योग्यन्मारोक्कवे नोक्कियिरिक्कवे
योग्यमल्लेतुमिच्चेंटततु निर्णयं । ११६
वृद्धरायुळ्ळ गांगेयनुं द्रोणरुं
बुद्धि नेरल्लातेयायिच्चमञ्ञतो ? ११७
इत्तरं केट्टाशु पोत्तिच्चेवि चिलर्
मुग्धविलोचननेतुमे मिण्टील । ११८
पार्त्थिवनाकिय चेदिपन्तन्नोटु
चीर्त्त कोपत्तोटु पार्त्थनुं चोल्लिनान् । ११९
इत्तरं चोल्लुकिलस्त्रङ्ङळ्कोण्टु आ-
नुत्तरं चोल्लि ञायं पिन्नें मन्नवा ! १२०

ब्राह्मणश्रेष्ठ और एक श्वपाक में कोई भेद नहीं है। कुत्ते और गौएँ इसके लिए समान हैं। इसकी मायाओं को कौन नहीं जानता है ? जो असत् है उसको सत् और सत् को असत् बनायेगा। अच्छे-बुरे का भेद ही नहीं जानता है। वर्णभेद को यह मानता ही नहीं है। पुण्य क्या है और पाप क्या है, यह सोचता ही नहीं है। १०८-११४ अकिंचनों से प्रेम करता है, बिलकुल निर्लज्ज है। इसका एक दुष्कुल में जन्म हुआ, अनेक योग्यों के होते हुए भी, इस निष्काम का इस प्रकार आप लोगों ने जो पूजन किया यह निस्सन्देह उचित नहीं है। इन वृद्ध भीष्म और द्रोण की बुद्धि क्या बिलकुल बिगड़ गयी है ?" इस प्रकार की बात सुनकर कुछ लोगों ने कान बन्द कर लिये। मुग्धविलोचन (श्रीकृष्ण) तो बिलकुल मौन रहे। अर्जुन ने तीव्र कोप के साथ चेदि राजा से कहा, "इस प्रकार की बात करोगे तो हे राजन् ! अस्त्रों से उसका उत्तर दूंगा,

न्यायमल्लाततु नी परञ्ञीटुकिल्
कायवुं नाय् नरि तिन्नुमाऱाक्कुवन् । १२१
पोराय्मपूण्ट शिशुपालनन्नेरं
पोरिन्नु तेरिल्क्करेऱि निन्नीटिनान् । १२२

विश्वरूपप्रदर्शनं

कण्णुं चुवत्ति विऱच्चु नारायणन्
सन्नद्धनायतु कण्टु युधिष्ठिरन् १
नूऱायिरं कोटि मार्त्तण्डमण्डल-
मेऱियोराभ कलर्न्नुदिक्कुंवण्णं २
आर्क्कुंमे नोक्करुतातोरु दीप्तियु-
मार्क्कुं तिरिक्करुतातोरु रूपवुं ३
कैक्कोण्टुकण्टु भगवल्स्वरूपत्तो-
युळ्क्काम्पिलाक्कि वन्दिच्चु धर्म्मात्मजन् । ४
आरवनायतु नेरे परकेन्नु
पारातें देवव्रतनोटु चोदिच्चान् । ५
आरेन्नऱिवानरियरुतातोरु
नारायणनजनव्ययनच्युतन् । ६

न्याय फिर देखा जायगा। अगर तुम अन्याय की बातें कहोगे तो तुम्हारे शरीर को कुत्ते और शेर के खाने योग्य बना दूँगा। तब शिशुपाल लज्जित होकर युद्ध करने के लिए रथ पर चढ़कर बैठा। ११५-१२२

विश्वरूप का प्रदर्शन

उस समय युधिष्ठिर ने देखा कि नारायण की आँखें लाल हैं और वे काँप रहे हैं और सन्नद्ध (लड़ने के लिए तैयार) हो रहे हैं। सौ हज़ार कोटि सूर्यमण्डलों से भी अधिक प्रभा लेकर उठ रहे थे। उनकी दीप्ति को कोई भी न देख सकता था और उनके रूप को कोई भी न समझ सकता था। भगवान् के ऐसे स्वरूप को देखकर धर्मपुत्र ने उसका ध्यान किया और उसकी वन्दना की। और देवव्रत (भीष्म) ने कहा "ठीक-ठीक जल्दी बतलाइए कि यह कौन है"। १-५ तब भीष्म बोले—"यह वह अज, अव्यय, अच्युत नारायण हैं जिन्हें ठीक जानना बहुत कठिन है। जब ब्रह्मप्रलय हुआ उसी दिन उन्होंने मधु और कैटभ की सृष्टि की।

ब्रह्मप्रळयमुण्टायन्नुतान्तन्नॆ
निर्म्मिच्चॆळ्ळुं मधुकैटभन्मारवर् । ७
तन्नोटुतन्नॆ कलहंतुटर्न्नप्पोळ्
कॊन्नानवरुटॆ देहत्तिल्निन्नुळ्ळ ८
मेदस्सुतन्नॆयुरच्चुचमञ्ञतु
मेदिनियायतुमॆन्नरिञ्ञीटु नी । ९
नाभिसरोजत्तिलुण्टाय नान्मुखन्
नानाविधयाय सृष्टि चॆय्तीटिनान् । १०
वेदङ्ङळ्कट्ट हयग्रीवनॆक्कॊन्नु
वेधाविनाक्कुवान् मीनायितन्नवन् । ११
सर्व्वेशनायॊरु शर्व्वांशमायिट्टु
गर्व्वंकलर्न्नॊरु दुर्व्वासावां मुनि । १२
शक्रनु नल्किय मालयॆट्टुत्तुट-
नक्करिवीरन् चवुट्टिक्कळकयाल् । १३
क्रुद्धनायम्मुनि शापवुं नल्किनान्
वृत्रहन्ताविनेयुं सुरन्मारेयुं । १४
वृद्धश्रवस्साय नीमुतलायवर्
वृद्धन्मारायि जरानरयुण्टाक । १५
अन्ततु केट्टु तॊळुतु महेन्द्रनुं
पिन्नॆ वरवुं कॊटुत्तु महामुनि । १६

उन दोनों ने उन्हीं से कलह किया। तब उन्होंने उनका वध किया। और जान लो कि उनके शरीर का जो मेद था वही जमकर मेदिनी (पृथिवी) बनी। उनके नाभिकमल से जो चतुर्मुख पैदा हुआ उसी ने तरह-तरह की सृष्टियाँ कीं। जब हयग्रीव ने वेदों को चुराया तब मत्स्य बनकर उसकी हत्या करके वेदों को उन्होंने ही ब्रह्मा के पास पहुँचाया। ६-११ दुर्वासा नामक एक गर्वयुक्त मुनि था जो सर्वेश शिवजी का ही अंश था। उसने इन्द्र को एक माला दी थी जिसे हाथी ऐरावत ने अपने पैरों से कुचल दिया। इससे क्रुद्ध होकर मुनि ने इन्द्र को और देवों को इस प्रकार शाप दिया—'तुम वृद्धश्रवा और अन्य देवता वृद्ध हो जायें और तुम लोगों के जरा और सफ़ेदी आ जाय'। यह सुनकर इन्द्र ने हाथ जोड़ा; तब महामुनि ने उनको एक वर दिया। 'क्षीरसागर का मन्थन करके अमृत पैदा करो और उसका सेवन करो तब तुम्हें सुख

क्षीरांबुराशि कटञ्ञमृतुण्टाक्कि-
प्पाराते सेविक्कयेन्नाल् सुखं वरुं । १७
पुक्कितु पाल्क्कटलाशु पुरन्दरन्
पुष्करनेत्रनोटत्तल् परञ्ञप्पोळ् १८
मूर्त्तिकळमूवरुमोन्निच्चु कल्पिच्चु
दैत्यर्कळोटोरुमिच्चितु देवकळ् । १९
वासुकि पाशमाय् मन्दरं मत्तुमा-
यादरवोटु कटञ्ञुतुटङ्ङुन्पोळ् । २०
ताणुतुटङ्ङीतु पर्व्वतमन्नेरं
तानोरु कूर्म्ममाय् पोङ्ङिच्चतुमिवन् २१
कल्पकवृक्षङ्ङळ् नल्ल सुरभियु-
मत्भुतमायुळ्ळ कौस्तुभरत्नवुं २२
चन्द्रक्कलयुममृतुमज्येष्ठयुं
चन्द्रसमाननयाकिय लक्ष्मियुं २३
नाल्क्कोन्पनानयुमुच्चैः श्रवाश्ववुं
भाग्यभोग्यारोग्ययोग्यपीयुषवुं २४
साक्षाल् परांशमां धन्वन्तरितानु-
माक्कुं पोरुक्करुतात काकोळवुं २५
चेल्क्कणिमाराकुमप्सरस्त्रीकळुं
पाल्क्कटल्तन्निल्निन्नुण्टायितु मट्टुं । २६
मायाविकळामसुरकळक्कालं
पीयूषवुं कट्टुकोण्टु पोयीटिनार् । २७

प्राप्त होगा'। १२-१७ इन्द्र ने क्षीरसागर में प्रवेश किया और पुष्करनेत्र (विष्णु) से अपना दुःख कहा। तब (विष्णु ने) आज्ञा दी कि यह काम तीनों मूर्तियाँ दैत्य और देव मिलकर करें। नाग वासुकि को रस्सी और मन्दर पर्वत को मथानी बनाकर वे सब क्षीरसागर को मथने लगे। तब पर्वत डूबने लगा। उस समय कूर्म बनकर इन्होंने ही उसे उठाया था। अनेक कल्पवृक्ष, सुरभिनामक साध्वी कामधेनु, अद्भुत कौस्तुभ मणि, चन्द्रमा, वह ज्येष्ठा (अलक्ष्मी), चन्द्र के समान आननवाली लक्ष्मी, चार दाँत वाला हाथी, उच्चैःश्रवा नामक घोड़ा, भाग्यवानों के पीने योग्य और आरोग्य देनेवाला अमृत, साक्षात् भगवान् का ही अंश धन्वन्तरि, सभी के लिए असह्य विष, सुन्दर आँखवाली अप्सराएँ—ये सब और इनसे अतिरिक्त

मायामनोहरियायिच्चमञ्ञितु
मायामयनिवन् वीण्टुकॊण्टीटुवान् । २८
वाराहमायॊरु रूपं धरिच्चिचट्टु
वीरनायुळ्ळ हिऱण्याक्षनॆक्कॊन्नु २९
पारितु वीण्टतुं यज्ञांगनाकिय
कारुण्यवारिधि नारायणनिवन् । ३०
दुष्टनायुळ्ळहिरण्यकशिपुवॆ
नष्टतचॆय्वान् नरसिंहमायतुं ३१
श्यामळसुन्दरनिन्द्रावरजनां
वामननायिब्बलियॆच्चतिच्चतुं ३२
भूमिपालन्मारॆक्कॊन्नॊटुक्कीटुवान्
जामदग्न्याकृतियायिच्चमञ्ञतुं ३३
रामनाय् वन्नु पिऱन्नु वळर्न्निट्टु
रावणनॆक्कॊन्नु तापं कॆटुत्ततुं ३४
रामनायिन्नु बलभद्रनायतुं
कोमळनायुळ्ळ कृष्णनिवन्तन्नॆ । ३५
पेमुलयुण्टतुं चाटु तकर्त्ततुं
तामरसाक्षनां कृष्णनिवन्तन्नॆ । ३६
बालकलीलकळाण्टु नटन्नतुं
पालोटु वॆण्ण कट्टुण्टु कळिच्चतुं ३७

पदार्थ भी क्षीरसागर से निकले । १८-२६ उस समय मायावी असुर लोग अमृत को चुराकर भाग गये । उसे फिर ले लेने के लिए इन मायामय (कृष्ण) ने ही मायामनोहारी (मोहिनी) का रूप धारण किया । वराह का रूप धारण करके और वीर हिरण्याक्ष का वध करके यह कारुण्यसागर और यज्ञांग नारायण ही इस पृथिवी को वापस लाये थे । २७-३० दुष्ट हिरण्यकशिपु को नष्ट करने के लिए जो नरसिंह बने, जिस श्यामसुन्दर, इन्द्र के अनुज ने वामन बनकर बलि को पराजित किया, जिसने भूपालों को नष्ट करने के लिए जामदग्न्य (परशुराम) का रूप धारण किया, जिसने राम होकर जन्म लिया और रावण को मारकर जगत् का दुःख दूर किया, और जो आज बलभद्र नामक दूसरा राम बना है, सब यही कृष्ण हैं । दुष्ट (पूतना के) स्तन का पीनेवाला और चाटुवाक्य का तिरस्कार करनेवाला भी यही कमललोचन कृष्ण है । जिसने अपनी

अम्मयक्कुलकुकळ् काट्टिनान् वा पिळ-
र्न्नंबुजलोचननामिवन् माधवन् । ३८
वृन्दावनं पुक्कु नन्नाय् रमिच्चतुं
नन्दजनाकिय नारायणनिवन् । ३९
केशियॆक्कैक्कॊण्टु वाकीरि कॊन्नतुं
केशवनाकिय नारायणनिवन् । ४०
काळिन्दियिल्निन्नु नीक्किक्कळवानाय्
काळियन्मेल् निन्नु नृत्तं नटिच्चतुं । ४१
सुन्दरिमारुटॆ चेलकळ् वारीट्टु
कन्दर्प्पमन्दिरं कण्टु रसिच्चतुं । ४२
आरणन्मारुटॆ पत्निकळ्भक्तियॆ
नेरोटॆ कण्टिट्टनुग्रहं चॆय्ततुं । ४३
गोवर्द्धनं कुटयाक्किप्पिटिच्चतुं
गोपीजनत्तोटुकूटिक्कळिच्चतुं ४४
अक्रूरन् वन्निट्टु रामनुं तानुमाय्
मुख्यमायुळ्ळॊरु तेरेऱिप्पोयतुं ४५
काळिन्दियिल् मुळ्ळुकीटुमक्रूरनु
मेळं वरुमाऱनुग्रहं चॆय्ततुं ४६
चॆन्नु रजकनॆक्कॊन्नु कळञ्ञतुं
सन्नद्धनाय् विल्लॊट्टुत्तु मुऱिच्चतुं ४७

बाल-क्रीडाएँ करते हुए दूध और मक्खन चुराया और अपना मुँह खोलकर उसमें अपनी माँ को सारा जगत् दिखलाया, वह यह अम्बुजलोचन माधव हैं। ३१-३८ जिसने वृन्दावन जाकर वहाँ रासलीला की वह यही नन्दपुत्र नारायण है। जिसने केशी को पकड़कर उसका मुँह फाड़कर मारा वही यह केशव नारायण है। इन्होंने ही यमुना नदी से हटाने के लिए कालिय सर्प के ऊपर खड़े होकर नृत्य किया था। सुन्दरियों का वस्त्रापहरण करके और उनका मदन-मन्दिर देखकर इन्होंने ही आनन्द अनुभव किया। इन्होंने ही ब्राह्मणों की पत्नियों की भक्ति देखकर उन पर अनुग्रह किया। ३९-४३ गोवर्द्धन पर्वत को छत्र बनाकर उठाना, गोपियों के साथ खेलना, जब अक्रूर आया तब बलराम के साथ एक सुन्दर रथपर चढ़कर चले जाना, यमुना में स्नान करनेवाले अक्रूर को मुक्तिप्रद अनुग्रह करना, रजक को मार डालना, और सन्नद्ध होकर धनुष को तोड़ डालना, उन्नत

उन्नतं मल्लरंगं प्रवेशिच्चतुं
पिन्नेक्कुवलयापीडत्तेक्कोन्नतु ४८
मुष्टिकन् चाणूरनादियां मल्लरे
मुष्टियुद्धं चेय्तु पोट्टिच्चु कोन्नतुं ४९
दुष्टनां कंसनेक्कोन्नुकळञ्ञिट्टु
कोट्टुपेट्टीटिनोरच्छनुमम्मयक्कुं ५०
पुष्टकुतुकमुण्टाक्किच्चमच्चतुं
तुष्टि पुरवासिकळ्क्कु वळर्त्ततुं ५१
विद्यपठिप्पिच्च विप्रनु दक्षिण
मृत्युभविच्च सुतनेक्कोटुत्ततुं ५२
पञ्चजननामसुरकुलेन्द्रने--
प्पञ्चतचेर्त्तवन्तन्नुटेयस्थियाल् ५३
पाञ्चजन्याख्य कलन्नोरु शंखवुं
चाञ्चल्यमेन्निये कैक्कोण्टुपोन्नतुं । ५४
चोल्क्कोण्ट मागधन् वन्निरुपत्तिमू-
न्नक्षौहिणिप्पटयोटे वळञ्ञप्पोळ् ५५
वन्पट कोन्नु जरासन्धनाकिय
वन्पने कोल्लातयच्चुकळकयाल् ५६
पिन्नेयुं वन्नान् पतिनेळुरुववन्
कोन्नोटुक्कुं पटयोक्कवे माधवन् ५७

मल्लरंग में प्रवेश करना, और फिर हाथी कुवलयापीड को मार डालना, मुष्टिक, चाणूर आदि मल्लों को मुष्टियुद्ध करके मार डालना, दुष्ट कंस का वध करके कारागार में बँधे अपने पिता और अपनी माता को निस्सीम प्रीति देना, और नगरवासियों का हर्ष बढ़ाना, अपने विद्यागुरु ब्राह्मण को गुरु-दक्षिणा के रूप में उनके मृत पुत्र को जिला देना, पञ्चजन नामक असुरकुलेन्द्र की हत्या करके उसकी हड्डी से पाञ्चजन्य नामक शंख बनाकर उसे लेकर निश्शङ्क चले आना आदि अद्भुत और अलौकिक कर्म इन्हीं कृष्ण के हैं। ४४-५४ जब विख्यात मागध (जरासन्ध) ने आकर तेईस अक्षौहिणी सेना से इन्हें घेर लिया तब उस बड़ी सेना को नष्ट करके मागध को जिन्दा ही छोड़ दिया, इस लिए वह फिर सत्तरह बार आया और माधव ने उसकी सारी सेना को परास्त कर दिया, पर वह अठारहवीं बार फिर आनेवाला था। इससे पहले ही यवन (कालयवन) सेना के साथ आया था। उसकी तीन करोड़ की सेना को नष्ट करके स्वयं पर्वत गुहा में

पिन्नेयवन् पतिनेट्टामतुं वरुं
मुन्नमे वन्नु यवनन् पटयुमाय् । ५८
मून्नुकोटिप्पटयुळ्ळतुं कोन्नु तान्
मन्देतरं पाञ्ञु पर्व्वतकन्दरं । ५९
तन्निलोळिच्चतुनेरं यवननुं
चेन्नु मुचुकुन्दनेच्चवुट्टीटिनान् । ६०
पेट्टेन्नुणर्न्नवन् नोक्कियनेरत्तु
दुष्टनुं नेत्राग्निदग्धनायीटिनान् ६१
पिन्ने मुचुकुन्दभूपनु कैवल्यं
तन्ने कोटुत्ततुं नारायणनिवन् । ६२
अन्धचित्तन् पतिनेट्टामतुं जरा-
सन्धन् मधुरापुरियें वळञ्ञप्पोळ् ६३
वारिधियोटपेक्षिच्चु वाङ्ङीटिनान्
द्वारवतियां महाराजधानियुं । ६४
स्त्रीधनधान्यादिकळुं कटत्तिव-
च्चाधियुं तीर्न्नु बलभद्ररामनुं ६५
तानुमाय् मागधन् सेन मुटिच्चतुं
मानियां मागधनेक्कोलचेय्याते-
योटि मलमेल् करेरिक्कळञ्ञतुं ६६
चुटुमवन् ती कोळुत्तिय नेरत्तु
मटारुमेयरियाते बलनुमाय् ६७

भागकर छिप गये। तब यवन भी उनके पीछे गया और उसने गुहा में मुचुकुन्द के लात मारी। ५५-६० तत्क्षण ही जागकर जब मुचुकुन्द ने उस पर दृष्टि डाली तब वह दुष्ट मुचुकुन्द की आँखों की अग्नि से जल गया। तदनन्तर राजा मुचुकुन्द को जिन्होंने कैवल्य (मोक्ष) प्रदान किया वे यही नारायण हैं। जब अन्धचित्त जरासन्ध ने अठारहवीं बार मथुरा नगरी को घेर लिया, तब समुद्र से मांगकर अपनी राजधानी द्वारवती लेली। फिर स्त्री, धन, धान्य आदि वहाँ पहुँचाकर दुःख दूर करके राम बलभद्र के साथ मागध की सेना को ध्वंस करके, घमंडी मागध की बिना हत्या किये पर्वत के शिखर पर जाकर बैठ गये। ६१-६६ जब उसने चारों तरफ़ आग लगा दी तब बिना किसी से बताये बलराम के साथ अपनी ही पुरी में आकर जिन्होंने निवास किया वे नन्दपुत्र दामोदर येही

वन्नु निजपुरिपुक्कु वसिच्चतुं
नन्दतनयनां दामोदरनिवन् । ६८
चेंन्नु नरकमुरन्मारेयुं कोंन्नु
कुण्डलं नल्लदितिक्कु कोंटुत्ततुं ६९
पारिजातं कोंण्टुपोन्नुकळञ्ञतुं
वारिजनेत्रनां वासुदेवनिवन् । ७०
भार्यमारायिप्पतिनाऌायिरत्तेट्टु
नारिमारे विवाहं चेय्तुकोंण्टतुं ७१
शङ्करन्तन्नेप्पोरुतु जयिच्चतुं
हुंकृतिपूण्टोरु बाणन्करङ्ङळे- ७२
च्छेदिच्चनिरुद्धने वीण्टुकोंण्टतुं
वेदप्पोरुळाय नारायणनिवन् । ७३
मट्टुं पलपल विक्रमं चेय्तिट्टु
मुट्टुं जगत्त्रयरक्षाकरनिवन् । ७४
कर्त्तावाकुन्नतुं कारणनायतुं
मद्ध्ये करणमाकुन्नतुं तान्तन्ने । ७५
उल्पत्तियिल्ल मरणवुमिल्लिव-
नुत्भवमार्क्कुमऱिञ्ञुकूटा चोंल्वान् । ७६
मायामयनाय नारायणा ! पोट्रि !
नीये गतियेन्निरिक्क नी सन्ततं । ७७

हैं। जिन्होंने नरक और मुर को मारकर अदिति को कुण्डल दिया और जो पारिजात लाये वे येही कमललोचन वासुदेव हैं। जिन्होंने सोलह हज़ार एक सौ आठ स्त्रियों से विवाह किया, साक्षात् शङ्कर को ही युद्ध में जीत लिया और क्रोधी बाणासुर के हाथों को काटकर अनिरुद्ध को छुड़वाया वे येही वेदों के रहस्य-रूपी नारायण हैं। ६७-७३ और भी तरह-तरह के विक्रम करके इन्होंने ही तीनों लोकों की रक्षा की। ये ही पहले कर्ता होते हैं और कारण भी और बीच में करण भी बन जाते हैं। इनका जन्म और मरण कोई नहीं जानता और न बतला सकता है। हे मायामय नारायण ! हे पालक ! आप ही गति हैं, आप ही नित्य हैं। ७४-७७

शिशुपालवधं

शार्ङ्गवरायुधन्तन्टे चरित्रङ्ङळ्
गाङ्गेयनिङ्ङनें चॊन्नोरनन्तरं १
दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतु कण्टिट्टु
मन्नवन् नारदन्तन्नोटु चोदिच्चु । २
ऎन्तितिन् कारणमॆन्नतु केट्टिट्टु
चिन्तिच्चु नारदन्तानुमरुळ्चेय्तु । ३
चेदिपनाय शिशुपालनॆयिन्नु
माधवन् कॊल्लुमतिनुळ्ळ लक्षणं ४
काणायतॆन्नु परञ्ञिरिक्कुंनेरं
काणायि तेरिल् मधुवैरितन्नॆयु- ५
मस्त्रप्रयोगवुं तम्मिलुण्टायतुं
विस्तरिच्चेरॆप्परञ्ञालॊटुङ्ङुमो । ६
राघवरावणन्मार् पॊरुंपोलॆय-
म्मेघनिरमुळ्ळ कृष्णचेदीशन्मार् ७
अस्त्रमॆटुत्तु तॊटुत्तुवलिच्चय-
च्चॆत्रयुं घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं । ८
धर्म्मजनादियुं नारदनादियुं
निर्म्मलराकिय देवसमूहवुं ९
नारीजनङ्ङळुं भूसुरजालवुं
वीरराय् मेवुन्न भूपतिवृन्दवुं १०

शिशुपालवध

इस प्रकार गाङ्गेय (भीष्म) के श्रीकृष्णचरित्रों के वर्णन के बाद अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये। तब राजा ने नारदजी से पूछा। "इन निमित्तों का क्या कारण है?" यह सुनकर नारद ने सोचकर बतलाया— "आज माधव चेदिराजा शिशुपाल का वध करेंगे। उसके ये लक्षण दिखाई दे रहे हैं।" यह बात कह ही रहे थे कि मधुवैरि (माधव) रथ पर बैठे हुए दिखाई दिये। उनका जो आपस में अस्त्र-प्रयोग हुआ उसका वर्णन कोई करे तो समाप्त नहीं हो सकता। १-६ राम और रावण के युद्ध के समान वे मेघ के समान वर्णवाले कृष्ण और चेदीश (शिशुपाल) अस्त्र निकालकर, लगाकर और खींचकर छोड़ते गये और उनका युद्ध अतीव

पारिलुळ्ळोरॆल्लामायोधनं कण्टु
नारायणा ! हरे ! नारायणयॆन्नार् । ११
विक्रमशालियां विष्णु जगन्मयन्
चक्रमॆरिञ्ञु मुरिच्चानवन्तल । १२
देहवुं भूमियिल् वीणिततुनेरं
देहियुं माधवदेहमकंपुक्कान् । १३
देवकळ् पूमलर् तूकित्तुटङ्ङिनार्
देवनॆ वन्दिच्चु मामुनि जालवुं । १४
यादवन्मारुं तॆळिञ्ञु चमञ्ञितु
मेदिनीपालकन्मार् चिलर् कोपिच्चु । १५
धर्म्मजन् चॊल्लालॆ शेषक्रियकळुं
निर्म्मलनामवन्तन्टॆ मकन् चॆय्तान् । १६
शेषं महाक्रतु चॆय्तु मुटिच्चितु
घोषिच्चु धर्म्मराजात्मजन् निर्म्मलन् । १७
आनन्दमुळ्क्कॊण्टु मन्नवनभृथ-
स्नानवुं चॆय्तितु बन्धुजनत्तोटुं । १८
इन्द्रन् सुधर्म्मयिलॆन्नपोलॆ धर-
णीन्द्रनास्थाने वसिक्कुन्नतुनेरं । १९
मायामयनां मयन् पणिचॆय्तॊरु
तोयाकरं जलमॆन्नु निरूपिच्चु २०

घोर हुआ । युधिष्ठिर आदि और नारद आदि, निर्मल देवगण, नारीजन और ब्राह्मण लोग, सभी वीर राजगण और पृथिवी के अन्य निवासी भी युद्ध देखकर बोले "हे नारायण ! हे हरे ! हे नारायण !" । विक्रमशाली जगन्मय विष्णु ने अपना चक्र फेंककर उसका सिर काट डाला । ७-१२ उसका शरीर भूमि पर गिर गया और उसकी आत्मा तो माधव ही में लीन हो गयी । देवगण पुष्पवृष्टि करने लगे और मुनिजनों ने देव (कृष्ण) की वन्दना की । सभी यादव बहुत प्रसन्न हुए, पर कुछ भूपाल क्रुद्ध हुए । युधिष्ठिर के कहने पर उसके (शिशुपाल के) निर्मल पुत्र ने शेषक्रियाएँ कीं । महाक्रतु राजसूय का जो शेष था उसे समाप्त करके निर्मल धर्मपुत्र ने उसकी घोषणा की । तदनन्तर राजा ने बड़े आनन्द के साथ अपने बन्धुओं के साथ अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान किया । जैसे इन्द्र अपनी सुधर्म्मा (देवसभा) में विराजते हैं उसी प्रकार राजा युधिष्ठिर अपने आस्थान (सभामंडप) में विराजे । १३-१९ उस समय सुयोधन रेशमी

पाराते चेन्नुटन् वाळुमाय् चाटिनान्
वारियिल् पट्टुमुटुत्तु सुयोधनन् । २१
आरुं काणाते चिरिच्चितेल्लावरुं
पारं चिरिच्चितु भीमनतुनेरं । २२
नाणवुं पूण्टभिमानक्षयत्तोटु-
माननवुं ताळ्त्तियारेयुं नोक्काते २३
पोयि सुयोधननन्नु तुटङ्ङीट्टु
कायं मेलिञ्ञु पनियुं पिटिच्चुते । २४
मन्नवरुं पिन्ने मट्टुळ्ळवर्कळुं
वन्नवळियेपोय् तङ्ङळिटं पुक्कार् । २५
वृष्णिकुलजातन् विश्वंभरन् परन्
जिष्णु वेदान्तवेद्यन् वेदविग्रहन् । २६
जिष्णुप्रमुखवृन्दारकवन्दितन्
जिष्णुतनयप्रियन् वयस्यन् हरि २७
कृष्णन्तिरुवटि धर्म्मजन्तन्नोटुं
कृष्णयोटुं सुभद्रादिकळ्तम्मोटुं २८
जिष्णुविनोटुं मट्टुळ्ळ जनत्तोटुं
उष्णेतरांशुबिंबाननन् माधवन् २९
आस्थया वात्सल्यमुळ्क्कोण्टु सादरं
यात्रयुं चोल्लि वेगत्तोटेळुन्नळ्ळि । ३०

कपड़ा पहनकर हाथ में तलवार लिये मायामय मय के बने सभा के फ़र्श को तालाब समझकर पानी में कूद पड़ा। चुपके सब हँसे, सबसे अधिक तो भीमसेन हँसे। प्रतिष्ठाहानि के कारण लज्जित होकर मुँह नीचा करके बिना किसी को देखे सुयोधन चला गया। उस दिन से उसका शरीर दुबला होने लगा और उसको ज्वर आ गया। सभी भूपाल और अन्य लोग भी अपने-अपने रास्ते गये और अपने घर पहुँचे। २०-२५ वृष्णिकुल में पैदा हुए, विश्वंभर, पर, जिष्णु, वेदान्तवेद्य, वेदमूर्त्ति, इन्द्र आदि देवों के वन्दित, अर्जुन के प्रिय वयस्य (मित्र) हरि, चन्द्रमुख, माधव प्रभु कृष्ण युधिष्ठिर से, द्रौपदी से, सुभद्रा आदियों से, तथा और जनों से, सादर और सप्रेम बिदा होकर शीघ्रतापूर्वक अपनी द्वारकापुरी की ओर सिधारे। २६-३०

द्यूतक्रीड

हस्तिनं पुक्कु धृतराष्ट्रपुत्रनु-
मत्तल् मुळुत्तुचमञ्ञु दिनंप्रति । १
धर्म्मजन् तन्टे धनवुं प्रतापवुं
नन्मयुं कण्टु सहियाञ्ञतुकालं । २
ताणितु बुद्धितळर्च्चयुं पारमा-
यूणुमुरक्कवुमिल्लातेवन्नितु । ३
चेन्नु शकुनियोटेल्लाममात्यर्कळ्
चोन्नतु केट्टवनुं वन्नु चोल्लिनान् । ४
पोक्कुवन् निन्नुटे दुःखङ्ङळोक्कवे
भोष्केन्नितिये परञ्ञीटु नी वैकाते । ५
धर्म्मजन्माविन् प्रतापवुमर्त्थवुं
नन्मयुं कण्टु पोरुत्तीलेनिक्कय्यो । ६
कुट्मल्लेतुमतुण्टामतिन्नु नी
पट्टुवतल्ल शोकिप्पतोरिक्कलुं । ७
अेतुमितुकोण्टु दुःखिक्कवेण्ट नी
चूतुपोरुतु जयिच्चवन्तन्नुटे ८
नाट्टुं नगरवुमर्त्थवुं निन्नुटे
पाटाक्किवय्क्कुन्नतुण्टिनि निर्ण्णयं । ९

द्यूत क्रीड़ा

धृतराष्ट्र का पुत्र (सुयोधन) हस्तिनापुर पहुँचा और उसका दुःख दिन पर दिन बढ़ने लगा। युधिष्ठिर का धन, प्रताप और सज्जनता देखकर वह सह न सका। उसकी बुद्धि भी कम होने लगी, वह बहुत दुबला हो गया। वह न खा सका, न सो सका। सभी अमात्यों ने शकुनि के पास जाकर बात बतलादी। वह भी सब सुनकर आया और बोला। मैं तुम्हारे सभी दुःख दूर कर दूंगा। बिना विलम्ब के बतला दो क्या बात है। सुयोधन ने कहा "युधिष्ठिर का प्रताप, धर्म और सज्जनता को मैं सह नहीं सकसा हूँ।" शकुनि बोला "यह कोई दोष नहीं। ऐसा होता है। परन्तु इसके लिए शोक करना तुम्हारे लिए उचित नहीं है। १-७ इसके लिए तुम दुःख मत करो। जुआ खेलकर, उसमें जीतकर उसका राज्य और नगर और धन मैं तुम्हारा कर दूंगा,

अच्छनेक्कोण्टु चोल्लिलच्चु वरुत्तुक
निश्चयं नाटु परिक्कुन्नतुण्टु ञान् । १०
अन्तु शकुनि परञ्ञतु केट्टप्पोळ्
चेन्नवन् तातनोटाशु चोल्लीटिनान् । ११
अन्धनां भूपन् मुहूर्त्तमात्रमुळ्ळिल्
चिन्तिच्चु नन्दनन्तन्नोटु चोल्लिनान् । १२
अन्धकारङ्ङळ् निरूपिच्चु मानसे
चिन्त मुळुत्तु मुळुत्तु दिनं प्रति । १३
सन्तापमुण्टाय् मेलिञ्ञु वशंकेट्टु
सन्ततं क्लेशिप्पतिनेन्तु कारणं ? १४
बन्धमिल्लेतुमितिन्नितु चोल्लिय
बन्धुक्कळेतुं निनक्कु नन्नल्ल केळ् । १५
अन्तंवरुमितुमूलमन्नेरत्तु
पिन्तुणयारुं निनक्किल्लरिक नी । १६
मन्त्रिकळिष्टं परयुं चिलरव-
रन्तरमिल्ल कोल्लिक्कुमतोर्क्कणं । १७
कुन्तीसुतन्मार् निनक्कितिनाल् परि-
पन्थिकळाय्वरुं पाण्डवन्मारुटे १८
बन्धुवाकुन्नतारेन्नतोर्त्तीटणं
अंधकवंशाधिपन् नरकान्तक- १९

इसमें कोई सन्देह नहीं। पिताजी से कहलवाकर उसको बुलाओ। यह निश्चय है कि मैं उसका राज्य छीन लूँगा। शकुनि की यह बात सुनकर सुयोधन अपने पिता के पास जाकर बोला। अन्धे राजा ने थोड़ी देर सोचकर अपने पुत्र से कहा—"दुःख-हेतुओं को सोचते-सोचते प्रतिदिन तुम्हारी चिन्ता बढ़ रही है। सन्ताप के कारण दुबले हो रहे हो। लाचार होकर क्यों दुःख का अनुभव कर रहे हो? कोई कारण नहीं है, और जिन बन्धुओं ने तुम्हें यह राय दी वे तुम्हारे हितैषी नहीं हैं। मेरी बात सुनो। ८-१५ इसके कारण तुम्हारा सत्यानाश होगा और उस समय तुम्हारा कोई अवलम्बन न होगा, जान लो। कुछ ऐसे मन्त्री हैं जो अभिलषित बातें कहते हैं, उनके लिए कोई अन्तर नहीं है वे मरवा देंगे, याद रखो। इससे कुन्ती के पुत्र तुम्हारे शत्रु हो जायेंगे और पाण्डवों के कौन बन्धु हैं यह याद रखे। अन्धकवंश के पति, नरकासुर के नाशक (इनके) बन्धु हैं। इसका आधा भी मुझसे न कहो। पहले की तरह ही रहो।

नेन्नोटितेतुं पऱ्यायक्क पातियुं
मुन्नेवण्णंतन्ने वाळ्क नीयेन्नतु- २०
मंबिकापुत्रन् पऱञ्ञतु केट्टप्पोळ्
तन्मनक्कान्पिल् वेऱुत्तु सुयोधनन् । २१
तीर्त्थमाटीट्टुवान् पोकुन्नतुण्टु ञान्
पेर्त्तिविटेक्कु वरुन्नतुमिल्लिनि । २२
तातननुजनिलुळ्ळोरु वात्सल्यं
चेतसि धर्म्मात्मजनिलुमुण्टल्लो । २३
तातनुदकपिण्डादिकळ् नल्कुवान्
प्रीतियुं पाण्डुसुतङ्कले निर्ण्णयं । २४
ञानिनि देशान्तरं गमिच्चीट्टुवन्
नूनमेन्नाल् तव कर्म्ममतिन्निल्ल । २५
मन्नवनेन्नतु केट्टु विदुररे-
च्चेन्नु वरुत्तुकेन्नानवनुं वन्नु । २६
गूढमायिङ्ङनेयेल्लावरुमोत्तु-
कूटि निरूपिच्चु कल्पिच्च कारियं २७
उळ्ळवण्णं धरिच्चोरु विदुररुं
चोल्लिनानन्नु धृतराष्ट्ररे नोक्कि । २८
नल्लतिनल्ल तुटङ्ङुन्नु निन्मकन्
नल्लतल्लेतुमे मेलिलितुमूल- २९

अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) की यह बात सुनकर सुयोधन अप्रसन्न हुआ । १६-२१ (और बोला) मैं तीर्थयात्रा के लिए जा रहा हूँ और फिर यहाँ वापस नहीं आऊँगा । पिताजी का अपने छोटे भाई के प्रति जितना प्रेम है उतना प्रेम युधिष्ठिर के प्रति भी है । पिताजी यही पसन्द करेंगे कि पाण्डुपुत्र (युधिष्ठिर) ही आपको उदक और पिण्ड दें, इसमें सन्देह नहीं । मैं अब देशान्तर चला जाऊँगा क्योंकि मुझे तो आपकी क्रिया न करनी होगी । यह सुनकर राजा (धृतराष्ट्र) ने कहा— "विदुर को बुलाओ" । विदुर भी आ गये । जिस काम को करने के लिए सब ने रहस्य में सोचकर निर्णय किया था उसकी यथार्थ स्थिति को समझकर विदुरजी धृतराष्ट्र से बोले । २२-२८ जो तुम्हारा पुत्र प्रस्तुत कर रहा है यह अच्छा काम नहीं है, इसके कारण आगे चलकर सब नष्ट हो जायेंगे । इस बुरे काम को मना करो और तुम ही इसको

मिल्लातॆयाय्वरुमॆल्लावरुं कूटि
वल्लाय्म शिक्षिच्चटक्कुक नीतन्नॆं । ३०
एवं विदुरर् पऱञ्ञतु केळ्प्पति-
न्नावतल्लातॆ चमञ्ञु धृतराष्ट्रर् । ३१
पुत्रवात्सल्यं निमित्तमाय् माधवन्
भक्तप्रियन् महामायाबलवशाल् ३२
भूभारनाशनत्तिन्नु पिऱन्नॊरु
गोपतिवैभवमार्क्कु तटुक्कावू ! ३३
पार्त्थनॆच्चॆन्नु वरुत्तुकयॆङ्किलु
मोर्त्तिटामॆन्नतु केट्टु विदुररुं । ३४
खाण्डवप्रस्थमकं पुक्कतुनेरं
पाण्डवन्मारुमॆतिरेट्टु पूजिच्चार् । ३५
अंबिकापुत्रनु सौख्यमल्ली पुन-
रंबुधिपत्नीसुतनॆन्तरुळ् चॆय्तु ? ३६
ऒन्तॊरु वार्त्त पुतुतायिट्टुळ्ळतु-
मॆन्तॊरु कार्यं निरूपिच्चु वन्नतुं ? ३७
धर्म्मजनिङ्ङनॆ चोदिच्चनेरत्तु
निर्म्मलनाय विदुररुरचॆय्तु ३८

दबाओ। पुत्रप्रेम के कारण धृतराष्ट्र तो विदुर की इस प्रकार की बातें मानने में असमर्थ निकले। महामाया के बल के कारण पृथिवी का भार कम करने के लिए पैदा हुए भक्तप्रिय, माधथ गोपाल का वैभव कौन रोक सकता है ? धृतराष्ट्र ने कहा "ज़रा जाकर पार्त्थ (युधिष्ठिर) को बुलाओ, उससे भी सलाह कर लें" २९-३४ यह सुनकर विदुरजी खाण्डवप्रस्थ पहुँचे। तब पाण्डवों ने आगे चलकर उनका सत्कार किया और पूँछा—अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) तो स्वस्थ हैं ? और अंबुधिपत्नी (गंगा) के पुत्र (भीष्म) ने क्या कहा ? क्या नया समाचार है और किस काम के लिये आप पधारे हैं ? जब युधिष्ठिर ने इस प्रकार पूछा तब निर्मल विदुर ने उत्तर दिया। "सब विधि के हाय में है, हे युधिष्ठिर ! मालूम होता है कि दुर्योधन जुआ खेलना चाहते हैं। इस लिए तुम्हें बुलाने के लिये राजा धृतराष्ट्र ने मुझे भेजा है। क्या भला है और क्या बुरा है, यह सोचकर मैं तो भला करने के लिए ही राय दे सकता हूँ।" ३५-४१ तब निर्मल सन्मति धर्मपुत्र ने प्रमोद के साथ विदुरजी से कहा—"ताऊजी जहाँ बुलाते हों वहाँ मैं अवश्य जाऊँगा। मैं जाकर उन्हें जूए के दोष

ऒल्लां विधिवशमल्लो युधिष्ठिर !
पॊल्लात चूतु पॊरेणंपोलॆन्निट्टु ३९
निन्नॆ वरुत्तुकॆन्नॊन्नॆययच्चितु
मन्नवनाय धृतराष्ट्रर्तान्तन्नॆ । ४०
नल्लतुमाकात्ततु निरूपिच्चिट्टु
नल्लतु चॆय्कॆन्नॆ चॊल्लावितॆन्नाले । ४१
सन्मति निर्म्मलन् धर्म्मजन् चॊल्लिनान्
सम्मोदमोटु विदुररोटन्नेरं । ४२
तातन् विळिच्चविटत्तिनु चॆल्लुवा-
नेतुमे संशयिच्चीटुन्नतिल्ल ञान् । ४३
चूतिनुळ्ळोरु दोषङ्ङळ् चॊल्लीटिनाल्
चूतु पॊरातॆ कळिक्किलो नन्नल्लो । ४४
पिन्नॆस्सुयोधनाभीष्टङ्ङळायव
तन्नॆ पणयंकॊटुत्तवनाय्वन्नाल् ४५
निङ्ङळ् तटस्सन्मारायुळ्ळवर् चिलर्
मंगलवाक्यङ्ङळ् कॊण्टॊळिच्चीटुविन् । ४६
ऒन्नालुमावतिल्लायिकिल् मून्नामतु
पिन्नॆयुं चूतु पॊरुतु तोटीटुवन् । ४७
ऒन्नाल् जयमत्तनाय सुयोधनन्-
तन्नॆ सभापालकन्मारॆ निन्दिच्चु ४८
दुर्भाषणादि दुष्कर्म्मङ्ङळ् चॆय्तीटु-
मप्पोळ् सभातिक्रमं कण्टु सभ्यन्मार् ४९
कर्ण्णवुं कण्णुमटच्चु नटकॊळ्ळुं
पिन्नॆयेतानुमॊन्नुण्टु वरुं बलाल् । ५०

बतला दूंगा। उन्हें सुनकर अगर वे जुआ खेलने के लिए मना कर देंगे तो अच्छा ही होगा। तदनन्तर सुयोधन को उसके अभीष्ट पदार्थ देकर सन्तुष्ट किया जाय। तत्पश्चात् अगर वह स्वयं आवे तो आप लोगों में से जो जुए के विरोधी हैं वे उससे मंगल शब्द कहकर उसे जुए से दूर करें। इसके बाद भी उसे अगर रोका नहीं जा सकता है तो तीन बार जुआ खेलकर मैं हार जाऊँगा। परंतु जयमत्त सुयोधन स्वयं सभापालकों की निन्दा करेगा, दुर्भाषण और दूष्कर्म करेगा। तब सभा का यह अतिक्रम देखकर सदस्य लोग कान और आँख बन्द करके चले जायँगे। ४२-५०

मून्निलुमोन्नु साधिक्कामतेन्निये
मून्नु वराय्कलुमिल्लोरु सङ्कटं । ५१
तङ्ङळिलित्थं विशेषङ्ङळु परऽ-
ञ्ञङ्ङने रात्रि कळिञ्ञोरनन्तरं । ५२
नेरत्तेळुन्नेट्टु नित्यकर्म्मं चेय्तु
कूटलर्कालन्माराकिय पाण्डवर् । ५३
तेरिल् करेरि विदुररुमाय् चेन्नु
पाराते हस्तिनमाय पुरं पुक्कार् । ५४
अम्मयां गान्धारितन्नेयुं वन्दिच्चा-
रंबुराशिप्रियपुत्रनेयुं तोळु- ५५
तन्पिनोटाचार्यन्मारेयुं वन्दिच्चार्
अश्वत्थामादि बन्धुक्कळेयुं कण्टु । ५६
विश्रमिच्चीटिनार् पाण्डुसुतन्मारुं
इष्टमायुळ्ळ जनत्तोटुमोन्निच्चु
मृष्टमायूणुं कळिञ्ञुरङ्ङीटिनार् । ५७
पिटेन्नाळ् नेरत्तु नित्यकर्म्मं कळि-
च्चुट्टवरोटुमरचन् सभ पुक्कु ५८
चूतु पोरुवान् विळिच्चितेन्नु पिता-
वादरपूर्व्वं परञ्ञोरनन्तरं ५९
चतिनापत्तोळिञ्ञिल्लेन्नु धर्म्मजन्
मोदालनेकमितिहासवुं चोन्नान् । ६०

फिर तीन बातों में से एक अवश्य होगी। तीनों में से एक सिद्ध हो सकती है। उनमें से अगर एक भी न हो जाय तो कोई हानि नहीं है। इस प्रकार आपस में समाचार कहते हुए रात बिता दी। तदनन्तर तड़के उठकर अपने नित्यकर्म से निवृत्त होकर शत्रुओं के नाशक पाण्डव विदुरजी के साथ रथ पर बैठकर निकले और तुरन्त ही हस्तिनापुर पहुंचे। ५१-५४ उन्होंने माँ गान्धारी की वन्दना की, समुद्र की प्रिया (गंगा) के पुत्र (भीष्म) को प्रणाम किया, प्रेम से आचार्यों की भी वन्दना की और अश्वत्थामा आदि बन्धुओं का दर्शन किया। तदनन्तर पाण्डवों ने विश्राम किया। फिर इष्टजनों के साथ यथेष्ट भोजन करके सो गये। दूसरे दिन तड़के उठकर नित्यकर्म से निवृत्त होकर बन्धुओं के साथ, राजा (धृतराष्ट्र) सभा में आये और बोले कि जुआ खेलने के लिए मैंने तुम्हें बुलवाया। तब युधिष्ठिर ने कहा कि जूए में दोष बहुत हैं और अनेक

तातनियोगमनुष्ठिप्पतिन्नु ञा-
नेतुं मटिक्कुन्नतिल्लेन्नु धर्म्मजन् ६१
व्याकुलमानसनायिरिक्कुं नेरं
नागध्वजनुं मुतिन्नानितुनेरं । ६२
अक्षवुं चूतुमेट्टुत्तुकोण्टन्निट्टु
वय्क्कणमेन्नु मुतिर्न्नु शकुनियुं । ६३
कर्म्मिच्चतेल्लां वरुमेन्नु चिन्तिच्चु
धर्म्मजन्तानुमिरुन्नु सभयिङ्कल् । ६४
कळ्ळच्चूतेतुं पोरोल्ल नीयेन्नतु-
मुळ्ळंतेळिञ्ञुरचेय्तु युधिष्ठिरन् । ६५
अय्यो ! चतियुण्टो चूतिङ्कल् काट्टावू
मेय्योटु पण्टुं पोरुमितु मन्नवर् । ६६
दैवमत्रेयितिन्नाधारमाकुन्न-
तव्याजमायोन्नु चूतेन्नरिञ्ञालुं । ६७
गान्धारवीरन् पोरुन्नोरु चूतिन्नु
ञान्तन्ने वय्क्कां पणयं पोरुतालुं ६८
ऎन्नु दुरियोधनन् परञ्ञीटुन्पोळ्
मन्नवन् चूतु पोरुतु तुटङ्ङिनान् । ६९
बाल्हिकदत्तरथकुण्डलादिकळ्
सोल्लासमादियिल् वच्चु पणयमाय् । ७०

इतिहास बतलाकर प्रेम से समझाया और कहा, "यों तो मैं पिताजी (धृतराष्ट्र) की आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार हूँ"। ५५-६१ यह कहकर युधिष्ठिर उत्कण्ठित होकर बैठ गये। इस समय नागध्वज (दुर्योधन) तैयार होकर आगे बढ़ा। 'अक्ष (पाँसा)और जूए की सामग्री मंगवाना', ऐसा कहकर शकुनि भी आगे बढ़ा। यह समझकर कि अपने कर्म का फल तो होगा ही, युधिष्ठिर भी सभा में बैठ गये। युधिष्ठिर ने शुद्ध हृदय से कहा, "जूआ खेलने में बेईमानी न करो"। तब सुयोधन ने कहा, 'वाह ! क्या जूए में बेईमानी की जाती है ? पहले के राजा बड़ी नेकी से खेलते थे। भगवान् ही इस खेल का आधार है। ६२-६७ जानलो कि जूए में कपट नहीं होता है। गान्धार के वीर जब खेलेंगे तो मैं ही उसमें पण (दाँव) लगाऊँगा। खेलिये।' यह सुनकर राजा(युधिष्ठिर) खेलने लगे। प्रारम्भ में बाल्हीक के दिये रथ और कुण्डल सोल्लास पण (दाँव) के रूप में लगाये गये। राजा ने जो कुछ भी लगाया उसे खो दिया।

वच्चतु वच्चतु तोट्टितु पाण्डवन्
वच्चु पणयं धनधान्यराज्यवुं । ७१
वच्चतु वच्चतु वेन्नु शकुनियुं
वच्चु पणयवुं धर्म्मजनेप्पेरुं । ७२
वञ्चन चोल्लुवान् नेञ्चकमञ्चुन्नु
किञ्चन संशयं कूटाते धर्म्मजन् ७३
नेञ्चकमायुळ्ळनुजन्मार्तम्मेयुं
कोञ्चुमोऴियाळां पाञ्चालितन्नेयुं ७४
वच्चु पणयं चिरिच्चितु वैरिक-
ळय्यो ! शिव ! शिव ! कष्टमेन्नार् चिलर् । ७५
सज्जनमेट्टं वेरुत्तु शकुनियें
सज्वरमप्पोळ् विदुररुरचेय्तु । ७६
अंबिकानन्दन ! केळ्क्क ञान् चोल्वतु
निन्मकनङ्ङु पिरन्ननेरं तुलों ७७
दुर्न्निमित्तङ्ङळुण्टायतरिञ्ञीले
मन्नवर्वंशमशेषं मुटिवानाय् । ७८
कळ्ळच्चूतिट्टु शकुनि चतिक्कया-
लुळ्ळं तेळिवुळ्ळ धर्म्मजन्माविनो- ७९
टुळ्ळ पोरुळटयक्कोण्टुकोण्टान्पोल्
उळ्ळतल्लेतुमतेन्नरिञ्ञीटु नी । ८०

फिर धन, धान्य और राज्य ही को पण (दाँव) पर लगाया। जो कुछ भी लगाया गया उसे शकुनि ने जीत लिया। पर धर्मपुत्र सब लगाते ही गये। बेईमानी कहने में लज्जा मालूम होती है। युधिष्ठिर ने तो बिना हिचके, अपने हृदय के समान छोटे भाइयों को, मीठी आवाज़वाली द्रौपदी तक को भी पण(दाँव) में लगा दिया। शत्रु हँसे परन्तु कुछ लोगों ने कहा— हा ! शिव ! यह क्या अन्धेर है ? ६८-७५ सज्जनों को शकुनि से घृणा हो गई। और विदुरजी घबड़ाकर बोले—हे अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) ! मेरी बात सुनो ! जब तुम्हारे पुत्र का जन्म हुआ उस समय, तुम्हें स्मरण होगा, अशुभ लक्षण बहुत हुए जो सारे राजवंश के नाश के सूचक थे। शकुनि ने झूठा खेल, खेलकर सीधे युधिष्ठिर की सारी सम्पत्ति जीत ली। जान लो कि यह हो ही न सकता। यह बन्द हो ! अगर और लोगों का नाश न होना है तो सुयोधन यहाँ से चला जाय युधिष्ठिर सारी पृथिवी पर राज करे। हे राजन ! बटवारे की बात व्यर्थ है। ७६-८२ विदुरजी

आका सुयोधनन् पोकयिविट्टुन्नु
चाकातिरिक्कणं मट्टुळ्ळवरेङ्किल् ८१
वाळ्क युधिष्ठिरन् वैकाते भूतलं
भागं परञ्ञाल् फलमिल्ल मन्नवा ! ८२
ॲन्नु विदुरर् परञ्ञतु केट्टप्पोळ्
मन्नवनाय सुयोधनन् चोल्लिनान् । ८३
कर्णा ! नी केट्टीले नल्ल विदुरर्वा-
क्कॊन्ने दूषिच्चे परयूयिवन् पण्टुं । ८४
दुश्चेष्टयुळ्ळोरु दासीसुतन् तनि-
क्कॊच्चिल् कॊटुत्तु वळर्त्ततिन्टे फलं । ८५
आक ञानॆङ्किलिविट्टुन्नुतान् पोयि
वाळ्क तनिक्कु तोंळिञ्ञेटत्तेङ्ङानुं । ८६
निल्क्कतॆल्लां वॆळिच्चत्तिट्टुन्निल्ल ञान्
धिक्करिच्चाल् पिळच्चीटुमॆल्लावनुं । ८७
पार्क्कुन्नतॆन्तिन्निनिच्चिल कार्यङ्ङळ्
भोष्काय् वरुमो युधिष्ठिरन् चॊल्लियाल् । ८८

द्रौपदीवस्त्राक्षेपं

पाञ्चालितन्ने विळिक्कयिनियेतुं
चाञ्चल्यं वेण्टयेन्नाशु सुयोधनन् । १

की यह बात सुनकर राजा सुयोधन ने कहा—"हे कर्ण ! सुनी विदुर की बात ? यह हमेशा मुझ पर दोष लगाते हैं ! इस कुकर्मी दासी के पुत्र को जूठा खिलाकर पालन-पोषण करने का यही फल होता है। अब मुझसे न होगा। अब मैं यहाँ से जाता हूँ, जहाँ तुम्हें पसन्द होगा वहाँ रहो। जाने दो। इन बातों को मैं न खोलूँगा, अगर कोई अपमान करे तो सभी के मुँह से बातें निकल जातीं। अब विलम्ब क्यों किया जा रहा है ?। युधिष्ठिर की कही बातें असत्य थोड़े ही निकलेंगी ? । ८३-८८

द्रौपदी-वस्त्रापहरण

"पाञ्चाली को बुलाओ। अब बिलकुल न हिचकना", ऐसा सुयोधन ने आवेश से कहा। तब दुश्शासन बड़ी गर्मी के साथ बोले—"हे कृष्णे (द्रौपदी !) आओ और घर के सामने झाड़ू लगाओ !" जब दुश्शासन ने इस प्रकार लज्जा छोड़कर अनुचित आज्ञा दी तब कमलाक्षी द्रौपदी ने

कृष्णे ! वरिक नी मुट़मटिप्पानें-
न्नुष्णिणच्चुनिऩ्ऩोरु दुश्शासनन् चॊन्नान् । २
दुश्शासनन् चॆन्ऩु लज्जयुं कैविट्टु
दुश्शासनंचॆय्तनेरत्तु कृष्णयुं ३
पोरुवानुण्टु विषममॆनिक्कॆऩ्ऩु
वारिजलोचनतानुरचॆय्तप्पोळ् । ४
तन्वि रजस्वलयायिरिक्कॆत्तन्नॆ
चॆऩ्ऩु तलमुटि चुट़्प्पिटिपॆट्टु । ५
सज्जनमॆल्लारुं नोक्कियिरिक्कवे
दुर्ज्जनाग्रेसरन् दुश्शासनन् खलन् ६
कच्चेल्मुलयाळॆयीळ्त्तु सभयिङ्कल्
स्वच्छमायेट़ं मृदुतरमाकिय ७
वस्त्रमॊरुतल चुट़्प्पिटिपॆट्टु
निस्तेजनेट़ं मटियातळ्लिच्चप्पोळ् । ८
नारीमणियुं मुऱतुटङ्ङीटिनाळ्
नारायणा ! हरे ! राम ! दयापर ! ९
विष्णो ! जगल्पते ! वृष्णिकुलोत्भव !
कृष्ण ! यदुपते ! पाहि नमोनमः । १०
श्रीवासुदेव ! धरणीधर ! चक्रपाणे !
हे वराह ! नरसिंह ! हे राघव ! । ११

कहा, "मैं नहीं आ सकती हूँ"। तब जाकर दुश्शासन ने उस रजस्वले का केश पकड़ लिया। जब सभी सज्जन देख रहे थे तब दुष्टों के नेता खल दुश्शासन ने इस रूपवती को सभा में खींचा। और उसके स्वच्छ और महीन वस्त्र को एक सिरे से पकड़कर वह निर्लज्ज उसे बिना हिचक के उतारने लगा। १-८ तब वह महिलारत्न चिल्लाने लगी—हे नारायण ! हे राम ! हे दयानिधे ! हे विष्णो ! हे जगत्पते ! हे वृष्णिकुलोद्भव ! हे कृष्ण ! हे यदुपते ! रक्षा करो, नमोनमः। हे वासुदेव ! हे धरणीधर ! हे चक्रपाणे ! हे वराह ! हे नरसिंह ! हे राघव ! हे पद्मनाभ ! हे कृष्ण! हे राम ! हे मुरहर ! हे कमलाक्ष ! हे लक्ष्मीपते ! हे केशव ! हे देवाधिनाथ ! हे हरे ! तुम्हें प्रणाम ! हे देवकीनन्दन ! रक्षा करो ! नमोनमः ! द्रौपदी ने जब इस प्रकार विलाप किया, ९-१४ तब उसका वस्त्र जितना उतारा गया उतना उसके स्थान पर दूसरा दिखाई दिया। बहुत कपड़ों के

पत्मनाभ ! कृष्ण ! राम ! मुरहर !
पत्मावलोकन ! पत्मालयापते ! १२
देव देव ! महादेवेश ! केशव !
देवाधिनाथ ! हरे ! ते नमो नमः १३
देवकीनन्दना ! पाहि नमो नमः ।
इत्थं प्रलापं कलन्नोंरुनेरत्तु १४
वस्त्रमळिच्चोळमुण्टङ्ङु पिन्नेयुं ।
एऴियोराटयवनळिच्चिट्टिट्टुं १५
कूऱयरयीन्तु वेऱायितिल्लेतुं ।
कूऱरविन्दाक्षनुण्टायालुळ्ळोरु १६
कारियमङ्ङने वन्तु ञायमेंटो ।
निर्ज्जरनायकनन्दननाकियो- १७
रर्ज्जुनभीमादिकळ् कण्टुनिल्क्कुन्नू ।
पिच्चयवरुटे धैर्यं निरूपिक्कि-
लच्युतन्तन्नुटेमायाबलवशाल् । १८
आर्क्कभिमानक्षयवुमापत्तुमि-
तोर्क्किल् मनुष्यनायाल् वरातेयुळ्ळु ? १९
काञ्चिकळ्ळकोण्टु मुऱुकिक्किटन्नोरु
पाञ्चालितन्नुटे पूञ्चेलयन्तेरं २०
मट्टोरु दुष्टन् पिटिच्चळिक्कुन्नतु
कुट्मोळिञ्ञवर् कण्टुनिन्नीटिनार् । २१
सत्यत्ते लंघिक्करुतेन्नु चिन्तिच्चु
सत्यपरायणन्मारटङ्ङी दृढं । २२

उतर जाने पर भी उसकी कमर वस्त्रहीन कभी न हुई । अगर अरविन्दाक्ष (कृष्ण) के प्रति प्रेम है तो उसका ऐसा फल होना स्वाभाविक है । देवों के पति के पुत्र अर्जुन, भीम और अन्य लोग देखते खड़े हैं ! उनका धैर्य अद्भुत निकला, अच्युत के मायाबल के कारण । सोचिये तो इस बात को सोचकर कौन ऐसा मनुष्य है जिसकी प्रतिष्ठाहानि और विपत्ति नहीं हो सकती ? मेखला में बँधी हुई द्रौपदी की साड़ी को एक दुष्ट पकड़कर उतार रहा था और सज्जन लोग उसे देखकर चुप खड़े थे !। १५-२१ 'सत्य का उल्लंघन नहीं करना चाहिये', यह समझकर ईमानदार लोग चुप रह गये । "हे धार्तराष्ट्र ! आप लोगों में कोई इस राजपुत्री पाञ्चाली को अपनी

धार्त्तराष्ट्रन्मारे ! निङ्ङळिलारानुं
पार्त्थिवनन्दनयाय पाञ्चालियें २३
वल्लभयाक्कि भरिच्चुकोंळ्कॆन्नतु
चॊल्लिनान् कर्ण्णनसूय मुळुक्कयाल् । २४
कात्तुकोंळ्कॆन्नॆद्धृतराष्ट्रमन्नव !
कात्तुकोंळ्कॆन्नॆ नी गान्धारिमातावे ! २५
कात्तुकोंण्टीटुविन् द्रोणरुं भीष्मरुं
कात्तुकोंळ्विन् सभापालन्मारें ! निङ्ङळ् । २६
धर्म्मराजावे ! जगल्प्राण ! मारुत !
धर्म्मप्रधाननायुळ्ळ देवाधिप ! २७
अश्विनीदेवकळे ! वन्नु निङ्ङळुं
दुश्शासनकृतदुःखमटक्कुविन् ! २८
अय्यो ! युधिष्ठिर ! भीम! धनञ्जय !
कैवॆटिञ्ञो निङ्ङळ् माद्रीसुतन्मारे? २९
आर्त्तयायिङ्ङनॆ पेर्त्तु मुऱयिट्टु
पार्त्थिवनन्दन शापमिट्टीटिनाळ् ३०
धार्त्तराष्ट्रन्मारे! निङ्ङळ् शतत्तेयुं
पोर्त्तलत्तिङ्कॆन्नु कॊल्लुक मारुति। ३१
पोराय्म चेर्प्पतिन्नाळाय कर्ण्णनॆ-
प्पोरिलॆतिर्त्तु धनञ्जयन् कॊल्लुक । ३२

प्रेयसी बनाकर रख लो", ऐसा कर्ण ने असूया के बढ़ने से कहा। "हे राजा धृतराष्ट्र ! मेरी रक्षा करो ! हे माता गान्धारी जी ! मेरी रक्षा करो ! हे द्रोणजी और भीष्मजी ! मेरी रक्षा करो ! हे सभापाल ! आप लोग भी मेरी रक्षा करो। हे धर्मराज (यमराज) ! हे जगत्प्राण वायो ! हे धर्मप्रधान देवाधिप ! २२-२७ हे अश्विनी देव ! आप सब आकर दुश्शासन का किया हुआ मेरा दुःख दूर करो। हा युधिष्ठिर ! भीम ! अर्जुन ! हे माद्री के पुत्र ! क्या तुम लोगों ने मुझे छोड़ दिया है ?" दुःखित होकर इस प्रकार चिल्लाती हुई राजपुत्री ने इस प्रकार शाप दिया— हे धार्तराष्ट्र ! आप सौ भाइयों को भीम युद्धभूमि में नष्ट कर दें ! अपमान करनेवाले कर्ण की धनञ्जय युद्ध में हत्या करें ! घृणा के कारण शकुनि को वीर सहदेव युद्ध में ध्वंस कर दें ! २८-३३ शाप देकर जब वह रो रही थी तब भीष्म, द्रोण और विदुर क्रुद्ध होकर धृतराष्ट्र के पास

वीरुकोँट्टुत्त शकुनियेँयुं पोरिल्
वीरनायोरु सहदेवन् कोँल्लुक । ३३
शापवुमिट्टवळ् केळुन्ननेरत्तु
कोपेन भीष्मरुं द्रोणर् विदुररुं ३४
चेँन्नु धृतराष्ट्ररोटु परञ्ञितु
नन्नल्ल मक्कळ् मुटिञ्ञुपोमिप्पोँळे । ३५
तेञ्चोँल्लाळाकिय पाञ्चालितन्नुटे
पूञ्चायलुं नल्ल पूञ्चेलयुमोँरु ३६
चाञ्चल्यमेँन्निये तोँट्टवन्तन्ने नी-
तान्चेँन्नु शिक्षिक्कयेँन्नतु केट्टप्पोळ् ३७
पाञ्चालियोटु परञ्ञु धृतराष्ट्रर्
वाञ्छितमायतु ञान् तरुवन् वरं । ३८
चोँल्लुक वेणुन्नतेँन्नतु केट्टवळ्
चोँल्लिनाळ् तोँण्टविरच्चुकोँण्टाकुलाल् । ३९
भर्त्ताक्कन्मारुटे दास्यवुमेँन्नुटे
भृत्य प्रवृत्तियुमिल्लातेँयाक्कणं । ४०
अल्लल् कळञ्ञालुमिन्नुतोँट्टेङ्किल-
तिल्लेँन्नु चोँल्लि धृतराष्ट्रर्तान्तन्ने । ४१
वन्दिच्चु पाञ्चालि पाण्डवन्मारुमा-
यिन्द्रप्रस्थत्तिनु पोवान् तुटङ्ङुन्पोळ् ४२
मन्नन् दुरियोधननुं शकुनियुं
कर्ण्णनुं कूटि निरूपिच्चु कल्पिच्चार् । ४३
इन्नुमोँरुनाळवर् वलुताय् वरु-
मेँन्नाल् नमुक्कु जयिप्पान् पणियत्रे । ४४

गये और बोले—"यह ठीक नहीं है। तुम्हारे सभी पुत्र नष्ट हो जायेंगे। मीठी आवाज़वाली पाञ्चाली के केशपाश को और शोभन वस्त्र को जिसने धृष्टता के साथ छुआ उसको तुम ही दण्ड दो।" यह सुनकर धृतराष्ट्र ने पाञ्चाली से कहा—"तुम्हें जो वर चाहिये मैं दूँगा। कहो क्या चाहिये।" यह सुनकर उसने दुःख से काँपती हुई आवाज़ में कहा—"मेरे पतियों के दासत्व और मेरे भृत्वत्व को समाप्त करो"। ३४-४० तब धृतराष्ट्र ने स्वयं कहा—"घबड़ाओ मत। आज से दोनों समाप्त समझो"। पाञ्चाली उनकी वन्दना करके पाण्डवों के साथ इन्द्रप्रस्थ जाने ही वाली थी। जब

इन्नुमोरिक्कल् विळिच्चु पोरुतेङ्कि-
लेन्नतनुवदिच्चु धृतराष्ट्ररुं । ४५
वन्नुपोकिन्नुमोरिक्कल् पोरुकेन्नाल्
वन्नुपोकेणं कुलनाशमेन्मतं । ४६
इन्निप्पणयमाकुन्नतु तोट़व-
रिन्नुतन्ने वनवासं तुटङ्ङणं । ४७
द्वादशसंवत्सरं मुळुवन् गत-
सादं तपसा वनत्तिल् वसिक्कणं । ४८
अज्ञातवासवुमोराण्टु चेय्यणं
विज्ञानिकळुळ्ळनाट्टिलिरुन्निट्टु । ४९
मध्येयरिञ्ञुपोयीटुकिल् पिन्नेयु-
मब्दत्रयोदशमिङ्ङने वाळण- ५०
मेन्नु पऱञ्ञु निरत्तिप्पोरुतितु
मन्नवन् धर्म्मजन् पिन्नेयुं तोट्टुपोल् । ५१
कुन्तीसुतन्मार् धृतराष्ट्रर्तन्नेयुं
कुन्तियोटोत्तु गान्धारियेत्तन्नेयुं ५२
द्रोणरेयुं कृपाचार्यनेत्तन्नेयुं
ताणुतोळुतितु भीष्मरेयुं नन्नाय् । ५३
वीणु नमस्करिच्चार् मुनिमारेयुं
केणुतुटङ्ङिनार् पौरजनङ्ङळुं । ५४

भूपाल दुर्योधन और शकुनि और कर्ण ने आपस में सलाह की और निश्चय किया—"ये पाण्डव किसी दिन फिर बड़े हो सकते हैं और हमको उस समय इनको जीतना कठिन होगा। इसलिए इनको फिर जूआ खेलने के लिये बुलाया जाय!" धृतराष्ट्र ने भी इसका अनुमोदन किया। "आज एक बार और चले आओ और लड़ो(जुआ खेलो)। मेरे मत में कुलनाश हो ही जायगा! ४१-४६ और आज शर्त यह होगी कि हारनेवाले आज से ही बनवास प्ररम्भ करें! और बारह बरस लगातार बन में तपस्या करते रहें। उसके बाद किसी ऐसे देश में एक बरस अज्ञातवास करें जहाँ विद्वान् हों। अगर बीच में पहचाने गये तो फिर और तेरह बरस इसी तरह बिताना होगा।" ऐसा कहने के बाद जूआ का खेल प्रारंभ हुआ और युधिष्ठिर फिर हार गये!। कुन्ती के पुत्रों ने, कुन्ती के साथ, धृतराष्ट्र को, गान्धारी को, द्रोणाचार्य को और कृपाचार्य को और भीष्म को झुककर प्रणाम किया। ४७-५३ मुनियों को भी उन्होंने साष्टाङ्ग

अश्वत्थामावादियायुळ्ळोरवरोटुं
निश्वासमुळ्क्कोण्टु यात्रयुं चोल्लिनार् । ५५
विश्वसिच्चीटुविन् दैवत्तेयेन्नतु
विश्वस्तनाय विदुररुरचेय्तान् । ५६
पारिच्च कारुण्यमुण्टायिरिक्कणं
नेरत्तु अङ्ङळ् वरुन्नतुमुण्टल्लो । ५७
कर्म्मवशत्ताल् वरुन्नतोळिक्कामो
धर्म्मसुत ! अन्नवर्कळुं चोल्लिनार् । ५८
नाटुं नगरवुं वीटुमुपेक्षिच्चु
काटकंपूवान् जटावल्क्कलं पूण्टु । ५९
कूटवे पोयितु धौम्यनवरुमाय्
गूढस्मितनाय्च्चमञ्ञु सुयोधनन् । ६०
ब्राह्मणरुमनुजन्मारुं भार्ययुं ।
धार्म्मिकनाकिय धर्म्मतनयनुं । ६१
पोकुन्नतु कण्टु साधुजनङ्ङळुं
वेकुं मनस्सोटु कण्णुनीरुं वार्त्तु । ६२
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिल् नोक्कातें मिण्टातें
तिङ्ङिन वेदन पोङ्ङियेल्लावरुं । ६३
निल्क्कुन्ननेरत्तु मल्गतियुण्टावान्
पुक्कारटवियिल् पाण्वरुमन्ने ६४

नमस्कार किया । और नगर के निवासी रोने लगे । अश्वत्थामा आदि जनों से भी निश्वास लेते हुए बिदा हुए । विश्वस्त विदुरजी ने कहा—"भगवान् में विश्वास करते रहो" । (उन्होंने उत्तर दिया) "हम लोगों के प्रति कारुण्य रहे, हम लोग जल्दी ही आजायेंगे" । "हे धर्मपुत्र, अपने कर्म के कारण जो होता है उसे कैसे टाला जा सकता है?", ऐसा (विदुर आदि ने) कहा । देश, नगर और घर को त्यागकर बन जाने के लिए उन्होंने जटा और वल्कल धारण किया । ५४-५९ धौम्यजी भी उनके साथ गये । सुयोधन भीतर ही भीतर हँस रहा था । धार्मिक युधिष्ठिर को ब्राह्मणों, अपने छोटे भाइयों और पत्नी के साथ बन जाते देखकर सज्जनों ने दुःखित होकर आँसू गिराये । आपस में न देखते हुए और न कुछ कहते हुए जब सब लोग खड़े देख रहे थे, तब पाण्डवों ने उसी दिन सद्गति प्राप्त करने के लिए वन में प्रवेश किया । ६०-६४

॥ सभापर्व समाप्त ॥

आरण्यं

कालत्तेक्कळयाते चोल्लु नी किळिप्पेण्णे !
नीलत्ते वेन्न निरमुळ्ळ गोविन्दन्तन्टे १
लीलकळ् केट्टाल् मतियाकयिल्लोरिक्कलुं
पालोटु पळं पञ्चसारयुं तरुवन् ञान् । २
मालोकर्क्किकतमुळ्ळ माधवन्तन्टे लील
कालंवैकाते परञ्ञीटुवन् केळ्प्पिन् निङ्ङळ् । ३
पालाळिमङ्कतन्टे कोङ्कयिलिळ्ळुकुन्न
मालेयं पूण्ट तिरुमारुळ्ळ नारायणन् ४
पालाळितन्निल् पळ्ळिकोळ्ळुन्न परन् पुमान्
कालदेशावस्थयिल् खण्डनां जगन्नाथन् ५
नालाय वेदङ्ङळ्क्कुमीरेळु लोकङ्ङळ्क्कुं
मूलमाकिय मूर्त्ति मुकुन्दन् मुरवैरि ६
कालनाशनसेव्यन् कामदन् कमलाक्षन्
कालिकळमेच्चु काट्टिल् कळिच्चीटिन देवन् ७
पालनविनाशनसृष्टिकळ्चेय्युं देवन्
नीलांभोरुहदललोचनन् मूर्त्ति कृष्णन् ८
ओन्नुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न तन्पुरान्तन्टे पादं
तन्नुळ्ळिल् चेर्त्तुकोण्टु धर्म्मजन् तिरुवटि ९

आरण्य पर्व ।

हे शुकी ! बिना विलम्ब के और सुनाओ ! नील का उपहास करनेवाले (श्यामवर्ण को धारण) करनेवाले गोविन्द की लीलाएँ सुनकर कभी तृप्ति नहीं होती । मैं तुम्हें दूध के साथ कदली फल और शक्कर दूँगा । (शुकी बोली) जनता को प्रिय लगनेवाली माधव की लीलाएँ बिना विलम्ब के सुनाऊँगी, सुन लीजिये । लक्ष्मी के स्तनों के चन्दन से लिप्त वक्ष:स्थलवाले नारायण, क्षीरसागर ही में सोनेवाले परपुरुष, (और) काल, देश और अवस्था के अनुसार अनेक हो जानेवाले, चारों वेदों की और चौदहों लोकों की मूल मूर्त्ति, मुकुन्द, मुरवैरि, शिवजी के सेव्य, कामद, कमललोचन, बन में गाय चराकर खेलनेवाले देव, १-७ सृष्टि, पालन और विनाश करनेवाले देव, नीलकमल के दल के सदृश लोचनवाले कृष्ण भगवान् के चरणों का ध्यान करते हुए आदरणीय युधिष्ठिर ने अपने भाइयों और

काननमकंपुक्कु सोदररोटुं तन्टे
मानसनाथयोटुं मामुनिजनत्तोटुं । १०
अन्नवर् गंगातीरं प्रापिच्चारेल्लावरुं
उन्नतमाकुं प्रमाणाख्यमां वटत्तिङ्क- ११
लिन्द्र प्रस्थत्तिल्निन्नेण्पत्तेण्णायिरवुं
वन्नितु गृहस्थन्माराकिय भूदेवन्मार् । १२
संन्यासिजनङ्ङळुं पतिनायिरं वन्नू
मन्नवन्तन्नेक्कण्टु दुःखिच्चारवरेल्ला- १३
मद्दिनमुपवासंचेय्तितु समस्तरु-
मेत्रयुं तापं वन्नु धर्म्मजनतुमूलं । १४
भरणीयन्मार्तम्मे भरिप्पानुपायमे-
न्तरचन्मारायवन्नु जनियाय्कोरुत्तरुं । १५
आहारत्तिनु पणियेन्तेन्नु युधिष्ठिरन्
मोहनाशननाय शौनकनोटु चोन्नान् । १६
शौनकन् धौम्यनोटु चोन्नाऽ धौम्यन् चोन्नान्
भानुदेवनेस्सेविच्चीटुवानुपदेशं । १७
कुन्तीनन्दनन्तनिक्कन्नेरं धौम्यन् मूल-
मन्त्रवुमुपदेशंचेय्तितु सांगमप्पोळ् । १८
अन्तकतनयनु द्रौपदिक्कतुनेरं
चिन्तचेय्तुपदेशं चेय्तितु वळिपोले । १९

मुनिजनों के साथ अपने मन की रानी को लेकर वन में प्रवेश किया। उस दिन सब लोग गङ्गातट पर एक उन्नत वटवृक्ष के पास पहुँचे। इन्द्रप्रस्थ से अठासी हज़ार गृहस्थ ब्राह्मण चले आये। दस हज़ार संन्यासी भी आये थे। राजा को देखकर सब दुःखित हुए। ८-१३ उस दिन सभी ने उपवास किया जिसके कारण युधिष्ठिर बहुत दुःखी हुए। जिनको पालना है उनके पालने का क्या उपाय है? ऐसा हो कि कोई भी राजा होकर जन्म न ले!। "आहार मिलने का क्या मार्ग है?" ऐसा युधिष्ठिर ने मोह के नाशक शौनक से पूछा। और शौनक ने धौम्य से पूछा तब धौम्य ने सूर्यदेव की सेवा करने का उपदेश दिया। और कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) को उस समय धौम्य ने सांग मूलमन्त्र का उपदेश दिया। युधिष्ठिर ने तो द्रौपदी को सोचकर नियम के अनुसार उपदेश दिया। १४-१९ पाञ्चाली ने सेवा की और भगवान् ने उसको एक पात्र दिया। देवभक्तों

सेविच्चु पाञ्चालियुं कोंटुत्तु पात्रं देवन्
देवभक्तन्माक्कुण्टो सङ्कटमुण्टाकुन्नु ? २०
भूदेवन्मारुं पिन्नेत्तङ्ङळुं पाञ्चालियुं
प्रीतियावोळमुण्टे चोऱतिलोंटुङ्ङीटू । २१
काम्यकं वनं पुक्कान् कण्टितु विदुररे
काम्यमायतु वरुमेन्नितु विदुररुं । २२
पण्टरक्किल्लत्तिलिट्टटच्चु चुट्टोरुना-
ळुण्टाय दुःखमोर्क्किलिन्नेटं सुखमल्लो । २३
सुखदुःखङ्ङळिटतुटरेक्कूटक्कूटे
सकलजन्तुक्कळक्कुमुण्टेन्नु धरिच्चालुं । २४
सत्यधर्म्मादिकळे रक्षिच्चुपोरुन्नव-
र्क्कत्तलुण्टाकयिल्ल निश्चयमोंन्नुकोंण्टुं । २५
अच्युतन् तानुं तुणयुण्टल्लो निङ्ङळ्क्केन्नाल्
निश्चयं नित्यं जयमुण्टामिङ्ङने काण्क । २६
क्षत्तावुं धर्म्मात्मजन्तानुमायिरुन्नुट-
नित्तरं पऱयुन्पोळंबिकासुतन्चोल्लाल् २७
ब्राह्मणभक्तश्रेष्ठनाकिय विदुररे
सौम्यनां गावल्गणि कूट्टिक्कोंण्टङ्ङुपोयान् । २८
हस्तिनपुरं चेन्नु पुक्कितु विदुररुं
वृत्तान्तमरचनोटेप्पेरुमऱियिच्चा-२९

को कभी दुःख प्राप्त होता है ? सभी ब्राह्मणों की, अपने लोगों की तथा पाञ्चाली की तृप्ति होने तक का भात उस पात्र में सदैव रहता है। युधिष्ठिर काम्यक बन गये और विदुरजी का दर्शन हुआ। विदुरजी ने कहा—अच्छी बातें होनेवाली हैं। पहले लाक्षागृह में बन्द करके जलाये गये। उस समय का दुःख याद करो तो अब सुख है। जान लो कि सुख और दुःख सभी प्राणियों के कभी-कभी होते हैं। जो सत्य और धर्म की रक्षा करते रहते हैं उनको निस्सन्देह कोई दुःख नहीं प्राप्त होगा। आप लोगों का अच्यतनी (कृष्ण) का साथ तो है ही। इसलिये जय तो प्राप्त ही हो जायगी। यह दृष्टि रखना। २०-२६ जब विदुरजी और युधिष्ठिर इस प्रकार बातें कर रहे थे तब धृतराष्ट्र के कहने से सौम्य गावलगणि आकर ब्राह्मण भक्तों में श्रेष्ठ विदुरजी को साथ ले गये। विदुरजी हस्तिनापुर पहुँचे और राजा से सब समाचार बतला दिये। उस समय श्री मैत्रेय ने सुयोधन से युधिष्ठिर का राज्य लौटाने के लिये कहा। तब

नन्नेरं सुयोधनन्तन्नोटु श्रीमैत्रेयन्
धन्यनां धर्म्मजन्टे राज्यं नी कोंटुक्कोन्नान् । ३०
अन्नपहासत्तोटु तुटमेल् कोंट्टियार्त्तान्
मन्नवन् धृतराष्ट्रनन्दनन् मैत्रेयनुं । ३१
भीमन्टे तल्लु निन्टे तुटमेल् कोंण्टु चाक
भूमिपालककुलनाशननाय नीयुं । ३२
शापवुमरुळ्चेय्तु मरञ्ञु महामुनि ।
तापसवेषंपूण्टु धर्म्मजनादिकळुं ३३
काननत्तूटे पोकुंनेरत्तु किर्म्मीरनां
मानमुळ्ळरक्कनेक्कोन्नितु भीमसेनन् । ३४
अन्धकवृष्णिकळुं पाञ्चालन्मारुं नल्ल
बन्धुवां कृष्णन्तानुं पाण्डवन्मारेक्कण्टु । ३५
धर्म्मजन् कुशलप्रश्नादिकळ्चेय्तशेष-
मम्बुजविलोचनन् कृष्णनुमरुळ्चेय्तु । ३६
यागवुं कळिञ्ञु ञानङ्ङु चेल्लुन्पोळ् मुन्नं
प्रागल्भ्यमेरुन्नोरु साल्वनुं पटयुमाय् ३७
श्रीमद्द्वारक चेन्नु वळञ्ञारवरप्पोळ्
वार्मेत्तुं पटयुमाय् चेन्नवनेयुं वेन्नेन् । ३८
नेरत्तेन्नुरचेय्तु पोयितङ्ङवर्कळुं
घोरमां द्वैताटविपुक्कितु पाण्डवरु- ३९

राजा धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) अपनी जाँघें पीटते हुए और उपहास करते हुए बहुत चिल्लाया। यह देखकर मैत्रेय ने शाप दिया कि भीमसेन के प्रहार तुम्हारी जाँघों पर पड़ने से तुम्हारी मृत्यु हो ! ऐसा शाप देकर महामुनि अन्तर्धान हो गये। युधिष्ठिर आदि जब तापसवेष धारण करके वन के भीतर से जा रहे थे तब भीमसेन ने किर्म्मीर नामक राक्षस का वध किया। २७-३४ अन्धक, वृष्णि, पाञ्चाल और अच्छे बन्धु कृष्ण ने पाण्डवों को देखा। युधिष्ठिर द्वारा कुशल-प्रश्न आदि पूछे जाने के बाद कमलोचन कृष्ण ने निवेदन किया। राजसूय समाप्त होने के बाद जब मैं लौटा तब प्रगल्भ साल्व ने अपनी सेना के साथ द्वारकापुरी को घेर लिया था। अतएव एक शक्तिशाली सेना के साथ जाकर मुझे उसको मारना पड़ा। इतना कहकर वे जल्दी चले गये। पाण्डवों ने तदनन्तर घोर द्वैतवन में प्रवेश किया। वहाँ महामुनि मार्कण्डेय का दर्शन करके उनकी

मन्तेरं मार्क्कण्डेयनाकिय महामुनि-
तन्नेयुं कण्टु तोळुताशीर्व्वादवुं कोण्टार् । ४०
तीर्त्थङ्ङळतुमाटि वसिक्कुंकालत्तिङ्कल्
पार्त्थिवनोटु भीमसेननुमुरचेय्तु । ४१
ञानुमर्ज्जुननुमाय् शत्रुक्कळ्तम्मेक्कोल्लां
मानमोटरचु वाणीटु निन्तिरुवटि । ४२
कालं पार्प्पतिनेन्तु कारणमरुळ्चेय्क
कालनन्दननाय कूटलर्कुलकालन् ४३
दुष्टरेप्पेटिच्चेवं दुःखिक्कोन्तुळ्ळतेल्लां
कष्टमेन्नतु केट्टु धर्म्मजन्तानुं चोन्नान् । ४४
द्रोणभीष्मादिकळेक्कोल्लुवान् पणियुण्टु
वेणमे सत्यं पालिच्चीटुकयेन्तुळ्ळतुं । ४५
वत्सरं त्रयोदशानन्तरं वधं चेय्यां
मत्सरमतिकळां कौरवन्मारेयेल्लां । ४६
इत्तरं परञ्ञवरित्तिरियिरिक्कुन्पो-
ळुत्तमन् वेदव्यासनविटेक्कोळुन्तळिळ । ४७
अर्घ्यपाद्यादिकळाल् पूजिच्चु वन्दिच्चोरो
दुःखङ्ङळ् मुनियोटु धर्म्मजन् परञ्ञप्पोळ् । ४८
कारुण्यं पूण्टु वेदव्यासनां पितामहन्
पोरुं नी दुःखिच्चतु केळितेन्तरुळ्चेय्तु । ४९

वन्दना की और उनके आशीर्वाद प्राप्त हुए। जब वे तीर्थों में स्नान करते हुए विराज रहे थे तब एक दिन भीमसेन ने राजा से कहा—३५-४१ "मैं और अर्जुन शत्रुओं का नाश करेंगे और आप सम्मान के साथ राज्य कीजिये। प्रतीक्षा करने की क्या आवश्यकता है? बतलाइये। आप जैसे यमराज के पुत्र और शत्रुनाशक के लिये दुष्टों के डर के मारे दुःख का अनुभव करना कष्ट की बात है"। यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा, "द्रोण, भीष्म आदियों का वध करना कठिन काम है और सत्य का पालन करना भी तो है। तेरह बरस के बाद मत्सर की बुद्धिवाले कौरवों का वध करना ठीक होगा। जब इस प्रकार की बातें हो रही थीं तब उत्तम वेदव्यासजी वहाँ पधारे। उनको अर्घ्य और पाद्य देकर वन्दना करने के बाद युधिष्ठिर ने अपने दुःखों को उन्हें सुनाया। ४२-४८ तब कारुण्य से प्रभावित होकर पितामह वेदव्यास ने कहा—"अब और दुःख मत करो।

कैलासत्तिङ्कल् चॆन्नु कालारितन्नॆस्सेवि-
च्चालोरु कळिवु वन्नीटुं निङ्ङळ्क्कॆन्नतिन्-५०
मूलमन्त्रवुमुपदेशिच्चु महामुनि
कालनन्दनन्तनिक्कवन्टॆ नियोगत्ताल् ५१
अर्ज्जुनन् तपस्सु चॆय्तीटिनान् महेशनॆ
निर्ज्जरनाथन्तानुं काट्टाळनायि वन्नान् । ५२
पन्निया‌य् मूकासुरन् पार्त्थनॆक्कॊल्वान् वन्नु
पन्नियॆयॆय्तन्नेरं काट्टाळनाय देवन् । ५३
मन्नवनोटु युद्धं चॆय्तवन् मदं पोक्कि-
प्पिन्नॆ प्रत्यक्षनाय् नल्कीटिनाननुग्रहं । ५४
पाशुपतास्त्रं नल्किप्पार्त्थनु स्वर्गं पुक्कान्
क्लेशवुमॊळिच्चसुरन्मारॆयॊक्कक्कॊन्नान् । ५५
उर्व्वशि शपिच्चोरु शापवुमेट्टुकॊण्टु
देवेन्द्रन् कॊटुत्तोरु वरवुं वाङ्ङिक्कॊण्टान् । ५६
षण्डत्वमज्ञातवासत्तोटुकूटित्तीर्न्नु
कुण्ठभाववुं पोकॆन्नरुळिच्चॆय्तानिन्द्रन् । ५७
रोमेशन्तन्नॆक्कण्टु पऴञ्ञङ्ङयच्चितु
भूमियिल्च्चॆन्नु वृत्तान्तङ्ङळॆयरियिप्पान् । ५८
चापशक्तियुं शरशक्तियुं वेणमल्लो
भूपालन्मार्क्कुं शत्रुसंहारं वेणमॆङ्किल् । ५९

मेरी बात सुनो । तुम लोग कैलास चलो और कालारि (शिव) की सेवा करो तो शक्ति प्राप्त करोगे ।" तदनन्तर महामुनि ने युधिष्ठिर की प्रार्थना पर उनको मूलमन्त्र का उपदेश दिया । तब अर्जुन ने शिवजी की तपस्या की और देवों के नाथ (शिव) किरात के रूप में पधारे । उस समय मूकासुर वराह के रूप में अर्जुन को मारने आया । किरातरूपी देव ने वराह पर निशाना मारा । तब अर्जुन और किरात में युद्ध छिड़ गया । जिसमें भगवान् ने अर्जुन का मद दूर करके, प्रत्यक्ष होकर उस पर अनुग्रह किया । उसको पाशुपतास्त्र दिया । तत्पश्चात् अर्जुन स्वर्ग पहुँचे और वहाँ (इन्द्र के शत्रु) असुरों को नष्ट कर दिया । वहाँ अर्जुन पर उर्वशी का शाप लग गया—पर देवेन्द्र ने उसको वर प्रदान किया, ४९-५६ "तुम्हारी लाचारी अज्ञातवास के बाद समाप्त हो ! और कुंठभाव (शक्ति-हीनता) भी नष्ट हो !" ऐसा इन्द्र ने आशीर्वाद दिया । तदनन्तर अर्जुन

शत्रुसंहारंचेय्वान् ञानिन्नु देवकळो-
टस्त्रशक्तियेस्सन्पादिच्चङ्ङु वन्नीटुवन् । ६०
तीर्त्थस्नानादिकोण्टुं क्षेत्रोपवासं कोण्टु-
मास्थया चापशक्ति सन्पादिच्चीटुकेन्नु । ६१
धर्म्मनन्दननोटु चोल्केन्नु धनञ्जयन्
निर्म्मलनाय मुनिमुख्यनें नियोगिच्चान् । ६२
वृत्रारिपुत्रनुटे सन्देशवाक्यङ्ङळुं
वृत्तान्तङ्ङळुमेल्लां धर्म्मजादिकळोटु ६३
रोमेशमहामुनितानरुळ्चेय्तीटिनान्
भूमिपालनुं मुनिमुख्यनें वणङ्ङिनान् । ६४

नळोपाख्यानं

तल्क्कालं युधिष्ठिरन् भूप्रदक्षिणं चेय्तु
चोल्क्कोण्ट तीर्त्थङ्ङळुमाटि वाळुन्न कालं । १
धर्म्मजन्तन्नें वन्नु कण्टितु बृहदश्वन्
धर्म्मजन् दुःखङ्ङळुं मामुनियोटु चोन्नान् । २
अम्मुनिवरन्तानुं दुःखत्तेक्कळवानाय्
धर्म्मजनोटु नळोपाख्यानमरियिच्चान् । ३

को रोमेश (लोमश) मुनि का दर्शन हुआ और उनसे उन्होंने पृथ्वी पर जाकर युधिष्ठिर आदि से सब वृत्तान्त कहने के लिए प्रार्थना की। अगर शत्रुओं का संहार करना है तो राजाओं के पास चापशक्ति और शरशक्ति होनी चाहिये। शत्रुसंहार के लिये देवों से अस्त्रशक्ति प्राप्त करके मैं वापस आजाऊँगा। "तीर्थ स्नान करके और क्षेत्रों में उपवास करके बड़ी आस्था के साथ अपनी चापशक्ति को बढ़ाना।"—ऐसा युधिष्ठिरजी से कहने के लिए धनञ्जय ने निर्मल मुनिवर से प्रार्थना की। वृत्रशत्रु (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) के सन्देश को और वृत्तान्तों को रोमेश (लोमश) महामुनि ने युधिष्ठिर आदियों को सुनाया। और राजा (युधिष्ठिर) ने मुनिवर की वन्दना की। ५७-६४

नलोपाख्यान

उन दिनों युधिष्ठिर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करते हुए विख्यात तीर्थों में स्नान कर रहे थे। तब बृहदश्व उनके दर्शन के लिए पधारे। युधिष्ठिर ने उनको अपने दुःख सुनाये। मुनिवर ने उनके दुःख दूर करने के लिए

दुःखङ्ङळितिल् परमुण्टायि पण्टु नळ-
नोक्कवे केळ्क्क नीयुं दुःखङ्ङळकलुवान् । ४
चोल्क्कोण्ट विदर्भभूपालनन्दनयाय
मैक्कण्णाळ्कुलमौलि दमयन्तियुमायि ५
स्वर्गसम्मितमाय निषधविषयवुं
मुख्यभोगेन परिपालिच्चु वाळुंकालं ६
पुष्करनोटु चूतु तोटुपोय् वनंपुक्का-
नुळ्क्कान्पुं भ्रमिच्चितु कलितन्नावेशत्ताल् । ७
पुष्करविलोचनयाकिय दमयन्ति
दुःखिच्चु पिन्पे चेन्नु वस्त्रवुं कोटुत्तप्पोळ् । ८
रात्रियिलोरु पेरुवळियन्पलंतन्निल्
पार्त्थिवन् पत्नियुमाय् वसिच्चीटिननेरं ९
भर्त्तावां नळनृपोत्सङ्गसीमनि कनि-
ञ्ञुत्तमांगवुं चेर्त्तु निद्रयुं पूण्टाळवळ् । १०
चित्तविभ्रमं कोण्टु मत्तनां नृपोत्तमन्
निद्रार्त्तयायीटुन्न भद्रयां भार्यतन्ने ११
रात्रियिलुपेक्षिच्चु पिन्नेयुं पोयानव-
नार्त्तयायवळ् करञ्ञुळन्नुनटक्कुन्पोळ् । १२

उनको नलोपाख्यान सुनाया । पूर्वकाल में नल को आप से भी अधिक दुःख सहना पड़ा था । वह सब सुन लीजिये ताकि आपके दुःख दूर हो जायं । जब नल विख्यात विदर्भ राजा की पुत्री महिलाकुल की शिरोमणि दमयन्ती के नाथ स्वर्ग के समान निषधदेश का सभी भोगों के साथ परिपालन कर रहे थे, तब पुष्कर से जूए में हारकर वन चले गये और उनका मन भी कलि के आवेश से विक्षिप्त हुआ । १-७ कमलाक्षी दमयन्ती दुःखित हुई और अपने कपड़े का अंश देकर उनके साथ चली । रात को बड़ी सड़क के एक मन्दिर में वह अपनी पत्नी के साथ रहे । वह अपने पति नल की छाती पर प्रेम से सिर रखकर निद्रा में मग्न हो गयी । चित्तविभ्रम के कारण नृपोत्तम अपनी सोती हुई साध्वी पत्नी को रात को त्यागकर कहीं चले गये और उसकी दुःखित पत्नी रोती हुई इधर-उधर घूमने लगी । तब एक बड़ा अजगर उसे खाने के लिये निकट आया । भगवान् की कृपा से एक जंगली मनुष्य ने उसे मारकर बचाया । फिर वह 'मेरे साथ यहाँ सुख से रहो, तुम्हारा मैं पालन पोषण करूँगा' ऐसा कहता हुआ —मन्मथ (कामवेग) से बेबस होकर पास आने लगा । तब निर्मलांगी दमयन्ती ने

भक्षिप्पानट्टुत्तोरु पेरुन्पान्पिनेक्कोन्नु
रक्षिच्चान्प्पोळोरु काट्टाळल् दैववशाल् । १३
ॲन्नोट्टुकूटिस्सुखिच्चिविटे वसिक्केन्नाल्
निन्नेयु भरिच्चुकोण्टीट्टुवनेन्नु चोल्लि १४
मन्मथविवशनायट्टुत्तु काट्टाळनु
निर्म्मलांगियुं शपिच्चवनेक्कोन्नीटिनाळ् । १५
पान्थन्मारोटुं कूटि चेदिराज्यत्तिल्चेन्नु
तान्तयाय् मातामहियरिके वाणीटिनाळ् । १६
बुद्धि नेरल्लाय्कयाल् पत्नियेयुपेक्षिच्चु
पृथ्वीपालकन् महारण्यान्ते पोकुन्नेरं १७
काट्टुती पिटिपेट्टु नालुदिक्किलुं महा-
काष्ठमुण्टतिन्मद्ध्ये निल्क्कुन्नतरुतन्मेल् १८
इरुन्नु कार्क्कोटकन् करयुन्नतु केट्टु
परन्नोरग्नियुटे नटुवे चेन्नू नळ- १९
नेटुत्तु कार्क्कोटकन्तन्नेयुं कोण्टुपोन्नान्
कोटुत्तानोरु दिव्यवस्त्रवुमतु नृप- २०
नुटत्तनेरं नेराय्वन्नितु बुद्धियुमो-
ट्टुत्तु मेवुमयोध्यापुरं पुक्कान् नळन् । २१
ऋतुपर्ण्णनुं नळन्तन्नुटे गुणं कण्टु
पथिकजनङ्ङळ्क्कु भोजनं कोटुप्पानाय् २२

उसको शाप देकर नष्ट कर दिया। तदनन्तर वह कुछ यात्रियों के साथ चेदिराज्य चली गयी और वहाँ अपनी नानीजी के साथ रही। ८-१४ जब बुद्धि ठीक न होने के कारण अपनी पत्नी को त्यागकर राजा महारण्य के भीतर से जा रहे थे तब चारों तरफ़ आग लग गयी और उस वन के अन्दर जो एक बड़ा वृक्ष था उस पर बैठे हुए कर्कोटक नाग का रोना सुनाई दिया। तब फैले हुए अग्नि के बीच में घुसकर नल ने कर्कोटक नाग को उठा लिया। तब कर्कोटक नाग ने राजा को एक दिव्य वस्त्र दिया। १५-२० राजा ने जब उसे पहना तब उनकी बुद्धि ठीक हो गयी; और वे पास ही में विराजमान अयोध्यापुरी चले गये। वहाँ के राजा ऋतुपर्ण ने नल के गुणों को देखकर उनको यात्रियों का भोजन बनाने के लिये खुशी से अपना रसोइया बनाकर अपने पास रखलिया। उस समय किसी को भी नहीं मालूम हुआ कि वे राजा हैं। शक्र, वरुण, अग्नि और यमराज से प्राप्त प्रसन्नता से दिये वरों के कारण राजा नल बिना चावल,

पाचकनाक्किवच्चुकोंण्टितु सन्तोषिच्चु
राजावेंन्नोरुवरुमरिञ्ञीलतुकालं । २३
शक्रनुं वरुणनुमग्नियुं कृतान्तनु-
मुळ्ळकान्पु तेंळिञ्ञु नल्कीटिन वरङ्ङळाल् २४
अरियुं तीयुमुप्पुं विरकुं कूटातेंयुं
विरविल् वेण्टुवोळं चोरवनुण्टाक्किटुं । २५
अतु केट्टत्यल्भुतं पूण्टितु महाजनं ।
पृथिवीश्वरनाय विदर्भनतुकाल- २६
मयच्चू चारन्मारें राज्यङ्ङळ्तोरुमप्पोळ्
नियुक्तन्मारायोरु चारन्मारन्वेषिच्चार् । २७
नळनुण्टयोद्धययिलेंन्नरिञ्ञवर्कळुं
तेंळिवोटुळरिच्चेंन्नवस्थयरियिच्चार् । २८
विदर्भन् चेदिराज्यस्थितयां मकळ्तन्नें
विदित्वा कूट्टिक्कोंण्टुपोयितु सम्मोदत्ताल् । २९
तन्नुटे मकळाय दमयन्तिक्कु नृपन्
पिन्नेंयुं मुतिर्न्नितु कल्याणं मुन्नेंप्पोलें । ३०
उण्टुपोलिन्नुं दमयन्तिक्कु स्वयंवरं
रण्टामततिन्नोंक्कच्चेंन्नितु भूपालन्मार् । ३१

आगी, नमक, और लकड़ी के जितना चाहिये उतना भोजन बड़े अच्छे ढंग से बनाता था। यह सुनकर सारी जनता आश्चर्य चकित हुई। उस समय विदर्भ के राजा ने चरपुरुषों (गुप्तचरों) को हर एक राज्य में भेजा। उन नियुक्त चरपुरुषों (गुप्तचरों) ने सब जगह ढूँढा। जब उनको मालूम हुआ कि नल अयोध्या में हैं तब तुरन्त ही उन्होंने इस बात को सप्रमाण राजा से कह दिया। २१-२८ विदर्भ राजा ने चेदिराज्य में स्थित अपनी लड़की को बड़े प्रमोद से अपने यहाँ बुलवा लिया। तदनन्तर राजा ने अपनी लड़की दमयन्ती का फिर विवाह कराने का निश्चय किया। यह सुनकर कि दमयन्ती का फिर स्वयंवर होनेवाला है सभी भूपाल उसमें सम्मिलित होने के लिए चले। जब ऋतुपर्ण भी जाने के लिए तैयार हुए तब नल ने कहा "रथ को तो मैं ही चलाऊँगा"। नल ने अश्व-हृदयमन्त्र का प्रयोग किया और राजा ने अक्षहृदयमन्त्र का। घोड़े के समान वेगवाले रथ में बैठे हुए ऋतुपर्ण ने अश्वत्थवृक्ष में कितने पत्र हैं यह बतलाया। जब दोनों ने एक दूसरे की विद्या सीख ली तब कलि नल (के शरीर) से अलग हुआ। जब राजा ऋतुपर्ण विदर्भराज्य पहुँचे

पोकणमतिनेंन्नु कोप्पिट्टानृतुपर्ण्णन्
तेर्क्किट विट्टुवन् ञानेंन्निनु नळन्तानुं । ३२
अन्नेरमश्वहृदयमन्त्रं प्रयोगिच्चान्
मन्ननुमक्षहृदयमन्त्रं प्रयोगिच्चान् । ३३
अश्वत्तिन्वेगंपूण्ट तेरतिलिरिक्कुन्पो-
ळश्वत्थपत्नमित्रयुण्टेंन्नानृतुपर्ण्णन् । ३४
अन्योन्यं पठिच्चप्पोळ् नळनुं कलि वेरूाय् ।
मन्नवन् विदर्भराज्यत्तिनु चेंन्ननेरं ३५
सुन्दरियाय दमयन्तियुं नळनुमाय्
मन्दिरं पुक्कु राज्यं पालिच्चु वळिपोलें । ३६
पुष्करनेंयुं पिन्नें निग्रहिच्चुर्व्वीतल-
मोंक्कत्तानटक्कि वाणीटिनान् चिरकालम् । ३७
दुःखङ्ङळ् पण्टुळ्ळोर्क्कुमुण्टायिट्टुण्टु मन्न !
दुःखिक्कवेण्टा मेलिल् नन्मकळ् वन्नुकूटुं । ३८
धर्म्मजन्तनिक्कक्षहृदयं पठिप्पिच्चि-
ट्टम्मुनि मरूञ्ञप्पोळ् नारदनेंळुन्नळ्ळि । ३९
तीर्त्थत्तिन् महिमकळोंट्टोंळियातेयोंक्क-
त्तीर्त्तरुळ्चेंय्तु मुनि नारदन् मरूञ्ञप्पोळ् । ४०
पार्त्थिवन् धौम्यनोटु पिन्नेंयुं चोदिक्कयाल्
तीर्त्थमाहात्म्यमरुळ्चेंय्तितु धौम्यन्तानुं । ४१
रोमेशनेंळुन्नळ्ळि पार्त्थन्टे विशेषङ्ङ-
ळामोदं वरुमारु धर्म्मजनोटु चोंन्नान् । ४२

तब सुन्दरी दमयन्ती और नल दोनों साथ-साथ अपने घर गये और नियम के अनुसार राज किया। २९-३६ तत्पश्चात् पुष्कर को हराकर सारी पृथिवी को अपने वश में करके चिरकाल तक राज्य किया। पूर्वकाल के लोगों को भी बहुत दुःख प्राप्त हुए थे, इसलिए हे राजा ! आप दुःखित न होवें ! कल्याण होनेवाला है। जब वे मुनि युधिष्ठिर को अक्षहृदय सिखाकर चले गये तब नारदमुनि पधारे। मुनि नारद ने सभी तीर्थों के महत्व को सुना दिया। तदनन्तर अन्तर्धान हो गये। तब राजा ने तीर्थों के माहात्म्य के संबन्ध से धौम्य से पूँछा और उन्होंने सब बतला दिया। इतने में रोमेश (लोमश) पधारे और उन्होंने अर्जुन के सभी हर्षप्रद समाचार युधिष्ठर को सुनाये। ३७-४२ देवेन्द्र के वृत्तान्त भी बतला दिये।

देवेन्द्रविशेषवुमङ्रियिच्चवरुमाय्
पोयितु तीर्त्थस्नानं चेय्वानायोरुन्पेट्टार् । ४३
पोयितु पाण्डवरुं रोमेशनोटुंकूटि-
प्पोयितु दुरितङ्ङळ् मायामोहवुं तीर्न्नु । ४४
गंगयुं सरस्वति यमुना कुरुक्षेत्रं
संगनाशनमाय पुष्करं प्रभासवुं ४५
आटिनारविटुन्नु कण्टितु कृष्णन्तन्ने
केटुकळ् तीरुमेन्नु माधवनरुळ्चेय्तु । ४६
पोयितङ्ङविटुन्नुं रोमेशनोटुं कूटि
माय वेङ्ट्टि मुनि पङ्ञ्ञु पुराणङ्ङळ् । ४७
नरनारायणन्मारालयमायिट्टुळ्ळ
पेरिय बदर्याख्यमाश्रममकंपुक्कार् । ४८
कण्टितु घटोल्क्कचन्तन्नेयुमविटेनि-
न्नुण्टायि सन्तोषवुमवर्कळ्क्कतुकालं । ४९

कल्याणसौगन्धिकं

मन्दमाय्पण्टु कण्टिट्टिल्लात गन्धत्तोटुं
वन्नानङ्ङोरु वायु भीमनोटतुनेरं १

तदनन्तर पाण्डवों के साथ तीर्थस्नान के लिये जाने को तैयार हुए। पाण्डव रोमेश (लोमश) के साथ गये और उनके सभी पाप नष्ट हुए और उनका मायामोह भी समाप्त हुआ। गंगा, सरस्वती, यमुना, कुरुक्षेत्र, आसक्ति का नाश करनेवाला पुष्कर, प्रभास आदि सभी तीर्थस्थानों पर गये। प्रभास में कृष्ण का दर्शन हुआ। उन्होंने आश्वासन दिलाया कि सभी विपत्तियाँ दूर हो जायेंगी। वहाँ से वे फिर रोमेश (लोमश) के साथ चले और माया से मुक्त मुनि ने पुराणों को सुनाया। तदनन्तर उन्होंने नर और नारायण के निवासस्थान बदरिकाश्रम में प्रवेश किया। वहाँ उन्होंने घटोत्कच को देखा जिससे उन सबको बड़ी प्रसन्नता प्राप्त हुई। ४३-४९

कल्याणसौगन्धिक

उस समय अपूर्व गन्धवाला वायु बहने लगा और सुन्दरी पाञ्चाली ने भीमसेन से कहा—"मेरे पतिदेव! यह किसी पुष्प का सुगन्ध है। हे

सुन्दरि पाञ्चालियुं चोल्लिनाळोरु पुष्पं
तन्नुटे परिमळमायतुमतिने नी । २
अन्नुटे भर्त्तावायुळ्ळोवे ! गन्धवाहज !
चेन्नु कोण्टन्नु मम नल्कणमेन्ननेरं । ३
भीमनुं गदयुमाय् नटन्नू हनुमानुं
प्रेममुळ्क्कोण्टु मुतुवानरवेष पूण्टान् । ४
मार्ग्गवुं मुटिच्चवनिरिक्कुंनेरं भीमन्
मार्ग्गं नल्किनिक्कङ्ङु नीङ्ङुकेन्नुरचेय्तान् । ५
नीङ्ङुवानरुतेतुं गदयाल् नीक्किक्कळ
वाङ्ङनिन्नाशु चाटिक्कटन्नीटल्लयायिकल् । ६
नीक्कुवान् भाविच्चिचट्टु नीङ्ङात्तोरनन्तरं
नोक्कियाल् कटक्कयुमरुतु निरूपिच्चाल् । ७
इक्कुलंतन्निलुळ्ळोरग्रजनिनिक्कुण्टु
मर्क्कटवृद्धन्तन्टे वालोट्टुङ्ङुन्नेटत्तु । ८
कूटेप्पोयीटामेन्नितृट्रिय वळि चेन्नु
कूटवाल् नीण्टुकोण्टिट्टोटुङ्ङिक्कूटाय्कयाल् । ९
सन्देहं मनक्कान्पिलुण्टायिट्टवन्वन्नु
वन्दिच्चु हनुमानुमवनोटुरचेय्तु । १०
चेन्नु नी सौगन्धिकं परिच्चुकोण्टु पोन्नाल्
निन्नेक्कोन्नीटुमतु काक्कुन्न निशाचरर् । ११

वायुपुत्र ! आप जाकर उस पुष्प को लाकर मुझे दे दीजिये !" तब अपनी गदा लिये भीम चले । हनुमान् ने भी प्रेम से पक्का वानरवेष धारण किया । और रास्ता रोककर बैठ गए । तब भीम ने कहा, "रास्ता दो और हटो" । हनुमान् ने कहा "मैं बिलकुल ही नहीं हिल सकता हूँ, अपनी गदा से मुझे हटाओ । नहीं तो कुछ पीछे हटकर कूदो और मुझे लांघ जाओ । १-६ भीम ने हटाने की कोशिश की पर असफल हुए । तब सोचा, "इसे लांघना भी उचित न होगा । इसी कुल के एक मेरे बड़े भाई हैं । इसलिए इस वानरवृद्ध की पूँछ जहाँ समाप्त होती है वहाँ से निकल जाऊँगा, ऐसा समझकर आगे देखने गये । जितनी दूर गये उतनी दूर पूँछ भी बढ़ती गयी । तब उनके मन में सन्देह हुआ और लौटकर आये और वानर को प्रणाम किया । तब हनुमान् ने कहा—"अगर तुम जाकर सौगन्धिक पुष्प को तोड़ोगे तो उसके रक्षक राक्षस तुम्हें मार डालेंगे । तुम्हें सचेत करके

ऄन्नतिन्नुपदेशं चॊल्लुवानिरुन्नु ञान्
चॊन्नवण्णं नी चॆन्नु कॊण्टुपोन्नालुमिनि । १२
ऄन्नवनयच्चप्पोळ् वन्दिच्चु भक्तियोटे
निन्नितञ्जनासुतन्मुन्निलम्मारु तदा । १३
वारिधि चाटियोरुनेरत्तॆ रूपं काण्मान्
मारुति कामिच्चॊरुनेरत्तु वायुपुत्रन् । १४
कण्टुकॊण्टालुमॆन्नु निन्नतुनेरं भीमन्
कण्टु पेटिच्चु कूप्पि स्तुतिच्चु निन्ननेरं । १५
पेटिक्कवेण्टयॆतुमॆन्ननुग्रहं चॆय्तु
गाढप्रेमत्तोटयच्चीटिनान् कपिवीरन् । १६
उन्नतनाय भीमसेननुं सौगन्धिकं
मन्दमॆन्नियॆ पऱिच्चीटिननेरत्तिङ्कल् १७
ऄतिर्त्त राक्षसरॆक्कॊन्नितु भीमसेन-
नॆतिर्त्तु गन्धर्व्वन्मारसंख्यं पटयोटुं । १८
अवरॆयॊरुजाति जयिच्चु कॊण्टुपोन्ना-
नवनॆक्काणाञ्ञिट्टु शोकिच्चु युधिष्ठिरन् । १९
ऒट्टॊटं चॆल्लुन्नप्पोळ् कण्टवनोटुं कूटि
पॆट्टॆन्नु पोन्नुवन्निङ्ङाश्रमं पुक्कशेषं । २०
इन्द्रमन्दिरं पुक्कॊरिन्द्रनन्दननुतानु-
मिन्द्रनादिकळ्तम्मोटस्त्रवुं पठिच्चुटन् २१

उपाय बतलाने के लिए ही मैं यहाँ बैठा था। जैसे मैंने बतलाया वैसे ही जाकर अब ले आओ। ७-१२ जब इस प्रकार भेजे गये तब भीम बड़ी भक्ति के साथ अञ्जनापुत्र के सामने खड़े हो गये। और बोले, "समुद्र लांघने के समय का आप का रूप देखना चाहता हूँ।" तब वायुपुत्र (हनुमान्) ने 'देख लीजिये' कहकर उन्हें अपना रूप दिखलाया। तब भीम डर गये और हाथ जोड़कर स्तुति करने लगे। तब हनुमान ने 'डरना बिलकुल मत' ऐसा कहकर अनुग्रह किया और प्रगाढ प्रेम से साथ भीम को भेज दिया। जब दीर्घकाय भीमसेन ने बिना विलम्ब के सौगन्धिक पुष्प को तोड़ा तो रक्षक राक्षस उनसे लड़े और मारे गये। तदनन्तर असंख्य गन्धर्वों ने सेना सहित उनका सामना किया। १३-१८ उन सबको भीम ने किसी तरह हराया और पुष्प ले आये। इतने में उनके न लौटने से युधिष्ठिर घबड़ाये। वे कुछ दूर ढूंढने गये ही थे जब रास्ते

इन्द्रवैरिकळेयुं निग्रहिच्चविटेनि-
न्निन्द्रसोदरनेयुमुळ्क्कान्पिल्च्चेर्त्तुनन्नाय् २२
अय्याण्टु चेन्नशेषं धर्म्मजन्तन्टे काल्क्कल्
पय्यवे नमस्करिच्चीटिनान् धनञ्जयन् । २३
ऐवरुं पाञ्चालियुं भूदेववरन्मारुं
दैवज्ञन्मारायुळ्ळ मामुनिजनङ्ङळुं
ओक्कत्तक्कोरुमिच्चु दुःखंतीर्न्निरिक्कुन्पोळ् । २४

नहुषमोक्षं

मुष्करनायुळ्ळोरु पेरुन्पान्पोरुदिनं
पटुमानसनाय भीमन्तन्नुटलेल्लां
मुटियोटटियिट मुळुवन् चुट्टिक्कोण्टु । १
वानवर्कोनङ्ङोरु दीननाय् मरञ्ञनाळ्
वानुलकटक्किवाणिरुन्नू नहुषनुं । २
मानिनियाय शचीदेवियेप्पुणराञ्ञु
मानसतापत्तोटुं पलनाळ् चेन्नशेषं । ३
तापसन्मारेक्कोण्टु तण्टेटुप्पिच्चुंकोण्टु
भूपति वरुन्नाकिल् पुल्कामेन्नवळ् चोन्नाळ् । ४
महिमयेरीटुन्न मामुनिमारेक्कोण्टु
नहुषन् पळ्ळित्तण्टुमेटुप्पिच्चेळुन्नळ्ळि । ५

में मिले। तब उनके साथ जल्दी लौटे और दोनों आश्रम के अन्दर गये। इन्द्रपुत्र (अर्जुन) जो इन्द्र के निवासस्थान में गये थे वे इन्द्र आदियों से अस्त्र सीखकर, इन्द्र के शत्रुओं का नाश करके, इन्द्र के सोदर (विष्णु) को मन में स्थिर करके पाँच साल बीत जाने पर लौटे और युधिष्ठिर के चरणों पर पड़कर उनकी वन्दना की। पाँचों पाण्डव, पाञ्चाली, ब्राह्मण लोग और दैवज्ञ महामुनिजन बिना दुःख के एक साथ सुशोभित हुए। १९-२४

नहुषमोक्ष

एक शक्तिशाली अजगर ने एक दिन होशियार भीमसेन के शरीर को सिर से पाँव तक बाँध दिया। जब देवों के राजा (इन्द्र) पीड़ित होकर अलग हुए थे तब नहुष ने देवलोक को अपने वश में करके वहाँ राज्य किया। उसकी मानिनी शचीदेवी का आलिंगन करने की इच्छा हुई,

अंगुष्ठमात्रमायोरगस्त्यन् नटाय्कया-
लंगत्तिल् चवुट्टिनान् नहुषनतुनेरं । ६
अंगजशरमेट्टिट्टंगनमारिलेरे-
स्संगमुण्टाककोंण्टु मन्ननाकिय नीयुं ७
पारिच्च पेरुन्पान्पाय् वनत्तिल् किटक्कॅन्नु
पूरिच्च कोपत्तोटुमगस्त्यन् शपिक्कयाल् । ८
पलनाळ् काट्टिल्क्किटन्नीटिनान् नहुषनुं
बलवान् मारुतियॅ चुट्टिनान् शापंतीर्प्पान् । ९
धर्म्मजन्मावुतानुं नहुषनृपेन्द्रनुं
धर्म्माधर्म्मङ्ङळ्तम्मिल् पऱञ्ञोरनन्तरं १०
मोक्षंवन्नितु नहुषाख्यनां नृपेन्द्रनुं
साक्षाल् श्रीनारायणन् गोविन्दन्तिरुवटि ११
पाण्डवन्मारॅक्काण्मानॅळुन्नळ्ळियनेरं
पाण्डवन्मारुं कण्टु सन्तोषत्तोटुं कूटि १२
काननभुवि वसिच्चीटिनारवर्मुन्पिल्
ज्ञानियां मार्क्कण्डेयमामुनियॅळुन्नळ्ळि । १३
वन्दिच्चु पाण्डवन्मार् नन्दिच्चु महामुनि
मन्दत तीर्प्पान् पुराणङ्ङळुमरुळ्चॅय्तु । १४

पर न हो सकने से वह बहुत दिन दुःखित रहा। शची ने कहा "अगर राजा तापसों से अपनी पालकी उठवाकर मेरे पास आयेंगे तो मैं राजी हो जाऊँगी। तब नहुष बड़े महिमावाले महामुनियों से अपनी पालकी उठवाते हुए पधारे। जब मुनि अगस्त्य जो बहुत छोटे थे चल न सके तो नहुष ने उनको लात मारी। तब अगस्त्य ने क्रुद्ध होकर "काम देव का बाण लगकर अधिक स्त्रीसंग करनेवाला तू अजगर बनकर बन में पड़ा रह", ऐसा उनको शाप दिया। १-८ इस शाप के फलस्वरूप वह बहुत दिनों बन में पड़ा रहा। अपने शाप की समाप्ति के लिए ही उसने भीम को लपेट लिया। युधिष्ठिर और राजा नहुष ने धर्म और अधर्म के संबन्ध में बातचीत की। तदनन्तर नहुष का शाप से मोक्ष हुआ। साक्षात् श्रीनारायण गोविन्द भगवान् पाण्डवों से मिलने के लिए पधारे। तब पाण्डव बहुत प्रसन्न हुए। तदनन्तर वे वन में सुख से रहे। उस समय बड़े ज्ञानी महामुनि मार्कण्डेय वहाँ पधारे। पाण्डवों ने उनकी वन्दना की। महामुनि प्रसन्न हुए। और उन्होंने दुःख दूर करने के लिए पुराण सुनाये। ९-१४

घोषयात्र

अक्कालं धृतराष्ट्रपुत्ररुं बन्धुक्कळुं
मुख्यमायुळ्ळ चतुरगमां बलत्तोटुं १
दिक्कुकळ् मुळङ्ङ्वे वाद्यघोषङ्ङळोटुं
विख्यातन्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारेक्कोल्वान् २
भोषनां नागध्वजन्तन्नुटे नियोगत्ताल्
घोषयात्रयुं तुटङ्ङीटिनार् वनंतोरुं । ३
पतिनोराण्टु कळिञ्ञिरिक्कुन्ननन्तरं
चतियाल् पोय्ककतन्निल् मरुन्नु कलक्कियार् । ४
उद्योगं कण्टनेरं कौरवन्मारे वेल्वान्
वृत्रारि चित्ररथन्तन्नेयुं नियोगिच्चान् । ५
योग्यमल्लितु निङ्ङळ्क्केन्नितु गन्धर्व्वन्मार्
भाग्यहीनन्मारवरोटु पोर्चेय्तारप्पोळ् । ६
पोरिनु विरुतुळ्ळ वीरनां चित्ररथन्
पाराते नूट्टुपेरे पिटिच्चुकेट्टिक्कोण्टान् । ७
आरिनि वीण्टुकोळ्वतेन्नु कर्ण्णादिकळुं
नारिमारेन्नपोले धर्म्मजनोटु चोन्नार् । ८

घोषयात्रा।

उन दिनों धृतराष्ट्र के पुत्र और उनके बन्धु अपनी चतुरंग सेना के साथ चारों दिशाओं में फैलनेवाले वाद्यघोष कराते हुए विख्यात पाण्डवों का वध करने के लिए मूर्ख नागध्वज (दुर्योधन) की आज्ञा से वन-वन में घोषयात्रा के लिए निकले। ग्यारह बरस बीत चुके थे। उन्होंने तालाब के पानी में बेईमानी से दवा मिला दी। उनकी इस करतूत को देखकर वृत्रारि (इन्द्र) ने कौरवों को मारने के लिए चित्ररथ को नियुक्त किया। गन्धर्वों ने उनसे कहा कि यह काम उचित नहीं है परन्तु उन भाग्यहीनों ने गन्धर्वों से युद्ध किया। १-६ युद्धकुशल और वीर चित्ररथ ने तुरन्त ही उन सौवों (कौरवों) को पकड़कर बाँध लिया। कर्ण आदियों ने कहा—"अब हम लोगों को छुड़ानेवाला कौन है ?" अन्त में महिलाओं की तरह युधिष्ठिर से प्रार्थना की। जब भीम ने निवेदन किया कि यह वह काम है जिसे हमको युद्ध में करना चाहिये, इसलिये इसे रोकना नहीं उचित होगा तब युधिष्ठिर बोले—हे वीर ! न रोकें तो धर्म नहीं होगा। राजाओं

पोरिल् नां चेंय्येण्टुन्न कारियमितुकाल-
मारानुं चेंय्युन्नतु मुटक्कीटरुतल्लो ९
मारुतियेंन्नु चोंन्ननेरत्तु धर्म्मात्मजन्
वीर ! केळतु धर्म्ममल्लेंन्नु धरिच्चालुं । १०
शाश्वतनृपधर्म्मं शत्रुक्कळेंन्नाकिलु-
माश्रितन्मारें रक्षिच्चीटणमेंन्नाकुन्नु । ११
पाण्डवन्मारुं चेंन्नार् वीण्टुकोंळ्ववतिन्नायि-
ग्गाण्डीवं वलिच्चेंय्तु फल्गुनन् वीण्टुकोंण्टान् । १२
मन्नवा ! सुयोधन ! पोक राज्यत्तिनन्नु
धन्यनां धर्म्मात्मजननुज्ञकोंटुत्तप्पोळ् । १३
उन्नतनाय भीमन् संशयं तीरुवानाय्
पन्नगद्ध्वजनादियायुटनेंण्णियिट्टान् । १४
ओंन्निनेंयेंत्तीलेंन्निट्टरिञ्ञानेंण्णियप्पोळ् ?
मन्ननुमोंत्तुवन्निट्टनुज्ञकोंटुत्तप्पोळ् । १५
नाणिच्चु पुरिपुक्कान् मानिच्चु सुयोधनन्
दीनत्तेंक्कळवानाय् मामऱयवर्चोंल्लाल् १६
पाण्डवन्मारिलसूयापरन् धार्त्तराष्ट्रन्
पौण्डरीकाख्यमाय यागवुं तुटङ्ङिनान् । १७
यागादिकर्म्मं चेंय्तु भोगमोटिरुन्नितु
नागकेतननाय भूपति सुयोधनन् । १८
अक्कालं जयद्रथनटवितन्निल् पुक्कान्
मैक्कण्णाळ्मणियाय पाञ्चालितन्नेंक्कप्पान् । १९

का शाश्वत धर्म यही है कि आश्रितों की, चाहे वे शत्रु ही क्यों न हों, रक्षा करनी चाहिये। पाण्डव उनको छुड़ाने के लिए गये और अर्जुन ने अपने गाण्डीव धनुष से उनको छुड़वाया। ७-१२ तब युधिष्ठिर ने कहा—"हे राजा सुयोधन ! अब अपने राज्य को चले जाओ।" उन्नत भीम ने जब उसने गिन लिया और जब राजा ने भी अनुज्ञा दी तब मालूम हुआ कि एक मिल नहीं रहा है। अपना सन्देह मिटाने के लिए सुयोधन से लेकर सबको गिन लिया। मानी सुयोधन लज्जित होकर अपने नगर की ओर चल पड़ा और ब्राह्मणों के उपदेश के अनुसार अपनी दीनता दूर करने के लिए पाण्डवों से जलनेवाले सुयोधन ने पौण्डरीक नामक याग करना प्रारम्भ किया। इस प्रकार याग आदि कर्म करते हुए नागध्वज राजा सुयोधन सुख से रहे।

पोयितु पाण्डवन्मार् नायाट्टिन्नेल्लावरु-
मायतमिळितन्नेयाश्रमं तन्निलुळ्ळु । २०
मायत्तालवनटुत्तप्पोळे तेरिलेट्टि-
प्पायुन्ननेरमवळ् मुऱयिट्टतु केट्टु २१
कटुक्कॆन्नोटिवन्नु पाण्डववीरन्मारुं
पिटिच्चुकॆट्टिज्जयद्रथनॆब्भीमसेन- २२
नटिच्चु तन्नेक्कॊल्वान् तुटङ्ङुन्नतु कण्टु
मुटक्कि द्धर्म्मपुत्ररयय्क्कयिनियॆन्नान् । २३
नम्मुटॆ भगिनिक्कु वैधव्यमकप्पॆटुं
दुर्म्मदमटक्किक्कयङ्ङयय्क्कॆन्नतु नेरं २४
चिरच्चु कुटुम्मयुं मीशयुं कळञ्ञिट्टु
चिरिच्चु पोयालुमॆन्नयच्चू भीमसेनन् । २५
तिरिच्चुपोन्नु मुनिमारुमायिरुन्नुटन्
तिरक्कित्तुटङ्ङिनारितिहासङ्ङळ्कॊण्टे । २६

रामायणकथ

अन्नेरं मार्क्कण्डेयन्नतन्नोटु धर्म्मात्मज-
नॆन्नोळं दुःखमुळ्ळोरुण्टायिट्टुण्टो ऎन्नान् । १

उस समय सुन्दरी पाञ्चाली का अपहरण करने के लिए जयद्रथ ने वन में प्रवेश किया। १३-१९ सभी पाण्डव शिकार खेलने गये थे और पाञ्चाली आश्रम में अकेली थी। उसको माया से पकड़कर रथ पर चढ़ाकर जब जयद्रथ भाग रहा था तो उसकी चिल्लाहट सुनकर तुरन्त ही पाण्डववीर दौड़कर आये। भीमसेन तो उसको पकड़कर और बाँधकर मार डालने वाले ही थे कि युधिष्ठिर ने रोका और कहा—"अब की बार इसे जाने दो।" नहीं तो हमारी बहिन को वैधव्य प्राप्त हो जायगा। इसके दुर्मद का नाश करके इसे छोड़ दो।" तब भीम ने इसका सिर और मूँछ मुँड़वाकर हँसते हुए कहा—"अब चले जाओ"। तदनन्तर सब वापस आये। और मुनियों के साथ इतिहासों के सम्बन्ध में पूछताछ करते रहे। २०-२६

रामायण की कथा

एक दिन युधिष्ठिर ने मार्कण्डेय से पूँछा—'क्या मेरे समान दुःखी कभी कोई हुआ है?' तब मार्कण्डेय बोले—हे धर्मपुत्र! पूर्वकाल में

तापसन् चिरिच्चरुळ्चेय्तितु धर्म्मात्मज !
तापं पण्डितिल्परमुण्टायोरुण्टु पलर् । २
पण्टु श्रीनारायणन् मानुषनायमूल-
मुण्टायदुःखमेल्लां केळ्क्क निन् दुःखं तीरुं । ३
देवनां विधातावु देवकळोटुं देव-
देवनां नारायणपादङ्ङळ् वन्दिच्चितु । ४
देवब्राह्ममुनिधर्म्मभूमिकळ्क्केल्लां
रावणन्तन्नेक्कोन्नु सङ्कटं तीर्प्पानायि । ५
मनुवंशत्तिल् मणिविळक्कां दशरथ-
तनयनाय्वन्नु पिरन्नू भगवानुं । ६
अनुजन्मारुमुण्टाय् मूवरेन्तरिञ्ञालुं ।
मनसि सुखत्तोटुं वळरुंकालत्तिङ्कल् । ७
विश्वरक्षार्थमायि वन्नितु महामुनि
विश्वामित्रनुमयोध्यापुरमकंपुक्कु । ८
विश्वनाथनेयपेक्षिच्चोरुनेरमुळ्ळिल्
विश्वासत्तोटुं रामलक्ष्मणन्मारे नृपन् । ९
अयच्चान् मुनियोटुमवरुं वनं पुक्कार्
नयज्ञन् विश्वामित्रनाकिय महामुनि- १०
युपदेशिच्चानतिबलयुं बलयुम-
न्नृपतिसुतन्मार्क्कुं पैदाहं केटुप्पानाय् । ११
अयच्चु यमपुरितन्निल् ताटकतन्ने
भयत्तोक्कळञ्ञु कौशिकनुं बालन्मारुं । १२

आप से भी अधिक दुःखी बहुत हुए थे। जब श्रीनारायण भगवान् मनुष्य हुए थे तब उनको जो दुःख प्राप्त हुए वे सुन लीजिये, आपके दुःख समाप्त होंगे। ब्रह्मा ने अन्य देवों के साथ देवदेव नारायण के चरणों की वन्दना की। इसलिए कि रावण का वध करके देवों, ब्राह्मणों, मुनियों, धर्म और भूमि का दुःख दूर करें। तब भगवान् ने मनुवंश के मणिदीप दशरथ के पुत्र के रूप में जन्म लिया। १-६ उनके तीन छोटे भाई भी थे। वे सब सुख से रह रहे थे। तब मुनि विश्वामित्र विश्व की रक्षा के लिए अयोध्यापुरी पधारे। जब मुनि ने राजा से मांगा तब उन्होंने बड़े विश्वास के साथ राम और लक्ष्मण को उनके संग भेजा। दोनों मुनि के साथ वन चले गये। तब नयज्ञ (नीतिज्ञ) महामुनि

पिन्नेप्पोय् सिद्धाश्रमंपुक्कु यागवुं कात्तु
सन्नराक्किनान् सुबाहुप्रमुखन्मारेयुं । १३
खिन्ननाय् वणङ्ङुं मारीचन्नु वरं नल्कि
पन्नगाभरणविल् काण्मानाय् पुरप्पेट्टान् । १४
सन्नद्धन्मारां मुनि तन्नोटुं कुमारन्मार्
तन्वियामहल्यतन् शापमोक्षवुं नल्कि । १५
मिथिलपुक्कु पुरमथनन्तन्टे विल्लुं
मथनंचेय्तु सीतावरनायोरुनेरं । १६
भरतशत्रुघ्नन्मारोटु मातावक्कन्मारुं
गुरुवां वसिष्ठनुं तातनुं वन्नशेषं १७
अनुजन्मारुं विवाहंचेय्तु कल्याणवुं
मनसि कनिवोटु कळिञ्ञु पुरप्पेट्टार् । १८
पोकुन्न वळियीन्नु भार्गवन्तन्ने वेन्नु
वेगमोटयोद्धचपुक्किरुन्नु पन्तीराण्टु । १९
भरतशत्रुघ्नन्मार् मातुलन्तन्नेक्काण्मान्
परमादरमोटु केकयराज्यं पुक्कार् । २०
भाविच्चु दशरथनभिषेकत्तिनतु
दैवत्तिन्नियोगत्ताल् मन्थरचोल्लालतु २१

विश्वामित्र ने उन राजकुमारों को भूख और प्यास शान्त करने के लिए बला और अतिबला नामक विद्या का उपदेश दिया। ताटका को यमपुरी भेजकर मुनि और दोनों बालक भय से निवृत्त हुए। तदनन्तर वे सिद्धाश्रम पहुँचे। वहाँ याग की रक्षा करते हुए सुबाहु आदियों का वध किया। ७-१३ दुःखित मारीच को वर देने के बाद शिवजी का धनुष देखने के लिए चले। सन्नद्ध दोनों बालकों ने मुनि के साथ तन्वी अहल्या का शापमोक्ष किया। तदनन्तर मिथिला में प्रवेश करके शिवजी के धनुष को चढ़ाकर राम सीता के वर हुए। तब वहाँ पर भरत, शत्रुघ्न, माताएँ, गुरु वसिष्ठ, और पिताजी भी पधारे; छोटे भाइयों का भी विवाह हुआ। प्रेम के साथ विवाह समाप्त होने पर सबने प्रस्थान किया। मार्ग में भार्गव (परशुराम) को हराया। फिर अयोध्या जाकर वहाँ बारह बरस रहे। भरत और शत्रुघ्न मामाजी को देखने के लिए बड़े आदर के साथ केकय राज्य सिधारे। १४-२० दशरथ ने राम का अभिषेक करने के लिए सोचा परन्तु दैव के प्रभाव से, मन्थरा के कहने पर क्रुद्ध कैकेयी ने मना किया और श्रीराम (उसका) दुःख

कोपिच्चु कैकेयितान् मुटक्कि रामन्तानुं
तापत्यागार्त्थं वनवासार्त्थं पुरप्पेट्टु । २२
लक्ष्मणनोटुं मिथिलात्मजयोटुं कूटि
तल्क्षणं गंग कटन्नुटने चित्रकूटं । २३
पुक्कितु दशरथन् वानुलोकवुं पुक्कान्
तल्क्काले वसिष्ठदूतोक्तया वन्नकंपुक्कु २४
भरतशत्रुघ्नन्मारुदकक्रिय चेय्तु
नरपालकन् वाळुं चित्रकूटत्तिल् वन्नार् । २५
तातवृत्तान्तं केट्टु रामलक्ष्मणन्मारुं
खेदमुळ्क्कोण्टु वेण्टुं कर्म्मङ्ङळोक्कच्चेय्तार् । २६
पादुकं कोटुत्तयच्चीटिनान् भरतने-
स्सादरं भूयो भरद्वाजनेक्कण्टु कूप्पि । २७
चण्डदीधितिकुलजातनां रघुवरन्
दण्डकारण्यं प्रापिच्चीटिनोरनन्तरं २८
कोन्नितु विराधनेप्पिन्नेप्पोय् शरभंगन्-
तन्नुटे गति कण्टु काननत्तूटे पोन्पोळ् २९
अगस्त्यसहोदरन्तन्नेयुं कण्टु पुन-
रगस्त्यपादाब्जवुं वन्दिप्पान् नटकोण्टान् । ३०
विन्ध्यनेयटक्कि वातापियेद्दहिप्पिच्चु
सिन्धुवारियुमेल्लामाचमिच्चोरिक्कले । ३१

दूर करने के लिए बन चले गये । लक्ष्मण और सीता के साथ गंगा पार करके चित्रकूट पहुँचे । दशरथ का स्वर्गवास हो गया । तब वसिष्ठजी के दूत भेजने पर भरत और शत्रुघ्न लौटे और उन्होंने दशरथ की अन्त्येष्टि क्रिया की । तदनन्तर चित्रकूट गये जहाँ राजा राम रहते थे । पिताजी का वृत्तान्त सुनकर राम और लक्ष्मण दुःखित हुए और उन्होंने उनकी आवश्यक क्रियायें कीं । २१-२६ राम ने अपनी पादुका देकर भरत को घर लौटाया । तत्पश्चात् राम ने भरद्वाज मुनि का दर्शन करके प्रणाम किया । सूर्यवंशी रघुवर (राम) के दण्डकारण्य में प्रवेश करने के बाद विराध का वध हुआ । शरभंग की गति देखकर बन के भीतर से जाते हुए अगस्त्य के भाई का दर्शन किया । तदनन्तर अगस्त्य के चरणों की वन्दना करने के लिए चले । अगस्त्य ने विन्ध्य को दबाया था, वातापि को जलाया था और समुद्र के पानी को एक ही आचमन में पीलिया था ।

सम्प्रति तपोबलं कण्टुकूटात मुनि
कुंभसंभवन्तन्नेक्कुन्पिट्ट्टु रघुवरन् । ३२
सर्व्वराक्षसवधप्रतिज्ञचेय्तु चेय्वान्
देवेन्द्रदत्तमाय शार्ङ्गचापादिकळुं ३३
दिव्यङ्ङळायिट्टुळ्ळोरायुधङ्ङळुं वाङ्ङि
गीर्व्वाणकुलपरित्राणार्त्थं रघुनाथन् ३४
पुण्यवाहिनि गोदावरितन् तीरत्तिङ्कल्
दण्डकारण्यंतन्निलाश्रममतुं कॆट्टि ३५
वाळुन्नकालत्तिङ्कल् वन्न शूर्प्पणखयां
पाळियॆ मूक्कुं मुलयुं कळञ्ञयच्चप्पोळ् । ३६
पोरिनु वन्नू खरदूषणत्रिशिराक्कळ्
घोरमाय् पतिन्नालु सहस्रं पटयोटुं । ३७
नाळिक मून्नेमुक्कालुकॊण्टु कॊन्नितु राम-
नाळियुं कटन्नळल्पूण्टवळरियिच्चाळ् ३८
सोदरनाय रात्रिञ्चरनायकनोटु
क्रोधं पूण्टवन् मिथिलात्मजाहरणार्थं ३९
रावणन् मारीचनॆप्पॊन्मानाययच्चति-
लावेशिच्चितु चित्तं सीतय्क्कु रघुवरन् ४०
पिटिक्कानटुत्तप्पोळरुताञ्ञतुनेरं
कॊटुत्तु शरं कॊण्टु करञ्ञानवनप्पोळ् ४१

इस समय उनके तपोबल को देखना ही कठिन है। ऐसे कुँभसंभव मुनि को राम ने प्रणाम किया। २७-३२ सभी राक्षसों के वध की प्रतिज्ञा की। उनसे निपटने के लिए देवेन्द्र के दिये शार्ङ्ग और चाप और अन्य दिव्य अस्त्र भी लेकर देवों के कुलों की रक्षा करने के लिए पुण्यनदी गोदावरी के तट पर दण्डकारण्य में एक आश्रम बनाकर जब राम रह रहे थे तब तुच्छ शूर्पणखा आयी। राम ने उसके नाक और स्तन कटवाकर उसको भगाया। तब खर, दूषण, त्रिशिरा आदि राक्षस चौदह हज़ार सैनिकों की घोर सेना लेकर लड़ने आये। राम ने उनका पौने चार नाड़िकाओं (घड़ियों) के अन्दर नाश किया। दुःखित शूर्पणखा समुद्र पार करके अपने भाई राक्षसों के नायक रावण के पास गयी और उसको सब हाल बताया। रावण ने क्रुद्ध होकर मिथिलात्मजा (सीता) के हरण के लिए मारीच को सुवर्णहिरण के रूप में भेजा। सीता का मन उसमें

अय्यो ! जानकीदेवि ! लक्ष्मणायेन्नुतन्नै
मय्येलुंकण्णितन्नेयचु कुमारनै । ४२
तक्कत्तिल् दशग्रीवन् तैक्कोङ्कत्तरुणियै-
क्कैक्कोण्टु तेरिलेट्टि वेगत्तिल् पोकुन्नप्पोळ् ४३
पक्षीन्द्रन् जटायुतान् मुल्पुक्कु युद्धं चेय्तान्
पक्षवुं वेट्टियरुत्तवनुं पुरि पुक्कान् । ४४
आरामभुवि चारुशिंशपावृक्षत्तिन्कीळ्
ताराऱ्मातिनेवच्चु रावणन् गृहं पुक्कान् । ४५
मैक्कण्णितन्नेक्काणाञ्ञुळ्क्कान्पिलळल्पूण्टु
दुःखिच्चु रघुपति लक्ष्मणनोटुकूटि । ४६
नटक्कुंनेरं कण्टु परञ्ञु जटायुवु-
मट्टुत्तवण्णंतन्नै मरिच्चानवनुट- ४७
लेट्टुत्तु दहिप्पिच्चु नटुक्कत्तोटुंकूटि
अटुत्त शेषक्रिय चेय्तितु रामदेवन् । ४८
विल्वाद्रितन्निल्प्पिऱन्नुण्टाय शबरियुं
कल्याणत्तोटु कण्टु पूजिच्चु वरं कोण्टाळ् । ४९
कोल्लुवान् तुटङ्ङिय कबन्धन्तन्नेक्कोन्नु
नल्लोरु गति नल्कि पुक्कितु पम्पातीरं । ५०

लग गया। राम जब उसे पकड़ने के लिए पास गये तो वह भागकर दूर चला गया। जब राम ने उस पर बाण छोड़ा तब वह "हा ! सीते ! हा लक्ष्मण !" ऐसा चिल्लाया। सुनकर सीता ने लक्ष्मण को देखने के लिए भेजा। ३३-४२ अवसर पाकर रावण आया और सीता को पकड़ कर अपने रथ पर बैठाकर जब जल्दी ले जा रहा था तब पक्षीन्द्र जटायु ने उसका सामना करके उससे युद्ध किया। रावण उसके पंख काटकर अपने नगर को चला गया। वह एक उद्यान में सुन्दर शिंशपा वृक्ष के नीचे सुन्दरी सीता को बैठाकर अपने घर गया। सीता को न देखकर राम बहुत दुःखित हुए और लक्ष्मण के साथ जब उसको ढूँढते चल रहे थे तब जटायु को देखा। उसने सब वृत्तान्त बताया और प्राण छोड़ दिये। रामदेव ने आदर के साथ उसके शरीर को जलाया और इसकी शेषक्रियाएँ कीं। ४३-४८ शबरी ने जिसका जन्म बिल्वाद्रि में हुआ था सोत्साह राम का दर्शन किया, उनकी पूजा की और वर पाया। कबन्ध जब उनको मारने लगा तब उसका वध करके उसकी अच्छी गति बनाकर पम्पा

कण्टितु हनूमानुं कोण्टुपोय् सुग्रीवन्त-
न्निण्टल् तीर्प्पतिन्नायि सख्यवुं चेय्यिप्पिच्चान् । ५१
दुन्दुभिकायं पादांगुष्ठंकोण्टेट्टुत्तेरि-
ञ्ञिन्दिरावरनाय राघवन्तिरुवटि । ५२
सुन्दरियाय सीता भूषणङ्ङळुं कण्टु
मन्दमेन्नियॆ किष्किन्धापुरि नोक्किप्पोयार् । ५३
वट्टत्तिल्निन्न मरमेळुमोरन्पुकोण्टु
पोट्टिच्चु रामदेवन् बालियेत्तन्नेक्कोन्नान् । ५४
इरुन्नू चातुर्म्मास्यं माल्यवान् मुकळुतन्मेल्
परञ्ञवण्णंतन्ने वाराञ्ञु सुग्रीवनुं ५५
निरञ्ञ कोपत्तोटे सोदरन्तन्नोटाशु
परञ्ञू रघुवरन् वन्नितु शरत्क्कालं । ५६
लक्ष्मणा ! वैकाते नी किष्किन्धापुरि पुक्कु-
मर्क्कटप्रवरनां सुग्रीवनोटु चोल्क ५७
सत्यत्ते मरक्कयो सख्यवुं मरन्नुवो ?
इत्तरं काट्टीटुकिलत्तरं तन्ने वरुं । ५८
अग्रजन्तन्नेक्कोन्न बाणमिन्नियुमुण्टि-
ङ्ङुग्रत कुरञ्ञतुमिल्ल मत्क्करङ्ङळ्क्कुं । ५९

सरोवर के तट पर पहुँचे। हनुमान ने उनको देखा और उनको सुग्रीव के पास ले जाकर उनके दुःख दूर करने के लिए उनके साथ सुग्रीव की मित्रता भी कराई। तदनन्तर लक्ष्मीपति पूज्य राघव (राम) ने दुन्दुभि के शरीर को अपने पाँव के अँगूठे से उठाकर दूर फेंक दिया। सुन्दरी सीता के आभूषणों को देखने के बाद बिना बिलम्ब के किष्किन्धापुरी की ओर चले। फिर रामदेव ने गोलाकार खड़े सात वृक्षों को एक ही बाण से काट डाला। तदनन्तर बालि का वध किया। माल्यवान् नामक पर्वत के ऊपर चौमास बिताया। जैसे कहा था उसके अनुसार जब सुग्रीव नहीं आया, तब बड़े क्रोध के साथ रघुवर ने अपने भाई से कहा, अब शरद् ऋतु भी आ गई। ४९-५६ हे लक्ष्मण ! तुम जल्दी किष्किन्धा जाओ और वानरप्रवर सुग्रीव से कहो कि क्या सत्य को भूल गये ? क्या मित्रता भी कुछ नहीं ? इस प्रकार करोगे तो वही बात होगी। जिस बाण से तुम्हारे बड़े भाई को मारा था वह अब भी है। मेरे हाथों की उग्रता भी अभी कम नहीं हुई है। अगर सुग्रीव सोचता है कि बड़े

अग्रजन् पोयवऴि नल्लतॆन्नितुकालं
सुग्रीवन्तनिक्कुऴिऴल् तोन्नीट्टुण्टॆन्नाकिलो ६०
व्यग्रमिल्लिनिक्केतुमॆन्नतु धरिक्केणं
निग्रहमनुग्रहं चॆय्तवर्क्कॆन्तु दण्डं ? ६१
बन्धुक्कळिहलोक सौख्यत्तिन्नत्रयल्लो
चिन्तिक्किल्पारत्रिक सौख्यत्तिन्नल्ल नूनं । ६२
मऴयुं मञ्ञुं काट्टुं वॆयिलुमेट्टु काट्टि-
लऴल्पूण्टिरुन्नुऴ्ऴ कायकनिकळुं तिन्नु ६३
पिऴुकिक्किटन्नवन्तन्नॆ ञान् वाऴिच्चप्पोळ्
मुऴुवनवयॆल्लां मऱन्नुकळञ्ञवन् । ६४
ञॆळिञ्ञु सिंहासनमेऱिड्डंभवुं काट्टि-
त्तॆळिञ्ञु तरुणिकळोट्टुकूटिटचेर्न्नु ६५
मद्यपानवुं चॆय्तु मत्तनायिरुन्नवन्
नित्यसौख्यङ्ङळ् कण्टु समयं चॆय्ततॆल्लां ६६
मऱन्नानॆङ्किलतु ञानेतुं मऱन्नील
परञ्ञालिल्ल रण्टॆन्नङ्ङु नी चॆन्नु चॊल्क । ६७
लक्ष्मणनतु केट्टु कल्पिच्चु पुऱप्पॆट्टान्
सौमित्रि तिरिच्चतु कण्टु राघवदेवन् ६८
सौमुख्यमोटुं वीण्टु विळिच्चिट्टरुळ्चॆय्तु
निल्क्कॆटो कुमारा ! नी केट्टुपोकणमितु । ६९

भाई जिस मार्ग से गया वह ठीक है तो मुझे उसमें कोई दिक्कत नहीं है, जान ले। निग्रह और अनुग्रह दोनों करनेवाले के लिए क्या मुश्किल है ? बन्धुजन ऐहिक (इस लोक के) सौख्य (सुख) के लिए हैं, सोचो तो वे पारत्रिक (परलोक के) सौख्य के लिए बिलकुल नहीं हैं। ५७-६२ जो जङ्गल में वर्षा, सर्दी, हवा, और धूप लगने से पीड़ित दशा में वहाँ के कन्दमूल खाता हुआ पड़ा रहता था उसे मैं ने राजसिंहासन पर बैठाया। पर वह सब भूल बैठा है। अब गर्व के साथ सिंहासन पर बैठकर आडम्बर दिखलाता है और आनन्द से तरुणियों के साथ मद्यपान करके मत्त हो गया है। इस निरन्तर सुख के कारण अपनी प्रतिज्ञा को भूल बैठा है परन्तु मैं नहीं भूला हूँ। उससे जाकर कह दो कि इसमें दो मत नहीं हो सकते हैं। यह सुनकर लक्ष्मण जाने के लिए तैयार हुए। सौमित्रि (लक्ष्मण) को जाते देखकर रामदेव ने प्रसन्नता से फिर बुलाकर उनसे कहा। भाई ! ज़रा ठहर जाओ और यह भी सुन लो। ६३-६९ बन्दर

मर्क्कटप्परिषय्क्कु चापल्यं पेरुतल्लो
कार्य्यतोळमेयुळ्ळु नमुक्केन्नरिञ्ञालुं ७०
वीर्यत्तेक्काट्टीट्टुवानिविटे वेण्टीलल्लो
पोयालुमिनियेङ्किलेन्नतु केट्टनेरं ७१
पोयवन् किष्किन्धातन् गोपुरद्वारं पुक्कान् ।
मेल्लवेयोरु चेरुञाणोलियिट्टनेरं ७२
चोल्लेळुं ब्रह्माण्डङ्ङळोक्कवे विऱच्चुते ।
ॲन्तोरु शब्दमेन्नु चिन्तिच्चु दशास्यनु- ७३
मन्धनायुळ्ळोरु रण्टुनाळिक निन्नान् ।
चेविकळिरुपतुं विरलिट्टिळक्किनान् । ७४
प्लवगपटलिकळ् मोहिच्चु वीणारल्लो ।
वळर्न्नु सिंहासनमतिन्मेलिरुन्नेरे- ७५
ञेळिञ्ञ सुग्रीवनुं विऱच्चु ञेट्टि वीणान् ।
चिरिच्चु पऱञ्ञतु श्रीहनुमानुमप्पोळ् ७६
शरल्क्कालत्तेक्कण्टिट्टुणर्त्तिच्चीले ञानो ।
इन्निप्पोळ् निनक्करिञ्ञीट्टुवान्तक्कवण्णं ७७
मन्नवर् कुलमौलि राघवन्तन्टे तन्पि ।
तन्नुटे गुणनादं केट्टतेन्नरिञ्ञालुं ७८
चेन्निनिक्काल्कल् वीळ्क वैकाते मटिक्केण्ट ।
पेटिच्चु तिरुमुन्पिल् चेल्लुवान् पणियत्ने ७९

लोग तो बहुत चपल होते हैं। हमको तो अपने काम से मतलब है, इसलिए यहाँ अपना वीर्य (पराक्रम) दिखलाने की कोई आवश्यकता नहीं है। अच्छा अब तुम जा सकते हो। यह सुनकर वे चले और किष्किन्धा के गोपुरद्वार पर पहुँचे। जब उन्होंने अपने धनुष की ज्या (डोरी) की ध्वनि की तो सभी ब्रह्माण्ड काँपने लगे। 'यह कैसा शब्द है?' ऐसा सोचकर रावण भी बिना कुछ समझे घंटा भर खड़ा रहा और अपने बीसों कानों में उसने उँगली डाल ली। ७०-७४ वानर लोग बेहोश होकर गिर पड़े। सुग्रीव भी, जो मोटा होकर सिंहासन पर गर्व से बैठा था, चकित होकर गिर पड़ा। तब हनुमान् ने हँसते हुए कहा—"मैंने शरद् ऋतु को देखकर बताया नहीं था? अब राजाओं के शिरोमणि राम के छोटे भाई ने आपको बोध कराने के लिए अपना ज्या-घोष (धनुष की डोरी का शब्द) किया है, अब बिना हिचक के और विलम्ब

माटीत्त मुलयाळां तार पोय् मुन्पे चॆन्नु
कोपत्तॆशशमिप्पिच्चे कण्टु कैकूप्पिक्कूटू
कोपत्तॆक्कॆटुप्पानाय् वेलकळ् चॆय्क नीयुं । ८०
मेरुमामलय्क्कुनिन्निन्नलॆ वन्न कपि-
वीरन्मार् कॊण्टुवन्न फलमूलङ्ङळॆङ्ङु ? ८१
पॊन्निऱमल्लो कण्टाल्त्तिन्नालु मॊरुमास-
त्तिन्नु पैदाहङ्ङळुं पिन्नॆयुण्टाकयिल्ल । ८२
नन्नतु सौमित्रिक्कु तिरुमुल्क्काळ्च्चवय्प्पान्
धन्ययां तारतन्नॆ पोकणमतु कॊण्टु । ८३
सारसमिळियाळां तारेशमुखियाय
तारयुमतु केट्टु पारातॆ पुऱप्पॆट्टाळ् । ८४
ऒट्टिळिञ्ञुलञ्ञिङ्ङु किळिञ्ञ नीवीबन्ध-
मॊट्टॊट्टु करंकॊण्टु ताङ्ङियुमुऱप्पिच्चुं । ८५
इण्टल् चेर्न्निरुण्टॊरु कण्टिवार् कुळलतुं
कुण्ठतचेर्त्तु चिलपुष्पङ्ङळ् कळञ्ञुटन् । ८६
कळभमळिञ्ञॊट्टु शेषिच्चु पट्टियतु
कळञ्ञु परन्नीटुं विमलगन्धत्तोटुं ८७
कण्टालॆत्रयु मनोमोहनमाय वेषं-
कॊण्टवळ् कुमारनॆक्कण्टुटनुणर्त्तिच्चाळ् । ८८

के जाकर पैरों पड़िये"। तब सुग्रीव ने कहा--"डर के मारे उनके सामने जाना कठिन हो गया है। पहले तो उन्नतस्तनवाली तारा उनके सामने जाकर उनका कोप ठंडा करे, तब मैं जाकर हाथ जोड़ूँगा। उनका कोप शान्त करने के लिए तुम भी काम करो। ७५-८० कपिवर कल मेरु महापर्वत से जो फल और मूल लाये थे वे कहाँ हैं? वे देखने में सुनहले रंग के हैं और अगर खाये जायँ तो महीना भर भूख और प्यास नहीं लगेगी। वे लक्ष्मणजी को उपहार देने के लिए अत्यन्त उपयुक्त हैं। उनको लेकर तारा भी यह सुनकर जल्दी जाने के लिए तैयार हुई। अपने ढीले और तनिक फटे नीवीबन्ध को अपने हाथ से पकड़कर स्थिर किया। अपने काले-काले केशों के पुराने फुलों को फेंक दिया। अपने शरीर पर लगे चन्दन के अवशेष को पोंछकर नया सुगन्ध लगाया। ८१-८७ और देखने में मन को मोहनेवाला वेष धारण करके कुमार (लक्ष्मण) के सामने जाकर उसने सब बताया। यह क्या बात है कि आप बाहर खड़े

अन्तय्यो ! पुऱत्तुनिन्नरुळीट्टुवानिप्पोळ्
निन्तिरुवटि कनिञ्ञिङ्ङ्ङेळुन्नळ्ळीटणं । ८९
बन्धुविन् गृहमॆन्नु चिन्तिच्चीलयोयितु
सन्तोषत्तोटु कटन्निङ्ङिङरुन्नरुळणं । ९०
निर्ण्णयमयोध्ययुं किष्किन्धानगरवु-
मॊन्नुकॊण्टुमे भेदमिल्लॆन्नु धरिक्कणं । ९१
तिरुवुळ्ळक्केटिल्लयल्लीयॆन्नतु नण्णि-
प्पॆरिकॆब्भीतिकॊण्टु सुग्रीवन् तिरुमुन्पिल् ९२
वरुवान् वैकीटुन्नु निन्तिरुवुळ्ळमॆन्नि
शरणमिल्ल मट्टु ञङ्ङळ्क्कु दयानिधे ! ९३
वानरजातिक्केऱ्ऱच्चापल्यं पॆरुतल्लो
वानरप्रवरन्मार् वन्नुकूटाय्ककॊण्टुं ९४
वानरवीरन् विटकॊळ्ळातिन्निनियिप्पोळ्
वानरन्मारॆ रक्षिच्चीटुवानाळुण्टल्लो । ९५
सारस्यलीलकळुं सौजन्यविलासवुं
सारज्ञवीरन् कण्टु तॆळिञ्ञोरनन्तरं ९६
किष्किन्धयकंपुक्कु लक्ष्मणकुमारनुं
मर्क्कटाधिपन्तन्नॆ वरुत्ति तारतानुं । ९७
मानिनिमारोटिटचेर्न्नु वानरवीरन्
मानववीरन्कळल् कूप्पिनान् पेटियोटे । ९८

होकर कह रहे हैं। आप कृपया भीतर चले आवें। यह आपका बन्धुगृह है, क्या आप ने ऐसा नहीं समझा ? प्रसन्नता के साथ आप अन्दर आवें और बैठकर बोलें। समझ लीजिये कि अयोध्या और किष्किन्धा नगर में कोई भेद नहीं है। यह समझकर कि आप कदाचित् अप्रसन्न हैं सुग्रीव डर के मारे आपके सामने आने में देर कर रहे हैं। परन्तु आपके सिवाय, हे दयानिधे ! हम लोगों का और कोई शरणदाता नहीं है। ८८-९३ वानर जाति का चापल्य (चंचलता) तो प्रसिद्ध ही है। वानर वीरों के अब न आने के कारण वानरवीर (सुग्रीव) ने आप से आज्ञा नहीं ली। अब तो वानरों की रक्षा करनेवाले विद्यमान हैं। इन सद्भावना की लीलाएँ और इस सौजन्य के विलास को देखकर जब सारज्ञ और वीर कुमार लक्ष्मण प्रसन्न हुए तो वे किष्किन्धा के अन्दर गये। तब तारा ने वानराधिपति को बुलवाया। महिलाओं के साथ वानरवीर भय के साथ

पेटिक्कवेण्टा पारमेंन्नें नीयोंन्नुकोंण्टुं
पेटिक्कवेण्टू पक्षे रामदेवनेंयल्लो । ९९
तृक्कटक्कण्णु चेंट्टु चुवन्नु कण्टिट्टु ञान्-
धिक्कारमुळ्ळ निन्नोटरियिप्पानाय् वन्नु । १००
किष्किन्धाराज्यत्तिङ्कल् मट्टोंरुवनेंयिनि
मर्क्कटाधिपनायि वाळिक्कुं रघुश्रेष्ठन् । १०१
इत्तरमरुळ्चेय्किलिज्जनत्तिनु पिन्नें
मट्टोंरु शरणमिल्लेंन्नतु धरिक्कणं । १०२
ऎन्नु तारयुं चोंन्नाळन्नेरं सुग्रीवनुं
मन्नवन्तन्नें वीणुवणङ्ङियुरचेंय्तान् । १०३
वन्न वानरन्मारुमटियन् तानुं कूटि
मन्नवर् कुलरत्नंतन्नटिमलर् कूप्पि १०४
तन्वंगिमणियाय जानकियिरिप्पेटं
अन्वेषिच्चरिञ्ञीटां राघवनियोगत्ताल् । १०५
वानरराजन्तानुं मारुतियोटु चोंन्नान्
वानरन्मारेयोंक्क वरुवान् नियोगिक्क । १०६
मारुति परञ्ञप्पोळ् तारनुं सुषेणनुं
मारुतिजनकनां केसरिवीरन्तानुं १०७

मानववीर के पैरों पड़े । लक्ष्मण ने कहा, "मुझसे तो बिलकुल न डरना । परन्तु रामदेव से डरना तो आवश्यक है। उनकी आदरणीय आँखों को तनिक लाल पाकर ही मैं तुम उदासीन को सचेत करने के लिये आया हूँ । ९४-१०० रघुश्रेष्ठ और किसी को किष्किन्धा राज्य के वानराधिपति के स्थान में रखकर राज्य करा सकते हैं।" यह सुनकर तारा ने कहा—"अगर आप ऐसी बातें करेंगे तो हम लोगों को और कोई शरण नहीं है।" सुग्रीव तो लक्ष्मण के पैरों पड़े और विनम्रता के साथ इस प्रकार बोले, "आगत वानरों के साथ यह दास रामदेव की आज्ञा से राजवंश के रत्न के चरणों की वन्दना करके 'महिलारत्न जानकी इस समय कहाँ हैं' यह ढूंढकर मालूम कर लेगा।" तदनन्तर वानरराज ने मारुति (हनुमान्) से कहा—सभी वानरों को आने के लिये आज्ञा दो । १०१-१०६ जब मारुति ने आज्ञा दी तब तार, सुषेण, मारुति के पिता वीर केसरी, अंगद, गज, गवय, गवाक्ष, ऊँचे क़द का नील, नल, दुर्मुख, दधिमुख, शरभ, शतबलि, ऋषभ, प्रमाथि, शत्रुओं का नाशक वेगदर्शी, कुमुद, मैन्द, द्विविद, जाम्बवान्,

अंगदन् गजन् गवयन् गवाक्षनुं पिन्ने
तुंगनां नीलन् नळन् दुर्म्मुखन् दधिमुखन् १०८
शरभन् शतबलि ऋषभन् प्रमाथियुं
अरिकळ्कालन् वेगदर्शियुं कुमुदनुं १०९
मैन्दनुं विविदनुं जांबवान् सुमुखनुं
गन्धमादनन्तानुं मट्टुमीवण्णमुळ्ळ ११०
वानरप्पटय्क्कींक्क नायकन्मारायुळ्ळोर्
मानमोटोटिच्चाटित्तकर्त्तुवन्तीटिनार् । १११
अट्टुपत्तेळ्ळुकोटि वानरराजाक्कन्मा-
रिरुपत्तोन्नुवेंळ्ळं पटयुमायि वन्नार् । ११२
अवरुं तानुं कूटि सुग्रीवन् पुरप्पेट्टि-
ट्टवनीपतिवीर ! येळुन्तळ्ळीटामेन्नान् । ११३
वानरप्पटयुमाय् लक्ष्मणकुमारनुं
मानववीरन्कळ्ल् कूप्पिनानतुनेरं । ११४
सुग्रीवन् मुतलाय वानरप्रवरन्मा-
रेक्कवे तेरुतेरे तृक्कळ्ल् वणङ्ङिनार् । ११५
इक्कपिसैन्यमोक्कत्तृक्काल्क्कल् वेलचेय्वान्
तक्कवरेन्नु तिरुवुळ्ळत्तिलेट्टीटणं । ११६
अर्क्कनन्दनन्मोळि केट्टु राघवदेवन्
मर्क्कटप्रवरनेत्तळ्ळुकियरुळ्चेय्तु । ११७
नालु दिक्किलुमयच्चीटणं कपिकळे-
प्पालोलुंमोळियाळां सीतयेयन्वेषिप्पान् । ११८

सुमुख, गन्धमादन और इस प्रकार के अन्य वानरसेना के नायक दौड़ते और कूदते हुए अभिमान और उत्साह के साथ चले आये। सरसठ करोड़ वानर नरेन्द्र इक्कीस अरब की सेना को लेकर चले आयें। १०७-११२ सुग्रीव ने कहा—"इनके साथ, हे नरेन्द्रवीर ! मैं आ रहा हूँ।" तदनन्तर वानरसेना के साथ लक्ष्मण निकले और मानववीर (राम) के चरणों की वन्दना की। सुग्रीव आदि वानरवीरों ने भी पूज्य चरणों की वन्दना की। सुग्रीव ने कहा, "आप समझ लीजिये कि इस वानर-सेना का एक-एक अङ्ग पूज्य चरणों की सेवा करने योग्य है।" सूर्यपुत्र की इस बात को सुनकर राघवदेव ने सुग्रीव को छाती से लगाकर कहा—कमललोचना सीता को ढूँढने के लिये कपियों को चारों दिशाओं में भेज देना। तब

तिरञ्ञु सीततन्नॆक्काण्मानाययच्चितु
परन्न कपिकळॆ नालुदिक्किलुमवन् । ११९
ओरोरो लक्षं कपिवीररॆयोरोदिशि
शूरतयेरुं यजमानन्मारोटुं पोयार् । १२०
अॆन्नतिल् तॆक्कुदिक्किन्नायिट्टु नटकॊण्टार्
मैन्दनुं विविदनुं शरभन् सुषेणनु- १२१
मंगदन् नळन् विरिञ्चात्मजन् वायुसुतन्
तुंगपर्व्वतशरीरन्मारामिवरॆल्ला- १२२
मन्नेरं दाशरथि मारुतियुटॆ कैयिल्
तन्नुटॆ नामाङ्कितमायुळ्ळोरंगुलीयं १२३
सन्देशमाय् नल्किनान् मैथिलिक्ककतारिल्
सन्देहं तीरुवानाय् मारुतियतुं वाङ्ङि १२४
वन्दिच्चु कपिवरन्मारुमाय् नटकॊण्टान्
दक्षिणोदधितीरं प्रापिच्चु सन्पातियां १२५
पक्षिश्रेष्ठानुग्रहंकॊण्टु सन्तोषत्तोटॆ
मारुति महेन्द्रमां पर्व्वतंतन्मेलेरि
वारिधितीरे चाटिप्पोकुन्पोळ् मद्ध्येमार्ग्गं १२६
नागमातावां सुरसामुखद्वारत्तूटॆ
वेगेन नाभिपुक्कु कृषनाय् पुरप्पॆट्टान् ।१२७
मैनाकाचलंतन्नाल् सत्कृतनायशेषं
वैनतेयनॆप्पोलॆ मेले पोयीटुंनेरं १२८

सुग्रीव ने सीता को ढूँढने के लिए वानरों को चारों तरफ़ भेजा। एक-एक दिशा में एक-एक लाख वानर अत्यन्त शूर नेताओं के साथ चले। ११३-१२० उनमें मैन्द, द्विविद, शरभ, सुषेण, अंगद, नल जो विरिञ्चि का पुत्र था, वायुपुत्र हनुमान्--ऊँचे पर्वत के समान शरीरवाले ये सभी वानर दक्षिण दिशा की ओर चले। उस समय दाशरथि (राम) ने हनुमान् के हाथ में अपनी नामङ्कित अँगूठी सन्देश के रूप में दी ताकि सीता को सन्देह न हो जाय। उसे लेकर और प्रणाम करके हनुमान् अपने वानरों के साथ चल पड़े। दक्षिणसमुद्र के तट पर पहुँचकर पक्षिश्रेष्ठ सम्पाति का अनुग्रह लेकर हनुमान् उत्साह से महेन्द्रपर्वत पर चढ़े और वहाँ से जब कूदकर जा रहे थे तब रास्ते में नागमाता सुरसा के मुँह में प्रवेश करके तुरन्त ही छोटा रूप धारण करके उसकी नाभि से निकल

मायमेऱीटुं छायाग्रहिणितन्नें वेन्नु ।
वायुनन्दनन् त्रिकूटाचलोपरि वीणान् । १२९
लङ्काश्रीतन्नेत्ताडिच्चवळ्तन्ननुग्रहाल्
शङ्कूटातें निशि कृशनायकंपुक्कान् । १३०
लङ्कयिलुळ्ळ विचित्रङ्ङळुं कण्टुकण्टु
पङ्कजमुखिवाळुमुद्यानमकंपुक्कान् । १३१
शिंशपावृक्षत्तिन्मेलेतुमेयिळकातें
शैशववेषंपूण्टु वसिच्चीटिननेरं । १३२
रावणन् शृंगारकोलाहलत्तोटे वन्नु ।
देवियोटनुसरिच्चोरोन्ने परञ्ञतुं १३३
जानकि दशाननन्तन्नोटु परञ्ञतुं ।
मानसकोपत्तोटे दुष्टनां निशाचरन् १३४
देवियें वेट्टिक्कोल्वानोङ्ङुन्पोळ् मण्डोदरि
रावणन्तन्नेप्पिटच्चटक्कि निर्भत्सिच्चु १३५
सत्वरं कोण्टुपोयवाऱुमेल्लामे कण्टु चित्त-
कौतुकत्तोटुमिऱङ्ङित्तोळुतवन् १३६
विश्वनायकन्तन्टे वृत्तान्तमेल्लां चोल्लि
विश्वासं वरुत्तियोट्टाश्वसिप्पिच्चशेषं १३७
अंगुलीयकं कोटुत्तटयाळवुं पऱ-
ञ्ञंगनारत्नत्तोटु चूडारत्नवुं वाङ्ङि १३८

आये । मैनाक पर्वत के द्वारा सत्कृत होने के बाद गरुड़ के समान ऊपर ही ऊपर उड़ते समय मायायुक्त छायाग्राहिणी का वध किया । तदनन्तर हनुमान् त्रिकूटपर्वत पर उतरे । १२१-१२९ वहाँ लङ्काश्री (लंका की राजलक्ष्मी) का दमन करके उसके ही अनुग्रह से निःशङ्क होकर छोटा रूप धारण करके रात को लङ्का में प्रविष्ट हुए । वहाँ उस शिंशपावृक्ष पर बालक का रूप धारण करके बिना तनिक भी हिले बैठे रहे । तब रावण अपने शृंगार का कोलाहल रचे हुए चलकर आया । उसने देवी सीता से तरह-तरह की बातें की और जानकी ने उनका जवाब भी दिया । बहुत क्रुद्ध होकर जब दुष्ट राक्षस ने देवी को मार डालने के लिए हाथ उठाया तब मन्दोदरी ने उसको रोका और बहुत डाँटा और घर ले गयी । यह सब देखने के बाद हनुमान् बड़े कौतुक के साथ वृक्ष से उतरे और सीताजी को प्रणाम करके विश्वनायक राम का वृत्तान्त कहने लगे । इस प्रकार विश्वास पैदा करके और आश्वासन देने के बाद अँगूठी दी और लक्षण

वन्दिच्चु विटवळ्ङ्ङच्चु सन्तापं तीर्त्तु ।
नन्दनसममाकुमुद्यानं भंगं चेय्तु १३९
उद्यानपालन्मारेयोक्कवे तच्चु कोन्नान् ।
वृत्तान्तं केट्टशेषं क्रुद्धनाय् निशाचरन् १४०
अयच्चान् नूड्रायिरं किङ्करन्मारेयप्पो-
ळयच्चानवरकळेक्कालनूक्करक्षणाल् । १४१
पञ्चसेनाधिपरेययच्चाननवरेयुं
पञ्चत्वं चेर्त्तीटिनान् पञ्चास्यपराक्रमन् । १४२
उन्नतन्मारायुळ्ळ मन्त्रिनन्दनन्मारे-
प्पिन्नेयुमेळुपेरेययच्चान् दशाननन् । १४३
वन्नोरु पटयोटुमेळुपेरेयुं तच्चु-
कोन्नितु परिघत्तालञ्जनातनयनुं । १४४
रक्षोनायकन्तन्टे पुत्रनाकिय वीर-
नक्षनां कुमारनङ्ङटुत्तान् पटयोटे । १४५
तल्क्षणमवनेयुं कोन्नतु केट्टनेरं
रक्षोनाथनु वन्न कोपमेन्तोन्नु चोल्लू । १४६
कोपत्तोटिन्द्रजित्तुमटुत्तु युद्धं चेय्तान्
शोभिच्च दिव्यास्त्रङ्ङळेट्वुं प्रयोगिच्चान् । १४७

बतलाये। तदनन्तर महिलारत्न से चूड़ारत्न ले लिया, १३०-१३८ उनका दुःख दूर किया, उनकी वन्दना की और जाने की आज्ञा मांगी। इसके बाद नन्दनवन के समान उद्यान का नाश करके सभी उद्यानपालकों का वध किया। यह समाचार सुनकर रावण क्रुद्ध हुआ और उसने एक लाख कर्मचारी भेजे। उन सबको हनुमान् ने एक ही क्षण में यमलोक भेज दिया। तब पाँच सेनापति भेजे गये। पर वे भी सिंह के समान पराक्रमवाले (हनुमान्) के द्वारा मारे गये। तब रावश ने सात बड़े मन्त्रिपुत्रों को भेजा। अञ्जना-पुत्र हनुमान् ने उन सातों को भी उनकी सेना के साथ परिघ (भाला) से नष्ट कर दिया। तत्पश्चात् राक्षस-नायक का पुत्र वीर अक्षयकुमार अपनी सेना लिये चले आये। १३९-१४५ (हनुमान् ने) उनको भी तत्क्षण ही मार डाला। यह सुनकर राक्षसेन्द्र को जो क्रोध आया उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। तब बड़े क्रोध के साथ इन्द्रजित् (मेघनाद) लड़ने आये। उन्होंने चमकनेवाले दिव्य अस्त्रों का प्रयोग किया। ब्रह्मास्त्र से हनुमान् को बाँध दिया। हनुमान इस प्रकार लेट गये मानो बेहोश हो गये हों। फिर रावण को देखकर उसको

ब्रह्मास्त्रंकोण्टु बन्धिच्चीटिनानतुनेरं
सम्मोहं पूण्टपोले किटन्नु हनुमानुं । १४८
रावणन्तन्नेक्कण्टु परञ्ञानवस्थकळ्
देववैरियुमतु केट्टुटन् नियोगिच्चान् । १४९
वालिन्मेलग्नि कोळुत्तीटुकेन्नतुनेरं
चेलकळ्कोण्टु चुट्टिक्कोळुत्तीटिनान् तीयुं । १५०
मारुतियेळुनूरुयोजन लङ्कापुर-
मारूढकोपत्तोटे चुट्टुपोट्टिच्चितल्लो । १५१
तारिल्मातिनेक्कण्टु परञ्ञु रण्टामतुं
वारिधितन्निल् तीयुं पोलिच्चु चाटीटिनान् । १५२
दक्षिणसमुद्रत्तिन्नुत्तरतीरे वन्नु
दक्षनां वायुपुत्रन् वानरप्पटयोटुं । १५३
'कण्टेन ञान् जानकियें' येन्नुणर्त्तिच्चशेषं
तण्टार्मानिनि चूटुं चूडारत्नवुं नल्कि १५४
मानववीरनोटु वृत्तान्तं चोन्नशेषं
वानरप्पटयोटुंकूटे राघवदेवन् १५५
दक्षिणसमुद्रत्तिन्नुत्तरतीरं पुक्कान्
तल्क्षणं दशग्रीवन्तन्नोटु विभीषणन् १५६
नल्लतु परञ्ञतु केळाञ्ञु दशाननन्
नल्लनां विभीषणन् राघवन्तन्नेक्कण्टान् । १५७

सभी बातें बतला दीं। देववैरी रावण ने भी सभी बातें सुनकर इस प्रकार आज्ञा दी—"इसकी पूँछ पर आग दो।" तब इन्द्रजित् ने चिथड़ों से लपेटकर पूँछ को जला दिया। मारुति (हनुमान्) ने तो सात सौ योजन की लङ्का को क्रोध के आवेश में आकर जला डाला। सीताजी को दुबारा देखकर उनको आश्वासन दिया। आग को समुद्र में बुझाकर फिर कूदे। १४६-१५२ तदनन्तर दक्ष हनुमान् दक्षिणसमुद्र के उत्तरतट पर वानर सेना से मिले। 'मैंने सीताजी को देखा', ऐसी घोषणा करने के बाद उनके चूड़ारत्न को राम को समर्पित किया, और मानववीर राम को सारा वृत्तान्त सुना दिया। तब राघववीर राम वानरसेना के साथ दक्षिण-समुद्र के उत्तरतट पर पहुँचे। उस समय दशग्रीव (रावण) ने विभीषण का सदुपदेश नहीं सुना। तब विभीषण ने राम का दर्शन किया। तब राम ने लक्ष्मण के द्वारा विभीषण को लङ्कानायक के पद पर निःशङ्क

लङ्कानायकनेन्‍नु लक्ष्मणन्‍तन्नेक्कोण्टु
शङ्ककूटाते चेय्यिच्चीटिनानभिषेकं । १५८
सेविच्चु वरुणनेक्काणाञ्ञु रघुवरन्
कोपिच्चु तोटुत्तितु पावकमाय शरं । १५९
वेपिच्चु वरुणनुं तृक्काल्क्कल् वणङ्ङीट्टु
शोभिच्चु चिऱयिट्टुकोळ्ळुवान् वऴि नल्कि । १६०
अस्त्रत्तै मरुकान्तारत्तिलेक्कयच्चिट्टु
भद्रमां राज्यमाक्किच्चमच्चानविटवुं । १६१
कोट्टिनान् चिऱ नळनञ्चुवासरंकोण्टु
मुट्टिच्चु लङ्कतन्टे वटक्के गोपुरत्तिल् । १६२
विस्तारमुण्टु चिऱ पत्तु योजनवऴि
चित्रमायोरु नूऱु योजन नीळमुण्टु । १६३
वटक्के गोपुरत्तिन्मुकळिल् करयेऱि
पटक्कोप्पुकळ् कण्टु रावणनिरिक्कुन्पोळ् । १६४
अटर्त्तुकोण्टुपोन्‍नु सुग्रीवन् किरीटङ्ङळ्
नटिच्चु पुऱप्पेट्टु राक्षसप्पटयप्पोळ् । १६५
वानरराक्षसन्मार् तङ्ङळिल् पोरुत पो-
राननमायिरमुळ्ळवनुं पऱयामो । १६६
वेगत्तोटटुत्तितु मेघनादनुमप्पोळ्
नागास्त्रं प्रयोगिच्चु वेन्‍नु रामादिकळे । १६७

अभिषेक कराया । १५३-१५८ वरुण जब पूजा करने के बाद भी नहीं माने तब राम ने क्रुद्ध होकर आग्नेय धनुष पर शर चढ़ाया । उस समय वरुण काँपे और राम के पैरों पड़े और प्रसन्न होकर सेतु बनाने के लिए मार्ग बतलाया । राम ने चढ़े बाण को मरुकान्तार (जङ्गल) में भेजकर उसको एक अच्छा देश बना लिया । नल ने पाँच दिन में एक सेतु बनाया और उसे लङ्का के उत्तर गोपुर से मिलाया । वह सेतु दस योजन चौड़ा और सौ योजन लम्बा था । उत्तर के गोपुर के ऊपर चढ़कर सुग्रीव ने रावण के रहते सेना की तैयारियाँ देखीं । १५९-१६४ सुग्रीव रावण के किरीट छीन ले आये । तब रावण की सेना अभियान (आक्रमण करने) के लिए निकली । तब वानरों और राक्षसों में जो युद्ध हुआ उसका हज़ार मुँहवाला भी वर्णन नहीं कर सकता है । उस समय मेघनाद बड़े वेग से वहाँ पहुँचा और नागास्त्र का प्रयोग करके उसने राम आदियों पर आक्रमण

वन्नितु गरुडनुमन्नेरमविटेक्कु
पन्नगशरङ्ङळुं सन्नमाय् वन्नुकूटि । १६८
वीरनां धूम्राक्षनें मारुति कॊलचेय्तान्
वीरुळ्ळ वज्रदंष्ट्रन्तन्नेयंगदन् कॊन्नान् । १६९
वन्पनामकम्पनुमुन्पर्तन्पुरि पुक्का-
नन्पॊळिञ्ञॊरु वायुसंभवन्तन्टे कैय्याल् । १७०
नीलनुं प्रहस्तनेक्कॊन्नु भूमियिलिट्टान्
नीलमामलपोलें रावणन् पुरप्पॆट्टान् । १७१
रामनोटेट्टु तोट्टु रावणन् पुरि पुक्कान्
भीमतयुळ्ळ कुंभकर्ण्णनेयुणर्त्तिनान् । १७२
अवनुं पोन्नु वन्नु रामसायकङ्ङळे-
ट्टवनितन्निल् वीणु मरिच्चानतुनेरं । १७३
कॊन्नितु नरान्तकन्तन्नेयुं बालि पुत्रन्
वन्नॊरु देवान्तकन्तन्नें मारुति कॊन्नान् । १७४
चॊल्लेळुं महोदरन्तन्नें नीलनुं कॊन्नान्
वल्लभमेरुं त्रिशिरस्सिनें हनूमानुं । १७५
मर्क्कटप्रवरनामृषभन्तन्नोटेट्टान्
मुष्करन् महापार्श्वन् कॊन्नितु वायुपुत्रन् । १७६
पङ्क्तिकन्धरन्तन्टे नन्दननतिकाय-
नन्तकपुरिपुक्कु लक्ष्मणबाणंकॊण्टु । १७७

किया। ततक्षण ही गरुड वहाँ पहुँचा और सभी नागास्त्र नष्ट हो गये। वीर धूम्राक्ष का वध मारुति (हनुमान्) ने और अङ्गद ने क्रुद्ध वज्रदंष्ट्र का किया। प्रमुख अकम्प निष्करुण वायुसंभव (हनुमान्) के हाथ स्वर्ग भेजा गया। नील ने प्रहस्त को मार गिराया। तब नीलपर्वत के समान रावण निकला। १६५-१७१ राम का सामना करके हारा और नगर वापस गया। तदनन्तर उसने भयङ्कर कुंभकर्ण को जगाया। वह भी युद्ध के लिए पहुँचा और राम के बाणों के लगने से भूमि पर गिरकर मर गया। बालिपुत्र अंगद ने नरान्तक का वध किया और जो देवान्तक पहुँचा उसे हनुमान् ने मारा। विख्यात महोदर को नील ने और शक्तिशाली त्रिशिरा को हनुमान् ने मारा। वानरप्रवर ऋषभ का सामना किया शक्तिशाली महापार्श्व ने, जिसको हनुमान् ने समाप्त किया। पङ्क्तिकन्धर (रावण) का पुत्र अतिकाय लक्ष्मण का बाण लगने पर यमपुरी

कण्मायमेरुँयुळ्ळोरिन्द्रजित्ताय वीरन्
ब्रह्मास्त्रंकोंण्टु रामादिकळॆ मोहिप्पिच्चान् । १७८
ब्रह्मनन्दननाय जाम्बवान्नियोगत्ताल्
निर्म्मलनाय कपिवीरनञ्जनापुत्रन् । १७९
मारुति कोंण्टुवन्नानौषधमहामल
पोरतिल् मरिच्चवरोंक्कवे जीविच्चितु । १८०
रावणन्तन्टॆ पट चत्तताळियिलिट्टि-
ट्टावतल्लातॆवन्नु जीविप्पानतु दैवं । १८१
चुट्टितु लङ्कापुरं वानरप्रवरन्मार्
पेट्टॆन्नु पुऱप्पॆट्टु कुंभनुं पटयुमाय् । १८२
शोणिताक्षनुं विरूपाक्षनुं यूपाक्षनुं
मानियां प्रजंघनुं मरिच्चानतुनेरं । १८३
वानरप्रवरन्मार् कोंन्नुकोंन्नवरोटुं
मानमेऱीटुं रक्षोबलवुं मरिच्चुते । १८४
अग्रे वन्नॆतिर्त्तितु कुंभनुमतुनेरं
सुग्रीवनवनॆयुं निग्रहिच्चितु वेगाल् । १८५
अग्रजन् मरिच्चप्पोळॆतिर्त्तान् निकुंभनु-
मुग्रनां वायुपुत्रनवनॆक्कोंलचॆय्तान् । १८६
खरन्तन्मकन् मकराक्षनुं पुऱप्पॆट्टान्
पोंरुतु रामशरमेटु पोय् स्वर्ग्गं पुक्कान् । १८७

पहुँचा। मायावी वीर इन्द्रजित् (मेघनाद) ने ब्रह्मास्त्र के द्वारा राम आदियों को बेहोश कर दिया। १७२-१७८ ब्रह्मपुत्र जाम्बवान् की आज्ञा से निर्मल वानरवीर अञ्जनापुत्र (हनुमान्) औषधों का पर्वत उठा लाये और युद्ध में मरे सब वानर जिलाये गये। रावण की सेना के मरे सब समुद्र में फेंक दिये जाने के कारण न जिलाये जा सके, यह दैव की लीला है। वानर प्रवरों ने लंका को जला डाला। तुरन्त ही कुंभ सेना लेकर निकला। शोणिताक्ष, विरूपाक्ष, यूपाक्ष और मानी प्रजंघ उस समय मरे। अनेक वानर प्रवर मरे और उनके मारे हुए अनेक राक्षस सैनिक भी समाप्त हुये। तब कुंभ ने आगे आकर सामना किया और सुग्रीव ने उसका निग्रह किया। १७९-१८५ जब बड़े भाई का निधन हुआ तब निकुंभ सामने आया और उसको उग्र वायुपुत्र (हनुमान्) ने समाप्त किया। तब खर का पुत्र मकराक्ष निकला और युद्ध में राम का शर लगने पर वह

मायमेऱीट्टुन्नॊरु मेघनादनुमप्पोळ्
मायासीतयॆक्कॊन्नान् मारुति काण्कॆत्तन्नॆ । १८८
राघवन्तन्नोटप्पोळ् मारुतियऱियिच्चा-
नाकुलप्पॆट्टु रामदेवनुमतुनेरं । १८९
कण्टितु परिभ्रममायतु विभीषणन्
मण्टिवन्न रचनॆत्तॊऴुतङ्ङुणर्त्तिच्चान् । १९०
कण्टतारिन्द्रजित्तिन् मायकळ् कपिकळे !
कण्टिवार्कुऴलियॆक्कॊन्नतु मायमत्रे । १९१
तण्टार्मातिनॆयार्क्कुं कॊन्नुकूटुकयिल्ल
पण्टे चापल्यमुण्टु वानरन्मार्क्कुं नूनं । १९२
तक्कत्तिल् निकुंभिल पुक्किप्पोळ् मेघनाद-
नॊक्कवे कऴिच्चीटुं तन्नुटॆ होममॆन्नाल् । १९३
पिन्ने मट्टॊरुत्तर्क्कुमावतिल्लवनोटु
मुन्ने नामतुं चॆन्नु मुटक्किक्कॊळ्ळुन्नाकिल् १९४
इन्ने रावणितन्नॆक्कॊन्नीटामऱिञ्ञालुं
पिन्नॆ रावणन्तानुं मरिच्चानॆन्ने वेण्टू । १९५
पोरिक हनूमानुं लक्ष्मणकुमारनुं
पोरिनु विरुतुळ्ळ वानरवीरन्मारुं । १९६

स्वर्ग चला गया। उस समय मायावी मेघनाद ने हनुमान् के सामने माया-सीता को मार डाला। हनुमान् ने राम से जाकर यह बात कही तब रामदेव बहुत ही दुःखित हुए। राम को दुःखित देखकर विभीषण दौड़कर आया और राम से हाथ जोड़कर बोला—इन्द्रजित् (मेघनाद) की मायाओं को कौन जानता है। सीता को जो मारा गया है वह मायामात्र था। १८६-१९१ सीतादेवी को कौन मार सकता है? वानर तो स्वभावतः चंचल होते हैं। मेघनाद तो अब अवसर पाकर निकुंभिला[1] जायगा और वहाँ अपना हवन समाप्त करेगा। उसके बाद कोई भी उससे लड़ न सकेगा। अगर हम पहले ही जाकर हवन में बाधा डालें तो आज ही रावणि (मेघनाद) मारा जा सकता है। उसके बाद रावण का वध ही शेष रह जायगा। हनुमान्, कुमार लक्ष्मण और लड़ने में समर्थ वानरवीर भी चले जावें। जब नक्तञ्चरपति (विभीषण) ने इस प्रकार कहा तब पुरुषोत्तम (राम) चिन्तित होकर बोले। १९२-१९७ "अच्छा तो फिर

१ लंका के पश्चिम भाग में स्थित एक गुहा जहाँ हवन हुआ करते थे।

सत्वरं नक्तञ्चरनित्तरं पऱञ्ञप्पोळ्
चित्तमाल् तीर्न्नु पुरुषोत्तमनरुळ्चेय्तु । १९७
ऒङ्किल् वैकातॆ चॆन्नु रावणितन्नॆक्कॊन्नु
सङ्कटं तीर्क्कयॆन्नु राघवनयच्चप्पोळ् १९८
लक्ष्मणकुमारनुं मारुतिसुतलाय
मर्क्कटवीरन्मारुं रावण सहजनुं १९९
ऒक्कत्तक्कवे चॆन्नु पुक्कितु निकुंभिल
रक्षोवाहिनियतुकण्टु संभ्रमं पूण्टु । २००
चुटुं वन्पट निर्त्ति चॊल्कॊण्ट मेघनादन्
कुटमॆन्निये होमं तुटङ्ङियतुनेरं । २०१
पट्लर्कुलकालन्माराय कपिवरर्
चुटुं चॆन्नणञ्ञु पोर्तुटङ्ङि भयङ्करं । २०२
मारिनेर् पॊऴिञ्ञितु बाणङ्ङळ् कुमारनुं
मारुतिप्रमुखरां वानरप्रवररुं २०३
मामल मरामरं वलिय शिलकळुं
रूमयोटॆटुत्तुटन् तूकिनारतुनेरं । २०४
अटुत्त निशिचरर् तिरिच्चु भयत्तिना-
लॆटुत्तु विल्लुमन्पुमन्नेरं मेघनादन् । २०५
अटुत्त शत्रुक्कळॆयकट्टि यॊऴिञ्ञिनि
मुटिच्चुकूटा होमं मुटक्कुमत्रेयिवर् । २०६

बिना विलम्ब के जाकर मेघनाद को मारकर संकट समाप्त करो।" जब ऐसी आज्ञा हुई तब कुमार लक्ष्मण, हनुमान् आदि वानरवीर और रावण का भाई, ये सब लोग निकुंभिला पहुँचे। यह देखकर राक्षससेना क्षुब्ध हुई। मेघनाद ने अपनी सेना को चारों तरफ़ खड़ी करके निर्दोष ढंग से अपना हवन प्रारंभ किया। तब शत्रुओं के नाशक वानरप्रवरों ने चारों तरफ़ घेर कर युद्ध प्रारम्भ किया। कुमार ने बाणों की वर्षा की और मारुति आदि वानर प्रवरों ने पहाड़ के वृक्षों और बड़े-बड़े पत्थरों को उठाकर शत्रुओं पर फेंका। निकट के सभी राक्षस डर के मारे भागे। तब मेघनाद ने अपना धनुषबाण उठाया। १९८-२०५ (उसने सोचा) इन निकट के शत्रुओं को बिना हटाये यह हवन समाप्त होनेवाला नहीं है क्योंकि ये अवश्य बाधा डालेंगे। यह समझकर कि शत्रु घमंड से आये हैं मेघनाद निकट आया और बाणों की वर्षा करने लगा। 'सामने के मायावी

नटिच्चु वन्ना रॅन्तु निनच्चु मेघनाद-
नट्टुत्तु बाणजालं पॊळिच्चु तुटङ्ङिनान् । २०७
अट्टुत्तु मुन्पिलक्कण्टु वैरियां मायावियॆ-
यॊट्टुक्कीटणमिनिक्कटुक्कत्तॆन्तु नन्नाय् २०८
अट्टुत्तुनिन्नु युद्धं तुटङ्ङि कुमारनुं
पट्टुत्वमेऱ्ऱ शरमॆटुत्तु तॊटुत्तुटन् २०९
वलिच्चुतॊटुत्तयच्चीटिनान् नक्तञ्चरन्
मलच्चीटुन्नु चत्तु चोरयुं पलवळि- २१०
यॊलिच्चीटुन्नु मेघनादनुमतु कण्टु
चलिच्चीटुन्नु चित्तं राघवसहजनुं । २११
ज्वलिच्चीटुन्नु कोपं रावणतनयनुं
फलिच्चीटुन्नु मनोरथमायुळ्ळतेल्लां । २१२
राघवसहजनुं रावणतनयनुं
वेगमेऱ्ऱुत्तु चॆय्तीटिन युद्धंपोलॆ । २१३
पण्टु कीळुण्टायतुमिल्लिनिमेलिलॆ-
न्नुमुण्टाकयिल्लयॆन्नु निर्णयिच्चुरचॆय्यां । २१४
मून्नु राप्पकल् पिरिञ्ञीटातॆ पॊरुतप्पोळ्
मून्नु लोकत्तुमुळ्ळॊरापत्तुमॊटुङ्ङिते । २१५
देवकळ् पुष्पवृष्टिचॆय्कयुं स्तुतिक्कयुं
देविकळ् कूत्तुं पाट्टुं तुटङ्ङि सन्तोषत्ताल् । २१६

शत्रु को आज मुझे निकट से ही समाप्त करना चाहिये', ऐसा सोचकर लक्ष्मण ने निकट से युद्ध प्रारम्भ किया। तब राक्षस ने एक तीक्ष्ण बाण लेकर धनुष पर चढ़ाकर और खींचकर चलाया। सैनिक बेहोश होने लगे। चारों ओर रक्त बहने लगा। उसे देखकर मेघनाद का और लक्ष्मण का भी चित्त विचलित होने लगा। रावण के पुत्र का क्रोध प्रचंड हो उठा और उसके मनोरथ पूरे होने लगे। २०६-२१२ राम के भाई और रावण के पुत्र में निकट से जो युद्ध हुआ उसके समान कोई युद्ध पूर्वकाल में और उसके बाद कभी नहीं हुआ और भविष्य में भी नहीं होगा। ऐसा निश्चित रूप से कहा जा सकता है। तीन दिन और तीन रात निरन्तर युद्ध हुआ और तीनों लोकों की विपत्तियाँ समाप्त हुईं। देवों ने स्तुति करते हुए पुष्पवृष्टि की और देवियाँ हर्ष के कारण नाचने-गाने लगीं। जब देवों ने दुन्दुभि बजाया तब उसका नाद सुनकर रावण का जो दुःख

देवकळ् पेरुम्पऱयटिच्च नादं केट्टु
रावणनुण्टायोरु सङ्कटं पऱयामो ? २१७
मक्कळुं मरुमक्कळ् तन्पिमारमात्यरुं
मुष्करन्मारायुळ्ळ पटनायकन्मारुं २१८
मिक्कतुमोटुङ्ङियनेरत्तु दशाननन्
दुःखत्तेयटक्किकस्सन्नद्धनाय् पुऱप्पेट्टान् । २१९
मुन्पिनाल् मूलबलाद्यखिलरक्षोगणं
वन्पटयोटु पाताळत्तिङ्कल्निन्नु वन्नार् । २२०
पङ्कजनेत्रन् पन्तिरण्टुनाळिककोण्टु
संख्ययिल्लात पटयोक्कवेयोटुक्किनान् । २२१
रावणन्तन्टे मुन्पिल् मरिच्चु महोदरन्
देववृन्दारातीन्द्रनां महापार्श्वन्तानुं । २२२
राघवन्तिरुवटितन्नुटे मुन्पिल् चेन्नु
वेगेन शस्त्रावलि तूकिनान् दशाननन् । २२३
पारिल्निन्नरचनुं तेरिल्निन्नरक्कनुं
पोरति कोटुमयाय् चेय्ततु कण्टु विण्णोर् । २२४
पारमुण्टिळप्पमेन्नऱिञ्ञु पुरन्दरन्
तेरुमाय् पोकयेन्नु मातलियोटु चोन्नान् । २२५
मातलिकोण्टुवन्न तेरतिल्क्करयेऱि-
च्चेतसि तेळिञ्ञु पोर्तुटङ्ङि रघुवरन् । २२६

हुआ वह कैसे कहा जाय। जब पुत्र, भांजे-भतीजे, भाई, अमात्य और वीर-शूर सेनानायक भी अधिकांश समाप्त हुए तब दशानन (रावण) अपने दुःख को दबाकर तैयार होकर निकला। २१३-२१९ पहले तो मूलबल आदि समस्त राक्षसगण बड़ी सेना के साथ पाताल से आये। पङ्कजनेत्र राम ने बारह नाड़िकाओं (घड़ियों) में (पाँच घंटों में) असंख्य सेना को समाप्त कर दिया। रावण के ही सामने महोदर मरा और देवगणों का शत्रु महापार्श्व (भी मरा)। तब राम के सामने जाकर दशानन ने शस्त्रों की वर्षा की। देवों ने राजा (राम) को भूमि पर खड़े होकर और राक्षस को रथ पर बैठे हुए तीव्र युद्ध करते देखा। इन्द्र ने राम की कमी जान ली और अपने सारथि मातलि से कहा—"रथ लेकर जाओ"। २२०-२२५ मातलि के लाए हुए रथ पर चढ़कर राम प्रसन्न हुए और फिर लड़ने लगे। राम-रावण के युद्ध की अगर उपमा करनी है तो राम और रावण के युद्ध

रामरावणरणसाम्यत्तेच्चोंल्लीटिलो
रामरावणरणतुल्यमेंन्नतु चोंल्लां । २२७
नूऱ्रोळं तलयऱ्रुत्तिट्टितु रघुवरन्
पोरिनु कुऱञ्ञतिल्लेंळ्ळोळं दशमुखन् । २२८
आऱेंळुदिनं पिरियातेनिन्न्रोंरुपोले
घोरमाय् पोंरुत पोरेङ्ङने पऱयुन्नु । २२९
आदित्यहृदयमाम्मन्त्रत्तेयुपदेशि-
च्चाधितीर्त्तितु कुंभसंभवनाय मुनि । २३०
राघवन् ब्रह्मास्त्रवुमयच्चानतुकोंण्टु
रावणन् मरिच्चुवीणीटिनानवनियिल् । २३१
ईरेंळुपतिन्नालुलोकवुं तोंळिञ्ञितु
घोरनां दशमुखन् मरिच्च निमित्तत्ताल् । २३२
नारिमार् मुऱविळितुटङ्ङी लङ्कतन्निल्
धीरनां विभीषणन् पऱञ्ञु दुःखं तीर्त्तु । २३३
चेंय्तितु शेषक्रिय सर्व्ववुं विभीषणन्
कैतवमऱियात जानकियतुनेरं २३४
राघवन् नियोगत्तालग्नियिल् मुळुकिना-
ळाकुलं तीर्न्नु वन्नारन्नेरं सुरन्मारुं । २३५
योषमार् कुलमणियाकिय सीतय्क्कोंरु
दोषमिल्लेंन्नु सर्व्वदेवतमारुं चोंल्लि । २३६
मैक्कण्णितन्नेंयुटन् कैक्कोंण्टु रघुवरन्
तृक्काक्कल् निल्क्कुन्नोंरु रक्षोनायकनेयुं २३७

से ही की जा सकती है। रघुवर ने रावण के सौ तक सिर काट डाले परन्तु वह तिल भर भी कम नहीं लड़ा। छः सात दिन निरन्तर जो उनका घोर युद्ध हुआ उसका वर्णन कैसे किया जाय ? अगस्त्य मुनि ने राम को आदित्यहृदय नामक मन्त्र का उपदेश देकर आश्वासन दिया। राघव ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। उससे रावण मरकर भूमि पर गिर पड़ा। घोर रावण के मरने से चौदहों लोक प्रसन्न हुए। लंका में स्त्रियाँ रोने-पीटने लगीं और धीर विभीषण ने उनको समझाकर शान्त किया। २२६-२३३ सभी शेषक्रियाएँ विभीषण ने ही कीं। उस समय जानकी जो बिलकुल सीधी थी राम की आज्ञा से अग्नि में प्रविष्ट हुई। तब शान्त होकर सभी देवगण पधारे। "महिलाकुल की मणि सीताजी

चॊल्क्कॊण्ट निशिचरराजावॆन्नभिषेकं
लक्ष्मणनॆक्कॊण्टु चॆय्यिच्चितु रघुवरन् । २३८
पुष्पकविमानवुमेऱिनान् रामचन्द्र-
नप्पॊऴुतवन्तन्नॆक्कण्टितु दशरथन् । २३९
सन्तोषत्तॊटे वीणु नमस्कारवुं चॆय्तान्
चिन्तयुं तॊऴिञ्ञितु रामनॆक्कण्टमूल- २४०
मानन्दिच्चनुग्रहिच्चीटिनान् दशरथन्
वेणुन्न वरङ्ङळ् नल्कीटिनार् सुरन्मारुं । २४१
रक्षोनायकन् मुतलाय राक्षसन्मारुं
सुग्रीवन् मुतलाय वानरवीरन्मारुं २४२
लक्ष्मणकुमारनुं जानकीदेवितानु-
मॊक्कतक्कवे रामन् पुष्पकमेऱुंनेरं । २४३
तिक्किप्पोय् मऱञ्ञितु वानवरॆल्लामप्पोळ्
मुक्कण्णन्तानुं कैलासं पुक्कु देवियुमाय् २४४
सत्यलोकवुं पुक्कु धातावुं वाणियुमाय् ।
सत्यतल्परनाय भगवान् दाशरथि २४५
राघवनयोद्ध्यपुक्कभिषेकवुं चॆय्तु
लोकङ्ङळ् पतिन्नालुं पालिच्चु वऴिपोलॆ । २४६
वाऴुन्न कालत्तिङ्कल् नालुदिक्किलुमॊक्क
वाऴुन्न मुनिजनं वन्नितु काण्मानतिल् । २४७

बिलकुल निर्दोष हैं" ऐसा सभी देवों ने कहा । तत्क्षण ही रघुवर ने सीता को स्वीकार किया । और जो राक्षसों का नायक उनके पैरों पड़ा था उसको राक्षसों के राजा के रूप में राम ने लक्ष्मण के द्वारा अभिषेक कराया । रामचन्द्रजी पुष्पक विमान पर चढ़े । तब दशरथ ने उनको देखा । २३४-२३९ राम ने सहर्ष उनको नमस्कार किया । राम को देखने से दशरथ निश्चिन्त हुए और उन्होंने आनन्द से राम पर अनुग्रह किया । देवों ने भी अपेक्षित वरदान दिये । राक्षसनायक विभीषण आदि राक्षस, सुग्रीव आदि वानरवीर, कुमार लक्ष्मण, देवी जानकी, इन सबके साथ जब राम पुष्पकविमान पर चढ़े तब सभी देव एक साथ अन्तर्धान हो गये । त्र्यक्ष (शिव) पार्वतीदेवी के साथ कैलास सिधारे और ब्रह्मा, वाणी (सरस्वती) के साथ सत्यलोक गये । सत्यतत्पर भगवान् दशरथपुत्र राम अयोध्या सिधारे जहाँ उनका अभिषेक हुआ । तदनन्तर उन्होंने चौदहों लोकों का विधिवत् पालन किया । २४०-२४६ जब राम

कुंभसंभवन् परञ्ञन्पोंटु निशिचर-
संभवमरिञ्ञितु राघवन् तिरुवटि । २४८
नाना तापसन्मारुं राक्षस प्रवररुं
वानरवीरन्मारुं पारातें नटकोंण्टु । २४९
पुष्पकमाय विमानत्तेयुमयच्चितु
पुष्पसायकसमनाकिय रघुवरन् । २५०
जानकियोटुं कूटिक्कामलीलकळ् नन्नाय्
मानसमिरक्किनान्मानववीरन्तानुं । २५१
पुष्पबाणार्त्तिपूण्टु पुळच्चु कळिक्कुन्नाळ्
गर्भवुमुण्टाय्वन्नू जानकिक्कतुकालं । २५२
कळञ्ञानपवादं पेटिच्चु रघुनाथन्
विळङ्ङीटिन सीतादेवियेयवळुं पोय् । २५३
वाल्मीकिमुनितन्टेयाश्रमत्तिङ्कल् वाणाळ्
काम्यन्माराय कुमारन्मारुमुण्टाय्वन्नु । २५४
आदराल् कुशलवन्माराय पैतङ्ङळ्क्कु
जातकर्म्मादियोंक्केच्चेय्तितु वाल्मीकियुं । २५५
तानुतन्ने चमच्च रामायणमाय काव्यं
तान्तन्माराय कुमारन्मारे पठिप्पिच्चान् । २५६
मधुनन्दननाय लवणन्तन्नेक्कोन्नु
मधुरापुरियुं वाणिरुन्नु शत्रुघ्ननुं । २५७

इस प्रकार राज्य करने लगे तब चारों दिशाओं में रहनेवाले मुनिजन उनका दर्शन करने पधारे। उनमें से कुंभसंभव (अगस्त्य) द्वारा प्रेम से बतलाने पर पूज्य राम ने रावण की उत्पत्ति जान ली। विविध तापस, राक्षस-प्रवर और वानरवीर सभी जल्दी से (अपने-अपने घरों को) चले गये। पुष्पसायक (कामदेव) के समान रघुवर ने पुष्पक नामक विमान को वापस कर दिया। मानववीर ने जानकी के साथ कामलीलाएँ करने में अपना मन लगाया। पुष्पबाण (कामदेव) की आर्ति लगकर सोत्साह खेलते समय जानकी उन दिनों गर्भिणी हो गयी। २४७-२५२ परन्तु रघुवर ने जनापवाद के डर से गर्भिणी सीतादेवी को त्याग दिया। वे जाकर मुनि वाल्मीकि के आश्रम में निवास करने लगीं। वहाँ उनके दो रमणीय कुमारों का जन्म हुआ। कुश और लव नामक उन कुमारों के वाल्मीकि ने सादर जातकर्म आदि संस्कार कराये। उन शान्त कुमारों को अपना ही रचा रामायण काव्य पढ़ाया। शत्रुघ्न ने मधु के पुत्र लवणासुर को

अश्वमेधत्तिन्नाशु कोप्पिट्टु रघुवरन्
निश्शेषं निशिचरवानरन्मारुं वन्नु । २५८
मानववीरन्मारुं तापसश्रेष्ठन्मारुं
क्षोणीनिर्ज्जरन्मारुं निर्ज्जरन्मारुं वन्नु । २५९
अक्कालं कुशलवन्माराय तनयन्मार्
शिक्षयिल् रामायणं चॊल्लियारतु केट्टु । २६०
राघवन् तन्टॆ मक्कळॆन्नतरिञ्ञतुमूलं
राकेन्दुमुखितन्नॆ वरुत्ति रण्टामतुं । २६१
नीयिनियॊरु दिनमॆल्लारुं काणुंवण्णं
तीयिल् चाटीटवेणमॆन्नितु रघुवरन् । २६२
मेदिनि पिळर्न्नु ताणीटिनाळ् वैदेहियुं
मेदिनीपालनॊट्टु कोपिच्चानतुनेरं । २६३
पॊन्नुकॊण्टॊरु सीततन्नेयुं चमच्चुटन्
पिन्नेयुं यागङ्ङळॆच्चॆय्तितु रघुवरन् । २६४
अम्ममारुटॆ शेषक्रियकळॆल्लां चॆय्तु
निर्म्मलन्मारायवर् नाल्वर्क्कुं सुतन्माराय् । २६५
ऒण्मरुण्टवरॆयुं वाळिच्चानोरोदिक्किल् ।
कल्मषं लोकङ्ङळ्क्कु तीर्त्तु राघवदेवन् । २६६
पतिनोरायिरत्ताण्टिङ्ङनॆ धर्म्मं चॆय्तु
पतिन्नालुलकवुं परिपालिच्चु वाणान् । २६७

मारकर मथुरापुरी में राज्य किया । उस समय रघुवर ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिए तैयारियाँ कीं । सभी राक्षस और वानर आये । मानववीर तापसवर, भूदेव और देव पधारे । २५३-२५९ उस समय सीता के पुत्र कुश और लव ने ढंग से रामायण का पाठ किया । यह सुनकर राम ने जब समझ लिया कि ये मेरे पुत्र हैं तो उन्होंने पूर्णचन्द्रमुखी सीता को फिर अपने सामने बुलवाया । और कहा, "तुम एक दिन सब के सामने अग्नि में प्रवेश करो" । तब पृथिवी खुली और वैदेही उस में प्रविष्ट हुईं । राजा राम कुछ कुपित हुए । तब राम ने सीता की एक सोने की प्रतिमा बनवाकर यज्ञ को समाप्त किया । तदनन्तर माताओं की शेषक्रियाएँ कीं । उन चार निर्मल भाइयों के आठ पुत्र थे । उनको भिन्न भिन्न दिशाओं का राजा बनाया । इस प्रकार राघवदेव ने लोगों के दुःख को दूर किया । ग्यारह हजार वर्ष इस प्रकार धर्मपूर्वक चौदहों लोकों का परिपालन

मारुतिविभीषणन्मारोंळिञ्ञुळ्ळ कपि-
वीरन्मारोटुं नक्तञ्चरवीरन्मारोटुं २६८
भक्तराययोध्ययिल् वाळुन्न जनत्तोटुं
भक्तवत्सलन् प्रापिच्चीटिनान् निजलोकं । २६९
मानुषजन्मं जनिच्चीटुकिल् दुःखमुण्टां
मानसतारिल् परमेश्वरनेन्नाकिलुं । २७०
चिन्तिच्चु सदाकालमीश्वरध्यानं चेय्तु
कुन्तीनन्दन ! मनःखेदमुण्टाकवेण्ट । २७१
रामनामत्तै सर्व्वकालवुं जपिक्कयुं
रामनै नन्नायुळ्ळिल् ध्यानिच्चुकोळ्कयेन्नुं । २७२
मामुनि मार्क्कण्डेयन् धर्म्मजनोटु चोल्लि
राममन्त्रवुमुपदेशिच्चान् वळिपोलै । २७३
यात्रयुमयप्पिच्चु पोयितु मार्क्कण्डेय-
नास्थया केट्टु तोंळुतीटिनार् पाण्डवरुं । २७४
अक्कालमिन्द्रनोरु विप्रनायपेक्षिच्चा-
नर्क्कनन्दननोटु कुण्डलकवचङ्ङळ् । २७५
कोटुत्तानवनेतुं मटिच्चीलतुमूलं
कोटुत्तानिन्द्रनोरु वेलुमेन्नरिञ्ञालुं । २७६

किया । २६०-२६७ अन्त में मारुति और विभीषण को छोड़कर अन्य वानरों और राक्षसों के साथ, और अयोध्या में निवास करनेवाले भक्तजनों के साथ भक्तवत्सल राम निजलोक को गये । मनुष्य जन्म लेकर दुःख अवश्य होगा । इसलिए सदैव मन में परमेश्वर का ध्यान करते रहो । "हे कुन्तीपुत्र ! सदैव ईश्वर का ध्यान करते रहो, अपने मन में खेद न किया करो । सदैव राम नाम का जप करते रहो और राम का अपने मन में ठीक से ध्यान करते रहो ।" इस प्रकार महामुनि मार्कण्डेय ने युधिष्ठिर से कहा और उनको राममन्त्र का उपदेश दिया । पाण्डवों ने बड़ी आस्था के साथ सब सुना और प्रणाम किया । तदनन्तर उन्होंने मार्कण्डेय को बिदा किया और वे चले गये । उन दिनों इन्द्र एक ब्राह्मण के रूप में सूर्यपुत्र (कर्ण) के पास गये और उनसे कुण्डल और कवच मांगा । कर्ण ने बिना हिचक के सब दे दिया और बदले में इन्द्र ने उसको एक शक्ति दी । २६८-२७६

यक्षप्रश्नं

अक्कालं कुरुक्षेत्रत्तिङ्कलुळ्ळोरु विप्र-
नग्नियुं परिपालिच्चङ्ङने मरुवुंनाळ् । १
अरणियेट्टुत्तुकोण्टोटिप्पोयोरु मृग-
मरण्यं पुक्कानेन्नु भूदेवन् परञ्ञप्पोळ् २
अटवितोरुं नटन्नरणि तिरञ्ञव-
रिटर्पूण्टितु दाहं मुळुत्तुचमकयाल् । ३
पक्षियाय् चमञ्ञवन् पोय्कतङ्करेच्चेन्नु
पुक्कितु धर्म्मराजन् धर्म्मत्तेप्परीक्षिप्पान् । ४
पानीयं तिरञ्ञिङ्ङु पाराते वरिकेन्नु
दीनतपूण्टु सहदेवने नियोगिच्चान् । ५
कटुक्केन्नवन् नीळेत्तिरञ्ञु पोय्क कण्टु
कुटिप्पानायित्तण्णीर् कोरिय नेरत्तिङ्कल् । ६
कुटिच्चीटोलायेन्नु केळ्क्कायितोरु मोळि
कुटिच्चान् दाहं कोण्टु मरिच्चानवनप्पोळ् । ७
कण्टील सहदेवन् पोयवन्तन्नेयेङ्ङुं
कोण्टुवा नकुला ! नी तण्णीरेन्नितु मन्नन् । ८

यक्ष-प्रश्न

उन दिनों जब कुरुक्षेत्र का एक ब्राह्मण अपनी अग्नि में हवन करता था तब उसकी अरणि को लेकर कोई मृग भाग गया और वन में प्रविष्ट हुआ। ऐसा जब ब्राह्मण ने कहा तब पाण्डव वन-वन में अरणि को ढूँढने निकले और प्यास बढ़ने से पीड़ित हुए। इतने में धर्मराज (यमराज), युधिष्ठिर के धर्म की परीक्षा करने के लिए एक पक्षी का रूप धारण करके सरोवर के तटपर जाकर छिप गये। तब युधिष्ठिर ने प्यास से लाचार होकर कहीं से कुछ पानी ढूँढ लाने के लिए सहदेव को भेजा। तुरन्त ही वह निकलकर दूर जाकर एक सरोवर के पास पहुँचा और उसमें से पीने के लिए कुछ जल उसने निकाला। तब "मत पियो" ऐसी एक वाणी सुनाई दी। पर प्यास के कारण उसको पी लिया और तत्क्षण ही मर गया। १-७ तब राजा (युधिष्ठिर) ने कहा। "सहदेव का पता नहीं जो पानी लाने गया था। नकुल ! तुम जाकर पानी लाओ।" यह सुनकर नकुल सरोवर गया और वहाँ उसने अपने भाई को देखा। "प्यास बुझाकर इसका कारण जानलूंगा", ऐसा सोचकर उसने जितना

ऎन्नतु केट्टवनुं पोय्च्चॆन्नितु पॊय्क्कतन्निल्
तन्नुटॆयनुजनॆ कण्टितन्नकुलनुं । ९
दाहत्तॆक्कॆट्टुत्तितिन् कारणं तिरयामॆ-
न्नावोळं पॊट्टुक्कनॆ कोरियान् तण्णीरवन् । १०
कुटिच्चीटॊल्ल तण्णीर् मरिक्कुं नीयुमॆङ्किल्
कट्टुक्कप्पॊय्क्कॊळ्कॆन्नु केळ्क्कायितॊरुमॊळि । ११
मरिक्किल् दाहंपूण्टु मरिच्चीटुकयल्ल
तॆरिक्कॆन्निनित्तण्णीर् कुटिक्कयॆन्नु निन- । १२
च्चुरच्चु नकुलनुं कुटिच्चु मरिच्चुते
मनक्कान्पतिलळल् मुळुत्तु नृपतियुं । १३
तन्पिमारिरुवरुं वन्नतिल्लॆन्नु कण्टु ।
संभ्रमिच्चयच्चितु धर्म्मजन् विजयनॆ । १४
चॆन्नुतु निरूपिच्चु नटन्नु विजयनुं
विरविल् पॊय्क्कपुक्किट्टनुजन्मारॆक्कण्टान् । १५
दाहवेगत्ताल् तण्णीर् कुटिप्पान् तुटङ्ङुन्पोळ्
मोहिच्चु कुटिक्कॊल्ला तण्णीरॆन्नतु केट्टु । १६
कल्पिच्चवण्णं वरुमॆन्नुरच्चिन्द्रात्मजन्
निर्म्मलन् तण्णीर् कुटिच्चप्पॊळॆ मरिच्चुते । १७
पोयवरारुं वन्नीलॆन्नुकण्टरचनुं
वायुनन्दननोटु पोयालुमॆन्नु चॊन्नान् । १८

जल्दी हो सका पानी निकाला। "पानी मत पियो, नहीं तो तुम भी मरोगे। जल्दी चले जाओ।" —ऐसी एक वाणी सुनाई दी। "अगर मरना है तो प्यासा नहीं मरूँगा, जल्दी कुछ पीलूँ" ऐसा सोचकर नकुल ने पीने का निर्णय किया। वह भी पानी पीकर मर गया। यह देखकर कि दोनों भाई नहीं लौटे हैं राजा के मन में दुःख बढ़ा। तब युधिष्ठिर ने विजय (अर्जुन) को भेजा। ८-१४ मामले को छोटा समझकर अर्जुन चल पड़ा और आराम से सरोवर पर पहुँचकर उसने भाइओं को देखा। प्यास की तीव्रता के कारण जब वह पानी पीनेवाला ही था तभी "मोह में पड़कर पानी मत पियो" ऐसी आवाज़ सुनाई दी। निर्मल इन्द्रपुत्र (अर्जुन) ने अपने मन में यह तय करके कि जो होना है वह होगा, पानी पी लिया और तत्क्षण मर गया। यह देखकर कि जो कोई भी गया वापस नहीं आया, राजा ने वायुनन्दन भीमसेन से कहा—"तुम ज़रा चले जाओ"।

चेन्नवन् तण्णीर् कुटिच्चप्पोळ् मरिच्चुते
मन्नवन्तानुं वन्नान् पिन्नालेयतुनेरं । १९
तन्पिमारुटे शवं पोय्कतन् करेक्कण्टु
संभ्रमत्तोटुकूटेक्कर्म्मर्मेन्नुरच्चवन् २०
पानीयं कोरिक्कुटिच्चीटुवान् तुटङ्ङुन्पोळ्
पानीयं कुटिक्कोल्लायेन्नोरु मोळि केट्टु । २१
अन्ततिन् मूलमेन्नु तण्णीरुं कळञ्ञव-
नन्तरा नोक्कुंनेरं काणायि पक्षितन्ने । २२
आरु नीयेन्तु तण्णीर् कुटिप्पानरुताय्क ?
नेरे चोल्लेन्नु धर्म्मनन्दनन् पऱञ्ञप्पोळ् २३
ञानोरु यक्षनेन्टे चोद्यत्तिनेल्लाट्टिनुं
ज्ञानियायुळ्ळ नी तानुत्तरं पऱयणं । २४
धर्म्मजनतुकेट्टु चोल्लुकयेङ्किलेन्नान्
धर्म्मत्तिन् सूक्ष्मङ्ङळेच्चोदिच्चु यक्षन्तानुं । २५
चोद्यङ्ङळेल्लां परिहरिच्चु नृपतियु-
मास्थया तेळिञ्ञतु धर्म्मराजनुमेट्टं । २६
धर्म्मनिष्ठकळ्क्कु नी मुन्पनेन्नतुं नूनं
निर्म्मलनाय भवानिनियोण्टोन्नु वेण्टु । २७
नाल्वरिलोरुवने जीविप्पिच्चीटुवन् ञा-
नेवने वेण्टुवेन्नु चोल्लिक्कोळ्ळुकेवेण्टू । २८

वह गया और पानी पीते ही मर गया। तदनन्तर राजा स्वयं चले आये। सरोवर के तट पर भाइओं के शव देखकर घबड़ाये और समझा कि यह सब कर्म का ही फल है। वे भी पानी लेकर पीने ही वाले थे तभी "पानी मत पियो", ऐसी वाणी सुनाई दी। १५-२१ तब पानी फेंककर उस वाणी का कारण ढूँढने लगे और एक पक्षी दिखाई दिया। "तुम कौन हो? और पानी क्यों नहीं पीना चाहिये? ठीक उत्तर दो!" जब युधिष्ठिर ने ऐसा कहा (तब पक्षी बोला) "मैं एक यक्ष हूँ। आप ज्ञानी हैं इसलिए मेरे सभी प्रश्नों का उत्तर दीजिये"। युधिष्ठिर ने कहा—"अच्छा पूछो।" यक्ष ने धर्म की सूक्ष्म-सूक्ष्म बातें पूछीं। राजा ने सभी प्रश्नों का समाधान किया। उनकी आस्था देखकर यमराज प्रसन्न हुए और बोले "धर्मनिष्ठ लोगों में आप सब से आगे हैं। आप निर्मल धार्मिक एक बात बतलावें। आप के चार भाइयों में से एक को मैं जिला दूँगा किस को जिलावें? आप के कहने मात्र की देर है"। २२-२८ "अगर ऐसा है तो नकुल ही हमको

ऎङ्किलो नकुलने वेण्टुवॆन्तितु मन्नन्
शङ्ककूटाते चॊन्ननेरत्तु धर्म्मराजन् २९
ऎन्नयुं तॆळिञ्ञितु सूक्ष्मधर्म्मत्तॆप्पार्त्तु
प्रीत्या सत्वरं पिन्ने प्रत्यक्षवेषत्तोटे । ३०
तन्नुटे परमार्त्थमोक्कवेयऱियिच्चू
निन्नुटेयनुजन्मारेवरुं जीविक्कॆन्तान् । ३१
निन्नुटे मातावुतान् पॆट्टुळ्ळ सहजन्मार्
मन्नवा ! पराक्रमाद्यखिलगुणमुळ्ळोर् । ३२
शत्रुसंहारत्तिन्नु शक्तन्मारॆन्नयुम-
ल्लस्त्रज्ञन्मारिल्वच्चु मुख्यन्मारल्लोतानुं । ३३
कार्यसाद्ध्यवुमवरालत्रे निनक्कॆन्तुं
शौर्यवुमवरोळं मट़ाक्र्कुमिल्लयल्लो । ३४
वीर्यपूरुषन्मारां भीमपार्त्थन्मारेयुं
धैर्येण परित्यजिच्चॆन्तोन्तु निनच्चु नी ३५
माद्रेशन् जीविक्केण्टतॆन्तॆन्नोटपेक्षिप्पा-
नोर्त्ततिन्मूलं नेरे चॊल्लेणं नृपोत्तम ! । ३६
धर्म्मराजोक्ति केट्टु धर्म्मजन्मावु चॊन्नान्
धर्म्मसूक्ष्मत्ते विचारिच्चप्पोळतु तोन्ति । ३७
अम्ममारिरुवर्क्कुं पिण्डादिदानं चॆय्वान्
कर्म्मबन्धङ्ङळ् विचारिच्चप्पोळङ्ङने तोन्ति । ३८

चाहिये", राजा ने निःशङ्क कहा । धर्मराज (यमराज) उनका सूक्ष्मधर्म देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । तदनन्तर प्रेम से तुरन्त ही अपना निज स्वरूप दिखलाकर अपने संबन्ध में परमार्थ बतला दिया और कहा—"आपके सभी भाई जियें !" हे भूपाल ! आप ही की माता के पुत्र जो आपके भाई हैं वे पराक्रम आदि अखिल गुणवाले हैं, वे शत्रु का नाश करने में अत्यन्त शक्त हैं, वे अस्त्रशस्त्रज्ञों में मुख्य हैं, उन्हीं के द्वारा आपकी कार्यसिद्धि होती है, उनके समान शौर्य और किसी का नहीं है, वीरपुरुष भीमसेन और अर्जुन को धैर्य के साथ छोड़कर किस अभिप्राय से आपने मुझसे प्रार्थना की कि माद्रेश (नकुल) जिलाया जाय ? हे नृपोत्तम ! इसका कारण आप मुझे ठीक बतलाइये । २९-३६ धर्मराज की बात सुनकर धर्मपुत्र ने कहा—"सूक्ष्मधर्म पर विचार करने पर मुझे यही सूझा । दोनों माताओं का पिण्डदान करने के सम्बन्ध में जो क्रियायें हैं उन पर विचार

ञानुण्टु कुन्तीदेवी पेंट्टतिल् माद्रियुटे
सूनु मूत्तवनल्लो नकुलनतुमूलं ३९
माद्रिक्कु कर्म्मबन्धं नकुलनेरुमेन्न-
तोर्त्तु ञान् नकुलने प्रार्त्थिच्चु मट्टोन्नल्ल । ४०
धर्म्मराजावुतानुं धर्म्मनन्दननुटे
धर्म्मतत्परत्वं कण्टेट्टवु प्रसादिच्चु । ४१
विघ्नंकूटाते कळिक्कज्ञातवासमेन्नु-
मुळ्ळक्कान्पु तेळिञ्ञु नल्कीटिनाननुग्रहं । ४२
कालवुं पन्तीराण्टु तिकञ्ञु कळिञ्ञितु
कालमे चोल्वनिन्नुं नाळेयुं मटियाते-
न्नालस्यं कळञ्ञिरुन्नाळ् किळिप्पैतलूतानुं । ४३

॥ आरण्यं समाप्तं ॥

करने पर मुझे यही सूझा। कुन्तीदेवी के पुत्रों में मैं जीवित हूँ, माद्री का ज्येष्ठ पुत्र नकुल ही है, अतएव माद्री की क्रियाओं का बन्धन नकुल पर अधिक है, यह सोचकर मैंने नकुल के लिए आपसे प्रार्थना की, और कुछ नहीं। धर्मपुत्र की धर्मतत्परता देखकर धर्मराज अत्यन्त प्रसन्न हुए। और बोले—"आप का अज्ञातवास निर्विघ्न समाप्त हो!" इस प्रकार प्रीति से अनुग्रह किया। बारह वर्ष पूरे हो चुके थे। 'अब आज फिर कहूँगी और कल भी' ऐसा कहकर शुकी आलस्य बिलकुल छोड़कर तैयार रही। ३७-४३

॥ आरण्य पर्व समाप्त ॥

विराटं

नारायणतिरुनामामृतरस-
मोरातवरधमरिलधमर् । १
पोरा परञ्ञतु बाले ! विरवोट्टु
नेरे परक तच्चरितमिन्नुं । २

विराट पर्व

जो नारायण के पुण्यनामों के अमृतरस का पान नहीं करते वे अधमों में अधम हैं। हे बाले! तुमने अब काफ़ी सुनाया है। आज भी उनके चरित ठीक से सुनाओ। अच्युत के भक्तों में युधिष्ठिर सबसे आगे हैं।

तच्चरितङ्ङळ् परञ्ञालरुतियि-
ल्लच्युतभक्तरिल् मुन्पनां धर्म्मजन् । ३
जीविच्चेंळुन्नेट् सोदरन्मारोंटुं
भाविच्चितु पिन्नें वेणुन्न कारियं । ४
अज्ञातवासं कळिप्पानुपायवुं
जिज्ञासिच्चीटिनारैवरुमायप्पोळ् । ५
अज्ञानमेंल्लामकलेंक्कळञ्ञोंरु
विज्ञानिकळाय धर्म्मजन्मादिकळ् ६
आयुधमोंक्कॅशमीवृक्षत्तिन्मेल् व-
च्चायतनेत्रयां कृष्णयुं तङ्ङळुं ७
छन्नमायुळ्ळोंरु नामवेषत्तोंटुं
चेंन्नु विराटपुरियिलकंपुक्कार् । ८
कङ्कनेंन्नोंरु संन्यासियाय् वन्नितु
शङ्कूटातें युधिष्ठिरनां नृपन् । ९
पुक्कितु भीमन् वललनेंन्नुळ्ळ पेर्
कैक्कोंण्टु मन्नन्महानसंतन्निले । १०
वृत्रारिपुत्रन् बृहन्नळयायिट्टु
पृथ्वीशपुत्रिक्कु नृत्तगीतादिकळ् ११
शिक्षयोटें पठिप्पिच्चु तुटङ्ङिनान्
अक्षविलासङ्ङळ्पूण्ट तरुणियाय् । १२
अश्विनीपुत्ररिल् मुन्पन् नकुलनुं
अश्वङ्ङळ् मेप्पतिन्नायोंरुन्पेंट्टितु । १३

उनके चरित कहते कभी अरुचि नहीं होती। अपने जिलाये गये भाइयों के साथ वे आगे के कार्य सोचने लगे। अज्ञातवास कैसे चलाया जाय इस पर पाचों भाई सोचने लगे। १-५ अज्ञान को दूर किये हुए विज्ञानवाले युधिष्ठिर आदि भाई अपने सभी आयुधों को एक शमीवृक्ष पर जमाकर आयताक्षी द्रौपदी के साथ गुप्त नाम और वेष धारण करके विराटपुरी पहुँचे। राजा युधिष्ठिर बिना हिचक के कङ्क नामक संन्यासी बने। वलल नाम धारणकर भीमसेन ने रसोई में प्रवेश किया। इन्द्रपुत्र अर्जुन एक अक्षविलासयुक्त तरुणी बनकर बृहन्नला नाम धारण करके विराटराजा की पुत्री को नियमानुसार सिखाने लगे। ६-१२ अश्विनियों के पुत्रों में ज्येष्ठ नकुल ने घोड़ों को चराने का काम अपने ऊपर ले लिया। विश्व का

पश्वाळि मेय्पानाय् वन्नु सहदेवन्
विश्वैकविद्वान् विरोधिकळक्कन्तकन् । १४
याज्ञसेनिक्कु सैरन्ध्रियां पेरॆंटो
राज्ञियायुळ्ळ सुदेष्णतन् दासियाय् । १५
वृत्तियुं रक्षिच्चविटॆयिरिक्कुंनाळ्
अन्नयुं विक्रममुळ्ळ वृकोदरन् १६
शक्तनायुळ्ळॊरु मल्लनॆयुं कॊन्नान्
पत्तुमासं कळिञ्ञु पिन्नॆयक्कालं । १७

कीचकवधं

नल्ल सुदेष्णतन् भ्रातावु कीचकन्
मल्लाक्षियाकिय सैरन्ध्रियॆक्कण्टु १
मुल्लबाणङ्ङळेट्टललु पॊरुाञ्ञवन्
चॊल्लिनानॆन्नयुं नल्लमधुरमाय् । २
वल्लातिविटॆ मट्टॆल्लावरुमॊक्क
चॊल्लुन्न वेलकळॆल्लामॊरुक्कि नी ३
अल्ललिल् वाळुवानिल्लॊरु कारणं ।
मुल्लबाणन्तन्टॆ विल्लिनॊप्पोर्चॆय्तु ४
वॆल्लुन्न निन्नुटॆ चिल्लिक्कॊटियिण-
त्तॊल्लुकॊण्टॆन्नॆ नी तल्लुन्न तल्लुकळ् ५

एकमात्र विद्वान् और शत्रुओं के नाशक सहदेव गाय चराने के लिए तैयार हुए। द्रौपदी का नाम हुआ सैरन्ध्री और वह रानी सुदेष्णा की दासी हुई। जब इस प्रकार अपनी-अपनी वृत्ति की रक्षा करते हुए सभी पाण्डव वहाँ रहते थे तब अत्यन्त पराक्रमी वृकोदर (भीमसेन) ने एक शक्तिशाली मल्ल का वध किया। इस प्रकार दस महीने बीत गये। १३-१७

कीचकवध

साध्वी सुदेष्णा का भाई कीचक सुन्दरी सैरन्ध्री को देखकर पुष्पबाणों (कामदेव के बाणों) का शिकार बना और पीड़ा न सह सकने से बड़ी मीठी आवाज़ में बोला—"कोई कारण नहीं है कि तुम यहाँ औरों के बताये काम करती हुई दुःख में पड़ी रहो। पुष्पबाण (कामदेव) के धनुष के समान अपनी भौंहों की जोड़ी से जो तुम मुझ पर प्रहार कर रही हो वे

कॊल्लुवान्तन्नॆयॆन्तल्लयल्लीयॆटो ।
चॊल्लुवन् ञानिनि नल्लतु नी मम ६
वल्लभयाकणमिल्लॊरु संशयं ।
कल्यत कोलुन्न कल्याणशीलवुं ७
पल्लवंपोलॆ पतुत्तॊरु मेनियुं
मल्लमिळियिणत्तल्लिन् विलासवुं
मल्लीशरक्षमापालाधिवासवुं । ८
चन्द्रिकपोलॆ लसन्मृदुहासवुं
चन्द्रबिंबाभिरामाननांभोजवुं ९
पङ्कजकोरकं पन्परं पन्तुचॆ-।
ङ्कुङ्कुमालंकृतं कुंभिकुंभद्वयं १०
शुंभल्स्सुवर्णोरुकुंभमॆन्निन्तरं
कुन्पिटुं कॊङ्कयुं रोमाळिभंगियुं ११
कॊण्टाटि मारन् कुणुङ्ङुं नटकळुं
कण्टाल् तरिपॆटुन्नॊरु तुटकळुं १२
कण्टुकण्टॆन्नाळुण्टु ञानिङ्ङनॆ
वण्टार्तळक्कुळलाळे ! पॊरुक्कुन्नु । १३
इन्निमेलिल् पॊरुक्केणमॆन्नाकिलो
निन्नाणॆ ञान् मरिच्चीटुं पॊळियल्ल । १४
नल्कुक चोरिवा पुल्कुक पोर्मुल
नल्कुवन् ञान् तव वेणुन्नतॆल्लामे । १५

अवश्य मुझे मार डालेंगे। मैं एक अच्छी बात बतलाऊँ। तुम निःसन्देह मेरी प्रियतमा बन जाओ। तुम्हारा यह शोभन और कल्याण शील, १-७ पल्लवों के समान कोमल शरीर, तुम्हारी आँखों के ये विलास जो कि कामदेव के निवासस्थान हैं, चाँदनी के समान चमकनेवाला मृदु हास, चन्द्रबिंब के तुल्य दर्शनीय मुखकमल, कमल की कलियों, गेंदों, कुङ्कुम-विभूषित हाथी के कुंभ (मस्तक) और चमकनेवाले सोने के कुंभ (घड़े) के समान स्तनद्वय, सुन्दर रोमावली, कामदेव को जगानेवाली तुम्हारी यह चाल, देखने में क्षोभ पैदा करनेवाली ऊरु (जाँघें), यह सब कितने दिनों से देख कर मैं धीरज धारण कर रहा हूँ। ८-१३ अगर मुझे धीरज धारण करना होगा तो मैं मर जाऊँगा, झूठ नहीं बोल रहा हूँ। तुम मुझे अपने अधर-रस का पान करने दो और अपने स्तनों से आलिंगन करो और तुम्हें जो

इत्थं पलवकयुं पऱञ्ञिट्टवळ्
चित्तमिळकाञ्ञु दु:खिच्चु कीचकन् । १६
तन्नुळ्ळिलुळ्ळलुळ्ळवण्णंतन्नॆ
चॊन्नानुटप्पिऱन्नुळ्ळवळ्तन्नॊटुं । १७
कामं मुळुत्तु तन्नत्तान् मऱन्नुळ्ळ
कामुकन्मार्तॊळ्ळिलॆङ्ङनॆयॆन्निल्ल । १८
इन्ननेरत्तॆन्नुमिन्नवरोटॆन्नु-
मिन्नवण्णं वेणमॆन्नुमिल्लेतुमे । १९
निन्नुटॆ दासियायुळ्ळोरिवळ्तन्नॆ-
यॆन्नोटुकूटिययय्क्क भगिनि ! नी । २०
भ्रातावुतन्नुटॆ सङ्कटं कण्टवळ्
चेतोहरांगियां कृष्णयोटोतिनाळ् । २१
खेदं वरिकयिल्लेतुं निनक्कॊटो
कादम्बरियुं कऱिकळुं वैकातॆ २२
कीचकन्तन्नोटु वाङ्ङि नी कॊण्टुवा-
मेचककान्ति कलर्न्न मनोहरे ! २३
मौनानुवादमोटङ्ङनॆ पोयवळ्
ताने वरुन्नतु कण्टिट्टु कीचकन् २४
नेत्रसुखत्तोटट्टुत्तितु मैरेय-
पात्रवुमिट्टुं कळञ्ञवळोटिनाळ् । २५

कुछ चाहिये मैं दे दूंगा। इस प्रकार बहुत कहने पर भी जब सैरन्ध्री का चित्त न विचलित हुआ तब कीचक को दु:ख हुआ। उसने जाकर अपने मन का सारा दु:ख अपनी बहिन से कह दिया। काम बढ़ने से जब अपने को भूल जाते हैं तब कामुकलोग क्या-क्या नहीं करते। किससे कब और किस प्रकार कहना चाहिये उनको इसका विवेक बिलकुल नहीं रहता। "बहिन जी ! यह जो तुम्हारी दासी है उसे मेरे साथ भेज दो !" (कीचक ने ऐसा कहा) १४-२० अपने भाई का दु:ख देखकर उस सुदेष्णा ने सुन्दरी कृष्णा (द्रौपदी) से कहा—"हे कृष्णकान्ति मिली हुई सुन्दरी ! तुम्हारी कोई हानि नहीं होगी। जल्दी जाकर मद्य और तरकारियाँ कीचक से माँग लाओ"। वह मौन से हाँ कह कर चली गयी। उसे अकेली आती हुई देखकर कीचक नेत्रानन्द से उसके पास आया। तब वह मद्यपात्र को फेंककर भागी। घबड़ाकर वह पीछे-पीछे

आटलोटेयवन् कूटॆयङ्ङोटिनान्
पेटियोटे सभयिङ्कल् वीणीटिनाळ् । २६
अल्लित्तार्कून्तल् चुट्टिप्पिटिच्चानव-
नॊल्लायितॆन्नु सभयिलिरुन्नोरुं । २७
रक्षिप्पतिन्नु दिनेशनयच्चॊरु
रक्षोवरनु परोक्षमतिद्रुतं । २८
इक्षुकोदण्डशरक्षतचित्तना-
यक्षमनाकिय कीचकनीचनॆ २९
प्रक्षेपणं चॆय्तानक्षणं भूमियिल्
सक्षतनाय् वीणुरुण्टानतुनेरं । ३०
वल्लातॆ निन्नु जळनायिळिच्चवन्
मॆल्लवे पोयॊरु कोणिलकंपुक्कान् । ३१
अन्नु रावंबुजलोचन मारुति-
तन्नुटॆ मार्वत्तु वीणु केणीटिनाळ् । ३२
कण्णुनीरुं तुटच्चुण्णी ! पॊरुक्कॊरु-
वण्णमॊरुमासमिन्नुमॆन्नानवन् । ३३
मासमो पिन्नयल्लोयिनिक्किङ्ङॊरु-
वासरमल्लॊरु नाळिकयुं पॊरा । ३४
कीचकनॆक्कॊन्नु सङ्कटं तीर्क्क नी
नीचनॆक्कॊण्टु पॊरुतियिल्लेतुमे । ३५

दौड़ा । डर के साथ वह द्रौपदी सभा में गिर पड़ी । तब उसने कमल-विभूषित केश पकड़ लिये । तब सभा में बैठे लोगों ने कहा—'यह बुरी बात है' ! २१-२७ उसकी रक्षा के लिए सूर्य ने परोक्ष में एक राक्षस को भेजा, जिसने उस पर शरवर्षा की और उससे पीड़ित और अक्षम नीच कीचक को फेंक कर भूमि पर गिरा दिया और कीचक घायल होकर पृथ्वी पर लोटने लगा । फिर खड़े होकर निर्जीव जैसा धीरे-धीरे चला गया और कहीं कोने में छिप गया । उस दिन रात को कमललोचना द्रौपदी भीमसेन की छाती पर सिर रखकर रोई । उसके आँसू पोंछकर भीम ने कहा—बाले ! किसी तरह एक मास धीरज धरो । "एक महीना ! एक दिन क्या मैं अब एक घंटा भी सबर नहीं कर सकती हूँ । २८-३४ कीचक का वध करके मेरा दुःख दूर करो, उस नीच के कारण मुझे चैन नहीं है ।" द्रौपदी की यह बात सुनकर भीमसेन बोले अच्छा, उसे मारकर

ऎन्ऩवळ् चॊन्नतु केट्टॊरु मारुति
कॊन्ऩवन्तन्ने ञान् निन्निटर् पोक्कुवन् । ३६
कूत्तरङ्ङत्तु कुऱिक्क नी मन्मथन्-
कूत्तिनु पातिरानेरमॆन्ऩानवन् । ३७
मारमाल्पूण्टॊरु कीचकन्तन्नोटु
मारुतिचॊन्नपोलेयवळ् चॊल्लिनाळ् । ३८
नारिमार् ञङ्ङळ् स्वधर्म्ममऱिकॆटो
मारवशगमाराकयालन्वहं । ३९
नानाजनङ्ङळुमॊन्ऩिच्चपेक्षिच्चा-
लूनमिल्लातवण्णमिणङ्ङीटणं । ४०
उण्टॆङ्किल् पञ्चमे गान्धर्व्वन्मार्पीड-
योरोदिनं प्रति काणामॆन्ऩुंवरुं । ४१
ऒट्टुनाळेय्क्कु कण्टीलॆन्ऩतुंवरुं
पट्टाङ्ङु ञान् पऱञ्ञीलयॆन्ऩिल्लॆटो । ४२
पय्यवे कूत्तरङ्ङत्तॆन्ऩु तङ्ङळिल्
कैयुं पिटिच्चु तॆळिञ्ञु मनस्सॊत्तु ४३
सैरन्ध्रि चॊन्नतु केट्टु तॆळिञ्ञुळ्ळल्
स्वैरं तनिक्कु वरुमॆन्ऩु कल्पिच्चु । ४४
क्षौरं कऴिच्चु तैलाभ्यङ्गवुं चेय्तु
मैरेयमायुळ्ळ मद्यवुं सेविच्चु ४५

मैं तुम्हारा दुःख समाप्त करूँगा ।" नाट्यमण्डप में आधी रात के समय कामलीला के लिए उससे संकेत करो । कामदेव से पीड़ित कीचक से उसने वैसा ही तय किया जैसा भीम ने बतलाया था । "हम महिलाओं का धर्म समझलो जो प्रतिदिन काम के वश में रहती हैं । जब बहुत लोग साथ प्रार्थना करते हैं तब ऐसा स्वीकार करना चाहिये कि उसमें कोई दोष न हो । अगर कोई दोष रह जायगा तो पांचवें दिन गान्धर्वपीड़ा (एक प्रकार का उन्माद) दिखाई देगी । ३५-४१ कुछ दिन के लिए वह न भी दिखाई देगा । यह नहीं कि मैंने परमार्थ नहीं बतला दिया । 'धीरे-धीरे नाट्यमण्डप चले आना' इस प्रकार कीचक का हाथ पकड़कर प्रसन्न होकर और एकमन होकर जब सैरन्ध्री ने कहा तब कीचक ने मान लिया कि अब सुख होने वाला है । इस लिए और कर्म करके, तेल लगाकर, मैरेय मद्य का सेवन करके, दाँत मांजकर, पान खाकर, अच्छी-अच्छी

पल्लुतेच्चामोदं वेंट्टिलयुं तिन्नु
नल्ल माल्यङ्ङळ् कुसुमङ्ङळुं चूटि ४६
दिव्यांबराभरणालेपनादिकळ्
सर्व्वांगमेल्लामलङ्करिच्चानवन् । ४७
उत्तरमायुळ्ळ पाञ्चालि चोल्लिय
मेत्तमेल् चेन्नु किटन्नितु भीमनुं । ४८
चित्तकौतूहलं कैक्कोण्टु कीचकन्
मत्तनाय् कूत्तरङ्ङत्तु पुक्कीटिनान् । ४९
चित्तजन्मावुतन्नस्त्रङ्ङळेल्क्कयाल्
पुत्तन्कुळुर्मुलत्तोत्तु पुल्कीटिनान् । ५०
तङ्ङळिल् तिङ्ङिविङ्ङिक्कनंपोङ्ङि नि-
न्नङ्ङने कण्टु कुळुर्मुलक्कोरकं । ५१
विस्तारमाण्टु निरक्केप्परुपरे-
क्कुत्तुन्न रोमङ्ङळुळ्क्कोण्टु काणायि । ५२
रोमलतामुरटायतेविटमा-
रोमलायुळ्ळ दासियल्लोयिवळ् । ५३
ऎङ्किलतुमोरु कौतुकमेन्नोर्त्तु
पङ्कजबाणमाल्कोण्टु पोऱाञ्ञवन् ५४
नन्नाय् मुरुकमुरुकत्तळुकिनान्
मुन् नटन्नीटिनान् भीमनुमेन्नयुं । ५५
ऎन्ति मुरुकमुरुकप्पुणर्न्नव-
नस्थि नुरुक्कि ञेरिच्चितु पिन्नेयुं । ५६

मालाएँ और फूल पहन कर, दिव्य वस्त्र और आभूषण धारण कर के और चन्दन आदि का आलेपन कर कीचक ने अपने सारे शरीर को अलंकृत किया। उधर भीमसेन पाञ्चाली (द्रौपदी) के बताए हुए उत्तम गद्दे पर लेट गया। कौतूहल से भरा हुआ कीचक मत्त सा होकर नाट्यमण्डप में पहुँचा। ४२-४९ कामदेव के शरों के लगने से उसने नये-नये स्तनाग्रों का आलिंगन किया। उसने आपस में स्पर्श करते हुए, फूले हुए और ऊंचे स्तनों को देखा। फिर बहुत फैले हुए नुकीले रोम भी भीतर दिखाई दिये। यह क्या है जो रोमलता से कठिन मालूम होता है? यह क्या वह दासी नहीं है जिसकी कोमल रोमलता थी? परन्तु उसे भी एक कौतुक समझकर और कामदेव की पीड़ा को न सह सकने से उसने गाढ़

चित्तभ्रमत्तोटु पत्तुनूऱायिरं
कुत्तिनान् मुष्टि चुरुट्टित्तोरुतोरे । ५७
प्रेममिल्लेन्नु वरुमेन्नु शङ्किच्चु
भीमन् नखङ्ङळुमेलिपच्चितादराल् । ५८
अय्यो ! मतिमतियय्यो ! मति पोरुं
मय्यल्मिळियाळे ! कय्ययच्चीटेटो ! ५९
नीयल्लयोयितु नीयल्लयो बाले !
पोय्ये पऱञ्ञु चतिक्कयो चेय्ततु ? ६०
मेय्येन्नु कलिपच्चु वन्नु पुणर्न्नु ञान्
मेय्यल्ल नल्ल करिङ्कल्लु निर्णयं । ६१
पत्तुंनूऱित्थं करञ्ञु करञ्ञवन्
चत्तान् मिळिकळ् तुऱिच्चु पोटुक्कने । ६२
वातात्मजनाय भीमनुं पोयित-
ङ्ङेतुमऱिञ्ञील तानेन्नु भाविच्चु । ६३
चत्तोरु कीचकन्तन्नुटे तन्पिमार्
पत्तिल् पेरुक्किय पत्तुमोरञ्चुमु- । ६४
ण्टत्तल् पूण्टेत्तिप्पिटिच्चवर् कृष्णये
चत्त शवत्तोटु वच्चुकेट्टीटिनार् । ६५
कूटेयिवळेयुं चुट्टुकळवानाय्
कूटलर्कालनां भीमनतुकण्टान् । ६६

आलिंगन किया। भीमसेन भी आगे बढ़ा। उसने ऐसा दृढ़ लिपट लिया कि हड्डियाँ दब गयीं और टूट गयीं। ५०-५६ बड़े चित्तभ्रम के साथ हजारों बार लगातार घूँसा मारा। भीम ने अपने नखों को भी खूब लगाया ताकि यह न समझा जाय कि प्रेम की कमी है। हा! बस! बस! हा! समाप्त करो बहुत हो गया है! हे! काजल के लोचनवाली! अपने हाथों को ढीला करो! क्या यह तुम नहीं हो? बाले! यह तुम नहीं हो? क्या झूठ बोलकर मुझे धोखा दिया है? सच समझकर मैंने आकर आलिंगन किया। सच नहीं था, यह तो निःसन्देह पक्का पत्थर है। इस प्रकार सैकड़ों बार चिल्लाकर वह मरा और उसकी आँखें फोड़कर निकल आयीं। वायुपुत्र भीम वहाँ से चले गये मानो उनको कुछ भी नहीं मालूम है। ५७-६३ मरे कीचक के एक सौ पाँच छोटे भाई दौड़कर आये और दुःखित होकर उन्होंने द्रौपदी को पकड़कर शव के साथ बांध दिया ताकि वह भी साथ ही जलायी जाय। शत्रुओं के नाशक भीम ने यह

गन्धर्व्वन्मार् बलाल् कॊन्नतिन्नेन्तॊरु
बन्धमिवळॆयुपद्रविप्पान् निङ्ङळ् ? ६७
वृद्धबालांगना गो द्विजाद्यङ्ङळॆ-
ब्बद्धरोषाल् विरोधिक्कुन्न दुष्टरॆ ६८
मृत्युपुरत्तिन्नयय्क्कणं वैकातॆ
पृथ्वीपतिकळॆन्नल्लो विधिमतं । ६९
आश्रयमिल्लात नारियॆक्कॊण्टुपो-
याश्रयाशङ्कलाक्कुन्नतु योग्यमो ? ७०
आश्रितरक्षणं धर्म्मं नृपतिकळ्-
क्काश्रितयल्लो विशेषिच्चिवळ्तानुं । ७१
आयुधपाणियल्लॆन्नाङ्ङरिक्किलुं
न्यायमल्लात कर्म्मङ्ङळ् काट्टुं विधौ ७२
नोक्कियिरिक्कामो राजभटन्मार्क्कु
योग्यमल्लेतुमतॆन्नु पऱञ्ञुटन् ७३
काट्ञ्चुंवेगमोटे वन्नु कोपिच्चु
नूट्ञ्चिनेयुमॊट्टुक्किनान् वैकातॆ । ७४
कूट्न् चुरमान्ति निल्क्कुन्नतु पोलॆ-
येट्टं चिनत्तोटु निन्नितु पिन्नॆयुं । ७५
भीमनॆक्कण्टु पेटिच्चु जनङ्ङळुं
कामनॆत्तन्नॆयुं पेटियुण्टाय्वन्नु । ७६

देखा और पूँछा—"गन्धर्वों ने अपने बल से इसे मारा है। आप लोग इस स्त्री को क्यों परेशान करते हैं ? जो वृद्धों, बालकों, महिलाओं, और गो-ब्राह्मणों को क्रोध के आवेश में आकर सताते हैं, उनको बिना विलम्ब के यमपुरी भेजना राजाओं का काम है, यही शास्त्रों का मत है। एक निराश्रय स्त्री को पकड़कर आश्रयाश (अग्नि) में डाल देना, यह क्या न्याय है ? आश्रितों की रक्षा करना राजाओं का धर्म है और यह विशेष रूप से राजा की आश्रित है। ६४-७१ यद्यपि मेरे पास कोई हथियार नहीं है फिर भी जब अत्याचार किया जाता है तब राजपुरुष उसे कैसे देखते रहें ? यह ठीक नहीं होगा"। ऐसा कहते हुए भीम ने क्रुद्ध होकर पाँचों प्राणों के वेग से आकर एक सौ पाँचों को जल्दी समाप्त कर दिया। जैसे साँड़ भूमि को रगड़ता हुआ खड़ा हो जाता है वैसे ही वह क्रोध के मारे फिर खड़े हो गये। भीम को देखकर लोग डर गये, उनको कामदेव

श्यामळयाकिय सैरन्ध्रितन्नेयुं
कोमळयाकिलु मन्नुतोट्टारुमे ७७
नाट्टार् मुखत्तु नोक्कातेचमञ्ञितु
कूट्टमे कोल्लिक्कुमेन्नु भयत्तिनाल् । ७८

गोग्रहणं

वाट्टमकन्न सुयोधननक्कालं
कूट्टवुंकूटित्तुटङ्ङि निरूपणं । १
नाट्टिलेङ्ङानुमिप्पाण्डवरुण्टेङ्कि-
लोट्टाळारोक्क नटन्नु तिरयणं । २
धार्ष्टचमेरीटुन्न धर्म्मजन्मादिये-
क्काट्टिलाक्कामेन्नुं कण्टुकिट्टीटुकिल् । ३
राज्यङ्ङळ् तोरुमतुकेट्टु दूतन्मार्
पाच्चिलतुटङ्ङिनार् कण्टुकोण्टीटुवान् । ४
ऒङ्ङुमे काणाञ्ञु चेन्नवर् चोल्लिनार्
ञङ्ङळो कण्टीलयेङ्ङुमे मन्नवा ! ५
धार्त्तराष्ट्रन् परञ्ञानवरोटप्पोळ्
पार्थन्मारुळ्ळेटं ञान् परयामेङ्किल् । ६
भोषन्मारे ! निङ्ङळ् मत्स्यराज्यत्तिङ्कल्
घोषमुण्टायवयोन्नुमे केट्टीले ? ७

से भी डर होने लगा। साँवली सैरन्ध्री (द्रौपदी) को (यद्यपि वह सुन्दरी थी) उस दिन से लोगों ने देखना तक बन्द कर दिया, इस डर से कि कहीं गन्धर्व लोग सबको समाप्त न कर दें। ७२-७८

गोग्रहण

उन दिनों हृष्ट-पुष्ट सुयोधन ने अपने मित्रों को इकट्ठा करके परामर्श किया— "इस देश में पाण्डव कहाँ हैं? हम चाहते हैं कि कुछ लोग निकलकर घूमें और उनको ढूँढें। अगर कहीं ढूँढे मिल जायँ तो इस अधिक धार्ष्टचवाले (धृष्ट) युधिष्ठिर आदि को सदा के लिए वन में कर दें।" यह आज्ञा सुनकर कुछ दूत निकलकर देश-देश में उनको देखने के लिए दौड़ने लगे। कहीं न मिलने से वे बोले, "हे राजन्! वे हमलोगों को कहीं भी न मिले।" तब सुयोधन ने उनसे कहा— अच्छा तो मैं बतलाऊँगा पाण्डव कहाँ हैं। १-६ हे मूर्ख! तुम लोगों ने मत्स्यराज्य में जो गड़बड़

केट्टिट्टु ञङ्ङळ् तिरञ्ञितु गन्धर्व्व-
श्रेष्ठन्मारत्रेयतायतु मन्नव ! ८
अप्पोळुरचेय्तु भीष्मरुमीवण्ण-
मुळ्ळ्पूविलोन्नुण्टिनिक्किन्नु तोन्नुन्नु । ९
चत्ततु कीचकनेङ्किलो मारुत-
पुत्रनत्रे कोलचेय्ततु निर्ण्णयं । १०
युक्तियुं चेरुमितिन्नु निरूपिक्कि-
लुत्तमयायुळ्ळ पाञ्चालिकारणं । ११
इत्थं धृतराष्ट्रपुत्रनोटुं गंगा-
दत्तन् परञ्ञतु केट्टवनुं चोन्नान् । १२
ऎङ्किलो मत्स्यराजाविन् पशुक्कळे
शङ्ककूटाताट्टिक्कोण्टु नां पोरणं । १३
कण्टङ्ङटङ्ङयिरिक्कयिल्लट्टिक्कि-
लुण्टेङ्किलर्ज्जुननादिकळेन्नुमे । १४
मुन्पिले पोक पटयुं त्रिगर्त्तनुं
पन्पोटु ञङ्ङळ् वळियॆ वरुंतानुं । १५
इङ्ङने कल्पिच्चनेरं त्रिगर्त्तनुं
मङ्ङात वन्पटयुं कूट्टियप्पोळे १६
चेन्नु विराटपुरिपुक्कु गोक्कळे-
योन्नोळियाते तेळिच्चवर् पोकुन्पोळ् १७

हुआ था उसके सम्बन्ध में कुछ भी नहीं सुना है ? । "हे राजन् ! सुना तो ज़रूर है और सुनकर ढूँढा भी । मालूम हुआ कि कुछ गन्धर्ववरों ने ही वह सब किया था ।" उस समय भीष्मजी ने निवेदन किया— "मुझे एक बात सूझ रही है । अगर कीचक ही मारा गया है तो उसे निस्सन्देह वायुपुत्र (भीमसेन) ने ही मारा है । सोचो तो इसके लिए युक्ति भी है । उत्तम पाञ्चाली ही के कारण यह हुआ होगा ।" गंगादत्त (भीष्म) की यह बात सुनकर धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) ने कहा— "अगर ऐसा हो तो हमलोगों को चाहिये कि हम मत्स्यराजा की गायों को निश्शङ्क भगा लावें । ७-१३ अगर अर्जुन आदि वहाँ पर हैं तो वे यह देखकर चुप कभी न बैठे रहेंगे । त्रिगर्त सेना लेकर आगे चलें ।" यह सुनकर त्रिगर्त ने एक शक्तिशाली सेना लेकर विराटपुरी में प्रवेश किया और एक को भी न छोड़कर सभी गायों को भगा ले जाने लगा । तब मत्स्यराजा

सन्नाहमुळ्क्कॊण्टु पिन्नालॆ मत्स्यनुं
चॆन्नु कलहंतुटङ्ङिय नेरत्तु १८
मन्ननॆयॆत्तिप्पिटिच्चु कॆट्टीटिना-
नुन्नतनाकुं त्रिगर्त्तन् महारथन् । १९
पल्लुं कटिच्चु निन्नीटिनान् भीमनुं
चॆल्लुकॆन्नन्पोटु चॊल्लि युधिष्ठिरन् । २०
कण्टिरुन्नीटुकयिल्लॆन्नु कलिपच्चु
मण्टियणञ्ञु वृकोदरनन्नेरं २१
शक्तिमानाकुं त्रिगर्त्तनेयुं वॆन्नु
वृद्धनां मत्स्यनॆ वीण्टुकॊण्टीटिनान् । २२
अप्पोळणञ्ञु कुरुप्रवरन्मारुं
कॊल्पोटु गोक्कळॆक्कॊण्टुपोयीटिनार् । २३
पट्लराय सुयोधननादिकळ्
मट्टॆप्पुरमेयट्टुत्तु पशुक्कळॆ २४
तॆट्टॆन्नु कॊण्टुपोकुन्नोरु नेरत्तु
चॆट्टु पॊरुतु तोट्टार् पशुपालरुं । २५
युद्धकोलाहलमुण्टाय् चमञ्ञतुं
शत्रुक्कळ् गोक्कळॆक्कॊण्टङ्ङु पोयतुं २६
मत्स्यमहीपतिपुत्रनाय् मेविनो-
रुत्तरनोटु गोपालकन् चॊल्लिनान् । २७
क्रुद्धनायुत्तरन्तानुमुरचॆय्ता-
नॆत्तियॆतिर्त्तु ञान् वीण्टुकॊण्टीटुवन् । २८

तैयार होकर उनके पीछे गये और उनसे युद्ध करने लगे। उसमें प्रमुख महारथ त्रिगर्त ने राजा को किसी तरह पकड़कर बाँध लिया। भीम तो बहुत क्रुध हुआ और युधिष्ठिर ने प्रेम से कहा— "मदद के लिए चले जाओ।" १४-२० "इसे देखकर चुप बैठे न रहूँगा", ऐसा निर्णय करके उस समय वृकोदर चले। शक्तिमान् त्रिगर्त का वध करके वृद्ध मत्स्यों के राजा को छुड़ा लाये। इतने में कुरुप्रवर पहुँचे और गायों को भगा ले गये। जब सुयोधन आदि शत्रु दूसरी ओर से आकर गायों को ले जा रहे थे तब गोपालक उनसे कुछ लड़े, पर हार गये। युद्ध का छिड़ जाना, शत्रुओं के द्वारा गायों का भगा ले जाना, यह सब समाचार गोपालक ने मत्स्यों के राजा के पुत्र उत्तर को बतला दिया। २१-२७

वृत्रारिपुत्रनामर्ज्जुनन्तान्तन्ने
युद्धत्तिनाय्वरुन्नाकिलवनेयुं २९
वेल्लुन्नतुण्टतिनिल्लोरु किल्लति-
न्निल्लोरु सूतनतन्ने कुरविप्पोळ् । ३०
मत्तनायुत्तरनित्तरं चोन्नतु
मत्तेभगामिनि पाञ्चालि केट्टिट्टु ३१
चित्तत्तिलीर्ष्य पोळिञ्ञवळ् चोल्लिनाळ्
भर्त्तावायुळ्ळ बृहन्नळयोटेल्लां । ३२
पार्थनतुकेट्टु पाञ्चालितन्नोटु
वास्तवमायुळ्ळ वार्त्तयुरचेय्तान् । ३३
तेर् तेळिच्चीटुवानाळु ञानुण्टोरु
सूतनिल्लाञ्ञुळ्ळलाय्केन्तु चोल्लु नी । ३४
अप्रकारं परञ्ञीटिनाळ् कृष्ण-
युमप्पोळुत्तरन्तानुमुरचेय्तान् । ३५
आरतु चेन्नु परञ्ञु केळ्प्पिप्पतु
पाराते गोक्कळे वीण्टुकोण्टीटुवान् । ३६
उत्तर चोन्नतु केळ्क्कुमतिनुट-
नुत्तरयोटु चोल्केन्नितु कृष्णयुं । ३७
उत्तरनुत्तरयोटु परञ्ञप्पो-
ळ्ळुत्तरचोल्केट्टु वृत्रारिपुत्रनुं ३८

क्रुध होकर उत्तर ने कहा— "मैं जाकर उनसे लड़ूँगा और गायों को वापस लाऊँगा। अगर इन्द्रपुत्र अर्जुन ही लड़ने आजाय तो उसका भी वध करूँगा, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु सूत (सारथी) कोई नहीं है। यही एक कमी है।" मत्त उत्तर की इस प्रकार की बातें सुन्दरी पाञ्चाली ने सुनी और उसने अपने मन में ईर्ष्या का अनुभव किया और जाकर अपने पति बृहन्नळा (अर्जुन)से सब कह दिया। २८-३२ यह सुनकर अर्जुन नेपाञ्चाली से परमार्थ की बात कह दी। "रथ चलानेवाला मैं हूँ। जाकर कह दो कि सारथि न होने से परेशान न हों।" कृष्णा (पाञ्चाली) ने वैसा ही जाकर कह दिया। तब उत्तर ने कहा— "कौन जाकर (बृहन्नळा को) समझायेगा कि जल्दी जाकर गायों को वापस लाना है ?।" तब कृष्णा ने कहा— "उत्तरा की बात सुनेगा। इसलिए उत्तरा से कह दीजिये।" जब उत्तर ने उत्तरा (उत्तर की बहिन) से कहा, तब

पारं मॆलिञ्ञ कुतिरकळॆप्पूट्टि-
त्तेरुं चमच्चितु पोरिनु वैकातॆ । ३९
सत्वरमुत्तरन् तेरिल् करेऱिनान्
वृत्रारिपुत्रनुं तेर् तॆळिच्चीटिनान् । ४०
युद्धत्तिनुत्तरन् सत्वरं पोकुन्पोळ्
मुग्धाक्षिमारुमवनोटु चॊल्लिनार् । ४१
शत्रुभूपालरॆक्कॊन्निङ्ङु पोरुन्पोळ्
वस्त्रङ्ङळ् नल्लव ञङ्ङळ्क्कु नल्कणं । ४२
अङ्ङनॆतन्नॆयॊरन्तमिल्लॆन्त्र-
तंगनमारोटु चॊल्लियुळ्ळ्टोटॆ ४३
पुक्कितु चॆन्नु कुरुक्षेत्रमन्नेर-
मुळ्क्कान्पिलुण्टाय पेटियोटुत्तरन् ४४
वन्नवळियॆ नटक्क रिपुक्कळॆ
वॆन्नुकूटा नमुक्कॆन्नुमे निर्ण्णयं । ४५
द्रोणरुं भीष्मरुं धार्त्तराष्ट्रन्मारुं
द्रोणियुं कर्ण्णनुमायोधनत्तिङ्कल् । ४६
प्राणभयमिल्लयातवरोटिन्नु
ञानॊरु बालकनॆल्क्कुन्नतॆङ्ङनॆ ? ४७
ऎन्नतु केट्टॊरु पार्त्थनुमन्नेरं
पिन्नॆयुं तेरतु मुन्नोक्कमोटिच्चान् । ४८

उत्तरा की बात सुनकर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) ने दुबले-दुबले घोड़ों को जोतकर युद्ध के लिए जल्दी रथ तैयार किया। ३३-३९ तुरन्त ही उत्तरा रथ पर चढ़ा और अर्जुन भी रथ चलाने लगे। जब उत्तर युद्ध के लिए जा रहा था, तब महिलाओं ने उससे कहा— "शत्रु भूपालों का वध करके जब लौटोगे तब हम लोगों को अच्छे-अच्छे कपड़े भेंट करना।" "ज़रूर, ऐसा ही होगा, जितना चाहो ले लेना" महिलाओं को ऐसा जवाब देकर जल्दी उत्तर ने कुरुक्षेत्र में प्रवेश किया। उस समय उत्तर के मन में डर पैदा होने के कारण (उसने कहा) जिस रास्ते से आये उसी रास्ते वापस चलो। मैं कभी शत्रुओं को नहीं मार सकता हूँ, इसमें कोई सन्देह नहीं। द्रोण, भीष्म, धृतराष्ट्र के पुत्र, अश्वत्थामा, कर्ण आदि प्राणभय से मुक्त वीरों का युद्ध में मैं बालक कैसे सामना कर सकता हूँ? । ४०-४७ यह सुनने के बाद भी पार्थ (अर्जुन) ने रथ को आगे

ओटिक्क पिन्नोक्कमेन्नुटनुत्तर-
नोटिच्चु मुन्नोक्कमर्ज्जुनन् पिन्नेयुं । ४९
पेटिच्चतीव विऱच्चानतुकण्टु
पेटिक्कोलायेन्नु चोल्लि किरीटियुं । ५०
ओटिच्च तेरिल्निन्नुत्तरनन्नेरं
चाटिक्कळञ्ञु निलत्तु वीणीटिनान् । ५१
कूटक्कुतंकोण्टु चाटिप्पिटिच्चवन्
तेट्टन्न पेटिकण्टर्ज्जुननन्नेरं ५२
पेट्टेन्नु कालुं करङ्ङळुमोन्निच्चु
केट्टियिट्टीटिनान् तेरिल् महारथन् । ५३
वित्रस्तनाकियोरुत्तरनन्नेरं
वृत्रारिपुत्रनोटित्तरं चोल्लिनान् । ५४
नाटुं नगरवुमोक्कत्तरुवन् ञा-
नोटुन्न तेर् तिरिच्चोटिक्क पिन्नोक्कं । ५५
नीयेन्तिवण्णं तुटङ्ङुन्नतेन्नोटु
अय्योयेनिक्केन्टेयम्मयेक्काणणं । ५६
अन्नतु केट्टु चिरिच्चु किरीटियुं
चेन्नु शमीवृक्षं वन्दिच्चु वेगत्तिल् ५७
एऱियेट्टुत्तितु चापशरादिकळ्
कूऱिनानुत्तरन्तानतु कण्टप्पोळ् । ५८

बढ़ाया । उत्तर ने तुरन्त कहा 'पीछे की ओर चलाओ', परन्तु अर्जुन ने आगे ही बढ़ाया । यह देखकर उत्तर डर के कारण काँपने लगा । किरीटी (अर्जुन) ने कहा— 'मत डरो' । तब दौड़ते हुए रथ पर से उत्तर कूदा और ज़मीन पर गिर पड़ा । उस भयभीत को देखकर महारथ अर्जुन ने आधा (क्षणभर) कूदकर उसे पकड़ लिया और हाथ पैर बाँधकर उसको रथ चढ़ा लिया । तब वित्रस्त उत्तर ने वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) से इस प्रकार निवेदन किया । "मैं तुम्हें देश और नगर दूँगा, इस दौड़ते रथ को घुमाकर पीछे की ओर चलाओ" । ४८-५५ (अर्जुन ने कहा) 'तुम क्यों मुझसे इस प्रकार कह रहे हो ?' (उत्तर बोला) 'हा ! मैं अपनी माँ को देखना चाहता हूँ ।' यह सुनकर अर्जुन हँस पड़े । तदनन्तर शमीवृक्ष जाकर उसकी वन्दना की । फिर उस पर चढ़कर धनुष-बाण निकाले । यह देखकर उत्तर बोला— 'हे बृहन्नळे ! ये आयुध किसके हैं ? माया

आयुधमार्क्किवयुळ्ळु बृहन्नळे ?
मायमोंळिञ्ञु नीयेंन्नोटु चोंल्लणं । ५९
चोंल्लां परमार्त्थमेंङ्किलिवयेंल्लां
चोंल्लुळ्ळ पाण्डवर्क्कुळ्ळु धरिक्क नी । ६०
पाण्डवन्मारेंविटत्तु बृहन्नळे ?
वेण्टा पोंळिपऱकोंन्नतेंन्नोटेंटो । ६१
ऎंङ्किलो केळ्क्क ञानर्जुननायतुं
कङ्कनाकुन्नतु धर्म्मजन्मावेंटो । ६२
आक्कमेऱीटुं वललन् वृकोदरन्
चोंल्क्कण्णाळाकिय सैरन्ध्रि पाञ्चालि । ६३
मेय्क्कुन्नतु नकुलन् तुरगङ्ङळे
गोक्कळे मेय्क्कुन्नतु सहदेवनुं । ६४
ऎंङ्किल् निन् पत्तु पेरुं पऱञ्ञोटु नी
शङ्कपोवानिनिक्कोंन्नितु मत्स्यनुं । ६५
भोष्कलल चोंल्लुवनेंङ्किलो निन्नोटु
केळ्क्क नीयेंन्नुटे पत्तु नामङ्ङळुं । ६६
अर्ज्जुनन्, फल्गुनन्, पार्त्थन्, विजयनु
विश्रुतमायवन् पिन्नेंक्किरीटियुं ६७
श्वेताश्वनेंन्नुं धनञ्जयन् जिष्णुवुं
भीतिहरन् सव्यसाचि बीभत्सुवुं ६८
पत्तु नामङ्ङळुं नित्यं जपिक्क नी
भक्त्या भयङ्ङळकन्नुपों निश्चयं । ६९

छोड़कर मुझसे सच कहो'। (अर्जुन बोले) 'अच्छा! तो कहूँगा। ये सब विख्यात पाण्डवों के हैं, समझ लो!' उत्तर ने पूँछा "हे बृहन्नळे! पाण्डव आज कल कहाँ हैं? मुझसे झूठ न बोलना।" अर्जुन बोले 'अच्छा, तो सुनो। मैं ही अर्जुन हूँ। कङ्क ही युधिष्ठिर हैं। ५६-६२ शक्तिशाली वलल जो है वही भीम हैं। कमललोचना सैरन्ध्री पाञ्चाली है, घोड़ों को चरानेवाला नकुल है और गायों को चरानेवाला सहदेव है।' 'अगर ऐसा है तो अपने दसों नाम सुनाओ ताकि मेरी शङ्का मिट जाय', उत्तर ने ऐसा कहा। "मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ। तुमको मैं अपने दसों नाम सुना दूँगा, सुनो। अर्जुन, फलगुन, पार्थ, विजय, तदनन्तर विश्रुत किरीटी, श्वेताश्व, धनञ्जय, जिष्णु भय हटानेवाला सव्यसाची और

पेटि कळञ्ञु रथं नी नटत्तुकिल्
पाटे पशुक्कळे वीण्टुतरुवन् ञान् । ७०
मन्नवा ! निन्नोटु तुल्यनेन्नेन्ने ञान्
मुन्नमे चॊन्नतिऱिञ्ञु पॊरुक्कणं । ७१
इन्द्रनु मातलि तेर्नटत्तुंवण्ण-
मिन्द्रतनूज ! नटत्तुन्नतुण्टु ञान् । ७२
ऎन्नतु केट्टवन् विल्लुं कुलयेऱ्ऱि
पिन्ने हनुमानेयुं करुतीटिनान् । ७३
वन्नु कॊटिमरमेऱि हनुमानु-
मॊन्नङ्ङलऱि नटुङ्ङीजगत्त्रयं । ७४
देवदत्ताख्यमां शंखुमेटुत्तिट्टु
देवराजात्मजनुं विळिच्चीटिनान् । ७५
पिन्नेच्चेरुञाणॊलियिट्टुटनुटन्
मन्नवन् सिंहनादङ्ङळ् चेय्तीटिनान् । ७६
तेरुरुळॊच्चयुं सिंहनादङ्ङळुं
पारंमुळङ्ङुन्न शंखद्ध्वनिकळुं ७७
वीरन्मारञ्चुं चेरुञाणॊलिकळुं
मारुतितन्नुटे हुंकारनादवुं ७८
घोरघोरं केट्टु भीतिपूण्टुत्तरन्
पारं विऱच्चानरयालिलपोले । ७९

बीभत्सु, इन दसों नामों का प्रतिदिन भक्ति के साथ जप करो तो तुम्हारे सभी भय दूर हो जायेंगे । ६३-६९ डर छोड़कर अगर तुम रथ चलाओगे तो मैं जल्दी गायों को वापस लादूँगा ।" हे राजन् ! मैंने जो पहले अपने को आपके तुल्य बतलाया उसके लिए क्षमा कीजिये । मातलि जैसे इन्द्र का रथ चलाता है उसी प्रकार मैं भी (आपका) रथ चलाऊँगा । यह सुनकर अर्जुन ने धनुष पर ज्या (डोरी) चढ़ाई और हनुमान् का ध्यान किया । हनुमान् पधारे और ध्वजस्तंभ पर जा बैठे और तीनों लोक चकित हुए और काँपने लगे । अर्जुन ने देवदत्त नामक अपना शंख लेकर उसे बजाया । तदनन्तर लगातार ज्याघोष (धनुष की डोरी की आवाज़) करके राजा (अर्जुन) ने सिंहनाद किया । ७०-७६ रथ के चलने का शब्द, सिंहनाद, अत्यन्त गूँजनेवाली शंखध्वनि, पाँचों वीरों के ज्याघोष, भीमसेन के हुंकार (जो अतीव घोर थे), यह सब सुनकर उत्तर डर के कारण पीपल के पत्र के समान काँपने लगा । रथ ही पर गिर पड़ा और चिल्लाने लगा । तब

तेरिल् वीणान् मुऱयिट्टान् तेरुतेरे-
प्पाराते निल्क्क नीयेन्नु विजयनु । ८०
हुंकारमेऱुं चेरुञाणोलिकळु
शंखनादङ्ङळुं सिंहनादङ्ङळुं ८१
पिन्नेयुं पिन्नेयुं चेय्तान् तेरुतेरे
मन्नवनुत्तरन्भीति कळवानाय् । ८२
पार्त्थनीवण्णं नटन्नोरुनेरत्तु
धात्रि कुलुङ्ङि कलङ्ङी समुद्रवुं । ८३
घोषङ्ङळ् केट्टु भरद्वाजनन्दनन्
भोषनां नागद्ध्वजनोटु चोल्लिनान् । ८४
पार्त्थन्वरविता केळ्क्कायतुमेंटो
पार्त्थिवनन्दना ! तोल्क्कुमेल्लावरुं । ८५
दुश्शकुनङ्ङळ् पलतुण्टु काणुन्नु
निश्शेषनाशं भविक्कुं पटय्क्किप्पोळ् । ८६
नागद्ध्वजनतु केट्टिट्टु कोपिच्चु
भागीरथीसुतन्तन्नोटु चोल्लिनान् । ८७
पण्टु पऱञ्ञ समयं वरुंमुन्पे-
युण्टु वरुन्नितु पाण्डवरेङ्किलो ८८
रण्टामतुं वनं पूकेन्नतेवरू
कोण्टाटियारुमतिन्नु पऱयण्टा । ८९
द्रोणरुचितं पऱकयिल्लेन्नुमे
प्राणनोटोप्पिक्कुमेन्नेयाचार्यनुं । ९०

अर्जुन ने कहा 'उठो और अपने को संभालो'। राजा (अर्जुन) लगातार बार-बार हुँकारवाले ज्याघोष, शंखनाद, और सिंहनाद, करते गये ताकि उत्तर का भय नष्ट हो जाय। जब पार्थ ने इस प्रकार किया तब पृथिवी हिली, समुद्र क्षुब्ध हुआ। ये सब घोष सुनकर भरद्वाजपुत्र द्रोण ने मूर्ख सुयोधन से कहा। ७७-८४ 'अर्जुन का आगमन ही सुनाई दे रहा है। हे भूपालपुत्र ! अब सब हार जायेंगे। अनेक दुश्शकुन दिखाई दे रहे हैं, अब सारी सेना नष्ट हो जायगी। यह सुनकर नागध्वज (सुयोधन) क्रुद्ध हुआ और भागीरथीसुत (भीष्म) से बोला। जो समय पहले ही निश्चित है उससे पहले ही अगर पाण्डव आ रहे हों तो दुबारा उनको वन जाना पड़ेगा, बस। इसलिए कोई उत्साह न दिखलावे ! द्रोण तो

केट्टीलें तोळा ! विशेषङ्ङळ् कर्ण्णा ! नी
कूट्टमिट्टोरो जनं पऱयुन्नतुं ? ९१
वाट्टं भवानुळ्ळिळलेतुमुण्टाकेण्ट
कूट्टु ञानुण्टेन्नऱिञ्ञतिल्लेयिप्पोळ् । ९२
वेंण्मळुवेन्तिय रामन् वरिकिलु-
मेंन्मुन्निल् निल्कयिल्लेन्नु धरिक्कणं । ९३
इन्द्रादिदेवकळोंत्तुवरिकिलुं
मन्दतयिल्ल जयिक्कुन्नतुण्टु ञान् । ९४
इन्द्रतनूजनुमिन्द्रावरजनु-
मेंन्नोटु तुल्यरल्लेंन्नु धरिक्कणं । ९५
ऒन्नित्तरं वन्पु कर्ण्णन् पऱञ्ञप्पोळ्
नित्न कृपरुं चिरिच्चोंन्नुरचेंय्तु । ९६
कर्ण्णा ! मति मति पोरुं पऱञ्ञतु
निन्नुटॆ वीर्यङ्ङळ् नाविन्मेलेयुळ्ळु । ९७
जंभारिनन्दनन्वन्पुकळ् केळ्क्क नी
किं फलमात्मप्रशंसकोंण्टोक्कॆंटो । ९८
मुन्पिल् द्रुपदनेंब्बन्धिच्चु दक्षिण-
यन्पोटु चेंय्ततवनेन्नऱिक नी । ९९
चित्ररथनाय गन्धर्व्ववीरनें
युद्धे जयिच्चतवनल्लयो पुरा । १००

कभी उचित बात कहते ही नहीं और मुझे तो आचार्य प्राणों के तुल्य बतलाते भी हैं। हे सखे कर्ण ! सुना तुमने समाचार, और जो कुछ गुट बनाकर लोग कहते हैं ? (कर्ण ने उत्तर दिया) आप परेशान न हों ! क्या आपको नहीं मालूम है कि मैं आपके साथ हूँ ? ८५-९२ जान लो कि परशुराम ही अगर स्वयं आजायँ तो मेरे सामने टिक नहीं सकते हैं। अगर इन्द्र आदि देव मिलकर चले आवें तब भी मेरी हार न होगी— मैं जीत जाऊँगा। जान लो कि इन्द्र का पुत्र और इन्द्र के छोटे भाई (विष्णु) भी मेरे तुल्य नहीं हैं। जब कर्ण ने इस प्रकार की आत्मश्लाघा की तब कृपाचार्य हँस पड़े और बोले— हे कर्ण ! बस बस, अब और कुछ न कहो। तुम्हारी वीरता तुम्हारी ज़बान तक ही है। अर्जुन के पराक्रमों को ज़रा सुनो, अपनी प्रशंसा करके तुम्हें क्या मिलेगा ? स्मरण रहे कि पहले द्रुपद को बाँधकर उसने अपने गुरु को प्रेम से दक्षिणा दी। गन्धर्ववीर चित्ररथ को युद्ध में उसी ने तो हराया था। ९३-१०० लक्ष्य (निशान)

लक्ष्यवुं भेदिच्चु पाञ्चालपुत्रियां
पुष्करनेत्रयेक्कोण्टङ्ङु पोयतुं १०१
कामपालादि यदुक्कळेयुं वेन्नु
कामिनियाय सुभद्रये वेट्टतुं १०२
खाण्डवकाननदाहं कळिच्चतुं
गाण्डीवमग्नियोटन्नु लभिच्चतुं १०३
अन्तकवैरियोटस्त्रं परिच्चतु-
मिन्द्राज्ञया पिन्ने वेगेन पोयवन् १०४
वानुलकं पुक्कसुररेक्कोन्नतुं
ताने पोयुत्तरदिक्कु जयिच्चतुं १०५
मट्टुं पलपल विक्रममोर्क्कुन्पोळ्
मुट्टुं पऱकयोळिञ्ञु निनक्कामो ? १०६
इत्तरं केट्टिट्टु कोपिच्चु कर्ण्णनु-
मुत्तरं चोन्नान् कृपाचार्यनोटप्पोळ् । १०७
पेयाय वाक्कुकळ् पेटिच्चु चोल्लाय्क
पोयोरामन्त्रणमुण्क मटियाते । १०८
यागादिकर्म्मङ्ङळ् चेय्कतल्लाय्किलो
पोक विरवोटु भिक्षयेट्टीटुवान् । १०९
दुर्भाषणं कर्ण्णनित्थं पऱञ्ञप्पोळ्
विप्रोत्तमनश्वत्थामावु कोपिच्चु । ११०

को तोड़कर पाञ्चालपुत्री कमललोचना को ले जाना, कामपाल आदि यदुओं को नष्ट करके कामिनी सुभद्रा से विवाह करना, खाण्डव वन को जला देना और उस अवसर पर अग्नि से गाण्डीव धनुष पाना, अन्तकवैरि (शिवजी) से अस्त्र लेना, फिर इन्द्र की आज्ञा से स्वर्ग जाकर वहाँ असुरों का वध करना, और अकेला जाकर पूर्व दिशा को जीतना, जब अर्जुन के इस प्रकार के अनेक विक्रमों को स्मरण करते हैं तब और कुछ न कहने के अतिरिक्त तुम्हें क्या चारा है ? इस प्रकार की बातें सुनकर कर्ण क्रुद्ध हुआ और कृपाचार्य से बोला— डर के मारे ऐसी मूर्खता की बातें मत करो। चलो, जाकर कहीं निमन्त्रण पाकर भोजन करो। १०१-१०८ अगर याग आदि कर्म नहीं करा सकते हो तो कहीं भीख मांगने के लिए चले जाओ। जब कर्ण ने इस प्रकार दुर्भाषण किया तब विप्रवर अश्वत्थामा को कोप आया। यह देखकर गंगासुत (भीष्म) ने कहा— "बस, आपस में झगड़ा

गंगासुतनतुकण्टवर्तम्मोटु
तङ्ङळिल् कोपियाय्कॆन्तु चॊल्लीटिनान् । १११
पिन्नॆयुं चॊन्नान् वरिषं पतिम्मून्नु
कर्ण्णा ! कळिञ्ञितु पार्त्तीलयो नीयुं ? ११२
अन्नेरं कोपिच्चु चॊन्नान् सुयोधन-
नॆन्नुटॆ राज्यं कॊटुक्कयिल्लेतुमे । ११३
पोरिनॊरुमिच्चु पार्त्थन् वरुन्नाकिल्
घोरमायिङ्ङुं पटक्कोप्पु कूट्टुक । ११४
व्यूहं चमच्चुरप्पिच्चितु भीष्मरुं
वाहिनी वारिधिपूरङ्ङळॆप्पोलॆ । ११५
अंबरचारिकळ् वन्नु निरञ्ञितु
तुंबुरुनारदनादिकळुं वन्नु । ११६
मत्स्यराजात्मजनुत्तरन् पेटि ती-
र्न्नुत्साहमुळ्क्कॊण्टु तेरु नटत्तिनान् । ११७
पार्त्थन् गुरुभूतन्मारॆयुं वन्दिच्चु
कूर्त्त शरनिर तूकित्तुटङ्ङिनान् । ११८
शंखद्ध्वनियुं चॆरुञाणॊलिकळुं
हुंकारवुं केट्टु कौरवरन्नेरं ११९
शङ्किच्चकन्नितु गोक्कळॆयुं विट्टु
शङ्कारहितमट्टुत्तान् किरीटियुं । १२०
पार्त्थनुमुत्तरन्तन्नोटु चॊल्लिनान्
पेर्त्तुं कॊटियटयाळङ्ङळोरोन्ने । १२१

न करो"। फिर कहा— "हे कर्ण ! तेरह बरस पूरे हो गये। क्या तुमको नहीं मालूम है ?" उस समय क्रुद्ध होकर सुयोधन ने कहा—"मैं अपना राज्य कभी न दूँगा"। अगर अर्जुन युद्ध के लिए आ रहा है तो यहाँ भी एक घोर सेना इकट्ठा की जाय ! भीष्मजी ने व्यूह रचाकर तैयार किया मानो वह सेना समुद्र की तरङ्गों के समान थी। १०९-११५ आकाशचारी देवादिकों से आकाश भर गया और तुम्बुरु नारद आदि भी (उस युद्ध को देखने के लिए) पधारे। मत्स्यराजा के पुत्र ने भय छोड़कर सोत्साह रथ चलाया। अर्जुन अपने गुरुओं की वन्दना करके तेज-तेज बाणों की वर्षा करने लगे। शंखध्वनि, ज्याघोष, और हुंकार सुनकर कौरव लोग शङ्का के कारण गायों को छोड़कर दूर हट गये। अर्जुन

शोणहयरथंतन्निल् विळङ्ङीटुं
द्रोणरुटें केतुतन्मेलटयाळं । १२२
कार्णेटो पोंन्मयवेदि तत्सन्निधौ
काणायतश्वत्थामावु महारथन् । १२३
द्रोणात्मजन् सिंहलांगूलकेतुमान्
बाणधनुर्धरन्मारिलग्रेसरन् १२४
क्षोणियुमादित्यचन्द्ररुमुळ्ळनाळ्
प्राणविनाशमवनिल्लङ्कि नी । १२५
अग्रे वृषद्ध्वजंपूण्टु काणायव-
नुग्रन् वृषद्ध्वजतुल्यन् धनुर्द्धरन् । १२६
अग्र्यकुलोत्भवन्मारिलिन्नाळियि-
लग्रगण्यन् कृपाचार्यनङ्कि नी । १२७
इल्ल शारद्वतनुं मृति भार्गव-
तुल्यनेंल्लांकोंण्टुमिल्लोंरु संशयं । १२८
स्वर्ण्णकंबूगजकक्ष्या परिष्कृत-
मुन्नतमां ध्वजं शोभिच्चुकण्टतु १२९
कर्ण्णनुटें रथमायतङ्कि नी
मिन्नल्क्कोंटिपोलें नीळप्रकाशितं १३०

निःशङ्क होकर निकट पहुँच गये। और उन्होंने उत्तर से एक-एक ध्वज का लक्षण बतलाते हुए कहा—लाल-लाल अश्वों से युक्त रथ पर द्रोण का ध्वज विराजता है और उस का चिह्न, । ११६-१२२ देखो ! वह सोने की वेदी है और उसके पास महारथ अश्वत्थामा दिखाई दे रहे हैं। वे द्रोण के पुत्र है और उनका ध्वजचिह्न है सिंह की पूँछ। धनुष-बाण धारण करने वालों में वे अग्रेसर हैं। जब तक पृथिवी और सूर्य-चन्द्र होंगे तब तक उनकी मृत्यु न होगी, जान लो। आगे जो वृषध्वज स्वीकार किये हुए दिखाई देते हैं वह वृषध्वज (शिवजी) के समान, उग्र, धनुर्धर और उच्च-कुलोद्भवों में इस समय श्रेष्ठ कृपाचार्य हैं। जान लो। शारद्वत की भी मृत्यु न होगी जो सभी बातों में निस्सन्देह भार्गव के तुल्य हैं। जो स्वर्णचित्रित गज प्रतिमा से अलंकृत उन्नत और शोभायुक्त ध्वज दिखाई दे रहा है वह कर्ण का रथ है। वह बिजली की रेखा के समान दीर्घ और चमकनेवाला है। १२३-१३० राजा सुयोधन का ध्वज भी स्पष्ट है, वह एक अच्छे मणिमय सर्प के रूप में है, हे मत्स्यराज के पुत्र ! उसको देखा ? स्वर्नदी (गंगा) के पुत्र भीष्म का रथ उस तरफ़

मन्नवनाय सुयोधनन् केतु वि-
च्छिन्नमाय् नल्ल मणिमयमाकिय १३१
पन्नगं कण्टितो मत्स्यराजात्मज !
स्वर्न्नदीपुत्रनां भीष्मरङ्ङेतेंटो १३२
श्वेतावदातेन पञ्चतालेन तल्-
केतुना वैडूर्यदण्डेन राजितं । १३३
वृत्रारिपुत्रनित्थं परञ्ञोरु वा-
क्कुत्तरन् केट्टु तॆळिञ्ञोरनन्तरं १३४
ञाने जयिक्कुन्नतुण्टॆन्नु कर्ण्णनुं
मानिच्चु चॊन्नतु केट्टश्वत्थामावु १३५
वाय्पटयॊट्टु कुरय्क्कॆटो कर्ण्णा ! नी
वाय्पोटु पार्त्थन् वरुन्नतु काणॆङ्किल् । १३६
कर्ण्णनुं पार्त्थनुं तम्मिलॆतिर्त्तप्पोळ्
कर्ण्णन्पटयॆल्लामोटित्तिरिच्चुते । १३७
अन्पुकॊळ्ळातवरिल्ल कुरुक्कळिल्
वन्पनां कर्ण्णनुमोटित्तुटङ्ङिनान् । १३८
अन्नेरं द्रोणरॆतिर्त्तु किरीटियो-
टन्नेरमुण्टाय युद्धं भयङ्करं । १३९
द्रोणर् तिरिच्चु नटन्नितुनेरं
द्रोणात्मजनश्वत्थामावु नेरिट्टान् । १४०

है, वह उनके स्वच्छ और श्वेत, पञ्चतालात्मक और वैडूर्यमय दण्ड से विभूषित ध्वज अलंकृत है। अर्जुन की कही इन बातों को सुनकर उत्तर प्रसन्न हुआ। 'मैं अवश्य जीत जाऊँगा' ऐसी कर्ण की गर्वयुक्त बात सुनकर अश्वत्थामा ने कहा—हे कर्ण ! अपना यह विकत्थन ज़रा कम करो ! अर्जुन तो सोत्साह आ रहा है, देख लो ! जब कर्ण और पार्थ सामने-सामने आये तो कर्ण की सेना भागने लगी। कौरवों में ऐसा कोई नहीं था जिसको शर न लगा हो। घमंडी कर्ण स्वयं भागने लगा। १३१-१३८ तब द्रोण ने अर्जुन का सामना किया और फलस्वरूप जो युद्ध हुआ वह भयङ्कर रहा। जब द्रोण वापस चले गये तो उनके पुत्र अश्वत्थामा ने सामना किया। यह समझकर कि यह द्रोण से बड़ा नहीं है अर्जुन ने बाणवर्षा की। यह देखकर लज्जा के कारण अश्वत्थामा वापस चले गये। उनके सम्मान में अर्जुन भी शान्त हो गये। तब कृपाचार्य ने लगातार

द्रोणरेक्काळ् वलुतल्लेन्नु जिष्णुवुं
बाणगणं वरिषिच्चानतुकण्टु १४१
नाणिच्चु वाङ्ङिनानश्वत्थामावुतान्
मानिच्चणञ्ञतु पिन्नेयुमर्ज्जुनन् । १४२
अप्पोळ् कृपरट्टुत्तेय्तु तेरुतेरे-
क्कोल्प्पुळ्ळ विल्लेय्तु फल्गुनन् खण्डिच्चान् । १४३
नोक्किय नोक्किय दिक्किलेल्लाटवु-
माक्कमोटर्ज्जुनन्मारेन्नु कौरवर् १४४
ओटित्तुटङ्ङिनार् पार्त्थशरङ्ङळुं
कूटत्तुटरत्तुटरेयटुक्कुन्नु १४५
दुश्शासनादि शकुनियुं तोट्टितु
दुश्शकुनङ्ङळ् पलतरं काणायि । १४६
गंगातनयनुं कुन्तीतनयनुं
तङ्ङळिलुण्टाय शस्त्रप्रयोगङ्ङळ् १४७
इङ्ङनेयेन्नु परञ्ञुकूटायिनि-
क्कङ्ङनेयुण्टाय युद्धकोलाहलं । १४८
कण्टवरोक्क प्रशंसिच्चु निल्क्कुन्पोळ्
कण्टितु भीष्मरोळिक्कुन्नतु मेल्ले । १४९
आर्त्तणञ्ञान् दुरियोधनन् पार्त्थनुं
कूर्त्तशरमेय्तु कूवीटु मण्डिच्चान् । १५०
निश्श्वासमुळ्क्कोण्टोळिच्चितु कौरव-
रश्वत्थामावतुनेरमुरच्चेय्तु । १५१

बाण छोड़ा और अर्जुन ने एक दृढ़ धनुष से उनको ध्वस्त कर दिया। जिस दिशा में भी देखा वहाँ अर्जुन ही अर्जुन को देखकर कौरव भागने लगे और अर्जुन के शर उनका निरन्तर पीछा करते रहे। १३९-१४५ दुश्शासन आदि और शकुनि सभी हार गये और तरह तरह के दुश्शकुन दिखाई देने लगे। गंगापुत्र (भीष्म) और कुन्तीपुत्र में परस्पर जो शस्त्र प्रयोग हुआ, वह कैसा रहा यह कहने की सामर्थ्य मुझ में नहीं। वह युद्धकोलाहल इस प्रकार का था। जब सब दर्शक लोग प्रशंसा करते हुए खड़े थे तब उन्होंने देखा कि भीष्म वापस जा रहे हैं। दुर्योधन भी पीड़ित होकर शान्त हुआ और अर्जुन ने एक तेज बाण का प्रयोग करके उसे भगाया। दीर्घ निश्वास लेते हुए कौरव चले गये। तब अश्वत्थामा ने कहा—गर्व की बातें करनेवाला

वन्पु परञ्ञोरु कर्ण्णनेङ्ङोनिप्पो-
ळुन्पर्कोन्पुत्रन् वरुन्नतु कण्टीले ? १५२
इत्थमधिक्षेपवाक्कु केट्टंगेश-
नेत्रयुं कोपिच्चटुत्तु युद्धं चेय्तान् । १५३
वृत्रारिपुत्रनुं मित्रपुत्रन्तानु-
मस्त्रङ्ङळत्यर्त्थमुग्रं प्रयोगिच्चार् । १५४
रण्टामतुं कर्ण्णनर्ज्जुननोटेट्टु
मण्डिप्पटयुमाय् कूवीट्टु सत्वरं । १५५
द्रोणरुं द्रोणियुं कर्ण्णनुं भीष्मरुं
मानियां नागद्ध्वजनुमनुजनुं १५६
शारद्वतनुं पेरुंपटयुं तोट्-
नेरत्तु पिन्नेयुं वेगेन फल्गुनन् १५७
शस्त्रङ्ङळ् तूकियटुत्तितु पिन्नाले
वित्रस्तराय् मरञ्ञीटिनारेवरुं । १५८
देवदत्ताख्यशंखारवघोषवुं
देवराजात्मजज्यानादघोषवुं १५९
वानरवीरहुंकारप्रघोषवुं
धेनूसमूहपलायनघोषवुं १६०
केट्टु भयप्पेट्टोरोरो वळिक्कव-
रोट्टं तुटङ्ङियनेरं परवशाल् १६१

कर्ण अब कहाँ है ? इन्द्रपुत्र को आते हुए उसने नहीं देखा ? अधिक्षेप की इस बात को सुनकर अङ्गेश (कर्ण) क्रुद्ध होकर निकट गया और युद्ध करने लगा। इन्द्रपुत्र और सूर्यपुत्र (कर्ण) ने उग्र रूप से अस्त्रों का प्रयोग किया। १४६-१५४ दुबारा अर्जुन का सामना करके कर्ण अपनी सेना के साथ तुरन्त भागा। द्रोण, द्रोणि, कर्ण, भीष्म, मानी नागध्वज (दुर्योधन), उसका भाई, शारद्वत, सहित सारी सेना जब हार गई तब अर्जुन ने शस्त्रों का प्रयोग करते हुए उनका पीछा किया जिसके कारण सभी लोग भयभीत होकर भाग गये। देवदत्त नामक शंख का घोष, इन्द्रपुत्र के धनुष की ज्या (डोरी) का नाद, वानरवीर के हुंकार का प्रघोष, गायों के भागने का शब्द, यह सब सुनकर कौरव डर गये और लाचार होकर इधर-उधर भागने लगे। १५५-१६२ मोहनास्त्र के कारण सभी लोग भूमि पर गिर पड़े और बेहोश हो गये। सुलानेवाले अस्त्र की शक्ति से सब सो गये। तब

मोहनास्त्रं कोण्टु वीणितु भूमियिल्
मोहिच्चु बुद्धिमरन्नितेल्लावरुं । १६२
सुप्त्यस्त्रशक्त्या कुरुवरन्मारेल्लां
सुप्तराय्वन्नू किरीटियुमन्नेरं १६३
उष्णीषवस्त्राभरणादिकळेल्लां
तृष्णतीर्प्पान् पुरस्त्रीजनङ्ङळ्क्किदं १६४
कृत्स्नं गुरूणामोळिच्चळिच्चीटेन्नु
कृष्णसखियाय जिष्णुजन् जिष्णुवुं १६५
उत्तरनोटु चोन्नानतुकेट्टवन्
वस्त्रङ्ङळोक्कयळिच्चुकोण्टीटिनान् । १६६
आर्त्तु विजयन् जयिच्चु पशुक्कळे-
च्चेर्त्तु तेळिच्चुकोण्टिङ्ङु पोन्नीटिनान् । १६७
पार्त्थनीरण्टु शरङ्ङळेक्कोण्टभि-
वाद्यवुंचेय्तु गुरुभूतन्माक्केल्लां । १६८
उत्तरन्तन्नोटु चोल्लिनानर्ज्जुनन्
सत्वरं नी पुरं पुक्करियिक्कणं १६९
युद्धे जयिच्चु पशुक्कळे वीण्टुकों-
ण्टत्र वन्नेनहमेन्नुरचेय्क नी । १७०
ञानपराह्ने वरुवन् पुरत्तिङ्कल्
मानमोटे नी पिताविनेक्काण्क पोय् । १७१

अर्जुन ने, जो कृष्ण के सखा थे, जिष्णु के पुत्र थे और स्वयं जिष्णु थे, उत्तर से कहा "गुरुओं के छोड़कर इन सब के उष्णीष (पगड़ी), वस्त्र, आभूषण आदि नगरनारियों की तृष्णा शान्त करने के लिए उतार लो"। यह सुनकर उत्तर ने सभी के वस्त्रों को उतार लिया। जीते हुए अर्जुन जयघोष करके सभी गायों को इकट्ठा करके भगा लाया। तदनन्तर अर्जुन ने अपने सभी गुरुओं को दो-दो बाणों से अभिवादन किया। और उत्तर से कहा—"तुम तुरन्त नगर में जाकर सब वृत्तान्त कहो। १६३-१६९ कि 'मैंने युद्ध में विजय पाकर मैं गायों को वापस लाया'। मैं दोपहर को नगर लौटूँगा। तुम सम्मान के साथ पिता जी का दर्शन करो"। अर्जुन ने उत्तर से यह भी कहा— "मेरा चरित्र प्रकाशित न करो"। युद्ध में विजयी अर्जुन ने आयुधों को फिर शमीवृक्ष के अन्दर छिपा दिया। उत्तर के दूतों ने दौड़कर घोषित कर दिया कि उत्तर ने कौरवों को परास्त कर दिया।

मच्चरित्रं प्रकाशिप्पिक्करुतॆन्नु-
मर्ज्जुननुत्तरनोटु चॊल्लीटिनान् । १७२
आयोधने जयिच्चोरु धनञ्जय-
नायुधंकॊण्टे वच्चू शमीकोटरे । १७३
उत्तरन् कौरवन्मारॆ जयिच्चितॆ-
न्नुत्तरदूतन्मार् चॆन्नु चॊल्लीटिनार् १७४
मत्स्यनुं प्रीतनाय् राज्यमलङ्करि
च्चुत्सवं घोषिक्कयॆन्नु नियोगिच्चान् । १७५
अक्षङ्ङळ् कॊण्टुवरिक सैरन्ध्रि नी
वेय्क्कणमाशु चूतॆन्निन्तु मत्स्यनुं १७६
कङ्कनोटेवं पऱञ्ञोरु नेरत्तु
शङ्कारहितं पऱञ्ञितु धर्म्मजन् । १७७
हृष्टनायुळ्ळवनोटुं कितवनां
दुष्टनोटुं कूटि नन्नल्ल देवनं । १७८
ऎन्नु केळ्प्पुण्टु ञानॆङ्किलुमिन्निप्पोळ्
मन्नवा ! वेणमॆन्नाकिल् ञानो पॊरां । १७९
चूतिन्नु दोषमॊट्टिल्लॆन्नल्ल निर्ण्णयं
मेदिनीपालका ! केट्टतिल्ले भवान् ? १८०
साधुवायुळ्ळ धर्म्मात्मजन्माविनु
चूतिनालापत्तु वन्नितु मन्नवा ! १८१
इत्थं पऱञ्ञतु केट्टु विराटनुं
बद्धमोदं नामॊरुवर वय्क्कॊन्नान् । १८२

मत्स्यों के राजा ने प्रसन्न होकर आज्ञा दी कि देश अलङ्कृत किया जाय और उत्सव मनाया जाय। और सैरन्ध्री से कहा—'चलो, जाकर अक्षों (पासों) को लाओ। जुआ खेला जाय। १७०-१७६ जब कङ्क से यह कहा गया तब युधिष्ठिर ने निश्शङ्क कहा— "सुना जाता है कि जो आनन्द में मग्न हो अथवा दुष्ट या उन्मत्त हो उससे जुआ न खेलना चाहिये। परन्तु हे राजन् ! अगर आप चाहते हों तो मैं आप से खेलूँगा। जुआ तो निस्सन्देह दोषहीन नहीं है। हे भूपाल ! आपने क्या नहीं सुना है कि बेचारे सीधे युधिष्ठिर को जुए के ही कारण विपत्ति प्राप्त हुई है"। यह बात सुनकर विराट ने प्रमोद के साथ कहा— "अच्छा एक हाथ हो जाय"। जब मत्स्यों के राजा और युधिष्ठिर समत्सर (अभिमानपूर्वक) खेल रहे थे तब

मत्स्यराजावुं युधिष्ठिरन् तन्नोटु
मत्सरमुळ्क्कोण्टु चूतुपोरुनेरं १८३
वत्सनामुत्तरन् वन्नितेन्नेन्नयु-
मुत्सवं पूण्टु विराटन् पऱञ्ञप्पोळ् १८४
मन्नवन्तन्नोटु मन्दस्मितं पूण्टु
धन्यनां धर्म्मजन् मेल्लवे चोल्लिनान् । १८५
उत्तरनल्ल जयिच्चतु निश्चय-
मुत्तमयाय बृहन्नळयाकिलां । १८६
अन्यस्तुति केट्टु कोपिच्चु मत्स्यनु-
मोन्नेङ्ङिञ्ञानोरु चूतुकोण्टन्नेरं १८७
नेट्टिमेल् कोण्टिट्टु धर्म्मात्मजन् तनिक्कि-
ट्टिटु चोर वरुन्नतु पाञ्चालि १८८
उत्तरीयत्तिलतेटुकोण्टीटिनाळ्
मत्स्यराजाविन् मरणं चेरुप्पानाय् । १८९
संन्यासितन्नुटे चोर वीळुन्निट-
मेन्नुं मुटिञ्ञिटुमेन्नु चोल्लिद्रुतं । १९०
उत्तरन् वन्नु नमस्करिच्चीटिना-
नुत्तमन्मारां गुरुजनपादङ्ङळ् १९१
पाण्डवन्मारेयङ्ङिञ्ञितेल्लावरुं
गाण्डीवधन्वावुतन्नुटे धैर्यवुं । १९२

पुत्र उत्तर आया और सोत्साह सब वृत्तान्त सुनाने लगा । १७७-१८४ तब युधिष्ठिर ने मुस्कराकर राजा से धीरे-धीरे कहा— उत्तर ने नहीं जीता है, इसमें कोई सन्देह नहीं । बृहन्नळा ने ही जीता होगा ! औरों की स्तुति सुनकर मत्स्य क्रुद्ध हुआ और उसने युधिष्ठिर पर एक अक्ष फेंका । वह उनके माथे पर लगा और रक्त बहने लगा । यह देखकर पाञ्चाली ने अपने उत्तरीय से उसे पोंछा ताकि मत्स्यों के राजा की मृत्यु न हो । और तुरन्त कहा भी कि जहाँ संन्यासी का रक्त गिरता है वह स्थान सदा के लिए नष्ट हो जाता है । तब उत्तर आया और युधिष्ठिर और अन्य गुरुजनों के चरणों पर गिर पड़ा । सब लोगों ने पाण्डवों को, और अर्जुन की वीरता को भी जान लिया । १८५-१९२

उत्तरास्वयंवरं

उत्तरन्तन्टे भागिनियाय् मेविनो-
रुत्तरतन्नेक्किरीटिक्कु नल्किनान् । १
पुत्रभार्यार्थं परिग्रहिच्चानवन्
मित्थ्यापवादमुण्टामेन्न शङ्कयाल् । २
अन्तेल्लां मुन्ने पठिप्पिच्चितेन्नतो
चिन्तिक्किल् मट्टारुमेयरिञ्ञीलल्लो । ३
अन्नु महालोकर् पिन्नेप्परञ्ञीटु-
मेन्नेयेन्नोर्त्तु भयंपूण्टु फल्गुनन् । ४
नल्लनेरत्तविटुन्नु पुरप्पेट्टु
कल्याणमोटुपप्लाव्यनगरत्तिल् ५
चेन्निरुन्नात्मबन्धुक्कळेप्पाण्डवर्
पिन्ने वरुत्ति विवाहत्तिनक्कालं । ६
कृष्णन्तिरुवटियादियायुळ्ळोरु-
वृष्णिकळींक्कवे वन्नारतुकालं ७
भद्रयायोरु सुभद्रयुमाशु सौ-
भद्रनायुळ्ळोरभिमन्युतन्नोटुं ८
वन्नितु पाञ्चालनोटु धृष्टद्युम्न-
नेन्निवरोक्कवे वन्नोरनन्तरं ९
उत्तमस्त्रीकुलोत्तंसरत्नांगिया-
मुत्तरतन्नेयभिमन्यु कैक्कोण्टान् । १०

उत्तरास्वयंवर

उत्तर ने अपनी बहिन उत्तरा को अर्जुन को प्रदान किया । इस शङ्का से कि व्यर्थ की बदनामी न हो जाय, अपने पुत्र की पत्नी के रूप में अर्जुन ने उसे स्वीकार किया ।[1] "पहले ही क्या-क्या सिखाया है ? सोचो तो किसी को कुछ भी नहीं मालूम है" ! इस प्रकार लोग कहने लगेंगे— ऐसा सोचकर फल्गुन को भय हुआ । शुभ समय पर वहाँ से सप्रमोद चलकर उपप्लाव्य नगर पहुँचे और वहाँ रहते हुए अपने बन्धुओं को विवाह के उपलक्ष में पाण्डवों ने बुलवाया । उस समय पूज्य कृष्ण से लेकर सभी

१ अर्जुन तो बृहन्नला के रूप में नाटच और संगीत सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था ।

कल्याणवुं कळिञ्ञेल्लावरुं-
कूटियुल्लासमोटुपप्लाव्यनगरत्तिल् ११
अल्ललूतीर्न्नज्ञातवासवुं चेय्तु सल्-
सल्लापमोटु सखिच्चितु पाण्डवर् । १२
मित्रसम्पत्तियुमर्थसम्पत्तियुं
पुत्रसम्पत्तियुमस्त्रसम्पत्तियुं । १३
वर्द्धिच्चु वर्द्धिच्चनुदिवसं धर्म्मं-
पुत्रादियायुळ्ळ पाण्डुतनयन्मार् । १४
अर्त्थिक्कवेणं समयेन दायमा-
मर्द्धराज्यं धृतराष्ट्रजनोटु नां १५
अेन्नाल् नमुक्कु तरिकयुमिल्लवन्
पिन्ने प्रवृत्तियेन्तोन्नु चिन्तिक्कणं । १६
आपत्तिनास्पदमायतविवेक-
मेवक्कुमेन्नालिनि नामितुकालं १७
आवोळमुळ्ळल् विचारिक्कयुं वेणं
श्रीवासुदेवन्तिरुवटितन्नोटुं । १८
गोविन्दनेन्तु तिरुमनस्सेन्नरि-
ञ्ञेवरुमोत्तु विचारिक्कयुं वेणं । १९
द्रोणरुं भीष्मरुं शारद्वतन्तानु
द्रौणियुं कर्ण्णनुं सोमदत्तात्मजन् २०

वृष्णि वहाँ पधारे । १-७ सुभागिनी सुभद्रा तो तुरन्त ही आयुष्मान् अभिमन्यु के साथ आयी, और पाञ्चाल के राजा के साथ धृष्टद्युम्न भी आया। इस प्रकार सब के आने के बाद अभिमन्यु ने उत्तम स्त्रीकुलों के आभूषण के रत्न उत्तरा का पाणिग्रहण किया। विवाह के बाद सब लोग सोल्लास सभी दुःखों को दूर करके आपस में सप्रमोद वार्तालाप करते हुए सुख से उपप्लाव्य नगर में अज्ञातवास किया। उनकी मित्रसम्पत्ति, अर्थसम्पत्ति, पुत्रसम्पत्ति और अस्त्रसम्पत्ति, प्रतिदिन बढ़ती गयी। तब युधिष्ठिर आदि पाण्डुपुत्रों ने विचार किया। "अब हम को धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) से अपना राज्य का आधा हिस्सा माँगना चाहिये। ८-१५ किन्तु वह देगा नहीं। तब हमको सोचना होगा कि आगे क्या किया जाय। अविवेक ही सब की विपत्ति का कारण होता है। इस लिए हमको चाहिये कि हम अब जहाँ तक हो सके इस पर विचार करें, और पूज्य वासुदेवजी के साथ भी गोविन्दजी का इस पर क्या विचार है यह जानने के बाद हम

तानुं जयद्रथन्तानु त्रिगर्त्तनुं
ज्योतिष्मतिपतियां भगदत्तनुं
मातुलनाय शकुनि गान्धारनुं २१
मटुं महारथन्मारामवरेल्ला-
मुट्ट बन्धुक्कळ् सुयोधननाकयाल् २२
युद्धं तुटर्न्नाल् जयिप्पान् पणियुण्टु
चित्तत्तिलेट्टं विचारिक्कयु वेणं । २३
द्रोणरामाचार्यर् कैयिल् विल्लुळ्ळनाळ्
प्राणभयमवनिल्लेन्नरियणं । २४
अच्छनां शन्तनुतन्टे वरत्तिनाल्
स्वच्छन्दमृत्युवायुळ्ळ पितामहन् २५
विश्वनाशं वरुंनाळुं मरणमि-
ल्लश्वत्थामाविनस्त्रज्ञोत्तमनवन् । २६
मृत्युभयं कृपाचार्यनोरुनाळु-
मेत्तुकयिल्लवन् ब्रह्मज्ञसत्तमन् २७
मित्रतनयनुं मृत्युभयमिल्ल
वृत्रारि नल्किय शक्तियुण्टाकयाल् । २८
इङ्ङनेयुळ्ळ दिव्यन्मारे नामिप्पो-
ळेङ्ङने निग्रहिक्कुन्नु निरूपिच्चाल् । २९
मल्लारियाकिय माधवने गति-
युळ्ळु नमुक्कोरु नल्लतेन्नोर्त्तुळ्ळिल् ३०

आपस में सलाह करें। द्रोण, भीष्म, शारद्वत (कृपाचार्य), द्रौणि (अश्वत्थामा), कर्ण, सोमदत्त का पुत्र, जयद्रथ, त्रिगर्त, ज्योतिष्मती का राजा भगदत्त, मामा और गान्धार का राजा शकुनि और अन्य महारथ सुयोधन के निकट के बन्धु होने के कारण, अगर युद्ध छिड़ जाय तो हमको जीतने में कठिनाई होगी। इस बात को हमें ध्यान में रखना होगा। १६-२३ जब तक आचार्य द्रोण के हाथ में धनुष है तब तक उनको कोई प्राणभय नहीं है। यह हम जान लें। पितामह भीष्म तो अपने पिता शन्तनु के दिये वर के कारण स्वच्छन्दमृत्यु (अपनी इच्छा के अनुसार मरनेवाले) हैं सारे जगत् का नाश होने तक अश्वत्थामा का मरण न होगा, वह अस्त्रज्ञों में श्रेष्ठ है। मृत्युभय तो कृपाचार्य को कभी स्पर्श भी न करेगा क्योंकि वे ब्रह्मज्ञों में प्रमुख हैं और सत्तम हैं। कर्ण भी मृत्युभय से विहीन है क्योंकि उसके पास इन्द्र की दी हुई शक्ति है। हम

अल्ललकन्नु तेळिञ्ञोरु पाण्डवर्
कल्याणमुळ्क्कोण्टिरुन्नारतुकालं । ३१
नल्ल कथयितु मेलिले चोल्वने-
न्नुल्लासमोटिरुन्नाळ् पैङ्किळिमकळ् । ३२

विराटं समाप्तं

सोचें, इस प्रकार के दिव्य पुरुषों का हम कैसे निग्रह करें ?" 'मल्ल के शत्रु माधव ही हमारी एकमात्र सद्‌गति हैं', यह सोचकर दुःख दूर करके प्रसन्न होकर पाण्डव उन दिनों सुख से रहे । "यह एक अच्छी कथा है । आगे भी कहूँगी" । २४-३२ शुकी ने सोल्लास ऐसा कहा ।

विराटपर्व समाप्त

उद्योगं

ओरोरो कथकळ् नी चोन्नतु केळ्क्कुंतोरुं-
मारोमल्क्किळिप्पेण्णे ! पारमुण्टानन्दमो १
वीरन्माराय पाण्डुजातन्मारेन्तु पिन्ने-
द्धीरतयोटु चेय्ततोक्क नी पऱयेणं । २
ओक्कवे पऱवतिनोट्टुमे कालं पोरा
सल्क्कथयल्लोयेन्नालोट्टोट्टु चोल्लीटुवन् । ३
धर्म्मजादिकळुटे वार्त्तकेट्टुळ्ळुन्नळिळ
निर्म्मलन् निखिललोकैकनायकन् कृष्णन् । ४

उद्योगपर्व

हे अतिप्रिय शुकि ! तुम्हारी कही विविध कथाओं को सुनते-सुनते बड़ा आनन्द प्राप्त होता है । वीर पाण्डवों ने तदनन्तर धैर्य के साथ क्या-क्या किया, वह सब सुना दो । "पूरी कथा सुनाने के लिये समय कम है । कथा तो बहुत अच्छी है । इस लिए थोड़ा-थोड़ा कहदूंगी" । युधिष्ठिर आदियों का वृत्तान्त सुनकर निर्मल मन वाले और समस्त लोकों के एकमात्र नायक कृष्णजी पधारे । जो उनके चरणयुगल का ध्यान करते रहते हैं उनके दुःखों को दूर करके उनको मंगल देनेवाले और निरन्तर उनकी रक्षा

काल्त्तळिरिणयुळ्ळिल्च्चेर्त्तुकॊण्टिरिप्पव-
क्कार्त्तिकळखिलवुं तीर्त्तु मंगलं नल्कि ५
कात्तुकॊण्टविरतं काल्त्तळिरिणयोटे
चेर्त्तुकॊळ्ळुन्न विष्णुमूर्त्तितान् मनुष्यनाय् ६
धात्रितन् भारं तीर्प्पान् धात्रियिल् पिऱन्नवन्
नेत्रगोचरनायिट्टास्थया पाण्डवन्मार् ७
पार्त्तुनिन्नेतिरेट्टु पाद्यवुं नल्किप्पिन्ने-
ग्गात्रङ्ङळ्तोरुं नन्नाय् चेर्त्तु सन्तापं तीर्त्तु । ८
मार्त्ताण्डन्तन्नेक्कण्ट पद्मङ्ङळेन्नपोले
पार्थन्मारुटे मुखमेट्वुं तेळिञ्ञुते । ९
श्रोत्रवुं कुळुर्त्तितङ्ङन्योन्यसल्लापत्ताल्
वास्तवमायिट्टुळ्ळ वार्त्तयुं केट्टशेषं १०
पार्थन्मार् पाञ्चालनुं मत्स्यनुं मुकुन्दनुं
पेर्त्तुमङ्ङोरो कार्यं पार्त्तुपार्त्तेल्लारुमा- ११
योर्त्तु कल्पिच्चारिनिप्पार्त्तिरियातेकण्टु
पार्त्तलंतन्निल् नम्मेक्कूरुळ्ळोररियणं १२
बन्धुभूपालन्मारोटवस्थयऱियिप्पान्
कुन्तीनन्दनन् दूतन्मारेयुमयच्चुते । १३
सन्ततं चिन्तिप्पवर् सन्तापं कळयुन्न
बन्धुवां कृष्णन्तानुं द्वारकय्क्कॆळुन्नळ्ळि । १४

करते हुए अपने चरणयुगलों के द्वारा सबका उद्धार करनेवाले विष्णुमूर्ति ही मनुष्य के रूप में पृथिवी का भार हलका करने के लिए पृथिवी पर जन्म लेनेवाले कृष्ण प्रत्यक्ष हुए और पाण्डवों ने आगे चलकर उनका स्वागत किया । १-७ और पाद्यादि भेंट करने के बाद उनका आलिंगन किया और प्रसन्न हुए । उन सबके मुख इस प्रकार खिल उठे जैसे सूर्य को देखकर पद्म विकसित होते हैं । आपस में वार्तालाप होने के बाद उनके कानों को भी प्रसन्नता प्राप्त हुई । सभी वृत्तान्त सुनने के बाद पाण्डव, पाञ्चाल, मत्स्य और मुकुन्द विविध मामलों पर विचार करने लगे और अन्त में मिलकर निर्णय किया कि अब विना विलम्ब के हमारे सभी बन्धु हमको जान लें । तब युधिष्ठिर ने स्थिति बतलाने के लिए अपने बन्धु भूपालों के पास दूत भेजे । निरन्तर ध्यान करनेवालों का दुःख दूर करनेवाले बन्धु श्रीकृष्ण भी द्वारका सिधारे । ८-१४

भगवद्वरणं

मार्त्ताण्डात्मजसुतन् तन्पिमारोट्टुंकूटि-
प्पेर्त्तु चिन्तिच्चनेरं तोन्नीतङ्ङोरु कार्यं । १
धार्त्तराष्ट्रन्मारोटु पोर् तुटङ्ङुकिल् कृष्ण-
मूर्त्तियें नमुक्कोरु बन्धुवाय् वरिक्केणं । २
धार्त्तराष्ट्रनुमोर्त्तानक्कालमिनिक्किप्पोळ्
पार्त्थन्मारोटु युद्धं वेण्टुकिल् कृष्णन्तन्नें- ३
प्पार्त्तिरियातें मुन्पे बन्धुवाय्क्कोळ्ळकवेणं ।
पार्त्थिवेन्द्रन्मारोर्त्ततऱिञ्ञु कृष्णन् मुन्पे ४
धार्त्तराष्ट्रनुं वरुं पार्त्थनुं वरुमिप्पोळ्
आस्थया पटय्क्कोन्नोक्कोण्टुपोवतिनायि । ५
अर्ज्जुनन् वरुं मुन्पे वन्नीटुं सुयोधन-
निज्जनत्तिनु कूटेप्पोकेन्नु वरुमल्लो । ६
आचारं मुन्पिल् क्षणिक्कुन्नवरोटु कूटि-
ब्भोजनत्तिनुं प्रथनत्तिनुमेन्नुण्टल्लो । ७
भक्तन्मारुटे मरुपुरत्तु पोकेन्नतु-
मेत्रयुं मटियाकुमतिनुण्टुपायवुं । ८
मुन्पिले सुयोधनन् कण्टु चोल्लरुतेन्ना-
युन्पर्कोन् निद्रागृहं प्रापिच्चानतुनेरं । ९

भगवद्वरण

जब युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के साथ फिर विचार किया तब उनको एक कार्य सूझा । अगर धार्तराष्ट्रों से युद्ध करना होगा तो हमें कृष्ण को अपना बन्धु बनाना है । दुर्योधन ने भी उस समय सोचा—'अगर मुझे पाण्डवों से युद्ध करना होगा तो तुरन्त पहले ही जाकर कृष्ण को अपना बन्धु बनाना है' । इन दोनों भूपालों का विचार कृष्ण ने पहले ही जान लिया। अब मुझे अपनी सेना में शामिल करने के लिए दुर्योधन आयेगा और अर्जुन भी आयेगा । अर्जुन से पहले ही सुयोधन आजायगा और मुझे उसके साथ जाना पड़ेगा । आचार तो यही है कि भोजन में और युद्ध में जो पहले निमन्त्रण देता है उसी के साथ जाना चाहिये । १-७ अपने भक्तों के विरुद्ध पक्ष में जाने में बहुत अनिच्छा प्रतीत होगी । अब एक उपाय है । "यह न होना चाहिये कि सुयोधन पहले ही दर्शन करके बुला ले" ।

राजसिंहासनवुं तलय्क्कल् वय्पिच्चुटन्
व्याजनिद्रयुं पूण्टु किटन्नु भगवानुं । १०
अन्नेरं नागद्ध्वजन् वन्नु चोदिच्चानल्लो
निन्नोरु कृष्णभृत्यन्मारोटु कनिवोटे । ११
माधवनॆविटत्तु चॊल्लुविनॆन्ननेरं
नाथनुं पळ्ळिक्कुरुप्पॆन्नवरुरचॆय्तार् । १२
धार्त्तराष्ट्रनुमहो निद्रवेलयो कृष्ण-
नोर्त्तिरुन्नितु मुन्पे ञानितॆन्नुरचॆय्तान् । १३
ऎङ्किलुं नमुक्कङ्ङु चॆल्लरुतॆन्निल्लल्लो
शङ्कितनल्लल्लो ञानॆन्नवनकं पुक्कान् । १४
ञानत्रे मुन्पिल् वन्नतॆन्नतु वन्नुवल्लो
नूनमॆन्नोटुकूटॆप्पोरिकॆन्नते वरू । १५
निद्रय्क्कु भंगं वरुत्तीटरुतॆन्नुकण्टु
भद्रमां सिंहासनं पुक्कितु सुयोधनन् । १६
अप्पोळुतमरेन्द्रपुत्रनुं वन्नानल्लो
विभ्रमत्तोटु चोदिच्चीटिनान् धनञ्जयन् । १७
उळ्ळूविल् विळङ्ङुमॆन् चिल्पुमानॆङ्ङु चॊल्वि-
नुल्पलेक्षणभृत्यन्मारवनोटु चॊन्नार् । १८
लोकनायकन् पळ्ळिक्कुरुप्पुकॊळ्ळुन्नितु
नागकेतनन् पळ्ळियरयिलुण्टुतानुं । १९

इस विचार से भगवान् अपने शयनगृह चले गये। और राजसिंहासन को सिरहाने रखवाकर व्याजनिद्रा (बहाने की नींद) में लेट गये। उसी समय नागध्वज (दुर्योधन) पहुँचा और उसने कृष्ण के भृत्यों से प्रेम से पूँछा—"माधव कहाँ हैं, बतलाइये"। उन्होंने उत्तर दिया— "नाथ निद्रा में हैं"। सुयोधन ने कहा— "क्या सोना ही कृष्ण का काम है ? मुझे यह पहले ही से मालूम था। मेरे वहाँ जाने में तो कोई आपत्ति नहीं है, मैं तो शङ्कास्पद व्यक्ति नहीं हूँ ?" यह कहकर वह अन्दर गया, "मैं ही पहले आया, इतना तो सिद्ध हो जायगा और उनको मेरे ही साथ जाना पड़ेगा"। ८-१५ ताकि निद्राभंग न हो, सुयोधन भद्र सिंहासन पर बैठ गया। उसी समय अमरेन्द्र (इन्द्र) के पुत्र अर्जुन पधारे और घबड़ाते हुए उन्होंने पूँछा— "मेरे मन में विराजमान चित्पुरुष कहाँ हैं ?" तब कमललोचन कृष्ण के भृत्यों ने उत्तर दिया— "लोकनायक निद्रा में हैं और नागकेतन (सुयोधन) शयनगृह में ही हैं"। यह सुनकर पार्थ ने शयनगृह

ऍन्नतु केट्टु पळ्ळियऱयिल् पुक्कान् पार्थन्
वन्दिच्चु तृक्काक्कल् निन्नीटिनान् भक्तियोटे । २०
जृंभितभावत्तोटे मॆल्लवेयुणर्न्नीट्टु
जंभारिपुत्रन्मुखत्तुटने तृक्कण्पार्त्तु । २१
वन्नितो भवानहो मुन्नमे ञानो निद्र
वन्नतु कॊण्टु बोधं मऱन्नेनॆन्नु नाथन् । २२
मन्दहासवुं चॆय्तु मन्दमायरुळ्चॆय्तु
इन्द्रनन्दनन्तानुं कण्णुकॊण्टुर्णत्तिनान् । २३
ज्येष्ठनुमनुजनुं कूटियुळ्ळतुनेरं
ज्येष्ठनोटल्लो मुन्पिलरुळ्चॆय्येण्टू नूनं । २४
उपधानत्तिन्मेल् तन् मुळ्कैयून्नित्तिरि-
ञ्ञुपपर्यङ्कं वाळुं नृपनोटरुळ् चॆय्तान् । २५
कष्टं ! ञानुऱङ्ङियालेतुमॊन्नऱियुन्नी-
लॊट्टु मुन्नमे भवान् वन्नितो शिवशिव ! २६
इष्टन्मारायुळ्ळवर्क्कुणर्त्तामॆन्नुण्टल्लो
ऒट्टुमाकाञ्ञु भवानिळक्कातिरुन्नतुं । २७
अत्रयुमळकिनोटॊक्क वन्नतुमिनि-
स्निग्धन्माराय निङ्ङळ् तम्मिल् कैपिटिक्कणं । २८
अन्योन्यमाश्लेषं चॆय्तॊन्निच्चु वसिक्कण-
मॆन्नॊल्लां निनच्चल्ली निङ्ङळॊन्निच्चु वन्नु ? २९

में प्रवेश किया और कृष्ण के चरणों में भक्ति के साथ प्रणाम करके खड़े हो गये। अँगड़ाई सी लेते हुए धीरे-धीरे जागने के बाद कृष्ण की दृष्टि जंभारिपुत्र (अर्जुन) के मुख पर पड़ी। तब नाथ ने कहा— 'क्या आप पहले आये हैं ? मुझे तो नींद आ गयी। इस लिए मैं सो गया'। १६-२२ अर्जुन ने मुस्कराकर धीरे-धीरे बोलते हुए अपनी आँखों से सभी बातें बतला दीं ! । सुयोधन ने कहा, "जब बड़ा भाई और छोटा भाई दोनों साथ हैं तब निस्सन्देह आपको बड़े भाई से पहले बोलना चाहिये"। तब कृष्ण तकिये पर हाथ टेककर घूमे और सिंहासन पर बैठे राजा को देखकर कहा— "मुझे खेद है ! जब मैं सो जाता हूँ तो मुझे कुछ भी नहीं मालूम होता है, क्या आप पहले ही आ गये हैं ? शिव शिव ! मित्र लोगों को तो जगाने का भी अधिकार है परन्तु आपने कुछ न किया चुप बैठे रहे ! कैसा सौभाग्य है कि आप दोनों आये हैं ! अब आप दोनों सुहृदय आपस में हाथ मिलाइये। दोनों आपस में छाती लगाकर साथ रहिये। यह सब सोंचकर

ऒन्नुमेयऱियातॆ चॊन्नतॆन्तॆन्नु भावि-
च्चवन्नेरं धृतराष्ट्रनन्दननुरचॆय्तान् । ३०
वन्नतु पटय्क्कु पोरेणमॆन्नतिनिप्पो-
ळॆन्नोटुकूटिप्पोन्ने मतियावितु ञानो ३१
मुन्ने वन्निरिक्कुन्नतॆन्नतु केट्टु नाथन्
मुन्नं ञान् कण्टु पार्थन्तन्नॆयॆन्नरियेणं । ३२
मुन्ने वन्नितु भवानॆन्नतु नूनमल्लो
ऎन्नतुकॊण्टु भेदमिल्लॆनिक्करिञ्ञालुं । ३३
मन्नवन्मारे ! ञानुण्टॊन्नु चॊल्लुन्नतिप्पो-
ळॆन्नतु केट्टु चिन्तिच्चॊत्ततु चॆय्क निङ्ङळ् । ३४
मत्सरादिकळिनिक्किल्लॆन्नु सिद्धमल्लो
मत्समन्मारां नारायणगोपालन्मारुं ३५
सेनानिसमनाय सेनानि भोजन्तानु
सेनयुमॊरुत्तनु ञानेकनॊरुत्तनु ३६
ऎल्लारुमॊक्कुं निङ्ङळॆनिक्कु नृपन्मारे !
नल्लतुवरुवाने ताल्परियवुमुळ्ळु । ३७
वल्लवरोटुं कूटिप्पोरामॆन्निरिक्किलुं
वल्लभमोटु युद्धं चॆय्क ञानिल्लतानुं । ३८
चॊल्लुवानसंख्यमायुळ्ळॊरु पटयुमु-
ण्टॆल्लारुं पोरुमवरॊरुत्तरोटुं कूटि । ३९

ही आप साथ आये होंगे"। २३-२९ तब मानो उसने कृष्ण की कही कुछ भी न समझी हो इस प्रकार सुयोधन ने कहा, "मैं इसलिए आया हूँ कि आप मेरी सेना में शामिल हों और मेरे साथ अवश्य चलें। मैं ही पहले आया हूँ"। यह सुनकर नाथ बोले— "जान लीजिए कि मैंने अर्जुन को पहले देखा। आप अवश्य पहले आये होंगे परन्तु इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता है। हे भूपाल ! मैं एक बात कहूँगा। उस पर आप दोनों विचार करके जैसा उचित समझें करें। यह बात सिद्ध है कि मेरा किसी के प्रति मत्सर आदि नहीं है। मेरे तुल्य नारायण और गोपाल, सेनानी (कार्तिकेय) के तुल्य सेनापति भोज और सेना, एक के पक्ष में, और मैं अकेला दूसरे के पक्ष में। हे भूपाल ! आप सब मेरे लिए समान हैं। और मेरी इच्छा यही है कि सब ठीक हो जाय ! । ३०-३७ मैं किसी के भी साथ जाऊँगा परन्तु मैं युद्ध तो नहीं करूँगा। मेरी जो असंख्य सेना है वह सारी सेना

अन्पोटु रण्टु जनमोरिक्कल् वरिक्कुन्पोळ्
मुन्पिनालिळयवन् वेणमेन्नुण्टु आयं । ४०
कल्याणालयनाय कारुण्यमूर्त्तितन्नें-
क्कल्याणं वरुमारु कैक्कोण्टु धनञ्जयन् । ४१
मल्लारि निरायुधनेन्नोर्त्तु सुयोधनन्
चोल्लिनानेङ्किल् पटयेल्लामिन्निनिक्केन्नुं ४२
वल्लवत्तरुणिमार्वल्लभन् चिरिच्चुटन्
नल्ल सामर्थ्यमितु चोल्लियपोलेयेन्नान् । ४३
जिष्णुनन्दननाय जिष्णुविनोटुं कूटि
विष्णु कैवल्यमूर्त्ति वृष्णिकळ्कुलजातन् ४४
कृष्णनुमेळुन्नळ्ळिद्धर्म्मजन्तन्नेक्कण्टु
कृष्णयुं पाण्डवरुमतिनालानन्दिच्चार् । ४५
गान्धारीतनयनुं दूतरेययच्चितु
बान्धवन्मारायुळ्ळ मन्नवर्नाटुतोरुं । ४६
धर्म्मजादिकळ्क्केल्लामम्मामनाय शल्यर्
धर्म्मत्तिल् पिळयाय्वान् सम्मतमल्लेङ्किलुं ४७
सम्मतमिल्लातोरु पन्नगद्ध्वजनोटु
सम्मानं वाङ्ङुकयाल् नूट्टुवर्कूट्टत्तिलाय् । ४८
शल्यरुं धर्म्मसुतन्तन्नेक्कण्टुरचेय्तान्
वल्लातै वैरिकळ्क्कु बन्धुवाय् चमञ्ञु आन् । ४९

एक के साथ चलेगी। जब दो जन प्रेम से चुननेवाले हैं तो आचार यही है कि छोटा पहले चुन ले"। तब धनञ्जय ने कल्याणालय, कारुण्यमूर्ति को कल्याण होने के हेतु स्वीकार कर लिया। यह समझ कर कि कृष्ण निशशस्त्र होंगे, सुयोधन ने कहा—"अच्छा! तो सारी सेना मेरी है"। गोपियों के वल्लभ ने हँसते हुए कहा— "आप बड़े होशियार हैं! जैसे कहा गया वैसे ही होगा"। ३८-४३ जिष्णु (इन्द्र) के पुत्र जिष्णु (अर्जुन) के साथ वृष्णिकुल में पैदा हुए कैवल्यमूर्ति विष्णु कृष्ण चले और युधिष्ठिर से मिले। द्रौपदी और पाण्डवों ने आनन्द का अनुभव किया। गन्धारीपुत्र (सुयोधन) ने अपने बन्धुराजाओं के देशों को दूत भेजे। युधिष्ठिर आदियों के मामा शल्य, धर्म से हटना तो नहीं चाहते थे परन्तु असम्मत सुयोधन का सम्मान प्राप्त करने के कारण सौ कौरवों के साथ हो गये। उन्होंने युधिष्ठिर से मिलकर कहा— "मैं बेबस होकर आपके शत्रुओं के पक्ष

चॊल्लिक्कॊळ्ळुक वरं वेणुन्नतिनियॆन्नान् ।
चॊल्लिनान् माद्रेशनोटन्नेरं धर्म्मात्मजन् ५०
इल्लॊरु खेदमिनिक्कॊन्निनुमॆन्नाकिलुं
चॊल्लेरुं कर्ण्णन् वन्नु पार्त्थनोटॆतिक्कुन्पोळ् ५१
तेर्विटुन्नतिल् भवान् कर्ण्णनॆट्टुषिच्चु-
टनावोळं पऱयणमॆन्नते वेण्टतुळ्ळु । ५२
ऒङ्किलङ्ङनॆ तम्मिलॆन्नरुळ्चॆय्तु शल्यर्-
तन्कळल् कूप्पि यात्रययच्चु धर्म्मात्मजन् । ५३
विप्रमामुनि वेदव्यासनुमॆळुन्नळ्ळि
विभ्रमं पोवान् भीष्मरादिकळ् केळ्क्कॆच्चॊन्नान् । ५४
अनर्थं कळवानाय् निनय्क्कयॆल्लावरुं
मनक्काण्पितिलिप्पोळॆनिक्कुण्टॊन्नु तोन्नि ५५
धर्म्मचित्तन्माराय धर्म्मजादिकळ्तम्मॆ ।
सम्मानिच्चवर् नाटु पातियुं कॊटुक्किले ५६
नन्म वन्नीटुं नाशं वन्नीटुमल्लयाय्कि-
लुन्मूलनाशं वरुं धार्त्तराष्ट्रन्मार्क्कॆल्लां ५७
इत्थं व्यासोक्ति केट्टिट्टप्पॊळे धृतराष्ट्र-
पुत्रनुमदर्ध्दराज्यं कॊटुक्कयिल्लयॆन्नान् । ५८
ऒन्नतु केट्टु मुनिश्रेष्ठनुमॆळुन्नळ्ळि
वन्नीटुमत्रे कर्म्मफलमॆन्नुरय्क्कयाल् । ५९

में आ गया हूँ । ४४-४९ जो वर आप चाहते हों सो कह दीजिये" । तब युधिष्ठिर ने माद्रेश (शल्य) से कहा— "इसमें मेरा कोई खेद नहीं है । फिर भी जब विख्यात कर्ण अर्जुन का सामना करेगा तब आप रथ चलाते समय कर्ण का जितना हो सकेगा उतना दूषण कहिये । बस, मैं इतना ही चाहता हूँ" । "अच्छा, तो यह आपस में तय है", ऐसा कहनेवाले शल्य के चरणों प्रणाम करके युधिष्ठिर ने उनको बिदा किया । ब्राह्मण महामुनि वेदव्यास भी पधारे । और भीष्म आदियों के सामने ही भ्रम दूर करने के लिए कहा— 'आप सब ऐसा उपाय सोचें कि अनर्थ न हो जाय' । मुझे अब एक बात सूझ रही है, वह यह— कि धर्मबुद्धिवाले युधिष्ठिर आदियों का सम्मान करके आधाराज्य उनको दिया जाय, तभी तो भला होगा, नहीं तो नाश हो जायगा । धार्त्तराष्ट्रों का उन्मूलन हो जायगा' । व्यास की यह बात सुनकर उसी समय सुयोधन ने कह दिया कि मैं आधा राज्य न

अक्कालं द्रुपदोपाद्ध्यायनुमजातश-
त्रुक्षितीशाज्ञयाले हस्तिनपुरं पुक्कान् । ६०
मुख्यभेदोक्ति धृतराष्ट्रर्तानरिञ्ञिट्टु
धिक्कारत्तोटु परञ्ञयच्चोरनन्तरं ६१
पाञ्चालपुरोहितन् पाण्डवन्मारोटङ्ङे-
वाञ्छितङ्ङळुं वृत्तान्तङ्ङळुमरियिच्चान् । ६२
विप्ररेयपमानं तुटङ्ङि भूपेन्द्रनु-
मिप्पोळुतधःपतनत्तिनु कालं वन्नु । ६३
पार्त्तिरियाते पटकूट्टुकेवेण्टूतव
कीर्त्तियुं जयवुमुण्टाय्वरुं नाटुं किट्टुं । ६४
सुज्ञानमुळ्ळेरु यज्ञसेनोपाद्ध्यायन्
विज्ञानि नृपन्तन्नोटज्ञानरहितमाय् ६५
वाक्कुकळरुळ्चेय्तु कालदेशावस्थयुं
भाग्यकालवुं जयलग्नवुमरुळ्चेय्तु । ६६

सञ्जयवाक्यं

सञ्जयन्तन्नोटप्पोळंबिकासुतन् चोन्ना-
नञ्जसा चेन्नु धर्म्मनन्दननोटु चोल्क । १

दूँगा । ५०-५८   यह सुनकर और यह समझकर कि कर्म का फल होगा ही, मुनिश्रेष्ठ चले गये । उस समय अजातशत्रु (युधिष्ठिर) की आज्ञा से द्रुपद का उपाध्याय हस्तिनपुर पहुँचा । जब धृतराष्ट्र ने अपमान करके उनको बिदा कर दिया तब पाञ्चाल के पुरोहित ने पाण्डवों के पास जाकर उन लोगों की इच्छाएँ और वृत्तान्त बतला दिये । अब उन्होंने ब्राह्मणों का अपमान प्रारम्भ कर दिया है, उनके अधःपतन का समय आ गया है । अब आपको बिना बिलम्ब के अपनी सेना इकट्ठा करना है । आपकी कीर्ति होगी, जय होगी और राज्य भी मिलेगा । विद्वान् यज्ञसेन (द्रुपद) के उपाध्याय ने ज्ञानी राजा (युधिष्ठिर) को अज्ञानरहित बातें बतला दीं । काल और देश की अवस्था, भाग्य का समय और विजय का लग्न, यह सब कह सुनाया । ५९-६६

सञ्जयवाक्य

अम्बिकासुत (धृतराष्ट्र) ने सञ्जय से कहा— आप जल्दी जाकर युधिष्ठिर से कहें—"हे सद्गुणों का निधि ! हे पुत्र ! सद्गुण की प्रशंसा करो,

सल्गुणनिधे ! सुता ! सल्गुणं प्रशंसिच्चु
निर्ग्गुणत्तिङ्कलाक्कि राज्यं नी नीक्कीॅळ्ळणं । २
पोरिनु तुटङ्ङातॅ पोय् वनंतन्निल् वाणु
पारातॅ गतिवरुत्तीटुकयिनि नल्लू । ३
आचार्यभूतरुळ्ळिलाधिकळुण्टांवण्ण-
माचारमुळ्ळ जनं वर्त्तिक्कुमारिल्लल्लो । ४
ॲन्नु चौल्लॅन्नु केट्टु सञ्जयन् पुरप्पॅट्टु
मन्नवन् धर्म्मात्मजन्तन्नॅयुं वन्नु कण्टु । ५
पार्त्थिवनतुनेरं सञ्जयनोटु चौन्नान्
वार्त्तकळॅन्तोन्नुळ्ळू वास्तवं परकॅटो । ६
अंबिकातनयनु सौख्यमो गान्धारिक्कुं
नन्मयो भीष्म द्रोणविदुरादिकळ्क्कॅल्लां ? ७
ॲन्तोन्नु चौल्लिविट्टतॅन्नॅल्लां चोदिच्चप्पोळ्
कुन्तीनन्दननोटु सञ्जयन्तानुं चौन्नान् । ८
स्वैरमाय् वसिक्कुन्नितॅल्लारुमिनिमेलिल्
स्वैरमाय् वरुन्नतिन्नाग्रहमुण्टु तानुं । ९
सूरिकळ्मुन्पनाय सूतन् चौन्नतु केट्टु
सूर्यजतनयनां भूपनुमुरचॅय्तु । १०
स्वैरमॅन् जनकनु तान्तन्नॅ वरुत्तेणं
स्वैरक्केटुण्टिङ्ङतिनॅत्ताय्कनिमित्तमाय् । ११

अपना मन निर्गुण में लगाओ और राज्य का त्याग करो। युद्ध की तैयारी न करके वन चले जाओ। और जल्दी अपनी गति प्राप्त करना ही अच्छा होगा। जो आचार का पालन करते हैं उनका ऐसा बर्ताव नहीं होता जिससे अपने आचार्य-तुल्य जनों के दिल में दुःख हो जाय"। ऐसा जाकर कह दीजिये। यह सुनकर सञ्जय चले और आकर उन्होंने राजा युधिष्ठिर का दर्शन किया। तब राजा ने सञ्जय से कहा— "क्या समाचार हैं ? सच बतला देना। क्या अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) अच्छे हैं और गान्धारी भी ? और भीष्म, द्रोण, विदुर आदि कुशलपूर्वक हैं ? क्या सन्देश भेजा है ?" जब इस प्रकार प्रश्न पूँछा तब सञ्जय ने कुन्तीपुत्र से निवेदन किया। १-८ "सब सुख से रह रहे हैं और चाहते हैं कि आगे भी सब ठीक ही रहे"। सूरियों के नेता सञ्जय ने जब ऐसा कहा तब राजा युधिष्ठिर ने निवेदन किया। "मेरे ताऊजी की शान्ति आप ही को बनाना होगा। मेरा खेद

संन्यसिक्केणं ञङ्ङळेङ्किले सुखं वरू
मन्नवनुळ्ळिलेन्नु ञानऱिञ्ञिरिक्कुन्नु । १२
ॲन्नतु चॊल्वानल्ली वन्नतु भवानिप्पोळ्
मन्नवनियोगत्तालेन्नु शङ्किक्कुन्नेन् ञान् । १३
वैषम्यमितिनुण्टु राजसूयं चेय्तेन् ञान्
दोषमुण्टग्नित्यागं चेय्तालुमेन्नु केळ्प्पू । १४
ॲन्नालो ञानो कॊळ्ळां संन्यासमेन्नाकिलुं-
पिन्नेयुं वैषम्यमुण्टेन्ततेन्नुरचेय्यां । १५
ञान् तन्ने संन्यसिच्चाल् तातनु पोरायल्लो
कौन्तेयन् भीमन्कूटे संन्यसिक्किले पोरू । १६
ॲन्नतिन्नष्टग्रासि संन्यासि भीमसेन-
निन्नुळ्ळजनङ्ङळिलेत्रयुं बहुभोक्ता । १७
इन्द्रपुत्रादिकळुमिन्द्रियवशगन्मा-
रेन्नतिल्परमुण्टु पिन्नेयुमॊरु दण्डं । १८
शूद्रनां विदुररुंकूटे संन्यसिक्केणं
रौद्रकर्मङ्ङळित्थं चेय्किलुं मतिवरा । १९
ॲन्निव निरूपिच्चु ञानिव चेय्यायिन्नु
पिन्नेयुं चॊल्लेन्तोन्नु चॊल्लिविट्टतु तातन् ? २०
चॊल्लिविट्टवस्थकळॆल्लामे केळ्क्कयेङ्किल्
नल्लतु निङ्ङळ्क्किन्नु काननवासं तन्ने । २१

है कि मैं कर नहीं पा रहा हूँ। मैं पहले ही जानता हूँ कि हम लोग संन्यास लें तभी तो उनका सुख होगा। यही उनकी अभिलाषा है। मेरी शङ्का यह है कि इसी को कहने के लिए राजा की आज्ञा से आप यहाँ पधारे हैं। परन्तु इसमें कठिनाई यह है कि मैंने राजसूय किया है और कहते हैं कि अग्नित्याग करने में दोष है। ९-१४ अगर मैं संन्यास ले भी लूँ फिर भी कठिनाई होगी। वह क्या है मैं बतलादूँगा। मेरे अकेले संन्यास लेने से ताऊजी तृप्त न होंगे। कुन्तीपुत्र भीम भी संन्यास ले तभी तो पर्याप्त समझेंगे। वह तो सबसे अधिक खाने वाला है। वह अष्टग्रासि संन्यासी कैसे हो जाय? इन्द्रपुत्र आदि तो इन्द्रियों के वशीभूत हैं, यह एक उससे भी बड़ी कठिनाई है। शूद्र विदुरजी को भी संन्यास लेना पड़ेगा। इन रौद्रकर्मों के किये जाने पर भी तृप्ति न होगी। यह सब सोचकर मैं यह नहीं कर सकता हूँ। अब कहिये ताऊजी ने और क्या सन्देश भेजा है?"

पातकहरङ्ङळां तीर्त्थङ्ङळाटिक्कोळ्क
पातिनाटिनिक्किट्टुमेन्नतु भाविक्केण्ट । २२
सञ्जयन् पर्ञ्ञतु केट्टु धर्म्मजन् चोन्नान्
मञ्जुळमाय वाक्कु केट्टिट्टु सुखं वन्नु । २३
अद्धराज्यत्तिल् कोतियिल्लिनिक्कोन्नुकोण्टुं
युद्धं चेय्तोरु पुरमोट्टुङ्ङश्शेषिच्चवर् २४
नाटितु परिपालिच्चीटुकेन्नते वरू
पारातेयङ्ङुचेन्नु सञ्जया ! पर्ञ्ञालुं । २५
धर्म्मजन् पर्ञ्ञतु केट्टु सञ्जयन् चोन्नान्
नन्म वन्नीटुंनाळे नल्लतु तोन्निक्कूटू । २६
धार्त्तराष्ट्ररुं भीष्मद्रोणकर्णादिकळुं
पोर्त्तलवन्माराय मट्टुळ्ळ बन्धुक्कळुं २७
ओक्कवे मरिच्चु नी नाटुवाणिरिक्कुन्पो-
ळुळ्क्कान्पिलुळ्ळ सुखमेन्तेन्नु पर्ञ्ञालुं । २८
चिन्तिक्क राज्यं लभिच्चीटिनालुळ्ळ फलं
बन्धुक्कळुटे सौख्यं वन्नुकूटुकयल्ल । २९
पिन्नेयुं जरानराशोकङ्ङळ् पोन्नुवन्नु
मन्नवा ! मरिच्चुपोकेन्नि मट्टेन्तोन्नुळ्ळु ? ३०

सञ्जय ने कहा— "अगर आप सब सुनना चाहते हैं तो निष्कर्ष यह है कि आप लोगों के लिए वनवास ही ठीक होगा। १५-२१ पापों का नाश करनेवाले तीर्थों की यात्रा करो और इस आशा में न रहो कि आधा राज्य मिलनेवाला है"। सञ्जय की बात सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— "आपकी मीठी बातें सुनकर आनन्द हुआ। मुझे तो आधे राज्य का लालच हरगिज़ नहीं है। युद्ध में एक पक्ष समाप्त हो जायगा और जो बचेंगे वे इस राष्ट्र का परिपालन करेंगे, यही होगा। हे सञ्जय ! यह जाकर जल्दी उनको बतला दीजिये"। युधिष्ठिर की बात सुनकर सञ्जय ने कहा— "जब कोई अच्छी स्थिति में है तभी तो अच्छी बात सूझती है। धृतराष्ट्र के पुत्र, भीष्म, द्रोण, कर्ण और युद्ध के नेता अन्य बन्धु, इन सब के मरने के बाद जब तुम राज्य करोगे तो बतलाओ तुम्हारे दिल में कैसा सुख होगा। २२-२८ सोचो ! राज्य प्राप्त करने का फल तो यही है न कि बन्धुओं का सुख हो जाता है। तदनन्तर वार्द्धक्य, सफ़ेद बाल और दुःख उत्पन्न होते हैं, और हे राजन् ! मृत्यु हो जाती है। इसके अतिरिक्त

धर्म्मजनतु केट्टु मन्दहासवुं चेय्तु
सन्मार्ग्गमऱिञ्ञोरु सञ्जयनोटु चोन्नान् । ३१
पाटवं पारमुण्टु वाक्किनु निनक्कोटो
मूढन् ञान् वक्रोक्तिकळऱियप्पोकायिकलुं । ३२
वेळ्ळयिल् पऱञ्ञोरु निर्म्मलवाक्कु तन्टे-
युळ्ळिल् संग्रहिच्चुळ्ळोरर्त्थमोट्टऱिञ्ञु ञान् । ३३
केळ्क्क सञ्जयायेङ्किलूक्कुळ्ळ भीष्मादिकळ्
पोर्क्कळं तन्निल् वीणु मऱिक्कुं मटियाते । ३४
अन्धनां नरपतिनन्दनन्तनिक्कुळ्ळो-
रन्धकारङ्ङळेतुं पोकयिल्लेन्नुवन्नु । ३५
देवकीदेवि पेट्ट देवकळ्देवन् वासु-
देवनां कृष्णन् तुणयुण्टिनिक्कऱिञ्ञालुं । ३६
अन्नेरं मुकुन्दनुं सञ्जयनोटु चोन्ना
नन्नन्नु कूट्टंकूटीट्टेन्तोरु कार्यमितिल् ? ३७
ञान् तुण पाण्डवन्मार्क्कुण्टिङ्ङु नाशं तीर्प्पान्
गान्धारीसुतन्मारुं बन्धुवर्ग्गवुमेल्लां ३८
कालन्टे पुरिपुक्कु कळिच्चुवसिच्चीटुं
कालं वैकाते चेन्नु सञ्जया ! पऱञ्ञालुं । ३९
चोल्लुवनेल्लामेङ्किल् पोकुन्नेनिनियेन्नु
मेल्लवे यात्र चोल्लि नटन्नानवन्तानुं । ४०

क्या है ?" यह सुनकर युधिष्ठिर मुस्कराये और सन्मार्ग जाननेवाले सञ्जय से बोले— "आप बोलने में बहुत ही चतुर हैं और मैं तो मूर्ख हूँ। यद्यपि मैंने वक्रोक्तियाँ नहीं समझीं तथापि आपकी सीधी और निर्मल बातें मैंने समझ लीं हैं। फिर भी हे सञ्जय ! सुन लीजिये। शक्तिशाली भीष्म आदि रणभूमि में गिरकर बिना हिचक के मरेंगे। २९-३४ अन्धे राजा के पुत्र के अन्धकार नहीं दूर होंगे, यही प्रतीत होता है। जान लीजिये कि देवकी देवी के जन्मे देवों के देव वासुदेव कृष्ण मेरे सहाय हैं"। इस समय मुकुन्द ने भी सञ्जय से कहा— "प्रतिदिन आपस में सलाह करने से क्या लाभ है ? मैं पाण्डवों की हानि से बचने में सहायता करूँगा, गान्धारी के पुत्र और उनका बन्धुवर्ग यमपुरी में प्रवेश करके वहाँ की लीलाएँ करेंगे। हे सञ्जय ! बिना विलम्ब के जाकर सब कह दो। मैं सब बतला देता परन्तु मैं जा रहा हूँ"। यह कहकर (माधव) बिदा हुए और चले

सञ्जयन् नृपनोटु नाळे ञान् चॊल्वनॆन्नाल्
कञ्जलोचननरुळ्चॆय्ततुमॆन्नानवन् । ४१

विदुरवाक्यं

चिन्तिच्चु धृतराष्ट्रन् विदुररुतन्नॆ नोक्कि
वॆन्तुरुकुन्नु मनं निद्रयिल्लेतुमॆन्नान् । १
नल्लतु चॊल्लीटणं निन्नुटॆ वाक्कु केट्टा-
लल्ललुण्टाकयिल्ल चिन्तयुमिल्लातॆयां । २
निद्रयिल्लाय्ककॊण्टु सङ्कटं पारमुण्टु
भद्रमॆन्ततिनॆन्नु चिन्तिच्चु चॊल्लेणं नी । ३
विदुररतु केट्टु मनसि निरूपिच्चु
मतिमानाय नरपतियोटुरचॆय्तु । ४
बलवान्तन्नालभियुक्तनाय् चमञ्ञोरु
बलहीननुं वृत्तिसाधनविहीननुं ५
हृतद्रव्यनुमतिकामिक्कुं तस्करनुं
क्षितिनायका ! निद्रयिल्लॆन्नु केळ्प्पू ञानो । ६
इङ्ङनॆयुळ्ळ दोषमॊन्नुमिल्लल्लो भवा-
नॆङ्ङनॆ पिन्नॆ प्रजागरत्तिन्नवकाशं ? । ७

गये । सञ्जय ने राजा (युधिष्ठिर) से कहा— "जो कुछ कृष्ण ने कहा वह मैं कल जाकर कह दूँगा" । ३५-४१

विदुर के वाक्य

धृतराष्ट्र चिन्तित हुए और विदुर की ओर देखकर बोले— "मेरा मन जल रहा है । नींद बिलकुल नहीं आती है । मुझे सदुपदेश दे दो । तुम्हारी बात सुनकर दुःख नहीं होगा और चिन्ता नष्ट हो जायगी । नींद न आने के कारण पीडा बहुत है । इसके लिए क्या करना चाहिये, सोचकर बतलाओ ।" यह सुनकर विदुर ने सोचकर बुद्धिमान् राजा से निवेदन किया । हे भूपाल ! मैंने सुना है कि जो बलवान् के द्वारा अभियुक्त किया गया हो, बलहीन हो, जिसका जीविका का साधन न हो, जिसका अर्थ छीना गया हो, अतिकामी हो या चोर हो, उसको नींद नहीं आती है । १-६ आप में इस प्रकार का कोई दोष नहीं है तो फिर नींद क्यों नहीं आती है ? क्या परद्रव्य को छीन लेने का बड़ा मोह भीतर पैदा होने के कारण तो यह नहीं हो रहा है ? सारे विश्व को अपने वश में लाकर राज करने के लिए तुमने और तुम्हारे पुत्रों ने समस्त

परद्रव्यत्तॆत्तनिक्कटक्किकक्कॊळ्वानुळ्ळिल्
पॆरुत्त मोहमुण्टाय्वरिकक्कॊण्टल्ललली । ८
विश्वत्तॆयटक्कि रक्षिच्चु वाणीटुवानाय्
निश्शेषतरराजलक्षणसन्पन्ननां । ९
धर्म्मनन्दननोटु नीयुं निन्पुत्रन्मारुं
निर्म्मूलं विपरीतमायतु निरूपिच्चाल् । १०
भाग्यमिल्लाय्क तब केवलमतुमिह
योग्यमॆन्नऱिवुळ्ळोर्क्कार्क्कुमे तोन्नीलल्लो । ११
तातनॆन्नॊरु भक्तिबहुमानस्नेहङ्ङळ्
चेतसि सदाकालमुण्टाकनिमित्तमाय् १२
ऎन्तॆल्लां दुःखमनुभविच्चीटुन्नु नित्यं
कुन्तीनन्दननाय धर्म्मजन् गुरुभक्तन् । १३
ज्ञानवुं तितिक्षयुं धर्म्मवुं वाक्शान्तियुं
दानवुमित्यादिकळाकिय गुणमॆल्लां १४
इल्लात सुयोधनकर्ण्णसौबलादिकळ्-
क्कल्लो नी राज्यैश्वर्यं कॊटुत्तु भोगत्तिनाय् । १५
ऒरु वंशत्तिङ्कल्निन्नुण्टाय जनङ्ङळिल्
पॆरिकॆ गुणवान्मार् चिलर् दुष्टन्मार् चिलर् १६
ऎन्नुण्टो वरुन्नतॆन्नोर्क्कॆण्टा भवानिति-
न्नॊन्नुण्टु परयुन्नु ञानतिन्नुपमयाय् । १७
तच्चन्मार् वनभुवि चॆन्नुटन् नोक्कियॊरु
वृक्षत्तॆ वॆट्टिक्कुऱच्चतिनॆक्कॊण्टुतन्ने १८

राजलक्षणों से सम्पन्न युधिष्ठिर से सोचो तो बिना कारण विरोध पैदा कर रखा है। यह तुम्हारा दुर्भाग्य है कि यह बात यहाँ के कार्याकार्य के जानवालों से किसी को भी न सूझी। तुम्हारे प्रति, ताऊ होने के नाते दिल में सदैव भक्ति, बहुमान और स्नेह होने के कारण गुरुभक्त कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर प्रतिदिन क्या क्या दुःख अनुभव कर रहे हैं! ७-१३ ज्ञान, तितिक्षा, धर्म, वाग्मिता दान आदि विविध गुणों से रहित सुयोधन, कर्ण, सौबल जैसे लोगों को ही तुमने भोगने के लिये राजैश्वर्य दिया है। एक ही वंश के पैदा हुए व्यक्तियों में कई गुणवाले हों और कई दुष्ट हों यह कैसे हो सकता है? तुम इस प्रकार न सोचो। मैं एक उदाहरण बतलाता हूँ। जब बढ़ई लोग वन जाते हैं और ठीक

कट्टोटं मरक्कोट्ट तोणियुमुलक्कयु-
मोट्टेटंकोण्टु यागपात्रङ्ङळाय् मेवीटुं १९
स्रुववुं जुहुवुमित्यादिकळ् पणिच्चेय्युं
नृवरशिखामणे ! केळ्क्कणमतुपोले । २०
ओरुवन्तन्टे पुत्रन्मारायिट्टुण्टाय्वन्न
पुरुषन्मारुं वरुमीवण्णमरिञ्ञालुं । २१
अत्यर्थं प्रशस्तङ्ङळायव सेविच्चीटुं
नित्यवुं निन्दितङ्ङळायव वर्ज्जिच्चीटुं २२
अश्रद्दधाननल्ल नास्तिकत्ववुमिल्ल
विद्वानाकुन्नतवन् पण्डितनरिक नी । २३
क्रोधदर्प्पादि हर्षस्तंभलज्जादिकळा-
लेतुमे विघ्नं कार्यसाद्धयत्तिनुण्टाकाते २४
स्वच्छमामात्मावोटु मान्यमानित्वंकोण्टु
निश्चलनाकुन्नवन् पण्डितनरिक नी । २५
शीतोष्णभयरति समृद्धिदारिद्रयादि-
हेतुना कृत्यत्तिनु भंगत्ते वरुत्ताते २६
नित्यवुं कर्त्तव्यानुष्ठानं चेय्तीटुन्नवन्
विद्वानेन्नयुमवन् पण्डितश्रेष्ठनल्लो । २७
नष्टमायतु चिन्तिच्चेतुमे दुःखियाते
तुष्टनाय प्राप्यमायुळ्ळतु कामियाते २८

से देखकर एक पेड़ को काटते हैं तो उसके एक भाग से काठ के घड़े, नाव, मुसल आदि बनाते हैं और दूसरे भाग से यज्ञ के पात्र स्रुव, जुहू आदि बनाते हैं, उसी प्रकार, हे भूपालवर ! यह भी होता है । १४-२० जानलो कि एक ही व्यक्ति के पुत्रों में इस प्रकार के भेद हो जाते हैं। जो अत्यन्त स्तुत्य कार्य हैं उनका सेवन करनेवाला, निन्दित कार्यों का सदैव वर्जन करने वाला, श्रद्धायुक्त, और नास्तिकत्व से हीन, और विद्वान्, ऐसा व्यक्ति ही पण्डित है, जान लो। और यह भी जान लो कि वही पण्डित है जो अपने क्रोध, दर्प, हर्ष, स्तंभ, लज्जा आदि से कार्य-सिद्धि का कभी विघ्न नहीं पैदा करता है और अपनी स्वच्छ आत्मा के द्वारा और अपने मान्य-मानित्व के द्वारा निह्वल रहता है । शीत, उष्ण, भय, रति, समृद्धि, दारिद्र्य, इन के कारण जो कर्तव्य का भंग नहीं होने देता है, जो सदैव कर्तव्यानुष्ठान करता रहता है वही विद्वान् है, वही पण्डितों में श्रेष्ठ है । २१-२७ जो नष्ट वस्तु के पीछे दुःख नहीं करता है और सन्तुष्ट होकर अप्राप्य वस्तु की अभिलाषा

आपत्तुवरुंकालमेतुमे मोहियातॆ
तापत्तॆस्सहिप्पवन् पण्डितनङिक नी । २९
कालत्तॆ निरूपिच्चु कल्पिच्चु निश्चयिच्चो-
रालस्यं मद्धचे तुटङ्ङीटातॆ कर्म्मं चॆय्तु ३०
कालवुमवन्ध्यमाक्किक्कॊण्टु वश्यात्मावाय्
पालिच्चु पुरुषार्त्थं वाणीटुन्नवन् विद्वान् । ३१
अन्यायकर्म्मं वाचा मनसा चॆय्यातॆक-
ण्टन्येषां हितत्तिङ्कलीर्ष्ययुमुण्टाकातॆ ३२
आर्य्यकर्म्मणि रञ्जिच्चेद्रिय सत्क्कर्मणा
धीरनायिरिप्पवन् पण्डितनङिक नी । ३३
सम्मानत्तिङ्कलुळ्ळल् सम्मोदमुण्टाकातॆ
निर्म्मूलमवमानत्तिङ्कलुं खेदियातॆ ३४
अक्षोभ्यनायिग्गंगतन्निलॆ ह्लदंपोलॆ
रक्षिच्चु धर्म्मत्तॆयुं वाणीटुन्नवन् विद्वान् । ३५
संप्रवृत्तोक्तिमानाय् विचित्रकथनुमाय्
संप्रति दानवानाय् शुद्धोक्तिवक्तावुमाय् ३६
ऊहापोहादिकळिल् चतुरहृदयनाय्
माहात्म्यत्तोटु वाणीटुन्नवन् महाविद्वान् । ३७
सकलभूतङ्ङळ्क्कुमॆत्रयुं मनोज्ञनाय्
सकलकर्म्मङ्ङळ्क्कुमुचितयोगज्ञनाय् ३८

नहीं रखता है और दुःख सह सकता है, वही जानलो पण्डित है। जो समय के अनुसार अपना कार्य निश्चित करता है और बीच में असल न होते हुए उसे करता रहता है और समय को व्यर्थ न बिताते हुए अपने को वश में रखते हुए पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करता है वही विद्वान् है। जो बात से या मन से न अन्याय करता है और अन्यों के हित से न जलता है आर्य कर्म्मों में ही तत्पर होकर सत्कर्म करता रहता है और सदैव धीर होता है, वही, जानलो, पण्डित है। २८-३३ सम्मान होने पर जिस को प्रमोद न होता हो और अवमान हो जाने पर जो व्यर्थ खेद न करता हो, जो गंगा के ह्लद के समान अक्षोभ्य रहता है और धर्म की रक्षा करते हुए रहता है वही विद्वान् है। जो समयोचित बात करता है और सरस बात करता है जो तत्क्षण ही देने वाला है, शुद्ध बात कहने वाला है जो ऊह और अपोह में चतुर है और अपने माहात्म्य के साथ रहता है वही विद्वान् है।

सकल पुरुषरिल्वच्चुपायज्ञनुमाय्
सकल विज्ञानियायुळ्ळवन् महाविद्वान् । ३९
प्रज्ञानुगतमाय विश्रुतमुण्टु पिन्ने
प्रज्ञयुं श्रुतानुगयांवण्णमुण्टुतानुं ४०
असंभिन्नार्यजनमर्यादयोटुं नित्य-
मसन्दिग्धात्मावायुळ्ळवन् महाविद्वान् । ४१
अर्त्थमाकिलुं बलालैश्वर्यमेन्नाकिलुं
विद्ययाकिलुं तनिक्केऱियोन्नुण्टायवन्नाल् ४२
अेन्नयुं विनीतनायसमुन्नद्धनाय
विद्वानु समन्मारायिल्ल विद्वान्मारारुं । ४३
अश्रान्तं दरिद्रनायुळ्ळवन् महामन-
स्सश्रुतनायुळ्ळवनत्यर्त्थं समुन्नद्धन् ४४
अर्त्थाश पारं प्रवर्त्तिक्कयिल्लेतुं तानु-
मेन्नयुं मूढनवनेन्नल्लो बुधमतं । ४५
अर्थत्तेत्तनिक्कुळ्ळतळिच्चु परमार्त्थमाय्
मित्रार्त्थं मिथ्याचारं चेय्युन्नतवन् मूढन् । ४६
तन्नेक्कामिच्चिटात नारियेक्कामिक्कयुं
तन्नेक्कामिच्चवळे तान् परित्यजिक्कयुं । ४७
तन्नेक्काळ् बलवानोटेरे मत्सरिक्कयुं
तन्नेत्तानऱियाते चेय्तीटुन्नवन् मूढन् । ४८

जी सभी प्राणियों का अत्यन्त अनुकूल हो, सभी कार्यों में योगदान देने वाला हो और जो सभी विज्ञान जानता हो वही महाविद्वान् है । ३४-३९ जो अपनी प्रज्ञा के अनुसार अध्ययन करता है और जिसका अध्ययन के अनुसार वैदुष्य हो, जो आर्य मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं करता है और जो संशयात्मा नहीं है, वही महाविद्वान् है । अर्थ या ऐश्वर्य, या विद्या की पराकाष्ठा तक पहुँचने पर भी जो अत्यन्त विनीत और अनुद्धत विद्वान् हो उसके समान और कोई विद्वान् नहीं है । जो अत्यन्त दरिद्र हो और साथ साथ महामना हो जो बिलकुल अनपढ़ हो और घमण्डी भी हो अर्थ की इच्छा से जो कभी प्रेरित न होता हो ऐसा व्यक्ति मूर्ख है, यही बुधों का मत है । अपने अर्थ की पर्वा न करके जो मित्र के लिए मिथ्याचार करता है वह मूढ़ है । ४०-४६ जो प्रेम नहीं करती है उस से प्रेम करने वाला, जो प्रेम करती है उसका त्याग करने वाला, अपने से शक्तिशाली के साथ विरोध करने वाला

मित्रत्तॆ द्वेषिप्पानायमित्रं मित्रमाक्कि
प्रत्यहं दुष्टकर्म्मं चॆय्तीटुन्नवन् मूढन् । ४९
उळ्प्पूविल् कृत्यङ्ङळॆस्संशयिच्चनुदिनं
क्षिप्रार्थं कर्म्मं चिराल् चॆय्तीटुन्नवन् मूढन् । ५०
अन्यमन्दिरत्तिङ्कल् चॊल्लातॆ चॆल्लुकयुं
तन्नोटु चोदियातॆ तानॆऱिप्पऱकयुं ५१
उद्धतनायुळ्ळवन्तन्नॆ विश्वसिक्कयुं
बद्धमोदेन चय्तीटुन्नवन् महामूढन् । ५२
अन्यदोषङ्ङळ् परञ्ञेट्वुमाक्षेपिक्कुं
तन्नुटॆ वर्त्तमानमव्वण्णंतन्नॆतानुं ५३
पिन्नॆत्तानॊरुवक्कुमीशनल्लातॆयुळ्ळो-
नन्वहं कोपिक्कयुं चॆय्तीटुन्नवन् मूढन् । ५४
तन्नुटॆ बलमऱियातॆ धर्म्मार्त्थं विना
तन्नाल् साद्ध्यवुमल्लयात कर्म्मङ्ङळ् चॆय्वान् ५५
अन्नन्तु तुटङ्ङियुमन्नन्नु मुटङ्ङियुं
पिन्नॆयुमतिन्नारंभिच्चीटुन्नवन् मूढन् । ५६
शिष्यनल्लातवनॆ वॆरुते शासिक्कयुं
निस्स्वनायुळ्ळवनॆ नियतं सेविक्कयुं ५७
दुष्टनॆब्भजिक्कयुं शिष्टनॆ निन्दिक्कयुं
कष्टमोर्त्तोंळमवनॆत्रयुं महामूढन् । ५८

और अपने को भूलकर व्यवहार करने वाला मूर्ख है। जो मित्र का विरोध करने के लिये शत्रु को मित्र बनाकर प्रतिदिन दुष्ट कर्म करता रहता है और जल्दी करने लायक काम को देर में करता है वह मूर्ख है। जो औरों के घर बिना कहे जाता है जो न पूँछे जाने पर भी बोल उठता है जो घमण्डी का विश्वास करता है वह महामूर्ख है। जो औरों के दोष आरोपित करता है जब कि स्वयं उसी प्रकार का है, जिसका किसी पर भी कोई प्रभाव नहीं है और प्रतिदिन क्रुद्ध भी होता है वह मूर्ख है। ४७-५४ जो अपनी शक्ति को न जानकर, अपने से असाध्य और धर्म से न सम्बन्ध रखने वाले काम, प्रतिदिन आरम्भ करता है और उसी दिन छोड़ भी देता है और फिर प्रारम्भ करता है, वह मूढ़ है। जो निरपराधी को व्यर्थ दण्ड देता है, अकिंचन की सदैव सेवा करता है और दुष्टों की प्रशंसा और शिष्टों की निन्दा करता है, सोचो तो वह अत्यन्त मूर्ख है। स्वयं तो तृप्त होने तक खाना चाहता है और शुभ भवन में निवास करना चाहता है। पर अपने पुत्र मित्र, कलत्र और

सन्पन्नमाकुंवण्णं तनिक्कु भुजिक्कणं
शुभमन्दिरत्तिङ्कल् वासवुं चेय्तीटणं ५९
तन्नुटे पुत्रमित्रकळत्रभृत्यादिकळ्-
क्कोन्नुमे पोरुतिक्कु कोटुक्कयिल्लतानुं । ६०
अङ्ङनेयुळ्ळ नरन्तन्नोळं दुष्टनायि-
ट्टेङ्ङुमे निरूपिच्चालारुमिल्लरिञ्ञालुं । ६१
ओरुत्तन् पापकर्म्मं चेय्तीटिलतिन् फलं
परक्केयुळ्ळ महाजनङ्ङळ्क्कोक्कत्तट्टुं । ६२
कालत्ताल् मोचिच्चीटुमापत्तु मट्टुळ्ळोर्क्कुं
मेलिल् तान्तन्नेयनुभविक्कुं चिरकालं । ६३
वेगेन विल्लाळियाल् मुक्तमामस्त्रं पोय्च्चे-
न्नेकने हनिक्किलुमां हनियाय्किलुमां । ६४
तन्नुटेयात्माविने राजावु मोचिक्किलो
निर्ण्णयं सराजकं नशिक्कुं राज्यमेल्लां । ६५
ओन्निनालुरय्क्कणं रण्डिन्टे बलाबलं
पिन्ने मून्निने नालाल् वशत्तु वरुत्तणं ६६
अञ्चिनेज्जयिच्चुळ्ळिलारिनेयरिञ्ञट्टु
वञ्चनादिकळेल्लामरिनेयरिञ्ञु वळ्ळिपोले ६७
एळ्ळिनेयुपेक्षिच्चु सौख्यत्ते लभिक्कणं
केळियेरीटुं नृपन्मारायालवनियिल् । ६८
एकने हनिच्चीटुमन्ने काकोळरस-
मेकनेत्तन्नेयोरु शस्त्रवुं हनिच्चीटुं । ६९

भृत्यों को शान्ति के लिये भी कुछ भी नहीं देता है। ५५-६० ऐसे आदमी के समान दुष्ट सोचो तो कहीं भी न मिलेगा। अगर कोई पाप करे तो उसका फल चारों ओर रहने वाली जनता पर पड़ेगा। और लोग तो समय बीत जाने पर उस से मुक्त हो जायेंगे पर स्वयं को तो चिरकाल तक भुगतना पड़ेगा। धनुर्धर का छोड़ा हुआ बाण किसी को मार सकता या नहीं भी मार सकता है। राजा अगर अपनी आत्मा को छोड़ देगा तो राजा के साथ सारा राज्य नष्ट हो जायगा। पृथ्वी में अगर विख्यात राजा बनकर रहना है तो एक से दो का बलाबल जान लेना है, चार से तीन को अपने वश में लाना है, पाँच पर विजय प्राप्त कर, छः को अच्छी तरह समझ कर वञ्चना

अन्तरमेतुमिल्ल सप्रजं सराष्ट्रकं
मन्त्रविस्स्रवं राजाविनेयुं हनिच्चीटुं ७०
एकनायतिस्वादु भुजिच्चीटरुतल्लो
एकनाय् चिन्तिच्चु कलिपक्करुतोरुकार्य- ७१
मेकनाय् पेरुवऴि पोकयुमरुतल्लो
एकवेश्मनि पलरुं किटन्नुरङ्ङुन्पो- ७२
ऴेकनायुणर्न्निरुन्नीटरुतु के-
ऴेकमिन्नियुमुण्टु भूपालशिखामणे ! ७३
एकमेयुऴ्ळु पिन्ने रण्टामतिल्ल चोल्वान्
नाकलोकत्तिन्नु सोपानमाय् नरपते ! ७४
सत्यमाकुन्न वस्तु तरणिपोले पुन-
रब्धिक्कु मतिमतांप्रवर ! कुरुपते ! ७५
एकमे दोषमुऴ्ळु सन्ततं क्षमावतां
लोकरुमशक्तरेन्नाक्कुवोरोट्टुचेन्नाल् । ७६
एकमां धर्म्मं परं श्रेयस्साकुन्नतोर्त्ता-
लेकैव क्षमा शान्तियायतेन्नतु नूनं । ७७
एकैव विद्य परतुष्टियेन्नरियण-
मेकैवाहिंस सततं निजसुखावहा । ७८
रण्टु कर्म्मङ्ङळ् चेय्तुकोण्टिहलोकत्तिङ्कल्
कण्टवर् कोण्टाटुवान् कारणं महीपते ! ७९

आदि को ठीक से जानकर और सात की उपेक्षा करके सुख प्राप्त करना है। ६१-६८ साँप का विष एक को मार सकता है शस्त्र भी एक ही को मारता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन्त्रभेद प्रजा और राष्ट्र के साथ राजा का नाश करता है। किसी भी अत्यन्त स्वादु पदार्थ को अकेला नहीं खाना चाहिये। कोई भी काम अकेला सोचकर तय नहीं करना चाहिये। महामार्ग पर अकेला नहीं चलना चाहिये जब घर में बहुत लोग पड़े सो रहे हों तब अकेला जागकर उठना न चाहिये। हे भूपालश्रेष्ठ ! सुनो, एक बात और है। एक ही बात अब कहनी है, दूसरी नहीं और वह, हे भूपाल ! स्वर्ग चढ़ने के लिये सीढ़ी जैसी है। ६९-७४ हे बुद्धिमानों में श्रेष्ठ ! हे कुरुवर ! सत्य जो है वह समुद्र पार करने के लिए नाव के समान है। राजाओं का एक ही दोष होता है और वह है कि प्रजाओं को अशक्त समझना। सोचो तो धर्म ही एकमात्र परम श्रेय है और क्षमा

पारुष्यवाक्कु परयाय्कयुं दुष्टन्मारो-
टेऱ्ऱेच्चॆन्नोन्नुमर्त्थिच्चीटाते कळिक्कयुं । ८०
रण्टु जातिकळ् परप्रत्ययकारिकळा-
युण्टतु रण्टुं परञ्ञीटुवन् नरपते ! ८१
चॆल्क्कण्णारॆल्लामॊक्कक्कामितकामिनिमार्
मूर्खन्मारॆल्लामॊक्कप्पूजित पूजिकन्मार् । ८२
रण्टुण्टु शरीरत्तॆश्शोषिप्पिच्चीटुवानाय्
कण्टकजातिकळ् केळ्क्कणमो धरापते ! ८३
निर्द्धनन् कामिक्कयुमस्वामि कोपिक्कयुं
पृत्थ्वीन्द्र ! चॊल्लीटुवन् केळ्क्कणमॆङ्किलिन्नुं । ८४
रण्टुपेरुण्टल्लो स्वर्गत्तिनु मेलेलोके
कुण्ठत नीक्कि सुखिच्चीटुन्नु सदाकालं । ८५
प्रभुवाकिलुं क्षमापरनायिरिप्पोनुं
विभवहीनन् दानशीलनायिरिप्पोनुं ८६
अर्त्थत्तिन्नतिक्रममायिट्टु रण्टुण्टल्लो
नित्यं न्यायार्ज्जितमां द्रव्यमॆन्निरिक्किलुं ८७
प्रतिपत्तियुमपात्रत्तिङ्कल् पात्रत्तिङ्क-
लतिनॆप्पोलॆ पुनरप्रतिपादनवुं । ८८

ही शान्ति का एकमात्र कारण है। एक ही विद्या है और वह है औरों को सन्तुष्ट करना और सदैव सुख पैदा करने वाली एकमात्र अहिंसा है। इस दुनिया में दो बातें हैं जिन से सभी देखने वाले प्रसन्न होते हैं। कभी कठोर बातें न करना और दुष्टों से कभी बिना माँगे ही काम चला लेना। ७५-८० दो प्रकार के लोग औरों को विश्वास दिलाते हैं हे भूपाल ! मैं दोनों को बतला दूंगा। सभी तीखी आँखवालियाँ कामियों की कामिनियाँ हैं और मूर्ख सब पूजितों के पूजक हैं। शरीर को सूखा करने वाली दो कण्टकजातियाँ हैं। हे भूपाल ! क्या आप सुनना चाहते हैं ? निर्धन होकर इच्छाएँ रखना, और परतन्त्र होकर क्रोध करना। हे भूपाल ! सुनना हो तो और बतलाऊँगा। दो प्रकार के लोग हैं जो स्वर्ग से भी ऊपर के लोकों में दुःख दूर करके सुख से सदैव रहते हैं। प्रभु होकर भी जो क्षमाशील हैं और दरिद्र होकर भी जो दानशील हैं। ८१-८६ दो बातें हैं जो अर्थ के (लिये) विरोधी हैं—अपने न्याय से कमाये हुए द्रव्य को भी अपात्र को दान करना तथैव पात्र को दान न करना। इस पृथ्वी पर तीन प्रकार के

मून्नुपेरधमन्माराकुन्नितवनियिल्
मून्नुपेरेयुमहं वेव्वेरे चोल्लामल्लो । ८९
भृत्यनिल्लातवनुं पत्नियिल्लातवनुं
पुत्रनिल्लातवनुमेत्रयुं दरिद्रन्मार् । ९०
नालुण्टु राजाविनाल् वर्ज्यङ्ङळायिट्टव
नालुं पण्डितन्मारायुळ्ळवरङ्ञीटुं । ९१
अल्पप्रज्ञन्मारोटुं दीर्घसूत्रन्मारोटु-
मेप्पोऴुमलसन्मारोटुं चारणरोटुं- ९२
कूटि राजावु कार्यमन्त्रत्तेच्चेय्तीटरु-
ताटल्पूण्टुऴन्नीटुमारु वन्नीटुमेन्नाल् । ९३
नालुपेरेयुं श्रीमानाकिलो गृहस्थन्त-
न्नालयत्तिङ्कल् कूटेवच्चु पालिच्चिटेण्टू । ९४
ज्ञातियामवनतिश्रान्तनाय् वरिकिलुं
नीतिमान् कुलश्रेष्ठन् निःस्वनाय् वरिकिलुं ९५
पुत्रनिल्लेङ्किल् स्वसाविनेयुं निज सखि-
यत्यर्थं दरिद्रनाय् वरिकिलवनेयुं । ९६
पण्टु देवेन्द्रनोटाचार्यनां बृहस्पति-
युण्टु नालुपदेशं चेय्तिट्टिन्नतुं चोल्लां । ९७
देवतासङ्कल्पवुं बुद्धिमान्मारिलनु-
भाववुं विद्वान्मारोटेट्टवुं विनयवुं ९८

अधम हैं तीनों को अलग अलग बतला दूँगा। जिन के कोई भृत्य नहीं है, जिनकी पत्नी नहीं है और जिन का कोई पुत्र नहीं है, वे दरिद्र हैं। चार बातें हैं जो राजाओं के लिये वर्जनीय हैं, चारों को बुद्धिमान् लोग समझ लेते हैं। अल्पज्ञों, दीर्घसूत्रियों (हर काम में देर लगाने-वालों) सदैव आलसियों और चारणों के साथ राजा को राज्यकार्य की मन्त्रणा न करना चाहिये, नहीं तो ऐसी स्थिति हो जायगी कि दुःख से निकल न सके। ८७-९३ चार व्यक्ति हैं जिनको एक श्रीयुक्त गृहस्थ अपने ही घर में रखकर पालन करे। वे हैं-रिश्तेदार जो जीवन में अत्यन्त श्रान्त हो गया हो, अच्छे कुल का नीतिमान् जो अकिंचन हो गया हो, अपनी बहिन जिसका कोई पुत्र न हो और अपना मित्र जो दरिद्र हो गया हो। पूर्वकाल में आचार्य बृहस्पति ने देवेन्द्र को चार उपदेश दिये। उनको भी सुना दूँगा। देवताओं के प्रति श्रद्धा, बुद्धिमानों के प्रति आदर, विद्वानों के प्रति विनय और पाप कर्मों का

पापकर्म्मणां विनाशत्तेयुमिव नालुं
तापत्तेयणयाते कळञ्ञीटुवानुळ्ळू । ९९
अञ्चुण्टु रक्षिक्केण्टुमग्निकळ् गृहस्थन-
तञ्चुं वेव्वेरे केट्टुकोळ्ळुक धरापते ! १००
तातनुं जननियुमात्मावुमग्नितानुं
प्रीतनामाचार्यनुमञ्चितेन्नरियेणं । १०१
अञ्चुपेरेयुं पूजिच्चीटिन पुरुषनाल्
सञ्चितं यशस्सतेन्नरिक धात्रीपते ! १०२
भृत्यन्मार् संन्यासिकळ् देवकळ् पितृक्कळुं
नित्यमागमिच्चीटुमतिथिजनङ्ङळुं । १०३
दोषङ्ङळारुण्टकलेक्कळञ्ञीटेण्टव
दोषज्ञोत्तम ! भूमिपालक ! केट्टीटेणं । १०४
निद्रयुं तन्द्रीभयं क्रोधमालस्यं पिन्ने
प्रत्यहं दीर्घसूत्रत्वत्तेयुं त्यजिक्कणं । १०५
बुद्धिमानिवरारुपेरेयुमुपेक्षिक्कु-
मब्धियिल् संभिन्नयां तरियेप्पोलेतन्ने । १०६
अप्रवक्तावामाचार्यनेयुं सदाकाल-
मप्रियवादिनियायीटिन पत्नियेयुं १०७
अध्ययनं चेय्यात शिष्यनामवनेयुं
सत्वरमरक्षितावाय राजाविनेयुं १०८

विनाश। इन चारों को बिना दुःख प्राप्त किये त्यागा नहीं जा सकता है। पाँच अग्नि हैं जिनकी रक्षा गृहस्थ को करना चाहिये। पाँचों को हे भूपाल ! सुन लीजिये। ९४-१०० पिता, माता, आत्मा, अग्नि और प्रसन्न आचार्य, ये ही पाँच हैं, जान लीजिये। जो पुरुष इन पाँचों की पूजा करता है वही, हे भूपाल ! यश कमाता है, जानलीजिये। भृत्य, संन्यासी, देव, पितर और प्रतिदिन आने वाले अतिथि, इनका सम्मान करना चाहिये। दूर त्याग करने लायक छः दोष हैं हे दोषज्ञोत्तम ! भूपाल ! सुनलीजिये। निन्दा, तन्द्रा, आलस, भय, क्रोध, सुस्ती, और दीर्घसूत्रता, इनको प्रतिदिन त्याग करना है। बुद्धिमान् पुरुष छ व्यक्तियों की उपेक्षा करें जो समुद्र में बिगड़ी हुई नाव की तरह हैं। १०१-१०६ न पढ़ानेवाले आचार्य की, सदैव अप्रिय कहने वाली पत्नी की, न पढ़ने वाले शिष्य की, रक्षा न करने वाले राजा की, गोपाल की जो ग्रामपाल हो गया हो, और नाविक की

गोपालन् ग्रामपालनायीटिलवनेयुं
नाविकन् वनकामनायीटिलवनेयुं । १०९
आऱुण्टु गुणवुमुपेक्षिक्करुतातॆ पुंसा-
माऱुं चॊल्लुवन् सत्यं दानवुमनालस्यं ११०
अनसूययुं क्षम धृतियुमिवयॆल्लां
मनसा चिन्तचॆय्तु धरिच्चीटुकवेणं । १११
आऱुपेरुण्टु जीविच्चीटुन्नितनारत-
माऱुपेरिलुं पिन्नॆयेऴामतारुमिल्ल । ११२
तस्करन् प्रमत्तङ्कल् वैद्यन् व्याधितङ्कलुं
मैक्कण्णिमारॆल्लारुं कामयानन्मारिलुं ११३
याचकन्मारॆल्लारुं यजमानन्मारिलुं
राजावु विमदमानन्मारामवरिलुं ११४
विद्वान्मारॆल्लां नित्यमूर्खन्मारिलुमल्लो
नित्यवुं जीविक्कुन्नु भूपालशिखामणे ! ११५
दोषङ्ङळुपेक्षिक्कॆण्टुन्नव राजाविना-
लेऴुण्टु सप्तव्यसनङ्ङळॆन्नल्लो चॊल्लू । ११६
परस्त्रीजनसेव देवनं मृगययुं
विरक्तिवरातॊरु मद्यपानवुमेटं ११७
वाक्पारुष्यवुं दण्डपारुष्यमाकुन्नतुं
वाय्पोटु नित्यमर्थदूषणं चॆय्कॆन्नतुं । ११८

जो वनवासी हो गया हो। छ गुण हैं जो मनुष्य के लिये उपेक्षा करने योग्य नहीं हैं। छहों को बतलाता हूँ। सत्य, दान, अनालस्य, अनसूया, क्षमा, और धृति। इन पर ध्यान करके इनको अपनाना चाहिये। छ प्रकार के लोग हैं जो अन्य छ प्रकार के लोगों पर जीवित हैं, सातवाँ प्रकार नहीं है। १०७-११२ चोर प्रमत्त पर, वैद्य रोगी पर सभी काजल की आँखवालियाँ कामुकों पर, सभी भीख माँगने वाले यजमानों पर, राजा मदहीन और अभिमान-हीनों पर, सभी विद्वान् मूर्खों पर सदैव जीवित हैं, हे भूपाल! राजा के त्याज्य सात दोष हैं जिन को 'सप्तव्यसन' कहते हैं। परस्त्रियों की सेवा, जुआ खेलना, अतिमात्र मद्यपान जिससे विरक्ति नहीं होती, कठोर बातें करना, कठोर दण्ड देना, और ऋण ले लेकर अर्थ का नाश करना। जो राजा विनाश के निकट पहुँच रहा है उसके पहले ही से आठ लक्षण दिखाई देते

नाशं वन्नटुत्तिरिक्कुन्न राजावुतनि-
क्काशु मुन्पिले काणामॆट्टु कारणङ्ङळ् । ११९
ब्राह्मणद्वेषं मुन्पिल् ब्राह्मणविरोधवुं
ब्राह्मणस्वङ्ङळुपादानं चॆय्तीटुकयुं १२०
ब्राह्मणरॆत्तन्नॆ हिंसिक्कयुमतुमूलं
ब्राह्मणनिन्द हेतुवायिट्टु रमिक्कयुं १२१
ब्राह्मणप्रशंस केळ्क्कुन्नेरमक्षान्तियुं
ब्राह्मणरॆक्कूटातॆ कृत्यानुष्ठानङ्ङळुं १२२
ब्राह्मणरपेक्षिक्कुंनेरमभ्यसूययुं
ब्राह्मणशापत्तिनु कारणमिवयॆल्लां । १२३
आवोळं विचारिच्चु मुन्पिले कळयेण-
मावतिल्लिवयकप्पॆट्टालॊन्नाक्कुं पिन्नॆ । १२४
ऒट्टु वस्तुक्कलेट्मुण्टेटं प्रमादत्तॆ-
प्पुष्टमाक्कीटुवानाय् मर्त्यनु पृथ्वीपते ! १२५
तन्नुटॆ सखिकळोटुळ्ळॊरु समागमं
पिन्नॆयॊट्टतियायिट्टुळ्ळॊरु धनागमं १२६
धन्यनां तनयनालुळ्ळॊरु परिष्वङ्गं
सन्निपातवुं सुरतत्तिङ्कलॊरुपोलॆ १२७
कालातिक्रमविरहे निज प्रियालाभं
मालोकर् कूटुन्नेरं तम्मिले सम्मानवुं १२८

हैं। ११३-११९ पहले तो ब्राह्मणद्वेष, फिर ब्राह्मणविरोध, ब्राह्मणों की सम्पत्ति का अपहरण, ब्राह्मणों की हिंसा करना, उसके कारण ब्राह्मणों की निन्दा करने का शौक़, ब्राह्मणों की प्रशंसा सुनकर चिढ़ना, ब्राह्मणों को अलग करके कर्मानुष्ठान करना, ब्राह्मणों के याचना करने पर असूया करना ये सब ब्राह्मणशाप के कारण होते हैं। विचार करके इनको पहले ही नष्ट करना चाहिये। ये अगर किसी तरह हो गये तो कोई कुछ नहीं कर सकता है। हे भूपाल ! आठ बातें हैं जो मनुष्य के प्रमोद को अत्यन्त पुष्ट करती हैं। १२०-१२५ अपने मित्रों के साथ समागम, और अच्छी मात्रा में धनागम, अपने धन्य पुत्र से छाती लगाना सुरत में सन्तुलित तत्परता, बिना विलम्ब के अपनी इच्छा की पूर्ति, जनता जब इकट्ठा होती है तब अपना सम्मान, अपने जन्म के कारण उत्पन्न कीर्ति और अपने पहले ही अभिप्रेत वस्तु का लाभ, ये आठ वस्तुएँ, हे नरपतिकुल के मकुट के मणि ! तुरन्त ही सम्मोद की पुष्टि

तन्नुटे जातितन्नेक्कण्टुळ्ळ सन्नामवुं
तन्नाल् पण्टभिप्रेतमायतिनुटे लाभं १२९
ऐन्तिवयेट्टुं सद्यस्सम्मोदं वळर्त्तीटुं
मन्नवकुलमकुटत्तिन् नायकक्कल्ले ! १३०
क्षेत्रज्ञन्तन्नालधिष्ठितमायिरिक्कुमि-
क्षेत्रत्ते नवद्वारं पञ्चसाक्षिकमेन्नुं १३१
त्रिस्थूणमेन्नुमऱियुन्नवन् महाविद्वा-
नेन्नयुमवन् क्षेत्रक्षेत्रज्ञवेदियल्लो । १३२
पत्तुपेरुण्टु भुवि धर्म्मत्तेयऱियाते
मत्तनुं प्रमत्तनुं क्रुद्धनुमुन्मत्तनुं १३३
चिन्ताश्रान्तनुं त्वरमाणनुं बुभुक्षितन्
लुब्धनुं भीरुतानुं कामियायुळ्ळवनुं । १३४
आकयालीवण्णमल्लामुळ्ळ भावङ्ङळि-
लेकनिष्ठया विद्वानिल्लेतुं प्रमादङ्ङळ् । १३५
पुत्रार्त्थं पुरा सुधन्वाविनाल् गीतमाकुं
चित्रमामितिहासं केट्टिट्टिल्लयो भवान् ? १३६
उद्धतजनवेषं कैक्कोण्टीटरुतल्लो
कत्थनं चेय्तीटरुतात्म पौरुषत्तेयुं । १३७
तन्नुटे सुखत्तिङ्कल् मोदिच्चीटरुतोट्टु-
मन्यदुःखत्तिङ्कलुण्टाकणं करुणयुं । १३८

करती हैं। क्षेत्रज्ञ (आत्मा) का अधिष्ठित यह जो क्षेत्र (शरीर) है उसे नवद्वार और पञ्चसाक्षिक (पाँच इन्द्रियों वाले)। १२६-१३१ और त्रिस्थूण को जो जानता है वह महविद्वान् है उसी को 'क्षेत्र क्षेत्रज्ञविद्' कहते हैं। दस प्रकार के लोग हैं जो धर्म नहीं जानते हैं—वे हैं—मत्त, प्रमत्त, क्रुद्ध, उन्मत्त, चिन्ता के कारण थका हुआ, जल्दी काम करने वाला, भूखा, लालची, डरपोक और कामी। इस लिये इस तरह के भावों में एकनिष्ठ विद्वान् प्रमाद नहीं कर बैठता है। आपने क्या वह सरस इतिहास नहीं सुना है जिसे पुत्र के सम्बन्ध में सुधन्वा ने गाया है ?। उद्धत जनों की वेषभूषा नहीं अपनाना चाहिये और अपने ही पौरुष की श्लाघा न करनी चाहिये। अपने ही सुख में प्रमोद न करना चाहिये और परदुःख में दया भी होनी चाहिये। १३२-१३८ जो दान किया गया उस पर पश्चात्ताप न करना चाहिये और उत्तम व्यक्ति उसकी घोषणा भी नहीं करते हैं। देशाचार और जातिधर्म्म

दत्तमायतु चिन्तिच्चनुतापवुमरु-
तुत्तमनेङ्किलतु चोॅल्कयुमरुतल्लो । १३९
देशाचारवुं जातिधर्म्मवुं चेॅय्तीटण-
माशु वर्जिजच्चीटणं दुर्ज्जनविवादवुं १४०
डंभमत्सरं मोहं पैशुनं पापकृत्यं
संप्रति वर्ज्जिक्केणं भूपतिद्विष्टनेयुं । १४१
मत्तोन्मत्तन्मारोटुमुत्तरं पऱयरु-
तुत्तमन्मारॆप्पुरस्करिच्चु नटक्कणं । १४२
सख्यवुं विवाहवुं व्यवहारवुं तनि-
क्कोॅक्कुमोॅट्टाभिजात्यमुळ्ळवरोटु वेणं । १४३
हीनन्मारोटुकूटि संसर्गमरुतोॅट्टुं
दानवुं चेॅय्तीटणमाश्रितन्मार्क्कुं नित्यं । १४४
भूपते ! तव नियोगत्तॆयुं पालिच्चेटं
तापत्तॆप्पूण्टु वाळुं पाण्डवर्तन्टॆ राज्यं । १४५
पातियुं कोॅटुप्पतु धर्म्ममतल्लयाय्किल्
खेदवुं वरुं भवानेटमेॅन्नरिञ्ञालुं । १४६
नल्ल वाक्कुकळ् तव केट्टालिल्ललंभावं
चोॅल्लुचोॅल्लिलनियुं नीयेॅन्नितु धृतराष्ट्रन् । १४७
चोॅल्लियनेरमतिनुत्तरं विदुररुं
चोॅल्लिनान् मनोहरमायुळ्ळ वाक्कुकळाल् । १४८
नल्लतुमाकात्ततुं चोॅल्लुवन् चोॅन्नाल् केळ्क्क-
यिल्ल नीयतुकोॅण्टु चोॅल्लुवान् मटियाकुं । १४९

का पालन करना चाहिये और दुर्जनों के साथ विवाद का वर्जन करना चाहिये । दम्भ, मत्सर, मोह, पिशुनता, पापकर्म, राजा को जो द्विष्ट है इन सबका वर्जन करना चाहिए, मत्त और उन्मत्तों से बात ही न करना चाहिये और उत्तम पुरुषों का आदर करते रहना चाहिये । मैत्री सम्बन्ध, विवाह और व्यवहार उन्हीं लोगों के साथ करना चाहिये जिनका कुल अपने से तुल्य है । अधमों के साथ संसर्ग ही न करना चाहिये और आश्रितों को दान करते रहना चाहिये । १३९-१४४ हे भूपाल ! आप की आज्ञा का पालन करते हुए और दुःख अनुभव करते हुए पाण्डवों को राज्य का आधा दे देने में ही धर्म है । नहीं तो आपको बड़े दुःख भोगने पड़ेंगे । तब धृतराष्ट्र ने कहा— "तुम्हारा सदुपदेश सुनकर तृप्ति नहीं होती है । और कहते जाओ ।" यह सुनकर विदुरजी ने मनोहर शब्दों में उत्तर

नल्लतु पाण्डवक्कुं नाटु पातियुं नल्कि-
यल्लल् तीर्न्निरिक्कतावल्लाय्किल् सुतन्मारे- १५०
क्कोल्लुमे पाण्डवन्मारिल्ल संशयमेतुं
नल्ल भीष्मद्रोणकर्ण्णादियुं मरिच्चीटुं । १५१
प्रियमाकिलुं पुनरप्रियमेन्नाकिलुं
नयमाकिलुमपनयमाकिलु मति- । १५२
शुभमाकिलुमेट़मशुभमेन्नाकिलुं
अभिमोदेन चोद्यं चेय्किले पऱयावू । १५३
वैचित्रवीर्यनृप ! केळ्क्कणमिवयेल्लां
वैशद्यं मनस्सिङ्कलुण्टल्लो भवानेटं । १५४
वैदुष्यं भवानेक्काळेटमुण्टायिट्टल्ल
वैदग्ध्यं वाक्किनेट़मुण्टेङ्किलतुमल्ल । १५५
स्नेहमुण्टतुकोण्टु केळ्क्कुं ञान् चोन्नालेन्न-
मोहमुण्टेनिक्कतुकोण्टु ञान् पऱयुन्नु । १५६
वंशनाशत्तेक्कण्टु सङ्कटं पारमुण्टु
संशयं तीर्न्नुतल्लो निन्नुटे सुतन्माक्को १५७
प्राप्तमायितु राज्यमिनिक्केन्तकतारि-
लोर्त्तु वर्त्तिच्चीटरुतुर्व्वीश न सांप्रतं । १५८
पिन्नेयुमविनयं सन्पत्ते हनिच्चीटुं
निर्ण्णयमल्लो नल्ल रूपत्तेज्जरपोले । १५९

दिया। मै तो कार्य और अकार्य बतला दूँगा। पर आप तो उनको मानते नहीं। इस लिये कहने में हिचकता हूँ। अच्छा तो यही होगा कि पाण्डवों को आधा राज्य देकर सुख से रहना। अगर यह नहीं होगा तो आपके पुत्रों का वध करेंगे, सन्देह नहीं, और भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि सज्जन भी मरेंगे। १४५-१५१ प्रिय हो या अप्रिय, नय हो या अपनय, शुभ हो या अत्यन्त अशुभ तभी कहा जा सकता है जब प्रीति के साथ पूँछा जाय। हे विचित्रवीर्य के पुत्र राजन्! यह सब सुन लीजिये। आपका मन तो शुद्ध है। यह नहीं कि मेरा आप से अधिक वैदुष्य है और यह भी नहीं कि मेरी वाक् में अधिक वैदग्ध्य है। मैं इस लिये कह रहा हूँ कि मेरा आपके प्रति प्रेम है और मैं इस मोह में हूँ कि आप मेरा कहना मानेंगे। भावी वंशनाश को सोचकर मुझे बड़ा दुःख होता है। अब आपका सन्देह तो मिट गया। और आप के पुत्र ऐसा सोचकर व्यवहार न करें कि अब राज्य हमको प्राप्त हो

पादपफलं पळुक्कुंमुन्पे भुजिच्चीटिल्
स्वादुमिल्लल्लो पिन्नें वित्तुमिल्लातेवरुं । १६०
पक्वमायतु भुजिच्चालतिरसमुण्टां
वृक्षवुमुण्टां पिन्नेप्फलवुमुण्टायवरुं । १६१
पुष्पङ्ङळ्तोरुंचेन्नु नित्यवुमुळ्ळ मधु-
षळ्पदमुरुक्कूट्टि रक्षिच्चु वर्द्धिप्पिक्कुं । १६२
अप्पोलें नृपवरनेंत्रयुमर्हिसया
तल्प्रजकळिलूनिन्नार्ज्जिक्केणमर्त्थमेटं । १६३
विरिञ्ञ विरिञ्ञ पूवरुत्तुकॊळ्केयावू
विरञ्ञु मूलच्छेदं चेय्यरुतोरिक्कलुं । १६४
आरामत्तिङ्कल् चेन्नु मालाकारनेप्पोलें
दारुमूलार्त्थियाकुमंगारकारकन्टें १६५
कारियं काट्टीटरुतेन्नुमे नरपते !
सारनेंन्निरिक्किलेन्नरिक कुरुपते ! १६६
अनर्त्थं प्रजकळ्क्कु वरुत्तुं निरर्त्थकन्
तनिक्कोरर्त्थलाभं वरिकयिल्लतानुं । १६७
कुण्ठनां भूपालनेयार्क्कुंमे वेण्टीलेन्नाल्
षण्डनां भर्त्ताविनें नारिकळ्क्कॆन्नपोलें । १६८

गया। १५२-१५८ फिर अगर अविनय होगा तो वह सम्पत्ति को नष्ट कर देगा जैसे वार्धक्य रूप को नष्ट करता है, इसमें सन्देह नहीं। पकने से पहले ही फल अगर खाया जाय तो स्वाद भी नहीं होगा और बीज भी न बचेगा। पक्व फल खाने से एक तो बड़ा आनन्द होगा और दूसरा आगे वृक्ष भी होंगे और फल भी। मधुमक्खी तो हर एक फूल का प्रतिदिन का मधु लेकर इकट्ठा करती है और उसकी रक्षा करके उसको बढ़ाती है इसी प्रकार राजवर को चाहिये कि वह अपनी प्रजाओं से अधिक से अधिक धन ग्रहण करे। जो फूल विकसित है उसी को लेना चाहिये, जल्दी में जाकर जड़ ही नहीं काटना चाहिये। १५९-१६४ उद्यान में माली की तरह करना चाहिये, वृक्ष की जड़ को चाहनेवाले को कोयला बनानेवाले का काम कभी न करना चाहिये, हे भूपाल ! हे कुरुपते ! जान लीजिये कि बुद्धिमान् ऐसा ही करता है। एक निकम्मा राजा अपनी प्रजाओं का अनर्थ करेगा और अपना कोई लाभ नहीं पैदा कर सकता है। एक निकम्मे राजा को कोई नहीं चाहता है जैसे एक नपुंसक पति को कोई भी नारी नहीं

कर्म्मङ्ङळ्कोण्टुं नोक्कुकोण्टुं वाक्कुकळ्कोण्टुं
सम्मानिच्चीटुकिले रञ्जिप्पू लोकं तन्कल् । १६९
पीडिप्पिच्चीटुन्नाकिल् पेटिक्कुं प्रजकळुं
वेगत्तिलोटुं मृगं व्याधनेक्काणुन्नेरं । १७०
कर्त्तव्यं परराष्ट्रमर्द्दनंपोलेतन्ने
नित्यवुं निज राष्ट्ररक्षणं राजाविनाल् । १७१
उन्मत्तनेन्नाकिलुं बालकनेन्नाकिलुं
सम्मतमाय सारवाक्कु कैक्कोळ्केवेण्टू । १७२
शङ्किक्कवेण्ट सुवर्ण्णत्तै कैक्कोळ्के वेण्टू
पङ्कत्तिल् किटक्कुन्नतेङ्किलुमतिद्रुतं । १७३
गोक्कळो गन्धंकोण्टुं ब्राह्मणर् वेदंकोण्टुं
भोष्कल्ल चारन्मारेक्कोण्टु भूपालन्मारुं
नोक्किक्काणुन्नु कण्णुकोण्टु मट्टुळ्ळ जनं । १७४
मित्रबान्धवन्मारायुळ्ळु भूपालेन्द्रन्मार्
भर्त्तृबान्धवन्मारायुळ्ळु नारिकळेल्लां १७५
वेदबान्धवन्मारायुळ्ळु भूदेवेन्द्रन्मार्
मेदिनीश्वर ! गोक्कळ् पर्ज्जन्यबान्धवन्मार् । १७६
सत्यत्तेक्कोण्टु धर्म्ममभ्यासंकोण्टु विद्य
वृत्तत्तेक्कोण्टु कुलं मज्जनंकोण्टु रूपं १७७

चाहती है। अपने कर्मों से, दृष्टियों से और बातों से सम्मान करने से ही अपने को लोकप्रिय किया जा सकता है। सताने से प्रजा डर जाती है जैसे शिकारी को देखते ही हिरन भागता है। जिस प्रकार शत्रुराष्ट्र का दमन करता है उसी प्रकार अपने राष्ट्र का रक्षण भी करता है। उन्मत्त हो या बालक हो धर्म की बात उस से स्वीकार करना ही है। १६५-७२ सुवर्ण अगर मट्टी में भी पड़ा हो तो उसको निःशङ्क स्वीकार करना ही ठीक है। गायें गन्ध के द्वारा, ब्राह्मण वेदों के द्वारा राजालोग चारों के द्वारा देखते हैं, और लोग अपनी आँखों से देखते हैं, सच कहता हूँ। मित्र ही राजाओं के बन्धु होते हैं, पति ही स्त्रियों के बन्धु होते हैं, वेद ही ब्राह्मणों के बन्धु होते हैं और गायों का तो पर्जन्य ही बन्धु है। सत्य के द्वारा धर्म की, अभ्यास के द्वारा विद्या की, सदाचार द्वारा कुल की स्नान के द्वारा रूप की, नाप के द्वारा अनाज की रक्षा करना चाहिये और घोड़ों की रक्षा अनुक्रम से की जा सकती है। निकट से निरीक्षण करने से गोकुल की रक्षा होती है और सदैव बुरे कपड़े पहनने से

रक्षिच्चुकोळ्कवेणं मानत्तेक्कोट्टु धान्यं
रक्षिक्कामनुक्रमंकोण्टु वाजिकळेयुं । १७८
अन्तिके विलोकनंकोण्टु गोकुलं रक्ष्यं
सन्ततं कुचेलकळ्कोण्टु नारिकळेयुं । १७९
वृत्तिहीननु कुलमप्रमाणंपोल् नल्ल-
वृत्तवानेङ्किलन्त्यजातनुं नन्नुतानुं । १८०
परन्मारुटे वित्तरूपवीर्याभिजात्य-
गुरुसौभाग्यसुखसल्क्कारादिकळ् कण्टाल् १८१
चित्तत्तिलसूय वर्द्धिच्चीटुं पुरुषनु-
नित्यवुमाधियोळिञ्ञिल्लन्नु धरिक्कणं । १८२
उत्तमाशनं मांसोत्तरमेन्नरिञ्ञालुं
मद्ध्यमाशनमल्लो गोरसोत्तरं नूनं । १८३
अधमाशनं लवणोत्तरमेवं मून्नु-
विधमायुळ्ळ भुवि भोजनं नरपते ! १८४
अत्यन्तमधमन्मार्क्कशनाल् भयं पिन्ने
मद्ध्यमन्मार्क्कु मरणत्तिङ्कल्निन्नु भयं १८५
उत्तमन्मार्क्कु भयमपमानत्तिङ्कल्नि-
न्नित्तरमिनियुं ञान् चोल्लुवन् वेणमेङ्किल् । १८६
कार्यङ्ङळ् चेय्याय्किलुं चेय्किलुमकार्यङ्ङ-
ळार्यन्मार् भयप्पेटुमेप्पोळुं रण्टिङ्कलुं । १८७

स्त्रियों की। जो सदाचारहीन है उसका कुल कोई प्रमाण नहीं सदाचारवाला अन्त्यज भी अच्छा है। १७३-१८० पराया वित्त, रूप, वीर्य, कुल, बड़ा सौभाग्य, सुख, सम्मान आदि देखकर जलनेवाले पुरुष का मानसिक दुःख कभी समाप्त नहीं होगा, जान लीजिये। सामिष भोजन ही उत्तम भोजन है दुग्धसहित भोजन तो मध्यम है और लवणप्रधान भोजन अधम है, इस तरह, हे भूपाल ! जगत् में तीन प्रकार के भोजन हैं। अत्यन्त अधमों को भोजन से भय होता है, मध्यमों को मरण से भय होता है और उत्तम पुरुष तो अपमान से डरते हैं। आप चाहें तो इस प्रकार और कहूँगा। १८१-१८६ अपने कर्तव्यों का पालन न करना और अकार्य को करना, इन दोनों बातों से आर्य लोग बहुत डरते हैं। जो पदार्थ पीने पर मन का मद पैदा करता है उसका पान बड़े लोग

मानसमदकरमयुळ्ळ पेयङ्ङळे-
प्पानवुं चेय्तीटुमारिल्लल्लो महत्तुक्कळ् । १८८
अर्त्थाभिजात्यविद्यादिकळालुळ्ळ मद-
मेन्नयुं विरय्प्पों सज्जनसंगत्तिनाल् । १८९
सत्तुक्कळसज्जनत्तोटु चेन्नेतानुमों-
न्नित्थिच्चालसज्जनं सल्भावं नटिच्चीटुं । १९०
वस्त्रवानायुळ्ळवनाल् जितयल्लो सभ
सत्वरं गतिमता निर्ज्जितमद्ध्वातानुं । १९१
गोमता जितमशनाग्रहं शीलवता
श्रीमता सर्व्वं जितमुर्व्वीन्द्रशिखामणे ! । १९२
शीलमेन्नयुं प्रधानं पुरुषनु नूनं
शीलमल्लाय्किल् मित्रार्त्थङ्ङळ्कोण्टेन्तु फलं ? १९३
ऐश्वर्यमत्तन् पापिष्ठन् मधुमत्तनिलु-
मैश्वर्यमत्तनूर्द्ध्वगतियुमिल्लयल्लो । १९४
धर्म्मार्त्थङ्ङळे त्यजिच्चिन्द्रियवशगनाय्
दुर्म्मदत्तोटु वर्त्तिच्चीटिन पुरुषनु १९५
वित्तवुं धान्यङ्ङळुं जीवनुं नशिच्चुपो-
मुत्तमनाकुन्नवनिन्द्रियजयं वेणं । १९६
अर्त्थेशनिन्द्रियेशनल्लेङ्किलवनुळ्ळो-
रर्त्थवुं नशिच्चुपोंक्षिप्रमेन्नरिञ्ञालुं । १९७

नहीं करते हैं। अर्थ, कुल, विद्या आदि का मद सज्जनों के सम्पर्क से जल्दी मिट जाता है। सज्जन दुर्ज्जन कपट सद्भावना दिखलाते हैं। अच्छा कपड़ेवाला सभा को जीतलेता है और वेग से चलनेवाला मार्ग को जीतलेता है। जिसकी गाय है वह खाने की इच्छा को जीतता है और, हे भूपालों के शिखामणे !, शीलवान् और श्रीमान् सब को जीत लेता है। १८७-१९२ निस्सन्देह शील ही मनुष्य के लिये प्रधान है जिसका शील नहीं है उसका मित्र और धन से क्या लाभ है ? ऐश्वर्यमत्त और मधुमत्त में ऐश्वर्यमत्त ही की ऊद्ध्र्वगति नहीं है। जो पुरुष धर्म और अर्थ को त्याग कर इन्द्रियों के वश में आकर दुर्मद दिखलाता है उसका धन, धान्य और जीवन नष्ट हो जायेंगे। जिसने इन्द्रियों को जीता है वही उत्तम हो सकता है। धनी प्रभु की इन्द्रियाँ अपने वश में अगर नहीं हैं तो तुरन्त ही उसका अर्थ नष्ट हो जायेगा, जान

सत्यमार्ज्जवं शौचं सन्तोषमनसूय
चित्तशान्त्यनायासं प्रियवाक्यादिगुणं १९८
उण्टाकयिल्लयल्लो निर्ण्णयं दुरात्मना-
मुण्टाकिलतु परपीडय्कायवरुन्तानुं । १९९
आत्मनि धर्म्मनित्यत्वं वचोगुप्ति दान-
मात्मज्ञानवुमसंरंभवुं तितिक्षयुं २००
तुष्टियुमहिंसयुमनुकम्पादिकळुं
दुष्टर्क्कु कुरञ्ञोन्नुमुण्टाकयिल्लयल्लो । २०१
भूपते ! हिंस बलं केवलमसाधूनां
भूभृतां बलं दण्डविधियॆन्नरिञ्ञालुं । २०२
स्त्रीणां शुश्रूष बलं गुणिनां क्षम बलं
प्राणिनां बलं जलं पार्त्थिवकुलपते ! २०३
अटवि मळुकॊण्टु वॆट्टियालकच्चिटुं
कठिनवाचा वॆट्टिमुरिच्चालकच्चिटा । २०४
नाराचशल्यं देहत्तिङ्कल्निन्नॆटुत्तीटां
क्रूरवाक्शल्यमॆटुक्कुं चिकित्सकनिल्ल । २०५
विश्वपालनराजलक्षणसम्पन्ननाय्
विश्वासयोग्यनाय भूपति युधिष्ठिरन् २०६
धीरात्मा दुःखङ्ङळॆस्सहिच्चीटुन्नु तव
गौरवं निमित्तमायॆन्नतोर्त्तरुळणं । १०७

लीजिये। सत्य, नेकी, शुद्धि, सन्तोष, अनसूया, चित्तशान्ति, अनायास प्रियवाक्य आदि गुण निस्सन्देह दुष्टों में नहीं होते हैं। अगर होते भी हैं तो औरों के दुःख के कारण होते हैं। १९३-१९९ निरन्तर धर्मतत्परता, वचन का पालन, दान, आत्मज्ञान, असंरंभ, तितिक्षा, संतोष, अहिंसा, दया आदि गुण दुष्टों में छोटी मात्रा में भी नहीं होते हैं। हे राजन्! केवल दुर्जनों का बल अहिंसा है। भूपालों का बल है दण्डविधि, जानलीजिये। हे राजकुलों के नायक! शुश्रूषा ही स्त्रियों का बल है, गुणियों का बल है क्षमा, प्राणियों का बल है जल। वन के वृक्ष अगर काटे जायँ तो बरसात में फिर फूलपत्र निकलेंगे, परन्तु कठोर वचन से जो काटा जाता है वह फिर नहीं जुड़ेगा। लगा हुआ शर शरीर से निकाला जा सकता है परन्तु क्रूर वचन के शल्य को निकालने वाला चिकित्सक नहीं है। २००-२०५ सारे विश्व के पालन के लक्षणों से युक्त विश्वास के पात्र राजा युधिष्ठिर धीरात्मा हैं और आप के प्रति

सर्व्ववेदज्ञनेक्काळुल्क्कृष्टनाकुन्नतु
सर्व्वभूतङ्ङळिलुमार्ज्जवमुळ्ळ पुमान् । २०८
आकयाल् पुत्रन्मारिलार्ज्जवं प्रतिपादि-
च्चेकान्तसौख्यं वाणाल् स्वर्ग्गप्राप्तियुं वरुं । २०९
ॲत्रनाळेक्कु कीर्त्ति निल्क्कुन्नितवनियि-
लत्रनाळेक्कु स्वर्ग्गवासमुण्टवनोर्त्ताल् । २१०
दैत्येन्द्रन् विरोचनन् केशिनिनिमित्तत्ता-
लास्थया सुधन्वाविनोटुळ्ळ संवादं नी २११
केट्टिट्टिल्लयो नृपश्रेष्ठनां धृतराष्ट्र !
केट्टालॅत्रयुं मनोमोहनमितिहासं । २१२
क्षत्तावु धृतराष्ट्रर्त्तन्नॆक्केळ्प्पिच्चीटिना-
नुत्तममाय पुरावृत्तमॆप्पेरुमप्पोळ् । २१३
रूपत्तिन् गुणमपहरिच्चीटुन्नु जर
कोपमर्त्थत्तॆयॆल्लां प्रत्यपहरिक्कुन्नु । २१४
शीलत्तॆयपहरिच्चोटुन्नु खलसेव
कालन् प्राणनॆयपहरिच्चीटुन्नुवल्लो । २१५
आशतानपहरिच्चीटुन्नु धैर्य्यत्तेयु-
माशु कन्दर्प्पनपहरिच्चीटुन्नु नाणं । २१६
धर्म्मचर्य्यॆयॆयपहरिक्कुमसूययुं
निर्म्मलमते ! सर्व्वं हरिक्कुमतिमानं । २१७

गौरव के कारण दुःखों का अनुभव कर रहे हैं, यह स्मरण रहे। सभी वेदों के विद्वान् की अपेक्षा सभी भूतों के प्रति नेकी दिखलाने वाला पुरुष उत्कृष्ट है। इस लिए अगर आप पुत्रों के प्रति नेकी से काम लेंगे तो एकान्त सौख्य भी होगा और स्वर्गप्राप्ति भी होगी। जितने दिन पृथिवी में अपनी कीर्ति रहेगी उतने ही दिन स्वर्ग में निवास भी होगा। केशिनी के हेतु दैत्येन्द्र विरोचन और सुधन्वा के बीच जो संवाद हुआ था वह नृपश्रेष्ठ धृतराष्ट्र ! आपने नहीं सुना है ? वह इतिहास सुनने में अत्यन्त मनोहर है। २०६-२१२ तब विदुर ने धृतराष्ट्र को सभी उत्तम इतिहासों को सुनाया। वार्धक्य रूप के गुणों का अपहरण करता है, क्रोध तो अर्थ का नाश कर देता है, दुष्टों की सेवा शील का अपहरण करती है और काल प्राणों का अपहरण करता है। आशा तो धैर्य का अपहरण करती है और कामदेव तुरन्त ही ही लज्जा का अपहरण करता है। असूया धर्मचर्या को नष्ट कर

क्रोधिक्कर्त्थवुमिल्ल शठनु मित्रमिल्ल
क्रूरनु नारियिल्ल सुखिक्कु विद्ययिल्ल । २१८
कामिक्कु नाणमिल्ल कोशमिल्ललसनु
सर्व्ववुमिल्ल नूनमनवस्थितनोर्त्तालू । २१९
कृतज्ञत्ववुं पराक्रमवुं विनयवुं
मितभाषणं दानमन्वयविशुद्धियुं
श्रुतवुं सल्प्रज्ञयुमुळ्ळवन् शोभिक्कुन्नु २२०
इच्चोन्न गुणमेट्टुमिल्लातपुरुषने-
स्सज्जनमेतुं बहुमानिक्कयिल्लयल्लो । २२१
स्वर्लोकत्तिनु निदर्शङ्ङळायिट्टुण्टुपोल्
चोल्लुन्नितेट्टु गुणमरिक धात्रीपते ! २२२
अन्ववेदङ्ङळ् नालुमन्ववायङ्ङळ् नालुं
मन्नवा ! चोल्लीटुवन् केट्टालुं यथासौख्यं । २२३
यज्ञदानाध्ययनतपसां निष्ठ नालुं
विज्ञानिजनमन्ववेदङ्ङळेन्नु चोल्लू । २२४
सत्यमार्ज्जवं दममानृशंस्यवुमिव
चत्वारि बुधमतमन्ववायङ्ङळेन्नुं । २२५
वृद्धन्मारिल्लात्तोरु सभयुं सभयल्ल
वृद्धन्मारल्ल धर्म्मत्तेच्चोल्लीटातवरुं । २२६

देती है और हे निर्मल मते ! अतिमान सबका अपहरण करता है। क्रोधी अर्थहीन रहता है, शठ तो मित्रहीन, क्रूर स्त्रीहीन, सुखी विद्याहीन कामी लज्जाहीन, आलसी कोषहीन और जो अनवस्थित (अप्रतिष्ठित) है, वह सभी से वञ्चित रहता है। २१३-२१९ कृतज्ञता, पराक्रम, विनय, मितभाषण, दान, वंशशुद्धि, विद्या, और सद्बुद्धि जिसकी हैं वह समाज में चमकता है। ये आठ गुण जिस के पास नहीं हैं उसका बहुमान सज्जन नहीं करते हैं। हे भूपाल ! जान लीजिये कि ये आठ गुण जो मैं अभी कहूँगा स्वर्ग जाने के लिए पथप्रदर्शक हैं। चारों अन्ववेदों को और चारों अन्ववायों को हे भूपाल ! मैं कहूँगा, आप सुन लीजिये। यज्ञ, दान, अध्ययन और तप में निष्ठा इन चारों को विज्ञानी लोग अन्ववेद कहते हैं सत्य, आर्ज्जव (नेकी), दम और अनृशंस्य (दया) इन चारों को विद्वान् लोग अन्ववाय कहते हैं। वह सभा नहीं है जिसमें वृद्ध न हो, वे वृद्ध नहीं हैं जो धर्म का उपदेश न करते हों। २२०-२२६ सत्यहीन धर्म धर्म ही नहीं है, माया से मिला हुआ सत्य सत्य नहीं

सत्यमिल्लात धर्म्मं धर्म्मवुमल्लयल्लो
सत्यवुं सत्यमल्ल मायानुविद्धमायाल् । २२७
सत्यवुं रूपं श्रुतं विद्ययुं कुलं शीलं
शक्तियुं धनं शौर्यं विचित्रभाष्यमिव २२८
पत्तुण्टु संसर्गयोनिकळेन्नरियणं
पृत्थ्वीशतिलकमे ! केट्टालुमिनियुं नी । २२९
वासरत्तिङ्कल् प्रवर्त्तिक्किले रात्रौ पिन्ने
वासंचेय्तीटावितु सुखमायेन्नु नूनं । २३०
ऎट्टु मासवुं प्रवर्त्तिक्किले पुनरति-
वृष्टिमासङ्ङळ् नालुं सुखमाय् वसिक्कावू । २३१
यौवनत्तिङ्कल् प्रवर्त्तिच्चर्थमार्जिक्किले
चोव्वोटे वार्द्धक्यत्तिल् सुखिच्चुवसिक्कावू । २३२
जीवपर्यन्तं प्रवर्त्तिक्किले मरिच्चालुं
देवलोकादिकळिल् स्वैरमाय् वसिक्कावू । २३३
आचार्यनात्मवतां शास्तावु दुरात्मनां
राजावु शास्ता पिन्नेच्छन्नपापन्माक्कॆल्लां २३४
अन्तकन्तन्ने शास्तावाकुन्नतरिञ्ञालु-
मेन्तिनु वळरे आनित्तरं पऱयुन्नू । २३५
तापसन्मारुटेयुं वाहिनिमारुटेयुं
शोभतेटीटुं महात्माक्कळ्वंशस्तिन्ट़ेयुं २३६

है। सत्य, रूप, श्रुत (अध्ययन), कुल, शील, शक्ति, धन, शौर्य और वाग्मिता, ये, दस गुण, जान लीजिये, हे भूपाल ! सत्संग से पैदा होते हैं। और सुन लीजिये। दिन में काम करने से निस्सन्देह रात में सुख से रहा जा सकता है। आठ महीने काम करने से ही वर्षा के चार महीने आराम से कट सकते हैं। जवानी में काम करने से ही बुढ़ापे में कोई सुख से रह सकता है। आजीवन काम करने से ही मरने के बाद देवलोक आदि स्थानों में सुख से वास हो सकता है। २२७-२३२ सज्जनों का शासन करनेवाला आचार्य है, दुरात्माओं का शास्ता राजा है, छिपकर पाप करने वालों का शास्ता है अन्तक (यमराज), जान लीजिये। इस प्रकार अधिक कहने में क्या लाभ है ? तापसों को, वाहिनियों के, महात्माओं के उज्जवल वंश के, उत्पत्तिस्थान को ढूंढने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि, हे भूपाल ! दिव्यों का उत्पत्तिदोष नहीं है, स्मरण रहे। कही हुई से न कही हुई (बात) श्रेष्ठ है, अगर

उद्भवस्थानमन्वेषिक्केण्ट दिव्यन्मार्विक-
ल्लुत्पत्तिदोषमॆन्नतोर्क्कणं नरपते ! २३७
व्याहृतत्तेक्काळ् श्रेयस्साकुन्नतव्याहृतं
व्याहृतं रण्टामतु सत्यत्ते वदिक्कणं २३८
व्याहृतं पिन्ने प्रियं वदिक्क मून्नामतुं
व्याहृतं धर्म्मं वदिक्कॆन्नतु नालामतुं । २३९
उत्तमन्मारे वेणं सेविच्चुकॊळ्ळुवानुं
मध्यमन्मारॆक्कार्यकाले सेविक्कवेण्टू । २४०
सेविच्चीटरुतधमन्मारॆयोरिक्कलुं
भविच्चीटरुतवरोटाभिमुख्यंपोलुं । २४१
मानसतापंकॊण्टु बलवुं शरीरवुं
ज्ञानवुं क्षयिच्चुपों व्याधियुं वर्द्धिच्चीटुं । २४२
पॆरिकॆ विश्वस्तन्टॆ पत्नियॆ प्रापिप्पवन्
गुरुतल्पगन् वृषलीपतियाकुं द्विजन् २४३
शरणागतहन्ता मद्यपनिवरॆल्लां
करुतीटणं ब्रह्महन्ताविनॊक्कुमल्लो । २४४
ऎप्पॊऴुं प्रियं पऱञ्ञीटुवान् पलरुमु-
ण्टप्रियमॆन्नाकिलुं पत्थ्यत्तॆच्चॊल्लीटुवान् २४५
सल्पुरुषन्मारिल्ला केळ्प्पानुमारुमिल्ल
दुर्ब्बोधमुळ्ळ जनमॊऴिञ्ञिल्लॊरेटत्तुं । २४६

कहना ही है तो सच कहना चाहिये, यह दूसरी बात हुई, और अगर कहना है तो प्रिय बात कहना चाहिये, यह तीसरी बात हुई और चौथी बात यह है कि धर्म बतला दो। उत्तमों की ही सेवा करनी चाहिये और काम पड़ने पर ही मध्यमों की सेवा हो। २३२-२४० अधमों की कभी सेवा न करना चाहिये उनके सामने जाना भी न चाहिये। मनोदुःख के कारण बल, शरीर, और ज्ञान नष्ट हो जाते हैं और व्याधि बढ़ती है। अपने विश्वस्त मित्र की पत्नी को लेने वाला, गुरुतल्पग, ब्राह्मण जो वृषली का पति होता है, शरणागत की जो हत्या करता है, मद्य पीनेवाला ये सब जान लीजिये ब्रह्महत्या करनेवाले के तुल्य हैं। सदैव प्रिय कहने वाले बहुत होते हैं अप्रिय होते हुए भी जो हित का है उसे कहने वाले सत्पुरुष कम हैं और सुनने वाले हैं ही नहीं। दुर्बोध वाले लोग जहाँ नहीं हों वैसा कोई स्थान नहीं है। २४१-२४६ राजा के पास ऐसा अमात्य होना चाहिये जो अपने स्वामी का प्रिय और

भर्त्ताविन् प्रियाप्रियमरिञ्ञीटातॆ धर्म्मं-
तत्त्ववुमरिञ्ञुकॊण्टप्रियमॆन्नाकिलुं २४७
पत्थ्यत्तॆच्चॊल्लुममात्यन् वेणं राजावाया-
लॆत्रयुं वन्नुकूटुमभ्युदयवुमॆन्नाल् । २४८
सर्व्ववुमुपेक्षिच्चुमात्मावॆ रक्षिक्कण-
मुर्व्वियॆयुपेक्षिच्चुं मित्रत्तॆ रक्षिक्केणं । २४९
ग्रामत्तॆयुपेक्षिच्चुं राज्यत्तॆ रक्षिक्केणं
ग्रामत्तॆयॊरु गृहं कळञ्ञुं रक्षिक्कणं । २५०
ऒरुवन्तन्नॆक्कळञ्ञॊरिटं रक्षिक्कणं
करुतीटुक मनतारतिलिवयॆल्लां । २५१
पुत्रनॆयुपेक्षिच्चुं वंशत्तॆ रक्षिक्कण-
मुत्तमन्मारायुळ्ळोरिङ्ङनॆ चॆय्तुवायं । २५२
अर्त्थत्तॆ रक्षिक्कणमापत्तुवरुम्पॊळॆ-
क्कर्त्थत्तॊक्काळुं धर्म्मदारङ्ङळ् रक्षिक्केणं । २५३
दारार्त्थङ्ङळेक्काळुमात्मावॆ रक्षिक्कणं
धीरन्मारायुळ्ळवरिङ्ङनॆ चॆय्तु वायं । २५४
भर्त्ताविन्नभिमतमरिञ्ञु कार्यङ्ङळॆ
नित्यवुमवक्रबुद्ध्या स्वयं रक्षचॆय्तु २५५
पत्थ्यङ्ङळ् वचिच्चनुरक्तनाय् शक्तिज्ञनां
भृत्यन्तन्नोटु तुल्यनायनुकम्प्यनिल्ल । २५६

अप्रिय न जानता हो, पर धर्मतत्त्व को जानता हो और अप्रिय होने पर भी हित की बात कहने वाला हो। तभी तो अभ्युदय होगा। सब की उपेक्षा करके अपनी आत्मा की रक्षा करना चाहिये। पृथिवी की उपेक्षा करके मित्र की रक्षा करना चाहिये। गाँव की उपेक्षा करके देश की रक्षा करना चाहिये एक घर की उपेक्षा करके गाँव की रक्षा करना चाहिये। एक व्यक्ति को खोकर भी एक स्थान की रक्षा करना चाहिये यह सब आप ठीक से समझ लीजिये। अपने पुत्र की भी उपेक्षा करके वंश की रक्षा करना चाहिये। उत्तम व्यक्ति इस प्रकार त्याग करते हैं। संकट आने पर अर्थ की रक्षा करना चाहिये अर्थ से भी पहले धर्मपत्नी की रक्षा करना चाहिये। अर्थ और कलत्र से भी पहले आत्मा की रक्षा करना है। धीर पुरुष इस प्रकार त्याग करते हैं। २४७-२५४ स्वामी का अभिमत जान कर सीधी बुद्धि से जो सभी कर्तव्यों का पालन करता है और हित की बातें कहते हुए अनुरक्त

भर्त्ताविन् नियोगत्तेयादरियातेयतिल्
प्रत्युक्ति पऱञ्ञेट्मात्माभिमानत्तोटुं २५७
चित्तत्तिल् प्रतिकूलमाय् पऱञ्ञीटुन्नोरु
भृत्यने त्यजिक्केणं बुद्धिमानाय नृपन् । २५८
सकल भूतङ्ङळ्क्कुं हितमायात्माविनुं
सुखमायिरिप्पते चेय्यावू भूपालनुं । २५९
बुद्धियुं प्रभाववुं तेजस्सुमुत्थानवुं
सत्वरमेट्ं व्यवसायवुमुळ्ळवनु २६०
वृत्तिक्कु भयमोरुनाळुमुण्टाकयिल्ल
वृत्तिक्कु भयमायाल् निष्फलं गुणमेल्लां । २६१
नारिमारेयुं परन्मारेयुं सर्प्पत्तेयुं
वैरिपक्षिकळेयुं स्वाद्धचायत्तेयुं निज- २६२
भोगानुभवत्तेयुं जीवितकालत्तेयुं
भागधेयत्तेयुं विश्वासमुण्टाकवेण्टा । २६३
सर्प्पाग्निसिंहङ्ङळुं कुलपुत्रनुमुळ्ळिल्
स्वल्पवुमवज्ञेयन्मारल्लेन्नरियणं । २६४
विद्याभिजनवयोबुद्धचर्त्थशीलङ्ङळाल्
वृद्धन्मारवमन्तव्यन्मारल्लोरिक्कलुं । २६५
गुणवान्मारायुळ्ळ पाण्डवन्मारे नित्य-
मणयत्तिरुत्तुकिल् निनक्कु सौख्यं वरुं । २६६

बनकर अपनी शक्ति दिखलाता है वैसे भृत्य के समान प्रेम का पात्र और कोई नहीं है। स्वामी की आज्ञा का आदर न करके, उसका आक्षेप करता है और आत्माभिमान रखता है और अपने चित्त में उसके प्रतिकूल आचरण करता है वैसे भृत्य को बुद्धिमान् राजा त्याग करे। एक भूपाल को चाहिये कि ऐसा व्यवहार करे कि सभी प्राणियों का हित हो और अपना भी सुख हो। जो बुद्धिमान्, प्रभावशाली, तेजस्वी, और अत्यन्त प्रयत्नशील है उसको कभी भी अपनी जीविका की चिन्ता न करनी पड़ेगी, जीविका की चिन्ता अगर हो जाय तो सभी गुण व्यर्थ हो जाते हैं। २५५-२६१ स्त्रियों, शत्रुओं, साँपों, शत्रुपक्षवालों, स्वाध्याय, अपने भोगानुभव, अपने जीवितकाल और भाग्य पर विश्वास न रखना चाहिये। जानलीजिये कि सर्प, अग्नि, सिंह, और कुलपुत्र, ये तनिक भी उपेक्षा के पात्र न होने चाहिये। विद्या, कुल, वय, बुद्धि, अर्थ, शील इन के कारण जो वृद्ध हैं इनकी कभी भी अवज्ञा

शिष्टनामवन्तन्ने द्वेषमुण्टेन्नाकिलुं
तुष्टनाय् परिग्रहिच्चीटुकेन्नतेवरू । २६७
आर्त्तनायिरिप्पवनौषधं कय्क्कुन्नतु-
मास्थया सेविच्चीटुमारल्लो कण्टुपोरू । २६८
दुष्टनामवन्तन्ने स्नेहमुण्टेन्नाकिलुं
पेट्टेन्नु परित्यजिच्चीटुकेन्नतेवरू । २६९
दष्टमायितु विरल् पाम्पिनालेन्नाकिलो
पेट्टेन्ना विरल्तन्ने छेदिक्केन्नतुं वरुं । २७०
मारीचन् मण्डोदरि मयनुं सुमालियुं
वीरनां कुंभकर्ण्णन् नीतिमान् विभीषणन् २७१
ऎन्निवर् परञ्ञतु केळाञ्ञु दशमुखन्
तन्नुटे कामत्तिन्टे मूर्च्छतनिमित्तमाय् २७२
इन्द्रजित्तिन्टे वाक्कु केट्टतु निमित्तमाय्
वन्नितु दशास्यनु नाशमेन्नोर्ङ्ञालुं । २७३
ऎन्नतुपोले वरुं नाशमिन्निविटेयुं
निन्नुटे मकन्तन्टे वाक्कुकळ् केळ्क्कुन्नाकिल् । २७४
कामत्तालतुवन्नु राक्षसप्रवरनु
लोभत्ताल् वरुन्नितु निन्नुटे मकनिप्पोळ् । २७५
मक्कळे लाळिक्करुताकायेन्नतु कण्टाल्
शिक्षिच्चु तन्टे कालं कळिच्चुकोळ्केयावू । २७६

न हो। गुणी पाण्डवों को सदैव अपने पास रखने से आप का सुख होगा। शिष्टजन पर द्वेष होने पर भी तुष्ट होकर उनको स्वीकार करना ही ठीक है। २६२-२६७ यही देखा जाता है कि रोगी कड़ुई दवा का भी आस्था के साथ सेवन करता है। दुष्ट का, स्नेह होने पर भी, तुरन्त त्याग करना ही उचित है। साँप की कटी उँगली को तुरन्त काट डालना ही पड़ता है। मारीच, मन्दोदरी, मय, सुमाली, वीर कुम्भकर्ण, नीतिवाला विभीषण, इनका कहना न मानने से अपने काम की तीव्रता के कारण और मेघनाद का कहना मानने के कारण रावण का नाश हुआ, जान लीजिये। २६८-२७३ यहाँ भी वैसा ही नाश होगा अगर आप अपने पुत्र की बातें सुनेंगे। राक्षसप्रवर का नाश काम के कारण हुआ आपके पुत्र का तो लोभ के कारण होगा। बच्चों के लालन में दोष देखकर उनको दण्ड देते हुए अपना समय बिताना ही ठीक है। विदुर की इस प्रकार की बहुविध उक्तियों का विस्तार से

इत्तरमुळ्ळ विदुरोक्तिकळ् बहुविधं
विस्तरिच्चुरचेय्यानेतुमे कालं पोरा । २७७
दैवकल्पितं तट्टुक्कावतल्लोरुवनुं
दैवत्ताल् कृतमिदमेन्नोर्त्तु विदुररुं । २७८
पौरुषं निरर्त्थकमेन्नुरच्चतुनेरं
कौरववीरनोटु पिन्नेयुमुरचेय्तान् । २७९
भूभारहरणत्तिनाय् पिरन्नोरु देवन्
भूपति रमापति लोकैकपति कृष्णन् २८०
कर्म्मणां पति वेदपति देवानां पति
धर्म्मैकपति यज्ञपति सत्पति हरि २८१
भक्तवत्सलन् करुणानिधि पशुपति
भुक्तिमुक्तिकळ् दानं चेय्तीटुं यदुपति । २८२
तत्वादि गुणत्रययुक्तनां प्रकृतिक्कुं
तत्त्वङ्ङळ्क्कॆल्लाट्टिनुमाधारभूतन् नाथन् २८३
तन्तिरुवटियुटे कल्पितमेल्लामेन्नु
चिन्तिच्चु तत्पादाब्जं सेविच्चुकोळ्क नित्यं । २८४
पिन्नेयस्सनत्कुमारन् मुनियेळुन्नळ्ळि
मन्नवन् धृतराष्ट्रर्तन्नोटायरुळ्चेय्तु । २८५
अध्यात्मं पलतरमज्ञानं कळवाना-
यत्यन्तमूढन्मावकर्त्तेन्नयुं विपरीतं । २८६

वर्णन करने के लिये समय नहीं है । २७४-२७७ दैव का तय किया हुआ कोई रोक नहीं सकता, यह सब दैव ने ही किया है, यह समझकर और यह निर्णय करके कि इसमें पौरुष व्यर्थ है विदुरजी ने फिर धृतराष्ट्र से कहा। पृथिवी का भार कम करने के लिए जन्म लिये हुए देव भूपति, रमापति, लोकों का एकमात्र पति कृष्ण, कर्मों का पति, वेदों का पति, देवों का पति, धर्म का एकमात्र पति, यज्ञ-पति, सत्पति, हरि, भक्तवत्सल, करुणानिधि, पशुपति, भुक्ति और मुक्ति प्रदान करनेवाले यदुपति तत्त्वों से और गुणत्रय से युक्त प्रकृति का और सभी तत्त्वों का एकमात्र आधार नाथ की ही आज्ञा से यह सब होता है, ऐसा मानकर उनके पादपद्मों का ध्यान करते हुए उसकी सदैव सेवा करो। तदनन्तर मुनि सनत्कुमार पधारे और उन्होंने राजा धृतराष्ट्र से निवेदन किया। २७८-२८५ "अध्यात्म के संबन्ध में जो तरह-तरह के अज्ञान हैं उनका त्याग करना अत्यन्त मूर्खों के लिये नापसन्द है"। तापसश्रेष्ठ के सिधारने के बाद

तापसश्रेष्ठन्तानुमेळ्ळुन्न ळ्ळियशेषं
तापमुळ्क्कोण्टु पिन्ने विदुररुरचेय्तु । २८७
मेलिले विशेषङ्ङळेल्लामे केट्टु केट्टु
कालवुं पुलर्न्नितु पिन्नेयङ्ङेल्लावरुं २८८
मन्त्रशालयिल्पुक्कु तुटङ्ङीनिरूपण-
मन्धनां नृपतियुं भीष्मद्रोणादिकळुं । २८९
सञ्जयनतुनेरं धर्म्मजन् परञ्ञतुं
कञ्जलोचननरुळ्चेय्ततुमरियिच्चान् । २९०
अच्युतनरुळ्चेय्त वाक्कुकळ् केट्टु भीष्मर्
निश्चयं कृष्णन् चोन्नतन्तरमिल्लयेन्नान् । २९१
मूर्त्तिकळ् मून्नुपेक्कुं मूलमां मुकुन्दनुं
पार्त्थनुन्मोरु भेदमिल्लेटो सुयोधना ! २९२
तन्नेत्तान् पुकळ्त्तुन्न कर्ण्णनुं नीयुमोटुं
सन्नाहमोटु पाण्डुनन्दनन् वरुन्नेरं । २९३
गोक्कळे वीण्टुकोण्टु पोयतु कण्टतिल्ले ?
नोक्केटो सुयोधना ! कण्टालोट्टरियेणं । २९४
वरुवानुळ्ळतोक्क वन्नाल् पिन्नयुमेतु-
मरियप्पोकातवरेङ्ङने पोरुक्कुन्नु ? २९५
वेन्तुपोकेणमिवरेन्नतु निङ्ङळुळ्ळिल्
चिन्तिच्चु जतुगृहं तीर्त्ततिलाक्कि वातिल् २९६

दुःखित होकर विदुरजी ने कहा। आगे के वृत्तान्त सब सुन-सुनकर समय बहुत बीत गया। तब अन्धे राजा, भीष्म, द्रोण आदि सबने मन्त्रशाला में प्रवेश करके विचार प्रारम्भ किया। उस समय सञ्जय ने युधिष्ठिर की और कृष्ण की कही बातों को सुनाया। कृष्ण की कही बातों को सुनकर भीष्म ने कहा— "इस में कोई मतभेद नहीं हो सकता है"। तीनों मूर्त्तियों का मूल मुकुन्द में और अर्जुन में, हे सुयोधन ! कोई भेद नहीं हैं। आत्मश्लाघा करने वाला कर्ण और तुम दोनों भागेंगे जब सन्नद्ध होकर पाण्डुपुत्र आयेगा। २८६-२९३ गायों को कैसे भगाकर वापस ले गये, यह तुमने देखा ? हे सुयोधन ! देखलो और देखकर समझ भी लो। जो होने वाला है वह सब अगर हो जाय तो कुछ भी न समझने वाले कैसे सह सकेंगे ? यह सोचकर कि 'ये जल जायँ' तुम लोगों ने जतुगृह बनाया और उसमें उनको बन्द करके आग लगा दी।

बन्धिच्चु तीयुं वच्चितन्तरं वरिकया-
लन्तवुमवक्कुं वन्तीटातें जीविच्चोंरु । २९७
कुन्तितन्तनयन्मारभ्युदयत्तेंक्कण्टु
सन्तापं पूण्टोंरु नी कळ्ळच्चूताले नाटु- २९८
मेंन्तोंरु कष्टं ! पऱिच्चटवीतन्निलाक्कि-
येंन्तिनि नल्लू नमुक्कॆन्नतु मनक्कान्पिल् २९९
चिन्तिच्चु वाळुंकालं पिन्नेयुं चतियाले
अन्तकपुरत्तिङ्कलयप्पान् पोंय्कतन्नि- ३००
लन्तरा चेंन्नु निङ्ङळ् मरुन्नु कलक्कुन्पोळ्
गन्धर्व्वश्रेष्ठन् चित्ररथनुं पटयुमाय् ३०१
बन्धिच्चु निङ्ङळेयुं कोंण्टवन् पोकुन्नेरं
बन्धुक्कळाय निङ्ङळ् चेंय्त दुष्कर्म्ममेंल्लां ३०२
चिन्तचेंय्यातें वन्नु वेगत्तिल् युद्धंचेंय्तु
गन्धर्व्वप्रवरनें जयिच्चु वीण्टुकोंण्टु ३०३
बन्धुभावेन राज्यत्तिङ्कलेक्कयच्चोंरु
कुन्तितन् तनयन्माराकिय पाण्डवन्मार् ३०४
चिन्तिच्चालशक्तन्मारॆन्नो निन्पक्षमुळ्ळि-
लन्धत्वं चेंरुतल्ल निनक्कु सुयोधन ! ३०५
धर्म्ममुळ्ळवर् जयिच्चीटुमेंन्नतुकोंण्टु
धर्म्मजन् जयिक्कुमेंन्नेंल्लारुं पऱयुन्नु । ३०६

पर तुम लोगों के श्रम के कारण उनका नाश न हुआ और वे जीवित रहे। उनके अभ्युदय को देखकर तुम जलने लगे और कपट-जुआ के द्वारा— कैसी लज्जा की बात है— उनका राज्य छीनकर उनको वन को भगा दिया। फिर 'हमारा भला कैसे हो' ऐसा सोचकर। २९४-९९ दुबारा बेईमानी ही से उनको यमलोक भेजने के लिये तुम लोग जब सरोवर के पानी में दवा मिला रहे थे तब गन्धर्वश्रेष्ठ चित्ररथ सेना के साथ पहुँचे और तुम लोगों को बाँधकर ले जा रहे थे। परन्तु तुम बन्धु लोगों के दुष्कर्मों को भूलकर कुन्ती के पुत्र पाण्डव जल्दी वहाँ पहुँचे और गन्धर्वप्रवर को युद्ध में पराजित करके तुम लोगों को छुड़वाया और अपने राज्य भेज दिया। हे सुयोधन ! तुम तनिक विचार करो ऐसे पाण्डव शक्तिहीन हो सकते हैं ? अगर यही तुम्हारा मत है तो तुम्हारा अन्धापन छोटा नहीं है। धर्म जिसका है वह जीतेगा, इस लिए सब कहते हैं कि युधिष्ठिर की विजय होगी। द्रोणजी ने भी

द्रोणरुमुरचेय्तु पातियुं कोंटुक्क नी
नाणक्केटेतुमिल्ल धर्म्ममे जयिच्चीटू । ३०७
शन्तनूसुतन् द्रोणर् सञ्जयन् विदुररुं
सन्ततं पऱञ्ञिट्टुं केळाञ्ञु सुयोधनन् ३०८
अन्धनां नृपेन्द्रनुं कृपरुं द्रोणितानुं
बन्धुक्कळाय सोमदत्तपुत्रादिकळु- ३०९
मावोळमनुसरणं चेय्तु पऱञ्ञिट्टुं
आवतिल्लेन्नु कल्पिच्चटङ्ङिक्कोण्टारल्लो । ३१०
काटुवाळुकयोळिञ्ञङ्ङु पाण्डवर् वन्नु
नाटुवाळुकिलेय्तु कोल्लुक मटियाते । ३११
उट्वराय निङ्ङळ् मटोन्नुं पऱयेण्ट
कुट्ङ्ङळोळिञ्ञिल्ल मटोन्नुमिनिक्किप्पोळ् । ३१२
इत्तरं वाक्कु केट्टु मट्ुळ्ळ महाजन-
मुत्तरं पऱयाते पोयारङ्ङोरोदिक्किल् । ३१३

भगवद्दूतु

युद्धमेल्क्कुन्पोळेन्नेक्कोण्टोरो कुटं चोल्वान्
वृद्धन्माक्केन्तोन्नुळ्ळतेन्नोर्त्तु युधिष्ठिरन् । १

कहा— 'आधा राज्य दे दो। इसमें तुम्हारी अप्रतिष्ठा नहीं है। धर्म ही जीतेगा"। ३००-३०७ शन्तनु का पुत्र, द्रोण, सञ्जय, विदुर, इन सब के लगातार कहने पर भी सुयोधन ने न माना। अन्धे राजा, कृप, अश्वत्थामा, और बन्धु सोमदत्त के पुत्र, इन सबके बार-बार अनुनय करने पर भी 'नहीं हो सकता' कहकर वे चुप हो गये। वनवास छोड़कर पाण्डव अगर देश में निवास करने आयेंगे तो उनको निश्शङ्क मार डालना। आप शक्तिशाली हैं, और कुछ हम से न कहिये। उनका कोई भी दोष मेरी राय में अब दूर न हुआ है। इस प्रकार की बात सुनकर और लोग बिना कुछ कहे ही चले गये। ३०८-३१३

भगवान् का दौत्य

"युद्ध छिड़ जाने पर वृद्धलोग मेरा क्या दोष बतला सकते हैं?" युधिष्ठिर ने ऐसा सोचा। महापुरुषों में से किसी शान्त, नीतिज्ञ, शास्त्रज्ञ मित्र को सन्धि कराने के लिए भेजकर शर्तें सुनवाकर भी

मित्रमाय् नीतिज्ञनाय् शान्तनाय् शास्त्रज्ञना-
यत्रयुं महापुरुषन्मारिलॊरुत्तनॆ २
सन्ध्यर्थमयच्चुटन् निरप्पु परयिच्चु
सन्धियाञ्ञॊरु शेषमायिरुन्नितु युद्धं । ३
सज्जनमॆल्लां पुनरिङ्ङनॆ परञ्ञीटु-
मिज्जनत्तॆक्कॊण्टतिन्नारॆयङ्ङयय्क्कावू ? ४
धर्म्मजनतुनेरं तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चु
निर्म्मलनाय वासुदेवनोटुरचॆय्तु । ५
आश्रितजनपरायणनायीटुं जग-
दीश्वर ! दयानिधे ! गोपते यदुपते ! ६
मूढनां ञानुण्टॊन्नु निन्तिरुवटितन्नो-
टूढावमानमाय वचनं चॊल्लीटुन्नु । ७
मुट्टुं निन्तिरुमनस्सॊन्निये ञङ्ङळ्क्कोर्त्ताल्
मट्टॊरु शरणमिल्लॆन्नतु निरूपिच्चु ८
सर्व्वज्ञनल्लो भवानॆन्नतुकॊण्टुं मम
दुर्व्विनयोक्ति केट्टाल् पॊरुत्तुकॊळ्ळेणमे । ९
चिन्तिक्कवेणं पक्षे सन्धिक्किल् मतियल्लो
निन्तिरुवटितन्नॆ बन्धुवाय् पोकवेणं । १०
अन्धत्वं ञान् चॊल्लुन्नतोर्त्तुळ्ळिल् क्षमिक्कण-
मन्धककुलजातनाकिय जगत्पते ! ११
अन्धनां नरपतितन्नुटॆ पुत्रनायो-
रन्धात्मा सुयोधनन्तन्नोटु पिणङ्ङातॆ १२

अगर सन्धि न हो सकी तो युद्ध ही एक उपाय रह जाता है" सभी सज्जन इस प्रकार कहेंगे। इसलिए मेरी तरफ से किसको भेजा जाय ? अपने मन में ऐसा सोचकर युधिष्ठिर ने निर्मल वासुदेव से कहा। "हे आश्रितवत्सल ! जगदीश्वर ! दयानिधे ! गोपते ! यदुपते ! मुझ मूर्ख को आप महानुभाव से एक लज्जावह बात कहनी है। १-७ यह सोचकर कि आप महानुभाव के अतिरिक्त हम लोगों की और कोई शरण नहीं है, और इसलिए कि आप सर्वज्ञ हैं, मेरी दुर्विनय की बात क्षमा कीजियेगा। इस पर विचार करना ही है, सन्धि अगर हो जाय तो ठीक है। आप महानुभाव ही हमारे बन्धु बनकर चलें। हे अन्धककुल में पैदा हुए जगत्पते ! मेरा यह कहना

बन्धुवत्सलनाय निन्तिरुवटितन्नें-
ब्बन्धुत्वमोटुमनुसरिच्चु पऱयणं । १३
पाति नाटपेक्षिच्चालरुतेन्नवन् चोंल्किल्
पातियुं वेणमेन्निल्लञ्चुदेशमे पोरुं । १४
देशमिल्लेंङ्किलञ्चु गेहमे पोरुमेंन्नाल्
नाशं कूटातेकळिञ्ञीटुकिलते वेण्टू । १५
सारसविलोचननाकिय नन्दात्मजन्
सारनां युधिष्ठिरन् चोंन्नतुकेट्टनेरं १६
तन्नुटे मनक्कान्पिल् हस्तिनपुरत्तिनु
चेन्नुपोरेणं ञान्तानेल्क्कुं मुन्पिलेयेन्नु १७
मुन्नमेयुळ्ळताशु धर्म्मनन्दननाय
मन्नवन् पऱञ्ञप्पोळ् कौतुकमुण्टाय्वन्नु । १८
रण्टुमून्नवस्थकळ् साधिक्केण्टुन्नतिप्पो-
ळुण्टतिन्नाय्क्कोंण्टु ञान्तन्ने चल्किले पोरू । १९
ऎन्नतोर्त्तिरुन्नरुळीटुन्पोळ् कुन्तीपुत्रन्-
तन्नुटे नियोगत्तेक्कैक्कोंण्टु भगवानुं २०
सारथे ! शीघ्रं गरुडद्ध्वजयुक्तमाकुं
तेरु कोंण्टरिकेन्नु दारुकनोटु चोंन्नान् । २१
कण्णुकळ् चुवन्नु कैञेरिच्चु पल्लुं कटि-
च्चण्णोंजनेत्रनोटु भीमसेननुं चोंन्नान् । २२

अन्धापन ही है, आप मुझको क्षमा करें। अन्धे भूपाल के उस अन्धात्मा पुत्र सुयोधन से बिना झगड़ा किये बन्धुवत्सल आप महानुभाव ही बन्धु होने के नाते कह दें। आधा राज्य देने में अगर आपत्ति करेगा तो आधा राज्य न सही, पाँच देश पर्याप्त होंगे। ८-१४ देश देने में अगर आपत्ति है तो पाँच गृह पर्याप्त होंगे, सर्वनाश से अगर हम बच जायेंगे तो इतना ही चाहिए। तब कमललोचन, नन्दपुत्र, कृष्ण सारज्ञ युधिष्ठिर की बात सुनने के बाद, "हस्तिनपुर जाकर सन्धि कराने का भार मैं ही अपने कन्धे पर उठाऊँगा", ऐसे पहले के निश्चय का युधिष्ठिर के द्वारा समर्थन होने पर भीतर बड़ा हर्ष हुआ। "दो तीन् स्थितियाँ पैदा करना है, इस लिए मेरे जाने से ही काम बनेगा"। १५-१९ ऐसा सोचकर भगवान् ने कुन्ती-पुत्र की आज्ञा को स्वीकार किया। "हे सारथि ! गरुड़ का झण्डावाला रथ जल्दी लाओ" ऐसा दारुक से कहा। आँखें लाल करते हुए, हाथ मलते हुए और दाँत काटते हुए

ऎन्तिनु तुरङ्ङुन्नु चॊल्लुकॆन्नोटुकूटि-
च्चिन्तिच्चे नटक्कावू कार्यङ्ङळिनियॆल्लां । २३
धृष्टनां धृतराष्ट्रपुत्रन्टॆ तुट तच्चु-
पॊट्टिच्चु कळकयुं कौरववंशमॆल्लां २४
कॊट्टिक्कॊन्नॊक्कॆ पॊटिपॆट्टुत्तुकळकयुं
दुष्टनां दुश्शासनन्तन्नुटॆ मारु पिळ- २५
न्निष्टमाय् रक्तं कुटिच्चीटुकयॆन्नुळ्ळतुं
पॊट्टनां भीमन् चॆय्कयिल्लयॆन्नुण्टो तोन्नि ? २६
पॆट्टॆन्नु सन्धिचॆय्तुकॊण्टालुं युधिष्ठिरन्
ऒट्टुमे विरोधमिल्लतिनिन्नॆन्नाल् नूनं । २७
गन्धवाहात्मजनां भीमन् चॊन्नतु केट्टु
मन्दहासवुं चॆय्तु माधवनरुळ्चॆय्तु २८
चिन्तिच्चवण्णंतन्नॆ पन्ति ञान् कूट्टुन्नुण्टु
सन्तापमतुकॊण्टु चित्तत्तिलुण्टाकेण्टा । २९
कृष्णयुं कण्णीरोटे कृष्णनोटरुळ्चॆय्तु
कृष्णनुं कृपयोटे कृष्णयोटरुळ्चॆय्तु । ३०
निश्वासमुण्टाकेण्टा विश्वसिच्चालुमॆन्नॆ-
क्कश्मलन् दुश्शासनन्तानुं तन् बन्धुक्कळुं ३१
निश्शेषमॊट्टुक्कणमॆन्नतिन्नत्रे ञानुं
निश्चयं तुटङ्ङुन्नु पोयालुं खेदिक्केण्टा । ३२

भीमसेन ने कृष्ण से कहा। अब क्या शुरू हो रहा है, कहिये। आगे मुझसे परामर्श करने के बाद ही काम चलेगा। धृष्ट धृतराष्ट्रपुत्र की जाँघ मारकर तोड़ डालना, सारे कौरववंश को मार डालकर चूर-चूर कर देना, दुष्ट दुश्शासन की छाती फाड़कर उसका रक्त यथेष्ट पी लेना, यह सब भोला भीम नहीं करेगा, ऐसा सोचा है क्या ? २०-२६ युधिष्ठिर तो झट से सन्धि कर लें, अवश्य मुझे कोई विरोध नहीं है। वायुपुत्र भीम का कहना सुनकर मन्दहास करते हुए माधव बोले। जैसे आपने सोचा है वैसे ही मैं तैयारी कर रहा हूँ, इस लिए घबड़ाना बिलकुल नहीं। कृष्णा (द्रौपदी) ने आँसू गिराती हुई, कृष्णा से कहा, और कृष्ण ने भी करुणा के साथ कृष्ण से कहा। विश्वास न छोड़ना, मुझपर विश्वास करना दुष्ट दुश्शासन और उसके बन्धु निश्शेष समाप्त हो जायँ, इसी हेतु मैं यह सब प्रारम्भ कर रहा हूँ, खेद मत करना। २७-३२ कृष्ण ने कहा—'जैसा तुम चाहती हो वैसा सब

ञान् चाले वरुत्तुवन् वाञ्छितमेन्तु कृष्णन्
पाञ्चालियतु केट्टु तेळिञ्ञु मरुविनाळ् । ३३
दारुकन् कोण्टुवन्न तेरतिल्क्करयेरि-
प्पारातेयेळुन्नळ्ळित्तुटङ्ङि भगवानुं । ३४
वेण्कोट्क्कुट तळ वेण्चमरिकळ् नल्ल
भंगितेटीट्टुमालवट्टङ्ङळ् पलतरं । ३५
पन्नगरिपुतन्ने चिह्नमाय् विळङ्ङीट्टु-
मुन्नतमाय कोटि मिन्नुन्न कोटिक्कूर् ३६
पङ्कजनाथन्तन्टे शंखनादवुं पल
मंगलस्तुतिकळुं वाद्यङ्ङळ् निनादवुं ३७
कल्मषं कळयुन्न चिन्मयन् मनोहरन्
पोन्मणिक्किरीटवुं निर्म्मलचिकुरवुं ३८
मालेयं मेलपोट्टिट्ट फालवुं त्रिभुवन-
पालनादिकळ् चेय्युं चिल्लियुं मकरमां- ३९
कुण्डलं मिन्नीटुन्न गण्डवुं मनोज्ञमां-
कण्मुनविलासवुं कम्रमां नासिकयुं ४०
किञ्चन तुळुम्पुन्न पुञ्चिरिप्पुतुमयुं
चञ्चलाक्षिकळ्मनं वञ्चिक्कुमधरवुं ४१
मुग्धमायुळ्ळ मुखपत्मवुं गळभुवि
मुत्तुमालकळ् वनमालकळ् कौस्तुभवुं ४२

करा दूँगा।' यह सुनकर पाञ्चाली प्रसन्न हुई। दारुक के लाये हुए रथ पर बैठकर भगवान् जल्दी जाने लगे। श्वेतच्छत्र, नवपल्लव, श्वेतचँवर अच्छे और तरह तरह के सुन्दर तालवृन्त, गरुड़ के चिह्नवाला ऊँचा झण्डा-दण्ड और चमकने वाला झण्डा, पङ्कजनाथ के शङ्ख का नाद अनेक मङ्गलस्तुतियाँ, भिन्न-भिन्न वाद्यों के नाद, पाप का नाश करने वाले चिन्मय का मनोहर सोने और मणि का किरीट, निर्मल केश, माला से अलंकृत ललाटदेश, त्रिभुवन की रक्षा करने वाली भौंहें, मकराकार - ३३-३९ कुण्डल, चमकनेवाले कपोल, मनोज आपाङ्गों के विलास, कमनीय नासिका, तनिक विकसित होनेवाली मुस्कुराहट, चञ्चलाक्षियों (महिलाओं) का मन लुभानेवाले अधर, मुग्ध मुखकमल, गले पर मुक्ताहार, वनमालाएँ, कौस्तुभ शिष्टपरिपालन के लिए दुष्ट-निग्रह करने वाला कठिन करकमल, श्रीवत्स, लक्ष्मीदेवी को सानन्द रहने योग्य सुन्दरतम मन्दिररूप वक्ष स्थल, वह उदर जहाँ ब्रह्मा का

शिष्टरक्षणत्तिनु दुष्टनिग्रहं चेय्वान्
निष्ठुरमाय करपत्मवुं श्रीवत्सवुं ४३
इन्दिरादेवि चित्तानन्दमोटिरुन्नीटुं
सुन्दरतरमाय मन्दिरमायिट्टुळ्ळ ४४
वक्षोदेशवुं कमलोत्भवन् पिऱन्नोरु-
कुक्षियुं ब्रह्माण्डङ्ङळसंख्यं किटक्कुन्नो- ४५
रुदरोपरि पोङ्ङुं रोमाळिविलासवुं
मधुराधरीजनं मयङ्ङुं मध्यत्तिङ्कल् ४६
काञ्चनमयमाय काञ्चिकळिट्टुं मञ्ञ-
प्पूञ्चेलयतिन्मीते नानाशोभितङ्ङळाय् ४७
मिन्नुन्न रत्नङ्ङळुमेन्नुळ्ळिल् विळङ्ङुन्न
धन्यपादाब्जङ्ङळुं कण्टु मामुनिकळुं ४८
वेदवादिकळाय भूदेववरन्मारुं
वेदत्तिन् पोरुळाय वेदान्तवेद्यन्तन्टे ४९
पादपत्मवुं कूप्पि स्तुतिच्चु पाटिक्कोण्टु
यादववीरनेळुन्नळ्ळुन्न वळियेकू-
टादरवोटु नटन्नीटिनार् भक्तियोटे । ५०
गोविन्दन्वरवु केट्टादरवोटु भीष्म-
राविम्मोदेन मट्टुं भक्तरायुळ्ळोरेल्लां ५१
मुन्पिनालेळुन्नळ्ळत्तिविटेयेन्नङ्ङोर्त्तु
संभ्रमिच्चलङ्करिच्चीटिनारालयङ्ङळ् । ५२

जन्म हुआ था, असंख्य ब्रह्माण्ड छिप कर रहने वाली उदर के ऊपर विराजमान रोमावली, अङ्गनाजन को मोहित करने वाले मध्य-भाग पर । ४०-४६ विद्यमान स्वर्णमय काञ्चीगुण से शोभित पीताम्बर और उस पर चमकनेवाले अनेक रत्न, मेरे अन्तःकरण में विराजमान धन्य पादपद्म को देखकर मुनिजन, और वेदविद् भूदेवगण, वेदों का प्रतिपाद्य और वेदान्तवेद्य के पादपद्म की ओर हाथ जोड़े यशोगान करते हुए यादवों के वीर के जाने के मार्ग से भक्ति के साथ सादर चले । गोविन्द का आगमन सुनकर भीष्म और अन्य भक्तजन सादर प्रमोद के साथ, यह सोचकर कि बिना सूचना दिये पहले ही आ गये, आलयों को जल्दी जल्दी अलंकृत करने लगे । ४७-५२ भल्लारि विचित्रवीर्य के गृह में जाकर निवास प्रारम्भ करने के बाद धृतराष्ट्र ने कुशल-

मल्लारि विचित्रवीर्यात्मजन्तनिक्कुळ्ळो-
रिल्लवुमकंपुक्कु वसिच्चोरनन्तरं ५३
कुशलप्रश्नादिकळ् चॆय्तितु धृतराष्ट्रर्
कुशलमॆन्नुतन्नॆयरुळ्चॆय्तितु कृष्णन् । ५४
चॆरुतु कार्यमुण्टु परञ्ञुपोवानति-
न्नॆतिरे वरुवन् ञानटुत्तदिनंतन्नॆ । ५५
उळ्ळीटिनेनिप्पोळटुत्तु सन्ध्ययॆन्न-
ङ्ङॊळुन्नळिळनान् जगन्मंगलन् वासुदेवन् । ५६
अच्छन्टॆ भगिनियां कुन्तीदेवियॆक्कण्टि-
ट्टच्युतन् विशेषङ्ङळॊक्कवेयरियिच्चान् । ५७
पण्टु कीळ्क्कळिञ्ञतुं वर्त्तमानवुम्मेलि-
लुण्टावानिरिक्कुन्न वार्त्तयुमरुळ्चॆय्तु । ५८
कात्तुकॊळ्ळुक नीयॆन्मक्कळयॆन्नु कण्णीर्-
वार्त्तवळुटॆ दुःखं तीर्त्तु माधवन् पिन्नॆ ५९
धार्त्तराष्ट्रन्टॆ गृहं पुक्कितङ्ङवर्कळ्
पार्त्तु निन्नॆतिरेट्टु सल्क्करिच्चिरुत्तिनार् । ६०
ऊणिनु विदुरर्तन् वीट्टुपुक्कितु कृष्णन्
मानसं तॆळिञ्ञवनानन्दमुण्टाय्वन्नु । ६१
क्षत्तावु भक्तिपरवशनाय् वन्नु पुरु-
षोत्तमन् भक्तवात्सल्यं कॊण्टुमतुपोलॆ । ६२

प्रश्न पूँछे और कृष्ण ने उत्तर दिया-"सब कुशल ही है। एक छोटा सा काम है सुनाना। उसके लिए मैं कल ही आप के पास आऊँगा। अब मैं थका हुआ हूँ और सन्ध्या भी निकट है"। ऐसा कहकर जगन्मङ्गल वासुदेव चले गये। अपने पिताजी की बहिन कुन्तीदेवी का दर्शन करके अच्युत ने सारा वृत्तान्त उनको सुनाया। जो बातें हो चुकी हैं, जो वर्तमान हैं और जो होने को हैं, सब बतला दिया। ५३-५८ 'मेरे पुत्रों की रक्षा करो' ऐसा आँसू गिराती हुई कहनेवाली कुन्ती का दुःख दूर करके माधव धृतराष्ट्र के घर गये, जो उनकी प्रतीक्षा कर ही रहे थे। उन्होंने कृष्ण का सत्कार किया। भोजन के लिए कृष्ण विदुरजी के यहाँ चले गये। प्रसन्न होकर उन्होंने आनन्द का अनुभव किया। विदुरजी भक्तिपरवश हुए और पुरुषोत्तम भी भक्तवात्सल्य के कारण वैसे ही हुए। मुग्धलोचन (कृष्ण) ने विदुर से कहा—

मुग्धलोचननरुळिच्चेय्तु विदुररो-
टेन्नयुं सुखं वन्नितिविटे वन्नमूलं । ६३
दुग्धमाकिलुं कय्क्कुं दुष्टर् नल्कियालेंटो !
भक्तन्मार् तरिकिले भुक्तिक्कु रसमुळ्ळू । ६४
इत्तरमरुळ्चेय्तु विप्ररुं तानुंकूटि-
यत्ताळमुण्टु नल्ल मेत्तमेल् करेरिनार् । ६५
पार्त्थन्मारुटे नल्ल वार्त्तयुमरुळ्चेय्तु
रात्रियुं कळिञ्ञितु मार्त्ताण्डनुदिच्चप्पोळ् । ६६
सन्ध्ययुं कळिच्चाशु नित्यकर्म्मङ्ङळुं चे-
य्तन्तणर् चुळन्नोरु तेरतिल् करेरिनान् । ६७
मन्दमेन्नियें कृष्णनंबिकासुतन्तन्टे
मन्दिर मकंपुक्कु सुन्दरन् नन्दात्मजन् । ६८
कोंटुत्तु सिंहासनमिरिप्पान् नृपतियु-
मटुत्तु भीष्मद्रोणविदुरादिकळेल्लां । ६९
परन्न सभ तन्निल् निरञ्ञु महाजनं
परञ्ञु तुटङ्ङिनान् माधवन् कार्यङ्ङळुं । ७०
अंबिकातनयनुं तन्नुटे सुतन्मारुं
निर्म्मलन्मारां मुनिवर्ग्गवुं द्विजन्मारुं ७१
द्रोणरुं कृपरुमश्वत्थामा विदुररुं
मानिच्चु केळ्क्क भीष्मर् कर्ण्णनुं शकुनियुं । ७२

यहाँ आने से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। दुष्टों का दिया दूध भी कड़ुआ होता है, भक्तों का दिया ही खाने में स्वाद रखता है। ५९-६४ इस प्रकार बातें करते हुए विप्रों के साथ भोजन करके एक अच्छे गये पर सब लोग बैठ गये। पाण्डवों के सम्बन्ध में वार्तालाप होता रहा। इस प्रकार रात बीत गयी और सूर्योदय हुआ। नित्यकर्म और सन्ध्या करने के बाद (श्रीकृष्ण) ब्राह्मणों के साथ रथ पर बैठ गये। सुन्दर ने अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) के घर में प्रवेश किया। राजा ने उनको बैठने के लिए सिंहासन दिया। भीष्म, द्रोण, विदुर, आदि उनके पास पहुँचे। विशाल सभा में जनता इकट्ठा हुई थी और माधव ने कार्य प्रस्तुत किया। ६५-७० धृतराष्ट्र और उनके पुत्र, निर्मल मुनिवर्ग और ब्राह्मण, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा और विदुर, भीष्म, कर्ण और शकुनि, सब सादर सुनें। बीती बातों को मैं न सुनाऊँगा, युधिष्ठिर ने जो न्यूनतम बात कही है वह सुनिये। हे सुयोधन! चन्दवंश का

कळिञ्ञ वृत्तान्तङ्ङळ् परञ्ञुतुटङ्ङेण्टा
किळिञ्ञु धर्म्मात्मजन् परञ्ञ वाक्कु केळ्प्पिन् । ७३
सोमवंशत्तिल् पण्टुळ्ळाचारमरियायिकिल्
मामुनिजनत्तोटु चोदिक्क सुयोधन ! ७४
नाळिकनेरंपोलुं मूत्तवन्तन्ने नाटु-
वाळुकेन्नतेवरू नीति नी निरूपिक्क । ७५
पूर्व्वन्मार् पण्टु वाण केळियुं निनक्किल्ले ?
सार्व्वभौमत्वं तन्ने भाविच्चाल् वन्नुकूटा । ७६
अेन्नतु केट्टु दुरियोधननरुळ् चेय्तान्
चोन्नतु नन्नुनन्नु देवकीतनया नी ! ७७
चोल्लेळुं ययातियां भूपतितन्टे मक्क-
ळल्लयो यदुमुतल् नाल्वरुमिरिक्कवे ७८
पुरुवल्लयो पण्टु पारिन्नु पतियाय-
तारुमेयरियातेयल्लिवयिरिक्कुन्नु । ७९
नन्नु निन् केट्टुकेळि मन्नव ! सुयोधन !
निन्नोटोन्नुण्टु परयुन्नु आनतु केळ् नी । ८०
पूज्यनाय् नृपगुणयोग्यनायुळ्ळवने
राज्यत्तिल् प्राप्तियुळ्ळतेन्नतुकोण्टल्लयो ? ८१
निन्नुटे तातन् धृतराष्ट्रर्तानिरिक्कवे
मन्नवनायि वाणू पाण्डुवेन्नरिक नी । ८२

परम्परागत आचार अगर नहीं मालूम है तो महामुनियों से पूंछो। नाडिका भर के लिए भी ज्येष्ठ ही राज कर सकता है इस नीति पर तुम विचार करो। हमारे पूर्वजों ने कैसे राज किया था, तुमने सुना ही होगा ? स्वयं अपने को सार्वभौम मानने पर कुछ न होगा। ७१-७६ यह सुनकर दुर्योधन ने कहा— "हे देवकीपुत्र ! तुमने ठीक ठीक कहा ! विख्यात राजा ययाति के यदु आदि चार पुत्रों के रहते ही पुरु ही राजा हुआ, यह बात किसी से छिपी नहीं है"। हे राजा सुयोधन ! तुमने अच्छी बात सुन रखी है ! मैं एक बात बतलाता हूँ सुनो। जो पूज्य है और नृपगुणों से युक्त है वही राज करने का अधिकारी है। इसी लिए तो तुम्हारे पिताजी धृतराष्ट्र के रहते पाण्डु ही राजा हुआ, जान लो। इसी प्रकार पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को सब अपने वश में लाकर राज नहीं करना चाहिये ? ७७-८३ अगर कहोगे कि ये पाण्डु

अप्पोंळो पाण्डुपुत्रनाकिय युधिष्ठिर-
नेंप्पोरुमटक्किकवाणीटुकयल्लो वेण्टू ? ८३
पाण्डुविन् पुत्रर्तन्नेयल्लवरेंङ्किल् चोंल्लां
पाण्डवन्मारिल् पक्षपाति नी कोपिक्कोंल्ल । ८४
मामुनिशापंकोंण्टु काननंतन्निल् पाण्डु
भामिनीजनत्तोटु वेरुपेंट्टिरुन्ननाळ् ८५
मट्टु कण्टवर्कळ्क्कु मक्कळायुण्टायवर्
पट्टुमो राज्यं वाळ्वानेंन्नु नी परञ्ञालुं । ८६
ओंङ्किलो निन्टे तातनंबिकासुतन्तानुं
तिङ्कळ्तन् कुलजातनल्लेंन्नु धरिक्कणं । ८७
विचित्रवीर्यन् नृपन् मरिच्चशेषत्तिङ्कल्
विचित्रमत्रे पिरन्नुण्टाय प्रकारवुं । ८८
अक्कथ निल्क्क निनक्कोंक्क मूळरुतेंङ्कि-
लिक्कालं पातिराज्यं पकुत्तु कोंटुक्क नी । ८९
कोंटुक्कयिल्ल राज्यं पाति ञानोंन्नुकोंण्टुं
कोंटुप्पानवकाशमिल्लवर्क्करिञ्ञालुं । ९०
ओंङ्किलोरञ्चु देशमिरिप्पान् कोंटुक्क नी
सङ्कटमावर्कुं वेण्ट नाशवुमुण्टाकेण्ट । ९१
आग्रहं परयातें वाक्कु मुट्टियाल् पिन्ने-
याक्कर्कानुं कोंटुक्कणमेंङ्किलन्तणवर्क्कत्रे । ९२
राज्यवुं पुरग्रामदेशङ्ङळ् वेण्टायेंङ्किल्
त्याज्यरल्लवरन्नु निन्नुटे कृपयाले ९३

के पुत्र नहीं हैं तो पाण्डवों का पक्षपाती मैं कहूँगा, क्रुद्ध न हो जाओ। अगर तुम कहोगे कि महामुनि के शाप के कारण जब पाण्डु स्त्रियों से अलग होकर वन में रहते थे) तब जिस किसी से पैदा हुए पुत्र राज्य कैसे कर सकते हैं ? तो तुम याद रखो कि तुम्हारा पिता अंबिका का पुत्र चन्द्रवंश का पैदा हुआ नहीं है। राजा विचित्रवीर्य के देहान्त होने के बाद जिस प्रकार उनका जन्म हुआ वह विचित्र ही है। यह किस्सा रहने दो, वह तुम से कहने योग्य नहीं है। इस समय तो आधा राज्य बाँट कर दे दो। आधा राज्य तो मैं कभी न दूँगा और उनको लेने का अधिकार भी नहीं है। अच्छा तो रहने के लिए उनको पाँच देश दे दो, किसीं को दु:ख न हो और सर्वनाश भी न हो। ८४-९१ अपनी अभिलाषा तो नहीं बतला रहे हैं, अगर जवाब न दे सकने

वसिप्पानञ्चु गृहं चमच्चुकोंटुक्क नी
वसुक्कळ् धान्यङ्ङळुं पकुत्तु कोंटुक्केण्ट । ९४
अतिनु मटियेङ्किलैवक्कुं कूटियोरु-
सदनं नाट्टिलोरुभागत्तु कोंटुक्क नी । ९५
अन्धककुलजातनन्तकान्तकसेव्य-
मन्तवुमादियुमिल्लातवन् परन्पुमान् ९६
बन्धूकसममाय चेन्तळिरटियुळ्ळोन्
बन्धुक्कळिल्लातोर्क्कुं बन्धुवाकिय कृष्णन् । ९७
बन्धुररूपन् पाण्डुराजनन्दनन्मार्क्कुं
बन्धुवायोरु दूतनिन्नतु परञ्ञप्पोळ् ९८
अन्धनां नरपतिनन्दननुरचेय्तान्
बन्धमिल्लेन्ताकिलुमेन्नोटित्तरं चोल्वान् । ९९
ऍन्तिनु पलतरमिङ्ङने परयुन्नु
कुन्तितन्मक्कळेन्नु कूरुकोण्टल्लयल्ली ? १००
सन्ततं परयुन्नु देवकीतनय ! नी
सूचकनाय निन्टे वाक्कुकळ् केळ्क्कुन्तोरुं १०१
सूचितन्मुनकोण्टु कुत्तुवानुळ्ळ निलं
कोंटुक्कुं ञानेन्नतु निनच्चीटेण्टयेतुं ।
पटय्क्कु वरुन्नाकिल् कण्टुपोकणंतन्ने । १०२
नन्नल्ल सुयोधना ! नाशङ्ङळुण्टाय्वरुं
मन्नवर्क्कवकाशमुळ्ळ नाटयच्चालु- १०३

के कारण किसी को देना ही है तो ब्रह्मणों को देंगे। अगर राज्य, पुर, ग्राम, और देश नहीं देना है तो अपनी ही कृपा से उनके रहने के लिए पाँच गृह बना दो, क्योंकि वे त्याज्य तो नहीं हैं। धनधान्य न बाँट दो। इतना भी अगर नहीं करना है तो कम से कम देश के किसी कोने में पाँचों का एक निवासस्थान दे दो। अन्धक वंश में उत्पन्न, अन्तक के सेव्य, अन्त और आदि रहित, पर पुरुष, बन्धूकपुष्प के समान पादपल्लववाले, सुन्दर बन्धुहीनों के बन्धु कृष्ण ने, पाण्डवों का दूत बनकर जब इस प्रकार कहा तब अन्धे राजा के पुत्र ने उत्तर दिया— कोई कारण नहीं है कि आप मुझ से इस प्रकार कहें। ९२-९९ मुझ से क्यों तरह तरह के प्रस्ताव आप कर रहे हैं? पाण्डव कुन्ती के पुत्र होने के नाते ही तो आप देवकीपुत्र मुझ से बार-बार कह रहे हैं। आप सूचक (दूत) होकर जितना भी कहते जाइये, सुई के नोक भर की भी

मिल्लॊरु भेदमॆनिक्कारुमेयरिञ्ञालुं
नल्लतु चॊल्लीटणमॆङ्किलुमॆल्लारोटुं । १०४
कालदेशावस्थयुं धर्म्मवुमधर्म्मवुं
मूलवुं तम्मिलुळ्ळ दौर्ब्बल्यप्राबल्यवुं १०५
मॊळियुं मॊळिक्केटुं वळियुं वळिक्केटु-
मळकोटकतारिलावोळमोर्त्तीटणं । १०६
कॊटुत्तार् कॊल्लुवानाय् भीमनु विषं मुन्नं
कॆटुप्पान् पान्पुतन्नाल् कटिप्पिच्चितु पिन्नॆ । १०७
उऱक्कत्तोटॆ कालुं करवुं वरिञ्ञुट-
नुऱक्कक्कॆट्टि गंगाजलत्तिलॆरिञ्ञतुं । १०८
मऱप्पानरुतातवण्णं नी पिन्नॆ नन्ता-
यरक्किल्लत्तिलिट्टु चुट्टतुं पिन्नॆ निङ्ङळ् । १०९
कळ्ळच्चूतालॆ नाटुमर्त्थवुं पऱिच्चतुं
कळ्ळक्काटतिल्परं पिन्नॆयुं काट्टि निङ्ङळ् । ११०
दुष्टनां दुश्शासनन् पॆट्टॆन्नु सभामद्ध्ये
मट्टोलुंमॊळियाळां पाञ्चालीतलमुटि १११
पिटिच्चु वलिच्चुटनीळ्त्ततुमवळुटॆ-
युटुत्त पुटवयुमळिच्चुकळञ्ञतुं । ११२

भूमि मैं दूँगा इस भ्रम में आप न रहिये। अगर वे युद्ध के लिये आवेंगे तो मैं देखलूँगा"। (तब कृष्ण ने कहा—) हे सुयोधन ! यह ठीक नहीं है। इस से नाश हो जायगा। उन राजाओं का जितना अधिकार है उतना दे दो, मुझे कोई आपत्ति नहीं है, चाहे जो जान लो। हित की बात सभी से कहना ही है। काल, देश, अवस्था, धर्म, अधर्म, मूलकारण, दूसरे की अपेक्षा दौर्बल्य और प्राबल्य, बातों की अच्छाई और बुराई, अच्छा और बुरा मार्ग यह सब ठीक से ध्यान में रखना चाहिये। १००-१०६ पहले तो उन्होंने (कौरवों ने) भीम को विष खिलाया, तदनन्तर उनको साँप से डँसवाया। तत्पश्चात् नींद में हाथ-पैर बाँधकर गंगा के प्रवाह में फेंक दिया। फिर आप लोगों ने एक अविस्मरणीय बात की, यानी उन सबको जतुगृह में बन्द करके जलाया। कपट की जुआ के द्वारा उनका राज्य छीन लिया, इससे भी अधिक दुष्टता तुम लोगों ने दिखलायी। दुष्ट दुश्शासन ने सभा के बीच मीठे स्वरवाली पाञ्चाली का केशपाश पकड़कर खींचा और उसकी शाटी को उतार दिया। आप सब लोगों ने इसको पराक्रम

इत्तरं पराक्रममायतु निङ्ङळ्क्कॊल्ला-
मॆन्नयुं परिभवमुण्टर्वक्किंतुमूलं । ११३
निस्त्रपं कष्टं निङ्ङळ् चॆय्तवयॆल्लामुळ्ळिल्
शक्तनां भीमसेनन् मऽन्निलिरिक्कुन्नु । ११४
कॊटुक्क पातिनाटिन्नवक्कुंमल्लयाय्कि-
लॊटुक्कुं भीमसेनन् निङ्ङळॆयल्लांकॊण्टुं । ११५
मुन्पिले हिडिम्बनॆक्कॊन्नतुं बकनाय-
वन्पनॆ वधिच्चेकचक्रयिलिरुन्नतुं ११६
मागधनाय नृपवीरनॆ वधिच्चतुं
वेगत्तिल् किळक्कुदिक्कॊक्कवे जयिच्चतुं । ११७
शक्तनां किम्मीरनॆक्कुत्तियङ्ङमर्त्ततुं
मुत्तणिमुलयाळां द्रौपदितन्टॆ चॊल्लाल् ११८
कल्याणसौगन्धिकं कॊण्टुपोरुन्ननेरं
चॊल्लुळ्ळ गन्धर्व्ववीरन्मारॆज्जयिच्चतुं ११९
ऒत्तिय जयद्रथन्तन्नॆ मालुपॆटुत्ततु-
मॆन्नयुं विरुतुळ्ळ मल्लनॆ वधिच्चतुं १२०
कीचकनादिकळॆक्कालनूक्कंयच्चतु-
माशुगसुतनाय भीमनॆन्नरिञ्ञालुं । १२१
कॊल्लुमेयवन् निङ्ङळ् नूरुपेरॆयुमॆटो
नल्लतु पाति नाटु कॊटुक्क सुयोधन ! १२२

समझा परन्तु उनका इस से बड़ा परिभव हुआ। १०७-११३ आप लोगों ने जो निर्लज्ज होकर यह सब किया है उसको शक्तिशाली भीमसेन नहीं भूले हैं। आधा राज्य दे दो, नहीं तो भीमसेन आप लोगों को खतम कर देगा। पहिले हिडिम्ब का वध, बकासुर की हत्या करके एकचक्र में निवास, राजा मागध का वध, सारी पूर्वदिशा की विजय, शक्तिमान् किम्मीर का वध और मुक्ताओं से अलंकृत स्तनवाली द्रौपदी के कहने से कल्याणसौगन्धिक नामक पुष्प लाते समय विख्यात वीर गन्धर्वों को जीतना, उस जयद्रथ को दुःख पहुँचाना जो कहीं से आ गया था और अत्यन्त शक्तिशाली मल्ल का वध, कीचक आदियों का यमसदन भेज देना, यह सब, जान लीजिये, वायुपुत्र भीम ने ही किया है। ११४-१२१ वह आप सौओं को मार डालेगा। इस लिए अच्छा यही होगा कि आधा राज्य दे दो। धनुर्धरों में श्रेष्ठ अर्जुन ने ही तो पाञ्चाल राजा को बाँधा था? अर्जुन ने ही उस गन्धर्व को

विल्लेंटुत्तवर्कळिल् नल्लनां धनञ्जय-
नल्लयो पाञ्चालनां मन्ननें बन्धिच्चतुं । १२३
रात्रियिलेंतित्तोंरु गन्धर्व्वन्‌तन्नें वेंन्नान्
पार्त्थनल्लयो यन्त्रमेंय्तुटन् मुरिच्चतुं । १२४
पोक्कोंरुमिच्च नम्मेंयोंक्कवे जयिच्चतुं
भोष्कल्ल बलदेवादिकळां ञङ्ङळेयुं । १२५
जयिच्चु सुभद्रयेंक्कोंण्टवन् पोन्नुकोंण्टान् ।
जयिच्चान् वरिषिच्चु वन्नोंरु शक्रनेयुं । १२६
खाण्डवं दहिप्पिप्पान् शरकूटत्तेंच्चेंय्तु
गाण्डीवं वाङ्ङिक्कोंण्टानग्नियोटतुमूलं । १२७
उत्तरयाय दिक्कुमोंक्कवे जयिच्चव-
नुत्तममाय कैलासाचलंतङ्कल् चेंन्नान् । १२८
मुक्कण्णन्‌तन्नोटु पोरेंन्नयुं पारं चेंय्तान्
कैक्कोंण्टान् पाशुपतं वानुलोकत्तु चेंन्नान् । १२९
देववैरिकळेयुं निग्रहिच्चविटन्नु-
देवकळोटुमस्त्रमेंप्पेरुं वाङ्ङिक्कोंण्टान् । १३०
निन्नेयुं कॅट्टिक्कोंण्टुपोयोंरु चित्ररथन्-
तन्नेयुं वेंन्नु निन्नें वीण्टुकोंण्टतुमवन् । १३१
पोक्कोंरुमिच्चु निन्न निङ्ङळेयोंक्क वेंन्नु
गोक्कळें वीण्टुकोंण्टुपोयतुमवनल्लो । १३२

मारा जो रात को लड़ने आया था और उसी ने बाण से यन्त्र को तोड़ा था और हम सबको हराया था जो लड़ने के लिए एक हो गये थे। मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ, बलदेव आदि हम सब को जीतकर सुभद्रा को वह ही लाये थे। जब शक्र पानी बरसाते गये तब उनको पराजित किया। खाण्डव वन को जलाने के लिए शरों का एक भवन बनाया और उसके कारण अग्नि से गाण्डीव धनुष प्राप्त किया। उत्तर की दिशा को जीतने के बाद उत्तम कैलास पहुँचे। १२२-१२८ त्रिनेत्र (शिवजी) के साथ घोर युद्ध किया, और पाशुपतास्त्र स्वीकार करके स्वर्गलोक गये। वहाँ देवों के शत्रुओं का निग्रह किया और देवों से अनेक अस्त्रों का ग्रहण किया। जब गन्धर्व चित्ररथ तुम को बाँधकर ले जा रहा था तब तुमको छुटवाकर लानेवाले वे ही हैं। जब आप लोग सब एक होकर युद्ध कर रहे थे तब आपको पराजित कर गायों को वापस ले जाने वाले वे ही हैं। जिन्होंने इस प्रकार के अनेक विक्रम

इत्तरं पलपल विक्रममॆल्लां चॆय्त
वृत्रारिपुत्रन्तन्ने मिक्कतुमॊट्टुक्कीटुं । १३३
अर्क्कनन्दननाय कर्ण्णनॆ विशेषिच्चुं
शक्रनन्दनन्तन्नॆ कॊल्लुमॆन्नरिञ्ञालुं । १३४
अच्छनॆप्पिटिच्चुकॆट्टिप्पिच्च परिभवं
वच्चुकॊण्टिरिक्कुन्नु धृष्टद्युम्ननुमॆटो । १३५
निश्चयं द्रोणर्तन्नॆक्कॊन्नीटुमवन्तानु
पिच्चयाय् शिखण्डियुं भीष्मरॆ वधिच्चीटुं । १३६
शल्यरॆ युधिष्ठिरन् कॊल्लुमॆन्नरिञ्ञालुं
कळ्ळनां शकुनियॆक्कॊन्नीटुं सहदेवन् । १३७
मट्टुळ्ळ बन्धुक्कळुं मक्कळुं कनिष्ठरुं
पट्लर् कालन्मारां पाण्डवरॊट्टुक्कीटुं । १३८
नल्लतु पाति नाटु कॊटुक्क सुयोधना !
नल्लतु वरिकयिल्लल्लायिकिलॊन्नुकॊण्टुं । १३९
श्रीवासुदेवन् जगन्नायकनिवयॆल्ला-
मावोळमरुळ्चॆय्त वाक्कुकळ् केट्टशेषं । १४०
अंबिकासुतन्तानुं भीष्मरुमाचार्यनु-
मन्पुळ्ळ मट्टुळ्ळवर्तङ्ङळुमुरचॆय्तार् । १४१
कुरळक्कारन् चॊन्न वाक्कुकळ् केळात नी-
यरुळिच्चॆय्तवण्णं केळ्क्कॆन्नारॆल्लावरुं । १४२

किये इन्द्र के वह पुत्र सब समाप्त कर देंगे। सूर्यपुत्र कर्ण को विशेष कर शक्रनन्दन (अर्जुन) ही वध करेगा, जान लीजिये। अपने पिता के पकड़कर बाँधे जाने का परिभव धृष्टद्युम्न अब भी महसूस करता है। वह अवश्य द्रोण को मारेंगे और निश्चय ही शिखण्डी भीष्म को मारेंगे। १२९-१३६ युधिष्ठिर तो शल्य का वध करेंगे और दुष्ट शकुनि को सहदेव मारेंगे। अन्य बन्धुओं, पुत्रों और कनिष्ठों को शत्रुओं के नाशक पाण्डव अवश्य समाप्त करेंगे। हे सुयोधन ! अच्छा यही होगा आधा राज्य दे दो, नहीं तो परिणाम किसी भी तरह अच्छा नहीं हो सकता है। जगन्नायक श्रीवासुदेव की यथेष्ट कही हुई इन बातों को सुनकर अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र), भीष्म, आचार्य और प्रेम रखने वाले अन्य लोगों ने कहा— लड़ानेवालों की बात सुनकर अभी कही गयी बात के अनुसार काम करो, ऐसा सब ने कहा। सभा के सभी सदस्यों की यह हितयुक्त बात सुनकर क्रोध के कारण सुयोधन तो

सभयिलिरुन्नवरेल्लारुमोरुपोले
शुभमायुळ्ळ वाक्कु परञ्ञु केट्टनेरं १४३
निरन्नीलेतुमुळ्ळिल् निरञ्ञ कोपत्तोटुं
इरुन्न सुयोधनन् नटन्नान् कोपत्तोटे । १४४
जननि गान्धारियुं परञ्ञाळिनि महा-
जनङ्ङळिवर्चोल्लु केळ्क्क नी सुयोधना ! १४५
अेन्नम्म परञ्ञतु केळातेयवन् पोयि
कर्ण्णनुं शकुनियुमायिट्टु निरूपिच्चु । १४६
गोपालनाय कृष्णनिविटे सभयिङ्कल्
भूपालरोटुं सिंहासनवुमेरियोप्पं । १४७
इरिक्कुन्नतु योग्यमल्ल नां चिलर्तन्ने
परक्कयरियातेयोन्नु चेय्यणमिप्पोळ् । १४८
दूतन्मारवद्धयन्मारेन्नल्लो शास्त्रविधि
पातकमुण्टां कोन्नालतिनुण्टुपायवुं । १४९
पिटिच्चु केट्टीटणं पिन्नेप्पाण्डवर् पोन्नु
नटिच्चुवरिकयिल्लेन्नतुमरिञ्ञालुं । १५०
मिटुक्कुं वच्चु काट्टिलिरिक्केयुळ्ळू पिन्ने-
प्पटयक्कु भाविक्कुन्नतारेन्नुमरियणं । १५१
पटुत्वमेल्लामिवन्तनिक्काकुन्नु नूनं
किटक्कवेणं कारागृहत्तिल्त्तन्नेयिवन् । १५२

तनिक भी न विचला। क्रुद्ध होकर वह वहाँ से चला गया। १३७-१४४ माता गान्धारी ने भी कहा—"बेटा, सुयोधन ! अब इन बड़े लोगों की बात सुनो"। माँ की भी ऐसी बात न सुनकर वह निकल गया और उसने कर्ण और शकुनि के साथ परामर्श किया। यह उचित नहीं है कि यह ग्वाला कृष्ण यहाँ सभा में आकर राजाओं के साथ सिंहासन पर बैठे। अतएव हम ही कुछ लोग एकान्त में कुछ करें। शास्त्र में लिखा है कि दूत अवध्य है। इस लिये उसके वध से पाप हो जायगा। परन्तु एक और उपाय है। उसको पकड़कर बाँधा जाय। तदनन्तर, जानलीजिये, पाण्डवों को यहाँ अकड़कर आने की हिम्मत न होगी। उनको अपनी कुशलता को लेकर वन ही में रहना होगा। फिर देखें युद्ध के लिये कौन आनेवाले हैं ? निस्सन्देह करने करानेवाले तो यही हैं, इसलिए यह कारागृह ही में पड़े रहें। १४५-१५२

विश्वरूपदर्शनं

इङ्ङने रहस्यमाय् तङ्ङळिल् मन्त्रिक्कुन्न-
तङ्ङरिञ्ञुणर्त्तिच्चु सात्यकियतुनेरं । १
पोक नामिविटुन्नु वैकरुतिनियेतुं
पोर् करुतियुमल्ल नामिविटेक्कु पोन्नु । २
सात्विकनायुळ्ळोरु सात्यकियुणर्त्तिच्च-
वार्त्त केट्टतुनेरं गोविन्दन् तिरुवटि । ३
तरुणादित्यबिंबं पतिनायिरं कूटि-
योरुमिच्चुदिच्चुटनुयरुन्नतु पोले । ४
करुणाकरन् देवन् कमलविलोचनन्
विरवोटेळुनेट्टु पेरिकेक्कोपत्तोटे । ५
वरिक पिटिक्कोटो केट्टुवान् सुयोधन !
पेरिके वैकिक्केण्टा पक्षे, वन्नटुत्तालुं । ६
असंख्यं मुखङ्ङळुमसंख्यं बाहुक्कळु-
मसंख्यमायुधङ्ङळसंख्यं चरणङ्ङळ् ७
शङ्करन् विरिञ्चनुमिन्द्रादिदेवकळुं
पङ्कजविलोचनन्तङ्कले काणाय्वन्नु । ८
रोमङ्ङळ्तोरुमोक्क वानवरायुंवन्नु
कोमळमाय रूपं घोरमाय् काणाय्वन्नु । ९

विश्वरूपदर्शन

इस एकान्त परामर्श को जानकर सात्यकि ने सूचना दे दी। उसने कहा— "हम लोग यहाँ से चलें, अब विलम्ब न करें युद्ध करने के लिए तो हम यहाँ नहीं आये"। सात्विक सात्यकि की सूचना सुनकर भगवान् गोविन्द, करुणाकर, देव, कमलविलोचन सुचारु रूप से उठे, मानो दस हज़ार तरुण आदित्य बिंब एक साथ उदय हो रहे हों। वे अत्यन्त क्रुद्ध थे। उन्होंने कहा— हे सुयोधन ! पकड़कर बाँधने के लिये आओ ! अधिक विलम्ब न करो, निकट आजाओ ! । १-६ असंख्य मुख, असंख्य बाँहें असंख्य आयुध, असंख्य चरण, शङ्कर, ब्रह्मा, इन्द्र आदि देव पङ्कजविलोचन (कृष्ण) में दिखाई दिये। एक एक रोम देव बन गया और उनका कोमल रूप घोर हो गया। विष्णु का विश्वरूप देखकर भक्तजन ने कहा— हे कृष्ण !, हे गोविन्द ! हे शिवराम ! हे राम !

विष्णुविन् विश्वरूपं कण्टिट्टु भक्तन्मारुं
कृष्णा ! गोविन्दा ! शिवराम ! रामात्मारामा ! १०
लोकाभिरामा ! रमारमणा ! यदुपते !
गोकुलपते ! जगन्नायक ! धरापते ! ११
विश्वमायतु नीये ! विश्वकारणं नीये
विश्वकार्यवु नीये ! विश्वपालनु नीये १२
विश्वतातनु नीये विश्वमातावु नीये
विश्वरूपनु नीये विश्वनायका ! पोट्टी ! १३
निष्कळनाकुन्नतुं सकळनाकुन्नतुं
निर्गुणनाकुन्नतुं सगुणनाकुन्नतुं १४
पुरुषनाकुन्नतुं प्रकृतियाकुन्नतुं
पुरुषोत्तमा ! पोट्टि ! निन्तिरुवटियल्लो । १५
शिवनायीट्टुन्नतुं शक्तियायीट्टुन्नतुं
भुवनेश्वरा ! पोट्टि ! निन्तिरुवटियल्लो ! १६
जीवनायीट्टुन्नतुं परनायीट्टुन्नतुं
केवलस्वरूपनां निन्तिरुवटियल्लो । १७
क्षेत्रमायीट्टुन्नतुं क्षेत्रज्ञनाकुन्नतुं
धात्रियिल् पिरन्नोरु कृष्णनां भवानल्लो । १८
पालय कृपालया ! शरणं नारायण !
पालय विष्णो ! रामकृष्णा ! गोविन्दा ! हरे ! १९

हे आत्माराम ! लोकाभिराम ! रमारमण ! यदुपते ! गोकुलपते ! जगन्नायक ! धरापते ! सारा विश्व तू है, विश्व का कारण तू है, विश्व का कार्य तू है, हे विश्वनायक ! हे रक्षक ! विश्व का पिता तू है, विश्व की माता तू है, विश्वरूप तू ही है, हे विश्व के नायक ! तू ही रक्षक है । ७-१३ निष्कल भी तू है और सकल भी तू है निर्गुण भी तू है और सगुण भी तू है पुरुष भी तू है और प्रकृति भी तू है हे पुरुषोत्तम ! हे रक्षक !, यह सब आप महानुभाव हैं। हे भुवनेश्वर ! हे रक्षक ! आप महानुभाव ही शिव भी हैं और शक्ति भी हैं। केवल स्वरूप आप महानुभाव ही जीवात्मा भी हैं और परमात्मा भी। पृथ्वी पर जन्म लिये हुए आप ही क्षेत्र भी हैं और क्षेत्रज्ञ भी। हे कृपालय ! पालन करो ! हे नारायण ! तुम ही शरण हो ! हे विष्णो ! पालन करो, हे रामकृष्ण ! हे गोविन्द ! हे हरे ! १४-१९ इस प्रकार भिन्न भिन्न लोगों ने

इत्तरमोरो जनमद्भुतं पूण्टु पूण्टु
पत्तुदिक्किलुं निन्नु वाऴ्त्तियुमानन्दिच्चु २०
भक्तियाल् स्तुतिक्कयुं नृत्तंचेय्तीटुकयुं
मुक्तिदानैकमूर्त्तितन्महिमानं कण्टु २१
तोऴुतुं वीणु नमस्करिच्चुं वणङ्ङियुं
मुऴुकि परमानन्दांबुधितन्निल् वीणु । २२
करञ्ञुं चिरिच्चुं कण्णिमच्चुं मिऴियातें
निरञ्ञ भक्तियोटुं मामुनिजनङ्ङळुं २३
वेदवेदान्तार्थङ्ङळ् तिरियाञ्ञुऴन्नीटुं
वेदियरोटुं नल्ल भीष्मरुं विदुररुं २४
यक्षकिन्नरसिद्धगन्धर्व्वासुरभूत-
रक्षोगुह्यकप्रेतकिंपुरुषादिकळुं २५
नाकवासिकळ् नल्ल नागनायकन्मारुं
नाकनारिकळोटु नारिमार् मट्टुळ्ळोरुं । २६
गूढस्थनायवनेक्कूटस्थनायिक्कण्टु
पाटियुमानन्दं पूण्टाटियुं चमञ्ञुते । २७
दुष्टरायुळ्ळ जनमोक्कवे कण्णुंपोत्ति-
प्पोट्टेन्नु मलमूत्रादिकळुं वीणुवीणु २८
पेट्टपाटोटुमोरो गुहकळ्तोरुं पुक्कार्
शिष्टरायुळ्ळजनं कण्टुकण्टिरिक्कवे । २९

अद्भुत अनुभव करते हुए दसों दिशाओं में रहकर, प्रशंसा करते हुए और आनन्द का अनुभव करते हुए भक्ति के साथ स्तुति की, नाचा। उन्होंने मुक्तिप्रद मूर्ति की महिमा देखी। प्रणाम करते हुए वे परमानन्द के सागर में डूबे। रोते हुए, हँसते हुए आँख बन्द करते हुए संपूर्ण भक्ति के साथ महामुनिजनों ने, वेद और वेदान्त का अर्थ न समझने से पीड़ित वैदिकों के साथ भीष्मजी और विदुरजी ने, यक्ष, किन्नर, सिद्ध, गन्धर्व, असुर, भूत, राक्षस, गुह्यक, प्रेत, और किंपुरुषों ने। २०-२५ स्वर्ग के निवासी और नागों के नेताओं ने, और अप्सराओं की तरह अन्य नारियों ने भी गूढस्थ को कूटस्थ के रूप में देखा और वे गाने लगे और आनन्द से पूर्ण हुए। सभी दुष्टजन आँख बन्द करते हुए तत्क्षण ही मलमूत्र का विसर्जन करने लगे और पीड़ित होकर तरह तरह की गुहाओं में प्रविष्ट हुए और शिष्टजन यह सब देखते रहे। तब परम आनन्दमूर्ति भगवान् रथ पर बैठकर सिधारे। पहले जाकर कुन्ती का दर्शन करके उनका दुःख

परमानन्दमूर्त्ति भगवान् परमात्मा
परिचोटॆळ्ळुन्नतळ्ळि तेरतिलेरिप्पिन्नॆ । ३०
कुन्तियॆच्चॆन्नु कण्टु सन्तापमतुं तीर्त्तु
कुन्तियुं तॊळुतेऱ्ऱॆ स्तुतिच्चु सुतन्मारॆ ३१
तन्तिरुवटियाय कृष्णनेब्भरमेल्पि-
च्चन्तिके निल्क्कुं कर्ण्णनोटु मन्त्रिच्चु मॆल्ले । ३२
कर्ण्णा ! ञानॊन्नुण्टिन्नु चॊल्लुन्नु रहस्यमाय्
निन्नुटॆ तन्पिमारां पाण्डवरऱिक नी । ३३
नी कूटियङ्ङुचॆन्नु धर्म्मजाग्रजनायि
वाळ्क भूमियॆ रिपुनाशवुं चॆय्कयॆन्नाळ् । ३४
कर्ण्णनुं चिरिच्चुरचॆय्तितु कृष्णन्तन्नो-
टॆन्नुटॆयनुजन्मार् पाण्डवरॆन्नु नूनं । ३५
ऎन्नालुं नागध्वजन्तन्नॆयुमुपेक्षिच्चि-
ट्टिन्नु ञानङ्ङु पोरिकॆन्नतु चॆय्कयिल्ल । ३६
भर्त्तृपिण्डत्तिन् प्रतिक्रिययॆच्चॆय्कवेणं
भृत्यनामवन् प्राणन्पोवोळमॆन्नुण्टल्लो । ३७
अर्ज्जुनन्तन्टॆ कैयाल् मरणमिनिक्कतु
निश्चयं विरयॆप्पोय् पोरिन्नु कोप्पिट्टालुं । ३८
मारुतितन्नॆ कॊल्लुं गान्धारीसुतन्मारॆ-
प्पोरतिलॊटुङ्ङीटुं मट्टुळ्ळ जनङ्ङळुं । ३९

दूर किया । कुन्ती ने भी प्रशंसा करके वन्दना की और अपने पुत्रों को महानुभाव श्रीकृष्ण को सौंप दिया और निकट में खड़े कर्ण से धीरे धीरे बोली । २६-३२ हे कर्ण ! मैं एक बात आज तुम से रहस्य में बतला रही हूँ— जान लो कि पाण्डव तुम्हारे छोटे भाई हैं । (कृष्ण ने कहा) "तुम भी उन के साथ हो जाओ और युधिष्ठिर के बड़े भाई होकर उनके साथ राज करो और शत्रुनाश करो" । तब कर्ण ने हँसते हुए कृष्ण से कहा— पाण्डव तो अवश्य मेरे अनुज हैं परन्तु नागध्वज (सुयोधन) को छोड़कर मैं उनके पास न जाऊँगा । स्वामी के दिये पिण्ड का प्रतिदान करना चाहिये भृत्य का आजीवन यही धर्म है । अर्जन के हाथ से ही मेरा निधन अवश्य होगा जल्दी जाकर युद्ध की तैय्यारी कराइये । भीमसेन ही गान्धारी के पुत्रों का वध करेगा और युद्ध में सभी लोगों का निधन होगा । ३३-३९ दोनों पक्षों की बड़ी सेना समाप्त हो जायगी और बड़े बड़े वीर जीवित न वापस आवेंगे ।

रण्टुभागत्तुमुळ्ळ वन्पटयोटुङ्ङीटुं
मण्टुकयिल्ल महावीरन्मार् मरियातें । ४०
चिन्मयनाय परब्रह्मं निर्म्मलमूर्त्ते !
निन्मनोविलासवुमेंन्नुळ्ळिलुण्टु पोट्टी ! ४१
यात्रयुं चोंल्लिक्कृष्णन् पिन्नेंयङ्ङुळरिप्पोय्
पेर्त्तुटनश्वत्थामातन्नुटें गृहं पुक्कान् । ४२
पोरिनु सेनापतियाकातयिरिक्कैंन्नु
वीरनां द्रौणियोटु माधवनपेक्षिच्चान् । ४३
विश्वस्तनायविप्रनश्वत्थामावुतानुं
विश्वनायकमनोरथत्तेंयरिञ्ञप्पोळ् । ४४
निश्चयमतु चेंय्कयिल्ल ञानेंन्नु चोंन्नान
च्युतन् दीर्घायुष्मानाकेंन्नुमरुळ् चेंय्तान् । ४५
पारातेंयेंळुन्नळ्ळिप्पाण्डवरोटु चोंन्ना-
नोरोरो विशेषङ्ङळुण्टायतेंप्पेरुमे । ४६

युद्धोद्योगं

युद्धत्तिनिनि मुतिर्न्नीटुक मटियातें
मित्रङ्ङळाय भूमिपालरेंयरियिक्क । १
ऎन्नरुळ्चेंय्तनेरं पाण्डवर् बन्धुक्कळे-
च्चेंन्नरियिच्चु वरुत्तीटिनार् पटय्क्कोंल्लां । २

हे चिन्मय परब्रह्म ! हे निर्मलमूर्ते ! हे रक्षक ! मेरे भीतर आप के मन का विलास भी विद्यमान है। कृष्ण बिदा होकर चले गये और सीधे अश्वत्थामा के गृह गये। और माधव ने द्रौणि (अश्वत्थामा) से अनुरोध किया कि वे युद्ध में सेनापति न होवें। विश्वस्त विप्र अश्वत्थामा ने विश्वनायक की इच्छा को जानकर कहा— 'यह न होगा, यह निश्चित है"। तब अच्युत (कृष्ण) ने 'दीर्घायुष्मान् हो, ऐसा आशीर्वाद दिया। तुरन्त जाकर पाण्डवों को जो कुछ हुआ वह सब सुना दिया। ४०-४६

युद्ध के लिए तैयारियाँ

और कहा— अब युद्ध के लिए बिना विलम्ब के तैयार हो जाओ और मित्र राजाओं को सूचना दो। जब कृष्ण ने इस प्रकार कहा तब पाण्डवों ने बन्धुओं को सूचना दी और सेना को बुलाया। धृष्टद्युम्न

द्रोणरुमश्वत्थामा कृपरुं त्रिगर्त्तनुं
द्रोणर्क्कु तुल्यन् शल्यर् सोमदत्तात्मजनुं २३
कृतवर्म्मावु भगदत्तनुं शकुनियुं
पृथिवीशन्मार् मट्टुं पलरुण्टरिक नी । २४
ञानुमुण्टल्लो पिन्नेप्पलरोटेतिर्निल्पान्
भानुनन्दननर्द्धरथनेन्नरिक नी । २५
अङ्ङोट्टु चेल्लुवानुमिङ्ङोट्टु मण्टुवानु-
मिङ्ङनेयारुमिल्ला कर्ण्णनेप्पोलयेटो । २६
कर्ण्णनुमतु केट्टु भीष्मरोटुरचेय्ता-
निन्नु ञानर्द्धरथनल्लेन्नु धरिक्कणं । २७
नामिरुवरुं कूटियल्लिनि युद्धत्तिनु
पोर्मदमुळ्ळ भवान् मरिच्चेयुळ्ळु पक्षे २८
शन्तनुतनयनुमेङ्किलेन्तोरु हानि
निन्तोळिल् निनक्कोत्तवण्णमेन्नुरचेय्तु । २९
मन्नव ! सुयोधना ! केळिनि युधिष्ठिरन्-
तन्नुटे तेराळिकळायुळ्ळ जनत्ते नी । ३०
धर्म्मजन् भीमन् पार्त्थन् नकुलन् सहदेवन्
निर्म्मलन्मारायुळ्ळ पाञ्चालीसुतन्मारुं ३१
धीरनां धृष्टद्युम्नन् घोरनां घटोल्क्कचन्
वीरनामभिमन्यु सारनां सात्यकियुं ३२

छोटे भाई उसके पति हैं । १५-२२ इसके अतिरिक्त द्रोण, अश्वत्थामा, कृप, त्रिगर्त्त, द्रोण के समान शल्य, सोमदत्त का पुत्र कृतवर्मा, भगदत्त, शकुनि, और अन्य अनेक भूपाल भी यहाँ हैं, जान लो । और मैं भी हूँ जो अनेक का सामना कर सकता हूँ । और जान लो कि भानुनन्दन (कर्ण) अर्धरथ ही हैं । उधर जाने में और फिर इधर वापस आने में कर्ण के समान कोई नहीं है ।" यह सुनकर कर्ण ने कहा— "जान लीजिये कि आज मैं अर्धरथ नहीं हूँ ।" हम दोनों युद्ध में साथ नहीं रहेंगे, युद्धमदवाले आप तो अवश्य मरेंगे, और इससे शान्तनु के पुत्र को बड़ी हानि होगी । आपका काम तो आप ही के अनुरूप है । २३-२९ हे राजा सुयोधन ! सुन लो युधिष्ठिर के पक्ष में कौन कौन रथी हैं । युधिष्ठिर, भीम, पार्थ, नकुल, सहदेव पाञ्चाली के ये निर्मल पुत्र, धीर धृष्टद्युम्न, घोर घटोत्कच, वीर अभिमन्यु, सारवान् सात्यकि, क्रूर शंख, शूर पाञ्चाल, जान लो कि ये सब हम से लड़ने आवेंगे । इसमें सन्देह

क्रूरनाकिय शंखन् शूरनां पाञ्चालनुं
पोरिनु नम्मोटवर् पोरुमेन्नरिञ्ञालुं । ३३
पोरा नामवरोटु पोरिनेन्नतु नूनं
कारुण्यमूर्त्ति कमलेक्षणनोटुं कूटि- ३४
त्तेरतिल् करयेरीट्टर्ज्जुनन् वरुन्नेर-
मारुमिल्लेतिरेटो मून्नु लोकत्तिङ्कलुं । ३५
वीरनां देवव्रतन् दुरियोधननोटु-
मेन्नुटे मरणवुं वन्नीटुं शिखण्डिया-
लेन्नतिनंबोपाख्यानत्तेयुमुरचेय्तु । ३६
ओरोरो दिक्किल्निन्नङ्ङोरोरो राजाक्कन्मार्
वारणवाजिरथकालाळां पटयोटुं ३७
वारिधितन्निल् नदीपूरङ्ङळ् चेरुंपोले
कौरवसैन्यं तन्निल् वन्नाकेवकूटीटुन्नु । ३८
भैरवतरङ्ङळां वाद्यघोषङ्ङळोटुं
पोरिनु विरुतुळ्ळ राक्षसवीरन्मारु- ३९
मार्त्तोक्क निलविळिच्चव्वण्णंतन्नेवन्नु-
पार्त्थन्मारुटे पटवीट्टिलुं कूटीटुन्नू । ४०
ईरेळुपतिन्नालु लोकवुं कुलुङ्ङुन्नू
वारिधिकळुमिरच्चोक्कवे कलङ्ङुन्नु । ४१
सारतचेरुं गिरिवरन्मारिळकुन्नु
घोरमायुळ्ळ वाद्यनादङ्ङळ् मुळङ्ङुन्नु । ४२

नहीं कि हम उनसे युद्ध करने योग्य नहीं है। जब कारुण्यमूर्त्ति कमलेक्षण (कृष्ण) के साथ रथ पर चढ़कर अर्जुन आगे बढ़ता है तो उसका सामना करने वाला तीनों लोकों में कोई नहीं है। वीर देवव्रत (भीष्म) ने दुर्योधन से कहा— "शिखण्डि के द्वारा मेरा मरण होगा" और इस प्रसङ्ग में अंबोपाख्यान को भी सुनाया। ३०-३६ भिन्न भिन्न दिशाओं से भिन्न भिन्न भूपाल गज, रथ, घोड़े और पैदल सैनिकवाली सेनाओं के साथ कौरवों की सेना में जाकर मिल लेते हैं, जैसे नदियों का जल समुद्र के पानी में मिल जाता है उसी प्रकार भयङ्कर वाद्य-घोषों के साथ युद्ध में निपुण राक्षसवींर सिंहनाद करते हुए आते हैं और पार्थों के सैनिक भवनों में जमा होते हैं। चौदहों लोक काँप रहे हैं और सभी समुद्रों का पानी हिल रहा है। पृथिवी के टूटने से धूल उड़ रहा है और सूरज भी अदृश्य हो रहा है, मानो खेद कर रहा है। ३७-४२

मेदिनि पोंटिञ्ञोंक्कद्धूळियुं पोङ्ङीटुन्नु
खेदमायेन्नपोले भानुवुं मऱयुन्नु । ४३
वासवमुखपत्ममावोळं विळङ्ङुन्नु
वासविनयनङ्ङळ् कोपेन चुवक्कुन्नु । ४४
मारुतदेवन्तानुं मन्दमाय् वीयीटुन्नु
मारुतियुटे गद वेगेन चुळ्लुन्नु । ४५
धर्म्मदेवनुमुळ्ळिलानन्दं वळरुन्नु
धर्म्मजन्माविन्मुखमेट्वुं तेळियुन्नु । ४६
धर्म्मनाशनन् कलि मन्दं पोय्मऱयुन्नु
दुर्म्मति सुयोधनन्तन्मुखं वाटीटुन्नु । ४७
निर्म्मलन् निरुपमन् नित्यनव्ययन् परन्
चिन्मयन् जगन्मयन् कल्मषविनाशनन् । ४८
धर्म्मस्थापनकरन् निष्कळन् निरञ्जनन्
कर्म्मैकसाक्षिभूतन् निर्ग्गुणन् निराकुलन् । ४९
सन्मतिनिलयनन्नेन्नुळ्ळिल् वाळुं कृष्णन्
तन्मुखनळिनवुं नन्नायि विरियुन्नु । ५०
आमिषभोजिकळुमामोदं कलरुन्नु
पोयिनिक्कनमेन्नु भूमियुं तेळियुन्नु । ५१
रामरावणरणसन्नाहमेन्नपोले
भूमियिलुळ्ळ भूपरोंक्कवे वन्नुवन्नु ५२
पुक्कितु कुरुक्षेत्रं दुःखवुमुपेक्षिच्चु
पुष्करदेशे विमानङ्ङळुमोंरुमिच्चु । ५३

इन्द्र का मुखकमल खिल रहा है और वासवि (अजुन) की आँखें कोप से लाल हो रही हैं। वायु देव धीरे-धीरे चल रहा है और वायुपुत्र (भीम) की गदा वेग से घूम रही है। धर्मदेव (यमराज) के मन में आनन्द बढ़ रहा है और धर्मपुत्र का मुख अत्यन्त प्रसन्न हो रहा है। धर्म का नाशक कलि धीरे-धीरे छिप रहा है और दुर्मति सुयोधन का मुख मुरझा रहा है। निर्मल, निरुपम, नित्य, अव्यय, पर, चिन्मय, जगन्मय, पापविनाशन, धर्म का स्थापक, निष्कल, निरञ्जन, कार्य का एकमात्र साक्षी, निर्गुण, निराकुल, सन्मति का आश्रय और मेरे अन्दर विराजमान कृष्ण का मुखकमल ठीक से खिल रहा है। ४४-५० आमिषभोजी सब प्रमुदित हो रहे हैं और पृथिवी प्रसन्न हो रही है कि अब भार कम

नर्म्मदयाय नदितन्निरुकरे व-
न्तुन्मदमोट्टु पुक्कु वन्पटयतुकालं । ५४
आभरणङ्ङळ् पुनरायुधङ्ङळुं नल्ल-
शोभतेटीट्टुमुष्णीषङ्ङळ् कञ्चुकङ्ङळुं ५५
वेव्वेरे यथायोग्यं नल्किनान् धर्म्मात्मजन्
निर्व्याजं प्रतिज्ञयुं चोल्लिनारेल्लावरुं । ५६
भूदेवप्रसादवुं देवताप्रसादवुं
सादरं चेय्तु चेय्तारायुधपूजकळुं । ५७
कृष्णनुं किरीटियुं मट्टुळ्ळ नृपन्मारुं
कृत्यमायतुचेय्तु युद्धत्तिन्नोरुमिच्चार् । ५८
व्यग्रमुण्टाकवेण्ट चित्तत्तिलटियनु-
ण्टग्रमां पाशुपतमस्त्रमेन्नरिञ्ञालुं । ५९
निग्रहिच्चीट्टुवन् ञान् निश्चयं पलरेये-
न्नग्रजन्तन्ने नोक्कीट्टर्ज्जुननुरचेय्तान् । ६०
इक्कथाशेषं चोल्वानेन्नाले पणियेन्ना-
यक्किळिमकळाय भक्तिशालिनियन्ने । ६१

उद्योगं समाप्तम्

हो जायगा। पृथिवी के सभी पृथ्वीपाल आ-आकर कुरुक्षेत्र में इकट्ठा हो गये, मानो रामरावण-युद्ध की तैयारियाँ हो रही हों। और विमान सब पुष्कर देश में एकत्रित हुए। नर्मदा नदी के दोनों तटों पर उस समय बड़ी सेना ने प्रवेश किया। युधिष्ठिर ने सबको उनकी योग्यता के अनुसार आभूषण, आयुध, सुन्दर पगड़ियाँ, और चादर अलग अलग दिया और उन्होंने बिना छल के प्रतिज्ञा भी की। ५१-५६ ब्राह्मणों और देवताओं की उन्होंने सादर वन्दना की और आयुधों की पूजा भी की। यह सब नियम से करके कृष्ण, अर्जुन और अन्य भूपाल युद्ध के लिए एक हो गये। अजुन ने युधिष्ठिर को देखकर कहा— 'चिन्ता मत करना। दास के पास पाशुपत नामक अस्त्र है, ज़ान लीजिये। मैं बहुतों का नाश करूँगा, सन्देह नहीं'। उस भक्तिशालिनी शुकी ने कहा— "इस कथा का शेष सुनाने में (अभी) बहुत काम है"। ५७-६१

उद्योगपर्व समाप्त।

भीष्मं

शुकतरुणिजनमणियुमणिमकुटमालिके !
चॊल्लॆटो चॊल्लॆटो कृष्णलीलामृतं । १
सुखविभवमितिलधिकमिह नहि नमुक्कहो !
दुःखङ्ङळुळ्ळकान्पिलॊक्क नीङ्ङी तुलों । २
मधुरपरिणतकदळिफलमधुगुळादियुं
भक्षिच्चिरुन्नु तॆळिञ्ञु परक नी । ३
अमरपरिवृढनमरपति सुतनु सूतना-
याचरिच्चीलयो सारथ्यवेलयुं ? ४
अविटमरिवितिनु परकळ्किनॊटु शारिके !
आत्मशुद्धिप्रदं भक्तिमुक्तिप्रदं । ५
पल पकलुमिरवुमतु भुजगपति चॊल्किलुं
भारतायोधनं पातियुं चॊल्लुमो । ६
कुतुकमतिलधिकतरमकतळिरिलॆङ्किलो
कूरीटुवन् कुरञ्ञोन्नु चुरुक्कि ञान् । ७
अघमकलुमखिलजगदधिपतिकथामृत-
माजीवनान्तं मुषिच्चिलुण्टाय्वरा । ८
पकलिरवु पदकमलमकमलरिल् नण्णुकिल्
पङ्कजाक्षन् कनिञ्ञॆन्तु चॆय्याततुं । ९

भीष्मपर्व

हे शुकतरुणि ! हे जन-ताप हरनेवाली मणिमुकुटमालिके ! पिलाओ, पिलाओ कृष्णलीलामृत ! हमारे लिए इससे बढ़कर कोई सुख नहीं है, और भीतर के सब दुःख दूर हो गये । मीठा पक्का केला, शहद और गुड़ आदि खाकर आराम करो और प्रसन्न होकर सुनाओ । जिन्होंने देवों के नायक और पति के पुत्र (अर्जुन) का सूत बनकर सारथ्य का काम किया था, उनको जानने के लिए, हे शारिके ! आत्मशुद्धि करनेवाली और भक्ति और मुक्ति देनेवाली कथा ढंग से सुनाओ । अनेक दिन और अनेक रात अगर शेष ही सुनावे तब भी क्या भारत-युद्ध का आधा भी समाप्त हो सकता है ? १-६ अगर मन में अधिक कुतूहल है तो संक्षेप में सुना दूँगी । जगत् के अधिपति का कथामृत आजीवन पाप को दूर करेगा और नीरसता कभी न होगी । अगर कोई रातदिन पङ्कजाक्ष (कृष्ण) के चरणकमलों का ध्यान करे तो

भवमरणभयविहृति विरवॊटरुळीटुवान्
भक्तवात्सल्यमीवण्णमिल्लाक्कुमे । १०
अजनमलनमृतमयनखिलजगदीशना-
मंबुजाक्षन् पिऱन्नीटिनान् कृष्णनाय् । ११
असुरवररधिकशठरवनिपतिवीररा-
यत्यन्तदुष्टरायुत्भविच्चीटिनार् । १२
अवनिभरमकलुवतिनवर्कळॆयॊटुक्कुवा-
नादिदेवन् मुतिर्त्तॊरायोधनं । १३

युद्धत्तिनु राजाक्कन्मार् ऒरुङ्ङुन्नतु

कुरुपतिकळिरुपुऱवुमरुमयॊटु पोरिनाय्-
क्कोप्पिट्टु युद्धकोलाहलं कूट्टिनार् । १
करितुरगरथनिकरविविधकालाळ्प्पट-
य्क्कट़मिल्लातोळं कॊट्टुमुण्टाक्किनार् । २
अवनिवररवरवर्कळिरवुपकल् वाळुवा-
नावासशालयं कॆट्टियुण्टाक्किनार् । ३
अरुमऱकळरुमयॊटु वक वक तिरिच्चव-
नायोधनोद्यमं कण्टॆळुन्नळ्ळिनान् । ४
विगतनयननॊटु मुनि निज तनयनाकयाल्
वेण्टा रणं विलक्कीटुकॆन्नोतिनान् । ५

वह प्रसन्न होकर क्या न करेगा ? जन्म और मरण का भय वह ठीक से नाश करेगा। इतना भक्तवात्सल्य और किसी का नहीं है। अज, अमल, अमृतमय, अखिल जगत् का ईश, कमलाक्ष ने कृष्ण के रूप में जन्म लिया। असुरवर तो जो अधिक शठ और अत्यन्त दुष्ट थे वे भूपाल के रूप में उत्पन्न हुए। उनका नाश करके पृथिवी का भार कम करने के लिए आदिदेव ने एक युद्ध का उपक्रम किया। ७-१३

युद्ध के लिए राजाओं की तैयारी।

कुरुओं के नेताओं ने उत्साह के साथ दोनों ओर युद्धकोलाहल का उपक्रम किया। हाथी, घोड़े, रथ और विविध पैदल सैनिकों के लिए निःसीम आहारसामग्री तैयार की। राजाओं को अनेक दिनों और रातों रहने के लिए आवास-स्थान का निर्माण भी हुआ। जिन्होंने वेदों का प्रेम से विभाग किया वे (व्यास) युद्ध की तैयारियाँ देखकर पधारे।

नोंटियिटयिलटल् पोंरुतु शठरऱिक तव तनयर्
नूऱुं मरिक्कुं भवानिरिक्कुं वृथा । ६
समरदरिशनमतिनु नयनमिह नल्कुवन्
तल्परियं निनक्कुण्टेङ्किल् मन्नवा ! ७
नयनरहितनुमतिनु मुनिवरनु चोंल्लिनान् ।
नाथा ! नमुक्कु केळ्क्केंण्ट वेण्टा रणं । ८

सञ्जयन् युद्धं वर्णिक्कुन्नतु

अतुपोंळुतु मुनिवरनुमऱिवतिनु सञ्जय-
नेकिनान् दिव्यमामीक्षणं चोंल्लुवान् । १
मऱकळुटे मऱपोंरुळ्कळऱिवतिनु चतुरनां
मामुनिश्रेष्ठनुं पोय् मऱञ्ञीटिनान् । २
करबदरसममखिलभुवनमपि सञ्जयन्
कण्टु कौतूहलं पूण्टु मेवीटिनान् । ३
अरचनतुपोंळुतु निजसचिवनोंटु चोंल्लिना-
नऱिवतिनु सञ्जया ! चोंल्लु लोकोत्भवम् । ४
सुरमनुजखगभुजगमृगपशुतृणाद्यमां
सृष्टियुं कालचक्रभ्रमप्राप्तियुं ५

मुनि ने, अपना ही पुत्र होने के कारण विगतनयन (अन्धा धृतराष्ट्र) से कहा—युद्ध न होना चाहिये, उसे रोको। जानलो कि तुम्हारे पुत्र जल्दी युद्ध करनेवाले शठ हैं, सौओं मरजायेंगे और तुम देखते रह जाओगे। अगर तुम चाहते हो तो, हे भूपाल ! तुम्हें युद्ध देखने के लिए आँखें दूंगा। उत्तर में अन्धे ने मुनि से कहा— "हे नाथ ! मुझे युद्ध का समाचार सुनना ही नहीं"। १-८

सञ्जयकृत युद्धवर्णन।

तब मुनिवर ने सञ्जय को युद्ध देखकर बतलाने के लिए दिव्य चक्षु प्रदान किया। तदनन्तर वेदों के अर्थ समझने में निपुण महामुनिवर अन्तर्धान हो गये। और सञ्जय तो समस्त जगत को करबदर (हाथ में स्थित बेर) के समान स्पष्ट देखते हुए आनन्द से रहे। तदनन्तर राजा ने अपने सचिव सञ्जय से कहा— 'लोकोद्भव ! जरा सुनाओ'। देव, मनुष्य, पक्षि, साँप, हिरण, गाय, तृण आदि की सृष्टि, कालचक्र का भ्रमण,

विविधतम विलसदधिपतिविमललीलयु
विश्वकार्यङ्ङळु लोकयात्रादियु । ६
परनमलजनखिलभुवनपति चॆय्ततु
वर्त्तमानङ्ङळु मेलिल् भविप्पतु ७
सरिदवनिवनशिखरिजलधिपरिमाणवु
त्रिभुवनविभागवु दिग्विशेषङ्ङळु ८
प्रियसचिवनवनिपनोटाशु चॊल्लीटिनान्
पिन्नॆयु वर्त्तमानं पऱञ्ञीटिनान् । ९
दितिजवररवनियतिलवनिवररायतु
दिव्यनामीश्वरन् कृष्णनाय् वन्नतु १०
कलिपुरुषकरनखिलनृपतिकुलनाशनन्
कश्मलन् त्वल् सुतनायिप्पिऱन्नतु । ११
अऱिक कळकळल् मनसि सुखमोटिरि मन्नवा !
आनन्दमूर्त्तियॆस्सेविक्क सन्ततं । १२
सरसमिति सचिवनतिसरभसं चॊन्नतु
ताल्परियत्तोटु केट्टु नरवरन् । १३
अऱिवतिनु विरविनोटु पऱक नीयिन्निyु-
मात्मजन्मार्पटकोप्पुकळ् सञ्जया ! १४

अनेक प्रकार के अधिपतियों की विमल लीलाएँ, विश्व के कार्य, लोकयात्रा के प्रकार, १-६ पर, अमल, अज, और अखिलभुवनपति का चरित्र, अतीत के समाचार और भविष्य में होनेवाली बातें नदी, पृथिवीतल, वन, पर्वत, समुद्र आदि का परिमाण, त्रिभुवन के विभाग और दिग्विशेष, प्रिय सचिव ने यह सब राजा को बतला दिया और तदनन्तर अन्य समाचार भी सुनाये। हे भूपाल, जान लो कि दैत्य पृथिवी पर राजा हुए, दिव्य ईश्वर ही कृष्ण हुए, समस्त नृपकुलों का नाशक, दुष्ट कलिपुरुष ही तुम्हारे पुत्र के रूप में पैदा हुआ है। चिन्ता छोड़ दो और आनन्दमूर्ति की निरन्तर सेवा करते हुए सुख से रहो। अपने सचिव की रस और घबड़ाहट के साथ कही यह बात नरवर ने तत्परता के साथ सुनी। ७-१३ और बोले। हे सञ्जय! मेरी जानकारी के लिए मेरे पुत्रों की सेना की तैयारियाँ सुनाओ। तब उन्होंने राजा से फिर कहा— पुरुवंश में पैदा हुए भूपालों के तकिल, मुरशु[1],

१. तकिल, मुरशु आदि मलयाळम के शब्द हैं और वाद्यविशेषों के नाम हैं। इनके हिन्दी नाम अनुपलब्ध हैं।

पुनरवनुमरचनोॅट्टु पुतुमयोॅट्टु चोॅल्लिनान्
पूरुवंशोत्भवन्माराय मन्नवर् १५
तकिल् मुरशु पऱ पटहतुटिकळोॅट्टु शंखवुं
तम्मिट्टवुं नल्ल मद्दळं वीणयुं १६
मधुरतर मृदुलरसनिनदकुळल् काहळं
मट्टु शृंगङ्ङळिटय्क्कयुट्टुक्कुकळ् १७
पेॅरिय रथमलरिवरुमळवरियघोषवुं
पेॅय्तमदत्तोटु कुंभिकळ्नादवुं १८
तुरगवरखुरनिकरपरिपतनधूळियुं
तुळ्ळुन्न कालाळ्निलविळिघोषवुं १९
नरपतिकळरुमयोॅटु तेॅरुतेॅरे वलिच्चुटन्
नादं वळक्कुं चेॅरुञाणोॅलिकळुं २०
त्रिभुवनवुमतुपोॅळुतु विऱयलोॅटु चेॅर्न्नुते
तीर्त्तु पतिनेॅट्टुकूट्टमक्षौहिणि । २१
कुटतळकळ् चमरि कोॅटियुं कोॅटिक्कूऱयुं
कोलाहलमेॅन्तु चोॅल्लावतोरोॅन्ने ! २२
परशुधर मुनिवरनुसमनरियभीष्मरुं
भार्ग्गवशिष्यन् भरद्वाजपुत्रनुं २३
कुरुनृपतिवरनुमिळयवर्कळ् भगदत्तनुं
कूरुळ्ळ भूरिश्रवा कृतवर्म्मावुं २४
गुरुकृपरुमधिकतरबलमुटय सौबलन्
क्रूरतयेरुं निशाचरवीररुं २५

पर, पटह, तुटि, शंख, तम्मिट्ट, अच्छे-अच्छे मद्दल और वीणाएँ मीठी-मीठी आवाज़वाली सींग, भेरियाँ, अन्य प्रकार की सींग, ढक्काएँ (डमरू), बड़े-बड़े रथों के दौड़ने का घोष, प्रभूत मद निकलनेवाले हाथियों का नाद, अच्छे-अच्छे घोड़ों के खुरों के आघात से उठती हुई धूल, कूदते हुए पैदल सैनिकों की चिल्लाहट, भूपालों के सोत्साह खींचने से उत्पन्न ज्याघोष आदि से उस समय त्रिभुवन काँपने लगा। अठारह अक्षौहिणियाँ इकट्ठा हुईं। १४-२१ श्वेतच्छत्र, चँवर, झंडा और अन्य आडम्बर की वस्तुएँ कहाँ तक बताई जायँ। परशुराम के समान श्रेष्ठ भीष्मजी, भार्गव के के शिष्य भरद्वाज का पुत्र, कुरुओं का नृपवर, उनके अनुज, भगदत्त, शक्तिशाली भूरिश्रवा, कृतवर्मा, गुरु कृप, अधिक बलवान् सौबल, अधिक

गुरुतनयरिकळ् कुलमरुति करुतीटुवान्
कूटे त्रिगर्त्तादि सिन्धुभूपालरुं २६
कटलोटटल्करुतुमोरु कटलोटु समानमाय्-
क्काणायि पाण्डवन्मार्पटक्कूट्टवुं । २७

श्रीकृष्णन्टे अर्ज्जुनसारथ्यं

नरकरिपुनळिनदळनयननखिलेश्वरन्
नारायणन् परन् तेरिल्क्करेरिनान् । १
अमरपतितनयनोरु कुरवुकळ्वराय्वति-
न्नानन्दमूर्त्ति चम्मट्टि कैक्कोण्टुटन् २
धवळमयतुरगयुतरथमतु नटत्तिनान्
धन्वियामर्ज्जुनन्तानुं करेरिनान् । ३
पितृपतिज पवनसुत नकुल सहदेवन्मार्
पिन्पे घटोल्क्कचन् वन्पनभिमन्यु ४
पलनृपतिकळुमवर्कळ्पटयुमति घोरमाय्
पाटे परन्नितु पारिषदादिकळ् । ५
शमनसुतनतुपोळुतु सुहृदनुजसहितनाय्
शन्तनुजातनेक्कैवणङ्ङीटिनान् । ६
तरिक मम युधि विजयमतिनु वरमेकु नी
सत्यत्तिलेतुं पिळच्चीलटियनो । ७

क्रूरतावाले राक्षसवीर, गुरुपुत्र (अश्वत्थामा), शत्रुनाश के सम्बन्ध में सलाह करने के लिए त्रिगर्त आदि सिन्धुभूपाल, समुद्र से स्पर्धा करनेवाली और समुद्र के समान पाण्डव-सेना भी दिखाई दी । २२-२७

श्रीकृष्ण का अर्जुन-सारथ्य

नरकासुर के शत्रु, कमललोचन, अखिलेश्वर, नारायण रथ पर चढ़े । आनन्दमूर्ति ने चाबुक सँभाला ताकि अमरपति के पुत्र को कोई असुविधा न हो, और श्वेत घोड़ों से युक्त रथ को चलाया । तब धनुष-बाण लिये अर्जुन भी रथ पर चढ़े । युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव, और पीछे घटोत्कच, शक्तिशाली अभिमन्यु, अनेक नृपति अपनी-अपनी सेना के साथ अपने पारिषदों के साथ सब जगह फैल गये । तब युधिष्ठिर ने अपने मित्र और अनुजों के साथ भीष्म को प्रणाम किया । (और कहा) मुझे युद्ध में विजय दे दो । उसके लिए वर प्रदान करो । मुझ दास ने कभी सत्य

यमतनय ! विरविनॊटु वरिक ! जयमूळियुं
वाळ्क नी वाळ्क ञान् वानिल् वाणीटुवन् । ८
समरभुवि मरणमिह वरुवतिनु पोरिनाय्
धर्म्मज ! निङ्ङळोटिन्नु मुतिर्न्नतुं । ९
कुरुकुलवुमरुतिपॆटुमिनियुळरुकॊङ्किल् नी
कुन्तीसुत ! यॆन्ननुज्ञयुं नल्किनान् । १०
गुरुकृपयॊटतुपॊळुतु गुरुकृपजनत्तेयुं
कुन्तीसुतन्मार् वणङ्ङि वाङ्ङीटिनार् । ११
विरविनॊटु पॊरुवतिनु करुतियिरुपुरवुमति
वीर्यंनटिच्चु राजाक्कळ् निल्क्कुंविधौ १२
निधनभयमुटयवर्कळ् विरविनॊटु पोरुविन्
नीतियिल् पालिप्पनॆन्नितु धर्म्मजन् । १३
कुरुनृपतिसुतरिलिळयवनॊरु युयुत्सुवुं
कूटिप्पुरप्पॆट्टु धर्म्मजन् पिन्नाले । १४
रणशिरसि नरपतिकळिरुपुरवुमतुपॊळुतु
चेणुटॆळुं महाव्यूहवुं कूट्टिनार् । १५
चॆकिटुपटयलरिनॊरु पटहमुखवाद्यवुं
तेरॊलि ञाणॊलि सिंहनादङ्ङळुं । १६
कलहरसविवशतरमतिकळतिशूरन्मार्
कण्टुकॊण्टाटिप्परस्परं निल्क्कुन्पोळ् । १७

का उल्लंघन नहीं किया। १-७ हे युधिष्ठिर ! आओ ! तुम्हारी विजय होगी। तुम राज करो, मैं स्वर्ग में निवास करूँगा। रणभूमि में मृत्यु प्राप्त करने के लिए हे युधिष्ठिर ! मैं आज आपलोगों से लड़ने चला हूँ। हे कुन्तीसुत ! अगर तुम ज़िद दिखलाओगे तो कुरुवंश नष्ट होगा। ऐसा कहकर भीष्म ने अनुज्ञा दी। तब कुन्ती के पुत्र बड़ी कृपा के साथ गुरुजनों को प्रणाम करके बिदा हुए। अच्छी तरह से लड़ने के विचार से जब दोनों तरफ़ के राजा वीर्य प्रदर्शित करते हुए खड़े हो गये तब युधिष्ठिर ने कहा— जिनको मृत्यु से भय है वे चले आवें, मैं नीति से उनकी रक्षा करूँगा। ८-१३ कुरुनृपतियों में से एक तरुण युयुत्सु युधिष्ठिर के पीछे आकर उनके साथ हो गये। उस समय दोनों ओर के राजाओं ने रणभूमि में दृढ़ महाव्यूह बनाये। काण के कठोर पटह आदि वाद्य, रथों की ध्वनि, ज्याघोष और सिंहनाद सुनाई दिये। जब बड़े-बड़े शूर युद्ध-रस से बेबस होकर परस्पर स्वागत करते हुए खड़े थे। १४-१७

भगवद्गीत

कमलदलनयनर्नोटु विजयनथ चौल्लिनान्
कारुण्यवारिधे ! श्रीपते ! दैवमे ! १
कपटमतिकळिलिनिय चेरुविरल् सुयोधनन्
कश्मलन्तन्नेक्कुरिच्चु युद्धत्तिनाय् २
निजतनयधनसदनजीवनाद्यङ्ङळे
नित्यमल्लेन्नुपेक्षिच्चु सन्नद्धराय् ३
कलितरणमरणमिह वन्न योद्धाक्कळे-
क्काण्मानटुत्तु निर्त्तेणमी स्यन्दनं । ४
मरुतलकळिरुपुरवुमटल्करुति निन्नतिन्
मद्धचे महारथं निर्त्तिनानच्युतन् । ५
सुहृदनुजतनयगुरुजनपितृपितामह-
न्मारेयुं युद्धसन्नद्धराय् कण्टवन् । ६
त्रिदशवरतनयनतिकरुणयोटु चौल्लिनान्
तेर् पिन्तिरिच्चु विटुंत्ति निर्त्तीटुक । ७
निशिततरविशिखगणमरुतु गुरुवपुषि ञान्
निष्करुणनाय् प्रयोगिप्पतय्यो ! हरे ! ८
हर ! वरद ! शिव ! गिरिश ! दुरितहर ! शङ्करा !
हाहा ! निनच्चततिमोहमेत्रयुं । ९

भगवद्गीता ।

अर्जुन ने कमललोचन से कहा— हे कारुण्यसागर ! हे श्रीपते ! हे भगवन् ! रथ को ऐसा खड़ा करो ताकि कपटमतियों में सब से पतित और दुष्ट दुर्योधन के कारण अपने पुत्र, धन गृह और जीवन को अनित्य समझकर युद्ध के लिए तैयार होकर जो योद्धा यहाँ कलि पार करनेवाली मृत्यु में आये हैं उनको मैं देख सकूँ । तब अच्युत ने युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर खड़े दोनों ओर के सैनिकों के बीच रथ खड़ा कर दिया । मित्र, अनुज, पुत्र, गुरुजन, पिता, पितामह आदि को युद्ध के लिए तैयार देखकर इन्द्रपुत्र ने बड़ी करुणा के साथ कहा— 'रथ को घुमाकर अलग खड़ा करो । १-७ हे हरे ! यह बिलकुल नहीं हो सकता है कि मैं निष्करुण होकर गुरुजनों के शरीर पर तीक्ष्ण बाण चलाऊँ । हे हर ! वरद ! शिव ! गिरीश ! पापहर ! शङ्कर ! हा, अत्यन्त मोह की बात सोची

गुरुवधमिततिदुरितमरुतरुतु माधव !
कूट्टोल्ल तेर् पिन्तिरिक्कॅन्तु फल्गुनन् । १०
अतिकरुणमसुरकुलहरनोंटुरचॅय्तु ता-
नायुधं वच्चु तेरिल् किटन्नीटिनान् । ११
जगदुदयभरणपरिहरणबहुलीलयुं
चॅय्ताळियिल् पळ्ळिकोळ्ळुन्न नाथनुं १२
अलमलमितरुतरुतु चपलतकळ् नरपति-
कळाक्षेपमे चॅय्युमिल्ल किल्लेतुमे । १३
अनुचितमितङ्रिक नृपकुलमतिनु नल्लत-
ल्लय्यो ! निनक्कु दुष्कीर्त्तियुण्टाय्वरुं । १४
फलमतिनु नरकमोरु गतिवरिकयिल्लॅटो
पार्त्थिवन्मार्क्कु युद्धं वॆटिञ्ञीटिनाल् । १५
परमपुरुषनुमतिनु परिचोंटरुषळीटिनान्
पार्त्थनद्ध्यात्ममायुळ्ळतॊंप्पेरुमे । १६
विमलनजनखिलजगदधिपनथ काट्टिनान्
विश्वसिच्चीटुवान् विश्वरूपत्तॆयुं । १७
त्रिभुवनवुमसुरसुरमनुजखगमृगभुजग-
दनुज पशुमुख बहुलभूतवृत्तान्तवुं १८
बहुचरण बहुवदन बहुलकरजालवुं
विस्मयत्तोटु कण्टीटिनानर्ज्जुनन् । १९

गयी ! यह गुरुवध बड़ा पाप है, हे माधव ! यह होना न चाहिए । रथ को मोड़ो', ऐसा फल्गुन (अर्जुन) ने कहा । असुरकुलों के नाशक से इस प्रकार अतिकरुण बात कहकर आयुध भी रखकर रथ पर बैठ गये । तब जगत् की उत्पत्ति, रक्षण और नाशन आदि अनेक लीलाएँ करते हुए समुद्र पर निवास करनेवाले नाथ ने कहा— 'बस, बस, यह न करो, यह चापल्य न दिखलाओ, नरपति लोग कुछ भी आक्षेप न करेंगे । ८-१३ जान लो कि यह एक राजवंश के लिए अनुचित है, बिलकुल ठीक नहीं है । इससे तुम्हारा अपयश ही होगा । अगर राजा लोग युद्ध से भागेंगे तो नरक ही उसका फल होगा, और कोई गति नहीं हो सकती है' । तब परमपुरुष ने सुन्दर ढंग से अर्जुन को संपूर्ण अध्यात्म का उपदेश दिया । और विश्वास दिलाने के लिए विमल, अज, अखिलजगदधिपति ने अपना विश्वरूप दिखलाया । और अर्जुन ने बड़े विस्मय के साथ तीनों लोक, असुर, सुर, मनुज, पक्षी, मृग, नाग, दानव, पशु आदि के विविध वृत्तान्त, अनेक मुख,

भयमोटवनतुपोळ्तु तेरुतेरे नमस्करि-
च्चभयमरुळेन्नु कूप्पिस्तुतिच्चीटिनान् । २०
कुरुकुलज ! भयमोळिक कुरु समरमाशु नी
कुण्ठनायीटोला कण्टतेल्लामहं । २१
मधुमथननमरवरसुतनोटुपदेशमाय्
मायाप्रभावमतु नीङ्ङुंप्रकारमुटन् २२
उळ्ळियरुळिन मोळिकळुपनिषत्ताकया-
लोतिनार् गीतयेन्नादराल् ज्ञानिकळ् । २३
अतु पोळ्तु चपलतकळखिलमकलेक्कळ-
ञ्ञर्ज्जुनन् पोरिनाय् विल्लेटुत्तीटिनान् । २४

युद्धं

अथ कलहमतिभयदमरुतु मम चोल्लुवा-
नन्पुकोण्टे मरच्चीटिनानंबरम् । १
अथ विजयनतुपोळ्तु शरयुगळवुं तोटु-
त्ताचार्यपादाभिवाद्यं प्रयोगिच्चान् । २
करिकळोटु करिकळथ रथिकळोटु रथिकळुं
कालाळ्क्कु कालाळुमश्वत्तिनश्ववुं ३

अनेक चरण, असंख्य करजाल को अपनी आँखों देखा । १४-१९ और उस समय बड़े भय के साथ जल्दी नमस्कार किया और अभय की याचना करते हुए हाथ जोड़कर स्तुति की । (भगवान् ने कहा) हे कुरुकुलोत्पन्न! भय त्यागो, जल्दी युद्ध करो, कुंठित न हो जाओ, जो कुछ तुमने देखा, सब मैं ही हूँ । मधुमथन (श्रीकृष्ण) ने इन्द्रपुत्र से माया के प्रभाव को दूर करने के लिए जो बातें उपदेश के रूप में कहीं वे उपनिषत् होने के कारण ज्ञानियों ने उनको सादर 'गीता' नाम दिया । तब अर्जुन ने अपना सारा चापल्य छोड़कर युद्ध करने के लिए धनुष-बाण उठाया। २०-२४

युद्ध

अब इस अत्यन्त भयप्रद युद्ध का वर्णन करना कठिन है । शरों से सारा आसमान ढँक दिया गया । उस समय अर्जुन ने दो बाण चलाकर आचार्यचरणों का अभिवादन किया । हाथियों के साथ हाथी, रथियों के साथ रथी-पैदल सैनिकों के साथ पैदल सैनिक, घोड़ों के साथ घोड़े, इस

निजसदृशबलसहितजनघटनचेतसा
नीतियोटेटु पोरुन्नतालोकितुं ४
गगनमतिलमरवरर् विरवोटु निरञ्ञिते
गन्धर्व्वसिद्धविद्याधरौघादियुं । ५
नरपतिकळेतिर्पोरुतु तेरुतेरे मरिक्कयुं
नाकनारीजनं वन्नु वरिक्कयुं ६
नरतुरगतति रुधिरनदिकळिलालिक्कयुं
नारदन् कण्टुकोण्टाटिच्चिरिक्कयुं । ७
खगनिवहमथ रुधिरजलमतु कुटिक्कयुं
कण्ट शवं पिशाचाळि भुजिक्कयुं । ८
कनमकलुमतु करुति वसुमति हसिक्कयुं
काणिकळ् नारायणेति जपिक्कयुं । ९
घनगळित जलसदृशशरनिर पोळिक्कयुं
खड्गपातं चतुरन्मार् कळिक्कयुं । १०
निशिततरविशिखभयपरवशमोळिक्कयुं
निर्भयन्मारतु कण्टु पळिक्कयुं । ११
करविगळदरिकळरिगळतलमरुक्कयुं
कण्ठं मुरिञ्ञु तलकळ् तेरिक्कयुं । १२
चपलतरमतिचतुरवरगुणमरुक्कयुं
चातुर्यमोटु चापङ्ङळ् मुरिक्कयुं । १३

प्रकार अपने बल के तुल्य बलवालों का नीति के साथ सामना करके होनेवाले युद्ध को देखने के लिए देववर, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर आदियों से गगन भर गया। नरपतिगण लड़ते हुए जल्दी-जल्दी मरने लगे, और स्वर्ग की स्त्रियाँ आकर उनको स्वीकार करने लगीं। १-६ नरों और घोड़ों का समूह रुधिरनदी में बहता था और नारद देखकर हर्ष से हँसने लगे। पक्षिगण तो उधर रक्त पीते थे और पिशाच तो नज़र में आये शव को खाने लगे। यह सोचकर कि अब भार कम होगा, पृथिवी हँसी। और देखनेवाले 'नारायण !' ऐसा जपने लगे। मेघ से गिरनेवाले जल के समान शरसमूह गिरा और चतुर योद्धाओं ने खड्गपात किया। जो तीक्ष्ण शरों के डर से पीड़ित थे वे छिप गये और निर्भीक लोग तो उनका नाश करने लगे। हाथ से छोड़े गये चक्रों द्वारा शत्रुओं के गले काटे गये और गरदन कट जाने से शीर्ष अलग हो गये। धनुष की डोरियाँ झट से काटी गयीं और बड़ी कुशलता के साथ धनुष ही तोड़े

चपलकळोंटुपमतकुमसिलतकळेल्ककयुं
चापल्यमुळ्ळवर् कण्टु विऱय्क्कयुं । १४
समररसमतिकळ् निजसमरोंटु मरुक्कयुं
सावज्ञमेहीति चेन्नु विळिक्कयुं । १५
रणकरणनिपुणतरमपकरुणमार्क्कयुं
रेणुकापुत्रशिष्यन् प्रमोदिक्कयुं । १६
मधुमथनवदननळिनं विकसिक्कयुं
मानं नटिच्चवर् देहं त्यजिक्कयुं । १७
रणमरणभयरहितमतिकळे नुतिक्कयुं
राजवृन्दं चोर कण्टु मदिक्कयुं । १८
समरभुवि विमुखभटरेप्परिहसिक्कयुं
संयुगकामिकळट्टहसिक्कयुं । १९
दनुजसुरवरसमरमितिनोंटुपमिक्कयुं
द्वन्द्वयुद्धं कण्टवर् विवादिक्कयुं । २०
शमनभटवरनिवहमेऱे श्रमिक्कयुं
शन्तनुजन् धनुस्सेट्टं नमिक्कयुं । २१
विबुधयुवतिकळ् नरन्मारे भ्रमिक्कयुं
वीतशोकं कौतुकेन रमिक्कयुं । २२
शरणमिह किमिति चिलर् पलवळि तिरिक्कयुं
शन्तनु पुत्रन् बलौघं भरिक्कयुं । २३

गये । ७-१३ बिजली के समान तलवार जब लगी तब चापल्यवाले देखकर डर गये । युद्ध में रस लेनेवाले तो अपने बराबरों के साथ लड़े और ऐसे योद्धाओं के पास जाकर उनको युद्ध के लिए बुलाने लगे । युद्धकुशल योद्धागण निर्दयतापूर्वक चिल्लाये और रेणुकापुत्र (परशुराम) के शिष्य (भीष्म) प्रमुदित हुए । श्रीकृष्ण का मुखकमल विकसित हुआ और अभिमान दिखलानेवालों को अपना शरीर छोड़ना पड़ा । रणभूमि में मरने का भय न दिखलानेवालों की स्तुति की गयी और राजवृन्द रक्त देखकर मद में आ गये । रणभूमि से मुँह मोड़नेवालों की हँसी उड़ायी गयी और युद्धप्रियों ने अट्टहास किया । इस युद्ध की देवासुरयुद्ध से उपमा की गयी और द्वन्द्वयुद्ध को देखनेवालों में विवाद चला । १४-२० यमराज के सैनिकसमूह ने अधिक परिश्रम किया और शन्तनु के पुत्र ने अपना धनुष बहुत चलाया । विबुध-युवतियाँ (अप्सराएँ) मनुष्यों से मोहित हुईं और उनके साथ, शोक त्याग कर, सकौतुल रमण किया ।

करिकळोट्टु पवनसुतनुटनुटनटुक्कयुं
कैक्किकतमेळ्ळुं परिच्चु मुष्कोटटिक्कयुं २४
घटमुटयुमटवटिकळ् कठिनतरमेल्क्कयुं
घंटारवेण पिटञ्ञु किटक्कयुं । २५
कलशभवनतिनु शरततिकळ् वरिषिक्कयुं
कौतूहलेन घटोल्क्कचनार्क्कयुं । २६
त्रिदशपतिसुतनुमथ शरनिर पोळिक्कयुं
चेम्मे भयत्तोटरिवाहिनियोळिक्कयुं । २७
नदिमकनुमतिनुळ्ळ विजयनोटेतिर्क्कयुं
नल्ल धर्म्मात्मजन् शल्यरोटट्टुक्कयुं । २८
पेरिय रथमतिल् विरवोटेऴिवन्नुत्तरन्
पिन्निट्टु धर्म्मजने मुलपुक्केतिर्त्ततिनु २९
मदसलिलमोळुकिनोरु करिमुतुकिलेऴिनान्
मद्रेशनायुळ्ळ शल्यर् महारथन् । ३०
कोलकरुतियवरिरुवर् पोरुतळवु शल्यरुं
कोन्नीटिनानुत्तरन्तन्नेयन्नेरं । ३१
दिवसकरनोळिविनोटु कटलिल् मुळुकीटिनान्
दिक्केङ्ङुमेल्लामिरुट्टुं निरञ्ञुते । ३२
पकलरुतिवरुमळवु पटयुं पिरिञ्ञुते
पाण्डवन्मार्क्कु सन्तोषं कुरञ्ञुते । ३३

'यहाँ शरण कहाँ है ?' ऐसा कहते हुए कुछ इधर-उधर चले और शन्तनुपत्र ने सेना को सँभाला। भीससेन ने बार-बार हाथियों के निकट जाकर उनको अपने हाथ के अनुगुण आयुधों से मारा। उन पर कुंभ तोड़ने वाले युद्ध-प्रहार लगे और वे घण्टा-ध्वनि करते हुए ज़मीन पर लोटते रहे। कलशभव ने शरों की वर्षा की और घटोत्कच कौतुहल के साथ चिल्लाया। इन्द्रपुत्र ने शरवर्षा की और भय के कारण शत्रुसेना भाग गयी। यह देखकर नदीपुत्र (भीष्म) ने अर्जुन का सामना किया और अच्छे युधिष्ठिर शल्य के निकट पहुँचे। २१-२८ एक बड़े रथ पर बैठकर उत्तर चला आया। मद्रेश महारथ शल्य मदजल बहानेवाले एक हाथी के पृष्ठ पर बैठे, युधिष्ठिर का सामना करने के लिए दोनों का वध करने के लिए तैयार थे। युद्ध में शल्य ने उत्तर को मार डाला। सूर्य अपने प्रकाश के साथ समुद्र में डूब गया और चारों दिशाओं में अन्धकार छा गया। जब दिन समाप्त हुआ, सेनाएँ अलग हुईं।

परमपुरुषनेंयुमकमलरिलाक्किकक्कोंण्टु
पार्त्थिवन्मार् चॆन्नु कैनिलयुं पुक्कु । ३४
अपरदिनमुषसि कुरुनरपतिकळ् पोरिना-
यार्त्तुपुक्कीटिनार् पोर्क्कळंतन्निले । ३५
कठिनतर मनिलसुतनोंट्टु पोरुतु निन्नुटन्
कालनूर्पुक्कार् कलिंगात्मजन्मारुं । ३६
शरनिरकळतुपोंळ्ळुतु परुमळसमानमाय्
शन्तनुनन्दनन् तूकित्तुटङ्ङिनान् । ३७
अदितिसुतवरतनयनतिनु सममय्तुकू-
टत्भुताकारमाय्वन्नितायोधनम् । ३८
कतिरवनुमतुपोंळ्ळुतु चरमगिरिमुकळिलाय्
कण्टुनिन्नोरुमॆल्लां नटन्नीटिनार् । ३९
उदयगिरिमुकळिलथ दिवसपति वन्नपो-
रूक्कुळ्ळ मन्नवर् मून्नांदिवसवुं ४०
समरभुवि सरभसमोंटटल्करुति वन्नुटन्
सन्नाहमोट्टु निलविळिच्चीटिनार् । ४१
जलदनिरमुटय यदुकुलजनखिलेश्वरन्
जन्मादिहीनन् जनाद्र्दनन् माधवन् ४२
जनिमरणभयहरणनिपुणचरणांबुजन्
जंगमाजंगमाचार्यन् जगन्मयन् ४३

परमपुरुष (कृष्ण) का ध्यान करते हुए राजागणों ने अपने शिविर में प्रवेश किया। दूसरे दिन सुबह कुरुराजाओं ने युद्ध के लिए रणभूमि में आकर आह्वान किया। २९-३५ अनिलसुत (भीम) के साथ युद्ध करते हुए कलिंगराजा के पुत्र यमसदन चले गये। तब शन्तनुनन्दन (भीष्म) ने बड़ी बरसात के समान शरवर्षा की। अदितिसुतवरतनय (इन्द्रपुत्र) ने उसके बराबर शरवर्षा की और उसके फलस्वरूप एक अद्भुत युद्ध प्रारम्भ हुआ। जब सूर्य अस्ताचल पहुँचा तब देखनेवाले सब चले गये। जब सूर्य फिर उदयाचल पर दिखाई दिया तब तीसरे दिन शक्तिशाली राजा युद्ध करने के लिए रणभूमि पहुंचे और तैयार होकर चिल्लाने लगे। ३६-४१ मेघ के वर्णवाले, यदुकुलोत्पन्न, अखिलेश्वर जन्मादिरहित, जनार्दन, माधव, जन्म और मरण के भय के हरण में निपुण चरणवाले, स्थावर और जंगम के आचार्य, जगन्मय ने, अत्यन्त सफ़ेद घोड़ो से युक्त रथ को अलंकृत करते

अधिकसिततुरगयुतरथमतिललंकरि-
च्चादितेयाधिपपुत्रनुंतानुमाय् ४४
अरिकुळ्कुलमरुतिपॆट्टुमतिनतिरुषा मुति-
न्नार्त्तॆतिर्त्तीटिनान् भीष्मरोटप्पॊळे । ४५
कलहमतिनुपमपऱवतिनरिमयुण्टॆटो
कालनूर्पुक्कारनेकं पटज्जनं । ४६
भयमॊट्टुरु परवशतपॆरुकियिरुपुऱवुमॊरु-
पाच्चिल् तुटङ्ङीतिळकी पॆरुन्पट । ४७
मरुतलयुमटल्निलवुमऱियरुतु पॊटि पॆरुकि
मण्टुन्नितोरो जनङ्ङळोरो वऴि । ४८
पटयिळकियतुकरुति विरवॊटु सुयोधनन्
पाञ्ञटुक्कुन्नतु कण्टिट्टु भीमनुं ४९
गिरिमुकळिल् मऴ पॊऴियुमतिनु सममॆय्तॆय्तु
कीऱी शरीरं धृतराष्ट्रपुत्रनुं । ५०
उपरिचरमकळ् मकनु मकनु मकनायव-
नूक्कुळ्ळ भीष्मरोटत्तल् चॊल्लीटिनान् । ५१
कटुकतिनु करुतलॊटॆतिर्पॊरुतु भीष्मरुं
कौन्तेयसैन्यवुमोटिब्भयत्तिनाल् । ५२
बलसहजनमरवरतनयनॊटु चॊल्लिनान्
वन्पट कॆट्टु मण्डुन्नतु काण्कॆटो । ५३

हुए आदितेयाधिप (इन्द्र) के पुत्र के साथ शत्रुकुलों का नाश करने के लिए सरोष उद्यत होकर सिंहनाद करते हुए भीष्म का सामना किया। उस युद्ध की उपमा बतलाना कठिन है। अनेक सैनिक यमलोक भेजे गये। भय के कारण दोनों ओर परेशानी बढ़ी और भागना प्रारम्भ हुआ और बड़ी सेना हिलने लगी। धूल के उठने से शत्रु को और रणभूमि को पहचानना कठिन था, अतएव लोग इधर उधर दौड़ने लगे। ४२-४८ सेना का सक्रिय होना देखकर सुयोधन को झट से आते देखकर भीम ने पर्वतशिखर पर पानी बरसने के समान शरवर्षा करके धृतराष्ट्रपुत्र के शरीर को चीर डाला। उपरिचर की लड़की के लड़के के लड़के ने शक्तिशाली भीष्म से दुःख बतलाया और भीष्म ने उसको सरसों के समान तुच्छ समझकर उससे युद्ध किया और डर के मारे कुन्तीपुत्रों की सेना भागने लगी। बलराम के भाई (कृष्ण) ने अर्जुन से कहा— देखो, बड़ी सेना हारकर

त्रिजगदधिपतिवचननिशमनदशान्तरे
धीरन् धनञ्जयन् बाणङ्ङळ् तूकिनान् । ५४
त्रिदशपतिसुतकृतशरप्रयोगं कण्टु
दिव्यन् नदीसुतन् विस्मयं तेटिनान् । ५५
परिभवमोंटमितकरबलमोंटु पितामहन्
पार्त्थनेक्कण्टेतित्तार्त्तटुत्तीटिनान् । ५६
अमरवरतनयनेयुममरवरसहजनेयु-
मन्पिनाल् मूटिनान् वन्पनां भीष्मरुं । ५७
कमलदलनयनमृदुवपुषि शरमेट्टतु
कण्टिट्टु कोपं मुळुत्तितु पार्त्थनुं । ५८
विबुधपतिसुतनतिनु विरविनोंटु भीष्मर्तन्
विल् मुरिच्चीटिननेरत्तु भीष्मरुं । ५९
विगतभयमपरमोंरु विल्लटुत्तीटिनान्
वीरनां पार्त्थनतुं मुरिच्चीटिनान् । ६०
विवशतयिलरिशमोंटु विरवोंटु पितामहन्
वीण्टु मटोंन्नु कैक्कोंण्टु चोंल्लीटिनान् । ६१
विजय ! तव समरचतुरत पेरिके नन्नोटो
विस्मयं वीरा ! विचित्रं तोंळिलुकळ् । ६२
चरतमोंटु पोंरुवतिनु वरिकवरिकाशु नी
चाकातनाळल्ल ञानुं पिरन्नितु । ६३

भाग रही है। त्रिजगत् के अधिपति जब बात सुन रहे थे तब धीर धनञ्जय ने शरवर्षा की। इन्द्रपुत्र के शर-प्रयोग को देखकर दिव्य नदीपुत्र (भीष्म) बहुत विस्मित हुए। ४९-५५ परिभव का अनुभव करते हुए बड़े बाहुबल के साथ पितामह (भीष्म) ने सिंहनाद करते हुए अर्जुन का सामना किया। शक्तिशाली भीष्म ने इन्द्र के पुत्र और इन्द्र के भाई को शरों से ढंक दिया। कमलदलनयन (कृष्ण) के मृदुशरीर पर शरों का लगना देखकर पार्थ क्रुद्ध हुआ। और विबुधपति (इन्द्र) के पुत्र ने भीष्म के धनुष को तोड़ डाला। उस समय भीष्म ने निडर होकर दूसरा धनुष ले लिया, पर वीर पार्थ ने उसे भी तोड़ डाला। तब पितामह ने क्रुद्ध होकर ढंग से दूसरा धनुष हाथ में लेकर कहा— हे विजय ! तुम्हारी युद्ध-कुशलता अद्भुत है, विस्मयावह है, तुम्हारी चेष्टाएँ विचित्र हैं। ५६-६२ आओ ! अच्छा युद्ध करने के लिए जल्दी आओ। मेरा जन्म ऐसे दिन

कुरुकुलजवररिवर्कळिरुवरुमटुत्तुटन्
कूरम्पु कोरिच्चोरिञ्ञुतुटङ्ङिनार् । ६४
रघुपतियुममररिपुदशमुखनुमुळ्ळपो-
रन्नु काणातवर् कण्टारतुपोले । ६५
तुमुलतररणरणितहृदयमोटु काणिकळ्
तुल्यमितिनु मट्टिल्लोरु पोरेन्नार् । ६६
उटलिलोळुकिन रुधिरजलमोटवर्तङ्ङळि-
लुण्टाय युद्धकोलाहलं चोल्लुवान् ६७
अरुतरुतु पुनरदितितनयवरनन्दन-
नालस्यमेट्टमुण्टायि मुट्रिकयाल् । ६८
निजसचिवनुटलिल् मुट्रिविटरिनोटु काण्कयाल्
निर्त्तिनान् तेरेटुत्तीटिनान् चक्रवुं । ६९
मधुमथननणयवरुमळवु देवव्रतन्
मन्दस्मितं चेय्तु निन्नु चोल्लीटिनान् । ७०
कमलदलनयन ! मधुमथन ! करुणानिधे !
काळमेघाभिरामकृते ! श्रीपते ! ७१
जनिमरणभयहरणनिपुणतरचरण युग !
जन्तुक्कळ्जीवनमाय जगत्पते ! ७२
नळिनशरशमनकर ! नळिनभवनमितपद !
नारायणा ! हरे ! नारायणा ! हरे ! ७३

नहीं हुआ कि मेरी मृत्यु न हो। कुरु के कुल में पैदा हुए इन दोनों ने तीक्ष्ण शरों की वर्षा की। जिन्होंने रघुपति-रावण का युद्ध नहीं देखा था उन्होंने उसके समान युद्ध देखा। प्रेक्षकगण ने, जिनका हृदय तीव्र शब्दों से पीड़ित हुआ, कहा कि इस युद्ध के समान और कोई युद्ध नहीं है। उन दोनों के शरीरों में रक्त बहने के कारण जो युद्ध-कोलाहल हुआ उसका वर्णन करना असंभव है। घायल होने के कारण इन्द्रपुत्र को बड़ा आलस्य हुआ। अपने सचिव के शरीर में व्रण देखकर कृष्ण ने रथ रोका और अपना चक्र ले लिया। ६३-६९ जब मधुमथन (कृष्ण) निकट आने लगे तब देवव्रत (भीष्म) ने मुस्कराकर कहा— हे कमललोचन ! हे मधुमथन ! हे करुणानिधे ! काले मेघ के समान सुन्दर आकृतिवाले हे श्रीपते ! जन्म और मरण का भय दूर करने में निपुण चरणयुगवाले ! हे जन्तुओं के जीवन ! हे जगत्पते ! मदन का शमन करनेवाले ! ब्रह्मा

सलिलनिधिदुहितृवर ! सकलजगदवनपर !
सच्चिल्स्वरूपप्रभो ! नाथ ! गोपते ! ७४
निगममयसदन ! विधुवदन ! मुरमथन ! जय !
निन्नुटॆ कैकॊण्टु कॊन्नरुळेणमे । ७५
मम मनसि नियतमभिलषितमतु माधवा !
मट्टॆन्तु पिन्नॆ वरेण्टतॆनिक्कहो ! ७६
मधुरतरवचनमॊट्टु कुरुकुलजनिङ्ङने
मानिच्चु चॊन्नतुनेरत्तु पार्त्थनुं ७७
अरुतरुतितॊळिकॊळिक करुतुकॊरु सत्यमु-
ण्टानन्दमूर्त्ते ! मऽन्नितो मानसे ? ७८
विजयनयवचनमितु विमलनसुरारियां
विश्वैकनायकन् केट्टटङ्ङीटिनान् । ७९
खरकिरणनॊळिविनॊट्टु कटलिल् मुळुकीटिनान्
कैनिल पुक्कीटिनार् महीपालरुं । ८०
कलहरसमकतळिरिल् निऽयुमरिवीररुं
कण्टेतिर्त्तार् तम्मिल् नालांदिवसवुं । ८१
द्रुपदसुतनॊट्टु पॊरुतुनिन्न शल्यानुजन्
तेर् कळञ्ञानतिन्नाशु धृष्टद्युम्नन् ८२
कुपितनतिचतुरनवनॊट्टु पॊरुतट्टुटन्
कॊन्नितु शल्यानुजन्तन्नेयन्नेरं । ८३

द्वारा वन्दित चरणवाले ! हे नारायण ! हरे ! हे नारायण ! हरे ! हे समुद्र की पुत्री के पति ! सकल जगत् की रक्षा में तत्पर ! सत्चित् स्वरूप प्रभो ! हे नाथ ! हे गोपते ! हे वेदमय निवासवाले ! हे चन्द्र-मुख ! मुरमथन ! जय हो ! अपने हाथ से मुझे मारने की कृपा करो ! हे माधव ! मेरे मन की यही अभिलाषा है। मुझे और क्या होनेवाला है ? ७०-७६ जब कुरुकुलज (भीष्म) ने अपने मधुर-वचनों से इस प्रकार कहा तब अर्जुन ने कहा— नहीं ! नहीं !, रुक जाओ ! एक सत्य है, क्या तुम उसे भूल गये हो ?। अर्जुन के इस नीतिवाक्य को सुनकर विमल असुरशत्रु विश्व के नायक ने अपने को सँभाला। उस समय सूर्य अस्त होने के लिए समुद्र में डूबा और राजगण अपने-अपने शिविर को चले गये। तदनन्तर चौथे दिन दिल में युद्धरस रखनेवाले शत्रुवीर रणभूमि में आकर एक दूसरे का सामना करने लगे। द्रुपदपुत्र के साथ युद्ध के लिए उद्यत शल्यानुज ने अपना रथ खोया। अतएव क्रुद्ध और अति चतुर

व्यथयुमोरु परिभववुमकतळिरिल् वाय्क्कयाल्
वीरनां शल्यरट्टुत्तु पटयुमाय् । ८४
करतळिरिलोरु गदयुमळ्किनोटॆट्टुत्तुटन्
काट्टिन्मकनुमटुत्तान् कटल्पोले । ८५
कटमुटयवटिविनोटु कठिनमोटटिच्चुटन्
कालपुरत्तिन्नयच्चान् करिकळॆ । ८६
पटनटुविललरिनोरु पवनतनयन्तन्ने-
प्पट्लर् कण्टु पेटिच्चकन्नीटिनार् । ८७
कुरुनृपतिवरतनयनवरजन्मारुमाय्
कूट्टनेप्पोलेयटुत्तानतुनेरं । ८८
बलमुटय पवनसुतनतिनु तेरेरिनान्
पेय्तुतुटङ्ङिनान् बाणगणमवन् । ८९
कोटुमयोटु पोरुतु कुरुवरसहजन्मारेयुं
कोन्नान् पतिमून्नुपेरेयुं मारुति । ९०
नरतुरगकरिरथिकळ्नाशङ्ङळ् कण्टिट्टुं
नाथन् भगदत्तनेय्तटुत्तीटिनान् । ९१
पवनसुतवपुषि शितशरनिरकळ् कोण्टतु
पार्त्तु घटोल्क्कचनार्त्तटुत्तीटिनान् । ९२
मरुतलकळ् नटुविलटल्पोरुवतिनु पुक्कवन्
मायङ्ङळ् कोण्टु पोर्चेय्तोटुक्कीटिनान् । ९३

धृष्टद्युम्न ने उस के निकट पहुँचकर उसको मारा । ७७-८३ दिल में दुःख और परिभव हो जाने के कारण वीर शल्य अपनी सेना के साथ आया तुरन्त ही गदा अपने हाथ में लेकर वायुपुत्र समुद्र के समान निकट आया और ज़ोर से मारकर उसने हाथियों को यमसदन भेज दिया। सेना के बीच में सिंहनाद करते हुए वायुपुत्र को देखकर शत्रु अलग हो गये। तब कुरुनृपति का ज्येष्ठ पुत्र वृषम के समान अपने अनुजों के साथ आया। इसके जवाब में शक्तिशाली भीम रथ पर चढ़ा और शरवर्षा करने लगा। तीव्र युद्ध करके तेरहों अनुजों को मारुति (भीम) ने मार डाला। ८४-९० सैनिकों, घोड़ों, हाथियों और रथियों का नाश देखकर नेता भगदत्त बाण छोड़ते हुए निकट आया। भीम के शरीर पर तीक्ष्ण शरों का लगना देखकर सिंहनाद करता हुआ घटोत्कच आया। शत्रुओं के बीच लड़ने के लिए घुसकर उसने माया का प्रयोग किया और उनको समाप्त कर

परवशतयोंटु पटयुमिळकि नटकोंण्टुते
पार्त्थिवेन्द्रन् भगदत्तनुमोटिनान् । ९४
मुसलधरकरिकळ् पल पट्टुपोयीतुटन्
मुल्पेट्टु वाङ्ङी सुयोधनसैन्यवुं । ९५
सुहृदनुजसहितयमतनयनुं सेनयुं
सूर्यन् मङ्ङ्आरें कैनिलयुं पुक्कार् । ९६
अपजयवुमनुजजनमरणवुं चोल्लिना-
नार्त्तनाय् भीष्मरोटन्नु सुयोधनन् । ९७
नदिमकनुमतिनु कुरुनृपतियोंटु चोल्लिनान्
नन्नाकयिल्ला पट नमुक्कोन्नुमे । ९८
सकलजगदवनपरनवनिभरनाशनन्
साक्षाल् जगन्नाथनाय नारायणन् ९९
पकलिरवुतुणयरिकिलुण्टु सुयोधना !
पाण्डवन्माक्कें जयं वरू निर्ण्णयं । १००
वरदनजनखिलजनहृदि मरुवुमीश्वरन्
वासुदेवन्तन्नें वन्दिक्क नी तानुं । १०१
यमतनयनवनियोंरु पातियुं नल्क नी
चेंम्मे सुखिच्चु वसिक्क पिणङ्ङातें । १०२
अनुनयमोंटशुभशुभमरिवतिनु चोंन्नपो-
तादित्यदेवनुदिच्चानतुनेरं । १०३

दिया। लाचार होकर सेना भाग गयी और नृपवर भगदत्त भी भाग गया। अनेक बड़े हाथी मारे गये और सबसे पहले सुयोधन की सेना हटी। युधिष्ठिर, अपने मित्र और अनुजों के साथ सूर्य के अस्त होते ही अपने शिविर चले गये। उस दिन सुयोधन ने अपने पराजय और अनुजों की मृत्यु से दुःखित होकर भीष्म से कह दिया। नदीपुत्र (भीष्म) ने तब कुरुनृपति से कहा— हमारे लिए युद्ध कभी ठीक नहीं होगा। ९१-९८ समस्त जगत् की रक्षा में तत्पर, दुष्ट राजाओं के नाशक साक्षात् जगन्नाथ नारायण दिन रात उनकी सहायता कर रहे हैं, हे सुयोधन ! इसलिए पाण्डवों की ही जय होगी। तुम भी वरद, अज, सब के हृदय में निवास करनेवाले वासुदेव की वन्दना करो। युधिष्ठिर को आधा राज्य दे दो और बिना आपस में झगड़ा किये सुख से रहो। और उसको समझाया कि शुभ और अशुभ पहचानो। तब सूर्योदय हुआ। जब पाँचवाँ दिन

पल मलकळरुमयोॅटु मलकळोॅटु पोॅरुवतिनु
पाञ्ञटुक्कुंवण्णमेट्टितञ्चांदिनं । १०४
परमगुरुचरितनथ रथमतु नटत्तिनान्
पार्थनुं भीष्मरोटेॅय्तटुत्तीटिनान् । १०५
मुसलशरपरिघवरपरशुमुखमायुधं
पार्त्थिवन्मारुटन् तूकित्तुटङ्ङिनार् । १०६
परनिवहशमनकरनमरवरनन्दनन् ।
भैरवास्त्रं प्रयोगिच्चितु भीष्मरे । १०७
परशुधरनोॅटु पोॅरुतु जयमतु लभिच्चवन्
प्रत्यस्त्रमेॅय्तु तटुत्तुनिन्नीटिनान् । १०८
पटनटुविलोॅरु रुधिरनदियुमोॅळुकी तदा
पट्टितु सात्यकिक्कात्मजन्मार् पत्तुं । १०९
पुरुषवरनधिकरथनाय भूरिश्रवा
पुत्रगणत्ते वधिक्कयाल् सात्यकि ११०
कनल्चितरुमॅरिमिळियोॅटेॅतिर्पोॅरुतटुत्तुटन्
काणाय शत्रुक्कळेॅयोॅटुक्कीटिनान् । १११
करितुरगनररथिकळिरुपुरवुमेट्टवुं
कालराज्यं गमिच्चार् पिणङ्ङित्तुलोम् । ११२
अरुणनलकटल् नटुविलरचरथ कैनिलयि-
लळकिनोॅटुपुक्कार् पुलर्न्नितताङ्दिनं । ११३

आया तब ऐसा लगा कि अनेक पहाड़ और पहाड़ों का सामना कर रहे हैं । परमगुरु (कृष्ण) ने रथ चलाया और अर्जुन बाण छोड़ते हुए भीष्म के निकट पहुँचा । ९९-१०५ और राजा लोग मुसल, शर, परिघवर, परशु आदि आयुधों का प्रयोग करने लगे । शत्रुसमूह का नाश करनेवाले अर्जुन ने भीष्म पर भैरवास्त्र का प्रयोग किया । जिसने परशुराम से लड़कर जय प्राप्त किया उस (भीष्म) ने प्रत्यस्त्र का प्रयोग करके उसको रोका । सेनाओं के बीच में रक्तनदी बहने लगी । सात्यकि के दसों पुत्र मारे गये । पुरुषवर, अधिरथ भूरिश्रवा के द्वारा अपने पुत्रगण के मारे जाने से सात्यकि ने आग बरसती हुई आँखों के साथ रणभूमि में उतर कर जो-जो शत्रु देखने में आये उनको समाप्त कर दिया । दोनों ओर हाथी, घोड़े, आदमी और रथी लड़लड़कर यमसदन चले गये । तब छठें दिन की प्रभात हुई । १०६-११२ अरुण क्षुब्ध समुद्र के बीच और राजगण अपने तम्बू

क्रृतिकळतिल् मिकवियलुमरिय गंगासुतन्
क्रौञ्चमां व्यूहं चमच्चुनिर्त्तीटिनान् । ११४
क्रृतिकळकमतिल् मरुवुमखिलजगदीशनां
क्रृष्णनुं पार्थनुं तेरिलुक्करेरिनार् । ११५
अरचर्कुलमवरवर्कळेतिर्पोरुतु तम्मिले-
ट्न्तकन्वीटु पुक्कारनेकं जनं । ११६
द्रुपदसुतनतिचतुरनाय धृष्टद्युम्नन्
मोहिच्चितेट्वुं मोहास्त्रमेल्क्कयाल् । ११७
गुरुवरनुमवनोटेतिर्पोरुतु तेरुं विल्लुं
कूटक्कळञ्ञेय्तटुत्तु चेन्नीटिनान् । ११८
कुरुपतियुमतुपोळुतु पलरोटुं चोल्लिनान्
कुन्तीसुतनाय भीमनेक्कोल्लुवान् । ११९
उळरुकिनि विरविनोटु कळयरुतु कालमें-
न्नूक्कोटटुत्तु कुरुप्रवरन्मारुं । १२०
द्रुपदनृप दुहितृसुतसुरवरज केकय-
द्रुपदमुखरथिकळ् तुणचेन्नितु भीमनुं । १२१
द्रुततरमोटधिनिकटमटल् पोरुतनन्तरं
द्रोणादिकळुमोळिच्चु वाङ्ङीटिनार् । १२२
कुटकोटिकळटलिटयिलिटरोटु पोटिच्चुटन्
कूटत्तुटन्नट्टुत्तीटिनान् भीमनुं । १२३

के अन्दर प्रविष्ट हुए अपने कार्यों में सदैव तत्पर महान् गंगापुत्र ने क्रौञ्चव्यूह की रचना की। सभी कार्यों में विद्यमान जगदीश कृष्ण और अर्जुन रथ पर चढ़े। राजागण में अनेक ने एक दूसरे का सामना किया और अन्त में अन्तक (यमराज) के घर पहुँचे। मोहास्त्र लगने से द्रुपदपुत्र अतिचतुर धृष्टद्युम्न बिलकुल बेहोश हो गये। गुरुवर ने उसका सामना किया और अपने रथ और धनुष खोकर भी उसके पास पहुँचे। उस समय कुरुपति ने बहुतों से कुन्तीपुत्र भीम को मारने के लिए कहा। अब जल्दी करो, समय न खोओ, ऐसा कहते हुए कुरप्रवर ज़ोर से निकट आने लगे। ११३-१२० भीम तो द्रुपद राजा की पुत्री के पुत्र की और द्रुपद आदि रथियों की सहायता के लिए गया। द्रोण आदि निकट आकर बड़ी द्रुत गति से युद्ध करने के बाद पीछे हट गये। युद्ध के दौरान में छत्री-झण्डा आदि को तोड़ते हुए भीम निकट पहुँच गया। हे सुयोधन!

पटनटुविल् वरिकिलुटल् तविटुपोंटियाक्कुवन्
पापि ! सुयोधना ! पायातें निल्लु नी । १२४
अटल्वटिवुमटल्विटमकळुमुटय भीमनु-
मोटुन्न कौरवरोटट्टुत्तीटिनार् । १२५
चेंकिटटयुमळवलरुमनिलसुतभीतियाल्
चेंन्नवर् कैनिलपुक्किरुन्नीटिनार् । १२६
मरुतलकळ् तोल्पतिन्नेळां दिवसवुं
मण्डलव्यूहं चमच्चितु भीष्मरुं । १२७
वरिकिलिळकरुतु पटयेंन्तुरप्पिच्चुटन्
वज्रमां व्यूहवुं वज्रधरात्मजन् । १२८
सलिलधरनिकरसटमळ पोंळियुंवण्णं
सायकपंक्तिकळ् तूकित्तुटङ्ङिनान् । १२९
उदरगळ कर चरण मुखमवयवङ्ङळ-
ट्टूक्कोंन्तु चोरयोंलिक्कुन्नितेट्टवुं । १३०
रथिनिकरतुरगवरनरकरिकळ् चाकयुं
रक्षोगणप्रेतभूतङ्ङळार्क्कयुं १३१
रुधिरनदि पलवळियुमुटनुटनोंलिक्कयुं
रूक्षतयुळ्ळवर् पोर्क्कङ्ङटुक्कयुं । १३२
नरपतिकळ् चिलरधिकभयमोंटु तिरिक्कयुं
नारदन् तुंबुरुसाकं चिरिक्कयुं । १३३

अगर तुम युद्ध के बीच आओगे तो तुम्हें चूर-चूर कर डालूंगा । बिना भागे खड़े हो जाओ । ढंग से युद्ध करनेवाला भीम तो भागते कौरवों के पास पहुँच गया । कान फोड़ने लायक गर्जन करनेवाले वायुपुत्र के डर से वे अपने तंबू चले गये । शत्रुओं के पराजय हेतु सातवें दिन भीष्म ने मण्डलव्यूह की रचना की । १२१-१२७ और वज्रधर के पुत्र ने वज्रव्यूह की भी रचना की, ताकि शत्रुओं के आने पर सेना न हिले । वज्रधरात्मज (इन्द्रपुत्र अर्जुन) ने मेघसमूह के धाराप्रवाह से बरसने की भाँति शरवर्षा करना प्रारम्भ किया। उदर, गला, हाथ, चरण, मुख आदि सभी अवयवों से ज़ोर से ख़ून बह रहा है । अनेक रथी, तुरगवर, हाथी और आदमी मरे । रक्षगण, प्रेत और भूत चिल्लाये, रक्तकी नदियाँ चारों ओर बहीं, रूक्षतावाले युद्ध के लिए आगे बढ़े, कुछ राजगण अधिक डर के मारे वापस चले गये, नारद और तुंबुरु हँसे। द्रोण के तीक्ष्ण शरों के लगने से विराट का धनुष टूट

कलशभवनिशिततरविशिखगणमेल्क्कयाल्
खण्डमाय्वन्नू विराटनु चापवुं । १३४
शरशकलरथतुरगतातनेक्कण्टाशु
शंखनुं द्रोणरोटेट्टानतुनेरं । १३५
निमिषमोंटु शमनपुरि निलयनवुमाक्किनान्
निन्न भरद्वाजपुत्रन् गुरुवरन् । १३६
सभयतरहृदयमथ वाङ्ङी विराटनुं
सव्यसाचिक्कतिर् चन्नु भगदत्तन् । १३७
महितगुणमुटय यमसुतनोंटु सुयोधनन्
माद्रनुं माद्रीतनयनुं तम्मिलुं । १३८
असुरसुरसमरसममेन्ने पऱयावि-
तस्तमिच्चीटिनानादित्यदेवनुं । १३९
हरिसहितहरिहयजनरियरथमेऱिना-
नरिमयोंटु पोरिनायेंट्टां दिवसवुं । १४०
पवनसुतनोंटु पोरुतु चत्तारोरेळुपेर्
पापिकळाय सुयोधनतन्पिमार् । १४१
परुषमोंटु पलवचनमतिनु दुरियोधनन्
पार्त्तु देवव्रतन् तन्नोटु चोल्लिनान् । १४२
विधिविहितमिति करुतु कळकळल् सुयोधना !
वीरर् मरिक्कुन्नतिन्नु शोकिक्कोला । १४३
निशिचररिलरचनतिबलमेळुमलंबुसन्
निन्नु पट कोन्नोंटुक्कुन्नतु कण्टु । १४४

गया । १२८-१३४ अपने पिता का रथ और तुरग शरों से नष्ट देखकर शंख ने द्रोण का सामना किया । गुरुवर भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने तो उसको एक ही क्षण में यमपुरी भेज दिया । तब विराट काँपते दिल से पीछे हटा । भगदत्त ने सव्यसाचि (अर्जुन) का सामना किया । श्रेष्ठ गुणवाले यमसुत (युधिष्ठिर) का सुयोधन ने सामना किया और माद्र और माद्रीपुत्र आपस में लड़े । यह युद्ध देवासुर युद्ध के समान था । इतने में सूर्यदेव अस्त हुए । हरि (कृष्ण) के साथ हरिहयज (अर्जुन) श्रेष्ठ रथ पर चढ़ा, ताकि आठवें दिन का युद्ध प्रारम्भ हो । १३५-१४१ सुयोधन के पापी अनुजों में से सात भीम से युद्ध करके मर गये । अतएव दुर्योधन ने देवव्रत (भीष्म) से अनेक खरी बातें कहीं । (भीष्म ने उत्तर दिया) हे सुयोधन ! समझो कि

विबुधपतिसुततनयनेय्तेय्तट्टुत्तितु ।
वित्रस्तनायवनंबरमेऱिनान् । १४५
पुनरसुरनोरुवनवनोटट्टुत्तीटिनान्
पोरिलवन्तन्नेक्कोन्ऩानिरावानुं । १४६
अतिनुपरि भयमियलुमसुरकळसंख्यमा-
याशीविषङ्ङळाय्क्काणायि माययाल् । १४७
सुरवरजसुतनुमथ निन्ऩू विषण्णनाय्
सूक्षिच्चु मायमऱिञ्ञिट्टिरावानुं । १४८
अतुपोळुतु गरुडनुटल्पूण्टु सर्प्पङ्ङळे-
याश्चरियंवरुमारवन् भक्षिच्चान् । १४९
अवनेयवरतुपाळुतु मायया कोन्ऩपो-
तार्त्तु दुरियोधनादिकळोक्कवे । १५०
पवनसुततनयनथ पवनसमवेगेन
पट़लरोच्च केट्टुट़्टुत्तीटिनान् । १५१
भ्रमणकरपरिघमोट्टु वीरन् घटोल्कचन्
भ्रातावितेक्कोलचेय्ततु कारणं । १५२
इटियोटेतिरिट्टुमटवुपोट्टुपोटलऱीटिना-
निन्द्रात्मजाग्रजन्तानुमव्वण्णमे । १५३
पवनजनुमवरजनुमोरुमयोटट्टुत्तुटन्
पट़लर्कूट्टमोट्टुक्कित्तुटङ्ङिनार् । १५४

यह सब विधि की आज्ञा है। दुःख छोड़ो। वीरों के मरने में शोक न करो। निशाचरों के राजा अति शक्तिशाली अलंबुस को लड़ता हुआ सेना को समाप्त करता देखकर अर्जुन-पुत्र बाण छोड़ता हुआ उसके पास पहुँचा। तब डर के मारे वह आकाश में चढ़ा। तब एक असुर उसके पास पहुँचा और अर्जुनपुत्र इरावान् ने उसको मार डाला। तदनन्तर असंख्य भयंकर असुर माया के द्वारा आशीविष (सर्प) के रूप में दिखाई दिये। तब अर्जुनपुत्र इरावान् ने माया को जान लिया और बहुत विषण्ण हुआ। १४२-१४८ तब उसने गरुड़ का रूप धारण करके आश्चर्यजनक ढंग से सर्पों को खा लिया। तदनन्तर असुरों ने उसको माया से मारा। तब दुर्योधन आदि ने सिंहनाद किया। इतने में भीम का पुत्र वायु के वेग से शत्रुओं के शब्द सुनकर निकट पहुँचा। अपने भाई के वध के कारण वीर घटोत्कच एक भयंकर भाला लेकर आया। इन्द्रपुत्र के बड़े भाई (भीम) ने भी ऐसी गर्जना की, मानो मेघनिर्घोष भी हार जाय।

नदिमकनुमतिनु भगदत्तनोटेट़िनान्
नऩ्ऩायट्टुत्तानुटन् भगदत्तनुं । १५५
निजतनयमरणमतु केट्टु दुःखत्तोटुं
निऩ्ऩ धनञ्जयन् कोपिच्चटुत्तप्पोळ् । १५६
कुरुबलवुमुरुभयमोंटुळऱि नटकोण्टुपोय्
कूट्टमे कैनिल पुक्किरुऩ्ऩीटिनार् । १५७
दिवसकरनुदयमतुकण्टपोतोन्पतां
दिवसवुमणञ्ञु पोर्चेय्तुतुटङ्ङिनार् । १५८
पितुरधिकनधिकबलमुळ्ळ सौभद्रनुं
पेटिच्चलंबुसनोटुवोळमेय्तान् । १५९
गुरुविनोंटु गुणसदृशनाय किरीटियुं
कुंभिकळोटु बृकोदरवीरनुं । १६०
शमनतनयनुममितबलमुटय शल्यरुं
शक्तियेऱीटुं महारथर्तम्मिलुं १६१
पोरुतळवु नरतुरगकरिकळिरुभागवुं
पोरिल् मरिच्चारसंख्यमरक्षणाल् । १६२
रुधिरमयनदिकळिरुपुऱवुमोळुकी तदा
रोषं मुळुत्ततिघोरमायी रणं । १६३

भीम और उसके छोटे भाई ने मिलकर शत्रुओं को समाप्त करना प्रारम्भ किया । इसके जवाब में नदीपुत्र (भीष्म) ने भगदत्त को उत्तेजित किया जो झट से निकट पहुँच गया । १४९-१५५ अपने पुत्र का मरण सुनकर दुःखित धनञ्जय जय क्रोध के साथ निकट आया तब कुरुबल बहुत डर गया और चला गया । सबके सब तंबू के अन्दर छिप गये । तदनन्तर सूरज का उदय देखकर नवें दिन सब युद्ध करने लगे । अपने पिता से भी अधिक, शक्तिशाली सौभद्र ने अलंबुस के भागने तक शरवर्षा की । जब गुरु के साथ उनके गुणवाले अर्जुन का, हाथियों के साथ भीम का, युधिष्ठिर और शक्तिशाली शल्य का और आपस में शक्तिशाली महारथियों का युद्ध हुआ तब एक क्षण में दोनों ओर असंख्य नर, घोड़े और हाथी मरे। दोनों ओर रक्त की नदियाँ बहीं और रोष के बढ़ने से युद्ध अतीव घोर हुआ । १५६-१६३

श्री कृष्णन् भीष्मवधत्तिनु ऑरुन्पॆटुन्नतुंपिन्वाङ्ङुन्नतुं ।

विजयरथमतुपॊळ्ळुतु विगतभयमच्युतन्
वीरनां भीष्मक्कुनेरे नटत्तिनान् । १
सलिलधरनिकरमटमळ्पॊळियुमव्वण्णं
सायकौघं प्रयोगिच्चारिरुवरुं । २
नदिमकनुमतुपॊळ्ळुतु चॆरुतु कोपिक्कयाल्
नारायणनुं नरनुमेट्टु शरं । ३
त्रिदशपतिसुतनुमथ विल् मुरिच्चीटिनान्
वीरनां भीष्मर् मटॊन्नॆटुत्तीटिनान् । ४
कमलदलनयनसखियाय धनञ्जयन्
खण्डिच्चितञ्चन्पुकॊण्टतुतन्नेयुं । ५
विरविनॊटु पुनरपरमॊरु धनुरनन्तरं
वीरनां भीष्मर् कैक्कॊण्टटुत्तीटिनान् । ६
शरनिकरपरिपतनशकलितशरीरनाय्
शक्रात्मजनुं तळर्न्निटर्पूण्टुते । ७
समरभुवि रथमपि च निर्त्ति नारायणन्
चक्रं तिरिच्चटुक्कुन्नतु काणायि । ८
जय परमपुरुष ! जय जय सकल भुवनमय !
जन्मनाशङ्ङळिल्लात जगत्प्रभो ! ९

श्रीकृष्ण का भीष्मवध करने का इरादा और उनका त्याग ।

तदनन्तर अच्युत ने निडर विजयरथ को (अर्जुन के रथ को) वीर भीष्म की ओर चलाया । मेघसमूह की अतिवृष्टि करने के समान दोनों ने शरवर्षा की । नदीपुत्र (भीष्म) के तनिक क्रुद्ध होने के कारण नारायण और नर (अर्जुन) को शर लगे । अर्जुन ने भीष्म का धनुष तोड़ डाला । तब भीष्म ने दूसरा ले लिया । कमलदलनयन (कृष्ण) के मित्र धनञ्जय ने उसे भी पाँच बाणों से काट दिया । तदनन्तर वीर भीष्म एक और धनुष लेकर निकट पहुँचे । १-६ शरसमूह के लगने से इन्द्रपुत्र का शरीर अत्यन्त छिन्न हुआ और वह थक गया । तब नारायण (कृष्ण) ने युद्ध-भूमि में रथ को रोक लिया और अपने चक्र को घुमाते हुए निकट आते दिखाई दिये । हे परमपुरुष ! तुम्हारी जय हो ! हे सकल भुवनमय ! जय, जय ! हे जन्म और नाश से रहित जगत्प्रभो ! हे कमलदलनयन !

जय कमलदलनयन ! जय कमलभवसदन !
जाग्रल्भ्रमप्रद ! प्राणिजीवात्मक ! १०
जय कमलवदन ! जय जय वरदकमलकर !
जाड्यप्रणाशन ! त्राहि मां त्राहि मां ! ११
जय विबुधमुनिनमित ! जय गिरिशनतचरण !
जात्याभिमानादिहीनप्रभानिधे ! १२
जय सकळसगुणमय ! जय विमल विगुणमय !
जन्तुधर्म्मप्रिय ! श्रीपते ! गोपते । १३
जय गिरिशनमितपद ! जय सकलतनुभुवन !
जन्तुवृन्दक्षेत्र वेदवेदान्तग ! १४
क्षितिविबुध ! जनहृदयनिलयन ! नमोस्तुते
कीर्त्तनध्यानमात्यन्तिकं देहि मे ! १५
जय विजयरथनिलय ! परगति वरुत्तुवान्
चेम्मे मुतिर्न्नतिन्नेतुं मटिक्कोला । १६
वरिक वरिकयि समरमरणभयमिल्ल मे
वासुदेवा जयिक्केन्नितु भीष्मरुं । १७
निजसमयवचनमतिनन्तरं चेय्किलुं
निश्चयं भक्तसत्यत्ते रक्षिक्कुमे । १८

जय ! हे ब्रह्मा के सदन ! जय ! हे जाग्रद् अवस्था रूपी भ्रम करानेवाले ! प्राणिजीवात्मक ! जय ! हे कमलवदन ! हे वरदहस्त ! जय जय ! हे जाड्य का नाश करनेवाले ! मुझे बचाओ, मुझे बचाओ ! हे देवों और मुनियों का वन्दनीय ! शिवजी का पूज्य ! हे जन्म से ही अभिमानादिहीन ! हे प्रभानिधे ! जय ! ७-१२ हे सकलगुणमय ! हे विमल ! हे निर्गुण ! जय ! हे जन्तुधर्मप्रिय ! हे श्रीपते ! गोपते ! हे गिरिश (शिव) का पूजितचरण ! सकल शरीरों का भुवन ! हे सभी जन्तुओं का क्षेत्र ! हे वेद और वेदान्त से वेद्य ! ह पृथिवी का देव ! जन के हृदय में रहनेवाले ! मेरा नमन स्वीकार हो ! मुझे आत्यन्तिक कीर्तन और ध्यान करने दो। अर्जुन के रथ पर बैठनेवाले ! जय ! परगति करने के लिए उठे हो, अब हिचकना मत ! आओ ! आओ ! मुझे इस युद्ध में मरने से डर नहीं है। हे वासुदेव ! तुम्हारी जय हो ! —भीष्म ने ऐसा कहा। अपने वचन का अन्तर करके भी निःसन्देह भक्तों के सत्य की रक्षा करोगे। धनञ्जय ने युद्ध के बीच में संकोच से अच्यत (कृष्ण) से कहा— सत्य की रक्षा

अपटुतयॊटटल्नटुविलिटरॊटु धनञ्जय-
नच्युतनोटु सत्यत्तॆ रक्षिक्कॆन्नान् । १९
कॆटुपटयॊटिटरॊटळल् पूण्टु कुन्तीसुतन्
खेदिच्चु कैनिलपुक्किकरुन्नीटिनान् । २०
शमनसुतनमरवरतनयनॊटु चॊल्लिनान्
शान्तनवादिकळॆज्जयिप्पान् पणि । २१
वयमवनि वरुवतिनु कॊतियॊळिक काननं
वाळ्क वसुदेवपुत्रनॆन्तावतुं ? २२
युधि मरणमॊळिक वनमळकिनॊटु पूक नां
योगं धरिच्चु गति वरुत्तीटुवान् । २३
इति शमनसुतविविधनयवचनमाशु के-
ट्टिन्दिरावल्लभन्तानुमरुळ्चॆय्तान् । २४
अमरकुलवरवसुगणाधिपन्मारुटॆ-
यंशमायुत्भविच्चुण्टाय भीष्मरॆ २५
अमरिलरुतसुरसुरनिकरमॊरुमिक्किलु-
माक्कुं जयिक्करुतॆन्नरि मन्नवा ! २६
परशुधरनरचर्कुलमटयॆ वॆन्नीटुवान्
पण्टॆतिर्त्तन्नु तोट्टानरिञ्ञीलयो ? २७
विबुधनदियुटॆ तनयनटिमलरिणय्क्कल् नी
वीळुक युधिष्ठिरा ! वेणं जयमॆङ्किल् । २८

करो । १३-१९ कुन्तीपुत्र (अर्जुन) विषण्ण हुआ और अपनी थकी सेना के साथ अपने तंबू चला गया। युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा— शान्तनव (भीष्म) आदियों को जीतना कठिन है। हम भूमि पाने की इच्छा छोड़ दें और वन में रहें। वसुदेव पुत्र (कृष्ण) क्या कर सकता है ? हम युद्ध में मरण को त्याग दें और ख़ुशी से वन में प्रवेश करें ताकि योगाभ्यास करके अपनी सुगति प्राप्त करें। युधिष्ठिर की इस प्रकार की विविध बातें सुनकर इन्दिरावल्लभ (श्रीकृष्ण) ने कहा— देवकुलों में श्रेष्ठ वसुगण के नेताओं के अंश से उत्पन्न भीष्म को युद्ध में देव और असुर एक होकर भी जीत नहीं सकते हैं—जान लो, हे राजन् ! क्या तुम जानते नहीं हो कि पूर्वकाल में परशुराम, जो सारा क्षत्रियकुल का नाश चाहता था, उनसे हारा था। २०-२७ हे युधिष्ठिर ! अगर विजय चाहते हो तो दिव्य नदी के पुत्र के चरणों पड़ो। हे कालात्मज (युधिष्ठिर) ! उनको युद्ध में

करबलमोंटवनोंटेतिर्पोरुतु जयमार्क्कुमे
कालात्मजा ! जयिप्पान् पणि तेरु नी । २९
त्रिपुरहर सुरदितिजजनवुमोंरुमिच्चुटन्
धीरतयोटेंतित्तालुं जयं वरा । ३०
शरणमिह चरणतलसरसिरुहमेंन्नियॆ
शन्तनुजनच्चन्नु वन्दिक्क वैकाते । ३१
मधुरतरमधुमथनवचनमतु केट्टुटन्
महितगुणगणमुटय पितृपतिजनादराल् ३२
सुहृदनुजसहितनटिमलरिण वणङ्ङिनान्
सुहृदधिपनमरनदिसुतनुमरुळिच्चेय्तान् ३३
नरकहर ! दुरितहर ! मुरमथन ! मधुमथन !
नारदसेवित ! नारायणा ! हरे ! ३४
निगममय ! निखिलजगदवन ! हृदिसंभव !
निष्कळ ! निर्गुण ! निश्चल ! निर्म्मल ! ३५
निरतिशय ! निरुपम ! निरञ्जन ! निराधार !
नित्य ! निरामय ! नीरजलोचन ! ३६
नियमपरजनहृदयनिलयन ! नमोस्तु ते !
नीचजनान्तक ! नीतिस्थितिकर ! ३७
निखिलनिशिचरनिवहशमनपर ! दैवमे !
नीरदवर्ण्ण ! निराकुल निर्म्मम ! ३८

बाहुबल से जीतना कोई भी नहीं कर सकता है, जान लो। अगर त्रिपुरहर देव और दैत्य सब एक होकर धैर्य से उनका सामना करें तब भी जय प्राप्त न कर सकेंगे। उनका पादपद्म ही तुम्हारा शरण है। बिना विलम्ब के शन्तनुज (भीष्म) की वन्दना करो। मधुमथन (विष्णु, कृष्ण) के इस मधुर वचन को सुनकर वन्द्य गुणवाले पितृपतिज (युधिष्ठिर) ने सादर अपने मित्र और अनुजों के साथ भीष्म के चरणों की वन्दना की। तब सुहृदों के नेता अमरनदीपुत्र (भीष्म) ने कहा—हे नरकहर ! पापहर ! मुरारि ! मधुमथन ! हे नारदसेवित ! नारायण ! हरे ! २८-३४ हे वेदमय ! निखिल जगत् के रक्षक ! हृदय में रहनेवाले ! निष्कल ! निर्गुण ! निश्चल ! निर्मल ! हे निरतिशय ! निरुपम ! निरञ्जन ! निराधार ! हे नित्य ! निरामय ! कमललोचन ! हे नियमों के पालन करनेवालों के हृदयों में स्थित ! तुम्हे प्रणाम हो ! हे नीचजनों के नाशक !

निवस मम हृदि सततमतिनु तॊळुतीटिनेन्
नीळाकुचाभोगमेळाभरणमे । ३९
निजचरणनळिननतजनसुखपरायणा !
नित्यं नमोस्तु ते नित्यं नमोस्तु ते ! ४०
पितृपतिज पवनसुत विबुधपतिसुत नकुल-
वीर शस्त्रार्त्थसिद्धान्तसहदेवा ! ४१
वरिक वरिकरिकिलिनि वरुवतिनु कर्म्ममो
वासुदेवन् नियोगिक्किलेयुळ्ळु ते । ४२
भवतु सुखमपि च युधि वरिक भवतां जयं
पार्त्थादिकळे ! सुखमल्लियॆल्लार्क्कुं ? ४३
तमसि निशि रभसतरमिविटॆ वरुवानहो
सन्तापमेतानुमुण्टाकयल्लल्ली ? ४४
नदितनयनयवचननिशमनदशान्तरे
नन्दिच्चजातशत्रुक्षितीशन् चॊन्नान् । ४५
गुरुनिवहकरुणयॊटु कुरुकुलमॊटुक्कि ञान्
कूटलर्कालनाय् नाटुवाणीटुवान् ४६
कॊति मनसि पॆरुतु तव तिरुमनमतिन्नु नी
कूटॆत्तुणय्क्कले वन्नुकूटू दृढं । ४७

नीति की स्थिति करनेवाले ! हे निखिल राक्षसों का अन्त करनेवाले ! हे दैव ! हे मेघवर्ण ! निराकुल ! निर्मम ! मैं तुम्हारी वन्दना करता हूँ ताकि तुम निरन्तर मेरे हृदय में रहो । हे पृथिवी के स्तनतट का आभूषण ! हे अपने चरणों में नत जन का सुख करने में तत्पर ! नित्य तुम्हारा प्रणाम हो ! नित्य तुम्हारा प्रणाम हो ! हे युधिष्ठिर ! भीम ! अर्जुन ! वीर नकुल ! और शस्त्रों के सिद्धान्त जाननेवाले सहदेव ! आओ ! निकट आओ! अब भविष्य में जो कुछ होगा वासुदेव की आज्ञा से ही होगा । ३५-४२ आप लोगों का सुख हो । और युद्ध में आप लोगों की जय हो ! हे अर्जुन आदि पाण्डवो ! आप लोगों का सुख तो है ? रात को अन्धेरे में जो आप यहाँ जल्दी आये हैं । कोई विशेष दुःख तो नहीं हैं ? नदी-तनय (भीष्म) की नीति की बातें सुनकर राजा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) प्रसन्न हुए और बोले— गुरुजनों की कृपा से कुरुकुल को समाप्त करके शत्रुनाशक बनकर राज करने की मेरी बड़ी इच्छा है । परन्तु वह तभी साध्य है जब मुझे तुम्हारा साथ हो । मुझे वर प्रदान करो । तुम्हारे चरणकमल ही सदा

तरिक मम वरमतिनु शरणमरुणांघ्रि मे
सन्ततमेन्नु कुन्तीसुतन् चोल्लिनान् । ४८
अलमलमिततिनेळुतु कळकिनि विषादवु-
माशु निङ्ङळ्क्कु जयं वरुं निर्णयं । ४९
शृणु शमनतनय ! पुनरतिनोरुपदेशवुं
शूरनामर्ज्जुननावतल्लेतुमे । ५०
द्रुपदवरवरतनयनाय शिखण्डियें-
त्तुमयोटर्ज्जुननेन्नोटेतिर्क्कुन्पोळ् ५१
पोरुवतिनु मम निकटभुवि झटिति निर्त्तुविन्
पोर्क्कळं तन्निल् ञान् नाळे वीणीटुवन् । ५२
मम निधनमतिनु विधिविहितमितु निर्ण्णयं
मानिनियाकियोरंबानियोगत्ताल् । ५३
भयमोळिक भवतु भवतां जयं भाग्यवुं
भागीरथीसुतन् पार्त्थनोटिङ्ङने ५४
परिचिनोटु निजनिधनमतिनोरु निदानवुं
नीतियुं चोल्लियनुग्रहं नल्किनान् । ५५
यमनियममुटययमतनयनुमनन्तरं
यादववीरने वन्दिच्चु चोल्लिनान् । ५६
प्रणयतरहृदयमोटु मरुविन पितामहन्
प्राणन् कळयामो बाणङ्ङळेय्तहो ! ५७

मेरा शरण है। कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) ने ऐसा कहा। बस ! अधिक न कहो। विषाद छोड़ो ! निःसन्देह तुमलोगों की जल्दी विजय होने वाली है। ४३-४९ हे शमनतनय (युधिष्ठिर) ! सुनो ! मै एक उपदेश देता हूँ। शूर अर्जुन का असाध्य कुछ भी नहीं है। जब अर्जुन मुझ से ढंग से युद्ध करेगा तब द्रुपद के पुत्रवर शिखण्डि को मेरे पास युद्ध करने के लिए खड़ा कर दो। मैं कल रणभूमि में गिरूँगा। निःसन्देह मेरे निधन के सम्बन्ध में मानिनी अंबा की आज्ञा से यही विहित है। भय छोड़ो। तुम लोगों का जय और भाग्योदय हो ! भागीरथीपुत्र (भीष्म) ने इस प्रकार अपने निधन का कारण और उसकी नीति स्पष्टरूप से अर्जुन से बतलाकर उनका अनुग्रह किया। ५०-५५ यम और नियम का पालन करनेवाले यमतनय (युधिष्ठिर) ने वन्दना करके यादववीर (कृष्ण) से कहा— पितामह (भीष्म) तो प्रेमपूर्ण हृदयवाले हैं, उनके प्राण शरों से कैसे लिये जायँ ? इसका फल पापों का ढेर ही होगा। माधव !

फलमतिनु दुरितचयमरुतरुतु माधवा !
पत्मनाभा ! जगन्नायका ! चॊल्लु नी । ५८
दुरितफलनरकमतिनिल्लॆटो धर्म्मजा !
तोऩ्ऩीलयो राजधर्म्मङ्ङळॊऩ्ऩुमे ? ५९
नृपतिकुलविहित बहुविधविमलकर्म्मवुं
नीतियुं कृष्णनरुळ्चॆय्तनन्तरं । ६०
विदयमपि विभयमथ विजयमुखभूपरुं
वीरोटट्टुत्तितु पत्तांदिवसवुं । ६१
कुरुनृपतिसुतनखिलबलपतिसुयोधनन्
कूटिय सैन्यवुमॊत्तॊरुमिच्चुटन् ६२
कुरुकुलजनमितबलनहितकुलकालनां
गुणनिलयनाय भीष्मर्क्कु तुणच्चितु । ६३
पलरुमॊरुमयॊटथ पाण्डवन्मार्कळुं
पारमट्टुत्तु पॊरुतु तुटङ्ङिनार् । ६४
परशुशरपरिघवर मुसलकुन्तङ्ङळुं
पार्त्थिवन्मारस्त्रशस्त्रप्रयोगवुं । ६५
पटुनिनदपटहमुख झटझट निनादवुं
पारिल् किळर्न्नु पॊङ्ङीटिन धूळियुं । ६६
करितुरगरथनिकरबहुविध निनादवुं
काणिकळ् कण्टु कॊण्टाटुन्न नादवुं । ६७

यह नहीं होगा । हे पद्मनाभ ! हे जगन्नाथ ! बतलाओ ! (तब कृष्ण ने कहा—) पाप का फल नरक इसके लिए नहीं होगा । हे धर्मज ! क्या राजधर्म कुछ भी नहीं याद है ? तदनन्तर कृष्ण ने राजकुलों के लिए विहित अनेकविध कर्म और नीति का उपदेश दिया । अर्जुन आदि भूपति निर्दय और निर्भय होकर दसवें दिन धैर्य के साथ युद्ध में पहुँचे । ५६-६१ कुरुराजा का पुत्र, सभी सेना का पति सुयोधन ने सेनाओं को इकट्ठा करके कुरुकुल के पैदा हुए निस्सीम शक्तिवाले, शत्रुओं के नाशक और गुणों के आधार भीष्म की सहायता की । पाण्डव और अन्य बहुत भूपतियों ने एक होकर युद्ध प्रारम्भ किया । परशु, शर, भाला, मुसल, कुन्त आदि अस्त्र-शस्त्रों का भूपतियों द्वारा प्रयोग हुआ । उच्च शब्द करनेवाले पटह आदि वाद्यों का तुरन्त निनाद हुआ । भूमि के टूटने से धूल उठी । हाथी, घोड़े, और रथसमूह के विविध निनाद हुए । प्रेक्षक लोगों ने देखकर

कमलभवमुखविबुधजयजयनिनादवुं
काट़टिक्कुं कौंटिक्कूड़कळ्नादवुं । ६८
रुधिरयुतपललमतु भक्षिच्चु राक्षस-
रुच्चत्तिल् निन्नलऱीटुन्न नादवुं । ६९
प्रेतभूतादि पिशाचङ्ङळार्त्तिट्टु
पेटियाकुंवण्णमुळ्ळ निनादवुं । ७०
त्रिदशवरदनुजकुलमुखकुतुकनादवुं
सिंहनादङ्ङळुं ञाणोलिनादवुं । ७१
तिऱमोटेतिरिट्टुमरिय रथिकळ्गुणनादवुं
तेरुरुळ्नादवुमानकळ्नादवुं ७२
परिभवमोटरिनिकरमलऱिननिनादवुं ।
पारं कुतिक्कुं कुतिरकळ्नादवुं ७३
तुमुलतररणजनित भयकरनिनादवुं ।
तुम्बुरुनारदगीतप्रयोगवुं ७४
अमरवरतनयकरगतदरनिनादवु-
मंबरचारिकळ्वाद्यनिनादवुं ७५
कठिनतरमनिलसुतनलऱिननिनादवुं ।
कंबुनादङ्ङळुं दुन्दुभिनादवुं ७६
कमलभवतनयमुनिवीणानिनादवुं ।
कन्पंवरुंपटि वन्पर्निनादवुं ७७

सोत्साह अपना नाद किया। ब्रह्मा आदि देवों ने जयघोष किया। हवा चलने के कारण झण्डों में उच्च नाद हुआ। ६२-६८ राक्षसों ने रक्तयुक्त मांस खाकर ज़ोर से चिल्लाहट की। भूत, प्रेत और पिशाचों ने भयंकर ध्वनि निकाली। देवों और दानवों ने कौतुक से नाद किया। सैनिकों का सिंहनाद और ज्याघोष उठे, शक्ति के साथ युद्ध करनेवाले रथियों का ज्याघोष सुनाई दिया। रथों के घूमने का नाद, हाथियों का गर्जन और शत्रुओं का हारकर परिभव से चिल्लाने का नाद सुनाई दिया। ऊँचा कूदनेवाले घोड़ों का नाद उठा। तुमुल युद्ध का भयङ्कर शब्द हुआ। तुम्बुरु और नारद ने गीतप्रयोग किया। अमरवरतनय (अर्जुन) के शंख की ध्वनि सुनाई दी। आकाश में संचार करनेवालों का वाद्यघोष उठा। ६९-७५ वायुसुत (भीम) के ज़ोर से चिल्लाने का नाद सुनाई दिया। शंखध्वनि, दुन्दुभिनाद हुए। ब्रह्मा के पुत्र (नारद) की वीणा का नाद उठा। देवों का ऐसा नाद कि लोग काँपने लगे। कौरव और

कमलजनुमरुतरुतु पुकळुवतिनोर्क्किलो
कौरवपाण्डवसैन्यकोलाहलं । ७८
फणिकळ्कुलवरनुमितु पणिपेरुतु वाळ्त्तुवान्
भैरवमेन्नेन्ने परयावितेन्नयुं । ७९
पोरुतु पोरुतरचरिरुपुरवुममरकळुलकु-
पुक्कु विमानङ्ङळ्तोरुं मरुविनार् । ८०
अरुवयरोटतिसुखमोटरुमयोटु मेविना-
राशु युद्धत्तिल् मरिक्कनिमित्तमाय् । ८१
अयुतनरकरितुरगरथिकळेयोटुक्किना-
ननुदिनमणञ्ञु पोर्चेय्तु देवव्रतन् । ८२
पुनरवनोटरुमयोटु पोरुवतिनु पार्त्थनुं
पोरिल् शिखण्डिये मुन्पिल् निर्त्तीटिनान् । ८३
उपरिचरवसुनृपतिदुहितृवरनन्दन-
नोर्त्तानोराणुमप्पेण्णुमल्लात्तवन् ८४
पोरुवतिनु करुतियोरु समरभुवि वन्नतो
पोराळिकळ्क्कु पोरुन्तुकयिल्लेतुं । ८५
पुरुषमण पुकळ्पेरिय विजयनेयोळिञ्ञुमे
पोरा नपुंसकमायवन्तन्नोटुं ८६
पोलिमयोटु समरभुवि विविधमयमायुधं
पोरिन्नयय्क्करुतेन्नोर्त्तु भीष्मरुं । ८७

पाण्डव-सैन्य के इस कोलाहल का वर्णन करना ब्रह्मा के लिए भी कठिन है। यह काम फणिकुलवर (शेष) के लिए भी असाध्य है। वह एक भैरव युद्ध था, इतना ही कहा जा सकता है। लड़लड़कर दोनों ओर के भूपति अमरलोक (स्वर्ग) पहुँचे और विमानों में बैठे। युद्ध में जल्दी निधन प्राप्त करने के कारण वे सुन्दरियों के साथ प्रेम से और सुख से वहाँ रहे। देवव्रत (भीष्म) ने लाखों नर, हाथी, घोड़े, रथी, प्रतिदिन युद्ध में मारे। ७६-८२ तदनन्तर अर्जुन ने भीष्म से प्रेम से लड़ने के लिए शिखण्डी को सामने खड़ा कर दिया। भीष्म ने सोचा कि इस 'न पुरुष और न स्त्री' का युद्ध करने के लिए रणभूमि में आना सैनिकों को उचित नहीं मालूम होगा। भीष्म ने सोचा कि पुरुषत्व में प्रसिद्ध अर्जुन को छोड़कर, युद्धभूमि में इस नपुंसक के ख़िलाफ़ विविध आयुधों को ढंग से छोड़ना मेरे लिए उचित न होगा। विबुधपतितनय (अर्जुन) के विरोध में निडर होकर

विबुधपतितनयनोटु विगतभयमादराल्
वीरॅळुमस्त्रङ्ङळॅक्क प्रयोगिच्चान् । ८८
प्रणयमकतळिरिल् मुहुरपि वळरुमारुटन्
प्रत्यस्त्रमेय्तु तट्टुत्तु किरीटियुं । ८९
प्रथनचतुरत कलरुममरवरनन्दनन्
प्रत्यक्षनाकिय कृष्णनियोगत्ताल् । ९०
अमितकरबलमुटय रथिकळवर्तङ्ङळि-
लस्त्रशस्त्रङ्ङळ् वरिषिच्चटुत्तुटन् ९१
निशिततरविशिखगणमुटनुटनयच्चपो-
तत्तल्प्पॆटुत्तु रोमङ्ङळ्तोरुं द्रुतं । ९२
परनिवहकुलशमनकररिरुवरुं तम्मिल्
पत्तनूरायिरमॆत्तु तूकीटिनार् । ९३
परवशत पॆरुकियॊरु पटयुमतुकण्टुटन्
पट्लर् पेटिच्चकन्नितु मट्टुळ्ळोर् । ९४
त्वरितमतुपोळ्ळुतु कुरुकुलवरनु सन्निधौ
दुश्शकुनङ्ङळुं पारमुण्टायिते । ९५
तुमुलतरसमरभुवि झटिति देवव्रतन्
दुश्शासननोटु चॊल्लिनानीवण्णं । ९६
अमरकुलवरसुतनुममितबलसंयुत-
मय्यो ! मरुतल वन्नु चुळन्नितु । ९७
निरुपममितरिक रणमतिभयदमेत्रयुं
नीयतु काण्क वलञ्ञितु ञानेटो । ९८

जय लानेवाले अस्त्रों का सादर प्रयोग किया। इसके जवाब में किरीटी (अर्जुन) ने ऐसे प्रत्यस्त्र भेजे कि हृदय में फिर प्रणय बढ़े। ८३-८९ युद्धकुशल अमरवरनन्दन (अर्जुन) ने प्रत्यक्ष कृष्ण की आज्ञा से ऐसा किया। निस्सीम बाहुबलवाले रथी आपस में अस्त्रशस्त्रों की वर्षा करते हुए निकट पहुँचे और तीक्ष्ण शरों की जब वर्षा की गयी तब रोम-रोम में पीड़ा हुई। शत्रुकुलों का नाश करने में कुशल दोनों ने एक दूसरे पर लाखों शर छोड़े। सेना को अत्यन्त पीड़ित देखकर शत्रुगण डर से पीछे हट गये। उस समय अचानक कुरुकुलवर (भीष्म) के सामने अनेक दुश्शकुन दिखाई दिये। ९०-९५ तब भीष्म ने रणभूमि में दुश्शासन से इस प्रकार कहा— अर्जुन ने अब निस्सीम बल के साथ शत्रुओं को घेर

दहनकणसदृशशरनिकरपातेन मे
देहवुमोक्कवे काण्क मुरिञ्ञितु । ९९
मुटियुमिटरोटुमटलिलिनिय पटयोक्कवे
मोहमिनिक्किनियिल्ल जीविक्कयिल् । १००
असुरसुरसमरसममितु करुतुमाकिल् म-
ट्टाहवमिङ्ङने कण्टिट्टुमिल्ल ञान् । १०१
अहितनृपकुलवररोटेतिर्पोरुतु तोट्टुको-
ण्टाहन्त केट्टिट्टुमिल्ल ञानिङ्ङने । १०२
पुनरिनियुमोरुमयोटु मरुवुक पिणङ्ङाते
पोरिल् मरियातिरिक्कणमेङ्किलो । १०३
पुकळ्पेरिय पितृपतिज नृपवरनु सादरं
भोषन्मारे ! निङ्ङळ् नाटु नल्कीटुविन् । १०४
हितवचनमिति विविधतरमथ पितामह-
नित्थं परञ्ञु परञ्ञिरिक्कोत्तदा १०५

भीष्मपराजयं (शरशयन प्राप्ति)

कलहमतिरभसतरमरिमयोटु चेय्तु चे-
य्तस्त्रङ्ङळ्कोण्टुटल् भूमियिल् वीणुते । १
विविधतरनिशितशरमतुलमुटनेल्क्कयाल्
वीणतुनेरमवनियिल् तट्टील । २

लिया है। यह एक निरुपम युद्ध है और भयप्रद है। तुम देख लो। मैं थका हुआ हूँ। अग्निकण के समान शरसमूह के लगने से देखो, मेरा शरीर छिन्न हो गया है। यह सारी सेना शत्रु के द्वारा नष्ट हो जायगी। अब मेरी जीवित रहने की कोई इच्छा नहीं है। यह देवासुरयुद्ध के समान है। ऐसा युद्ध मैंने कभी सुना ही न था। अब भी आपस में बिना झगड़ा किये मिलकर रहो, अगर युद्ध में नहीं मरना है। हे मूर्खो ! तुम लोग विख्यात यमपुत्र भूपति (युधिष्ठिर) को राज दे दो। जब पितामह इस प्रकार के विविध हित की बातें बतलाते थे तब—१०२-१०५

भीष्मपराजय (शरशयनप्राप्ति)

युद्ध के अति तीव्र होने के कारण भीष्म बहुत ज़ोर से लड़े और शरों के लगने से उनका शरीर भूमि पर गिरा। विविध अनेक शर लगने से जब गिरे तब भूमि का स्पर्श नहीं हुआ। तब कुरुवृषभ भीष्म

कुरुवृषभनुटनटलिल् नृपवरकुलोचितं
देहवुमाशु शरशयनत्तिन्मेल् ३
मुरमथनचरणसरसीरुहवुं कण्टु
मोहमकन्नु वसिच्चितु भीष्मरुं । ४
दशदिवससमरमिति मुनिवरननुग्रहाल्
सञ्जयनित्थं पऱञ्ञोरनन्तरं ५
अखिल बलकलहमिति सचिववचनेन के-
ट्टञ्जसा मोहिच्चु वीणू धृतराष्ट्रन् । ६
मुहुरमितकुतुकमोटु धरणिपतितन्नुटे
मोहवुं तीर्त्तवन् पिन्नयुं चोल्लिनान् । ७
त्यज मनसि कलुषतकळखिलमवनीपते !
देहमनित्यमेन्नुळ्ळतऱिक नी । ८
निखिलनृपकुलवररुममितबलसंयुतं
निन्नुटे मक्कळुं कुन्तीतनयरुं ९
तदनु निजनिज मनसि कलरुमुरुशोकेन
धन्यरां मट्टुळ्ळ बन्धुजनङ्ङळुं १०
जगधिपनजनमलनुं मुनिवृन्दवुं
चेन्नितु भीष्मरुटेयरिकत्तङ्ङु । ११
वटिवोटुटनधिनिकटमवरवर् करञ्ञाशु
वन्नु निरञ्ञोरु बन्धुक्कळेक्कण्टु । १२

युद्ध के बीच मुरमथन (कृष्ण) के चरणकमल को देखकर मोह छोड़कर अपने राजकुल के धर्म के अनुसार शरशय्या पर ही रहे । मुनिवर (व्यास) के अनुग्रह से सञ्जय के दस दिन के युद्ध का इस प्रकार वर्णन करने के बाद अपने सचिव के मुँह से सारी सेना के युद्ध को सुनकर झट से धृतराष्ट्र बेहोश होकर गिर पड़े । १-६ धरणीपति (धृतराष्ट्र) के मोह को बड़े प्रेम से समाप्त करके वह (सञ्जय) फिर बोले । हे भूपति ! अपने मन से सारी कलुषता को हटाओ । जान लो कि देह अनित्य है । तदनन्तर अपने अमित बल के साथ सारे नृपकुल, तुम्हारे पुत्र, कुन्ती के पुत्र, अन्य धन्य समस्त बन्धुजन, अज और अमल जगदधिप (कृष्ण) और मुनिवृन्द, सब अपने मन के तीव्र शोक के साथ भीष्मजी के पास गये । इस प्रकार सब निकट आकर रोनेवाले बन्धुओं की भीड़ देखकर कुरुवृषभ, अतिरथ, देववर, वसुप्रवर भीष्मजी ने अनाकुल होकर नरकरिपु कमललोचन (कृष्ण)

विनयमोंटु कुरुवृषभनतिरथननाकुलं
विण्णोरिल् मुन्पन् वसुप्रवरन् भीष्मर् १३
नरकरिपु नळिनदलनयननेंयुमोर्त्तुळ्ळिल्
नल्लतेंल्लावरोटुं परञ्ञीटिनान् । १४
शुभवुमशुभवुमपनयवुमरिवानवन्
चोंल्लिनान् पिन्नेंयुमल्ललोटे तदा । १५
सदयमभिमुखममलतरवचनमन्पोटु
ताणुपोयोरु तलयुयर्त्तीटुवान् । १६
विमलतरमतिमृदुलमलिवोंटु समुन्नतं
वेणमुपधानमेंन्नतु केळ्क्कयाल् १७
कुमति कुरुकुलपति सुयोधनन् वैकातें
पट्टुतलयिण कोंण्टु चेंन्नीटिनान् । १८
पुनरमितहसितमतुपोंळ्तु चोंल्लीटिनान्
पोंट्टनत्रे नी सुयोधना ! निर्ण्णयं । १९
तुहिनकरकुलजननमिह विफलमेव ते
तुष्टि वरायितु वच्चालिनिक्केतुं । २०
करुणयोंटु विबुधपतितनय ! विरवोटु नी
कण्टुनिल्लातें तलयुयर्त्तीटेंन्नान् । २१
विशदतरहृदयनथ विजयनतिशूरनां
वृन्दारकाधिपनन्दननर्ज्जुनन् २२
वनजदलनयनसखि वासवाद्यन्मारें
वन्दिच्चु गाण्डीवचापमेंट्टुत्तुटन् २३

का अपने मन में ध्यान करते हुए सविनय सब से कुशल की बातें कहीं । ७-१४ उन्होंने बड़े दुःख, प्रेम और दया के साथ सब के सामने निर्मल वचन कहे, ताकि वे शुभ, अशुभ और अपनय पहचान सकें । 'झुके सिर को उठाने के लिए एक विमलतर, ऊँचा और नरम तकिया चाहिए' —ऐसा सुनकर कुमति, कुरुकुलपति सुयोधन एक रेशमी तकिया लाया । तब भीष्म ने हँसते हुए कहा— हे सुयोधन ! तुम निस्सन्देह मूर्ख हो । तुम्हारा यह चन्द्रवंश में जन्म बिलकुल व्यर्थ है । इसको लगाने से मुझे आराम कभी न होगा । १५-२० हे अर्जुन ! कृपा करके सिर्फ़ देखते न रहकर मेरा सिर ज़रा उठा दो । तब निर्मलहृदय, अतिशूर, वृन्दारकाधिप (इन्द्र) का पुत्र अर्जुन, जो कुमुददलनयन (कृष्ण) का मित्र था, ने वासवाद्यों

चपलतरमचपलमेट्टुत्तु मून्नम्पुकों-
ण्टून्नुं कोंट्टुत्तु तलयुयर्त्तीटिनान् । २४
परशुधर मुनिवरनु सदृशनां भीष्मरुं
पार्त्थनोटाशु चिरिच्चरुळिच्चेय्तु । २५
शम, दम दयादि नानागुणवारिधे !
शास्त्रङ्ङळ् निन्नोळमारुमरिञ्ञील । २६
सकलजनकुलविहितविविधकर्म्मङ्ङळुं
क्षात्रधर्म्मङ्ङळुं निङ्कलू निर्ण्णयं । २७
बहुलतरमिति कथकळ् परयुमळवादराल्
वैद्यर्कळ् वन्नार् चिकित्सचेय्तीटुवान् । २८
अतिनवनुमवर्कळे विलक्किनानादरा-
लाण्मयिल् विरोचितपुरि पूकणं । २९
शुभमरणसमयमयनं तेळिञ्ञुत्तरं
शोभयिल्वन्ने मरिक्कावु निर्ण्णयं । ३०
अवरवर्कळरिकिलळकोटु रक्षिच्चुकों-
ण्टात्मशुद्धया वसिच्चीटिनारेवरुं । ३१
विजयनोटु विजयमुखयमतनयसैन्यवुं
वृष्णिप्रवररुं पुक्कितु कैनिल । ३२
व्यथयुमुरुभयवुमपजयवुमवशतकळुं
वीळातवण्णं परिभवं वन्नतुं ३३

की वन्दना करके अपना गाण्डीव धनुष लेकर तुरन्त धैर्य के साथ तीन बाणों के सहारे सिर उठा दिया। मुनिवर परशुराम के समान भीष्मजी ने हँसते हुए अर्जुन से कहा। शम, दम, दया आदि गुणों का सागर ! तुम्हारे समान शास्त्र जाननेवाला कोई नहीं है। २१-२६ समस्त जनों के लिए विहित सभी कर्म और क्षात्रधर्म निस्सन्देह तुम्हारे पास हैं। जब इस प्रकार की बहुत बातें हो रहीं थीं तब वैद्य आये चिकित्सा करने के हेतु। परन्तु उन्होंने उनको मना कर दिया क्योंकि अपने पुरुषत्व को लेकर यमसदन जाना चाहिए। शुभमरण के समय रास्ता साफ़ हो, उसके बाद ही मरना चाहिए, इसमें सन्देह नहीं। तब सब अच्छी तरह से रक्षा करते हुए निकट में आत्मशुद्धि के साथ बैठे रहे। अर्जुन से लेकर सभी युधिष्ठिर की सेना और वृष्णियों के प्रमुख तम्बू के अन्दर चले गये। २७-३२ कौरवसना तो अपने दुःख, भय, अपजय, अक्षमता और असाध्य परिभव

करुतियॊ़ळुकिन नयनसलिलमॊटु कैनिल
कौरवसैन्यवुं पुक्किकरुऩ्नीटिनार् । ३४
उषसि पुनरपरदिनमिरुपुऱवुमुळ्ळव-
रुट़टुत्तीटिनार् शन्तनुपुत्रने । ३५
तरुविनिह विरविनॊटु जलममलमादराल्
दाहमुण्टेट़मॆऩ्ऩान् नदीनन्दनन् । ३६
विमलतरसलिलमॊटु विविधरसभक्ष्यवुं
वेगेन कॊण्टुचॆऩ्ऩान् दुरियोधनन् । ३७
विफलमिदमशुभमरुतरुतु दुरियोधना !
वीरा ! विजया ! विरयॆ नीर् नल्कॆऩ्ऩान् । ३८
पुनरवनुमथ सदयमटिमलर् वणङ्ङिनान्
पोराळि पार्ज्जन्यमस्त्रं प्रयोगिच्चान् । ३९
गगनसरिदमलजलमळकॊटु कॊटुत्तवन्
गंगातनयनु दाहवुं पोक्किनान् । ४०
पुकळ्पॆरिय पुरुषमणि नीये पुरन्दर-
पुत्रा ! भुजबलमुळ्ळ भूपालका ! ४१
सुचिरमवनियिलधिकसुखमॊटु वसिक्क नी
सूक्षिच्चुकॊळ्क सुयोधना ! नीयिव । ४२
विरविलिनियॊरुमयॊटु मरुविनिनि निङ्ङळुं
वेण्टा विरुद्धं नशिक्के फलं वरू । ४३

को ध्यान में रखते हुए गिरती आँसुओं सहित तंबू के अन्दर घुस गयी । दूसरे दिन तड़के दोनों ओर के वीर शन्तनुपुत्र (भीष्म) के पास पहुँचे । 'अब मुझे बहुत प्यास लग रही है, इस लिए मुझे शुद्ध पानी दे दो', ऐसा कहा नदीपुत्र (भीष्म) ने । तब दुर्योधन निर्मल जल के साथ अनेक रसवाले भोजन लेकर तुरन्त चला आया । 'हे दुर्योधन ! यह सब व्यर्थ है, नहीं ! नहीं ! हे वीर अर्जुन जल्दी पानी लाओ', भीष्म ने कहा । ३३-३८ तब उस वीर योद्धा ने चरणों की वन्दना करके पार्जन्य शस्त्र का प्रयोग किया । आकाशगङ्गा का निर्मल जल देकर उनकी प्यास को बुझाया । हे पुरन्दरपुत्र ! विख्यात पुरुषमणि तुम ही हो ! हे बाहुबल वाले भूपाल ! चिरकाल तक तुम पृथिवी पर सुख से रहो । हे सुयोधन ! तुम होशियार रहो । अब तुम लोग मिल कर रहो । विरोध छोड़ो । नहीं तो विनाश ही एकमात्र फल होगा । परन्तु कुरुपति इससे सहमत न होने के

अतिनु कुरुपतियुमनुवादमल्लाय्कयाल्
अङ्ङुमिङ्ङु पिरिञ्ञाशु वाङ्ङीटिनान् । ४४
अथ तरणितनयनटिमलरिण वणङ्ङिना-
नन्पोटु गंगातनयनुं चॊल्लिनान् । ४५
तव सहजरङ्कि पृथयुटॆ तनयराकयाल्
तापं कळञ्ञु नीयङ्ङु चॆन्नीटॆटो । ४६
कथकळकतळिरिलितु विदितमखिलं मया
गान्धारिपुत्ररॆ वेर्टिटुन्निल्ल ञान् । ४७
समरभुवि जयमतिनु तरिक वरमाशु मे
सन्तापनाशना ! शन्तनुनन्दना ! ४८
भ्रममङ्कि वरुवतिनु विषममतु भास्करे !
भ्रातावक्कळे वधंचॆय्कयुं वेण्टील । ४९
वेणमॆन्नाकिल् पॊरुतु वीर्यस्वर्गं
वीरा वरिक्क निनक्कॆन्नते वेण्टू । ५०
तॊळुतवननुज्ञयुं वाङ्ङि वाङ्ङीटिनान्
चॊल्लुवानावतो पिन्नेटमॆन्नाले-
न्नुल्लासमोटिरुन्नाळ् नल्किकळिमकळ् । ५१

भीष्मं समाप्तं

कारण इधर-उधर भटककर हट गया। तदनन्तर तरणितनय (सूर्य-पुत्र) ने (कर्ण ने) चरणों की वन्दना की और गंगापुत्र ने प्रेम से कहा— ३९-४५ पृथा (कुन्ती) के पुत्र होने के कारण (पाण्डव) तुम्हारे भाई हैं। जलन छोड़कर तुम उस ओर चले जाओ। मैं इस सारे वृत्तान्त को अपने मन में जानता हूँ (तब कर्ण बोला—) मैं गान्धारी के पुत्रों को कभी न छोड़ूँगा। हे सन्तापनाशन ! शन्तनुनन्दन ! मुझे वरदान करो कि मैं युद्धभूमि में विजय पाऊँ। (भीष्म बोले—) जान लो कि यह तुम्हारा भ्रम है। हे भास्करपुत्र ! यह होना कठिन है। अपने भ्राताओं का वध मत करो। अगर मुझे कुछ कहना है तो यही है— युद्ध करके, हे वीर ! वीर्यस्वर्ग पाने को ठान लो। यही तुम्हारे लिए ठीक है। तब वह प्रणाम करके आज्ञा लेकर चला गया। कहाँ तक सुनाऊँ ? फिर आगे कहूँगी। ऐसा कहकर साध्वी शुककन्या सोल्लास बैठ गयी। ४६-५१

। भीष्मपर्व समाप्त ।

द्रोणं

पञ्चवर्णविकळिप्पैंण्किटावे ! तॆळि-
ञ्ञॆन् चॆवि रण्टुं कुळुक्कॆप्परक नी । १
नॆञ्चंतॆळिञ्ञु कुरुक्किक्कॊळुत्त पाल्
पञ्चसारप्पॊटि कूट्टिक्कुळप्पाक्कि २
नल्ल कदळिप्पळङ्ङळ् तॊरिञ्ञु ञान्
मॆल्लॆत्तिरुम्मियुटच्चु तेनुं वीळ्त्ति ३
वॆल्लवुं शर्क्करयुं पॊटिच्चिट्टतिल्
वॆळ्ळित्तळिकयिल् मेळिच्चु वॆव्वेरे ४
वॆच्चिरिक्कुन्नतॆट्टुत्तु भुजिच्चालु-
मिच्छयाकुन्नतु दाहमुण्टॆङ्किलो ५
नीलक्करिम्पुतन् चारुमिळन्नीरुं
पालुं मधुवुं कुटिच्चालुमावोळं । ६
ग्रीष्मसमाननरिनिवहत्तिनु
भीष्मर् शरशयनत्तिन्मेल् वीणारे ७
तोट्टु सुयोधननादिकळाकिय
नूट्टुपेरॆन्तोन्नु चॆय्ततु चॊल्लु नी । ८
चॊल्लुवानावतल्लॆङ्किलुमॊट्टॊट्टु
चॊल्लुन्नतुण्टु कनक्कॆच्चुरुक्कि ञान् । ९

द्रोणपर्व

हे पाँच रङ्गवाली शुकी ! प्रसन्न होकर और सुनाओ ताकि मेरे दोनों कानों को आनन्द हो ! आराम होने के बाद जो उबाला हुआ दूध शक्कर मिलाकर रखा है और जो चुने हुए केले काटकर उसमें शहद मिलाकर और फिर उसमें गुड़ और चीनी मिलाकर चांदी के कटोरे में रखा है यह सब अपनी इच्छा के अनुसार खा लो और उसके बाद अगर प्यास लगे तो नीले गन्ने का रस, नारियल का पानी, दूध और मधु जितना चाहो पियो । शत्रुओं को ग्रीष्म के समान भीष्मजी जब शरशय्या पर पड़े तब सुयोधन आदि सौ कौरवों ने हारकर क्या किया, यह बतलाओ । यद्यपि सब कहना असम्भव है तथापि संक्षेप करके थोड़ा-थोड़ा मैं बतलाऊँगी । १-९

द्रोणसेनापत्यभिषेकं

वन्पनां कर्ण्णनोटाशु सुयोधन-
नन्पोटु सेनापतियाक नीयेन्नान् । १
कर्ण्णनु मन्दस्मितं चेय्तु चोल्लिनान्
कर्ण्णसुखं ञान् पऱकयिल्लारोटुं । २
द्रोणरामाचार्यन्तानिरिक्केयेन्तु
मानिच्चु मट्टुळ्ळोर् निर्त्तुन्नितु पट ? ३
मन्नवा ! केळ्क्क भरद्वाजनन्दन-
निन्नुळ्ळ योद्धाक्कळिल् प्रबलाधिपन् । ४
पिन्ने ञान् पक्षे भरिक्कुन्नतुमुण्टु
मन्नवा ! सङ्कटमुण्टाकयिल्लेतुं । ५
मानियायुळ्ळ सुयोधनन् द्रोणरे-
स्सेनापतियायभिषेकवुं चेय्तु ६
नानाविधमाय वाद्यघोषङ्ङळाल्
वानवर्नाटु कूटिक्कुलुङ्ङी तदा । ७

युधिष्ठिरबन्धनोद्यमं

आचार्यनाशु सुयोधननाकिय
नीचनोटाशु तेळिञ्ञरुळिच्चेय्तु । १

द्रोण का सेनापति के पद पर अभिषेक

सुयोधन ने शक्तिशाली कर्ण से कहा— तुम सेनापति हो जाओ। कर्ण ने मुस्कराकर कहा— केवल कर्णसुख देनेवाली बात मैं किसी से न कहूँगा। द्रोणाचार्य के रहते और लोग इस सेना को कैसे सँभाल सकते हैं ? हे राजन् ! सुनो ! भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ही विद्यमान योद्धाओं में सब से प्रबल हैं। और फिर मैं तो हूँ ही और नेतृत्व करूँगा। हे राजन् ! इसमें कोई हानि न होगी। मानी सुयोधन ने द्रोण का सेनापति के पद पर अभिषेक किया। अनेक प्रकार के वाद्यघोषों से स्वर्ग भी काँपने लगा। १-७

युधिष्ठिर को बाँधने का प्रयास

प्रसन्न होकर आचार्य (द्रोण) ने नीच दुर्योधन से कहा। अपने मन की इच्छा बतलाओ, मैं तुम्हें वह दूँगा ताकि तुम्हारा कोई नाश न

आशयंतन्निलुळ्ळाश नी चॊल्लुक
नाशं कळञ्ञु वरं तरुन्नुण्टु ञान् । २
चिन्तितमॆङ्किल् युधिष्ठिरन्तन्नॆयुं
बन्धिच्चु कॊण्टन्नु नल्कुकवेण्टतुं ३
अङ्ङनॆतन्नॆयॊरन्तरमिल्लति-
निङ्ङनॆ नालञ्चुनाळ् ञानिरिक्किलो । ४
ऎन्नु गुरुवुं प्रतिज्ञ चॆय्तानितु
चॆन्नु युधिष्ठिरन् तन्नोटु चॊल्लिनान् ५
कूरुळ्ळ दूतनतु केट्टु धर्म्मजन्
नीरुं मनस्सोटु माधवन्तन्नुटॆ ६
चेवटित्तारिण वन्दिच्चु चॊल्लिनान् ।
केवलानन्दमूर्त्ते ! जगन्नायका ! ७
बन्धिच्चुकॊण्टुपोमाचार्यनॆन्नॆयॊ-
रन्तरमिल्लतिनॆन्नु धरिच्चालुं । ८
चिन्तिच्चु कृष्णनुं जिष्णुवुं मट्टुळ्ळ
बन्धुक्कळुं परञ्ञीटिनारॆन्नुमे ९
बन्धिच्चुकॊण्टुपोवानयय्क्कुन्नति-
ल्लन्तकवैरितान्तन्नॆ वरिकिलुम् । १०
शङ्कियाय्केतुमे वैकिक्करुतॆन्नु
शंखुंविळिच्चु पुरप्पॆट्टितु पट । ११
युद्धं भयङ्करमाय्वन्नितॆन्नयुं
चत्तितु रण्टुपुरत्तुमसंख्यमाय् । १२

हो। अगर आपकी राय हो तो युधिष्ठिर को बाँधकर लाइये और मुझे दे दीजिये— (ऐसा सुयोधन ने कहा।) "बिलकुल ठीक है, इस में कोई मतभेद नहीं है, और चार पाँच दिन में ऐसा ही होगा"— गुरु ने इस प्रकार प्रतिज्ञा की। एक विश्वस्त दूत ने इस बात को युधिष्ठिर से कह दिया। यह सुनकर युधिष्ठिर दुःखित होकर माधव के लाल चरणयुग की वन्दना करके बोले। केवलानन्द मूर्ते ! जगन्नायक ! आचार्य मुझे बाँधकर लेजायेंगे इसमें कोई सन्देह नहीं, जान लीजिये। १-८ तब कृष्ण, जिष्णु (अर्जुन) और अन्य बन्धुओं ने सोचा और कहा। हम कभी बाँधकर ले जाने न देंगे चाहे अन्तकवैरी (शिवजी) ही क्यों न आजायँ। शङ्का बिलकुल मत करना। अब और विलम्ब न हो। शंखध्वनि

शल्यरुं मारुतियुं पौरुतोरु पो-
रेल्लावरुं कण्टु विस्मयिच्चीटिनार् । १३
अन्तियुमाय् पटयुं पिरिञ्ञितु
पिन्तुटर्न्नारुमोरु पदं वच्चील । १४
रात्रियिलत्ताळुमुण्टु किटन्नारे
धार्त्तराष्ट्रन्तन्नोटाचार्यनुं चोन्नान् । १५
पार्त्थिवनन्दननाय सुयोधना !
पार्त्थनुं कृष्णनुमोन्निच्चेर्तिर्क्किलो १६
मूर्त्तिकळ् मून्नुपेर्क्कुं जयिच्चीटरु-
तोर्त्तुकण्टङ्ङवर्तम्मेयकट्टुकिल् १७
भोष्कलल धर्म्मजन्तन्ने बन्धिच्चु निन्-
काल्क्कल् वच्चीटुवनिल्लोरु संशयं । १८
ऎन्नु गुरुवरुळ्चेय्तोरु नेरत्तु
मन्नन् त्रिगर्त्तन् प्रतिज्ञचेय्तीटिनान् । १९
एट्मकट्टिच्चमय्क्कुन्नतुण्टु ञा-
नेट्टु धनञ्जयमाधवन्मारेयुं । २०
इत्थं त्रिगर्त्तराजाक्कळ् पलरु-
मायोत्तु सहशपथं चेय्त कारणं २१
संशप्तकन्मारेन्नोट् प्रसिद्धराय्
संशयमेन्नियेे पोरिन्नोरुमिच्चार् । २२

करती हुई सेना निकली। अत्यन्त भयङ्कर युद्ध हुआ और दोनों ओर असंख्य सैनिक मरे। शल्य और मारुति (भीम) का युद्ध देखकर सब लोग विस्मित हुए। शाम हुई, सेना अलग-अलग हुई। कोई भी एक पद भी पीछे न हटा। रात को भोजन करके सब लेटे। तब आचार्य ने धार्तराष्ट्र (सुयोधन) से कहा— ९-१५ हे राजा के पुत्र सुयोधन ! अगर अर्जुन और कृष्ण साथ युद्ध करें तो त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) भी उनको न जीत सकते। यह ध्यान में रखकर अगर वे अलग किये जायँ तो, सच कहता हूँ, मैं युधिष्ठिर को बाँधकर तुम्हारे पैरों पर रख दूँगा, इसमें कोई सन्देह नहीं। जब गुरुवर ने इस प्रकार कहा तब राजा त्रिगर्त ने प्रतिज्ञा की। धनञ्जय और माधव को अलग करने का काम मैं अपने ऊपर लेता हूँ। इस प्रकार त्रिगर्त के राजाओं के एक होकर शपथ करने के कारण उनका नाम 'संशप्तक' हुआ और वे निस्सन्देह युद्ध के लिए एक हुए। १६-२२ बारहवें दिन

पन्तिरण्टां दिवसं गुरुसैन्यवुं
पन्तिरण्टायिप्पुऱप्पेट्टु पोरिनाय् । २३
म्लेच्छजङ्ङळुं संशप्तकन्मारु-
मार्त्तुविळिच्चार् पटय्क्कु पुलर्काले । २४
युद्धत्तिनाशु विळिच्चतु केट्टोरु-
वृत्रारिपुत्रनुं कृष्णनुमेत्तिनार् । २५
आचार्यनुं महाव्यूहवुं कूट्टिनि-
न्नायोधनत्तिन्नुऱच्चु निन्नीटिनान् । २६
पाञ्चालनाय धृष्टद्युम्ननेतुमे
चाञ्चल्य मेन्नियटुत्तानतुनेरं । २७
द्रोणर् जयिच्चतुकण्टोरु कौरव-
सेनयुमार्त्तु निलविळिच्चीटिनार् । २८
मूर्खनायुळ्ळ दुरियोधननोटु
भास्करनन्दनन् पेर्त्तु चोल्लीटिनान् । २९
इक्कण्टतोन्नुं कणक्कल्ल मन्नवा !
चोल्क्कोण्ट पाण्डवन्मारे जयिप्पति- ३०
न्निक्कण्टवर्क्काक्कुमावतुमिल्ल केळ् ।
इक्कालमुळ्क्कान्पिलोराय्कतिन्नु नी- । ३१
येन्नु पऱञ्ञु निन्नीटुन्ननेरत्तु
वन्नुनिरञ्ञितु पाण्डवसैन्यवुं । ३२
सात्यकि केकय पाञ्चालवीररुं
पार्त्थतनयरुं माद्रीतनयरुं । ३३

गुरुसेना बाहर होकर युद्ध के लिए निकली। म्लेच्छजन और संशप्तकों ने तड़के ही युद्ध के लिये पुकारा। युद्ध के लिए यह पुकार सुनकर अर्जुन और कृष्ण वहाँ पहुँचे। आचार्य अपना महाव्यूह बनाकर युद्ध के लिए बिलकुल तैयार खड़े हुए। उस समय पाञ्चाल धृष्टद्युम्न बिना चाञ्चल्य के निकट पहुँचे। द्रोण की जीत देखकर कौरवसेना ने ज़ोर से जयघोष किया। २३-२८ भास्करनन्दन (कर्ण) ने मूर्ख दुर्योधन से फिर कहा— हे राजन् ! यह सब कुछ नहीं है। यहाँ जो दिखाई देते हैं उनमें से कोई भी विख्यात पाण्डवों को जीत नहीं सकता है। इस प्रकार जब बातें कर रहे थे तब पाण्डवों की सेना आकर डट गयी। सात्यकि, केकय और पाञ्चाल के वीर, पार्थ के पुत्र और माद्री के पुत्र,

घोरनायुळ्ळोरु मारुतितानुमाय्
पारमट्टुत्तु कण्टु कुरुक्कळुं । ३४
चाटीतु तेरुं कुतिरयुमानयुं
कूटियिटकलर्न्नार्त्तु पेरुंपट । ३५
कोटीतु चापङ्ङळ् तेराळिकळ्कैयिल्
मूटी शरङ्ङळ्कोण्टाकाशवीथियुं । ३६
पाटीतु नारदन् पारं पोंटि पोङ्ङि
मूटीतु दिक्कुकळ् चोरप्पुळयायि । ३७
कूटी जलधियिल् मारी पोंटिकळुं
पेटिकळञ्ञु मरिक्कुन्न वीररे-
प्पाटीरवुं तेच्चु नाकनारीजन- ३८
मोटियणञ्ञङ्ङु तेरिल्क्करेट्टिनार् ।
ओटियणञ्ञु मरिक्कुन्नितु चिलर् । ३९
वाटी मुखं दुरियोधनसैन्यवु-
मोटियतु कण्टु वीरन् भगदत्तन् ४०
पत्तु सहस्रं गजत्तिन् बलमुळ्ळ-
मत्तगजत्तिन् कळुत्तिल् करेरिनान् । ४१
अत्र बलमुळ्ळ वृत्रारिजाग्रजन्
पत्तुनूरार्त्तु पाञ्ञेत्तियटुत्तुटन् । ४२
कुत्तुन्न कुंभियुमेत्तुन्न भीमनु-
मेत्तियेतिर्त्त पोरेत्रयुमत्भुतं । ४३

और घोर मारुति बिलकुल निकट पहुँच गये। कौरवों ने यह देखा। रथ, घोड़े और हाथी दौड़कर आये। जब ये सब आपस में मिले तब बड़ी सेना ने युद्धघोष किया। २९-३५ रथियों के धनुष पर ज्या लग गयी और शरों से आकाशमार्ग छा गया। नारद गाने लगे, धूल उठी, दिशायें छिप गयीं और रक्त की नदी बहने लगी और सागर में जाकर गिरी। धूल भी बैठ गयी। निडर होकर मरनेवाले वीरों को चन्दन लगाकर अप्सराओं ने दौड़कर स्वागत किया और रथ पर बैठाया। कुछ लोग दौड़कर थके और मरे। दुर्योधन का मुँह निष्प्रभ हुआ। उसकी सेना भागी, यह देखकर वीर भगदत्त दस हज़ार हाथियों की शक्तिवाले एक मत्तगज के कन्धे पर जाकर बैठा। ३६-४१ उतनी शक्तिशाली वृत्रारिजाग्रज (भीम) ने सौ बार सिंहनाद किया और उसके निकट पहुँचे। दाँत से

हस्तितन्नस्थिकळ् कुत्तिप्पॊरिक्कयुं
मस्तकं कैत्तलंकॊण्टु भेदिक्कयुं ४४
चक्रं तिरिक्कयुं वक्रिच्चु वाङ्ङियु-
मग्रे वरुन्नेरमुग्रमटिक्कयुं ४५
तुम्पिक्कैतन्निलकप्पॆट्टुनेरत्तु
तुम्पि पऱक्कुंप्रकारं कळिक्कयुं ४६
कम्पंवरुमारु भूमियिल् वीळ्कयुं
कॊम्पु ताळ्त्तुम्पोळुरुण्टुकळकयुं ४७
मध्ये नटयिट पुक्कुदरस्थले
कुत्तियुं पिन्निल् पुऱप्पट्टु मण्डियुं ४८
पृत्थ्वीशनां भगदत्तनॆय्तीटुन्न-
शस्त्रङ्ङळ् पेटिच्चकन्नुकूटाय्कयुं । ४९
अप्रतिमप्रभावप्रबलेन्द्रना-
मभ्रमातंगवीरभ्रमणोपमन् ५०
सुप्रतीकक्रमं कण्टु वातात्मज-
नत्भुतं कैक्कॊण्टु विभ्रमंतेटिनान् । ५१
ऒत्त बलमुळ्ळ भीमनुमानयुं
बद्धकोपत्तोटु युद्धं तुटन्नप्पोळ् ५२
पृत्थ्वि कुलुङ्ङि नटुङ्ङी जगत्त्रयं
अब्धिकळेळुमलऱिक्कलङ्ङुन्नु । ५३

मारनेवाले हाथी का और उसे पकड़नेवाले भीम का आपस में जो युद्ध हुआ वह अद्‍भुत था। हाथी की हड्डियों को मारकर तोड़ना, उसके मस्तक को करतल से फोड़ना, उसको चक्र की तरह घुमाना, घूमकर पीछे हटना, सामने आते समय उसको ज़ोर से मारना, उसकी सूँड में फँस जाते समय भँवर के समान उसको उड़ाना, उसका ऐसा गिरना कि पृथिवी हिले, उसके दाँत को नीचा करने पर उसका भूमि पर लोटना, उसके पैरों के बीच घुसकर उसके उदर पर चाकू भोंककर भाग जाना, पृथ्वीश भगदत्त के छोड़े अस्त्रों से डरकर भी उनसे बच न सकना, यह सब हुआ। ४२-४९ अप्रतिभ प्रभाववाले वीर अभ्रमातंग (ऐरावत) के समान सुप्रतीक (उत्तर-पूर्व का दिग्गज) की सी चाल देखकर भीम चकित हुआ और डट गया। समान बलवाले भीम और (भगदत्त का) हाथी दोनों क्रुद्ध होकर जब युद्ध करने लगे तब पृथिवी हिली, जगत्त्रय काँपा, सातों सागर गरजे और

योगिप्रतियोगि रण्टुजनङ्ङळुं
नाकिकळुं मट्टु काणिकळायोरुं ५४
चित्रं विचित्रं विचित्रं विचित्रमि-
तत्भुतमत्भुतमत्भुतमत्भुतं ! ५५
इत्थं पुकळ्त्तुन्न शब्दवुं वारणं
मत्तनायेट्मलरुन्न शब्दवुं । ५६
आरवारङ्ङळुं कोलाहलङ्ङळुं
पोराळिवीरर्निलविळिघोषवुं ५७
घोरघोरं केट्टु दुर्न्निमित्तङ्ङळुं
पारमाय्क्कण्टु भयंपूण्टु फल्गुनन् ५८
पारातें पोक वटक्कुदिशियेन्नु
वारिजलोचनन्तन्नोटु चोंल्लिनान् । ५९
तेरुं तिरिच्चटिच्चीटिनान् माधवन्
नेरे तुटर्न्नेटुत्तारिवीररुं । ६०
पोरिलरिकळे वच्चेच्चु पोवतु
पोरा महारथन्माक्कें न्नरिञ्ञालुं । ६१
पोराय्मयिल्लयो पार्त्थनुं कृष्णनुं
पोरिलेंतिर्त्तु तिरिञ्ञुनिन्नीटुविन् । ६२
इत्थं परयुं त्रिगर्त्तनुं म्लेच्छरु-
मेंत्तुन्न संशप्तकन्मारेयुमवन् । ६३

उनका पानी कलुषित हो गया। योगि और प्रतियोगि दोनों ओर के लोगों का, स्वर्ग के रहनेवाले और अन्य प्रेक्षकों का चित्र ! विचित्र ! विचित्र ! विचित्र ! अद्भुत ! अद्भुत ! अद्भुत ! इस प्रकार का प्रशंसा करने का शब्द और योद्धाओं का घोर युद्धघोष सुनकर और अनेक दुर्निमित्त देखकर, फल्गुन (अर्जुन) कुछ डर गया और श्रीकृष्ण से बोला—जल्दी उत्तर की ओर चलो। तब माधव ने रथ घुमाकर चाबुक मारा और दोनों वीर सीधे चले और निकट पहुँच गये। युद्ध में शत्रुओं को छोड़कर चले जाना महारथियों के लिए उचित नहीं है, जान लीजिये। अर्जुन और कृष्ण का युद्ध में सामना करने के बाद पीछे को मुड़ना क्या लज्जा की बात नहीं है ? ऐसा कहेंगे त्रिगर्त और म्लेच्छ, और जो संशप्तक पहुँचेंगे उनके सम्बन्ध में भी। ५७-६३ पीछा करनेवालों को देखकर उन पर अनन्त शरवर्षा की। कमललोचन और अर्जुन ने पीछा करने

पिन्तुटर्न्नाशु वरुन्नतु कण्टपो-
तन्तमिल्लातॆ शरवर्षवुं चॆय्तु । ६४
पिन्तेर्च्चवन्न रिपुक्कळॆयुं वॆन्नु
चॆन्तामराक्षनां कृष्णनुं पार्त्थनुं । ६५
काट्टिनेक्काळ् वेगमोटॆ तेरोटिच्चु
काट्टिन्मकनुं भगदत्तनानयुं ६६
ऊट्टमाय् पोरिनायेट्ट पटनिल-
त्तेट्टमुळ्ळॊटे चॆल्लुन्नतु कण्टु । ६७
पोट्टिविळिच्चु सुयोधननादियां
नूट्टुपेरोटिनार् पेटियोटाकुलाल् । ६८
एट्टू भगदत्तवीरनुं पार्त्थनुं
काट्टिन्मकनोटु केवलमानयुं । ६९
उण्टाय संगरं कण्टु महाजनं
कॊण्टाटिनिल्क्कुन्ननेरं भगदत्तन् । ७०
माधवन्तन्नॆयुं वासवितन्नॆयुं
बाधवरुंवण्णमॆय्तु पिळर्न्नितु । ७१
कोपिच्चु पार्त्थनुं बाणं प्रयोगिच्चु
बाणं मुरिच्चतु कण्टु भगदत्तन् । ७२
तॆट्टॆन्नु मट्टुळ्ळोरारुमरियातॆ
मट्टॊरु विल्लुमॆटुत्तटुत्तीटिनान् । ७३
नारायणास्त्रमॆटुत्तभिमन्त्रिच्चु
पारातयच्चान् किरीटियॆक्कॊल्लुवान् । ७४

वालों का वध किया। वात्या से भी अधिक वेग से रथ चलाया गया। वायुपुत्र और भगदत्त का हाथी ज़ोर से लड़ने के लिए बड़े वेग से युद्ध-भूमि जाते देखे गये। सुयोधन आदि सौओं बन्धु डर के मारे रक्षा के लिए चिल्लाते हुए भागे। वीर भगदत्त और पार्त्थ (अर्जुन) आपस में लड़ने लगे और केवल हाथी और वायुपुत्र का युद्ध हुआ। ६४-६९ जब महाजन इस युद्ध को सोल्लास देख रहा था तब भगदत्त ने माधव और अर्जुन को शरों से ऐसा घायल किया कि उनको बड़ी बाधा हुई। तब क्रुद्ध होकर अर्जुन ने बाण का प्रयोग करके उसका धनुष तोड़ डाला। यह देखकर भगदत्त तुरन्त ही, बिना औरों के देखे, दूसरा धनुष लेकर निकट पहुँच गया। उसने पार्त्थ की हत्या करने के लिए नारायणास्त्र को मन्त्रोच्चारण

पारमेरिञ्ञणयुन्न शरं कण्टु
नारायणन्मेय्यिलेट्टु कोण्टीटिनान् । ७५
भूषणमायितु कृष्णनतु कण्टु
भाषणमायितु मट्टुळ्ळवक्कॆल्लां । ७६
मुल्पुक्कु माधवनेट्टुतट्टुक्कयाल्
दुब्बॆलन्तानॆन्नु कलिपच्चु पार्त्थनुं । ७७
चेट्टु कोपिच्चतुकण्टु दामोदरन्
कुट्टमिल्लॆन्नु पऱञ्ञु बोधिप्पिच्चान् । ७८
अन्नेरमानयुं भीमनॆक्कैक्कॊण्टु-
नन्नायॆट्टुत्तु मेल्पॆट्टॆरिञ्ञीटिनान् । ७९
वीळुन्न नेरत्तु वारणं कुत्तियुं
भीषणन् भीमनुरुण्टुकळकयुं । ८०
अभ्रमूकान्तसमप्राणनायोरु
सुप्रतीकप्रकोपभ्रमक्षेपणाल् । ८१
उळ्प्पूविलोर्त्तान् जगत्प्राणपुत्रनुं
चित्पुरुषन् चरणोत्पलयुग्मवुं । ८२
पिन्नेयुं पिन्नेयुं तङ्ङळिलिङ्ङने
खिन्नतयोट्टु पोरुतोरनन्तरं ८३
कुत्तुकोळ्ळाञ्ञु कोपिच्चु मदकरि-
येत्तिप्पिटिच्चु मेल्पोट्टॆरिञ्ञीटिनान् । ८४

करके जल्दी छोड़ा। इस प्रकार जलते शर को देखकर नारायण (कृष्ण) ने उसे अपने ही शरीर में ले लिया। वह कृष्ण का भूषण सा हो गया, तथा और लोगों के भाषण का विषय हो गया। ७०-७६ माधव के आगे जाकर उसे रोकने के कारण अर्जुन ने अपने को दुर्बल समझा और तनिक अप्रसन्न भी हुआ। यह देखकर दामोदर (कृष्ण) ने समझाया कि इसमें कोई दोष नहीं है। उसी समय हाथी ने भीम को पकड़कर ज़ोर से ऊपर को फेंक दिया। जब गिरा तब हाथी ने अपने दातों से मारा और भीषण भीम पृथिवी पर लोटने लगा। अभ्रमुकान्त (ऐरावत) के तुल्य-बल सुप्रतीक का क्रुद्ध होकर घुमाकर फेंकना ही इसका कारण था। तब जगत्प्राण (वायु) के पुत्र (भीम) ने चित्पुरुष के चरणयुगल का ध्यान किया। बार बार इस प्रकार लड़ने के बाद वह मत्तगज अपने आघातों को विफल देखकर क्रुद्ध हुआ और उसने भीम को पकड़कर ऊपर की ओर फेंक दिया। ७७-८४ तदनन्तर अपने दाँत ऊपर करके खड़ा

कॊन्पुतन्मेल् वन्नु वीळुवानायिट्टु-
कॊन्पुमुर्यत्तिनिन्नानतु कण्टिट्टु ८५
संभ्रमत्तोटॊरु बाणं प्रयोगिच्चा-
नुन्पर्कोन्तन्नुटॆ नन्दननर्ज्जुनन् । ८६
वारणवीरन्तलयट्टु विल्लट्टु
वीरन् भगदत्तन्तटॆ तलयट्टु ८७
नालामतानतन् वालुमरिञ्ञिट्टु
कोलाहलत्तोटु पोयितु बाणवुं । ८८
भीमनतिन्मीते वन्नु वीणीटिनान्
पूमळ चॆय्तारमररुमन्नेरं । ८९
आश्चरियप्पॆट्टु कण्टनिन्नोर्कळुं
पाच्चिल्पिटिच्चितु शेषिच्च सैन्यवुं । ९०
मायकळ् काट्टिप्पॊरुत शकुनियुं
मायामयसखियाकिय पार्त्थनुं ९१
चूतल्लितु नल्लु पोरॆन्नरिक नी
पोर्तिरि निल्लु निल्लॆन्नटुत्तीटिनान् । ९२
विल्लुं कुटयुं कॊटियुं कुतिरयुं
चॊल्लिक्कॊण्टॆय्तुकळञ्ञान् धनञ्जयन् । ९३
तॆक्कॆत्तलय्क्कलॆतिर्त्त यदुक्कळुं
दक्षन्माराकुं त्रिगर्त्तादिवीररुं ९४

हुआ ताकि भीम उन पर गिरे। यह देखकर देवों के पति के पुत्र अर्जुन ने झट से एक बाण का प्रयोग किया। वह वीर (बाण) हाथी के सिर को, फिर (भगदत्त) के चाप को, उसके सिर को, और चौथा हाथी की पूँछ को काटकर बड़े कोलाहल के साथ कहीं चला गया। उसके ऊपर आकर भीम गिरा और देवों ने उस समय पुष्पवृष्टि की। प्रेक्षक जो खड़े थे सब आश्चर्यचकित हुए और अवशिष्ट सेना भागी। मायाप्रयोग करते हुए लड़नेवाले शकुनि से मायामय (कृष्ण) के मित्र अर्जुन ने कहा— यह जुआ नहीं है, यह है असली युद्ध। युद्ध के लिए खड़े हो जाओ— ऐसा कहता हुआ निकट पहुँचा। ८५-९२ अर्जुन ने धनुष, छत्री, झण्डे और घोड़े को अपने तीरों से नष्ट कर दिया। दक्षिण की ओर लड़नेवाले यदु और दक्ष त्रिगर्तवीर, पाण्डवों का सामना करके हारे और युद्ध ताण्डवनृत्य सा हो गया। द्रोणपुत्र ने उस समय अपने तीर चलाये और

पाण्डवसेनयोटेट्टु तोट्टीटिनार्
ताण्डवंपोले चमञ्ञितु युद्धवुं । ९५
द्रोणात्मजन्नणञ्ञेय्तानतुनेरं
बाणगणं वरिषिच्चितु पार्त्थनुं । ९६
कन्पंवरुमारु वन्पट कॆट्टुपोय्
वन्पनां कर्ण्णन्टे पिन्पिलायीटिनार् । ९७
कर्ण्णनुं पार्त्थनुं तम्मिलेतिर्त्तप्पोळ्
कर्ण्णात्मजन्मारेक्कॊन्नितु पाण्डवर् । ९८
अर्ण्णवं तन्निल् मङञ्ञितु सूर्यनुं
कर्ण्णादिकळ् तोट्टु कैनिलयुंपुक्कार् । ९९
दुःखिच्चु चेन्नु गुरुवरन्तन्नुटे
तृक्काक्कल् वीणु दुरियोधनन्नृपन् । १००
बन्धुक्कळाय भगदत्तनादिक-
ळन्तकन्वीट्टुपुक्कीटिनार् पोरिले । १०१
कोपं भवानुळ्ळिलुण्टायतिल्लेतुं
तापवुमिल्लेङ्किलिङ्ङने वन्निटा । १०२
इत्थं परुषं पङञ्ञ सुयोधन-
नत्तल्पोवान् गुरुवीरनरुळ्चेय्तु । १०३
नारायणनुं नरनां विजयनुं
पोरिलोरुमिच्चेतिर्त्तालवरोट्टु १०४
पोरिनु पिन्नेयेतिर्क्कुन्नतारॆटो
पोरुं परुषं पङञ्ञतु नी वृथा । १०५

अर्जुन ने शरवर्षा की। सब काँपने लगा और बड़ी सेना बिगड़ गयी और शक्तिशाली कर्ण के पीछे हो गयी। जब कर्ण और अर्जुन आपस में लड़ने लगे तब पाण्डवों ने कर्ण के पुत्रों का वध किया। सूर्य समुद्र में डूबा और कर्ण आदि हारकर अपने तंबू चले गये। ९३-९९ तब दुःखित होकर राजा सुयोधन अपने गुरुवर के चरणों पड़े। भगदत्त आदि बन्धु युद्ध में मरकर यमसदन में प्रविष्ट हुए। आपको तनिक भी कोप नहीं हुआ और न दुःख। नहीं तो इस प्रकार न होता। इस तरह खरी-खरी सुनानेवाले दुर्योधन का दुःख दूर करने के लिए गुरुवीर ने कहा— जब नारायण और अर्जुन मिलकर हमारे खिलाफ़ लड़ते हैं तब उनका कौन सामना कर सकता है?। बस, व्यर्थ कड़ी बातें न करो।

पारमकट्टुक पार्त्थनेयेङ्किलो
नेरेवरुवोरे निग्रहिच्चीटुवन् । १०६
नाळे ञान् मून्निलुमोन्नु चेय्तीटुवन्
नाळीकलोचनन् पादङ्ङळ्तन्नाणे । १०७
आहवत्तिन्नोरु काणिपळुताते
व्यूहमिळकाते निर्त्तीटुवनल्लो । १०८
अस्तमिप्पोळवुमेन्नालवर्कळ्क्कु
पृत्थिक्कवकाशमिल्लेन्नतुंवरुं । १०९
शत्रुक्कळ् सैनिकव्यूहमिळक्काते-
यस्तमिप्पोळवुं निन्नितेन्नाकिलो ११०
चोद्यत्तिनाय्क्कोण्टु चेन्नवर् तोट्टुते-
न्नाद्यमायीटुन्न धर्म्मं सनातनं । १११
अल्लाय्किलो नृपन्तन्ने बन्धिच्चु आ-
निल्लवकाशमेन्नुं वरुत्तीटुवन् । ११२
रण्टुं वराय्किलो पिन्ने मून्नामतु-
मुण्टोन्नतेन्तेन्नु केळ् नी सुयोधना ! ११३
कूट्टुवन् पङ्कजव्यूहमेन्नालतिल्
कूट्टमिळक्कुन्नवने ञान् कोल्लुवन् । ११४
एङ्किल् त्रिगर्त्तादिकळ् चेन्नु पार्त्थने-
प्पङ्कजलोचननोटुमकट्टणं । ११५

अर्जुन को दूर हटाओ और सीधे सामने आनेवालों का मैं निग्रह करूँगा। १००-१०६ कल तीनों में एक (काम) मैं करूँगा कमलनयन के चरणों में। मैं बिना विलम्ब युद्ध के लिए एक ऐसे व्यूह की रचना करूँगा जो सूर्यास्तसमय तक न हिले ताकि यह सिद्ध हो जाय कि उनको पृथ्वी पर कोई अधिकार नहीं है। अगर शत्रुगण सूर्यास्तसमय तक अपने सैनिकव्यूह को हिलने न दे तो आपत्ति करनेवाले हार गये, यही पहला सनातन धर्म है। नहीं तो मैं राजा (युधिष्ठिर) ही को बान्ध लाऊँगा और सिद्ध करूँगा कि उनको अधिकार नहीं है। १०७-११२ अगर ये दोनों बातें न होंगी तो एक तीसरा रास्ता भी है। वह क्या है ? सुनो ! हे सुयोधन ! मैं पङ्कजव्यूह की रचना करूँगा और जो उसे बिगाड़ेगा उसे मैं ही मार डालूँगा। परन्तु त्रिगर्त आदियों को चाहिये कि वे अर्जुन को पङ्कजलोचन (कृष्ण) से अलग करें। 'इस में कोई सन्देह नहीं है'

सन्देहमिल्लतिनेन्नवर्तङ्ङळुं
सन्नाहमोटुषस्सिन्नु पुऱप्पेट्टार् । ११६
पार्त्थनुं पङ्कजनेत्रनुं वैरिक-
ळार्त्तंतु केट्टु तेरेऱिप्पुऱप्पेट्टु । ११७
संशप्तकन्मारुमोटिनार् तेक्कोट्टु
संशयमेन्नियटुत्तितु पार्त्थनुं । ११८
इङ्ङु पद्मव्यूहवुं चमच्चाचार्य-
नेङ्ङुमिळकाते वन्पट निर्त्तिनान् । ११९

अभिमन्युविन्टे युद्धवुं मरणवुं

एटु पोरुततु नेरत्तु पाण्डवर्
तोटृतु कण्टु युधिष्ठिरन् चोल्लिनान् । १
माधवन्तन्टे मरुमकनाकिय
वासवनन्दनपुत्रनभिमन्यु २
माधवफल्गुनन्मारोटुतुल्यनेन्-
बाध कळवानवन्मतियाय्वरुं । ३
व्यूहं विषममायुळ्ळोन्नतिल् पुक्कु
साहसत्तोटे पटयिळक्कीटुवान् ४
आहवत्तिङ्कल् चतुरनाकुं मेघ-
वाहननन्दनन् दूरयकप्पेट्टु । ५

—ऐसा कहकर वे सब तड़के युद्ध के लिए गये। शत्रुओं का सिंहनाद सुनकर अर्जुन और कृष्ण रथ पर चढ़कर चले। संशप्तक दक्षिण की ओर चले और निश्शङ्क होकर अर्जुन निकट पहुँचा। इधर आचार्य ने पद्मव्यूह बनाकर अपनी बड़ी सेना निश्चल खड़ी की। ११३-११९

अभिमन्यु का युद्ध और निधन।

जब शत्रुओं का सामना करके युद्ध प्रारम्भ हुआ तब पाण्डव हारे और यह देखकर युधिष्ठिर ने कहा। माधव का भाञ्जा अर्जुनपुत्र अभिमन्यु, माधव और अर्जुन का तुल्य है और वह मेरी बाधाओं को दूर करने के लिए पर्याप्त है। उस विषम व्यूह के अन्दर घुसकर बड़े साहस के साथ सेना को हिलाने के लिए, युद्ध में कुशल मेघवाहन (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) अब कुछ दूर हो गया है। हे वीर! हे कुमार! हे कुमार!

वीर ! कुमारा ! कुमारनु नेराय
वीर ! सुकुमार ! सुन्दर ! सौभद्र ! ६
पोरिनाचार्यर् विळिच्चु निल्क्कुन्नतिल्
पोराय्मयुण्णी ! नमुक्कु वरुत्तोला । ७
पार्त्थनु तुल्यनायुळ्ळ नीयेंङ्किलें-
न्नार्त्ति केंटुक्क जयिक्क रिपुक्कळे । ८
नीयोंळिञ्ञारेयुं कण्टील मट्टिनि-
प्पोयितु पार्त्थनुं कृष्णनुं दूरवे । ९
धर्म्मजन् चोंन्नतु केट्टभिमन्युवुं
धर्म्मजन्तन्नेंत्तोंळुतु चोंल्लीटिनान् । १०
इन्नटियन्नुतन्ने जयिक्कावतो
मन्नवा ! माट़लरूट़मायुळ्ळवर् । ११
इत्थं परञ्ञ सुभद्रात्मजनोटु
चित्तं तेंळिञ्ञु धर्म्मात्मजन् चोंल्लिनान् । १२
भीमनुं द्रौपदितन्नुटे मक्कळुं
भीमात्मजनां घटोत्कचवीरनुं १३
केकयन्मारुं मट्टुळ्ळ पटयुमाय्
पोक नी तेरु नटत्तुं सुमित्रनुं । १४
सूतनायुळ्ळ सुमित्रनतु केट्टु
नीतियिल् सौभद्रनोटु चोंल्लीटिनान् । १५
द्रोणरुं धीरनां द्रौणियुं कर्ण्णनुं
प्राणभयं कुरुयुं कृपर् भोजनुं १६

(कार्तिकेय) के समान वीर ! हे सुकुमार ! सुन्दर ! हे सुभद्रा के पुत्र ! जिस युद्ध के लिए आचार्य हमको ललकार रहे हैं, बेटा ! उसमें हमारी कमी न हो ! । १-७ अगर तुम पार्थ के तुल्य हो तो मेरा दुःख दूर करो और शत्रुओं को जीतो । तुम्हें छोड़कर अब और कोई नहीं है । अर्जुन और कृष्ण दूर रह गये । युधिष्ठिर की बात सुनकर अभिमन्यु ने उनकी वन्दना करके कहा । आज क्या अभिमन्यु अकेला जीत सकता है ? हे राजन् ! शत्रु तो बहुत शक्तिशाली हैं । सुभद्रा के पुत्र की यह बात सुनकर युधिष्ठिर प्रसन्नता के साथ बोले । भीम, द्रौपदी के पुत्र, भीमपुत्र वीर घटोत्कच, केकय और सेना के साथ तुम चलो । सुमित्र रथ चलायेगा । ८-१४ यह सुनकर सूत सुमित्र ने सौभद्र से सादर कहा—

मट्टुं महारथन्माराय वैरिकळ्
कुट्मौळिञ्ञु पोर् चेय्युन्ननेरत्तु १७
मुट्टाते बालनायुळ्ळोरु निन्नाले
मुट्टुं जयिप्पान् पणियेन्नरिञ्ञालुं । १८
अेन्नु सुमित्रनां सारथि चौन्नतु
निन्न सुभद्रात्मजन् केट्टु चौल्लिनान् । १९
ञानतिबालनशक्तनेन्नाकिलुं
मानियामेन्नुटे तातनेयोर्क्क नी । २०
पिन्नेप्पितावुतन्नग्रजन् मारुति
सन्नद्धनाय घटोल्कचन् भ्रातावु २१
मातुलनायतु माधवनायतिल्
ञानोरुत्तन् पिटियात्तवनेङ्किलुं २२
प्राणन् कळवतिन्नाय् मतियाय् वरुं ।
पिन्नेप्परिभविच्चीटुवानाळुक- २३
ळेन्नेक्कुरिच्चवरुण्टेन्नरिक नी ।
अेन्नतल्लेयवर्कारुण्यमुण्टेङ्कि-
लिन्नु समस्तरेयुं जयिच्चीटुवन् । २४
पोक पुरप्पेटुकेन्नु पात्थात्मजन्
वेगेन तेरिल् करेरिनान् विल्लुमाय् । २५
पाण्डवसेनयुं चेन्नितु पिन्नाले
गाण्डीवधन्वावुतन्मकन्तन्नोटुं । २६

द्रोण, धीर द्रोणपुत्र (अश्वत्थामा), कर्ण, प्राणभय से रहित कृप, भोज, अन्य महारथी शत्रु जब बिना गलती किये लड़ेंगे तब इस दशा में बालक ! तुम्हारे लिए पूर्ण जय प्राप्त करना कठिन होगा, जान लो। सारथि सुमित्र की यह बात सुनकर सज्ज सुभद्रापुत्र ने कहा। माना कि मैं बालक और शक्तिहीन हूँ परन्तु स्मरण रहे कि मेरे पिता मानी अर्जुन हैं। १५-२० फिर पिता के बड़े भाई भीम, सन्नद्ध भाई घटोत्कच, मामाजी माधव भी तो हैं, केवल मुझ में कुछ कमी है पर प्राणत्याग मैं भी कर सकता हूँ। फिर जान लो कि मेरे सम्बन्ध में दुःख करने के लिए वे तो हैं ही। उनकी कृपा अगर होगी तो मैं आज सब को जीत लूंगा। 'चलो', 'निकलो', ऐसा कहता हुआ अर्जुनपुत्र धनुष लिए रथ पर बैठ गया। गाण्डीवधन्वा (अर्जुन) के पुत्र के साथ पाण्डवसेना

शूलं परिघं मुसलवुं चक्रवुं
वेलोटु वेँण्मळु कुन्तं गदकळुं २७
तुळ्ळुंमुनयोटिळकुं चुरिकक-
ळुळ्ळंनटुङ्ङुं कटुत्तिल वाळुकळ् २८
मिन्निप्परिचकळ् विल्लुं शरङ्ङळुं
तूणीरमोटु कवचमुष्णीषवुं
पूणियुं पूण्टु शोभिच्च योद्धाक्कळुं २९
कल्लुं कविणयुं नल्ल वटिकळुं
कैयिलेँटुत्तुळ्ळ काळ्चप्पटकळुं ३०
पायुं कुतिरकळ् पूट्टि नानाविध-
मायुधमोँक्क निऱच्चुळ्ळ तेरुकळ् ३१
तोयाकरमलऱीटुन्नतुपोलेँ
वायुवेगेन परन्नु काणाय्वन्नु । ३२
पोँन्नणिञ्ञानकळ् मुळ्त्तटि कैक्कोँण्टु
पोँन्निन्मलकळ् नटक्कुन्नतुपोलेँ । ३३
वेँळ्ळत्तिलेँ तिर तळ्ळुन्नतुपोलेँ
तुळ्ळिक्कळिक्कुन्न वेँळ्ळक्कुतिरकळ् ३४
मुन्पिल् कळिक्कुन्न कालाळ्प्पटकळुं
वन्पोटलरुं पटहवुं भेरियुं ३५
वन्कटल्पोलेँ परन्नितु वन्पट ।
हुंकारमोटुमटुक्कुन्नतुनेरं । ३६

पीछे-पीछे गयी। २१-२६ शूल, परिघ, मुसल, चक्र, भाला, कुल्हाड़ी, कुन्त, गदाएँ, तीक्ष्ण नोकवाली छुरियाँ, चित्त को कँपानेवाली महीन तलवारें, चमकनेवाले चर्म, धनुष और बाण, तूणीर, कवच और उष्णीष, आभूषण पहनकर चमकनेवाले योद्धा, पत्थर और अच्छे-अच्छे डंडे हाथ में लिए जानेवाले दर्शनीय सैनिक, दौड़नेवाले घोड़े, अनेक रथ जिन में विविध आयुध बन्द किये गये हैं ये सब गरजते सागर के समान वायु के वेग से फैलते हुए दिखाई दिये। २७-३२ सोने के आभूषणों से अलंकृत, अङ्कुशयुक्त चलते सोने के पहाड़ के समान हाथी, आगे बढ़नेवाले पानी के लहर के समान कूदते-खेलते सफ़ेद घोड़े, आगे-आगे सोल्लास जानेवाले पैदल सैनिक, उच्च ध्वनि करनेवाले नगाड़े और दुन्दुभि, यह सब धारण करनेवाली बड़ी सेना एक बड़े समुद्र के समान फैली। जब वह गरजती हुई निकट

दिक्कुकळोक्क मरञ्ञु पॊटिकॊण्टु ।
चक्रं तिरिञ्ञितु कौरवसैन्यवुं । ३७
विल्लाळिवीरनां द्रोणरतु कण्टु
निल्ला पट नमुक्कॆन्नुरच्चीटिनान् ३८
चॊल्लिनान् मट्टुळ्ळवरोटितु काण्क ।
नल्ल वरवु भयङ्करमॆन्नयुं । ३९
ऎल्लावरुमॊरुमिच्चु निन्नीटुविन् ।
नल्ल गजङ्ङळॆ मुन्पिल् निर्त्तीटुविन् । ४०
वल्लातॆ धूळिप्पटयकट्टीटुविन् ।
वल्लभमुळ्ळवरॊन्निच्चु कूटुविन् । ४१
इत्तरं चॊल्लियुरच्चु भरद्वाज-
पुत्रनां द्रोणरुरप्पिच्चु निर्त्तिनान् । ४२
मेघङ्ङळ् मारि चॊरियुन्नतु पोलॆ
तूकित्तुटङ्ङी शरङ्ङळतुनेरं । ४३
ऎय्तॆय्तटुत्तटुत्तर्ज्जुननन्दनन्
चैतन्यमुळ्ळ जनत्तॆयॊटुक्किनान् । ४४
शक्तरायुळ्ळवरॆत्तियॆतिर्त्तुटन्
चत्तुं मुरिञ्ञुमॊळिच्चु वाङ्ङीटिनार् । ४५
मॆल्लमॆल्लॆ क्रमत्तालॆय्तटुत्तटु-
त्तल्लल् मरुतलयक्कुण्टॆन्नु कण्टप्पोळ् ४६

आयी तब सारी दिशाएँ धूल से ढक गयीं। कौरवसेना चक्र के समान घूमी। यह देखकर धनुर्धरों में श्रेष्ठ द्रोण ने समझ लिया कि सेना रुकेगी नहीं। तब वह औरों से बोले। यह आगमन अच्छा रहा और भयङ्कर। ३३-३९ अब सब एक होकर खड़े हो जाओ। अच्छे हाथियों को आगे खड़ा करो, अधिक धूल करनेवाली सेना को दूर रखो। आपस में प्रेम करनेवाले साथ हो जाओ। इस प्रकार कहकर भरद्वाजपुत्र द्रोण ने सेना को स्थिर करके खड़ी कर दिया। मेघों के वारिधारा बरसने के समान उस समय शरवर्षा होने लगी। बाण छोड़ता हुआ अर्जुनपुत्र आगे बढ़ा और चैतन्यवाले जनों को समाप्त करता गया। शक्तिशाली लोग पहुँचकर लड़े और कुछ मरे और व्रणी होकर कुछ अलग हुए। ४०-४५ धीरे धीरे, क्रम से, बाण छोड़ता हुआ, शत्रु को दुःखित समझकर सिंहनाद करता हुआ अभिमन्यु पद्मव्यूह को तोड़ते हुए और सेना के बीच में पहुँच

आर्त्तु पद्मव्यूह मूक्कोटु भेदिच्चु
पार्त्थात्मजन् करयेऱिनान् कूट्टत्तिल् । ४७
चिन्निच्चमञ्ञितु कौरवसैन्यवुं
छिन्नमाय् वन्नितु कालुं करङ्ङळुं । ४८
छन्नमाय् वन्नितु भास्करबिंबवुं
खिन्नमाय् वन्नताचार्यनु चित्तवुं । ४९
सन्नमाय् वन्नितनेकायिरं पट
धन्यमाराय् वन्नितप्सरस्त्रीकळुं । ५०
धन्वियायुळ्ळभिमन्युशरङ्ङळाल्
मन्यु मुळुत्तरिमन्नोरोंळिक्कयुं । ५१
चङ्ङाति वीळ्वतु कण्टु तोंळिक्कयुं ।
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिल् पारं पळिक्कयुं । ५२
बाणं पोंळिक्कयुं काणक्कळिक्कयुं
चोरप्पुळकळ् पलवयोंलिक्कयुं
वारिधिवारियुंकूटें चुवक्कयुं । ५३
पोरिल् नटुक्कमोटोटिक्किळय्क्कयुं
नारीजनमतु कण्टु तोंळिक्कयुं ५४
नारदन् कौतुकंपूण्टु चिरिक्कयुं
नारायणा ! नमो ऍन्नु जपिक्कयुं ५५
निल्लु निल्लॅन्नु परञ्ञङ्ङटुक्कयुं
नल्ल शूरन्मार् तिरिञ्ञु मरिक्कयु- ५६

गया और कौरवसेना छिन्नभिन्न हो गयी। हाथ और पैर छिन्न मिले और सूर्यबिंब ढक गया। आचार्य का चित्त खिन्न हुआ और सहस्त्रों की संख्या में सैनिक नष्ट हुए। अप्सराएँ धन्य हुईं धानुष्क अभिमन्यु के शरों के कारण। क्रोध बढ़ने के कारण शत्रुभूपाल अलग हुए। अपने मित्र का गिरना देखकर दुःखित हुए। योद्धाओं ने आपस ही में एक दूसरे की निन्दा की। ४६-५२ शरवर्षा की गयी, रक्त की अनेक नदियाँ बहीं और सागर का पानी भी लाल रङ्ग का हो गया। युद्ध में डरके मारे भागने से हाँफना, उसे देखकर महिलाओं का दुःखित होना, नारद का कौतुक से हँसना, और नारायण ! नमस्ते ! ऐसा जपना, कुछ लोगों का 'ठहरो ठहरो' कहकर निकट पहुँचना, अच्छे-अच्छे शूरों का घूमकर मरजाना, विमानों का आकाश को छिपा देना, जो न मरे उनका भागकर

माकाशमौक्क विमानं मङ्यक्कयुं
चाकातवर् पान्नुपोयङ्ङौळिक्कयुं ५७
तम्मिल् पिरिन्नु काणान्नु विळिक्कयुं
कर्म्मप्पिळयेन्नु कण्णीरौलिक्कयुं ५८
आनकळ् कैकाल् पिटन्नु किटक्कयुं
काणिकळ् कण्टुकौण्टेट्मङ्यक्कयुं ५९
कूळिकळ् कूट्टमिट्टार्त्तु कळिक्कयुं
काळि रुधिरं कुटिच्चु पुळय्क्कयुं ६०
चक्रङ्ङळ्कौण्टु कळुत्तु तेरिक्कयुं
विक्रममुळ्ळवर् पोरिन्नटुक्कयुं ६१
विख्यातरायवर् नोक्कित्तटुक्कयुं
विल्क्करुत्तुळ्ळवरेट्न्नटिक्कयुं ६२
भीमन् गदकौण्टु पारमटिक्कयुं
भीमगजङ्ङळेयौक्कत्तकर्क्कयुं ६३
वाजिकळेक्कौलचेय्तु मुटिक्कयुं
वाशिपङ्कयुमार्त्तुविळिक्कयुं । ६४
वन्पटक्कूट्टत्तिलन्पोटु पुक्कुकौ-
ण्टुन्पर्कोन्तन्नुटे नन्दननन्दनन् । ६५
कन्पं वरुत्तिच्चमच्चोरुनेरत्तु
तुन्पं कलर्न्नु दुरियोधनन्तानुं । ६६
आचार्यनुमरचन्मारुमौन्निच्चु
कूशाते निन्नु पोर्चेय्तोरुनेरत्तु । ६७

कहीं छिप जाना, अलग होकर फिर न मिलने से पुकारना, अपना ही कर्म का दोष है ऐसा समझकर आँसू गिराना, हाथियों का हाथ-पैर तड़पते हुए पृथिवी पर लोटना, प्रेक्षकों का देखकर नफ़रत होना, पिशाचों का इकट्ठा होकर चिल्लाना, काली का रक्त पीकर क्रुद्ध होना, ५३-६० चक्रों के द्वारा गरदन का अलग होकर गिरना, वीरों का युद्ध के लिए निकट आना, विख्यात लोगों का रोकने का प्रयत्न करना, धनुष में कुशल योद्धाओं का तीर चलाना, भीम का अपनी गदा से खूब मारना और भीषण हाथियों को समाप्त करना, घोड़ों को मार-मारकर समाप्त करना, औरों को चुनौती देना और चिल्लाना, यह सब हुआ। जब इन्द्र के पुत्र का पुत्र (अभिमन्यु) बड़ी सेना के अन्दर सोल्लास घुस गया और शत्रुओं

सौमित्रि रावणियोटु चेंल्लुंवण्णं
सौभद्रनार्त्तङ्ङटुत्तानतुनेरं । ६८
केट्टु तिरिच्चितु वन्पट तल्क्षणे
पेंटटेंन्नु शल्यानुजन् तिरिञ्ञीटिनान् । ६९
वाट्टमिल्लातें पार्त्थात्मजनन्तकन्-
वीट्टिलिरिक्क नीयेंन्नयच्चीटिनान् । ७०
निश्वासमुळ्क्कोंण्टतुकण्टुनिन्नोरु
दुश्शासननुं दुरियोधनन्तानुं ७१
कोंल्लुक वैकातिवनेंयिनियेंन्नु
चोंल्लियटुक्कुन्नतुकण्टभिमन्यु ७२
निल्लु निल्लाकिल् नृपतिकुलाधमा !
शल्यानुजन्नु तुणययच्चीटुवन् । ७३
पाञ्चालियेंस्सभयिङ्केंन्नु नी पण्टु
पूञ्चेल चुट्टियिळच्चीलयो चाल्क । ७४
कोंल्लुवान् भीमन् प्रतिज्ञ चेंय्तीटिनान्
वल्लाय्कयाय्वरुं निन्ने ञान् कोंल्लुकिल् । ७५
ऍन्नु परञ्ञु शरङ्ङळ् पोंळिच्चवन्
चेंन्नु तरच्चतुकण्टु दुश्शासनन्- ७६
तम्नुटें सारथि तेरुमोंळिच्चुकों-
ण्टिटन्नलिलतिनेंन्नु कोंण्टुपोयीटिनान् । ७७

को सताने लगा तब दुर्योधन दुःखित हुआ। आचार्य और भूपालगण एक होकर बिना शङ्का के लड़े। ६१-६७ तब लक्ष्मण का मेघनाद से लड़ने जाने के समान सौभद्र (अभिमन्यु) सिंहनाद करता हुआ निकट पहुँचा। यह सुनकर बड़ी सेना घूमी और तुरन्त ही शल्य का छोटा भाई भी घूमा। पार्थात्मज (अभिमन्यु) ने उसको 'तुम अन्तक के घर रहो' ऐसा कह कर भेज दिया। यह देखकर निश्वास छोड़ते हुए दुश्शासन और दुर्योधन को 'अब बिना विलम्ब के इसे मारो' ऐसा कहते हुए निकट आते देख अभिमन्यु ने कहा— 'हे नृपतिकुलाधम ! अगर कर सकते हो तो ठहरो ! ठहरो ! तुम्हें शल्यानुज के साथ भेज दूँगा। कहो तुम्हीं ने तो पहले सभा में द्रौपदी का वस्त्र उतारा और खींचा था। ६८-७४ भीम ने तुम्हे मारने की प्रतिज्ञा की है। अतएव अगर मैं तुम्हारा वध करूँ तो अनुचित हो जायगा'। ऐसा कहकर उसने शरवर्षा की जो दुश्शासन् पर लगी। यह देखकर दुश्शासन के सारथि 'यह आज का काम नहीं है' ऐसा कहकर रथ को चला ले गया।

अप्पोळ् तिरिञ्ञितु कर्ण्णनवनोटु
कॆल्पोटट्टुत्तु पोर्चॆय्तानभिमन्यु । ७८
विल्लुं कुटयुं कॊटियुं कुतिरयुं
चॊल्लिक्कॊण्टॆय्तु मुरिच्चानतुनेरं । ७९
ओटिनान् पेटियोटाकुलाल् कर्ण्णनु-
मोटातॆ निल्लुनिल्लॆन्नभिमन्युवुं । ८०
आलिलपोलॆ विऱच्चरिवाहिनी
चालत्तिरिच्चु नटन्नानतुनेरं । ८१
शङ्करन्तन्ऱॆ वरप्रसादत्तिनाल्
शङ्ककूटातॆयटुत्तान् जयद्रथन् । ८२
पण्टु वनत्तिङ्कल् निन्नु पाञ्चालियॆ-
क्कॊण्टुपोवान्तुनिञ्ञोरु जयद्रथन् । ८३
मण्टुन्ननेरत्तु मारुतनन्दनन्
मण्टियणञ्ञु पिटिच्चवन्तन्नुटॆ ८४
कण्ठं मुरिप्पान् तुटङ्ङियनेरत्तु
कण्टुनिन्नोरु धर्म्मात्मजन्चॊल्लिनाल् ८५
कॊल्लातॆ नाणंकॆटुत्तयच्चानति-
न्नल्लल्पूण्टाशु जयद्रथन् पार्व्वती- ८६
वल्लभन्तन्नॆत्तपस्सुचॆय्तानवन्
नल्ल वरङ्ङळ् कॊटुत्तानतुकालं ८७

तब कर्ण उसकी ओर बढ़ा और अभिमन्यु उससे सोल्लास लड़ा। उसका धनुष, छत्री, झण्डा और घोड़ा सब बाण से नष्ट किया गया। व्याकुल होकर डरके मारे कर्ण भागा पर अभिमन्यु ने कहा— 'भागो मत ! ठहरो ! ठहरो !' पीपल के पत्ते के समान काँपता हुआ अपनी सेना को घुमाकर वह (कर्ण) चला गया। ७५-८१ उस समय जयद्रथ, जिसको शिवजी का वरप्रसाद मिला था, निश्शङ्क निकट पहुँचा। बहुत पहले जयद्रथ ने पाञ्चाली को वन से छीन लेजाने की कोशिश की थी। जब भाग रहा था तब भीम ने उसे दौड़कर पकड़ा था और उसकी गरदन काटनेही वाला था जब देखते हुए युधिष्ठिर के कहने पर उसका वध न करके केवल अपमान करके छोड़ दिया था। इससे दुःखित होकर तुरन्त ही जयद्रथ ने पार्वतीवल्लभ (शिव) की तपस्या की ! तब शिवजी ने अच्छे-अच्छे वर दिये। (जैसे) धानुष्क अर्जुन को छोड़कर और सबको तुम

विल्लाळियां पार्त्थनेन्तिये मट्टुळ्ळो-
रेल्लावरेयुं जयिक्काय्वरिकेन्नु । ८८
तळ्ळलोटार्त्तङ्ङ्ट्टुत्तु जयद्रथन्
कळ्ळमोळिञ्ञु पोरुतानतुनेरं । ८९
पेटिच्चकन्नितु पाण्डवसैन्यवुं
पेटिच्चोळिञ्ञुनिन्नानभिमन्युवुं । ९०
वन्पट कोट्टु मण्टुन्नतुनेरत्तु
वन्पुळ्ळरिकळ् वळञ्ञारवरेयुं । ९१
व्यूहवुं नन्नायुरच्चोरनन्तर-
माहवमेत्रयुं घोरमाय् वन्नितु । ९२
बालनायुळ्ळ पार्त्थात्मजन्तन्नेयुं
चालेच्चुळन्नु पोर्चेय्तु तुटङ्ङिनान् । ९३
नानारथिकळोटुं पोरुतार्ज्जुनि
तानेयटुत्तारवर्कळुं मण्टिनार् । ९४
मण्टुन्नतेन्तिनु निङ्ङळेल्लावरुं
कण्टुनिन्नीटुविनेन्नु शल्यात्मजन् ९५
वन्नानवनेप्पटयोटुकूटवे
कोन्नान् कुमारनायुळ्ळ पार्त्थात्मजन् । ९६
चेन्नितु चावानवन्टे पटयेल्ला-
मोन्नोळियाते कोन्नानभिमन्युवुं । ९७

जीतोगे । ८२-८८ अतएव वह जयद्रथ अहङ्कार के साथ निकट पहुँचा, निष्कपट युद्ध करने लगा। भयभीत होकर पाण्डवसेना हटी और डर के कारण अभिमन्यु भी अलग हो गया। जब सेना बिगड़कर भागने लगी तब शक्तिशाली शत्रुओं ने उनको घेरा। व्यूह का स्थिर होने के बाद युद्ध अत्यन्त घोर हुआ। बालक अभिमन्यु को घेर कर उससे लड़ने लगा। आजनि (अभिमन्यु) ने अनेक रथियों से युद्ध किया। पर वे सब भाग गये। ८९-९४ तब शल्यपुत्र— 'क्यों भाग रहे हो? खड़े होकर देख लो' ऐसा कहता हुआ आया और कुमार अभिमन्यु ने उसे सेना सहित समाप्त कर दिया। उसके सैनिक मरने ही के लिए गये और अभिमन्यु ने उनको एक न छोड़कर मार डाला। तब धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन चिल्लाता हुआ आया और अभिमन्यु ने तीक्ष्ण शरों की वर्षा की। तब पीड़ित होकर दुर्योधन अलग हो गया। औरों से बोला— 'जल्दी

धार्त्तराष्ट्रन् दुरियोधनन् तानट्टु-
त्तार्त्तु पोर्चेय्तितु पार्त्थात्मजन्तानुं । ९८
कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ् तूकीटिना-
नार्त्तनायोट्टकन्नान् दुरियोधनन् । ९९
मट्टुळ्ळवरोटु चोन्नान् तेरुतेरे
तेट्टेन्निवने वधिक्केन्नु केळ्क्कयाल् १००
उट्बन्धुक्कळायुळ्ळ तेराळिकळ्
चुट्टुं चुळन्नु पोर्चेय्तुतुटङ्ङिनार् । १०१
अट्मिल्लातोळमुळ्ळ शस्त्रङ्ङळुं
पट्लरोन्निच्चु तूकुन्नतु कण्टु १०२
कौन्तेयसूनु सुभद्रात्मजन्तानुं
गान्धर्व्वमस्त्रमयच्चानतुनेरं । १०३
तन्मेय्यिलोन्नुमेलाते चमञ्ञतु
सम्मानिच्चारतु कण्टिट्टु काणिकळ् । १०४
नोक्किय नोक्किय दिक्किलेल्लाटवुं
नीक्कमोळिञ्ञभिमन्युविनेक्कण्टु । १०५
वैरिकळ् विस्मयप्पेट्टकन्नीटिनार्
वैरं कलर्न्न सुभद्रात्मजन्तानुं १०६
नन्नायुणङ्ङिङवरण्ट वनंतन्निल्
चेन्नुटनग्नि पिटिपेट्टुपोले १०७
कोन्नुकोन्नोक्कयोट्टक्कुन्नतु कण्टु
चेन्नु सुयोधनपुत्रनां लक्षणन् । १०८

इसका वध करो'। इस आज्ञा को सुनने के कारण उनके निकट के बन्धु रथियों ने उसको घेरकर उस पर तीर चलाये। ९५-१०१ कौन्तेयसूनु सुभद्रात्मज (अभिमन्यु) ने जब देखा कि शत्रु सब मिलकर उस पर निस्सीम संख्या में शस्त्र छोड़ रहे हैं तब गान्धर्वास्त्र का प्रयोग किया। उसके फलस्वरूप शत्रुओं के शस्त्र उसके शरीर पर न लगे। यह देखकर प्रेक्षकों ने उसको साधुवाद दिया। दिशाओं में जहाँ भी देखो वहाँ निस्सन्देह अभिमन्यु दिखाई दिया। शत्रु आश्चर्यचकित होकर रह गये। वैर भरे हुए सुभद्रात्मज (अभिमन्यु) ने सबको मार-मार कर समाप्त कर दिया, मानो बिलकुल सूखे वन में आग लग गयी हो। वह देखकर दुर्योधन का पुत्र लक्षण वहाँ पहुँचा। १०२-१०८ उसको देख अभिमन्यु

चौन्नानतुकण्टभिमन्यु कोपिच्चु
नन्नायि कण्टतु निल्लुनिल्लिन्निनि । १०९
निन्नुटॆ तातन्टॆ मुन्निलिट्टिन्नु ञान्
निन्नॆ यमपुरत्तिन्नयच्चीटुवन् । ११०
ऍन्नवारॆ दुरियोधनपुत्रनु-
मिन्द्रात्मजसुतन्तन्नॆयॆय्तीटिनान् । १११
चौन्नवण्णंतन्नॆ धार्त्तराष्ट्रन्मुन्निल्
कौन्नुवीऴ्त्तीटिनान् लक्षणन्तन्नॆयुं । ११२
चत्तु मनस्सु दुरियोधनन्तनि-
क्कॆत्रयुमत्तल्पूण्टानतु काण्कयाल् । ११३
अर्णवंपोलॆयलरियभिमन्यु
तिण्णं पौरुतङ्ङ्टुक्कुन्नतुनेरं ११४
कण्णिलकप्पॆट्ट वैरिकळॆयॆल्लां
कण्णिमय्क्कुन्नतिन्मुन्नेयॊटुक्किनान् । ११५
कर्णन् कृपर् कृतवर्म्मा बृहल्बलन्
धन्वियां द्रोणरुं पुत्रनुमॆन्निवर् ११६
आरु महारथन्मारुमॊरुमिच्चु
वीरोटटुत्तु पौरुतारतुनेरं । ११७
ऍल्लावरोटुं तटुत्तु पोर्चॆय्तुटन्
विल्लाळिवीरन् बृहल्बलनॆक्कॊन्नान् । ११८

क्रुद्ध हुआ और बोला—'अच्छा हुआ कि तुम दिखाई दिये। अब ठहरो। आज में तुमको तुम्हारे पिता के सामने ही यमपुरी भेज दूँगा'। ऐसा कहने पर दुर्योधनपुत्र ने इन्द्रात्मजपुत्र (अभिमन्यु) पर तीर चलाया। तब अपने कहने के अनुसार अभिमन्यु ने दुर्योधन के सामने ही लक्षण को मार गिराया। दुर्योधन का चित्त मर गया, उसे देखकर अत्यन्त दुःखित हुआ। समुद्र के समान गरजता हुआ अभिमन्यु तुरन्त लड़ता हुआ आया और जिन-जिन शत्रुओं को उसने देखा सबको एक ही निमेष में समाप्त कर दिया। १०९-११५ कर्ण, कृप, कृतवर्म्मा, बृहद्बल, धानुष्कवर द्रोण, उनका पुत्र, ये छः महारथी मिलकर जल्दी निकट पहुँचे और लड़े। (अभिमन्यु ने) सब का सामना करते हुए युद्ध किया और धनुर्धरों में श्रेष्ठ बृहद्बल का वध किया। अवशिष्ट पाँच बहुत विषण्ण हुए और हा! शिव! शिव! कहते हुए अलग हुए।

ऐवरुं पित्नॆ विषण्णरायाकुला-
लय्यो ! शिवशिवयॆन्नकत्तीटिनार् । ११९
पार्त्थतनयनुं भास्करपुत्रनुं
पेर्त्तुमट्टुत्तु पॊरुतार् भयङ्करं । १२०
अन्पुकळ्कॊण्टुकॊण्टंगं पिळक्कयाल्
चॆन्परत्तिप्पूवुपोलॆ शरीरवुं १२१
वन्पोटु चोरयाल् मूटीतिरुवरु-
मुन्परुं कण्टु तॆळिञ्ञितायोधनं । १२२
कर्ण्णनुटॆ पटनायकन्मारुटन्
चॆन्नु पॊरुतानरुवरॆयुमवन् १२३
कॊन्नानतु कण्टट्टुत्तितु मागधन्
कॊन्नानवनॆयुमर्ज्जुननन्दनन् । १२४
इण्टल् मुळुत्ततु कण्टरिवर्ग्गवुं
मण्टिनार् पेटिच्चॊरुत्तरॊळियातॆ । १२५
वन्चतियुळ्ळ शकुनिक्कनुजन्मा-
रञ्चुपेर् तुञ्चिनारञ्चियोटुं विधौ । १२६
कर्ण्णसुयोधनद्रोणभोजादिकळ्
कण्णुनीर्वार्त्तुटन् तम्मिल् नोक्कीटिनार् । १२७
अप्पोळटुत्तभिमन्यु तेर्वीथियि-
लुळ्प्पुक्कुकॊण्टु कॊन्नॊक्कयॊटुक्किनान् । १२८
आचार्यनङ्गेश्वरनोटु चॊल्लिना-
नाशु नी विल्लु चतिच्चु मुरिक्कणं । १२९

अभिमन्यु और कर्ण फिर एक दूसरे के निकट पहुँचकर आपस में भयङ्कर रूप से लड़े। बाणों के बार-बार लगने से शरीर कट गये और रक्त से लिप्त हो जाने के कारण, दोनों के शरीर जवाकुसुम के समान हो गये। देवगण युद्ध को देखकर प्रसन्न हुए। ११६-१२२ अर्जुनपुत्र ने जाकर कर्ण के छहों सेनापतियों से युद्धकर के उनका वध किया। यह देखकर मागध निकट आया और वह भी मारा गया। कठिनाइयों को बढ़ती देख एक न छोड़कर सब भागे। बड़े वञ्चक शकुनि के पाँच छोटे भाई हटे, मानो लज्जित होकर भाग रहे हैं। कर्ण, सुयोधन, द्रोण और भोज आँसू गिराते हुए एक दूसरे को देखने लगे। तब अभिमन्यु ने निकट पहुँचकर रथों की सड़क पर घुसकर सब को समाप्त कर दिया। तब

नेरोटिवनॆप्पोरुतु जयिप्पति-
नारुं करुतायक विल्लु नी खण्डिक्किल् १३०
अर्ज्जुननन्दननेक्कोलचॆय्वति-
निज्जनत्तिन्नु पणियिल्ल निर्ण्णयं । १३१
दुर्ज्जनधर्म्ममितॆन्नु वरुं नम्मॆ-
स्सज्जनं निन्दिक्कुमिल्लोरु संशयं । १३२
सज्जचापायुधन्मार् निजकीर्त्तिकॊ-
ण्टर्ज्जुनवर्ण्णमाक्केणं जगत्त्रयं । १३३
दिग्जयं चॆय्किलुमाशु महारणे
निर्ज्जरलोकं गमिक्किलुमारुमे १३४
वर्ज्जनकार्यङ्ङळ् चॆय्यातिरिक्कणं
गर्ज्जनंचॆय्वोर् दुषिच्चतुमूलमाय् । १३५
कर्ण्णनुं धर्म्ममव्वण्णमोरोतरं
वर्ण्णिच्चु चॊन्नताकण्र्ण्य गुरुवरन् १३६
वर्ण्णधर्म्मक्रिय निर्ण्णयं पार्त्तुका-
रुण्यनिधिमतं कण्टु चॊल्लीटिनान् १३७
ऒन्नालुमिन्निनि प्राणनॆक्काप्पति-
न्निन्नितु चॆय्कॆन्नु केट्टोरु कर्ण्णनुं १३८
पिन्नूटॆ चॆन्नॊळियन्पॆय्तु चापवुं
खण्डिच्चितश्वङ्ङळ् कॊन्निताचार्यनुं । १३९

आचार्य ने अङ्गेश्वर (कर्ण) से कहा— 'तुरन्त तुम वञ्चना करके उसका धनुष काट डालो । १२३-१२९ सीधे लड़कर इसको जीतना कोई भी न कर सकता । अगर तुम धनुष काटोगे तो अर्जुननन्दन का वध करने में मुझे निस्सन्देह कोई दिक्कत न पड़ेगी । हाँ ! कहा जायगा कि यह दुर्जनों का धर्म है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि सज्जन हमारी निन्दा करेंगे । सज्ज धनुषवालों को चाहिए कि वे अपनी कीर्ति से सारे जगत् को शुक्लवर्ण बना दें । दिग्विजय किया जाय अथवा रणभूमि में प्राण देकर कोई स्वर्ग चला जाय, परन्तु किसी को भी वर्जित कार्य न करना चाहिये, क्योंकि गर्जन करनेवालों (महापुरुषों) ने उसकी निन्दा की है । कर्ण का इस प्रकार का विविध धर्मों का वर्णन सुनकर गुरुवर ने वर्णधर्म को ध्यान में रखते हुए कारुण्यनिधि का मत देखकर इस प्रकार कहा । १३०-१३७ (धर्म के विरुद्ध होने पर भी) प्राणरक्षा के लिए अवश्य कर्तव्य काम को गुरुमुख से सुनकर कर्ण ने पीछे-पीछे जाकर एक

सूतनेक्कोन्नु कृपरुमतुनेर-
मादितेयाधिपपुत्रतनयनुं १४०
वाळुं परिचयुं कैक्कोण्टतुनेरं
चीळेन्नु पोङ्ङिनानाकाशवीथियिल् । १४१
वेट्टुकळ्कोण्टतुनेरमरिकळ्क्कु
तट्टुकेटुण्टायतु पऱवान् पणि । १४२
मेल्पट्टु नोक्किनारेन्तुगतियेन्नु
पेप्पेट्टु निन्नितु कौरवसैन्यवुं । १४३
वाळुं परिचयुमेय्तु खण्डिच्चितु
बाणङ्ङळ्कोण्टु गुरुवुमंगेशनुं । १४४
पार्त्थात्मजन् पटक्कूट्टत्तिलन्नेर-
मार्त्तट्टुत्तीटिनानायुधंकूटाते । १४५
शक्रात्मजसुतन् विक्रमं कैक्कोण्टु
चक्रवुं ध्यानिच्चटुक्कुन्नतुनेरं । १४६
चक्रायुधन्तन्नुपदेशमायोरु
चक्रं तिरिञ्ञटुक्कुन्नतु काणायि । १४७
वित्रस्तरायरिवर्ग्गमकन्नपो-
तस्त्रज्ञनाय गुरुवेय्तु खण्डिच्चान् । १४८
पिन्नेयोरु गद कैक्कोण्टभिमन्यु
कोन्नान् गजतुरगादिकळ्तम्मेयुं । १४९

छिपे बाण से धनुष को काट डाला और आचार्य ने घोड़ों को नष्ट कर दिया। उसी समय कृपाचार्य ने सूत (सारथि) का वध किया। तब आदितेयाधिपपुत्रतनय (अभिमन्यु) तलवार और चर्म लेकर झट से आकाश में उठा। उसके तलवार से शत्रुओं पर जो आघात हुए उनसे हुई हानि का वर्णन करना कठिन है। क्या करना है यह न जानकर सब आकाश देखने लगे और कौरवों की सेना भयभीत होकर निश्चल हो गयी। गुरु और अंगेश (कर्ण) ने अपने बाणों से तलवार और चर्म को तोड़ डाला। १३८-१४४ तब अभिमन्यु निःशस्त्र होकर सिंहनाद करता हुआ शत्रुसेना के बीच घुस गया। केवल विक्रम का आश्रय लिए और चक्र का ध्यान करता हुआ अभिमन्यु आगे बढ़ा। तब चक्रायुध (कृष्ण) के उपदेश के रूप में एक चक्र घूमता हुआ आता दिखाई दिया। जब वित्रस्त होकर अरिवर्ग हटने लगा तब अस्त्रज्ञ गुरु ने अपने बाण से

तच्चु पॊटिच्चु तकर्त्तु रथङ्ङळु-
मच्युतन्तन्टे मरुमकनायवन् । १५०
गान्धारनॆत्तच्चु कॊन्नॊटुक्कीटिनान्
तान्तान् तनिक्कॊत्त दिक्किनु मण्टिनान् । १५१
दुश्शासनसुतनाय भरतनुं
विश्वैकवीरनोटॆय्तटुत्तीटिनान् । १५२
मारिनेराय शरङ्ङळ् वरुन्नव
नेरे गदकॊण्टु तट्टित्तटुत्तवन् । १५३
पाञ्ञणयुन्नवन्तन्नुटे तेरुम-
ङ्ङाञ्ञुपिटिच्चु गदकॊण्टटिच्चवन् । १५४
ऒक्कत्तकर्त्तु पॊटिच्चान् भरतनु-
मुळ्ळकरुत्तोटु कैक्कॊण्टानॊरु गद । १५५
तङ्ङळिल् पिन्नॆग्गदकॊण्टु चॆय्तपो-
रिङ्ङनॆयॆन्नु पऱवान् पणि पणि । १५६
पारं परप्पिल् पऱयुन्नतॆन्तिनु
पोरिल् मरिच्चारिरुवर् कुमाररुं । १५७
हा हा ! शिवशिवायॆन्नु महाजनं
हा हा ! हरि हरियॆन्नुरच्चीटिनार् । १५८
शूरनायुळ्ळ कुमारनभिमन्यु
पोरिल् मरिच्चतु केट्टु युधिष्ठिरन् १५९

उसको तोड़ डाला। तदनन्तर अभिमन्यु ने एक गदा लेकर हाथियों, घोड़ों आदियों को मार डाला। अच्युत के भांजे ने रथों को मार पीस डाला। १४५-१५० गान्धार को मारकर समाप्त कर दिया। हर एक अपनी-अपनी दिशा को भाग गया। दुश्शासन का पुत्र भरत विश्वैकवीर अभिमन्यु के पास बाण छोड़ता हुआ पहुँचा। वर्षा के समान आनेवाले शरों को सीधे गदा से रोक लिया। भागनेवाले के रथ को आगे बढ़कर पकड़ लिया और गदा से मार कर समाप्त कर दिया। तब भरत ने भीतरी शक्ति के साथ एक गदा हाथ में लेली। तब उन दोनों का आपस में जो युद्ध हुआ उसका वर्णन करना बहुत कठिन काम है। १५१-१५६ विस्तर से क्यों कहा जाय? बस! इतना ही है कि दोनों कुमारों का युद्ध में निधन हुआ। जनता ने हा हा! शिव शिव! हा हा हरि हरि! ऐसा विलाप किया। शूर कुमार अभिमन्यु के निधन की वार्ता सुनकर

पारिल् मरामरं वीणकणक्किनें
पारमळ्ळल्पूण्टु मोहिच्चु वीणुटन् । १६०
पिन्नेयुणर्न्नु विलापं तुटङ्ङिना-
नुण्णी ! चतिच्चो कुमारा ! मनोहरा ! १६१
अॅन्नुटॆ चॊल् केट्टु पोयि मरिच्चॊरु-
निन्नॆ ञानॆन्निनिक्काणुन्नु नन्दन ! १६२
अर्ज्जुननोटुं मुकुन्दनोटुं पुन-
रिज्जनमॆन्तु पऱयुन्नतीश्वरा ! १६३
राज्यवुं वेण्टा मति मति युद्धवुं
पूज्यनामीशनॆस्सेविक्क वेण्टतुं । १६४
इत्थं पऱञ्ञु करयुन्न धर्म्मजन्-
चित्तशोकं कळञ्ञीटुवानाय्क्कॊण्टु १६५
सत्यवतीसुतनाय मुनीश्वरन्
सत्यव्रतनुटॆ मुन्पिलॆळ्ळुन्नळ्ळिळ । १६६
धर्म्मजनाचारवुं चॆय्तु निन्नितु
तन्मनोदुःखं कळवान् मुनीश्वर- १६७
नध्यात्मवाक्कुकळ् चॊन्नोरनन्तरं
चित्तं तॆळिवानितिहासवुं चॊन्नान् । १६८

युधिष्ठिर दुःखित और बेहोश होकर गिरा मानो एक बड़ा सालवृक्ष गिरा हो। फिर जगकर विलाप करने लगा— बेटा ! हे कुमार ! हे मनोहर ! तुमने क्या धोखा दिया है ? बेटा ! मेरे कहने पर तुम गये और मरे ! अब मैं तुम्हें कब फिर देख सकूँगा ? १५७-१६२ हे ईश्वर ! मैं अब अर्जुन और मुकुन्द को क्या जवाब दूँगा ? मुझे कोई राज्य नहीं चाहिये। बस, अब युद्ध भी समाप्त हो। अब इतना ही चाहिये कि हम पूज्य भगवान् की सेवा करें। इस प्रकार रोता हुआ युधिष्ठिर अपना दुःख दूर करने के लिए सत्यवती का पुत्र मुनीश्वर सत्यव्रत के पास पहुँचा और वन्दना करके खड़ा रहा। उसके मन का दुःख दूर करने के लिए मुनीश्वर ने अध्यात्म की बातें कीं, तदनन्तर चित्त की प्रसन्नता के लिए इतिहास भी सुनाया। १६३-१६८

सृञ्जयोपाख्यानं

पण्टु महीपतियाकिय सृञ्जय-
नुण्टायितु सुतनॊत्वयुमादराल् १
नारदन्तन्टॆ वरप्रसादत्तिनाल्
चारुकुमारनायुळ्ळवन्तन्नुटॆ २
मूत्रपुरीषङ्ङळ्पोलुं कनकमा-
यास्थकलर्न्नु मरुवुन्नतुकालं । ३
दुष्टर् वधिच्चारटवियिल्निन्नति-
कष्टं ! महीपतिक्कुण्टायि दुःखवुं । ४
सृञ्जयन्तन्नुटॆ शोकं कळवति-
नञ्जसा नारदन्तानुमॆळुन्नळ्ळि । ५
केळ्क्क महीपते ! दुःखं कळक नी
चाक्किल्लयातवरारुमिल्लोर्क्क नी । ६
भोष्कल्ल धातावु कल्पिच्च मृत्युविन्
पोक्कलकप्पॆटुमेवनुं मन्नवा । ७
पण्टु पलगुणमुण्टाय मन्नव-
रुण्टायितु पतिनारुपेरूळ्ळियिल् ८
अन्तकन्तन्नॆयुं वॆल्लुमवर्कळु-
मन्तरमॆन्ये मरिच्चाररिक नी । ९
मुन्पिल् मरुत्तन् सुहोत्रनुमंगनुं
वन्पनौशीनरन् रामन्तिरुवटि १०

सृञ्जय का उपाख्यान ।

पूर्वकाल में राजा सृञ्जय का, आदरणीय नादरजी के वरप्रसाद से, एक पुत्र हुआ । उस चारु कुमार के मूत्र और पुरीष को भी आस्था के साथ स्वर्ण के समान राजा देखता था । दुष्टों ने उस पुत्र का जङ्गल में वध किया और, हा कष्ट ! राजा को बड़ा दुःख हुआ । राजा का दुःख दूर करने के लिए तुरन्त ही नारदजी वहाँ पहुँचे । हे राजन् ! सुनो ! दुःख छोड़ो ! याद रखो कि कोई भी मरण से नहीं बच सकता है । १-६ मैं झूठ नहीं कहता हूँ, धाता की कल्पित मृत्यु के वश में हर एक प्राणी आ ही जायेगा । पूर्वकाल में पृथ्वी में अनेक गुणवाले सोलह राजा थे जो यमराज को भी मार सकते थे । पर वे भी, जानलो, बिना किसी भेद के, मर गये । पहला मरुत्त, फिर सुहोत्र, अंग, बड़ा औशीनर, भगवान्

नल्ल भगीरथन्तानु दिलीपनु
मान्धातावोट्टु ययाति मुचुकुन्दन् ११
अंबरीषन् शशविन्दुमहीपति
रन्तिदेवन् भरतन् पृथु भार्ग्गव- १२
नन्तमिल्लात पुकळुळ्ळ मन्नव-
रेन्तहो चेय्ततेन्नोक्केटो सृञ्जय ! १३
नारदनेवं परञ्ञु मरञ्ञपो-
तारी महीपतितन्नुटे तापवुं । १४
नीयुं कळकळल् धर्म्मजा ! निर्म्मल !
नीयरियातवयिल्लेन्नु निर्ण्णयं । १५
ऎन्नरुळ्चेय्तु मरञ्ञु महामुनि
मन्ननु शोकवुमोट्टु कुरञ्ञुते । १६
देवकीदेवीतिरुमकन्तानुमाय्
देवराजात्मजन् वैरिकळे वेन्नु । १७
वेगेन सायाह्ननेरत्तुळरिनान्
पोकेन्नु चोल्लित्तिरिच्चोरु नेरत्तु । १८
कण्टवर् कण्टवर् मण्टुन्नतु कण्टुं
कण्ट शकुनप्पिळकळतु कण्टुं १९
इण्टलकतारिलुण्टायतुकोण्टुं
कोण्टल्नेर्वर्ण्णनोटिङ्ङने चोल्लिनान् २०
अङ्ङु वलियोरुनाशं पिणञ्ञितु
मंगलमूर्त्ते ! मधुरिपो ! माधव ! २१

रामचन्द्र, अंबरीष, राजा शशबिंदु, रन्तिदेव, भरत, पृथु, भार्गव, इन निस्सीम यशवाले राजाओं ने हे सञ्जय, क्या क्या काम किये हैं, याद करो। ७-१३ जब इस प्रकार कहकर नारदजी अन्तर्धान हुए तब राजा का ताप कुछ ठण्डा हुआ। तुम भी अपना दुःख छोड़ो हे निर्मल युधिष्ठिर! निस्सन्देह कोई भी बात नहीं है जो तुम नहीं जानते हो। ऐसा कहकर महामुनि (व्यास) चले गये और राजा का शोक कुछ कम हुआ। देवकीदेवी के पूज्य पुत्र के साथ अर्जुन ने शत्रुओं को मारा। और शाम को कहा 'अब हम जल्दी चलें'। जिसे भी देखा उसका भागना देखकर विविध दुश्शकुन देखकर और मन में दुःख पैदा होने के कारण श्रीकृष्ण से इस प्रकार कहा— "हे मंगलमूर्त्ते ! हे मधुरिपु ! हे माधव ! एक

ॲल्लामरिञ्ञरिक्कुन्न मल्लारियुं
मॆल्लवे चॊल्लिनानल्ललोटु तदा २२
नाशङ्ङळुण्टां रणत्तिङ्कलॆङ्किलुं
नाशं नृपनेतुमिल्लॆन्नु निर्ण्णयं । २३
इत्थमन्योन्यं परञ्ञु विषादिच्चु
सत्वरं कैनिल पुक्कोरनन्तरं । २४

अर्ज्जुनप्रतिज्ञयुं जयद्रथवधवुं

वृत्रारिपुत्रनुं पुत्रन् मरिच्चॊरु-
वृत्तान्तमत्याकुलत्तोटु केट्टप्पोळ् १
उळ्क्कान्पिलुण्टाय दुःखं परवति-
नित्रिलोकत्तिङ्कलाक्कुमरुतॆटो । २
मोहिच्चु भूमियिल् वीणु किरीटियुं
मोहैकनाशननाकिय कृष्णनुं ३
स्नेहपरवशनायवन्तन्नुटॆ
देहमॆट्टुत्तु मुरुकॆत्तळुकिनान् । ४
केळुन्नितु चिल बन्धुक्कळाकुलाल्
वीळुन्नितु चिलरोटुन्नितु चिलर् । ५
तङ्ङळत्ताडिच्चु मोहिच्चितु चिल-
रिङ्ङनॆ सर्व्वरुं केळुन्नतुनेरं । ६

बहुत बड़ा नाश हो गया है" तब सब जाननेवाले मल्लारि (कृष्ण) ने धीरे-धीरे दुःख के साथ कहा— युद्ध में नाश तो होगा ही परन्तु निस्सन्देह राजा का कोई नाश न हुआ। इस प्रकार आपस में कहते हुए दुःखित हुए और तुरन्त अपने तंबू चले गये। २०-२४

अर्जुन की प्रतिज्ञा और जयद्रथवध।

जब वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) ने अपने पुत्र के निधन की बात सुनी तब उसके चित्त में जो दुःख पैदा हुआ उसका वर्णन तीनों लोकों में कोई नहीं कर सकता है। किरीटी (अर्जुन) बेहोश होकर पृथ्वी पर गिर गया। मोह का नाश करनेवाले कृष्ण ने स्नेह के वश में आकर उसके (अभिमन्यु के) शरीर को गाढ़ आलिंगन किया। कुछ बन्धु दुःख से रोने लगे। कुछ गिरे और कुछ भागने लगे। अपनी-अपनी छाती पीटकर कुछ लोग

कण्णुमिळिच्चु तिरुमुखवुं नोक्कि
विण्णवर्कोन्मकन् केणुतुटङ्ङिनान्—७
अय्यो ! मकने ! कुमारा ! चतिच्चितो !
नीयेन्नेयिङ्ङनेयाक्किच्चमच्चितो ! ८
सूर्यसमान ! सुकुमार ! सुन्दर !
शूरा ! सुभद्रात्मज ! शुभमन्दिर ! ९
हा हा ! पौरुक्कुन्नतेङ्ङने निन्नुटे
देहमेन् कण्कोण्टु काणाते ञानिनि । १०
हा हा ! पौरुप्पतेन्तेन्तु ञान पैतले !
हा हा ! वृथाफलमायितेप्पेरुमे । ११
वेण्टीलेनिक्किनि युद्धवुं राज्यवुं
वेण्टील भूमियिल् वाऴ्कयुमिन्नि ञान् । १२
प्राणन् कळयुन्नतुण्टेन्नु फल्गुनन्
वीणु मुऱयिटुं नेरत्तु कृष्णनुं १३
मूढरेप्पोले चमयुन्नतेन्तु नी
तेटॊला चापल्यमेतुमे मन्नवा ! १४
युद्धत्तिल् मुन्नोक्कि वेगालटुत्तति-
शक्तियेऱीटुन्न शत्रुक्कळेक्कोन्नु १५
वीर्यपुरुषनायुळ्ळ तवात्मजन्
वीर्यस्वर्ग्गं पुक्कानेन्नऱिञ्ञीटु नी । १६

बेहोश हुए । इस प्रकार जब सब दुःखित हुए, तब अर्जुन ने आँख खोलकर उस प्यारे मुख को देखा और विलाप करने लगा । १-७ हा ! बेटा ! हे कुमार ! तुमने धोखा दिया ! तुमने मुझे इस हालत में पहुँचा दिया ! हे सूर्य के तुल्य ! सुकुमार ! सुन्दर ! हे शूर ! हे सुभद्रा के पुत्र ! हे शुभमन्दिर ! हा ! तुम्हारे शरीर को अपनी आँखों से बिना देखे मैं कैसे जीवन सह सकता हूँ ? हा बेटा ! मैं कैसे यह सह सकता हूँ ? हा सब कुछ व्यर्थ निकला है । अब मुझे न युद्ध चाहिये और न राज्य, अब मुझे इस पृथिवी में कहीं भी नहीं राज करना है । पृथिवी पर लेटकर जब अर्जुन दोहरा रहा था कि मैं प्राण छोड़दूंगा तब कृष्ण ने कहा "तुम क्यों मूढ़ों की तरह हो रहे हो ? हे राजन् ? चापल्य बिलकुल छोड़ दो । ८-१४ जान लो कि वीर्यपुरुष तुम्हारे पुत्र ने युद्ध में आगे बढ़कर अत्यन्त शक्तिशाली शत्रुओं को मारकर वीर्यस्वर्ग में प्रवेश किया है । मैंने जो तुम्हे उपदेश

निन्नोटुतन्नें ञान् चोन्नोरुपदेश-
मिन्नु जलरेखयायितो फल्गुन ? १७
जातनायाल् मृतनामवन् जातना-
मिङ्ङनें जन्तुधर्म्मं पुरा निर्णयं । १८
जीर्णवस्त्रङ्ङ्ळुपेक्षिच्चु मानवर्
पूर्णशोभङ्ङळां वस्त्रङ्ङ्ळ् कोळ्ळुवोऱ् । १९
जीर्णदेहं कळञ्ञङ्ङनें देहिकळ्-
पूर्णशोभङ्ङळां देहङ्ङळेक्कोळ्ळुं । २०
राजधर्म्मङ्ङ्ळ् निरूपिक्किलिन्नति-
व्याजेन पङ्कजव्यूहत्तिलायोरु २१
बालनेयञ्चारुपेर्कूटोरुमिच्चु
कालपुरत्तिनयप्पानवकाशं । २२
अन्तकवैरिवरप्रसादत्तिनाल्
सिन्धुपतियां नृपनल्लो कारणं । २३
पेण्णुङ्ङ्ळेप्पोले दुःखिच्चिरिक्कातें
तिण्णमट्टुत्तु जयद्रथन्तन्नुटे २४
कण्ठं मुऱिप्पतु तक्कमिनियेन्नु ।
कोण्टलूनेर्वर्ण्णनरुळ्चेय्त कारणं २५
चारुनयनङ्ङळ् चेङ्ङिङ्मरिञ्ञितु
घोरं पुरिकं ञेरिञ्ञु वळञ्ञितु । २६
पारं विऱच्चुचमञ्ञु तिरुवुटल्
शूरनायोरु किरीटिकिरीटवुं २७

दिया था वह हे फल्गुन ! क्या सब जलरेखा हो गयी है ? जो पैदा होता है वह मरता है, जो मरता है वह फिर जन्म लेता है; निस्सन्देह जन्तुओं का यह शाश्वत धर्म है । मानव अपने जीर्ण वस्त्रों को त्यागकर सम्पूर्ण शोभावाले देह अपनाते हैं । अगर राजधर्म ही पर विचार किया जाय तो धोखे से पङ्कजव्यूह में फँसे एक बालक को पाँच-छः व्यक्ति मिलकर यमपुरी भेज दें यह कहाँ तक उचित है ? १५-२२ अन्तकवैरि (शिव) के दिये वर के प्रसाद से इसका कारण सिन्धुपति राजा ही है । स्त्रियों के समान दुःख में बैठे न रहकर तुरन्त निकट जाकर जयद्रथ का सिर काट डालना, यही अब कर्तव्य है ।" मेघवर्ण (कृष्ण) के इस प्रकार कहने के कारण अर्जुन के चारु नयन लाल हो गये, उसकी घोर भौंहें चढ़ीं । उस

सूर्यप्रभमायेरिञ्ञळकी तुलों ।
निर्ज्जरनायकनन्दननाकियो- २८
रर्ज्जुनन्तन्नुटे खेदकोपङ्ङळाल्
उज्ज्वलिच्चुळ्ळोरु तेजस्सु काण्कयाल् ।
सज्ज्वरन्माराय् चमञ्ञतु लोकरुं । २९
नानाजनङ्ङळु केळ्क्कुमार्ङ्ङने
मानमोटेवं प्रतिज्ञचेय्तीटिनान् । ३०
सत्यमितेल्लावरुं केळ्प्पिनेङ्किलेन्-
चित्ते विळङ्ङुन्न कृष्णन्तिरुवटि ३१
पोल्त्तारटियिणयाणे पोळियल्ल ।
सत्यव्रतनाकुमग्रजन्तन्नाणे ३२
नित्यनां केशवन्तन्नाणे निर्ण्णय-
मेत्रयुं शत्रुवायुळ्ळ सुयोधन-३३
नत्यन्तमाश्रयनाय जयद्रथन्
पुत्रनेक्कोल्लुवान् कारणमाकयाल् ३४
मित्रनुदिक्कुन्नताकिलो नाळे आ-
नस्तमिक्कुन्नतिल्मुन्पेयवन्तल ३५
पत्रिकोण्टेय्तु मुरिक्कुन्नतुण्टति ।
न्नेत्ताय्किलेतुमे संशयंकूटाते ३६
गाढमायुळ्ळोरु विल्लुमायग्नियिल्-
चाटि मरिक्कुन्नतुण्टेन्तु निर्ण्णयं । ३७

का शुभ शरीर काँपने लगा, और शूर किरीटी (अर्जुन) का किरीट सूर्य के समान चमकने लगा। निर्जरनायक-नन्दन (अर्जुन) के खेद और कोप के कारण उसका तेज और उज्ज्वल दिखाई देता था। अतएव लोग ज्वरग्रस्त हो गये। २३-२९ और अर्जुन ने अभिमान के साथ ऐसी प्रतिज्ञा की कि सब लोग सुन सकें। "यह सत्य है, सब लोग सुनें। मेरे चित्त में विराजमान पूज्य कृष्ण के चरणयुगल की सौगंध ! यह झूठ नहीं है। बड़े भाई सत्यव्रत की कसम, नित्यकेशव की कसम, अत्यन्त शत्रु सुयोधन का बिलकुल आश्रित जयद्रथ का मेरे पुत्र के वध का कारण होने के कारण कल अगर सूर्य का उदय होगा तो उसके अस्त होने के पहले उसका सिर बाण से काट डालूँगा। अगर यह न होगा तो निस्सन्देह अपने दृढ़ धनुष के साथ आग में कूदकर मर जाऊँगा, यह मेरा निर्णय

इत्थं प्रतिज्ञयुंचेय्तु पार्त्थन् पितृ-
दत्तमां शंखुमेट्टुत्तु विळिच्चितु । ३८
चाञ्चल्यमिल्लातॆ देवकीपुत्रनुं
पाञ्चजन्यत्तॆ विळिच्चरुळीटिनान् । ३९
शंखनादङ्ङळुं वाद्यघोषङ्ङळुं
शङ्कवॆटिञ्ञुळ्ळ सिंहनादङ्ङळुं ४०
केट्टु कुलुङ्ङि जगत्त्रयमन्नेरं
वाट्टं कळञ्ञितु पाण्डवसेनयुं । ४१
पार्थिवरार्त्ततुं वाद्यघोषङ्ङळुं
पार्त्थन् प्रतिज्ञचॆय्तानॆन्न वार्त्तयुं ४२
आर्त्तिवरुमारु केट्टु जयद्रथन्
चीर्त्त विषादमोटे पऋञ्ञीटिनान्— ४३
मन्नवर्मन्नवनाय सुयोधन !
कर्ण्णा ! कनिवॆरुमाचार्य ! निङ्ङळुं ४४
पाण्डवकैनिलतन्निलॆ घोषङ्ङळ्
ताण्डवंपोलॆ शिव ! शिव! केट्टीले ? ४५
उग्रनां पार्त्थन् प्रतिज्ञचॆय्तीटिनान्
निग्रहिच्चीटुमवनॆन्नॆ निर्ण्णयं । ४६
रक्षिप्पतिन्नु बलमिल्ल निङ्ङळ्क्कु
शक्रात्मजनोटु निल्क्करुताक्कुमे । ४७

है" । ३०-३७ ऐसी प्रतिज्ञा करने के बाद अर्जुन ने अपने पिता का दिया शंख उठाकर बजाया । देवकीपुत्र ने भी बिना चाञ्चल्य के अपने पाञ्चजन्य को बजाया । शंखनाद, वाद्यघोष, और निश्शङ्क किये गये सिंहनाद सुनकर तीनों लोक उस समय काँपे और पाण्डवसेना ने अपना औदासीन्य त्याग दिया । राजाओं के सिंहनाद, वाद्यघोष, और अर्जुन के प्रतिज्ञा करने की वार्ता सुनकर जयद्रथ घबड़ाया और बड़े विषाद के साथ बोला । ३८-४३ हे राजाओं के राजा सुयोधन ! कर्ण ! कारुण्यमूर्ति आचार्यजी ! आप लोगों ने भी पाण्डवों के तंबू से निकलनेवाले ताण्डव के समान घोष सुने होंगे ? उग्र पार्थ ने प्रतिज्ञा कर ली है, निस्सन्देह वह मेरा निग्रह करेगा । आप लोगों में मेरी रक्षा करने की शक्ति नहीं है । शक्रात्मज (अर्जुन) का कौन सामना कर सकता है ? । तुरन्त कहीं दूर जाकर अगर हम लोग अपने को छिपा लें तो मैं मौत से अपनी रक्षा

वेगेन दूरत्तु पोयोंळिच्चाकिलुं
चाकातें कात्तुकोंण्टीटुवनेंन्नें ञान् । ४८
अेंन्नतु केट्टु सुयोधनन् चोंल्लिना-
निन्नुमोंरुत्तर् केळ्क्कॆप्पर्ञ्ञीटोंला । ४९
काननं पूकेंन्नकारियमिन्नभि-
मानमिल्लातोंरु दुर्ब्बलन्मारुटें ५०
पक्षमितेंन्चेंवि केळ्क्कें नी चोंल्लुकि-
लोक्कक्कळिञ्ञितु मेलिलें युद्धवुं । ५१
विश्वैकवीरनाय् मेवुमाचार्यनु-
मश्वत्थामावु वृषसेननुं ञानुं ५२
कर्ण्णनुं मट्टु महारथन्मारुमाय्
निन्नें रक्षिक्कुन्नतुण्टेंन्नु निर्ण्णयं । ५३
नाळेटमेतुचेंय्तुं कळिच्चीटुवा-
नाळु ञानेंन्नरिञ्ञीटुकेंन्नानवन् । ५४
मट्टुळ्ळवर्कळुमिङ्ङनें चोंल्लिनार्
तेंट्टेंन्नु कौरवसेनयुमार्त्तितु । ५५
बद्धवैरत्तोटु रण्टु परिषयुं
युद्धत्तिनाशु सन्नद्धरायीटिनार् । ५६
कौरवन्मारुटें कैनिलतन्निलें
भैरवनादवुं वार्त्तयुं केट्टथ ५७
शौरि मुरारि नरकारि कंसारि
गौरवभावमोटेवमरुळ्चेंय्तु— ५८

कर सकूँगा। यह सुनकर सुयोधन ने कहा— किसी के सामने ऐसा मत कहो। बन में प्रवेश करने की बात अभिमानरहित दुर्बलों की ही है, अगर तुम मुझे यह सुनाओगे तो समझो कि सब समाप्त है, आगे का युद्ध भी। ४४-५१ विश्व का एक मात्र वीर आचार्यजी, अश्वत्थामा, वृषसेन, मैं, कर्ण और अन्य महारथी मिलकर तुम्हारी रक्षा करेंगे, इसमें सन्देह नहीं। जान लो कि आज सब कुछ करनेवाला मैं हूँ—ऐसा उसने कहा। औरों ने भी इसी प्रकार कहा और कौरवों की सेना ने जयघोष किया। बद्धवैर के साथ दोनों पक्षों ने युद्ध के लिए तैयारी की। कौरवों के तंबू से निकलता भैरवनाद और वार्ताओं को सुनकर शौरि मुरारि नरकारि कंसारि कृष्ण ने गौरव के साथ इस प्रकार कहा— हे मित्र! हे वीर!

वीरा ! विशेषङ्ङळ् केट्टतिल्ले सखे !
वीरवादं परञ्ञीटिनार् कौरवर् । ५९
नानामहारथन्मारुमायॊत्तिच्चु
नानाप्रकारवुं नाळे युद्धत्तिङ्कल् ६०
कौन्तेयनाकिय पार्त्थनु कॊल्लुवान्
सैन्धवन्तन्नॆयय्क्कुन्नतिल्लॆन्नुं ६१
इत्थं प्रतिज्ञचॆय्तारवर् निन्नुटॆ
सत्यवुं पारं कटुत्तॆटो फल्गुन ! ६२
साधिच्चुकॊळ्वान् पॆरिकॆप्पाणियुण्टु
बाधिच्चुकूटुमो वन्पुळ्ळरिकळॆ ? । ६३
मल्लारि मॆल्लवे चॊल्लिय चॊल्लुके-
ट्टल्ललोटुं तदा चॊल्लिनान् फल्गुनन्— ६४
अन्परिलन्पने ! वन्परिल् मुन्पने !
उन्पर्कोने ! मम तन्पुराने ! हरे ! ६५
निन् तिरुवुळ्ळमॊरन्तरमॆन्निये
सन्ततमन्धनामॆन्निलुण्टाकया- ६६
लन्तकवैरिपुरान्तकन्तान् परि-
पन्थियॆन्नाकिलुं ञान् जयिच्चीटुवन् । ६७
व्याकुलमिल्लतु निल्क्क विरविनो-
टाकुलमाराय् मुऱयिट्टलच्चिटुं ६८
नारीजनङ्ङळ्तन् खेदमटक्कुक
नारायणा ! तव वाक्यामृतत्तिनाल् । ६९

समाचार सुना है ? कौरवों ने वीरवाद किया है । ५२-५९ अनेक महारथों ने मिलकर प्रतिज्ञा की है कि कल युद्ध में कौन्तेय पार्थ से लड़ने के लिए सैन्धव (जयद्रथ) को अकेला नहीं भेजेंगे । इस लिए, हे फल्गुन, अब तुम्हारी प्रतिज्ञा कुछ कठिन हो गयी है । उसकी पूर्ति करने में प्रयत्न बहुत करना पड़ेगा, शक्तिशाली शत्रुओं को कैसे रोकें ? मल्लारि (कृष्ण) की कही यह बात सुनकर अर्जुन ने दुःख के साथ कहा । हे ! नेताओं के नेता ! प्रेम करनेवालों में श्रेष्ठ ! हे ! मेरे प्रभु ! हरे ! सदैव अन्धे मुझ पर तुम्हारी निरन्तर कृपा होने के कारण अन्तकवैरि (यम का शत्रु) पुरान्तक (शिव) ही अगर बाधक हो जायँ तब भी मैं जीत जाऊँगा । ६०-६७ मैं घबड़ाता नहीं हूँ, तनिक ठहरिये । हे नारायण ! व्याकुल होकर

अँन्नतु केट्टु मुकुन्दन्तिरुवटि
चॅन्नु नारीजनत्तोटरुळिच्चॅय्तु— ७०
भद्रे ! सुभद्रे ! भगिनी ! करयरु-
तुत्तममार्कुलोत्तंसमामुत्तरे ! ७१
बाले ! सुशीले ! विमले ! मनोहरे !
मालेरि माळ्काय्क पाञ्चालनन्दने । ७२
वीरमाताक्कळ्धर्म्मंङ्ङळोर्त्तीटुविन्
दूरवे नीक्कुविन् चापल्यमॊक्कवे । ७३
वीरन्माराय रिपुक्कळॆयुं वॆन्नु
वीर्यस्वर्ग्गंपुक्किरिक्कुं पुरुषनॆ । ७४
चिन्तिच्चुनिङ्ङळ् करञ्ञालवनति-
नन्तरं वन्नुपोमत्रे पुनरिनि । ७५
सन्तापमॊट्टु कुरच्चीटुविन् निङ्ङ-
ळॆन्तङ्ङियातवरॆप्पोलॆ केळुवान् ? । ७६
इत्थमरुळ्चॆय्तटक्कि विलापवुं
मुग्धविलोचननाकिय माधवन् । ७७
वृत्रारिपुत्रनु शोकमकट्टुवान्
पुत्रनॆक्कण्टे मतियावितॆन्निट्टु ७८
वृत्रारिलोकत्तवनुमाय् चॆन्नुटन्
पुत्रनॆक्काट्टि विषादवुं तीर्त्तितु । ७९

रोनेवाली स्त्रियों का अपने वाक्यामृत से खेद दूर कीजिये। यह सुनकर प्रभु मुकुन्द भीतर जाकर नारीजन से बोले। हे भद्रे ! सुभद्रे ! हे बहिन! रोओ मत ! हे उत्तमस्त्रियों के कुल का अलंकार उत्तरे ! हे बाले ! हे सुशीले ! हे विमले ! हे मनोहरे ! हे पाञ्चालपुत्रि ! अतिदुःख से पीड़ित न हो जाओ ! वीरों की माताओं का धर्म याद करो ! जो पुरुष वीर शत्रुओं को मारकर वीर्यस्वर्ग में प्रवेश कर चुका है। उसके सम्बन्ध में अगर तुम लोग रोओगी तो, कहा जाता है, उसको हानि पहुँचेगी। ६८-७५ तुम लोग अपना दुःख कम करो, अज्ञजन के समान यह क्या विलाप कर रहे हो ? इस प्रकार कहकर मुग्धविलोचन माधव ने उनके दुःख को दबाया। अर्जुन का शोक तो पुत्र के दर्शन से ही दूर होगा, ऐसा समझकर उसके साथ वृत्रारिलोक (स्वर्ग) जाकर वहाँ पुत्र को दिखाकर विषाद को समाप्त किया। सोचो तो यह विचित्र है कि आधे

चित्रमितोर्क्किलरनिमिषंकोण्टु
चित्रमां योगेशनल्लो. जगल्पति । ८०
उळ्ळिल् प्रपञ्चमेल्लामटक्कुंपुमान्
पळ्ळिक्कुरुप्पुकोण्टीटिनानिङ्ङने । ८१
प्राणसमन् मम पार्त्थनुटे सत्य-
मूनंवराते कळिप्पान् पणि तुलों । ८२
द्रोणादिकळभयं कोटुत्तानव-
नेणाङ्कचूडप्रसादवुमुण्टल्लो । ८३
इत्थं निनच्चु निनच्चु किटक्कया-
लर्द्धरात्रिक्कुणर्न्नीटिनान् माधवन् । ८४
दारुकन्तन्ने विळिच्चरुळिच्चेय्तु—
पोरतिघोरमां नाळेयरिक नी । ८५
ञान्तन्ने सैन्धवन्तन्नेक्कोलचेय्तु-
कौन्तेयसत्यत्ते रक्षिक्कयुं वेणं । ८६
बान्धवमायुळ्ळतङ्ङनेयुळ्ळुत-
न्तान्तरमायेळुमात्मा धनञ्जयन् । ८७
पोन्मयमाय गरुडध्वजमुळ्ळु-
नम्मुटे तेरुमोरुमिच्चिरिक्कवे ८८
निर्म्मलमायेळुमायुधजालवुं
चेम्मे पिरियाते वेण्टिवरुमेटो । ८९
ऒन्नुटे सेवकन्मारेयुपेक्षिक्क-
येन्नुळ्ळतोन्नुकोण्टुंवरा निर्ण्णयं । ९०

निमेष में इस योगेश, जगत्पति, भीतर सारा प्रपञ्च रखनेवाले पुरुष ने अपनी दिव्य निद्रा प्राप्त की । ७५-८१ "मेरे प्राणतुल्य अर्जुन के शपथ की पूर्ति करना कठिन काम है । द्रोण आदि ने उसको (जयद्रथ को) अभय प्रदान किया है और एणाङ्कचूड (शिवजी) का प्रसाद भी उसको प्राप्त है । ऐसा सोचते लेट रहे थे । इस लिए माधव आधी रात को जग गये । तब दारुक को बुलाकर बोले—जान लो कि कल अति घोर युद्ध होनेवाला है । बान्धव की बात ऐसी ही होती है और धनञ्जय तो मेरी भीतरी आत्मा है । ८२-८७ स्वर्णमय गरुडध्वजवाला मेरा रथ साथ रहे और मेरे अपने निर्मल आयुद्धजाल को भी अपने साथ रखने की आवश्यकता पड़ेगी । अपने सेवकों की उपेक्षा करना यह बात

इत्तरं दारुकनोटरुळिच्चेय्तु
निद्रयुमोट्टु कुरञ्ञु भगवानुं । ९१
तानतिघोरमाय् चेय्तोरु सत्यवुं
मानमेरीटुन्न वैरिकळ्वीर्यवुं ९२
ताने निरूपिच्चु फल्गुनन् खेदिच्चु
मानसं माळ्कित्तळर्न्नुरङ्ङुंविधौ । ९३
विष्णुभगवान् विरिञ्चादिवन्दितन्
वृष्णिकुलोत्भवन् विश्वंभरावरन् ९४
कृष्णन्तिरुवटितन्नेयुरक्कत्ति-
लुष्णनिश्वासशमनं वरुंवण्णं । ९५
उष्णेतरांशुकुलोत्भवनाकिय-
जिष्णुवुं कण्टितु सङ्कटं तीरुवान् । ९६
शत्रुक्कळेज्जयिच्चीटुवानाशु नां
मृत्युञ्जयनाय रुद्रने वन्दिप्पान् ९७
पोकेन्नु नारायणन् नरन्तन्नोटु
वेगन कैयुं पिटिच्चरुळिच्चेय्तु । ९८
नानानगनगरग्रामराज्यङ्ङळ्
काननौघं नदीजालवुं पिन्निट्टु ९९
कैलासमाकिय शैलोपरि वन्नु
नीलकण्ठन्कळल् कूप्पि स्तुतिचेय्तान्— १००
पर्व्वतमन्दिर ! पार्व्वतीवल्लभ !
दर्व्वीकरवरभूषणभूषित ! १०१

कभी न होगी, इसमें सन्देह नहीं'' । इस प्रकार दारुक से बोले और भगवान् की निद्रा भी कुछ कम हुई । अर्जुन तो अपने घोर शपथ का और अत्यभिमानवाले शत्रुओं के वीर्य का ध्यान करता हुआ दुःखित हुआ और अन्त में थककर सो गया । ८८-९३ तब भगवान् विष्णु, ब्रह्मा आदियों का वन्द्य वृष्णिकुल में उत्पन्न, इन्द्र का अनुज, पूज्य कृष्ण को चन्द्रवंश में पैदा हुए अर्जुन ने अपनी नींद में दुःख दूर करने के लिए देखा ताकि अपना उष्ण निश्वास भी शान्त हो जाय । 'शत्रुओं को जीतने के लिए हम मृत्युञ्जय रुद्र को पूजने चलें' ऐसा नारायण ने नर (अर्जुन) के हाथ पकड़ते हुए कहा । अनेक पर्वत, नगर, ग्राम, राज्य, बन और नदियाँ पार करके कैलाश पर्वत पर पहुँचे और नीलकण्ठ (शिव) के चरणों पड़े और उनकी स्तुति की । ९४-१०० हे पर्वत पर रहनेवाले !

सर्वज्ञ ! सर्व्वलोकेश ! सर्व्वात्मक !
शर्व्व ! शंभो ! महादेव ! देवेश्वर ! १०२
गंगाधर ! हर ! चन्द्रक्कलाधर !
तुंगजटाभार ! कारुण्यवारिधे ! १०३
भस्मविलेपना ! भर्ग्ग ! भयापह !
विस्मयानन्द ! नृत्तप्रिय! त्र्यंबक ! १०४
शङ्कर ! स्थाणो ! गिरीश ! पुरहर !
चेङ्कनलूतूकुन्न फालविचोचन ! १०५
मुण्डमालाधर ! दण्डधरान्तक !
खण्डपरशो ! पशुपते ! धूर्ज्जटे ! १०६
शूलपरशुमुखायुधभीषणा !
नालुवेदप्पोरुळाकुन्न नाथने ! १०७
अस्थिकळ् मुत्तुकळ् नल्ल तळिरुक्-
ळुत्तममायुळ्ळ पुष्पङ्ङळ् मुण्डङ्ङळ्
इत्तरं कोण्टुळ्ळ माल्यविराजित ! १०८
मृत्युञ्जय ! जय ! भीम ! जय ! जय !
मारमदहर ! काळकूटाहार ! १०९
कारणपूरुष ! वारणभञ्जन !
चारणसेवित ! सारसाक्षिप्रिय ! ११०
पाहि नमोनमो पाहि नमोनमो !
देहि वरं परमानन्द ! श्वाश्वतं । १११

पार्वतीवल्लभ ! हे सर्पवर से अलंकृत ! हे सर्वज्ञ ! सर्वलोकेश ! हे सर्वात्मक ! हे शर्व ! शंभो ! महादेव ! देवेश्वर ! हे गंगाधर ! हर ! चन्द्रकलाधर ! हे ऊँची जटावाले ! हे कारुण्यसागर ! हे भस्मविलेपन ! हे भर्ग ! हे भय दूरकरनेवाले ! हे विस्मयानन्द ! हे नृत्तप्रिय ! हे त्र्यंबक! हे शङ्कर ! स्थाणो ! गिरीश ! पुरहर ! लाल-लाल अग्नि निकालनेवाले फाललोचन से युक्त ! हे मुण्डमालाधर ! यम के नाशक ! हे खण्डपरशो ! पशुपते ! हे धूर्जटि ! हे शूल, परशु आदि आयुधों से भीषण ! १०१-१०७ हे चारों वेदों के अर्थस्वरूप नाथ ! हड्डियाँ, मोतियाँ, अच्छे-अच्छे पल्लव, उत्तमोत्तम पुष्प, मुण्ड, इस प्रकार की वस्तुओं की मालाओं से विभूषित ! हे मृत्युंजय ! हे भीम ! तुम्हारा जय हो ! हे मदन के मद को नाशकरनेवाले ! कालकूट विष को खानेवाले ! हे कारणपुरुष ! हे वारणभञ्जन ! हे चरणों का सेवित ! हे पार्वती का प्रिय ! रक्षा करो ! नमोनमः !

भूतिप्रिय ! नमो ! भूतिप्रद ! नमो !
भूतेश ! ते नमो ! भूतकर्त्ते नमो !
भूतभर्त्ते नमो भूतहर्त्त्रे नमो ११२
शान्ताय घोराय दान्ताय शूराय
कान्ताय रुद्राय भर्ग्गाय शर्व्वाय ११३
दक्षान्तकाय ते रक्षाकराय ते
नित्यं नमो नमो नित्यं नमो नमः । ११४
भक्तिपूण्टित्थं वणङ्ङिङ स्तुतिच्चोरु-
पत्माक्षफल्गुनन्मारोंटु शङ्करन् ११५
भक्तप्रियन् परमेश्वरनीश्वरन्
भद्रप्रदन् परमानन्दमुळ्क्कोण्टु- ११६
मन्दस्मितंचेय्तोरिक्कले पुल्कीट्टु
चन्द्रक्कलाधरनेवमरुळ्चेय्तु— ११७
अर्द्धरात्रिक्कुतन्ने गमिच्चीटुवा-
नत्तलुण्टायतेन्तेन्नोटु चोल्लुविन् । ११८
मुग्धविलोचनन्मूलप्रकृतिक्कु
वित्ताय कृष्णनुमप्पोळरुळ्चेय्तु— ११९
अञ्चारु सेनापतिकळोरुमिच्चु
वञ्चिच्चभिमन्युवाय कुमारने- १२०
क्कोन्नानतिनु रिपुक्कळेयोक्कवे
कोन्नोटुक्कीटुवान् तक्कोरु दिव्यास्त्रु । १२१

रक्षा करो नमोनमः हे परमानन्द ! शाश्वत वर प्रदान करो ! हे भूतिप्रिय! नमो ! हे भूतिप्रद ! नमः हे प्राणियों के नाथ ! तुम्हे प्रणाम हो ! हे ! प्राणियो की सृष्टि करनेवाले तुम्हें प्रणाम हो ! हे भूतों का पोषण करनेवाले ! तुम्हें प्रणाम हो । हे भूतों का संहार करनेवाले ! तुम्हें प्रणाम हो । शान्त, घोर, दान्त, शूर, कान्त, रुद्र, भर्ग, शर्व, दक्षान्तक, रक्षकर, तुम्हें नित्य प्रणाम हो, नित्य प्रणाम हो ! १०८-११४ भक्तप्रिय, परमेश्वर, ईश्वर, भद्रप्रद, चन्द्रकला धारण करनेवाले शङ्कर ने, जिसकी इस प्रकार स्तुति की गयी, कमललोचन और फल्गुन से परमानन्द अनुभव करते हुए मुस्कराकर दोनों को साथ आलिङ्गन करते हुए कहा— क्या बात हुई कि आधी रात को दोनों चले आये, यह मुझसे कह दो । मूलप्रकृति का बीजस्वरूप मुग्धविलोचन कृष्ण ने तब कहा— पाँच छः सेनापतियों ने मिलकर वञ्चना करके कुमार अभिमन्यु का वध किया ।

इन्नरुळीटणमॆन्नुण्टु पार्त्थनु
वन्नतुमिप्पोळतिनु जगल्पते । १२२
क्लेशमतु चॊल्लियुळ्ळलुण्टाकाय्क
केशवफल्गुनन्मारे ! पुरैव ञान् १२३
पाशुपतास्त्र कॊटुत्तेन् विजयनु
नाशमरिकळ्क्कतिनालॆ वन्नुपों । १२४
पोयालुमॆन्नभयं कॊटुत्तीटिनान्
मायापतियाय मारारि शङ्करन् । १२५
चॆन्पॊल्त्तळिरटि कुन्पिटुं नेरत्तु
जंभारिनन्दन् कण्टानॊरत्भुतं । १२६
तान् तलनाळतिभक्तिपूण्टॆत्रयुं
शान्तनाय् तन्टॆ नियमविधियिङ्कल् १२७
विष्णुपदत्तिङ्कर्ल्चिचच्च पुष्पङ्ङळ्
विस्मयत्तोटु कण्टानरमौलियिल् । १२८
विष्णुवॆन्नुं शिवनॆन्नुं भुवनत्तिल्
विज्ञानिकळ् परयुन्नतॊरज्ञानं । १२९
कण्टवरॊक्कवे रण्टॆन्नु चॊल्लुवोर्
कण्टवरल्लवरारुमे निर्णयं । १३०
इत्थं निरूपिच्चुरच्चु किरीटियु-
मद्वैतमाकिय धामत्तॆ वन्दिच्चान् । १३१

इसके बदले में सभी शत्रुओं का नाश करने के लिए आज ही आप एक दिव्यास्त्र प्रदान करें। यही पार्थ की इच्छा है। हे जगत्पते, इसी लिए हम लोग आये हैं। ११५-१२२ हे केशव और अर्जुन, यह बात कहते हुए आपको दुःख न हो! मैंने पहले ही अर्जुन को पाशुपतास्त्र दे रखा है। उससे सभी शत्रुओं का नाश हो जायगा। अब आप लोग चलें— ऐसा कहते हुए मायापति मदनशत्रु शङ्कर ने अभय प्रदान किया। (शिवजी के) लाल पल्लव के समान चरणों का प्रणाम करते समय जंभारिनन्दन (अर्जन) ने एक अद्भुत बात देखी। पिछले दिन शान्त होकर बड़ी भक्ति के साथ अपने नियम के अनुसार जो पुष्प विष्णु के चरणों पर चढ़ाये थे उन्हें विस्मय के साथ शिव के शीर्ष पर देखा। इस भुवन में जो विद्वान्लोग विष्णु और शिव की बात पृथक् करते हैं, वह अज्ञान है। १२३-१२९ जिसे देखो वह उनको अलग-अलग बतलाता है। उनमें किसी ने भी देखा नहीं है, इसमें सन्देह नहीं। किरीटी

कृष्णनुं तानुमायिङ्ङु पोऩ्ऩीटिनान्
जिष्णुवुमप्पोळुणर्न्नुपोयी बलाल् । १३२
स्वप्नत्तिलिङ्ङनें कण्टिट्टु फल्गुनन्
कल्पिच्चितु जयमुण्टाय् वरुमॆऩ्ऩु । १३३
कारणनाकिय नारायणन् परन्
पारमायॆन्नुटॆ शंखनादं केट्टाल् १३४
परातॆ तेरु नी कॊण्टुवरिकॆऩ्ऩु
दारुकनोटरुळ्चॆय्तु भगवानुं । १३५
ब्राह्मे मुहूर्त्ते मुकुन्दन्तिरुवटि
साम्यमिल्लात जगल्पति माधवन् १३६
नित्यन् निरामयन् नीतिमानीश्वरन्
नित्यकर्म्मङ्ङळुं चॆय्तुषस्क्कुंविधौ १३७
भक्तनां धर्म्मजन् वाळुऩ्ऩ मन्दिरे
सत्वरं चित्तमोदालॆळुऩ्ऩळ्ळिनान् । १३८
मंगलगीतस्तुतिकळुं वाद्यवुं
शंखनिनादवुं वन्पटनादवुं १३९
दानङ्ङळ् वाङ्ङि वाङ्ङि क्षमादेवक-
ळानन्दनादवुमाशीर्व्वचनवुं १४०
केट्टुकेट्टङ्ङट्टुत्तीटिननेरत्तु
वाट्टंवरातॊरु भक्तियुं मोदवुं १४१
कैक्कॊण्टु सल्क्करिच्चीटिनान् धर्म्मजन् ।
पुष्करनेत्रनुं प्रीतिपूण्टीटिनान् १४२

ने इस तत्त्व को अपने मन में स्थिर कर लिया और अद्वैतधाम की वन्दना की, और कृष्ण के साथ लौटा। तब विष्णु (अर्जुन) जग भी गया। स्वप्न में यह सब देखकर अर्जुन ने समझ लिया कि विजय होगी। कारणभूत पर नारायण ने मेरा (अर्जुन का) ऊँचा शंखनाद सुनने पर 'तुम रथ लेकर आजाओ' ऐसा भगवान् ने दारुक से कहा। १३०-१३५ फिर पूज्य मुकुन्द, निरुपम जगत्पति माधव नित्य, निरामय, नीतिमान् ईश्वर ब्राह्ममुहूर्त में अपने नित्यकर्म करके सबेरे ही भक्त युधिष्ठिर के घर चित्तप्रमोद के साथ जल्दी सिधारे। मंगलगीत और स्तुतियाँ, वाद्यघोष, शंखध्वनि, बड़ी सेना का नाद, दान ले-लेकर जानेवाले ब्राह्मणों का आनन्दनाद और आशीर्वाद सुनते हुए जब निकट पहुँचे तब अटल शक्ति

वासुदेवन् जगन्मंगलन् केशवन् ।
वासवितन्नेत्तळुकियरुळ्चेय्तु— १४३
खेदिक्कवेण्टा जयं वरुं निर्णयं ।
साधिक्कुमेन्नतरि निन्नुटे सत्यवुं । १४४
अंबुजलोचन ! तुंबुरुवन्दित !
कंबुधरामृत ! स्यन्दनानन्दमे ! १४५
अंबिकावल्लभ ! सेवितशाश्वत !
बिंबफलाधर ! चन्द्रबिंबानन ! १४६
कृष्ण ! कृपानिधे ! वृष्णिकुलाधिप !
जिष्णो ! मुरारे ! मधुसूदन ! हरे ! १४७
राम ! रमावरा ! श्यामाभिराम ! मा-
राकार ! सन्मधुरूपाय ते नमः । १४८
निन् कृपयुण्टेङ्किलेन्तोरु सङ्कटं
पङ्कजलोचन ! केट्टरुळेङ्किल् नी १४९
निद्रयिल् ञान् निन्तिरुवटितन्नोटुं
रुद्रनेक्कण्टु वरं वरिच्चीटिनेन् । १५०
त्वत्पदाब्जार्च्चितपुष्पङ्ङळोक्कयुं ।
तत् पदांभोजं नमस्करिक्कुंविधौ १५१
शंभुतन् मौलियिल् कन्टु तेळिञ्ञु ञान् ।
किं परं विस्मयं तन्पुराने ! हरे ! १५२

और प्रमोद के साथ युधिष्ठिर ने स्वागत सत्कार किया। और पुष्करनेत्र, वासुदेव, जगन्मंगल केशव की प्रीति हुई। वासवि (अर्जुन) को छाती से लगाते हुए कहा— खेद मत करो। विजय अवश्य होगी। जान लो कि तुम्हारा शपथ सत्य निकलेगा। १३६-१४४ हे अंबुजलोचन ! हे तुंबुरुवन्दित ! हे कंबुधरामृत ! स्यन्दनानन्द ! हे लक्ष्मीवल्लभ ! शाश्वत का सेवन करनेवाले ! बिंबफल के समान अधरवाले ! चन्द्रबिंब के समान मुखवाले ! हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे कृपानिधे ! हे वृष्णिकुल के नाथ ! हे जिष्णो ! मुरारे ! मधुसूदन ! हरे ! राम ! रमावर ! श्यामाभिराम ! मदनाकार ! सन्मधुस्वरूप तुम्हें प्रणाम हो ! तुम्हारी कृपा हो तो दुःख कहाँ ? हे पङ्कजलोचन ! तनिक सुन लो ! नींद में मैंने आप पूज्य के साथ रुद्र का दर्शन किया और वर प्राप्त किया। आप के चरणों में जो मैंने पुष्प अर्पित किये थे उनको रुद्र के चरणों की वन्दना करते समय उनकी मौलि पर देखकर मैं प्रसन्न हुआ ! हे

स्वप्नप्रकारङ्ङळोक्कप्परञ्ञुटन्
चिल्पुरुषङ्कलुरप्पिच्चु मानसं । १५३
अर्ज्जुनन् निल्क्कुन्ननेरत्तु धर्म्मजन्
पिच्चयल्लेतुमतोन्नरुळिच्चेय्तान्— १५४
अच्युतनुं पुनरन्तकवैरियुं
निश्चयं चिन्तिक्किलोन्नेन्नरिक नी । १५५
वैकरुतेतुमुदिच्चितु भास्करन् ।
वैरिकळ् वन्नोरुमिच्चाररिकेटो । १५६
इन्नु चेरुतु कलहमुण्टाय्वरुं ।
निर्ण्णयमिन्ननाळेप्पोलेयल्लेटो । १५७
पिन्नेयुं चोन्नान् धनञ्जयन् निल्क्कुन्न
मन्नवन्मारोटुमग्रजन्मारोटुं— १५८
उग्रनायुळ्ळ गुरुविनु सत्यमु-
ण्टग्रजनां मम धर्म्मतनयने १५९
युद्धत्तिलेत्तिप्पिटिच्चु कोट्टीटुवान्
चित्तत्तिलुण्टिन्निनिक्कोरु सकङ्कटं । १६०
अग्निक्कु बन्धुवां वायुतन्पुत्रनु-
मग्नियिलुत्भविच्चोरु पाञ्चालनुं १६१
सात्यकियुं महावीररां मट्टुळ्ळ- ।
धात्रीपतिकळुमोक्कयोरुमिच्चु १६२

प्रभो ! हे हरे ! इससे बढ़कर आश्चर्य की बात क्या है ? १४५-१५२ स्वप्न की सारी बातें सुनाकर चित्पुरुष में अपने मन को स्थिर किया। जब अर्जुन इस प्रकार की बात करता हुआ खड़ा था तब युधिष्ठिर ने कहा— "इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अच्युत (विष्णु) और अन्तक-वैरि (शिव) विचार करने पर दोनों एक हैं, जान लो। अब विलम्ब न करना, सूर्योदय हो गया। शत्रु आकर इकट्ठा हो गये। आज निस्सन्देह एक छोटा युद्ध होनेवाला है। पिछले दिनों के समान नहीं है"। अर्जुन ने उपस्थित राजाओं और बड़े भाइयों से फिर कहा— "उग्र गुरु ने शपथ किया है मेरे बड़े भाई युधिष्ठिर को युद्ध में पकड़कर बाँधने का। इससे मेरे चित्त में बड़ा दुःख है। १५३-१६० अग्नि के बन्धु वायु का पुत्र, अग्नि में उत्पन्न पाञ्चाल, सात्यकि, अन्य महावीर भूपाल, ये सब मिलकर तंबू के चारों ओर मेरे ज्येष्ठ की रक्षा के लिए

कैनिलचुट्टुमेन् ज्येष्ठनेक्कात्तुकों-
ण्टैकमत्यत्तोट्टु निल्पिनेल्लावरुं । १६३
मुट्टुं मुकुन्दन् तुणयुळ्ळ ञानेन्नि-
मट्टारुमिन्नु करुतायक पोरिनाय् । १६४
कोट्टवनाय नृपने रक्षिक्कण-
मुट्टवरायवरिन्नेक्कु सर्व्वरुं । १६५
तेरिनारङ्ङनेयामेन्नु सर्व्वरुं
तेरेरिनार् नरनारायणन्मारुं । १६६
देवासुरोरगसिद्धविद्याधर-
गन्धर्व्वकिन्नरकिम्पुरुषादियुं १६७
यक्षरक्षोगणचारणगुह्यक-
प्रेतभूतादियुमप्सरस्त्रीकळुं १६८
अंबरमार्ग्गे विमानङ्ङळेरिनार्
तुंबुरुनारदन्मारुमुळरिनार् । १६९
भेरिपटहशंखादिकळ्नादवुं
शूरन्मारायवर्सिंहनादङ्ङळुं १७०
तेरुरुळ्नादं चेरुञाणोलिकळुं
वारणन्मारुटे गर्ज्जितघोषवुं १७१
चारुतुरगाळिहेषारवङ्ङळुं
नारदवीणामनोहरनादवुं १७२
ओक्कवे पोङ्ङि मुळङ्ङिच्चमकयाल्
दिग्गजङ्ङळ्क्कु चेविनुमटच्चिते । १७३

ऐकमत्य से खड़े हो जायँ। मुकुन्द की संपूर्ण सहायता मुझे प्राप्त है, आज युद्ध में और किसी की प्रतीक्षा न की जाय। और सबको चाहिये कि वे आज विजयी राजा की रक्षा करें। सबने स्वीकार किया कि ऐसा ही होगा और नर और नारायण रथ पर चढ़े। १६१-१६६ देव, असुर, उरग, सिद्ध, विद्याधर, गन्धर्व, किन्नर, किंपुरुष आदि, यक्षों और रक्षों के गण, चारण, गुह्यक, प्रेत, भूत आदि, अप्सराएँ आकाशमार्ग में विमान पर चढ़े और तुंबुरु और नारद जल्दी करने लगे। भेरी, पटह, शंख आदियों का नाद, शूरों का सिंहनाद, रथों के घूमने का नाद, ज्याघोष, हाथियों के गरजने का नाद, दर्शनीय घोड़ों का हेषारव, नारद की वीणा का मनोहर नाद, ये सब उठे और गूँजने लगे जिसके फलस्वरूप दिग्गजों

कल्पान्तकालत्तु सप्तसमुद्रङ्ङ-
ळुळ्भ्रान्तिकैक्कोंण्टलरुन्नतुपोले । १७४
घोरघोरमिरुभागवुं वन्पट-
वारिधिपोलें परन्नुचमञ्ञुते । १७५
सूचीसरसिजव्यूहं चमच्चुकों-
ण्टाचार्यनाय भरद्वाजनन्दनन् १७६
निर्त्तिनान् दक्षिणभागत्तु वन्पट
चित्रमायोरु शकटाह्वयव्यूहं । १७७
इत्थमुरप्पिच्चु वामभागे तथा
चित्तमुरप्पिच्चु रण्टुकूट्टत्तिनुं १७८
मद्ध्ये महारथंतन्निलाचार्यनुं
क्रुद्धनाय् विल्लुं धरिच्चुनिन्नीटिनान् । १७९
युद्धनिलमायोंराकाशमोंक्कवे
हस्त्यश्वपत्तिमयङ्ङळाय् मेघङ्ङ- १८०
ळोंत्तु परन्नतुनेरत्तु धूळियाल्
मित्रबिंबं मरञ्ञीटुंदशान्तरे । १८१
दिक्कुकळोंक्कवे ञेट्टुमारङ्ङने
वेट्टुमिटिकळ्पोलें पटहङ्ङळुं । १८२
सन्नद्धरायुळ्ळ वीरर् कैवाळाय-
मिन्नल्प्पिणरुकळ् मिन्नुन्ननेरत्तु । १८३

के कान बन्द हो गये। १६७-१७३ जैसे कल्पान्त के समय सातों समुद्र क्षुब्ध होकर गरजते हैं उसी प्रकार दोनों घोर सेनायें सागर के समान चारों ओर फैल गयीं। आचार्य भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने सूचीव्यूह और पद्मव्यूह बनाकर अन्त में दक्षिणभाग में अपनी सेना को चित्र शकटव्यूह बनाकर खड़ी कर दी। बायें ओर भी इसी प्रकार अपनी सेना स्थिर कर दी। तदनन्तर दृढ़निश्चय करके दोनों सेनाओं के बीच में आचार्य क्रुद्ध होकर धनुष लिये महारथ पर खड़े हो गये। सारा आकाश युद्धभूमि बन गयी जिसमें हाथी, घोड़े और पैदल सैनिक ही मेघ थे। १७४-१८० जब वे सब फैले तो धूल के कारण सूर्यबिंब ढक गया। सारी दिशाओं को कँपाने योग्य बादलों की गरज के समान पटह ध्वनित हो उठे। युद्ध के लिए सन्नद्ध वीरों के खड्ग बिजली की कड़क के समान चमकने लगे। तब कुछ लोगों ने आँखें बन्द कर लीं। इन्द्रधनुष ही उसके चाप थे

कण्णुकळ्तङ्ङळ्ळैच्चिम्मुन्तितु चिलर्
चापङ्ङळाय् मिकुमिन्द्रचापङ्ङळु
बाणङ्ङळायुळ्ळ धारावरिषवुं । १८४
चोरयायुळ्ळोरु वारिप्रवाहवुं ।
पॆय्तुपॆय्तोक्क निरञ्ञु नदिकळा-
योरोवळियॆयोलिक्कुन्ननेरत्तु । १८५
वक्त्रङ्ङळाकिय पत्मङ्ङळुण्टतिल्
केशङ्ङळाकिय शैवलपूरवुं । १८६
हस्तपादङ्ङळायुळ्ळ मत्स्यङ्ङळुं
हस्तिकळायुळ्ळ पाषाणजालवुं । १८७
चित्तमायुळ्ळोरु शंखुमुत्तादियुं
मद्धयेयोळुकुन्न चोरप्पुळ कण्टु
चित्रं ! विचित्रं ! विचित्रमॆन्नू जनं ! १८८
दुश्शासननॆतिर्त्त्य्तानवनॆयुं
विश्वैकवीरन् विजयन् जयिच्चितु ।१८९
शस्त्रङ्ङळ्कॊण्टभिवाद्यवुंचॆय्तु त-
न्नुळ्ळतापमॆल्लामरियिच्चतुनेरं १९०
तोट्पोलेयोळिच्चु गुरुवीरनुं ।
मट्लरोटॆतिर्त्तू कुरुवीरनुं ।१९१
कॊन्नुकॊन्नॊक्कयॊटुक्कुन्नतु कण्टु
पिन्नॆयुं द्रोणरॆतिर्त्तानतुनेरं ।१९२

और वर्षधारा ही उसके बाण थे। रक्तप्रवाह ही उसका जलप्रवाह था। रुधिर बरस-बरस कर भर गया और नदी बनकर इधर-उधर बहने लगा। वहाँ जो मुख थे वे ही कमल थे, जो केश था वही शैवल (सेवार) बना। हाथ पैर ही वहाँ के मत्स्य थे और हाथी ही वहाँ के पाषाण थे। चित्तरूप शंख और मोती और बीच में बहनेवाली रक्तनदी को देखकर लोगों ने कहा— हा ! चित्र ! विचित्र ! । १८१-१८८ तब दुश्शासन ने उसका सामना किया पर विजय (अर्जुन) ने उसको हरा दिया। जब अर्जुन ने शस्त्रों के द्वारा अभिवादन करके अपने दुःख को अवगत किया तब गुरुवीर पराजित के समान हट गये। पर कुरुवीर ने शत्रुओं का सामना किया। सबको मारे जाते देखकर द्रोण फिर लड़ने आये। कुछ लड़कर फिर चले गये। तब हार्दिक्य ने भिड़कर सामना किया और

ऒट्टु युद्धंचय्तु पिन्नेयुं पोयितु ।
मुट्टिच्चेतिर्त्तितु हार्द्दिक्यनन्नेरं । १९३
अय्तु तलयुमरुत्तु धनञ्जय-
नेय्तु शरङ्ङळ् वरुणात्मजनप्पोळ् । १९४
छत्रद्ध्वजाश्वङ्ङळेल्लामतुनेरं
वृत्रारिपुत्रन् कळञ्ञोरनन्तरं । १९५
तेट्टेन्नोरु गद कैक्कोण्टटुत्तव-
नेट्टिनान् कृष्णनेयप्पोळ् विजयनुं १९६
कण्ठवुं कैयुमोरन्पाल् मुरिच्चतु-
कण्टटुत्तीटिनान् कांबोजनन्नेरं १९७
अन्तकन्वीट्टुपुक्कान् पोरुतेट्टवु-
मन्तिके निन्न पटयोट्टुकूटवे । १९८
पिन्ने श्रुतायुराख्यन् नृपनेट्टितु
कौन्तानरनिमिषं कोण्टवनेयुं । १९९
अप्पोळवन्तन्ननुजनुं कोपिच्चु
मुल्पुक्कॆतिर्त्ततु कण्टाशु पार्त्थनुं २००
तल्बलौघत्तोटुकूटवे कोपिच्चु
कैल्प्पोटु बाणङ्ङळेय्तुकोन्नीटिनान् । २०१
ऎन्नेयॆन्नेक्कोल चेय्युन्नुतर्ज्जुन-
नेन्नरिवीररोळिच्चु वाङ्ङीटिनार् । २०२
धार्त्तराष्ट्रन् पेरिकार्त्तनाय् द्रोणर्तन्
काल्त्तळिरन्पोटु वन्दिच्चु चोल्लिनान्— २०३

धनञ्जय ने उसका सिर काट डाला। उस समय वरुणपुत्र ने अपने तीर चलाये। अर्जुन के अपने छत्र, झण्डा और घोड़ों के खोने के बाद, वह एक गदा लिये निकट पहुँचा,। १८९-१९५ और कृष्ण को मारने लगा। तब अर्जुन ने एक बाण से उसका कण्ठ और हाथ काट डाला। यह देखकर काम्बोज आगे बढ़ा और तीव्र युद्ध करके अपनी सेना के साथ यमराज के घर पहुँच गया। तदनन्तर श्रुतायु नामक राजा आगे बढ़ा और आधे निमेष में वह भी मारा गया। तब उसका छोटा भाई क्रुद्ध होकर सामने आया। यह देखकर अर्जुन ने भी कोप में आकर तीर चला चलाकर उसकी सेना के साथ उसका वध किया। 'अर्जुन मेरी हत्या करेगा' ऐसा समझकर शत्रुवीर एक-एक करके हटने लगे। १९६-२०२

कात्तु जयद्रथनुतन्नेयुमेन्नेयुं
पात्थंभयं तीर्त्तु रक्षिक्ककवेणम । २०४
शत्रुक्कळेक्कोन्नु राज्यं तरुवति-
नुळ्ळत्तारिलिप्पोळ् मटिक्कायक्कवेणमे । २०५
द्रोणर् कवचं जपिच्चु कोटुत्तितु
मानियायुळ्ळ सुयोधननन्नेरं । २०६
खाण्डवं पुक्कोरु पावकनेप्पोले
पाण्डवसेन दहिप्पिच्चिताचार्यन् । २०७
गाण्डीवधन्वावु पोयितोरुवळि
वेण्टू जयद्रथनेक्कण्टुकोळ्ळुवान् । २०८
अन्नेरमेङ्ङुनिन्नेन्नरिञ्ञील पो-
न्नुन्नतनाय धृष्टद्युम्ननुं वन्नान् । २०९
द्वन्द्वयुद्धत्तिल् मरिच्चार् पल नृप-
रान्दोळितमायितन्नेरमाहवं । २१०
सोमकपाञ्चालभूपतिवीरन्मार्
कार्मुकिल् पेमळ तूकुन्नतुपोले । २११
बाणं पोळिञ्ञङ्ङटुत्तारतुनेरं
द्रोणरुटे पट कोट्टु पाञ्ञू तुलों । २१२
वन्पनायीटुं द्रुपदनुं चापिकळ्
मुन्पनामाचार्यनुं पोरुतोरु पो- २१३

दुर्योधन बहुत दुःखित हुआ और द्रोणजी के चरणों पर प्रेम से पड़कर बोला। "जयद्रथ को और मुझे आप देखते रहें और अर्जुन से हमारी रक्षा कीजिये। शत्रुओं का नाश करके राज्य मुझे दिलाने में आप कृपया न हिचकें।" तब द्रोण ने मानी सुयोधन को एक कवच मन्त्रपूत करके दिया। खाण्डववन में घुसे अग्नि के समान आचार्य ने पाण्डवसेना को जलाया। गाण्डीवधन्वा (अर्जुन) जयद्रथ की खोज में एक ओर चला। तब, न मालूम कहाँ से, उन्नत धृष्टद्युम्न वहाँ पहुँचा। २०३-२०९ अनेक वीर द्वन्द्वयुद्ध में मरे और उस समय युद्ध अतीव तुमुल हुआ। सोमक और पाञ्चाल के भूपतिवीर, काले-काले मेघ जैसे धाराप्रवाह बरसते हैं, वैसे ही शरवर्षा करने लगे और द्रोण की सेना भागने लगी। शक्तिशाली द्रुपद और धानुष्कों में श्रेष्ठ आचार्य का आपस में जो युद्ध हुआ उसे देखकर देवगण प्रसन्न हुए और उन्होंने प्रशंसा की। तुंबुरु

रुन्परुं कण्टु तॊऴिन्नु पुकऴ्त्तिनार्
तुंबुरुनारदन्मारुं पुकऴ्त्तिनार् । २१४
वाळुमायेट्टमटुत्तितु पाञ्चालन्
बाणङ्ङळ् मॆय्यिल् निरच्चिचताचार्यनुं । २१५
कॊल्लुन्नतुण्टॆन्नुरच्चु गुरुवरन्
विल्लुं कुऴियॆक्कुलच्चु वलिच्चुटन् २१६
निल्लुनिल्लॆन्नणञ्ञीटुन्ननेरत्तु
मल्लारितन् प्रियनाकुन्न शैनेयन् २१७
किञ्चन चञ्चलमॆन्निये चॊल्लिना-
नञ्चियोटुन्नवनल्लॆन्नरिञ्ञालुं । २१८
अत्र वैदग्ध्यमुण्टाकिलो नम्मिलु-
मित्तिरिनेरं पॊरुते मतियावू । २१९
कॆल्पोटिवण्णं पऱञ्ञाशु सात्यकि
मुल्प्पुक्कॆतिर्त्ततु कण्टु गुरुवरन्२२०
अस्त्रङ्ङळ् शस्त्रङ्ङळ् नाराचपङ्क्तिक-
ळर्द्धचन्द्राकारमायुळ्ळ बाणङ्ङळ् २२१
इत्तरं कोरिच्चॊरिञ्ञुतुटङ्ङिना-
नत्तरंतन्नॆ युयुधानननुमॆय्तान् । २२२
मुग्धविलोचनभृत्यप्रवरनुं
क्षत्रकुलान्तकशिष्यप्रवरनुं २२३

और नारद ने भी स्तुति की। जब तलवार लेकर पाञ्चाल निकट पहुँचा तब आचार्य ने उसको शरों से भर दिया। २१०-२१५ जब वध करने का निश्चय करके गुरुवर अपने धनुष की ज्या को खींचते हुए 'ठहरो' 'ठहरो' कहकर निकट पहुँचे तब मल्लारि (कृष्ण) का प्रिय शैनेय (सात्यकि) ने बिना चाञ्चल्य के कहा— "समझ लो कि डरकर भागनेवाला नहीं हूँ। अगर इतना वैदग्ध्य है तो थोड़ी देर मेरे साथ भी युद्ध हो जाय, तभी मैं सन्तुष्ट हूँगा"। इस प्रकार सोत्साह कहते हुए आगे बढ़कर सामना करते देखकर गुरुवर ने उस पर अस्त्रों, शस्त्रों, तीरों और अर्धचन्द्र के आकारवाले बाणों की वर्षा करना प्रारम्भ किया और युयुधान (सात्यकि) ने भी उसी प्रकार किया। २१६-२२२ मुग्धविलोचन (कृष्ण) का भृत्यप्रवर (सात्यकि) और क्षत्रकुलान्तक (परशुराम) का शिष्यप्रवर (द्रोण) दोनों बद्धवैर होकर एक दूसरे के निकट खड़े हुए

बद्धवैरत्तोटट्टुत्तुनिन्नङ्ङनॆ
युद्धं भयङ्करमाय्वन्ननेरत्तु । २२४
शुद्धनखण्डन् जगत्परिपूर्णनां
दुग्धांबुराशितिरुमकळ्वल्लभन् २२५
आशु जयद्रथनॆक्कॊलचॆय्यवति-
नाशुगवेगत्तिलाशु तेरोटिच्चान् । २२६
शक्तिकळ् वज्रङ्ङळ् चक्रङ्ङळ् शूलङ्ङळ्
शस्त्रङ्ङळस्त्रङ्ङळुं गदाजालवुं २२७
उग्रङ्ङळाय मुसलङ्ङळॆन्निव
निग्रहिक्केणमवनॆयॆन्नोन्निच्चु २२८
शक्रनुनेराय विक्रममुळ्ळवन्
शक्रात्मजनुनेर् तूकित्तुटङ्ङिनान् । २२९
खण्डिच्चु खण्डिच्चतॊक्कक्कळिच्चॊरा-
खण्डलनन्दनन् चॆल्लुन्ननेरत्तु २३०
विन्दनुमूक्कुळ्ळनुविन्दनुंकूटि
मन्देतरमॆय्यतट्टुत्तारतुनेरं । २३१
इन्द्रात्मजन् कॊलचॆय्तानवरॆयु-
मिन्दिरावल्लभनोटथ चॊल्लिनान्— २३२
पैदाहमुण्टु कुतिरकळ्क्कॆट्टवुं
कैतवमिल्लात कारुण्यवारिधे ! २३३

और उनका भयङ्कर युद्ध हुआ। उस समय शुद्ध, अखण्ड, जगत्परिपूर्ण, क्षीरसागर की पूज्य पुत्री के वल्लभ (विष्णु, कृष्ण) ने जयद्रथ का वध कराने के लिए अपने रथ को जल्दी वेग से चलाया। तब शक्र के समान विक्रमवाले ने शक्रात्मज (अर्जुन) के ख़िलाफ़ शक्ति, वज्र, चक्र, गदायें, उग्र मुसल, ये सब एक साथ छोड़े, इस इरादे से कि अब इसका निग्रह करना चाहिये। २२३-२२९ जब आखण्डलनन्दन (अर्जुन) ने उन सबको खण्डित करके नष्ट कर दिया तब विन्द और शक्तिशाली अनुविन्द ज़ोर से बाण छोड़ते हुए निकट पहुँचे। इन्द्रात्मज (अर्जुन) ने उनका भी वध किया और इन्दिरावल्लभ (कृष्ण) से कहा— "हे निष्कपट कारुण्य के सागर! घोड़ों को भूख और प्यास लग रही है। उनके हाथ पैर थके हैं और चल नहीं पा रहे हैं, इसलिए युद्ध भी कुछ बिगड़ रहा है। पानी पिलाकर उनकी थकावट दूर करने पर ही सोत्साह

कैकाल् तळर्न्नु नटक्कुन्नतिल्लेतुं
वैकार्यमुण्टतुकोण्टु रणत्तिनुं । २३४
तण्णीर् कोंटुत्तु तळर्च्चं केटुक्किले
सन्नाहमोटु पोर्चेय्तुकूटू दृढं । २३५
अेन्नु परञ्ञु शरौघं प्रयोगिच्चु
नन्नाय् कुळिच्चु पानीयमुण्टाक्किनान् । २३६
अेन्नतु कण्टु मुकुन्दन्तिरुवटि
पन्नगशायि परन्पुरुषन्तानु- २३७
मश्वङ्ङळेत्तोळियिच्चु तेर् पूट्टिनान्
विश्वंभरन् निज भक्तजनप्रियन् । २३८
पारिल् निन्नीटुं धनञ्जयनेक्कण्टुं
तेरिलेकाकियां सारथियेक्कण्टुं २३९
पारमटुत्तु महारथन्मारेल्लां ।
पोरिनु पार्क्करुतिप्पोळरिकेन्नु । २४०
छिद्रमिदमिति छिद्रमिदमिति
विद्रुतं तूकिनारायुधपंक्तिकळ् । २४१
पौरवयादवन्मारे वधिक्केन्नु
कौरववीररुमोत्तु कूटीटिनार् । २४२
नागद्ध्वजनुं पोरुतितु पारमाय्
वेगमोटेट्मटुत्तितु पार्थनुं । २४३
नागारियेक्कण्ट नागङ्ङळेप्पोले
नागद्ध्वजादिकळ् नालपाटुमोटिनार् । २४४

युद्ध किया जा सकेगा, इसमें सन्देह नहीं।" ऐसा कहकर और शरों के ढेर का प्रयोग करके भूमि खोदी और पानी निकाला। २३०-२३६ यह देखकर पूज्य पन्नगशायी, परपुरुष, विश्वंभर, भक्तजनप्रिय मुकुन्द ने घोड़ों को खोल दिया और रथ को अलग किया। अर्जुन को पृथ्वी पर खड़ा देखकर और रथ पर सारथि को अकेला देखकर सभी महारथ उनके निकट पहुँच गये। "अब युद्ध करने में विलम्ब न होना चाहिये, अब छिद्र मिल गया, अब छिद्र मिल गया", ऐसा कहते हुए उन्होंने आयुधवर्षा की। "पौरवों और यादवों को मारो" ऐसा चिल्लाते हुए कौरववीर इकट्ठा हुए। नागध्वज (सुयोधन) भी अच्छा लड़ा। तब पार्थ भी वेग से निकट पहुँचा। २३७-२४३ दुर्योधन

चेन्नु जयद्रथन् निल्क्कुन्न दिक्कति-
लोन्नोळियातेयुऱच्चितु कौरवर् । २४५
पारमट्टुत्तु महारथन्मारोटु
घोरमायर्ज्जुनन्तानुं पोरुतितु । २४६
कोलाहलमाय् चमञ्ञु कलहवु
तोलातवण्णं पोरुतारिकळु । २४७
पारमुयन्नु कोटिकोटिक्कूऱयुं
पोराळिकळुटे विल्लिन् कोटुमयुं । २४८
आलवट्टङ्ङळुं वेण्चामरङ्ङळुं
चालत्तेळिक्कटञ्ञुळ्ळ कुन्तङ्ङळु २४९
तिक्कियोरु निलत्तोक्कयोरुमिच्चु
निल्कुन्ननेरत्तु फल्गुनबाणङ्ङळ् २५०
मामलमेल् मऴ तूकुन्नतुपोले
तूमकलर्न्नु पोऴिञ्ञुतुटङ्ङिनान् । २५१
कालुं करङ्ङळुं तोळुं तुटकळु
मारुं वयरुं कऴुत्तुं तलकळुं २५२
आयुधजालवुमाभरणङ्ङळुं
कोट्क्कुटकळ् तऴकळ् कोटिमरं २५३
कुट्मिल्लात कोटिक्कूऱचिह्नवुं
चुट्टुं चुऴन्नीटुमालवट्टङ्ङळु- २५४

आदि चारों ओर भागे जैसे गरुड़ को देखकर सर्पगण भागते हैं। अर्जुन तो वहीं गया जहाँ जयद्रथ था और एक नहीं छूटा, सभी कौरव जमकर खड़े हो गये। अर्जुन महारथियों के पास पहुँच गया और उनके साथ घोर युद्ध हुआ। अब सारा युद्ध कोलाहल हो गया। शत्रुओं से बिना हार माने लड़ा। खंभा और झण्डा बहुत ऊँचा दिखाई दिया और योद्धाओं के धनुष देखने में भयङ्कर थे। तालवृन्त और सफ़ेद चँवर अच्छे रगड़े गये और चमकनेवाले कुन्त सब जब स्थान पर इकट्ठा हो गये तब अर्जुन, अपने बाण गिरिशिखर पर वर्षा के गिरने के समान आवेग के साथ गिराने लगा। २४४-२५१ पैर, हाथ, कन्धे, जाँघ, छाती, पेट, गरदन, सिर, आयुधों के ढेर, आभूषण, राजाओं के छत्र, मोरछल, झंडे के खंभे, दोषरहित झंडे, चारों ओर घूमनेवाले तालवृन्त, इन सबके नष्ट होकर गिरने से रणभूमि भर गयी। रक्त की बूँदें गिरकर बहने लगीं।

मट्टु वीणु निऱन्नू रणाङ्कण-
मिट्टिवीळुन्न चोरयॊलिक्कयुं । २५५
मुट्टिनिन्नीटुन्न पट्लर्तम्मोटु
चुट्टुं चुळन्नु पॊरुतु धनञ्जयन् । २५६
धर्म्मसुतनुं भरद्वाजपुत्रनुं
तम्मिल् पॊरुति तुलञ्ञु युधिष्ठिरन् । २५७
भीमनतुकण्टुळऱियट्टुत्तप्पोळ्
भीमान्तकसममायितु युद्धवुं । २५८
किर्म्मीरनन्दननाकिय राक्षसन्
निर्म्मरियादप्पॆरुमाळतुनेरं २५९
भ्रातावितेयुं पितावितेयुं कॊन्न
वातात्मजनोटु पाञ्ञटुत्तीटिनान् । २६०
तॆट्टॆन्नटुत्तितु मारुतपुत्रनुं
चॆट्टु पोर्चॆय्ताशु तोट्टु निशाचरन् । २६१
निल्लॆन्नणञ्ञु पोर्चॆय्तिताचार्यनुं
कॊल्लॆवनॆङ्किल् ञानॆन्नु घटोल्क्कचन् । २६२
चॊल्लुळ्ळु द्रोणरोटार्त्तटुत्तीटिनान्
विल्लॆमायाचार्यनुमटुत्तीटिनान् । २६३
चॆट्टु वलञ्ञिताचार्यनतुकण्टु
तॆट्टॆन्नटुत्तितु किर्म्मीरपुत्रनुं । २६४
तेरुं कुटयुं कॊटियुं कुतिरयुं
पोरिलळिञ्ञितु विल्लुं मुऱिञ्ञितु । २६५

अर्जुन ने तो एक होकर खड़े शत्रुओं के साथ युद्ध किया। धर्मपुत्र और भरद्वाजपुत्र आपस में लड़े और धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) हारा। यह देखकर भीम चिल्लाता हुआ निकट पहुँचा और उनका युद्ध शिव और यम के युद्ध के समान हुआ। २५२-२५८ किर्मीर का पुत्र वह राक्षस, निर्मर्यादा का बड़ा पुजारी, अपने भाई और पिता के नाशक भीम के पास दौड़कर पहुँचा। तुरन्त ही मारुतपुत्र भी आगे बढ़ा। कुछ युद्ध करने के बाद निशाचर हार गया, तब डटकर आचार्य लड़े। "तो फिर मैं मार डालूँगा," ऐसा कहकर घटोत्कच विख्यात द्रोण के पास सिंहनाद करता हुआ पहुँचा। धनुष लेकर आचार्य भी आगे बढ़े। जब आचार्य कुछ थके तो तुरन्त ही किर्म्मीरपुत्र उनके पास पहुँचा। रथ, छत्र, झण्डा,

रण्टु परिषय्क्कुमप्पोळतुकण्टु
कॊण्टाटिनार् कण्टुनिन्नवरॊक्कवे । २६६
वाळुं परिचयुमायिट्टिरुवरुं
चीळॆन्नु पॊङ्ङिनाराकाशवीथियिल् । २६७
चित्रयुद्धं चॆय्तु चत्तितलंबुसन्
चित्तवुं चत्तितु कौरवर्क्कन्नेरं । २६८
पार्त्थनुं मट्टुळ्ळ तेराळिवीररुं
पेर्त्तु पिरियातणञ्ञु पॊरुन्नेरं । २६९
पोर्क्कळंतन्निल्निन्नार्क्कुन्न घोषवुं
वाय्क्कुन्न पांचजन्यत्तिन् निनादवुं २७०
ब्रह्माण्डमॆल्लां कुलुङ्ङपटि केट्टु
निर्म्मलनाकिय धर्म्मात्मजन् चॊन्नान्— २७१
पङ्कजलोचनन्तन् करतारिले
शंखनादमता घोषिच्चु केळ्क्कुन्नु । २७२
शङ्कवॆटिञ्ञु तॆळिञ्ञरिवाहिनि
हुङ्कारमोटुकूटार्क्कयुमुण्टल्लो । २७३
सङ्कटमेतानुमॆन्टॆयनुजनु
संभविच्चू पुनरिल्लॊरुसंशयं । २७४
नाशं वरातॆ पटयुमायिप्पॊळॆ
नी चॆन्नरिञ्ञु वरिक शिनिसुत ! २७५

घोड़ा—सब युद्ध में अलग-अलग हो गया और धनुष दोनों ओर टूटा। यह देखकर सभी प्रेक्षकों ने प्रशंसा की। २५९-२६६ तलवार और चर्म लिए दोनों झट से आकाशवीथी में उठे। चित्रयुद्ध करने के बाद अलंबुष (किर्मीरपुत्र) मरा और कौरवों का चित्त भी मरा। अर्जुन और अन्य रथिवीर जब पीड़ित होकर लगातार युद्ध कर रहे थे, तब निर्मल युधिष्ठिर युद्धभूमि से निकलती चिल्लाहट को और बजाये जानेवाले पांचजन्य के निनाद को जो सारे ब्रह्माण्ड को कँपाता था, सुनकर बोला। "श्रीकृष्ण के हाथ के शंख का घोष अब सुनाई दे रहा है। और शत्रुसेना अब भय कम होने के कारण प्रसन्न है और सब एक होकर हुंकार के साथ चिल्ला रही है। २६७-२७३ इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मेरा छोटा भाई (अर्जुन) संकट में है। हे सात्यकि ! कुछ नाश हो जाने के पहले ही तुम सेना के साथ चले जाओ और मालूम करके आओ।"

धर्म्मजन् चॊन्नतु केट्टु चॊल्लीटिनान्
निर्म्मलनाकिय सात्यकिवीरनुं । २७६
बन्धिच्चुकॊळ्ळुवान् तक्कवुं पार्त्तु पा-
र्त्तन्तणनाकुमाचार्यनिरिक्कुन्नु । २७७
ञङ्ङळ् चिलरतु कण्टुनिल्क्केणमॆ-
न्निङ्ङने चिन्तिच्चु पोकाञ्ञतु नटे । २७८
पार्त्थनु सङ्कटमुण्टाकयिल्लुळ्ळि-
लोर्त्तिटुकच्युतन्तन्टॆ चरित्रङ्ङळ् । २७९
ऎन्नु शिनिसुतन् चॊन्नतु केट्टाशु
मन्नवन् धर्म्मजन् पिन्नेयुं चॊल्लिनान्— २८०
ऎन्नॆक्कुरिच्चॊरु वात्सल्यमुण्टॆङ्कि-
लॆन्नुटॆ कृष्णधनञ्जयन्मारॆ नी २८१
चॆन्नरिकॆन्नुळ्ळ निर्ब्बन्धवाक्कु के-
ट्टन्नेरमात्मोपमनाय सात्यकि २८२
घोरमायुळ्ळ पटयुमाय् वेगेन
पोरिनु नेरे पुरप्पॆट्टु चॆल्लुन्पोळ् । २८३
ऎट्टं मरुतलयॆक्कॊलचॆय्तपो-
रूट्टमुळ्ळाचार्यनॆय्तटुत्तीटिनान् । २८४
तोट्टु गुरुवरनॆन्ने परञ्ञेण्टु
पोट्टिविळिच्चितु भोजनरेन्द्रनॆ । २८५

निर्मल वीर सात्यकि युधिष्ठिर की बात सुनकर बोला। "आपको बाँधने के लिए यह ब्राह्मण आचार्य मौका देख रहा है। हम कुछ लोगों को यहाँ रखवाली करना चाहिये यह समझकर हम पहले ही न गये। अर्जुन को कोई संकट नहीं होगा। कृष्ण के चरित्र का ज़रा याद कीजिये।" शिनिपुत्र (सात्यकि) की यह बात सुनकर राजा युधिष्ठिर ने फिर कहा। २७४-२८० "मेरे प्रति अगर तुम्हें प्रेम है तो कृष्ण और धनञ्जय का समाचार लेकर आओ"। इस प्रकार की हठ की बात सुनकर आत्मोपम सात्यकि एक भयङ्कर सेना के साथ तुरन्त ही वहीं गया जहाँ युद्ध चल रहा था। तब अत्यधिक शत्रुओं को नाश करके युद्ध में शक्तिशाली आचार्य तीर चलाते हुए निकट आये। बस, इतना ही कहना है कि गुरुवर हारे और स्तुति करके उन्होंने नरेन्द्र भोज को बुलाया। मागध सत्यसन्ध का सिर साफ़ काटकर भूमि पर गिरा दिया। हाथी,

मागधनाकिय सत्यसन्धन् तल-
माळ्कातरुत्तु धरणियिलिट्टुपोय् । २८६
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटयोक्क
मानमेरीट्टुन्न सात्यकि कोन्नुकों- २८७
न्नारोळुकिक्कुरुतिप्पुनल्तन्नाले ।
चीरियट्टुत्तु भरद्वाजपुत्रनुं । २८८
कल्पान्तमेघं वरिषिप्पतुपोले
कोल्पोटु बाणङ्ङळ् तूकित्तुटङ्ङिनान् । २८९
इप्रथनत्तिनु नेराय पोरु प-
ण्टिप्रपञ्चत्तिङ्कलुण्टायतिल्लेन्नु । २९०
केळिमुळुत्त कबन्धवुं काळियुं
कूळिकळुं नटमाटित्तुटङ्ङिनार् । २९१
ओन्नु तळर्न्नुचमञ्ञु गुरुवरन्
चेन्नु तुणच्चानतुकण्टु भोजनुं । २९२
कोपिच्चु सात्यकि बाणङ्ङळ् पेय्तप्पोळ्
मोहिच्चु तेरतिल् वीणितु भोजनुं । २९३
आरिनियुळ्ळतेन्नाशु शिनिसुत-
नाराञ्ञु पाञ्ञुनटक्कुन्ननेरत्तु २९४
रण्टनुजन्मारुमाय् वन्नेतिर्त्तितु
कुण्ठत कैविट्टु नागध्वजनृपन् । २९५
कण्टुकूटुन्पोळ् शरवरिषंचेय्तु
मण्टिच्चानप्पोळणञ्ञु दुश्शासनन् । २९६

रथ, पैदल सैनिक, घुड़सेना, सबको सात्यकि ने मारा और रक्त की नदी बहने लगी। चिल्लाते हुए भरद्वाजपुत्र निकट पहुँचे। २८१-२८८ कल्पान्त के मेघों के बरसने के समान वेग से बाणों की वर्षा करने लगे। इस युद्ध के समान कोई युद्ध पहले इस संसार में कभी न हुआ, ऐसा समझकर कबन्ध, काली और पिशाच उल्लास में आकर नाचने लगे। गुरुवर कुछ थक गये। यह देखकर भोज सहायता करने गया। जब क्रुद्ध होकर सात्यकि ने बाण वर्षा की तब बेहोश होकर भोज रथ पर गिर पड़ा। 'अब कौन बचा है ?' ऐसा सोचकर जब सात्यकि ढूँढ़ता फिरता था तब दो छोटे भाइयों के साथ मन्दता छोड़कर राजा दुर्योधन आगे बढ़ा। २८९-२९५ उन्हें देखते ही शरवर्षा करके भगाया। तब दुश्शासन सामने आया। और थोड़ी देर के लिए संकोच छोड़कर लड़ा।

कोळ्कळञ्ञु पोरुतानोरित्तिरि
केळ्चिच्चवनेयुमोटिच्चु सात्यकि । २९७
जन्यभयंकरं कण्टु रणभुवि
जन्यमां नादवुं कृष्णनुटे पाञ्च- २९८
जन्यनिनन्दवुं धन्यतचेरुन्न-
धन्विकळ्तन् चेरुञाणोलिनादवुं २९९
केट्टुकेट्टाकुलप्पेट्टु युधिष्ठिरन्
कूट्टुक नम्मुटे तेरेन्नु चोल्लिनान् । ३००
उग्रनां मारुति चोन्नानतुनेर-
मग्रजन्तन्नटटङ्ङणमित्तिरि । ३०१
उग्रविरचितानुग्रहशक्तिस-
मग्रप्रभावनां शक्रतनयने ३०२
निग्रहिप्पानरुताक्कुमे कोमळ-
विग्रहयोगबलेन महीपते ! ३०३
व्यग्रमुण्टाकाय्क कृष्णभक्तन्मारि-
लग्रगण्यन् मम सोदरन् निर्णयं । ३०४
अग्राह्यशौर्यमियन्न गुरुवर-
नग्य्रकुलोत्भवनाय भरद्वाज- ३०५
नुग्रशिष्योत्तमशिष्यनामाचार्यन्
त्वल्ग्रहणाग्रहंपूण्टु मरुवुन्नु । ३०६
पार्थनु नाशमेन्नोर्त्तुथ पार्त्थिवन्
चीर्त्त विषादमोटार्त्तनाय् पिन्नेयुं । ३०७

पर सात्यकि ने उसे हराकर भगाया। इस भयङ्कर युद्ध को देखकर और रणभूमि से निकलती ध्वनि को, कृष्ण के पाञ्चजन्य के निनाद को और धन्य धानुष्कों के ज्याघोष को सुन-सुनकर युधिष्ठिर घबड़ाये और बोले "मेरा रथ तैयार करो"। तब उग्र भीमसेन ने अपने बड़े भाई से कहा 'थोड़ी देर के लिए सबर कीजिये'। शिवजी के दिये अनुग्रहों की शक्ति के कारण संपूर्ण प्रभाववाले अर्जुन का निग्रह करनेवाला कोई भी नहीं है, क्योंकि उसका अपने कोमल शरीर और योग का बल भी है। २९६-३०३ विषाद न कीजिये, क्योंकि मेरा भाई कृष्णभक्तों में अग्रगण्य है। अग्राह्य शौर्यवाले गुरुवर, जो उच्चकुलोद्भव भरद्वाज के उग्र शिष्यों में उत्तम शिष्य हैं और आचार्य हैं, तुम्हें पकड़कर बाँधने की इच्छा रखते हैं। अर्जुन

मारुतियाकुमवरजन्तन्नोटु
धीरत कैविट्टु चोन्नान् नृपाधिपन् ।
धार्त्तराष्ट्रन्पटक्कूट्टमुण्टाक्कुन्नु ३०८
पोय शिनिसुतन्तन्नेयुं कण्टील ।
पायुन्नितङ्ङुमिङ्ङुं भ्रमिच्चेवरु- ३०९
मेन्तोरु सङ्कटंवन्नतु दैवमे !
चेन्तारिल्मातुतन् पुण्यविलासमे ! ३१०
नेञ्चमिटिञ्ञिटिञ्ञीटुन्नितेट्वं
चेञ्चम्मे तन्नेक्कळिकयिल्लिन्नेटं । ३११
वैकल्यमेतुं वरातें पटयुमाय्
वकातें पोक नी मारुतनन्दन ! ३१२
अन्तरुळ्चय्युन्नतेन्नालतु केळ्प्पा-
नन्तरमिल्लिनिक्केङ्किलुमिन्निप्पोळ् ३१३
बन्धिच्चुकोळ्वानुपायङ्ङळ् सन्ततं
चिन्तिच्चिरुन्नरुळुन्नु गुरुवर- ३१४
नुत्तमनाकुन्न नम्मुटे ज्येष्ठनें
शत्रुक्कळेत्तिप्पिटिच्चुकेट्टुंनेर- ३१५
मेत्तील नामारुमेन्तिनि नल्लतें-
न्नोत्रयुं दुःखिच्चु नारिकळेप्पोलें ३१६
नाणवुं केट्टिरुन्नीटुमाऱाकातें
प्राणन्कळयातिरिक्कणमन्नेरं । ३१७

का नाश होनेवाला समझकर राजा (युधिष्ठिर) फिर बहुत विषण्ण हुए और अपने भाई मारुति (भीमसेन) से धैर्य छोड़कर फिर बोले— "दुर्योधन की सेना चिल्ला रही है और सात्यकि जो गया है, अब भी दिखाई नहीं दे रहा है। सब लोग घबड़ाकर इधर-उधर दौड़ रहे हैं। हे भगवान् ! क्या संकट हो गया है। यह लक्ष्मीदेवी का विलास है ! । ३०४-३१० हृदय तो अत्यन्त तड़प रहा है। आज का दिन ठीक से बिताना कठिन है। हे मारुतनन्दन ! नाश होने के पहले तुम जल्दी सेना लेकर चलो।" जब ऐसा कहा तब भीम ने सोचा— "मैं ऐसा करता, पर आज गुरुवर, युधिष्ठिर को पकड़कर बाँधने के उपाय सोचे बैठे हैं। हमारे उत्तम बड़े भाई को शत्रुगण पकड़कर बाँधने के समय हम लोगों के वहाँ न पहुँच सकने के कारण 'अब क्या करना है ?' इस प्रकार दुःखित होकर मान खोकर स्त्रियों के समान चुप बैठना न पड़े या प्राणत्याग न करना

अॆन्ऩतिनॆन्नॊट्टु सूक्षिच्चुकॊॾ्ॾुवान्
पिन्नॆयुं पिन्नॆयुं नन्ऩायुऱप्पिच्चु ३१८
पोयितु पोरिनायॆन्नुटॆ सोदरन्
पोयीट्टुवान् पणियुण्टतुकॊण्टु मे । ३१९
सोदरन् चॊन्नतो पूर्व्वजन् चॊन्नतो
सादरं केळ्क्केण्टतॆन्ऩु निरूपिक्क । ३२०
यादव पार्त्थ शिनिसुतन्मारॆयु-
माराञ्ञु कण्टुवरिक विरयॆ नी । ३२१
पारिषदादिकळॆब्भरमेल्पिच्चु
पारातॆ भीमन् नटन्ऩु पटयुमाय् । ३२२
पोर्क्कॊळंतन्निलकंपुक्करिकळॆ
बीक्कुन्ऩतिन्मुन्ने वीऴ्त्तिनानन्पिनाल् । ३२३
वॆण्कुट वॆण्तऴ वॆञ्चामरङ्ङळुं
चॆङ्कनकक्कॊटियुं कॊटिक्कूऱयुं ३२४
मन्थरकन्धरघण्टारवमुळ्ळ-
सिन्दुरबन्धुरस्यन्दनाश्वङ्ङळुं ३२५
खण्डिच्चुखण्डिच्चरिकळॆयुं कॊन्ऩु
चण्डनां मारुतपुत्रन् वरुन्ऩेरं । ३२६
पण्डितनाय भरद्वाजनन्दनन्
मण्डलाकारमायुळ्ळ धनुस्सिनाल् ३२७

पड़े"। ३११-३१७ इस प्रकार मुझे सचेत करके और बार-बार समझाकर छोटा भाई अर्जुन युद्ध करने के लिए निकला है। इसलिए मुझे चले जाना आसान नहीं है। छोटे भाई का वचन मानें या बड़े भाई की आज्ञा सादर करें, यह सोचने की बात है। कृष्ण, अर्जुन और सात्यकि को ढूँढ़कर जल्दी देखकर आना है। अपने अनुयायियों पर भार सौंपकर भीम सेना लिए चल पड़ा। शत्रुओं के मारने के पहले ही रणभूमि में प्रवेश करके उनको बाणों से मार गिराया। चाँदी की छत्री, चाँदी का मोरछल, चाँदी का चँवर, सोने का झंडा, झंडे का अंशुक, सुन्दर कन्धे पर बजनेवाली घंटी से भूषित और सिन्दूर से शोभायमान रथ के घोड़े, इन सबको खण्डित करते हुए और शत्रुओं को मारता हुआ चण्ड भीम आगे बढ़ा। ३१८-३२६ तब पण्डित भरद्वाजपुत्र (द्रोण) ने अपना मण्डलाकार (गोल) धनुष लेकर ऐसी आसानी से मारा कि मानो ब्रह्माण्ड

अण्डकटाहं नटुङ्ङुमारङ्ङने
दण्डमौळिञ्ञु चेरुत्तानतुनेरं । ३२८
दण्डधरन्मुनियोटटुक्कुन्नेरं
खण्डपरशु चेरुत्ततुपोलेयुं ३२९
चण्डमुण्डप्रणाशान्तरे सुंभने-
च्चण्डिकादेवि चेरुत्ततुपोलेयुं ३३०
चण्डकरकुलजातन् रघुवीरन्
दण्डकारण्यनिवासि खरादिये-.३३१
क्कण्टु कोविच्चु चेरुत्ततुपोलेयुं ।
मण्टियणञ्ञु वृकोदरनन्नेरं ३३२
तेरुं कळञ्ञु तिरिच्चु नटन्नप्पोळ्
वीरनां गान्धारपुत्नरटुत्ततिल् ३३३
पत्तिनेक्कोन्नु नटन्नलरीटिनान्
मत्तनां मारुतपुत्नन् महारथन् । ३३४
मारुतितन्टे वरवु कण्टन्नेरं
शूरनां कर्ण्णनणञ्ञु पोरुतप्पोळ् ३३५
मत्तगजत्तोटु केसरियेप्पोले
शक्तनां मारुतपुत्ननटुत्तुटन् ३३६
पत्रिकळ्कोण्टु तकर्त्तु तेरुं विल्लुं ।
मित्रात्मजनेयुमेय्तु पिळर्क्कयाल् ३३७
अंबिकानन्दननन्दनन्मार् तुण-
यन्पोटु चेन्नितु कर्ण्णनतुनेरं । ३३८

काँपने लगा। वह युद्ध जब यमराज मुनि के निकट पहुँचा था तब खण्डपरशु (शिवजी) के मारने के समान और चण्डमुण्डों के नाश के बीच चण्डिकादेवी के सुंभ को मारने के समान, और सूर्यवंश में पैदा हुए रघुवीर के दण्डकारण्य में रहनेवाले खर आदियों को देखकर और क्रुद्ध होकर इनको मारने के समान था। उस समय भीम ने दौड़ते हुए मारा और जब अपना रथ खोकर लौट रहा था तब वीर गान्धारपुत्र सामने आया। ३२७-३३३ उनमें से दस को मारकर सिंहनाद किया, मत्त महारथ मारुतपुत्र ने। भीम का आना देखकर शूर कर्ण उससे लड़ा जैसे सिंह मत्त हाथी के साथ लड़ता है। शक्तिशाली भीम ने अपने बाणों से उसका रथ और धनुष नष्ट कर दिया। मित्रात्मज (कर्ण) को भी

मट्टीरु तेरेऱि नाणोलियुमिट्टु
तेट्टेन्नटुत्तेय्तु कण्टोरु मारुति ३३९
चित्ततिलोर्त्तानटच्चु तीवच्चतुं
मद्धये सभं निज भार्ययेयीळ्ळत्ततुं ३४०
वस्त्रमळिच्चतुं कळ्ळच्चूतिट्टतुं
बद्धरोषाल् विषच्चोऱशिप्पिच्चतुं ३४१
कोल्लुवान् पान्पुतन्नाल् कटिप्पिच्चतुं
वेळ्ळत्तिलाम्मारु कॆट्टियॆऱिञ्ञतुं ३४२
मट्टु पलपल कर्म्मङ्ङळ् चॆय्ततुं
मुट्टुं निरूपिच्चु कोपिच्चटुत्तवन् ३४३
तेरुं कॊटियुं कळञ्ञु शरङ्ङळाल् ।
पारं परिभविच्चीटिनान् कर्ण्णनुं । ३४४
कुन्तियोटुळ्ळोरु सत्यं मऱन्नवन् ।
कुन्तीतनयनॆक्कोल्लुन्नतुण्टॆन्नु ३४५
तेटेन्नु मट्टोरु तेरेऱिवन्नुट-
नट्मिल्लात शस्त्रङ्ङळ् तूकीटिनान् । ३४६
दुर्म्मुखन्तानुमटुत्तानवनुट-
लॆण्मणिपोलॆ चमच्चितु भीमनुं । ३४७
कण्मणि पारमुरुण्टितु कर्ण्णनुं
कुम्मिणिपोलुं कुऱञ्ञोल भीमनुं । ३४८

घायल करने के कारण अंबिकानन्दन (धृतराष्ट) के पुत्र सहायता के लिए गये । नवकर्ण दूसरे रथ पर बैठकर ज्याघोष करके तुरन्त लड़ने लगा। यह देखकर मारुति (भीम) को बन्द करके आग लगाना, सभा के बीच अपनी पत्नी को खींचना, । ३३४-३४० उसके कपड़े उतारना, झूठा जूआ खेलना, कोप के कारण विषाक्त भोजन खिलाना, मार डालने के लिए साँप से कटवाना, बाँधकर पानी में उस प्रकार फेंकना, और अनेक प्रकार के कुकर्म करना यह सब याद आया और उसने क्रुद्ध होकर रथ और झंडा शरों से तोड़ डाला । कर्ण भी बहुत परेशान हुआ और कुन्ती के साथ जो शपथ की थी जसे भूल बैठा। कुन्तीपुत्र (भीम) का वध करने का निश्चय करके तुरन्त दूसरे रथ पर बैठकर कर्ण ने असंख्य तीर चलाये । दुर्मुख भी लड़ने के लिए आगे बढ़ा पर भीम ने उसके शरीर को तिल के समान पीस डाला । कर्ण की आँखें घूमने लगीं, भीम तो तनिक भी न थका । ३४१-३४८ तब वञ्चक सुयोधन के पाँच भाई,

वञ्चकनाय सुयोधनन्तन्पिमा-
रञ्चुपेर्कूटेयट्टुत्तारतुनेरं । ३४९
पञ्चतचेर्त्तानवरे वृकोदरन् ।
चञ्चलंपूण्टट्टुत्तीटिनान् कर्ण्णनुं ।३५०
नेञ्चुऱप्पिच्चु भयङ्करन् मारुति
किञ्चन संशयमेन्नियट्टुत्तेय्तु ३५१
तेरुं कुतिरयुं विल्लुं कोटि कुट
नेरे पोटिच्चु कुळच्चितु चोरयिल् । ३५२
पारं वलञ्ञितु कर्ण्णनतुकण्टु
नेरेयट्टुत्तु सुयोधनतन्पिमार् । ३५३
चेन्नारोरेळुपेर् भीमनवरेयु-
मोन्निच्चु कूट्टियुरुट्टिच्चमच्चितु
पिन्नेप्पिरिञ्ञुपोकाय्वानोरिक्कलुं । ३५४
मुन्नमऱिञ्ञु पऱञ्ञु विदुररे-
न्नन्नेरमोर्त्तान् दुरियोधनन्तानुं ३५५
कण्णुनीरुं वार्त्तु शोकिच्चितु तुलों ।
कर्ण्णनुं मट्टोरु तेरेऱिवन्नितु ३५६
मुन्नमिवण्णमकप्पेट्टतिल्लेन्नु ।
सन्नाहमुळ्क्कोण्टु सूर्यतनयनु- ३५७
मर्ण्णवंपोलेयलऱियट्टुक्कुन्पोळ्
कण्णुं चुवत्तियणञ्ञु वृकोदरन् ३५८

साथ लड़ने के लिए आगे बढ़े। वृकोदर (भीम) ने उनका पञ्चत्व कर दिया। तब कर्ण चञ्चल होकर सामने आया। भयङ्कर भीम अपना हृदय दृढ़ करके निश्शङ्क होकर पास पहुँचा और उसने बाण चलाकर रथ, घोड़ा, धनुष, झंडा, छत्र सब चूर-चूर करके खून में मिला दिया। कर्ण तो बिलकुल थक गया। यह देखकर सुयोधन के अनुजों में से सात निकट आये। भीम ने उन सातों को साथ मारकर गोल बना दिया ताकि वे फिर अलग होकर न चले जायँ। उस समय दुर्योधन को याद आया कि विदुर जी ने यह सब पहले ही जानकर बतलाया था और उसने आँसू गिराते हुए शोक का अनुभव किया। कर्ण भी दूसरे रथ पर चढ़कर आया। ३४९-३५६ पहले कभी इस प्रकार न फँसा हूँ, ऐसा समझकर सूर्यपुत्र बड़े सन्नाह के साथ सागर के समान गरजता हुआ जब निकट

ऒँण्णमिल्लातॊरु बाणङ्ङळॆय्तॆय्तु
कर्ण्णनुटॆयुटल् कीऱिनानॆट्टवुं । ३५९
अंगं तळर्न्निरिक्कुन्न सुयोधन-
नंगेशनॆक्कॊलचॆय्युमे मारुति ३६०
चॆल्लुविनाशु पट्टुमायॆन्नितु
चॊल्लिनान् तन्पिमारोटु नराधिपन् ।
नन्नाय् तुणच्चारवर्कळुं कर्ण्णनु । ३६१
नन्नायि कण्टतट्टुत्तॆन्नु भीमनुं
कॊन्नानॊरेळिनॆप्पिन्नॆयुमन्नेरं । ३६२
कर्ण्णनु वन्नॊरु कोपं पऱवति-
निन्नु पणि नमुक्कॆन्नतु निर्ण्णयं । ३६३
भीमनोटॆट्टमणञ्ञु सूर्यात्मजन्
पेमळपोलॆ शरङ्ङळ् तूकीटिनान् । ३६४
विल्लुं मुऱिच्चु तेरुं कळञ्ञानवन्
नल्लनां मारुति भूमियिल् चाटिनान् । ३६५
वाळुं परिचयुं कैक्कॊण्टटुत्तप्पोळ्
बाणङ्ङळॆय्तु मुऱिच्चान् परिचयुं । ३६६
वाळ्कॊण्टॊन्नॆऱिञ्ञीटिनान् भीमनुं
कोळॆ कळिवुण्टतिनॆन्नु कर्ण्णनुं ३६७
कूट्टन् मळयत्तु पोकुन्नवण्णमे
काट्टिन्मकन् शरमारियुमेट्टॆट्टु ३६८

पहुँचा तब भीम ने आँखें लाल करते हुए असंख्य बाण चलाकर कर्ण के शरीर को चीर डाला। शरीर के थके राजा सुयोधन ने अनुजों से कहा— "भीम तो अंगेश (कर्ण) को मार डालेगा, सेना लेकर जल्दी चलो।" और उन्होंने कर्ण की खूब सहायता की। "अच्छा हुआ कि तुम लोग निकट दिखाई दे रहे हो" ऐसा कहते हुए भीम ने सात और मार डाले। ३५७-३६२ कर्ण का जो क्रोध हुआ उसका वर्णन करना मेरे लिए कठिन काम है। कर्ण ने भीम से तीव्र युद्ध किया और घोर वर्षा के समान शरवर्षा की। उसका धनुष तोड़ डाला, उसका रथ नष्ट हुआ। सुन्दर भीम भूमि पर कूदा। जब तलवार और चर्म लेकर आगे बढ़ा तब बाणों से उसका चर्म तोड़ डाला। भीम ने अपने खड्ग को फेंका। कर्ण ने कहा "इसके लिए भी उपाय है"। घोर वर्षा में चलने के समान भीम को

वट्टमिट्टानीन्नतु कण्टु वन्पट
पेट्टॆन्नटुत्तु शूलं मुसलं गद ३६९
शक्तिकळ् मुळ्त्तटि वाळुं चुरिकयुं
चक्रं परशु वज्रङ्ङळ् कुन्तङ्ङळुं ३७०
शस्त्रङ्ङळुं वरिषिच्चितु कर्ण्णने ।
मित्रात्मजनॆय्तवट्टॆयुं खण्डिच्चु ३७१
बद्धकोपत्तोटु चॊल्लिनानिङ्ङने—
बद्धनायीटॊला चित्तभयेन नी- ३७२
योर्क्क्टो कर्ण्णनॆन्नॆन्नॆ वृकोदरा !
ओर्क्क बकनल्ल किर्म्मीरनल्ल ञान्
पार्क्क हिडिंबनुं मागधनुमल्ल ३७३
ऊक्कु निनक्कुण्टु पारमॆन्नाकिलुं
पोक्कु करुति वराय्क नीयॆन्नुमे । ३७४
पक्षे वनत्तिनु पोय्क्कॊळ्कवेण्टतुं
भक्षणमुळ्ळेटमॆङ्किलुमामॆटो । ३७५
वल्लातॆ निन्नु मरिञ्ञुनोक्काय्क नी
कॊल्लुन्नतल्ल ञानॆन्नुमे निर्ण्णयं । ३७६
मण्टिक्कितय्क्कयुंवेण्ट किरीटियुं
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनुमॆङ्ङितवरुटॆ ३७७
पिन्निलॊळिच्चुकॊळ्कॆन्नु चॊल्लुंविधौ
मुन्निलाम्मारु वन्नीटिनान् पार्त्थनु- ३७८

यह शरवर्षा लगी और कुछ घबड़ाने लगा । यह देखकर उसकी सेना आगे बढ़ी और उसने कर्ण पर ३६३-३६९ शूल, मुसल, गदा, शक्ति, तलवार, खड्ग, चक्र, परशु, वज्र, कुन्त आदि अनेक शस्त्रों की वर्षा की। मित्रात्मज (कर्ण) ने तो चलाये गये सभी शस्त्रों का खण्डन करके इस प्रकार कहा—"हे वृकोदर अपने ही डर से बद्ध न होजाओ, याद रखो कि मैं कर्ण हूँ। याद रखो कि मैं न बक हूँ और न किर्म्मीर, देखो कि मैं न हिडिंब हूँ और न मागध, तुम्हारे पास शक्ति बहुत है, फिर भी जान बूझकर लड़ने न आया करो। तुम बन चले जाओ जहाँ तुम्हें भोजन भी मिल जायगा। वहीं खड़े-खड़े गिर न जाओ, मैं तुम्हारा वध करनेवाला नहीं हूँ, इसमें सन्देह नहीं। ३७०-३७६ दौड़ दौड़कर थको मत। अर्जुन और घनश्याम (कृष्ण) कहाँ हैं। उनके पीछे छिप जाओ।" ऐसा कह

मेन्तोटो निल्लुनिल्लेन्तु पऱयुन्नु
ऎन्तु ञान्कूटॆयऱियरुतेन्नुण्टो ? ३७९
पोक्कळंपुक्कु रहस्यं पऱयुन्न-
ताक्कुं तोन्नुं तिरि पोरिनामेङ्किलो । ३८०
ऎन्तिनिविटेक्कु विल्लुमाय् वन्नितु
चन्तमुण्टेन्नतु काट्टुवानो भवान् ? ३८१
इत्थं पऱयुन्न वृत्रारिपुत्रनुं
मित्रतनयनुं तम्मिल् पोरुत पो- ३८२
रेत्रयुं पारमट्टुत्तु धनञ्जयन्
अर्द्धचन्द्रप्रभमाय शरङ्ङळे- ३८३
य्तत्तल् वरुत्तियोटिच्चानतुनेरं ।
काल् कै तुट तोळ् तल गळमेन्निव ३८४
वेगेन खण्डिच्चु खण्डिच्चु खण्डिच्चुं
आळान वाजिकळेक्कोलचेय्तट्टु- ३८५
त्तालोलकल्लोलहल्लोहलंपोले
कोलाहलत्तोटट्टुक्कुन्न सात्यकि । ३८६
शूरत पूण्टोरु कालारियेप्पोले
भूरिश्रवावट्टुत्तानतिविद्रुतं । ३८७
कोन्नीळिञ्ञेङ्ङुमयय्क्कुन्नतिल्लेन्नु
निन्ने ञानेन्नाशु मन्नवनाकिय ३८८

ही रहे थे कि अर्जुन सामने आ पहुँचा (और बोला) "ठहरो ! ठहरो ! क्या कह रहे हो ? क्या मैं भी सुन नहीं सकता हूँ ? । रणभूमि आकर रहस्य कहने को किसको सूझता है । अब घूम के लड़ने आओ, अगर कर सकते हो । धनुष लेकर यहाँ क्यों चले आये ? क्या अपना सौन्दर्य दिखलाना था ?" इस प्रकार कहनेवाले वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) और मित्रतनय (कर्ण) का आपस में अत्यन्त तीव्र युद्ध हुआ । धनञ्जय ने अर्धचन्द्र के समान प्रभावाले शर चलाकर परेशान किया और भगा दिया । पैर, हाथ, जाँघ, कन्धा, सिर, गरदन ये सब वेग से काटते हुए आदमियों, हाथियों और घोड़ों का वध करते हुए आलोल कल्लोल के गरजने के समान कोलाहल करते हुए सात्यकि पहुँचे । शूरता सहित कालारि (शिवजी) के समान भूरिश्रवा भी तुरन्त निकट पहुँचा । "मैं बिना तुम्हारा वध किये तुम्हें कहीं नहीं भेजनेवाला हूँ", ऐसा कहता हुआ राजा भूरिश्रवा सामने आकर तीर चलाने

भूरिश्रवावणञ्ञॆय्‌तोरुनेरत्तु
पूरिच्चितन्पुकॊण्टाकाशमार्ग्गवुं । ३८९
वृत्रनुमिन्द्रनुमेट्पोलेयॊरु
युद्धं भयङ्करमुण्टायितन्नेरं । ३९०
शंखपटहादिवाद्यङ्ङळ् घोषिच्चु
शङ्क वॆटिञ्ञु नालञ्चारुनाळिक ३९१
रण्टु मलमेल् मळ पॊळियुंवण्णं
कण्टुकूटातवण्णं पॊरुतीटिनार् । ३९२
विल्लॆय्तु पॊट्टिच्चु तेरुं कळञ्ञितु
शल्यतरमुटनन्योन्यमन्नेरं । ३९३
खळ्गचर्म्मङ्ङळ् कैक्कॊण्टङ्ङिरुवरुं
पक्षिकळॆप्पोलॆ पुष्करे पॊङ्ङिनार् । ३९४
कण्टवर्क्कानन्दमाम्मारिरुवरु-
मुण्टायि संगरमॆत्र मनोहरं । ३९५
पॆट्टॆन्नु वाळ् मुरिच्चीटिनान् सात्यकि
मुष्टियुद्धत्तिलॆत्तिप्पिटिच्चीटिनान् । ३९६
मुष्टि चुरुट्टित्तॆरुतॆरॆक्कुत्तियुं
कॊट्टियुं कालुं करङ्ङळुं तङ्ङळिल् । ३९७
निष्ठुरमांवण्णं मुट्टियुं मुट्टुकॊ-
ण्टिट्टुं तलय्क्कु तलकॊण्टटिक्कयुं । ३९८

लगा और सारा आकाशमार्ग बाणों से भर गया। तब वृत्र और इन्द्र के युद्ध के समान एक भयङ्कर युद्ध हुआ। ३८४-३९० शंख, पटह आदि वाद्यों का घोष उठा। चार, पाँच या छः घंटों तक बिना शङ्का के दो पहाड़ों पर वर्षा के गिरने के समान दोनों ऐसे लड़े कि उसको देखना कठिन था। धनुष का प्रयोग करके दोनों ने एक दूसरे का रथ तोड़कर नष्टकर दिया। हाथ में खड्ग और चर्म लेकर दोनों, पक्षियों की तरह आकाश में उठे। प्रेक्षकों को आनन्द पैदा करनेवाला मनोहर युद्ध दोनों का हुआ। सात्यकि ने झट से उसका खड्ग तोड़ डाला। तब मुष्टि-युद्ध में उसने ज़ोर पकड़ लिया। मुट्ठी से लगातार घूसे मारे, एक दूसरे के हाथ-पैर पकड़ लिए। ३९१-३९७ सिर से तीव्र आघात किया, सिर पर आघात खाकर भी सिर ही से मारा। दोनों ने एक दूसरे को पकड़ लिया, एक दूसरे को मारा, ज़ोर से कूटा, दाँत से काट-पीसा। जब ये

ऍट्टुपिटिच्चुमयच्चुमटिच्चुमि-
ङ्ङूट्मिटिच्चुं कटिच्चु पॉटिच्चुम- ३९९
म्माट्लरन्तकन्मारायू मरुविन
कूट्न्मार् तङ्ङळिलेट्टु पॉरुन्नेरं ४००
ऊक्कनां भूरिश्रवाविन् चविट्टुकॉ-
ण्टाक्कं कुरङ्ञु वीणीटिनान् सात्यकि । ४०१
चॅन्नु तलमुटि चुट्टिप्पिटिच्चितु
मन्ननिटत्तुकरंकॉण्टु मट्तिल् ४०२
वाळुमॅटुत्तुटन् तूक्किप्पिटिच्चिट्टु
मेळं कलर्न्नु गळभुवि वॅट्टुवान् ४०३
ओङ्ङिङ्य नेरत्तु कृष्णन्तिरुवटि
शार्ङ्गवरायुधन् नारायणन् परन् ४०४
संभ्रमत्तोटरुळ्चॅय्तितु पार्थनो-
टुन्पर्कोन्नन्दन ! वीरा ! विजया ! नी ४०५
सात्यकियॅक्कॉलचॅय्युन्नतु काण्क
पार्त्थिवनाकिय भूरिश्रवावॅटो । ४०६
पॅट्टॅन्नु नोक्कियतुकण्टु फल्गुनन्
मुट्टिनुनेरे मुरिच्चानॉरन्पिनाल् । ४०७
वाळुं करवुमाय् वीणितकलवे
वाळॅटुत्तानतुतन्नॆ शिनिसुतन् । ४०८
भूरिश्रवाविन् तलयरुत्तीटिनान्
पूरिच्च कोपमियन्नॊरु सात्यकि । ४०९

दोनों शत्रुओं के नाशक वृषभ के समान योद्धा इस प्रकार लड़ रहे थे तब शक्तिशाली भूरिश्रवा की लात खाकर सात्यकि कमजोरी से गिर गया। तब राजा (भूरिश्रवा) ने झट से बायें हाथ से उसकी शिखा पकड़कर उसे उठाया और दूसरे हाथ में तलवार लेकर उसका गरदन काटनेवाला ही था तब पूज्य कृष्ण, शार्ङ्ग आयुधवाला, नारायण, पर, आवेग के साथ अर्जुन से बोले—"हे इन्द्रपुत्र ! वीर ! विजय ! देखो ! राजा भूरिश्रवा सात्यकि की हत्या करनेवाला है।" ३९८-४०६ तव अर्जुन ने यह देखकर एक बाण से उसका घुटना काट डाला। तब हाथ में लिये तलवार के साथ वह गिर गया। बढ़ा-चढ़ा क्रोधवाले सात्यकि ने उसी तलवार को लेकर भूरिश्रवा का सिर काट डाला। देखनेवालों ने माधव की और पार्थ

माधवन्तन्नेयुं पार्त्थनेत्तन्नेयु-
मादरवोटे पुकळ्त्तिनार् कण्टवर् । ४१०
नन्दात्मजरथमेऱिनान् सात्यकि
वन्नटुत्तानतुनेरत्तु कर्ण्णनुं । ४११
तङ्ङळिल्त्तन्ने शरवरिषंचेय्ता-
रिङ्ङनेयिल्लोरु युद्धमितुपोले । ४१२
पार्त्थनुं भीमनुं सात्यकिवीरनुं
मूर्त्तिकळ् मूवरुमेन्नपोले रुषा ४१३
कूर्त्त शरङ्ङळुं तूकियटुत्तप्पो-
ळार्त्तरायार् तुलों धार्त्तराष्ट्रादिकळ् । ४१४
वृद्धक्षत्रात्मजनाय जयद्रथन्-
मृत्यु तटुप्पानोरुमिच्चु कर्ण्णनुं ४१५
द्रोणरुं पुत्रनुं भोजन् शकुनियुं
मानियायुळ्ळ कृपर् दुरियोधनन् ४१६
पिन्नेयुं चोल्लुळ्ळ तेराळिकळोक्क
निन्नार् पोरुतोरु काणिपळ्ळुताते । ४१७
पिन्निल् जयद्रथन्तन्नेयुमाक्किनार् ।
सन्नद्धरायार् मरिप्पतिन्नेवरुं । ४१८
इक्कण्टनामिवरोटु पोर्चेय्तु चे-
य्तोक्कयोटुङ्ङियोळिञ्ञवनेक्कोल्वान् ४१९
अन्नुमयय्ककरुतेन्नु तम्मिल्पऱ-
ञ्ञोन्निच्चिळक्कं कळञ्ञु निन्नीटिनार् । ४२०

की सादर प्रशंसा की । सात्यकि कृष्ण के रथ पर चढ़ा, उसी समय कर्ण भी वहाँ आ पहुँचा । दोनों ने एक दूसरे पर शरवर्षा की । उसके समान और कोई युद्ध नहीं हुआ था । ४०७-४१२ जब अर्जुन, भीम और वीर सात्यकि तीन मूर्तियों के समान क्रोध से तीक्ष्ण बाण छोड़ते हुए निकट पहुँचे, तब दुर्योधन आदि अत्यन्त घबड़ाये । वृद्धक्षत्र के पुत्र जयद्रथ को मृत्यु से बचाने के लिए कर्ण, द्रोण, उनका पुत्र, भोज, शकुनि, मानी कृप, दुर्योधन, और सब विख्यात रथी लड़ने के लिए खड़े हो गये ताकि सभी प्रेक्षक उनको देख सकें । और जयद्रथ को पीछे कर दिया । और सब मरने के लिए तैयार हो गये । "इन सामने दिखाई देनेवालों से लड़ लड़कर सबको खतम करके उसे (जयद्रथ को) मारना है; अब उसे छोड़ना

वारणवाजिरथचरणद्ध्वनि
सारमियन्न चेरुआणोलिद्ध्वनि ४२१
घोरपटहादि वीरवाद्यध्वनि
चारणकिन्नरकिन्पुरुषध्वनि ४२२
कारणपूरुषपाञ्चजन्यद्ध्वनि ।
नारदवीणारवाभिरामद्ध्वनि ४२३
ओन्निवकोण्टु मुळङ्ङी जगत्रयं ।
नन्नुनन्नेन्नु पुकण्णितु नारदन् । ४२४
घोरमायुण्टाय संगरं कण्टाशु
दारुकनु तेरिलेरि वन्नीटिनान् । ४२५
विण्णवर्नाथनां नारायणनेयुं
विण्णवर्कोन्मकन्तन्नेयुमन्नेरं ४२६
विण्णवर् पुष्पवरिषवुं चेय्तितु
विण्णिले नारिमारुं विळङ्ङीटिनार् । ४२७
नीङ्ङुकयिल्ल पटयेन्नु कण्टथ
शार्ङ्गवरायुधनाकिय माधवन् ४२८
उग्रमायुळ्ळ दिवाकरबिंबवुं
चक्रमेंटुत्तुपिटिच्चु मरच्चितु । ४२९
शक्रात्मजनुटे सत्यत्ते रक्षिप्पान्
विक्रमशालियां विश्वैकनायकन् । ४३०

न चाहिये", ऐसा आपस में तय करके निष्कम्प खड़े होगये । ४१३-४२० हाथी, घोड़े, रथ, सैनिकों के चरण, दृढ़ धनुष की ज्या, घोर पटह, वीरों के वाद्य चारण, किन्नर, किंपुरुष, कारणपुरुष का पाञ्चजन्य, नारद की वीणा इन सबकी ध्वनियों से तीनों जगत गूँज उठी । बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा ! कहते हुए नारद ने साधुवाद किया । इस घोर युद्ध को देखकर दारुक भी रथ पर बैठकर चला आया । उस समय देवों ने देवों के नाथ नारायण की और देवों के राजा के पुत्र अर्जुन पर पुष्पवृष्टि की । और स्वर्ग की स्त्रियाँ भी सोल्लास हुईं । ४२१-४२७ यह देखकर कि सेना हटनेवाली नहीं है, शार्ङ्गवर धारण करनेवाले माधव ने अपने चक्र को हाथ में लेकर उग्रसूर्य के बिंब को ढक दिया । विक्रमशाली और विश्व के एकमात्र नायक ने अर्जुन की शपथ की रक्षा करने के लिए ऐसा किया । सभी ने अपने मन में सोचा कि सूर्य का अस्तमय होगया । "सैन्धव

अस्तमिच्चीटिनानादित्यदेवनॆ-
न्तुळ्ळत्तिलिरिङ्कल् निनच्चितॆल्लावरुं । ४३१
सैन्धवन्तन्नॆ रक्षिच्चुकळिञ्ञितु
कौन्तेयसत्यवुं मित्थ्ययाय्वन्नितॆ । ४३२
वह्नियिल् वीणु मरिक्कुमाऱायितु
विण्णवर्कोन्मकनिल्लॊरु संशयं । ४३३
शेषिच्चरिकळ्क्कु चाकुमाऱायितु
वाळुमाऱायितु धर्म्मजन् काननं । ४३४
इत्थं पऱञ्ञु कळिच्चुपुळच्चति-
मत्तराय् वन्नितु कौरववीररुं । ४३५
अप्पोळ् जयद्रथन्तन्रॆ तलयतुं
शिल्पमाय्क्कण्टु मुकुन्दन्तिरुवटि । ४३६
काट्टिक्कॊटुत्तित्तु पार्त्थनु वैकातॆ
वाट्टंवरातॊरु बाणं प्रयोगिच्चु ४३७
कण्ठं मुऱिच्चतु कण्टु ससंभ्रमं
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनुं पार्त्थनोटोतिनान् । ४३८
ऊऴियिल् वीऴोला सैन्धवन्तन् तल
वीऴुकिलुण्टु विषममऱिकॆटो । ४३९
जिष्णुववन्तलमेलॆय्तुटनुटन्
विष्णुपदत्तिङ्कलाक्कीट्टु चोदिच्चान्— ४४०
मल्लारिसूदन ! मल्लविलोचन !
चॊल्लॆविटॆक्कॊण्टॆयाक्कणमित्तल ? ४४१

(जयद्रथ) की रक्षा हो गयी और अर्जुन की शपथ झूठी निकली। देवों के नायक के पुत्र अर्जुन को अब आग में कूदकर मरना है इसमें कोई सन्देह नहीं है। बचे शत्रुओं का भी मरने का समय निकट है। और युधिष्ठर को वन में जाकर राज करना है।" ४२८-४३४ इस प्रकार कहते हुए और खेलते-कूदते हुए कौरववीर सब मत्त हो गये। उस समय पूज्य मुकुन्द ने जयद्रथ का सिर देखा। तुरन्त ही अर्जुन को उसे दिखा दिया। अर्जुन ने एक अच्छा बाण प्रयोग करके उसका सिर काट डाला। यह देखकर घनश्याम (कृष्ण) ने संभ्रम के साथ अर्जुन से कहा—"सैन्धव (जयद्रथ) के सिर को भूमिपर न गिराओ। अगर वह भूमि पर गिरेगा तो बड़ी दिक्कत होगी।" तब अर्जुन ने उसके सिर को बाण से आकाश में ले जाकर पूँछा—हे मल्लारिसूदन ! हे मल्लविलोचन ! बताओ इस सिर को कहाँ

चोल्लिनानप्पोळवनोट्टु कृष्णनुं
चोल्लियन्नोरु वृद्धक्षत्रनाकिय ४४२
कल्याणशीलन् जयद्रथन्तन् पिता
चोल्लिनानेन्टे मकन्टे तलयरु- ४४३
त्तूळियिल् वीळ्त्तुन्नवर्कळुटे तल-
येळुनुरुङ्ङि मरिक्कॆन्नतितिन्निनि । ४४४
सन्ध्ययॆन्नोर्त्तु वन्नूप्पान् जलं कोरि
मन्त्रवुं चोल्लि निल्क्कुन्नितिप्पोळुटन् ४४५
ऊक्कुन्नतिन्मुन्पे तल्क्करंतन्निल-
ङ्ङाक्कणमित्तलयॆन्नितु कृष्णनुं । ४४६
ऊप्पतिन्नाय्क्कॊण्टु कोरिय नीरतिल्
वाय्पोट्टु वीणितु पुत्रनुटे तल । ४४७
पॆट्टॆन्नु मुण्डवुं नीरुमङ्ङप्पोळु
तिट्टुंकळञ्ञु वृद्धक्षत्रनुं चत्तान् । ४४८
युद्धे जयिच्चु वृद्धक्षत्रपुत्रनॆ
वृत्रारिपुत्रनुं सत्यत्तॆ रक्षिच्चान् । ४४९
चक्रवुमिङ्ङटक्कीटिनान् माधव-
नर्क्कनुं नन्नाय् तॆळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । ४५०
सत्यस्वरूपनामीश्वरन्तन्नुटॆ
चित्तकारुण्यमुण्टङ्किलसारनुं ४५१

पहुँचाऊँ ? ४३५-४४१ तब कृष्ण ने उससे कहा—"जयद्रथ के पिता कल्याणशील वृद्धक्षत्र ने पहले ही कहा है मेरे पुत्र का सिर काटकर जो भूमि पर गिरावेंगे, उनका सिर सात टुकड़े हो जायेंगे और वे मरेंगे। वह अभी संध्या हो गयी ऐसा समझकर अपनी संध्या करने के लिए हाथ में पानी लेकर मन्त्र जपता हुआ खड़ा है उसकी संध्या समाप्त होने के पहले ही इस सिर को उसके हाथ में गिराओ।" तब संध्या करने के लिए हाथ में लिए पानी में अपने पुत्र का सिर गिरा। तुरन्त ही सिर और पानी बहकर नष्ट होगये और वृद्धक्षत्र की मृत्यु हुई। ४४२-४४८ इस प्रकार वृद्धक्षत्र के पुत्र को हराकर अर्जुन ने अपनी शपथ की पूर्ति की। माधव ने अपने चक्र को वापस ले लिया और सूर्य भी साफ चमकने लगा। अगर सत्यस्वरूप ईश्वर का कारुण्य अपने प्रति है तो कोई तुच्छ पुरुष की भी अभिलाषा सिद्ध हो जाती है, नहीं तो सभी साधन और पुरुषकार

चित्ते निनच्चतु साधिक्कुमल्लायि्क-
लर्त्थपुरुषकारादियुं निष्फलं । ४५२
चित्तकारुण्यमुण्टाकेणमेंङ्किलो
भक्तियोंळिञ्ञु मट्टोंन्नु वेण्टातानुं । ४५३
भक्तनां मर्त्त्यनशक्तनेंन्नाकिलुं
निर्द्धननाकिलुं नीचनेंन्नाकिलुं ४५४
उत्तमन्मारिल्वच्चुत्तमनाय्वन्नु
भुक्तियुं मुक्तियुं साधिक्कुमेवनुं । ४५५
बुद्धि कुरञ्ञोंन्नु शुद्धिचेर्न्नुण्टेंङ्किल्
मुग्धविलोचननें भजिच्चीटुविन् । ४५६
दीर्घमाय् वीर्त्तु विषादिच्चु कौरवर्
पोर्क्कळंतन्निल्नित्तोंट्टुळन्तीटिनार् । ४५७
वेंल्लुवान् वेल नमुक्कु रिपुक्कळें
नल्ल मोंळियवर्क्कुण्टेंन्नु निर्णयं । ४५८
चोंल्लाय्क जाळ्यमितेंन्नु गुरुसुतन्
निल्लेंन्नटुत्तु कृपरुमायन्नेरं ४५९
अन्पुळ्ळ शिष्यनामुन्पर्कोन्पुत्रनु-
मन्पुकळ्कोंण्टु पिळर्न्नु कृपरुटल् । ४६०
मोहिच्चु भूमियिल् वीणु कृपाचार्यन्
हा ! हा ! गुरुवधंचेंय्तेनितेंन्नति- ४६१

निष्फल हो जाते हैं। चित्तकारुण्य अगर प्राप्त करना है तो भक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहिए। जो मानव भक्त है वह अशक्त, निर्धन और नीच क्यों न हो, श्रेष्ठों में श्रेष्ठ होकर भुक्ति और मुक्ति प्राप्त कर सकता है। ४४९-४५५ अगर तुम्हारी बुद्धि में कमी है, पर शुद्धि है तो मुग्धविलोचन (कृष्ण) का भजन करो। कौरव दीर्घ निश्वास करते हुए रणभूमि में खड़े दुःखित हुए। (और बोले) "शत्रुओं को मारना हमारे लिए कठिन है, निस्सन्देह उनके पास बल है।" गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) ने कहा—'ऐसी कमज़ोरी की बात न कहो' और कृपाचार्य के साथ आगे बढ़ा। तब प्रेमी शिष्य इन्द्रपुत्र (अर्जुन) ने बाणों से कृप के शरीर को चीरा। कृपाचार्य बेहोश होकर पृथ्वीपर गिरे। हा ! हा ! मैं ने गुरुवध किया ! ऐसा कहता हुआ अर्जुन स्नेह के कारण दुःखित हुआ। तब कृष्ण ने कहा—"केवल बेहोश हैं, मरे नहीं।" ४५६-४६२

स्नेहपरवशनायितु पार्त्थनुं ।
मोहमत्रे मरिच्चीलेन्नु कृष्णनु- ४६२
माहवचातुर्यमुळ्ळ जलधर-
वाहनपुत्रनें वेल्लुवानायति- ४६३
साहसंपूण्टटुत्तोरु महारथ-
राहन्त ! हाहानिनादेन वाङ्ङिनार् । ४६४
आचार्यपुत्रनुमाशु जयिप्पति-
न्नाशयुण्टायतु पोयोरनन्तरं ४६५
वाङ्ङि सुयोधनसैन्यवुं दुःखिच्चु
शार्ङ्गवरायुधन्तानुं विजयनुं ४६६
औन्निच्चु कैनिलपुक्कान् धनञ्जयन्
वन्दिच्चितु नृपन्तन्नेयुमादराल् । ४६७
नन्नु जयद्रथन्तन्ने वधिच्चतुं
मन्नव ! फल्गुननेन्नितु कृष्णनुं । ४६८
मन्दस्मितंचेय्तु कोळ्मयिक्कोंण्टोरा-
नन्दबाष्पं वार्त्तु वन्दिच्चु चोल्लिनान्— ४६९
नित्यननन्तननादि मुकुन्दनेन्-
चित्ते विळङ्ङुन्न नारायणन् परन् ४७०
कृष्णन् करुणाकरन् कमलावरन्
वृष्णिकुलाधिपन् विश्वैकनायकन् ४७१
विष्णु विमलन् विरिञ्चादिवन्दितन्
जिष्णुमुखामरसेवितन् माधवन् ४७२

युद्ध में कुशल जलधरवाहन (इन्द्र) के पुत्र को मारने के लिए जो महारथी साहस के साथ आये थे वे हाहा निनाद करते हुए पीछे हटे। जब आचार्यपुत्र (अश्वत्थामा) की जल्दी जीतने की इच्छा समाप्त होगयी, तब सुयोधन की सेना दुःखित होकर पीछे हटी। शार्ङ्गवर धारण करने वाले और अर्जुन दोनों साथ तंबू गये। अर्जुन ने राजा (युधिष्ठिर) की सादर वन्दना की। "हे राजन् ! अच्छा हुआ कि अर्जुन ने जयद्रथ का वध किया"—ऐसा कृष्ण बोले। ४६३-४६८ तब युधिष्ठिर ने मुस्कराकर स्नेह के कारण आनन्द के आंसू गिराते हुए सादर कहा—नित्य, अनन्त, अनादि, मेरे चित्त में विराजमान नारायण, पर, करुणाकर, कमला के पति, वृष्णिकुल का नाथ, विश्वैकनायक विष्णु, विमल, ब्रह्मा

चिल्पुमान् भक्तप्रियन् परमेश्वरन् !
नित्यमेंनिक्कु तुणयाकमूलमें-
न्नत्तलोंळिञ्ञु जयं वरुन्नू सदा । ४७३
आर्क्कुमोर्त्तालरियावतल्लातव-
नाक्कमेरुं नृपन्तन्नोटरुळ्चेय्तु— ४७४
मन्नवा ! निन्नुटे कोपं मुळुक्कयाल्
वन्नीटुमल्लो विजयं विजयनाल् । ४७५
धार्त्तराष्ट्रन्मार् कुलक्षयं प्रापिक्कुं
धात्रीपते ! पुनरिल्लोंरु संशयं । ४७६

रात्रियुद्धवुं घटोल्क्कचवधवुं

इत्थं परञ्ञुपरञ्ञवर् मेविनार्
चित्तमुळन्नु सुयोधननन्नेरं । १
द्रोणरोटेऱॆप्परुषं परञ्ञितु
क्षीणतयोटरुळ्चेय्तिताचार्यनुं— २
ऎन्नॆप्परुषं परयुन्नतॆन्तिनु ?
ऎन्नालोंरुवण्णमावतु चेय्तु ञान् । ३
ओर्क्क नीयुं नरनारायणन्मारे-
यार्क्कुं जयिक्करुतॆन्नरियेणमे । ४

आदि देवों का वन्द्य, इन्द्र आदि अमरों का सेवित, माधव, चित्पुरुष, भक्तों का प्रिय, परमेश्वर, कृष्ण सदैव मेरा सहायक होने के कारण मेरे दुःख का नाश और मेरी विजय होती रही। जो वस्तुतः किसी का भी ज्ञेय नहीं है (कृष्ण) उसने शक्तिशाली राजा से कहा— 'हे राजन् ! तुम्हारे कोप के बढ़ने से अर्जुन के द्वारा विजय होगी। धृतराष्ट्र के पुत्र समाप्त हो जायेंगे ! हे भूपाल ! इसमें कोई सन्देह नहीं है। ४६९-४७६

रात्रियुद्ध और घटोत्कच का वध

जब वे इस प्रकार आपस में बात कर रहे थे तब सुयोधन का मन पीड़ित हुआ। उसने द्रोण को खरी सुनाई और आचार्य ने क्षीणता के साथ कहा— "मुझसे क्यों खरी बातें कहते हो ? जो मुझसे हो सकता था मैं ने किया। तुम भी याद रखो कि नर और नारायण को कोई भी जीत नहीं सकता है। मैं अब युद्ध करने के लिए सूर्योदय तक न

पार्क्कुन्नतल्ल पुलरुवान् आनिनि-
प्पोर्क्कॆन्नु तेरिलेऱी गुरुवीरनुं । ५
रात्रियिलार्त्तंटुत्तारतुकण्टॊरु-
पार्त्थादिकळुं पुऱप्पॆट्टु पोरिनाय् । ६
भीमनादत्तोटट्टुत्तरिवीररॆ-
ब्भीमन् तॆरुतॆरॆक्कॊन्नॊटुक्कीटिनान् । ७
आतुरनायिताचार्यनुमॆत्रयुं
भीतिकलर्न्नू सुयोधनसैन्यवुं । ८
सोमदत्तन् महीपालन् महारथन्
पोर्मदत्तोटु शरवरिषं चॆय्तान् । ९
ॲन्नोटितॆल्लां कणक्कल्ल निल्लु नि-
ल्लॆन्नटुत्तीटिनान् सात्यकिवीरनुं । १०
चॆन्नाननेकमक्षौहिणिसेनयो-
टुन्नतनाय घटोल्क्कचनन्नेरं । ११
वन्नोरसुरप्पटयुं घटोल्क्कचन्-
तन्नुटॆ बाणप्रयोगवुं कण्टिट्टु १२
नन्नायटुत्तितश्वत्थामा दैत्यरॆ
कॊन्नॊटुक्कीटिनान् बाणगणङ्ङळाल् । १३
रामनुं रावणन्तानुं पोरुन्पोलॆ
भीमनां द्रौणियुं भीमतनयनुं १४
घोरघोरं शरमारिचॊरिञ्ञपो-
तारवारङ्ङळुं सिंहनादङ्ङळुं १५

ठहरूंगा।" ऐसा कहते हुए रथ पर चढ़े। सब रात में सिंहनाद करते हुए निकले और अर्जुन आदि युद्ध के लिए चले। १-६ भयङ्कर नाद करते हुए भीम शत्रुवीरों को समाप्त करता चला। आचार्य अत्यन्त दुःखित हुआ और सुयोधन की सेना भी भयभीत हुई। महारथ महीपाल सोमदत्त ने युद्धमद के साथ शरवर्षा की। "ठहरो! ठहरो! यह सब मुझसे न चलेगा।" ऐसा कहता हुआ वीर सात्यकि उसके निकट गया। उस समय उन्नत, अनेक अक्षौहिणीवाले घटोत्कच ने कहा— असुरसेना को और घटोत्कच के बाणप्रयोग को देखकर अश्वत्थामा ने अत्यन्त निकट आकर बाणों से दैत्यों को समाप्त कर दिया। ७-१३ राम और रावण के युद्ध के समान भयङ्कर अश्वत्थामा और भीमपुत्र (घटोत्कच) ज़ब

भैरवाकारमाय्वन्नितु युद्धवुं
पारं तळर्न्नु घटोत्कचवीरनुं । १६
तोट्टोळिच्चानतु कण्टट्टुत्तीटिनान्
काट्टिन्मकन् पेरुंकूट्टनेप्पोलेय- १७
म्माट्टलर्कूट्टत्तिलूक्कोटुपुक्कुटन्
माट्टि मरुतल निन्नलरीटिनान् । १८
नूट्टुवर्मूत्तवनाय सुयोधन-
नाट्टरुतात दुःखं पूण्टतुनेरं । १९
कण्णुनीरालोलमालियन्नाकुलाल्
कर्ण्णनोटल्लल् तीर्क्केन्नु चोल्लीटिनान् । २०
निर्ण्णयं पाण्डवन्मारे मुटिप्पने-
न्नर्ण्णवंपोलेयलरिनान् कर्ण्णनुं । २१
अन्नतुकेट्टु परञ्ञु कृपाचार्य-
नेन्ने विशेषमे नन्नितेटो सखे ! २२
अन्नुं कुरय्क्कुन्न पट्टि कटिक्कयि-
ल्लेन्नु नी केट्टिट्टुमिल्ले सुयोधन ! २३
कोल्लुक पाण्डवन्मारेयेन्नुळ्ळतु
चोल्लुकयेन्नि मट्टोन्निल्ल कर्ण्णनाल् । २४
कोल्लुन्नतुण्टेङ्किलिन्नु ञानेन्तिनु
चोल्लुन्नतित्तरमेन्नितु कर्ण्णनुं । २५

घोर-घोर शरवर्षा करने लगे तब उनकी चिल्लाहट और सिंहनादों से युद्ध भैरवाकार हो गया और वीर घटोत्कच बिलकुल थक गया और हारकर अलग हो गया। यह देखकर एक बड़े सांड के समान वायुपुत्र निकट आया और शत्रुओं के बीच घुसकर उनको डराता हुआ गरजने लगा। सौ भाइयों में ज्येष्ठ सुयोधन असाध्य दुःख प्राप्त करके आँसू गिराता हुआ कर्ण से बोला— "मेरा दुःख दूर करो।" १४-२० "मैं निस्सन्देह पाण्डवों को समाप्त करूँगा।" ऐसा कर्ण ने समुद्र के समान गरजा। यह सुनकर कृपाचार्य बोले—'वही विशेष बात ! अच्छा कहते हो हे मित्र !" हे सुयोधन ! तुमने क्या यह नहीं सुना है कि हमेशा भौंकने वाला कुत्ता काटता नहीं है ? पाण्डवों का वध करना, यह बात तो कर्ण कह सकता है, और कुछ नहीं। तब कर्ण ने कहा—"मैं आज उनका वध करूँगा, पर मुझसे इस तरह क्यों बात करते हो ? "मैं उनको मारूँगा"

कॊल्लुन्नतुण्टॆन्नॊळिञ्ञु नीयो पण्टुं
चॊल्लुमारिल्लयल्लो नृपनोटॆटो । २६
चॆल्लुकयिल्ल किरीटितन् मुन्निल् नी
चॆल्लुकिल् निन्नु पॊरुकयुमिल्लल्लो । २७
निन्नु पॊरुताकिलन्नवन् निन्नॆयुं
कॊन्नॊटुक्कीटुमतिनिल्ल संशयं । २८
एट्नाळॊक्कॆवे फल्गुननन्नॊटु
तोट्तॊळिञ्ञु ञान् कण्टीलॆटो निन्नॆ । २९
पाण्डवन्मारुटॆ शौर्यङ्ङळल्लयो
ताण्डवंचॆय्युन्नतुं भुवनङ्ङळिल् । ३०
सत्यं यमनियमार्ज्जवसन्तोष-
भक्तिशमदमदानतपोबल- ३१
शक्तिकळुळ्ळवर् पाण्डवन्मारत्रे
शक्तनॆन्नुळ्ळ निनवे निनक्कुळ्ळु । ३२
कृष्णाविवाहवुं खाण्डवदाहवुं
वृष्णिकळॆतम्मॆ जयिच्चप्रकारवुं ३३
उत्तरदिक्कु जयिच्चतुं वेगत्तिल्
मृत्युञ्जयन्तन्नॊटस्त्रं परिच्चतुं । ३४
युद्धे निवातकवचवधादियुं
चित्ररथविजयादियुमोर्क्क नी । ३५

इसके अतिरिक्त पहले ही से तुम राजा से और क्या कहते चले आ रहे हो ? तुम तो अर्जुन के सामने चलोगे ही नहीं, और चलोगे भी तो खड़े होकर लड़ोगे ही नहीं । २१-२७ अगर खड़े होकर लड़ोगे तो वह आज तुम्हें मारकर समाप्त कर देगा, कोई सन्देह नहीं । जब भी तुमने उसका सामना किया, मैंने तुम्हे हारा ही देखा, और कुछ नहीं । पाण्डवों के ही शौर्य इस जगत् में ताण्डव कर रहे हैं । सत्य, यम, नियम, आर्जव, सन्तोष, भक्ति, शम, दम, दान, तपोबल, ये सब शक्तियाँ पाण्डवों के पास हैं तुम्हारा तो केवल शक्त होने का अभिमान है । द्रौपदी का विवाह, खाण्डवदाह, वृष्णियों को जीतने का प्रकार उत्तरादिक् पर विजय, जल्दी शिवजी से अस्त्र की प्राप्ति, युद्ध में निवातकवचों (एक समुद्रजीवी असुरवर्ग) का वध, चित्ररथ पर विजय, यह सब याद करो । २८-३५ गोग्रहण भी तुमने अपनी आँखों देखा है, तुम तो केवल अपनी इच्छा प्रकट

गोग्रहणादियुं कण्कोॅण्टु कण्टीले-
याग्रहं नी पऱयुन्नतेॅटो कर्ण्ण ! ३६
नावरिञ्ञीटुवनित्तरमेॅन्नोटु
पेपऱञ्ञीटुकिलेॅन्नितु कर्ण्णनुं । ३७
मातुलन्तन्नेॅप्पऱञ्ञतु केळ्क्कयाल्
कोपं मुळुत्तेळुनेट्टितश्वत्थामा । ३८
कश्मलनाकिय निन्नेॅयिप्पोळ्त्तन्नेॅ
कुत्तिनुऱुक्कुवनेॅन्नु गुरुसुतन् । ३९
अन्तकनेॅप्पोलेॅ वेगालटुत्तप्पो-
ळन्तरा पुक्कान् दुरियोधनन्तानुं । ४०
कण्टवर् चेॅन्नु चाटिक्करवुं पिटि-
च्चुण्टाय घोषं पऱयावतल्लेतुं । ४१
कण्टु पोॅरुक्कामो धिक्कारमेॅन्नतु-
मुण्टां कळिवु चातिक्कारमेॅन्नतु । ४२
पण्टुं दुरुक्तिचतिक्कारर् निङ्ङळो
कण्टुकोॅण्टालुमतिक्कालमेॅङ्किलो । ४३
कण्टिरिक्कुन्नु चतिक्कारर् निङ्ङळुं
कण्टिरिक्कुन्नतिक्कालमेॅङ्ङळुं । ४४
नीयल्ले पाञ्ञतु नीयल्ले पाञ्ञतु ?
नीयटङ्ङीटङ्ङु नीयटङ्ङीटङ्ङु ४५

कर रहे हो, हे कर्ण !" तब कर्ण ने उत्तर दिया, "अगर इस प्रकार बकोगे तो तुम्हारी जीभ काट डालूँगा ।" अपने मामा को इस प्रकार कहते हुए सुनकर अश्वत्थामा कोप के आवेश में आया और बोला— "तुझ दुष्ट को मैं अभी-अभी काट डालूँगा ।" ऐसा कहकर जब यमराज के समान आगे दौड़ा तो दुर्योधन बीच में आया । जिसने भी देखा दौड़कर हाथ पकड़ा । इससे जो कोलाहल मचा उसका वर्णन करना कठिन है । "जो धिक्कार किया गया उसे देखकर कैसे सहा जाय ?" मध्यस्थ लोगों के द्वारा मामला ठीक किया जा सकता है । ३६-४२ 'तुम लोग पहले ही से गाली देनेवाले और धोखा देनेवाले हो ।' 'अब क्या होगा सो देखलो' "तुम लोग देखते रहनेवाले धोखा देनेवाले हो" अब हम लोग भी देखते रहेंगे" "तुम ही तो भाग गये थे, तुम ही तो भाग गये थे ?" "तुम दब जाओ, तुम दब जाओ" "तुम्हें कोई नहीं चाहता

नी पिटियातवन् नी पिटियातवन्
नी पऱञ्ञालेन्तु नी पऱञ्ञालेन्तु ? ४६
निङ्ङळे ञङ्ङळऱियुमटङ्ङुक
निङ्ङळे ञङ्ङळुमव्वण्णमल्लयो ४७
ऍन्तु ञङ्ङळ्क्कु कुऱवॊन्नु कण्टतु ?
ऍन्तु कुऱवु ञङ्ङळ्क्कॊन्नु कण्टतुं ? ४८
ऒङ्किल् नटप्पिन् पऱयणमो पल-
वॆङ्किल् नटप्पिनुतकात्ततॆन्तिप्पोळ् ? ४९
ञङ्ङळ् पिटियात पॊण्णन्मारॆन्नयुं
निङ्ङळ् नटप्पिन् मिटुक्कुळ्ळवरल्लो । ५०
निङ्ङळ् पऱञ्ञिट्टु चॆल्लेणमो ञङ्ङळ्
ञङ्ङळ्क्कु निङ्ङळ् कूटाञ्ञाल् पणि तुलों ? ५१
इत्थं पलरुं पलवुं विवदिच्चु
चित्तं कलङ्ङिच्चमञ्ञतॆल्लावरुं । ५२
कूट्टवुं वॆट्टिक्कयर्त्तु कुरुप्पट
वाट्टं कळञ्ञु नटन्नारतुनेरं । ५३
शौर्यं नटिच्चटुत्तीटिनानंगेशन्
वैरं निनच्चङ्ङटुत्तान् किरीटियुं । ५४
कॊळ्ळिमिन्नुंवण्णं चॆन्नु तॆरुतॆरे-
क्कॊळ्ळुन्न बाणङ्ङळेट्टु पॊऱाय्कयाल् । ५५

है, तुम्हें कोइ नहीं चाहता है" "तुम्हारे कहने से क्या ? तुम्हारे कहने से क्या ?" "तुम लोगों को हम जानते हैं, चुप रहो!" "हम भी तुम लोगों के साथ ऐसे ही हैं" तुम लोगों ने हममें क्या कमी देखी ? और हममें तुम लोगों ने भी क्या कमी देखी ? अच्छा ! तो चलो ! बहुत क्यों कहें ? अच्छा ! तो तुम लोग भी चलो, अब क्या असुविधा है ? ४३-४९ "ये सब निकम्मे हैं जो हमें पसन्द नहीं हैं" "तुम लोग चलो अगर इतने होशियार हो !" तुम लोगों के कहने से हम थोड़े ही चलेंगे ? तुम लोग हमारे साथ अगर न होगे तो क्या हो जायेगा ?" इस प्रकार बहुतों ने तरह तरह की बातें कीं और सबका मन क्षुब्ध हुआ। कुरुसेना यह गड़बड़ तोड़कर आगे बढ़ी और सुस्ती छोड़कर सब उस समय चले। शौर्य का अभिमान करता हुआ कर्ण निकट पहुँचा और वैर का याद करता हुआ किरीटी (अर्जुन) भी निकट आया। जलती

पोँळ्ळु पऱञ्ञ दिवाकरनन्दन-
नुळ्ळुळ्ळमोटङ्ङुळऱि वाङ्ङीटिनान् । ५६
कर्ण्णसखि दुरियोधननन्तेरं
चन्नु गुरुसुतनन्नोटपेक्षिच्चान् ५७
निर्त्तुक नम्मुटे सैन्यमोँळियाते
वृत्रारिपुत्रनेक्कोँल्लुक वैकाते । ५८
चेट्टु पोँरुत्तालुमेन्नु गुरुसुतन्
तेटेन्नटुक्कुन्नतु कण्टनेरत्तु । ५९
पाञ्चालवीररटुत्तु पटयुमाय्
चाञ्चाटि निन्नु तुटङ्ङि रिपुक्कळ्ळु । ६०
निद्रयुं क्षुत्तुं तळर्च्चयुं दाहवुं
शस्त्रङ्ङळ्कोँण्टु मुऱिञ्ञुळ्ळ तापवुं— ६१
कैक्कोँण्टोँळिच्चु तुटङ्ङि पेँरुन्पट ।
वेँक्कमटुत्तितु बाह्लिकनन्तेर- ६२
मुग्रनायुळ्ळोँरु सात्यकि वैकाते
निग्रहिच्चार्त्तु नटन्नटुत्तीटिनान् । ६३
पन्तवुं कत्तिच्चितेट्मुयरवे
चन्तमोटेल्लावरुं पट कण्टितु । ६४
योगिप्रतियोगि तम्मिल् तिरियाते
वेगालटुत्तिटकूटि पेँरुन्पट । ६५

लकड़ी के समान चमकनेवाले बाणों के लगातार लगने से वे असह्य हो गये। इस लिए कर्ण जिसने झूठ बोला था, भीतर पीड़ित हुआ और पीछे हटा। ५०-५६ कर्ण के मित्र दुर्योधन उस समय गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) के पास गया और बोला— "हमारी सेना को नष्ट हो जाने से रोको और वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) का वध अविलम्ब करो।" गुरुपुत्र ने कहा 'ज़रा सबर करो' और आगे बढ़ा। तब पाञ्चालवीर अपनी सेना के साथ निकट आये और शत्रु ज़रा हिलने लगे। नींद, भूँख, थकावट, प्यास, शस्त्रों के व्रणों के कारण दर्द यह सब सहने के कारण बड़ी सेना नष्ट होने लगी। तब वाह्लीक जल्दी से आगे बढ़ा। उस समय उग्र सात्यकि अविलम्ब ही मारता हुआ आगे बढ़ा। ५७-६३ ऊँचे पर उल्का जलाई गयी जिससे सभी ने सेना ठीक से देखी। दोनों सेनायें आपस में ऐसा मिल गयीं कि शत्रु और मित्र का भेद करना कठिन हो गया। युद्ध भी अत्यन्त

पोरुं भयङ्करमायिच्चमञ्ञतु
पोरुं पऱञ्ञतु शूरतयेऱिन ६६
पेरुं पेरुप्पवुमुळ्ळोऱ मरिच्चितु
कूरन्पुमंबरदेशे वितानिच्चु । ६७
भास्करनन्दननाकिय कर्ण्णनुं
पोक्कोरुमिच्चु वन्नीटिनानन्नेरं । ६८
वन्पट चत्तोळियुन्नतु कण्टपो-
तुन्पर्कोन्पुत्रनेवं पऱञ्ञीटिनान् । ६९
अकादशाक्षौहिणिबलमुळ्ळति-
लेकदेशं गणिच्चीटुन्नताकिलो ७०
अंळुमोटुक्कियेनिप्पकल्कोण्टु ञा-
नीषलुण्टो निशि शेषमोटुक्कुवान् ? ७१
सूतसुतन्टे वरवु कण्टीलयो
तेऱ्तेळिच्चीटुकतिन्नुनेरे भवान् । ७२
ञान् पऱञ्ञीटुवन् कर्ण्णनोटेल्पति-
न्नान्पोळुतोर्त्तिरिक्कुन्नितु केळेटो । ७३
कालमणञ्ञतिल्लित्तिरियुण्टिनि-
क्कालस्वरूपनल्लो जगदीश्वरन् । ७४
कालबलमवलंबनमेवनुं
कालनप्पण्टु कालारि वधिच्चतुं । ७५
कालबलानवलोकनंकोण्टल्ल
कालावलोकनं कार्यसाद्ध्यं सखे । ७६

भयङ्कर हो गया। बस, और क्या कहा जाय ! अत्यन्त शूर विख्यात और शक्तिशाली मरे और आकाश में तीक्ष्ण शरों का वितान सा बन गया। भास्करनन्दन कर्ण उस समय सबके साथ लड़ने आया। बड़ी सेना को मर-मरकर समाप्त होती देखकर अर्जुन ने इस प्रकार निवेदन किया। अगर गिना जाय तो ग्यारह अक्षौहिणियों में से दिन में, सात समाप्त कर चुका हूँ। रात में बाक़ी समाप्त कर दूँगा, इसमें सन्देह हो सकता है ? ६४-७१ सूतपुत्र का आगमन आप ने देखा होगा। उसी की ओर रथ चलाइये। (तब कृष्ण ने कहा) "मैं बतलाता हूँ। कर्ण का सामना करने के लिए मैं उचित समय की खोज में हूँ। सुनो— अभी समय नहीं आया है, थोड़ा सा बाकी है। जगदीश्वर तो कालस्वरूप है। कालबल सबका

कर्म्मक्षयकालमेंन्नियें कोंल्लुवान्
चेंम्मे पणि परमेश्वरनुमेंटो । ७७
कोंन्नतु ञान् मृतनायतवनिति-
नेंन्नु तोन्नुन्नवारेंन्ने पऱयावू । ७८
सत्यस्वरूपन् सकलजगन्मयन्
सत्वरजस्तमोहीनन् सनातनन् ७९
सत्वगुणप्रधानात्मकनव्ययन्
सत्यमायुळ्ळोरु वस्तु परमात्मा ८०
नित्यन् निराकुलन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
नित्यमनित्यनिवासन् निरामयन् ८१
निर्ग्गुणन् निष्कळन् निश्चलन् निष्क्रियन्
निष्कळङ्कन् निरातङ्कनेकन् परन् ८२
आनन्दपूर्ण्णननन्तननादिया-
मानन्दिनां परमानन्दकोमळन् ८३
ज्ञानस्वरूपनमृतमयनजन्
मानियामर्ज्जुननोटरुळ्चेंय्तप्पोळ् ८४
निर्ज्जरेन्द्रात्मजन्तन्नभिमानवुं
लज्जयुं कुन्पिट्टितानननांभोजवुं । ८५
चेंन्तामरक्कण्णनोटुणर्त्तिच्चितु
पङ्क्तिकण्ठोपमनाय घटोत्कचन् । ८६

अवलंबन है पूर्वकाल में कालारि (शिव) का काल को मारना कालबल के अनवलोकन के कारण नहीं है। हे मित्र, कार्यसिद्धि के लिए काल को देखना है। कर्मक्षय के काल के अतिरिक्त परमेश्वर भी वध नहीं कर सकता है। "मैं ने मारा, मरा तो वह" यह केवल सोचने का ढंग है। ७२-७८ जब सत्यस्वरूप, सकमजगन्मय, सत्त्वरजस्तमोहीन, सनातन, सत्वगुणप्रधानात्मक, अव्यय, सत्य वस्तु, परमात्मा नित्य, निराकुल, निर्मल, निर्मम नित्य अनित्य में रहनेवाला, निरामत्य, निर्गुण, निष्कल, निश्चल, निष्क्रिय, निष्कलङ्क, निरातङ्क, एक, पर, आनन्दपूर्ण, अनन्त, अनादि, आनन्दियों में परमानन्दकोमल, ज्ञानस्वरूप, अमृतमय," अज ने मानी अर्जुन से इस प्रकार कहा, तब निर्जरेन्द्रात्मज (अर्जुन) का अभिमान और लज्जा झुकी और मुखकमल भी। ७९-८५ कमललोचन (कृष्ण) से रावण के तुल्य घटोत्कच ने कहा— "डर किस बात का ? यह गुलाम जीतेगा, इसमें

ऄॅन्तिनु पेटियटियन् जयिप्पनोँ-
रन्तरमिल्ल विटवळङ्ङीटुकिल् । ८७
ऄॅङ्किल् नी चेॅल्केॅन्नयच्चोरवर्कळुं
वन्कटल्पोलेॅयणञ्ञानसुरनुं । ८८
चेॅङ्कतिरोन्मकनाकुलप्पेॅट्टोॅरु
सङ्कटंपूण्टतु कण्टु सुयोधनन् ८९
ऊक्कुळ्ळरक्करुं कूटि निल्क्कुन्नोॅरु
राक्षसनाकु मलंबुसन्तन्नोटु ९०
मारुतिपुत्रनेॅक्कोॅल्केॅन्नु चोॅल्लिनान्
सूर्यसुतन्नु वलच्चिल् तीर्त्तीटुवान् । ९१
मायाविशारदन्माराय राक्षस-
रायोधनत्तिन्नटुत्तोॅरु नेरत्तु । ९२
पायुन्निते़वुं पाण्डवसैन्यवुं
छायापतीसुतनोॅन्नु वीर्त्तीटिनान् । ९३
मायाविकळोटटुत्तु घटोल्क्कचन्
मायमोॅळिच्चु पोॅरुतोॅटुक्कीटिनान् । ९४
मायामयनाकुमायर्कोनन्नेॅरं
वायुसुतात्मजन्तन्नोटरुळ्चेॅय्तु— ९५
संगरत्तिङ्कल् विदग्धनाय् मेविनो-
रंगेशनेॅक्कोॅलचेॅय्क विरये नी । ९६
पिन्नेॅयां कोॅल्वानलंबुसन्तन्नेॅये-
न्नण्णोजनेत्रनरुळ्चेॅय्तनन्तरं । ९७

सन्देह नहीं' अगर मुझे अवसर दिया जाय ।" तब उन्होंने कहा— "अच्छा तो चलो" और असुर (घटोत्कच) सागर के समान आगे बढ़ा । कर्ण बहुत आकुल हुआ और उसे देखकर सुयोधन दुःखित हुआ और शक्तिशाली राजाओं सहित खड़े अलंबुस राक्षस से बोला— "मारुतिपुत्र (घटोत्कच) की हत्या करो ताकि कर्ण की तकलीफ़ दूर हो जाय ।" जब मायाप्रयोग में कुशल राक्षस युद्ध करने के लिए निकट पहुँचे । ८६-९२ पाण्डवों की सेना भागने लगी और छायापति (सूर्य) का पुत्र (कर्ण) खुशी से फूल गया । घटोत्कच मायावियों के निकट पहुँचा और उनकी माया को नाश करके युद्ध को समाप्त कर दिया । तब मायामय कृष्ण ने वायुपुत्र के पुत्र (घटोत्कच) से कहा— "युद्धकुशल अंगेश की तुम जल्दी हत्या

अंगारलोचनतुल्यन् घटोल्क्कच-
नंगेशनोटुमसुरवरनोटुं ९८
अेतुं कुऱ्यातेनिन्नु पिणङ्ङना-
नातङ्कमुळ्क्कोण्टुयर्न्नानसुरेशन् । ९९
अंबरंतानवलंबमाय् निन्नोर-
लंबुसन्तन् तल वेट्टियरुत्तुटन् १००
अंबिकासूनुतनयनु काळ्चया-
यन्पोटु मुन्पिलिट्टार्त्तान् घटोल्क्कचन् । १०१
अर्क्कतनयनुमप्पोळरक्कनो-
टुग्रतयोटु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । १०२
कीऱिमुऱिञ्ञितु देहवुमन्नेर-
मेऱिनानंबरं मारुतिनन्दनन् । १०३
कूटवे चेन्नु तुणच्चू विजयनु-
माटुकाल्पेट्टितु भास्करपुत्रनुं । १०४
पोरिनणञ्ञु हिडिंबात्मजन्तानुं
तेरुं तकर्त्तुपोटिच्चुटनार्त्तितु । १०५
नेरे वधिक्कुमिवनेन्नेयेन्नोर्त्तु
पारं वलञ्ञोरु भास्करनन्दनन् । १०६
वेलेटुत्ताशु वेगेन चाट्टीटिनान्
नीलमहामलपोले घटोल्क्कचन् १०७

करो। उसके बाद अलंबुस को मारना आसान होगा" कृष्ण के इस प्रकार कहने के बाद अंगारलोचन (शिव) के समान घटोत्कच ने अंगेश (कर्ण) और असुरवर (अलंबुस) दोनों के साथ बराबर लड़ा और आवेग में आकर असुरेश ऊपर उठा। ९३-९९ तब घटोत्कच ने आकाश को अवलंबन करके खड़े अलंबुस का सिर काटकर दुर्योधन के सामने भेंट करके सिंहनाद किया। तब कर्ण ने बड़ी उग्रता के साथ घटोत्कच पर शरवर्षा की। उसका शरीर चीरा गया और भीम का पुत्र आकाश पर चढ़ा। अर्जुन ने जाकर उसकी सहायता की और कर्ण के पैर काँपने लगे। हिडिंबा का पुत्र (घटोत्कच) लड़ने दौड़ा और कर्ण के रथ को चूर-चूर करके उसने सिंहनाद किया। १००-१०५ 'यह मेरा वध जल्दी करेगा' ऐसा समझकर भास्करनन्दन घबड़ाया। और तुरन्त अपना भल्ला लेकर उसका प्रयोग किया और एक काले पहाड़ के समान घटोत्कच

जीवनुं वेर्टिट्टु भूमियिल् वीणितु
पावनितानतिखेदवुं तेटिनान् । १०८
दुःखवुंपूण्टितु धर्म्मात्मजादिकळ्
पुष्करनेत्रन् तेळिञ्ञरुळीटिना- १०९
नर्क्कतनयनु शक्तिपोयी मम
शक्रतनयने रक्षिप्पतिन्निनि ११०
पारं पणियिल्लयेन्नु मुकुन्दनुं
कारुण्यवारिधि कल्पिच्चितन्नेरं । १११
भूपतिवर्ग्गमुरक्कमिळय्क्कयुं
कोपं मुळुक्कयुं खेदं पेरुक्कयुं ११२
सादं भविक्कयुं मोदं क्षयिक्कयुं
बोधं मरक्कयुं पोरिन्नटुक्कयुं । ११३
पोकातवण्णं परिभवं वाय्क्कयुं
चाकातवर् जळन्मारेन्नुरय्क्कयुं । ११४
पिन्तिरिञ्ञेन्तिनु पोकुन्नतेङ्किल् ना-
मन्तकन्वीट्टु पूकेणमेन्निङ्ङने ११५
चिन्त वेटिञ्ञटुत्तीटुन्नितु परि-
पन्थिकळुं तिरि निल्लुनिल्लेङ्किलो ११६
कुन्तं गदासि परशुपरिघादि-
सन्ततं तूकिनारन्धकारान्तरे । ११७

अपना प्राण त्यागकर भूमि पर गिरा और भीम अत्यन्त दुःखित हुआ। युधिष्ठिर आदि दुःखित हुए। श्रीकृष्ण कुछ प्रसन्न होकर बोले— "अब कर्ण की शक्ति कम हो गयी है और अर्जुन की रक्षा करना इतना कठिन नहीं है।" कारुण्यसागर मुकुन्द ने उस समय यही कहा। १०६-१११ राजाओं की तो नींद कम हुई, उनका कोप बढ़ा, खेद अधिक हुआ, उनकी दुर्बलता हुई, प्रमोद नष्ट हुआ, बोध कम हुआ, वे युद्ध की ओर बढ़े। उनको न दूर होनेवाला परिभव हुआ। उनको ऐसा लगा कि जो मरे नहीं वे सब जड़ हैं, हम वापस क्यों चलें, अगर जाना ही है तो यमराज के घर में प्रवेश करें। इस प्रकार वे निश्चिन्त होकर आगे बढ़े। शत्रुगण ने भी, घूमो ! 'ठहरो ठहरो' ऐसा कहते हुए अन्धकार में कुन्त, गदा, तलवार, परिघ आदि शस्त्रों का प्रयोग किया। राजगण घने अन्धकार में क्रोध और अभिमान के आवेश में आकर उग्र शस्त्र हाथ में

उग्रशस्त्रङ्ङळुं क्रोधवुं मानवुं
कैक्कॊण्टट्टुत्तु मुळुत्तोरिरुट्टत्तु । ११८
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिलेतुं तिरियातॆ
तिङ्ङि वीण्टुं पटतम्मिलिटचेॅन्नु । ११९
कुत्तुकॊण्टु कुटल्माल तुऱिक्कयुं
मत्तगजङ्ङळ् पटिञ्ञु किटक्कयुं । १२०
चक्रमॆऱिञ्ञु कळुत्तु मुऱिक्कयुं
मुल्गरंकॊण्टु गात्रङ्ङळमर्क्कयुं । १२१
मुष्करमायिग्गदकॊण्टटिक्कयुं
खळ्गङ्ङळेट्टु खण्डिच्चु विऱय्क्कयुं । १२२
रक्तं पलपल दिक्किलॊलिक्कयुं
नक्तञ्चरादिकळार्त्तु कळिक्कयुं । १२३
वानरराक्षसन्मार् पॊरुन्पोलॆयुं
दानवनिर्ज्जरन्मार् पॊरुन्पोलॆयुं १२४
संहाररुद्रन् प्रळयकालत्तिङ्कल्
संहरिच्चीटुन्नितॆन्नकणक्कॆयुं १२५
दारुणमायितु युद्धमतुकण्टु
पोराळिवीरन् धनञ्जयन् चॊल्लिनान्— १२६
मानमेऱीटुन्न वीररॆल्लावरुं
मानिच्चु ञान् पऱयुन्नतु केळ्क्कणं । १२७
निद्रादिकॊण्टु पलर्क्कुं विषममु-
ण्टित्थं मुहूर्त्तमुऱङ्ङुक नामिनि । १२८

लिए आगे बढ़े । ११२-११८ अन्धेरे में आपस में पहचान न सकने से किसी तरह सेना के अन्दर घुसे । घूसे खाने के कारण उनके आन्त्र निकल आये । मत्त हाथी गिरकर पड़े थे । चक्र फेंककर गरदन काटे गये मुगदर के प्रयोग से शरीर पीसे गये । गदा से तीव्र आघात किये गये । खड्ग लगकर घायल होकर काँपने लगे । स्थान-स्थान पर रक्त बह रहा था और राक्षस आदि गरजते हुए खेल रहे थे । वानरों और राक्षसों के युद्ध के समान, देवों और दानवों के युद्ध के समान, प्रलयकाल में संहार करनेवाले रुद्र की संहारक्रिया के समान यह युद्ध भी दारुण हुआ । तब युद्धवीर धनञ्जय ने कहा— "सब मानीवीर सुनें जो मैं सादर कहने वाला हूँ । ११९-१२७ बहुत लोगों को नींद आ रही है इसलिए हम

अप्पोळुदिक्कुममृतकिरणनुं
पिल्पाटु काणां जयवुमजयवुं । १२९
योगिप्रतियोगिकळतु केट्टुटन्
रागवशालवनाशियुं चॊल्लिनार् । १३०
ऎल्लावरेयुं जयिक्काय् वरिक नी
नल्लनाय् वाळ्कनेकंनाळ् नरोत्तम ! १३१
कुंभिकुलोत्तमस्कन्धममर्न्नवर्
कुंभिकुंभस्थले वीणुरङ्ङीटिनार् । १३२
संभोगतान्तरायंभोजनेत्रमार्
कुंभस्तनान्तरे वीणुरङ्ङुंपोले । १३३
पारिल् निन्नीटुं पदातिकळ् पारिलुं
तेरिल् मेवुं महावीरन्मार् तेरिलुं १३४
अश्वङ्ङळतन्मेलिरुन्नोरविटेयुं
विश्वसिच्चानन्दमुळक्कॊण्टुरङ्ङिनार् । १३५
कायिकसादवुं मानसखेदवुं
पोयितॆल्लावनुं निद्रयिलान्नेरं । १३६
मन्दमन्दमुयर्न्नीटिनान् चन्द्रनुं
चन्द्रिकयुं पोन्नु पारिल् परन्नुते । १३७
निर्ज्जरेन्द्रात्मजनर्ज्जुननुं गुण-
गर्ज्जनवुं चेय्तु चॊल्लिनान् पिन्नेयुं । १३८

मुहूर्त भर सोयें। तब सूर्य का भी उदय होगा, तत्पश्चात् जय और पराजय की बात देखी जायगी।" यह सुनकर योगी और प्रतियोगी ने प्रेम से धनञ्जय को आशीर्वाद दिया। "सभी पर तुम्हारी जीत हो! हे नरोत्तम! अच्छा बनकर तुम चिरकाल तक राज करो।" अपने उत्तम हाथियों के कन्धे दबाकर वे कुंभियों (हाथियों) के कुंभस्थल पर सिर रखकर सो गये। जैसे संभोग से थक कर अपनी स्त्रियों के कुंभस्तनों के बीच लेटकर सो जाते हैं। १२८-१३३ भूमि पर खड़े पैदल सैनिक भूमि पर, रथ पर स्थित महावीर रथ पर, घोड़ों पर बैठे योद्धा घोड़ों पर, सविश्वास आनन्द के साथ सो गये। तब सबका शारीरिक दौर्बल्य और चित्त का खेद निद्रा के कारण नष्ट हुआ। धीरे धीरे चान्द उठा और सारी पृथ्वी पर चांदनी फैली। इन्द्रपुत्र अर्जुन ने अपने धनुष की ज्या का गर्जन कराकर फिर कहा— "अब नींद छोड़कर एक

आरुमौरु पदं पिन्नोक्कि वय्क्कातॆ
नेरे पौरुविनुऴक्कवुं कैविट्टु । १३९
मानमोटे मरिच्चीटुन्नताकिलो
वानवर्नाट्टिल् सुखिच्चु वसिच्चिटां । १४०
शत्रुक्कळॊक्कयॊटुङ्ङि नां जीविक्कि-
लित्रिलोकत्तिल् निऴञ्ञ यशस्सॊटे १४१
मित्रकळत्रादिकळोटॊरुमिच्चु
पृत्थ्वियुं वाणु सुखिच्चु वसिच्चिटां । १४२
इत्थं पऴकयुं बाणङ्ङळ् तूकयुं
वृत्रारिपुत्रन् विळयाट्टु कण्टाशु १४३
चित्तं तॆळिञ्ञु गुरुवटुत्तीटिना-
नप्पोळटुत्तान् विराटन् द्रुपदनुं । १४४
कॆल्पोटु कौन्तान् भरद्वाजपुत्रनुं
चिल्पुरुषन् पुरुषोत्तमन् चॊल्लिना- १४५
नुळ्प्रमोदत्तोटु पार्त्थनोटन्नेरं ।
कर्ण्णनॆयुं भरद्वाजसुतनॆयु- १४६
मिन्नुतन्ने कॊलचॆय्यणमर्ज्जुना !
नम्मुटॆ पैतलॆक्कॊन्नतु चिन्तिक्किल् १४७
चॆम्मे जयद्रथनल्लिवरायतुं ।
ऎवं पलवुमरुळ्चॆय्युन्नेरत्तु १४८
देवन् दिनकरन् सूर्यन्तिरुवटि
चण्डांशु वेदस्वरूपन् विभावसु १४९

भी पद पीछे की ओर न रखकर सब ठीक से लड़िये। इज़्ज़त के साथ मरने पर सुख से स्वर्ग में निवास हो सकेगा। शत्रुओं के नष्ट होने पर अगर हम जीवित रहेंगे तो इस त्रिलोकी में पूर्ण यश के साथ अपने मित्र और कलत्र आदि सहित पृथ्वी का राज करते हुए हम सुख से रह सकेंगे।" १३४-१४२ ऐसा कहते हुए और बाण छोड़ते हुए वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) की लीला देखकर और प्रसन्न होकर गुरु (द्रोण) निकट आये। तब विराट और द्रुपद भी सामने आये। भरद्वाजपुत्र ने वध करना प्रारम्भ किया तब चित्पुरुष पुरुषोत्तम ने प्रमोद के साथ पार्थ से कहा—"हे अर्जुन, कर्ण को और भरद्वाजपुत्र को आज ही मारना चाहिये जब हम सोचते हैं कि हमारे बच्चे को इन्होंने मरवाया था। यह लोग जयद्रथ

स्वर्ण्णपिण्डाभ कलन्नं सहस्रांशु-
तन्ने किळक्कु तुटुतुटेक्काणायि । १५०

द्रोणवधं

मन्नवन्मारुं तेळिञ्ञारतुनेरं
बन्धिच्चु चर्म्मायुधादियोटुं तदा १
सन्ध्यानमस्कारवुं चेय्तितेवरु-
माशु युधिष्ठिरशासनयालथ । २
केशवनर्ज्जुनन्तन्रे महारथ-
माशुगतुल्यवेगेन नटत्तिनान् । ३
आचार्यने वधिच्चीटुवानन्नेरं
हस्त्यश्वपत्तिरथादिपेरुम्पट-
येत्रयुण्टेन्नु मतिक्करुताक्कुमे । ४
अंबुधिपोले परन्नितु भूमियि-
लंबरदेशवुं भास्करन्तन्नटे ५
बिंबवुं नन्नाय् मरञ्ञुचमञ्ञितु ।
संविल्स्वरूपनव्यक्तनजन् पर- ६
नादिपरन् पुरुषन् परमीशन-
नादिमुकुन्दननन्तननाकुलन् ७

नहीं हैं।" जब इस प्रकार निवेदन कर रहे थे तब देव दिनकर, पूज्य सूर्य, चण्डाशु, वेदस्वरूप, विभावसु स्वर्णपिण्ड की शोभावाले सहस्रांशु पूर्व दिशा में स्पष्ट दिखाई दिये। १४३-१५०

द्रोणवध

उस समय राजगण प्रसन्न हुए और उन्होंने अपने आयुध और चर्म धारण कर लिया और युधिष्ठिर की आज्ञा से सब ने सन्ध्या का नमस्कार किया। केशव ने अर्जुन के महारथ को बाण के समान वेग से चलाया। आचार्य का वध करने के लिए कितने हाथियों, पैदल सैनिकों और रथादियों की बड़ी सेना निकली, यह कोई भी न कह सकता है। वह समुद्र के समान भूमि पर फैल गयी। आकाश और सूर्य का बिंब दोनों बिलकुल छिप गये। संवित्स्वरूप, अव्यक्त, अज, पर, आदि पर, पुरुष, परमेश, आदिमुकुन्द, अनन्त, अनाकुल, १-७ श्रीपति, भूपति, देव, जगत्पति, गोपति, धर्मपति, हरि, सत्पति

श्रीपति भूपति देवन् जगत्पति
गोपति धर्म्मपति हरि सत्पति ८
वृष्णिपति करुणानिधि श्रीनिधि
कृष्णन् सतांपति सच्चिन्मयन् हरि ९
यज्ञपति मति मत्पति तत्पति
यज्ञविदांपति, यज्ञमयन् परन् १०
कूटस्थनव्ययनाय नारायणन्
गूढस्थनाचार्यवैभवं कण्टिट्टु ११
गूढस्मितंचॆय्तिवण्णमरुळ्चॆय्तु—
कूटलरन्तकनाय गुरुविनॆ- १२
द्देवासुरन्मारॊरुमिच्चॆतिर्क्किलु-
मावतल्लावर्क्कुं जयिप्पानिनियुटन् १३
कॊल्वानुपायं मकन् मरिच्चानॆन्नु
चॊल्विन् पॊळिपऱञ्ञालॆन्तु दूषणं ? १४
जीवरक्षय्क्कसत्यं चॊल्कयॆन्नतु ।
देवमुनीश्वरन्मार्क्कुं मतमल्लो । १५
ऍन्नतु केट्टतु चॊन्नान् वृकोदरन्
निन्न गुरुवरन् कोपिच्चितन्नेरं १६
इन्नेयॊटुक्कुवन् पाण्डवरॆयॆन्नु ।
तन्नेयुंकूटॆ मऱन्नटुत्तीटिनान् । १७
मूलबलादिकळोटु रघुवरन्
कोलाहलत्तोटणञ्ञतुपोलॆय- १८

वृष्णपति, करुणानिधि, श्रीनिधि, कृष्ण, सतांपति, सच्चिन्मय, हरि, यज्ञपति, मतिमत्पति, यज्ञजाननेवालों के पति, यज्ञमय, पर, कूटस्थ, अव्यय, नारायण, गूढस्थ ने आचार्य का वैभव देखकर मन्दस्मित करते हुए इस प्रकार निवेदन किया— "शत्रुओं के नाशक गुरुजी को देव और असुर मिलकर भी अगर प्रयत्न करें, जीतना असंभव है। उनको जीतने का यही उपाय है कि कहो कि उनके पुत्र का निधन हो गया। झूठ बोलने में क्या दोष है ? ८-१४ जान बचाने के लिए झूठ बोलना यह तो देव और मुनीश्वरों के लिए भी मान्य है।" यह सुनकर भीम ने कहा— "गुरुवर ने उस समय क्रुद्ध होकर इन पाण्डवों को आज ही समाप्त कर देंगे ऐसा कहते हुए अपने को भी भूलकर आगे बढ़ा था। मानो रघुवर

म्मामुनिनन्दननाय गुरुवरन्
मामुनिशिष्यन् धनुर्व्वेदपारगन् १९
कण्णिलकप्पॆट्ट वैरिकळॆयॊक्क-
क्कॊन्नॊटुक्कीटिनानप्पोळतु कण्ट २०
निन्न विश्वामित्रनत्रि वसिष्ठनुं
पिन्नॆयुमंगिरस्सादिकळाकिय २१
धन्यतपोधनर् चॊल्लिनारादराल्
सन्नाहमित्र वेण्टीला महामते ! २२
पोरुं पॊरुततिनियटङ्ङीटुक ।
पोरिलनेकं जनमॊटुङ्ङीटिनार् । २३
नल्लतिल्लेतुमहिंसय्क्कु तुल्यमॆ-
न्नॊल्लामुनिकळुं चॊन्नतु केट्टवन् २४
नल्लॊरु तत्वमवरोटु चॊल्लिनान् ।
चॊल्लुवान् वेल तत्तात्पर्यमोर्क्किलो २५
ईश्वरेच्छावशन्माराय नामॆल्ला-
मीश्वरन्तन्मतं चॆय्कॊन्नतेवरू । २६
चॆय्त शुभाशुभकर्म्मानुभोगवुं
चॆय्ते मतियावितेवनुं निर्ण्णयं । २७
मारारि पण्टु पुरमॆरिच्चॆय्वति-
न्नारूढकोपमोटेयटुक्कुंवण्णं २८

अपनी प्रधान सेना के साथ बड़े कोलाहल से आगे बढ़ रहे हैं। महामुनि (भरद्वाज) के पुत्र और महामुनि (परशुराम) के शिष्य, धनुर्वेद के पारंगत गुरुवर ने अपनी दृष्टि में आये सभी शत्रुओं को समाप्त कर दिया। यह देखते खड़े विश्वामित्र, अत्रि, वसिष्ठ और अंगिरा आदि धन्य तपोधनों ने कहा— हे महामते ! इतने सन्नाह की आवश्यकता ही न थी। १५-२२ युद्ध तो अब बहुत हो गया, अब शान्त हो जाईये। युद्ध में अनेक लोग समाप्त हो गये। सभी मुनियों ने कहा कि अहिंसा के समान कुछ भी नहीं है। यह सुनकर गुरु ने उनको एक अच्छा तत्त्व सुनाया। सोचिये तो उनका (ईश्वर का) तात्पर्य समझाना कठिन है हम जो ईश्वर के वश में हैं अवश्य उनकी इच्छा के अनुसार ही चलते हैं। अपने किये शुभ और अशुभ कर्मों का फल सबको भोगना अवश्य पड़ता है। पूर्वकाल में जिस प्रकार मारारि (शिवजी) ने पुरों का दाह करने

पॆट्टॆन्नु पॊट्टुमिटिक्कुनेर् वैरिकळ्
ञॆट्टुमारु चॆरुञाणॊलियुमिट्टु २९
निष्ठुरभावमोटेऱ्मलरिय-
म्मट्टलर्बाणारिशिष्यशिष्यन् द्रुतं ३०
पऱ्लर्क्कूट्टमॊटुक्कित्तुटङ्ङिना-
नऱ्मिल्लातोळं भूपतिवीररुं ३१
मुट्टुं चतुरङ्गमायुळ्ळ सैन्यवुं
मुट्टुमरनाळिकय्क्ककमन्नेरं ३२
द्रोणरॊटुक्कियतु कण्टवर्कळुं
प्राणनिलाश कळञ्ञुनिन्नीटिनार् । ३३
धर्म्मत्तिनाधारमाय नारायणन्
कर्म्मैकसाक्षि जगन्मयनीश्वरन् ३४
सन्मयन् चिन्मयन् जन्महीनन् परन्
कल्मषनाशनन् ब्रह्मात्मकन् हरि ३५
निर्म्मलन् निर्म्ममन् जन्ममृतिहरन्
सच्चिन्मयन् सकलेश्वरन् माधवन् ३६
सम्मतं पाण्डवन्मारोटु चॊल्लिनान् ।
धर्म्मयुद्धेन जयिक्करुतार्यनॆ ३७
धर्म्मजन्तानॊरसत्यं पऱकिले
चॆम्मे वधिच्चुकूटू गुरुवीरनॆ । ३८
रोहिताश्वप्रभन् रोहिताश्वद्विजन्
रोहिताश्वास्त्रेण संहरिक्कुंमुन्पे ३९

के लिए चढ़े कोप से आगे बढ़े उसी प्रकार कामारि (शिव) के शिष्य (परशुराम) के शिष्य (द्रोण) झट से फूटनेवाले स्तनित के समान, २३-२९ शत्रुओं को कँपानेवाला ज्याघोष करके, निष्ठुर भाव से गरजते हुए शत्रुगणों को समाप्त करने लगा। असंख्य भूपतिवीरों को और सम्पूर्ण चतुरङ्गसेना को द्रोण का आधी नाड़िका के अन्दर ही समाप्त कर लेना देखकर वे अपनी प्राणरक्षा की आशा खो बैठे। धर्म के आधार नारायण कर्मैकसाक्षी, जगन्मय, ईश्वर, सन्मय, चिन्मय, जन्महीन, पर, पापनाशन, ब्रह्मात्मक, हरि, निर्मल, निर्मम, जन्म और मरण का नाशक, सच्चिन्मय, सकलेश्वर माधव ने, ३०-३६ पाण्डवों को अपनी अनुमति दी। धर्मयुद्ध से आर्य (द्रोण) हाराया न जा सकता है, युधिष्ठिर के एक झूठ

विश्वरक्षार्त्थमायात्मरक्षार्त्थमा-
यश्वत्थामा हतनेन्नोन्नु चोल्लणं । ४०
उन्नतनायोरु शत्रुगजत्तिनु
मन्नवनश्वत्थामावेन्नु पेरिट्टान् । ४१
विश्वनाथन्नियोगत्तालतु वधि-
च्चश्वत्थामा हतनायितिन्निङ्ङने ४२
चोल्लि युधिष्ठिरनाचार्यनन्नेर-
मल्ललिल् वीणतु चोल्लवल्लेनहं । ४३
ओल्लात पोय् परयुं धर्म्मपुत्रने-
न्नुळ्ळिल्लोरुनेरमोर्त्तील ञानय्यो । ४४
विल्लिनि वय्क्केन्नतुंवरुं निर्ण्णयं
नल्ल गतियेनिक्कुण्टेन्नतुं वरुं । ४५
कल्याणदेवताकामुकनाकिय
मल्लारितन्मतं त्रैलोक्यसम्मतं । ४६
दु:खंकलर्न्नु कैयुं तळर्न्नाकुलाल्
निल्क्कुं गुरुविने निग्रहिच्चीटुवान् ४७
पेट्टेन्नु वाळुमिळक्कियटुत्तितु
निष्ठुरनाय धृष्टद्युम्ननन्नेरं । ४८
बाणङ्ङळ्कोण्टङ्ङटुत्तुकूटाय्कयाल्
प्राणभयंकोण्टु वाङ्ङिनान् पिन्नेयुं । ४९

बोलने से ही गुरुवीर का वध किया जा सकेगा। अग्नि के समान प्रभावाले यह आग्नेयब्राह्मण जब तक विश्वरक्षा और आत्मरक्षा के लिए कहना चाहिये कि अश्वत्थामा मारा गया है। तब राजा (युधिष्ठिर) ने एक बड़े शत्रु के हाथी को अश्वत्थामा नाम दिया। कृष्ण की आज्ञा से उसे मारकर युधिष्ठिर ने 'अश्वत्थामा हत है' ऐसा कहा। आचार्य जो दु:ख में मग्न हुआ उसका मैं वर्णन न करूँगा। ३७-४३ 'युधिष्ठिर बिलकुल निषिद्ध झूठ बोलेगा'— हा! यह मैंने अपने मनमें कभी न सोचा था। अब निस्सन्देह यह भी होगा कि वह धनुष को रख दे। यह भी होगा कि मेरी अच्छी गति हो। कल्याणदेवता (लक्ष्मी) के कामुक और मल्लारि (कृष्ण) का मत त्रैलोक्य के लिए मान्य है। दु:खित होकर थके हाथ, खड़े गुरु का निग्रह करने के लिए तुरन्त अपनी तलवार लिए निष्ठुर धृष्टद्युम्न आगे बढ़ा। पर बाणों के कारण वह निकट न पहुँच सका और प्राणभय के कारण पीछे हट गया। इस प्रकार

इङ्ङने चेन्नानिरुपत्तोरुतुट-
रङ्ङु वाळ्प्पाट्टिलटुत्तीलोरिक्कलुं । ५०
ऍन्तुमिवनॆयिनि वधिच्चीटुवन्
ऍन्नटुत्तान् गुरुवीरनुमन्नेरं । ५१
घुष्यत्गुणनादवुं केट्टु शङ्कर-
शिष्यशिष्यप्रियशिष्यशिष्यन् तदा ५२
निन्नालुमङ्ङॆन्तुरचॆय्तु मुल्प्पुक्कु
सन्नाहमोटु पोर्चॆय्तटुत्तीटिनान् । ५३
मारुति चॊन्नान् गुरुविनोटन्नेरं
पोरुं पॊरुततिनियॆन्तोरुकार्यं ? ५४
इल्लामॊऴि भवानॆङ्ङळॆक्कॊल्लुवान्
नल्ल मकन् मरिच्चानतु केट्टीले ? ५५
चॊल्लुमारिल्लॊरुनाळुमे धर्म्मज—
नॊल्लात पॊय्यॆन्नरिक गुरुवर । ५६
उळ्ळतॆन्नोर्त्तु कलशोत्भवन् निज
विल्लुं विरवोटु वच्चिरुन्नीटिनान् । ५७
कॊन्नतु ञानल्ल चत्ततवनल्ल
निर्णयिक्कामॊन्नॊऴिञ्ञु मट्टॊन्निल्ल । ५८
संन्यसिच्चेन् मम कर्म्ममॆल्लामवि-
च्छिन्नमाय् मेवुं परब्रह्मतेजसि । ५९

इक्कीस बार निकट जाने का प्रयत्न किया पर कभी भी तलवार प्रयोग करने योग्य निकट न पहुँच सका । ४४-५० 'अब इसका वध अवश्य करूँगा' ऐसा समझकर गुरुवर निकट आये । तब गूँजते ज्याघोष को सुनकर शिवजी के शिष्य के शिष्य के प्रियशिष्य का शिष्य 'ठहरिये ठहिरिये' कहता हुआ आगे बढ़ा और बड़ी तैयारी करके लड़ने लगा । उस समय भीम ने गुरु से कहा— "अब लड़ना बन्द कीजिये, अब लड़कर क्या करना है ?" यह असत्य है कि आप हम लोगों को मारना चाहते हैं । आपके सुपुत्र का निधन हो गया है, सुना नहीं ? गुरुवर ! जानलीजिये कि युधिष्ठिर कभी निषिद्ध झूठ नहीं बोलता है । तब उसे सच मानकर द्रोण अपना धनुष रखकर बैठ गये । ५१-५७ न मैं वध करनेवाला हूँ और न वह मरने वाला है । इसमें सन्देह नहीं कि एक को छोड़कर और कुछ नहीं है । मैं अपने सारे कर्म को अविच्छिन्न परब्रह्म के तेज में

नन्दिच्चिवण्णं भरद्वाजनन्दनन्
वन्दिच्चु तेर्त्तटंतन्निलिरिक्कुन्पोळ् ६०
चेन्नाररिके कृपरुमंगेशनुं
मन्नवराय गन्धारीतनयरुं ६१
कुन्तीसुतन्मारुमंघ्रियुगत्तिङ्कल्
वन्दिच्चुनिन्नतु कण्टु गुरुवरन् ६२
निङ्ङळ्क्कु नल्लतु मेन्मेल् वरेणमे
निङ्ङळिलिन्निप्पोरुन्नुक वेण्टतुं । ६३
आयुधं वच्चितु ञानेन्नरिञ्ञालु-
मायुस्सिल्लातवरल्लो मरिच्चतुं । ६४
आरुमोरुत्तरेक्कोल्लुमारिल्ल म-
ट्टारुमे कोल्लुकयिल्लेन्नु तेरुक । ६५
आत्माविने परमात्माविलाक्किना-
नात्मज्ञानं कलर्न्नोरु गुरुवरन् । ६६
प्राणायामं तुटङ्ङीटिनानन्नेरं
प्राणिहिंसाकर्म्मणां प्रायश्चित्तमाय् । ६७
प्राणनिरोधवुंचेय्तु लोकत्तिनु
प्राणनां नारायणनेयुं ध्यानिच्चु ६८
काणायतेल्लां भगवल्स्वरूपमाय्
काणायनेरमानन्दनिमग्ननाय् ६९

संन्यास कर रहा हूँ। इस प्रकार प्रसन्न होकर और वन्दना करके भरद्वाजपुत्र (द्रोण) रथ पर बैठ गये। तब कृप और कर्ण और भूपाल गान्धारी के पुत्र, और कुन्ती के पुत्र सब आकर उनके चरणों पड़े। यह देखकर (गुरु ने कहा) "तुम लोगों को उत्तरोत्तर भला हो! तुम लोगों में यह युद्ध नहीं होना चाहिए। जान लो कि मैंने अपना आयुध रख दिया। जिनकी आयु नहीं थी वे ही मरे हैं जान लो कि कोई किसी का वध नहीं करता है और वध करनेवाला और कोई नहीं है।" ५८-६५ गुरुवर ने आत्मज्ञान प्राप्त करके अपनी आत्मा को परमात्मा में विलीन कर दी। प्राणिहिंसा का जो कार्य किया गया था उसके प्रायश्चित्त के रूप में प्राणायाम प्रारम्भ कर दिया। प्राण का निरोध करके, लोकों के प्राण नारायण का ध्यान करते हुए दीखती वस्तुओं को भगवत्स्वरूप समझकर, देखते समय आनन्दनिमग्न होकर जब आचार्य भगवान् से एक

तानुं भगवानुमोन्निच्चिरिक्कुम्पोळ्
द्रोणरेक्कोल्वानायुण्टाय पाञ्चालन् ७०
निल्लुनिल्लोल्लायितेन्नतेल्लावरुं
चोल्लि वाविट्टु कूटुन्नतिन्मुन्नमे ७१
कण्णुमटच्चिरुन्नीटुमाचार्यने-
त्तिण्णमणञ्ञु तलयरुत्तीटिनान् । ७२
मेल्पट्टु मिन्नल्पोले पोयि देहियुं
कीऴ्पट्टु दारुपोले वीणु देहवुं । ७३
ओटिनार् पेटिमुळुत्तोरु कौरवर्
वाटि मुखवुं विजयादिकळ्क्कोल्लां । ७४
धृष्टनाय् मेवुन्न धृष्टद्युम्नन्तन्नो-
टोट्टु कोपिच्चु परञ्ञितु सात्यकि— ७५
दुष्टतयेन्नयुं कष्टमत्रे तव
तुष्टि वन्नीलितु कण्टवर्क्काक्कुंमे । ७६
शिष्टनायोरु परमगुरुविने
नष्टमाक्कीटुवानाक्कुं तोन्नुं बलाल् ? ७७
तङ्ङळिल् पेपरञ्ञारोट्टतुनेर-
मङ्ङु केट्टानी विशेषं गुरुसुतन् । ७८
कल्पान्तवह्नि लोकं दहिच्चीटुवा-
नुल्भूतनाय् वळर्न्नु ज्वलिच्चेन्नयुं ७९

होकर बैठे थे तब पाञ्चाल (धृष्टद्युम्न) ने, जो द्रोण का वध करने के लिए पैदा हुआ था, औरों के 'ठहरो ठहरो, 'यह ठीक नहीं, ऐसा चिल्लाते हुए इकट्ठा होने के पहले ही, आँख बंद करके बैठे आचार्य को वेग से पकड़कर सिर काट डाला। ६६-७२ बिजली के समान आत्मा ऊपर उठी और लकड़ी के समान शरीर नीचे गिरा। आत्यधिक डरकर कौरव भागे-दौड़े और विजय (अर्जुन) आदियों का मुँह उतर गया। धृष्ट धृष्टद्युम्न से क्रुद्ध सात्यकि ने कहा— यह तुमने अत्यन्त शोचनीय दुष्टता की है। जिसने भी देखा, वह असंतुष्ट है। शिष्ट परमगुरु को बल से नष्ट करने की यह बात तुम्हें छोड़कर किसको सूझेगी ? इस प्रकार जब आपस में निन्दा कर रहे थे तब गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) ने यह समाचार सुना। ७३-७८ लोक को जलाने के लिए पैदा होकर और तेज़ होकर और कोप के कारण गरजता हुआ अग्नि जिस प्रकार आगे बढ़ता है उसी प्रकार वह

कोपिच्चलरिय्टुक्कुन्ननुपोलें
वेपिच्चु विल्लुं कुळियॆक्कुलच्चेय्तु ८०
शोभिच्च नारायणास्त्रं तॊटुत्तवन्
दीपिच्चटुत्ततु कण्टोरु पाण्डवर् । ८१
तापिच्चकन्नितु भीतिपूण्टॆन्नयुं
गोपिच्चुकॊण्टितु गोपिकाकान्तनुं । ८२
कण्टुनिन्नोरु सुरासुरर् चॊल्लिना-
रुण्टामिनि दुरियोधननु जयं । ८३
अस्त्राग्नियिल् शलभोपममायोरे
पृत्थ्वीपतिकळ् दहिक्कुन्नोरुनेरं ८४
मुग्धविलोचनन्तानरुळिच्चेय्तु—
मुक्तशङ्कवरुमस्त्रं वणङ्ङुविन् ८५
वीणु नमस्करिच्चीटुविनेवरुं ।
द्रोणजनोटु मटावतिल्लेतुमे । ८६
आदिजगल्गुरुवाय नारायण-
नाधिपोवानरुळ्चेय्ततु केट्टोरु ८७
मेदिनीशन्मार् नमस्करिच्चीटिना-
रादरवोटटङ्ङी तुलोमस्त्रवुं । ८८
आरुं नमस्करिच्चीटाय्क मन्नरे !
पारमभिमानहानियुण्टामतिल् ८९

(अश्वत्थामा) क्रोध से काँपता हुआ, अपने धनुष में ज्या बाँधकर और चमकनेवाले नारायणास्त्र को लगाकर आगे बढ़ा। उसे देखकर पाण्डव अत्यन्त भयभीत होकर अलग हुए और गोपिकावल्लभ ने भी अपने को छिपा लिया। और देखनेवाले सुर और असुरों ने कहा "अब दुर्योधन की विजय हो जायगी"। अस्त्र के अग्नि में शलभ के समान जो मरे, उनकी जब राजगण दाह-क्रिया कर रहे थे तब मुग्धविलोचन (कृष्ण) ने कहा— अब निश्शङ्क लगातार अस्त्र आते रहेंगे, प्रणाम करो सब साष्टाङ्ग नमस्कार करो। द्रोणपुत्र से और कोई बात न चलेगी। ७९-८६ राजगण ने आदिजगद्गुरु नारायण का खतरा दूर करने के लिए कही बात सुनकर आदर के साथ नमस्कार किया। अस्त्र भी बिलकुल शान्त हुए। "हे राजगण! कोई भी नमस्कार न करो! उसमें हमारी बड़ी प्रतिष्ठाहानि होगी। गुरुपुत्र के विरोध में मेरे साथ बिना सङ्कोच के युद्ध

पोरिनु नेरे गुरुसुतन्तन्नोटु
पोरुविनेन्नोटुकूटि मटियाते । ९०
शूरतयुळ्ळरिवीररे वेल्लुकिल
पारिल् परन्नोरु कीर्त्तियुण्टाय्वरुं । ९१
पोरिल् मरिक्किल् परगति साधिक्कु-
मारुं मरियातिरिक्कयिल्लूळियिल् । ९२
शत्रुप्रयुक्तमामस्त्रशस्त्रङ्ङळिल्
चित्ते भयंपूण्टोळिच्चु मण्टीटुकिल् ९३
पृत्थ्वियिलाशु दुष्कीर्त्तियुण्टाय्वरुं ।
मृत्यु वन्नाल् नरकाप्तियुं निश्चयं । ९४
मुग्धाक्षिमारुं परिहसिच्चीटुमे ।
मित्रवर्गङ्ङळुं निन्दिक्कुमेत्रयुं । ९५
अेन्नु परञ्ञणञ्ञीटुन्न मारुति-
तन्नोटु नेरिट्टितश्वत्थामावुतान् । ९६
भीमनेक्कोल्लुमवनेन्न भीतियाल्
श्यामळकोमळनाय नारायणन् ९७
अस्त्रं नमस्करिक्कॆन्तरुळ्चेय्तितु ।
वृत्रारिपुत्रनुं चोल्लिनानङ्ङने । ९८
मानियां मारुति कृष्णपार्त्थोक्तिकळ्
मानियाते रणत्तिन्नु कोप्पिट्टप्पोळ् ९९
मारुतितन्नेप्पिटिच्चु पतिप्पिच्चु ।
पारिल् नमस्करिप्पिच्चितु पार्त्थनु १००

कीजिये । शूर और वीर शत्रुओं का वध करने से सारी पृथिवी पर फैलने वाली कीर्ति होगी । युद्ध में मरने से पर-गति हमें सिद्ध होगी । यहाँ कोई भी मरने से बच न सकता है । शत्रु के अस्त्र और शस्त्रों से डरकर जो सब छोड़ भागता है उसकी दुष्कीर्ति सारी पृथ्वी पर फैलेगी । और मरने पर वह निस्सन्देह नरक प्राप्त करेगा । ८७-९४ मुग्धाक्षियाँ उसकी हँसी उड़ायेंगी । और मित्रगण निन्दा करेंगे" । ऐसा कहते हुए आगे बढ़नेवाले भीम का अश्वत्थामा ने सामना किया । 'यह भीम का वध करेगा' इस डर से श्यामल और कोमल नारायण ने अस्त्र का नमस्कार करने के लिए कहा । अर्जुन ने भी यही कहा । पर मानी मारुति कृष्ण और पार्त्थ की बात न मानकर युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा ।

वन्दिच्चितन्नेरं वायुतनयनुं ।
मन्दिच्चितेट्वुं नारायणास्त्रवुं । १०१
अप्पोंळुताग्नेयमस्त्रं गुरुसुतन्
कॆल्पोटयच्चानतिनाशु पाण्डवन् १०२
वारुणास्त्रं कौण्टतिनॆत्तटुत्तितु
धीरन् गुरुसुतन् पोरिनु कोप्पिट्टु । १०३
दिव्यास्त्रजालमन्योन्यं प्रयोगिच्चु ।
सव्यसाचिक्कु वळर्न्नितु कोपवुं । १०४
वेदान्तवित्ताय वेदव्यासन् मुनि
वेदज्ञनोटरियिच्चु पुराणवुं । १०५
भूभारनाशनार्त्थं पुरुषोत्तमन्
भूपति भूमियिल् वन्नु पिरन्नितु १०६
भूसुरसत्तमभारद्वाजात्मज
भूसुरतापसधर्म्मरक्षार्त्थमाय् । १०७
वासुदेवन्मतं नेरे धरियाते
वासवनन्दननोटु कोपिक्कोला । १०८
यज्ञसेनात्मजनायिपिरन्नू धरा-
यज्ञकुण्डत्तिङ्कल्निन्नु धृष्टद्युम्नन् १०९
निन्नुटॆ तातमरणत्तिनायतु
मुन्नमे दैवमतमॆन्नरियणं । ११०

तब अर्जुन ने भीम को पकड़कर और भूमि पर गिरा कर उससे नमस्कार कराया और वायुपुत्र ने वन्दना भी। तब नारायणास्त्र बिलकुल मन्द हो गया। ९५-१०१ तदनन्तर गुरुसुत ने आग्नेयास्त्र का ढंग से प्रयोग किया। उसके जवाब में पाण्डव ने वारुणास्त्र भेजकर उसे रोक दिया। तब धीर गुरुपुत्र फिर युद्ध करने आया और दोनों ने एक दूसरे पर दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया। सव्यसाचि (अर्जुन) का कोप बहुत बढ़ा। तब वेदान्त के विद्वान् मुनि वेदव्यास ने वेदज्ञ (अश्वत्थामा) को बीती बातें सुनाईं। पृथ्वी का भार हल्का करने के लिए पुरुषोत्तम ने पृथ्वी पर भूपति का रूप धारण किया है। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! भारद्वाजपुत्र! ब्राह्मणों और तापसों के धर्म की रक्षा के लिए यह हुआ है। वासुदेव के मत को बिना ठीक से समझे वासवपुत्र (अर्जुन) से कोप न करो। १०२-१०८ धृष्टद्युम्न यज्ञसेन के पुत्र के रूप में यज्ञकुण्ड से

तत्वार्थमायुळ्ळ वाक्यं बहुविध-
मित्तरं द्वैपायननरुळिच्चेय्तु । १११
वाङ्ङिच्चुकोण्टु पोयानतु कण्टाशु
वाङ्ङिनार् पाण्डवरुं पटकूट्टवुं । ११२
देवकीनन्दनन् देवदेवन् वासु-
देवनुं देवराजात्मजन् तानुमाय् ११३
देवकळ् पेय्युन्न पूमळ्येट्टेट्टु
देवभूदेवादिकळेयुं वन्दिच्चु ११४
युद्धनिवृत्तराय् पोकुन्न नेरत्तु
पद्धतितोरुं जयजयशब्दवुं ११५
वाद्यघोषत्तोटु चेन्नु तोळुतभि-
वाद्यवुंचेय्तु युधिष्ठिरांघ्रिद्वयं । ११६
कृष्णनां पैतामहनुमतुनेरं
कृष्णसमक्षमिवण्णमरुळ्चेय्तु । ११७
देवनुमापति रुद्रन् भवन् महा-
देवन् पशुपति वामदेवन् परन् ११८
केवलन् चन्द्रचूडन् त्रिपुरान्तकन्
गोविन्दसेवितन् गोपतिवाहनन् ११९
सेविप्पवर्क्कु जयत्ते वरुत्तीटुं
देवदेवनतिनिल्लोरु संशयं । १२०

तुम्हारे पिता के निधन के लिए पैदा हुआ। जान लो कि पहले ही से देवों का यही मत था। द्वैपायन ने तत्त्वार्थ का बोध करानेवाली इस प्रकार की अनेक बातें कहीं। तब (अश्वत्थामा) वापस चला गया। उसे देखकर पाण्डव और उनकी सेना भी वापस चली गयी। देवकीनन्दन देवदेव, वासुदेव देवराजात्मज (अर्जुन) के साथ देवों की पुष्पवृष्टि को स्वीकार करते हुए, देवों और भूदेवों की वन्दना करते हुए, युद्ध से निवृत्त होकर चले गये। तब पद-पद पर उनका जयघोष हुआ और वाद्यों का घोष भी हुआ। दोनों ने जाकर युधिष्ठिर के चरणों का अभिवादन किया। १०९-११६ उस समय पितामह कृष्णद्वैपायन ने कृष्ण के सामने इस प्रकार निवेदन किया। देव उमापति, रुद्र, भव, महादेव, पशुपति, वामदेव, पर, केवल, चन्द्रचूड, त्रिपुरान्तक, गोविन्द का वन्दित, गोपति (वृषभ) वाहन देवदेव सेवा करनेवालों की विजय ला देता है इसमें कोई

भावनयालतिभक्तिपूण्टेंप्पळुं
सेविच्चुकोळ्ळुविनेन्नरुळ्चेय्तोरु- १२१
वेदव्यासन्मोळि केट्टु तेळिञ्ञवर्
खेदवुं तीर्त्तार् गुरुमरणोत्भवं । १२२
पार्त्थादिकळुं जयिच्चु निलविळि-
च्चार्त्तुकळिच्चुटन् कैनिलपुक्कारे-
न्नास्थया चोल्लीटिनाळ् किळिप्पैतलुं । १२३

॥ द्रोणं समाप्तं ॥

सन्देह नहीं है । अपनी भावना से बड़ी भक्ति के साथ उनकी सेवा करलो । इस प्रकार कहनेवाले वेदव्यास की बात सुनकर वे प्रसन्न हुए और गुरु के निधन से उत्पन्न उनका खेद दूर हुआ । अर्जुन आदि जयघोष करते हुए और खेलते हुए सोल्लास अपने तंबू में चले गये । इस प्रकार शुकी ने सादर कथा सुनाई । ११७-१२३

॥ द्रोणपर्व समाप्त ॥

कर्णं

हर ! हर ! हर ! शिव ! शिव ! शिव !
पुरहर ! मुरहर ! नतपद ! १
भवमृतिभयहर ! स्मरहर !
भव ! मृड ! वृषद्ध्वज ! विषाशन ! २
गिरीश ! शङ्कर ! दुरितनाशन !
गिरिनिलयन ! गिरिजावल्लभ ! ३
पर ! पर ! पर ! परमपाहि मां
परमानन्दमॆन्ततॆ पऱयावू । ४

कर्णन्टॆ सेनाधिपत्यं

शुकतरुणि ! निन् वचनपीयूष-
सुखपानमोदलहरिकॊण्टु ञान् १
परवशनायिच्चमञ्ञितॆट्वुं
पऱक शेषवुमिनि नी वैकातॆ । २
पऱयामॆङ्किलॆन्तवळु चॊल्लिनाळ्
परप्पु कण्टोळं पणिपणि चॊल्वान् । ३
पलक्कुं वेणमॆन्तिरिक्किलिन्नियुं
चुरुक्किच्चॊल्लुवन् कथ नटेतिलुं ।
चुरुक्किक्कॊळ्वानुं पणियत्रे तुलों ४

कर्णपर्व

हे हर ! हर ! शिव ! शिव ! शिव ! हे पुरहर ! हे मुरहर ! जिनके चरणों पर लोग पड़ते हैं ! हे जन्म और मरण का भय दूर करने वाले ! सुरहर ! हे भव ! मृदु ! (करुणा करनेवाले !) वृषध्वज ! विष खानेवाले ! हे गिरीश ! शंकर ! पापनाशन ! हे पर्वत पर निवास करनेबाले ! पार्वतीवल्लभ ! हे पर ! पर ! पर ! परम ! मेरी रक्षा करो मैं परमानन्द अनुभव कर रहा हूँ, इतना ही कहना है ! १-४

कर्ण का सेनाधिपत्य

हे शुकतरुणि ! तुम्हारे वचनामृत के सुखपान की आनन्दलहरियों से मैं बिलकुल बेवस हो गया हूँ । अब अविलम्ब ही तुम शेष कथा सुनाओ । उसने कहा—अच्छा मैं कहूँगी । परन्तु इतनी विस्तृत दिखाई देती है कि

अहरहरहमघमकलुवा—
नहिकुलपतिशयनलीलकळ् ५
महितभारतचरितव्याजेन
महतामानन्दं वरुवान् चॊल्लुवन् । ६
भरद्वाजात्मजन् मरिच्चॊरुशेषं
भरिच्चितु पट दिनकरसुतन् । ७
करुत्तुळ्ळर्ज्जुनन्शरत्तालंगेशन्
मरिच्चानॆन्नतु परञ्ञु सञ्जयन् । ८
कुरुप्रवीरनां धृतराष्ट्रन्तानु-
मुऱक्कॆ वाविट्टङ्ङलऱि वन्मरं ९
मुऱिच्चु भूमियिल् चॆरिच्चतुपोलॆ
विऱच्चु वीणितु पॆरुत्त दुःखत्ताल् । १०
तॊऴिच्चलच्चुवीणुरुण्टुं पॆण्णुङ्ङळ्
कुळप्पं पारमाय् चमञ्ञितन्नेरं । ११
विमलमानसन् विदुररॆन्नयुं
विरयॆच्चॆन्नॆट्टुत्तरचनॆप्पुल्कि । १२
कुळुर्त्त नीर्कॊण्टु तळिच्चु मोहवुं
तळर्त्तिनान् चिल वचनङ्ङळ्कॊण्टुं । १३
अतु केट्टु नृपनरुळिच्चॆय्तितु
मतिमानाकिय विदुररोटेवं— १४

कहना बहुत कठिन है। अगर सब सुनना चाहते हैं तो पहले से भी संक्षेप में कहूँगी। संक्षेप करने में भी काठिन्य बहुत है। पाप दूर करने के लिए मैं प्रतिदिन शेषशायी की लीलाओं को महनीय महाभारत की कथा कहने के बहाने बड़ों का आनन्द उत्पन्न करने के लिए सुनाऊँगी। १-६ द्रोण के निधन के बाद दिनकरसुत (कर्ण) ने सेना का नेतृत्व किया। सञ्जय ने कहा कि शक्तिशाली अर्जुन के बाणों से अंगेश (कर्ण) का निधन हुआ। कुरुप्रवीर धृतराष्ट्र दुःखित होकर जोर से चिल्लाता हुआ और काँपता हुआ गिर पड़ा, मानो एक बड़ा पेड़ कटकर भूमिपर गिर गया हो। छाती पीटती हुई और लोटती हुई स्त्रियों ने बड़ा गड़बड़ मचा दिया। विमल मानस वाले विदुर ने तुरन्त जाकर राजा को उठाया और छाती से लगाया। शीतल जल से छिड़ककर और आश्वासन देनेवाली कुछ बातें कहकर मोह कम कर दिया। ७-१३ उनको सुनकर राजा ने बुद्धिशाली विदुर से इस

तनयन्मारुटॆ मरणवुं कण्टु
तनियॆ ञानिनि मरियातॆ भुवि १५
मरुवीटुन्नतु विधिबलमय्यो
मरणं प्रापिप्पान् कळिवु कण्टील । १६
ऎरियुमग्नितन् नटुविल् वीळ्कयो
गरळमन्पोटु कुटिक्कयो नल्लू ? १७
अतिदुरितं चॆय्ततुमनुसरि-
च्चवनियिलिनि वसिच्चतु मति । १८
विविधमित्तरं परञ्ञु कॆळुन्न
नृपतिवीरनोटुरचॆय्तु सूतन् । १९
मतिनयननाय् मरुवुं मन्नव !
मतिमति खेदमिनियॆल्लांकॊण्टुं । २०
मतिकॆटुळ्ळवर् सुतरॆन्नाकिलुं
मतिमान्मारायोर् कळकॊन्नेवरू । २१
अरिविल्लातॊरु नकनॆ लाळिच्चि-
ट्टरिवुळ्ळोरु नी करकॊन्नुं वन्नू । २२
मरकळ् वॆव्वेरॆ पकुत्तवन्तानुं
मरयवर् कौषारविमुनीन्द्रनुं २३
अरिवुळ्ळ तव विदुररुं पिन्नॆ-
यरियप्पोकात चपलनां ञानुं २४

प्रकार कहा—पुत्रों का मरण देखने के बाद और स्वयं मृत्यु से बचकर मैं इस पृथ्वी में अकेला जो रह गया यह हन्त ! विधि का ही बल है। मरण प्राप्त करने के लिए कोई उपाय भी नहीं दीखता है। क्या जलती हुई आग में कूद पड़ूँ अथवा खुशी से विषपान करूँ ? इतना घोर पाप करने के बाद अब मुझे इस पृथ्वी पर और न रहना है। इस प्रकार विविध बातें करके विलाप करनेवाले भूपति से सूत (सञ्जय) ने कहा—हे बुद्धि से नयन का काम लेनेवाले भूपाल ! बस, अब सर्वथा खेद करना बंद करो। १४-२० बुद्धिमान् लोगों को अपने पुत्रों का भी अगर वे बिगड़ी बुद्धिवाले हों त्याग करना ही पड़ेगा। अपने मूढ़ पुत्र का लालन करने के फलस्वरूप अब आप जैसे बुद्धिमान को भी रोना पड़ रहा है। वेदों का विभाग करनेवाले मुनि, ब्राह्मणलोग, मैत्रेयमुनि, आपका विद्वान् विदुर जी, अज्ञ और चपल मैं, नदीतनय (भीष्म), कृप, भोज, वेदान्त के विद्वान्

नदीतनयनु कृपरुं भोजरुं
विदितवेदान्ति सनल्क्कुमारनु २५
अखिललोकनायकन् परन् पुमान्
निगमक्कातलाय् विळङ्ङुन्न कृष्णन्- २६
तिरुवटितानुमरुळ्चेय्तु मुन्नं
तिरुमुन्पिल्निन्नु पलरुं केळ्क्कवे । २७
अवयोन्नु तव मनस्सिलेट्टति-
ल्लवनियेक्कोतिच्चोरु सुयोधनन् २८
पऱञ्ञतुतन्ने मनसि कैक्कोण्टु
परिलाळिच्चतु निमित्तमायिप्पोळ् २९
वरुन्नु सन्तापमिनियुं मेल्क्कुमेल्
वरुमत्रेयतुं सहिच्चिरिक्क नी । ३०
नृपनोटिङ्ङने झटिति सञ्जयन्
कपटं कैविट्टु पऱञ्ञतु केट्टु । ३१
परितापं पूण्टु नरपति चोन्नान्—
पऱक कर्ण्णन्टे मरणवृत्तान्तं ३२
पऱयामेङ्किलेन्नवनु चोल्लिनान् ।
परन्न वन्पटय्क्कधिपतियाक्कि- ३३
यभिषेकंचेय्तानथ सुयोधनन् ।
तपनपुत्रनाय् विळङ्ङुं कर्ण्णने ३४
पुनरपि कैयुं पिटिच्चवन्तन्नो-
टनुनयत्तोटु पऱञ्ञु भूपनु— ३५

सनत्कुमारजी, अखिल लोकनायक पर पुरुष, वेदों का मूल पूज्यचरण कृष्ण, इन सबने पहले ही सबके सामने आपसे निवेदन किया था । २१-२७ पर आपने कुछ भी न माना, भूमि (राज्य) के लालचवाले सुयोधन ने जो कुछ कहा उसे स्वीकार किया, उसका परिपालन किया । उसके कारण अब दुःख हो रहा है, आगे और भी आनेवाला है । आपको सहना ही पड़ेगा । सञ्जय ने इस प्रकार राजा से कपट छोड़कर सब साफ़ साफ़ कह दिया । तब दुःखित होकर राजा ने कहा—"कर्ण की मृत्यु का वृत्तान्त सुनाओ" सञ्जय ने उत्तर दिया—'अच्छा, तो कहूगा' । 'सुयोधन ने तपनपुत्र (सूर्यपुत्र) कर्ण को अपनी बड़ी सेना के अधिपति के रूप में अभिषेक किया । २८-३४ तदनन्दर उसके हाथ पकड़कर उसको समझाते हुए राजा

भयमेल्लामिनिक्ककलेंप्पोयितु
जयमिनि वरुमिनिक्कु निर्ण्णयं । ३६
पितृपितामहसमनायुळ्ळोवे !
चतिवेंटिञ्ञोरु सखियायुळ्ळोवे ! ३७
युधिष्ठिरन्तन्नप्पिटिच्चुकेट्टणं
युधि विजयने वधिक्कयुं वेणं । ३८
पणियिल्लेतुमिन्नतिनेनिक्केन्तु
पऱञ्ञु कोप्पिट्टु पुऱप्पेट्टु कर्ण्णन् । ३९
नटत्तिच्चु वाद्यमलऱिच्चुं कोण्टु
नटिच्चु नालांगप्पटयुमायटल्- ४०
क्कळत्तिलम्मारु निऱञ्ञु कौरवर्
कळिच्चु वीरवादवुं पऱञ्ञुटन् । ४१
कुतिच्चु चाटुन्न कुतिरकळुटे-
कुळम्पुकळेट्टु किळऱिप्पोङ्ङुन्न- ४२
पोटियुं तेरुरुळोलियुं वैरिकळ्-
पोटियुम्माऱलऱिन करिकळुं ४३
कुटुकुट निलविळिच्चु कालाळुं
कुटतळकळुं कोटिमरङ्ङळुं ४४
परन्न पोर्क्कळं निऱञ्ञ वन्पट
निऱञ्ञतु कण्टु झटिति पाण्डवर् ४५

ने कहा—"अब मेरा भय दूर हो गया, अब मेरी विजय अवश्य होगी, हे पितामह के समान कर्ण ! हे ! पिता और पितामह के तुल्य ! हे ! कपटरहित मित्र ! अब युधिष्ठिर को पकड़कर बाँधना चाहिए और युद्ध में अर्जुन का वध भी करना चाहिए।" 'यह काम बहुत आसान होगा' ऐसा कहता हुआ कर्ण युद्ध करने के लिये तैयार हुआ। वाद्य बजवाते हुए अपनी चतुरङ्ग सेना को निकाला और युद्धभूमि कौरवों से भर गयी जो सोल्लास कूदते थे और वीरवाद बकते थे। ३५-४१ कूदते घोड़ों के खुरों के लगने से खुदी भूमि से उठती धूल, घूमते रथों की ध्वनि, शत्रुओं को पीस डालने लायक गर्जन करनेवाले हाथी, चिल्लाते पैदल सैनिक, बड़े छत्र और झण्डों के खंभे विशाल युद्धभूमि में फैली हुई बड़ी सेना, यह

पतिनाऌांदिनमुषसि लोकैक-
पति वसुमतीपति रमापति ४६
पति धर्म्मपति सतांपति हरि
सुरपति स्वाहापति पितृपति ४७
निऋृति यादसांपति सदागति
निधिपति पशुपति कराष्टक- ४८
पति गोपीजनपति मम पति
यदुपति दयानिधि मखपति ४९
सुरपति धर्म्मपति सतांपति ।
सुरपतिसुतरथमतिलेऱि ५०
सुरुचिरमाय वपुषा कण्टाशु
सुखिच्चु पोरिनु पुऱप्पेट्टारल्लो । ५१
मकरव्यूहवुं चमच्चितु कर्ण्णन्
मकरकुण्डलसखि धनञ्जयन् ५२
पुरन्दरसुतपुरुषकुञ्जरन्
पुरन्दरसेनापतिसमन् पार्त्थन् ५३
चमच्चु चन्द्रार्द्धप्रभमाकुं व्यूहं ।
भ्रमिच्चतु कण्टु कुरुवीरन्मारुं । ५४
ऍतिर्त्तु भीमसेननोटश्वत्थामा
मदिच्चॊरानकळॆतिर्त्ततुपोलॆ । ५५
समुद्रङ्ङळ् तम्मिलुप्पॊरुन्नपोलॆयुं
परुत्त शैलङ्ङळ् पॊरुन्नपोलॆयुं ५६

सब पाण्डवों ने देखा । सोलवें दिन तड़कर लौलैकपति, पृथ्वी के पति रमापति, पति, धर्मपति, सज्जनों का पति, हरि, सुरपति, स्वाहापति, पितृपति, निऋृति, वरुण, सदागति, निधिपति, पशुपति, कराष्टकपति, गोपीजनपति, मेरा पति, ४२-४९ यदुपति, दयानिधि, मखपति, सुरपति धर्मपति, सताँपति कृष्ण अर्जुन के रथ पर बैठे । अपने सुरुचिर शरीर के साथ बैठे कृष्ण को देखकर सब प्रसन्न हुए और युद्ध के लिये निकले । कर्ण ने मकरव्यूह बनाया । मकरकुण्डल (कृष्ण) के मित्र, धनञ्जय, इन्द्रपुत्र और पुरुषश्रेष्ठ, इन्द्र के सेनापति के तुल्य पार्थ ने तो चन्द्रार्ध के समान प्रभावाले व्यूह की रचना की । उसे देखकर सभी कुरुवीर घबड़ाये । अश्वत्थामा ने भीमसेन का सामना किया, मानो दो

तटिच्च वृत्रनुममर्त्त्यनाथनुं
नटिच्चु पण्टेरेप्पोरुतपोलेयुं ५७
महिषनुं दुर्ग्गाभगवतितानुं
महितघोरमाय् पोरुतपोलेयुं ५८
दशरथनरपतितनयनुं
दशवदननुं पोरुतपोलेयुं ५९
भयमाकुंवण्णं पोरुतिरुवरुं
मरियातेकण्टु पिरिञ्ञारन्नेरं । ६०
श्रुतकीर्त्तिपतिनृपनुं शल्यरो-
टेतिर्त्तु पोर्चेय्तु मरियाते तोट्टान् । ६१
दिनकरतनयनुं नकुलनुं
चितमोटु पोरुतुलञ्ञु माद्रेयन् । ६२
कृपरोटेट्टु तोट्टितु धृष्टद्युम्नन्
कृतवर्म्माविनोटथ शिखण्डियुं । ६३
विषधरद्ध्वजनोटु युधिष्ठिरन्
विषमिच्चुनिन्नु जयिच्चानन्नेरं । ६४
पलरोटुं कूटेप्पोरुतानर्ज्जुनन्
परिभवं वन्नतोळिच्चानेवर्क्कुं । ६५
जयिच्चु पाण्डवरोटुक्कं नूट्टुव-
रोळिच्चु पाञ्ञितु पिरिञ्ञितु पट । ६६

मत्त हाथी आपस में लड़ रहे हों। ५०-५५ मानो दो समुद्र आपस में लड़ रहे हों, या दो चट्टान आपस में लड़ रहे हों। जैसे शक्तिशाली वृत्र और अमर्त्यों (देवों) के नाथ ने पहले आपस में लड़ा था, जिस प्रकार महिषासुर और भगवती दुर्गा ने आपस में घोर युद्ध किया था, और जैसे राजा दशरथ के पुत्र और दश-वदन (रावण) ने युद्ध किया था। अन्ततः बिना मरे दोनों अलग हुए। राजा श्रुतकीर्ति के पति शल्य का सामना करके मरा तो नहीं पर हारा। कर्ण और नकुल ढंग से लड़े और माद्रेय (नकुल) हारा। ५६-६२ युद्ध में धृष्टद्युम्न कृप से हारा और शिखण्डी कृतवर्मा से। युधिष्ठिर तो विषधरध्वज (दुर्योधन) से लड़कर जीत गया। अर्जुन ने बहुतों से युद्ध किया जो सब हटाकर अलग हुए। पाण्डव अन्त में जीत गये, (धृतराष्ट्र के) शतक (सौ पुत्र) युद्ध से अलग होकर भागे और उनकी सेना विगठित हुई।

पऱञ्ञितु सुयोधननु कर्ण्णनो-
टनन्यबन्धुवाय् चमञ्ञु ञानेंटो । ६७
अरिकळेक्कोंन्नु जयं तरुवति-
न्नरुतु मट़ाक्कुं निनक्कोंळिञ्ञनि । ६८
गुरुविनु पितामहनु मांप्रति
तिरुमनस्सुण्टाय् चमञ्ञीलेतुमे । ६९
चेंरुतु पुञ्चिरिकलर्न्नु कर्ण्णनु
नरवरनोटु पऱञ्ञानन्तेरं— ७०
अरियुन्नीलयो विजयन्तन्नुटे
चरितमेंल्लामे निरूपिच्चु काण्क । ७१
मणिमयमाय मकुटं नल्कियि-
तमरकळ्वरनवनुटे शंखु ७२
कोंटियटयाळं कोंटिय मारुति
पेरुत्त खाण्डवं दहिप्पिच्चमूल- ७३
मुरत्त गाण्डीवं कोंटुत्तितग्नियुं ।
शरमोंटुङ्ङात शरधियुमुण्टु । ७४
परमीशन् पशुपति जगन्नाथन्
कोंटुत्तोरु पाशुपतवुमुण्टल्लो । ७५
हरि जगन्नाथन् पति नारायण-
नरिकत्तुण्टल्लो तुणयायेंप्पोंळुं । ७६
विजयनेंन्नु पेरवनाकुन्नतु
जयमेंल्लांकोंण्टुमवने वन्तिटू । ७७

सुयोधन ने कर्ण से कहा—"अब तुम्हारे सिवाय मेरा कोई बन्धु नहीं है। अब तुम्हें छोड़कर और कोई भी शत्रुओं को मारकर विजय न पा सकता है। गुरु और पितामह (भीष्म) की मेरे प्रति कभी कृपा न रही।" ६३-६९ तब कर्ण ने तनिक मुस्कराकर नरवर (सुयोधन) से कहा— क्या तुम विजय का पूरा चरित्र न जानते हो। जरा विचार कर देखो। इन्द्र ने उसको एक मणिमय मुकुट दे रखा है और उसका शंख उसका ध्वज-चिह्न है शक्तिशाली मारुति, विशाल खाण्डव को जला देने के कारण अग्नि ने उसको गाण्डीव धनुष दे रखा है। उसके पास एक तूणीर भी है जिसमें शर कभी समाप्त न होते हैं। और परमेश्वर, पशुपति, जगन्नाथ शिवका दिया पाशुपत अस्त्र भी है। हरि, जगन्नाथ पति नारायण उसका सदैव

परशुरामन्तन्ननुग्रहत्तिना-
लॊरुवण्णं जयं वरुमॆन्नाकिलुं ७८
ऒरुवरिल्ल तेर् नटत्तुवानिनि-
य्क्कुटमयोटतिन्नयय्क्क शल्यरे । ७९
अतु केट्टु सुयोधननुमन्नेर-
मनुनयत्तोटु परञ्ञु शल्यरो- ८०
टटिमलरिण गतियॆनिक्किनि-
यटियनुवेण्टियॊरुवस्तु वेणं । ८१
निनविनिक्कॆन्टे जनकनॆन्नत्रे
तनयनॆन्नॆन्नेक्करुतिटेणमे । ८२
पल परिभवमिनिक्कु चेर्त्तोरु-
वलरिपुसुतवधत्तिनिन्नु नी ८३
दिनकरसुतरथं नटत्तणं
मनुकुलवरसमनायुळ्ळोवे ! ८४
अतु सुयोधनन् परञ्ञनन्तरं
मतिमान् माद्राधिपतियां शल्यरुं ८५
अभिमतमॆन्नङ्ङिरिक्किलुं तनि-
य्क्कभिमतमल्लॆन्नतु भाविच्चुटन् ८६
अतिकोपत्तोटु परञ्ञितन्नेर-
मतिनोराळ् कण्टतळकितॆन्नयुं । ८७

सहायक विद्यमान है। उसका नाम ही विजय है और विजय उसी की होगी। ७०-७७ हाँ परशुराम के अनुग्रह से किसी प्रकार जय हमारी भी होगी, पर अब रथ चलाने के लिए कोई नहीं है। इसलिए अपनी आज्ञा से शल्य को भेज देना। यह सुनकर सुयोधन ने विनीत होकर शल्य को समझाया। आपके चरणों को छोड़कर मेरी कोई गति नहीं है। इस बन्दे के लिए कृपया एक काम कर दें! मैं आपको अपना पिता समझता हूँ और आप कृपया मुझे अपना पुत्र समझें। बलरिपुपुत्र (अर्जुन), जिसने मेरे अनेक परिभव किये हैं, के वध के लिए आप कर्ण का रथ चलावें, हे! मनुकुल के श्रेष्ठ के तुल्य! ७८-८४ सुयोधन के इस प्रकार कहने के बाद मतिमान् माद्राधिपति शल्य, जिसको वस्तुतः वह प्रस्ताव स्वीकार था, अस्वीकार का अभिनय करता हुआ बड़े कोप से बोला—"इस काम के लिए तुमने एक अच्छा आदमी ढूँढ

करुत्तेळुं महारथन्मारेज्जयि-
च्चिरिक्कुमेन्नोटु परञ्ञतु नन्नु । ८८
पेरुतु धिक्कारं निनक्केन्नुळ्ळतु
करुतिक्कोळ्ळामेन्नते परयेण्टू । ८९
धृतराष्ट्रात्मजनतु केट्टप्पोळे
तेरुतेरेत्तोळुतुटने चोल्लिनान्— ९०
कुरयक्कण्टल्ल परञ्ञतेतुं आन्
कुरिक्कोण्टीटरुततु भवानेतुं । ९१
तनिक्कुतान्पोन्न जनङ्ङळुमोक्क-
त्तनिक्कु वेण्टुकिलेळियतुं चेय्युं । ९२
अतिनु नाणक्केटकप्पेटातानुं
मतिगुणमुळ्ळोर्क्कतु धरिच्चालुं । ९३
त्रिपुरन्मारोटु पोरुवानीशनु
तिरमोटु तेरु नटत्ति धातावुं । ९४
महिमयेतुमे कुरञ्ञुपोयील
महतामीशनाकिन विरिञ्चनुं । ९५
कथय भूपते ! पुरमथननु
रथमुण्टो पण्टु नटत्ति नान्मुखन् ? ९६
परञ्ञु केळ्क्कट्टे परमार्त्थमेन्नु
परञ्ञु माद्रेशनोटु सुयोधनन् । ९७
परञ्ञानेङ्किलो तेळिञ्ञु केट्टालुं
परमीशन् पुरमेरिच्चेय्ततेल्लां । ९८

निकाला है ! शक्तिशाली महारथियों को जीतनेवाले मुझसे तुमने एक अच्छा प्रस्ताव किया है। तुम्हारा मेरे प्रति यह जो बड़े धिक्कार का भाव है उसे मैं न भूलूँगा, बस इतना ही कहना है।'' यह सुनकर धृतराष्ट्रपुत्र (सुयोधन) ने तुरन्त ही हाथ जोड़कर कहा—'आपको छोटा समझकर मैंने यह प्रस्ताव न किया है आप बुरा न मानिये। ८५-९१ हमारे पक्ष में जो उठे हैं वे आवश्यकता पड़ने पर सब कुछ कर देते हैं। समझदार लोगों के लिये उसमें कोई प्रतिष्ठाहानि नहीं है। यह जान लीजिये। त्रिपुरों के विरुद्ध युद्ध करने के लिये ब्रह्मा ने शिवजी का रथ चलाया था। इससे देवों के नाथ ब्रह्मा की महिमा में कोई कमी न हुई। हे राजन् ! आपही कहिये। क्या पूर्वकाल में चतुर्मुख ने शिवजी का रथ चलाया था

त्रिपुरदहनं-धातृसारथ्यम्

असुरकळ्कुलप्पेरुमाळ् तारक-
नवनुमक्कळाय् पिऱन्नु मून्नुपेर् । १
अवर्कळ्नामं केट्टरुळ् विद्युन्मालि-
यवनु तन्पि तारकचक्षुस्सेन्नुं २
अपरनायतु कमलाक्षनव-
रतिशक्तन्मार् मूवरुमोरुमिच्चु ३
तपस्सु पञ्चाग्निनटुविल्निन्नु चे-
य्तमर्त्यवैरिकळ् विरिञ्चनन्तन्नोटाय् ४
विबुधत्वमिरन्नतु किट्टाय्कयाल्
विमलमायुळ्ळ पुरङ्ङळ् कामिच्चार् । ५
ओरुत्तरालुमङ्ङोरिक्कलुं नाशं
वरुत्तिक्कूटात्त पुरत्रितयत्ते ६
वरुत्तिक्कोळ्ळुवान् वरत्ते नल्कणं
करुत्तु ञङ्ङळ्क्कु पेरुक्कयुं वेणं । ७
उरत्तवण्णमे वरिक निङ्ङळ्क्कु
सहस्रवत्सरं तिकयोळंकालं ८
वरिक पिन्ने नाशवुंमवट्टिने-
न्नरुळ्चेय्तु चतुर्म्मुखन् मऱञ्ञप्पोळ् । ९

कि नहीं ? 'यह परमार्थ मुझे सुनाओ' (शल्य ने कहा)। तब सुयोधन माद्रेश (शल्य) से बोला—"अच्छा तो खुशी से सुनिये कि परमेश ने पुरों को कैसे जलाया था।" ९२-९८

त्रिपुरदहन-ब्रह्मा का सारथ्य

असुर कुलों के नेता तारक के तीन पुत्र हुए। उनके नाम सुनिये—विद्युन्माली, उसका अनुज तारकचक्षु, और तीसरा कमलाक्ष। इन तीनों शक्तिशाली अमर्त्यवैरियों (असुरों) ने पञ्चाग्नि के बीच में स्थित होकर तपस्या की और ब्रह्मा से देवत्व माँगा। जब वह न मिला तब तीन शोभायमान पुर माँगे। हमको वर दे दीजिये कि हमारी तीन पुरियाँ हो जायँ जिनका कोई भी कभी नाश न कर सके। और हमारी असाधारण शक्ति भी हो।" १-७ तब चतुर्मुख ने कहा—"पूरे सहस्र वर्ष तक

वरङ्ङळ्कोण्टवर् मयनोटु चोन्नार्
पुरङ्ङळ् निर्म्मिच्चु तरिकेन्नप्पोळे । १०
अवनियिलोरु शतकयोजना-
वळि विस्तारत्तिलिरुन्पुतन्नालुं ११
भुवर्लोकत्तिङ्कल् चमच्चु वेळ्ळिक्को-
ण्टमरलोकत्तु कनकंतन्नालुं । १२
परिणाहं मून्नमोरुपोलेतन्ने
परिचोटु वाणारवट्टिल् मून्निलुं । १३
परितापंपूण्टु भुवनवासिकळ्
परवशन्माराय् चमञ्ञितेट्टवुं । १४
विबुधरक्कालं विरिञ्चन्तन्नोटु
विविध वेदन पऱञ्ञतुनेरं । १५
शतमखादियुं चतुर्म्मुखनुमाय्
शतपत्रायतनयनन् मेविटुं- १६
पयःपयोधितन्नुटे करेच्चेन्नु
भयप्रकारङ्ङळुणर्त्तिच्च नेरं । १७
कळिवुण्टाक्कुवन् पोरुत्तालुमव-
र्क्कळिविल्लारालुं शिवनालेन्नियें । १८
पुनरतु केट्टु पुरन्दरादिकळ्
पुकळ्त्तिनार् चेन्नु गिरिजाकान्तने । १९

वैसा ही हो, जैसा आपने मांगा है और उसके बाद सबका नाश हो।" ऐसा कहकर अन्तर्द्धान हो गये। अपने वरों को लेकर वे मय के पास पहुँचे और बोले—"अब पुरियों का निर्माण कर दो।" तुरन्त ही मय ने भूलोक में एक लोहे की पुरी शत योजन विस्तार वाली, निर्माण कर दी और भुवलोक में एक चान्दी की पुरी और स्वर्गलोक में एक स्वर्ण की पुरी निर्माण कर दी। तीनों पुरियों का विस्तार वही थी और तीनों उनमें सुख से रहने लगे। भुवनों के निवासी सब घबड़ाये और अत्यन्त लाचार हुए। ८-१४ तब देवों ने ब्रह्मा से अपने विविध दुःखों का निवेदन किया। इन्द्र आदि देवगण चतुर्मुख के साथ कमलोचन (विष्णु) के निवासस्थान क्षीरसागर के तट पर जाकर अपने भयों का वर्णन किया। (विष्णु ने कहा) "कोई उपाय सोच निकालूँगा। कुछ सबर करो। शिवजी को छोड़कर और कोई इनका नाश नहीं कर सकता।" यह सुनकर इन्द्र आदि

स्तुतिच्चतु केट्टु तेंळिञ्ञु रुद्रनुं
चिरिच्चरुळ्चेय्तु विबुधन्मारोंटाय्— २०
सुरवरन्मारे ! सुखमल्ली चोंल्वि-
नोंरुमिच्चेल्लारुं वरुवानेन्तिप्पोळ् ? २१
सुखमल्लीयेन्नतरुळ्चेय्तप्पोंळे
सुखमाय् वन्नुते मनसि ञङ्ङळ्क्को २२
त्रिपुरन्मारालुळ्ळुपद्रवत्तिनाल्
त्रिभुवनमेल्लां नशिच्चु दैवमे । २३
अवरे निग्रहिच्चभयं नल्कण-
मखिललोकेशा ! शरणमेप्पोंळुं । २४
अतु केट्टु देवनरुळ्चेय्तीटिना-
नवरोंटु पोरिन्नोंरुवस्तुविल्ल । २५
पुरुहूतादिकळतुकेट्टु चोन्नार्—
पुरन्मारे वधिच्चरुळुवानिप्पोळ् २६
कनकमामल वळच्चु विल्लाक्कि-
क्कोंलय्क्क ञाणिनु पेरुत्त वासुकि २७
शरमाकुन्नतु परन् नारायणन्
मरुकळ् नालुण्टु कुतिरकळ्क्किप्पोळ् २८
रविशशिकळ् तेरुरुळुकळाक्का-
मवनि तेर्त्तट्टु चतुर्म्मुखन् सूतन् । २९

देवगण ने जाकर गिरिजाकान्त (शिव) की स्तुति की। स्तुति सुनकर रुद्र प्रसन्न हुए और हँसते हुए देवों से बोले—हे सुरवर ! क्या आप सुख से हैं ? बताइये, आप सब मिलकर क्यों चले आये ? आपने जो हमारा सुख पूँछा उसी से हमारा सुख हो गया। १५-२२ इन त्रिपुरों के उपद्रव के कारण त्रिभुवन का नाश हो रहा है। उनका निग्रह करके हमें अभय प्रदान कीजिये, हे अखिललोकेश ! आपही हमारा शरण हैं। यह सुनकर शिवजी ने कहा—"युद्ध करने के लिए कोई सामग्री नहीं है।" तब इन्द्र आदि बोले—"त्रिपुरों को समाप्त करने के लिए सुवर्णपर्वत को नवाकर धनुष बनाना, लम्बा वासुकि तो डोरी बनेगा, पर नारायण बाण बनेगा, घोड़ों के काम के लिए चारों वेद हैं, सूर्य और चन्द्र रथ के चक्र बनेंगे। भूमि बनेगी रथ का पीठ और ब्रह्मा तो सारथि है ही, अब युद्ध सामग्री में क्या कमी है ? जब इन्द्र आदि देवों ने इस प्रकार कहा

कलहत्तिनेन्तु कुरुविनियेन्तु
वलहन्त्वादियाममरर् चोन्नप्पोळ् ३०
त्रिपुरन्मारेक्कोन्त्तोटुक्कुवानीशन्
त्रिदशन्मारुमायिवण्णं कोप्पिट्टान् । ३१
पुरन्दरादिकळ् पलरुं काण्कवे
पुरं दहिप्पिच्चान् नयनत्तीयाले । ३२
हर ! हर ! स्मरहर ! पुरहर !
पर ! पर ! पर ! वरद ! शंकर ! ३३
शिव ! शिव ! शिवकर ! शिवात्मक !
भव ! भयमृति भवभयहर ! ३४
जय जय नमो नमो जय ऐन्नु
जपिच्चु सेविच्चु सुखिच्चारेवरु- ३५
मतिनु सारथि विरिञ्चनायतु-
ममरकोनु मातलितानल्लयो ? ३६
भुवननायकन् कमलाकामुकन्
कुवलयदलनयनन् माधवन् ३७
कुरुवु तीर्त्तु वासविक्कु सारथि
रवितनयनु विजयनें वेल्वान् ३८
रथं विरवोटु नटत्तुक भवा-
ननुवदिच्चालुं कुरुवु वारायें-
न्ननुसरिच्चु चोल्लिन सुयोधनन् ३९

तब शिवजी ने त्रिपुरों को मार समाप्त करने के लिये देवों के साथ तैयारी की।२३-३१ इन्द्र आदियों के देखते ही त्रिपुर को अपनी आँख की अग्नि से जला दिया। हर! हर! सुरहर! पुरहर! पर! पर! पर! वरद ! शंकर! हे शिव ! शिव ! शिवकर ! शिवात्मक ! भव ! भयमृतिभय भयकर ! । जय ! जय ! नमोनम जय ! इस प्रकार जप करते हुए सब ने सेवा की और प्रसन्न हुए। इस (त्रिपुरनाश) में ब्रह्मा सारथि हुए। आप नहीं जानते हैं कि मातलि इन्द्र का सारथि है ? भुवननायक, कमला के पति कुवलयदलनयन माधव अर्जुन के सारथि हैं और उनकी कोई हानि न हुई। अर्जुन का वध करने के लिए आप रवितनय (कर्ण) के रथ को चलाइये। आप स्वीकार कीजिए, कोई हानि न होगी। इस प्रकार सादर समझाते सुयोधन की परेशानी देखकर माद्रेश बोले। अच्छा तो

प्रतिबन्धं कण्टु परञ्ञु माद्रेशन्—
प्रतिकूलभावं कळञ्ञेनेङ्किल् ञान् ४०
रवितनयनु हितमाकुंवण्णं
पवनवेगेन रथं नटत्तुवन् । ४१
परिकें शिक्षिप्पन् पिळकळ् कण्टाल् ञान्
तरणिनन्दननतिनु कोपिक्कुं । ४२
अविटें ञङ्ङळिल् चेरुतु चीरुन्पो-
ळपजयं वरुमतुमरिञ्ञालुं । ४३
अतु केट्टु नागद्ध्वजनुं कर्ण्णनो-
टतिनु कोपियाय्कँटो सखेयेन्नान् ४४
वळियें सारथ्यं वहिक्कामेङ्किलो
पिळकळ् काणुन्पोळ् परकयुं चेय्यां । ४५
अतिनु कोपमिल्लिनिक्कॅन्नु कर्ण्णन्
मतिमान् माद्रेशन् रथवुं कूट्टिनान् । ४६
ज्वलिच्चु भास्करसुतशरङ्ङळुं
कॊलच्चु काळपृष्ठवुं धरिच्चुटन् । ४७
नटिच्चु तेरतिल् करयेरीटिना-
नटुत्तु मटुळ्ळ चतुरंगङ्ङळुं । ४८
तॆळिञ्ञु गान्धारीतनयन् तेरतिल्
विळङ्ङु कर्ण्णनोटिवण्णं चॊल्लिनान्— ४९

मैं अपना विरोध त्यागकर रहा हूँ । ३२-४० मैं वायु के वेग से रथ चलाऊँगा ताकि कर्ण का हित हो। हाँ, अगर मैंने दोष देखा तो अवश्य डाँटूगा और कर्ण कुपित होगा। हम दोनों आपस में झगड़ा करते रहेंगे उतने में हम हारेंगे, यह भी समझ लो। यह सुनकर नागध्वज (सुयोधन) ने कर्ण से कहा— "यार ! कुपित न होना, अच्छा ? मैं नियम के अनुसार सारथ्य करूँगा और अगर दोष देखूँगा तो बतला भी दूंगा" कर्ण बोला— "अच्छा ! मैं बुरा न मानूँगा।" तब माद्रेश ने रथ को तैयार किया। ४१-४६ कर्ण के बाण चमक रहे थे। उसने ज्या चढ़ाकर अपना धनुष कालपृष्ठ धारण किया। तदनन्तर साभिमान रथ पर चढ़ बैठा और उसकी चतुरङ्ग सेना भी निकट आ गयी। प्रसन्न होकर सुयोधन ने रथ पर विराजमान कर्ण से इस प्रकार कहा— "बिना विलम्ब के कपिध्वज (अर्जुन) का वध करो और युधिष्ठिर को पकड़कर

कपिद्ध्वजन्तन्नॆ वधिक्क वैकातॆ
युधिष्ठिरन्तन्नॆप्पिटिच्चुकॊट्टुक । ५०
निबद्धमॆन्नुळ्ळिलवरिलॆ वैरं
कपिद्ध्वजनिलो निनक्कुमुण्टल्लो । ५१
जयिच्चु वैकातॆ वरिकॆन्नु यात्र-
ययच्चु कौरववरनुमन्तेरं । ५२
अट्टुत्तु राक्षसपिशाचभूतङ्ङ-
ळिटित्तीयुं वीणु विऱच्चु भूमियुं । ५३
कुऱुनरिकळुं करञ्ञितु पारं
नऱुंचोर पारं चॊरिञ्ञु मेघङ्ङळ् । ५४
चुळलियुं काट्टुं प्रतिकूलमायि-
ट्टुटुळऱिवन्नितु कॊट्टुतायेट्वुं । ५५
कळुकुं काकनुं पऱन्नितु मेले-
यॊळुकि कण्णुनीर् कुतिरकळ्क्कॆल्लां । ५६
तटञ्ञु वीणितु गजपदातिक-
ळिटञ्ञु तङ्ङळिल् मुऱिकयुंचेय्तु । ५७
कळिञ्ञवयॊक्कक्कळिच्चु कर्णनुं
नटन्नितु चित्तमुऱप्पिच्चन्नेरं । ५८
वळियिल् कण्टवर् पलरॊटुमप्पोळ्
मॊळिञ्ञानिङ्ङनॆ विरुतुळ्ळंगेशन्— ५९
नरनारायणरिरुवरुमॆङ्ङा-
नॊरुवर् कण्टाकिल् पऱविन् वैकाते । ६०

बाँधो !" मेरे दिल में उनके प्रति वैर बँधा हुआ है और अर्जुन के प्रति तुम्हारा भी तो है। विजय प्राप्त करके जल्दी आओ, कौरव ने इस प्रकार उसको बिदा किया। राक्षस, पिशाच और भूत निकट आये, बिजली गिरी और पृथ्वी काँपने लगी। ४७-५३ सियार बोलने लगे और बादल भी शुद्ध रक्त बरसाने लगे। और प्रतिकूल वात्या और आँधी बड़े ज़ोर से चलने लगीं। गिद्ध और कौए आकाश में उड़ने लगे और घोड़े आँसू गिराने लगे। हाथी और पैदल सैनिक एक दूसरे से टक्कर खाये और दोनों को चोट भी हुई। जो कर सकता था वह सब करके कर्ण साभिमान घूमने लगा। और कई पथिक-जनों से योग्य कर्ण ने इस प्रकार कहा— "अगर नर और नारायण को तुम लोग कहीं देखो

तरुवन् नाट्टुकळ् नगरं ग्रामङ्ङळ्
तुरगवारणरथङ्ङळ् नल्कुवन् । ६१
पोरुतु पार्त्थनेक्कोलचेय्तु पोरिल्
पोरुळवनुळ्ळतटये नल्कुवन् । ६२
ऎविटुत्तोन् पार्त्थनेविटुत्तोन् कृष्णन् ।
कपटं कैविट्टु परविन् कण्टाकिल् । ६३
कळिवुण्टायितुमवनिन्नेन्नुटे
मिळिकळिलकप्पेटुन्नताकिलो । ६४
पलरोटुमित्थं परञ्ञु कर्ण्णनु-
मलमलमेन्नु परञ्ञु शल्यरुं । ६५
पलनाळुं निन्टे वचनङ्ङळ्कोण्टे
कलहं कण्टु ञान् पोळियल्ल कर्ण्णा ! ६६
चपलन्मार्क्किकत्थं परकेन्न शीलं
कपटवुं चत्तालोळिञ्ञुमारुमो ? ६७
ओरु मुहूर्त्तत्तिनिटय्क्कु पार्त्थने-
त्तिरमोटु काट्टित्तरुन्नतुण्टु ञान् । ६८
अवने विल्लुमायटुत्तु काणुन्पो-
ळवनिमुट्टेप्पाञ्ञटवि तेटुं नी । ६९
अवनुटे कीर्त्ति नटनं चेय्युन्नु
भुवनत्तिङ्कलेन्नरिञ्ञतिल्ले नी ? ७०

तो अविलम्ब उनसे कह दो । ५४-६० मैं आज देश, नगर और गाँव दूँगा, मैं घोड़े, हाथी और रथ दूँगा । मैं आज युद्ध में अर्जुन को मारकर उसकी सारी सम्पत्ति दान दूँगा । यह पार्थ कहाँ का है और यह कृष्ण कहाँ का है । अगर उनको तुम लोग देखो तो साफ कह दो ।' अगर वह आज मेरी दृष्टि में आयेगा मैं यह अवश्य करूँगा ।" जब कर्ण ने बहुतों से इस प्रकार कहा तब शल्य बोला— "बस, बस, बहुत कह चुके हो !' बहुत दिन से मैं देख रहा हूँ कि तुम बातों ही में युद्ध कर रहे हो, मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ । इस प्रकार बोलना चपलों का शील है मरने पर भी कपट नष्ट नहीं होता है । ६१-६७ एक मुहूर्त्त के अन्दर मैं अर्जुन को स्पष्ट दिखला दूँगा । उसको धनुष लिए देखकर तुम सारी पृथ्वी पर भागकर कोई वन ढूँढोगे । उसकी कीर्त्ति सारी पृथ्वी पर नाच रही है, यह नहीं जानते हो, क्या ? धनञ्जय तो नरसिंह के

नरसिंहत्तिनुसमं धनञ्जयन्
नरियोटोक्कुं नीयवनोयोक्कुन्पोळ् । ७१
परिकें नाणमिल्लयो निनक्कुळ्ळिल्
पोरुवतिनवनोटु सूतात्मजा ! ७२
पुनरतु केट्टु परञ्ञु कर्णनुं
मनसि कोपं वन्नतु पोराय्कयाल् । ७३
मतिमति पारमधिक्षेपिच्चतु
मतिमान्मारायोर्क्कितु गुणमल्ल । ७४
पेरिकें नन्नल्लो भवान् निरूपिक्किल्
परिपालिक्कुन्नतळकितु नाटुं । ७५
पेरुवळि पोकुं कुलस्त्रीवर्गत्ते-
क्करबलंकोण्टु पिटिच्चु पुल्कियुं ७६
मऱयवरोटु पऱिच्चुकोल्कयुं
मऱिवुकळेन्नियोरुवक्कुंमिल्ल । ७७
पोटिकोण्टे पोकुं मलमूत्रादिकळ्
पोटियाले कुळिकुऱियुसङ्ङनें । ७८
कुलभेदङ्ङळुमऱिकयिल्लारुं
कुलशीलमुळ्ळ जनत्तें निन्दिच्चुं । ७९
मकळुं मातावुं मकन् मरुमकन्
महिषियुं जनकनुं कनिष्ठनुं ८०

समान है, उसके सामने तुम सियार के समान हो। तुमको शरम नहीं आती है कि उससे युद्ध करने के लिए सोच रहे हो, हे सूत!" यह सुनकर कर्ण ने कहा' जो अपना कोप सह न सका— "बस! बस! तुम मेरा अपमान काफ़ी कर चुके हो। बुद्धिमान् लोगों के लिए यह कोई गुण नहीं है। ६८-७४ सोचो तो तुम बहुत अच्छे हो और तुम अपने देश का अच्छा परिपालन कर रहे हो। अपने रास्ते चलनेवाली कुलस्त्रियों को बलात्कार से पकड़कर दूषित करना, ब्राह्मणों का धन लूटकर वध करना और धोखा देना, इन कार्यों के अतिरिक्त वहाँ लोग और कुछ न करते हैं। बिना चूरन खाये उनका मल-मूत्र न उतरता है और चूरन से ही उनका स्नान और तिलक धारण भी होता हैं। कुलभेद कोई भी न जानता है, कुल और शीलवाले जन की निन्दा की जाती है। माँ, बेटी, पुत्र, भाँजा, रानी, पिता, छोटा भाई, सब साथ खेलते हुए और मद्य पीते हुए, ताल

ऑरुमिच्चु कळिच्चिरुन्नु मद्यवुं
परुकित्ताळवुंपिटिच्चु पाटियुं ८१
मदंकॊण्टु वीणु मतिमरन्नुटन्
तळर्न्नु तङ्ङळिल् पकर्न्नु भोगिच्चुं । ८२
मरुवीटुं जनं तव राज्यत्तिङ्कल्
पॆरिकॆ नन्नल्लो पुनरिवयॆल्लां । ८३
मनस्सिल्तोन्नियतिनियुं चॊल्किलुं
निकक्कु नल्लतु परयुन्नुण्टु ञान् । ८४
जळमते ! सूता ! पुनरितु केळ् नी
कळियल्ल पण्टु निनक्कु तुल्यना- ८५
यॊरुपॆरुंकाकनुळवायानवन्-
चरितङ्ङळॆल्लामरिञ्ञतिल्ले नी ? ८६
दिनंतोरुमॆच्चिल् कॊटुत्तॊरु वैश्य-
तनयन्माराय कुमारन्मार् मुन्नं ८७
वळर्त्तानॆन्नतुनिमित्तमाय्क्काकन्
पुळच्चहङ्करिच्चरयन्नङ्ङडॊ ८८
मदत्तोटु चॆन्नु विळिच्चिताळियॆ-
क्कटक्कणं परन्निनि नामॆल्लारुं । ८९
वॆळुत्तमेनियुं ञॆळियुं वॆण्मयु-
मिळच्चु मुन्पिनिक्कयय्क्कयुं वेणं । ९०
अतु केट्टुळ्ळिल् कौतुकत्तोटन्नवु-
मुदधितन्मीते परन्नु मॆल्लवे । ९१

लगाकर गाते हुए अन्त में मद के कारण गिरते हैं, अपने को भूल जाते हैं और थककर आपस में बाँटकर भोग करते हैं। ७५-८२ इस प्रकार करनेवाले लोग तुम्हारे राज्य में हैं। यह सब कितना अच्छा है! और भी मैं कह सकता हूँ, जो मुझे सूझता है पर तुम्हारा हित ही मैं कहना चाहता हूँ। हे मूर्ख! हे सूत! यह सुन लो। मैं दिल्लगी न कह रहा हूँ। पूर्वकाल में तुम्हारे ही तुल्य एक बड़ा कौआ था। उसका किस्सा तुम नहीं जानते हो? किसी वैश्य के कुमार पुत्रों ने प्रतिदिन उसको जूठा खिलाकर पाला था। इसलिए वह मोटा हो गया था। वह अपने अहङ्कार में हँसों के पास गया और मद के साथ बोला— "हम सब उड़कर समुद्र का पार करें।" ८३-८९ अपने सफेद शरीर और चमकने-

अतिलुं मेल्भागत्तधिकं वेगत्ति-
लतिमोदत्तोटु परन्नु काकनुं । ९२
तॊळिञ्ञु वायसगणवुमन्नेरं
तळर्न्नु काकनुं चिरकु मन्दिच्चु । ९३
कुळञ्ञु वॆळ्ळत्तिल् पिटञ्ञुवीणुटन्
कळिञ्ञु काकन्तन्नहङ्कारमॆल्लां । ९४
विधिबलमॆन्नु मरिच्चानप्पोळॆ
विधिविहितं केळ् निनक्कुमप्पोळॆ । ९५
विळिच्चरिकॆवच्चुरुळयुं तन्नु
वळर्त्ति निन्नॆयुमिह सुयोधनन् । ९६
अभिमानिक्कुन्नततुकॊण्टल्लयो
कुपितनाकॊल्ला परमार्थं चॊन्नाल् । ९७
परञ्ञतु पोरुं परिभविप्पिप्पा-
नरिञ्ञिरिक्कुन्नु सकलवुं ञान्तान् । ९८
मरिप्पनॆन्नुमे जयिच्चुकूटायि्क-
लॊरिक्कलुं भयं पुरत्तु काट्टामो ? ९९
तॆळिञ्ञु चम्मट्टियॆटुत्तालुं तेरु-
तॆळिच्चालुमॆन्नु परञ्ञु कर्णनुं । १००
मधुवैरि रथं नटत्तिटुंवण्णं
मदिच्चु माद्रेशन् नटत्तिनान् तेरुं । १०१

वाले शुक्कत्व को दबाकर किसी को पहले ही भेज दो। यह सुनकर एक हँस बड़े कौतुक के साथ धीरे-धीरे समुद्र के ऊपर उड़ा। कौआ तो उससे भी ऊपर वेग से बड़े प्रमोद के साथ उड़ा। सारा काकगण प्रसन्न हुआ। वह कौआ तो थका और उसके पक्ष मन्द हुए। क्षीण होकर तड़पता हुआ पानी में गिरा और कौए का सारा अहङ्कार समाप्त हुआ। विधि के बल से उसका मरण हुआ। तुम्हारे लिए विधि ने क्या निश्चय किया है, सुन लो। सुयोधन ने तुम्हें बुलाकर, अपने पास बैठाकर कौरें खिलाकर पाला है। ९०-९६ इसीलिए तो तुम अभिमान करते हो। कुपित न हो जाओ जब मैं परमार्थ कहता हूँ।" तब कर्ण ने कहा—"बस, तुमने मेरा अपमान काफ़ी किया है। मैं सब जानता हूँ। अगर जीत न सकूँगा तो मरूँगा। कभी भी भय न दिखलाऊँगा। चलो अब खुशी से अपना चाबुक लो और रथ चलाओ।" कृष्ण के रथ चलाने

कुटकळालवट्टवुं वेञ्चामरं
कोटि कोटिक्कूऱ् तळविरुतुकळ् १०२
चेंकिटटयुमाऱलरिवाद्यङ्ङळ्
जय जय शब्दं चेरुञाणोच्चयुं १०३
कळिच्चु तन्नत्तान् मऱन्नु कौरवर्
विळिच्चहङ्कारिच्चटर्क्कळं पुक्कु । १०४
विळङ्ङुन्नु मुखनळिनङ्ङळेल्ला—
मिळकुन्नु तेळिकटञ्ञ शस्त्रङ्ङळ् । १०५
करिमुकिलोत्त करिवरन्मारुं
करतारिल् विल्लुं शरवुं कैक्कोण्टु १०६
नरवीरन्मारुं तुरगपंक्तियुं
मरुभरंपूण्ट रथकदंबवुं १०७
मरणभीतियुं वेटिञ्ञु कालाळुं
मरुतलरुटे निकटं प्रापिच्चार् । १०८
विळिच्चितु संशप्तकन्मारन्नेरं
विजयनेप्पोरिलेतिर् तरिकेन्नु । १०९
नटिच्चवर्कळोटेतिर्त्तु पार्त्थनुं
पटुत्वमोटवरकलत्ताक्किनार् । ११०
प्लवगपाळियोटेतिर्त्तु रावणि
पेरुं शरमारि चोरिञ्ञतुपोले । १११

की तरह माद्रेश ने सोल्लास रथ चलाया। कौरव तो छत्र, राजाओं का आडम्बर, सफ़ेद चँवर, झण्डा, उसका कोश, मोरपँख आदि लेकर कान फोड़ने लायक वाद्यघोष, जयजय ध्वनि और ज्याघोष करते हुए खेलते हुए अपने को भूलकर अहङ्कार के साथ रणभूमि पहुँचे। ९७-१०४ सभी मुखकमल बिराजने लगे और चमकनेवाले शस्त्र चलने लगे। हाथियों की पंक्ति जो कालेपन में बराबर थे, हाथ धनुष-बाण लिए नरवीर, घोड़ों का ताँता, दृढ़ रथों का समूह, मृत्युभयहीन सैनिक, ये सब शत्रुओं के निकट पहुँचे। तब संशप्तकों ने आवाज़ दी कि अर्जुन को युद्ध के लिए आगे लाओ। अर्जुन ने साभिमान उनका सामना किया, पर कुशलता के साथ उन्होंने उसको दूर किया। जिस प्रकार मेघनाद ने वानरसेना का सामना करके उस पर शरवर्षा की उसी प्रकार सारे भुवन का एकमात्र धनुर्धर कर्ण ने बार-बार शर छोड़कर सेना को

भुवनैकधनुर्द्धरनामंगेशन्
पुनरटुत्तेय्तेय्तिळक्किनान् पट । ११२
तिरिच्चु पाण्डवरतुनेरमेरे
मरिच्चु पाञ्चालनृपनुटे बलं । ११३
अपजयं वन्नतरिञ्ञु धर्म्मज-
नवनिनायकन् पेरुन्तेरेरिनान् । ११४
अविटेक्कर्ण्णनुं युधिष्ठिरन्तानु-
मवनि चाञ्चाटुंपरिचु पोर्चेय्तार् । ११५
मुरिञ्ञिटरोटे तिरिच्चु धर्म्मजन्
परञ्ञु कर्ण्णनुमवनोटन्नेरं— ११६
उळरिप्पोकाते तिरिञ्ञु निल्लु नि-
ल्लळको भूपतिवरन्मार्क्कोटुक ? ११७
नृपधर्म्ममोन्नुमरियुन्निल्लयो
नृपशिखामणे ! मरिक्किलुं नन्नु । ११८
मतिमतियेङ्किल् नटन्नालुमेटो
मतिमानाय नी मरिच्चुपोकेण्टा । ११९
पृथिवि पालिप्पानिरिक्क नल्लु नी
पृथिवीनाथ ! धर्म्मज ! पृथात्मज ! १२०
वृथा कुलधर्म्मप्रथनं चेय्याय्क ।
व्रतयागादिकळनुष्ठिच्चीटुक । १२१
पितृपतिक्केटं प्रियनेन्नाकिलुं
मृतिवरुमेन्नोटेतिर्त्तु पोर्चेय्किल् । १२२

हिलाया । १०५-११२ तब पाण्डव पीछे हटे और पाञ्चाल राजा का बल नष्ट हुआ । यह जानकर कि अपजय हुआ, राजा युधिष्ठिर बड़े रथ पर चढ़े । तब कर्ण और युधिष्ठिर ऐसे लड़े कि सारी भूमि हिलने लगी । चोट खाकर युधिष्ठिर हटा । तब कर्ण ने उससे कहा— "हारकर न भागो घूमकर खड़े हो जाओ । भूपतिवरों के लिए भागना शोभा देता है ? राजधर्म कुछ भी न समझा क्या ? हे नृपशिखामणे ! मर जाना इससे अच्छा है । अगर युद्ध से जी भर गया है तो चले जाओ । तुम बुद्धिमान् हो, अब मर न जाओ । ११३-११९ पृथ्वी का पालन करने के लिए तुम जियो, यही अच्छा है । हे पृथिवीनाथ ! धर्मपुत्र ! कुन्तीपुत्र ! व्यर्थ के लिए कुलधर्म का नाश न करो । व्रत, योग

तट्टुत्तुकूटुमो मम शरङ्ङळे-
प्पटय्क्कु भाविच्चु पुरप्पेटाय्कोटो । १२३
वरिच्चुकोळ्ळुक पलवुं शस्त्रङ्ङळ्
मिटुक्कुळ्ळर्ज्जुननरिकत्तिल्लयो ? १२४
इनि ञानेय्कयिल्लतु पेटिक्केण्ट-
यिनिक्कु निन्नेक्कोन्नोरु फलमिल्ल । १२५
पतुक्कप्पोयालुं भयप्पेटाय्कये-
न्नधिक्षेपिच्चंगनरपति चोन्नान् । १२६
कटन्नु कैनिलयकंपुक्कु मन्नन्
नटन्नु भीमनुमटक्कळंपुक्कान् । १२७
गदयुमाय् दण्डधरनेप्पोले चे-
न्नेतिरिट्टोर्कळेयोटुक्किनान् भीमन् । १२८
कुरक्करचरुमरक्करुं मुन्नं
तिरक्किप्पोर्चेय्तकणक्केयन्तेरं १२९
परक्के निन्नवर् निरक्के वीळुन्नु
मरिक्कुन्नु चिलर् तिरिञ्ञु मुल्प्पुक्कु- १३०
तिरिक्कुन्नु चिलरिरिक्कुन्नु चिलर्
भरिक्कुन्नु शरं तिरिक्कुन्नु चिलर् । १३१
उरत्त वन्पिनोटटुक्कुमर्क्कजन्
करत्तिले विल्लु ज्वलिप्पिच्चुंकोण्टु १३२

आदि करते रहो। हाँ तुम पितृपति (यमराज) के प्रिय तो हो परन्तु मेरा सामना करके अगर युद्ध करोगे तो अवश्य मरोगे। मेरे बाण रोके न जा सकते हैं। इसलिए युद्ध करने के लिए न निकलो। तरह-तरह के शस्त्र चुन लो। युद्धकुशल अर्जुन क्या निकट में नहीं है? अब मैं तुम पर न मारूँगा, डरो मत। तुम्हारा वध करके मेरा कोई फल सिद्ध न होगा। धीरे-धीरे चले जाओ, डरो मत। इस तरह अंगनरपति (कर्ण) ने अपमान किया। १२०-१२६ तब राजा (युधिष्ठिर) चला गया और तंबू में प्रविष्ट हुआ। इतने में भीम रणभूमि में आया। यमराज के समान अपनी गदा से भीम ने, जो जो सामने आया, सबको समाप्त कर दिया। पूर्वकाल में जैसे वानरप्रमुख और राक्षस भिड़कर लड़े थे उसी प्रकार वे चारों तरफ़ फैलकर एक-एक करके गिरे। कोई-कोई मरा, कोई-कोई आगे बढ़कर फिर पीछे हटता है, कोई-कोई बैठ

पोंळिक्कुन्नु बाणमतु कण्टु भीम-
नुळट्टिनोटुकूटटुत्तानन्नेरं । १३३
तेरुतेरेच्चिल शरनिरकळे-
प्पेरुमळय्क्कुनेर् चोरिञ्ञु मारुति । १३४
विषण्णनाय् निन्नू विकर्त्तनात्मज-
नुळन्नतु कण्टु परञ्ञु शल्यरुं— १३५
विजयनोटु पोर् करुति वन्नोरु
विरुतन् विल्लाळिवरनल्ले इप्पोळ् १३६
परिभ्रमत्तोटु वयट्टिल् कैवच्चु
परक्के नोक्कुन्नतेविटेक्कु पोवान् ? १३७
मरिक्किलुं नन्नु जयिक्किलुं नन्नु
शरप्रयोगंचेय्कतुपोले नीयुं १३८
अणञ्ञुते भीमन् परञ्ञु निल्क्कवे
पिणङ्ङिनिल्पवर्कुलमोटुक्कुवोन् । १३९
रवितनयनुमनिलपुत्रनुं
चेविकुळियवे वलिच्चु बाणङ्ङळ् । १४०
वरिषिक्कुन्नेरं तळर्न्नु कर्ण्णनुं
विरविल् वीणितु मुरिञ्ञु तेरतिल् १४१
इटरोटु मोहं कलर्न्नु कर्ण्णनु-
मिटमदमोटङ्ङटुत्त भीमनुं १४२

जाता है। कोई शर धारण करता है तो कोई घूमता है। बड़े अभिमान के साथ, अपने चमकते हुए धनुष लिए कर्ण ने शरवर्षा की। उसे देखकर भीम क्रुद्ध होकर पास पहुँचा। १२७-१३३ उसने बड़ी वर्षधारा के समान लगातार शरों का प्रयोग किया। तब बिकर्तनात्मज (सूर्यपुत्र कर्ण) विषण्ण होकर खड़ा रहा। शल्य बोले— "अर्जुन से लड़ने आये तुम विख्यात धनुर्धरवर अब क्या घबड़ा रहे हो और पेट पर हाथ रखकर क्या चारों ओर देख रहे हो ? कहाँ जाओगे ? । मरो तो ठीक है, जीतो तो ठीक है । शरों का प्रयोग तो करो । जब बातें हो रहीं थीं तब भीम वेग से आगे बढ़ा लड़नेवालों के कुल समाप्त करने के लिये । कर्ण और भीम ने इतने बाण खींचे कि उनके कान फट जाँय । १३४-१४० अन्त में कर्ण थका और रथ ही पर गिर गया और बेहोश सा हो गया । तब मद के साथ भीम उसके निकट पहुँचा

मदिच्चोरानतन् पेरुत्त मस्तकं
पोळिप्पान् केसरियटुत्ततुपोले । १४३
कुतिच्चु तेरतिल् करयेऱि भीम-
नधिक्षेपिच्चेऱ्प्परयुन्न नावि-
न्नरुप्पनेन्नुटनेटुत्तु कत्तियुं १४४
चेरुत्तु शल्यरुं पिटिच्चितु करं ।
मुऱिक्कोल्ला भीमा ! मुटिक्कोल्ला पार्थन् १४५
मुटिञ्ञुपोमितु झटिति नी चेय्कि-
लटङ्ङुकयेन्नु परञ्ञु माद्रेशन् १४६
कुतिच्चु तेरतिल् पकर्न्नु भीमनुं ।
अेतिर्त्तु गान्धारीतनयन्मारप्पोळ् १४७
मरुत्तवरिलोरिरुपतुपेरे
विकर्त्तनात्मजपुरत्तिनु विट्टान् १४८
विकर्त्तनात्मजनुणर्न्नितन्नेरं ।
निकृत्तदेहनाय् पेरुत्त कोपेन १४९
करुत्त भावमोटेटुत्तु चापवुं ।
मुऱिच्चु तेरतुं तकर्त्तानिंगेश- १५०
नेटुत्तु तन्नुटे गद वृकोदरन् ।
पोटिच्चानानतेर् कुतिरकळेयु- १५१

जैसे कोई सिंह किसी मत्त हाथी का मस्तक फोड़ने के लिए उसके पास जाता है। भीम कूदकर रथ पर चढ़ा और गाली बकनेवाली कर्ण की जीभ को काटने के लिए चाकू निकाला। तब शल्य ने तुरन्त उसका हाथ पकड़ा। हे भीम ! काटो मत ! उसको समाप्त न करो ! अर्जुन समाप्त हो जायगा अगर तुम जल्दी में यह काम करोगे। ज़रा शान्त हो जाओ ! माद्रेश (शल्य) ने कहा। तब भीम कूदकर रथ से उतरा। तब गान्धारी के पुत्र आकर लड़े। १४१-१४७ शत्रुओं में से कोई बीस यमपुरी भेजे गये। इतने में सूर्यपुत्र (कर्ण) जागा। उसके शरीर पर घाव थे। बड़े कोप के साथ और बहुत क्षुब्ध होकर उसने अपना धनुष लिया। कर्ण ने रथ को तोड़कर खतम कर दिया। तब वृकोदर (भीम) ने अपनी गदा ली। उसने हाथी, रथ और घोड़े नष्ट कर दिये, सभी कुलपर्वतों को हिलाया। पृथ्वी को कम्प उत्पन्न कर दिया और समुद्र को क्षुब्ध कर दिया। शत्रु मरकर लेटे हैं। रक्त

मिळक्किनान् कुलमलकळेयेल्लां ।
कुलुक्किनानूळि कलक्किनानाळि
मलय्क्कुन्नु चत्तु मरुतलयेल्ला- १५२
मौलिक्कुन्नु चोरप्पुळ पलवळि
चलिक्कुन्नु चित्तमेतिर्प्पवर्क्केल्लां । १५३
कौलय्क्कुन्नु चापं मुरिक्कुन्नु पुन-
रिरक्कुन्नु पल विमानं नारिमार् । १५४
मरक्कुन्नु चित्तं कलहिक्कुंनेरं
इरक्कुन्नु तण्णीर् मिळिक्कुन्नु कण्णुं । १५५
मरिक्कुन्नु तेरुतेरे नृपतिकळ्
तरय्क्कुन्नु बाणं परिक्कुन्नु चिल- १५६
रिरिक्कुन्नु चिलरेटुत्तुकौळ्ळुवान्
इरिक्कुन्नु चिलर् मुरिञ्ञिरटरोटे । १५७
परक्कुन्न पटयौळिच्चुपोकाय्वान्
भरिक्कुन्नु चिलर् कुलुक्कमेन्नियॆ । १५८
तेळुतेळेत्तेळि कटञ्ञ शस्त्रङ्ङळ्
गळङ्ङळूटे पोय् नटक्कुन्नु नीळे । १५९
शिव ! शिव ! शिव ! शरङ्ङळ्तन्नाले-
यवनियुं गगनवुं मरयुन्नु । १६०
दिनकरसुतप्रमुखन्मारुम-
ङ्ङनिलनन्दनप्रमुखन्मारुमाय् १६१

की नदियाँ चारों ओर बह रही हैं। शत्रुओं का चित्त बहुत घबड़ा रहा है। धनुषों पर ज्यायें चढ़ीं, धनुष काटे भी गये। नारियों के विमान उतर रहे हैं। १४८-१५४ लड़ते समय स्मृति नष्ट हो रही है। कोई-कोई जल माँग रहा है, आँखें निश्चल होकर देख रहीं हैं। नृपति एक-एक करके मर रहे हैं। शरीर पर बाण लग रहे हैं, कुछ लोग उनको निकाल रहे हैं, कोई-कोई बैठा है ताकि लोग आकर उनको ले चलें। कुछ लोग घायल होकर दुःखित हैं और बैठे हैं। फैली हुई सेना को वे पार न कर सकते हैं। और लोग तो बिना क्षोभ के सब सह रहे हैं। अत्यन्त चमकनेवाले शस्त्र सीधे जाकर गरदन पर लगते हैं। शिव ! शिव ! शिव ! पृथ्वी और आसमान शरों से छिपे जा रहे हैं। जब कर्ण और उसके अनुयायी भीम और उसके अनुयायियों

पिरियातेनिन्नङ्ङिटकलर्न्नेरे-
प्परिभवत्तोटु कलहिक्कुंनेरं १६२
विजयनुं संशप्तकन्मारुं तम्मिल्
विजयं ञङ्ङळ्क्कु विजयं ञङ्ङळ्क्के-
न्नोरुपोले निन्नु कलहिक्कुंनेरं १६३
खररघुवरसमरतुल्यमाय्
शरङ्ङळ् तूकिनानतुनेरं पार्त्थन् । १६४
अटुत्तोरु संशप्तकन्मारेयेल्ला-
मोटुक्किनान् बाणगणत्तालर्ज्जुनन् । १६५
मरिच्चितु मात्स्यन् गुरुतनयनाल्
मरुत्तु धृष्टद्युम्ननुमतुनेरं । १६६
अटुत्तश्वत्थामा कोटुत्तानन्पुको-
ण्टटल्क्कळमेल्लां कुलुक्किनान् द्रौणि । १६७
पोटिच्चान् पाञ्चालनुटे रथमेल्लां
पटुत्ववुं कुरञ्ञोळिच्चु पाञ्चालन् । १६८
गुरुसुतन् कोल्लुमवनेयेन्नोर्त्तु
पुरन्दरात्मजनविटेयेत्तिनान् । १६९
धनञ्जयनुं भीमनुं पाञ्चालनुं
मनंतेळिञ्ञोत्तु पोरुतारन्नेरं । १७०
असंख्यं वैरिकळ् मरणं प्रापिच्चार्
मदंकलर्न्नुळ्ळ करिवरन्मारुं । १७१

के साथ निरन्तर भिड़कर बड़े परिभव के साथ लड़ रहे थे तब अर्जुन और संशप्तक भी आपस में लड़ रहे थे और दोनों कह रहे थे कि विजय हमारी है, विजय हमारी है। १५५-१६३ खर और राम के युद्ध के समान उस युद्ध में अर्जुन ने बड़ी शरवर्षा की। जो भी संशप्तक लड़ने निकट आये उनको अर्जुन ने बाणों से समाप्त कर दिया। मात्स्य ने अश्वत्थामा के हाथ मृत्यु प्राप्त कर ली और धृष्टद्युम्न भी उस समय युद्ध करने लगा। अश्वत्थामा ने निकट आकर सब पर बाण चलाया। द्रौणि (अश्वत्थामा) ने सारी रणभूमि हिला दी। उसने पाञ्चाल के रथ को चूर-चूर कर दिया। पाञ्चाल की युद्धनिपुणता कम हुई और वह अलग हुआ। तब यह सोचकर कि गुरुपुत्र उसको मारेगा अर्जुन वहाँ पहुँच गया। अर्जुन, भीम और पाञ्चाल (धृष्टद्युम्न) ने

विजयन् भीमनोटुटनें चोंल्लिनान्
विजयमाक्कार्यितिविटें निङ्ङळिल् । १७२
युधिष्ठिरनेंङ्ङु कनिष्ठन्मारेंङ्ङु
विशिष्टन्माराय तनयन्मारेंङ्ङु । १७३
वरिष्ठनाय सात्यकिसुतनेंङ्ङु
करुत्तनां कर्ण्णन् पिणच्चतेंन्तोंल्लां ? १७४
नृपनुं कर्ण्णनुं पोंरुतु तङ्ङळि-
लपजयप्पेंट्टु मुड्रिवु पारमा- १७५
यटच्चु कैंनिलयकत्तु भूपनुं
किटक्कुन्नु नी चेंन्नड्रिकवस्थकळ् । १७६
अतुकेट्टर्ज्जुननतिशोकत्तोंटु-
मरिकळालपहसिक्कप्पेंट्टानो । १७७
नरवीरनतिन् परमार्त्थमड्रि-
ञ्ञरिकळोटु पोरिनियेंन्नु पार्त्थन् । १७८
उटनें माधवन्तिरुवटियुमा-
युटल् वियर्त्तेंड्रेंप्परवशनायि १७९
नरवरन्तन्नें नमस्करिच्चितु
नरनुं भक्तिपूण्टतुकण्टु भूपन् १८०

उस समय मिलकर खुशी से युद्ध किया। १६४-१७० असंख्य शत्रुओं ने मृत्यु प्राप्त की और अनेक मत्त हाथियों ने भी। अर्जुन ने भीम से पूँछा— "यहाँ तुम लोगों में से किसने विजय प्राप्त की ? युधिष्ठर कहाँ है और छोटे भाई कहाँ हैं ? और हमारे पुत्र कहाँ हैं जो विशेषतः योग्य हैं ? और वरिष्ठ सात्यकि कहाँ हैं ? और शक्तिशाली कर्ण ने किस-किस से युद्ध किया ?" (भीम ने उत्तर दिया) "राजा (युधिष्ठिर) और कर्ण आपस में लड़े। राजा हारे और अत्यन्त घायल होकर अपने तंबू चले गये। तुम जाकर हाल मालूम करलो।" १७१-१७६ यह सुनकर अर्जुन को बहुत शोक हुआ और चिन्ता हुई कि शत्रुओं ने राजा का उपहास तो नहीं किया। परमार्थ जानकर अर्जुन शत्रुओं से युद्ध करने के लिए तैयार हुआ। थकावट के कारण पसीना निकलता था और परेशान हुआ। पर पूज्य माधव के साथ अर्जुन ने राजा (युधिष्ठिर) को भक्ति के साथ नमस्कार किया। यह देखकर राजा ने उनका स्वागत किया और उनको आशिश दी कि

वरिक नल्लतु निनक्कॆन्नाशियु-
मरुळिच्चॆय्तु पिन्नॆयुमतुनेरं । १८१
पॆरिकॆ नन्नायि रवितनयनॆ-
प्पॊरुतु कॊन्नतु तॆळिञ्ञतुपारं । १८२
अधिक्षेपिच्चॆय्तु मुरिच्चु कॊल्लातॆ-
ययच्चानॆन्नॆ ञानतुमूलमिप्पोळ् १८३
वशक्केटुण्टायितवनॆक्कॊल्कयाल्
वशक्केटु मम शमिप्पिच्चायो नी ? १८४
परुषमाय् नृपनतु परञ्ञप्पोळ्
पुरुहूतात्मजनुणर्त्तिच्चीटिनान्— १८५
वधिच्चतिल्ल कर्ण्णनॆयितॆन्नाले
वहिक्कुमोयॆन्नतरिञ्ञतुमिल्ल । १८६
हरि चराचरगुरु जगन्नाथ-
नरुळुन्नाकिलो वधिप्पन् कर्ण्णनॆ । १८७
अटुत्तोरु संशप्तकन्मारॆयॆल्ला-
मॊटुक्किनानवननुग्रहत्तिनाल् । १८८
अतुकॊण्टंगेशनॊटु पॊरुतति-
ल्लटियनॆन्नतु धरिच्चिटेणमे । १८९

तुम्हारा भला हो । और कहा— तुमने अच्छा किया कि युद्ध में तुमने कर्ण का वध किया । मैं प्रसन्न हूँ । १७७-१८२ उसने मेरा अपमान करके मुझे बाणों से घायल किया और बिना जान लिए छोड़ दिया । इसलिए मैं बेबस हो गया हूँ । उसको मारकर तुमने क्या मेरा दुःख दूर कर दिया है या नहीं ? जब राजा ने इस प्रकार की कड़ी बात कही तब अर्जुन ने निवेदन किया— "कर्ण का वध नहीं हुआ और यह काम मुझसे हो सकेगा, यह भी मैं नहीं जानता हूँ । अगर हरि चराचरगुरु जगन्नाथ की कृपा होगी तो कर्ण का वध करूँगा । इधर उनके अनुग्रह से संशप्तकों को समाप्त कर दिया है । यह भी एक कारण है कि अंगेश के साथ युद्ध न कर सका; जान लीजिये ।" १८३-१८९

अर्ज्जुनकोपं

अवस्थकळ् केट्टु परिभ्रमिच्चु ञान्
कळल्त्तार् कूप्पुवान् विटकोंण्टीटिनेन् । १
अरिञ्ञितु मति पऱञ्ञतिङ्ङिनि-
यरिञ्ञु मुन्नमे पऱञ्ञतिल्ले ञान् । २
जयं वरा युद्धं तुटङ्ङियालेन्नु
नयं पऱञ्ञतु तेंळिञ्ञीलन्नाक्कुं । ३
अपजयमिप्पोळ् वरुन्नु मेल्क्कुमे-
लपनयमायिच्चमञ्ञु युद्धवुं । ४
पिळच्चितु निरूपणं पोराय्कया-
लोंळिच्चुपोवानुं कळिवु कण्टील । ५
नरनारायणपुरुषन्मार् निङ्ङळ्-
क्करुतातेंवन्नु कुरुवीरन्मारो- ६
टतिबलवानायिरुन्न भीमनु-
मतिचपलनाकिय ञानुं तोट्टु । ७
अटिमयाय् सुयोधननुटे काक्कल्
पोंटियुमेट्टु पोय् किटक्केंन्नुं वन्नु । ८
अतु चेंय्युन्नील वनवासं चेंय्तु
गति वरुत्तुवनतु नल्लू नूनं । ९

अर्जुन का कोप

यहाँ का हाल सुनकर मैं घबड़ा गया और चरणस्पर्श करने के लिए मैं उपस्थित हुआ। (तब राजा बोले) बस ! मालूम हो गया ! और न कहो ! मैं पहले ही जानता था। मैंने कहा नहीं था ? मैंने कहा था कि अगर युद्ध प्रारम्भ होगा तो हमारी विजय न होगी। पर किसी ने समझा ही नहीं। अब हमारे एक के बाद एक पराजय हो रहे हैं और यह सारा युद्ध अपनय का रूप धारण कर रहा है। यह दोष ठीक से विचार न करने का है और इस स्थिति से निकलने का कोई उपाय भी न सूझ रहा है। नर और नारायण, तुम दोनों पुरुष, कुरुवीरों का सामना न कर पा रहे हो। अति शक्तिशाली भीम और अत्यन्त चपल मैं, हम दोनों हारे हैं। १-७ अब दास बनकर धूल से ढ़के हुए सुयोधन के चरणों, पड़ने की नौबत आयी। वह तो मैं न करूँगा। वनवास करके

ऒरुनाळुमॊरुसुखमॆनिक्किल्ल
वरुन्नतॊक्कयुं वळर्न्न दुःखङ्ङळ् । १०
शतमखन्तन्टॆ मकनायिप्पण्टु
शतशृंगोपरि पिऱन्नतुनेरं । ११
जगदेकवीरनिवनॆन्नुण्टायि-
तशरीरिवाक्कुमतुमसत्यमाय् । १२
अरिकळॆयॊक्कयॊटुक्किक्कॊळ्ळुवा-
नॊरु कऴिवुण्टॆन्नॆनिक्कुळ्ळिल् तोन्नि । १३
वसुमतीनाथन् परन् नारायणन्
वसुदेवात्मजनसुरनाशनन् १४
अवनुटॆ कैयिल् कॊटुक्क गाण्डीव-
मवनतुकॊण्टु जयिक्कुं निर्णयं । १५
करत्तिल् वाळुमायटुत्तितर्ज्जुनन्
कळुत्तरुप्पानायतु कण्टप्पॊळ् १६
मुरद्वेषि हरि मुकुन्दन् गोविन्दन्
मुतिर्न्न फल्गुनन्करत्तॆयुं वाळुं १७
अटक्कि मॆल्लवे चिरिच्चरुळ्चॆय्तु—
अटङ्ङटङ्ङु नल्लवसरमिप्पोळ् । १८
ऒरु रविसुतनॊऴिञ्ञु मट्टुळ्ळो-
रॊटुङ्ङि वैरिकळऱिञ्ञालुमॆटो । १९

अपनी गति बना लूँगा, यही ठीक होगा। मैं एक दिन भी सुख से न रह सका मेरे दुःख ही आ रहे हैं और बढ़ रहे हैं। इन्द्र का पुत्र बनकर जब अर्जुन का शतशृंग पर्वत पर जन्म हुआ था। तब एक अशरीरिणी वाक् सुनाई थी कि यह जगत् का एकमात्र वीर है। वह भी अब असत्य निकली। मुझे ऐसा लगा था कि सारे शत्रुओं को समाप्त करने का उपाय विद्यमान है। पृथिवी का नाथ, पर, नारायण, वसुदेवपुत्र, असुरों के नाशक यहाँ विराजमान हैं उनके हाथ में अपना गाण्डीव दे दो। अवश्य उससे वे विजय प्राप्त करेंगे। ८-१५ तब अर्जुन सिर काटने के लिए हाथ में तलवार लिए निकला। यह देखकर मुरद्वेषी, हरि, मुकुन्द, गोविन्द उठे और अर्जुन का हाथ और तलवार रोककर मुस्कराते हुए धीरे-धीरे बोले। रुक जाओ, रुक जाओ। यह अवसर अच्छा है। कर्ण को छोड़कर और सब शत्रु समाप्त हो गये हैं, जान लीजिये। राजकुलों के शिरोमणि का वध न हो, न हो, रुक जाओ, रुक जाओ।

अरचर्कळ्कुलमुटिमणिवध-
मरुतरुतोळिकोळिकोळिकेन्नान् । २०
मऱ्क्कामो सत्यमोरिक्कलु नृपन्
मऱिच्चीटुन्नतु पोरुक्केन्नेवरू । २१
पऱयामो मम मुखत्तु नोक्कीट्टु
परनुटे कैयिल् कोटुक्केन्नायुधं ? २२
पळिवाक्कु केट्टाल् पोरुत्तुकूटुमो
पळकिय सत्यं मऱक्कयुमामो ? २३
कळुत्तिलेन् वाळु नटत्तियिप्पळे
कळिप्पनिल्ल किल्लतिनेन्नर्ज्जुनन् । २४
मुतिर्न्नु मुल्प्पुक्कु नटन्नितु कृष्णन्
तिरुवटितन्नेयतु कण्टु देवन् २५
गुरुवधत्तिनु नरकमेन्नियि-
ल्लोरु फलमेन्नु पऱञ्ञितन्नेरं । २६
नटे पऱञ्ञतिल् विपरीतंतन्ने-
युटमयोटेऱ्प्पऱञ्ञु कृष्णनुं । २७
कटक्कोल्ला मम वचनमेन्नतु
कटक्कुन्नोराऱुं दुरितवन्कटल् २८
कटक्कुन्नोरल्लेन्नऱिञ्ञरिक्कणं ।
कटक्क नी रिपुसमुद्रत्तेयिप्पो- २९
ळरुळिच्चेय्तप्पोळमलनर्ज्जुनन्
अऱिकप्पोक धर्म्मवुमधर्म्मवुं । ३०

सब अर्जुन ने कहा। राजा (युधिष्ठिर) को अपना सत्य कभी भूलना न चाहिए। अब उनको मेरा निधन सहना ही पड़ेगा। औरों के हाथ में आयुध दे दो ऐसा मुझसे कहना क्या उचित था ? । १६-२२ अनुचित बात कैसे सही जा सकती है ? पुराने शपथ को भूलना क्या ठीक है ? मैं अपनी तलवार गरदन पर चलाऊँगा इसमें कोई सन्देह नहीं— अर्जुन ने कहा। तब पूज्य देव कृष्ण उठकर आगे बढ़े और बोले। गुरुवध का नरक के अतिरिक्त और कोई फल नहीं है। कृष्ण ने पहले की कही से बहुत अधिक साधिकार बतलाया। 'मेरे वचन का उल्लङ्घन न करो' इस मेरी आज्ञा के विरुद्ध करनेवाले पापों का महासमुद्र कभी पार न करेंगे, जान लो। अब तुम जाकर शत्रुसागर को पार करो। जब इस

गुरुवधं तानोँरसत्यंतानिप्पोळ्
वरुमतु रण्टुमिविटे वाराते ३१
कळिवतिनोँरु कळिवरुळ्चेँय्क
कमलाकामुका ! करुणावारिधे ! ३२
कळल् तोँळुतवनिवण्णं चोँन्नप्पोळ्
कळिवुण्टेन्नतुमरुळ्चेँय्तु देवन् । ३३
गुरुविने 'नी' येँन्नोँरु मोँळि चोँन्नाल्
गुरुवधं चेँय्त फलं वरुमल्लो । ३४
वचसा कर्म्मणा मनसा चिन्तिक्किल्
वधिच्चतिनेक्काळ् वलुतेँटो सखे ! ३५
परमपूरुषनरुळ्चेँय्त नेरं
परञ्ञु फल्गुननधिक्षेँपिच्चेटं— ३६
परिहासत्तोँटु पणयं वच्चतु-
मरियाते चूतु पोँरुतु नीयल्ले ? ३७
अँतिर्त्तु ञङ्ङळ् वैरिकळेक्कोँल्लुवान्
मुतिर्त्ततु मुटक्कियतुं नीयल्ले ? ३८
परनुटे कैयिल् कोँटुक्क विल्लेन्नु
परुषं चोँन्नतुं वेरुते नीयल्ले ? ३९
पलवुरु नीयेँन्नरचनेप्पार्थन्
परञ्ञतुनेरं मनसि चिन्तिच्चान् । ४०

प्रकार निवेदन किया गया तब अर्जुन ने कहा— "मैं धर्म और अधर्म जानना चाहता हूँ। २३-३० गुरुवध और सत्योल्लङ्घन यहाँ होनेवाले हैं ऐसा कोई उपाय बतला दीजिये कि ये दोनों यहाँ न हों, हे कमला-कामुक ! करुणावारिधे ! जब अर्जुन ने चरणों पड़कर इस प्रकार कहा तब देव (कृष्ण) ने निवेदन किया कि उपाय तो अवश्य है। गुरु को 'तू' कहने का वही फल है जो गुरुवध करने का है। वचसा कर्मणा मनसा सोचो तो हे मित्र ! वध करने से भी बड़ा पाप है। परमपुरुष के इस प्रकार कहने के बाद अर्जुन डाँटता हुआ बोला— 'तूने ही तो दिल्लगी में पण लगाया था और तू ही ने जूआ खेला था। ३१-३७ हम लोग तो शत्रुओं का सामाना करके उनका वध करने को थे। तू ही ने तो हमको रोका। दूसरे के हाथ में धनुष देने की अपमान की बात भी तू ही ने की थी। इस प्रकार बार-बार गुरु को 'तू' कहने के बाद अर्जुन ने अपने मन में सोचा। "गुरु की कभी निन्दा न करना चाहिये। मेरा

गुरुविनॆ निन्दिक्करुतॊरिक्कलुं
गुणं वरिकयिल्लिनियिनिक्कॆन्नु । ४१
परितापमुळ्ळिल् निऱञ्ञु पार्त्थनुं
परवशनायिच्चमञ्ञानन्तेरं । ४२
इरिक्कुन्निल्ल ञानवनियिलिनि
मरिक्कुन्नेनॆन्नु पऱञ्ञु तन्नुटॆ ४३
करत्तिलॆ वाळॊन्तिळक्कि मॆल्लवे
कळुत्तऱुप्पानाय् तुनिञ्ञतुनेरं ४४
सकललोकैकपति नारायणन्
सहस्रलोचनतनयन् तन् करं ४५
पिटिच्चु निल्लुनिल्लरुतरुतॆटो
कटुप्पं काट्टोला कळिवुण्टाक्कुवन् । ४६
मरणवुमात्मप्रशंसयुमॊक्कुं
महिमानं तव पऱक नीतन्नॆ । ४७
पऱञ्ञानर्ज्जुनन् निजपराक्रमं ।
अऱिञ्ञतारॆन्टॆ करबलमॆल्लां ४८
मरुतलयिल् पातियिलुमेऱॆ ञा-
नऱुतिचॆय्ततॆन्तऱिञ्ञिरिक्कणं । ४९
असंख्यं पोरानत्तलवन्मारेयु-
मशङ्कं तेराळिकळेयुं वेगत्तिल् ५०

भला अब हो ही न सकता है। इस प्रकार पार्थ के भीतर पश्चात्ताप भर जाने के कारण वह बहुत परेशान हुआ। "अब मैं इस पृथ्वी में न रहूँगा, मैं मर जाऊँगा" ऐसा कहता हुआ तलवार हाथ में लेकर अपनी गरदन काट डालने को ही था, जब सकललोकैकपति नारायण ने सहस्रलोचन (इन्द्र) के पुत्र का हाथ पकड़कर कहा 'ठहरो, ठहरो! 'यह मत करो' 'यह मत करो' यह निष्ठुरता न दिखलाओ, कोई उपाय सोच निकालूँगा। ३८-४६ मरण और आत्मप्रशंसा, दोनों समान हैं। इसलिए तुम अपनी ही महिमा घोषित करो।" यह सुनकर अर्जुन ने अपने पराक्रमों का वर्णन किया। मेरा बाहुबल कौन जानता है? जान लीजिये कि आधे से अधिक शत्रुओं को मैं समाप्त कर चुका हूँ। असंख्य युद्ध के गजप्रवरों को, और निश्शङ्क होकर रथियों को और अपने शफों से कूदनेवाले घोड़ों के पालकों

कुतंकोण्टु चाटुं कुतिरकळुटे
कुतिरच्चेवकरयुमोटुक्कि ञान् । ५१
मुटक्कि वासवन् चोरिञ्ञु वन्मळ-
यटक्कं खाण्डवं दहिप्पिच्चेनल्लो । ५२
वटक्कुदिक्कोक्कज्जयिक्कयुं चेय्ते-
नट्टुत्त गन्धर्व्ववररेयुं वेन्तेन् । ५३
नटिच्चु वन्नोरु यदुक्कळे वेन्नु
मट्टुत्तूकुंमोळि सुभद्रये वेट्टेन् । ५४
अट्टुत्त भूपरेज्जयिक्कयुंचेय्तेन्
पटय्क्कु भाविच्च रिपुक्कळे वेन्नु ५५
पशुक्कळे विराटनु नल्कीटिनेन् ।
परमीशन् पशुपति जगल्पति- ५६
योरु किरातनाय्च्चमञ्ञु वन्नेन्टे ।
करबलं कण्टु तेळिञ्ञिट्टल्लयो ५७
वरङ्ङळुं पाशुपतवुं वाङ्ङि ञान् ।
ओरुवराुळ्ळतिनिक्कु तुल्यराय् ५८
पुरुषन्मारेन्नु परञ्ञु फल्गुनन् ।
पुरुषनल्लेन्नु परञ्ञु नीयेन्ने- ५९
प्परमपूरुषन् परममायियल् ।
परिचोटु मूटीतवरे विस्मयं ! ६०
अतुनेरं कोपं कलर्न्नु धर्म्मज-
नतिवीरन् नीयेन्नटिञ्ञु ञानिप्पोळ् ६१

को मैंने समाप्त कर दिया। जब इन्द्र ने बड़ी वर्षा करके प्रतिबन्ध लगाया तब मैंने सारे खाण्डव को जला दिया। उत्तर दिशा को मैंने जीत लिया और जो कोई गन्धर्व निकट आये उनको समाप्त कर दिया। ४७-५३ अकड़कर जो यदु लड़ने आये थे उनको मारकर मीठी आवाज़वाली सुभद्रा से मैंने विवाह किया। जो भूपाल लड़ने आये उनको हरा दिया शत्रुओं को समाप्त करके गौओं को विराट को लौटा दिया। परमेश्वर पशुपति जगत्पति एक किरात के रूप में आकर और मेरे बाहुबल को देखकर प्रसन्न हुए और मुझे वर और पाशुपतास्त्र दे गये। फल्गुन ने कहा—"मेरे तुल्य यहाँ कौन पुरुष हैं ?" तूने कहा कि मैं पुरुष नहीं हूँ। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि परमपुरुष ने उनको अपनी

वरिक कोल्लुवान् मटिक्करुतेतुं
पुरुषनाकिल् नी वधिक्कणमिप्पोळ् । ६२
पुरुषनल्लेन्नु पऱञ्ञुतेन्ने नी-
यिनि नीयिन्नेन्नेक्कोलचेय्तीटाय्कि-
लनुजन्तन्नाणे पिणक्कमुण्टाकुं । ६३
अऱियप्पोकात जळन्मारप्पोले
पऱयाय्विन् कोपं कळञ्ञटङ्ङेणं । ६४
अरचर्कळ्कुलप्पेरुमाळेयेन्न-
ङ्ङरुळिञ्चेय्तितु मुकुन्दनन्नेरं । ६५
इरुवर्क्कुमिरुवरुंकूटातेक-
ण्टोरु बलमिल्लेन्नरिञ्ञिरिक्कणं । ६६
इनतनयने वधिच्चुकोळ्ळुवा-
निनियनुग्रहिच्चयय्क्कनुजने । ६७
पेरिके वैकरुतिनियेन्नु कृष्णन्-
तिरुवटि तेळिञ्ञरुळिच्चेय्तप्पोळ् ६८
तेरुतेरे नृपन् मुरुकेप्पुलिकनान्
त्रिदशनायकतनयनेयप्पोळ् । ६९
वरिक नल्लतु निनक्कु मेल्क्कुमेल्
वरिक कर्णने वधिच्चु वैकाते । ७०

माया में छिपा दिया । ५४-६० उस समय क्रुद्ध युधिष्ठिर (बोले) "मैं अब समझ गया कि तुम बड़े वीर हो । अब मारने आओ, तनिक भी हिचकना मत । अगर तुम पुरुष हो तो अभी मारो । तूने कहा था कि मैं पुरुष नहीं हूँ । अगर तू मुझे आज नहीं मारेगा तो तुझ छोटे भाई से मेरा झगड़ा हो जायगा ।" उस समय मुकुन्द ने कहा—"अज्ञ जड़ो की तरह तुम दोनों बातें न करो । अपना कोप छोड़ो और शान्त हो जाओ । हे राजकुलों के नेता ! जान लो कि तुम दोनों को एक दूसरे के बिना कोई बल नहीं है । राजा के पुत्र को (कर्ण को) मारने के लिए अब अनुज को आशीर्वाद देकर भेजो । ६१-६७ अब अधिक विलम्ब न करो । जब पूज्य कृष्ण ने इस प्रकार कहा तब तुरन्त ही राजा (युधिष्ठिर) ने अर्जुन का गाढ आलिङ्गिन किया । और कहा—"तुम्हारा उत्तरोत्तर भला हो ! कर्ण को मारकर जल्दी लौट आओ । पृथ्वी का एक मात्र धनुर्धर बनकर विराजो, चिरकाल तक इस पृथिवी में हे सहोदर !" युधिष्ठिर ने प्रेम से

भुवनैकधनुर्द्धरनाय् वाळुक
भुवि पलकालं मम सहोदर ! ७१
कनिञ्ञु धर्म्मजननुजन्तन्नुटे
शिरसि चुम्बिच्चङ्ङयच्चानन्तरं । ७२
हरि चराचरगुरु मुररिपु-
चरितमायकळरियरुताक्कुं । ७३
हर विधि शतमख सुरासुर-
पति रमापति गुरु दयानिधि ७४
विविध भूपतिवरर् चुळन्नोरु
विबुधनाथजरथं करेरिनान् । ७५
नटन्नु वन्पट तुटन्तुंटनुटन्
तुटङ्ङि वाद्यघोषवुं बहुविधं । ७६
निरञ्ञु वानवरुपरि सर्व्वरुं
मरञ्ञु भानुबिंबवुं पोटियाले । ७७
परञ्ञु लोकेशन् विजयनो नोक्कि-
यरिञ्ञितो सुयोधननोराश्रय- ७८
मिवनोळिञ्ञारुमिनियिल्लोक्कं नी-
यिवनल्लो मुन्नमधिक्षेपिच्चतुं । ७९
मरञ्ञोळियन्पेय्तभिमन्युचापं
मुरिच्चवनेयुं कोलचेय्यिच्चतुं ८०
इवनल्लो दुर्भाषणङ्ङळ् चोन्नतुं
पवनजन्तन्नेप्पटयुटे मद्धये ८१

अपने छोटे भाई के सिर पर चूमकर उसको युद्ध में भेज दिया। हरि, चराकरगुरु, मुरारि के चरित्रों की माया कोई भी न जानता है। हर, विधि, इन्द्र, सुरों और असुरों के पति, रमापति, गुरु, दयानिधि और विविध अन्य राजाओं से घेरे अर्जुन के रथ पर चढ़े। ६८-७५ बड़ी सेना निकली और आगे बढ़ती गयी। अनेक प्रकार के वाद्यों का बजना प्रारम्भ हुआ। आकाश पर देखनेवाले देव भर गये और सूर्यबिम्ब धूल से ढक गया। लोकेश ने अर्जुन की ओर देखकर कहा— 'तुम जानते हो कि सुयोधन को छोड़कर इसका (कर्ण का) और कोई आश्रय नहीं है। इसी ने तो पहले अधिक्षेप भी किया था। इसी ने तो छिपकर एक छिपे बाण से अभिमन्यु का धनुष तोड़कर उसको मरवाया। इसी ने तो

इवनल्लो धर्म्मात्मजनेय्येत्तु-
मिवनल्लो कृष्णातुकिलऴिक्कोन्नु ८२
परन्ञु चेय्यिच्चतपनयत्ताले
पशुसमन्मार् पाण्डवन्मारेन्नतुं ८३
पल नृपर् केळ्क्कप्परिहसिच्चतुं ।
इवन् तुणयायिट्टरक्किकल्लत्तिलि-
ट्टटच्चु तीवच्चुकळञ्ञु नूट्टुपेर् । ८४
इवनेक्कोल्लुवानुळरुकवेणं
पवनपुत्रनु तुणयुमिल्लारुं । ८५
मरुवलर्मुन्पिल् पलनेरमुण्टु
पेरुमारुन्नतङ्ङवनरिञ्ञालु । ८६
इति मधुरिपुवरुळिच्चेय्तप्पो-
ळितमोटु बाणं पोळिच्चु फल्गुनन् । ८७
कुरञ्ञु पाञ्चालादिकळ्क्कु सङ्कटं
निरञ्ञु कर्ण्णन्तन्नरिके कौरवर् । ८८
अतिनुनेरे कूट्टिनान् महारथ-
मतिवेगत्तोटु मुकुन्दनन्नेरं । ८९
विजयनेत्तेरिल् विळङ्ङिक्काणायि
विबुधकळधिपतियोटुंकूटि । ९०
तरुणभास्करनरुणनोट्टुकू-
टोरुमिच्चु तेळिञ्ञुदिच्चतुपोले । ९१

सेना के बीच बुरी बातें कहकर भीम का अपमान किया । ७६-८१ इसी ने तो युधिष्ठिर पर बाण चलाया । इसी ने अपनी दुष्टता के कारण कृष्णा के कपड़े उतरवाये । इसी ने तो अनेक राजाओं के सामने पाण्डवों को पशु कहकर उनकी हँसी उड़ाई । इसी की सहायता से सौओं ने तुम लोगों को जतुगृह में बन्द करके आग लगा दी थी । इसको मारने में बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा । भीम अब अकेला हो गया । बड़ी देर से वह शत्रुओं के बीच काम कर रहा है, जान लीजिये । जब कृष्ण इस प्रकार कह रहे थे तब अर्जुन ने सोल्लास शरवर्षा की । ८२-८७ पाञ्चाल आदियों का दुःख कम हुआ और कौरव कर्ण के पास जमा हो गये । तब मुकुन्द ने तुरन्त उसी ओर महारथ को चलाया । देवों के अधिपति के साथ अर्जुन रथ पर विराजमान दिखाई दिया । मानो तरुण सूर्य का

हरियुतहरिहयतनयनें
हरिणवाजिराजितरथोपरि ९२
हरिदश्वात्मजनोंटु पोरुवानाय्
वरुन्नतु कण्टु परञ्ञु शल्यरुं। ९३

पार्त्थसारथिवर्ण्णनं

पलरोटुं काणाञ्ञिह चोदिच्चोरु-
वलरिपुसूनुवता सखे ! कर्ण्ण ! १
मुनिकळ्मानसतळिरिलुं गोप-
वनितमारुटे मुलत्तटत्तिलुं २
इरुन्नरुळुं माधवनुं तानुमाय्
परन्न वन्पटनटुविलाम्मारु ३
वरुन्नतु नन्नाय् तेळिञ्ञु काण्क नी।
निरन्नपीलिकळ् निरक्कवे कुत्ति- ४
नेरुकयिल्क्कूट्टित्तिरमोटु केट्टि
करिमुकिलोत्त चिकुरभारवुं ५
मणिकळ् मिन्नुन्न मणिक्किरीटवुं
कुनुकुनच्चन्तुं कुरुळ्निरतन्मेल् ६
ननुननप्पोटिञ्ञोरु पोटि पट्टि-
त्तिलकवुमोट्टु वियर्प्पिनाल् नन- ७

अरुण के साथ स्पष्ट उदय हुआ हो। हरिण वाजियों (सफेद घोड़ों) से युक्त रथ पर बैठे। हरि (कृष्ण) सहित हरिहय (इन्द्र) के पुत्र (अर्जुन) को हरिदश्व (सूर्य) के पुत्र के साथ लड़ने आते देखकर शल्य बोले। ८८-९३

पार्थसारथि का वर्णन

हे सखे कर्ण ! जिसे न देखकर तुम बहुतों से पूँछ रहे थे वह बलरिपु (इन्द्र) का पुत्र यह आ रहा है। मुनियों के चित्तपल्लवों में और गोपियों के स्तनतटों पर विराजमान माधव के साथ फैली हुई बड़ी सेना के बीच में से निकल रहा है, ठीक से देख लो। घनश्याम केशभार जिसमें शोभायमान मोरपंख चारों ओर सजाये गये है, चमकनेवाले मणियों का बना किरीट, महीन पिसे हुए चूर्ण का तिलक जो पसीने से कुछ भीग गया है, लोकों की सृष्टि, स्थिति १-६ और संहार करनेवाली भौहों का

ञ्ञुलकु सृष्टिच्चु भरिच्चु संहरि-
च्चिळकुन्न चिल्लीयुगळभंगियुं ८
अटियारेक्कुरिच्चोरु करुणयुं
कठिनदुष्टरोटेळुन्न कोपवुं ९
मट्टुमौळिमारिल् वळर्न्न रागवुं
कलहं कण्टोरत्भुतरसङ्ङळुं १०
चपलन्मारोटु कलर्न्न हासवु-
मेतिरिट्टुन्नोर्क्कु भयङ्करत्ववुं ११
पलवुमिङ्ङने नवनवरस-
मिटयिटक्कूटिक्कलर्न्न नेत्रवुं १२
मकरकुण्डलं प्रतिबिंबिक्कुन्न-
कविळ्त्तटङ्ङळुं मुखसरोजवुं १३
वियर्प्पुतुळ्ळिकळ् पोटिञ्ञ नासिक
सुमन्दहासवुमधरशोभयुं १४
तुळसियुं नल्ल सरसिजङ्ङळु-
मिळतायीट्टुन्न तळिरुकळुमाय् १५
इटकलर्न्नुटनिळकुं मालकळ्
तटयुं मुत्तुमालकळुं कौस्तुभ- १६
मणियुं चेरुन्न गळवुं चम्मट्टि
पिटिच्चोरु करतलवुं कुङ्कुमं १७
मुळुक्कप्पूशिन तिरुमारुं नल्ल-
निरन्न मञ्ञप्पूत्तुकिलुं काञ्चियुं १८

सौन्दर्य, आश्रितों के प्रति करुणा, निष्ठुर दुष्टों के प्रति कोप, मीठी आवाज़वालियों के प्रति प्रेम, युद्ध को देखने के कारण विकसित अद्भुत रस, चापल्यसहितों के प्रति हास, सामना करनेवालों के दिल में भय, इस प्रकार के नये नये रसों से चमकनेवाली आँखें, मकरकुण्डल का प्रतिबिंब दिखलानेवाले कपोलतट, मुखकमल, ७-१३ पसीने की बूंदों से शोभित नासिका, हल्की मुस्कराहट, अधरों की शोभा, तुलसी, अच्छे-अच्छे कमल और नये-नये पल्लवों से बीच-बीच में मिश्रित मालाएं, मोती का हार, और कौस्तुभ मणि से विभूषित गरदन, कशा (चाबुक) लिया हुआ हाथ, कुङ्कुम से लिप्त वक्षःस्थल, पीले पुष्पों का आभूषण, काञ्ची, पादपद्म, इनसे विभूषित उस मणिवर्ण को मैंने रथ के अन्दर बैठे देखा, मानो मेरे

पदसरोरुहयुगवुमेन्नुटे
हृदयंतन्निलङ्ङिरिक्कुंपोलेय- १९
म्मणिरथंतन्निलकं कुळुक्कवे
मणिवर्णन्तन्नेत्तेळिञ्ञु कण्टु ञान् । २०
विळयाटीटेणं विजयनुमायि-
ट्टिळकातें निन्नु कुरञ्ञोरुनेरं । २१
तेळिक्क तेरेन्नु परञ्ञु कर्ण्णनुं
कळिच्चु विल्लोळि वळर्त्तिनानप्पोळ् । २२
कुरुवरन्तानुमिळयवर्कळुं
गुरुतनयनुं कृपरुं भोजनुं २३
अणञ्ञु बाणङ्ङळ् पोळिञ्ञु माधवन्-
तिरुमेय्तन्मेलुं विजयन्तन्मेलुं । २४
अरिकळेश्शरनिकरमेय्तुट-
नरिञ्ञरिञ्ञिट्टु नटन्नानर्ज्जुनन् । २५
अकमे भीतिपूण्टकन्नु कौरव-
रकलेक्कण्टु भीमने विजयनुं । २६
नरकरिरथतुरगपंक्तिकळ्
नट्टुविल्प्पुक्कुकोण्टनिलनन्दनन् २७
पेरुमारुन्नतुमरिकुलान्तकन्
पलरोटुं पोरुतिटर्प्पेट्टुन्नतुं २८
परिचोटु कण्टु पुरन्दरात्मजन्
परन्पुरुषनोटिवण्णं चोल्लिनान्— २९

ही हृदय के अन्दर उसे ठंडा करते हुए बैठे हो ! १४-२० कम से कम थोड़ी देर के लिए विजय (अर्जुन) के साथ डटकर खेलना चाहिये । 'अच्छा तो रथ चलाओ' कर्ण ने कहा और खेल में अपने धनुष की डोरी की ऊँची ध्वनि निकाली । दुर्योधन और उसके छोटे भाई अश्वत्थामा, कृप और भोज ने माधव के शरीर पर और अर्जुन के शरीर पर शरवर्षा की । अर्जुन तो शत्रुओं को शरवर्षा से नाश करता हुआ आगे बढ़ा । भय के कारण कौरव कुछ अलग हुए और अर्जुन ने भीम को दूर से देखा । २१-२६ पैदल सैनिकों, हाथियों, घोड़ों और रथों की पंक्तियों के बीच में घुसकर भीम का घूमना और उस शत्रुनाशक का बहुतों से युद्ध करना देखकर अर्जुन ने पर पुरुष से इस प्रकार कहा— भीम बहुत

तळर्च्च भीमनु पेरुततिन्नेरे
तोंळिक्क तेरेतु मटिक्करुतिप्पोळ् । ३०
अतुकेट्टु तेरुमतिन्नेरेकूट्टि
मथुरेशन्तानु विजयनु चोन्नान्— ३१
युधिष्ठिरक्केंतु वशक्केटुमिल्ल
वधिक्कणं भानुतनयनेयिप्पो- ३२
ळनुग्रहिक्कणमतिनु भीम ये-
न्नटित्तार् कूप्पिनानटुत्तु फल्गुनन् । ३३
अनुक्षणमवननुज्ञयु चोन्नान्
कनक्कें वेगत्तिल् तिरिच्चु पार्त्थनु । ३४
त्रिभुवनंकूटें नटुङ्ङिङटु शंख-
ध्वनियु तेरुरुळोलियु वाद्यवु ३५
अनिलनन्दननलरु नादवु-
मनुपममाय गुणनिनादवु । ३६
त्वरितमिन्द्रनन्दननटुत्तप्पोळ्
कुरुवरसैन्यं तिरिच्चु मण्टिनार् । ३७
अतु कण्टप्पोळे कृपर् भोजादिक-
ळेतित्तरोटायिक्किनोरुवरुमिप्पोळ् । ३८
ओरु तेराळियें विजयनुळ्ळुते-
न्नरिवरर् चुळन्नणञ्ञु पोर्चेय्तार् । ३९

थका हुआ है, अब रथ को उनकी ओर बढ़ाओ, विलम्ब न करो। यह सुनकर मयुरेश (कृष्ण) ने रथ को उसी ओर चलाया। तब अर्जुन ने कहा— 'युधिष्ठिर को कोई दिक्कत नहीं है। अब कर्ण का वध होना चाहिये हे भीम! उसके लिए मुझे अनुग्रह दो' ऐसा कहता हुआ अर्जुन निकट जाकर चरणों पड़ा। २७-३३ उसी क्षण भीम ने आज्ञा दी और अर्जुन तुरन्त ही लौटा। त्रिभुवन को भी कँपानेवाली शंखध्वनि, रथचक्रों के घूमने का नाद, वाद्यघोष, अनिलनन्दन (भीम) के गरजने का नाद और अनुपम ज्याघोष सुनाई दिये। जब अर्जुन लड़ने के लिए निकट आया तब कौरवों की सेना लौटकर भागी। यह देखकर कृप, भोज आदियों ने 'अब कोई न भागो' ऐसा कहते हुए सामना किया। 'अब अर्जुन ही एक रथी रह गया' ऐसा समझकर शत्रुप्रमुखों ने उसे घेरकर युद्ध किया। शरों, शक्तियों और जलते हुए चक्रों से रथपीठ भर गया और ढक गया। ३४-४० कृष्ण और अर्जुन दोनों घायल हुए और

शरङ्ङळ् शक्तिकळेरिञ्ञ चक्रङ्ङळ्
चोरिञ्ञु तेर्त्तटं निऱञ्ञु मूटीते । ४०
मुऱिञ्ञितंबुजाक्षनु किरीटिक्कुं
करिञ्ञु पाञ्चालादिकळ्क्कु कान्तियुं । ४१
जनकनेक्काळुमधिकं वेगत्ति-
लनिलनन्दननटुत्तानन्नेरं । ४२
वळर्न्न नीलमामलपोले भीमन्
वळञ्ञ वन्पटनटुवे पाञ्ञवन् ४३
करिकळेयुं वन्कुतिरकळेयुं
नरवररथङ्ङळेयुमोक्कवे ४४
गदकोण्टु तच्चुपोटिच्चु कोन्नुकों-
न्नुदधियिलोळमोळुकि शोणितं । ४५
पुरन्दरवायुतनयन्मारुटे
शरगदकळ्कोण्टुटल् मुऱियाते ४६
ओरुवरुमिल्ल कुरुवरन्मारिल्
शरणमारेन्नु परवशन्मारायि- ४७
त्तरणिनन्दननरिकिलायिते ।
शरङ्ङळ् तूकिनानवनुमन्नेरं । ४८
करङ्ङळुं कालुं मुऱिञ्ञु पाण्डवर्
परन्नुचेन्नतु मुटङ्ङीतन्नेरं । ४९
नटिच्चु पाञ्चालनरवरन्मारु-
मट्टुत्तु केकयनृपतिवीररुं । ५०

पाञ्चाल आदियों की कान्ति काली पड़ गयी । अपने जनक (वायु) से भी अधिक वेग से भीम आगे बढ़ा । एक ऊँचे नीले पहाड़ के समान भीम हाथियों, बड़े बड़े घोड़ों, नरवरों और रथों को अपनी गदा से फैली हुई सेना के बीच में घुसकर मार कर चूर कर दिया और ख़ून सागर तक बही । कौरवों में कोई भी न था जो अर्जुन और भीम के शरों या गदा से घायल न हुआ हो । सब परेशान हुए कि कहाँ शरण लें । ४१-४७ सब कर्ण के पास पहुँचे । उसने भी उस समय शरवर्षा की । पाण्डवों के हाथ पैर टूटने से वे कुछ असफल हुए । पाञ्चाल के और केकय के नृपतिवीर साभिमान युद्ध के लिए निकट पहुँचे । अनुपम विक्रमवाला सात्यकि नकुल और सहदेव द्रौपदी के पुत्रवीर और स्वयं अर्जुन डटकर

अतुलविक्रममुटय सात्यकि
नकुलनुं पिन्नेंस्सहदेवन्तानु ५१
दुपदपुत्रितन् तनयवीररुं
विजयन्तानुमायणञ्ञु पोर्‌चेय्तार्। ५२
अतिनवरॊटु पॊरुतु कर्ण्णनु-
मतुकण्टॆल्लारुं तॆळिञ्ञु वाळ्त्तिनार्। ५३
पवननुं तीयुमॊरुमिच्चपोले
पवनपुत्रनुं विजयनुंकूटि
पॊरुतॊटुक्किनाररिकळॆयॊक्क ५४
हर ! हर ! हर ! शिव ! शिवयॆन्नु
परञ्ञु नारदन् तॆळिञ्ञितेट्वुं। ५५

दुश्शासनवधं

पटय्क्कु सङ्कटं पॆरुत्ततु कण्टु
कटुक्कॆन्नु दुश्शासननुमॆत्तिनान्। १
मदिच्चॊरानयोटॆतिर्त्त सिंहत्ते-
क्कणक्कॆ मारुति कुतिच्चुपाञ्ञुटन् २
कॊतिच्चिरुन्नितॊन्नटुत्तु काण्मान् ञान्
चतिक्कॊल्लायिनिप्पॊटुक्कनवॆ नी। ३
करुत्तु काट्टुवान् मनस्सुण्टिन्नॆन्टॆ
करत्तिन्टॆ फलं वरुत्तणमॆटो। ४

लड़े। कर्ण ने उनका सामना किया। यह देखकर सबने प्रसन्न होकर प्रशंसा की। वायु और अग्नि के सहयोग के समान भीम और अर्जुन ने, सहयोग करते हुए, लड़े और सभी शत्रुओं को समाप्त कर दिया। हर ! हर ! शिव ! शिव ! ऐसा कहता हुआ नारद प्रसन्न हुआ। ४८-५५

दुश्शासन का वध

अपनी सेना को संकट में पाकर झट से दुश्शासन वहाँ पहुँचा। मत्त हाथी का सामना करनेवाले सिंह के समान भीम कूदकर आगे बढ़ा और बोला—तुम्हें निकट से देखने के लिए मैं तरस रहा था अब मुझे तुम धोखा न दो। आज मेरा जी चाहता है कि मैं अपनी शक्ति दिखलाऊँ और अपने इस हाथ का फल पैदा करूँ। पर्वत के ऊपर जिस प्रकार वर्षा होती

गिरिवरोपरि वरिषिक्कुंपोलें
शरवरिषंचेय्तिरुवरुमीप्पम् ५
पौरुतपोरुतन् कौटुम चौल्लुवा-
नरुतरुतेतुमनिलनन्दनन् ६
विरविनोटुकूटटुत्तु चौल्लिनान्—
वरिक वन्मदं पैरिय दुर्म्मते ! ७
वरिमिळियाळां द्रुपदपुत्रितन्-
पुरिकुळल् चुट्टिप्पिटिच्चिवळच्चतुं ८
तरुतेरेत्तुकिलळिच्चतुमोरो-
परिभवं ञङ्ङळ्क्ककप्पेटीच्चतुं ९
मरुत्ततिल्ल ञानतिनु निन्नुटल्
नरसुरासुरर् पलरुं काणवे १०
अटलिटक्कुत्तिप्पौटिप्पनिप्पौळें-
न्निटिवेंट्टुंवण्णं पौटुपौटेयार्त्तान् । ११
कुतिरकळक्कोन्नोटुक्किस्सूतनें-
क्कोलचेय्तु तेरुमळिच्चान् मारुति । १२
दृढ़प्रज्ञन् दुश्शासननुं कोपमो-
टटुत्तु शक्तिकळ् शरङ्ङळ् चक्रङ्ङळ् १३
पौळिञ्ञु भीमन्मेय् मुरिच्चु तेरतु-
मळिच्चु चाटियोन्निटिपोलेयार्त्तान् । १४

है। उसी प्रकार दोनों ने बराबर शरवर्षा की। उस प्रकार के इस युद्ध की तीव्रता का वर्णन करना असंभव है। १-६ भीम उसके पास पहुँचकर बोला— "आओ ! हे बढ़े चढ़े मदवाले दुर्मति ! सुलोचना द्रौपदी के केश-पाश को पकड़कर जो खींचा और जल्दी-जल्दी उसका वस्त्र जो उतारा और जो अन्य अपमान हमलोगों को सहना पड़ा वह सब मैं भूला नहीं हूँ। उसके बदले में अब नर, सुर और असुरों के देखते ही मैं तुम्हारे शरीर को मार-मारकर चूर कर दूँगा" ऐसा भीम ने स्तनित के समान गरजा। सभी घोड़ों को समाप्त करके और सारथि का भी वध करके भीम ने रथ को खोल दिया। ७-१२ दृढ़प्रज्ञ दुश्शासन ने भी क्रुद्ध होकर और निकट आकर और शक्तियों, शरों और चक्रों का प्रयोग करके भीम के शरीर को घायल किया और रथ को खोलकर और उसपर से कूद उतरकर स्तनित के समान गरजा। दोनों ने अपनी गदा उठायी। गरजा। उन दोनों का जो आपस में साभिमान युद्ध हुआ उसके समान कोई युद्ध इधर कहीं न

ॲट्टुत्तितु गद पुनरिरुवरुं
नटिच्चु तङ्ङळिल् पॊरुततुपोलें १५
अट्टुत्तॊरु युद्धं नटिच्चुण्टायति-
ल्लटर्क्कळमॊक्कप्पॊटिच्चिरुवरुं १६
अटिच्चारन्योन्यं तट्टुत्तार् पिन्नेयुं ।
कॊट्टुत्तुकॊळ्ळुवान् पळुतु नोक्कियुं १७
कॊट्टुत्तु कॊळ्ळातॆ कळिवान् नोक्कियुं ।
तट्टुत्तु वाङ्ङियुमट्टुत्तु तूङ्ङियुं १८
नटिच्चिरुवरुं पॊरुततुनेरं ।
पॊटिच्चितु दुश्शासननुटॆ गद १९
पिटिच्चानन्नेरमणञ्ञु भीमनॆ-
क्कटिच्चुं मुष्टिकळ् चुरुट्टिक्कुत्तियुं २०
पॊटिच्चॊळुकिन रुधिरं कैकॊण्टु
वटिच्चुवीळ्त्तियुं मिळिकळिल्च्चोर २१
तुटच्चुं मुष्टिकॊण्टिटिच्चु पल्लुकळ्
कटिच्चुमूळियिल् पतिच्चुमप्पॊळे २२
तिरिच्चु कन्पं कॊट्टियुं चरणङ्ङळ्
ञॆरिच्चुं कैत्तलं तिरिच्चुमाकुलाल् २३
पऱिच्चुमूक्कॊटु तलमुटि चोर
तॆऱिच्चु नालुदिक्किलुं चितऱियुं २४
उरत्तॊटु पाञ्ञुमुरस्सुतङ्ङळिल् ।
करत्तॊटुकरमुरच्चुमूळियिल् २५

हुआ था। दोनों ने सारी युद्धभूमि को नष्ट कर दिया। दोनों ने आपस में मारा और मार को रोका भी। दोनों मारने के लिये एक-दूसरे का छिद्र देख रहे थे और दोनों देकर न लेने का उपाय देखते थे। रोकना और पीछे हटना, निकट से भिड़जाना इस प्रकार दोनों ने उस समय युद्ध किया। जब भीम ने दुश्शसन की गदा चूर कर दी तब उसने भीम को पकड़ लिया और दाँतों से काटा, मुट्ठी से घूसें मारे। १३-२० जो रक्त बह रहा था उसे हाथ से गिरा दिया और आँखों की बहती खून को पोंछा। मुट्ठियों से मारा, दाँत पीसा, दोनों जमीन पर गिरे, तुरन्त ही उठकर बड़े उल्लास के साथ एक-दूसरे के पैरों को ज़ोर से दबाया, हाथ को घुमाया, और केशों को जोर से पकड़ा। रक्त निकलकर चारों ओर

उऱच्चु निल्क्कयुं चविट्टुकोण्टुपो-
य्तऱिच्चुवीणुटनुरुण्टुमप्पोळे २६
विरण्टेळुन्नेटुं तिरण्टकोपत्ताल् ।
उरुण्टु कण्णिण पोटियाल् मूटियुं २७
कळुत्तिल् कूर्त्तुमूर्त्तिरिक्कुन्न नखं
पतिच्चुं वाय्पोटु परिच्चुमेत्रयुं २८
भयं वरुमारु कलहिक्कुंनेरं
जयंवरुं दुश्शासननेन्नु चिलर् २९
जयं वरुं वृकोदरनेन्नु चिलर्
भयंकळञ्ञु काण्केटोयेन्नुं चिलर् ३०
भयंवरुं कण्टालिनिक्केन्नुं चिलर्
भयङ्करमितु समरमेन्नेल्लां ३१
पऱञ्ञु तङ्ङळिल् विवदिक्कुंनेरं
कुऱञ्ञोन्नु वाङ्ङिक्कळञ्ञु मारुति । ३२
चुवट्टिल् माऱिनिन्नटि रण्टुं वारि
च्चुवट्टिलाक्कि मेल्क्करयेऱिक्कर- ३३
ममर्त्तु नन्नायिच्चवुट्टिनिन्नुकों-
ण्टमर्त्त्यमर्त्त्यन्मार् पलरुं काणवे ३४
चळिप्पु कैविट्टङ्ङेटुत्तु कैवाळाल्
पोळिच्चु माऱिटं नखङ्ङळेक्कोण्टुं ३५

जाकर बिखरा। दोनों वेग से दौड़े और उनके वक्षःस्थल भिड़ गये। दोनों ने एक-दूसरे के हाथ रगड़ लिया। फिर दोनों जमीन पर डटकर खड़े हो गये। लात खाकर गिरे और लुढ़के। फिर उठकर बढ़े-चढ़े कोप से आँखें घुमाने लगे जो धूल से ढक गयीं। २१-२७ लम्बी और नुकीली नखों को एक-दूसरे के गरदन पर चुभा दीं। जब दोनों इस प्रकार लड़ रहे थे तब कुछ लोगों ने कहा 'दुश्शासन जीतेगा' औरों ने कहा 'भीम जीतेगा'। कोई-कोई कहता था "डर छोड़कर देखो यार!" और कोई कहता था "देखने में डर जाता हूँ"। यह युद्ध वस्तुतः भयङ्कर है। जब लोग इस प्रकार वाद कर रहे थे तब भीम कुछ पीछे हटा। भीम दुश्शासन के दोनों पैरों को मिलाकर उन पर चढ़ा। उसके हाथों को अपने पैर से दबाकर, मनुष्यों और देवों के देखते ही, संकोच छोड़कर, अपने खड्ग से उसके छाती को फाड़ा। २८-३५ और

पोट्टुपोट्टेप्पोटिच्चुटनुटनुटन्
चुट्टुचुटत्तिळच्चरुवियार्पोले ३६
तुट्टुतुटे वरुं रुधिरपूरत्ते-
क्कुट्टुकुटेक्कुटिच्चलरिच्चाटियुं । ३७
पेरुवेळ्ळंपोले वरुन्न शोणित-
मोरुतुळ्ळिपोलुं पुरत्तुपोकाते । ३८
कविणुनन्नायिक्किटन्नुकोण्टुटन्
कविळ्त्तटं नन्नाय निरच्चिचरक्कियुं । ३९
मदिच्चु मारुति चिरिच्चु चोल्लिनान्
मतित्तितु नावुमुदरवुमेल्लां । ४०
कुटल्मालमेल्लेन्नेट्टुत्तुकोण्टुटन्
तुटल्मालपोले कळुत्तिलिट्टुको- ४१
ण्टटल्निलमेल्लां पोटिपेट्टुंवण्ण-
मुटनुटन् चाटित्तुटमेले तच्चुं । ४२
पशुसमन्मार् पाण्डवन्मारेन्नल्लो
परञ्ञितु मुन्नं पलरुं केळ्क्कवे ४३
परिहासत्तोट्टु मदिच्चु कैकोट्टि-
च्चिरिच्चु कूत्ताटि नटन्नु निङ्ङळुं । ४४
पशुसमन्मार् कौरवरेन्निक्कालं
परञ्ञु ञान्तानुमिता कूत्ताटुन्नेन् । ४५
इनियिक्कळ्ळन्मार्कुलत्तिल् मूत्तव-
निनिक्कोरु नाळेक्कळिक्कुण्टाय्वरुं । ४६

अपने नखों से चीरा। उस समय जो गरम-गरम रक्त धाराप्रवाह निकला उसे भीम ने सोल्लास पिया। तदनन्तर गरजा और कूदा। बाढ़ की तरह निकलते रक्त की एक बूंद को भी बाहर न गिरने दिया। झुककर और लेटकर और मुँह भर-भर कर उसे पी लिया। और अपने मद में हँसता हुआ बोला— "अब मेरी जीभ और पेट दोनों तृप्त हैं" आन्त्रमाला को धीरे-धीरे निकालकर पुष्पमाला के समान गले में पहनकर ऐसा नाचा कि सारी युद्धभूमि चूर-चूर हो जाय। फिर उसके जाँघों पर मारा। ३६-४२ और कहा— पहले तुम लोगों ने बहुतों के सामने "पाण्डव पशु के समान हैं" ऐसा कहकर उपहास किया और अपने मद में ताली बजाते हुए हँसा और नाचा। अब मैं "कौरव पशु के समान

पोरुतवनेयुमोटुक्कि राज्यवुं
पोरुळुं नल्कुवनरचनुतन्ने । ४७
पोटुक्कनवेयेन्नुरत्तु मारुति
नटिच्च नर्त्तकियोटुकलर्न्नोरु- ४८
नटप्रवरनेक्कणक्के मत्तनाय्
नरहरि हिरण्यनेप्पिळर्न्नोरु- ४९
कुरुतियुमणिञ्ञिरिप्पतुपोले
नटक्कुन्ननेरमटल्क्कळमेल्लां
पोटिच्चु माट्टारेयोटुक्किवेगत्तिल् । ५०
कुरुवरसहोदरन्मारुं वन्नु-
पोरुतार् मारुतियवरेयुं कोन्नु ५१
पेरुत्त दुःखवुं भयवुं कैक्कोण्टु
कुरुक्कळोक्कवे तिरिच्चुमण्टिनार् । ५२
अटुत्तितु सेनापतितनयनां-
पटुत्वमेरिटुं वृषसेनन् वीरन् । ५३
अवनोटु युद्धं कोटुताय्चेय्तुटन्
पवननन्दनन् तळर्न्नितु चेम्मे । ५४
अकलुंमुन्ने वन्नटुत्तानन्नेरं
नकुलनुं वाळुंपरिचयुमायि- ५५
प्पकलवनुटे मकनुमन्पिनाल्
शकलिच्चान् वाळुंपरिचयुमेल्लां । ५६

हैं" ऐसा कहता हुआ नाच रहा हूँ। आगे इन चोरों के कुल के ज्येष्ठ से एक दिन मुझे खेलना होगा। उसे भी युद्ध में मारकर राज्य और सम्पत्ति को राजा (युधिष्ठिर) को तुरन्त ही दे दूँगा, ऐसा भीम ने कहा। नाचनेवाली नर्तकी का साथ देने वाले नटप्रवर के समान और हिरण्यकशिपु की छाती फाड़कर उसके रक्त से विराजमान नरसिंह के समान भीम चलने लगा और उसने रणभूमि को नष्ट करके जल्दी शत्रुओं को विध्वस्त कर दिया। ४३-५० तदनन्तर कौरव भाई आये और भीम ने उनको भी समाप्त कर दिया। अत्यन्त दुःखित और भयभीत होकर सभी कौरव लौटकर भागे। तब सेनापति का पुत्र और अत्यन्त निपुण वीर वृषसेन निकट आया। उससे तीव्र युद्ध करता हुआ पवन-नन्दर (भीम) थक गया। उसके हटने से पहले ही अपनी तलवार और चर्म लिये नकुल निकट पहुँचा। सूर्यपुत्र (कर्ण) ने अपने बाण से

नकुलनुवन्न परिभवंकण्टों-
रतुलविक्रममुटय पाञ्चालन् ५७
अरिकत्तुतन्ने मरुमक्कळैव-
रोरुमिच्चुण्टेन्नोरुरप्पुतन्नाले ५८
विरविनोटु पाञ्जटुत्तानन्तेर-
मरिकळ्कूट्टत्तिलकप्पेट्टानवन् । ५९
अरिञ्ञुपोमुटल् शरङ्ङळालेन्न-
परवशतयोटटुत्तु सात्यकि । ६०
इटियोंटुनेराय् मुळङ्ङुं नादत्तो-
टिटकलर्न्नितु पटयतुनेरं । ६१
वृषसेनन् कर्ण्णन् कृपरुं भोजनुं
विषधरद्ध्वजन् गुरुतनयनुं ६२
मरिक्कणं पक्षे जयिक्कणमेन्न-
ङ्ङुरच्चु नन्नायि श्रमिच्चु पोर्चेय्तार् । ६३
नकुलन् पाञ्चालियुटे तनयन्मार्
पकलवन्नुनेरियन्न पाञ्चालन् ६४
अनिलनन्दननरिय सात्यकि-
यनुपमनाय विजयनुमायि ६५
कलहिक्कुंन्नेरं वृषसेनन् वीरन्
पल हयङ्ङळेक्कोलचेय्तु पिन्ने । ६६

तलवार् और चर्म को टुकड़ा-टुकड़ा कर दिया । ५१-५६ नकुल का हार देखकर अतुलविक्रम पाञ्चाल, पाँचों भाञ्जों के निकट होने के भरोसे उस समय दौड़कर निकट पहुँचा, पर शत्रुओं के बीच में फँस गया । तब यह समझकर कि वह शरों से कट जायगा सात्यकि विश्वास के साथ निकट पहुँचा । उस समय स्तनित के समान सिंहनाद करती हुई दोनों सेनाएँ मिल गयीं । वृषसेन, कर्ण, कृप, भोज, नागध्वज (दुर्योधन) गुरुपुत्र (अश्वत्थामा) इन सबने 'जान देकर भी जीतना चाहिये' इस दृढ़संकल्प से अच्छी तरह से युद्ध किया । ५७-६३ नकुल, पाञ्चाली के पुत्र, सूर्य के समान पाञ्चाल, भीम की तरह श्रेष्ठ सात्यकि और अनुपम अर्जुन के साथ युद्ध करते समय वीर वृषसेन ने अनेक घोड़ों को समाप्त कर दिया । तत्पश्चात् अनेक विजयी योद्धाओं के शरीर को टुकड़े करके, भीम के रथ को शरों से चूर करके सिंहनाद किया । तब अर्जुन ने कहा— 'तुमने पर्याप्त कुकर्म किये हैं, बहुत अच्छा !' एक अच्छा शर

सकललोकेशविजयन्मारुटल्
शकलनंचेय्तु पवनजन्तन्टे
रथवुमेय्तोक्कप्पोटिच्चलरुन्पोळ् ६७
पेरुतु नी चेय्त करुमनयेल्लां
पेरिकें नन्नेन्नु परञ्ञु पार्त्थनुं । ६८
ओरु शरं तेरञ्ञेटुत्ततुकोण्टु
विरवोटु तलयरुत्तानन्नेरं ६९
अटुत्तु कर्ण्णनुं विजयनोटप्पो-
ळेटुत्तु बाणङ्ङळ् तोटुत्तुटनुटन् ७०
कोटुत्तानर्ज्जुननिनतनयनुं
पटुत्वमोटुटन् मुरिच्चतिल्प्परं ७१
चोरिञ्ञानन्पुकळ् मळपेय्युंपोले ।
निरञ्ञु पोर्क्कळमिटकलर्न्नप्पोळ् ७२
मरञ्ञु दिक्कुकळ् तरणिबिंबवुं
परञ्ञु कण्टुनिन्नवरुं तङ्ङळिल् ७३
विजयं कर्ण्णनु वरुमेन्नु चिलर्
विजयं पार्त्थनु वरुमेन्नु चिलर् । ७४
शिवनोटु परञ्ञितु विरिञ्चनु-
मिविटे पार्त्थनु वरुमत्रे जयं । ७५
पलरुमिङ्ङने परयुंनेरत्तु
कलहवुमतिभयङ्करमायि । ७६
मलकळुमलकटलुमाशर-
कुलवुमञ्चिटुंपटि हनुमानुं ७७

चुनके उससे ढंग से सिर काट डाला। ६४-६९ तब कर्ण अर्जुन के पास आया, अर्जुन ने शरों को लगातार चढ़ाकर चलाया। कर्ण ने तो कुशलता के साथ सबको नष्ट कर दिया और अपनी ओर से शरवर्षा की। जब दोनों मिल गये तो रणभूमि भर गयी। दिशाएँ छिप गयीं और सूर्यबिंब अदृश्य हो गया। देखनेवालों में से आपस में कुछ लोगों ने इस प्रकार कहा— 'विजय कर्ण की होगी' औरों ने कहा— 'विजय अर्जुन की होगी'। ब्रह्मा ने शिवजी से कहा— 'विजय अर्जुन की ही होगी'। जब लोग इस प्रकार कह रहे थे तब युद्ध अति भयङ्कर हुआ। ७०-७६ उस समय हनुमान् ने भी ऐसा चिल्लाया कि पर्वत, क्षुब्धसागर और

अलरिट्टुन्नितु तेरुतेरेयप्पोळ्
चलितचित्तमोटरच्चु कौरवर् ७८
कुरञ्ञतिल्ल पोर्क्किरुवरुमेतुं ।
परञ्ञु शल्यरोटिनतनयनुं— ७९
पटयोटुकूटेप्पोरुतु फल्गुन-
नटलिलेन्नेक्कोन्नीटुक्किटुन्नाकिल् ८०
प्रवृत्ति शेषमेन्ततु चोल्केन्नप्पोळ्
प्रवृद्धतापेन परञ्ञु शल्यरुं । ८१
अतु वरुन्नाकिलनन्तरं यदु-
पतिययुं धनञ्जयनयुं कोन्नु ८२
जयं कुरुकुलवरनु नल्कुवन्
भयं कळक भास्करतनय ! नी । ८३
अरुणनन्दननतु केट्टनेर-
मरुणनेत्रमोटणञ्ञानन्नेरं । ८४
रघुकुलवरनिशिचरवर-
रणनिशमनमनुभविप्पिप्पान् ८५
विबुधनायकतनयनन्नेरं
विबुधकळधिपतियोटु चोन्नान् । ८६
जय जगत्पते ! जय जनार्द्दन !
जय नारायण ! जय मधुरिपो ! ८७
तरणिनन्दनन् वधिक्किलेन्त निन्-
तिरुवटियेन्तु निनच्चतु पिन्ने ? ८८

राक्षसगण काँपने लगे। कौरव चलितचित्त होकर देखने लगे और कोई भी पक्ष युद्ध में कम न हुआ। कर्ण ने शल्य से पूँछा— 'सेना के साथ लड़कर अगर अर्जुन युद्ध में मेरा वध करेगा तो उसके बाद क्या होगा, मुझे बतला दो।' शल्य ने इस प्रकार उत्तर दिया। अगर ऐसा होगा तो यदुपति (कृष्ण) को और धनञ्जय को मारकर मैं कुरुकुलवर (दुर्योधन) की विजय करा दूँगा। हे भास्करतनय ! डरो मत। ७७-८३ यह सुनकर कर्ण आँखें लालकरके लड़ने लगा। रघुकुलवर और रावण के युद्ध के दर्शन का अनुभव कराने के लिए विबुधनायक (इन्द्र) का पुत्र (अर्जुन) उस समय देवों के पति से बोला— हे जगत्पते ! हे जनार्दन ! तुम्हारी जय हो ! हे नारायण ! हे मधुरिपो ! तुम्हारी जय हो !

अरुळिच्चेय्यणमटियनोटतें-
न्तुटनें जिष्णुवुं परञ्ञतुनेरं ८९
रिपुकुलत्तें ञानटयेंस्संहरि-
च्चवनि धर्म्मजन्तनिक्कु नल्कुवन् । ९०
अवनुमत्तेरं चरणतारिल् वी-
णवनतनायिट्टुणर्त्तिच्चीटिनान् । ९१
अतुकूटातें ञानवनेंक्कोंल्लुवा-
ननुज्ञ निन्तिरुवटियरुळणं । ९२
मुरुकेंक्कूट्टिनान् मुररिपु तेरुं
कुरवु कूटातेंयट्टुत्तु कर्ण्णनुं । ९३
मुरिञ्ञितन्पुकोंण्टुटलिरुवर्क्कुं
मुरमुरयायिच्चमञ्ञु नारिमार् । ९४
शरशकलितकरितुरगङ्ङळ्
करचरणमट्टुटनुटन् वीणुं । ९५
मळपेंय्युंपोलें पोंळिञ्ञु बाणवुं
पुळकळेंप्पोलेंयोंळुकि चोरयुं । ९६
हरि हरि हरि हरि हरियेंन्तुं
शिव शिव शिव शिव शिवयेंन्तुं । ९७
अरुमयोट्टुकूटट्टुत्तु चोंल्लियु-
मरुवयर् मेल्निन्तिरङ्ङिप्पुल्कियुं । ९८

अगर कर्ण मेरा वध करेगा तो आगे के लिए पूज्यचरण ने क्या सोचा है ? कृपया बन्दे से बतला दीजिये । जब अर्जुन ने इस प्रकार कहा (तब कृष्ण ने उत्तर दिया) "सारे शत्रुकुल को समाप्त करके मैं भूमि को युधिष्ठिर को दे दूँगा" । ८४-९० तब अर्जुन ने कृष्ण के चरणों पड़कर इस प्रकार निवेदन किया । इसके अतिरिक्त उसको मारने के लिए पूज्यचरण मुझे आज्ञा दे दें । तब मुररिपु (कृष्ण) ने रथ को सजाया और कर्ण भी बिना हिचक के निकट पहुँचा । बाणों से दोनों के शरीर घायल हुए और स्त्रियाँ विलाप करने लगीं । शरों से कटे हाथी और घोड़े हाथ-पैर टूटने से गिरे । वर्षा की तरह बाण गिरे और नदी के समान रक्त बहा । निकट आकर कुछ लोगों ने अगर हरि हरि हरि हरि हरि कहा तो औरों ने शिव शिव शिव शिव शिव कहा । अपसराओं ने आकाश से उतरकर स्वागत किया । ९१-९८ जल्दी-जल्दी मरनेवाले वीरों का पूज्य

तेरुतेरे वीरर् मरिक्कुन्नोरुटे
पेरुवळियायिच्चमञ्ञु भास्करन्-
तिरुवटियुटल्नटुवतुनेरं । ९९
तेरिञ्ञु बाणङ्ङळेटुत्तु कर्ण्णनु-
मेरिञ्ञकोपमोटटुत्तानन्नेरं । १००
प्रळयकालत्तु दिनकरबिंब-
मळविल्लातोळमुदिच्चतुपोले १०१
त्रिभुवनमोक्क दहिप्पान् कल्पान्त-
दहननुज्ज्वलिच्चणयुन्नपोले । १०२
अटुत्ततुनेरमतिनुटे नेरे
प्रळयकालानुगुणमरुदनु- १०३
गतघनाघननिभकळेबर-
प्रियसखियाय धनञ्जयनोटुं १०४
शरमयासारं तुटङ्ङि प्लावन-
करन्मारायितु शिव ! शिव ! चित्रं ! १०५
दिनकरसुतशरनिकरङ्ङळ्
शमनं चेय्युन्न सुरपतिसुत- १०६
शरवरिषवुं दहिच्चीटुंवण्ण-
मेरियुमस्त्रवुं पोळिञ्ञु कर्ण्णनुं । १०७
अरिञ्ञरिञ्ञव कळञ्ञु फल्गुनन्
चोरिञ्ञितन्पुकळ् पलतरत्तिलुं । १०८
रघुवर निशिचरवररण-
समविलोकनकुतुकमोटुटन् १०९

सूर्य का शरीर मध्य आम रास्ता बन गया। कर्ण ने उस समय जलते हुए कोप से चुने हुए बाण ले लिये। प्रलयकाल के सूर्यबिंब के समान जो निरन्तर और निस्सीम उदय करता है, अथवा सारे त्रिभुवन को जलाने के लिए देदीप्यमान कल्पान्त अग्नि के समान वह निकट आया। तब उसके मुकाबले में प्रलयकाल के अनुगुण वायु से मिश्रित मेघसमूह के समान शरीरवाले के मित्र अर्जुन के विरुद्ध शरवर्षा प्रारम्भ हुई। हे शिव ! शिव ! कैसा विचित्र है ! ९९-१०५ कर्ण की शरवर्षा को शान्त करनेवाली अर्जुन की शरवर्षा को जलाने के लिए कर्ण ने ज़लते हुए अस्त्रों का प्रयोग किया। अर्जुन ने उन सबको नष्ट कर

इरुवरोटुं नेरोरुवरिल्लेन्नु
सुरमुनिजनं पुकळ्त्तिटुंनेरं । ११०
कलशसंभवतनयनादराल्
कलिपुरुषनाकिय कुरुकुल- १११
प्पेरुमाळ्तन्नोटु परञ्ञितेन्नयुं
पेरिके लाळिच्चु वरिकरचा ! नी । ११२
पलगुणङ्ङळोटवनियुं वाणु
पलकालं वाळ्क नृपशिखामणे ! ११३
मति मति रणमतिभयं वरु-
मति चतुरत कळञ्ञ शूरन्मार् । ११४
सुरवरदिनकर सुतन्मारो-
टोरुवरिल्ल नेर् धनुस्सेटुत्ततिल् । ११५
विळच्चीलेतुमोरटवुकळाक्कुं-
मोळिच्चुपोकयिल्लिवरिरुवरुं । ११६
निरक्कणं पाण्डुसुतन्मारोटि-
न्नोरिक्कलुं वैरं निनय्क्करुतिनि । ११७
पिणक्कं नल्लवरोटु नन्नल्लेतु-
मिणक्कं वेण्टतङ्ङवरोटु नूनं । ११८
पलक्कुं नेरेन्नु मनसि तोन्निक्कुं
फलं वन्नीलेतुमतिन्नोरुवक्कुं । ११९

दिया और अनेक प्रकार की शरवर्षा की। रघुवर और रावण के युद्ध के समान युद्ध को देखने के कुतूहल से सुरजन और मुनिजन ने "इन दोनों के तुल्य और कोई नहीं है" ऐसी प्रशंसा की। तब कलशसंभव (द्रोण) के पुत्र ने कलिपुरुष कुरुकुल के नाथ से इस प्रकार कहा— "हे राजन् ! खूब लालन करते जाओ ! हे नृपशिखामणे ! अनेक गुणों के साथ पृथिवी पर चिरकाल तक राज करो। १०६-११३ बस ! बस ! युद्ध बहुत हो गया। बड़ा भय होनेवाला है, ये शूर चतुरता में कम हैं। इन दो सुरवर (इन्द्र) और दिनकर (सूर्य) के पुत्रों के तुल्य उनमें धनुष के काम में कोई नहीं है इन दोनों में किसी ने भी युद्ध में भूल न की है। इनमें कोई भी न हटनेवाला है। पाण्डुपुत्रों से समझौता होना चाहिये अब उनसे वैर की बात सोचना ही न चाहिये। अच्छों से झगड़ना ठीक नहीं है अब उनसे मिलकर ही रहना चाहिये। लोगों को ठीक प्रतीत होनेवाला कोई भी फल अब किसी को न मिला है। जान

मोळिञ्ञतेन्तोन्नु मुकुन्दनेन्नाल-
तोळिञ्ञु केळ्क्कयिल्लवररिञ्ञालुं । १२०
तुण नारायणनवर्कळ्क्कोप्पोळुं
पणियुण्टो पिन्नेज्जयिच्चुकोळ्ळुवान् ? १२१
पटत्तलवन्मारिरुवरेयुं आ-
नटक्कंळमतिन् नटुविल्प्पुक्कुटन् । १२२
अकट्टुवन् पक्षे परञ्ञालुमेन्नान्
पकच्चुपोकातेयिनियुळ्ळ कालं १२३
पिळच्चु मार्ग्गमेन्निरिक्किल्प्पिन्नेयुं
पिळयरियुन्नोर् वळियेचोल्लुकिल्
उळन्नु पिन्नेयुं वळियेच्चेल्लुन्नोर् १२४
अकक्कुरुन्नेरेत्तेळिञ्ञु धर्म्मजन्
पकुत्तु राज्यवुं निनक्कु तन्निट्टुं १२५
उटप्पमेरिट्टुन्नवरुमाय् नन्ना-
यट्टुत्तवण्णं मेदिनियुं वाणु नी १२६
सुखिच्चिरिप्पतिनुरय्क्क मानसं ।
नशिक्कुमल्लाय्किलटलिल् नी तानुं १२७
रवितनयने विजयन् कोल्लुमो-
रपजयमतिनकप्पेटा तानुं । १२८
गुरुसुतनितु परञ्ञतुनेरं
कुरुपतितानुमवनोटु चोन्नान्— १२९

लो कि जो कुछ मुकुन्द कहेगा उसे टालकर वे और कुछ न करेंगे। ११४-१२० नारायण उनके सदैव सहायक हैं। फिर उनके लिए जीतने में क्या कठिनाई है? मैं युद्धभूमि के बीच में घुसकर दोनों सेनानायकों को अलग करूँगा, अगर तुम कहोगे। यद्यपि गलत रास्ता अपनाया गया तथापि गलती समझनेवालों के कहने से शेष समय अगर सही रास्ता अपनाकर ठीक व्यवहार किया जाय तो युधिष्ठिर प्रसन्न होकर राज्य बाँटकर तुमको तुम्हारा हिस्सा देगा और तुम अपने ही लोगों के साथ पृथिवी का अच्छी तरह से राज करते हुए सुख से रहने का निश्चय कर लो। नहीं तो युद्ध में तुम्हारा नाश होगा और अर्जुन कर्ण का वध करेगा, उसमें कोई प्रतिबन्ध न होगा"। १२१-१२८ जब गुरुपुत्र ने इस प्रकार कहा तब उसे सुनकर दुर्योधन ने कहा— अपने निकटतम

अटुत्त तन्पितन्नुटॆ रुधिरत्तॆ
कुटिच्चतॆङ्ङनॆ मऱन्निटुन्नु ञान् ? १३०
अवरुमाय् सुखिच्चवनियिल् वाऴ्वा-
नवकाशं वन्नालतु पोरुतियो ? १३१
इनिक्कवरॆयुमवर्कऴ्क्कॆन्नॆयु-
मकक्कुरुन्निल् तेऱुतॊरिक्कलुं । १३२
इनियॆन्नोटिव पऱयाय्कवेण-
मिनतनयनॆ वधिक्कुमो पार्त्थन् ? १३३
अॆऴुतल्ल गळपतियॆक्कॊल्लुवा-
निळमतियणिञ्ञवन् वरिकिलुं । १३४

कर्ण्णार्ज्जुनयुद्धं-कर्ण्णवधं

पलतुमित्तरं पऱयुन्ननेरं
वलरिपुतनयनुमंगेशनुं १
पलविधमस्त्रङ्ङळ प्रयोगिच्चान्
फलं वन्नीलेट्मतिन्नॊरुवक्कुं । २
विजयन् पावकशरमयच्चतु-
वरुणास्त्रं कॊण्टु तटुत्तु कर्ण्णनुं । ३
अॆटुत्तु पार्ज्जन्यमयच्चितर्ज्जुनन्
तटुत्तु वायव्यमतुकॊण्टंगेशन् । ४

भाई का रक्त जो पीया गया उसे मैं कैसे भूल सकता हूँ ? उनके साथ पृथिवी पर राज करने का अवसर मिलने से क्या सन्तोष हो जायगा ? न वे मेरे मन में और न हम उनके मन में कभी स्थान प्राप्त कर सकते हैं। आगे इस प्रकार की बातें मुझसे न कहना। क्या अर्जुन कर्ण का वध कर सकता है ? कर्ण को मारना आसान नहीं है अर्जुन के अर्धचन्द्र (एक प्रकार का शर) धारण करके आने पर भी। १२९-१३४

कर्णार्जुनयुद्ध और कर्णवध

जब इस प्रकार की बातें हो रही थीं तब अर्जुन और कर्ण ने अनेक प्रकार के अस्त्रों का प्रयोग किया पर दोनों असफल हुए। अर्जुन ने जहाँ आग्नेयास्त्र भेजा वहाँ कर्ण ने उसको वरुणास्त्र से रोका। जब अर्जुन ने पार्जन्यास्त्र छोड़ा तब कर्ण ने वायव्य से उसका जवाब दिया।

झटिति पार्व्वतमयच्चितर्ज्जुनन्
तट्टुत्तु वज्रास्त्रमतुकोण्टंगेशन् । ५
पल दिव्यास्त्रङ्ङळिरुवरुमोप्पं
तुलितन्मारायि प्रयोगिक्कुंनेरं । ६
दलितदेहनाय् चमञ्ञितु पार्त्थन्
चलितचित्तनायितु मुकुन्दनुं । ७
कलितमोदमोटणञ्ञु कौरवर्
निलविळिच्चितु निविरेयन्नेरं । ८
अट्टुत्तु पार्त्थनोट्टुरचेय्तु भीम-
नोट्टुक्कीटेणं कर्ण्णने निमिषं नी । ९
पटयिक्कळक्कमुण्टङ्ङिञ्ञतो भवान् ?
नटुक्कमुळ्क्कोण्टु तिरिञ्ञु मण्टुकिल् १०
ओरुत्तरुमिल्ल पोरुप्पिच्चीटुवान्
करुत्तरायुळ्ळोर् किळच्चिरिक्कुन्नु । ११
उरत्तिङ्क्कुन्न शरत्तिनालोक्क-
त्तरक्केटुण्टेन्नु धरिच्चिरिक्कणं । १२
इनिक्कुमुण्टोट्टु तळर्च्चयिन्निप्पोळ्
मनक्कुरुन्नेतुमिळक्कमेन्नियेः १३
वधिक्क कर्ण्णनेयवनितुकालं
चतिक्कुं नम्मेयेन्नुरच्चिरिक्कणं । १४
मुकुन्दनिन्दिरारमणन् गोविन्द-
नखण्डनंबुजनयनन् माधवन् १५

अर्जुन ने तुरन्त पार्वतास्त्र भेजा जिसे कर्ण ने वज्रास्त्र से रोका। इस प्रकार दोनों ने बराबर अनेक दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया। पार्थ का शरीर बहुत थका और मुकुन्द का चित्त कुछ व्याकुल हुआ। १-७ कौरव प्रमुदित हुए और उन्होंने उच्च स्वर से चिल्लाया। तब अर्जुन के निकट जाकर भीम ने कहा— "अब क्षण भर में कर्ण को समाप्त करो" जानते हो कि सेना कुछ हिल रही है ? अगर वह घबड़ाकर पीछे हटेगी तो उसको समझाकर रोकनेवाला कोई नहीं है। जिनमें शक्ति है वे थके हुए हैं। जान लो कि ज़ोर से लगे बाणों से सब घायल हो गये हैं। मैं भी आज अब कुछ थका हूँ। इसलिए बिना हिचके कर्ण को मारो। नहीं तो वह हम लोगों को धोखा देगा, जान लो। ८-१४ मुकुन्द,

अरुळिच्चेय्तितु पवननन्दनन्
परञ्ञतुपोले पलतरमप्पोळ् । १६
चोरिञ्ञितु शरनिकरमर्ज्जुनन्
चोरिञ्ञितु चोर रवितनयनुं । १७
करिञ्ञितु भावं कुरुवरन्माक्कुं
चरिञ्ञितु निन्न चतुरंगङ्ङळुं । १८
पोरिञ्ञु तीक्कनल् तेरिच्चिट्टुवण्णं
तेरिञ्ञु बाणङ्ङळयच्चु कर्णनुं । १९
करञ्ञु मण्टुन्नु करिवरन्मारुं
पिरिञ्ञु केळुन्नु परन्न कालाळुं । २०
तिरिञ्ञु निल्पवरवयवङ्ङळे-
यरिञ्ञरिञ्ञिट्टुतुटङ्ङि पार्त्थनुं । २१
कुरञ्ञीलेतुमे रविसुतन् बाणं
मुरिञ्ञु वीणुटनटक्कळमेल्लां २२
मरञ्ञु भानुमण्डलवुमन्नेरं
मरञ्ञु दिक्कुकळ् तिरिक्कायीलाक्कुं । २३
मरिञ्ञुवीळुन्नु मदगजङ्ङळुं
तिरिञ्ञु मण्टुन्नु तुरगपंक्तियुं । २४
शरङ्ङळ्कोण्टुटल् मुळुवन् मूटुन्नु
नुरुङ्ङि वीळुन्नु रथङ्ङळुमेल्लां । २५

इन्दिरारमण, गोविन्द, अखण्ड, कमललोचन, माधव ने भी भीम की तरह अर्जुन से अनेक बातें कहीं। तब अर्जुन ने शरसमूह भेजा और कर्ण का रक्त बहने लगा। कौरव विषण्ण हुए और चतुरंग सेना घबड़ाने लगी। तब कर्ण ने अग्नि के विस्फुलिङ्ग के समान चुन-चुनकर बाण भेजे। अच्छे-अच्छे हाथी भी भागने लगे और पैदल सैनिक भी इधर-उधर होकर घबड़ा रहे हैं। पीछे को घूमनेवालों के शरीर को अर्जुन काट-काटकर गिराने लगा। १५-२१ कर्ण के बाणों में कोई कमी न हुई। जब सब कटकर गिरे तब सारी रणभूमि ढक गयी। भानुमण्डल भी छिप गया। कोई दिशायें न पहचान सका। मदवाले हाथी भी उलटकर गिर रहे हैं घोड़ों की पंक्तियां घूमकर भाग रही हैं, शरीर शरों से छिपे जा रहे हैं, और रथ भी कटकर गिर रहे हैं। झण्डों के खंभे भी कटकर गिर रहे हैं। एक मुहूर्त के अन्दर कर्ण की सेना नष्ट हो गयी। अपनी सेना का नाश

तेंरिच्चु पोकुन्नु कोंटिमरङ्ङळु-
मोंरु मुहूर्त्तत्तिलिटय्क्कु कर्ण्णनुं
तेंरुतेंरे मरिच्चितु पटयेल्लां । २६
पटय्क्कु नाशं वन्नतु कण्टु कर्ण्ण-
नटुत्तु नागास्त्रमेंटुत्तु वैकातें । २७
तोंटुत्तु पाण्डवन्मिळिकळ्क्कु नेरे
पटुत्वमोटुटन् पऱञ्ञु शल्यरुं । २८
पिळय्क्कुमन्पतङ्ङय्य्क्कोंल्ला कर्ण्ण !
कळुत्तिनु नेरे तोंटुक्कोंन्नु शल्यर् २९
पऱञ्ञतु केट्टु पऱञ्ञु कर्ण्णनुं—
पऱञ्ञतु नन्नतरिञ्ञु वैकातें । ३०
तोंटुत्त बाणं ञानेंटुत्तिनि वीण्टुं
तोंटुक्कयिल्लेंन्नु धरिक्कयुं वेणं । ३१
ज्वलिच्चु नागास्त्रमणयुन्ननेरं
चलिच्चितु चित्तं सुरजनङ्ङळ्क्कुं । ३२
तिरिक्कयिल्लय्यो शरमितुकोंण्टु
मरिक्कोंन्नायो नी मम सहोदरा ! ३३
चतिक्कोंल्ला सत्यं पिळय्क्कोंल्लायें-
न्नङ्ङतिप्रमोदेन पऱञ्ञु कर्ण्णनुं । ३४
विधिबलमय्यो ! शिव ! शिवयेंन्नु !
विषण्णरायुटन् चमञ्ञितेवरुं । ३५

देखकर कर्ण ने बिना विलम्ब के नागास्त्र ले लिया। और पाण्डवों की आँखों को उसका निशाना बनाया। तब शल्य ने पटुत्व के साथ कहा— २२-२८ "हे कर्ण ! अस्त्र लगेगा नहीं, उसे न भेजो। गरदन को निशाना बनाओ" शल्य का यह कहना सुनकर कर्ण बोला— तुम्हारा कहना तो ठीक है, मैंने समझ लिया। पर जान लो कि चढ़े बाण को निकालकर मैं दुबारा न चढ़ानेवाला हूँ। जब जलता हुआ नागास्त्र छोड़ा जा रहा था तब देवों का चित्त क्षुब्ध हो गया। "इसको वापस न लूँगा। हे सहोदर ! क्या इस बाण से तुम्हारा निधन होगा ? धोखा मत दो, शपथ का उल्लङ्घन न करो" ऐसा कर्ण ने बड़े प्रमोद के साथ कहा। हा ! विधि का बल देखो ! शिव ! शिव ! ऐसा कहते हुए सब लोग विषण्ण हुए। २९-३५ अश्वसेन तो उस समय प्रसन्न हुआ और तक्षक के सभी मुख चमकने लगे। अनेक रणभूमियों में,

तेंळिञ्ञतश्वसेननुमतुनेरं
विळङ्ङ् तक्षकमुखङ्ङळुमेल्लां । ३६
पल निलत्तिलुं पल प्रकारवुं
पलनाळुं कात्त परन्पुरुषनुं ३७
निनच्चु कण्टु पाण्डवनुटे रथं
निलत्तोरैविरलमर्त्तु ताळ्त्तिनान् । ३८
मुटियोटुकूटेयरिञ्ञु पाण्डवन्-
मकुटवुं कोण्टु नटन्नु बाणवुं । ३९
पुनरिरुवरुं पेरुमळपोले
पुनरपि वेगालटुत्तु वैकाते । ४०
पोळिञ्ञतिनाले निरञ्ञितूळियुं
पोळिञ्ञोळुकुन्नु रुधिरवारियुं । ४१
मरञ्ञितु खरकिरणबिंबवुं
निरञ्ञिरुट्टायिच्चमञ्ञु लोकवुं । ४२
अकन्नु कण्टुनिन्नवर्कळुमेल्लां
पकर्न्नु भाववुं पकलवनप्पोळ् । ४३
विरवोटर्ज्जुननोरु शरं कोण्टु
विळङ्ङुं कुण्डलं कळञ्ञानन्नेरं । ४४
विजयनेयुं केशवनेयुमेय्तु
विगतभीतियोटटुत्तु कर्ण्णनुं । ४५
झटिति तेरुरुळवनियिल्त्ताणु
तटञ्ञिळकाते चमञ्ञितन्नेरं । ४६

अनेक प्रकार से चिरकाल से रक्षा करनेवाले पर पुरुष ने सोचकर अर्जुन के रथ को पाँच अंगुल भूमि के अन्दर दबा दिया। तब (कर्ण का) बाण शिखा के साथ अर्जुन के मुकुट को भी लेकर निकल गया। फिर दोनों मुसलाधार वर्षा के समान वेग से एक दूसरे के निकट पहुँचे। शरवर्षा के कारण भूमि शरों से भर गयी और रक्त भी धाराप्रवाह बह रहा है। सूर्यबिंब भी ढक गया और सारा जगत् अन्धकार में डूब गया। ३६-४२ देखनेवाले सब हटे और कर्ण का भी भाव बदला। अर्जुन ने एक बाण से कर्ण के चमकनेवाले कुण्डल को ढंग से उड़ा दिया। कर्ण तो निडर होकर अर्जुन और केशव को निशाना बनाकर निकट पहुँचा। उस समय रथ के चक्रों के भूमि में दब जाने के कारण रथ हिल न सका। कोई अस्त्र या शस्त्र उसको सूझा नहीं। गुरु के शाप के कारण ही यह बात

ऒरु शास्त्रास्त्रङ्ङळ् वळ्यिये तोन्नील
गुरुशापत्तिनालतुमकप्पॆट्टु । ४७
जगति दानशीलरिल् मुन्पुळ्ळवन्
जनमनोहरन् विमलनंगेशन् ४८
निरूपिच्चु विधिबलमितॆन्नतुं
वरुमिप्पोळ् मम मरणमॆन्नतुं । ४९
वळरॆद्धर्म्मं चॆय्तवर्क्कपजयं
वरिकयिल्लॆन्नतॊरु पॊळियत्रे । ५०
पऱञ्ञतु पुनरनुजनोटव-
नऱिञ्ञतारॆरॆयऱिवु निन्नोळं । ५१
अधर्म्मं चॆय्कयिल्लॊरुनाळुं भवा-
नतु मनसि ञानऱिञ्ञिरिक्कुन्नु । ५२
विरवॊटु तेरिङ्ङुयर्त्तिक्कॊळ्वोळ-
मॊरु शरमॆय्यातिरिक्कणमिप्पोळ् । ५३
पऱञ्ञु तेरुरुळॆटुप्पान् भाविच्चि-
ट्टॊरुतरत्तिलुमिळकाञ्ञु चक्रं । ५४
अरुळिच्चॆय्तितु मुकुन्दनन्नेरं
पॆरिकॆ नन्नु नी पऱञ्ञतु कर्ण्ण ! ५५
तिरिञ्ञीलेतुं नी पऱञ्ञतॊन्नुमे
पऱञ्ञिटेणं ञानऱिञ्ञिटुंवण्णं । ५६
जयति धर्म्ममॆन्नॊरु मॊळ्ळि चॊन्न-
तऱिञ्ञु निन्नॊटु पऱञ्ञतारिप्पोळ् ? ५७

हुई। इस जगत् में दानशीलों में श्रेष्ठ जनमनोहर, विमल अङ्गेश (कर्ण) ने सोचा— "यह अवश्य विधि का बल है। अब मेरा निधन होनेवाला है"। ४३-४९ 'बहुत धर्म करनेवालों का पराजय न होगा' यह कथन बिलकुल झूठ है। तब उसने अर्जुन से कहा— "तुमसे बढ़कर ज्ञानी कौन है ? तुम कभी अधर्म न करोगे, यह मैं अपने मन में जानता हूँ। इस रथ को उठवाने तक मुझ पर कोई शर न चलाओ।" रथ के चक्र को उठाने का प्रयत्न किया, पर वह किसी तरह हिलता ही नहीं। तब मुकुन्द ने कहा— हे कर्ण ! तुमने खूब कहा ! तुम्हारा कहना कुछ भी समझ में न आ रहा है। ऐसा कहो कि मैं कुछ समझ सकूँ। ५०-५६ 'धर्म की विजय होती है' इस कथन का अर्थ समझकर किसने तुमको बतलाया ? यह धर्म पहले कहाँ चला गया था और अब यहाँ कहाँ से

ऒविटॆप्पोयिरुन्नितु मुन्नं धर्म्म-
मॆविटॆनिन्निप्पोळिविटेक्कु वन्नु ? ५८
पलवुरु निङ्ङळ् पलरुमॊन्निच्चु
पॊरुतु कळ्ळच्चूतकप्पॆटीच्चतन्नुं । ५९
नृपतितन्नुटॆ सभयिङ्कलुनिन्नु
द्रुपदपुत्रियॆ पिटिच्चिळच्चतन्नुं । ६०
पतिव्रतयाकुमवळुटॆ तुकि-
लधिकं वेगत्तिल् पिटिच्चळिच्चतन्नुं । ६१
अरक्किल्लत्तिलिट्टटच्चु तीयुंव-
च्चॊरुक्कि संस्कारादिकळ् कळिच्चतन्नुं । ६२
पवनपुत्रनु विषंकॊटुत्तन्नु-
मवनॆप्पान्पिनाल् कटिप्पॆटुत्तन्नुं । ६३
अतिकुमारनामभिमन्युतन्नॆ
वधिच्चु कूटाञ्ञु विषण्णन्मारायि- ६४
ट्टाुवरॊन्निच्चिट्टु कॊलयायो-
रटवुकूटातॆ चतिच्चुकॊन्नतन्नुं । ६५
पलनाळुं निङ्ङळ् पलरुमॊन्निच्चु
पलविधं चॆय्तोरधर्म्मकर्म्मङ्ङळ् ६६
फलिच्चितिन्नॊङ्ङु जयिक्कुन्नु धर्म्मं ।
फलिक्कयिल्लल्लो स्वकर्म्ममॆन्नियॆ ? ६७
इनियॆन्तु पार्त्था ! पतुक्कॆ निल्कुन्न-
तिनतनयनॆ वधिक्क वैकाते । ६८

आया ? वह दिन जब कि अनेक बार तुम लोगों ने मिलकर झूठे जूए में इनको फँसाया था । वह दिन जब नृपति की सभा में द्रौपदी को पकड़कर खींचा । वह दिन जब उस पतिव्रता के वस्त्र को पकड़कर वेग से उतारा । वह दिन जब पाण्डवों को जतुगृह में बन्द करके उसको आग लगा दी और उनकी अन्त्येष्टि भी कराई । ५७-६२ वह दिन जब भीम को विष खिलाया और उसको साँप से डँसवाया । वह दिन जब अत्यन्त जवान अभिमन्यु का वध न कर सकने से विषण्ण होकर छः छः योद्धाओं ने मिलकर युद्धधर्म का उल्लङ्घन करके धोखा देकर उसको मारा । तुम लोगों द्वारा मिलकर बहुत दिन तक इस प्रकार किये गये अनेक अधर्म आज फल रहे हैं । धर्म की विजय कहाँ से होगी ? अपना ही कर्म तो फलता है न ? हे अर्जुन ! अब क्या देख रहे हो ? बिना विलम्ब के सूर्यपुत्र

इवनींराणियेंत्तऱिक नूट्टुव-
र्क्किवनऱिञ्ञत्ते चतिकळेंप्पेरुं । ६९
प्रगत्भतयुळ्ळ धनञ्जयनेवं
जगल्पतियुटे वचनं केट्टप्पोळ् ७०
निशितमायोरु मयिल्वाळम्पेंटु-
त्तुचितमेंन्नु काण्मवर्क्कु तोन्नुमा- ७१
ऱरुणनन्दनन् तलयऱुत्तुटन्
धरणियिलिट्टान् झटिति फल्गुनन् । ७२
जयजयशब्दं जगति पूरिच्चु
जयं विजयनु लभिच्चतु मूलं । ७३
तपनमण्डलं झटिति भूमियिल्
पतनं चेंय्ततुकणक्के कर्ण्णन्तन्
वदनपङ्कजं पतिच्चु भूमियिल् ७४
उयर्न्नु देहियुमोंळियोंट्टुकूटे
नटन्नु कौरवरति शोकत्तोंटुं । ७५
विविधमंगलस्तुतिकळ् वाद्यङ्ङळ्
विबुधभूसुरजय निनादवुं । ७६
पवनजनलऱिन निनादवुं
भुवनवासिकळ् पुकळ्त्तुं नादवुं ७७
पुटपुळङ्ङ्ङुमाऱिवट्टेंक्कोंण्टुटन्
कटल्पोलेंयुळ्ळ पटयुमाय् पार्त्थन् ७८

को मारो। यह ही सौओं का अवलम्बन है उनके किये सभी कुकर्म इसको मालूम थे। ६३-६९ जगत्पति का वचन सुनकर गम्भीर धनञ्जय ने एक तीक्ष्ण मयूरासि का बाण लेकर, देखनेवालों को उचित प्रतीत होनेवाले ढंग से कर्ण का सिर काटकर तुरन्त पृथिवी पर गिराया। अर्जुन की विजय होने के कारण सारा जगत् जयघोष से भर गया। सूर्यमण्डल के भूमिपर गिरने के समान कर्ण का मुखकमल पृथ्वी पर गिरा और उसकी आत्मा गूँजती हुई ऊपर उठी। और कौरव सब शोकमग्न होकर चले। ७०-७५ विविध मंगल स्तुतियाँ, वाद्यघोष, देवों और ब्राह्मणों के जयघोष, भीम का सिंहनाद, भुवन के निवासियों की प्रशंसा-ध्वनि, इन प्रतिध्वनि करनेवाले घोषों के साथ और सागर के समान सेना के साथ रक्त और स्वेदजल से विभूषित अर्जुन युद्धभूमि में विराजमान था। अपने सिर पर पुष्पवृष्टियों को लेता हुआ वह मधुरिपु (कृष्ण) के साथ

उटलिल् स्वेदशोणितङ्ङळुमणि-
ञ्ञटर् निलंतन्निल्विळङ्ङिट्टुनेरं । ७९
कुसुमवृष्टियुं तलयिलेट्टेट्टु
मधुरिपुवुमाय् नटन्नु मॆल्लवे । ८०
अनुपमनाय पवनजनुमाय्
शमननन्दनन्चरणतारिण ८१
तॊळुतुनिन्नुटन् नमस्करिच्चितु ।
तॊळुतॆळुन्नेट्टु सपदि धर्म्मजन् । ८२
अखिललोकेशन् मुखवुं नोक्किना-
मनुजन्मारॆयुमणच्चु पुल्किनान् । ८३
तलयिलश्रुक्कळ् तॆरुतॆरॆ वीळ्त्ति-
प्पलवुरु मुकर्न्नितु नरपति । ८४
पॆरिकॆ नन्नल्लो विजयन् कर्ण्णनॆ-
प्पॊरुतु कॊन्नतॆन्नरुळ्चॆय्तु कृष्णन् । ८५
चॆरुतु पुञ्चिरि कलर्न्नु धर्म्मजन्
मुरहरनॊटु परञ्ञितन्नेरं— ८६
अतु पुनरॆन्तु विचित्रमायतु
मधुरिपो ! मलर्मकळ्मणवाळा ! ८७
निखिललोकवुमकत्तटक्कियुं
पुरत्तु काट्टियुमतिनॆ रक्षिच्चुं ८८
पल कालङ्ङळुं पलप्रकारवुं
चिलकळिकळिलॆळुन्न मायियिल् । ८९

धीरे-धीरे चला। अनुपम भीम के साथ युधिष्ठिर के चरणयुगल की वन्दना करके नमस्कार किया। युधिष्ठिर भी वन्दना करता हुआ तुरन्त उठा। ७६-८२ अखिल लोकेश का मुख देखा और अपने छोटे भाइयों को छाती से लगाया। राजा ने उनके सिर पर आँसू गिराये और उनको बार-बार चूम लिया। कृष्ण ने कहा— "बहुत अच्छा हुआ कि अर्जुन ने कर्ण का वध किया।" युधिष्ठिर ने मुस्कराते हुए मुरहर (कृष्ण) से कहा— हे मधुरिपु ! लक्ष्मीपति ! इसमें क्या आश्चर्य है ? सारे लोकों को अपने ही अन्दर रखकर, फिर उनको बाहर दिखलाकर रक्षा करनेवाले और यह सारा जगत् भी जो बार-बार भिन्न-भिन्न प्रकारों से लीलाएँ दिखलानेवाली माया में डूबकर मोह में विराजता है, आप ही

मुळुकि मोहिच्चु मरुवुन्न लोकं
मुळुवन् निन्तिरुवटियल्लो नूनं । ९०
अटियारां ञङ्ङळ्क्कुटय निन्तिरु-
वटि तुणयायालरुतातेयुण्टो ९१
जगति संप्रति चॆरुतु कार्य-
मॆन्तणिमिळिकळिलॊळुकुं नीरोटुं ९२
युधिष्ठिरन् परञ्ञळवु लोकङ्ङळ-
क्कधिष्ठानमाय मुररिपु चॊन्नान्— ९३
शमदमयम नियम सत्यङ्ङ-
ळमितसल्गुणमुटय निन्नुटॆ ९४
फलविमुखमां विमलकार्यत्तिन्
फलमितु जयं वरुन्नुतिन्नियुं ।
पलप्रकारवुं जयंवरुमॆन्नु । ९५
मधुरमायुटनरुळिच्चॆय्तॊरु
मधुमथननुं विजयनुं मट्टु- ९६
मनिलनन्दनद्रुपदन्मारॊटु-
मनुपमनाय यमतनयनुं ९७
तॆळिञ्ञु कैनिलयकत्तु मेविनार् ।
विळङ्ङि मट्टुळ्ळ सुहृज्जनङ्ङळुं । ९८
पलनेरं परञ्ञरुतेतुमॆन्नु
परञ्ञटङ्ङिनाळ् किळिमकळुमे । ९९

॥ कर्णं समाप्तं ॥

हैं। ८३-९० जब आप पूज्यपाद सहायक हैं तब हम दासों के लिए इस संसार में कोई भी छोटा कार्य असाध्य हो सकता है ? युधिष्ठिर के आँसू गिराते हुए इस प्रकार कहने पर लोकों के अधिष्ठान मुररिपु बोले— "शम, दम, यम, नियम, सत्य और अनेक अन्य सद्गुणवाले तुम्हारे फलनिरपेक्ष विमल कार्य का फल है, यह विजय। आगे भी अनेक प्रकार की विजय होनेवाली है।" इस तरह मधुर-मधुर बातें करनेवाले मधुरिपु, अर्जुन, और भीम, द्रुपद जैसे अन्यों के साथ अनुपम युधिष्ठिर प्रसन्न होकर तंबू के अन्दर चले गये। और लोग भी प्रसन्न हुए। बहुत देर तक कथा सुनाने के बाद 'अब और न हो सकता है' ऐसा कहकर शुकी मौन हो गयी। ९१-९९

॥ कर्णपर्व समाप्त ॥

शल्यं

शिव ! शिव ! मनोहरशीलवती सादरं
जन्मसाफल्यदं चॊल्लु कैवल्यदं । १
परमपुरुषन्महामायतन् वैभवं
पऱकयुमनारतं केळ्क्कयुं चॆय्किलो । २
परमसुखमॆन्ततिल्प्परममलचेतसां
कथितपरिशेषमाकुं कथासारवुं ३
कथय कथयाशु नी कौतुकार्द्रेणमे
भवति यदि कुतुकमिह झटिति कथयाम्यहं । ४

शल्यन्टे सेनाधिपत्यं

भानुपुत्रन् मरिच्चोरवस्थान्तरे
शमनजनजातशत्रुक्षमावल्लभन् । १
चारुवेषं मुकुन्दं जगन्मंगलं
सव्यसाचिप्रियं दिव्यमव्याकुलं २
सर्व्वलोकाधिपं शर्व्ववन्द्यं परं
मथितमदवारणं जगदुदयकारणं ३

शल्यपर्व

शिव ! शिव ! हे मनोहर शीलवाली ! परमपुरुष की माया के जन्म को सफल बनानेवाले और कैवल्य प्रदान करनेवाले वैभव का वर्णन करना और सुनना परम सुख होता है। विमल चित्तवालों को इससे बढ़कर क्या हो सकता है। इस लिए शेष कथा अब तुम ख़ुशी से सुनाओ। अच्छा, अगर कुतूहल है तो जल्दी सुनाऊँगी। १-४

शल्य का सेनाधिपत्य

भानुपुत्र (कर्ण) के निधन के वाद राजा अजातशत्रु युधिष्ठिर ने चारुवेष, मुकुन्द, जगत् का मङ्गल, अर्जुन के मित्र, दिव्य, अव्याकुल, सभी लोकों के नाथ, शिवजी का वन्द्य, पर, मत्तहाथियों का दमन करनेवाले, जगत् की उत्पत्ति का कारण, चारणों के पूजितचरण, अपने चरितमधु से भरनेवाले, दानवों के नाशक, देवों के सुख का आस्पद, शत्रुसमूह के भयप्रद, विभीषण द्वारा वन्दितचरण, मधुर भाषण करनेवाले, यदुकुल के पोषक,

चरणनतचारणं चरितमधुपूरणं
दनुजकुलमारणं सुरसुखपरायणं ४
परनिवहभीषणं पदगतविभीषणं
मधुरतरभाषणं यदुजननपोषणं ५
जगदमलभूषणं जनहृदयमोषणं
नतकलुषशोषणं शमितकलिदूषणं ६
विजयरथभूषणं विनतजनतोषणं
विहगपतिवाहनं मुनिनिवहमोहनं ७
सुखविभवदोहनं गुणजननसाधनं
नरकभयमोचनं नळिनदळलोचनं ८
नरकमुरशासनं धृतदरशरासनं
नमितपुरशासनं नमितनळिनासनं ९
शशधरनिभाननं गुणनिकरभाजनं
शकलितदशाननं सुररिपुविनाशनं १०
मुषित घृतभोजनं भुवनतनुजीवनं
नयनकलिताञ्जनं नरनयनरञ्जनं ११
भवमरणभञ्जनं पशुपवरनन्दनं
युवतिमतिमन्दिरं विमलमति सुन्दरं १२
मदनमदमन्थरं मणिलळितकन्धरं
विटयुवतिबन्धुरं विगतभयसिन्धुरं १३

जगत् के विमल विभूषण, जनता के हृदय को चुरानेवाले, भक्तों के पाप दूर करनेवाले, कलि के दोषों के नाशक, अर्जुन के रथ का भूषण, विनतजनों की तुष्टि करनेवाले, गरुडवाहन, मुनिजन का मोह करनेवाले, १-७ सुख और विभव पैदा करनेवाले, गुणों के उदय का साधन, नरकभय से छुड़ाने वाले, कमललोचन, नरक और सुर के नाशक, दृढ़चाप धारण करनेवाले, शिवजी के वन्द्य, ब्रह्माजी के पूज्य, चन्द्रमुख, गुणसमूह धारण करनेवाले, दशानन (रावण) के ध्वंसक, देवों के शत्रुओं के नाशक, घी चुरानेवाले, भुवन के शरीर का जीवन, नयनों में अञ्जन लगाये हुए, जनों की आँखों के प्रिय, जन्म और मरण का अन्त करनेवाले गोपवर (नन्द) के पुत्र, युवति के मन में विराजमान, अपनी विमलमति से सुन्दर, मदनमद को कुचल देनेवाले, मणिविभूषित गर्दनवाले, विट और युवतियों के प्रिय, विगतभय हाथीवाले, गोपकुल के बालक, भुवन के पालक, हिलते कर-कङ्कणवाले, युद्धभूमि को प्रमुदित करनेवाले कृष्ण को देखकर प्रसन्न और

पशुपकुलबालकं भुवनतलपालकं
चलितकरकङ्कणं मुदितसमराङ्कणं १४
कण्टु कौतूहलं पूण्टीरानन्दमुळ्-
क्कोण्टुटन् कोळ्मयिर्क्कोण्टु वन्दिच्चुनि- १५
न्निण्टलुं तीर्त्तु तन् कुण्ठभावङ्ङळुं
दूरे नीक्कि प्रमोदेन वाळुं विधौ
पारमुण्टायिते वाद्यघोषङ्ङळुं १६
तदनु कुरुवीरनामंबिकापुत्रनो-
टुदितभयमोटु चोल्लीटिनान् सञ्जयन्— १७
नयनयनरहितनरपतितिलक ! केळ्क्क नी
नाशं भविच्चु नमुक्केन्नरिञ्ञालुं । १८
तव तनयरेतिर्पोरुतु विबुधपुरि मेविनार्
तापं कळञ्ञितु पाण्डुसुतन्मारुं । १९
द्रुपदनृपपुत्रनुं द्रौपदीपुत्ररुं
द्रोणजन्वाळ्क्किरयायितु निद्रयिल् । २०
कुरुवृषभनतुपोळुतु मोहिच्चु वीणितु
कूटेत्तटञ्ञङ्ङेट्टुत्तु विदुररुं । २१
शीतळमायुळ्ळ वेळ्ळं तळिच्चुटन्
शीतोपचारङ्ङळ् मट्टुं पलतरं । २२
चेय्तितु गान्धारियुमायतुनेरं
पेय्त कण्णीरोटु चोल्लिनानिङ्ङने— २३

रोमाञ्चित होकर आनन्द अनुभव किया और वन्दना की । ८-१५ जब इस प्रकार दुःख समाप्त करके और परेशानियाँ दूर करके रह रहे थे तब वाद्यघोष सुनाई दिये। तदनन्तर सञ्जय ने डरते हुए अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) से कहा— हे ! नयरूपी नयन से रहित राजवर ! सुनो ! जान लो कि हमारा नाश हो गया है। तुम्हारे पुत्र युद्ध करके स्वर्ग चले गये और पाण्डवों का दुःख दूर हो गया। द्रुपद राजा का पुत्र और द्रौपदी के पुत्र अपनी निद्रा में द्रोणपुत्र की तलवार के शिकार बन गये। यह सुनकर कुरुवृषभ (धृतराष्ट्र) बेहोश हो कर गिर गये। औरों के साथ विदुर ने उनको उठाया । १६-२१ और उन पर ठंडा पानी छिड़का और अनेक प्रकार के शीतोपचार किये, गान्धारी के साथ। तब आँसू गिराते हुए उन्होंने इस प्रकार कहा— अर्जुन के कर्ण को मारने के बाद

पार्त्थनंगेशनेक्कौन्तोरनन्तर-
मार्त्ति तीर्त्तीटुवानेन्तुटे पुत्रनु २४
पेर्त्तु तुणयायतारेन्नु चॊल्क नी
पार्त्थिवन्मारुटे युद्धप्रकारवुं । २५
चॊल्लुवन् ञान् विशेषङ्ङळ् केळ्क्कॆङ्किलो
चॊल्लेळुं मानि सुयोधनभूपति २६
दुःखिच्चु कैनिलपुक्कोरनन्तर-
मर्क्कनुमंबुधितन्निल् मरञ्ञितु । २७
मक्कळे स्नेहमॆल्लार्क्कुमुण्टोक्कॆटो
निल्क्कतॆल्लां परञ्ञॆन्तिनिक्कारियं । २८
पुक्कितु शेषिच्च वन्पट काननं
मुख्यनाकुं दुरियोधननुं चॊन्नान्— २९
पेटियोटोटिनां काटकंपूकुकिल्
पेटमान्कण्णिकळ् कूटि निन्दिक्कुमे । ३०
पिन्ने नरकवुमुण्टाय्वरुमितु
मन्नवन्मारुटे धर्म्मंमल्लेतुमे । ३१
इत्तरं नल्ल गंभीरवाक्यङ्ङळ्कॊ-
ण्टत्तल् तीर्त्तानतुनेरं कृपर् चॊन्नान्— ३२
वत्स ! वरिकरिके कुरुमन्नव !
मत्सरं कैवॆटिञ्ञॆन्नुटे वाक्कुकळ् । ३३

मेरे पुत्र का दुःख दूर करने के लिए कौन सहायक बना ? यह भी बतलाओ और भूपालों ने कैसे युद्ध किया ? (सञ्जय बोला) अच्छा तो मैं समाचार सुनाऊँगा, सुनो । मानी सुयोधन के दुःखित होकर अपने तंबू में प्रवेश करने के बाद सूर्य सागर के अन्दर छिप गया । याद रहे कि सबको अपनी सन्तान के प्रति स्नेह होता है । जाने दो, यह सब कहने से क्या होगा । जो सेना बची थी वह वन में चली गयी । २२-२८ तब नायक दुर्योधन ने कहा— अगर डरके हमलोग वन चले जायेंगे तो स्त्रियाँ भी हमारी निन्दा करेंगी । फिर नरक भी हमारा हो जायगा क्योंकि यह राजधर्म बिलकुल नहीं है । इस प्रकार की गंभीर बातों से अपना दुःख कुछ दूर किया । तब कृप बोले— बेटा ! कुरुराज ! मेरे पास आओ और मत्सर छोड़कर मेरी बात सुनो । या तो युद्ध में प्रवेश करके प्राणत्याग करना अथवा शत्रुओं को मारकर समाप्त कर देना, इन दोनों पक्षों को छोड़कर भूपालों का और कोई धर्म नहीं है । फिर भी

युद्धत्तिलॆत्ति मरिच्चीटुकॆन्नुतान्
शत्रुक्कळॆक्कॊन्नॊटुक्कीटुकॆन्नुतान् ३४
पक्षमीरण्टुमॊळिञ्ञॊरु धर्म्ममि-
ल्लिक्षितिपालक्कु निश्चयमॆङ्किलुं । ३५
उण्टॊरु नल्लतु चॊल्लुन्नतिन्नु ञान्
कण्टुतल्लो पतिनेळुनाळे रणं । ३६
गंगातनयनुं द्रोणरुं कर्ण्णनु-
मंगेशतुल्यरां तन्पिमार् पुत्ररुं ३७
चार्न्नुचेर्न्नुळ्ळ भूपालर्तन्पुत्ररुं
तीर्न्नितल्लो मुतिर्न्नॆट्टवरॊक्कवे । ३८
इल्ला जयमिनियॆन्नुं नमुक्कतु
चॊल्लुवन् तीर्त्ततिनिल्लॊरु किल्लॆटो । ३९
जीविच्चुकॊळ्ळुवानॆन्तॊन्नु नल्लतॆ-
न्नाविर्भविक्क मनसि भवानिनि । ४०
धर्म्मजनोटु समराय मन्नव-
रिम्महितन्निलिल्लन्नतु निर्ण्णयं । ४१
चॆन्नु नमस्करिच्चञ्जलियुं चॆय्तु
निन्नालवनुटॆ कोपं तळर्न्नुपों । ४२
पाति राज्यं तव नल्कुमवनुटॆ
चेतसि वाच्च करुणाबलत्तिनाल् । ४३
कृष्णन् मुकुन्दननन्तननादियां
जिष्णु सखिक्कुं तिरुवुळ्ळमाय्वरुं । ४४

एक अच्छी बात है जो मैं आज कहता हूँ। तुमने सतरह दिन का युद्ध देख लिया है। २९-३६ भीष्म, द्रोण, कर्ण, अङ्गेश के समान अनुज और उनके पुत्र अपने पक्ष के भूपाल और उनके पुत्र और अन्य जो उठे थे वे सब समाप्त हो गये। 'अब हमारी विजय असम्भव है यह मैं निस्सन्देह कहता हूँ। अब जीवित रहने के लिए क्या उपाय है यह आप के मन में भाये। युधिष्ठिर के समान कोई राजा इस पृथिवी पर नहीं है, यह निश्चित है। अगर तुम जाकर उनको नमस्कार करके हाथ जोड़ोगे तो उनका कोप शिथिल हो जायगा। उनके दिल की करुणा के कारण वे तुम को आधा राज्य अवश्य देंगे। ३७-४३ अर्जुन के मित्र मुकुन्द, अनन्त, और अनादिकृष्ण का दिल भी प्रसन्न हो जायगा। युधिष्ठिर

केशवन् चॊन्नते चॆय्वितु धर्म्मजन्
देशिकनाय ञान् चॊन्नतु केळ्क्क नी । ४५
कृपरधिकक्रुपयॊटितु चॊन्ननेरत्तुटन्
नृपवरनुमुत्तरं चॊल्लिनानाकुलाल् । ४६
अवरॊटु निरन्नु वाणीटुवानेतुमे-
यरुतरुततिन्नु कालं कऴिञ्ञू पुरा । ४७
पल पिऴकळवर्कळॊटु चॆय्तु पोयेनहं
परयरुततिन्नु नी भंगियल्लॊट्टुमे । ४८
पॊरुतरिकुलत्तॆ ञान् कॊन्नॊटुक्कीटुवन्
पुरुवंशत्तिलल्लो पिरन्नू वयं । ४९
वाहिनीनायकन् द्रोणजन्तान् महा-
व्यूहवुं कूट्टि निर्त्तीटुक सत्वरं । ५०
अॆन्नतु केट्टुरचॆय्तु गुरुसुतन्
निन्नुटॆ मातुलनाय माद्राधिपन् ५१
नन्नॆटो सैन्यं भरिच्चुनिर्त्तीटुवान्
वन्नुकूटुं जयमॆन्नतु निर्णयं । ५२
तदनु कुरुनृपति पतिनॆट्टां दिवसवुं
धर्म्मात्मजादिकळॊटु युद्धत्तिनाय् । ५३
नानागुणङ्ङळुमुळ्ळॊरु शल्यरॆ-
स्सेनापतियायभिषेकवुं चॆय्तान् । ५४
केट्टितु घोषङ्ङळुं विशेषङ्ङळुं
केट्टाल् सहिक्करुतात वाद्यङ्ङळुं । ५५

केशव के कथन के अनुसार ही करेंगे। मैं तुम्हारा गुरु हूँ मेरी बात सुनो। जब कृप ने बड़ी कृपा से इस प्रकार कहा तब नृपवर ने उत्तर दिया। उनके साथ शान्ति से रहना बिलकुल असंभव है, उसका समय तभी बीत गया है। उनके साथ मैंने कई गलतियाँ कीं। उनके संबन्ध में तुम्हें कुछ कहना न चाहिये, अच्छा न लगता है। युद्ध करके मैं शत्रुकुल को समाप्त कर दूंगा। आख़िर हम भी तो पुरुवंश के हैं। सेनानायक द्रोणपुत्र तुरन्त एक महाव्यूह रचाकर खड़ी कर दे। ४४-५० यह सुनकर गुरुपुत्र ने कहा— तुम्हारे मामा माद्राधिप ही सेना के नेतृत्व के लिए उपयुक्त हैं। जय होगी, इस में सन्देह नहीं। तत्पश्चात् दुर्योधन ने अठारहवें दिन युधिष्ठिर आदिकों के साथ युद्ध करने के लिए नानागुणवाले

केवलन् केशवन् केशिनिसूदनन्
केळियेरीटुन्न धर्म्मजन् तन्नोटु । ५६
केट्टुतीर्त्तेवमरुळ्चॅय्तितप्पोॅळे
खेदं कळञ्ञु ञान् चॊन्नतु केळ्क्कणं । ५७
सकलसुरदितिजवररॊत्तेतिर्त्तीटिलुं
शल्यर्क्कु तुल्यरायिल्ल मट्टारुमे । ५८
युधि तव तपोबलं कॊण्टु कॊल्लाय्वरुं
युक्तमॆन्नान् निजभक्तचित्तालयन् । ५९
जय जय मुकुन्द ! नी चॊल्लियालॊन्निनुं
चेॅट्टु वैमुख्यमिल्लिन्निनिक्कॊन्निनुं । ६०
पटयुमिरुभागवुं वन्नुकूटी तदा
पटहपणवादि वाद्यङ्ङळ्तन् घोषवुं ६१
करितुरगरथनरनिनादघोषङ्ङळुं
कमलभवतनयकृतसङ्कीर्त्तनङ्ङळुं । ६२
पाण्डवन्मारुं कुरुकुलसेनयुं
पाञ्ञङ्ङटुत्तुतुटङ्ङि रणोत्सवं । ६३
कुरुपति सुयोधनन्तानुं शकुनियुं
गुरुतनयनुं कृपाचार्यनुं भोजनुं ६४
माद्रेशनाकिय सेनाधिपन्तानुं
मट्टु चतुरङ्गिकळाय भूपरुं । ६५

शल्य को सेनापति के पद में अभिषेक किया । अनेक प्रकार के विशेष घोष और सुनने में असह्य वाद्य सुनाई दिये । उस समय केशि के नाशक केवल केशव ने सोल्लास युधिष्ठिर से इस प्रकार स्पष्ट कहा— "खेद छोड़कर मेरी बात सुनो ।" ५१-५७ अगर सुरों और दैत्यों के प्रमुख मिलकर सामना करें तब भी वे शल्य के तुल्य न होंगे । "तुम्हारे तपोबल के कारण तुम मारे न जाओगे और यह ठीक भी है" अपने भक्तों के चित्त के आलय (कृष्ण) ने ऐसा कहा । हे मुकुन्द ! तुम्हारी जय हो ! जो कुछ भी तुम कहोगे मुझे उसमें कोई भी आपत्ति नहीं है । तब दोनों ओर की सेना इकट्ठा हुई । पटह, पणव आदि वाद्यों के घोष, हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सैनिकों के नाद, कमलभव (ब्रह्मा) के पुत्र (नारद) के सङ्कीर्तन पाण्डव और कुरुसेना एक दूसरे के निकट पहुँचे और रणोत्सव प्रारंभ हुआ । कुरुपति सुयोधन, शकुनि, गुरुपुत्र (अश्वत्थामा), कृपाचार्य, भोज, सेनापति माद्रेश, और अन्य चतुरङ्ग सेनावाले भूपाल, ५८-६५

ऒक्कयॊरुमिच्चु वन्नु निरङ्ङिञ्जु
मुख्यमां पाण्डवसैन्यवुमङ्ङनॆ । ६६
कृष्णन्तिरुवटितन्नॊटु चेन्नॊरु
जिष्णु युधिष्ठिरन् भीमन् नकुलनुं । ६७
तन्पियुं मक्कळॊरैवर् कुमाररुं
कन्पमिल्लातॊरु पाञ्चालवीररुं ६८
सात्यकि केकयन्मारुमॊरुमिच्चु
कूर्त्त शरनिर तूकित्तुटङ्ङिनार् । ६९
रण्टुपुरत्तुं मरिच्चु पॆरुन्पट
कण्टुकूटातॊळमॆन्नॆ परयावू । ७०
कुण्ठत कैविट्टुट्टुत्तानतुनेरं
कण्टॊरु कर्णात्मजन्मारॆ कॊन्नितु
कुण्ठतयॊट्टुमिल्लाते नकुलनुं । ७१
आर्त्तटुत्तानतुकण्टु माद्राधिपन् ।
कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ् तूकीटिनान् ७२

शल्ययुद्धं-शल्यवधं

पार्त्थिवनाकिय धर्म्मतनयनु-
मार्त्तिवरुमाऱ्टुत्तानतुनेरं १

सब इकट्ठा हुए और बड़ी भीड़ हुई। पाण्डवों की सेना ने भी ऐसा ही किया। पूज्य कृष्ण सहित अर्जुन, यधिष्ठिर, भीम, नकुल, उसका छोटा भाई (सहदेव), पाँचों कुमार पुत्र, बिलकुल न हिलनेवाले पाञ्चालवीर, सात्यकि और केकय के वीर, सब मिलकर तीक्ष्ण शरों की वर्षा करने लगे। जहाँ तक कोई देख सकता था, दोनों ओर सैनिक मरे, इतना ही कहा जा सकता है। तब संकोच छोड़कर नकुल निकट आया और जो कोई कर्णपुत्र दिखाई देता था उसको उसने मारा। यह देखकर माद्राधिप (सेनापति) गरजता हुआ निकट पहुँचा। और उसने तीक्ष्ण-तीक्ष्ण बाण छोड़े। ६६-७२

शल्ययुद्ध-शल्यवध

उस समय राजा युधिष्ठिर भी अपने को खतरे में डालता हुआ निकल आया और दोनों ने अस्त्रप्रयोग किया। दोनों बड़ी शक्ति के साथ एक

अस्त्रप्रयोगङ्ङळ् चेय्तारिरुवरुं ।
शक्तियोटेट्मट्टुत्तु पुनरुटन् । २
मातुलनाकिय शल्यर् शल्यङ्ङळा-
लाकुलप्पेट्टितु धर्म्मतनयनुं । ३
अप्पोळ्तुकण्टु भीमन् पटयुमाय्
कॆल्लोटटिच्चु पॊटिच्चितु तेर्त्तटं । ४
निल्लॆटा निल्लॆटा नीयॆन्नुरचॆय्तु
शल्यर् गदयुमाय् पाञ्ञितु भूमियिल् । ५
तङ्ङळिल् चय्त गदायुद्धकौशल
मिङ्ङनॆयॆन्नु परयरुताक्कुमे । ६
तल्लुकॊण्टूळियिल् वीणितु शल्यरुं
मॆल्लवे तेरिलेट्टी कृपाचार्यनुं । ७
पिन्नॆयुं धर्म्मतनयनुं शल्यरुं
नन्नायणञ्ञु पॊरुतु तुटङ्ङिनार् । ८
मन्नवन् मातुलन् तन्नुटलॊक्कवे
भिन्नमाक्कीटिनान् नल्ल शरङ्ङळाल् । ९
कॊन्नु रथपालकन्मारॆयुमुट-
नुन्नतमाय कॊटियुं मुरिच्चितु । १०
तन्ने मरन्नितु कोपिच्चु शल्यरुं
सन्नाहमुळ्क्कॊण्टटुत्तानतुनेरं । ११
शल्यर् शरङ्ङळालाकाशमूळियु-
मॆल्लां मरञ्ञु निरञ्ञतु काण्कयाल् १२

दूसरे के पास पहुँचे। मामा शल्य के शस्त्रों से युधिष्ठिर पीड़ित हुआ। यह देखकर भीम ने अपनी सेना के साथ जोर से मारा और रथ को चूर कर दिया और बोला—'तू ठहर ! तू ठहर!' अपनी गदा लेकर शल्य जमीन पर उतरा। उन दोनों ने गदायुद्ध में जो कौशल दिखलाया उसे कोई भी नहीं वर्णन कर सकता है। मार खा-खाकर शल्य गिर गया और कृपाचार्य ने उसे फिर रथ पर बैठाया। १-७ युधिष्ठिर और शल्य फिर भिड़कर लड़ने लगे। राजा ने अपने मामा के शरीर को शरों से छिन्नभिन्न कर दिया। रथ के रक्षकों को मार डाला और ऊँचे झण्डे को भी काट डाला। कोप में शल्य अपने को भूल गया और बड़ी तैयारी करके निकट पहुँचा। शल्य के शरों से आकाश और पृथिवी भर गयी और यह देखकर धानुष्कों में

विल्लाळिवीरनायुळ्ळ धर्म्मात्मजन्
तुल्यमायेय्ताननेकनूऱायिरं । १३
सात्यकि नासत्यपुत्रभीमादिकळ्
पेर्त्तुं शरङ्ङळ् पोळिच्चारतुनेरं । १४
अॆल्लावरोटुं मरुत्तु पोर्चॆय्तितु
शल्यरुमेतुमोरु कुऱवॆन्नियॆ । १५
कण्टानतु कलशोत्भवनन्दनन्
मण्टियणञ्ञु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । १६
कॊण्टल्नेर्वर्ण्णनुं तानुमायर्ज्जुनन्
कॊण्टल्पोलॆ चॆरुञाणॊलियिट्टुटन् १७
इण्टल् कळञ्ञट्टुत्तॆय्तु तुटङ्ङिनान्
कण्टवरोक्कवे वाळ्त्तिनारन्नेरं । १८
कलशभवशिष्यनुं कलशभवपुत्रनुं
कलितकरवेगमोटु शरनिरकळ् तूकिनार् । १९
रण्टुपुऱत्तुं मुळ्ळुत्त पेरुम्पट
रण्टुविनाळिक कॊण्टोटुङ्ङी तुलों । २०
वृत्रारिपुत्रनुमस्त्रशस्त्रङ्ङळाल्
क्रुद्धनाय् द्रोणजन्तन्नेयय्तीटिनान् । २१
प्रत्यस्त्रमय्तु तटुत्तुतटुत्तुट-
नन्नयुं घोरमाय् वन्नितु युद्धवुं । २२
माद्रेयरुं धर्म्मपुत्रादिवीररुं
मानिच्चटुत्तु पोरुतारतुनेरं । २३

वीर युधिष्ठिर ने भी उसके बराबर अनेक लाखों बाण चलाए। सात्यकि नासत्य के पुत्र (नकुल और सहदेव) और भीम आदिकों ने भी शरवर्षा की। ८-१४ बिना कहीं भी कमी दिखाये, शल्य ने सबसे युद्ध किया। यह देखकर द्रोणपुत्र दौड़ा और बाणों को बरसाया। घनश्याम सहित अर्जुन ने बादल के समान ज्याघोष करके संकोच छोड़कर शर बरसाये। देखनेवालों ने प्रशंसा की। द्रोणशिष्य और द्रोणपुत्र, दोनों ने बड़े वेग से शर बरसाये। दोनों ओर की बड़ी सेनाएँ दो विनाड़िकाओं (एक घण्टे) के अन्दर समाप्त हो गयीं। वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) के क्रुद्ध होकर द्रोणपुत्र (अश्वत्थामा) के खिलाफ बाण चलाया। १५-२१ उसके जवाब में अस्त्र भेजकर उसने रोका और बड़ा घोर युद्ध हुआ। माद्रेय और

शल्यरुटॆ शरमेलातॆयारुमे-
यिल्लॆन्नु मिक्कतुं चॊल्लामतुनेरं । २४
तेरॆय्तु नेरे नुऱुक्किनान् धर्म्मजन्
पूरिच्चितु शल्यदेहवुमन्पिनाल् । २५
पारं मुऱिञ्ञटरेऱिन मातुलन्
पोरिल् कुऱञ्ञॊन्नॊळिच्चुनिन्नीटिनान् । २६
अन्नेरमाशु पऱञ्ञु युधिष्ठिरन्
निन्नॊरु तेराळिवीररॊटॊक्कवे २७
पार्त्थन् मुकुन्दनुमायुटनॆन्निटर्
तीर्त्तु वळियॆ पिरियातिरिक्कणं । २८
पार्श्वस्थलङ्ङळिलाश्विनेयन्मारुं
पाञ्चालसात्यकिमुन्पाय वीररुं । २९
मुन्पिल् नटक्क वृकोदरन् पोरिनाय्
वन्पोटु शल्यरॆक्कॊल्लुन्नतुण्टु ञान् । ३०
वन्नितु शल्यर् सुयोधननोटुकू-
टॊन्निच्चरिकळॆक्कॊन्नॊटुक्कीटुवान् । ३१
मारुतितन्टॆ कॊटिमरमॆय्तुटन्
नेरे मुऱिच्चुकळञ्ञु सुयोधनन् । ३२
पाञ्ञटुत्तॊन्नटिच्चीटिनान् मारुति
चाञ्ञु निलत्तुपोय् वीणु कुरुपति । ३३

युधिष्ठिर आदि वीर बड़े अभिमान के साथ आपस में लड़े। यह कहा जा सकता है कि वहाँ ऐसा कोई न था जिस पर शल्य का बाण न लगा हो। युधिष्ठिर ने सीधे रथ पर बाण चलाकर उसको नष्ट किया और शल्य का शरीर बाणों से भर गया। अत्यन्त घायल होकर मामा (शल्य) युद्ध में कुछ शिथिल पड़कर अलग हो गये। उस समय युधिष्ठिर ने उपस्थित वीर रथियों से इस प्रकार कहा— अर्जुन और मुकुन्द मेरी दिक्कत दूर करें और मुझसे दूर न हो जायँ। २२-२८ नकुल और सहदेव मेरे पार्श्व में रहें और पाञ्चाल, सात्यकि आदि वीर भी। भीम युद्ध के लिए आगे-आगे चले। आज मैं शल्य को मार डालूँगा। तब शल्य सुयोधन के साथ शत्रुओं को समाप्त करने के लिए आया। सुयोधन ने भीम के झण्डे के खंभे को बाण चलाकर काट डाला। दौड़ कर जाकर जब भीम ने एक मारा तब कुरुपति (सुयोधन) जमीन पर गिरा। अश्वत्थामा उसको रथ पर बैठाकर ले गया। तब भीम, सात्यकि और

तेरिलेट्टिक्कोंण्टुपोयी गुरुसुतन्
मारुति सात्यकि पाञ्चालवीररुं
माद्रीतनयरुं चुट्टुं वळञ्ञुते । ३४
शरनिकर शकलितशरीरनाय् शल्यरुं
शमनसुतनोटु कोपिच्चटुत्तीटिनान् । ३५
विल्लु कवचवुं तेरुं कळञ्ञितु
शल्यरतुकण्टु निल्क्कुन्न मारुति ३६
शल्यर्तन् विल्लुं कवचवुं तेरुम-
ङ्ङॆल्लां मुरिच्चितु नल्ल शरङ्ङळाल् । ३७
वाळुं परिचयुं कैक्कॊंण्टितु शल्यर्
बाणङ्ङळॆय्तु नुरुक्किनान् भीमनुं । ३८
अप्पोळॊरु वेलॆटुत्तु युधिष्ठिरन्
कॊल्प्पोटु कोपिच्चु नोक्कुकयुं चॆय्तान् । ३९
धर्म्मजन्माविन् तपोबलंकॊंण्टतु
मुन्नमे कोपाग्नितन्निल् माद्राधिपन् ४०
मुन्ने दहिच्चानतॆङ्किलुं माधवन्
पिन्नॆयुं वेलयय्क्कॆन्नरुळ्चॆय्कयाल् । ४१
भोगीन्द्रतुल्यमाय् चाले ज्वलिच्चुटन्
वेगेन चॆन्नॊरु वेल्कॊंण्टु शल्यरुं ४२
पुक्कितु वानुलोकत्तु चॆन्नन्नेरं
चिक्कनॆ वन्नितु शल्यसहोदरन् । ४३

पाञ्चाल के वीरों और माद्री के पुत्रों ने उसको घेर लिया। शल्य तो शरसमूहों से घायल होकर अपने कोप में युधिष्ठिर के पास पहुँचा। २९-३५ शल्य ने उसका धनुष, कवच और रथ नष्ट कर दिया। यह देखकर भीम ने शल्य के धनुष, कवच और रथ को भी अच्छे-अच्छे बाणों से काट डाला। जब शल्य ने अपने तलवार और चर्म लिये, तब उनको भी भीम ने शरों से काट डाला। तब युधिष्ठिर ने एक भल्ला उठाया और क्रुद्ध होकर देखा। युधिष्ठिर के तपोबल से माद्राधिप (शल्य) पहले ही कोपाग्नि में जल गया, पर माधव के भल्ला भेजने के लिए कहने से सर्पवर के समान जलते हुए और बड़े वेग से जानेवाले भल्ले के लगने से शल्य परलोक चला गया। तुरन्त शल्य का भाई पहुँचा। ३६-४३ महारथ युधिष्ठिर ने उसको जल्दी-जल्दी पीछे जाने के लिए कहा।

पाराते पिन्नाले चेल्कॆन्नयच्चितु
पोरिल् युधिष्ठिरनाय महारथन् । ४४
ऒक्क मरिक्कणं नामिनियॆन्नुटन्
तिक्कियटुत्तितु माद्राधिपन्पट । ४५
ऒन्नुमे शेषियाते मरिच्चीटिना-
रॊन्निनॊन्नॊप्पं मरिच्चितु कालाळुं । ४६
पिन्ने मट्टुळ्ळवरोटुन्न नेरत्तु
पिन्नाले चेन्नितु भीमादि वीररुं । ४७
निन्नु पॊरुतु मरिच्चु परगति
नन्नाय् वरुत्तुविनॆन्नु सुयोधनन् । ४८
ऎन्नतु केट्टु तिरिञ्ञु चावाराायि
निन्नोरिरुपत्तोरायिरं कालाळे ४९
ऒन्नोळियातॆयॊट्टुक्किनान् मारुति
निन्नॊरु साल्वनॊरानक्कळुत्तेरि । ५०
वन्नानतु कण्टटुत्तितु पाञ्चालन्
कॊन्नान् गदकॊण्टटिच्चु करीन्द्रने- ५१
यॊन्निच्चु सात्यकि साल्वनेयुमप्पो-
ळार्त्तटुत्तान् कृतवर्म्मावु कोपिच्चु ५२
सात्यकितानुमणञ्ञानतुनेरं ।
तापेन वेगालटुत्तु कृपरुटन् ५३
तेरिलेट्टिक्कॊण्टुपोयितु भोजने
आरुमॊरुत्तर् तिरिञ्ञीलतुनेर । ५४

'अब हम सबको मरना चाहिये' ऐसा कहती हुई माद्राधिप की सेना भिड़कर आगे बढ़ी। एक न छोड़कर सब मरे और पैदल सैनिक सब बराबर मरे। जब अवशिष्ट योद्धा भागने लगे तब भीम आदि वीर उनके पीछे दौड़े। दुर्योधन ने कहा— "डट कर लड़ो, मरो और अपनी अच्छी गति बनाओ" यह सुनकर भागनेवाले लौटकर मरने के लिए डट गये, उनके बीस हज़ार पैदल सैनिकों को एक न छोड़कर भीम ने समाप्त कर दिया। तब साल्व हाथी पर बैठा चला आया। ४४-५० यह देखकर पाञ्चाल निकट पहुँचा और अपनी गदा से मारकर उसने हाथी को समाप्त कर दिया, उसी समय सात्यकि ने साल्व का सामना किया, कृतवर्मा क्रुद्ध हुआ और सात्यकि उससे भिड़ गया। तब कृप घबड़ाकर निकट आया और

मार्त्तुनिलविळिच्चाट्टियकट्टुन्न
पार्त्थादि वीरन्मारोट्टु सुयोधनन् ५५
पोरिनाय् वेगेन तेरिलेऱिक्कोण्टु
घोरतयोट्टुमट्टुत्तानतुनेरं । ५६
धीरतयोट्टु पोरुतितु पाण्डवर्
मारिपोले शरं तूकि सुयोधनन् । ५७
अन्पुकोण्टुन्परनाटन्पोट्टु पुक्कितु
वन्पट संभ्रमिच्चोटीलोरुत्तरुं । ५८
कुरुवृषभगुरुजकृपभोजादिवीररुं
कोपं मुळुत्तोरु पाण्डवन्मारुमाय् । ५९
पोरुतळविलिरुपुऱवुमवरवरट्टुत्तुटन्
तेरुतेरे मरिच्चिते शूररायुळ्ळवर् । ६०
भारतसेन मरिच्चितु मिक्कतुं
भारवुं तीर्न्नितु भूमिक्कतुनेरं । ६१
पारमार्त्थ्यमोरुनाळुमिल्लात्तवन्
पारमट्टुत्तु शकुनि पटयुमाय् । ६२
सकलकुलनृपनिधनकारणं काण्क नी
शकुनियेे वरुन्नतु पोरिनु धीरनाय् । ६३
कट्टमयोट्टु कोल्लु नीयेन्नु धर्म्मात्मजन्
झटिति सहदेवनोटोर्त्तु चोल्लीटिनान् । ६४

भोज को रथ पर बैठाकर ले गया। कोई भी उस समय पीछे न हटा। तब सुयोधन, गरजते हुए सबको भगानेवाले पार्थ आदि वीरों से लड़ने के लिए रथ पर बैठकर वेग से घोर बनकर निकट आया। ५१-५६ पाण्डव धैर्य से लड़े। सुयोधन ने शरवर्षा की। शर लगकर बड़ी सेना सोल्लास स्वर्ग चली। कोई भी घबड़ाकर न भागा। कुरुवृषभ, अश्वत्थामा, कृप, भोज आदि वीर अत्यन्त क्रुद्ध पाण्डवों के साथ लड़े। दोनों ओर सैनिकों ने शत्रु का सामना किया और शूरों का निधन हुआ। भारतसेना अधिकांश नष्ट हुई और पृथ्वी का भार भी नष्ट हुआ। शकुनि, जो कभी भी सत्य न जानता था, अपनी सेना के साथ निकट पहुँचा। "देखो! सभी कुलनृपों के निधन के कारण अब यह शकुनि धीर बनकर लड़ने आ रहा है"। ५७-६३ हे सहदेव! "तुम इसको निर्दय बनकर मारो" ऐसा युधिष्ठिर ने गरजकर कहा। वीर सहदेव शकुनि

शकुनियोंटु पोरुतु सहदेवनां वीरनुं
शकलितशरीरनाय् पाञ्ञटुत्तीटिनान् । ६५
मधुमथननोंटु विजयनतुपोळुतु चोल्लिनान्—
माधवा ! कूट्टुकॆन्तेरट्टुत्तेट्वुं । ६६
मरुतलयिल् निकटभुवि कूट्टिनानच्युतन्
मारिपोलें शरं तूकिनानर्ज्जुनन् । ६७
रणमरणमतिसुकृतमॆन्नु कल्पिच्चुट-
नवरवर्कळेतिर्पोरुतु तेरुतेरे मरिक्कयुं । ६८
विबुधयुवतिकळवरे विरवोंटु वरिक्कयुं
वीणाधरन्मुनि नन्नाय् स्तुतिक्कयुं । ६९
विद्याधरादिकळोक्क स्तुतिक्कयुं
दाहमुळ्क्कोंण्टु पानीयं कुटिक्कयुं
तापमुळ्क्कोंण्टु भक्ष्यङ्ङळ् भक्षिक्कयुं ७०
पिन्नेयुं पोरिनाय् चेन्नङ्ङटुक्कयुं
बीभत्सबाणङ्ङळ् मेय्यिल् तऱय्क्कयुं । ७१
द्रुपदसुतनोंटु कुरुकुलाधिपन् तेरुमाय्
द्रुततरमटुत्तु बाणङ्ङळ् तूकीटिनान् । ७२
तेरॆय्तु नेरे नुरुक्किनान् पाञ्चालन्
देहवुमेऱे नुरुक्किनानन्नेरं । ७३
वेगमेऱीटुं कुतिरयुमेऱिनान् ।
वीरनाकुं दुरियोधनभूपनुं ७४

से लड़ा और घायल होकर दौड़ आया। मधुमथन (कृष्ण) से अर्जुन ने उस समय कहा— हे माधव ! मेरे रथ को निकट ले जाओ। अच्युत ने शत्रुओं के पास रथ खड़ा किया और अर्जुन ने शरवर्षा की। युद्ध में मरना, सुकृत मानकर सैनिक शत्रुओं का सामना करके मरते गये। अप्सराओं ने उनका स्वागत किया और वीणाधर मुनि (नारद) ने उनकी स्तुति की। सभी विद्याधरों ने भी उनकी स्तुति की। योद्धाओं ने प्यास के कारण पानी पिया भूख लगने से भक्ष्य भी खाये। ६४-७० तदनन्तर युद्ध करने के लिए फिर शत्रुओं के निकट पहुँचे। और भयङ्कर बाण उनके शरीर में लगे। तब दुर्योधन रथ पर बैठकर वेग से द्रुपदपुत्र के पास गया और उस पर शरवर्षा की। पाञ्चाल ने रथ को शरों से तोड़ा और उसके शरीर को भी बाणों से घायल किया। और वेग से चलनेवाले एक घोड़े पर चढ़ा। वीर राजा दुर्योधन डर के मारे कहीं

पेटियोटोटियौळिच्चानतुनेर-
माटल्पूण्टार् मट्टु शेषिच्चवर्कळुं । ७५
कण्टीलरचनेयेङ्ङुमन्नार् चिलर्
मिण्टाय्विनाशु पौरुविनेन्नार् चिलर् । ७६
पोयितु भोजादिकळ् नृपनेत्तिर-
ञ्ञायोधनत्तिनु कोप्पिट्टु भीमनुं । ७७
वलिय करिकुलवररे वन्पोटटुत्तुटन्
तच्चुपोटिच्चु कोन्नोक्कयोटुक्किनान् । ७८
पिन्नेयुमोट्टु तिरिञ्ञुनिन्नार् चिलर्
निन्नवरे कोन्नोटुक्किनान् मारुति । ७९
पिन्नेयु मोटिनारोट्टु शेषिच्चवर्
पिन्नाले भीमनुं पाञ्ञटुत्तीटिनान् । ८०
कुमति कुरुकुलपति सुयोधनन्तानुमि-
क्कूट्टत्तिलुण्टेन्नरुळ्चेय्तु माधवन् ! ८१
अधिकसिततुरगयुतरथमखिलनायकन्
आशुगवेगत्तिलाशु नटत्तिनान् । ८२
अप्पोळ् विशेषमरिवानटल्क्कळं
केल्पोटु पुक्कोरु गावल्गणियेयुं ८३
ऐत्तिप्पिटिच्चितु सात्यकनन्नेरं ।
कुत्तियमर्प्पान् तुनिञ्ञु वृकोदरन् ८४

छिप गया और अन्य योद्धा घबड़ाये । कुछ लोगों ने कहा— "राजा कहीं दिखाई न दे रहे हैं । औरों ने कहा— 'बस ! चुप रहो और लड़ते जाओ' । ७१-७६ भोज आदि राजा को ढूँढने चले । भीम ने तो युद्ध की तैयारी की । बड़े-बड़े हाथियों का सामना करके उनको मार-मार कर समाप्त किया । कुछ लोग राजा को ढूँढते हुए वहीं उपस्थित थे । भीम ने उनको भी मारकर समाप्त किया । जो बचे थे वे भागने लगे और भीम ने उनका पीछा किया । माधव ने कहा कि कुमति कुरुपति (सुयोधन) इस भीड़ में है । अखिलनायक ने अत्यन्त सफ़ेद घोड़ों से युक्त रथ को शरों के वेग सा चलाया । ७७-८२ समाचार जानने के लिए युद्धभूमि में चुपके प्रविष्ट गावलगणि को (सञ्जय को) उस समय सात्यक ने पहचान लिया । भीम तो उसे मारकर समाप्त करने को था पर जान न लेकर उसे छोड़ दिया । धानुष्क वीर अर्जुन, विख्यात माद्रीपुत्र, भीम,

कॊल्लाक्कॊलचॆय्तयच्चानवनॆयुं
विल्लाळियाकिय वीरन् विजयनुं ८५
चॊल्लॆळुं माद्रजपुत्रनुं भीमनुं
वल्लभमुळ्ळ धृष्टद्युम्नवीरनुं ८६
नल्ल हयङ्ङळॆच्चेकवरोटुकू-
टल्लल्प्पॆटुत्तु कॊन्नॊक्कयोटुक्किनान् । ८७
त्रैगर्त्तसैन्यमोटे सुशर्म्माविनॆ
वैकर्त्तनालयत्तिन्नयच्चीटिनान् । ८८
माद्रतनयनुं मारुतिवीरनु-
मार्त्तु शकुनियॆ कण्टटुत्तीटिनार् । ८९
मुन्पिल् वरुन्नवुलूकनॆयुं कॊन्नु
वन्पटयुं पटयुं कॊन्नाटुक्किनान् । ९०

दुर्योधनन्टॆ द्वैपायनह्रदप्रवेशं

ओटि शकुनि सहदेवनन्नेरं
कूटॆयटुत्तॆय्तरुत्तानवन्तल । १
वन्नितु पिन्नॆ मट्टुळ्ळवर् चावति-
न्नॊन्नॊळियातॆयॊटुक्किनार् पाण्डवर् । २
दुःखिच्चु मुन्नं विदुरर् परञ्ञतु-
मॊक्क निनच्चु निनच्चु सुयोधनन् । ३
पारं मुरिञ्ञिटरोटुं वशंकॆट्टु
चोरयुमॊट्टु वटिच्चुकळञ्ञव- ४

और प्रिय वीर धृष्टद्युम्न अच्छे-अच्छे घोड़ों पर बैठकर उनके साथ लड़े और उनको समाप्त कर दिया। त्रैगर्तसेना के साथ सुशर्मा को यमालय भेज दिया। माद्रपुत्र और वीर मारुति गरजते हुए शकुनि के पास पहुँचे। आगे-आगे आनेवाले उलूक को मारकर बड़ी सेना को समाप्त कर दिया। ८३-९०

दुर्योधन का द्वैपायनह्रदप्रवेश

शकुनि भागा। तब सहदेव ने उसके पीछे-पीछे जाकर उसका सिर शर से काट डाला। तब और योद्धा मरने आये। पाण्डवों ने एक न छोड़कर सबको समाप्त कर दिया। सुयोधन पहले विदुर की कही बातों

नारुमोरुत्तर् सहायवुं कूटाते
पोरुमिनि मम पोरुमेन्नोर्त्तवन् ५
काल्नटये तन्गदयुमेटुत्तुकों-
ण्टाननं कुन्पिट्टु वीर्त्तु वशंकेट्टु ६
पेटिच्चु पेटिच्चु नोक्कि नोक्कित्तुलों
दुःखिच्चु दुःखिच्चु नाणिच्चु नाणिच्चु ७
दुष्कर्म्मंशक्तिकळ् चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु
केणुकेणाहन्त ! वीणुवीणूळियिल् ८
प्राणभयत्तोटु पाञ्ञु पाञ्ञेत्रयुं
दीननाय् मानियायोरु सुयोधनन् । ९
पोकुन्ननेरत्तु कण्टोरु सञ्जयन्
भोगिद्ध्वजनोटु केणु चोल्लीटिनान् । १०
ओक्केयोटुङ्ङी पटयुमरचरुं
मक्कळुं तन्पिमारुं मरुमक्कळुं । ११
गुरुतनयनुं कृपाचार्यनुं भोजनुं
कूरुळ्ळतिल् नमुक्कुण्टु शेषिच्चिनि । १२
पाण्डवन्मार् तेळिञ्ञार्त्तु कळिक्कयुं
ताण्डवं चेय्कयुमट्टहसिक्कयुं । १३
द्वैपायनमुनितन्नियोगत्तिनाल्
दिव्यविलोचनमेङ्क्लुण्टाकयाल् १४

को याद कर-करके दुःखित हुआ । अत्यन्त घायल होकर, शत्रुओं से हारकर रक्त को हाथ से गिराता हुआ, बिलकुल निस्सहाय होकर, 'बस ! अब मुझे युद्ध न करना चाहिये' ऐसा सोचता हुआ, अपनी गदा लिए फूला हुआ मुँह नीचा करके बेबस होकर डर-डरके, चारों ओर देखता हुआ, अत्यन्त दुःखित और लज्जित होकर, १-७ अपने कुकर्मों की शक्ति पर विचार करता हुआ, रोता हुआ और बार-बार गिरता हुआ, प्राणभय से भागता हुआ यह मानी सुयोधन अत्यन्त दीन हुआ और पैदल चला। उसे चलते देखकर सञ्जय रोता हुआ भोगिध्वज (सुयोधन) से इस प्रकार बोला। सब समाप्त हो गये, सेनाएँ, मित्र भूपाल, पुत्र, भाई, भाञ्जे सब ! गुरुपुत्र, कृपाचार्य, भोज, हमारे पक्ष के येही बचे। पाण्डव प्रसन्न होकर खेल रहे हैं, ताण्डव नाच रहे हैं, अट्टहास कर रहे हैं। ८-१३ द्वैपायन मुनि की आज्ञा से मेरे पास दिव्यदृष्टि है। इस लिए मेरा जीवनाश न हुआ। दैव के विलासों का कैसे वर्णन किया जाय ! निरायुध होकर डर के मारे इधर-उधर भागते

जीवविनाशमिनिक्कु वराञ्ञितु
दैवविलासङ्ङळॆन्तु चॊल्लावतुं । १५
पेटियोटोटि निरायुधनाय ञान्
पॆट्टपाटॆन्तु पऱयावतीश्वरा ! १६
कर्म्मदोषङ्ङळितॆन्नु पऱञ्ञुटन्
कण्णुनीर् तूकुन्न सञ्जयनोटवन् १७
चॊन्नान् सगल्गदं वेगालॊळ्कुन्न
कण्णुनीर् ताने तुटच्चुतुटच्चहो । १८
मक्कळिल् ञान् मरिच्चीलॆन्नु चॊल्लुक
दु:खिच्चिरिक्कुं पिताविनोटाशु नी । १९
पोयालुमॆन्नवन्तन्नॆययच्चवन्
पोयितु कृष्णह्रदे मुळ्कीटुवान् । २०
भोजरुं द्रोणसुतनुं कृपरुमाय्
पोकुं नृपनॆत्तिरञ्ञु कण्टीटिनार् । २१
पोरिक पोरिनु ञङ्ङळुमायिनि
पोरिलरिकळॆक्कॊन्नॊटुक्कीटुवान् । २२
पोरुं विषादं कलर्न्नतु भूपते !
पोरिल् मरिप्पान् मटियुटनुण्टाकिल् २३
नेरे परगतियिल्लॆन्नु निर्णयं ।
पोराय्कयिल्लतिनोर्क्किल् नामारुमे २४
अल्लाय्किल् ञङ्ङळ् पॊरुतु मरिक्कुमि-
ङ्ङिल्लॊरु संशयमॆन्नरिञ्ञीटु नी । २५

हुए मुझ पर क्या-क्या बीती, यह मैं कैसे कहूँ, हे परमेश्वर ! यह सब मेरे ही कर्म का फल है ! इस प्रकार आँसू गिरानेवाले सञ्जय से दुर्योधन ने गद्‌गद के साथ अपने आँसुओं को स्वयं पोछते हुए कहा । तुम जल्दी जाकर मेरे दु:खित पिताजी से कहो कि उनके पुत्रों में मैं एक अब नहीं मरा हूँ । ज़रा जल्दी चले जाओ । इस प्रकार उसको रवाना करके स्वयं नहाने के लिए द्वैपायनह्रद (व्यासजी का तालाब) गया । १४-२० ढूँढ़ते हुए भोज, द्रोणपुत्र और कृप ने उसको चलते देखा । (और कहा) आओ, आओ, हमारे साथ लड़ने चलो ताकि सब शत्रु नष्ट हो जायें । हे राजन् ! अब दु:ख छोड़ो ! अगर युद्ध में मरने के लिए तैयार न हो तो तुम्हारी अच्छी गति न होगी, इसमें सन्देह नहीं है । हममें कोई भी इसके लिए पर्याप्त नहीं है, नहीं तो हम लड़कर मरेंगे, इसमें कोई

निन्नु परवानरुतिनिक्केतुमे-
योन्नुण्टु ञानिन्नु चौल्लुन्नतु केळ्क्क । २६
वेळ्ळत्तिलोट्टुनेरं किटन्नाल् मुरि-
ञ्ञुळ्ळोरु तापवुमोट्टुपोम्पिन्ने नां २७
चेन्नु युद्धं चेय्तु वैरिकुलत्तेयु
कोन्नोटुक्कामतिनिल्लोरु संशयं । २८
खेदवुमोक्कक्कळञ्ञिनि निङ्ङळ् पोय्
दाहवुं सादवुं तीर्त्तु वन्नीटुविन् । २९
एवं पऱञ्ञवर्तम्मेययच्चु पोय्
द्वैपायनह्रदं तन्निल् मुळुकिनान् । ३०
भीमसेनन्नु मांसं कोटुत्तीटुन्न
भीमपराक्रममुळ्ळोरु काट्टाळन् ३१
अन्नन्नु नायाटिनिल्क्कुमतिन्करे-
यन्नुमविटेयकप्पेट्टितन्नेरं । ३२
कण्टानोळिच्चु नृपन् मुळुकुन्नतु
मण्टिवन्निङ्ङरियिच्चानवस्थकळ् । ३३
काट्टाळनाल् धृतराष्ट्रजोदन्तवुं
केट्टु सम्मानिच्चवनेययच्चथ । ३४
मारुति चोन्नान् महीपतितन्नोटु
वीरन्माराकुमवरजन्मारोटुं । ३५

संदेह नहीं, जान लो। (तब दुर्योधन ने उत्तर दिया) मैं आराम से बात न कर सकता हूँ। एक बात कहना है, सुन लो। अगर मैं थोड़ी देर के लिए पानी के अन्दर डूबा रहूँगा तो मेरे घावों का दर्द दूर हो जायगा। तदनन्तर हम सब जाकर युद्ध करेंगे और शत्रुकुल का नाश करेंगे, इसमें सन्देह नहीं है। २१-२८ खेद छोड़कर तुम लोग जाओ और भूँख और प्यास दूर करके वापस आओ। उनको इस प्रकार रवाना करके वह द्वैपायन के तालाब जाकर पानी में प्रविष्ट हुआ। भीमसेन को मांस देनेवाला एक पराक्रमी जङ्गल का रहनेवाला और उस तालाब के तटों पर शिकार करनेवाला उस दिन भी वहाँ पहुँचा। उसने राजा (दुर्योधन) को नहाते देखा और जल्दी दौड़कर भीम को सब समाचार बतला दिया। वनपुरुष से दुर्योधन का समाचार सुनकर भीम ने उसको पुरस्कार देकर रवाना कर दिया। तदनन्तर भीम ने युधिष्ठिर को और अपने छोटे भाइयों को सुना दिया। २९-३५ युधिष्ठिर ने केशव को

केशवनोटरियिच्चितु धर्म्मजन्
केशिमथननुमप्पोळरुळ्चेय्तु— ३६
पोक नामेङ्किलविटेक्कु वैकाते
चाकिलुं कोल्किलुं नन्निनि निर्ण्णयं । ३७
वेगेन पाण्डवन्मारुं मुकुन्दनुं
वीरपुरुषनाकुन्न पाञ्चालनुं । ३८
दैवानुकूल्यमियन्न पटयुमाय्
द्वैपायनह्लदं पुक्कारवर्कळुं । ३९
तीरदेशे चेन्नु निन्नोरनन्तरं
धीरनां नारायणाज्ञया सत्वरं । ४०
बुद्धिमानाकिय धर्म्मतनयनुं
युद्धत्तिनायि विळिच्चरुळीटिनान् । ४१
मज्जनंचेय्त कुरुकुलमन्नवन्
दुर्ज्जनाग्रेसरन् दुर्ज्जयविक्रमन् ४२
सज्जलन्तालयन् सज्ज्वरात्मा खलन्
निश्चलभावमोटे किटन्नीटिनान् । ४३
निर्ज्जरेन्द्रात्मजपूर्व्वजन् धर्म्मजन्
सज्जनाग्रेसरन् विज्ज्वरात्मा नृपन् । ४४
अच्युतांघ्रिस्थितान्तः करणोत्तम-
नच्युतनोटुणर्त्तिच्चितु साकुलं । ४५
पोरिल् मरिक्कुन्नतिन्नु भयप्पेट्टु
नीरिलोळिच्चु किटक्कुन्न मन्नवन् ४६

बतलाया और केशिमथन (कृष्ण) ने इस प्रकार कहा। अब हम लोग बिना विलम्बके वहाँ चलें, मरें या मारें, दीनों ठीक हैं, इसमें सन्देह नहीं। पाण्डव, मुकुन्द, और वीरपुरुष पाञ्चाल दैवानुग्रहवाली सेना के साथ जल्दी द्वैपायन के तालाब गये। उसके तट पर पहुँचने पर धीर नारायण की आज्ञा से बुद्धिमान् युधिष्ठिर ने दुर्योधन को युद्ध के लिए पुकारा। ३६-४१ पानी में मग्न कुरुकुलपति, दुर्जनों का नेता, दुर्जयपराक्रमवाला, सज्जलरूप आलयवाला, भीतर जलनेवाला, खल, वहीं पर निश्चल बैठा रहा। तब अर्जुन के बड़े भाई, सज्जनों के नेता, शान्त अच्युत के चरणों का ध्यान करनेवाले राजा युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा— युद्ध में मरने के डर से पानी में छिपा हुआ राजा अगर पानी से निकलेगा तभी तो हम उससे

पारिलेळ्ळुन्तु वरिकिलल्लो नमु-
क्कारालेतिर्त्तु पोरुतुकूटू हरे ! ४७
सल्गुणनाय युधिष्ठिरनोटथ
निर्ग्गुणनाय भगवानरुळ्चेय्तु । ४८
वृत्रनेक्कोन्नितु वृत्रारि मायया
नक्तञ्चरेन्द्रनेक्कोन्नितु राघवन् । ४९
शत्रुक्कळेयोरुजाति आनुं कोन्नु
शत्रुसंहारत्तिनेङ्ङनेयेन्निल्ल । ५०
वल्लकणक्किलुं वैरिकळायोरे
कोल्लुक नन्नतु भूपतिमावर्क्कॊटो । ५१
क्षेपिच्चु चोन्नालभिमानमुळ्ळवर्
कोपिच्चु चाटुमतिनिल्ल संशयं । ५२
निन्दावचनं परक नीयेन्नु गो-
विन्दन् परञ्ञतु केट्टोरु धर्म्मजन् ५३
चोन्नान् सुयोधनन्तन्नॆ निर्भर्त्सिच्चु
मन्नरिल् नाणमिल्लात नराधमा ! ५४
मूढरिल् मुन्पनाय् वंशमोटुक्कुवा-
नूढमोदेन पिरन्न कुलाधम ! ५५
भीमनेक्कॆट्टि वॆळ्ळत्तिलिट्टोरु निन्-
भीमकर्म्मत्तिन् फलमनुभूतमो ? ५६

युद्ध कर सकते हैं, हे हरे ! तब निर्गुण भगवान् ने सद्गुण युधिष्ठिर से कहा— ४२-४८ इन्द्र ने वृत्र को माया से मारा, राम ने नक्तञ्चरेन्द्र (रावण) को मारा। मैंने भी शत्रुओं को काफ़ी नष्ट किया है। शत्रुओं को कैसे मारा जाय, यह कोई विचार करने की बात नहीं है। किसी भी प्रकार शत्रुओं को मारना यह राजाओं के लिए ठीक है। अगर डाँटे जावें तो अभिमानी लोग क्रुद्ध होकर कूद पड़ेंगे इसमें सन्देह नहीं है। इसलिए तुम उसकी निन्दा करो, गोविन्द की यह बात सुनकर युधिष्ठिर ने सुयोधन की निन्दा करते हुए कहा— हे राजाओं में लज्जाहीन नराधम ! हे कुलाधम ! मूढ़ों में अगुवा होकर तुम वंश को समाप्त करने के लिए पैदा हुए हो ! ४९-५५ भीम को बाँधकर पानी में फेंकने के भीमकर्म का फल अब भोग रहे हो ? तुम ही ने तो साँप से डसवाया, तुम ही ने विष मिला हुआ भात खिलाया, तुम ही ने घर को

नीयल्लयो कटिप्पिच्चतुं पन्पिनाल्
नीयल्लयो विषच्चोऱ्शिप्पिच्चतुं ५७
नीयल्लयो चॊल्लटच्चु तीवच्चतुं
नीयल्लयो कळ्ळच्चूतु पॊरुततुं ५८
नीयल्लयो पिटिच्चीळ्त्तत्तु कृष्णयॆ
नीयल्लयो तुकिल् पॆट्टॆन्नऴिच्चतुं ५९
नीयल्लयो विपिनत्तिनयच्चतुं
नीयल्लयो भगवानॆ निन्दिच्चतुं ६०
नीयल्लयो बन्धनायिब्भविच्चतुं
नीयल्लयो कुमारं वधिप्पिच्चतुं ६१
नीयल्लयो गुरुतन्नॆ वञ्चिच्चतुं
नीयल्लयो चतिच्चित्तरं कर्म्मङ्ङळ्
नीचरोटॊन्निच्चु चॆय्ततु चॊल्लु नी । ६२
दुश्शासननॆन्न तन्पियॆङ्ङू तव ?
विश्वासमुळ्ळ शकुनियॆङ्ङू सखे ? ६३
कर्ण्णनायुळ्ळ चॆङ्ङातियॆङ्ङु तव
दुर्न्नयक्कातलायुण्टाय निन्नुटॆ ६४
बन्धुक्कळुं पटयुं पुनरॆङ्ङु पोय् ?
अन्तमिल्लातभिमानमिप्पोळॆङ्ङु ? ६५
भैरवमायुळ्ळ वाक्कुं पदवियुं
पौरुषप्रौढियुं गंभीरभाववुं ६६

बन्द करके आग लगाया, तुम ही ने जूए में बेईमानी की, तुम ही ने द्रौपदी को पकड़कर खींचा था, तुम ही ने वस्त्र झट से उतारा था। तुम ही ने हमलोगों को बन भेजा था, तुम ही ने भगवान् की निन्दा की थी, तुम ही तो बाँधे गये थे, तुम ही ने कुमार (अभिमन्यु) को मरवाया था, तुम ही ने गुरु को धोखा दिया था, तुम ही ने नीचों से मिलकर इस प्रकार के कुकर्म करके वञ्चना की थी। ५६-६२ दुश्शासन नाम का तुम्हारा छोटा भाई अब कहाँ है ? बन्धु ! तुम्हारे विश्वास का पात्र शकुनि अब कहाँ ? तुम्हारा दोस्त कर्ण अब कहाँ गया ? दुर्नय के स्थान तुम्हारे बन्धु और सेना अब कहाँ है ? और तुम्हारा निस्सीम अभिमान भी अब कहाँ है ? तुम्हारी भयङ्कर बातें और पदवी, तुम्हारा पौरुष और प्रौढ़ि, तुम्हारा गांभीर्य, सबकी निन्दा करनेवाली तुम्हारी दृष्टियाँ, तुम्हारा दुर्वार

सर्व्वनिन्दाकटाक्षावलोकङ्ङळुं
दुर्व्वारगर्व्ववुं दुर्व्वीर्यकर्म्मवु- ६७
मिप्पोळेविटे नी वच्चिरिक्कुन्नतु ?
दुष्प्रभावंपूण्ट दुर्योधनप्रभो ! ६८
नाणमुण्टेङ्किल् पुऱत्तु पुऱप्पेट्टु
वाणीटवनियेे ञङ्ङळेक्कोन्नु नी । ६९
नन्नाय् पोरुतु मरिच्चुकोळ्ळलाय्किल्
मन्नवन्मार्क्कुचितङ्ङळी रण्टुमे । ७०
इङ्ङने पेटिच्चोळिच्चु किटक्किलो
ञङ्ङळ्क्कुकूटे नाणक्केटकप्पेटुं । ७१
पुरुवंशत्तिलल्लो पिऱन्नू भवान्
पोरिलोळिक्कुमाऱिल्लवरारुमे । ७२
धर्म्मजन्वाक्कुकळित्तरं केळ्क्कयाल्
मर्म्मङ्ङळ्तोऱुं मुऱिञ्ञु सुयोधनन् । ७३
केट्टाल् पोऱुक्करुतातोरु वाक्कुकळ्
केट्टटङ्ङीटुकयिल्लेन्नु भाविच्चु । ७४
चोल्लिनानुत्तरमल्लोटुं तदा
नल्ल युधिष्ठिरन्तन्नोटतुनेरं । ७५
नयविनयमुखसकलगुणमुटयभूपते !
नन्नुनन्नित्थं पऱञ्ञतिनि मति । ७६
मरणभयमकतळिरिलुण्टतिल्लेन्नुमि-
ल्लतु करुतियल्ल वेळ्ळत्तिल्किटन्नतुं । ७७

गर्व, दुर्वीय के कर्म यह सब तुमने अब कहाँ रखा है हे दुष्प्रभाववाले प्रभु दुर्योधन ? अगर आत्माभिमान कुछ अवशिष्ट है तो बाहर निकलो, हमलोगों को समाप्त करो और पृथिवी में राज करो । ६३-६९ नहीं तो अच्छी तरह लड़कर मरो । राजाओं के लिए ये ही दो मार्ग हैं । इस तरह डर के अगर छिपे रहोगे तो हमारी भी प्रतिष्ठाहानि होगी । आखिर तुम्हारा जन्म पुरुवंश में हुआ है और पुरुवंशवाले युद्ध से मुंह नहीं मोड़ते हैं । युधिष्ठिर की ऐसी बातें सुनकर सुयोधन का एक-एक मर्म कट गया । "असह्य बातें सुनकर दबनेवाला नहीं हूँ" यह दिखलाने के लिए उसने दुःखित होकर उस समय अच्छे युधिष्ठिर से इस प्रकार कहा । नय-विनय आदि समस्त गुणवाले भूपति ! तुमने ठीक कहा,

पारं मुरिञ्ञुळ्ळ वेदन तीरुवान्
नीरिल् मुळुकिक्किटन्नितु ञानेंटो । ७८
ञान् परञ्ञालिनिक्कार्यमायुं वरा
तुरगरथकवचशरचापङ्ङळादियां
सुभटसमरांगमिल्लोन्नुमेन्नाकिलुं ७९
विरवोटेळुनीट्टु ञान् निङ्ङळेक्कोल्लुवन्
वेणमेन्मानमिल्लेन्नतुयुण्टुळ्ळिल् । ८०
सुहृदनुजसुतगुरुपितामहन्मारुमेन्
तुल्यमल्लात पटयुं मुटिञ्ञितु । ८१
शेषिच्च निङ्ङळेयुं कोलचेय्तिनि-
श्शेषिच्चु ञानोरुत्तन् वसिच्चीट्टिनाल् ८२
ओरु सुखवुमिल्लतेल्लां निरूपिच्चु ञा-
नोन्नुण्टु चोल्लुन्नितिन्नु धरापते ! ८३
काननान्तत्तिलिरुन्नु तपस्सुचे-
य्तानन्दमोटे परगति तेटुवन् । ८४
राज्यवुं वाणिरुन्नीटुक धर्म्मजन्
पूज्यनायेन्तोरु हानि नमुक्कतिल् ? ८५
ऒन्नुटे बन्धुक्कळल्लयो निङ्ङळुं
चिन्तिक्क धर्म्मजा ! सल्गुणवारिधे ! ८६

बस ! अब समाप्त करो ! ७०-७६ मृत्युभय दिल में है, यह नहीं कि नहीं है, परन्तु इसलिए मैंने पानी में प्रवेश नहीं किया। अत्यन्त घायल होने से दर्द दूर करने के लिए मैंने पानी में प्रवेश किया है। अब मेरा कुछ कहना व्यर्थ होगा। घोड़ा, रथ, कवच, बाण, धनुष आदि अच्छे योद्धा के अङ्गों में से कुछ भी मेरे पास नहीं है। फिर भी मैं अब निकलकर तुमलोगों को समाप्त कर दूँगा। मैं जानता हूँ कि अपने आत्माभिमान के लिए यह आवश्यक है। मित्र, छोटे भाई, पुत्र, गुरु, पितामह और मेरी अनुपम सेना, सब समाप्त हो गया है। बचे हुए तुम लोगों को भी समाप्त करके अगर मैं अकेला हो जाऊँगा तो कुछ भी सुख नहीं होगा। यह सब सोचकर मैं आज एक बात करनेवाला हूँ, हे धरापते ! मैं कहीं वन में रहकर तपस्या करके आनन्द के साथ अपनी परगति ढूँढ़ लूँगा। ७७-८४ तुम युधिष्ठिर राज करो और पूज्य हो जाओ, मेरी उसमें क्या हानि है ? आख़िर तुमलोग मेरे बन्धु हो। हे धर्मज ! (युधिष्ठिर !) सद्गुणों का सागर ! सोचो तो। यह सब

अॆन्निव केट्टॊरु मन्नवन् धर्म्मजन्
चॊन्नान् धृतराष्ट्रपुत्रनोट्टुत्तरं— ८७
अॆन्नुटॆ राज्यत्तॆ निन्नोटिरन्नुकॊ-
ण्टिन्नु ञान् मन्नवनायि वाळेणमो ? ८८
पिन्नॆ निनक्कुळ्ळतॆङ्किलॆ केवलं
तन्नुकूटू निनक्कॆन्नुमरिक नी । ८९
जलमतिलॊळिच्चुकॊण्टित्तरं वाक्कुकळ्
जळरिल् विरुतुळ्ळ नी चॊन्नतॆल्लां मति । ९०
वरिक रणभुवि विरविल् ञङ्ङळॆक्कॊन्नु नी ।
वाळ्कतल्लाय्किलो वानिल् वाणीटुक । ९१
यमतनयनॊटु कुरुकुलाधिपन् चॊल्लिना-
नेकाकियायितु ञानॆङ्किलुमिनि ९२
निङ्ङळॊरुत्तरोटु मतियाय्वरु-
मिङ्ङु रथादिकळिल्लॆनिक्काकयाल् । ९३
द्वन्द्वयुद्धत्तिल् चतिक्कयिल्लॆङ्किलो
वन्नु पॊरुतॊटुक्कीटुवन् निङ्ङळॆ । ९४
मट्टु पलरुमॊरुत्तनुमाकिलो
चॆट्टु निरूपिच्चुवेणमिनिक्किनि । ९५
अॆन्नतु केट्टु परञ्ञितु धर्म्मजन्
निन्नोटॊरुत्तने ञङ्ङळॆतिर्क्कुन्नु । ९६

सुनकर राजा युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्र को उत्तर दिया— "क्या मैं अपने ही राज्य को तुमसे भीख माँगकर राजा बनूँ और राज करूँ ? फिर जितना तुम्हारा है उतना ही तुमको दिया जा सकता है, यह भी जान लो। पानी में छिपकर इस तरह की बातें जड़ों में अग्रसर तुम काफी कर चुके हो, अब बन्द करो। युद्धभूमि में आ जाओ और हमलोगों को मारकर राज करो या स्वर्ग में जाकर रहो। ८५-९१ तब कुरुकुलाधिप (दुर्योधन) ने यमतनय (युधिष्ठिर) से कहा 'मैं अकेला हूँ, फिर भी तुमलोगों में एक-एक से लड़ने के लिए पर्याप्त हूँ, मेरे पास रथादि तो नहीं हैं। अगर धोखा न दोगे तो मैं निकलकर द्वन्द्वयुद्ध में तुम लोगों को समाप्त कर दूँगा। अगर मुझे बहुतों से अकेला लड़ना पड़ेगा तो मुझे ज़रा सोचना पड़ेगा। यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— हम लोगों में से एक ही तुम से लड़ेगा। अगर शर्म कुछ शेष है और पुरुष हो तो लड़ने आओ, व्यर्थ की बातें न करो। ९२-९७

नाणमुण्टेङ्किल् पोरुवान् वरिक नी-
याणाकिल् मट्टेन्तिनित्तरं चोल्लुन्नु । ९७

भीमदुर्योधनयुद्धं

कुमति कुरुकुलपति कुटञ्ञु पोङ्ङीटिनान्
कोप्पुकण्टेट्टं चिरिच्चितेल्लावरुं । १
पोरुवतिनु वरिकोरुवन् महावीररे !
पोय् परञ्ञेन्नेच्चतियाय्कयुं वेणं । २
अन्नु सुयोधनन् चोन्नतु केट्टप्पोळ्
निन्न मुकुन्दन्तिरुवटियुं चोन्नान्— ३
ञङ्ङळिलारेन्नु चोदिच्चुकोळ्ळाय्क
निङ्ङळ्क्कोरुत्तनुमामल्लवनोट्टु । ४
पक्षे पवनतनयनु संशय-
मिक्कुरुवीरनेळुतल्ल निर्ण्णयं । ५
शिक्षकोण्टेट्टमधिकन् कुरुपति
मुख्यत शक्तिकोण्टाकिलां भीमनुं । ६
तङ्ङळिल्तन्ने पोरुकेन्नते वरू
निङ्ङळटङ्ङुविनेन्नु मुररिपु । ७
चोन्नतु केट्टु ञान् कोल्लुन्नतुण्टेन्नु
सन्नद्धनायि मुतिर्न्नान् वृकोदरन् । ८

भीम और दुर्योधन का युद्ध

कुमति कुरुकुलपति पानी से उठ आया और उसका हाल देखकर सब हँसे। (उसने कहा) हे महावीर ! एक आओ मुझसे लड़ने, झूठ बोलकर मुझे धोखा न देना। सुयोधन की बात सुनकर उपस्थित पूज्यपाद मुकुन्द ने कहा— "हम लोगों में कौन", यह न पूँछो तुम लोगों में कोई भी उससे न लड़ सकते हो। परन्तु पवनतनय (भीम) का सामना करना इस कुरुवीर के लिए आसान न होगा। शिक्षा में कुरुपति ही उत्कृष्ट है और भीम की मुख्य-बात उसकी शक्ति है। यही हो सकता है कि ये दोनों आपस में लड़ें, और सब बैठ जायँ, मुरारि ने ऐसा कहा। १-७ यह सुनकर 'मैं उसका वध करूँगा' ऐसा कहता हुआ भीम लड़ने के लिए तैयार हुआ। एक निर्दोष युद्ध देखने के लिए और

कुट्मॊऴिञ्ञु पोर् काण्मानतुनेरं
चुट्टुमिरुन्नितु मट्टुळ्ळवर्कळुं । ९
मुन्नं पटय्क्कु कोप्पिट्टतरिञ्ञु ता-
नॊन्निनुं कूटुन्नतिल्लॆन्नु कल्पिच्चु । १०
तीर्थमाटीट्टुवान् पोय मुसलियुं
क्षेत्रङ्ङळुं पल तीर्थङ्ङळुं कण्टु ११
पेर्त्तुं प्रभासं प्रवेशिच्चितन्नेरं ।
धात्रिभरहरन्तन्नुटॆ मायया १२
नारदन्तानुमविटेक्कॆऴुन्नळ्ळि
भारतवृत्तान्तमॊक्कयरियिच्चान् । १३
इप्पोळ् सुयोधननां तव शिष्यनुं
कॆल्प्पुळ्ळ भीमनुं तङ्ङळिलुळ्ळ पोर् १४
आनितु काण्मतिन्नायिता पोकुन्नु
काणेण्टुवॊन्नितु पोरिक वैकातॆ । १५
तेरिलेरीटिनानप्पोळ् मुसलियुं
नारदन् तन्नोटु कूटवे सत्वरं । १६
तॆट्टॆन्नु पोर्क्कळं पुक्कोरनन्तरं
मट्टुळ्ळवर्कळ् विषण्णरायीटिनार् । १७
उत्थानवन्दनाद्याचारवुं चॆय्तु
चित्ताकुलतया निन्नितॆल्लावरुं । १८
सन्तोषमुळ्क्कॊण्टु चॆन्तामराक्षनुं
चॆन्तारटियिण कुन्पिट्टु कूप्पिनान् । १९

लोग चारों ओर बैठ गये। पहले ही युद्ध की तैयारियाँ देखकर "मैं इसमें किसी भी प्रकार भाग न लूंगा" ऐसा सोचकर तीर्थयात्रा करने जो चला गया था वह मुसली (बलराम) वह अनेक देवालय और तीर्थ देखकर उस समय फिर प्रभास पहुँचा। विष्णु की माया से नारद भी उस समय वहाँ पधारे और उन्होंने बलराम को भारतयुद्ध के सब वृत्तान्त बतला दिये। ८-१३ अब तुम्हारे शिष्य सुयोधन और शक्तिशाली भीम का आपस में जो युद्ध होगा उसे देखने के लिए मैं जा रहा हूँ। वह देखने योग्य है, मेरे साथ अविलम्ब चलो। तब बलराम तुरन्त ही नारद के साथ रथ पर बैठ गया। जब उन्होंने युद्धभूमि में प्रवेश किया तब और लोग विषण्ण हुए। सबने उठकर वन्दना की और आकुलचित्त

भक्त्या नमस्कारवुं चेय्तु वन्दिच्चु
चित्तं तेळिञ्ञु सुयोधननु निन्नान् । २०
पोक्कु सरस्वतितन्नुटे नल्क्करे-
प्पोक समस्तपापापहमत्रैव । २१
पुण्यदेशं मरिच्चाल् गति निश्चयं
अेन्नु केट्टोक्क नटन्नितु मन्नरुं । २२
ञङ्ङळिलुळ्ळ पोर् काण्मतिनाय्क्कोण्टु
निङ्ङळेल्लारुमिरिक्क परक्कवे । २३
अेन्नु सुयोधनन् चोन्नतु केट्टप्पोळ्
मन्नवन्मारुमिरुन्नु बलनुमाय् । २४
चेन्नु पटिञ्ञारिरुन्नु सुयोधन-
नोन्नङ्ङलरिप्परञ्ञितु भीमनुं । २५
नल्लोररक्किल्लवुं पणितीर्त्तति-
लेल्लावरुमिरिक्केन्नु सम्मानिच्चु २६
चोल्लियतेल्लां परमार्त्थमेन्नोर्त्तु
कल्याणमुळ्क्कोण्टु मुन्नमिरुन्ननाळ् २७
अम्मयुं बालकन्माराय ञङ्ङळुं
निर्म्मरियादङ्ङळेतुमरियाते २८
विश्वासमुळ्क्कोण्टुरङ्ङुन्ननेरत्तु
वच्चारकत्तिन्नटच्चु ती चुट्टुमे । २९

होकर खड़े हो गये। कमललोचन (कृष्ण) ने प्रमुदित होकर चरणपद्म को झुककर हाथ जोड़ा। सुयोधन भी भक्ति के साथ नमस्कार और वन्दना करके खड़ा हो गया। १४-२० युद्ध के लिए समस्त पापों को हरनेवाले सरस्वती के तट पर चलो। वही पुण्यदेश है, वहाँ मरनेवाले की अच्छी गति निश्चित है। यह सुनकर सभी भूपाल वहाँ चले। "हम दोनों का युद्ध देखने के लिए आप लोग सब चारों ओर बैठें" सुयोधन की यह बात सुनकर भूपाल सब बलराम के साथ बैठ गये। जब सुयोधन पच्छिम की ओर जाकर बैठा तब भीम गरजता हुआ बोला। एक अच्छा जतुगृह बनवाकर उसमें हम सबको सम्मान करके रहने के लिए जो बातें कहीं गयीं थीं उनको परमार्थ समझकर जब २१-२७ माताजी और हम बच्चे जो कुछ नहीं जानते थे वहाँ विश्वास के साथ सो रहे थे तब तुम लोगों ने चारों ओर आग लगायी। झूठा जूआ खेलकर हमारा राज्य और घर और जो कुछ हमारा धन था सब लूट लिया। इतना

कळ्ळच्चूतिट्टु चतिच्चु नाटुं वीटु-
मुळ्ळधनङ्ङळुमोक्कप्परिच्चितुं । ३०
अन्नु रजस्वलयाय पाञ्चालियें-
च्चेन्नु पिटिच्चिळच्चेल्लावरुं काण्के ३१
उण्टायवस्थ परञ्ञुकूटुन्नत-
ल्लुण्टो मरक्कुन्नतु ञान् कण्टव ? ३२
अेल्लामरिञ्ञिरिक्कुन्नितु दैवमि-
तेल्लामतिनोत्तवण्णं वरुत्तुक । ३३
इत्थं परकयुमट्टहसिक्कयुं
मद्धये मिळिकळिल् वारि पोळिक्कयुं ३४
कोपं पेरुक्कयुं देहं विरय्क्कयुं
पल्लु कटिक्कयुं कण्णु चुवक्कयुं । ३५
काणुन्नवर्कळ्क्कु पेटियाकुंवण्णं
मानिच्चु मारुति निल्क्कुन्ननेरत्तु ३६
साक्षाल् नरसिंहमूर्त्ति कोपत्तोटे
पोक्कुं हिरण्यकशिपुवेक्कण्टुटन् ३७
शीघ्रमटुक्कुन्नुतेन्नु तोन्नी बला-
लाक्रमिक्कामल्लिवनेयेन्नु जनं । ३८
निर्ह्लादवुं केट्टु निल्क्कुन्न धर्म्मजन्
प्रह्लादभावं कलर्न्नानतुनेरं । ३९
पोरुं परञ्ञतु वीरिशीखामणे !
पारं मदमुळ्ळतिन्नटक्कीटुवन् ४०

ही नहीं, रजस्वला द्रौपदी को पकड़कर सबके सामने खींचा । उस समय की स्थिति का वर्णन न किया जा सकता है । अपनी आँखों देखी बातों को मैं कैसे भूल सकता हूँ ? दैव यह सब जानता है और ऐसा करे कि फल भी इसी के अनुसार हो ! इस प्रकार कहता हुआ, अट्टहास करता हुआ, बीच में आँखों से आँसू गिराता हुआ, २८-३४ अत्यन्त क्रुद्ध होकर, काँपता हुआ, दाँत पीसता हुआ, आँखें लाल करता हुआ, देखनेवालों का भय उत्पन्न करता हुआ अभिमान के साथ भीम खड़ा हो गया, मानो साक्षात् नरसिंह मूर्त्ति क्रुद्ध होकर हिरण्यकशिपु को देख उसके निकट युद्ध करने के लिए जा रहा हो । जनता ने भी कहा— बल से इस पर आक्रमण करो । सिंहनाद सुनकर उपस्थित युधिष्ठिर उस समय प्रसन्न

पोरिल् ञानॆन्नु सुयोधनन् चॊन्नप्पोळ्
नेरे गदकॊण्टटिच्चितु भीमनुं । ४१

दुर्योधनवधं

तल्लु तट्टिक्कळञ्ञॊन्नटिच्चीटिनान्
चॊल्लॆळुं कौरवन् वायुतनयनॆ । १
निल्लॆटा निल्लुनिल्लॆन्नु तल्लुं तटु-
त्तल्लल् काणुन्नवर्क्कुळ्ळिलल् वाय्क्कुंपटि २
तच्चितु भीमन् तरिच्चितु कैत्तल-
मुच्चत्तिलॊच्च पॊङ्ङी निलत्तेल्क्कयाल् । ३
अच्युतन्कूटॆच्चिरिच्चानतुनेर-
मच्चिरिपूण्टाननिलतनयनुं । ४
चलनपतनोत्थापनभ्रमणङ्ङळिल्
चतुरतकलन्नॆ वीरन्मारिरुवरुं । ५
तुंगङ्ङळायुळ्ळ शैलङ्ङळिल्निन्नु
चॆङ्कल्ललिञ्ञॊळुकीटुन्नतुपोलॆ- ६
यापादचूडमणिञ्ञतु चोरयुं
कोपातिरेकाललरुन्न नादवु- ७
मन्योन्यभीतियुण्टाकुन्न वेषवुं
ब्रह्माण्डमॆल्लां मुळङ्ङुन्न घोषवुं ८

हुआ। जब सुयोधन ने कहा— "हे वीरशिखामणे! बस! बहुत कह चुके हो! तुम्हारे इस बढ़े-चढ़े मद को मैं युद्ध में समाप्त कर दूँगा" तब भीम ने उसको गदा से मारा। ३५-४१

दुर्योधन का वध

गदा के आघात को रोककर विख्यात कौरव ने भीम को मारा। 'ठहरो' 'ठहरो' कहते हुए, और आघात को रोकते हुए, देखनेवालों के दिल में डर उत्पन्न करते हुए भीम ने भी मारा जिसका हाथ तरस रहा था। आघात भूमि पर लगने से बड़ी आवाज़ उठी। कृष्ण हँस पड़ा और भीम भी उसी प्रकार हँसा। चलन, पतन, उत्थापन और भ्रमण में दोनों वीर कुशल थे। पाद से सिर तक दोनों का रक्त बह रहा था। मानो ऊँचे पहाड़ के चट्टानों से लाल पत्थर पिघलकर बह रहा हो। अतिकोप के कारण गरजते हुए, १-७ एक दूसरे का भय पैदा करनेवाले

मुन्नमे चेय्तवयोर्त्तु विद्वेषवुं
कौन्तालुमुळ्ळिलटङ्ङात्त रोषवुं ९
युद्धकौशल्यङ्ङळ् कण्टु सन्तोषवुं
बद्धदाहेन वक्त्राब्जसंशोषवुं १०
चित्ते कलर्न्नवरोप्पं पौरुन्नेरं
चित्रं विचित्रं विचित्रमेन्नु जनं । ११
इल्लेङ्ङुमे पळुतोन्नु तच्चीटुवा-
नेळ्ळोळमेन्ततु कण्टु वृकोदरन् १२
तन्नुळ्ळिलुळ्ळोरहंभाववुं वच्चु
धन्यनां कृष्णनिलायितु चित्तवुं । १३
मारुतपुत्रनु भावं क्षयिक्कयुं
कौरववीरनु शौर्यं पेरुक्कयुं । १४
कण्टु कण्टाकुलप्पेट्टोरु फल्गुनन्
कौण्टल्नेर्वर्ण्णनोटिङ्ङने चोल्लिनान्— १५
अेन्टे भगवाने ! दीनदयानिधे !
निन्टे तिरुमनस्सेन्तोन्नु दैवमे ! १६
नोक्कुक मारुतिक्काक्कं कुरञ्ञितु
पोक्कुं सुयोधननिल्लोरु चञ्चलं । १७
अेन्नुरचेय्ततु केट्टु मुकुन्दनुं
नन्नु सुयोधनन् शिक्ष कोण्टेटवुं । १८

वेष पहनते हुए, सारे ब्रह्माण्ड में गूँजनेवाले घोष करते हुए, चित्त में पहले किये गये कर्मों का विद्वेष, वध करने के बाद भी शान्त न होनेवाले रोष, और एक-दूसरे का युद्धकौशल देखकर प्रमोद अनुभव करते हुए, प्यास से मुँह सूख जाने पर भी दोनों जब बराबर युद्ध कर रहे थे तब लोगों ने कहा— चित्र ! विचित्र ! विचित्र ! जब भीम ने देखा कि शत्रु का कहीं भी लेशमात्र भी छिद्र नहीं है जहाँ मारा जाय तब अपने अभिमान को अलग करके धन्य कृष्ण का ध्यान किया। भीम का उत्साह कुछ शिथिल पड़ा और कुरुवीर का शौर्य बढ़ा। ८-१४ यह देखकर अर्जुन घबड़ाया और घनश्याम कृष्ण से बोला— "मेरे भगवान् ! दीनों के दयानिधे ! हे दैव ! तुम्हारे मन में क्या हो रहा है ? देखो भीम की शक्ति कम हो रही है दुर्योधन का तो युद्ध में कोई शैथिल्य नहीं है।" यह कहना सुनकर मुकुन्द ने कहा— सुयोधन शिक्षा के कारण बहुत अच्छा योद्धा है। 'तुमसे एक ही लड़ेगा' ऐसा युधिष्ठिर के पहले ही वचन देने के कारण

निन्नोटोरुत्तने पोर्चेय्वितेन्नतु
मुन्नमे धर्म्मजन् चोन्नतुकारणं १९
वन्नितु चापल्यमिप्पोळ् नमुक्केल्लां ।
कोन्नुकोळ्वानोरुपायवुं कण्टील । २०
नेरेपोरुतु जयिच्चुकूटायेन्नुं
वीरनायोरु धृतराष्ट्रपुत्रने । २१
शत्रुक्कळ् मिक्कतुमोक्क मुटिञ्ञितु
चत्तीलोरुत्तनवरिल्वच्चेन्नाकिल् । २२
वल्लप्रकारवुं कोल्लुकेन्नेवरू
वल्लायमयल्लाय्किल् नल्लतल्लेतुमे । २३
कालान्तरंकोण्टु दुर्ब्बलनाकिलुं
मूलविनाशमवन् वरुत्तीटुमे । २४
व्याजेन कोल्लामरिकळे निर्ण्णयं
राजनयङ्ङळ् निरूपिच्चुकाणुन्पोळ् । २५
ऊरुतन्मेलटिच्चाल् मरिच्चीटुमे
वीरनतिन्नोरु शापवुमुण्टेटो । २६
पोरा पुनरुतु धर्म्मत्तिनेतुमे
पोरिल् चतिक्करुतेन्नल्लो चोल्लुन्नु । २७
वीरगदायुद्धमाकिलोरुत्तनु-
मारुमरय्क्कु कीळ्त्तय्क्कुमारिल्लल्लो । २८

हमलोगों में अब यह दौर्बल्य आ गया है। उसका वध करने के लिए कोई उपाय न सूझ रहा है। सीधे लड़कर वीर धृतराष्ट्रपुत्र को हराना असम्भव है। १५-२१ अधिकांश शत्रु समाप्त हो गये हैं। उनमें यह एक अगर न मरेगा तो किसी भी प्रकार उसको मारना ही पड़ेगा। नहीं तो हम लोगों के लिए अच्छा न होगा। यद्यपि वह बाद में दुर्बल हो जायगा तथापि वह मूलविनाश तो कर सकेगा। राजनीति पर विचार करने पर स्पष्ट है कि शत्रुओं का व्याज से मारना ठीक है। अगर जाँघ पर मारा जाय तो मरेगा, इसके संबन्ध में एक शाप भी है। हाँ धर्म की दृष्टि से इसमें कुछ कमी अवश्य है क्यों यही कहा गया है कि युद्ध में धोखा न देना चाहिए। वीरों के गदायुद्ध में कमर के नीचे मारा न जाता है। २२-२८ फिर भी आज ऐसा करना ही पड़ेगा नहीं तो उसको मारना असंभव है। तब अर्जुन ने अपनी जाँघ पर सोत्साह ताल लगाना प्रारम्भ किया। यह देखकर भीम समझ गया और ध्यान से

ऒन्तालुमिन्नितु चॆय्कॊन्नतेवरू
कॊन्नीटुवान् पणियल्लाय्किलॆन्नुमे । २९
मेळं कलर्न्नु तुटमेलतुनेरं
ताळं पिटिच्चुतुटङ्ङिनानर्ज्जुनन् । ३०
अप्पोळतु कण्टरिञ्ञितु भीमनुं
कॆल्पोटतिन्नु पळुतु नोक्कीटिनान् । ३१
ऒन्नु कॊळ्ळातॆकण्टॆन्नुमवन्तुट-
य्क्कॊन्नु तच्चीटुवान् वेलयॊन्नोर्त्तवन् । ३२
तन् तलय्क्कङ्ङॊरु तल्लुकॊण्टुंकळ-
ञ्ञॆन्तॊरु कष्टं ! तुटय्क्कु तच्चीटिनान् । ३३
प्राणनोटाशु निलत्तु सुयोधनन्
वीणितु कालुमॊटिञ्ञु विधिवशाल् । ३४
पॆट्टॆन्नु मारत्तु निन्नु गदकॊण्टु
ळॊट्टिनानाशु तलय्क्कु वृकोदरन् । ३५
तन्नोटु मुन्नमवन् चॆय्त कर्म्मङ्ङ-
ळॊन्निनोरॊन्नु तल्लेणमॆन्नोर्त्तवन् । ३६
ओरोन्नु चॊल्लियुमोरोन्नु तल्लियुं
नीचनां नी चतिच्चोरु फलत्तिना-
लाशु चतिच्चुयिर्कॊण्टितु निन्नेयुं । ३७
इत्तरं मारुति चॊल्कयुं तल्कयुं
मत्तनाकुं बलभद्रर् कण्टन्नेरं । ३८
नेरे हलवुं मुसलवुं कैक्कॊण्टु
घोरतयोटुमटुत्तानतुनेरं । ३९

मौका देखता रहा। भीम ने समझ लिया कि मार खाये शत्रु की जाँघ पर मारना कठिन है। इसलिए, हा! कैसा कष्ट है! अपने ही सिर पर एक मार खाकर उसने शत्रु की जाँघ पर मारा। सुयोधन भूमि पर जिन्दा गिरा और उसकी टाँग भी टूट गयी। तुरन्त ही भीम ने उसकी छाती पर खड़ा होकर सिर पर मारने लगा। २९-३५ 'अपने साथ पहले किये गये कुकर्मों का एक-एक करके बदला लेना चाहिए' ऐसा सोचकर भीम ने एक-एक कुकर्म सुनाकर एक-एक मारा। "तुम नीच ने जो हमको धोखा दिया था उसी का फल है कि तुम भी अब धोखे में मर रहे हो" इस प्रकार का कहना और मारना देखकर मत्त बलभद्र उस समय अपना

वीरभद्रन् पण्टु दक्षनेक्कोल्लुवान्
वीऱोटुकूटियटुक्कुन्नतुपोले । ४०
वेगालटुक्कुन्नतु कण्टु माधवन्
योगेशनायुळ्ळ योगस्थनीश्वर- ४१
नागमक्कातलामादिनाथन् परन्
भोगीन्द्रभोगशयनन् मधुरिपु ४२
सच्चिल्प्पुमान् पुरुषोत्तमनव्यय-
नच्युतनानन्दमूर्त्ति परापरन् ४३
कोमळन् गोकुलनायकन् केशवन्
रामनेच्चेन्नु मुळुकेत्तळुकिनान् ४४
बन्धुक्कळाय नामोन्निनुं कूटरु-
तेन्तु कोपत्तिनु कारणमोर्क्कणं । ४५
नम्मुटे तातन् भगिनितन् मक्कळि-
द्धर्म्मजनादिकळेन्नुमरियणं । ४६
पिन्नेस्सुभद्रये वेट्टतुमर्ज्जुनन्
नन्नुनन्नित्तोळिल् चेट्टङ्ङेणमे । ४७
कोण्टुं कोटुत्तुं नरन्माक्कुं चार्च्चक-
ळुण्टाय्वरुमतेन्नोर्त्तरुळेणमे । ४८
पिन्ने विशेषिच्चु तङ्ङळिलुळ्ळति-
नोन्निनुं पोवानवकाशमिल्ल नां । ४९

हल और मुसल लेकर घोर रूप धारण करके (भीम के) निकट पहुँच गया, जैसे पूर्वकाल में वीरभद्र दक्ष को मारने के लिए क्रोध के साथ उसकी ओर दौड़ा था। जब वेग से निकट आते देखा। तब योगेश, योगस्थ, ईश्वर, आगमप्रिय, आदिनाथ, पर, भोगीन्द्र (शेषनाग) के भोगों पर लेटनेवाले, मधुरिपु, ३६-४२ सच्चित्पुरुष, पुरुषोत्तम, अव्यय, अच्युत, आनन्दमूर्ति, परापर, कोमल, गोकुलनायक, केशव ने जाकर बलभद्र से छाती लगाया। और कहा— हम इनके बन्धु हैं, हमको इस मामले में आना नहीं चाहिए। कोप का कारण क्या है, यह समझना चाहिए। स्मरण रहे कि युधिष्ठिर आदि हमारे पिता की भगिनी के पुत्र हैं। ऊपर से अर्जुन ने हमारी सुभद्रा से विवाह किया है। तुमको अच्छा सूझा! ज़रा दब जाओ। लेने और देने से मनुष्यों के परस्पर संबन्ध बन जाते हैं, यह याद रखिये। फिर उनके आपस के मामलों में हमको जाने का कोई अधिकार नहीं है। ४३-४९ इनके युद्ध

आयोधनत्तिन्नु कोप्पिट्टतिल् पिन्ने-
यायुधं तॊट्टील आनेन्नरिञ्ञालुं । ५०
धार्त्तराष्ट्रन्टे नियोगेन सूतनाय्
पार्त्थनु तेर्तॆळिच्चेनतिनेन्त हो ! ५१
इत्तरं माधवन् चॊन्नोरनन्तरं
चित्तं कलङ्ङिब्बलभद्रनु चॊन्नान् । ५२
कॊल्लुमारुण्टु पलरेयुं पोरतिल्
तल्लुमारिल्ल मारत्तुनिन्नारुमे । ५३
योग्यमल्लेतुमे मारुति चॆय्ततु
योग्यमायुळ्ळते कण्टु पॊरुक्कावू । ५४
उण्टो गदय्क्कु कटकं परक नी
कण्टिल्लयो चतिचॆय्ततु मारुति ? ५५
ऎन्नरुळ्चॆय्ततु केट्टु मुकुन्दनु
नन्नुनन्निच्चति कण्टतुमग्रजन् । ५६
ऎन्नतरं चतिचॆय्तु सुयोधनन् ?
नित्यनामीश्वरनिल्लातॆयाकुमो ? ५७
तान्तान् निरन्तरं चॆय्युन्न कर्म्मङ्ङळ्
तान्ताननुभविच्चीटुकॆन्नेवरू । ५८
वेण्टतु तङ्ङळिल् चॆय्तालुमॆङ्किल् नां
वेण्टतटङ्ङुकॆन्नेवरू निर्ण्णयं । ५९

की तैयारी के बाद मैंने आयुध का स्पर्श तक नहीं किया, जान लो। सुयोधन की ही आज्ञा से मैंने सूत बनकर अर्जुन का रथ चलाया, इसमें क्या है ? माधव के इस प्रकार कहने के बाद बलभद्र का चित्त ज़रा आकुल हुआ और वह बोला— "युद्ध में तो बहुत लोग मारे जाते हैं पर कोई भी छाती पर खड़े होकर नहीं मारता है। भीम का यह काम बिलकुल अनुचित है। उचित काम ही देखकर सहा जा सकता है। गदायुद्ध में कमर के नीचे मारा जाता है ? तुम ही कहो भीम की यह वञ्चना तुमने नहीं देखी ?" यह सुनकर मुकुन्द ने कहा— 'ठीक है कि बड़े भाई ने यह वञ्जना देखी सुयोधन ने कितने बार वञ्जना की ? नित्य भगवान् है ही देखनेवाला ! ५०-५७ अपने-अपने निरन्तर किये जानेवाले कर्मों का फल स्वयं भोगना ही पड़ेगा। वे आपस में कुछ भी करें। निस्सन्देह हमको तो चुप रहना ही ठीक होगा। कृष्ण की बात

कृष्णवाक्यं केट्टु रामन्तिरुवटि-
युष्णिच्चु भीमनें नोक्कि नटकोंण्टान् । ६०
द्वारावतियिलेंळुन्नळ्ळिमेविनान्
दारङ्ङ्ळोटुं रमिच्चु निरन्तरं । ६१
धार्त्तराष्ट्रन्मारशेषं मुटिञ्ञितु
धात्रियें वाळुक धर्म्मजन्तानेंन्नु । ६२
कीर्त्तिमानाय वृकोदरन् चोंल्लिना-
नास्थकलन्नोंरु नारायणनोंटुं । ६३
वन्नीतु दुःखं युष्ठिरनन्नेरं
वन्नील पार्त्थनुमेतुमे सन्तोषं । ६४
चेंन्तामरक्कण्णनन्पोटरुळ्चय्तु
अेंन्तु तेंळिञ्ञुरियाटाञ्ञितु निङ्ङ्ळ् ? ६५
पारं तेंळिञ्ञुतिनिक्केंन्नरिञ्ञालुं
मारुति चेय्ततु नन्नेंन्नु निर्ण्णयं । ६६
पोरिलरिकळेंक्कोंन्नोंटुक्कीटुक
वीररायुळ्ळ नृपन्मार्क्कु धर्म्ममे । ६७
अेंन्नित्तरङ्ङ्ळुं केट्टुकेट्टङ्ङनें
मन्नवन्मारुं नटन्नु तुटङ्ङिनार् । ६८
कण्टुनिन्नोरु देवादिकळ्तङ्ङ्ळुं
कोंण्टल्नेर्वर्ण्णनें वाळ्त्तिनटन्नुते । ६९
दुन्दुभि शंखादिवाद्यघोषत्तोंटुं
नन्दात्मजनाय नारायणनोंटुं । ७०

सुनकर पूज्य बलभद्र भीतर गरम हुआ और भीम को देखता हुआ चला गया। द्वारावती में जाकर निवास किया और वहाँ अपनी स्त्रियों के साथ निरन्तर रमण किया। धार्तराष्ट्र सब समाप्त हुए। तब कीर्तिमान् भीम ने सादर नारायण से कहा 'अब युधिष्ठिर पृथिवी पर राज करे। तब युधिष्ठिर को बड़ा दुःख हुआ और अर्जुन को प्रसन्नता बिलकुल न हुई। ५८-६४ तब कमललोचन ने कहा— "क्या बात है कि तुम लोग प्रसन्न होकर खुशी न मना रहे हो! जान लो कि मैं तो प्रसन्न हूँ। भीम ने जो कुछ किया अच्छा ही किया। युद्ध में शत्रुओं का नाश करना वीर, भूपालों का धर्म है। इस प्रकार की बातें सुनते हुए राजगण चलने लगे। प्रेक्षक देवगण भी घनश्याम की प्रशंसा करते

आशीर्व्वचनवुं चौल्लिच्चुळ्ळोरु
भूसुरन्मारोटुमोन्निच्चु पाण्डवर् ७१
सत्वरं कैनिलपुक्कोरनन्तरं ।
बुद्धियुं कॆट्टुपोय् भोजकृपादिकळ् ७२
पुक्कितु कौरवन्तन्नुटे कैनिल ।
अर्क्कनुमर्ण्णवं तन्निल् वीणीटिना- ७३
नॆल्लावरुं तेरिल्निन्निऱङ्ङीटिनार् ।
मल्लारितानुमरुळ्चॆय्तितन्नेरं ७४
मुन्निलिऱङ्ङ नीयर्ज्जुना पिन्नॆ ञा-
नुन्परकोन् पुत्रनुमप्पोळिऱङ्ङिनान् ७५
भक्तरिल् मुन्पनायुळ्ळ हनूमानुं
चित्तं तॆळिञ्ञिऱङ्ङीटिनान् भूमियिल् । ७६
नारायणनखिलेशन्तिरुवटि
तेरिल्निन्नप्पोळे पारिलिऱङ्ङिनान् । ७७
वॆन्तुनीऱायितु तेरुमतुनेरं
चॆन्तारटिवणङ्ङीटिनानर्ज्जुनन् ७८
ऎन्तितिन् कारणं नारायणा ! हरे !
चॆन्तारिल्मातुतन् पुण्यविलासमे ! ७९
वृत्रारिपुत्र ! विजय ! महारथ-
मित्रनाळुं मुदा कात्तितु ञानॆटो । ८०

हुए चले। पाण्डव तो दुन्दुभि, शंख आदि वाद्यों के घोष के साथ नन्दपुत्र नारायणसहित आशीर्वचन का उच्चारण करनेवाले ब्राह्मणों के साथ ६५-७१ तुरन्त अपने-अपने तंबू चले गये। भोज आदि नृप तो चित्तभ्रम होकर कौरव के तंबू में चले गये। सूर्य भी समुद्र में उतरा और सब रथों से उतरे। उस समय कृष्ण ने कहा कि अर्जुन ! तुम पहले उतरो तदनन्तर मैं उतरूँगा। तब अर्जुन उतरा। भक्तों में अगुआ हनुमान् भी प्रसन्न होकर भूमि पर उतरा। अखिलेश पूज्य नारायण तभी रथ पर से भूमि पर उतरे। उस समय रथ जलकर भस्म हो गया। तब अर्जुन ने चरणकमल की वन्दना करके पूँछा— हे नारायण ! हे हरे ! यह क्यों हुआ। हे लक्ष्मी के पुण्यविलास ! (कृष्ण ने कहा) ७२-७९ "हे वृत्रारिपुत्र ! विजय ! इतने दिन मैंने इस महारथ की रक्षा की। जो आग्नेय अस्त्र क्रुद्ध होकर भरद्वाजपुत्र ने फेंका था उसी से यह जल

अस्त्रमाग्नेयं भरद्वाजनन्दनन्
क्रुद्धनायेय्ततु कोण्टितु वेन्ततुं । ८१
नाटुं नगरियुं धान्यधनङ्ङळुं
वीटुं विजयवुं पाण्डवन्माक्कायि । ८२
नारिकळेप्परिपालिच्चुकोळ्ळुवा-
नारुमेयिल्ल पुरत्तिङ्कल् वेकाते । ८३
पोक युयुत्सु नमुक्कु नाळेच्चेल्ला-
मित्तेयुरक्कं नमुक्किविटेयल्ल ।
अन्यदेशत्तु पोकेणमेन्नादराल् । ८४
धर्म्मात्मजनोटु निर्म्मलन् माधवन्
धर्म्मस्थितिकरन्तानरुळ्चेय्तप्पोळ् ८५
पुण्यवानाय युधिष्ठिरन् चोल्लिनान्—
निन्नुटे कारुण्यमेन्येयेन्ताश्रयं ८६
ञङ्ङळे रक्षिच्चतारुमटीश्वर !
मंगलमूर्त्ते ! विजयनु सूतनाय् ८७
शत्रुक्कळ्चोन्नोरधिक्षेपवाक्यवुं
शस्त्रङ्ङळुमुळ्ळिलेटु पोरुत्ततुं ८८
ञङ्ङळोटुळ्ळ तिरुवुळ्ळमल्लयो ।
ञङ्ङळ्क्कु मटारुमिल्लिन्नु दैवमे ! ८९
गान्धारियाकिय मातावु ञङ्ङळे-
भ्रान्त्या शपिप्पतोळिच्चरुळेणमे । ९०

गया है। देश और नगर, धन और धान्य, घर और विजय और पाण्डवों की हो गयीं। अब नगर में नारियों की रक्षा के लिए कोई भी नहीं है, युयुत्सु जल्दी नगर चले। हम कल चलें। आज भी हम यहाँ न सोयेंगे। मुझे और कहीं जाना है" जब निर्मल, धर्म की स्थिति करने वाला, माधव ने इस प्रकार युधिष्ठिर से कहा तब पुण्यवान् युधिष्ठिर ने कहा— तुम्हारे कारुण्य के अतिरिक्त हमारा और क्या आश्रय है ? ८०-८६ हे ईश्वर ! तुम्हें छोड़कर और किसने हमारी रक्षा की ? हे मंगलमूर्ति ! अर्जुन का सूत बनकर शत्रुओं की गालियों और उनके शस्त्रों का तुमने जो सहन किया सो हमलोगों के प्रति प्रेम के कारण ही तो था। हे भगवान् ! हमारा और कोई नहीं है। कृपया ऐसा करो कि माता गान्धारी का भ्रम से हम लोगों के ऊपर शाप न पड़े। देवकी-देवी का सुपुत्र, ईश्वर, देवदेव, वसुदेवपुत्र ने कहा— हे दारुक ! रथ यहाँ

देवकीदेवीतिरुमकनीश्वरन्
देवदेवन् वसुदेवतनयनुं— ९१
तेरिङ्ङु कोण्टुवा दारुक ! पोक नां
नेरं कळयरुतेतुमिनियेंटो । ९२
हस्तिनमाय पुरत्तिनु पोकण-
मत्तल् तीर्त्तीटुवान् पाण्डवन्माक्कुं आन् । ९३
क्रुद्धनाकुं धृतराष्ट्रनृपनेंयु-
मन्तिकेचेंन्नु गान्धारियेंत्तन्नेंयुं ९४
कण्टु परयणमिन्नुतन्नेंयेंन्नु
कोंण्टल्नेर्वर्ण्णनुटनेंळुन्नळ्ळिनान् । ९५
भारतकर्त्ता पराशरनन्दनन्
परातेंचेंन्नु धृतराष्ट्रेंक्कण्टु । ९६
नाशं कुलत्तिनु नी वरुत्तायकेंन्नु-
माशु परञ्ञु बोधिप्पिच्चु पोकुन्पोळ् ९७
कृष्णनुं पौराणिकाचार्यनाकिय
कृष्णन्मलरटि कूप्पिनानादराल् । ९८
पिन्नेंयुळरि नगरमकंपुक्कु-
वन्दिच्चितु धृतराष्ट्रें माधवन् । ९९
कण्णुनीरोटे करञ्ञु करञ्ञुटन्
चेंन्नु तोंळुतितु गान्धारितन्नेंयुं । १००
मक्कळ् मरिच्चु दुःखिच्चु करञ्ञुत-
न्नुळ्ळकनं विट्टिरिक्कुं नृपन्तन्नुटें । १०१

लाओ ! हम चलें। अब समय नष्ट नहीं होना चाहिए। पाण्डवों का दुःख समाप्त करने के लिए मुझे हस्तिनपुर जाना है। ८७-९३ क्रुद्ध नृपति धृतराष्ट्र के और गान्धारी के पास जाकर आज ही सब कहकर समझाना है। ऐसा कहते हुए घनश्याम सिधारे। महाभारत के रचयिता पराशरपुत्र (व्यास) ने जल्दी जाकर धृतराष्ट्र का दर्शन किया। 'कुल का नाश न होने दो' ऐसा कहकर और समझाकर जब बिदा हो रहे थे तब कृष्ण ने सादर पौराणिक आचार्य कृष्ण (व्यास) के चरणों की वन्दना की। तदनन्तर नगर के अन्दर जाकर माधव ने धृतराष्ट्र की वन्दना की। आँसू गिराते हुए तुरन्त अन्दर जाकर गान्धारी को प्रणाम किया। ९४-१०० पुत्रों के नाश होने के दुःख से रो-रोकर धैर्य खो

दुःखं केट्टुप्पतिन्नाशु चोल्लीटिनान्
पुष्करनेत्रन् पुरुषोत्तमन् परन्— १०२
नित्यमल्लेतुमिस्संसारमोक्कणं
नित्यमाकुन्नतु निश्चयमीश्वरन् । १०३
मुन्नमे वन्नु ञान् निन्नोटु मन्नवा !
चोन्नेनिवण्णंवरुमेन्नु सादरं । १०४
नाट्टिलेङ्ङानुमिल्लङ्ङळ्तोरुं नट-
न्नूट्टिलुमुण्टु पोरुत्तुकोळ्ळामेन्नुं । १०५
निन्नोटुतन्नेयिरन्नितु पाण्डव-
रन्नतु तोन्नीलयल्लो विधिमतं । १०६
इन्नुं निनक्कु ञान् नल्लतु चोल्लुव-
नोन्निच्चिरिक्क नी पाण्डवन्मारोटुं । १०७
निङ्ङळ्क्कवरे गतियेन्नुरय्क्कणं
निङ्ङळोळिञ्ञवर्क्कुं गतियिल्लेतुं । १०८
नल्लतवर्क्कुवरुंप्रकारं निन-
क्कल्ललकन्नु गान्धारियुमायिनि । १०९
कोल्लुमवरेयुमश्वत्थामाविनि-
च्चेल्लायिकल् ञानङ्ङु निर्णयं भूपते । ११०
आरुमे पिन्नेयोरुगतिकूटाते
पारिलिरिक्कुमाऱाकुं भवानिनि- १११
येन्नेयतिन्नयच्चीटुकिल्च्चेन्नु ञान्
मन्नवा ! पाण्डुसुतन्मारे रक्षिप्पन् । ११२

बैठे हुए राजा के दुःख को दूर करने के लिए कमललोचन, पर पुरुषोत्तम ने कहा। स्मरण रहे कि यह संसार नित्य नहीं है, निस्सन्देह एकमात्र ईश्वर ही नित्य है। हे राजन् ! मैंने पहले ही आकर तुमसे सादर कहा था कि सब इस प्रकार होगा। "हम लोग देश के घर-घर घूमकर कहीं भी खाकर सहन कर लेंगे" ऐसा कहते हुए पाण्डवों ने तुम ही से याचना की पर विधि के कारण तुमने यह न स्वीकार किया। आज भी मैं तुम्हारा भला कह रहा हूँ कि पाण्डवों के साथ रहो। १०१-१०७ वे ही तुम लोगों की गति हैं और तुमलोगों को छोड़कर उनकी भी कोई गति नहीं है। अतएव तुम गान्धारी के साथ ऐसा करो कि उनका भला हो। अगर मैं न जाऊँगा तो निस्सन्देह अश्वत्थामा उनको मारेगा। तब तो तुम्हें बिना किसी भी आश्रय के इस पृथिवी पर अकेला रहना

अङ्ङनेयार्केङ्किलेन्तवनु चोन्नान्
मंगलनाकिय कृष्णनुमन्तेरं ११३
यात्रयु चोल्लि विरवोटु वन्नितु
पात्थादिकळ् मेवुं गोमतितन्करे ११४
पापि सुयोधनन् कालुमोटिञ्ञु स-
न्तापं कलर्न्नु किटक्कुन्नतुनेरं । ११५
कुण्ठतयोटु करञ्ञु वरुन्नतु
कण्टितु सञ्जयन्तन्नेयुमाकुलाल् । ११६
चेन्नु तलोटियरिकेयिरुन्नवन्-
तन्नेयणच्चु तळुकी सुयोधनन् । ११७
कण्णुनीरालोल वीळुन्नतु कण्टु
खिन्नतयोटु तुटच्चितु सञ्जयन् । ११८
मन्नवन् गावल्गणियुटे कण्णुनीर्
मन्दमन्दं तुटच्चीटिनानन्नेरं । ११९
युद्धप्रकारवुं मारुति चेय्तोरु
वृत्तान्तवुमरियिच्चु सुयोधनन् । १२०
मानलोभादिकळेरेयुण्टाकयाल्
ञानोरु कारणमायेनितिनेल्लां । १२१
कण्णुंपोटिञ्ञु वयस्सुपुक्केट्टवुं
खिन्ननाय् मक्कळुमोक्क मरिच्चु तन्- १२२

पड़ेगा। हे राजन्! आज्ञा हो तो मैं जाकर पाण्डवों की रक्षा करूँगा।" धृतराष्ट्र ने कहा— "अच्छा तो ऐसा ही हो!"। तब मंगलमूर्ति कृष्ण बिदा होकर वहाँ सिधारे जहाँ गोमती के तट पर पाण्डव रह रहे थे। १०८-११४ इतने में जब पापी सुयोधन टूटे जाँघ दुःखित होकर पड़ा हुआ था तब वहाँ दुःख से रोता हुआ सञ्जय पहुँचा। और प्रेम से उसके पास बैठ गया और सुयोधन ने भी उससे छाती लगाया। उसके आँसू गिरते देखकर सञ्जय ने खेद के साथ उनको पोंछा। उस समय राजा (सुयोधन) ने गावल्गणि (संजय) के आँसुओं को धीरे-धीरे पोंछा। सुयोधन ने युद्ध की गति और भीम के किये काम उसको सुना दिये। मान, लोभ आदि दोष अधिक मात्रा में होने के कारण मैं इस स्थिति का निमित्त हुआ। ११५-१२१ अन्धे और अतिवृद्ध, दुःखित, अपने बच्चों के निधन के बाद अपने राज्य को परतन्त्र देखकर विषण्ण, नैराश्य में

नाटुं परवशप्पॆट्टु विषण्णना-
याटल् पूण्टोरु पितावुतन्नोटु नी १२३
चॊल्लुक पोरिल् मरिच्चितु आनॆन्नु
चॊल्लॆळुमॆन्नुटॆ मातावुतन्नोटुं । १२४
मारुतियॆन्नॆच्चतिच्च प्रकारवुं
नेरे पऱक पिताक्कन्मारोटुमे । १२५
विश्वासमुळ्ळॊरु दूतनॆ विट्टुट-
नश्वत्थामादिकळोटुमऱियिक्क । १२६
ऎन्नु पऱञ्ञङ्ङयच्चानवनॆयुं
पिन्नॆटमॆन्तु पऱयावतीश्वरा । १२७
प्रेतपिशाचनिशाचरन्मारॊटुं
भूतवेताळकूळिप्पटतन्नोटुं १२८
नाय्क्कळ् कुऱुनरिक्कूट्टं कळ्कुकळ्
नोक्कियुं वाय्क्कॊळ्वतिन्नायटुक्कयुं १२९
गन्धिच्चु गन्धिच्चु वन्नु कटिप्पति-
न्नन्तिके निल्क्कयुं वीर्प्पुकळ् पार्क्कयुं १३०
कालुं करवुमिळक्कुन्ननेरत्तु
नालञ्चटियकन्नन्पोटु वाङ्ङियुं १३१
कूरिरुट्टिल् तुणयारुमे कूटातॆ
पारिल् किटन्नु विधिबलमॆन्नोर्त्तु । १३२
नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे !
नारायण ! हरे ! ऎन्नॆ पऱयावू । १३३

निमग्न मेरे पिता से और मेरी विख्यात माता से भी कह दो कि मैं युद्ध में मरा हूँ। मेरे माता-पिता से सीधे कह दो कि भीम ने मेरी वञ्चना की। एक विश्वस्त दूत के द्वारा अश्वत्थाम आदिकों को समाचार भेज दो। ऐसा कहकर उसको (सञ्जय को) रवाना कर दिया। हे ईश्वर! और क्या कहा जाय? १२२-१२७ प्रेत, पिशाच, निशाचर, भूत, वेताल, अन्य नक्तंचर समूह इनके साथ और जब कुत्ते, सियाल, गीध देख-देखकर खाने के लिए निकट आते थे और सूंघ-सूंघकर काटने के लिए निकट खड़े होते थे और शरीर को फूलते देखकर और हाथ पैर के हिलने के समय चार-पाँच कदम पीछे को हटते थे, घोर अन्धकार में बिलकुल अकेला पृथिवी पर पड़ा था और मन ही मन कहता था— 'यह सब विधि का ही

वेणमॆन्ऩाकिलटुत्तनाळ् चॊल्वनॆ-
न्ऩानन्दमोटिरुन्ऩाळ् किळिप्पैतलु । १३४

शल्यं समाप्तं

बल है' नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे ! इससे अतिरिक्त क्या कहा जाये ! 'अगर और सुनना है तो कल सुनाऊँगा' ऐसा कहते हुए शुकी आनन्द से रही । १२८-१३४

।। शल्यपर्व समाप्त ।।

सौप्तिकं

नारायण ! जय, नारायण ! जय
नारायण ! जय, वरदहरे ! १
मायामयबहुलीलामय कथ
नीयायतु पऱकिनियुमॆटो । २
नानारसमयवाणीगुणगण-
पानाधिकसुखजनहृदये ३
बाले शुककुलमौले वद वद
कालं कळयरुतिनि वॆरुते । ४
आलंबनमनुकूलं त्रिभुवनं-
मूलं परिणत विबुधकुलं ५
बालं जलधरनीलं तिलकित-
फालं मुनिनतपदकमलं ६

सौप्तिक पर्व

हे नारायण ! जय हो, हे नारायण जय हो ! हे नारायण ! वरद ! जय हो ! हे शुकबाले ! हे शुककुल के अलङ्कार ! विविध रसों से पूर्ण वाणी के गुणगण के पान से सुखी जनहृदय के लिए मायामय और लीलामय कथायें और सुनाओ, समय मत खोओ ! हे प्रियमित्र ! उस अनुकूल आलंबन को, त्रिभुवन के मूल को, देवों के कुल के विकास को, बाल,

कालं बहुधृतलीलं सुमधुर-
शीलं परिचित पशुपकुलं ७
सालंकृतमखकोलं भृशमन-
कालं प्रियसख भज विमलं । ८
नरनारायणन्मार् चरणांबुजं कूप्पि-
सरसं चॊन्नाळ् किळि तदनु मनोहरं । ९
वॆरुते कालं कळञ्ञीटातॆ कृष्णन्तन्टॆ
चरितामृतं चॊल्वान् मटियिल्लिनिक्केतुं । १०
पार्त्थसारथ्यं चॆय्तु धात्रितन् भारं तीर्त्त
मूर्त्तियां विष्णु परमात्मावु जगन्मयन् ११
दैत्यनाशनन् पुरुषोत्तमनोत्तिन् पर-
मार्त्थमाय् विळङ्ङीटुं भक्तलोकार्त्तिहरन् १२
सर्व्वलोकङ्ङ्ळुटॆ जीवनाकिय परन्
दुर्व्विनीतन्मारुटॆ गर्व्वनाशनकरन् १३
शर्व्ववन्दितन् परन् शरण्यन् शंभुमूर्त्ति
निर्व्विकारात्मा विभु निर्व्विकल्पात्मानन्दन् । १४
अर्ण्णोजविलोचनन् कर्ण्णारिप्रियसखि
तर्ण्णकपालकन् दुग्धार्ण्णवात्मजावरन् १५
निर्ण्णयं तिरञ्ञोळं कण्टुकूटात देव-
नॆन्नुटॆयुळ्ळिलिरुन्नरुळुं जगन्नाथन् १६

घनश्याम, माथे पर तिलक लगाये हुए, मुनियों के वन्दित पदकमलवाले को काल को, अनेक लीलायें करनेवाले को, सुमधुर शीलवाले को, गोपकुलों के परिचित को, यज्ञमूर्ति को यथा समय ध्यान करो । १-८ नर और नारायण के चरणों की वन्दना करके शुकी ने तदनन्तर सरस और मनोहर ढंग से सुनाया । विना समय खोये कृष्ण के चरितामृत पिलाने में मेरा कोई आलस्य नहीं है । अर्जुन का सारथ्य करके पृथिवी का भार जिसने हल्का किया वह विष्णुमूर्ति, परमात्मा जगन्मय, दैत्यों के नाशक, पुरुषोत्तम, वेदों के सार के रूप में विराजनेवाले, भक्त लोगों का दुःख दूर करनेवाले सभी लोकों का जीवनभूत, पर, दुर्विनीतों के गर्व का नाश करनेवाले शिव के वन्दित, पर, शरण्य, शंभुमूर्त्ति, निर्विकार, विभु, निर्विकल्प आनन्दवाले, कमललोचन, कर्णारि (अर्जुन) का प्रियमित्र, गोप, लक्ष्मी का वर, ९-१५ ढूँढने पर भी अलभ्य देव, मेरे दिल में विराजमान जगन्नाथ, एक और अद्वितीय ब्रह्म है, जान लीजिये, जो कुछ भी दिखाई

रण्टिल्लातोन्नां परब्रह्ममेन्नरिञ्ञालुं
कण्टतोक्कयुं तानाय् निरञ्ञु वसिप्पवन् । १७
कुण्ठचेतसामोट्टुं कण्टुकूटातवन् वै-
कुण्ठन् कौस्तुभकण्ठन् सेवितशितिकण्ठन् । १८
चिन्तिच्चालोरुत्तर्क्कुमरिञ्ञुकूटातवन्
चिन्तिक्कुन्नवर्क्कु नित्यानन्दं कोटुप्पवन् । १९
ऍन्तोन्नु परयेण्टतेन्नु ञानरिञ्ञति-
ल्लन्धत्वालुन्मत्तनेप्पोलेयाय्च्चमञ्ञु ञान् । २०
मायया सृष्टिस्थितिसंहारकर्त्ता जग-
न्नायकन्तन्टे लीलपरञ्ञुतुटङ्ङुन्पोळ् २१
पेयेन्नु परञ्ञीटुं मूढरायुळ्ळजनं
माययिल् मरञ्ञु नेरेतुमे काणाय्कयाल् । २२
अङ्ङनेयुळ्ळ जगन्मङ्गलन् वासुदेवन्
मंगलदेवतयेस्संगिच्चीटिन देवन् २३
मङ्ङीटातोरु परमानन्दन् श्रीगोविन्द-
निङ्ङने वृकोदरन्तन्नेक्कोण्टतुकालं २४
दुरियोधनन्तन्टे तुटयु तच्चुपोट्टि-
च्चरियोहरियेन्नु काणिकळ् चोल्लुंनेरं । २५
करुणाकरन् कमलेक्षणन् कामप्रदन्
परमपुमान् परमात्मावु परब्रह्मं । २६

देता है उसी के रूप में विराजमान है। वह मूर्खों के लिए बिलकुल अदृश्य है, वह वैकुण्ठ हैं, कण्ठ में कौस्तुभ धारणकरनेवाले हैं, शिव की सेवा करनेवाले हैं। विचार करने पर जो जाना नहीं जा सकता है और जो मनन करनेवालों को आनन्द देनेवाला है। मैं नहीं जानता हूँ कि क्या कहूँ अन्धा होने के कारण मैं पागल सा हो गया हूँ। अपनी माया के द्वारा सृष्टि, स्थिति और संहार करनेवाले जगन्नायक की लीलाओं का जब मैं वर्णन करने लगता हूँ तब मूर्खजन मुझे पागल कहते हैं, क्योंकि माया में छिपा तथ्य अदृश्य है। १६-२२ इस प्रकार का जगन्मंगल देव वासुदेव जो मंगल देवता (लक्ष्मी) के पति हैं अक्षय परमानन्दवाले श्रीगोविन्द ने भीम के द्वारा दुर्योधन की जाँघ को मार तुड़वाया, जिसे देखकर प्रेक्षकों ने 'हे हरे ! हे हे हरे !' की आवाज़ निकाली। तब करुणाकर, कमललोचन, कामप्रद परमपुरुष, परमात्मा,

धर्म्मस्थापनकरन् चिन्मयन् कर्म्मसाक्षि
जन्मनाशादिहीनन् भक्तजन्मार्त्तिहरन् । २७
धर्म्ममानसनाय धर्म्मजन्माविनोटुं
निर्म्मलन्माराय् मेवुं मट्टुळ्ळ जनत्तोटुं २८
कैनिलपुक्कु देवन् कैतवमूर्त्ति कृष्णन्
कैपिटिच्चर्ज्जुनादिवीररोटरुळ् चेय्तु— २९
अय्वरुंकूटि निङ्ङळ् पोरिकेन्नोटुकूटि
कैवन्नु जयमेङ्किलन्निलं नीङ्ङीटणं । ३०
पैशाचभूतप्रेतपूर्ण्णमामटल्क्कळं
कैवेटिञ्ञिट्टुवेणं रात्रियिलुरङ्ङुवान् । ३१
कैवल्यं कळल् तोळुतीटुवोर्क्करुळीटुं
दैवत्तेत्तुणयाक्किक्कोण्टवर्कळुं पोयार् । ३२
कारुण्यमूर्त्तियोटुं कूटवे पाण्डुपुत्रर्
धीरतयोटु चेन्नु गोमतीतीरं पुक्कार् । ३३
मारुतियोटु पोरुतातुरनायि वीणु
पारतिल् मरियाते किटन्न सुयोधनन् । ३४
तन्नुटेयवस्थकळोटिच्चेन्नरियिच्चु
खिन्नतयोटु दूतरश्वत्थामादियोटुं । ३५
अन्नेरं द्रोणजनुं कृपरुं भोजन्तानु-
मोन्निच्चु वन्नु दुरियोधनन्तन्नेक्कण्टु । ३६
कालोटिञ्ञवनियिल् प्राणवेदनयोटे
मालियन्निटुं नृपन्तन्नेक्कण्टवर्कळुं । ३७

परब्रह्म, धर्म का स्थापन करनेवाले, चिन्मय, कर्मसाक्षि, जन्म और नाश से रहित, भक्तों का दुख हरनेवाले ने धर्ममानस युधिष्ठिर के साथ और अन्य निर्मल जनों के साथ तंबू में प्रवेश किया और हाथ पकड़ते हुए अर्जुन आदियों से इस प्रकार कहा— आप पाँचों मेरे साथ चलो। विजय तो मिल गयी, पर इस युद्धभूमि से दूर होना चाहिये। २३-३० युद्धक्षेत्र तो पिशाच, प्रेत और भूतों से भरा है। इससे अलग होने के बाद ही रात को सोना चाहिये। चरणसेवा करनेवालों को कैवल्य प्रदान करने वाले देव के साथ वे गये। पाण्डव धैर्य के साथ कारुण्यमूर्त्ति के साथ गये और गोमती के तट पर पहुँचे। भीम से युद्ध करके पीड़ित होकर जो दुर्योधन रणभूमि में जिन्दा पड़ा था उसका हाल दूतों ने दौड़कर

कालदोषत्ताल् वन्नतोरोन्ने परकयु-
मोलोल वीळुं कण्णीरोट्टु तुटय्क्कयुं । ३८
अय्यो ! काण् विधिबलमेन्नेरे विलपिच्चुं
मेय्येरि नोन्तुनोन्तु कैकालुं वशंकेट्टु ३९
पय्यवे वरुन्नोरु वेदन पारमय्यो
कैययच्चरचनेत्तळुकियिरुन्नुटन् । ४०
मेय्येट्टुत्तङ्कत्तिन्मेल् चेर्त्तितिन् पकरं नां
चेय्यणमेन्नुमिनि किंफलमल्लयाय्किल् । ४१
दुःखिक्कुन्नतुनेरं गान्धारितनयनु-
मक्षिकळ् तुटच्चवर्तङ्ङळोटुरचेय्तु— ४२
दुष्कर्म्मवशालितु वन्तुवेन्निरिक्किलुं
दुःखवुं चुरुक्कि ञान् चोल्वतु केळ्क्कवेणं । ४३
मायत्ताल् मरिच्चितु भीष्मद्रोणादिकळुं
मायत्तालेन्टेयूरु तकर्त्तु भीमन्तानुं । ४४
न्यायत्ते निरूपिच्चु निङ्ङळुमितिन्नोरु-
पायत्ताल् प्रतिक्रियचेय्यामेङ्किलो चेय्विन् । ४५
प्राणन् पोमतिन्मुन्पे निङ्ङळेक्काण्कमूल-
मानन्दमिनिक्कुळ्ळिलेटवुमुण्टाय्वन्नु । ४६

जाकर अश्वत्थामा आदिकों को बतला दिया । तब अश्वत्थामा, कृप और भोज ने साथ आकर दुर्योधन का दर्शन दिया । ३१-३६ टूटे जाँघ पृथिवी पर पड़े प्राणवेदना का और दुःख का अनुभव करते हुए राजा को देखकर उन्होंने कालदोष से हुई भिन्न-भिन्न घटनाओं को सुनाया और गिरती हुई आँसू की बूंदों को पोंछा । 'हा हन्त ! देखो विधि का बल !' ऐसा बहुत विलाष किया उसके हाथ पैर बिलकुल बेकार हो गये थे और उसका धीरे-धीरे चढ़नेवाला दर्द भी बहुत अधिक था । इसलिए उन्होंने राजा को हाथ से मालिश की । उसके शरीर को अङ्क में लेकर कहा 'हमको अब इस का बदला लेना है नहीं तो हमारे रहने का क्या फल है । जब वे इस प्रकार अपना दुःख प्रकट कर रहे थे तब गान्धारीपुत्र (दुर्योधन) ने आँसू पोंछकर कहा— यद्यपि यह सब मेरे ही कुकर्मों से हुआ फिर भी अपना दुःख दबाकर मेरा कहना सुन लीजिये । ३७-४३ भीष्म, द्रोण आदि माया से मरे और भीम ने मेरी जाँघ को माया से ही तोड़ डाला । आप लोग न्याय पर विचार करके अगर इसकी प्रतिक्रिया का उपाय सोच निकाल सकते हैं तो कीजिये । इससे पहले मेरे प्राण निकल जायेंगे ।

निङ्ङळ्क्कुं परिभवं चेर्त्त पाण्डवर्तम्मे
निङ्ङळ्चेन्नॊटुक्कणमेतुमे वैकीटाते । ४७
ऎन्नु चॊल्लिय मन्नन्तन्नुटे दुःखं कण्टु
तन्नुटे तातन्तन्नेक्कॊन्नतु निरूपिच्चु । ४८
तन्नुळ्ळिल् निरूपिच्चानन्नेरमश्वत्थामा-
विन्नितु योग्यमत्रे वेण्टुवोन्नॆन्नु नूनं । ४९

अश्वत्थामाविन्टे निश्चयं

मन्नव ! शत्रुक्कळे कॊन्नु ञान् परिभव-
मिन्नु तीर्क्कुन्नतुण्टु निर्ण्णयमॆन्नान् द्रौणि । १
ऎङ्किलो कृपाचार्यनौषधमन्त्रङ्ङळाल्
मंगलंवरुमारु रक्षकळ् चेय्तु नन्नाय् । २
चेय्यणं सेनापतियायभिषेकमॆन्नाल्
मय्यल् तीर्न्नीटुं गुरुपुत्रनॆन्नितु नृपन् । ३
चॊल्लियवण्णंतन्ने चेय्तवर् मूवरुमाय्
नल्ल पाण्डवन्मारुटे पटवीट्टिनु चॆन्नार् । ४
गाण्डीवधरनाय फल्गुनन्मुन्पायुळ्ळ-
पाण्डवन्मारॆप्पेटिच्चटुत्तुकूटाञ्ञवर् ५
सन्ध्यावन्दनं कळिच्चटवितन्निल् पुक्कु
चन्तमुळ्ळोरु पेरालुतन्नुटे चुवट्टिल् पोय् ६

आप लोगों को देखने से मुझे बड़ा आनन्द हुआ है। आप लोग जाकर पाण्डवों को जल्दी समाप्त कीजिये जिन्होंने आपको भी नीचा दिखाया है। इस प्रकार कहनेवाले राजा का दुःख देखकर और अपने पिता के वध का स्मरण करके अश्वत्थामा ने अपने मन में सोचा— 'यह उचित होगा कि आज मैं आवश्यक काम करूँ'' । ४४-४९

अश्वत्थामा का निश्चय

द्रौणि (अश्वत्थामा) ने कहा— हे राजन् ! आज मैं अवश्य शत्रुओं को मारकर अपने परिभव को समाप्त करूँगा। कृपाचार्य ने औषध और मन्त्रों से रक्षाएँ की ताकि मंगल हो जाय। राजा ने कहा— अच्छा ! तो दुःख को दूर करनेवाले गुरुपुत्र को सेनापति के पद में अभिषेक किया जाय ! उन तीनों ने इस कथन के अनुसार किया और अच्छे पाण्डवों से

आलस्यत्तोटु किटन्नुरङ्ङियतुनेरं
मालुळ्ळल् मुळुक्कयालश्वत्थामाविनप्पोळ् ७
वन्नतिल्लेतुं निद्रा चिन्तयुण्टाकमूल-
मन्नेरमुणर्न्निरुन्नवनुमोन्नु कण्टा- ८
नन्धतपूण्टु पकल् मेविन कूमन्तन्ने-
यन्धचित्तन्माराय काकन्मारोरुमिच्चु ९
शत्रुतनिरूपिच्चु कौत्तिनानतुनेर-
मेत्रयुमत्तल्पूण्टु चमञ्ञानतुमूलं । १०
रात्रियिल् काकन्मार्क्कु नेत्रङ्ङळ् काणापिन्ने
रात्रियिल् काणुमल्लो कूमनु सुखंपोले । ११
मुन्नेतु वच्चुकोण्टिट्टन्नेरं कूमन् चेन्नु
सन्नद्धभावत्तोटु रोषत्ते पोराय्कयाल् १२
काकन्मारुरङ्ङुन्पोळ् कौत्तिक्कोन्नोटुक्किना-
नाकुन्पोळ् परिभवं वीळुक्केन्नतेवरू । १३
अन्नतु कण्टु गुरुनन्दननश्वत्थामा-
वन्नेरं भोजकृपन्मारेयुमुणर्त्तिनान् । १४
कण्टतिल्लयो निङ्ङळ् कूमन्टे धर्म्मं पक-
लुण्टाय परिभवं वीळुन्नोनितुनेरं । १५
ईवण्णं चेय्विनेन्नु नम्मोटोरुपदेशं
दैवत्तिन् नियोगत्ताल् चेय्कयायतुमेटो । १६

युद्ध करने निकले। गाण्डीवधारी अर्जुन आदि के डर से उनके निकट न जा सकने से वे अपना सन्ध्यावन्दन करने के बाद बन के अन्दर गये और एक बड़े वटवृक्ष के तट पर अलस होकर सोने के लिए लेट गये। पर दुःखित होने के कारण अश्वत्थामा को नींद नहीं आयी और वह चिन्ता में मग्न हुए। जागते अश्वत्थामा ने उस समय यह देखा। १-८ दिन में अन्धे उल्लू पर अन्धचित्त कौवों ने मिलकर और शत्रु बनकर आक्रमण किया था और वह बहुत ही दुःखित हुआ था। कौए रात को देख नहीं सकते हैं और उल्लू तो रात को अच्छी तरह से देख सकते हैं। इसलिए पहले के वैर को दिल में रखते हुए उल्लू ने कोप न सह सकने से रात को सोये हुए कौवों को काट-काटकर समाप्त कर दिया। जब हो सकता है तभी तो बदला लिया जा सकता है। यह देखकर अश्वत्थामा ने भोज और कृप को जगा दिया। तुम दोनों ने देखा नहीं इस उल्लू का धर्म जिसने दिन में सहे पराजय का अब रात को बदला लिया। ९-१५

युद्धंचेय्तेटं तळर्न्नुरङ्ङुं वैरिकळे-
ब्बद्धरोषेण चेन्नु कोल्लुविन् निङ्ङळेन्नान् । १७
दोषमिल्लेन्नुवन्नु पोकनामिप्पोळ्त्तन्ने
शेषिच्च पाण्डवरेयोटुक्किकक्कळवानाय् । १८
नेरोटे पकल चेन्नालावतिल्लवरोटु
कारणं नारायणन् कात्तुकोण्टीटुमल्लो । १९
इत्तरमश्वत्थामा चोन्नतु केट्टु कृप-
रुत्तरमुरचेय्तु सत्वरं निरूपिच्चु । २०
रात्रियिल् चतिच्चु नां कोल्लुवान् चेन्नालतु
कीर्त्तिकेटुण्टामत्रे साध्यवुमल्ल नम्माल् । २१
ईश्वरनवरुटे पाङ्ङेन्नु वन्नतिप्पो-
ळाश्रयमाय दुरियोधनन् वीणानल्लो । २२
भाग्यमिल्लातवर्क्कुवेण्टि वलकळ् चेय्ताल्
योग्यमाय्वन्नुकूटा पार्क्कोणमिनियुं नां । २३
विदुरर् सञ्जयनुं धृतराष्ट्ररुं पिन्ने
मृतिवन्नटुत्तोरु मन्ननुं मट्टुळ्ळोरुं २४
कूटि नां निरूपिच्चु नाळेयामितु पक्षे
कूटलर्काला गुरुनन्दनायेन्नु कृपर् । २५
अश्वत्थामावु कोपिच्चन्नेरमुरचेय्ता-
नच्छनेक्कोन्न धृष्टद्युम्ननुं बन्धुक्कळुं २६

"इस प्रकार तुम लोग भी करो" ऐसा एक उपदेश इसने दैव के नियोग से हमलोगों को दिया है। उसने कहा— "बहुत युद्ध करने से थककर सोनेवालों को बड़े क्रोध के साथ मार डालो"। यह सिद्ध है कि इसमें कोई दोष नहीं है। इसलिए अवशिष्ट पाण्डवों का वध करने के लिए हम चलें। अगर हम दिन में खुलकर चलेंगे तो काम नहीं बनेगा क्योंकि नारायण उनकी रक्षा करेंगे। अश्वत्थामा की यह बात सुनकर कृप ने सोचकर तुरन्त उत्तर दिया-- "अगर हमलोग रात को मारने चलेंगे तो हमारा अपयश होगा और काम भी असाध्य होगा। अब स्पष्ट है कि ईश्वर उनके पक्ष में है और हमारा आश्रय दुर्योधन भी गिरा है। १६-२२ भाग्यहीनों के लिए अगर काम किया जाय तो वह सफल नहीं होगा। इसलिए हमलोग ज़रा ठहरें। विदुर, सञ्जय, धृतराष्ट्र और आसन्नमरण राजा और अन्य जनों के साथ हम विचार करें और कल कुछ करें हे शत्रुओं के नाशक गुरुपुत्र!" ऐसा कृप ने कहा। तब

ञानोरु पुरुषनिङ्ङायुधमोटुं कूटि
प्राणनोटिरिक्कुन्पोळ् जीविप्पानयप्पनो ? २७
स्नानभोजनयानमैथुनादिकळिलुं
मानमोटरिकळे निग्रहिच्चीटामेन्नाल् २८
एतुमे दोषमिल्ल वोकुन्नेनेन्नानव-
नेतुमे मटिक्केण्टा नटन्नीटुकयेङ्किल् । २९
मरिप्पान् मटियिल्ल यङ्ङळ्क्कुमितुकालं
करुत्तु कुडकिलुमेन्नवरुरचेय्तार् । ३०
भोजनुं कृपरुमायन्नेरं गुरुसुतन्
व्याजेन कोल्वान् चेन्नु कैनिलयटुत्तप्पोळ् ३१
वेताळभूतप्रेतपैशाचकूळिकळाल्
भीति पूण्टटुत्तुकूटाञ्ञितु पोक्कळत्तिल् । ३२
शत्रुक्कळाय पाण्डुपुत्रन्मारेयुं पेटि-
च्चेत्रयुं प्रयोगिच्चु शस्त्रङ्ङळश्वत्थामा । ३३
नान्दकशरशार्ङ्गशंखचक्रादिपूण्टा-
नन्दनन्दनन्मारे काणायितसंख्यमाय् । ३४
विष्णुमूर्त्तिकळाले निरञ्ञु युद्धभूमि
विस्मयिच्चश्वत्थामा पेटिच्चु नाणंपूण्टान् । ३५
नल्लतुमाकात्ततुं वेण्टतु वेण्टात्ततुं
नल्लनां गुरुसुतनोन्नुमे तोन्नीतिल्ल । ३६

अश्वत्थामा कुपित होकर बोला-- जब तक मैं एक पुरुष होकर सशस्त्र और जिन्दा हूँ तब तक पिता के घातक धृष्टद्युम्न और उसके बन्धुओं को कैसे जीने दें ? स्नान, भोजन, गमन, मैथुन आदि कार्यों में शत्रुओं को मान के साथ निग्रह किया जा सकता है इसमें कोई दोष नहीं है, इसलिए मैं जा रहा हूँ। तुमलोग भी इसमें बिना हिचक के आगे चलो। २३-२९ तब उन्होंने कहा— शक्ति कुछ कम अवश्य हो गयी है फिर भी हमलोग मरने के लिए तैयार हैं। तब भोज और कृप के साथ अश्वत्थामा कपट से मारने के लिए निकला। जब उनके तंबू के पास पहुँचे तब वेताळ, भूत, प्रेत, पिशाच आदियों के डर से रणभूमि के निकट न जा सके। शत्रु पाण्डवों से डरकर अश्वत्थामा नें शस्त्रों का प्रयोग किया। तब नान्दक, शार्ङ्गशर, शंख, चक्र आदि धारण करनेवाले असंख्य नन्दनन्दन दिखाई दिये। सारी युद्धभूमि विष्णुमूर्तियों से भर गयी। अश्वत्थामा विस्मित हुआ, डर गया और दब गया। अच्छे गुरुपुत्र को कुछ भी न

मातुलन् परञ्ञतु केळातॆ नटिच्चुपो-
न्नातुरनायितिप्पोळ् ञानॆन्नु गुरुसुतन् । ३७
इन्द्रियङ्ङळॆयॆल्लामटक्कि प्राणायामं
मन्दमॆन्नियॆ चॆय्तु शिवनॆ ध्यानंचॆय्ता- ३८
नन्तर्योगत्तॆत्तुटङ्ङीटिनान् विप्रोत्तम-
नन्तिके काणाय्वन्नु शङ्करमाहात्म्यवु । ३९
मन्नेरं वेदिमद्ध्ये कत्तुन्नोरग्नि तन्निल्-
निन्नुण्टायितु चिल शैवभूतङ्ङळॆल्लां । ४०
निटिलक्कण्णुं नल्ल कुटिलभ्रूक्कळुमा-
भ्रुकुटीकराळवुं कठिनदन्तङ्ङळुं ४१
धूसरकेशङ्ङळुं भासुरश्मश्रुक्कळुं
मेदुरमुखङ्ङळुं भीषणवेषङ्ङळुं
दारुणशूलङ्ङळुं कैक्कॊण्टु काणाय्वन्नु । ४२
मारणदेवतकळाकिय मूर्त्तिकळुं
कारणनाय पुरनाशनमूर्त्तियेयुं ४३
विश्वनाथनॆक्कण्टोरश्वत्थामावुतानुं
निश्श्वासमोटु वरुमश्रुक्कळतुं तुट- ४४
च्चर्च्चनंचॆय्तु वीणु नमस्कारवुं चॆय्तु
विश्वासभक्तियोटुं स्तुतिच्चानतुनेरं । ४५
शङ्कर ! जयजय ! चन्द्रशेखर ! जय !
पङ्कजशररिपो ! हुंकृतिहर ! जय ! ४६

सूझा-- न अच्छा, न बुरा, न उचित और न अनुचित । तब गुरुपुत्र ने कहा-- "मैंने मामा की बात न सुनी और अपने ही मन की बात करी । अब तो परेशान हूँ" । ३०-३७ इन्द्रियों का निग्रह करके और ज़ोर से प्राणायाम करके शिवजी का ध्यान किया । इस प्रकार विप्रोत्तम ने अन्तर्योग प्रारम्भ किया और निकट ही में शङ्कर का माहात्म्य दिखाई दिया । वेदि के बीच जलनेवाली आग से कई शैव भूतों का प्रादुर्भाव हुआ । माथे की आँख, कुटिल भौहें, घोर भ्रुकुटि, कठिन दाँत, धूसर केश, भासुर श्मश्रु, मेदुर मुख और भीषण वेष, और दारुण शूल धारण करनेवाला दिखाई दिया । तब विश्वनाथ को देखनेवाले अश्वत्थामा ने मारणदेवताओं की मूर्तियों को और उन सबके कारण पुरनाशन की मूर्ति को निःश्वास के साथ गिरनेवाले आँसुओं को पोंछते हुए पूजा की और पैरों पड़कर विश्वास और भक्ति के साथ इस प्रकार स्तुति की । ३८-४५

शंभोशाश्वतपरभूतेश ! पुरहर !
कुंभिपाकार्त्तिहर ! गिरिश ! गंगाधर ! ४७
गिरिजावर ! जय ! गिरिमन्दिर ! जय !
परमेश्वर ! जय परशुधर ! जय ! ४८
चतुराननतचरण ! जयजय !
सरसीरुहदळनयनप्रिय ! जय । ४९
कालनाशन ! जय ! धूर्ज्जटे ! पशुपते !
नीललोहित ! भव ! फाललोचन ! जय ! ५०
पालय दीनमेनं शरणागतं शिव !
पालय निरन्तरं त्रस्तमत्यन्तभक्तं । ५१

अश्वत्थामाविन्टॆ पराक्रमं-पाञ्चालीपुत्रन्मारुटॆ निग्रहं

इङ्ङने शिवस्तुति चॆय्तुटनग्नितन्निल्-
च्चॆन्नु चाटुवान् तुटङ्ङीटिनोरश्वत्थामा- १
तन्नुटॆ शत्रुक्कळॆयॊक्कवेयॊटुक्कुवान्
पन्नगाभरणनुं नल्किनान् करवाळुं । २
चॆन्निवरॊटुंकूटिक्कॊन्नालुमरिकळॆ
नन्नाक मेलिल् निनक्कॆन्नरुळ्चॆय्तु देवन् । ३

हे शङ्कर ! तुम्हारी जय हो ! हे चन्द्रशेखर ! जय हो ! हे कामदेव के रिपु ! हे हुंकृतिवाले हर ! जय हो ! हे शंभो ! हे शाश्वत ! पर ! भूतेश ! पुरहर ! हे कुंभीपाक के दुःख को दूर करनेवाले ! हे गिरिश ! हे गंगाधर ! हे गिरिजापते ! जय हो ! हे गिरिमन्दिर ! जय हो ! हे परमेश्वर ! हे परशुधर ! जय हो ! हे ब्रह्मा के वन्दित चरणवाले ! जय हो ! हे विष्णुप्रिय ! जय हो ! हे कालनाशन ! हे धूर्जटे ! हे पशुपते ! जय हो ! हे नीललोहित ! भव ! फाललोचन ! जय हो ! हे शिव ! इस शरणागत त्रस्त और अत्यन्त भक्त का निरन्तर पालन करो ! ४६-५१

अश्वत्थामा का पराक्रम । पाञ्चाली के पुत्रों का निग्रह ।

इस प्रकार स्तुति करके तुरन्त ही अग्नि में कूदने को सज्ज अश्वत्थामा को शत्रुओं को समाप्त करने के लिए शिवजी ने एक खड्ग भेंट किया। और कहा-- अब चलो और इनके साथ शत्रुओं को मारो। और आगे तुम्हारा भला हो ! खड्ग देकर जब अन्तर्धान करने ही वाले थे तब

खळ्गवुं नल्कि नेरे निर्ग्गमिच्चनन्तरं
भक्तिपूण्टंघ्रिपत्मं वन्दिच्चु गुरुसुतन् । ४
भर्ग्गन्तन्ननुग्रहालुग्रनामश्वत्थामा-
वुळ्क्करुत्तोटुकूटि वेंक्कत्तिल् वाळुमायि ५
शत्रुक्कळुरङ्ङुन्पोळ्प्पुक्कानेन्ते वेण्टु ।
वित्रस्तचित्तन्मारां भोजनुं कृपरुमाय् ६
धृष्टद्युम्नन्टे तल वेंट्टियङ्ङरुत्तितु ।
पेंट्टेन्नु पाञ्चालितन् मक्कळेयञ्चुं कोंन्नु ७
वावुन्नाळर्द्धरात्रिनेरत्तु गुरुसुतन् ।
आवोळं शत्रुक्कळे वेंट्टिक्कोंन्नरुत्तुटन् ८
भूतनाथनु बलि नल्किनान् चोरकोंण्टे ।
भूतङ्ङळार्त्तुकळिच्चीटिनारतुनेरं ९
तङ्ङळे मरन्नुटनुरङ्ङुन्नवरेल्ला-
मिङ्ङनेयोरु घोषमुण्टायोरनन्तरं १०
कन्पवुं पूण्टु तम्मिलेतुमोंन्नरियाते
संभ्रमं कलर्न्नुटन् तङ्ङळिल्त्तन्ने वेंट्टि- ११
च्चत्तितु चिलरुटनायुधं तिरकयुं
शत्रुक्कळेत्रयुण्टेन्नेतुमेयरियाते १२
बद्धप्पेंट्टुटन् मण्टिप्पुरत्तुचाटुन्नेरं
शस्त्रङ्ङळेट्टु भुवि मुरिञ्ञुवीणुमेवं १३

गुरुपुत्र ने भक्ति के साथ उनके चरणों की वन्दना की। शिवजी के अनुग्रह से उग्र अश्वत्थामा भीतरी शक्ति के साथ खड्ग हाथ में लिए वहाँ घुस गया जहाँ वे सो रहे थे। वहाँ वित्रस्त भोज और कृप के साथ धृष्टद्युम्न का सिर काट डाला। और तुरन्त गुरुसुत ने अमावास्या की आधी रात को १-७ पाञ्चाली के पाँचों पुत्रों का वध किया। अपनी शक्ति के अनुसार शत्रुओं को मार-मारकर उनके रक्त का भूतनाथ को बलि प्रदान किया। उस समय भूत सोल्लास चिल्लाने लगे। जो अपने को भूलकर सो रहे थे, वे यह घोष सुनकर काँपने लगे और यह न समझकर कि क्या हो रहा है घबड़ा गये और आपस में ही मार काटकर मरे। कोई-कोई आयुध ढूँढ़ने लगा। यह न जानकर कि शत्रु कितने हैं कुछ लोग जल्दी में बाहर निकलने लगे। तब उनको अस्त्र-शस्त्र लगे और वे घायल होकर गिर गये। भोज और कृप ने हर एक द्वार पर खड़े होकर मार-मारकर उनको गिराया। ८-१४ जो बाहर थे वे डरकर

द्वारङ्ङळ्तोरुं निन्नु भोजरुं कृपरुमाय्
पारातें कोन्नु कोन्नु वीळ्त्तुन्नोऽ तेरुतेरे- १४
प्पुऽत्तुळ्ळवर् पेटिच्चकत्तु पाञ्ञुपुक्कुं
पुऽत्तुपुऽप्पेट्टुमकत्तुळ्ळवरेल्लां । १५
वरुन्नोर् वैरिकळेन्नकत्तुळ्ळवरेल्ला-
मकत्तु शत्रुक्कळेन्नुऽच्चु पुऽत्तुळ्ळोर् । १६
इङ्ङने शिव ! शिव ! तङ्ङळिल्त्तन्ने कोन्नु
तिङ्ङिङ्ङन पटयोक्क मिक्कतुमोट्टुङ्ङीतें । १७
कैनिलतन्निलवर् तीयुं वच्चितु पिन्ने-
क्कै तल कालुं तोळुं मुऽिञ्ञु वशंकेट्टु । १८
चाकातें किटन्नवर् तीपिटिच्चतुनेरं
वेकातुळ्ळवयवं किटन्नु पिटकयुं । १९
करञ्ञु करञ्ञवर् वेन्तुचाकुन्ननेरं
मरङ्ङळ् वेन्तु पोट्टियलरुमोच्चकळुं । २०
मुटियिल् पिटिपेट्टोरग्नितन् दुर्गन्धवुं
तटवु तीर्न्नु कत्तिप्पोङ्ङुं ज्वालकळ्मेले । २१
मुळ्ळुत्तु पोङ्ङीटुन्न पुकयुं कण्टुकण्टु
पिळ्ळक्कु चेय्ततेल्लामरचनोट चोल्वान् २२
भरद्वाजात्मजादि मूवरुमोरुमिच्चु
पारिच्च मोदत्तोटुं वेगत्तिल् नटकोण्टु । २३
दुरियोधनन् वीणु किटक्कुन्निटत्तु चे-
न्निरुन्नारवर्कळुमेत्रयुं दुःखत्तोटे । २४

भीतर जाने लगे और जो भीतर थे वे बाहर निकलने लगे। जो भीतर थे वे भीतर घुसनेवालों को और जो बाहर थे वे भीतर के लोगों को शत्रु समझा। हा शिव ! शिव ! इस प्रकार आपस में मार-काट के वह बड़ी सेना भी समाप्त हो गयी। फिर उन्होंने तंबू को आग लगा दी। हाथ, सिर, पैर, और कन्धे टूटकर बेकार हुए। जो जिन्दा पड़े थे उनको आग लग गयी। जो अवयव जले न थे वे तड़प रहे थे। रोते हुए और जलकर वे मरे। वृक्ष तो जलते समय फूटे और बड़ी आवाज हुई। १५-२० जब आग केशों पर लगी तो बड़ी दुर्गन्ध हुई। बिना रुकावट के ऊपर को उठनेवाली ज्वालाओं के ऊपर से धुआं निकल उठा। उसे भी देखकर राजा से बीती बातें कहने के लिए अश्वत्थामा आदि तीनों बड़े प्रमोद के साथ चले। और जाकर जहाँ दुर्योधन पड़ा था वहाँ दुःख

पतिनोन्नक्षौहिणिप्पटयुळ्ळरचा ! नी
पतितनायान् भुवि चतियालय्यो कष्टं । २५
अन्धनाय् वयोधिकनाकिय पिताविन्नें-
स्सन्ततं रक्षिप्पतिनारिनियुळ्ळतय्यो ? २६
गान्धारिदेवितन्टे दुःखमेन्तोन्नु चोल्लू
कान्तारं वाळुकेन्ने वेण्टू ञङ्ङळुमिनि । २७
मन्नव ! सुयोधन ! निन्नोट सममायि-
प्पोन्नुकळ् पुटवकळ् नल्कुवतारु नाथा ? २८
ञङ्ङळुमाकुन्नतु चेय्तारेन्नरिञ्ञालु-
मिङ्ङने निन्नेक्कण्टु सहियाञ्ञतुमूलं । २९
धृष्टद्युम्नननुं कृष्णतन्नुटे तनयरु-
मोट्टुमे शेषियाते मट्टुळ्ळ पटकळुं ३०
वेट्टिक्कोन्नोटुक्कीतु रात्रियिल्च्चेन्नु ञङ्ङळ्
चुट्टुपोट्टिच्चितवरिरुन्न गृहङ्ङळुं । ३१
अन्नतु केट्टु तेळिञ्ञन्नेरं सुयोधनन्
विण्णिलङ्ङकंपुक्कान् पोरतिल् मरिक्कयाल् । ३२
इप्रकारङ्ङळोक्कस्सञ्जयनरियिच्चान्
केल्प्पुळ्ळ धृतराष्ट्रर् मोहिच्चु वीणानल्लो । ३३
मोहवुं तीर्त्तङ्ङिरुत्तीटिनान् पिन्नेप्पैदा-
हादिकळ् तीर्त्तशेषं चोल्वन् ञानिनियेन्नु ३४

के साथ पहुँचे । हे ग्यारह अक्षौहिणी की सेनावाले राजन् ! यह बड़े खेद की बात है कि धोखा खाने से तुम इस गिरी हुई स्थिति में हो । अन्धे और बूढ़े पिता की अब रक्षा कौन करेगा ? देवी गान्धारी का दुःख, कहो, कितना तीव्र होगा ? अब हमलोगों के लिए बन जाना ही रह गया है । २१-२७ हे राजा सुयोधन ! तुम्हारे समान स्वर्ण और वस्त्र देनेवाला अब कौन है ? हे नाथ ! जान लो कि हमने जो कुछ हो सकता है सो किया है । तुम्हारी इस स्थिति को न सह सकने से हम लोगों ने रात को जाकर धृष्टद्युम्न और कृष्णा के पुत्रों को एक न छोड़कर मार डाला है और उनके निवासस्थानों को जला दिया है । यह सुनकर सुयोधन प्रसन्न हुआ और युद्ध में मरने के कारण भूमि के अन्दर घुस गया । इस प्रकार की बातों को सञ्जय ने जब सुनाया तब शक्तिशाली धृतराष्ट्र भी बेहोश होकर गिर पड़ा । तदनन्तर बेहोशी को दूर करके बैठाया और कहा कि शेष भूख और प्यास बुझ जाने पर कहूँगा । सब जल्दी

पाराते पड़ञवळ् पैकेंटुत्तिरियेन्नु
शारिकप्पैतल्तानुं मोदमोटिरुन्नुते । ३५

॥ सौप्तिकं समाप्तं ॥

सुनाकर शुकी भी खाने पीने का सुझाव देकर आराम करने बैठ गयी । २८-३५

॥ सौप्तिक पर्व समाप्त ॥

ऐषिकं

मलर्मानिनियुटे मनक्कान्पतिलेरे
मदनामय मरुळिन परमन् १
मदनशरपरवशन्माराय गोप-
मधुवाणिकळुटे मनमेल्लां २
मधुराधरं नल्कि मयक्किकच्चमप्पौरु-
मधुरनाथनाय जगदीशन् ३
मधुकैटभमदमथनन् नारायणन्
मधुराकृतियोटुमवनियिल् ४
असुरन्मारायुळ्ळोररचन्मारेयेल्ला-
मरुतिवरुत्तुवान् पिरन्नवन् । ५
चरणसरसिजं शरणमेन्नु नण्णि-
च्चरतिच्चिरुन्नुळ्ळिल् करुतियुं ६

ऐषिक पर्व

लक्ष्मीदेवी के दिल में अधिक मदनार्ति पैदा करनेवाले परम, मदन के शरों से बेबस गोपियों के दिलों को अपना मधुर अधर देकर मोहित करनेवाले मधुर नाथ जगदीश, मधु और कैटभ के मद को नाश करनेवाले नारायण, इस पृथिवी पर एक मधुर आकृति लेकर असुर राजाओं को समाप्त करने के लिए जन्म लेनेवाले चरणकमल ही शरण है, ऐसा सोचकर, दुनिया से विरक्त होकर उसी का ध्यान करते हुए, १-६ उसी

चरितं चॊल्लिक्कॊण्टुमतिनॆ केट्टुकॊण्टुं
पॆरिकॆ भक्तिपूण्टुळ्ळवर्क्कॆल्लां ७
जननमरणमामरियदुःखं तीर्क्कुं
जगदानन्दमूर्त्ति परमात्मा ८
कलिदोषत्तालुण्टां कलुषङ्ङळॆयॆल्लां
कळञ्ञु परगति वरुत्तुवोन् । ९
नळिनशररिपुनळिनभवमुनि-
नमुचिरिपुमुखसुरन्मारुं । १०
नळिनांघ्रिकळ् तॊळुतळवु करुणया
नरनायवनिसङ्कटं तीर्प्पान् ११
अळविल्लातॆयुळ्ळ कळिकळिनियुं नी
कळमांवण्णं चॊल्लु किळिप्पॆण्णे ! १२
कळमांवण्णंतन्नॆ परकप्पोका कृष्णन्-
कळिकळॆन्नालुं ञान् चॆरुतु परञ्ञीटां । १३
तुळसिमाल पूण्ट सुन्दरन् नन्दात्मजन्
विळयाट्टुकळॆन्त्र विचित्रमोर्क्कुंतोरुं । १४
धर्म्मजादिकळ्क्कॊरु सङ्कटं वराय्वानाय्
निर्म्मलनवरुमाय् वाळुन्न गृहत्तिङ्कल् १५
धृष्टद्युम्नन्टॆ दूतन् पिटॆन्नाळुदिक्कुन्पोळ्
पॆट्टॆन्नु पाञ्ञुचॆन्नु वृत्तान्तमरियिच्चान् । १६

का चरित्रवर्णन करते हुए और सुनते हुए बड़ी भक्ति अनुभव करनेवालों का जनन, मरण आदि दुःख को समाप्त करनेवाला जगदानन्दमूर्ति परमात्मा कलिदोष से पैदा होनेवाले पापों को दूर करनेवाला और परम गति को प्राप्त करानेवाला, कामदेव का शत्रु शिव, नलिनभव ब्रह्मा, नमुचि का शत्रु इन्द्र आदि देवों के द्वारा चरणों की वन्दना करने के कारण अपनी करुणा से पृथिवी का सङ्कट दूर करने के लिए मनुष्य का रूप धारण करनेवाले की निस्सीम लीलाओं को, हे शुकि ! सुन्दर ढंग से तुम सुनाओ। हाँ, सुन्दर ढंग से ही सुनाऊँगी, पर थोड़ा ही सुना सकूँगी। ७-१३ तुलसी की माला धारणकरनेवाले सुन्दर नन्दपुत्र की लीलाएँ कितनी विचित्र हैं ! युधिष्ठिर आदिकों को कोई दुःख न हो इस विचार से जब निर्मल (नन्दपुत्र) उनके साथ रह रहे थे तब उस घर में दूसरे ही दिन धृष्टद्युम्न का दूत अचानक चला आया और उसने समाचार सुनाया। "जो कुछ निष्ठुर अश्वत्थामा ने किया वह सब

निष्ठुरनाकुमश्वत्थामावु चेय्ततेल्लां
कष्टमेन्तय्योयेन्ने चोल्लावितेनिक्किप्पोळ् । १७
धृष्टद्युम्ननुं द्रुपदात्मजापुत्रन्मारु-
मोट्टोळियातेयुळ्ळ शेषिच्च पटयोटुं १८
पट्टुपोयितु नमुक्केन्नवन् चोन्ननेरं
दुष्टनाशननुळ्ळिल् तेळिञ्ञु खेदं पूण्टान् । १९

युधिष्ठिरन्टेयुं पाञ्चालियुटेयुं दुःखं

धर्म्मजादिकळोटे पाञ्चालितानुमप्पो-
ळुन्मुकं चेविकळिल् पुक्कतु पोले केट्टु । १
सम्मोहत्तोटे भूमितन्निल् वीणितु पिन्ने
निर्म्मलन् कृष्णन् तानुमेटुत्तु शोकं तीर्प्पान् । २
तङ्ङळिलाश्लेषिच्चु तिङ्ङिनशोकत्तोटुं
पोङ्ङिन नादत्तोटुं करञ्ञारोट्टुनेरं । ३
अलच्चु तोळिच्चु मेय् विरच्चु पाञ्चालियुं
निलत्तुवीणु किटन्नुरुण्टुं पिरण्टुं पो- ४
यल्ललोटळुतुटन् धर्म्मनन्दननोटु
चोल्लिनाळय्यो पापमिङ्ङने वन्नुवल्लो । ५
मक्कळुमुटप्पिरन्नुळ्ळोरु वीरन्तानुं
दुःखत्तिन्नोरु पात्रमाक्किनारेन्नेयिप्पोळ् । ६

बहुत शोचनीय है, बस इतना ही मैं कहूँगा" ऐसा उसने कहा। जब उसने कहा कि धृष्टद्युम्न, द्रौपदी के पुत्र और अवशिष्ट सेना, यह सब समाप्त हो गया है तब दुष्टों का नाशक स्पष्ट दुःखित हुआ। १४-१९

युधिष्ठिर और पाञ्चाली का दुःख

युधिष्ठिर और पाञ्चाली ने इस समाचार को जब सुना तब उनको लगा कि उनके कानों में उल्मुक घुस गया हो। वे बेहोश होकर गिर गये और कृष्ण ने उनको दुःख दूर करने के लिए उठाया। बड़े दुःख के साथ उन्होंने एक-दूसरे से गले लगाया और बड़े ज़ोर से रोया। द्रौपदी ने अपनी छाती पीटी, उसका शरीर काँपने लगा, और वह भूमि पर गिरकर लोटने लगी। और दुःखित होकर युधिष्ठिर के पास जाकर उसने कहा— "हा! कैसा कष्ट है कि यह सब हुआ। मेरे पुत्रों और

सोदरन्तन्नेयुमेन् सुतन्मारेयुं कोन्न
भूसुराधमन्तन्नेक्कोल्लणमिन्नुतन्ने । ७
अल्लायिकिलिनियिप्पोळ् ञान् मरिच्चीटुन्नतु-
ण्टिल्ल संशयमेन्नु केट्टु धर्म्मजन् चोन्नान् । ८
वल्लात वचनङ्ङळ् चोल्लाते नमुक्केन्नाल्
पोल्लात फलं वरुमोल्लात कर्म्मं चेय्ताल् । ९
पेटिच्चु वनंपुक्कोराचार्यसुतन्तन्ने-
त्तेटिनाल् कण्टुकिट्टा कण्टालुं कोन्नुकूटा । १०
शत्रुक्कळ्कैयालवर् युद्धत्तिल् मरिच्चतिनि-
नित्र शोकिक्केण्टा नी नीक्कामो कर्म्मफलं । ११
ओत्तुकाणेटो कृष्णे ! धात्रीदेवनेक्कोन्नाल्
कीर्त्तिकेटेन्नियिल्ल नरकमुण्टायवरुं । १२
द्रोणरे कोन्नतोरु कार्यवुमल्ल नाथे !
दोषमिल्लतु दैवन्तन्नुटे मतमल्लो । १३
अतिनु तीयिल् मुळच्चुण्टायी धृष्टद्युम्न-
नतिनेस्साधिच्चवन् मरिच्चानरिञ्ञालुं । १४
अज्ञानमुळ्ळजनं दुःखिक्कुन्नतुपोले
विज्ञानमुळ्ळ नीयेन्तिङ्ङने चोल्वान् कृष्णे ! १५
यज्ञसेनात्मजयाय्वन्नयोनिजयायि
यज्ञकुण्डत्तिङ्कल्निन्नल्लयो पिरन्नितुं । १६

मेरे सहोदर वीर भाई ने मुझे दुःख का पात्र बनाया। जिस भूसुराधम ने मेरे भाई और पुत्रों को मारा वह आज ही समाप्त किया जाय ! १-७ नहीं तो मैं मर जाऊँगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।" यह सुनकर युधिष्ठिर ने कहा— "कड़ी बातें मुझसे न कहो।" क्योंकि बुरे काम का फल भी बुरा ही होगा। डर से वन में घुसे हुए आचार्यपुत्र को ढूंढकर पकड़ना कठिन है, और पकड़ा भी जाय तो मारना कठिन है। शत्रुओं के हाथ वे जो युद्ध में मारे गये इसके लिये इतना दुःख न करो। अपना कर्म का फल टाला नहीं जा सकता है। स्मरण रहे हे कृष्ण ! कि ब्राह्मण को मारने से न केवल अपयश होगा, नरक भी प्राप्त होगा। हे नाथे ! द्रोण जो मारा गया वह कुछ नहीं है। उसमें कोई दोष नहीं है। वह दैव का ही मत था। इसीलिए तो धृष्टद्युम्न अग्नि से पैदा हुआ था और उस काम को पूरा करके वह मर गया। यह जान लो। ८-१४ अज्ञ लोग दुःख अनुभव करते हैं, उनकी तरह विज्ञानवाली तुम भी क्यों

अटङ्ङीटुकयेन्नु धर्म्मजन् परञ्ञप्पो-
ळटङ्ङीटातोरु शोकमोटवळुळ्टोटे १७
मारुतियुटे मुन्पिल्वीणुरुण्टलऱिनाळ्
नारिमार्कुलमौलियाकिय पाञ्चालियुं । १८
अेन्नुटे भर्त्तावे ! नीयिन्निनतु वेटियोल्ला
मुन्नमुण्टाय दुःखं तीर्त्ततोक्कयुं नीये । १९
कल्याणसौगन्धिकं वेणमेन्नतुमेन्टे-
चोल्लु केट्टतु चेन्नु कोण्टन्नु नल्कियतुं । २०
कीचकन्मारेक्कोन्नु खेदत्ते कॆटुत्ततुं
नीचनां दुश्शासनन्माऱिटं पिळर्न्नतुं । २१
मट्टुमित्तरमेन्नेच्चोल्लि वेलकळ् चेय्वान्
मुट्टुं नीयोळिञ्ञिल्ल मटारुमिनिक्किप्पोळ् । २२
उट्वर्तन्नेक्कोन्न विप्रन्टे शिरोमणि
तेटेन्नु पऱिच्चेनिक्काशु नी नल्कीटणं । २३
कुट्मिल्लतिनेन्नु कट्वार्कुळलियु-
मिट्टिटु वीणीटुन्न कण्णुनीरोटे चोन्नाळ् । २४
मारुति पाञ्चालितन्वाक्कु केट्टतुनेरं
तेरतिल् करेऱिनानायुधङ्ङळुमायि । २५
वेगत्तिल् भीमसेनन् पोयतु धरिच्चप्पो-
ळागमक्कातलायोरानन्दमूर्त्ति कृष्णन् २६

दुःखित होती हो । तुम तो यज्ञसेन की पुत्री के रूप में, यज्ञकुण्ड से निकलकर अयोनिजा हुई हो । जब युधिष्ठिर ने कहा— 'शान्त हो जाओ' तब शान्त न होनेवाले दुःख के साथ वह तुरन्त ही भीम के सामने जाकर लोट-लोटकर रोने लगी, वह पाञ्चाली जो नारियों के कुल की मुकुट थी । मेरे पतिदेव ! तुम इसकी उपेक्षा न करो ! पहले जो दुःख हुआ था उसे तुम ही ने तो दूर किया था । जब मैंने कहा कि मुझे कल्याण-सौगन्धिक चाहिए तब जाकर उसे लानेवाले तो तुम ही थे । तुम ही ने तो कीचकों को मारकर मेरे खेद को समाप्त किया । नीच दुश्शासन की छाती तुम ही ने फाड़ा था । १५-२१ इस प्रकार मुझसे संबन्ध रखनेवाले काम करानेवाला अब तुम्हें छोड़कर और कोई नहीं है । अपने बन्धुओं को जिसने मारा उसके शिरोमणि को छीन लाओ और मुझे दे दो । उसमें कोई दोष नहीं हैं । इस प्रकार द्रौपदी ने आँसुओं की बूंदें गिराती हुई कहा । पाञ्चाली की बात सुनकर भीम आयुधों को लेकर रथ पर बैठा ।

देवदेवेशन् मायामानुषन् नारायणन्
देवकीदेवियुटॆ पुण्यत्तिन् परिपाकं २७
मून्नाय मूर्त्तिकळ्क्कुं मूलमां प्रकृतिक्कुं
मून्नाय जगत्तिनु मून्नाय परब्रह्मं २८
भक्तवत्सलन्तन्टॆ भक्तरॆ रक्षिच्चुटन्
भुक्तिमुक्तिकळ् चेर्प्पान् दुष्टरॆयॊटुक्कुवान् २९
शक्तियोटिटचेर्न्न मुग्धलोचननप्पोळ्
बद्धमोदेन मन्दहासवुंचेय्तु तदा ३०
धर्म्मनन्दनन्तन्नोटिङ्ङनॆयरुळ्चेय्तु
वन्मदमॊटु पोयतॆन्तिप्पोळ् वृकोदरन् । ३१
नारिमार् चॊल्लुकेळ्क्कुं भोषन्मार्निमित्तमा-
येरियॊरापत्तुण्टामेवक्कुं कूटिप्पिन्नॆ । ३२
शत्रुक्कळ् बलाबलमॆङ्ङनॆयरियुन्नु ?
शक्तनॆन्नभिमानिच्चीटिन मूढन् भीम-
नभिमानङ्ङळॆरॆयुळ्ळतङ्ङॊट्टुमाका । ३३
अश्वत्थामावुतन्नॆक्कॊल्लुवान् पोयानल्लो
विश्वत्तिलवन्तन्नॆक्कॊल्लुवानारुमिल्ल । ३४
वैकातॆ चॆन्नु कूट्टिक्कॊण्टु नां पोन्नीटणम्
कैकटन्नीटुंमुन्पे पिन्नॆयॆन्तावतोर्त्ताल् । ३५

भीमसेन के जल्दी चले जाने को देखकर आगमों का सार, आनन्दमूर्ति, देवदेवेश, मायामानुष, नारायण, देवकीदेवी के पुण्य का परिपाक, कृष्ण, तीनों मूर्त्तियों का, मूल प्रकृति का, तीनों लोगों का त्रिरूप परब्रह्म, २२-२८ भक्तवत्सल, अपने भक्तों की रक्षा करके भुक्ति और मुक्ति देने के लिए और दुष्टनिग्रह करने के लिए शक्तिशाली मुग्धलोचन ने मन्दहास करके उस समय युधिष्ठिर से इस प्रकार बोले। "इतने मद के साथ भीम अब क्यों निकला ? महिलाओं की बात सुनकर काम करनेवाले मूर्खों के कारण बड़ी विपत्ति हो जाती है। शत्रुओं का बल और अबल कैसे जाना जाय ? शक्तिशाली होने का अभिमान रखनेवाले मूर्ख भीम का अभिमान वहाँ चलेगा ही नहीं। वह निकला है अश्वत्थामा को मारने के लिए, पर इस संसार में उसको मारनेवाला कोई नहीं है। अविलम्ब से जाकर उसे हमको लौटाना चाहिये, इसके पहले कि वह कोई बलात्कार कर बैठे। उसके बाद कुछ भी हो सकता है। २९-३५ अभिमानी लोग विपत्ति के आने के बाद ही समझते हैं। उसके बाद तो पश्चात्ताप भी न

आपत्तु वन्ने वन्पर् कालत्तन्नरियावू
तापत्तिन्नवर् पिन्ने निवुर्न्नीट्टुकयिल्ल । ३६
अन्नरुळ्चेय्तु जगन्नायकनोटुं कूटि
मन्नवन् किरीटियुमायोरु तेरिलेरि ३७
सत्वरं गंगातीरं प्रापिच्चु भीमन्तन्नो-
टेत्तिनानवर्कळे कण्टपोतश्वत्थामा ३८
गंगयिल्निन्नु करयेरिनान् भीतिकैक्को-
ण्टंगजारातिसमनाचार्यसुतनप्पोळ् । ३९
ब्रह्मास्त्रमेटुत्तभिमन्त्रिच्चङ्ङयच्चितु
धर्म्मजादिकळुटे सन्ततिपोलुमिप्पो- ४०
ळुन्मूलनाशं वरिकेन्नवन् प्रयोगिच्चान्
चिन्मयनाय परमात्मावु कृष्णनप्पोळ् ४१
ब्रह्मास्त्रं प्रयोगिच्चानश्वत्थामावु पार्त्थ !
नम्मे रक्षिप्पान् नीयुं ब्रह्मास्त्रमयक्केणं । ४२
धर्म्मरक्षणत्तिनु ब्रह्मास्त्रं कौण्टेयावू
ब्रह्मास्त्रत्तिन्नुपरं ब्रह्मास्त्रमेन्नियिल्ल । ४३
रण्टुभागत्तुमोरु सङ्कटं वरायकेन्नु
पण्डितनाय पार्त्थन् ब्रह्मास्त्रं प्रयोगिच्चान् । ४४
अस्त्रङ्ङळटत्तुटन् तङ्ङळिल् तट्टुन्नेर-
मित्रिलोकवुमाशु भस्ममाय् चमञ्ञीटुं । ४५

करेंगे। इस प्रकार कहनेवाले जगन्नायक (कृष्ण) के साथ राजा (युधिष्ठिर) अर्जुन को भी लेकर रथ पर बैठा और तुरन्त गंगातट पर भीम के पास पहुँचा। उनको देखकर अश्वत्थामा डर के मारे गंगा से निकला और देखने में अंगजाराति (शिव) के समान लगता था। उसने ब्रह्मास्त्र लेकर और उसे अभिमन्त्रित करके भेजा, इस विचार से कि युधिष्ठिर आदि की सन्तान तक का उन्मूलन और नाश हो जाये। तब चिन्मय परमात्मा कृष्ण ने भी अश्वत्थामा पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। हे अर्जुन हमारी रक्षा के लिए तुम भी ब्रह्मास्त्र छोड़ो। ३६-४२ धर्म का रक्षण ब्रह्मास्त्र से ही हो सकता है। और ब्रह्मास्त्र का जवाब ब्रह्मास्त्र से ही हो सकेगा। विद्वान् अर्जुन ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया ताकि दोनों ओर कोई विपत्ति न हो। जब दोनों अस्त्र निकट आकर टक्कर खायेंगे तो तीनों लोक भस्म हो जायेंगे। ब्रह्मा और अन्य देवता डरकर सोचने लगे कि अब क्या किया जाय ? यह देखकर जब जलते हुए

पङ्कजयोनितानुं मट्टुळ्ळ देवकळुं
शङ्किच्चु भीतिपूण्टारेन्तोरु कळिवेन्नु । ४६
सारमायेरियुन्नोरस्त्रङ्ङळ् तम्मिलूक्कोण्टु
पारेल्लां मुटिञ्ञीटुमेन्नतु कण्टनेरं ४७
नारदन् तानुं वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळि-
प्पारातें मद्धयेपुक्कारन्नेरं धनञ्जयन् ४८
भक्तिपूण्टवर्कळे वन्दिच्चु वेगत्तोटे
वित्रस्तहृदयनायस्त्रत्तेयतुनेरं
बुद्धिमानुपहरिच्चीटिनान् किरीटियुं । ४९
विस्मयप्पेट्टु लोकरेल्लारुमतु कण्टु
विश्वैकधनुर्द्धरनर्ज्जुननेन्नु चोन्नार् । ५०
तापसन्मारेक्कण्टोराचार्यतनयनुं
तापमायितु पारमेङ्किलुमतुनेरं । ५१
अस्त्रं ञानभिमन्त्रिच्चयच्चेनतिनिनि
प्रत्यपहारं चेय्वानेत्रयुं पणियत्रे । ५२
विप्रनिङ्ङने पऱञ्ञीटिनोरनन्तरं
चिल्पुमानाय कृष्णनरुळिच्चेय्तानेवं— ५३
सन्ततियोटुंकूटेप्पाण्डवन्मारे ञानो
सन्ततं कात्ततिन्नुं कात्तुकोळ्ळुवन्तानुं । ५४
इङ्ङने मूवायिरत्ताण्टेक्कु पोऱाय्केटो
निन्नुटे मुऱयेन्नु शापवुमरुळ्चेय्तु । ५५

दोनों अस्त्रों का आपस में टक्कर होगा तो सारी पृथिवी जल जायगी नारद और वेदव्यास पधारे और बीच में घुस गये। तब अर्जुन ने भक्ति के साथ उनकी वन्दना की और काँपते हृदय के साथ उस बुद्धिमान् किरीटी ने अस्त्र का उपसंहार कर दिया। ४३-४९ यह देखकर सब लोग विस्मित हुए और बोले— अर्जुन ही विश्व का एकमात्र धनुर्धर है। आचार्यपुत्र तो उस समय तापसों को देखकर अत्यन्त दुःखित हुआ। और बोला— "मैंने अभिमन्त्रित करके अस्त्र छोड़ा है उसे वापस लेना अत्यन्त कठिन है।" विप्र के इस प्रकार कहने के बाद चित्पुमान् कृष्ण ने उत्तर दिया— "मैंने पाण्डवों की सदैव सन्ततिसहित रक्षा की है और आज भी रक्षा करूँगा।" यह कहकर उसको शाप भी दिया कि तीन हज़ार वर्ष तक तुम ऐसे ही व्यर्थ घूमते रहो। ५०-५५

व्यासोपदेशं

कृष्णनां पराशरनन्दनन् वेदव्यासन्
कृष्णमाहात्म्यं पार्त्तु विप्रनोटरुळ्चेय्तान् । १
अप्रमेयत्वंपूण्ट सल्प्रभावत्तोत्तेटुं
विप्रसत्तमनाकुमश्वत्थामावे ! केळ् नी । २
रत्नवुं कोंटुत्तुटनिप्पळे निकक्कणं
शक्तनां भीमन्तन्टे सत्यवुं रक्षिक्कणं । ३
ऐकमत्यवुमिनि निङ्ङळिल् वन्निटेणं
वैकातेयुळ्ळिलुळ्ळ वैरवुं कळयेणं । ४
रागद्वेषादिकळुमावोळं कुरय्क्कणं
दैवत्तिन्विलासङ्ङळेन्नतुमुरय्क्कणं । ५
निन्नुटे शिरोमणि कोण्टुपोकणमेन्नाय्
वन्नितु भीमनतु कोंटुत्तेमतियावू । ६
इत्तरं वेदव्यासन् चोन्नतु केट्टु गुरु-
पुत्रनुं सहजमांतन्नुटे शिरोमणि ७
चून्नेटुत्तनिलजनाय भीमनु नल्कि
प्राणवेदनयोटुं पोयवन् वनंपुक्कान् । ८
नारदन्तानुं वेदव्यासनुमेळुन्नळ्ळि
पारिटत्तिङ्कलुळ्ळ सङ्कटङ्ङळुं तीर्न्नु । ९

व्यास का उपदेश

पराशर के पुत्र वेदव्यास कृष्ण ने श्रीकृष्ण का माहात्म्य देखकर ब्राह्मण (अश्वत्थामा) से कहा। अप्रमेय सत्प्रभाववाले हे ब्राह्मणवर ! मेरी बात सुनो। "अपना रत्न देकर कमी को पूरा करो और शक्तिशाली भीम के सत्य की भी रक्षा करो। अब तुमलोगों में ऐकमत्य होना चाहिए और अविलम्ब से भीतरी वैर को त्याग दो। जहाँ तक हो सके राग और द्वेष कम करो और अपने मन में निश्चय करो कि यह सब ईश्वर की लीला है। तुम्हारे शिरोमणि ले जाने के लिए तो भीम आया था। उसे दिये बिना काम न चलेगा। १-६ वेदव्यास की यह बात सुनकर गुरुपुत्र ने अपने सहज शिरोमणि को उखाड़कर वायुपुत्र भीम को दे दिया और प्राणवेदना के साथ वन में प्रवेश किया। नारद और वेदव्यास चले गये और पृथ्वी के सब दुःख समाप्त हुए, कमललोचन

सारसविलोचनन् गोविन्दन् नारायणन्
नीरदनिर्रंपूण्ट नीरजासनसेव्यन् । १०
धर्म्मजादिकळोटुंकूटयङ्ङ्ॅळुन्नळिळ
निर्म्मलन् वासुदेवन् नीतियिल् वसिच्चुतन्ने ।११

॥ ऐषिकं समाप्तं ॥

गोविन्द, नारायण, नीलमेघ के रंगवाले कमलपर बैठनेवाले का सेव्य निर्मल वासुदेव युधिष्ठिर आदिकों के साथ गये और सब उनकी नीति के अनुसार रहे । ७-११

॥ ऐषिक पर्व समाप्त ॥

स्त्री

नल्त्तेन्मौळि मम तत्ते ! दिनमनु
चित्ते सुखमरुळुक सरसे ! १
दुग्धोदकनिधिमद्ध्ये मरुविन-
मुग्धेक्षणनुटॆ नल्चरितरसं २
बद्धादरमति भक्त्या वद वद
मुग्धे ! मुहुरपि मुहुरपि नी । ३
शुद्धात्मनि परतत्वे विहरति
सत्ये ! मम मतिरतिमधुरं । ४
नारायण ! जय नारायण ! हरे !
नारायण ! जय नारायण ! हरे ! ५

स्त्रीपर्व

हे ! शहद के समान मीठी आवाजवाली मेरी शुकि ! प्रतिदिन, हे सरसे ! मेरे चित्त में सुख पैदा करो । क्षीरसागर के बीच में विराजमान मुग्धलोचन के रसयुक्त अच्छे चरित को तुम सादर और भक्ति के साथ बार-बार कहो । हे सच्चे ! मेरा मन शुद्धात्म परतत्त्व में सानन्द रहता है । हे नारायण ! हे हरे ! तुम्हारी जय हो ! हे नारायण ! हे

नारायणनुटे लीलाविशेषङ्ङ-
ळारालुमोर्त्तालरिञ्ञु कूटाय्कयाल् । ६
नेरे पऱवान् मटियिनिक्केन्नयुं
पाराते चॊल्लामऱिञ्ञतोट्टो ञान्ट्टु । ७
आयर्कुलत्तिल् पिऱन्न मायामय-
नायोधनत्तिनु पार्त्थनु सूतनाय् । ८
मायाविकळामसुरराजाक्कळे
मायमॊळिञ्ञु कॊल्लिच्चोरनन्तरं ९
शौर्यंकलन्नॊरु मारुतियेक्कॊण्टु
दुर्योधनवधं चॆय्यिच्चकालत्तु । १०
मक्कळ् मरिच्चॊरु दुःखं मुळुक्कया-
लुळ्क्कान्पळिञ्ञु धृतराष्ट्रमन्नवन् । ११
केळुन्ननेरत्तु सञ्जयन् चॊल्लिनान्
केळ्प्पॆटाय्क नीयेतुमे मन्नव ! १२
वाळ्प्पळं तानशिप्पान् करयुन्न
बालक्किटाङ्ङळॆप्पोले तुटङ्ङाय्क । १३
कष्टं निरूपिक्किलक्षौहिणि पति-
नॆट्टुं महाबलराय राजाक्कळुं १४
कालवशत्ताल् मरिच्चारतिन्नितु-
कालं करञ्ञळल् तेटाय्क नी वृथा । १५
सञ्जयन् चॊन्नतु केट्टु धृतराष्ट्र-
नञ्जसा मोहिच्चु वीणितु भूमियिल् । १६

हरे ! तुम्हारी जय हो ! नारायण के सभी लीलाविशेष कोई भी न जान सकता है । १-६ इसलिए सब बताना मेरा जी नहीं चाहता है । जो कुछ मैं जानती हूँ थोड़ा-थोड़ा करके जल्दी कहूँगी । गोपकुल में जन्म लेकर मायामय ने युद्ध में अर्जुन का सारथि बनकर मायावी असुर राजाओं का कपट छोड़कर वध कराने के बाद और शूर भीम से दुर्योधन का वध कराने के बाद, जब पुत्रों के निधन के कारण राजा धृतराष्ट्र दिल खोलकर विलाप करते थे तब सञ्जय ने कहा— हे राजन् ! विलाप न करो ! केला खाने के लिए रोनेवाले बच्चों के समान तुम भी न शुरू करो ! ७-१३ हाँ यह बड़ा कष्ट ही हुआ कि अठारह अक्षौहिणियाँ (सेनायें) और शक्तिशाली राजगण काल के प्रभाव से समाप्त हुए ।

ज्ञानियायुळ्ळ विदुररतुनेरं
दीननायुळ्ळोररचने मेल्लवे १७
तापालेट्टुत्तु निर्वत्तियिरुत्तिनान्
तापं केटुप्पान् तळिच्चु सलिलवुं १८
शोकं केटुप्पान् परञ्ञु तुटङ्ङिनान् ।
शोभनमायुळ्ळ वाक्कुकळोरोन्ने १९

विदुरन् धृतराष्ट्ररोटु चेय्युन्न ज्ञानोपदेशं

ज्ञानविज्ञानप्रभावङ्ङ्ळुळ्ळ नी
दीननावानोरु कारणमिल्ल केळ् १
मूढतयुळ्ळवर्क्कुळ्ळ तोळिलितु
तेटोला मन्नवा ! पार्त्तु काण्काशु नी । २
पृथ्वीपते ! तव पुत्ररोटोन्निच्चु
मित्रमायुळ्ळोरु पृथ्वीपतिकळुं ३
अत्रयुण्टिङ्ङने मृत्युभविच्चतु
चित्रमोरु कालवैभवं भूपते ! ४
जातनायाल् मृतनामवनेन्नोरु-
नीति चमच्चितु नीरजसंभवन् । ५

उसके लिए अब रो-रोकर तुम व्यर्थ दुःखित न हो जाओ। सञ्जय की बात सुनकर धृतराष्ट्र तुरन्त बेहोश हुए और पृथिवी पर गिर गये। तब ज्ञानी विदुर ने दीन राजा को धीरे-धीरे उठाकर सीधे बैठाया। बेहोशी दूर करने के लिए उनपर जल छिड़का। और शोक नष्ट करने के लिए एक-एक करके इन शोभन बातों को कहा। १४-१९

विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को ज्ञानोपदेश

तुम तो ज्ञान और विज्ञान से युक्त हो। कोई कारण नहीं है कि तुम दीन हो जाओ। यह तो मूर्खों का काम है, हे राजन् ! तुम इसमें न पड़ो ! तुम ज़रा ठहरो और देखो। हे राजन् ! तुम्हारे पुत्रों के साथ कितने मित्र भूपालों ने इस प्रकार मृत्यु प्राप्त की ! हे भूपते ! यह काल का वैभव विचित्र है। नीरजसंभव (ब्रह्मा) ने यह नीति निश्चित की है कि जो कोई पैदा होगा, वह मृत्यु भी प्राप्त करेगा। कालचक्र के भ्रमण अगर देखे जायँ तो दुःखित होने का कोई कारण न रह जाता

कालचक्रभ्रमं पार्त्तु कण्टालोरु-
कालवुं दुःखिप्पतिनिल्ल कारणं । ६
जीर्ण्णवस्त्रं कळञ्ञन्पोटु मानुषन्
पूर्ण्णशोभं नववस्त्रं धरिच्चीटुं । ७
जीर्ण्णदेहं कळञ्ञन्पोटु देहिकळ्
पूर्ण्णशोभं नवदेहङ्ङळ् कौळ्ळुन्नु । ८
नित्यमल्लेतुमे देहादिकळितु
नित्यनाकुन्नतु निश्चयमीश्वरन् । ९
चत्तु पिरन्नुमिरिक्कुमिज्जन्तुक्कळ्
चित्ते सुखदुःखमेन्तिनतिन्नहो ! १०
ऐन्नु तुटङ्ङियतेन्नुमरिञ्ञति-
ल्लेन्तिनि मारुन्नतेन्नुमरिञ्ञील । ११
आद्यन्तमिल्लात केवलन्वेलकळ्-
क्काद्यन्तमिल्लेन्नरिक धरापते ! १२
मुन्पिलिविटेक्कॆविटॆनिन्निक्काल-
मन्पोटु वन्नितु नीयुं महीपते ? १३
पोकुन्नुतिन्नियेविटेक्कतोर्क्क नी
चाकुन्न कारियमिल्लेन्नो तोन्नुन्नु । १४
निन्नुटे मक्कळो पण्टिवरोर्क्क नी-
यिन्नि निनक्कवर् मक्कळाय् मेवुमो ? १५

है। मानव तो अपना जीर्णवस्त्र को त्याग कर नया पूर्ण शोभावाले वस्त्र पहन लेता है। १-७ देही भी उसी प्रकार अपने जीर्ण शरीर को छोड़कर पूर्ण शोभावाले नये शरीर स्वीकार कर लेते हैं। ये देह आदि तो नित्य नहीं हैं। केवल ईश्वर ही नित्य है। ये सब प्राणी पैदा होते और मरते रहते हैं, इसलिए सुख और दुःख क्यों किये जायँ ? कोई नहीं जानता कि यह क्रम कब प्रारम्भ हुआ और कब बन्द होगा यह भी कोई न जानता है। हे भूपाल ! जान लो कि अनादि और अनन्त की इन लीलाओं का भी कोई आदि और अन्त नहीं है। तुम पहले कहाँ से यहाँ प्रेम से आये हो, हे राजन् ? और कहाँ जानेवाले हो ? सोचो तो ! क्या तुम समझते हो कि मरने का प्रश्न ही नहीं है ? ८-१४ तुम्हारे जो पहले पुत्र थे वे क्या आज फिर तुम्हारे पुत्र हो सकते हैं ? जो पीछे आये वे पहले ही चले गये और जो पहले आये वे पीछे जायेंगे ही। जान

पिन्नालॆ वन्नवर् मुन्पिलॆ पोयिनार्
मुन्नमे वन्नवर् पिन्नालॆयाय्वरुं । १६
वाट्टमिल्लात वेगेन नदिकळिल्
काष्ठङ्ङळॆन्नकणक्कॆ धरिक्क नी । १७
पान्थर् पॆरुवळियन्पलं तन्निले
तान्तराय्वन्नुटन् कूटुमॊरुनेरं । १८
ओरो कथयुं पऱञ्ञु रसिच्चवर्
पारं मळतान् वॆयिल्तानिरुट्टुतान् १९
पोवोळमॊन्निच्चिरुन्नालॊरो वळि
पोवोरवरवर् मुन्पुपिन्पॆन्ततिल् ? २०
पक्षिकळॊक्कप्पलवळि वन्नॊरु-
वृक्षत्तॆयाश्रयिच्चॊट्टुनेरं वसि- २१
च्चॊक्कयोरो वळि पिन्नॆप्पऱन्नुपों
दुःखिक्कुमाऱिल्लतिन्नवरारुमे । २२
पर्णङ्ङळ् वायुवशत्तालुणङ्ङियाल्
वन्नॊरिटत्तुकूटुं चिल वायुना २३
पिन्नॆयुं तङ्ङळिल् वेऱामतुपोलॆ
वन्नुकूटीटुमॊरेटत्तु जन्तुक्कळ् । २४
कर्म्मवशत्तालितॆन्नऱि मन्नव !
कर्म्मक्षयं वरुं नेरं पिरिंकयुं । २५

लो कि ये उन काठ के टुकड़ों के समान हैं जो वेग से बहनेवाली नदियों में दिखाई देते हैं। पथिक राजमार्ग पर स्थित मन्दिर में थके मान्दे इधर-उधर से आकर इकट्ठा होते हैं। तरह-तरह की कथाएँ कहते हुए आनन्द लेते हैं, वर्षा या धूप या अन्धेरा समाप्त होने तक साथ रहकर तदनन्तर अपना-अपना रास्ता चले जाते हैं, इसमें पहले-बाद का प्रश्न ही कहाँ ? चिड़ियाँ भी इधर-उधर से आकर एक ही वृक्ष पर थोड़ी देर रहकर अपने-अपने रास्ते उड़ जाती हैं। कोई भी दुःख नहीं करती है। १५-२२ पत्ते हवे से सूखकर एक स्थान में इकट्ठा हो जाते हैं। फिर हवा ही से अलग-अलग हो जाते हैं। उसी प्रकार प्राणी भी एक स्थान में पहुँच जाते हैं। हे भूपाल ! जान लीजिये कि यह कर्म के कारण होता है और जब कर्म का क्षय हो जाता है तो वे अलग हो जाते हैं। किसी को पिता, किसी को माता और किसी को अपने प्रेम का पात्र पत्नी

अच्छनॆन्नुं पुनरम्मयॆन्नु तनि-
क्किच्छयेऽरीटुं कळत्रमॆन्नुं चिलर् । २६
पुत्रनॆन्नुं चिलर् मित्रमॆन्नुं चिलर्
चित्तभ्रममिदं चित्रमत्रे तुलों । २७
ज्येष्ठकनिष्ठादि नानाविधमाय-
गोष्ठिकळोर्क्किलो नाणमामॆन्त्रयुं । २८
चेर्च्चयुं चार्च्चयुं कैक्कॊण्टॊरेटत्तु
वाच्च कुतूहलस्नेहबन्धत्तोटुं २९
कूटुमॊरित्तिरिनेरमवरव-
रीटिन कर्म्मगतिक्कॊत्तवणमे । ३०
ओरोरो नाळिलोरोरो वऴिक्कु पोय्
वेऽरामतिनॆन्तु कारणं केऴुवान् ? ३१
मूत्तु पऴुत्तु वीणीटुं चिल फल-
मोर्त्तीटु पूविल् कॊऴिञ्ञुपोकुं चिल- ३२
पत्रङ्ङळुं पऴुत्ताल् कॊऴियुं चिल
पृथ्वीपते ! तळिरुं कॊऴियुं चिल- ३३
नीर्प्पोळपोलॆ शरीरङ्ङळिङ्ङनॆ
वाय्पोटु काणां मऽयुं पुनरव । ३४
केळ्क्क महीपते ! काणात निन्नॆ ञान्
केळ्प्पिच्चुतन्नॆयुऽप्पिच्चुकूटुमो । ३५
उळ्ळिलेक्कण्कॊण्टु काणुन्न काळ्चपो-
लुळ्ळताकुन्नततो भवानुण्टल्लो । ३६

समझते हैं। किसी को पुत्र समझना और किसी को मित्र मानना यह सब एक विचित्र चित्तभ्रम है। ज्येष्ठ और कनिष्ठ आदि होने के नाते जो चेष्टायें की जाती हैं वे, सोचने पर, लज्जास्पद होती हैं। समचित्तता और रिश्ते के आधार पर बड़े कुतूहल, स्नेह और संबन्ध से एक स्थान में थोड़ी देर के लिए इकट्ठा होते हैं अपने-अपने पूर्व कर्म के अनुसार। २३-३० किसी भी दिन किसी भी मार्ग चलकर अलग हो सकते हैं, इसमें विलाप करने की क्या बात है? कोई-कोई फल परिपक्क होकर गिरता है, स्मरण रहे और कोई-कोई फूल ही में विलीन हो जाता है। पत्ता भी कोई-कोई पक्का होनेपर गिरता है और कोई-कोई तो पल्लवावस्था में ही गिर जाता है जलसस्य के समान बड़े-बड़े शरीर-वाले तो होते हैं पर वे भी नष्ट हो जाते हैं। हे भूपाल! तुम तो अन्धे

नित्यमल्लिक्कण्टतॊन्नुमरिक नी
नित्यमाकुन्नतॆन्तॆन्नु चॊल्लामहं । ३७
तत्त्वत्तिनाधारमूलमाय् सत्यमाय्
सत्त्वरजस्तमसामतिदूरमाय् ३८
ज्ञानमाय् मायारहितमायेकमा-
यानन्दपूर्णनायव्यक्तरूपमा- ३९
यादियुमन्तवुमिल्लातवस्तुवा-
याधारमिप्रपञ्चत्तिनाय् सूक्ष्ममाय्- ४०
वाङ्मनोगोचरमल्लात दैवमा-
याम्नायमायतिनन्तमायर्थमाय् ४१
मेवुं परब्रह्ममां परमात्मावु
देवकीदेवि तिरुमकनीश्वरन् ४२
देवदेवन्मुकुन्दन् नन्दनन्दनन्
गोविन्दनिन्दिरावल्लभन् सुन्दरन् ४३
निर्गुणनायवन् निर्व्विकारात्मकन्
चिल्घननाकिय सत्पुमानत्भुतन् ४४
पत्मनाभन् जगन्मंगलन् केशवन्
पत्मविलोचनन् नारायणन् परन् ४५
भक्तियुळ्ळोरुटॆ चित्तत्तिल् मेवुन्न-
भक्तप्रियन् परमेश्वरनच्युतन् ४६

हो। तुमको मैं कहाँ तक बातें सुनाकर समझा सकूँगा। अपनी भीतरी आँख से जो तुम्हें दिखाई देता है उसकी सत्यता को तो तुम जानते ही हो। जान लो कि यह जो दिखाई देता है वह नित्य नहीं है। नित्य क्या है यह मैं बतलाऊँगा। ३१-३७ सभी तत्त्वों का आधार, सत्य, सत्त्व, रज और तम से दूर स्थित, ज्ञानात्मक, मायारहित, एक, आनन्द-पूर्ण, अव्यक्तरूप, आदि और अन्त में हीन वस्तु, इस प्रपञ्च का आधार, सूक्ष्म, वाक् और मन का अगोचर देवता, वेदस्वरूप, वेद का अन्त, वेद का अर्थस्वरूप, परब्रह्म, परमात्मा, देवकीदेवी का सुपुत्र, ईश्वर, देवों का देव, मुकुन्द, नन्दपुत्र, गोविन्द, लक्ष्मीवल्लभ, सुन्दर, निर्गुण, निर्विकार चिद्घन, सत्पुमान्, अद्भुत, ३८-४४ पद्मनाभ, जगन्मङ्गल, केशव, कमललोचन, नारायण, पर, भक्तों के चित्त में निवास करनेवाला भक्तप्रिय, परमेश्वर, अच्युत, जन्म और नाश से रहित मंगलमूर्ति, निर्मल,

जन्मवुं नाशवुमिल्लात मंगलन्
निर्म्मलन् धर्म्मस्थितिकरन् निर्म्ममन् ४७
मायामनुष्यनाय् वन्निह भूमियिल्
मायामयमाय कर्म्मङ्ङळ् काट्टुवान् ४८
वृष्णिकुलत्तिल् पिरन्नु वळर्न्नोरु-
कृष्णनाकुन्नतु विष्णु निरन्तरं । ४९
जिष्णुविन् तेरु नटत्तिय गोपति
जिष्णुमुखामरसेव्यनामव्ययन् । ५०
नित्यमाकुन्नतु मिथ्य मट्टोक्कयु-
मित्थं निरूपिच्चु तच्चरणांबुजं ५१
चित्तत्तिलन्पोटुरप्पिच्चुकोळ्क नी
मुक्तिवरुवानतोन्नियिल्लेतुमे । ५२
कामवुं क्रोधवुं लोभवुं मोहवुं
प्रेमवुं भीतियुं दुःखसुखङ्ङळुं । ५३
ओक्ककळञ्ञु शमदमसन्तोष-
सत्यार्ज्जवैकान्तभक्तिविश्वासवुं ५४
कैक्कोण्टु वाळुक नीयिनियेन्नुटन्
मुख्यनायुळ्ळ विदुरर् परञ्ञप्पोळ् । ५५
संविल्स्वरूपत्तिलाक्कि मनतळि-
रंबिकानन्दननाय नराधिपन् । ५६
क्षत्तावु पिन्नेयुं चोन्नानवनोटु
चित्तविषादं कळञ्ञिनि वैकाते- ५७

धर्म की स्थिति करनेवाला, निर्मम, मायामय कर्म प्रदर्शित करने के लिये इस पृथिवी पर एक मायामय मनुष्य बनकर समागत, वृष्णियों के वंश में पैदा होकर पाला गया कृष्ण साक्षाद् विष्णु है। वही गोप है जिसने अर्जुन का रथ चलाया। वह इन्द्र आदि देवताओं का अर्च्य है, अव्यय है। वही नित्य है, और सब मिथ्या है— ऐसा समझकर उसके चरणकमलों को अपने ध्यान में तुम स्थिर करो। यही एक उपाय है मोक्ष प्राप्त करने का। ४५-५२ काम, क्रोध, लोभ, मोह, प्रेम, भय, दुःख, सुख, यह सब त्याग करो और शम, दम, सन्तोष, सत्य, नेकी, एकान्त भक्ति और विश्वास को अपनाकर रहो— ऐसा जब प्रमुख विदुरजी ने कहा तब राजा अंबिकापुत्र ने अपने चित्त को संवित्स्वरूप में समर्पित किया। तब

युत्तमयायुळ्ळ गान्धारिदेवियुं
मित्रवर्ग्गङ्ङळुं कूटियोरुमिच्चु ५८
सत्यपरायणन्माराय पाण्डव-
र्क्कत्तल् कॆटुत्तिनि रक्षिच्चुकॊळ्ळुक । ५९
पुत्रराकुन्नतवर्कळ् निङ्ङळ्क्किनि
नित्यसुखत्तोटु रक्षिप्पोर् निङ्ङळॆ । ६०
द्वेषवुं भेदवुं मत्सरमादियां
दोषवुमिल्लवर्क्कॆन्नतॖि मन्नव ! ६१
निङ्ङळ्क्कु वेण्टुं परगतियुमवर्
तङ्ङळ् चॆय्युन्न कर्म्मत्ताल् वरुत्तुवोर् । ६२
इत्थं विदुरर् पऋयुन्ननेरत्तु
सत्यवतीसुतनाय मुनीश्वरन् ६३
पुत्रशोकं कॆटुत्तीटुवान् भारत-
कर्त्तावु कृष्णनां द्वैपायनन् तानुं । ६४
वेगमोटॆयॆळुन्नळ्ळियतुकण्टु-
शोकं कलर्न्नु नृपनुं विदुररुं ६५
वीणु नमस्करिच्चाशु विनयमो-
टाननपत्मवुं ताळ्त्तिनिल्क्कुंविधौ । ६६
नित्यमनित्यमॆन्नुळ्ळ रण्टिङ्कलुं
वस्तुविवेकं कलर्न्नं महामुनि । ६७
सत्यमाकुन्नतु चॊन्नान् नृपनोटु
बुद्धिमानाय विदुररुं केळ्क्कवे । ६८

विदुरजी ने फिर कहा— 'अपने चित्त का विषाद छोड़ो और साध्वी गान्धारी देवी और अन्य मित्रवर्ग के साथ सत्य परायण पाण्डवों का दुःख दूर करके उनकी रक्षा करो। ५३-५९ अब वे ही तुम्हारे पुत्र हैं और वे बड़े सुख से तुम लोगों की रक्षा करेंगे। हे राजन् ! जान लो कि वे द्वेष, भेद, मत्सर आदि दोषों से रहित हैं। और वे अपने कर्मों के द्वारा तुमलोगों की परगति पैदा करेंगे। जब विदुरजी इस प्रकार कह रहे थे तब सत्पवती के पुत्र मुनीश्वर महाभारत के रचयिता, कृष्णद्वैपायन को पुत्रशोक को दूर करने के लिए वेग से पधारते देखकर धृतराष्ट्र और विदुर, शोक करते हुए, उनके चरणों पड़े और बड़े विनय के साथ अपने मुखकमल को नीचा करते हुए खड़े हो गये। ६०-६६ तब सत्य और

केळ्क्क मदीयमां वाक्कु महीपते !
मोक्षमॊऴिञ्ञु करुताय्किनियेतुं । ६९
मक्कळ् मरिच्चितॆन्नोर्त्तु शोकिक्कॊला
मक्कळल्लोर्क्किल् निनक्कवरारुमे । ७०
मायया मक्कळॆन्नुळ्ळ बुद्धिभ्रमं
मायुमाऱायतिल्ले निनक्किन्नियुं ? ७१
वाट्टं कळञ्ञु सन्तुष्टनाय् वाऴ्क नी
केट्टालुमॆङ्किल्च्चॊवितन्नु वास्तवं । ७२
भूमियिल्वन्नु पिऱन्नोरसुरर्कळ्
भूमिक्कॊट्टुक्करुतातॆ चमञ्ञतु । ७३
वानवरोटुमॊरुमिच्चवर्चॆन्नु
धेनुवाय्निन्नु विरिञ्चनोटोतिनाळ् । ७४
अप्पोळ् विरिञ्चनुं देवसमूहवुं
पत्मनाभन् वसिक्कुन्न पालाऴियिल् ७५
चॆन्नु पुकण्णऱियिच्चितु केट्टपो-
तण्णॊजलोचननाय नारायणन् ७६
देवकीदेवीतिरुमकनाय्वन्नु
देवकळ्क्कुं धरणिक्कुमुण्टायॊरु ७७
तापं कॆटुप्पान् पिऱन्नितऱिक नी
तापमतिन्नु मनस्सिलुण्टाकॊला । ७८

असत्य, इन दोनों में विवेक करनेवाले महामुनि ने राजा से बुद्धिमान् विदुरजी के सामने, जो तत्त्व सत्य है उसको सुनाया। हे राजन्! मेरी बात सुनो। मोक्ष के सिवाय अब और कुछ न ढूँढो। यह सोचकर कि पुत्रों का निधन हो गया तुम शोक न करो। सोचो तो ये तुम्हारे पुत्र ही न थे। माया के कारण ये मेरे पुत्र हैं ऐसा जो तुम्हारा बुद्धिभ्रम हुआ था वह क्या अब भी नष्ट न होने लगा है? दैन्य छोड़कर सन्तुष्ट होकर रहो और ध्यान से मुझसे परमार्थ सुनो। जो असुर पृथिवी पर पैदा हुए थे वे पृथिवी के लिए असह्य हो गये। ६७-७३ देवों के साथ वे गये और एक धेनु के रूप में उन्होंने ब्रह्मा को सब बतला दिया। तब ब्रह्मा और देवगण क्षीरसागर गये जहाँ पद्मनाभ (विष्णु) रहते थे और उनकी प्रशंसा करके उनको सब सुना दिया। सुनकर कमललोचन नारायण देवकीदेवी के सुपुत्र बनकर देवों का और पृथिवी का दुःख दूर करने के लिए पृथिवी पर पैदा हुए, जान लो। उसके लिए चित्त में

देवांशमायतु पाण्डवन्मारेन्नु
तेरुक शोकवुं माट्टुक तावकं । ७९
मूलविनाशमिवक्कु वरुत्तुवान्
मूलमाय् निन्ट्रे मकनाय् सुयोधनन् । ८०
पारिल् पिरन्नतु पार्क्किल् कलियत्रे
नेरे धरिक्क नी निन्मकनल्लवन् । ८१
नित्यमल्लिक्कण्टतोन्नुमरिक नी
नित्यमाकुन्नतात्मावु नारायणन् । ८२
मिथ्ययेन्नोर्त्तरुळिप्रपञ्चत्ते नी
सत्यमेन्नोर्त्तुपोम्मायकोण्टेवरुं । ८३
इत्थमरुळ्चेय्ततोक्क ग्रहिच्चुटन्
चित्तं तेळिञ्ञु विदुररुमादराल् । ८४
अंबिकासुतन् दुःखवु तीर्त्तुट-
नम्मुनितानुं मरञ्ञरुळीटिनान् । ८५
अध्यात्ममायुळ्ळ वाक्कुकळ् केट्टु पोय्
हस्तिनं पुक्कानरचनुमन्नेरं । ८६
भर्तृपुत्रादिकळोक्क मरिक्कयाल्
चित्तमुळन्नु तोळिच्चलच्चेत्रयुं ८७
कान्तमाराकिन कामिनीवर्ग्गवुं
गान्धारियोटुकूटाकुलप्पेट्टु पोय् । ८८

दुःख न करो। जान लो कि पाण्डव देवों के अंश हैं और अपना शोक समाप्त करो। इनका मूलविनाश करने के लिए तुम्हारा पुत्र सुयोधन निमित्त बना। ७४-८० सोचो तो वह कलि ही था जिसने पृथिवी पर जन्म लिया था। इस बात को ठीक समझो— वह तुम्हारा पुत्र नहीं था। जो कुछ यहाँ दिखाई देता है वह नित्य नहीं है। केवल नारायण ही नित्य है जो आत्मा है। इस प्रपञ्च को तुम मिथ्या समझो। माया के ही कारण उसे लोग सत्य समझते हैं। उनकी कही इन बातों को ग्रहण करने के बाद विदुरजी का सादर चित्त प्रसन्न हुआ। अंबिकापुत्र (धृतराष्ट्र) का दुःख दूर करके वह मुनि (व्यास) भी चले गये। अध्यात्म की इन बातों को सुनने के बाद राजा हस्तिनापुर सिधारे। पतियों और पुत्रों के निधन से प्रेम करनेवाले कामिनीवर्ग का चित्त अत्यन्त सन्तप्त हुआ और गान्धारी के साथ बहुत दुःखित हुआ। ८१-८८ अपने-अपने घर जाकर अत्यन्त क्षीण होने के कारण विलाप करने लगा। अम्बुजलोचन

तान् तान् मरुवुन्न गेहमकंपुक्कु
क्लान्तमारायि मुऱ्तुटङ्ङीटिनार् । ८९
अंबुजलोचनन्तन्नुटे चोल्लिना-
लंबिकानन्दनन्तन् कळल् कूप्पुवान् ९०
धर्म्मजन्मावुमवरजन्मारुमाय्
सन्मार्ग्गमोटु नटन्नारतुनेरं । ९१
आयतलोचननाकिय माधव-
नायसमार्योरु भीमरूपत्तेयुं ९२
न्यायमुण्टेन्नरुळ्चेय्तेटुप्पिच्चुकों-
ण्टायितेळुन्नळ्ळत्तेन्तितिन् कारणं ? ९३
मायामयनाय नारायणनुटे
मायाविलासङ्ङळाक्कर्ऱिञ्ञीटावू ! ९४
प्रीतियुं भीतियुं दुःखवुं भक्तियुं
नीतियुं नाणवुं कैक्कोण्टु धर्म्मजन् ९५
पादसरोजत्तिल् वीणु नमस्करि-
च्चातुरनायेळुनेट्टु निल्क्कुंविधौ । ९६
मन्दमन्दं करंकोण्टु तप्पिप्पिटि-
च्चुण्णी ! वरिक वरिकेन्नरुळ्चेय्तु । ९७
गाढगाढं पुणर्न्नूढमोदं नृपन्
कूटत्तलयिल् मुकर्न्नु मुकर्न्नुटन् ९८
आयुष्मानाकेन्नु पिन्नेयुं पिन्नेयु-
माशिस्सुकळरुळ्चेय्तु निर्त्तीटिनान् । ९९

(कृष्ण) के कहने से अम्बिकानन्दन (धृतराष्ट्र) के चरणों की वन्दना करने के लिए युधिष्ठिर और उनके भाई ठीक ढंग से निकले। आयत-लोचन (कृष्ण) माधव भीम की एक लोहे की मूर्ति को 'इसमें एक न्याय है' ऐसा कहते हुए जो उठवा ले जा रहे थे, इसका क्या कारण है ! मायामय नारायण के मायाविलासों को कौन समझ सकता है ? ८९-९४ जब युधिष्ठिर ने प्रीति, भीति (डर) दुःख, भक्ति, नीति, और लज्जा का अनुभव करते हुए चरणकमलों पड़कर नमस्कार किया और दुःखित होकर खड़े हुए तब राजा ने धीरे-धीरे हाथ से टटोलते हुए कहा— 'बेटा ! आओ, आओ' और बड़े प्रमोद के साथ उनका आलिङ्गन किया। और सिर को बार-बार चूमते हुए अनेक बार कहा 'आयुष्मान् होओ' और

पिन्नॆ वृकोदरन् वन्दिप्पतिन्नायि
निन्नतु कण्टिट्टु देवकीनन्दनन् १००
मॆल्लॆच्चॊरुकि नी निल्लुनिल्लॆन्नङ्ङु
चॊल्लातचॊल्लिया वल्लवीवल्लभन् १०१
नल्लोरिरुम्पुकॊण्टुळ्ळोरु भीमनॆ
मॆल्लवे मुन्पिलाम्मारु निर्त्तीटिनान् । १०२
उण्णी ! मकने ! वरिक वृकोदर !
कण्णु काणाततु नीयरिञ्ञीलयो ? १०३
ऎन्नु परञ्ञॊरु मन्नवन्तन्नुटॆ ।
मुन्निलटुत्तु निर्त्तीटिनारायसं १०४
भीमनतल्लो तिरुमुन्पिलॆन्नव-
रामोदमोटटुप्पिच्चारतुनेरं १०५
चिक्कनॆप्पुल्किनान् गाढं नरपति-
यॊक्कप्पॊटिञ्ञतु भीमप्रतिमयुं । १०६
निन्निल् वळर्न्नॊरु सन्तोषमोटु ञान् ।
नन्नाय् मुरुकॆप्पुणर्न्नतुमूलं १०७
ऎल्लु नुरुङ्ङि मरिच्चितो पैतले !
मॆल्लवेयॊन्नु ञरङ्ङीतुमिल्ल नी । १०८
दुःखङ्ङळुण्टायतॊक्कक्कळञ्ञु ञा-
निक्कालमिङ्ङनॆ सौख्यं कलर्न्निनि । १०९

आशीर्वाद दिये। तदनन्तर जब भीम वन्दना करने के लिए आगे बढ़ा तब उसे देखकर उस देवकीनन्दन गोपीवल्लभ (कृष्ण) ने 'ठहरो ठहरो' का इशारा करते हुए और साफ़-साफ़ न कहते हुए उस लोहमय भीम को धीरे-धीरे आगे खड़ी कर दिया। ९५-१०२ हे ! मेरे लाल ! बेटा भीम ! आओ क्या तुम नहीं जानते हो कि मैं देख न सकता हूँ ? ऐसा कहते हुए राजा के समक्ष निकट ही वह लोहे की मूर्ति खड़ी कर दी गयी। राजा भी उस सामने खड़े भीम के निकट ही खड़े कर दिये गये राजा ने उसका गाढ़ आलिङ्गन किया और वह भीम की मूर्ति चूर-चूर हो गयी। बेटा ! तुम्हारे प्रति जो मेरा बड़ा प्रेम हो गया था उससे मैंने तुम्हारा गाढ़ आलिङ्गन कर दिया। क्या हड्डी टूटकर तुम मर गये ! तुमने तो तनिक भी आर्तनाद नहीं किया। मैं तो सभी बीते दुःखों को भूलकर अब आगे सुख से पुत्रों के साथ रहने के लिए सोच रहा था। हे भगवान् ! तुमने क्या उसको भी मना कर दिया है ? १०३-११०

मक्कळुमायिरिप्पान् निनच्चेनतु-
मोक्कयरुतेन्नो तोन्नीतु दैवमे ! ११०
आपत्तुवन्नालतिल्प्परमीश्वर-
नापत्तुतन्ने वरुत्तुमे मेल्क्कुमेल् । १११
आलिगनत्तिङ्कलाशु मरिक्कुमे-
न्नारानुमुण्टो निरूपिच्चितीश्वरा ! ११२
कीचकनालिंगनेन मरिच्चुपोल्
नाशं निनक्कुमतिन्मूलमाकयो ! ११३
चित्तमळिञ्ञु धृतराष्ट्रराकुलाल्
मिथ्याविलापङ्ङळ्चेय्तान् बहुविधं । ११४
भीमसेनन् मरिच्चानेन्नुरच्चिट्टु
भीमनां मन्नन् विलापं तुटङ्ङिनान् । ११५
इत्थं प्रलापं कलन्नोरुनेरत्तु
तत्वस्वरूपनखिललोकात्मकन् ११६
सर्व्वभूतान्तः स्थितनाकुमीश्वरन्
दुर्व्विलापंचेय्त मन्नवन्तन्नोटु । ११७
मन्दस्मितं चेय्तु मन्दमरुळ्चेय्तु
मन्दमतिमतां बोधत्तिनाय् मुदा— ११८
वैचित्र्यवीर्यनायुळ्ळ महीपते !
वैचित्र्यमेत्रयुमित्तोळिल् तावकं । ११९
मन्नव ! नीयितु चेय्युमेन्नुळ्ळतु
मुन्नमेयुळ्ळिलरिञ्ञितु ञानटो । १२०

जब विपत्ति आ जाती है तब ईश्वर आगे उत्तरोत्तर और विपत्तियाँ पैदा करता है। हे ईश्वर ! यह कौन सोच सकता है कि आलिंगन करने में कोई मर जाय ! कहते हैं कि कीचक आलिंगन से मरा था। क्या तुम्हारा भी नाश उसी से हुआ है ! इस प्रकार धृतराष्ट्र ने शान्त चित्त से अनेक प्रकार के विलाप किये। यह समझकर कि भीमसेन मर गया है भयप्रद राजा ने विलाप करना प्रारम्भ किया। जब इस प्रकार का प्रलाप हुआ तब तत्त्वस्वरूप, अखिललोकात्मक, सभी भूतों के अन्तःस्थित ईश्वर ने मुस्कराकर मिथ्याविलाप करनेवाले राजा से मन्द-मतियों के बोध के लिए इस प्रकार कहा— १११-११८ हे विचित्रवीर्य के पुत्र ! हे राजन् यह तुम्हारा काम अत्यन्त विचित्र है ! हे राजन् !

भीमनल्ल पॊटियायतु भूपते !
भीमप्रतिमयायोरिरुम्पायतुं । १२१
खेदिक्कवेण्टा मरिच्चील मारुति
खेदं वरुत्तुकयिल्ल ञानार्क्कुमे । १२२
इन्नुमॊन्नुण्टु परयुन्नितु निन-
क्किन्नियुं नल्लतुतोन्नुकिल् नन्नहो ! १२३
इत्तरमॊक्कवे वच्चुकळञ्ञिनि-
च्चित्तत्तिल् नल्लतॆल्लां करुतीटुक । १२४
रागादिदोषङ्ङळॊक्ककक्कळञ्ञिनि-
ब्भागवतप्रियनाय् वाळ्क सन्ततं । १२५
स्वैरमाय् वाळुक नन्दनन्मारुमाय्
वैरं कळञ्ञु समनायिरिक्कणं । १२६
सज्जनसेव्यनामच्युतन्वाक्किनाल्
लज्जितनाय् तुलोमन्धनां भूपनुं । १२७
पिन्नॆक्रमेण तळुकिनान् मक्कळॆ
खिन्नभावं कळञ्ञीटिनारेवरुं । १२८
कान्तविलोचनमारुमाय् पाण्डवर्
गान्धारियॆत्तॊळुवान् नटन्नीटिनार् । १२९
अप्पोळ् पराशरपुत्रनां व्यासनुं
मुल्पाटु गान्धारियॆक्कण्टु चॊल्लिलनान्— १३०

मैंने पहले ही समझ लिया था कि तुम इस प्रकार करोगे। जो चूर-चूर हुआ वह भीम नहीं था वह एक लोहे की भीमप्रतिमा थी, हे भूपाल ! खेद न करना, भीम मरा नहीं है, मैं किसी को दुःख न करूँगा। एक बात तो मुझे आज भी कहनी है— अब भी अगर तुमको हित की बात सूझेगी तो अच्छा होगा। इन सब बातों को छोड़कर अपने चित्त में अच्छी वृत्तियाँ पैदा करो। राग आदि दोषों को त्यागकर अब भागवत-प्रिय बनकर सदैव रहो। ११९-१२५ पुत्रों के साथ वैर त्यज कर शान्ति से रहो। सज्जनों के सेव्य अच्युत की बातों से अन्धा भूपाल अत्यन्त लज्जित हुआ। तत्पश्चात् उसने पुत्रों को क्रम से प्यार किया और सभी ने अपना खिन्नभाव छोड़ दिया। अब पाण्डव अपनी स्त्रियों के साथ गान्धारी की वन्दना करने चले। तब पराशर के पुत्र व्यास ने गान्धारी से पहले ही मिलकर कहा— "तुम पाण्डवों को शाप न दो",

शापं कॊटुक्कॊला पाण्डवन्मार्क्कु नी
तापं वरुत्तॊला मेलिलुमेतुमे । १३१
कोपमायुळ्ळतु वित्तॆन्नरियणं
पापमाकुन्न मरामरत्तिन्नॆटो । १३२
निर्म्मलन्माराय धर्म्मजनादिकळ्
सम्मतमुळ्ळवर् निन्नुटॆ मक्कळॆ- १३३
न्नुणमयोटे धरिच्चीटुक मट्टिनि-
क्कर्म्ममत्रे करञ्ञॆन्तिनिक्कारियं ? १३४
निर्म्मलमानसयाकिय नीयिनि-
क्कलमषं तीर्प्पानुपायवुं चिन्तिच्चु १३५
कर्म्मविच्छेदं वरातॆ निरन्तरं
धर्म्मङ्ङळुं चॆय्तु बन्धुजनत्तॊटुं १३६
भर्त्तृशुश्रूषयुं चॆय्तु सुतरुमा-
यत्तल्कळञ्ञु वसिक्कॆन्नुमिङ्ङनॆ । १३७
सत्यवतीसुतनाय तपोधनन्
चित्तविषादं कळञ्ञोरनन्तरं १३८
वन्नु वणङ्ङिनार् धर्म्मसुतादिकळ्
नन्नायणच्चवळुं तळुकीटिनाळ् । १३९
गान्धारितन्नुटॆ दृष्टि पतिच्चु कृ-
तान्तात्मजनुं कुनखियाय् वन्नितु । १४०

अब आगे किसी को दुःख न पैदा करो। जान लो कि कोप जो है वह पापरूपी वनस्पति का बीज है। १२६-१३२ अपने चित्त में स्थिर कर लो कि निर्मल और सन्मतिवाले पाण्डव अपने पुत्र हैं। और जो कुछ होता है वह अपने कर्म का फल है। रोने से क्या होता है तुम तो निर्मलमानस की हो। इसलिए पाप दूर करने के उपाय सोचो और कर्मविच्छेद न करती हुई निरन्तर धर्मकार्य करती रहो और बन्धुजनों और पुत्रों के साथ अपने पति की शुश्रूषा करती हुई दुःख छोड़कर सुख से रहो। सत्यवती के पुत्र तपोधन (व्यास) के द्वारा अपने चित्त का विषाद मिट जाने पर युधिष्ठिर आदि आये और उन्होंने (गान्धारी) की वन्दना की। उसने भी उनको छाती लगाकर प्यार किया। गान्धारी की दृष्टि के लगने से युधिष्ठिर कुनखी बन गया। १३३-१४० सभी ने सादर कुन्ती की भी वन्दना की और उसने भी प्रसन्न होकर प्यार किया। तब छाती पीटती हुई दुःखित कमललोचना द्रौपदी आयी।

कुन्तियेयुं तोंळुतीटिनारादराल्
चिन्त तेंळिञ्ञवळुं तळुकीटिनाळ् । १४१
अन्नेरमाकुलप्पेंट्टु तोंळिच्चल-
च्चिन्दीवराक्षियां द्रौपदि वन्नितु । १४२
मट्टु सुभद्रयुमुत्तरयुं कर-
ञ्ञुट्वराकिय नारीजनङ्ङळुं १४३
चुट्टुं पिटिच्चुमिटिच्चुं तोंळिच्चुम-
ङ्ङट्मिल्लातोंरु दुःखं मुळुक्कयाल् । १४४
उट्वरेंच्चोंल्लि वाविट्टलरियु-
मिट्टिु कण्णुनीर् वीणङ्ङोंळुकियुं । १४५
वीणुमुरुण्टुं पुरण्टुं पलतरं
केणुं किळिञ्ञळिञ्ञंबरं ताङ्ङियुं १४६
केशमळिञ्ञु पोंटिकोंण्टणिञ्ञुमुळ्-
क्लेशं पोंऱाञ्ञु नटुङ्ङियुमङ्ङनें । १४७
कुन्तियेंच्चेंन्नु पुणर्न्नितु पाञ्चालि
सन्ततमोलुन्न कण्णुनीरोटुकू- १४८
टम्मे ! चतिच्चितोंरैवर् कुमाररुं
पोंन्मकनाकुमभिमन्युवुमिङ्ङनें । १४९
अेंन्नोटुकूटेंप्पिऱन्न धृष्टद्युम्न-
नेंन्नेंयीवण्णं करयुमाऱाक्किनान् । १५०
भाग्यमिल्लात पेंण्णुङ्ङळिल् मुन्पिनि-
क्काक्किच्चमच्चितु दैवं विधिवशाल् । १५१

औरों में सुभद्रा, उत्तरा, तथा अन्य बन्धुस्त्रियाँ आपस में गले लगाती और छाती पीटती हुई आयीं क्योंकि उनका दुःख निस्सीम था। उन्होंने बन्धुओं का नाम लेकर ज़ोर से रोया और धाराप्रवाह आँसू गिराये। वे भूमि पर गिरीं और लोटीं। और विलाप करती हुईं उन्होंने अपने उतरते वस्त्र को हाथ से रोका। उनके केश भी खुल गये और धूल से ढक गये। दुःख न सह सकने से वे पीड़ित और भयभीत हुईं। गिरते आँसुओं के साथ पाञ्चाली जाकर कुन्ती से मिली। १४१-१४८ माताजी ! पाँचों कुमारों ने धोखा दिया है और मेरा स्वर्णपुत्र अभिमन्यु ने भी ऐसा ही किया। और मेरे सहोदर धृष्टद्युम्न ने मुझे इस प्रकार रोलाया है। और दैव ने विधिवश मुझको भाग्यहीन स्त्रियों में सबसे

अम्मे ! सुबलजे ! निर्म्मले ! गान्धारि !
चेम्मे पोरुक्कुन्नतेङ्ङने ञानय्यो ! १५२
अन्तेन्मकळे ! नीयेन्ने निरूपिक्क
चिन्तिच्चालारु शरणमिनिक्किनि । १५३
अन्धनाकुन्नोरु भर्त्तावुतन्नेयु-
मन्त्यकालत्तिङ्कलारु भरिप्पतु ? १५४
उत्तमयायुळ्ळ कुन्तियु कृष्णयु-
मुत्तर्योटु सुभद्र गान्धारियु १५५
तङ्ङळेक्कूटे मरन्नोरळल् कोण्टु
तङ्ङळिल्त्तङ्ङळिल् नन्नाय् तळुकियु १५६
कण्णुनीर् वीणु निरञ्ञु निलत्तुरु-
ण्टुण्णी ! मकने ! सहोदर ! वल्लभ ! १५७
ञङ्ङळे वैकाते कोण्टुपोय्क्कोळ्ळुवि-
निङ्ङनेयेन्तिनु ञङ्ङळिरिक्कुन्नु ? १५८
निङ्ङळ कूटाते निमिषं पोरुक्कुमो ?
निङ्ङळे ञङ्ङळिनियेन्नु काणुन्नु ? १५९
इत्तरं चोल्लिक्करयुन्न नेरत्तु
चित्तमुळन्नोरु गान्धारि चोल्लिनाळ्— १६०
पोक कुरुक्षेत्रमाकिय भूमियिल्
पोरिल् मरिच्चारवर्कळेन्नाकिलु १६१
काणामवरुटल् मेलिलोरु कुरि
काणणमेन्नु तोन्नीटुकिलावतो ? १६२

पहली बनाया है । हे सुबल की पुत्रि ! माँ ! हे निर्मल गान्धारि ! यह सब मैं कैसे सह सकती हूँ ? (तब गान्धारी बोली—) मेरी बेटी ! मेरी स्थिति तो देखो ! अब मेरा कोई शरण नहीं है । और मेरे अन्धे पति की अन्तिम काल में कौन सेवा करेगा ? उत्तम कुन्ती और द्रौपदी, उत्तरा, सुभद्रा और गान्धारी ने दुःख में अपने को भूलकर आपस में गले लगाये और प्यार किया, १४९-१५६ उनके आँसुओं के गिरने से भूमि भर गयी । उस पर लोटती हुई वे चिल्लाईं !— हे बेटा ! हे सहोदर ! हे प्रियतम ! जल्दी हमें ले जाओ, इस प्रकार हम यहाँ क्यों रहें ? तुम्हारे बिना हम क्षण भर जी सकते हैं ? अब हम तुम्हें फिर कब देखेंगे ? जब वे इस प्रकार कहते हुए रो रही थीं तब दुःखित गान्धारी बोली—'हम

पोरुक वैकरुतेतुमिनियुटन्
पोरिल् मरिच्चवरेक्कण्टुकोळ्ळुवान् । १६३
अन्तिनिवळुळ्ळिलिङ्ङने तोन्निच्च-
तेन्पेरुमानेन्नताक्करिञ्ञीटावू । १६४
कून्तलुं केट्टि नटन्नु तुटङ्ङिनाळ्
गान्धारियोटु सुभद्र पाञ्चालियुं । १६५
उट्वरायुळ्ळ मट्टुळ्ळ नारिमार्
चुट्टुं नटन्नु तुटङ्ङिनाराकुलाल् । १६६
दुर्म्मति पूण्ट धृतराष्ट्रभूपनुं
निर्म्मलन्माराय धर्म्मजन्मादियुं १६७
गूढस्मितनाय कूटस्थनीश्वरन्
गूढस्थनव्ययनाय मायामयन् १६८
कूटॆ नटन्नितु पाण्डवन्मारुमाय्
गूढमायोन्नुण्टतिङ्कलुं मानसे । १६९
अष्टादशाक्षौहिणि बलमोक्कवे
पट्टुकिटक्कुन्न पोर्क्कळं तन्निले १७०
चेन्नवर् निन्नतुनेरं पराशरन्-
तन्नुटॆ पुत्रननुग्रहं चेय्कयाल् १७१
दूरेक्किटक्कुं शवङ्ङळेयोक्कवे
चारत्तु कण्टितु गान्धारियुं तदा । १७२

सब कुरुक्षेत्र नामक युद्धभूमि में चलें। यद्यपि वे युद्ध में मर गये हैं तथापि जो उनके शरीर को देखना चाहती हैं वे एक बार और देख सकेंगी। इस लिए बिना विलम्ब के युद्ध में मरों को देखने चलें। उनके मन में यह बात क्यों सूझी ? कौन जानता है कि कौन किसका बड़ा है ? । १५७-१६४ बाल बाँधकर सुभद्रा और द्रौपदी गान्धारी के साथ चलने लगीं। अन्य बन्धुस्त्रियाँ भी व्याकुल होकर उनके साथ चलने लगीं। दुर्मतिवाला राजा धृतराष्ट्र, निर्मल युधिष्ठिर आदि, गूढरूप में स्थित कूटस्थ, गूढस्थ, अव्यय, मायामय ईश्वर भी पाण्डवों के साथ चले। उनके मन में कोई गूढ बात अवश्य है। जब वे अठारह अक्षोहिणी की सेना जहाँ पड़ी थी उस रणभूमि में जाकर खड़े हुए तब पराशर के पुत्र (व्यास) के अनुग्रह से गान्धारी ने दूर दूर पर पड़े शवों को निकट में ही देखा। १६५-१७२

गान्धारी-दुःखं (विलापम्)

पत्तु सहस्रं गजाश्वरथिकळुं
पत्तियुं प्रत्येकमूक्ककोटट्टुत्तुटन् १
पत्तु दिवसवुं कौन्त्न देवव्रत-
नस्त्रप्रवरनामर्ज्जुनन्तन्नुटे २
पत्रिकळ्कौण्टुटन् छिद्रमामङ्गवुं
भक्तपरायणनाय नारायणन् ३
रक्तसरोजपदङ्ङळिलेत्रयुं
भक्ति मुळ्ळुत्तिट्टु निश्चलमायोरु ४
चित्तवुं बद्धाञ्जलिपूण्ट हस्तवुं
अत्रयुं कूर्त्तुमूर्त्तुळ्ळ शरङ्ङळ्कौ- ५
ण्टुत्तममायोरु मेत्तयिलङ्ङने
मुक्तियां नारि वरुन्नतुं पार्त्तुपा- ६
र्त्तत्यन्तशुद्धनाय् मेवुन्न भीष्मरे
चित्तभावत्तोटु काणायितन्तिके । ७
पत्तुमोरेट्टुदिवसवुं मुट्टाते
युद्धङ्ङळ् चेय्तु मरिच्चुकिटक्कुन्न ८
पृत्थ्वीपतिकळ्मुटिकटकादिकळ्
विस्तृतमाय रथङ्ङळ् कौटिकळुं । ९
रक्तत्तिल् वीणिळयुं कौटिक्कूरयुं
छत्रङ्ङळ् चामरं तालवृन्तङ्ङळुं १०

गान्धारी का दुःख और विलाप

जिसने दस हज़ार हाथी, घोड़े और रथी और पैदल सैनिकों का अलग-अलग सामना करके दस-दस दिन तक लगातार मारा, जिसका शरीर योद्धृवर अर्जुन के शरों से घायल था, जिसका चित्त भक्तवत्सल नारायण के चरणकमलों पर बढ़ी-चढ़ी भक्ति के कारण निश्चल था और हाथ अञ्जलिबद्ध था और जो तीक्ष्ण-तीक्ष्ण शरों के बने गद्दे पर मुक्तिरूपी स्त्री की प्रतीक्षा करते हुए लेटा हुआ था, वह अत्यन्त शुद्ध भीष्म अपने भावों से प्रभावित दिखाई दिये। १-७ अठारह दिन लगातार युद्ध करके मरे पड़े पृथ्वीपतियों के बाल और वलय, बड़े बड़े रथ, झण्डों के स्तम्भ, रुधिर में भीगे झण्डे, छत्रियाँ, चँवर, पंखे, शस्त्र और शस्त्र के कटे

शस्त्रङ्ङळुं शस्त्रकृत्तगात्रङ्ङळुं
मस्तकत्तिङ्कॆन्नु वेरिट्टु वीणॊरु ११
चित्रपटवुमुद्वृयत्तवुं तॊङ्कलुं
तप्तकार्त्तस्वरालंकृतस्कन्धवुं १२
चत्तुचत्तॊक्क मलच्चुकिटक्कुन्न
हस्तिवरन्मारुमश्वगणङ्ङळु- १३
मट्मिल्लातॊरु शस्त्रङ्ङळ्कॊण्टुकॊ-
ण्टट्टुवीणॊरवयवजालवुं । १४
अस्तमिप्पानट्टुत्तोरुनेरत्तु व-
न्नॊत्तु मेघङ्ङळ् परन्नपोले गळ- १५
द्रक्तङ्ङळ्कॊण्टतिसक्तमायुळ्ळॊरु
युद्धभूमौ निरत्तिक्किटक्कुन्नॊरु १६
पुत्रसमूहवुं मित्रवर्ग्गङ्ङळुं
गृद्ध्रङ्ङळ् नाय् नरि काकसमूहवुं १७
पक्षिगणङ्ङळुं नक्तञ्चरादियुं
कण्टुकण्टिण्टल्मुळुत्त गान्धारि वै- १८
कुण्ठनां माधवन्तन्नोटु चॊल्लिलनाळ्—
कण्टीलयो नी मुकुन्दा ! धरणियि-
लुण्टाय मन्नरिल् मुन्पन् भगदत्तन् १९
तन्करिवीरनरिके धनुस्सुमाय्
संक्रन्दनात्मजनॆय्त शरत्तिनाल् २०
वीणितल्लो किटक्कुन्नू धरणियिल्
शोणितवुमणिञ्ञय्यो शिव ! शिव ! २१

अंग, सिर से अलग होकर गिरे चित्रपट (रंगीन कपड़े) मालाएँ, तप्त स्वर्ण से अलंकृत कन्धे, मर कर अपने पीठ पर लेटे हाथी और घोड़े, असंख्य शस्त्र लग-लगकर निरन्तर गिरे शरीरावयव, ८-१४ सूर्यास्तमय के समय इकट्ठा होकर फैले हुए मेघों के समान टपकते रुधिर से छीपे हुए और युद्धभूमि पर फैलाये पड़े पुत्रों के समूह और मित्रवर्ग, गिद्ध, कुत्ते, सियार, काकगण, चिड़ियों के समूह, और राक्षसों को देख-देखकर दुःखित गान्धारी वैकुण्ठ माधव से बोली— हे मुकुन्द ! तुमने देखा कि पृथ्वी में पैदा हुए राजाओं में श्रेष्ठ भगदत्त, हाथ में धनुष लिए, अपने ही हाथी के पास, संक्रन्दन के पुत्र का बाण लगकर पृथिवी पर गिर पड़ा है, हे ! शिव !

नल्लमरतकक्कलिलनोटोत्तोरु
कल्याणरूपन् कुमारन् मनोहरन् २२
चोल्लेळुमर्ज्जुनन्तन्टे तिरुमकन्
वल्लवीवल्लभ ! निन्टे मरुमकन् । २३
कोल्लाते कोळ्ळाञ्ञतेन्तवन्तन्ने नी
कोल्लिक्कयत्ते निनक्कु रसमेटो । २४
अल्ललाकुन्नुते कण्टतोरुमिनि-
क्कोल्लाय्किलुं पोळियल्लितु दैवमे ! २५
मन्दस्मितं पूण्टु सुन्दरमां मुख-
मिन्दीवरेक्षण ! कण्टाल् पोरुक्कुमो ? २६
ऒत्रयुं बालयाय् मेविनोरुत्तर-
चित्तमुळन्नलरुन्नतु काण्क नी । २७
सुन्दरियाय सुभद्रयुं भूमियिल्
क्रन्दनं चेय्तुरुळुन्नतु काण्क नी । २८
अल्लल्पूण्टिङ्ङने ञङ्ङळ् केळुन्नति-
लिल्लयो खेदं चेरुतु निन्मानसे ? २९
कल्लुकोण्टो मनं तावकमाकिल-
क्कल्लिनुमार्द्रतयुण्टितु काणुन्पोळ् । ३०
अल्ले घटोल्क्कचनाय भीमात्मज-
नल्लो किटक्कुन्नत ङ्ङतिनप्पुरं । ३१

शिव ! १५-२१ अच्छे मरकतमणि के समान, कल्याणरूप, कुमार, मनोहर, विख्यात अर्जुन का सुपुत्र, हे गोपीवल्लभ ! तुम्हारा ही भाञ्जा, उसे क्यों तुमने मारे जाने से नहीं बचाया ? तुम्हें क्या मरवाने में ही रस है ? तुमने तो किसी को मारा नहीं, फिर भी यह सब देख-देखकर दुःख होता है । तुम्हारा मुस्कराता हुआ सुन्दर मुँह देखकर, हे कमल-लोचन ! कैसे सहा जाय ? देखो, इस अत्यन्त बालिका उत्तरा का चित्त कितना पीड़ित है ! यह भी देखो कि यह सुन्दरी सुभद्रा भूमि पर पड़ी रोती हुई लोट रही है । २२-२८ हम लोग जो इस प्रकार दुःखित होकर विलाप कर रही हैं इससे तुम्हारे मन में तनिक भी खेद नहीं है ? अगर तुम्हारा मन पत्थर का बना हो तो पत्थर को भी यह सब देखकर सहानुभूति हो जानी चाहिये न ? देखो नील पर्वत के समान भीमपुत्र घटोत्कच उस ओर पड़ा है । कर्ण का प्रयुक्त शक्ति के लगने से वह यमपुरी चला गया । यह देखो जयद्रथ का शरीर यहाँ पड़ा है जिसकी गरदन

नीलमलपोलें कर्ण्णन् प्रयोगिच्च
वेलुं तऱ्च्चवन् कालन्पुरिपुक्कान् । ३२
कण्ठं मुऱिञ्ञु जयद्रथन्तन्नुटल्
कण्टालुमर्ज्जुननेंय्त शरत्तिनाल् । ३३
ऍन्मकळ् दुश्शळ केळुन्नतोर्त्तुळ्ळि-
लॅन्मनं वॅन्तुरुकुन्नु शिव ! शिव ! ३४
द्रोणरॅ संस्करिच्चोरु निलमता
काणायतारणनायततल्लयो ? ३५
धृष्टतयुळ्ळ धृष्टद्युम्ननेट्वुं
शिष्टनायोरु गुरुविनॅक्कॊल्लुवान् । ३६
मट्टॊरुत्तनु तोन्नीटुमो मानसे
मुट्टुमिवनॊळिञ्ञोर्क्किल् महामते ! ३७
अय्यो ! पुनरतिनङ्ङेप्पुऱत्तता
मॅय्यळ्ळकुळ्ळ दुश्शासननॅन्मकन् । ३८
नीयॅन्तिवण्णमॅन् माधव ! काट्टुवान् ?
तीयतु कत्तुन्नितॅन्नुळ्ळिलीश्वरा ! ३९
मारुति कीऱिप्पिळर्न्नु कुटिच्चॊरु
माऱिटं कण्टाल् पॊऱुक्कुमो पैतले ! ४०
माऱुमो कण्णुनीरिन्निनिक्कुण्टाय-
ताऱुमो शोकमॅन्मानसे गोपते ! ४१
ऍन्टॆ मकन् दुरियोधनन्तन्मकन्-
तन्टॆ शरीरमतल्लो दयानिधे ! ४२

अर्जुन के शर से काटी गई। मेरी पुत्री दुश्शला का विलाप सुन-सुनकर मेरा मन सन्ताप से पिघल रहा है, हे शिव ! शिव ! देखो ! वहाँ वह स्थान है जहाँ उस ब्राह्मण द्रोण का संस्कार किया गया है। २९-३५ यह वह अत्यन्त धृष्ट धृष्टद्युम्न है जिसे छोड़कर और किसी को, हे महामते ! अगर सोचा जाय, इस शिष्ट गुरु को मारने को सूझ ही न सकता था। हा ! उसके उस तरफ़ मेरा पुत्र शोभनशरीर दुश्शासन पड़ा है। हे माधव ! तुमने मेरे साथ यह सब क्यों किया है ? हा ! भगवान् ! मेरे भीतर दुःख की आग जल रही है। मारुति (भीम) ने जहाँ से उसकी छाती फाड़कर रुधिर पिया था वह स्थान देखकर कैसे सहा जाय ! हे गोपते ! मेरे आँसू कैसे सूख सकते हैं और मेरा शोक कैसे ठण्डा हो सकता है ? और उधर जो पड़ा है वह, हे दयानिधे ! मेरे पुत्र दुर्योधन

लक्षणमुळ्ळोरु पैतलामेन्नुटे
लक्षणा नीयुं चतिच्चितो ञङ्ङळे ? ४३
कण्णुकोण्टिङ्ङने काणेणमेन्नतु-
मुण्णिकळेयेनिक्कोन्नितु तोन्नुवान् ? ४४
कर्ण्णनामंगनराधिपनेन्नुटे-
युण्णिकळ्क्केटं प्रधाननायुळ्ळवन् ४५
कुण्डलमट्ता वेरे किटक्कुन्नु
गण्डस्थलमता पिन्नेयुं मिन्नुन्नु । ४६
विल्लाळिकळ्मुन्पनायवन्तन्नुटे
विल्लिता ! वेरे किटक्कुन्नतीश्वरा ! ४७
कण्टाल् मनोहरनामवन्तन्नुटल्
कण्टालुमन्पोट्टु नायुं नरिकळुं ४८
चेन्नु कटिच्चु वलिक्कुन्नितिङ्ङने-
यिङ्ङने वन्नतिल्कारणमेन्तय्यो ! ४९
पूरिच्च खेदाल् करं मटियिल् चेर्त्तु
भूरिश्रवाविन्प्रणयिनि केळुन्नोळ् । ५०
उन्मूलनाशनकारणनाकिय-
दुर्म्मतिवीरन् शकुनियुटेयुटल् ५१
पक्षिकळ्तङ्ङळ्क्कु भक्षणमाक्किनान्
पक्षमायुळ्ळतु कण्टीलयो हरे ! ५२
उण्णी ! मकने ! दुरियोधना ! तव
पोन्निन्किरीटवुं भूषणजालवुं ५३

का पुत्र नहीं है ? ३६-४२ हा ! मेरे लक्षणयुक्त बेटा लक्षण ! क्या तुमने भी हम लोगों को धोखा दिया है ? मुझे यह क्यों सूझा है कि मैं बच्चों को इस हालत में अपनी आँखों देखूँ ? अंगाधिप कर्ण जो मेरे पुत्रों का मुख्य पुरुष था वहाँ पड़ा है अपने कुण्डलों से हीन । फिर भी उसका कपोलस्थल चमक रहा है । उस धानुष्कों में श्रेष्ठ का चाप, हे भगवान् ! यहाँ अलग होकर पड़ा है । उसका देखने में सुन्दर शरीर ज़रा देखो ! कुत्ते और सियार उसको काट-काट कर खींच रहे हैं । क्या कारण है, यह सब हुआ ? ४३-४९ अत्यन्त खेद के कारण हाथ अपनी गोद में लिए भूरिश्रवा की प्रणयिनी विलाप कर रही है । उन्मूल-नाशन का कारण वीर शकुनि के शरीर को पक्षियों का भोजन बनाया है हरे ! यह तुमने

उन्पर्कोनोंत्तोरु वन्पुं प्रतापवुं
गंभीरमायोरु भाववुं भंगियुं ५४
इट्टुं कळञ्ञुटनेन्नेयुमेत्रयु-
मिष्टमायीटुं पिताविनेत्तन्नेयुं ५५
पेट्टेन्नुपेक्षिच्चु पोय्क्कोण्टतेङ्ङु नी ?
पोट्टुन्नितेन्मनं कण्टितेल्लामहो ! ५६
पट्टु किटक्कमेले किटक्कुन्न नी
पट्टुकिटक्कुमाऱायितो चोरयिल् ! ५७
पुष्टकोपत्तोटु मारुति तच्चुटन्
पोट्टिच्चु कालुमोटिच्चुकोण्टिङ्ङने ५८
कण्टुकूटायिनिक्केन्नु गान्धारियुं
मण्टिनाळ् वीणाळुरुण्टाळ् तेरुतेरे । ५९
पिन्ने मोहिच्चाळुणर्न्नाळ् पोटुक्कने
खिन्नतपूण्टु करञ्ञवळ् चोल्लिनाळ्— ६०
इत्र कुटिलतयुण्टायोरुत्तने-
प्पृत्थिवयिलिङ्ङने कण्टील केशव ! ६१
पाङ्ङायोरुपुरं निन्नु नी पोरतिल्
नीङ्ङातभिमानिकळाय भूपरे ६२
रण्टुपुरत्तुमुळ्ळोर्कळेक्कोल्लिच्चु-
कोण्टतु मऱारुमल्ल नीयेन्नितये । ६३

नहीं देखा ? बेटा ! मेरे लाल ! दुर्योधन ! तुम्हारा सुवर्ण का किरीट, आभूषण का समूह, इन्द्र के समान तुम्हारा महत्त्व और प्रताप, तुम्हारा गंभीर भाव और तुम्हारा सुन्दर रूप, यह छोड़कर और मुझे तथा अपने प्रिय पिता को झट से त्याग कर तुम कहाँ चले गये ? यह सब देखकर मेरा मन टूट रहा है। ५०-५६ तुम जो रेशम के गद्दे पर लेटते थे अब क्या तुम को रुधिर में लेटने की नौबत आयी ! बड़े क्रोध के साथ भीम ने मारा और जाँघ तोड़ डाली। मैं यह नहीं देख सकती हूँ। ऐसा कहती हुई गान्धारी चली गयी; गिरी और लगातार लोटने लगी। तदनन्तर बेहोश हो गयी। फिर होश में आकर बड़े दुःख के साथ रोने लगी और बोली— हे केशव ! तुम जैसे इतनी कुटिलतावाले और किसी को मैंने इस पृथ्वी पर नहीं देखा है। युद्ध में तुम एक तरफ होकर दोनों पक्षों के अनेक अटल अभिमान वाले राजाओं को तुम ही ने मरवाया, और किसी ने नहीं ! ५७-६३ औरों को मैं क्यों कहूँ ? सोचो तो यह

ऒन्तिन्नु मट्टुळ्ळवर्क्कप्परयुन्नु
चिन्तिक्किल् निन् मरिमायमितॊक्कयुं । ६४
गान्धारि पिन्नेयुं चॊन्नाळ् मुकुन्दनो-
टान्तरमिन्नयुळ्ळोरु नीयुं तव ६५
वंशवुंकूटॆ मुटिञ्ञुपोमिल्लॊरु-
संशयं मून्नु पन्तीराण्टु चॆल्लुन्पोळ् । ६६
अङ्ङनॆतन्ने वरेणमॆन्नुळ्ळतु-
ण्टिङ्ङॆनिक्कुं मनक्कान्पिल् सुबलजे ! ६७
नन्नायितु भवतिक्कुमिनिक्कुमि-
न्नॊन्नुपोलॆ मतमायतुमीश्वरन् । ६८
तम्मिलीवण्णं पऱयुन्ननेरत्तु
धर्म्मजनोटु चॊन्नान् धृतराष्ट्ररुं— ६९
युद्धत्तिल् वीणु मरिच्च नृपरुट-
लॆन्नयुं वैकातॆ संस्करिप्पिक्क नी । ७०
नल्ल कृपरतु चॆय्यिक्कुमॆन्नतु
तुल्यमतियाय धर्म्मजन् चॊल्लिनान् । ७१
बुद्धिविलोचननाय नरपति
युद्धभुविनिन्नु भार्ययुं तानुमाय् ७२
हस्तिनमाय पुरिपुक्करुळिना-
नत्तलुमॊट्टु चुरुक्किमरुविनान् । ७३
शुद्धमनस्सहजादियुमायथ
शुद्धमनस्सां नृपति युधिष्ठिरन् ७४

सब तुम्हारी ही माया है। गान्धारी ने फिर कहा मुकुन्द से— इस प्रकार गूढ आशयवाले तुम और तुम्हारा वंश नष्ट हो जायेंगे, संशय नहीं, छत्तीस बरस के अन्दर। (तब कृष्ण बोले—) हे सुबल की पुत्रि ! मैं भी यही चाहता हूँ। यह अच्छी बात हुई कि भवती का और मेरा आज एक ही मत है। जब कृष्ण और गान्धारी की इस प्रकार आपस में बात हो रही थी तब धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर से कहा— युद्ध में मरे राजाओं के शरीर का तुम जल्दी संस्कार कराओ। ६४-७० समबुद्धि वाले युधिष्ठिर ने उत्तर दिया कि साधुपुरुष कृप करावेंगे। राजा, जिनकी बुद्धि ही आँख थी, अपनी पत्नी के साथ युद्धभूमि से हस्तिनपुर चले गये और वहाँ दुःख कम करके रहने लगे। शुद्धि चित्त राजा युधिष्ठिर अपने

शुद्धनखण्डन् जगत्परिपूर्ण्णनां
भक्तप्रियन् परमात्मा परापरन् ७५
नित्यनां देवकीपुत्रन् निरुपमन्
सत्यस्वरूपनन्तननाकुलन् ७६
निर्ज्जरसेवितन् निष्कळन् निर्ग्गुणन्
निर्ज्जरनायकपुत्रप्रियसखि ७७
चित्तादिकळ्क्कु चॆन्नॆत्तरुतातॊरु-
तत्त्वात्मकन् नानातत्त्वस्थितन् परन् ७८
व्यक्तनव्यक्तनसक्तन् भुवनसं-
वृत्तन् विविक्तवासप्रियन् माधवन् ७९
भुक्तिमुक्तिप्रदन् भक्तियुक्तात्मनां
शक्तियुक्तन् महत्तत्वमाकुन्नवन् ८०
वृष्णिवंशोत्भवनाकिय माधवन्
विष्णुभगवान् विरिञ्चहरार्च्चितन् ८१
जिष्णुतनयकराब्जधरनाय्
कृष्णनुंकूटि मोदालॆळुन्नळ्ळिनान् । ८२
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुचितन्माक्कुं शिष्टरुं
गंगयिल् निन्नुदकक्रिययुं चॆय्तार् । ८३
मंगलं पूण्टु वसिच्चारिनियुटन् शेषं
निङ्ङळोटिन्नु चॊल्वान् वेलयुण्टतिनॆन्नु
मंगलं वन्नीटुकॆन्नाळ् मानिच्चु किळिमकळ् । ८४

॥ स्त्री समाप्तं ॥

शुद्धि चित्त भाइयों के साथ शुद्ध, अखण्ड, जगत्परिपूर्ण, भक्तप्रिय, परमात्मा, परापर, नित्य, देवकीपुत्र, निरुपम, सत्यस्वरूप, अनन्त, अनाकुल, देवों के सेवित, निष्कल, निर्गुण, देवों के नायक के पुत्र के मित्र, ७१-७७ चित्त आदि के अगोचर तत्त्व, अनेक तत्त्वों में स्थित, पर, व्यक्त, अव्यक्त, असक्त, भुवनसंवृत्त एकान्तवासप्रिय, माधव, भुक्ति-मुक्तिप्रद, भक्तियुक्तों के लिए शक्तिस्वरूप, महत्तत्त्वस्वरूप, विष्णुवंश में उत्पन्न माधव, इन्द्रपुत्र के करकमलों का अवलंबन कृष्ण के साथ प्रमोद के साथ वहाँ सिधारे। औरों ने अपने परिचितों की क्रिया गंगाजल से की। तदनन्तर मंगल के साथ रहे। कथा के शेष को आज ही कहने में श्रम होगा। ऐसा कह कर शुकी ने सादर मंगलकामना प्रकट की। ७८-८४

॥ स्त्रीपर्व समाप्त ॥

शान्ति

अय्यय्यो ! नन्नु नन्नु भारतकथयितु
नीयिन्नु मटियातॆ चॊल्लणमल्लो शेषं । १
पय्युं दाहवुं तीर्त्तु पर्यायित्तोटे मम
पय्यवे संक्षेपिच्चु चॊल्लु नल्लितिहासं । २
चॊल्लुवान् वेलयितिन्मेलेटं कथयॆल्लां
नल्लनल्लद्ध्यात्मज्ञानादिकळाकयाले ३
मल्लारि मधुवैरि माधवननुग्रहाल्
चॊल्लुवन् चुरुक्कि ञान् केट्टुकॊळ्ळुविनॆङ्किल् । ४

धर्म्मपुत्रन्टॆ दुःखवुं सान्त्वनवुं

मार्त्ताण्डात्मजनॊटु धार्त्तराष्ट्रन्मारॆल्लां
मार्त्ताण्डात्मजपुरं प्रापिच्चोरनन्तरं १
मार्त्ताण्डात्मजन्कूटॆ मरिच्चुपोयतोर्त्तु
मार्त्ताण्डात्मजसुतनार्त्तियायितु तुलों । २
मार्त्ताण्डोदयं कण्टु धात्रीनिर्ज्जरन्मारुं
मार्त्ताण्डसमन्मारां तापसश्रेष्ठन्मारुं ३

शांतिपर्व

अहोभाग्य ! यह महाभारत की कथा अच्छी है। जो अवशिष्ट है उसे आज ही बिना बिलम्ब के सुनाओ। भूँख और प्यास दूर करके ढंग से तनिक संक्षेप करके इस अच्छे इतिहास को सुनाओ। इस कथा को आगे कहना कठिन है क्योंकि उसमें अच्छे-अच्छे अध्यात्मज्ञान भरे हुए हैं। मल्लारि और मधुवैरि माधव के अनुग्रह से मैं संक्षेप करके सुनाऊँगी, आप लोग सुन लीजिये। १-४

युधिष्ठिर का दुःख और सान्त्वना

मार्त्ताण्डात्मज (कर्ण) के साथ धृतराष्ट्र के पुत्रों का मार्त्ताण्डात्मज (यम) की पुरी पहुँचने के बाद मार्त्ताण्डात्मज (कर्ण) के भी निधन को याद करके मार्त्ताण्डात्मज (यम) के सुत (युधिष्ठिर) को अत्यन्त दुःख हुआ, सूर्योदय देख कर धरित्रीनिर्जर (ब्राह्मण) और मार्त्ताण्डसम (सूर्य के समान) तापस श्रेष्ठ जब अपना सन्ध्यावन्दन करके राजा कुन्तीपुत्र

सन्ध्यावन्दनं चॆय्तु कुन्तीनन्दनभूपा-
लान्तिके चॆन्ननेरमासनपाद्यार्घ्यादि- ४
कॊण्टु पूजिच्चु नमस्करिच्चु नराधिपन्
कुण्ठनाय् निन्नीटिनाननुजादिकळोटु- ५
मॊन्नॊळियातॆ मम दुर्न्नयमेरुकयाल्
कर्ण्णनुं मरिच्चितु राज्यलोभत्तालल्लो । ६
कर्ण्णनॆ निरूपिच्चु कण्णुनीरोटुमेवं
खिन्ननाय् श्रीनारदन्तन्नोटु चॊन्ननेरं ७
कर्ण्णन्तन्नुदन्तमाकर्ण्ण्यतामॆन्नालॆन्नु
मन्नवन्तन्नॆ नोक्कि नारदनरुळ्चॆय्तु । ८
ब्रह्मास्त्रमपेक्षिच्चानाचार्यनोटु कर्ण्णन्
ब्रह्मज्ञन् भारद्वाजनन्नेरमरुळ्चॆय्तु । ९
वेदज्ञन्माक्कॆयतिन्नधिकारितयुळ्ळु
सूतनाकिय निनक्कतिनिल्लधिकारं । १०
ऎन्नतु केट्टु गुरुतन्नोटु पिणङ्ङिप्पोय्
चॆन्नु सेविच्चीटिनान् परशुरामन्तन्नॆ । ११
ब्राह्मणनॆन्नु कल्पिच्चवनुं पठिप्पिच्चान्
कार्मुकवेदमॆल्लां भार्ग्गवन् मटियातॆ । १२
गुरुशुश्रूषयुं चॆय्तरिके दिनमनु
मरुवीटिनकालं भार्ग्गवन् कर्णनुटॆ १३

(युधिष्ठिर) के पास गये तब राजा ने उनको पाद्य और अर्घ्य देकर पूजा की और नमस्कार किये और एक न छोड़कर अपने सभी भाइयों के साथ दुःखित खड़े रहे। "मेरे बड़े दुर्नय के कारण तथा राज्यलोभ से कर्ण का भी निधन हुआ।" १-६ जब कर्ण के संबन्ध में आँसू गिराते हुए और दुःखित होकर राजा ने नारद से इस प्रमार कहा तब नारद ने राजा को देखकर निवेदन किया— "अच्छा तो कर्ण का वृत्तान्त सुन लीजिये।" कर्ण ने अपने आचार्य से ब्रह्मास्त्र सिखाने के लिए प्रार्थना की। तब ब्रह्मज्ञ भारद्वाज (द्रोण) ने उत्तर दिया। केवल ब्रह्मज्ञों को ही उसे सीखने का अधिकार है। तुम तो सूत हो। तुम्हें वह अधिकार नहीं है।" यह सुनकर कर्ण अपने गुरु से अलग हुआ और जाकर परशुराम की सेवा करने लगा। भार्गव (परशुराम) ने भी उसे ब्राह्मण समझकर बिना हिचक के उसको सारा धनुर्वेद पढ़ाया। ७-१२ जब गुरुशुश्रूषा करते हुए कर्ण गुरु के साथ रह रहा था तो एक दिन

मटियिल् तलयुं वच्चुऱङ्ङीटिननेरं
तुटमेलॊरु कीटं कटिच्चान् कर्ण्णनप्पोळ् । १४
उऱक्कमुणर्न्नुपो गुरुविनॆन्नु पेटि-
च्चुऱप्पिच्चिरुन्नु कालिळक्कं वरुत्ताते । १५
चोरयुमॊलिच्चितु पारमायतुनेरं
धीरत कण्टु पुनरुणर्न्ननेरं रामन्— १६
अन्तणनल्ल भवानसत्यमॆन्नोटु व-
न्नॆन्तिनु पऱञ्ञितु वॆरुते मूढात्मावे ! १७
चतिच्चु पठिच्चुळ्ळोरस्त्रङ्ङळ् शत्रुक्कळो-
टॆतिर्त्तु मुट्टुन्नेरं तोन्नातॆपोकयॆन्नान् । १८
भीतिपूण्टविटॆनिन्नप्पॊळे पोयान् कर्ण्ण-
नाधियायितु पारं पिन्नॆयुमतु केळ् नी । १९
भूदेवनुटॆ पशु कॊन्नुपोयितु बला-
लातुरचेतस्सोटु शपिच्चु भूदेवनुं— २०
भेदमॆन्नियॆ निन्नु पोरतु मुरुकुन्पोळ्
मेदिनितन्निल् ताणुपोक तेरुरुळॆन्नान् । २१
इन्द्रनुं कवचकुण्डलङ्ङळ् चॆन्नु भूदे-
वेन्द्रनायपेक्षिच्चु वाङ्ङिक्कॊळ्कयुं चॆय्तान् । २२
नन्दनन्मारॆ मम कॊल्लाय्कॆन्नॊरु सत्यं
कुन्तियुं चॆय्यिप्पिच्चाळ् कर्ण्णनॆक्कॊण्टु मुन्नं । २३

भार्गव कर्ण के गोद पर सिर रखकर सो गये। तब एक कीड़े ने कर्ण के जाँघ पर काटा। इस डर से कि गुरु की नींद खुल न जाय कर्ण जाँघ को तनिक भी बिना हिलाये स्थिर बैठा रहा। रक्त तो खूब बहने लगा। जग कर परशुराम ने कर्ण का धैर्य देखकर कहा— "तुम ब्राह्मण नहीं हो। तुम ने क्यों आकर मुझ से झूठ बोला था, हे मूर्ख !" जो अस्त्र तुमनें धोखा देकर सीखे वे शत्रुओं का सामना करते समय तुम्हें न भायें" ऐसा भी कहा। डर के मारे कर्ण उसी समय वहाँ से चला गया और उसके चित्त में बड़ा दुःख हुआ। एक बात और सुनो। १३-१९ एक ब्राह्मण की धेनु मारी गयी थी। दुःखित होकर ब्राह्मण ने कर्ण को शाप दिया। "युद्ध के निरन्तर चलते समय तुम्हारे रथ के चक्र भूमि में दब जायँ ! इन्द्र भी ब्राह्मण का रूप धारण करके उसके पास गया और उसके कवच और कुण्डल माँग लाये। कुन्ती ने पहले ही उससे शपथ कराया था कि वह युद्ध में उसके पुत्रों को न मारेगा। कृष्ण ने शूर घटोत्कच

शूरनां घटोल्क्कचन्तन्नॆ निग्रहिप्पिच्चु
सारमायिरुन्नवेल् कळयिप्पिच्चु कृष्णन् । २४
निन्दिच्चान् महारथगणने मन्दाकिनी-
नन्दनन्तन्नॆक्कर्ण्णन् पिन्नॆयुं निरूपिच्चाल् । २५
इत्तरं पलपल वस्तुक्कळ् चॆय्तिट्टत्रे
मृत्युवन्नकप्पॆट्टु मित्रपुत्रनु नूनं । २६
चोरविद्यय्क्कु फलमेतुमिल्लड्रियेणं
नेरॊटे गुरुविनॆच्चतियातिरिक्कणं । २७
जनिच्चनेरंतन्नॆ विधिच्च मरणत्तॆ
निनच्चु दुःखिक्कुन्न जनत्तॆ निरूपिच्चाल् २८
ऒनिक्कत्भुतमुण्टाय्वरुन्नु धर्म्मात्मज !
मनक्कान्पिङ्कलतु मायावैभवमल्लो । २९
समरत्तिङ्कलेतुं पिन्तिरियातॆ मरि-
च्चमरत्ववुं वाणु सुखिच्चीटुन्नु कर्ण्णन् । ३०
अवनॆ निरूपिच्चु वॆरुते वेण्ट दुःख-
मवनीपते ! भवानज्ञानियल्लयल्यो । ३१
अवनि वळिपोलॆ रक्षिक्क धर्म्मत्तॆयु-
मवनीदेव पशुप्रमुख प्रजावृन्द- ३२
मवनं चॆय्तीटणं धरणीपतियाया-
लवने पिन्नॆप्परगतियुमुळ्ळ नूनं । ३३

का कर्णद्वारा निग्रह कराकर कर्ण की शक्ति का नाश कराया। ऊपर से कर्ण ने महारथों की गणना के अवसर पर मन्दाकिनीनन्दन (भीष्म) की निन्दा की। निस्सन्देह इस प्रकार के अनेक काम करने से ही कर्ण का निधन हुआ। २०-२६ चोरी से प्राप्त विद्या का कोई भी फल नहीं है। सत्य का पालन करते हुए गुरु को धोखा न देना चाहिये। जब मैं उन लोगों को याद करता हूँ जो जन्म के समय ही निश्चित मरण पर दुःख करते हैं तब मुझे, हे युधिष्ठिर !, आश्चर्य होता है अपने मन में। अन्ततोगत्वा वह भी तो माया का वैभव है। युद्ध में कभी पीठ न दिखाकर मरने के बाद कर्ण अमर हुआ और सुख से रह रहा है। हे भूपाल ! उसको लेकर व्यर्थ का दुःख न कीजिये ! आप तो अज्ञानियों में नहीं हैं। भूमि की और धर्म की यथानियम रक्षा करो। जो राजा होकर भूदेव (ब्राह्मण), गाय आदि प्रजागण की रक्षा करता है वही परमगति को प्राप्त करता है, सन्देह नहीं ! ऐसा कहकर मुनि नारद रवाना हुए, राजा

अँन्नरुळ्चॆय्तु मुनि नारदनॆळुन्नळ्ळि
पिन्नॆयुं नृपेन्द्रनु वर्द्धिच्चु दुःखमुळ्ळिल् । ३४
अन्नेरं भीमसेनन् चॆन्नभिवाद्यं चॆय्तु
मन्नवा ! शोकिक्करुतॆन्नुरचॆय्तीटिनान् । ३५
व्याकुलचेतस्सॊट्टु भीमनोटरुळ्चॆय्तान्—
शोकनाशनमाय मोक्षत्तॆस्साधिक्केणं । ३६
भोगार्त्थं स्वजनत्तॆयॊक्कवे वधं चॆय्तु
लोकत्तॆ दण्डिप्पिच्चु नरकं वन्नीटातॆ ३७
भोजवृष्ण्यन्धकन्मारालयं तोरुं चॆन्नु
भोजनत्तिनु भिक्षयेट्टुकॊळ्ळुवन् मेल्नाळ् । ३८
इत्तरं नृपवाक्यं केट्टुतुनेरं भीम-
नुत्तरमुरचॆय्तानॆन्तितु चापल्यङ्ङळ् ३९
शत्रुसंहारं चॆय्तु भूमियॆ वाणीटुवा-
नॆत्रयुं वेलचॆय्कॆन्नरुळिच्चॆय्तु मुन्नं । ४०
इन्निप्पोळ् भिक्षाटनं चॆय्युन्नेनॆन्नु केट्टु
नन्नितु तोन्नीटुन्नतॆत्रयुमनाशास्यं । ४१
राज्यपालनं चॆय्तु सल्प्रजकळॆयॆल्लां
पूज्यनाय् तुरगमेधादि यागवुं चॆय्तु ४२
कीर्त्तियॆ वर्द्धिप्पिच्चु मोक्षत्तॆ प्रापिक्कणं
पार्त्थिवेन्द्रन्मारायालॆन्नल्लो वेदोक्तिकळ् । ४३

के तो चित्त में दुःख अधिक हुआ। २७-३४ उस समय भीमसेन उनके पास गया और बोला— राजन् ! आप दुःख न करें। तब वे व्याकुल भीम से बोले— अब मुझे शोक का नाशक मोक्ष प्राप्त करना है। भोग के लिए अपने ही जन को नष्ट कराया, लोक को दुःख पहुंचाया। अब नरक न हो जाने के हेतु कल ही से भोज, वृष्णि, अन्धक आदिकों के घर जाकर अपने भोजन की भीख माँगूंगा। राजा की इस प्रकार की बातें सुनकर भीम ने उत्तर दिया— यह क्या आप चापल्य दिखा रहे हैं ? पहले तो आपने कहा था कि शत्रुओं का नाश करके पृथ्वी पर राज करने के लिए अत्यन्त प्रयत्न करो, आज आप कहते हैं कि भीख माँगूंगा। यह बिलकुल अग्राह्य बात आपको अच्छी सूझी ! राज्य का परिपालन करके, अपनी अच्छी प्रजा की रक्षा करके, पूज्य होकर अश्वमेध आदि यज्ञों के अनुष्ठान के बाद अपनी कीर्ति को बढ़ाना, तदनन्तर मोक्ष प्राप्त करना, भूपालों के लिए तो वेदों ने यही क्रम बतलाया है। ३५-४३ स्वधर्म के

स्वधर्म्मं कोंण्टु साधिक्कुन्नतीश्वरप्रियं
विधर्म्मं कोंण्टु साधिक्कुन्नतु नरकवुं । ४४
परिपालनं युद्धमेन्निव कुलधर्म्मं
नरपालकन्माक्कर्तरियाञ्ञल्लयल्लो । ४५
इत्थं मारुति परञ्ञीटिनोरनन्तरं
वृत्रारितनयनुमप्पोलेतन्ने चोन्नान्— ४६
नम्मोटु पलविरोधङ्ङळुं चेय्तारवर्
निर्म्मर्यादङ्ङळायिट्टेन्नतुकोंण्टल्लयो ४७
जयमुण्टायि नमुक्कीश्वरकारुण्यंकों-
ण्टयशस्सुण्टामिनि राज्यत्तेयुपेक्षिच्चाल् । ४८
अर्ज्जुनन् चोन्नवण्णमश्विनीपुत्रन्मारुं
सज्जनमायिट्टुळ्ळोरेल्लारुमुरचेय्तार् । ४९
धर्म्मसूक्ष्मङ्ङळरिञ्ञीटिन पाञ्चालियां
धर्म्मपत्नियुं राज्यं परिपालिक्कयेन्नार् । ५०
वेदव्यासनुं कृपर् विदुरादिकळेल्लां
मेदिनि पालिक्केन्नु सादरं चोल्लीटिनार् । ५१
देवदेवेशन् कृष्णन् माधवन् वासुदेव-
नंबुजदळनेत्रन् गोविन्दन् विष्णु वाम- ५२
देवसेवितन् मधुसूदनन् नारायणन्
देवकीसुतन्तानुमावोळमरुळ्चेय्तान् ५३

द्वारा ईश्वर का प्रेम प्राप्त होता है और विधर्म के द्वारा नरक भोगना पड़ता है। राजाओं के लिए प्रजापरिपालन और युद्ध, यही कुलधर्म है, यह आप जानते ही हैं। भीम के इस प्रकार कहने के बाद अर्जुन ने भी ऐसा ही कहा। हम लोगों के साथ उन्होंने अनेक अत्याचार किये जो मर्यादा के बाहर थे। यही तो कारण था कि ईश्वर के कारुण्य से हम लोगों की विजय हुई। अब अगर राज्य की उपेक्षा होगी तो अपयश होगा। जैसा अर्जुन ने कहा वैसा ही अश्विनी-पुत्रों (नकुल और सहदेव) और अन्य सज्जनों ने भी कहा। धर्मपत्नी पाञ्चाली ने भी कहा— "राज्यपरिपालन करो।" वेदव्यास, कृप और विदुर आदि ने भी सादर 'पृथिवी का पालन करो' ऐसा उपदेश दिया। ४४-५१ देवदेवेश, कृष्ण, माधव, वासुदेव, कमललोचन, गोविन्द, विष्णु, कामदेव का सेवित मधुसूदन, नारायण, देवकीपुत्र ने भी बहुत कहा— ब्राह्मणों का और गौओं का परिपालन करो, इससे बढ़कर मेरा प्रियकर और कुछ नहीं है। साध्वी

विप्रन्मारॆयुं पशुक्कळॆयुं पालिक्कणं
मल्प्रियमतिल्परं मट्टिल्लॆन्नरिञ्ञालुं । ५४
सल्प्रजकळिल् मुन्पु विप्रन्मारवक्कॊरु-
विप्रियमुण्टाकातॆ निर्भरं रक्षिक्केणं । ५५
भगवद्वचनपीयूषपानवुं चॆय्तु
भगवद्भक्तन् भानुपुत्रनन्दनन् चॊन्नान्— ५६
सकलजनङ्ङळ्क्कुमिङ्ङनॆ मतमॆङ्किल्
सुखमायात्मतुल्यं पालिक्कां प्रजकळॆ । ५७
जनकनामंबिकातनयन्नियोगत्ता-
लनुजन्मार्क्कुवेण्टि राज्यत्तॆ रक्षिक्कुन्नेन् । ५८

युधिष्ठिराभिषेकं

अन्नेरममात्यन्मार् मन्त्रिकळ् सामन्तन्मार्
मन्नवर् पुरोहितन्मार् पुरवासिकळुं १
धन्यन्माराय धरादेवन्मार् मुनिजन-
मॆन्निवरॊक्क वन्नु निरञ्ञु सभातलं । २
वीरनां धर्म्मात्मजनन्नेरमुरचॆय्तान्—
वरिक विदुररुं युयुत्सु सञ्जयनु- ३
मरिकॆयिरुन्नरनिमिषं पिरियातॆ
नरपालकनामॆन् तातनॆ रक्षिक्कणं । ४

प्रजा में ब्राह्मण सब से पहले आते हैं, बिना उनका विप्रिय किये उनकी रक्षा करो। भगवान् का वचनामृत पीते हुए भगवान् के भक्त युधिष्ठिर ने कहा— अगर सब का यही मत है तो मैं प्रजा को अपने ही तुल्य समझ कर सुख से पालन करूँगा, पिताअंबिका पुत्र (धृतराष्ट्र) की आज्ञा से अपने छोटे भाइयों के लिए राज्य की रक्षा करता हूँ। ५२-५८

युधिष्ठिर का अभिषेक

उन दिनों अमात्य, मन्त्री, सामन्त भूपाल, पुरोहित, नगरवासी, धन्य ब्राह्मण और मुनिजन, इन सब से सभा भर गयी। वीर युधिष्ठिर ने उस समय कहा— आइये विदुरजी, युयुत्सुजी और सञ्जयजी! और निकट में बैठकर, एक निमिष के लिए भी अलग न होकर मुझ राजा के पिता की रक्षा कीजिये। श्राद्धदेवात्मज (यम का पुत्र-युधिष्ठिर) ने

श्राद्धदेवात्मजादि पार्त्थिवादिकळोटुं
श्राद्धकर्म्मवुं चेय्तार् मृतरायवर्क्केल्ला । ५
मूर्द्ध्वलोकप्राप्ति वन्नीटुवान् दानङ्ङळुं
प्रीत्या चेय्तितु पार्त्थन् धात्री देवन्मार्क्केल्लां । ६
ग्रामङ्ङळ् नगरङ्ङळ् पुरङ्ङळालयङ्ङळ्
कामङ्ङळायतवर्क्केन्तॆन्नालवयेल्लां ७
आन तेर् कुतिरकळ् तेरुकळ् पशुक्कळु -
मानन्दमेट्मुण्टां क्षेत्रङ्ङळ् पात्रङ्ङळुं ८
तण्टुकळ् पल्लक्कुकळ् दासिकळ् दासन्मारुं
कुण्डलादिकळाय मण्डननिकरवुं ९
धनधान्यङ्ङळ् सुवर्ण्णादि लोहङ्ङळ् रत्न-
मणिकळ् चेरिप्पुकळ् कुटकळ् वटिकळुं १०
पट्टुकळ् पुटवकळ् पूणुनूल् कृष्णाजिनं
मृष्टमामन्नं बहुव्यञ्जनसमन्वितं ११
चन्दनं कळभङ्ङळ् तांबूलं क्रमुकवुं
कुन्दमाल्यङ्ङळ् शयनासनादिकळ् मट्टुं १२
सन्तोषिच्चलमलमेन्नवर् चोल्लियालुं
सन्ततं वारिक्कोरिक्कोटुत्तु धर्म्मात्मजन् । १३
सुचिरं जीव ! जीव ! सततं जय जय !
सचिव सहोदरतनयदारैस्समं । १४
इत्तरमाशीर्व्वादं सतंत चोल्लिच्चोल्लि-
पृथ्वीदेवन्मारेल्लां परमानन्दं पूण्टार् । १५

अन्य राजाओं के साथ उनके लिए श्राद्धकर्म किया जो मर गये थे। राजा ने परलोक की प्राप्ति के लिए ब्राह्मणों को प्रीति से दान दिये। गाँव, नगर, पुरियाँ, आलय, जो कुछ वे चाहते थे वह सब, जैसे हाथी, रथ, घोड़े, गाय, आनन्दप्रद मन्दिर, पात्र, डालायें, पालकियाँ, दासियाँ, दास, कुण्डल आदि आभूषण समूह, १-९ धन और धान्य, सुवर्ण और लोहा, रत्न और मणि, उपानह्, छत्री, यष्टि, रेशम की धोतियाँ और सारियां, यज्ञोपवीत, कृष्णाजिन, स्वादु ओदन और अनेक प्रकार के व्यञ्जन, चन्दन, अन्य सुगन्धिद्रव्य, पान, सुपारी, कुन्द की मालायें, शमन, आसन और अन्य पदार्थ राजा युधिष्ठिर, उनके तृप्त होकर मना करने पर भी, अधिक से अधिक मात्रा में देते गये। "चिरकाल तक जियो ! सदैव

सत्वरं धर्म्मात्मजन् पाण्डवन् कुन्तीपुत्रन्
सत्त्वमानसन् चेन्नु गोविन्दपादांबुजं १६
भक्त्या वन्दिच्चु नमस्करिच्चञ्जलियोटे
चित्तवुमळिञ्ञलिञ्ञार्द्रमाय् स्तुतिचेय्तान् । १७

धर्म्मपुत्ररुटे भगवत्स्तुति

शरणं मम तव चरणांबुजद्वयं
शरणं वनमालातुळसीदामप्रिय ! १
शरणमिन्द्रादिवृन्दारकवृन्दनत !
शरणमरविन्दमन्दिरा ! मनोहर ! २
शरणं मुचुकुन्दपरमानन्दप्रद !
शरणं मुरहर ! नन्दनन्दन ! हरे ! ३
शरणमरविन्दमित्र ! चन्द्राक्ष ! विष्णो !
शरणमरविन्दनयन ! मधुरिपो ! ४
शरणमरविन्दनाभ ! नारदसेव्य !
शरणमरविन्दनन्दकचक्रायुध ! ५
शरणं शंखधर ! शरणं गदाधर !
शरणं पीताम्बर ! शरणं दामोदर ! ६

विजय प्राप्त करो ! अपने सचिव, भाई, पुत्र और पत्नी के साथ", इस प्रकार के आशीर्वाद देते हुए सभी ब्राह्मणों ने परम आनन्द प्राप्त किया। तुरन्त ही कुन्तीपुत्र, धर्मपुत्र, पाण्डव और सत्त्वमानस युधिष्ठिर ने जाकर गोविन्द के चरणकमलों की भक्ति के साथ वन्दना की और प्रेमार्द्र चित्त से स्तुति की। १०-१७

युधिष्ठिर की भगवत्स्तुति

हे ! वनमाला और तुलसीमाला के प्रेमि ! तुम्हारा चरणकमलद्वय ही मेरा शरण है ! हे इन्द्र आदि देवगणों के वन्दित ! हे ! अरविन्द-मन्दिर ! हे मनोहर ! तुम ही मेरा शरण हो ! हे मुचुकुन्द का परमानन्द देनेवाले ! हे नन्द के पुत्र ! मुर के नाशक ! तुम ही मेरा शरण हो ! हे अरविन्द के मित्र ! चन्द्ररूप आँखवाले ! हे अरविन्दनयन ! हे मधु के शत्रु ! तुमही शरण हो ! हे अरविन्दनाभ ! नारद के सेव्य ! हे अरविन्द, नन्दक (खड्ग) और चक्र धारण करनेवाले, तुम ही शरण हो ! हे शंखधर ! तुम ही शरण हो, हे गदाधर ! हे पीताम्बर ! हे दामोदर !

शरणं नारायण ! शरणं कृष्ण ! राम !
शरणं धनञ्जयसारथे ! जगत्पते ! ७
शरणं देवपते ! शरणं वेदपते !
शरणं लोकपते ! शरणं धर्म्मपते ! ८
शरणं सतांपते ! शरणं मखपते !
शरणं क्षमापते ! शरणं रमापते ! ९
शरणं रघुपते ! शरणं यदुपते !
शरणं वासुदेव ! करुणाजलनिधे ! १०
शरणं हृषीकेशा ! मरणविरहित !
शरणं दैत्याराते ! जननविरहित ! ११
शरणं नरकारे ! गरुडद्ध्वज ! विभो !
शरणं विष्वक्सेन ! मत्स्यविग्रह ! हरे ! १२
शरणं जनार्द्दन ! कूर्म्मविग्रह ! हरे !
शरणं चतुर्भुजकोलविग्रह ! हरे ! १३
शरणं घोरनरसिंहविग्रह ! हरे !
शरणं त्रिविक्रम ! वामनमूर्त्ते ! हरे ! १४
शरणं जामदग्न्य परशुराममूर्त्ते !
शरणं दशरथतनय ! रामाराम ! १५
शरणं दशमुखशमन ! राम राम !
शरणं कौसल्यानन्दन ! राघवराम ! १६

तुम ही शरण हो ! हे नारायण ! हे कृष्ण ! हे राम ! हे अर्जुन के सारथि ! हे जगत्पते ! तुम ही शरण हो ! १-७ हे देवपते ! वेदपते ! हे लोकपते ! धर्म्मपते ! तुम ही शरण हो ! हे सज्जनों के पति ! हे यज्ञपति ! हे पृथिवीपति ! हे रमापते ! तुम ही शरण हो ! हे रघुपते ! यदुपते ! हे वासुदेव ! हे करुणासागर ! तुम ही शरण हो ! हे हृषीकेश ! हे मृत्युहीन ! हे दैत्यों के शत्रु ! हे जन्महीन ! हे नरकासुर के शत्रु ! हे गरुडध्वज ! हे विभो ! हे विष्वक्सेन ! हे मत्स्य का रूप धारण करने वाले ! तुम ही शरण हो ! हे जनार्दन ! कूर्म का रूप धारण करनेवाले ! हे हरे ! हे चार बाँह का सुन्दर शरीर वाले ! तुम ही शरण हो ! घोर नरसिंह के शरीर धारण करनेवाले हरे ! हे त्रिविक्रम ! हे वामनमूर्त्ते ! तुम ही शरण हो ! ८-१४ हे जमदग्नि के पुत्र परशुराम का रूप धारण करनेवाले ! हे दशरथ-पुत्र ! हे रामाओं का प्रिय ! हे रावण का नाश करनेवाले ! राम ! राम ! हे कौसल्यानन्दन ! हे

शरणं भरतलक्ष्मणशत्रुघ्नाग्रज !
शरणं विश्वामित्रप्रिय ! राघवराम ! १७
शरणं ताटकारे ! यज्ञपालक राम !
शरणं सुबाहुनाशन ! राघवराम ! १८
शरणं मारीचसेवित ! राघवराम !
शरणमहल्यादुष्कृतनाशनपाद ! १९
शरणं हरशरासनभञ्जनकर !
शरणं सीतापते ! भार्ग्गवदर्प्पापह ! २०
शरणं सीतासुमित्रात्मजन्मानुचर !
शरणं गुहसेव्य ! भरद्वाजाराधित ! २१
शरणं चित्रकूटशिखरितटवास !
शरणं शरभंगत्रिदिवगतिप्रद ! २२
शरणं सुतीक्ष्णसेव्यांघ्रिपङ्कज ! जय
शरणं विराधनिग्रहपण्डित राम ! २३
शरणमगस्त्यपादांबुजसेवारत !
शरणं जटायुषालोकितमार्ग्गचरा ! २४
शरणं दण्डकारण्यावासप्रिय ! राम !
शरणं पञ्चवटीनिलय ! राम ! राम ! २५

राघव ! हे राम ! तुम ही शरण हो ! हे भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न के बड़े भाई ! हे विश्वामित्र के प्रिय ! हे राघवराम ! हे तारका के शत्रु ! यज्ञ का रक्षक ! तुम ही शरण हो ! हे सुबाहु का नाशन ! राघवराम ! तुम ही शरण हो ! हे मारीच का सेवित ! राघवराम! तुम ही शरण हो। हे अहल्या के पाप का नाश करनेवाले पादवाले ! हे शिव के चाप का भंग करनेवाले ! हे सीतापते ! हे भार्गव (परशुराम) के दर्प को समाप्त करनेवाले ! हे सीता और सुमित्रापुत्र के सेव्य ! हे गुह के सेव्य ! भरद्वाज महर्षि के पूजित ! १५-२१ हे चित्रकूट पर्वत के शिखर पर निवास करनेवाले ! हे शरभंग के स्वर्ग जाने की गति प्रदान करनेवाले ! हे सुतीक्ष्ण का सेव्य पादपद्मवाले ! तुम ही शरण हो, तुम्हारी जय हो ! हे अगस्त्य के चरणांबुज की सेवा में तत्पर राम ! हे विराध के निग्रह में कुशल राम ! हे जटायु के देखे रास्ते पर चलनेवाले ! हे दण्डकारण्य में निवास को पसन्द करनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे पञ्चवटी में रहनेवाले राम ! रावण की बहिन के स्तन के शत्रु ! तुम ही शरण हो ! हे खर के शत्रु ! मारीच को मोक्ष प्रदान करनेवाले ! हे जटायु को अच्छी

शरणं दशमुखभगिनीकुचाराते !
शरणं खराराते ! मारीचमोक्षप्रद ! २६
शरणं जटायुषोगतिदानैकरत !
शरणं कबन्धशापापह राम ! राम ! २७
शरणं करुणया शबरिगतिप्रद !
शरणं वातात्मजसेवित ! राम ! राम ! २८
शरणं सुग्रीवसन्तापनाशनकर !
शरणमंगुष्ठप्रेरितदुन्दुभिदेह ! २९
शरणमेकशरनिकृत्तसप्तसाल !
शरणं बालिमदशमन ! राम ! राम ! ३०
शरणमृश्यमूकनिलय ! राम ! राम !
शरणं विसर्ज्जितप्लवगबल ! राम ! ३१
शरणं हनूमता श्रुतसीतावृत्तान्त !
शरणं जलनिधिरचितसेतो ! राम ! ३२
शरणं विभीषणप्रिय ! राघवराम !
शरणं दशाननवंशनाशन ! राम ! ३३
शरणं प्रतिष्ठितशंकरलिंग ! राम !
शरणमग्निशुद्धवल्लभान्वित ! राम ! ३४
शरणं कृताभिषेकाभिरामांग ! राम !
शरणं हलधरा ! शरणं नीलांबरा ! ३५

गति दिलाने में तत्पर ! हे कबन्ध के शाप को दूर करनेवाले राम ! तुम ही शरण हो ! हे करुणा से शबरी की अच्छी गति देनेवाले ! हे वातपुत्र (हनूमान्) के सेवित ! राम ! राम ! २२-२८ हे सुग्रीव के दुःख का नाश करनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे पाँव के अंगूठे से दुन्दुभि के शरीर को फेंकनेवाले ! हे एक ही बाण से सात-सात सालवृक्षों को छेदनेवाले ! तुम्हारी शरण हो ! हे बाली के मद का नाशक राम ! ऋष्यमूक में रहनेवाले ! तुम ही शरण हो ! हे वानरसेना को भेजनेवाले ! हे हनूमान द्वारा सीतावृत्तान्त को जाननेवाले ! हे समुद्र पर सेतु बनानेवाले राम ! हे विभीषणप्रिय राम ! हे राघव राम ! हे रावण के वंश का नाश करनेवाले ! हे शिवजी के लिंग की प्रतिष्ठा करनेवाले ! हे अग्निशुद्ध अपनी वल्लभा से युक्त राम ! हे अभिषेक के बाद दर्शनीय ! तुम ही शरण हो ! हे हलधर ! हे नीलांबर ! तुम ही शरण हो ! २९-३५ हे कृष्ण कृष्ण ! कृष्ण कृष्ण ! तुम ही शरण हो ! हे इन्द्र के वन्द्य !

शरणं कृष्ण ! कृष्ण ! शरणं कृष्ण ! कृष्ण !
शरणं जिष्णुवन्द्य ! शरणं जिष्णुसूत !
शरणं कृष्ण कृष्ण ! शरणं वृष्णिपते ! ३६
करणमायतुं नी कारणमायतुं नी
करुणालय ! नाथ ! कर्त्तावायतुं नीये । ३७
कर्म्ममायतुं नीये कर्म्मियायतुं नीये
कर्म्मसाधनं नीये कर्म्मसाक्षियुं नीये । ३८
कर्म्मणां फलङ्ङ्ळेदानं चेय्ततुं नीये
कर्म्मणां फलङ्ङ्ळेभुजिक्कुन्नतुं नीये । ३९
स्तोतावायतुं नीये स्तुत्यनायतुं नीये
स्तुतियायतुं नीये मतियायतुं नीये । ४०
स्मृतियायतुं नीये रतियायतुं नीये
नीतियायतुं नीये नेतावायतुं नीये । ४१
ज्ञानमायतुं नीये ज्ञेयमायतुं नीये
ज्ञातावायतुं नीये धातावायतुं नीये । ४२
बोधमायतुं नीये बोध्यमायतुं नीये
बुद्धियायतुं नीये शान्तियायतुं नीये । ४३
शिवनायतुं नीये शक्तियायतुं नीये
वेदमायतुं नीये वेद्यमायतुं नीये । ४४
माययायतुं नीये विद्ययायतुं नीये
बीजमायतुं नीये मुळयायतुं नीये । ४५

हे अर्जुन के सारथि ! हे कृष्ण कृष्ण ! हे वृष्णियों के पति ! तुम ही शरण हो ! तुम ही करण हो और तुम ही कारण हो ! हे करुणालय ! हे नाथ ! तुम ही कर्ता हो ! तुम ही कर्म हो और तुम ही कर्म करनेवाले हो ! कर्म का साधन तुम ही हो ! कर्म का साक्षी भी तुम ही हो ! कर्मों का फल देनेवाला भी तुम हो और कर्म्मों का फल भोगनेवाले भी तुम हो ! स्तोता तुम ही हो और स्तुत्य भी तुम ही हो ! स्तुति भी तुम ही हो और मति भी तुम ही हो ! तुम ही स्मृति हो, तुम ही रति हो ! तुम ही नीति हो, तुम ही नेता हो ! तुम ही ज्ञान हो, तुम ही ज्ञेय भी हो ! ज्ञाता भी तुम ही हो, तुम ही धाता हो ! ३६-४२ तुम ही बोध हो और तुम ही बोध्य भी हो, तुम ही बुद्धि हो और तुम ही शान्ति हो ! तुम ही शिव हो और शक्ति भी तुम ही हो, वेद तुम ही हो और तुम ही

मूलमायतु नीये फलमायतु नीये
मातावायतु नीये तातनायतु नीये । ४६
सुकृतमायतुं नी दुष्कृतमायतु नी
सुखमायतु नीये दुःखमायतु नीये । ४७
स्वर्गवु नरकवु जननं मरणवु
शीतवुमुष्णवुं नी शुक्लवुं कृष्णवु नी । ४८
प्रकृतियायतुं नी पुरुषनायतु नी
बन्धमायतु नीये मोक्षमायतु नीये । ४९
बन्धुवायतु नीये शत्रुवायतुं नीये
देहमायतु नीये देहियायतु नीये । ५०
क्षेत्रमायतु नीये क्षेत्रियायतु नीये
शास्त्रज्ञनायतु नी शास्त्रङ्ङळायतु नी । ५१
निष्कळनाकुन्नतु सकळनाकुन्नतु
निर्ग्गुणनाकुन्नतु सगुणनाकुन्नतु ५२
स्थूलमायतु नीये सूक्ष्ममायतुं नीये
योगमायतु नीये योगियायतु नीये । ५३
योगज्ञनाकुन्नतु युक्तनायीटुन्नतु
जीवनायतु नीये परनायतु नीये ५४
परमात्मावु परन्पुरुषन् परब्रह्मं
परमन् परापरन् परमानन्दमूर्त्ति ५५

वेद्य हो ! तुम ही माया हो और तुम ही विधा हो ! बीज तुम ही हो और अंकुर भी तुम ही हो ! जड़ तुम ही हो और फल भी तुम ही हो ! तुम ही माता हो और पिता भी तुम ही। सुकृत (पुण्य) भी तुम ही हो और दुष्कृत (पाप) भी। सुख तुम हो और दुःख भी तुम ही हो। स्वर्ग और नरक, जन्म और मृत्यु, शीत और उष्ण, शुक्ल और कृष्ण तुम ही हो। ४३-४८ तुम ही प्रकृति और तुम ही पुरुष, तुम ही बन्ध और तुम ही मोक्ष, तुम ही बन्धु और तुम ही शत्रु, तुम ही देह और तुम ही देही, तुम ही क्षेत्र और तुम ही क्षेत्री, तुम ही शास्त्रज्ञ और तुम ही शास्त्र भी हो। तुम ही निष्कल और तुम ही सकल, तुम ही निर्गुण और तुम ही सगुण, स्थूल तुम ही और सूक्ष्म तुम ही, तुम ही योग भी और योगी भी हो। तुम ही योगज्ञ हो और युक्त भी, जीव तुम ही हो और पर भी! परमात्मा, पर, पुरुष, परब्रह्म, पर और परापर, परमानन्दमूर्ति, ४९-५५ सत्य, ज्ञान, अनन्त, आनन्द, अमृत, अमल, एक, नित्य, अव्यय, निराकार,

सत्यज्ञानानन्तानन्दामृतामलमेकं
नित्यनव्ययन् निराकारनद्वयनजन् ५६
निश्चलन् निरुपमन् निर्म्मलन् निर्व्विकार-
नच्युतनमेयनव्यक्तनाद्यन्तहीनन् ५७
सच्चिल्ब्रह्माख्यन् गूढन् कूटस्थन् परमार्त्थ-
वस्तुतत्वार्त्थमाय साक्षि सर्व्वात्मा कृष्णन् । ५८
नित्यवुमुणर्न्निरुन्नरुळीटुकवेणं
चित्तपङ्कजत्तिङ्कलतिनु वणङ्ङुन्नेन् । ५९
ई स्तुति केट्टु परमानन्दिच्चॆन्नतुपोलॆ
नित्यात्मा निश्चलञ्जनायिरुन्नरुळिनान् । ६०
जीवनॆप्परङ्कलाम्मारुटनुरप्पिच्चु
भाविच्चीटुन्पोळ् ब्रह्मनाडितन्नूटॆयुण- ६१
र्न्नाविर्भवित्तेट्टुं शक्तियां जीवात्माविन्-
पावकज्ज्वालासममाकिय तेजःपुञ्जं ६२
नित्यानन्दात्मा परन् तन्नुटॆ तेजस्सिङ्कल्
सत्वरं लयिच्चु सर्व्वात्मना विश्वासेन
समस्तकर्म्मसमर्प्पणवुं चॆय्तॊन्निच्चु ६३
तन्नोटु मुन्ने पिरिञ्ञीटिन शक्तियॆक्क -
ण्टन्योन्यमैक्यं प्रापिच्चानन्दिच्चिरिक्कुन्पोळ् ६४
लौकिकात्मना कनिञ्ञवनोटरुळ्चॆय्तान्
योगेशन् तिरुवटि लोकेशन् पीतांबरन् ६५

अद्वय, अज, निश्चल, निरुपम, निर्मल, निर्विकार, अच्युत, अमेय, अव्यक्त, अनादि, अनन्त सच्चिद्ब्रह्म, गूढ, कूटस्थ, परमार्थ-वस्तुतत्वार्थ, साक्षी, सर्वात्मा, कृष्ण, सदैव मेरे चित्तकमल में सन्निहित हो। इस हेतु वन्दना करता हूँ। इस स्तुति को सुनकर नित्यात्मा प्रसन्न सा होकर निश्चल हुए और बोले। जीव को परमात्मा में स्थिर करने के अवसर पर ब्रह्मनाड़ी के द्वारा जागनेवाली शक्ति को, अर्थात् जीवात्मा के अग्निज्वाला के समान तेजःपुञ्ज को नित्यानन्द परब्रह्म के तेज में लीन करके सर्वात्मना विश्वास के साथ ५६-६३ समस्त कर्मों का समर्पण करके पहले अलग हुई शक्ति को देखकर जब दोनों एक हुईं और आनन्द का अनुभव किया तब लौकिक आत्मा के रूप में दया से भगवान् पीताम्बर और लोकेश बोले— ब्राह्मण और गायों की रक्षा से जो आनन्द मिलता उसका तुल्य

ब्राह्मणपशुपरिपालनानन्दत्तोटु
साम्यमाय् मट्टोन्निलुमिल्लोरानन्दमुळ्ळिल् । ६६
ॲन्नतुतन्ने निनक्कायतु कुलधर्म्मं
नन्नतुकोण्टु सेविच्चीटुवानवकाशं ६७
वन्नतु मुन्नं चेय्त पुण्यत्तिन् परिपाक -
मिन्नतुकोण्टुतन्ने भक्तिविश्वासपूर्व्वं ६८
ॲन्नेस्सेविप्पान् पात्रमाकयालितिनोळं
धन्यत्वमुण्टो लभिक्कुन्नितन्यन्माकर्क्कोटो । ६९
ब्रह्माण्डं निरञ्ञतिन्पुरमे वळिञ्ञीटुं
ब्रह्ममां परमात्मावायतु ञानतानल्लो । ७०
स्वधर्म्मंकोण्टु परगतिवन्नीटुं नूनं
विधर्म्माधर्म्मादिकळ् नरकफलदङ्ङळ् । ७१
आत्मना तुल्यं परिपालिक्कॆन्नरुळ्चॆय्ता-
नात्मारामन् देवकीनन्दनन् वासुदेवन् । ७२
समस्तकर्म्मार्प्पणं चॆय्तभिवाद्यं चॆय्तु
नमस्ते नारायण ! चरणांबुजद्वयं । ७३
समस्तमपराधं क्षमस्व लक्ष्मीपते !
शमिच्चीटणं चित्तं त्वत्पदांबुजद्वन्द्वे । ७४
कनकविरचितमणिशोभित सिंहा-
सनराजितनाय माधवन् तिरुमुन्पिल् ७५
चरणनखमणिकिरणं कलर्न्नीटुं
शिरसा वीणु नमस्करिच्चीटिननेरं ७६

और कोई आनन्द नहीं है। यही तुम्हारा कुलधर्म हो गया है। यह अच्छा ही हुआ क्योंकि इससे तुम्हें पूर्वजन्म के पुण्य के कारण सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। यही कारण है कि तुम भक्ति और विश्वास के साथ मेरी सेवा करने के लिए अधिकारी हो। इतना धन्य और कौन हुआ है ? ब्रह्माण्ड को भरने के बाद बाहर बहनेवाला ब्रह्म परमात्मा मैं ही हूँ। ६४-७० स्वधर्म के परिपालन से परा गति प्राप्त होती है। विधर्म और अधर्म के आचरण का फल नरक होता है। आत्माराम देवकीनन्दन वासुदेव ने कहा— "प्रजा का अपना ही तुल्य समझकर पालन करो"। तब युधिष्ठिर ने सभी कर्मों का समर्पण करके इस प्रकार वन्दना की। "हे नारायण ! तुम्हारे चरणकमलों को प्रणाम हो ! हे लक्ष्मीपति ! मेरे

सामन्तपुरोहितामात्यमन्त्रीन्द्र पौर-
भूमीन्द्रकुमारकभूसुरादिकळेल्लां ७७
हस्तिनपुरत्तिङ्कलस्तसन्तापं वन्नार्
भक्तभूपनिलनुरक्तमानसन्माराय् । ७८
अभिषेकवुं चेय्तु धौम्यादिजनङ्ङळ्क्कु,
विभवसमुदायदानङ्ङळ् पलवुं चे- ७९
य्ताचार्यपुरोहितवयस्यादिकळोटु-
माचारंचेय्तु पाण्डुतन्नुटे गृहं पुक्कान् । ८०
भीमनुं सुयोधनन् तन्नुटे गृहंपुक्कुं
श्रीमयमतुपोले मट्टु तोण्णूट्टोन्पतुं ८१
विदुरकृपधौम्यविजयादिकळ्क्कायि
सदनं धनधान्यविभवसमन्वितं । ८२
तृप्तिपूण्टितु सकल प्रजकळुमेल्लां
दृप्तियुमोरुवनुण्टायतिल्लोरुनाळुं । ८३
नहुषादिकळ् परिपालनं चेय्तपोले
मिहिरात्मजसुतन् परिपालिच्चु नन्नाय् । ८४
कृष्णभक्तरिल् मुन्पनाकिय युधिष्ठिरन्
कृष्णसारथियाय जिष्णुभीमादियोटुं ८५

सभी अपराधों को क्षमा कीजिये ! मेरा चित्त तुम्हारे चरणकमलों पड़ने में आनन्द ले !" जब युधिष्ठिर ने सोने के और मणियों से शोभित सिंहासन पर विराजमान माधव के सन्निधि में उनके चरणनखों के मणियों की किरणों से प्रकाशित अपने सिर को झुकाकर नमस्कार किया तब सामन्त, पुरोहित, अमात्य, मन्त्रिवर, नागरिक, राजकुमार, ब्राह्मण, ये सब अपना दुःख छोड़कर हस्तिनपुर पधारे। वे सब भक्त भूपति के अनुरक्त थे। ७१-७८ अभिषेक के होने के बाद राजा ने धौम्य आदि जनों को अनेक प्रकार के धनों का दान किया। तदनन्तर आचार्य, पुरोहित, मित्र आदिकों के साथ स्नेह व्यवहार करने के बाद पाण्डु के घर सिधारे। भीम तो सुयोधन के श्रीयुक्त घर गया तथा अवशिष्ट निन्नान्नवे घर भी। विदुर, धौम्य, कृप, विजय आदिकों को धन और धान्य के साथ भवन दिये। सारी प्रजा तृप्त हुई। दृप्ति (घमण्ड) किसी की भी न हुई। मिहिर (सूर्य) के पुत्र (यम) का पुत्र (युधिष्ठिर) ने, जिस प्रकार नहुष आदि राजाओं ने प्रजापालन किया था, उसी प्रकार किया। ७९-८४ कृष्णभक्तों में श्रेष्ठ युधिष्ठिर ने कृष्णसारथि अर्जुन और भीम के साथ

कृष्णयां कान्तयोटुं मित्रवर्ग्गङ्ङळोटुं
विष्णुमाययेक्कण्टु विस्मयचेतस्सोटुं ८६
मन्नवन्मारेयेल्लां तन्नुटे काल्क्कलाक्कि
मन्निटमेल्लां तन्टे कैत्तलत्तिङ्कलाक्कि ८७
सत्यत्ते नाविन्मेलुं कृपयेच्चित्तत्तिलुं
वृत्तत्ते राजनीतितङ्कलुमाक्कि नित्यं ८८
भक्तियेक्कृष्णङ्कलुं कृष्णने मनस्सिलुं
नित्यकर्म्मादिकळे परमात्माविङ्कलुं ८९
भूतिये भूविङ्कलुं फालदेशत्तुं चेर्त्तु
भूतलमेकच्छत्रच्छायतन् कीळुमाक्कि । ९०
दानवारियेत्तन्टेयुळ्ळिलुं करत्तिलु-
मानन्दं वरुमारु चेर्त्तु रक्षिक्कुंकालं । ९१
परिपाल्यकळाकुं प्रजकळ्क्कोन्नुकोण्टुं
परितापङ्ङळिल्ल पार्त्थिवगुणङ्ङळाल् । ९२
अतिवृष्टयनावृष्टि वह्निवायुक्कळालु-
मतिक्रूरङ्ङळाय दुष्टजन्तुक्कळालुं ९३
सङ्कटमिल्लयार्क्कुं भूमियिलोरेटत्तुं ।
मरणं वरुवीला बालकन्मार्क्कुमेङ्ङुं ९४
चौर्यमेन्नुळ्ळ शब्दंपोलुमिल्लेङ्ङुं केळ्प्पान् ।
शौर्यवुमिल्लातेयिल्लारुमे पुरुषन्मार् । ९५

अपनी कान्ता द्रौपदी के साथ, मित्रवर्ग के साथ विष्णु की माया को देखकर विस्मय करते हुए राजाओं को अपने चरणों में करके सारी पृथिवी को अपने हाथ में लाकर, सत्य को अपनी जीभ पर, कृपा को अपने चित्त में और चरित्र को सदैव अपनी राजनीति में लाकर, भक्ति को कृष्ण पर, और कृष्ण को अपने मन में रखकर और नित्यकर्मों को परमात्मा में समर्पित करके भूति को पृथिवी पर और अपने ललार पर रखकर सारी भूमि को एक ही छत्र की छाया में लिया। जब वे (युधिष्ठिर) दानवारि (कृष्ण) को अपने मन में और हाथ में साथ ऐसा रखते थे कि उन्हें आनन्द आता था, तब परिपालनीय प्रजा को राजा के गुणों के कारण किसी भी प्रकार के दुःख न हुए। ८५-९२ अतिवृष्टि, अनावृष्टि, वायु, अग्नि, और अतिक्रूर दुष्ट जन्तुओं से पृथ्वी पर किसी को भी कोई दुःख न हुआ। कहीं भी बालक न मरते थे और 'चोरी' शब्द भी कहीं न सुनाई देता था। पुरुषों में कोई भी शौर्यहीन न था। और वृक्ष भी सदैव फूल, फल,

कुसुमफलदलपूर्ण्णङ्ङळाये निल्पू
लतकळोटुं कूटि वृक्षङ्ङळेल्लानाळुं । ९६
स्वधर्म्मङ्ङळेप्परिपालिक्कुमेल्लावरु-
मधर्म्मं काण्मानिल्ला विधर्म्मङ्ङळुमिल्ल । ९७
परद्रव्यत्तिलोरु कांक्षयिल्लोरुवनुं
दरिद्रन्मारुमिल्ल कृपणन्मारुमिल्ल । ९८
गुरुद्रोहिकळिल्ल सुरद्वेषिकळिल्ल ।
गुरुद्रोहवुमिल्ल मानुषक्कोरुनाळुं । ९९
सचिवपुरोहितसामन्तसहोदर-
द्विजबाहुजवैश्यपादजादिकळोटुं
सुतमागधवन्दिस्तुतिपाठकन्मारुं १००
नादमोहनन्मारां गायकवरन्मारुं
मृदंगपटहादि प्रचण्डवाद्यङ्ङळुं १०१
दिक्कुकळ् मुळङ्ङुमारिङ्ङने धर्म्मात्मजन्
मुख्यसेवकन्मारुमाय् सभातलं पुक्कान् । १०२
आस्थानमणिमयमण्डपमध्ये पर-
मास्थया सिंहासनं पुक्किरुन्नरुळिनान् । १०३
मार्त्ताण्डकोटिसमतेजसा वासुदेवन्
पार्त्थादिभृत्यन्मारुं सेविच्चारतुनेरं । १०४
करणङ्ङळिल् विषयङ्ङळे लयिप्पिच्चु
करणङ्ङळेप्पुनरात्मनि चेर्त्तु नन्नाय् । १०५

पल्लव और लताओं से लदे थे। सब अपने-अपने धर्म का पालन करते थे, अधर्म कहीं न दिखाई देता था और न विधर्म। परधन की लालच किसी को न थी और न कोई दरिद्र था और न कोई कृपण। कहीं गुरुद्वेषी न थे और न सुरद्वेषी। मनुष्यों में तो गुरुद्रोह था ही नहीं। ९३-९९ सचिव, पुरोहित, सामन्त, सहोदर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, सूत, मागध, बन्दी, स्तुतिपाठक, और नादों द्वारा मोहित करनेवाले गायकों के साथ मृदङ्ग, पटह आदि प्रचण्ड वाद्यों के दिशाओं को गुंजवाते समय, युधिष्ठिर अपने मुख्य सेवकों के साथ सभातल पहुँचे। आस्थान के मणिमण्डप के बीच में रखे सिंहासन पर सादर बैठकर धर्मपुत्र ने निवेदन किया। एक कोटि सूर्य के समान तेजवाले वासुदेव की अर्जुन और उनके सेवकों ने सेवा की। तब विषयों को इन्द्रियों में लीन करके और इन्द्रियों को आत्मा से

गोविन्दन् समाधियिलुऱप्पिच्चिचळकाते
भावनापरनाय् नारायणन् वासुदेवन् १०६
ओषधीपतिमुखदीधितिस्मितद्युति-
मोहितगोपवधूसंहतिरतिपति १०७
श्रीपति यदुपति भूपति सतांपति
गोपति मखपति धर्म्मकर्म्मैकपति १०८
विबुधपति वेदपति लोकानां पति-
यदितिसुतापति दहनपितृपति १०९
निऋति सरिल्पति पति सन्ततगति
क्षणदापति पशुपति पार्व्वतीपति ११०
प्रभृतिविशामधिपति सञ्चयपति
विबुधसेनापति विविधगणपति १११
प्रमथपति, यक्षरक्षसांपति, भोगि-
पति, गन्धर्व्वपति, सकलप्रजापति ११२
प्रमुखमुनिजनरचितश्रुतितति
प्रणतिनुतिश्रुति प्रीतिपूण्टीटुं देवन् ११३
दानवाराति दयावारिधि, मखपति,
सुकृतिजनपति निर्ल्लयन् निरञ्जनन् ११४
निष्कळन् निराकारन् निर्ग्गुणन् निरुपमन्
निश्चलन् निर्व्विकारन् निर्म्मलन् निराकुलन् ११५

जोड़कर अपने ध्यान में स्थिर कर के निश्चल होकर नारायण, वासुदेव भावना पर हुए। १००-१०६ तदनन्तर युधिष्ठर ने चन्द्र के समान शोभावाले मुख से युक्त, अपनी मुस्कराहट से गोपियों के समूह के रतिपति श्रीपति, यदुदति, भूपति, सतांपति, गोपति, यज्ञपति, धर्म और कर्म के एक मात्र पति, विद्वानों के और वेदों के पति, लोकों के पति, अदितिसुतापति, दहनपति, पितृपति, निऋति, सरित्पतिपति, सततगति, निशापति, पशुपति, पार्वतीपति, आदि विशों के पति, सञ्चयपति, देवों के सेनापति, विविध-गणपति, प्रमथपति, यक्ष और राक्षसों के पति, नागपति, गन्धर्वपति, सकल-प्रजापति, प्रमुखमुनियों के रचे श्रुतिसमूह के प्रणामों, स्तुतियों और श्रवण से प्रीत देव, १०७-११३ दानवों के शत्रु, दयासागर, यज्ञपति, सज्जनों के पति, निर्ल्लय, निरञ्जन, निष्कल, निराकार, निर्गुण, निरुपम, निश्चल, निर्विकार, निर्मल, निराकुल, निर्मम, निरामय, निर्विकल्पक, नित्य, सत्य, ज्ञान और आनन्द-स्वरूप अमृत आतमा की मूर्ति, सत्, चित्, ब्रह्मस्वरूप,

निर्म्ममन् निरामयन् निर्व्विकल्पकन् नित्यन्
सत्यज्ञानानन्दात्मामृताद्वयमूर्त्ति ११६
सच्चित्ब्रह्मात्मा सत्तामात्रात्मा परमात्मा
संविदेकात्मा परंज्योतिराद्यन्तहीनन् ११७
संवृतन्मायामयनीश्वरनेन्ट्रैयुळ्ळिल्
सन्ततमिरुन्नरुळीटिन नारायणन् ११८
तन्तिरुवटियोटु चोदिच्चु धर्म्मात्मजन् ।
निन्तिरुवटियुटे भक्तन्मारनुदिनं ११९
निन्तिरुवटितन्नेच्चिन्तिच्चु वाळुंपोले
निन्तिरुवटियिरुन्नरुळीटुवानिप्पो- १२०
ळेन्तुकारणमारेद्ध्यानिच्चेन्नरिकयि ।
लाग्रहमुण्टु पारमरुळिच्चेय्यामेङ्किल् १२१
केळ्क्कामेन्नतेवेण्टु कारुण्यवाराान्निधे !
चोल्लुवनेङ्किलतु केट्टालुं परमार्त्थं १२२
स्वर्ल्लोकनदीसुतनाकिय वसुश्रेष्ठ-
नष्टरागङ्ङळेल्लां नष्टमाय् चमञ्ञुळ्ळि-
लष्टांगब्रह्मचर्यनिष्ठयोटनुदिनं १२३
वेदवेदांगवेदान्तादिशास्त्रार्थशस्त्र-
वेदिकळ्मुन्पन् विज्ञानाद्ध्यात्मज्ञानत्तोटुं १२४
विजयप्रमुक्तास्त्रनिकरतल्पत्तिन्मेल्
विजितकरणनाय् परमयोगत्तोटुं १२५

सत्तामात्र-स्वरूप, परमात्मा, संविदेकात्मा, परंज्योति, आद्यन्तहीन, संवृत, मायामय, ईश्वर, अपने भीतर सदैव विराजमान भगवान् नारायण से पूँछा— "जिस प्रकार आप भगवान् के भक्त प्रतिदिन आप भगवान् का ध्यान करते हुए बैठते हैं, ११४-११९ उसी प्रकार आप भगवान् भी अब बैठकर विराज रहे हैं, इसका क्या कारण है ? किसका ध्यान आप कर रहे हैं ? यह जानने की प्रबल इच्छा है !" "अच्छा, तो बतलाऊँगा ।" "हे करुणासागर ! मैं सावधान सुनूँगा, और क्या !" "अच्छा ! तो मैं कहूँगा, परमार्थ सुनलीजिये ! स्वगर्गङ्गा के पुत्र वसुश्रेष्ठ (भीष्म) ने जब अपने आठों रागों को नष्ट करके, अष्टाङ्ग ब्रह्मचर्य की निष्ठा से युक्त, वेद, वेदांग, वेदान्त आदि शास्त्रों के और शस्त्रों के विद्वानों में श्रेष्ठ, विज्ञान और अध्यात्मज्ञान से युक्त, अर्जुन के रचे शरतल्प पर इन्द्रियों के विजेता होकर परमयोग करते हुए मूलाधार से सुषुम्ना नाड़ी द्वारा उठती कुण्डलिनी

सुषुम्नानाडियूटे मूलाधारत्तिङ्कल्नि-
न्नेंळुन्न कुण्डलिनीशक्तियॆक्करयेट्टि- १२६
च्चक्रङ्ङळ् कटन्नु सौदामिनीलतपोलॆ
मुख्यमां ब्रह्मरन्ध्रत्तिङ्कल् चेन्नाशु तट्टि १२७
चन्द्रमण्डलत्तिङ्कल्निन्नॊळुकीटुं सुधा-
विन्दुक्कळ् सुषुम्नयिल्निन्नु कीळ्पॆट्टुवन्नु १२८
मूलाधारं प्रापिच्चु परमानन्दं पूण्टु
कालदेशावस्थादि विस्मृतमनस्सिङ्कल् १२९
ध्येयनामॆन्नॆक्कण्टु भक्तिविश्वासत्तोटे
मायकूटातॆ तॆळिञ्ञेकमाय् निरञ्ञॊक्क- १३०
प्परन्नु विळङ्ङीटुं निष्कळस्वरूपत्तॆ-
त्तिरञ्ञु सकळमाय् पुरुषरूपत्तोटुं १३१
तन्नुटॆ हृदयत्तिलुरप्पिच्चिळकातॆ
नन्नाय् चेर्त्ततुमूलमिळकातिरुन्नु ञान् । १३२

श्रीकृष्णादिकळ् भीष्मरॆ काणुन्नतिनु पुरप्पॆटुन्नतु

शन्तनुतनयन्तन्नन्तर्भागत्तिङ्कल्च्चे-
न्नन्तरंकूटातकण्टिरिक्कुन्नितुमिप्पोळ् । १
अन्तकात्मजसहजामात्यादिकळोटे
शन्तनुतनयनॆक्काण्मान् पोकणमिप्पोळ् । २

शक्ति को १२०-१२६ चक्रों को पार कराकर बिजली की लता के समान मुख्य ब्रह्मरन्ध्र तक पहुँचाकर चन्द्रमण्डल से टपकते अमृत बिन्दुओं को सुषुम्ना नाड़ी से नीचे होकर मूलाधार तक प्राप्त होने पर परमानन्द का अनुभव कर, काल, देश, अवस्था आदि से रहित अपने मन में मुझ ध्येय को पारकर भक्ति और श्रद्धा के साथ बिना माया के उसी एक तत्त्व को फैल कर व्याप्त और विराजमान उस निष्कल स्वरूप को सकल बनाकर पुरुष का रूप देकर अपने हृदय में निश्चल और स्थिर कर दिया तब मैं भी निश्चल बैठ गया ।" १२७-१३२

श्रीकृष्ण आदि का भीष्म को देखने के लिए प्रस्थान

अब शन्तनु के पुत्र अपने अभ्यन्तर में बिना भेद के विराजमान हैं । अब वैकार्यरहित एकनायक कृष्ण ने कहा— "हे युधिष्ठिर! अपने भाई और अमात्यों के साथ शन्तनु के पुत्र को देखने जाना चाहिये । बिना विलम्ब

वैकरुतेतुं तेरुपूट्टुकॊन्नरुळ्चॆय्तु
वैकार्यरहितनामेकनायकन् कृष्णन् । ३
सहजपुरोहितसचिवसामन्तौघ-
सहितनाय कुन्तीनन्दननोटुंकूटॆ । ४
द्विजतापसपरिवृतनाकिय देव-
नजनव्ययन् कुरुक्षेत्रत्तिन्नॆळुन्नळ्ळि । ५
भक्तवत्सलनरुळ्चॆय्तितु मद्धयेमार्ग्गे
पृथ्वीन्द्रनाय धर्म्मपुत्रनोटोरो पुरा- ६
वृत्तं भूपते ! तातन्तन्नुटॆ नियोगत्ताल्
क्षत्रनाशनन् कॊलचॆय्तितु माताविनॆ- ७
त्तल्परिभवत्तिनु भूपतिवीरन्मारॆ
कॊल्लोटे मुटिच्चितु मूवेळुवट्टं रामन् । ८
क्षोणीपालकन्मारॆक्कॊन्नुकॊन्नवरुटॆ
शोणितं कॊण्टुण्टाय तीर्त्थत्तिल् स्नानंचॆय्तु ९
मानमेऱिय रामन् पितृतर्प्पणं चॆय्तु
रेणुकादेवितन्नॆत्तातनोटुटन् चेर्त्तान् । १०
अङ्ङनॆयुळ्ळ तीर्त्थमिविटं धरापते !
तिङ्ङिनशौर्यमोटे पिन्नॆयुं भूपालन्मार् ११
निऱञ्ञू दनुजन्मार् पिऱन्नु भूमितन्निल्
मऱञ्ञू धर्म्मङ्ङळुं कुऱञ्ञू कर्म्मङ्ङळुं । १२

के रथ तैयार करो"। भाई, पुरोहित, सचिव, सामन्तगण, आदि सहित कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) के साथ ब्राह्मण, तापस आदि परिवृत देव, अज, अव्यय कुरुक्षेत्र को पधारे। रास्ते में भक्तवत्सल ने भूपाल धर्मपुत्र को भिन्न-भिन्न प्राचीन कथाएँ सुनाईं, जैसे— "पिता की आज्ञा से क्षत्रियों के नाशक ने अपनी माता का वध किया। १-७ उस परिभव को मिटाने के लिए भूपतिवीरों को परशुराम ने उत्साह के साथ इक्कीस बार समाप्त कर दिया। क्षत्रियों को मार कर उनके रक्त से जो तीर्थ बना उसमें स्नान करके अत्यन्त मानी परशुराम ने अपने पिता का तर्पण किया और (अपनी माता) रेणुका देवी को अपने पिता से फिर मिला दिया। हे भूपाल ! ऐसा तीर्थस्थान यहाँ पर है। तीव्र शौर्यवाले क्षत्रिय फिर पैदा हुए और पृथ्वी पर दानवों का भी जन्म हुआ, धर्मों का लोप हुआ और कर्म कम हुए। अठारह अक्षौहिणियों की सेना लेकर वे अठारह दिनों में सिंहनाद करते हुए यहाँ आये। यह देखो ! रक्त और हड्डियाँ,

आरुमून्नक्षौहिणिप्पटयोटवरिप्पो-
ळरुतिवन्नारिह मूवारुदिनंकॊण्टे । १३
रक्तवुमस्थिकळुं निणवुं पिणवुमों-
रुत्तमांगादिकळुं कण्टितो शिवशिव ! १४
मत्तहस्तीन्द्रन्मारुमुत्तमहयङ्ङळुं
चत्तुचत्तोंक्क मलच्चितल्लो किटक्कुन्नु । १५

भीष्मसन्दर्शनं

अटुत्तु भीष्मरुटे शयनस्थलमिनि
नटक्क पारिल्क्कटि तेरिल्निन्निरङ्ङेणं । १
सात्यकिधर्म्मात्मजविदुरवेदव्यास-
पार्त्थदारुकमुनिभूदेवादिकळोटुं २
सात्विकन्माराममात्यादिकळोंटुंकूटि
चित्तकारुण्यांबुधि भीष्मरेच्चेन्नुकण्टु । ३
काल्त्तळिरिण कूप्पित्तोंळुतु पार्त्थादिक-
ळास्थया वीणु नमस्करिच्चु वणङ्ङिनार् । ४
कारणनाय कारुण्यामृतांबुधि कृष्णन्
धारणादिकळोटुकूटिय भीष्मरोटुं ५
चन्द्रिकामनोहरमन्दहासवुं पूण्टा-
नन्दमुण्टाम्माररुळ्चेयितु मुकुन्दनुं— ६

शव और शीर्ष यहाँ पड़े हैं— हा शिव ! शिव ! मत्त हाथी, और उत्तमोत्तम घोड़े यहाँ मरे पड़े हैं उल्टे, देखलो ! ८-१५

भीष्म का दर्शन

अब भीष्म का शयनस्थान निकट ही है। अब हम लोग रथ से उतर कर पैदल चले। सात्यकि, युधिष्ठिर, विदुर, वेदव्यास, अर्जुन, दारुक, मुनि और ब्राह्मणों और सात्त्विक अमात्य आदिकों के साथ कारुण्यसागर ने जाकर भीष्म का दर्शन किया। अर्जुन आदिकों ने उनके चरणों पड़कर सादर वन्दना की। कारण-भूत और कारुण्यसागर कृष्ण मुकुन्द ने धारणा आदि से युक्त भीष्म से, चाँदनी के समान मन्दहास करते हुए आनन्द दिलाने वाले ढंग से कहा— "जो कुछ भी आप को शारीरिक अथवा मानसिक सन्ताप हुआ हो, मुझे

अॅन्तु मानसमो शारीरमो भवानॊरु-
सन्तापमुण्टायतॆन्तॆन्नोटु परयणं । ७
सम्प्रति तन्पुराने ! सन्तापमटियनु-
ण्टन्पुकळुटल्तोरुमेल्क्कयाल् मट्टॊन्निल्ल । ८
प्रत्यहं यमनियमासनप्राणायाम-
प्रत्याहारकधारणाध्यानसमाधिया- ९
मष्टांगयोगत्तॊटुमॆन्नॆस्सेविक्कुन्नव-
नॊट्टुमे सन्तापमुण्टाकरुतॊन्नुकॊण्टुं । १०
अच्छनां शन्तनु तन्नीटिन वरत्तिनाल्
स्वच्छन्दमृत्युवल्लो केवलं भवानॆन्नाल् । ११
अद्यादि षळ्पञ्चाशदिवसमायुस्सुमु-
ण्टिद्देहमुपेक्षिच्चिट्टॆन्नोटु पिन्नॆक्कूटां । १२
अत्र नाळेक्कुं पय्युं दाहवुमालस्यवुं
शस्त्रङ्ङळेट़ नोवुं व्रणवुं तीरुकॆन्नान् । १३
मत्सरादिकळ्दोषं वेर्पॆट्ट भवानु ञान्
मत्स्वरूपत्तॆयुळ्ळवण्णं काट्टुवनल्लो । १४
स्वजनहिंस चॆय्तेनॆन्नॊरु विषादमु-
ण्टजितात्मावामजातारातिक्ककतारिल् । १५
अतिनु वर्ण्णाश्रमधर्म्मनीतिकळोटु-
मितिहासादिकळुमरियिच्चीटवेणं । १६

बता दीजिये" । १-७ "हे भगवन् ! इस समय मुझे और कोई सन्ताप नहीं है सिवाय इसके कि मेरे सारे शरीर में शर लगे हैं । (कृष्ण ने कहा—) प्रतिदिन यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधियुक्त अष्टांग योग के द्वारा मेरी सेवा करनेवाले को किसी भी प्रकार का कोई भी सन्ताप न होगा । पर से आप के पिता शन्तनु के दिये वर के कारण आपको केवल स्वछन्द मृत्युही हो सकती है"। "आज से छप्पन दिवस की आयु मेरी अवशिष्ट हैं । तदनन्तर इस देह को छोड़ दूँगा । फिर मुझ से मिल लेना ।" "उतने दिन भूँख, प्यास, आलस्य, शरों के लगने का दर्द और व्रण समाप्त हों ! मत्सर आदि दोषों से मुक्त आप को मैं अपना परमार्थ स्वरूप दिखला दूँगा । ८-१४ अजितात्मा अजातशत्रु (युधिष्ठिर) को इस बात का विषाद है कि मैंने स्वजनहिंसा की । इस लिए उसको वर्णाश्रमधर्म इतिहासों सहित बतला देना ।" मधुवैरि ने मधुर ढँग से कहा— "आप युधिष्ठिर मतिमान् हैं । तब अतसी पुष्प के समान शरीरवाले से

मतिमानाय भवान् धर्म्मनन्दननेन्नु
मधुवैरियुमरुळ्चेय्तितु मधुरमाय् । १७
अतसीकुसुमसम्मितविग्रहन्तन्नो-
टतु केट्टरुळ्चेय्तु गंगानन्दननप्पोळ् । १८
चरणकरपक्षोरहितनायुळ्ळवन्
तरणिरहितनाय्त्तुळ्ळञ्ञु वारान्निधि- १९
तरणं चेय्तीटणमरनाळिकक्कोण्टे-
न्नरुळिच्चेय्तीट्टुन्नतेन्तेन्ट्टे तन्पुराने ! २०
सम्मोहं कलर्न्नेट्टमज्ञानियायुळ्ळ ञान्
धर्म्माधर्म्मादिकळुं विज्ञानज्ञानादियुं २१
ऎङ्ङनेयरियुन्नु मूढनामटियनो-
टिङ्ङनेयरुळ्चेय्ततेन्तेन्ट्ट भगवाने ! २२
माधवनतुकेट्टु मन्दहासवुं चेय्तु
सादरमरुळ्चेय्तु गांगेयन्तन्नोटप्पोळ् । २३
मट्टोन्नुं निनयाते मत्स्वरूपत्तेत्तन्ने
मुट्टुमात्मनि चिन्तिच्चिन्नेटं कळियुन्पोळ् २४
सर्वज्ञत्ववुं निनक्कुण्टाकुं नाळे ञङ्ङ-
ळुर्व्वीपालकनुमाय् वरुन्नतुण्टुतानुं । २५
अप्पोळेक्कोल्लां तोन्नुमुळ्प्पूविल् निनक्केतुं
तप्पुकूटातेयेङ्किलङ्ङनेतन्ने वेण्टू । २६
ऎन्नरुळ्चेय्तु वेदव्यासधौम्यादिकळो-
टोन्निच्चु पाण्डवरुमायेळुन्नळ्ळि नाथन् । २७

गंगापुत्र ने कहा—मैं हाथ, पैर और पक्षरहित हूँ और मेरे पास नाव भी नहीं है। हे भगवन् ! मुझसे क्या कहा जा रहा है कि मैं आधे घंटे में तैरकर समुद्र पार करूँ? सम्मोह के कारण अत्यन्त अज्ञानी मैं धर्म और अधर्म, विज्ञान और ज्ञान को कैसे पहचान सकूँगा ? हे भगवन् ! मुझ मूढ से आप कैसे इस प्रकार की आज्ञा करते हैं ?" १५-२२ यह सुनकर माधव ने मन्दहास किया और गांगेय (भीष्म) से सादर निवेदन किया। "और कुछ न सोचिये, केवल मेरे स्वरूप का अपनी आत्मा में ध्यान कीजिये तो आज का दिन समाप्त होते ही आप को सर्वज्ञत्व हो जायगा और कल भूपाल को लेकर हम सब आ जायेंगे। तब तक आप को अपने हृदयपुष्प में सब बिना भ्रम के आयेगा, और क्या चाहिये ?" ऐसा कह कर वेदव्यास, धौम्य आदिकों और पाण्डवों के साथ, नाथ (कृष्ण) सिधारे। तदनन्तर

सन्ध्यावन्दनं कळिच्चन्तणरोटुं कूटि-
च्चेन्तारिल्मातुपुल्कुं बन्धुकसमाधरन् । २८
कुन्तीनन्दनन्मारुं सामन्तवीरादियुं
मन्त्रिकळोटुं द्विजतापसादिकळोटुं २९
शन्तनुपुत्रन्तन्नेक्काण्मानायॆळुन्नळ्ळि
सन्तोषंपूण्टु वणङ्ङीटिनान् देवव्रतन् । ३०

भीष्मोपदेशं

धर्म्मपुत्रादिकळुं गंगानन्दनन्चर-
णांबुजं कण्टु नमस्करिच्चु कूप्पीटिनार् । १
धर्म्मपुत्रक्कुं गंगादत्तनां विष्णुभक्तन्
धर्म्मोपदेशं चेय्तीटुन्नुपोलॆन्नु केट्टु । २
सम्मोदमुळ्ळिल्लवळरुं महत्तुक्कळॆल्लां
धर्म्मतत्त्ववुं धर्म्मरहस्यङ्ङ्ळुमॆल्लां ३
सम्मोहमकन्नुपोम्मारु केळ्क्कणमॆन्नो-
र्त्तुन्मेषं पूण्टु वन्नुनिरञ्ञु भीष्मान्तिके । ४
भक्तवत्सलनाय भगवन्नियोगत्ताल्
भक्तनां धर्म्मात्मजन् भीष्मरॆत्तोळुतुटन् । ५
उपसत्तिनें चेर्त्तु चोदिच्चु नृपधर्म्म-
मुपदेशिक्केन्नरुळ्चेय्तितु भगवानुं । ६

संध्यावदन करके ब्राह्मणों के साथ लक्ष्मी के चुम्बन के योग्य बन्धुकपुष्पसम अधर वाले चले। तदनन्तर कुन्ती के पुत्र सामन्तवीरों, मन्त्रियों, ब्राह्मणों और तापसों के साथ शन्तनु के पुत्र को देखने के लिए पधारे और बहुत प्रसन्न होकर देवव्रत ने उनका अभिवादन किया। २३-३०

भीष्म का उपदेश

युधिष्ठिर आदि ने गंगानन्दन (भीष्म) के चरणकमलों का दर्शन करके हाथ जोड़े। विष्णुभक्त गंगादत्त युधिष्ठिर को धर्मोपदेश करनेवाले हैं ऐसा सुनकर सभी बड़े लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए और धर्मतत्त्व और धर्मरहस्य को अपने सम्मोह को दूर करने के लिए पूर्णरूप से सुनने के उत्साह से भीष्मजी के पास आकर भर गये। भक्तवत्सल भगवान् की आज्ञा से भक्त युधिष्ठिर ने भीष्म जी की वन्दना की। और वड़े आदर के साथ राजधर्म कहने की प्रार्थना की। और भगवान् ने भी उपदेश

ऎन्तॆन्ट्टे भगवाने ! निन्तिरुवटितन्नॆ
कुन्तीनन्दनन्तनिक्कुपदेशिक्के वेण्टू । ७
निन्तिरुवटियरुळ्चॆय्तिट्टु केळ्क्कुन्नाकिल्
सन्तोषं वरुमल्लो संशयङ्ङळुं तीरुं । ८
ऎन्तिनियरुळिच्चॆय्यरुतायवन्नु कर्म्म-
बन्धवुमकन्नानन्दं वरुमॆल्लावर्क्कुं । ९
शन्तनुपुत्रनेवं चॊन्नतु केट्टु नाथन्
मन्दहासवुं चॆय्तु पिन्नॆयुमरुळ्चॆय्तु— १०
ईश्वरवाक्यमॆन्नाय्पोमत्रे ञान् चॊल्लियाल्
शाश्वतधर्म्मं भवादृशन्मार् चॊल्क नल्लू । ११
वेदवाक्यङ्ङळ्पोलॆ निन्नुटॆ वाक्यङ्ङळुं
मेदिनितन्निलव्याहतङ्ङळाय् वन्नीटुं । १२
ऎन्नॆल्लामनुग्रहिच्चाज्ञयॆच्चॆय्तनेरं
नन्नायित्तॆळिञ्ञितात्मावु शान्तनवनुं । १३
स्वधर्म्मं मुन्पिलरियेण्टुन्नतॆन्नोर्त्तुटन्
मुतिर्न्नु राजधर्म्मं चोदिच्चु युधिष्ठिरन् । १४
परमो धर्म्मो राजाविति वेदज्ञन्मारु-
मुरचॆय्युन्नोरतुकारणं गंगादत्तन् १५
उरचॆय्तितु राजधर्म्ममॆप्पेरुमप्पो-
ळुरचॆय्वतिनॆळुतल्लिनिक्किवयॆल्लां । १६

करने की याञ्चा की । (भीष्म ने कहा) "हे ! भगवन् ! यह क्या है ! परमार्थ में कुन्तीपुत्र को आप ही उपदेश करें तो अच्छा हो ! १-७ आप ही का उपदेश सुनने से उनको सन्तोष होगा और सब संशय मिट जायेंगे । क्या हुआ कि आप नहीं बतलाते हैं ? सब का कर्मबन्ध दूर हो जाता और सब आनन्द प्राप्त करते !" शन्तनुपुत्र की यह बात सुनकर नाथ (कृष्ण) ने मुस्कराकर फिर निवेदन किया— "अगर मैं कहूँ तो वह ईश्वरवाक्य हो जायगा । अच्छा यही होगा कि आप जैसे लोग शाश्वतधर्म बतलावें । आपके वचन वेदवाक्यों के समान इस पृथिवी पर अव्याहत (अनुल्लंघनीय) हो जायेंगे ।" भगवान् के अनुग्रह सहित आज्ञा करने के बाद भीष्म की आत्मा अत्यन्त प्रसन्न हुई । यह समझ कर पहले स्वधर्म जानना आवश्यक है युधिष्ठिर ने राजधर्म पूँछा । ८-१४ वेदज्ञ कहते हैं कि राजा ही परम धर्म है । इस लिए गंगादत्त ने राजधर्म को उस समय समझाया । कहा— यह सबसे बड़ा धर्म है प्रजा का कपट छोड़कर परिपालन करना । इसके

राजाविनेल्लायिलुं परममाय धर्म्मं
व्याजमेन्निये युळ्ळ परिपालनमल्लो । १७
अतिनु विरोधिकळायुळ्ळ शत्रुक्कळे
वधवुं चेय्तु नन्नाय् परिपालिच्चिटेणं । १८
दुष्टराय् नित्यमधर्म्मिष्ठन्मारायुळ्ळोरे
नष्टराय् चमच्चु धर्म्मिष्ठन्माराय् मेवीटुं १९
शिष्टरे वळ्ळिपोले रक्षिच्चु दिनंतोरुं
पुष्टियुं निजविषयत्तिङ्कल् वळर्त्तु स- २०
न्तुष्टनाय् पुत्रमित्रकळत्रादिकळोटुं
इष्टन्माराय निजसेवकजनत्तोटुं २१
भृत्यसामन्त पुरोहित तल्भटरोटुं
सुवृत्तन्मारामम्मात्यप्रधानन्मारोटुं २२
शुद्धरां गणकलेखकन्मारोटुं सदा
सत्वरचारिकळायुळ्ळ चारन्मारोटुं २३
शक्तन्माराय सेनानायकन्मारोटु-
मत्युत्तमन्मारायीटुं प्राड्विवाकन्मारोटुं २४
शुद्धचेतसा परिपालिच्चु महीतलं
शुद्धान्तत्तिङ्कल् सुखिच्चिरुन्नीटेणं नृपन् । २५
समस्तप्राणिकळ्क्कुं विषयेन्द्रिय देह-
समत्वमुण्टेङ्किलुं नृपशासनयाले २६
भुवनमनाकुलतरमाय् वर्त्तिक्केण-
मवनीश्वरन् जगल्प्रत्यक्षेश्वरनल्लो । २७

लिए विरोधी शत्रुओं का वध करके ठीक परिपालन करना आवश्यक है। राजा को चाहिये कि वह सदैव अधर्मिष्ठों को नष्ट करके, धर्मिष्ठ और शिष्टों की नियम से रक्षा करे प्रतिदिन और अपने देश में रहनेवाले शिष्टों को बढ़ाकर सन्तुष्ट हो जाय। और अपने पुत्र, मित्र, कलत्र आदि के साथ, अपने इष्ट सेवकों के साथ अपने भृत्य, सामन्त, पुरोहित और लेखकों के साथ, फुर्ती के साथ काम करनेवाले चारपुरुषों के साथ, शक्तिशाली सेनानायकों के साथ, और अत्युत्तम न्यायाधीशों के साथ भूमि को शुद्ध मन से परिपालन करके अपने अन्तःपुर में सुख से रहे। यद्यपि सभी प्राणी विषय, इन्द्रिय, और शरीर के विषय में तुल्य हैं तथापि राजशासन के द्वारा भुवन को अनाकुल बनाना है। अन्ततः राजा तो जगत् का प्रत्यक्ष ईश्वर ही है।

ब्रह्मवक्त्रत्तिङ्कल्निन्नुत्भविच्चितु विप्रन्
कर्म्मङ्ङळारुण्टवनरिक युधिष्ठिर ! २८
अध्ययनवुमध्यापनवुं यजनवुं
भद्रयाजनवुं दानप्रतिग्रहङ्ङळुं । २९
आरुं चौल्लुवनहमरिवान् तक्कवण्णं
वेरे नी केट्टुकौळ्क विप्रषळ्क्कर्म्ममेल्लां । ३०
वेदङ्ङळ् पठिक्कयुं पठिप्पिच्चीटुकयु-
मादरवोटु यागं चेय्कयुं चेय्यिक्कयुं
दानं चेय्कयुं मुदा तान् परिग्रहिक्कयुं ३१
मिङ्ङनॆ षळ्क्कर्म्मङ्ङळुळ्ळ भूदेवन्माक्कुं
मंगलं नल्कीटुवानाश्रमं नालुण्टल्लो । ३२
अन्ततिल् ब्रह्मचर्यं मुन्पिलेतॆन्नु वेदं
नन्नायिप्पठिक्कणमाचार्यकुलं प्रापि- ३३
च्चन्तन्नु भिक्षयेट्टु गुरुविन् काल्क्कल् नल्कि
तन्नियोगत्ताल् वृत्तिकळिच्चोरोरोतरं ३४
सन्ध्यावन्दनं कळिच्चग्न्युपस्थानं चेय्तु
सन्ततमाचार्यन्तन्नन्तिके वसिक्कणं । ३५
भक्तिपूण्टनुशयनासनादियुं वेणं
नित्यवुं ब्रह्मचर्यचिह्नवुं धरिक्कणं । ३६
सुमुहूर्त्तं कौण्टुपनिच्चनाळ्मुतल् पिन्ने-
क्रममौत्तोरो व्रतं वळिये कळिक्कणं । ३७

ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण उत्पन्न हुआ और उसके छः कर्तव्य हैं, जान लो, हे युधिष्ठिर ! वे हैं 'अध्ययन, अध्यापन, यजन, सज्जनों का याजन, दान और प्रतिग्रह।' २३-२९ छहों को बतलाऊँगा, ताकि तुम जान लो। विप्रों के छः कर्मों को अलग-अलग सुन लो। वेदों को पढ़ना और पढ़ाना, आदर के साथ याग करना और कराना, दान करना और प्रमोद के साथ प्रतिग्रह करना। इस प्रकार छ कर्म वाले ब्राह्मणों की मंगलसिद्धि के लिए चार आश्रम भी हैं। उनमें पहला तो ब्रह्मचर्य है। इस लिए आचार्य-कुल पहुँचकर वेदों को ठीक से पढ़ना चाहिये। प्रतिदिन भिक्षा मांग लाकर गुरु के चरणों में समर्पित करना और उनकी आज्ञा से अपनी वृत्ति करना और भिन्न प्रकार के संध्यावन्दन करके अग्न्युपस्थान करते हुए आचार्य के पास ही रहना चाहिये और भक्ति के साथ उनके बाद ही बैठना-लेटना चाहिये। ३०-३६ सुमूहूर्त्त में उपनयन होने के दिन से ही क्रम

आचार्यशुश्रूषयुं चेय्यणं निराशया
स्वाचारनिरतनायिङ्ङने गुरुभक्तया ३८
गोत्रवुं प्रवरवुं शाखयुं चरणवु-
मोर्त्तु तत्तल् प्रोक्तानुष्ठानङ्ङळोट्टुं कूटि । ३९
विद्यकळ् पतिनेट्टुं पठिच्चु पिन्नेस्समा-
वर्त्तनं चेय्वू गोदानं कळिच्चनन्तरं ४०
नालुवेदवुमतिनंगङ्ङळारुं पिन्ने
नालु वेदङ्ङळुपवेदङ्ङळ् नालुं नन्नाय् ४१
अभ्यसिच्चाचार्यनु दक्षिणचेय्ताल् पिन्ने
यप्पोळे मुदा गृहस्थाश्रमं कैक्कोळ्ळणं । ४२
मट्टुळ्ळाश्रमङ्ङळ् मून्निनुमाधारमल्लो
मुट्टुं गार्हस्थ्याश्रममेन्नरिञ्ञनुदिनं ४३
इष्टयायनुरूपयायोरु भार्ययोटुं
तुष्टनाय् पञ्चयज्ञादिकळुं चेय्तु नित्यं ४४
संध्यानुष्ठानादियुं वळिये चेय्तुकोण्टु
सन्ततिकोण्टु पितृक्कळ्क्कुळ्ळ कटं पोक्कि ४५
पुत्रन्मार्क्केल्लामोक्क षोडशक्रियचेय्तु
पुत्रिकळेयुं कोटुत्तात्मजन्मारेक्कोण्टु ४६
पुत्रपुत्रार्त्थं विवाहादिकळ् चेय्यिप्पिच्चु
नित्यवुं पितृपूजचेय्तु देवकळ्क्केल्लां ४७

से सभी व्रतों का पालन करना चाहिये। कोई आशा न रखते हुए गुरु की शुश्रूषा करना चाहिये, अपने आचारों में निरत होकर और गुरुभक्ति के साथ। अपना गोत्र, प्रवर, शाखा और चरण का स्मरण करते हुए उनके लिए कहे गये अनुष्ठानों को पूरा करते हुए अठारहों विद्याओं को पढ़ने के बाद समावर्तन और गोदान करके चारों वेद और उनके छ अंग, तदनन्तर चार वेदों के चार उपवेदों को भी ठीक अभ्यास करके अपने आचार्य को दक्षिणा भी देकर प्रमोद के साथ गृहस्थाश्रम प्रवेश करना चाहिये। ३७-४२ यह समझकर कि अवशिष्ट तीनों आश्रमों का यह ग्रहस्थाश्रम ही आधार है। अपनी इष्टा और अनुरूपा पत्नी से सन्तुष्ट होकर प्रतिदिन पञ्च-महायज्ञ करते हुए और क्रम से संध्यावन्दन का अनुष्ठान करते हुए, अपनी सन्तान द्वारा पितरों के ऋण से उऋण होकर अपने पुत्रों को सभी सोलह संस्कारों का अनुष्ठान करके, अपनी पुत्रियों का कन्यादान करके, पौत्रों के जन्म के लिए अपने पुत्रों से विवाह कराकर

तृप्तियुं वरुत्तिक्कोण्टतिथिपूजयोटुं
भक्तिकोण्टन्त:करणप्रसंन्नतयोटुं ४८
गृहस्थाश्रमं नन्नाय् रक्षिच्चु वळिपोले
महत्वमेरुं वानप्रस्थनाय् चमयेणं । ४९
पत्नियेप्पुत्रन्मारे भरमेल्पिच्चेङ्किलुं
पत्नियुं तानुं कूटिप्पोकिलुं कणक्कल्लो । ५०
पत्निक्कु रजस्सटङ्ङीटिनाल् वनत्तिङ्क-
लग्नियें मनस्सिङ्कलावाहिच्चाकिलुमां । ५१
क्षेत्रोपवासादियुं भूप्रदक्षिणादियुं
तीर्थस्नानादियुं चेय्तरण्यंतन्निल् वाणु ५२
देहत्ते त्यजिक्किलुमामतेन्निये पिन्ने
मोहत्तेयोटुक्किस्संन्यासं कोळ्ळुकयुमां । ५३
नित्यवुं चित्तं विषयत्तिङ्कल् विरक्तमाय्
नित्यानित्यादि विवेकत्तोटुमाचार्यनें ५४
भक्त्या वन्दिच्चु शुश्रूषिच्चु चोदिच्चीटुन्पोळ्
नित्यनाकुन्नतात्मावनित्यं प्रपञ्चमें-
न्नुत्तमनाय गुरुवुपदेशिक्कुमल्लो ५५
वेदान्तश्रवणवुं चेय्तुपनिषत्तुकळ्
वेदान्तं वरुवतिन्नभ्यसिच्चाचार्यन्तन् ५६

प्रतिदिन पितृपूजा करते हुए, देवताओं की तृप्ति भी कराकर, अतिथि-पूजा करते हुए भक्ति के द्वारा अपने अन्त:करण की प्रसन्नता बनाकर गृहस्थाश्रम की रक्षा करके अन्तत: क्रम से वानप्रस्थ होना चाहिये । ४३-४९ पत्नी के पालन का दायित्व पुत्रों के कन्धे सौंपा जा सकता है अथवा पत्नी के साथ बन जाना भी ठीक होगा । अगर पत्नी की रजोशान्ति हो चुकी है तो वन में अग्नि को अपने मन में ही आवाहन किया जा सकता है । यह भी हो सकता है कि तीर्थ-स्थानों में उपवासादि करके, पृथिवी की प्रदक्षिणा और तीर्थों में स्नान करके वन में ही रहते हुए देहत्याग किया जा सकता है । अथवा अपना मोह त्याग कर संन्यास लिया जा सकता है । सदैव विषयों से विरक्त होकर नित्य और अनित्य के विवेक के साथ अपने आचार्य को भक्ति से वन्दना करके और उनकी शुश्रूषा करने के बाद पूँछने पर उत्तम गुरु तो अवश्य बतला देंगे कि आत्मा ही नित्य है और प्रपञ्च अनित्य । वेदान्त को सुनकर और वेदान्त के बोध के लिए उपनिषदों का अभ्यास करके आचार्य के चरणों की परिचर्या करके आनन्द प्राप्त करने के

पादान्ते परिचरिच्चानन्दं प्रापिप्पानाय् ।
पापान्तं वरुत्तुन्न तत्वमस्यादि वाक्यं ५७
बोधार्त्थं धरिच्चुटनष्टांगयोगत्तोंटुं
भेदार्त्थभ्रमं तीर्न्नु मोक्षवुं प्रापिच्चीटां । ५८
क्षत्रियन् पिन्ने ब्रह्मबाहुजनवनु क-
र्म्मत्रयंतन्नेयुळ्ळू केळ्क्कोटो युधिष्ठिर ! ५९
वेदमोतुकयुमां यागवुं चेय्यामल्लो
सादरं यथापात्रं दानवुं चेय्यामल्लो । ६०
मेदिनीश्वरनायालभिषेकवुं चेय्यां
मेदिनीपते ! महीनिर्ज्जरमुनीन्द्रन्मार् ६१
समुद्रदिव्यनदीतीर्त्थपुष्करं रत्न-
मुमुळ्ळ्तीटिन कलशङ्ङळिल् निरच्चुटन् ६२
मणिमन्त्रौषधङ्ङळ्कोण्टु पूजिच्चु नाना-
मणिशोभित मकुटादिभूषणं पूण्टु ६३
शंखदुन्दुभिपटहादि वाद्यङ्ङळोटुं
किङ्करभृत्यामात्य मन्त्रिचारन्मारोटुं ६४
अन्तिके पुरोहितन्तन्नोटुं कूटेच्चेर्न्नु
वेण्तळ वेञ्चामरं वेण्कोट्क्कुटयोटु- ६५
मालवट्टवुं कोटि कोटिक्कूरकळोटु-
मान तेर् कुतिर कालाळाय पटयोटुं
सेनानायकन्मारां वीरन्मारोटुं चेर्न्नु ६६

लिए पाप का अन्त करनेवाले 'तत्त्वमसि' ५०-५७ आदि वाक्यों को धारण करके अष्टांग योग के द्वारा भेदभ्रम को समाप्त करके मोक्ष प्राप्त कर सकता है। क्षत्रिय के ब्रह्मा के बाहु से उत्पन्न होने के कारण तीन ही कर्तव्य हैं— सुन लो, हे युधिष्ठिर ! वह वेद पढ़ सकता है और यथापात्र सादर दान भी कर सकता है। अगर भूपति हुआ तो उसका अभिषेक भी हो सकता है। हे भूपाल ! ब्राह्मण और मुनीन्द्र समुद्र, दिव्य नदियों और तीर्थों से रत्न भीगे हुए कलशों में जल भरकर मणि, मन्त्र और औषधों से पूजा करके विविध मणियों से शोभित मुकट आदि भूषण पहन कर शंख, दुन्दुभि, पटह आदि वाद्यों के साथ, किङ्कर, भृत्य, अमात्य, मन्त्रि और चार पुरुषों के साथ, ५८-६४ निकट में अपने पुरोहित को रखकर सफ़ेद पंखे, झण्डे का स्तम्भ और अंशुक, हाथी, रथ, घोड़े, पैदल सैनिक आदिकों के साथ और वीर सेनापतियों के साथ रत्नसिंहासन पर

रत्नसिंहासनत्तिन्मेलाम्मारिरुन्नुटन्
पत्निये वामभागे चेर्त्तभिषिक्तनायाल् ६७
शत्रुक्कळ् वरायवतिन्नायोरु कोट्ट चम-
च्चुत्तमराजगृहं मद्धचे तीर्क्कयुं वेणं । ६८
भित्तिकळ्तोरुं दिव्यमूर्त्तिकळुटे रूपं
चित्रमायेळुति वेण्माळिककळुं वेणं । ६९
पर्व्वत वन जल पूर्ण्णवाहिनि वेणं
पोय्वळिकुळि यन्त्रप्पालङ्ङळ् किटङ्ङ्कळ् ७०
अळविल्लात वेळ्ळुं निऱञ्ञ किटङ्ङुकळ्
कुळङ्ङळ् नानावर्ण्ण मरुवुं गृहङ्ङळुं ७१
अरयाल् पेरुन्तेरुवुद्यानं नटक्कावुं
करिकळ् कुतिरकळ्क्कुळ्ळ पन्तिकळ् वेणं । ७२
वळञ्ञ मतिल् कल्लामन्पऱकळुं वेणं
विळङ्ङीटिन सभातलवुमास्थानवुं । ७३
मन्त्रशालकळोटु नाटकशालकळुं
चन्तमोटन्त:पुरं चन्द्रिकाङ्कणङ्ङळुं ७४
सूत मागध वन्दि स्तुतिपाठक चार-
दूत गायक कुशीलवसेवकगृहं ७५
नर्त्तकीयुक्तन्मारां नर्त्तकप्रवरन्मार्
चित्तकौतुकत्तोटुं वर्त्तिक्कुं गृहङ्ङळुं ७६

बैठकर पत्नी को अपने वामभाग में रखकर अगर अभिषिक्त हो जाय तो शत्रुओं को रोकने के लिए एक दुर्ग बनाकर और उसके बीच में एक राजगृह भी बनवाना चाहिये। हर एक दीवार पर दिव्यमूर्तियाँ भी चित्रकारों से बनवाना चाहिये और सफ़ेद प्रासाद भी चाहिये। पर्वत और वन के जल से भरी नदी भी चाहिये। कृत्रिम मार्ग, यन्त्र के पुल, अपरिमित जल से भरी खाइयाँ, तालाब, मरुभूमि, गृह, वरवृक्ष, राजमार्ग, उद्यान, वृक्षों से शोभित मार्ग, हाथी, घोड़े और उनके निवासस्थान भी चाहिये। ६५-७२ वक्र दीवार और इषुधि भी चाहिये। चमकनेवाले सभास्थान, आस्थानमण्डप, मन्त्रशालाएँ और नाटकशालाएँ, दर्शनीय अन्त:पुर, चाँदनी भरे आङ्गण, सूत, मागध, बन्दि, स्तुतिपाठक, चारपुरुष, दूत, गायक, कुशीलव और सेवकों के गृह, नर्तकियों के साथ नर्तकवरों के रहने के लिए गृह चाहिये। राजा को चाहिये कि वह भरे नगर में प्रसन्न होकर वास करे। स्निग्ध जन निकट रहें। सदैव साम, दाम, भेद

निरन्ञ पुरि तन्निल् तॆंळिन्ञु वसिक्कणं
निरन्न जनङ्ङळुमरिके वसिक्कणं । ७७
नित्यवुं सामदान भेद दण्डङ्ङळ्कॊण्टु
शत्रुमित्रोदासीनन्मारॆयुं वशत्ताक्कि ७८
वच्चुकॊण्टुपायङ्ङळ् नालिनुमुळ्ळ भेदं
निश्चयिच्चरिञ्ञुतन् मन्त्रिकळ् चॊल्लुंवण्णं ७९
चॊल्लिय नयङ्ङळारुं पिळयातवण्णं
तुल्यचेतसा पतुक्कॆ प्रवर्त्तिच्चीटणं । ८०
सन्धियुं विग्रहवुं यानवुमासनवु-
मन्तरान्तरा पुनरन्तरविरहितं ८१
प्रवर्त्तिक्केणं द्वैधीभाववुं तिरियेणं
निवर्त्तिक्केणं पुनराश्रयपूर्व्वमॆटो । ८२
नालुपायङ्ङळ्कॊण्टुमारु नीतिकळ् कॊण्टुं
कालदेशावस्थानुरूपमाय् प्रवर्त्तिच्चाल् ८३
शत्रुभूपालन्मारॆज्जयिच्चु भूमण्डलं
हस्तसंस्थितमाक्किशिक्षिच्चु रक्षिक्कणं । ८४
अश्वमेधादियाय यज्ञङ्ङळॆल्लां चॆय्तु
विश्ववुं तन्ऱ् कीर्त्तिकॊण्टुटन् परत्तेणं । ८५
धनधान्यादिकळुं ब्राह्मणर्क्कनुदिनं
मानसे कनिञ्ञु नल्कीटणं विष्णुबुद्धया । ८६

और दण्ड के द्वारा शत्रु, मित्र और उदासीन को अपने वश में रखे। ७३-७८ और चारों उपायों का परस्पर भेद ठीक समझ कर, अपने मन्त्रियों के कथन के अनुसार ऐसा समबुद्धि से व्यवहार करना चाहिये कि उक्त छः नयों का उल्लङ्घन न होवे। सन्धि, विग्रह, पान, आसन, इन चारों का बीच-बीच में सही प्रयोग करना चाहिये, द्वैधीभाव को भी समझना चाहिये और आश्रयसहित कामों से निबटना चाहिये। अगर भूपाल चार उपायों और छः नीतियों के अनुसार, काल, देश और अवस्था के अनुगुण व्यवहार करे तो शत्रु राजाओं को जीतकर भूमण्डल को अपने वश में लाकर दण्ड से रक्षा कर सकेगा। अश्वमेध आदि यज्ञों का अनुष्ठान करके अपनी कीर्ति को सारे विश्व में फैलाना चाहिये। ७९-८५ और ब्राह्मणों को प्रतिदिन उनको भगवान् विष्णु समझकर धन और धान्य प्रेम से दान करना चाहिये। और रात्रि के अन्तिम याम में जागकर भक्ति

रात्रियिल् चरमयामादिक्कु निद्रयुण-
र्न्नास्थया सन्ध्योपस्थानादिकळेल्लां चेय्तु ८७
मृष्टमाय् पुरोहित मित्र सेवकप्रमु-
खेष्टन्मारोटुंकूटिब्भोजनं कळिच्चुटन् ८८
वेगेन भूपालनेक्काण्मान् वन्नवक्कर्ल्लां
वैकाते काण्मान् तक्कवण्णमास्थानं पुक्कु ८९
सभ्यन्मारोटु चेर्न्नु धर्म्माधर्म्मङ्ङळ् चिन्ति-
च्चेप्पोळुं विनीतनायप्रियं पऱयाते ९०
कृत्याकृत्यङ्ङळऱिञ्ञुत्तमचित्तन्मारां
विद्वान्मारोटुं निरूपिच्चोन्नुं पिळयाते ९१
सत्यमाय् प्रियहितमायतिमधुरमाय्
हृद्यमाय् गंभीरमायीटिनवाक्कुकळुं ९२
अल्पशब्दंकोण्टनल्पार्त्थमायेल्लावर्क्कु-
मुळ्प्पूवुविरिञ्ञीटुमारु सन्तुष्टया चोल्लि- ९३
स्सकलजनत्तेयुं तन्कले रञ्जिप्पिच्चु
निखिलभोगमनुभविच्चु सुखिक्कणं । ९४
आश्रितन्मारिल् ञानुमोरुत्तनेन्नु कल्पि-
च्चीश्वरार्प्पणबुद्धया कर्म्मङ्ङळेल्लां चेय्तु ९५
वृद्धनाकुन्न नरन् धर्म्मत्ते रक्षिप्पानाय्
पुत्रनेयभिषेकं चेय्यणं मटियाते । ९६

के साथ संध्योपासना आदि कर्म करके पुरोहित, मित्र, सेवक-प्रमुख और इष्टजनों के साथ मृष्ट भोजन करना चाहिये। तदनन्तर राजा का दर्शन देने हेतु आस्थानमण्डप में प्रवेश करके सभ्यों के साथ धर्म और अधर्म पर विचार करके और सदैव विनीत होकर और कदापि बिना अप्रिय कहे उत्तम चित्तवाले विद्वानों के साथ विचार करके बिना भूल किये कृत्य और अकृत्य को ठीक समझ कर सत्य, प्रिय, हित, अतिमधुर, हृद्य और गंभीर बातें अधिक अर्थवाले स्वल्प शब्दों में सब के हृदय को विकसित करनेवाले ढंग से कहकर सारी जनता को अपने पक्ष में लाकर सभी भोगों का अनुभव करते हुए सुख से रहना चाहिये। ८६-९४ अपने को भी आश्रितों में एक समझकर सभी कर्म्मों को ईश्वरार्पण की बुद्धि से करते हुए वृद्ध राजा को चाहिये कि वह धर्म की रक्षा के हेतु अपने पुत्र का अविलम्ब ही राज्याभिषेक करावे। सभी पदार्थों का त्याग करके

समस्तपदार्त्थवुं त्यजिच्चु मनस्सिङ्कल्
समत्वबुद्ध्या योगं धरिच्चु वसिच्चुटन् । ९७
त्यजिच्चीटणं देहं परमात्मनि चेर्न्नु
भजिच्चीटणं परमानन्दमजातारे ! ९८
ब्रह्मन्तन्नूरुविङ्कल्निन्नुण्टायतु वैश्यन्
कर्म्मङ्ङळ् मिक्कवारुं मून्नुमुण्टवनेंटो । ९९
पशुपालनं कृषि वाणिभमिवयॆल्ला-
मशुभमणयातॆ चॆय्यणमूरुव्यनुं । १००
द्रव्यवुमुण्टाक्कणं मट्टुळ्ळ वर्णिकळ्क्कुं
सर्व्वकर्म्मङ्ङळ्क्कुमूरव्यनॆन्नरिक नी । १०१
ब्रह्मन्तन्नंघ्रिजातनायतु शूद्रनल्लो
कर्म्मवुमवनेतुमिल्लल्लो निरूपिच्चाल् । १०२
दासनाय् द्विजकुलपादसेवयुं चॆय्तु
वासनयाले तेषां वृत्तियुं रक्षिक्कणं । १०३
ब्राह्मणाज्ञया यज्ञपशुहिंसयुं चॆय्ताल्
काम्यमायुळ्ळतॆल्लां साधिक्कामनुग्रहाल् । १०४
राजाविनोटु वृत्तिक्कर्त्थवुं वाङ्ङिप्पिन्नॆ-
याजियिल् मरिक्कयुं कॊल्कयुं चॆय्यामल्लो । १०५
ऊरुजनियोगत्ताल् वाणिभकृष्यादिकळ्
नेरोटॆ चतियातॆ चॆय्तु वृत्तियुं कळि- १०६

अपने मन में समत्वबुद्धि रखते हुए योग करके और देहत्याग करके परमात्मा से एक होकर, हे अजातशत्रु ! परमानन्द को अपनाना चाहिये। वैश्य तो ब्रह्मा के जाँघ से उत्पन्न हुआ और प्रायः उसके तीन कर्तव्य होते हैं। पशुपालन, कृषि और वाणिज्य। इस ऊरुज को चाहिये कि बिना अशुभ का अवलम्बन किये ये तीनों कर्तव्य करे। जान लो कि वैश्य को चाहिये कि वह अन्य वर्णों के लिए और सब कर्मों के लिए द्रव्य पैदा करे। ९५-१०१ ब्रह्मा के पाँव से तो शूद्र पैदा हुआ। सोचो तो उसका कोई विहित कर्तव्य नहीं है। दास बनकर द्विजों की पादसेवा करता हुआ वह स्वभाव से ही उनकी वृत्ति की रक्षा करे। अगर वह ब्राह्मण की आज्ञा से यज्ञपशुहिंसा करे तो उसके अनुग्रह से अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकता है। अपनी जीविका के लिए राजा से अर्थ लेकर उसका कर्तव्य है कि वह युद्ध में मारे और मरे। वैश्य की अनुमति से वह वाणिज्य और कृषि बिना बेईमानी के करके और अपनी वृत्ति का निर्वाह करके किसी

च्चारोट्टुमोरुवैरंकूटाते परिचरि-
च्चारणक्कोरु दुःखं काणुन्पोळतु तीर्प्पान् १०७
प्राणत्यागवु चेय्तु सल्गतिलभिक्केणं
प्राणिस्तोमत्तेप्पालिच्चीटणं विशेषिच्चु । १०८
मन्त्रमुच्चरियाते श्राद्धवुमूट्टीटणं
तन्त्रवु काट्टिटेणमन्तरात्मनि भक्त्या । १०९
अक्षरानभिज्ञत्वमज्ञत्वं मूढत्ववु-
मक्षरव्यक्तिविहीनालापङ्ङळुमेल्लां ११०
शूद्रधर्म्मङ्ङळेन्नु धरिक्क युधिष्ठिर !
शूद्रनु भागिनेयन् पिण्डकर्त्तावायतु
शूद्रनु गतिवरुत्तीटुवानेळुतल्लो । १११
स्त्रीधर्म्मं मिक्कवारुं शूद्रधर्म्मत्तेप्पोले
भेदवु पेरिकेयिल्लरिक युधिष्ठिर ! ११२
श्रेणिधर्म्मङ्ङळ् परञ्ञीटुवान् कालंपोर
वाणीभंगियुमिनिक्किल्लल्लो चोल्लीटुवान् । ११३
धर्म्मपुत्रक्कु राजधर्म्ममार्ज्जिच्चु भीष्मर्
निर्म्मलन् वर्णाश्रमधर्म्मवुमरियिच्चु । ११४
पिन्नेस्संकीर्ण्णधर्म्मङ्ङळेयुमरियिच्चु
पुण्यवान् पिन्ने श्रेणीधर्म्मवुमरियिच्चु । ११५

से भी वैर न करके परिचर्या में लग जाय। अगर वह ब्राह्मणों को दुःख देखता है तो उसे दूर करने के लिए प्राणत्याग तक करके अपनी सद्गति प्राप्त करे। उसको चाहिये कि वह विशेषतः प्राणिसमूह की रक्षा करे। १०२-१०८ मन्त्रोच्चारण के बिना श्राद्ध भी मनावे और भक्ति के साथ तन्त्र (क्रिया) का अनुष्ठान करे। अक्षर न जानना, अज्ञ होना, मूढ रहना, और अक्षरों की स्पष्टता के बिना बोलना, यह हे युधिष्ठर ! जान लो, शूद्र धर्म है। उसका भाञ्जा ही उसका पिण्ड देनेवाला है। इस लिए आसानी से उसकी गति अच्छी होती है। स्त्रियों का धर्म अधिकांश शूद्रधर्म के समान है। अधिक भेद नहीं है, जानलो, हे युधिष्ठिर ! श्रेणियों का धर्म कहने के लिए समय नहीं है। ऊपर से कहने के लिए मेरी वाणी में सौन्दर्य भी नहीं है। भीष्म ने युधिष्ठिर को राजधर्म बतलाया और उस निर्मल पितामह ने वर्णाश्रमधर्म भी सुनाया और तत्पश्चात् श्रेणीधर्म का भी उपदेश किया। १०९-११५ जब कोई शक्तिशाली प्रबल नृपश्रेष्ठ किसी दुर्बल

दुर्ब्बलनाय नृपन्तन्नोटु युद्धत्तिनु
केल्पेरुं प्रबलनायीटिन नृपश्रेष्ठन् ११६
भाविच्चु वरुन्नेरं दुर्ब्बलन्तन्टे धर्म्मं-
मेवमेन्नेल्लामरियिच्चितु देवव्रतन् । ११७
ओरोरोपरमेतिहासङ्ङळ्कोण्टु पुन-
रोरोरो नयङ्ङळ् सन्ध्यादिकळरियिच्चु । ११८
रण्टिल्लंतन्निल् वन्नु जनिच्चु मरिच्चीटुं
कुण्ठभाववुं कुण्टिल् वीळुन्नप्रकारवुं
इण्टल् पोम्मारे दण्डधारिजनोटु चोन्ना । ११९
निङ्ङने भीष्मर्पोक्कल्निन्नु धर्म्मजनृपन्
मंगलराजधर्म्मं केट्टु कूटियवारे १२०
पार्त्थिवन् भीष्मर्सकाशत्तिङ्कल्निन्नु पोयि
रात्रियिल् विदुरपञ्चमन्मारायमेवीटुं १२१
भ्रातावकळोटुं कूटिस्सादरं निरूपिच्चु
सोदरन्मार्क्कु मोक्षधर्म्मं केळ्प्पतिनिप्पोळ् १२२
चिन्तिच्चालधिकारमुण्टो इल्लयो निङ्ङळ्-
क्कन्तरमन्तःकरणत्तिनेतानुमुण्टो ? १२३
बन्धमोक्षङ्ङळुटे कारणं चोदिच्चप्पो-
ळन्धकारङ्ङळकन्नोरु सोदरन्मारुं १२४
उत्तरं परञ्ञतु केट्टप्पोळरियायि
चित्तशुद्धियुं तेषां भक्तियुं विश्वासवुं । १२५

राजा की ओर युद्ध करने के लिए बढ़ता है तो दुर्बल का क्या धर्म है, यह सब देवव्रत ने बता दिया। विविध इतिहास सुनाते हुए सन्धि आदि विविध नीतियों का उपदेश किया। दो परिवारों के बीच वैमनस्य का पैदा होना, फिर नष्ट होना, दोनों का गर्त में गिरना, यह सब युधिष्ठिर से कहा ताकि उनका दुःख नष्ट हो जाय। इस प्रकार युधिष्ठिर ने भीष्म से मंगल-राजधर्म सुन लिया। तदनन्तर राजा भीष्म के पास से चले गये। और रात में विदुर के साथ रहनेवाले अपने चार भाइयों के साथ विचार किया कि अपने भाइयों का अब मोक्षधर्म सुनने का अधिकार है कि नहीं। उनसे पूँछा—क्या अपने अन्तःकरण में कुछ अन्तर है कि नहीं? ११६-१२३ जब बन्ध और मोक्ष का कारण पूँछा तब अन्धकार से युक्त भाइयों ने जो उत्तर दिया उसे सुनकर मालूम हुआ कि उनकी चित्तशुद्धि है, और भक्ति और विश्वास। युधिष्ठिर ने जान लिया

मोक्षधर्म्मङ्ङळ् केळ्प्पानधिकारिकळिवर्
साक्षाल् ज्ञानिकळॆन्नङ्ङरिञ्ञु धर्म्मपुत्रर् १२६
पिट्टेन्नाळॆतिरवे भीष्मर्सन्निधिपुक्कु
मुट्टीटुं भक्त्या मोक्षधर्म्मङ्ङळ् चोद्यंचॆय्तु । १२७
राजधर्म्मङ्ङळ् केळ्क्कुंमुन्पिले मोक्षधर्म्मं
राजाविन्नरिकयिलाशपूण्टिरिक्कुन्नु । १२८
शन्तनुपुत्रनट्टुत्तिरिक्कुन्नितु मृत्यु
चिन्तिच्चाल् पिन्नॆयारुं चॊल्लुवानिल्लयल्लो । १२९
गांगेयनुळ्ळप्पॊळे केट्टुकॊळ्ळणमल्लो
सांगमां मोक्षधर्म्मं पिन्नॆयिल्लारुं चॊल्वान् । १३०
केळ्क्केण्टतॆल्लायिलुं मोक्षधर्म्मङ्ङळ् नून-
मोर्क्कुन्पोळरिञ्ञुकूटात्ततुं मोक्षधर्म्मं । १३१
जह्नुजात्मजनुटॆ पिट्टेन्नाळ् मट्टॊरुवन्-
तन्नोटु चोदिच्चरिवानुपायवुमिल्ल । १३२
स्वर्न्नदीसुतनुळ्ळप्पॊळे केळ्क्किलेयुळ्ळु-
यॆन्निट्टु नटेतन्ने केळ्क्केण्टिट्टिरिक्कुन्नु । १३३
तन्नुटॆ धर्म्ममरियातॆ मट्टॊन्नुं मुन्पे
धन्यन्मारोटु चोदिक्कुन्नतु योग्यमल्ल । १३४
ऎन्नाल् ञान् राजधर्म्मर्मॊक्कवे केट्टाल् नटे
वन्दिच्चु मोक्षधर्म्मं चोदिप्पनॆन्नोर्त्तुळ्ळिल् १३५

कि ये मोक्षधर्म सुनने के अधिकारी हैं क्योंकि ये ज्ञानी हैं। दूसरे दिन सीधे भीष्म के सन्निधि में गये और बड़ी भक्ति के साथ मोक्षधर्म पूछा। राजा को राजधर्म सुनने के पहले ही मोक्षधर्म जानने की इच्छा हो गयी है। मृत्यु तो शन्तनु के पुत्र (भीष्म) के पास बैठी है। सोचो तो और कोई बतानेवाला नहीं है। गांगेय के रहते यह सुन लेना चाहिये; उनके बाद सांग मोक्षधर्म बतानेवाला कोई नहीं है। १२४-१३० अन्य विषयों से सुनने योग्य तो मोक्षधर्म ही है और विचार करने पर जो याद नहीं होता है, वह भी मोक्षधर्म ही है। भीष्म के बाद के दूसरे ही दिन और कोई न मिलेगा जिससे पूँछ कर मालूम कर लें। उनके रहते ही सुन लेना ही ठीक होगा और बहुत ज़रूरी है कि अभी-अभी सुन लें। अपने ही धर्म को बिना जाने धन्य महानुभावों से और बातें पूँछना उचित नहीं है। इस लिए यह सोचकर कि पहले मैं राजधर्म पूँछूगा, तदनन्तर सादर मोक्षधर्म पूछूँगा, पहले राजधर्म संपूर्ण सुनने के बाद युधिष्ठिर ने मोक्षधर्म पूँछा। उस समय भीष्म ने युधिष्ठिर

मुल्पाटु राजधर्म्ममोक्कवे केट्टवारे
पिल्पाटु मोक्षधर्म्मं चोदिच्चु युधिष्ठिरन् । १३६
अन्तेरं भीष्मर् मोक्षधर्म्मङ्ङळ् धर्म्मात्मिजन्-
तन्नोटु चोल्वान् तुटङ्ङन्नतिन्मुन्पे तन्ने १३७
मोक्षधर्म्मङ्ङळेल्लामनुष्ठिक्कुन्नवन्टे
साक्षालुळ्ळोरु परिकर्म्मङ्ङळरियिच्चु । १३८
चोल्लिनान् द्वन्द्वप्रहिणोपायं पिन्नेश्शीघ्रं
चोल्लिनान् पुनरपरिग्रहनिर्व्वेदवुं । १३९
प्रज्ञयुं यथालब्धवृत्तित्वं दैष्टिकत्वं
विज्ञानमेन्निवट्योक्कवेयरियिच्चु । १४०
चोल्लेळुमुपोल्घातंतन्नेयुमरिवानाय्
चोल्लिनान् भृगुभरद्वाजसंवादं कोण्टे । १४१
पिल्पाटु मोक्षधर्म्मं चोल्लुवानारंभिच्चु
शिल्पमाय्च्चोन्नान् जापकोपाख्यानं कोण्टवन् । १४२
वेदाख्यमायिट्टुळ्ळोरक्षरराशियुटे
भेदार्थं नियमवदभ्यासरूपमायु- १४३
ळ्ळानन्दधर्म्मत्तेयुमेप्पेरुमरियिच्चु
सानन्दं युधिष्ठिरन्तन्नोटु देवव्रतन् । १४४
निर्म्मलन् मनुबृहस्पतिसंवादं कोण्टु
कर्म्मणां फलस्वरूपत्तेयुं पुनरपि १४५
करुति ज्ञानस्वरूपं तेळिञ्ञरियिच्चु ।
परमात्मस्वरूपमखिलमरुळ्चेय्तु १४६

को मोक्षधर्म का उपदेश प्रारम्भ करने के पहले मोक्षधर्म का अनुष्ठान करने-वाले की विशेषताओं को बतलाया । १३१-१३८ द्वन्द्वों (सुख-दुःख आदि) को त्यागने के उनके उपाय, तदनन्तर उनका अपरिग्रह और निर्वेद, उनकी प्रज्ञा, जो मिला उससे सन्तोष, विधि पर श्रद्धा, विज्ञान, यह सब बतला दिया । भृगु और भरद्वाज के संवाद द्वारा प्रसिद्ध उपोद्घात को भी समझाया । तत्पश्चात् विख्यात जापकोपाख्यान द्वारा मोक्षधर्म को ढंग से सुनाने लगे । उस समय देवव्रत ने युधिष्ठिर को वेद नामक शब्दराशि के भेदार्थ को अभ्यास के लिए और आनन्दधर्म को भी सादर बतला दिया । उस निर्मल ने मनु और बृहस्पति के संवाद द्वारा कर्मों के फलों के स्वरूप को और फिर सोचकर ज्ञान-स्वरूप को भी स्पष्ट बतला दिया । १३९-१४५ वार्ष्णेयोपाख्यान के द्वारा संपूर्ण परमात्मा का स्वरूप

वार्ष्णेयोपाख्यानत्ताल् मोक्षोपायत्तेच्चोल्लि ।
वार्ष्णेयनाय कृष्णन्तन्तिरुवुळ्ळत्ताले । १४७
ज्ञेयमां शुकानुप्रश्नंकोण्टु पूर्वोक्तङ्ङ-
ळायुळ्ळ मोक्षधर्म्मं विस्तरिच्चरियिच्चु । १४८
गांगेयनोरोतरमितिहासङ्ङ्ङळ्कोण्टु
सांख्यमां योगत्तेयुं संक्षेपिच्चरियिच्चु । १४९
बुद्धिमानाय धर्म्मपुत्ररोटथ भीष्मर्
विस्तरिच्चरियिच्चु सांख्ययोगङ्ङ्ङळेल्लां । १५०
साधनफलस्वरूपप्रकारङ्ङ्ङळोटुं
साधुलोकाढचनोटु गांगेयनरियिच्चु । १५१
वन्दिच्चु सांख्ययोगंतन्निले विशेषवुं
वसिष्ठकराळाख्यजनकसंवादत्ताल् । १५२
पिन्नेयुं याज्ञवल्क्यजनकसंवादत्ताल्
तन्ने बुद्धप्रबुद्धबुद्धचमानन्मारुटे १५३
भेदवुं स्वरूपवुं संक्षेपिच्चरियिच्चु ।
बोधिप्पानतुपिन्ने विस्तरिच्चरियिच्चु । १५४
तदनु देवव्रतन् धर्म्मजनोटु शुक-
पतनं कोण्टु शुकोल्पत्तियुमरियिच्चु । १५५
श्रीवेदव्यासन्पोक्कल्निन्नु श्रीशुकनुळ्ळ
केवलज्ञानप्राप्तिकोण्टुळ्ळ मोक्षप्राप्ति १५६

बतला दिया । वार्ष्णेय कृष्ण के अन्तःकरण द्वारा मोक्षोपाय भी बतलाया । जानने योग्य शुकानुप्रश्न के द्वारा पहले ही कहे मोक्षधर्म को विस्तरतः बतला दिया । गांगेय ने विविध इतिहासों के द्वारा सांख्य और योग को संक्षेप में बतला दिया । भीष्म ने बुद्धिमान् युधिष्ठिर को सांख्य और योग का विस्तृत उपदेश दिया । गांगेय ने साधुजनों के वन्द्य युधिष्ठिर को यह सब साधन, फल और स्वरूप-सहित बतला दिया । वसिष्ठ-करालाख्यजनकसंवाद के द्वारा सांख्य और योग की विशेषतायें बतला दीं । १४६-१५२ याज्ञवल्क्य-जनकसंवाद के द्वारा ही बुद्ध, प्रबुद्ध और बुद्ध्यमान, इन तीनों का भेद और स्वरूप संक्षप में बतला दिया । उसी को यथार्थ बोध के लिए विस्तर से भी बतला दिया । तदनन्तर देवव्रत ने युधिष्ठिर को शुकपतन द्वारा शुकोत्पत्ति बतला दी । श्रीवेदव्यास के द्वारा श्रीशुक की केवलज्ञान की प्राप्ति और उस से मोक्षप्राप्ति भी । यह सब बतलाने के बाद भीष्म ने फिर युधिष्ठर से कहा । विषाद को दूर

ऒन्निवयट्रियिच्चनेरं पिन्नेयुं भीष्मर्
मन्नवनाय धर्म्मनन्दननट्रियिच्चु १५७
कुन्ठत नीक्किप्पिन्ने श्रीमन्नारायणीयं
कॊण्टट्रियिच्चु पञ्चरात्रसिद्धान्तमॆल्लां । १५८
नानासिद्धान्तमॆल्लामेकनिष्ठकळ्तन्ने
तानुमॆङ्किलुं प्राधान्यं वेदत्तिनॆन्नतुं । १५९
उञ्छवृत्युपाख्यानं कॊण्टट्रियिच्चु भीष्मर्
किञ्चिल् संशयं धर्म्मनन्दननुण्टाकाय्वान् । १६०
इङ्ङने चॊल्लिप्पतिनॆट्टु पर्व्वङ्ङळिल् व-
च्चंगियायिरुन्नॊरु शान्तिपर्व्वत्तॆयॆल्लां । १६१
तत्र तत्पूर्व्वभागंकॊण्टु भूपालधर्म्म-
मुत्तरभागंकॊण्टु मोक्षधर्म्मवुमॆल्लां । १६२
केवलं ब्रह्मप्रतिपाद्यमां शान्तिपर्व्वं
केवलज्ञानप्रदमायिरिप्पॊन्नाकयाल् । १६३
वेदान्तप्रकरणमत्यन्तं रहस्यं ञा-
नीदृशं चॊल्लीट्टुकिल् निन्दिक्कुं महाजनं । १६४
चॊल्लरुतुपनिषद्वाक्यार्त्थमॆल्लावनु-
मिल्ल किल्लतिनाल् ञानिङ्ङने चॊन्नेनॆन्नु । १६५
चॊल्लिनाळ् किळिमकळ् मेलेटमिनिक्कथ
चॊल्लुवन् वेणमॆङ्किलॆन्नॆल्लां पऱञ्ञितु । १६६

॥ शान्ति समाप्तं ॥

करके श्रीमन्नारायणीय के द्वारा सभी पञ्चरात्र सिद्धान्तों को भी बतला दिया। यद्यपि भिन्न-भिन्न सिद्धान्त एक ही पर आश्रित हैं तथापि प्राधान्य वेद ही का है, यह भी बतलाया। १५३-१५९ उञ्छवृत्त्युपाख्यान द्वारा भीष्म ने यह बात कही ताकि युधिष्ठिर के मन में कोई सन्देह न रह जाय। इस प्रकार अठारहों पर्वों में अङ्गी शान्तिपर्व को संपूर्ण रूप से सुना दिया। उसके पूर्वभाग के द्वारा राजधर्म और उत्तरभाग के द्वारा मोक्षधर्म बतलाया। केवल ब्रह्म ही शान्तिपर्व का प्रतिपाद्य विषय है, क्योंकि वह केवलज्ञान को देनेवाला है। यह वेदान्त प्रकरण है, और अत्यन्त रहस्य है। अगर मैं इस प्रकार कहता जाऊँगा तो जनता निन्दा करेगी, क्योंकि उपनिषद्वाक्यों का अर्थ सबको कहने योग्य नहीं है, इसमें सन्देह नहीं है। मैंने तो योंही कुछ कह दिया— शुकी ने ऐसा कहा। अगर सुनना है, तो आगे की कथा भी सुनाऊँगी। १६०-१६६

॥ शान्तिपर्व समाप्त ॥

अनुशासनीकं

इत्थं किळिमकळ् चोन्नतु केट्टथ
चित्तं तेळिञ्ञु चोदिच्चितु पिन्नेयुं । १
तत्ते ! वरिकरिकत्तिरि सल्कथ
सत्वरं चोल्लुचोल्लेन्नतु केट्टवळ् । २
उत्तरमायरुळ्चेय्ताळ् कनिविनो-
टुत्तममां कथ केळ्प्पिन् चुरुक्कमाय् । ३
मोक्षधर्म्मं केट्टवारे युधिष्ठिरन्
मोक्षार्त्थियाकिय भीष्मरे वन्दिच्चु ४
मोक्षप्रदन् जगत्साक्षिभूतन् परन्
साक्षाल् मुकुन्दसमक्षमपेक्षिच्चु । ५

दानधर्म्मोपदेशं

दानादिधर्म्मङ्ङळेक्केट्टुकोळ्ळुवा-
नानन्दमोटरुळ् चेय्तितु भीष्मरुं । १
कालादिकळुटे संवादं कोण्टथ
कालात्मजनरियिच्चितु विस्तराल् । २
ऎल्लायिलुं प्रधानं पूर्व्वकर्म्ममे-
न्नॆल्लामरियिच्चनन्तरं पिन्नेयुं ३

अनुशासनिक पर्व

शुकी का इस प्रकार का कहना सुनकर प्रसन्न हुआ और फिर पूछा—हे शुकि ! आओ और निकट में बैठो और तुरन्त ही अच्छी कथा सुनाओ। यह सुनकर उसने प्रेम से उत्तर दिया— उत्तम कथा को संक्षेप में सुन लो । मोक्षधर्म सुनने के बाद युधिष्ठिर ने मोक्षार्थी भीष्म की वन्दना करके मोक्षप्रद, जगत् के साक्षी, पर साक्षात् मुकुन्द के समक्ष प्रार्थना की । १-५

दानधर्म का उपदेश

भीष्म ने "दानादिधर्म को सुन लो", ऐसा सानन्द कहा । काल आदिकों के संवाद द्वारा कालपुत्र (युधिष्ठिर) को सब विस्तर से कह दिया । सब से प्रधान तो पूर्वकर्म है, ऐसा समझाने के बाद देवव्रत ने

मृत्युजयत्तिन्नुपायपरत्वेन
नित्यमतिथिपूजाफलमाहात्म्यं ४
मुख्यसुदर्शनोपाख्यानंकॊण्टुट-
नॊक्कयरिियिच्चनेरं देवव्रतन् ५
साम्यमिल्लात मतंगोपाख्यानत्ताल्
ब्राह्मणमाहात्म्यमॆल्लामरिियिच्चु ६
जन्मंकॊण्टे साधिक्कावूतल् ब्राह्मण्यं
कर्म्मं कॊण्टाक्कुमे साधिक्करुतल्लो । ७
मुन्नं गरुडनॆ विष्णु परीक्षिच्चु
नन्नायनुग्रहिच्चोरु प्रकारवुं ८
चॊल्लि सुपर्ण्णवैकुण्ठसंवादंकॊ-
ण्टॆल्लामजातवैरिक्कु गंगासुतन् ९
नल्लोरुपमन्युपाख्यानं कॊण्टल्लो
चॊल्ली पशुपतिमाहात्म्यमॊक्कवे । १०
शैवमायुळ्ळ सहस्रनामत्तेयुं
दैवज्ञनाय देवव्रतन् चॊल्लिनान् । ११
दिव्यविशिष्ठवरकन्यकादानं
सर्व्वकर्म्मङ्ङळ्क्कु मूलमॆन्नुं चॊल्लि । १२
कन्यकादानभेदप्रकारत्तेयुं
कन्यकादानत्तिनुळ्ळोरु कालवुं १३

मृत्यु को जीतने के उपाय के रूप में नित्य-अतिथि-पूजा के फल का माहात्म्य मुख सुदर्शनोपाख्यान के द्वारा जब संपूर्णरूप से बतला दिया तब गोपाख्यान के द्वारा साम्यरहित मत और ब्राह्मणमाहात्म्य भी बतला दिया। जन्म के द्वारा ही ब्राह्मणत्व सिद्ध होता है केवल कर्म से कभी भी साध्य नहीं है। १-७ पूर्वकाल में भगवान् विष्णु ने जिस प्रकार गरुड़ की परीक्षा लेकर उसका हृदय से अनुग्रह किया, यह सब गंगापुत्र ने सुपर्ण-वैकुण्ठ संवाद के द्वारा अजातशत्रु को बतला दिया। अच्छे उपमन्युपाख्यान के द्वारा पशुपतिमाहात्म्य भी बतला दिया। दैवज्ञ देवव्रत ने शिव के सहस्रनाम भी सुना दिये। उन्होंने यह भी कहा कि दिव्य, विशिष्ट वरकन्यकाओं का दान सभी कर्मों में श्रेष्ठ है। उन्होंने कन्यादान के विविध प्रकार, कन्यादान का उचित समय, दायविभाग के प्रकार, दिक्, देश, और न्याय के भेद, आचारभेद, वर्ण और अन्त में

दायविभागप्रकारवुं दिग्देश-
न्यायभेदङ्ङळुमाचारभेदवुं १४
वर्ण्णसमुदायोल्पत्तिप्रकारवुं
वर्णिणच्चु तत्र गोमाहात्मयवुं चोन्नान् १५
शन्तनुसूनु गोदानप्रकारवुं
हन्त गोदानफलवुमरिञ्यिच्चु । १६
स्वर्ण्णमाहात्म्यमखिलमरिञ्यिच्चु
स्वर्ण्णदानत्तिन् फलप्रकारादियुं । १७
रुद्रसनत्क्कुमारप्रवादंकोण्टु-
मुक्तिधर्म्मङ्ङळ् संक्षेपिच्चरिञ्यिच्चु । १८
तीर्त्थमाहात्म्यवुं गंगामाहात्म्यवुं
तीर्त्तरिञ्यिच्चितु पार्त्थनु भीष्मरुं । १९
पार्व्वतीशर्व्वसंवादेन पिन्नेयुं
पूर्व्वसमुक्तङ्ङळायुळ्ळ धर्म्मङ्ङळ् २०
सर्व्ववुमाशु संक्षेपिच्चरिञ्यिच्चु
दिव्यनारीटिन शन्तनुनन्दनन् २१
वैष्णवधर्म्ममशेषमरिञ्यिच्चु
वैष्णवमाय सहस्रनामत्तेयु- २२
मिङ्ङने धर्म्मात्मजनरिञ्यिच्चितु
गंगातनयनुं दानधर्म्मादिकळ् । २३

गोमाहात्म्य का भी वर्णन किया । ८-१५ शन्तनु के पुत्र (भीष्म) ने ने गोदान के प्रचार और गोदान का फल भी बतला दिया । उन्होंने स्वर्ण का माहात्म्य बतलाकर उसके दान का फल और प्रकार भी बतलाये । रुद्र और सनत्कुमार के संवाद के द्वारा मुक्तिधर्म को संक्षेप में बतला दिया । भीष्म ने पार्त्थ (युधिष्ठिर) को तीर्थमाहात्म्य और गंगामाहात्म्य पूरा बतला दिया । तदनन्तर पार्वती और शिव के संवाद के द्वारा पहले ही कहे गये सभी धर्म्मों को दिव्य शन्तनुपुत्र ने फिर संक्षेप में बतला दिया– सारे वैष्णवधर्मों को भी बतला दिया और विष्णु के सहस्रनाम को भी । इस प्रकार गंगापुत्र ने युधिष्ठिर को दानधर्मों का उपदेश दिया । १६-२३

भीष्मस्वर्गति

अव्यक्तनव्ययन् दिव्यननाकुलन्
सव्यसाचिप्रियनाय नारायणन् १
तन्तिरुमेनियेक्कण्टुकण्टङ्ङनें
सन्ततं चिन्तिच्चु चिन्तिच्चु तद्रूपं २
व्यासधौम्यादि मुनीन्द्रप्रवररुं
भूसुरवृन्दवुं पाण्डवरादियां ३
बन्धुवर्गङ्ङळुं कण्टङ्ङिरिक्कवे
शन्तनुनन्दनन् भागीरथीसुतन् ४
नारायणन् नळिनायतलोचनन्
कारुण्यवारिधि कंसनिषूदनन् ५
साक्षाल् समीपे वसिक्कुन्नतु मुदा
वीक्ष्य सन्तुष्टया स्तुतिच्चु नामामृतं । ६
पानवुंचेय्तु परमानन्दं पूण्टु
भानुकोटिप्रभन् भक्तपरायणन् ७
देवदेवन् वासुदेवन् जगत्पति
देवकीनन्दनन्तन्नेयुं तन्नेयुं ८
एकीभविप्पिच्चु तातवरत्तिना-
लेकस्वरूपं मनसि चिन्तिच्चथ ९
स्वच्छन्दमृत्युवायुळ्ळ देवव्रतन्
स्वच्छमामच्युतांघ्रिद्वयपङ्कजं १०

भीष्म का स्वर्ग जाना

जब व्यास, धौम्य आदि मुनीन्द्रवर, ब्राह्मणवृन्द, पाण्डव आदि और उनके बन्धुवर्ग अव्यक्त, अव्यय, दिव्य, अनाकुल, अर्जुन के प्रिय नारायण भगवान् का दर्शन कर रहे थे तब शन्तनु के पुत्र, भागीरथी के सूनु का साक्षात् नारायण, कमल के समान दीर्घलोचनवाले, कारुण्यसागर, कंस का नाश करनेवाले के निकट ही में रहना देखकर प्रमोद और सन्तुष्टि से उनके नामामृत की स्तुति की। १-६ उस स्तुति का पान करते हुए परम आनन्द प्राप्त कर एक कोटि सूर्य के समान प्रभावाले, भक्तपरायण, वासुदेव, जगत्पति देवकीनन्दन को और अपने को एक बनाकर, पिताजी के वर के कारण एक स्वरूप को अपने मन में ध्यान करते हुए स्वच्छन्द-मृत्यु

निश्चलं सच्चिन्मयममृतं परं
सत्यमनन्तमनाद्यमनाकुलं
सत्वं परब्रह्मसच्चिन्मयं पर- ११
मात्मानमात्मना कण्टुकॊण्टात्मनि
स्वात्मानमाशु योगेन लयिप्पिच्चु १२
कारणत्तिङ्कल् निलीननां भीष्मरे-
धीरनाय् धर्म्मसुतन् वणङ्ङीटिनान् । १३
नारायण ! हरे ! नारायण ! हरे !
नारायणेति जपिच्चितॆल्लावरुं । १४
पिन्नॆ मुहूर्त्तमात्रं पुनरेवरु-
मन्नेरं निश्चलरायिरुन्नीटिनार् । १५
ऎन्नितॆल्लामनुशासनीकं पर्व्वं-
तन्निलुळ्ळोरु कथकळाकुन्नितुं । १६
विस्तरिच्चॊक्कॆ ञान भाषयाय् चॊल्लियाल्
सिद्धमल्लाय्कयॆन्नाकयल्लीयॆन्नु १७
संशयिच्चिङ्ङनॆ चॊल्लियेन् ञानॆन्नु
संशयं कूटातॆ पैङ्किळि चॊल्लिनाळ् । १८

॥ अनुशासनीकं समाप्त ॥

देवव्रत (भीष्म) ने स्वच्छ अच्युत के चरणकमल को, और निश्चल, सच्चिन्मय, अमृत, पर, सत्य, अनन्त, अनादि, अनाकुल, सत्त्व, परब्रह्म, सच्चिन्मय, परमात्मा को स्वयं अपने ही में देखते हुए अपने को उसमें योग से लीन कर दिया। ७-१२ और धीर युधिष्ठिर ने कारण में विलीन भीष्म की वन्दना की। हे नारायण ! हे हरे ! हे नारायण ! हे हरे ! हे नारयण ! ऐसा सभी ने जप किया। तदनन्तर एक मुहूर्तमात्र के लिए सब निश्चल होकर मौन रहे। अनुशासनीक पर्व की ये ही कथाएँ हैं। ये सब अगर मैं भाषा में कहने लगूँ तो क्या मेरी कार्यसिद्धि हो सकती है ? इस प्रकार सन्देह में आकर मैंने किसी तरह कह डाला। अन्त में शुकी ने निस्सन्देह होकर ऐसा कहा। १३-१८

॥ अनुशासनीक पर्व समाप्त ॥

अश्वमेधिकं

आनन्दमानन्दमय्या जगत्पर-
मानन्दमानन्दमूर्त्तिकथामृतं । १
पानं दिनेदिने चेय्युन्नवर्क्कु सो-
पानं दयालयस्यालयप्राप्तये । २
मोहनं मायाविमोहविध्वंसनं
मोहितोऽहं तदाकर्ण्णने सन्ततं ३
मोहनगानशीले ! किळिप्पैतले !
दाहं विहाय कथय कथय नी ! ४
ॲङ्किलो केळ्प्पिन् चुरुक्कि ञान् चॊल्लुवन्
पङ्कजनेत्रन्विलासङ्ङळोरोन्ने । ५
देवव्रतन् मरिच्चोरुनेरं परि-
देवनं चेय्तु युधिष्ठिरनादिकळ् । ६
देवि गान्धारितन्नोटुं तदा नर-
देवन् धृतराष्ट्ररुं करञ्ञीटिनान् । ७
देवनदियाय गंगयिल् निन्नवर्
देवव्रतनुदकक्रिययुं चेय्तार् । ८
धर्म्मसुतादिकळ् मोहिच्चुवीणप्पोळ्
निर्म्मलनाय भगवानरुळ्चेय्तु— ९

अश्वमेधपर्व

भो ! आनन्दमूर्ति के कथामृत से कितना आनन्द जगत् का परमानन्द आता है। प्रतिदिन उसका पान करनेवालों को वह करुणालय के निवासधाम प्राप्त करने का सोपान बन जाता है। वह कथा मोहन भी है और मायाविमोह का नाश करनेवाली भी है। निरन्तर उसको सुनने के लिए मैं मोहित हूँ। हे मोहन गान करनेवाली शुक-बालिके ! प्यास बुझाकर कहती जाओ, कहती जाओ। अच्छा ! तो सुन लीजिये ! मैं संक्षेप में कहूँगी सभी पङ्कजनेत्र (कृष्ण) के विलास। जब देवव्रत की मृत्यु हुई तब युधिष्ठिर आदिकों ने विलाप किया। १-६ उस समय राजा धृतराष्ट्र भी देवी गान्धारी के साथ रो पड़े। देवनदी गंगा में खड़े होकर उन्होंने देवव्रत की उदकक्रियाएँ कीं। जब युधिष्ठिर आदि बेहोश होकर गिरे तब निर्मल भगवान् ने निवेदन किया। हे युधिष्ठिर ! हे चन्द्रवंश के

धर्म्मराजात्मज ! सोमकुलाधिप !
निर्म्मलात्मावे ! नी दुःखिक्ककरुतल्लो । १०
निन्मनोदुःखत्तिनिल्लोरु शान्तिय-
तेन्महामायाबलमेन्नरिञ्ञालुं । ११
अन्महामाययिल् मोहिक्करुतेन्नाय्
निन्नोटनेकदिव्यन्मारुरचेय्तार् । १२
इन्नवयोक्कवे निष्फलमायितो
मन्नवा ! वन्दिक्क नी वेदव्यासनें । १३
ॲन्नतु केट्टु तोळुतितु धर्म्मजन्
मन्नवनोटु मुनियुमरुळ्चेय्तु— १४
मायामयनाय माधवन्तन्नुटे
मायाविलासमिक्काणायतोक्कवे । १५
शन्तनूजन्तन्तिरुवटिकेळ्क्कवे
तन्तिरुमुन्पिल् निन्नल्लयो निन्नोटु १६
कुन्तीतनय पऱञ्ञितिप्पोळतु
चिन्तिच्चुकाण्क नी मूढनायीटोला १७
ज्ञानविज्ञानविहीनमतिकळां
मानवन्मारिलोन्नाय् चमञ्ञीटोला । १८
प्राकृतन्माराय मानुषर् कैक्कोळ्ळु-
माकृतियेन्तु नी पूण्टतु भूपते ! १९
ज्ञानोपदेशं निनक्कु मुनिजनं
मानमकलुवानेत्रतरं चेय्तु । २०

अधिपति ! हे निर्मल आत्मावाले ! तुम्हे तो दुःख न करना चाहिये ! तुम्हारे मन के दुःख की कोई शान्ति नहीं है, जान लो कि वह मेरी महामाया का बल है । अनेक दिव्य पुरुषों ने तुमको उपदेश दिया है कि मेरी महामाया के सम्बन्ध में मोह न करना । क्या यह सब व्यर्थ हो गया है ? हे राजन् ! वेदव्यास की वन्दना करो । ७-१३ यह सुनकर युधिष्ठिर ने वन्दना की और मुनि ने राजा से कहा— "यह जो कुछ दिखाई दे रहा है यह सब मायामय माधव का मायाविलास है । हे कुन्तीपुत्र ! शन्तनुपुत्र के समक्ष ही भगवान् के सामने तुम से कहा गया है । उस पर तुम विचार करो, मूढ न बनो । ज्ञान और विज्ञान से रहित मानवों में एक न बनो । हे राजन् ! प्राकृत जन जो रूप अपनाते हैं उसे तुमने

गांगेयनुं परमार्त्थं पऱञ्ञितु
नीङ्ङील मोहङ्ङळेन्नालुमॊङ्किलो । २१
चॆय्यणमश्वमेधं विरवोट्टुळ्ळिल्
मय्यल् तीर्त्तीटुवान् धर्म्मराजात्मज ! २२
वैवस्वतात्मजन् द्वैपायनपदं
कैवणङ्ङिङ्ङ्पऱञ्ञीटिनानन्नेरं— २३
नेरे पितामहनल्लो भवान् मम
कारुण्यवारिधे ! नाथ ! तपोनिधे ! २४
ऒन्तोन्नरुळ्चॆय्ततु निन्तिरुवटि
सन्ततं ञानतु चॆय्वतिन्नाळत्र । २५
युद्धत्तिलोक्क मरिच्चितु बन्धुक्क-
ळर्त्थवुमिल्लॆन्नरिक मुनीश्वर ! २६
श्रीबादरायणन् चॊन्नानतुनेरं
श्रीवासुदेवभक्तयाढचनल्लो भवान् । २७
विष्णुभक्तन्माक्कुं मुट्टुकयिल्लेतुं
कृष्णन् तिरुवटि साक्षाल् जगन्मयन्
बन्धुवायुण्टल्लो सन्ततमन्तिके । २८

क्यों अपनाया है ? मुनिजन ने तुमको अभिमान दूर करने के लिए कितने बार ज्ञानोपदेश किया है ? भीष्म ने भी तुमको परमार्थ बतलाया है। फिर भी तुम्हारे मोह अब नहीं दूर हुए हैं। १४-२१ हे धर्मपुत्र ! भीतरी सुस्ती दूर करने के लिए अश्वमेध यज्ञ करना चाहिये। तब वैवस्वतपुत्र (यधिष्ठिर) ने द्वैपायन के चरणों की वन्दना करके कहा— "हे कारुण्यसागर ! हे नाथ ! हे तपोनिधे ! आप मेरे साक्षात् पितामह हैं। आप (भगवान्) ने जो आज्ञा दी है उसे मैं करनेवाला हूँ। हे मुनीश्वर ! याद रखिये कि सभी बन्धु युद्ध में मरे हैं और मेरे पास अर्थ नहीं है"। उस समय श्री बादरायण बोले— "आप तो वासुदेव के प्रति अगाध भक्ति रखते हैं। विष्णुभक्तों के लिए किसी भी बात की कमी न होगी। साक्षात् जगन्मय भगवान् कृष्ण सदैव आप के निकट रहनेवाले बन्धु हैं। २२-२८

पाण्डवन्मार् निधियॆटुत्तु कॊण्टुवरुन्न कथ

चिन्तिच्चतॊक्कवे साधिच्चुकॊळ्ळुवान्
ऎन्नालुमॊन्नुण्टु ञानिन्नु चॊल्लुन्नु । १
मुन्नं मरुत्तनाकुन्न नरपति
नीहारक्कुन्निल् वटक्केप्पुऱत्तु प-
ण्टेऱियोरर्त्थं निधिवच्चिरिक्कुन्नु । २
नीयतुकॊण्टुपोन्नश्वमेधं चॆय्क ।
मायाभ्रमङ्ङळुं नीङ्ङुं निनक्कॆन्नाल् । ३
ऎन्नतु केट्टु युधिष्ठिरन् चोदिच्चु—
मन्नवनाय मरुत्तन्कथयॆल्लां ४
ऎन्नोटरुळ्चॆय्कवेणं तपोनिधे !
मन्नवा केळ्क्कॆन्नरुळ्चॆय्तु कृष्णनु— ५
मॆङ्किलो पण्टु मरुत्तनाकुं नृपन्
शङ्काविहीनं पुरोहितकांक्षया ६
चॆन्नपेक्षिच्चतु केट्टु धिषणनु-
मिन्द्रेष्टमॆङ्किलुमिप्पोळरुतॆन्नान् । ७
आचार्यसोदरनाय संवर्त्तनॆ-
याचारवुंचॆय्तु याचिच्चु भूपनुं । ८
उर्व्वीपते ! निनक्किष्टकर्म्मङ्ङळॆ
निर्व्वहिप्पिक्कुन्नतुण्टु ञान् निर्ण्णयं । ९

पाण्डवों की निधि लेकर आने की कथा

"सोचे गये कार्यों की सिद्धि के लिए मैं आज एक बात बतलाता हूँ। पूर्वकाल में राजा मरुत्त ने हिमालय पर्वत के उत्तरभाग में चढ़कर वहाँ धन का निधि रखा है। तुम जाकर उसे ले आओ और अश्वमेध करो। इससे तुम्हारे मायाकृत भ्रम भी दूर हो जायेंगे।" यह सुनकर युधिष्ठिर ने प्रार्थना की— राजा मरुत्त की पूरी कथा, हे तपोनिधे ! मुझको बतला दीजिये। 'हे राजन् ! अच्छा तो सुनलीजिये' ऐसा व्यास ने कहा— पूर्वकाल में राजा मरुत्त निश्शङ्क होकर अपना पुरोहित नियुक्त करने के लिए जाकर बृहस्पति से प्रार्थना की। उन्होंने कहा— इन्द्र को इष्ट होने पर भी मैं नहीं कर सकता हूँ। १-७ तब राजा ने उनके सहोदर संवर्त के पास जाकर उनका यथावत् उपचार करके उनसे प्रार्थना की।

अॆन्नतु केट्टु तॆळिञ्ञु मरुत्तनु-
मन्नु तुटङ्ङियनेकं मखं चॆय्तान् । १०
अर्त्थमतीव शेषिच्चितु पिन्नॆयुं ।
पृथिवीपति निधिवच्चानतॊक्कवे ११
उण्टिरिक्कुन्नु पनिमलमेलतु
कॊण्टुपोन्नालुमङ्ङेतुं मटियातॆ । १२
पृत्थ्वीपतिकळ् निधियॆटुत्तॆन्नयु-
मुत्तममाय धर्म्मं चॆय्तुकॊळ्ळणं । १३
अॆन्नालतु वॆच्चवनु गतिवरु
मन्नवन्माक्कुं गतिवरुं निर्ण्णयं । १४
अॆन्नरुळ्चॆय्तॆळुन्नळ्ळि पराशर-
नन्दननाकिय कृष्णन्मुनीश्वरन् । १५
देवदेवन् वासुदेवन् जगत्पति
देवकीनन्दनन् नन्दजन् माधवन् १६
भक्तनां धर्म्मात्मजनोटु पिन्नॆयु
चित्तं तॆळिवतिनायरुळिच्चॆय्तु— १७
धर्म्मेण राज्यं निनक्काय् चमञ्ञितु
धर्म्मज ! वञ्चनं किञ्चनकूटातॆ । १८
दैवाज्ञया परिपालिक्क नी तॆळि-
ञ्ञुर्व्वीतलमधर्म्मं वन्नणयातॆ । १९

वे बोले— हे राजन् ! जो भी कर्म आप करना चाहें मैं निस्सन्देह उनको करा दूंगा। यह सुनकर राजा मरुत्त प्रसन्न हुए और उस दिन से उन्होंने अनेक यज्ञ किये। उसके बाद भी उनके पास बहुत धन बचा। राजा ने उसको निधि रखा जो अब भी हिमालय पर्वत पर विद्यमान है। बिना विलम्ब के उसे जाकर ले आओ। राजाओं का काम है कि वे निधि लेकर उसे उत्तम कामों में लगावें। इससे निधि रखनेवाले की गति अच्छी होगी। राजाओं की भी अच्छी गति निस्सन्देह होगी। ८-१४ ऐसा कहकर पराशर का पुत्र मुनीश्वर कृष्ण (द्वैपायन) सिधारे। देवदेव, वासुदेव, जगत्पति देवकीपुत्र, नन्दपुत्र, माधव-भक्त युधिष्ठिर से मन की प्रसन्नता के लिए फिर बोले। "अब धर्म से, बिना किसी प्रकार की वञ्चना से, राज्य तुम्हारा हो गया। दैव की आज्ञा से उसका परिपालन करो और किसी भी प्रकार अधर्म न लगे। गऊ, ब्राह्मण आदि प्रजाओं का परिपालन प्रेम से करो, हे राजन् ! जब मैं सोचता हूँ तो गाय और ब्राह्मण

गोब्राह्मणादि प्रजापरिपालनं
तात्पर्यमोटु चेय्येणं धरापते ! २०
ञानायतोक्किल् पशुक्कळुं विप्ररुं
ज्ञानमाकुन्नततिनेयरिकयुं । २१
मल्प्रसादंकोण्टुतन्ने वरुं गति
मल्प्रसादं गोद्विजप्रसादं तन्ने । २२
चिन्मयनाय जगन्मयन् गोविन्दन्
धर्म्मैकसाक्षि मुकुन्दन् तिरुवटि २३
धर्म्मजन् तन्नोटरुळ्चेय्तितोरोन्ने ।
निर्म्मलन् पिन्ने नरनोटुकूटवे २४
वासवप्रस्थत्तिनाम्मारेळुन्नळ्ळि
वासुदेवन्तन्नोटन्नु धनञ्जय- २५
नत्यन्तमिष्टनायोरु वयस्यनाय्
भृत्यनाय् श्रीपादभक्तनाय् दासनाय् २६
सेवकनाय् तव शिष्यनायोरु ञान्
चावतिन्नाय् नरनाय् पिरन्नेन् वृथा । २७
मर्त्यजन्मत्ते लभिच्चाल् वरेण्टतु
तत्वार्थमायुळ्ळोरात्मज्ञानं परं । २८
सिद्धिक्कवेणं परमगुरुविनो-
टेत्ता पलक्कुंमतिनोराचार्यने- २९
येत्तुकिलुमरिवान् पणियुण्टल्लो
चित्तं मुळुत्त करुणपूण्टेत्रयुं ३०

ही ज्ञान का स्रोत है। १५-२१ मेरे प्रसाद से ही तुम्हारी गति हो जायगी और गाय और ब्राह्मण का प्रसाद ही मेरा प्रसाद है।" चिन्मय, जगन्मय, गोविन्द, धर्म का एक मात्र साक्षी, भगवान् मुकुन्द ने युधिष्ठिर से तरह-तरह की बातें कीं। तदनन्तर निर्मल कृष्ण अर्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ को सिधारे। तब धनञ्जय ने कृष्ण से कहा— "मैं ने तुम्हारा अत्यन्त प्रिय वयस्य (मित्र) बनकर, भृत्य बनकर, तुम्हारे चरणों का सेवक बनकर, दास बनकर और तुम्हारा शिष्य बनकर मरने के लिए मनुष्य का जन्म लिया था, पर व्यर्थ में ! मनुष्य का जन्म लेने से परम तत्त्वार्थ आत्मज्ञान होना चाहिये। २२-२८ बहुतों को तो एक परम गुरु ही नहीं मिलता है। अगर मिल भी गया, तब भी ज्ञान-प्राप्ति तो कठिन है। चित्त

भक्तप्रियनाय् विनीतनाय् शान्तनाय्
सत्वरजस्तमोवृत्तिविमुक्तनाय् ३१
तत्वज्ञनायोरु सद्गुरुतन्पदं
नित्यमाराधिच्चु तत्प्रसादत्तिनाल्
सिद्धिक्कवेणमात्मज्ञानमेवनुं । ३२
साक्षाल्सकलजगल्गुरुवायोरु
मोक्षप्रदन् निन्तिरुवटितान्तन्ने- ३३
योर्क्किकलिनिक्कु गुरुवायताकयाल्
नीक्कणमाशु मायामोहमोक्कवे ३४
एन्नुरचेय्तभिवाद्यवुंचेय्तितु
पिन्नेयुं पिन्नेयुं विण्णवर्कोन्मकन् । ३५
कृष्णन्तिरुवटि तन्नुटे भक्तनां
जिष्णुजनोटु चिरिच्चरुळ्चेय्तितु । ३६
ज्ञानं पलविधमुण्टव केळात्म-
ज्ञानत्तिनोटु सममल्ल निर्णयं । ३७
केवलज्ञानमुपदेशिच्चीटुवा-
नेवनुळ्ळू जगत्तिङ्कल् निरूपिच्चाल् ? ३८
ऒङ्ङानुमुण्टोरुत्तन् पुनरेङ्कि-
लतेङ्ङिनॆ चेन्नु कण्टेत्तियरियुन्नु ? ३९
चित्ते विषयविरक्तनायुळ्ळोरु
भक्तन् परमात्मज्ञानार्त्थियामवन् । ४०
स्वस्थनाय् सत्वरं सञ्चरिक्कुंविधौ
मुक्तनायुळ्ळ गुरुविनेयेङ्ङानु- ४१

में परिपक्व करुणा से युक्त, भक्तप्रिय, विनीत, शान्त, सत्त्व, रज और तम की वृत्तियों से रहित तत्त्वज्ञ सद्गुरु के चरणों पर प्रतिदिन सेवा करके उनके प्रसाद से आत्मज्ञान की सिद्धि होनी चाहिये। मेरा तो साक्षात् जगद्गुरु, मोक्षप्रद, आप भगवान् ही गुरु होने के कारण मेरा सारा माया मोह दूर कीजिये", ऐसा कहकर अर्जुन ने बार-बार वन्दना की। २९-३५ तब भगवान् कृष्ण ने भक्त अर्जुन से हँसकर कहा। "ज्ञान अनेक प्रकार के हैं पर वे आत्मज्ञान के तुल्य नहीं हैं। सोचो तो इस जगत् में केवल (शुद्ध) ज्ञान का उपदेश देनेवाला कौन है ? अगर कहीं कोई है तो उनके पास कैसे पहुँचें ? जो अपने चित्त में विषयों से विरक्त है वही भक्त है और

मेत्तुमोरुत्तनोरुनाळोरुदिशि
निश्चयमीश्वरनायतवन्तन्ने । ४२
कोच्चुकळ्क्कुळ्ळिलवनुटे माहात्म्य-
मेतुमऱियरुतेङ्ङळालोन्तेन्तु
बोधमोळ्ळिञ्ञवर्क्कुण्टाकयिल्लल्लो । ४३
विळ्ळुन्न तामरप्पूविन् मधुरसं
वेळ्ळत्तिलुळ्ळ जन्तुक्कळ्क्कऱियामो ? ४४
ज्ञानिक्कोळ्ळिञ्ञऱियावल्ल केवलं
ज्ञानियायुळ्ळवन्तन्नेयोरिक्कलुं । ४५
अङ्ङनेयुळ्ळ गुरुनाथनेक्कण्टु
मंगलवाचा वणङ्ङिच्चिरकालं ४६
शुश्रूषया वसिच्चालोरुकालत्तु
विश्वासभक्तिकळ् कण्टु गुरुनाथन्
पारं प्रसादिच्चुपदेशवुं नल्कुं । ४७

अनुगीत

तीरुं जननमरणवुमन्नेरं
चेरुं परमात्मनि चेन्नु जीवनुं ।
पोरुं परञ्ञतु निन्नोटु ञान् पुरा १

परमात्मज्ञान का इच्छुक भी । स्वस्थ होकर सोत्साह सञ्चार करते समय कोई-कोई कहीं कभी एक मुक्त गुरु को प्राप्त करता है । निश्चय ही वह ईश्वर ही है । ३६-४२ बच्चे तो उनका माहात्म्य कुछ भी नहीं जानते हैं । जिनका बोध नहीं है वे इस बात को कैसे जान सकते हैं । विकसित होनेवाले कमल के मधुरस का स्वाद क्या पानी के अन्दर रहनेवाले जन्तु जान सकते हैं ? ज्ञानी को छोड़कर और कोई ज्ञानी को कभी नहीं पहचान सकता है । इस प्रकार के गुरु को पाकर उनका मंगल शब्दों से प्रणाम करके शुश्रूषा के साथ अगर कोई उनकी सेवा करे तो गुरुजी किसी दिन उसके विश्वास और भक्ति को देख कर प्रसन्न हो जायेंगे और उपदेश देंगे ।" ४३-४७

अनुगीता

"उस समय जन्म और मृत्यु समाप्त हो जायेंगे और जीव जाकर परमात्मा से जुड़ जायेगा । अब और कहने की क्या आवश्यकता है ?

युद्धत्तिनाय् तुटङ्ङुंविधौ मोहसं-
बद्धनायुळ्ळ निन्नोटु चौल्लीलयो ? २
तेरिलिरुन्नु ञान् निन्नोटतौक्कवे
नीरिल् वरच्च वरयाय् चमञ्ञितो ? ३
केळिनियुं परमार्त्थस्वरूपं नी-
याळु ञानुण्टल्लो चौल्लुवानिन्नियुं । ४
वाक्किन् विषयमल्लातौरात्मज्ञान-
मार्क्कुमे केट्टाल् मतियाकयिल्लल्लो । ५
ञानॆन्नुमन्पोटिनिक्कॆन्नुमुळ्ळौरु-
मानं कळक नटेयौन्नु वेण्टतुं । ६
युष्मदस्मल्पदभ्रान्तिकौण्टॆन्नयुं
कश्मलं मानुषर्क्कुळ्ळिलुण्टाकुन्नु । ७
पिन्नॆस्सुखदुःखशीतोष्णमादियां
द्वन्द्वभावङ्ङळकलॆक्कळयणं । ८
भू वारि वह्नि वाताकाशवुं पिन्नॆ
गन्धरसरूपस्पर्शशब्दङ्ङळुं ९
घ्राणजिह्वाचक्षुत्वक्श्रवणङ्ङळुं
वाक्पाणिपादपायूपस्थवुं वच- १०
नादानयानविसर्ग्गानन्दङ्ङळुं
मानसबुद्धयहङ्कारचित्तङ्ङळुं ११

मैं तो तुमको पहले ही, जब युद्ध का प्रारम्भ होने को था, और तुम मोह के वश में आये थे, रथ पर बैठे ही उपदेश दे चुका हूँ। वह सब क्या पानी में खींची लकीर के समान हो गया है ? अच्छा तो फिर परमार्थ का स्वरूप सुनो। मैं तो बतलाने के लिए मौजूद ही हूँ। शब्दों के परे आत्मज्ञान को सुनकर किसी की भी तृप्ति नहीं होती है। पहले इस बात की आवश्यकता है कि 'मैं' और 'मेरा' इस अभिमान को तुरन्त ही छोड़ना। १-६ 'तुम' और 'मैं' इन दो पदों से जो भ्रम पैदा होता है उससे मनुष्यों के भीतर दोष पैदा हो जाता है। तदनन्तर सुख-दुःख, गरम-ठण्डा आदि द्वन्दों से दूर रहना चाहिये। पृथिवी, जल, अग्नि, वायु आकाश, गन्ध, रस, रूप, स्पर्श, शब्द, घ्राण, जिह्वा, चक्षु, त्वक्, श्रोत्र, वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ, वचन, आदान, विसर्ग, आनन्द, मन, बुद्धि, अहङ्कार, चित्त, उनके विषय, प्राण आदि ये सब आत्मा नहीं हैं; जीव भी आत्मा नहीं है। ७-१२ वह तो स्वयं जागता हुआ, सब के ऊपर

तद्विषयङ्ङळ् प्राणादिकळुमल्ल
जीवनुमल्ल केळात्मावाकुन्नतुं । १२
तन्निलेतानुणर्न्नेल्लाट्टिनुं मीतॆ
मिन्नल्पोले सकलत्तिनुं साक्षियाय् १३
ऑन्नुमे तन्नोटु चेर्न्नङ्ङु पट्टातॆ
चेन्नु तानॆल्लाट्टिनोटुमे चेर्न्नुकॊ- १४
ण्टॆल्लाट्टिनुमोक्कं चैतन्यमुण्टाक्कि
नल्ल तेजोमयनाय् निरन्नॊप्पोळुं १५
वॆळ्ळत्तिल् मुङ्ङिक्किटक्कुं कलशत्ति-
नुळ्ळिलुं पिन्नॆप्पुरत्तुं निरन्नॊरु- १६
वॆळ्ळंकणक्कॆज्जगत्तिङ्कलॊक्कवे
व्यापिच्चिरिप्पतात्मावु परब्रह्मं ।
रूपादिहीनमेकं परमव्ययं १७
तत्स्वरूपमरिवान् गुरुवां पर-
मेश्वरनंघ्रिकळ् चूटुकिलामत्रे । १८
पुत्रमित्रार्थकळत्रभृत्यादिकळ्
नित्यमल्लॆन्नयुं व्यर्थमॆन्नोर्त्तुटन् १९
नित्यविरक्तनाय् नित्यमाय् सत्यमाय्
सत्वार्थमाकुमात्मावुमाचार्यनुं २०
तानुमॊन्नाय् तॆळिञ्ञाशु काणाय्वरुं
तानॊऴिञ्ञिल्ल केळेतुमॊन्नुन्नेरं । २१
इत्थं भगवानरुळ्चॆय्ततॊक्कवे
विस्तरिच्चिच्चप्पोळिनिक्करियिक्कामो ? २२

बिजली के समान साक्षी बनकर किसी चीज़ को अपने से मिलने न देते हुए, स्वयं सब से मिलते हुए, सब को चैतन्य बनाते हुए, अत्यन्त तेजोमय होकर फैलते हुए, जल के अन्दर डूबे घड़े के भीतर और बाहर विद्यमान जल के समान सारे जगत् में व्याप्त आत्मा या परब्रह्म है। वह रूप आदि से रहित है, पर और अव्यय है। उसका स्वरूप जानने के लिए गुरु परमेश्वर के चरणों की सेवा अपेक्षित है। पुत्र, मित्र, अर्थ, कलत्र, भृत्य आदि नित्य नहीं हैं, अतएव सब व्यर्थ है। १३-१९ यह समझ कर नित्यविरक्त, नित्य और सत्य बनकर सत्त्वार्थ आत्मा, आचार्य और स्वयं एक होकर प्रसन्न दिखाई देगा। उस समय अपने को छोड़कर और कुछ

केट्टिवण्णं भगवद्वचनं पार्त्थ-
नाढचन्मारोटुं नटन्नु तोंळिवोंटे । २३
हस्तिनमाय पुरिपुक्कु वन्दिच्चु
पृथ्वीपतियाय धर्म्मजन् तत्पदं । २४
पाण्डवन्मारुं भगवानुमाय् चेन्नु
पाण्डुनृपालयं पुक्कोरनन्तरं । २५
पुत्रमित्रादिकळोंक्क मरिक्कया-
लेत्रयुं खेदं कलर्न्न जनत्तेयुं २६
ओंक्कप्परञ्ञुटनाश्वसिप्पिच्चिट-
रोंक्कक्कळञ्ञितु सत्वरं माधवन् । २७
श्राद्धदेवात्मजन्मादिकळोंक्कवे
श्राद्धवुंचेय्तारभिमन्युविन्नायि । २८
प्रीत्या पराशरपुत्रनेयुं तोंळु-
तास्थया पूजिच्चभिवाद्यवुं चेय्तार् २९
पिन्नेप्पराशरनन्दनन् चोंल्लिय
पुण्यनिधियेटुप्पानाय् पुरप्पेट्टार् । ३०
आर्त्तु नालंगप्पटयोटुकूटवे
पार्त्थिवन्मारुं द्विजन्मारुमायोरो- ३१
मामुनिमारुमाय् नेरे वटक्कोट्टु
सामोदमाशु नटन्नु वेगत्तोंटे । ३२

न होगा, जान लो । इस प्रकार भगवान् ने जो कुछ कहा वह सब विस्तार से मैं कैसे सुनाऊँ ? भगवान् की बात सुनकर अर्जुन गुरुजनों के साथ प्रसन्नता से चले । हस्तिनपुर पहुँचकर वहाँ राजा युधिष्ठिर के चरणों की वन्दना की । तननन्तर पाण्डव और कृष्ण पाण्डुनृपालय गये । अनेक पुत्र और मित्रों की मृत्यु होने के कारण दुःखित जनों का दुःख समझा-बुझाकर दूर करके माधव ने सबको आश्वासन दिया । २०-२७ श्राद्ध-देवात्मज (युधिष्ठिर) आदि सभी ने अभिमन्यु के लिए श्राद्ध किया । और बड़ी प्रीति के साथ पराशर के पुत्र (व्यास) की सादर वन्दना और पूजा की । तद्नन्तर पराशरपुत्र के निर्दिष्ट पुण्यनिधि को लाने के लिए जाने की तैयारी की । चतुरंगसेना के साथ, सिंहनाद करते हुए क्षत्रिय और ब्राह्मण, मुनियों के साथ सीधे उत्तर की ओर बड़े प्रमोद के साथ जल्दी-जल्दी चले । अनेक वन और नदियाँ, अनेक देश, विविध राजाओं के

काननजालनदिकळुं देशङ्ङळ्
नानानरेन्द्रन्मार् वाळुन्न राज्यङ्ङळ् ३३
ऎन्निव पिन्निट्टु कैलासमाकिय-
कुन्निनु चॆन्नु महेश्वरपादङ्ङळ् ३४
नन्नाय् वणङ्ङिनार् भक्तियोटेयवर्।
पिन्नॆ महेश्वरपूजयुं चॆय्तवर् ३५
कुन्निन्मकळेयुं मक्कळेयुं कण्टु
वन्दिच्चु नन्दिकेशादि भूतङ्ङळ्क्कुं ३६
तृप्ति वरुमारु पूजिच्चु सेविच्चार्।
नन्नायनुग्रहिच्चू महादेवनुं। ३७
पिन्नॆप्पनिमलतङ्ङलाम्मारङ्ङु
चॆन्नु कण्टीटिनारत्भुतमायेट्- ३८
मुन्नतमाय शिखरङ्ङळुं कण्टु-
निन्न शिवशिवयॆन्नु कैकूप्पिनार्। ३९
घोरतपोबलमुळ्ळ पुरोहित-
रोरोतरत्तिले होमपूजादिकळ् ४०
चारुनिधि कात्तिरिक्कुन्न देवत-
मारयुं पूजिच्चु तृप्तिवरुत्तिनार्। ४१
पिन्नॆक्कुळिच्चु निधि कण्ट नेरत्तु
वन्नॊरु विस्मयं चॊल्लावतल्लेतुं। ४२

राज्य पार करके वे कैलास नामक पर्वत पहुँचे और वहाँ उन्होंने महेश्वर के चरणों २८-३४ की भक्ति के साथ वन्दना की। तदनन्तर महेश्वर की पूजा करके पर्वत की पुत्री को और उनके बच्चों को देखकर उनकी वन्दना की और नन्दिकेश आदि भूतों की पूजा और सेवा की ताकि वे भी तृप्त हो जायँ। महादेवजी ने उन पर खूब अनुग्रह किया। तदनन्तर हिमालय के अच्छे परिचय के लिए उसके अद्‌भुत और अत्यन्त ऊँचे शिखरों को देखा और शिव! शिव! कहते हुए उनको हाथ जोड़े। तदनन्तर घोर तपोबलवाले पुरोहितों ने विविध होम और पूजाओं के द्वारा उस चारुनिधि का पहरा देनेवाले देवताओं की पूजा करके उनकी तृप्ति की। ३५-४१ तत्पश्चात् खोदने के बाद जो निधि दिखाई दिया उसका वर्णन करना बिलकुल असंभव है। स्वर्ण के विविध प्रकार के पात्र, स्वर्ण के ऊँचे-ऊँचे हाथी, घोड़े, गाय, बैल अपरिमित संख्या में मूल और फलों

पौन्नुकौण्टुळ्ळ पात्रङ्ङळ् पलतर-
मुन्नतवारण वाजि पशु वृष-
मेन्निव पौन्नुकौण्टुळ्ळतनवधि ४३
मूलफलङ्ङळ्पोले चमच्चुळ्ळतुं
मालकळादियामाभरणङ्ङळुं ४४
अंगुलीयङ्ङळ् कण्टालुमोरोन्निव-
यंगङ्ङळूटे किळिक्कां नमुक्कॆल्लां । ४५
पण्टुळ्ळ देहङ्ङळॆत्र वलुतिव
कण्टालुं नां कृमिकळ्क्कु सममल्लो । ४६
ऎन्निवयोरोन्नु विस्मयं पूण्टव-
रन्योन्यमालापवुं चॆय्तु कौतुकाल् । ४७
अट्मिल्लातोळमुळ्ळ रत्नङ्ङळुं
मट्मव्वण्णमपूर्व्वमां वस्तुक्कळ् । ४८
ऒक्कयॆटुत्तॊरु पॊन्निन्मलपोलॆ
पॊक्कत्तिलङ्ङु कूट्टीटिनारतुन्नेरं । ४९
पण्टु पण्टुळ्ळ राजाक्कळितॆङ्ङनॆ-
युण्टाक्कियवारितॆन्त्रयुमत्भुतं ! ५०
क्षोणीपतिकळ्समृद्धि पण्टीवण्णं
नाणमाकुन्नु नमुक्किव काणुन्पोळ् । ५१
इत्थं परञ्ञु परञ्ञिवरोरोरो-
हस्तिकळ् वाजिकळॊट्टकक्कूट्टङ्ङु- ५२
ळस्तभारश्रमं पूण्ट कळुतकळ्
नन्नाय् चुमन्नॊरुलक्षत्तिलुं परं । ५३

के समान वस्तुएँ, माला आदि आभूषण, और अंगुलीयक जो देखने में ऐसे लगते थे कि हम उनके अन्दर से निकल सकते हों। पुराने लोगों के शरीर इतने बड़े थे कि उनके सामने हम लोग कीड़ों के समान हैं। इस प्रकार एक-एक पदार्थ को देखकर वे विस्मित होते हुए आपस में वार्तालाप करने लगे। अपरिमित रत्न और अन्य नये-नये पदार्थ थे। ४२-४८ तब उन्होंने उनका स्वर्ण का सा एक पर्वत इकट्ठा किया। पूर्वकाल के राजाओं ने यह सब कैसे संग्रह किया है ? कैसा आश्चर्य है ! पूर्वकाल में राजाओं की ऐसी समृद्धि थी। यह देखकर हम लोगों को लज्जा होती है। इस प्रकार कहते हुए उन्होंने हाथी, घोड़े, ऊँटों के समूह, बड़े बोझ उठानेवाले

पिन्नेयुमोरोरो किङ्करन्मार् चुम-
न्नोण्णायिरंकोटियुण्टल्लो कालाळुं । ५४
तेरुकळुळ्ळवयोक्क निरञ्ञारे
पोराञ्ञु कालाळ् चुमन्नु विशेषिच्चुं ५५
सेनापतिकळुं मन्त्रिवरन्मारुं
मानं वेटिञ्ञु चुमन्नारतुनेरं । ५६
भीमसेनन्तानेटुत्तु नटन्नितु
भूमियुमोन्नु चाञ्चाटियतुनेरं । ५७
ञङ्ङळोटुक्कं वन्नोरुमूलं निङ्ङळ्
तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कु वेण्टुन्न पदार्थङ्ङळ् ५८
तङ्ङळ्तङ्ङळ् चुमन्नीटुविन् निङ्ङळ्क्कु
ञङ्ङळ् कलिपच्चुळ्ळतङ्ङु चेन्नाल् तरां । ५९
ऎन्नङ्ङयच्चु कोटुत्तितु धर्म्मजन् ।
तन्नोटुकूटवे पोयवर्क्कोक्कवे ६०
आनन्दमोटे निधियुमेटुप्पिच्चु ।
मानं कलर्न्न महीपतिवीरन्मार् ६१
आनयुं तेरुं कुतिरयुं कालाळु—
मानकदुन्दुभिशंखादि वाद्यवुं ६२
आनन्दमुळ्ळिल् निरञ्ञु वळिञ्ञेळु-
माननपद्मङ्ङळोटुमतुनेरं ६३

गदहे आदि एक लाख जानवरों पर यह सब लाद दिया। इसके अतिरिक्त अनेक भृत्यों ने भी बोझ उठाया; आठ हज़ार कोटि की सेना तो थी ही। जब सभी उपलब्ध रथ भर गये तब पैदल सैनिकों ने विशेषतः बोझ उठाया। सेनापति, मन्त्रिवर, सभी ने अभिमान छोड़कर भार उठाया। भीमसेन भी भार उठाकर चले और उस समय भूमि काँपने लगी। ४९-५७ युधिष्ठिर ने कहा— "आप जो हम लोगों के साथ आये, इसलिए अपनी-अपनी इष्ट वस्तुओं को स्वयं उठा ले चलिये; वहाँ पहुँचने पर मैं आप ही को दिला दूँगा"। इस प्रकार उन्होंने आज्ञा दी। अपने साथ जो गये थे उनसे सानन्द निधि उठवाया। अभिमान रखनेवाले राजगण और उनके हाथी, रथ, घोड़े और पैदल सैनिक आनक, दुन्दुभि, शंख आदि वाद्य बजाते हुए, भीतर आनन्द का अनुभव करते हुए, अपने मुखकमलों के साथ उस समय दक्षिण की ओर चले। आकाश तो विमानों से अलंकृत हुआ। वासुदेव, देवदेव, जगत्पति, इन्द्र का सेवित, नन्दपुत्र, माधव, ५८-६५

घोषिच्चु तॆक्कुतिरिच्चु नटकॊण्टार् ।
भूषिच्चिताकाशवुं विमानङ्ङळाल् । ६४
वासुदेवन् देवदेवन् जगत्पति
वासवसेवितन् नन्दजन् माधवन् ६५
वासवपुत्रप्रियन् वयस्यन् परन्
वासुकिपूर्व्वजभोगिशयननॆ- ६६
न्मानसतारिलिरुन्नरुळुं कृष्णन्
मानमिल्लात विभूतियुटयवन् ६७
मानवनाय्पिरन्नोरु मायामयन्
मानिनिमार्मनोधैर्यचोराधिप- ६८
नुद्धवर्सात्यकि सारणसांबादि-
भृत्यपुत्रन्मारुमग्रजन्तानुमाय् ६९
मत्तगजरथवाजि पदातिया-
मुत्तमसैन्यसमेतमॆळुन्नळ्ळि ७०
हस्तिनमाय पुरि पुक्करुळिनान्
चित्तमोदेन विदुरादिकळाकु- ७१
मुत्तमन्मारॆतिरेट्टु पूजिच्चितु
भक्तिकण्टेट्टं तॆळिञ्ञु भगवानुं । ७२

परीक्षित्तिन्टॆ जननं

उत्तरयुं पुनरन्नु पॆट्टीटिना-
ळस्त्रशक्त्या बत निर्ज्जीवनायॊरु- १

इन्द्रपुत्र के प्रिय, वयस्य, पर, वासुकि के पूर्वज नागरूपी शय्या पर लेटनेवाले, मेरे मन में विराजमान कृष्ण, निस्सीम विभूति से युक्त, मानव के रूप में पैदा हुए मायामय, मानिनियों का मनोधैर्य चुरानेवालों के अधिपति, उद्धव, सात्यकि, सारण, सांब आदि भृत्यपुत्रों के साथ और अपने बड़े भाई के साथ और मत्त हाथी, रथ, घोड़े और पैदल सैनिकों से युक्त उत्तम सेना के साथ हस्तिनपुर पधारे और वहाँ पुरी के अन्दर जाकर विराजे। विदुर आदि उत्तम व्यक्तियों ने बड़े प्रमोद के साथ उनका स्वागत किया और उनकी भक्ति को देखकर भगवान् भी प्रसन्न हुए। ६६-७२

परीक्षित् का जन्म

उस दिन उत्तरा ने एक पुत्र को जन्म दिया। अस्त्र की शक्ति से

पुत्रनॆक्कण्टु दुःखं कलन्नॆन्नॆयु-
मत्तल्पूण्टॆट्टं करञ्ञु करञ्ञुट- २
नुत्तर वीणुरुण्टीटिनाळन्नेरं ।
भक्तप्रिय ! परमानन्द ! गोविन्द ! ३
पाहि मां पाहि मां देवकीनन्दन !
पाहि मां पाहि मां कृष्ण ! कृपांबुधे ! ४
सन्तानसन्दानसन्तानसन्निभ !
सन्तापनाशन ! सन्तोषकारण ! ५
चिन्तितचिन्तामणे ! जगन्मंगल !
हन्त हाहा शरणं चरणांबुजं । ६
कृष्ण ! शरणं शरणं मुररिपो !
वृष्णिप्रवर ! शरणं मधुरिपो ! ७
विष्णो ! शरणं शरणं हरे ! विभो !
जिष्णुवयस्य ! शरणं जगत्प्रभो ! ८
वारणतापनिवारणकारण !
कारणपूरुष ! नाथ नरकारे ! ९
दारुणवारणमारणकारण !
चारणसेवित ! कारुण्यवारिधे ! १०
नारायण ! शरणं शरणं हरे !
नारदवन्दित ! नारकनाशन ! ११

निर्जीव उस पुत्र को देखकर वह दुःखित हुई और रोती गयी और अन्त में ज़मीन पर गिरकर लोटने लगी । हे भक्तप्रिय ! परमानन्द ! हे देवकीनन्दन ! मेरी रक्षा करो ! मेरी रक्षा करो ! हे कृपासागर कृष्ण ! मेरी रक्षा करो ! हे ! सन्तानरूपी बन्धन की परम्परा के समान ! हे दुःख का नाश करनेवाले, हे सन्तोष करनेवाले ! हे इष्ट की प्राप्ति करनेवाले ! हे जगन्मंगल ! हा हन्त ! तुम्हारा चरणांबुज ही मेरा शरण है ! हे कृष्ण ! तुम ही मेरा शरण हो, हे मुरारि ! तुम ही शरण हो । हे वृष्णिप्रवर ! हे मधुरिपु ! तुम ही शरण हो ! १-७ हे विष्णो ! हे विभो ! तुम ही शरण हो ! हे अर्जुन के मित्र ! हे जगत् के प्रभो ! तुम ही शरण हो ! हे हाथी के दुःख के निवारण का कारण ! हे कारणपुरुष ! हे नाथ ! हे नरकारि ! हे घोर हाथी के मारण का करण ! हे चारणों के सेवित ! कारुण्यसागर ! हे हरे ! हे नारायण ! तुम ही शरण हो, तुम ही शरण ! हे नारदजी के

नारीजनमनोमोहन ! कोमळ !
नारायण ! शरणं कमलापते ! १२
इत्थं परञ्जीटुमुत्तरतन्नुटे
चित्ततापं कण्टु कुन्तियुमन्नेरं १३
भक्तिकलर्न्नु मुकुन्दपादांबुजं
नत्वा कुलं मम रक्षिच्चरुळेन्नाळ् । १४
सत्यपरायण ! सच्चिन्मय ! हरे !
सत्यस्वरूप ! सकलजगत्पते ! १५
भक्तप्रिय ! परमानन्द ! गोविन्द !
मुक्तिप्रद ! मुराराते ! रमापते ! १६
श्रीकृष्ण ! राम ! यदुपते ! गोपते !
श्रीकान्त ! केशव ! माधव ! श्रीनिधे ! १७
शोकजरामरणादिकळिल्लात
योगेश ! योगीश्वरप्रिय ! कंसारे ! १८
दामोदरा ! हरे ! कारुण्यवारिधे !
कोमळविग्रह ! दैत्यकुलान्तक ! १९
पुण्डरीकेक्षण ! पीतांबर ! विभो !
पुण्डरीक ! गदाशंखचक्रायुध ! २०
विश्वंभर ! परमेश्वर ! शाश्वत !
विश्वंभरापते ! विश्वरूप ! प्रभो ! २१

वन्दित ! हे नारक के नाशक ! हे नारीजन के मन का मोह करनेवाले ! हे कोमल ! हे नारायण ! हे कमलापते ! तुम ही शरण हो ! इस प्रकार विलाप करनेवाली उत्तरा का मनस्ताप देखकर कुन्ती ने उस समय भक्ति के साथ मुकुन्द के चरणकमलों को प्रणाम करके कहा—"मेरे कुल की रक्षा करो।" ८-१४ हे सत्यपरायण ! हे सच्चिन्मय, हे हरे ! हे सत्यस्वरूप ! हे सकलजगत्पते ! हे भक्तिप्रिय ! हे परमानन्द ! हे गोविन्द ! हे मुक्तिप्रद ! हे मुरारि ! हे रमापते ! हे श्रीकृष्ण ! हे राम ! हे यदुपते! हे गोपते ! हे श्रीकान्त ! केशव ! माधव ! हे श्रीनिधे ! हे शोक, जरा, मरण आदि से रहित योगेश, हे योगीश्वरों के प्रिय, हे कंस के शत्रु ! हे दामोदर ! हरे ! कारुण्यसागर ! हे कोमल शरीरवाले ! हे दैत्यों की कला का नाशक ! से कमललोचन ! पीतांबर ! हे विभो ! हे पुण्डरीक ! हे गदा, शंख और चक्र धारण करनेवाले ! हे विश्वंभर ! परमेश्वर ! शाश्वत ! हे पृथ्वीपते ! विश्वरूप ! प्रभो ! तुम से रहित कोई वस्तु कभी

नीयौळिञ्ञेतुमोरुनाळुमिल्ल नि-
न्मायाविलासङ्ङळाक्करिञ्ञीटावू । २२
नीयौळिञ्ञारु रक्षिप्पतु ञङ्ङळे
नीयल्लयो कात्तुकोण्टतुमिन्नियुं २३
निन्नेयोळिञ्ञरियुन्नीलोरुनाळुं
पुण्यपुरुष ! पुरुषोत्तम ! विभो ! २४
स्थावरजंगमजातिकळ्क्कोक्कवे
जीवनाकुन्न निनक्कु निरूपिच्चाल् २५
जीवनिल्लाते पिरन्न किटाविनु
जीवनुण्टाक्कुवानेन्तोरु सङ्कटं । २६
सन्तापमोटु तोळुतळुतीटिनाळ्
कुन्तियुमव्वण्णंतन्ने सुभद्रयुं । २७
अन्तिके वीणु कुरुवरस्त्रीजनं
वेन्तळल्पूण्टु करयुन्नतुनेरं । २८

परीक्षित्तिने भगवान् जीविप्पिक्कुन्न चरितं

अच्युतन्तानुमतुकण्टु मानसे
निश्चित्य कार्यं निरूपिच्चु सत्वरं । १
उत्तरयोटु वाङ्ङीटिनान् तन्नुटे
हस्तपद्मं कोण्टु बालशरीरवुं । २

नहीं हुई । तुम्हारी माया के विलासों को कौन जानता है ? १५-२२ तुम्हें छोड़कर हमारी कौन रक्षा करेगा ? तुम्हीं ने तो आज तक रक्षा की है । हे पुण्यपुरुष ! हे पुरुषोत्तम ! हे विभो ! कोई दिन नहीं है जो तुम से रहित हो ! स्थावर और जंगम जातियों का तुम ही जीवन हो । अतएव, अगर विचार किया जाय, तो जो बच्चा निर्जीव पैदा हुआ, उसको जीवन देने में तुम्हें कोई कठिनाई नहीं है । इस प्रकार दुःखित होकर कुन्ती रोती रही और सुभद्रा भी, कुरुवरों की स्त्रियाँ भी निकट ही में गिरकर दुःख से रोने लगीं । २३-२८

भगवान् द्वारा परीक्षित् को जिलाने की कथा

यह सब देखकर अच्युत ने, जो करना है, अपने मन में निश्चय किया और अपने करकमलों में उत्तरा से बच्चे का शरीर ले लिया ।

घोरमायुळ्ळोरु चक्रतेजस्सिनाल्
दूरनीङ्ङी विरिञ्चास्त्रतेजोबलं । ३
बालकन् जीविच्चु मातावुतन् मुल-
प्पालुं कुटिच्चु तेळिञ्ञु विळङ्ङिनान् । ४
पालिच्चितिङ्ङने पाण्डवर् सन्तति
कालस्वरूपनां कृष्णन्तिरुवटि । ५

अश्वमेधयागं

पार्त्थादिकळुं निधियुमाय् वन्नितु
पार्त्थेतिरेट्टितु वासुदेवादिकळ् । १
मित्रपुत्रार्त्थलाभंकोण्टु सन्तुष्ट-
चित्तन्मारायिरुन्नीटिनार् पाण्डवर् । २
अश्वमेधत्तिनारंभिक्कयेन्नतु
विश्वनाथन्तानरुळ्चेय्तितन्नेरं । ३
अग्रजन्मारेयुमच्युतन्तन्नेयु-
मग्रे वणङ्ङि नटन्नितु फल्गुनन् । ४
अश्वं नटत्तुवान् मट्टुळ्ळवर्कळुं
निश्शेषस्तुक्कळ् संभरिच्चीटिनार् । ५
दिक्कुकळोक्कजयिच्चु तिर वाङ्ङि
मुख्यनृपन्मारेयुं जयिच्चङ्ङने ६

उनके घोर चक्र के तेज के बल से ब्रह्मास्त्र के तेज का बल दूर हो गया। बालक जीवित हुआ और माता का दूध पीता हुआ विराजमान रहा। कालस्वरूप भगवान् कृष्ण ने इस प्रकार पाण्डवों की सन्तान का पालन लिया। १-५

अश्वमेधयज्ञ

अर्जुन आदि निधि लेकर आये और वासुदेव आदिकों ने उनका स्वागत किया। मित्रों और पुत्रों के अर्थ के लाभ से पाण्डव सन्तुष्ट हो गये। इस समय विश्वनाथ (कृष्ण) ने स्वयं कहा कि अश्वमेध की तैयारी करो। अर्जुन तो अपने बड़े भाइयों को और अच्युत को प्रणाम करता हुआ आगे बढ़ा। और लोगों ने घोड़े को घुमाने के लिए सारी सामग्री इकट्ठा की। सभी दिशाओं को जीतकर, कर भी लेकर, और मुख्य राजाओं

पार्त्थनुमश्ववुं कॊण्टुवन्नानोरो
पार्त्थिवन्मारुं मुतिर्न्नु वन्नीटिनार् । ७
आन तेर् कालाळ् कुतिरप्पटकळुं
मानं कलर्न्नॊरु वृष्णिप्रवररुं ८
वैश्यरुं शूद्ररुं वन्नीटिनार् नाना-
देश्यन्मारायुळ्ळ विद्वज्जनङ्ङळुं । ९
नल्ल मुहूर्त्तवुमोर्त्तु यथागमं
कल्याणमोटु दीक्षिच्चितु भूपनुं । १०
पण्टनेकं जनं चॆय्त यागङ्ङळुं
कण्टीलिवण्णमॆन्नु विबुधादिकळ् । ११
ऒन्तु चेतं नल्ल बन्धुवाकुन्नतो
चॆन्तामरक्कण्णनां कृष्णनल्लयो । १२
भृत्यप्रवृत्ति चॆय्युन्नितु माधवन्
पृथ्वीपतिकळ् मट्टार्क्किवण्णं वरू । १३
भाग्यवान्मारिल् वच्चग्रेसरनाय्-
तोर्क्किल् युधिष्ठिरनाय नराधिपन् । १४
इत्थं महालोकरॊक्कप्परकयु-
मर्त्थं मतिमतियॆन्नु मोदिक्कयुं १५
पृत्थ्वीशनाशीर्व्वचनङ्ङळ्चॆय्कयुं
चित्तं कुळिर्त्तु पुकळ्त्तियुं सज्जनं । १६

को जीतकर, अर्जुन घोड़े को वापस लाया और भिन्न-भिन्न राजा भी सोत्साह पधारे । १-७ हाथी, रथ, पैदल, सैनिक और घुड़सेना और अभिमान रखनेवाले वृष्णिप्रवर वैश्य, शूद्र और भिन्न-भिन्न देशों के विद्वज्जन भी पधारे । राजा ने भी शास्त्रों के अनुसार शुभ मुहूर्त में मंगलदीक्षा ली । विद्वानों ने कहा कि पूर्वकाल में औरों ने जो अनेक यज्ञ किये थे वे इस स्तर के न थे । उनका क्या बिगड़ता है ? क्या कमलोचन कृष्ण उनका बन्धु नहीं है ? माधव भृत्यों का भी काम करते हैं, अन्य किन राजाओं के लिए यह बात हो सकती है ? भाग्यशालियों में, अगर विचार किया जाय, तो राजा युधिष्ठिर ही सबसे प्रथम निकले । ८-१४ जनता ने इस प्रकार की बातें कीं, और इतना अर्थ दिया गया कि सबने प्रमोद से कहा— "बस ! बस !" और राजा को आशीर्वाद दिया । सज्जनों ने प्रसन्न होकर राजा की प्रशंसा की । दक्षिणा देकर याग समाप्त किया गया । सभी दिशाओं में फैलनेवाले वाद्यों के निनाद और कोलाहल के

दक्षिणयुं चेय्तु यागं समर्प्पिच्चु
दिक्कुकळॊक्कप्पुटपुळङ्ङुंवण्णं १७
वाद्यनिनादकोलाहलत्तोटुकू-
टाद्यनां कृष्णन्तिरुवटितन्नोटुं १८
मन्तवर्मन्ननवभृतस्नानवुं
विण्णोर्नदियिलाम्मारु चय्तीटिनान् । १९
भोजनवुं कळिच्चात्मबन्धुक्कळ्क्कु
पूजयुं चेय्तु पुक्कीटिनारास्थानं । २०
सामन्तसोदरभृत्यपुरोहित
भूमीन्द्रभूदेवतापसन्मारोटुं २१
दिव्यसिंहासनं पुक्कितु भूपति
सव्यसाचिप्रियनव्ययनीश्वरन् । २२
कृष्णन्तिरुवटि वृष्णिकुलाधिपन्
जिष्णुमुखामरवन्द्यन् जनार्द्दनन् २३
इन्दिरावल्लभनिन्दीवरेक्षण-
निन्दुबिंबाननिन्द्रारिनाशनन् २४
अंबुजलोचनन् बिंबफलाधर-
नंबुजनाभननन्तननाकुलन् । २५
तुंबुरुनारदगन्धर्व्वचारणा-
द्यंबरचारिनिषेवितन् माधवन् २६
अंबिकावल्लभसेवितन् केशव-
नंबुजसंभववन्दितन् केवलन् २७

साथ सर्वप्रथम भगवान् कृष्ण को आगे-आगे रखते हुए राजाओं के राजा ने दिव्य नदी में अवभृत स्नान किया। तदनन्तर भोजन के बाद अपने बन्धुओं की पूजा करके सब ने आस्थानमण्डप में प्रवेश किया। सामन्त, सोदर, भृत्य, पुरोहित, ब्राह्मण और तापसों के साथ, १५-२१ राजा दिव्य-सिंहासन पर विराजे। सव्यसाचि (अर्जुन) के प्रिय, अव्यय, ईश्वर, भगवान् कृष्ण, वृष्णिकुल का अधिपति, इन्द्र आदि देवों के वन्द्य, जनार्दन, इन्दिरावल्लभ, इन्दीवरलोचन, इन्दुबिंब के समान मुखवाले, इन्द्र के शत्रुओं के नाशक, कमललोचन, बिंबफल के समान ओष्ठवाले, नाभि में कमल का धारण करनेवाले, अनन्त, अनाकुल, तुंबुरु, नारद, गन्धर्व, चारण आदि आकाश-चारियों के सेवित, केशव, ब्रह्मा के वन्दित, केवल, जगत् की

विश्वसृष्टिस्थितिसंहारकारणन्
विश्वरूपन् परन् विश्वंभरावरन् २८
भक्तप्रियन् वासुदेवन् परमात्मा
भुक्तिमुक्तिप्रदन् शक्तियुक्तन् देवन् २९
आस्थानमण्डपे रत्नसिंहासन-
मास्थया संप्राप्तनायोरुनेरत्तु ३०
नक्षत्रमण्डलमद्ध्ये विळङ्ङुन्न
नक्षत्रनाथनेप्पोले विळङ्ङिनान् । ३१
ऎन्तुळ्ळिलाम्मारिरुन्नरुळुन्नवन्
तन्नेयुं कण्टुकण्टानन्दमुळ्क्कॊण्टु ३२
कण्णुकळेल्लां कुळिर्त्तु कुळिर्त्तव-
रॆण्णमिल्लातोळं सन्तोषचेतसा । ३३
विण्णवर्नायकन् चॆन्नु सुधर्म्मयिल्
विण्णवरोटुमिरुन्नपोले तदा ३४
मन्नवर्मन्नवनाय युधिष्ठिर-
नुन्नतरत्नसिंहासने मेविनान् । ३५

नकुलोपाख्यानं

अप्पोळोरत्भुतं कण्टितेल्लावरुं
विप्रप्रवररॆक्कालुकळुकिच्च नीर् । १

सृष्टि, स्थिति और संहार के कारण, विश्वरूप, पर, विश्वंभरा के वर, २२-२८ भक्तप्रिय, वासुदेव, परमात्मा, भुक्ति और मुक्ति प्रदान करनेवाले, शक्तिशाली, देव, जब आस्थानमण्डप में अपने रत्नसिंहासन सादर पहुँचने पर तब नक्षत्रों के बीच में विराजमान चन्द्र की भाँति विराजते हैं ऐसा लोगों के मन में भानेवाले को देखकर आनन्द से आँखों की तृप्ति हुई। तब निस्सीम सन्तोष के साथ राजाओं के राजा युधिष्ठिर अपने ऊँचे रत्न-सिंहासन पर चमके, जिस प्रकार देवों के नायक देवों के साथ सुधर्म्मा (देवसभा) में विराजते हैं। २९-३५

नकुलोपाख्यान

उस समय सब को एक अद्भुत (दृश्य) दिखाई दिया। जिस पानी से ब्राह्मणों के पैर धोये गये थे उसका एक तालाब सा बन गया था। वह

उण्टोरु वापिपोले किटक्कुन्नतु
कुण्टुमुण्टेट्ं परप्पुमुण्टाकयाल् । २
वन्नोरु कीरियतिल् मुळुकिक्करे-
रुन्नितु पिन्नेयुं पिन्नेयुं पिन्नेयुं । ३
पोन्नुपोलेयोरुभागं निरमति-
नन्त्यभागं निरं मुन्नमेपोलेयुं । ४
भूमिदेवन्मारतुकण्टु चोदिच्चार्—
नी मुतिन्नेङ्ङळोटाशु चोल्लीटणं । ५
निन्नुटल् पातियुमिङ्ङनेयेङ्ङने
पोन्निरमायवारेन्नितु साहसाल् ६
इन्निन्नतिलेन्तिनु नी मुळुकुन्नितु
पिन्नेयुं पिन्नेयुं वीणनेकंतरं ? ७
ऍन्नतु केट्टु परञ्ञितु कीरियु-
मिन्नतु निङ्ङळ्क्कु ञान् परयेणमो ? ८
ञानतु नेरे परयुन्ननेरत्तु
मानसे निङ्ङळ्क्कु खेदमुण्टाय् वरुं । ९
चोल्लेणमेङ्किलो चोल्लुवन् निङ्ङळु-
मेल्लावरुं चेवि तन्नु केट्टीटुविन्— १०
ऍङ्किलो पण्टु सक्तुप्रस्थनां द्विजन्
पङ्कङ्ङळेल्लामकन्न तपोनिधि ११

बहुत गहरा भी था और बहुत चौड़ा भी। अतएव एक नकुल आकर उसमें मज्जन करता और निकल कर फिर मज्जन करता। इस प्रकार बार-बार करता रहा। उसका वर्ण एक भाग में सुवर्ण के समान था, पर दूसरे भाग में उसका वर्ण प्राकृतिक ही था। यह देखकर ब्राह्मणों ने पूँछा— तुम एक बात तो सच्चाई के साथ हम लोगों से बतलाओ— तुम्हारा शरीर आधा स्वर्ण का सा कैसे हुआ ? १-६ और क्या कारण है कि आज तुम इसमें बार-बार मज्जन करते हो ? यह सुनकर नेउले ने कहा, क्या मैं आज इसका उत्तर दूं ? जान लीजिये कि अगर मैं कहूँगा तो आप लोगों को अपने मानस में खेद हो जायगा। अगर मुझे कहना ही है तो मैं कहूँगा। आप लोग मुझे कान देकर सुन लीजिये।— पूर्वकाल में एक सक्तुप्रस्थ ब्राह्मण था जो अत्यन्त निर्मल था और एक तपोनिधि था। वह अपनी पत्नी, अपने पुत्र और अपनी पतोहू के साथ रहता था। वे

पत्नियोटुमौरुं पुत्रनोटुं पुत्र-
पत्नियोटुंकूटे वाळुन्न कालत्तु । १२
नित्यमुतिर्मणियुं पॆरुक्किकक्कॊण्टु
वृत्ति कळिच्चु वसिक्कुमाडाकुन्नु । १३
अन्नॊरु नाळॊरु कोलायिलाम्मारु
चेन्नु पॆरुक्किय नॆन्मणि कॊण्टुपो- १४
न्नॊक्के वरुत्तुमियोटे पॊटिच्चतु-
नळियुण्टुळ्ळतवक्कु नाल्वर्क्कुमाय् । १५
भीषणमाय तपोबलनिष्ठया
स्वाद्ध्याय पैतृदेवादिकळुं कळि-
च्चास्थया चॆन्नु भुजिप्पानिरुन्नितु १६
नालोहरियाय्पकुत्तु विळम्पिय्-
नेरत्तु वन्नानॊरु वळिपोक्कनुं । १७
आलस्यमोटु विशन्नु दाहिच्चवन्
कालत्तु नल्कुविन् तण्णीरिनिक्कॆन्नान् । १८
ऎङ्किलतिथिक्कॆनिक्कु विळम्पिय-
तंघ्रि कळुकुकॆन्नानथ तातनुं । १९
अङ्ङु विळम्पियतल्लिनिक्कुळ्ळतु-
ण्टङ्ङवनॆन्नु पऱञ्ञितु मातावुं । २०
अङ्ङनॆयल्लतु धर्म्मवुमल्लल्लो
निङ्ङळॆ ञान् भरिक्केणमॆन्नुण्टल्लो । २१

प्रति-दिन खेत में गिरे धान्य के दानों को बीन-बीन कर अपनी वृत्ति करते थे । ७-१३ उस समय एक दिन किसी बरान्दे में बिने गये धान के दाने घर ले जाकर जब तुष के साथ ही भुनाकर पीसा तो चारों को मिलाकर पाव भर निकला । जब भीषण तपोबल की निष्ठा के साथ अपना स्वाध्याय और पितरों और देवों की पूजा समाप्त करके बड़ी आस्था के साथ भोजन करने बैठे और जो कुछ था वह चार हिस्सों में परोसा गया तब एक पथिक आ पहुँचा । वह बहुत थका था, भूँखा और प्यासा । वह बोला 'जल्दी ज़रा पानी पिलाओ' । तब पिता ने कहा— "जो मेरे लिए परोसा गया वह अतिथि खायेंगे । पैर धो लीजिये" । "आप के लिए परोसा हुआ नहीं", माता ने कहा, "जो मेरे लिए परोसा गया है, वही अतिथि का है" । १४-२० "यह नहीं हो सकता है । ऊपर से यह धर्म भी नहीं

भर्त्तृशुश्रूषणं धर्म्ममिनिक्कोन्नु
पत्नियुमेट्टमुरच्चु चोल्लीटिनाळ् । २२
पुत्रनतुकेट्टवरोटु चोल्लीटिनान्—
वृद्धतपूण्ट पितावुं जननियुं २३
क्षुत्तिनु पात्रमल्लेन्नुटेयोहरि
पृत्थ्वीसुरनु नल्कीटुक वैकातें । २४
पुत्रनुटे पत्नि चोल्लिनाळन्नेरं
भर्त्तावुपजीवियातेयिरिक्कवे २५
ञानुपजीविक्कयेन्नुळ्ळतिल्लल्लो
दानं चेय्कोन्नुटे भागमतिथिक्कु । २६
तम्मिलीवण्णमन्योन्यं परञ्ञोरु-
धर्म्माधर्म्मङ्ङळुं युक्तिवादङ्ङळुं २७
विस्तरिच्चिप्पोळेनिक्कु चोल्वान् पणि
चित्तमलिञ्ञु कालुं कळुकिच्चुटन् २८
तातन् तनिक्कुळ्ळ भागं विळम्पिना-
नेतुमे वन्नीलतिथिक्कलंभावं । २९
अन्नेरमाशु जननियुं संभ्रमाल्
तन्नुटे भागवुं कूटे नल्कीटिनाळ् । ३०
ऒन्निट्टुं वन्निल्लतिथिक्कलंभावं
ऒन्नवारे मकनुं कोटुत्तीटिनान् ३१

होगा। तुम लोगों का पालना तो मेरा कर्तव्य है", (पिता ने फिर कहा)। तब पत्नी ने निश्चितरूप से कहा 'पति की शुश्रूषा ही मेरा धर्म है।" यह सब सुनकर पुत्र ने कहा— मेरे वृद्धि पिता और माता भूँख के पात्र बिलकुल नहीं हैं। इसलिए मेरा हिस्सा जल्दी ब्राह्मण को दिया जाय। तब पुत्र की पत्नी ने कहा— जब मेरे पति नहीं खा रहे हैं तब मैं खाऊँ, यह तो बिलकुल असंभव है। इसलिए मेरे हिस्से को जल्दी अतिथि को दे दीजिये। २१-२६ इस प्रकार जो उन्होंने आपस में धर्म और अधर्म की बातें कीं और युक्तिवाद बतलाये उनका विस्तर से वर्णन करना कठिन है। पिता ने दयार्द्र होकर अतिथि के पाँव धुलवाकर उनको अपना हिस्सा परोस दिया। पर अतिथि को तृप्ति बिलकुल ही न हुई। उस समय माता ने घबड़ा कर अपना हिस्सा भी परोस दिया। तब भी अतिथि को तृप्ति न हुई। उस पर पुत्र ने अपना हिस्सा भी दे दिया और पुत्र की पत्नी ने भी उस समय प्रसन्न होकर अपना भाग भी दे दिया। तृप्त

नन्दनन्टन्नुटॆ पत्नियुमन्नेरं
तन्नुटॆ भागं तॊळिञ्ञु नल्कीटिनाळ् । ३२
तृप्तनायाचमनादिकळुं कऴि-
च्चुत्तमनां वऴिपोक्कनिरुन्नितु । ३३
योग्यनायुळ्ळोरतिथिपूजयिक्कन्नु
भाग्यमत्रे योगं वन्नतोर्क्कुं विधौ । ३४
जन्मसाफल्यवुमिन्नु वन्नू महा-
कर्म्मसाफल्यवुं वन्नितु निर्ण्णयं । ३५
तृप्तरायार् पितृदेवादिकळ् नमु-
क्कॆत्तुमिनिप्परलोकैकसौख्यवुं । ३६
ऎन्नवरॊत्तु परञ्ञिरिक्कुंविधौ
वन्नु ताणू भुवि स्वर्ण्णविमानवुं । ३७
श्रीवत्सकौस्तुभपीतांबरमणि-
हारकिरीट कटक कटिसूत्र- ३८
नूपुर रत्न मकराढ्यकुण्डल-
चारुचतुर्भुज शंखचक्रादिया- ३९
मायुधंपूण्टॊरु विष्णुदूतन्मारुं
माधुर्यगांभीर्यवाचा परञ्ञितु
सादरं वन्नु विमानमेऱीटुविन् । ४०
नालु तृक्कैकळालन्पोटॊरिक्कले
नालुवरेयुमेटुत्ताशु करेऱिनार् । ४१

होकर पथिक अतिथि मुँह-हाथ धोकर और आचमन करके आराम से बैठे । २७-३३ "यह हम लोगों का बड़ा सौभाग्य है कि आज हमको एक योग्य अतिथि की पूजा करने का अवसर प्राप्त हुआ । आज हमारा जीवन निस्सन्देह सफल हुआ और निस्सन्देह हमारे कर्म की भी बड़ी सफलता हुई है । और हमारे पितृगण और देवगण तृप्त हुए । अब हमको परलोक का सुख अवश्य प्राप्त होगा ।" इस प्रकार आपस में कहते हुए जब वे सुखी थे तब आकाश से एक सुवर्ण विमान पृथ्वी पर उतरा । श्रीवत्स, कौस्तुभ, पीतांबर, मणि, हार, किरीट, कटक, कटिसूत्र, नूपुर, रत्न, मकर-युक्त कुण्डल, चारु चतुर्भुज, शंख, चक्र आदि आयुध-सहित विष्णु के दूत माधुर्य और गांभीर्य-युक्त स्वर से सादर बोले— "आइये और विमान पर चढ़िये" । ३४-४० उन्होंने चार शुभ हाथों से चारों को एक साथ उठाकर

नारायणस्वामितानरुळिच्चेय्तु
पोरुविन् वैकुण्ठलोकत्तु वैकाते ४२
निङ्ङळ्क्कोरुनाळुमिल्लोरधोगति।
ञङ्ङळिलोन्नाय् जगत्स्वामि तन्नेयुं ४३
नन्नाय् परिचरिच्चानन्दमुळ्क्कोण्टु
नन्दोपनन्दादिकळालुं मान्यराय् ४४
वाळ्कॅन्नु देवदूतन्मारुळ्चेय्तु
पोकॅन्नु मेल्प्पोट्टु कोण्टुपोयीटिनार्। ४५
अप्पोळतिथियेक्काल्कळुकिच्च नी-
रल्पमत्रे बलाल् ञानविटेच्चेन्नेन्। ४६
अप्पुरमोक्क ननञ्ञोरनन्तर-
मप्पोळे पोन्निरमाय्वन्नितप्पुरं। ४७
अट्मिल्लातोळं भूसुरेन्द्रन्मारे-
क्कुट्मोळिञ्ञुटन् काल्कळुकिच्चनीर् ४८
अब्धिपोले किटक्कुन्नतुकण्टु म-
ट्टेप्पुरं पोन्निरमाय् वरुमेन्नोर्त्तु ४९
वन्नितिल् चाटि मुळुकिनेनावोळ-
मेन्निट्टुमेतुमोरुफलं वन्नील। ५०
नन्नु सक्तुप्रस्थनाल् कृतमायोरु-
पुण्यफलमिनि सट्रोन्निनुण्टाका। ५१

विमान पर बैठाया। भगवान् नारायण की आज्ञा है— "वैकुण्ठलोक बिना विलम्ब के आइये। आप लोगों को कभी अधोगति न होगी। हम लोगों से एक होकर जगत्स्वामी की सेवा करते हुए और आनन्द अनुभव करते हुए नन्द और उपमन्द के भी मान्य बनकर विराजिये।" ऐसा कहते हुए देवदूत उनको लेकर ऊपर चढ़े। उस समय जिस पानी से अतिथि के पाँव धोये गये थे वह स्वल्प ही था, पर मैं तो किसी तरह वहाँ पहुँच गया। ४१-४६ मेरे शरीर का जो भाग गीला हुआ वह तत्क्षण ही स्वर्णरंग का हो गया। (यहाँ) जिस पानी से असंख्य ब्राह्मणों के पाँव धोये गये वह समुद्र के समान है। उसे देखकर शरीर के दूसरे भाग को भी स्वर्णरंग का बनाने-हेतु उसमें मैंने यथेष्ट गोता मारा, पर उसका कोई फल न निकला। सच यह है कि सक्तुप्रस्थ के किये पुण्य का जो फल हुआ वह और किसी का नहीं होगा"। ऐसा कहकर नेउला चला गया। "बहुत अच्छा",

ऍन्तु परञ्ञु मऱञ्ञितु कीरियुं
नन्नुनन्नॆन्नु तॆळिञ्ञितॆल्लावरुं । ५२
धर्म्मजन् तानुमधिकं विनीतनाय्
निर्म्मलमानसनत्यन्तशान्तनाय् ५३
कल्मषनाशनन् चिन्मयनीश्वरन्
कर्म्मणामाधारभूतन् जगन्मयन् ५४
धर्म्मस्थितिकरन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
तन्महामायाविलासङ्ङळ् चिन्तिच्चु ५५
तत्स्वरूपं मनतारिलुऱप्पिच्चु
सत्सेव्यनाय युधिष्ठिरभूपति ५६
धर्म्मॆण राज्यपरिपालनं चॆय्तु
धर्म्मदारङ्ङळोटुं कलत्रादिराल् ५७
सोदरामात्यपुरोहितसामन्त-
भूदेवपौरजनङ्ङळोटुं मुदा ५८
हस्तिनमाय पुरियिङ्कलाम्मारु
नित्यसुखत्तोटिरुन्नितक्कालमे । ५९

॥ अश्वमेधिकं समाप्तं ॥

"बहुत अच्छा" कहते हुए सब प्रसन्न हुए। ४७-५२ निर्मलमानस, अत्यन्त विनीत और शान्त युधिष्ठिर ने, पापनाशन, चिन्मय, ईश्वर, कर्मों का आधार, जगन्मय, धर्म की स्थिति करनेवाले, निर्मल, निर्मम की माया के विलासों का ध्यान करके उसके स्वरूप को अपने मन में स्थिर करके सज्जनों के सेव्य होकर धर्म से राज्य परिपालन किया और अपनी धर्मपत्नी के साथ और भाई, आमात्य, पुरोहित, सामन्त, ब्राह्मण और नागरिकों के साथ प्रमोद के साथ हस्तिनपुर में नित्य सुख से रहे। ५३-५९

॥ अश्वमेधिक पर्व समाप्त ॥

आश्रमवासं

कथय मम कथय मम कनिविनोटु शारिके !
कारुण्यमूर्त्तिकथामृतमोमले ! १
मधुरतररसकदळि मधुसितगुळादियुं
मानसानन्दं वरुमारु सेविच्चु २
मधुमथनचरितमळकोटुरचेय्क नी
मायाविलासङ्ङळ् केट्टाल् मतिवरा । ३
तदनु किळिमकळुमतुपोळुतु कुतुकाशया
ताल्परियत्तोटु चोल्लित्तुटङ्ङिनाळ् । ४
नृपतिकुलतिलकनिति सुमति जनमेजयन्
निर्म्मलनाय वैशम्पायननोटु ५
कथकळिव पलवुमतिकुतुकमोटु केळ्क्कयाल्
कौतुकमोटु चोदिच्चितु पिन्नेयुं । ६
शमनसुतपवनसुतहरिहयसुतादिकळ्
तातनोटेङ्ङने वर्त्तिच्चितु शेषं ? ७
मुनिवरनुमतुपोळुतु चोल्लिनानुत्तरं
मोदेन केट्टुकोळ्केङ्किल् नराधिप ! ८
तदनु पितृपतितनयनादिकळोक्कवे
तातनोटोत्तवण्णमिरुन्नीटिनार् । ९
अमितबलमुटय कुरुनृपतिधृतराष्ट्ररु-
मात्मजन्मारोटभेदमाय् मेविनान् । १०

आश्रमवास पर्व

हे शुकि ! सुनाओ ! प्रेम से सुनाओ ! कारुण्यमूर्ति का कथामृत, हे प्यारी ! मीठे-मीठे केले, शहद और गुड़ खाओ; ताकि आनन्द हो जाय। तदनन्तर मधु के नाशक की कथा ढंग से सुनाओ क्योंकि उनके माया-विलासों को सुनकर तृप्ति न होती। तब शुकी कौतुक की आशा से प्रेमपूर्वक कथा सुनाने लगी। नृपतिकुलों के तिलक, सुमति जनमेजय ने, इतनी कथाओं को कुतूहल के साथ सुनने के कारण, वैशम्पायन से फिर सकौतुक पूँछा। १-६ युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन आदिकों ने अपने ताऊजी के प्रति क्या व्यवहार किया ? तब मुनिवर ने उत्तर दिया— अगर सुनना है तो प्रमोद से सुन लीजिये। तदनन्तर युधिष्ठिर आदिकों ने ताऊजी

निजतनयनाय सुयोधनन्तन्नोटुं
नीतियिल् मुन्नमिरुन्नवण्णंतन्ने ११
निजसहजतनयनोटिरुन्नितु भूपनुं
निर्म्मलन्मार् पितृशुश्रूषयुं चेय्तार् । १२
अधिकतरसुखमोटु कळिञ्ञितु वत्सर-
मङ्ङनेतन्ने पतिनञ्चोरुपोले । १३

धृतराष्ट्रविरक्तियुं आश्रमयात्रयुं

तदनुपुनरोरुदिवसमनिलसुतनेत्रयुं
तापमाम्मारु परुषङ्ङळ् चोल्लिनान् । १
पवनसुतकटुवचननिशमनदशान्तरे
पार्त्थिवेन्द्रनु वैराग्यमुण्टाय्वन्नु । २
तुहिनकरकुलमतिलोरवनिपतियायहं
शोभयोटे पिरन्नोरिनिक्किन्निप्पोळ् । ३
विधिविहितमिह शिरसि लिखितमतिविस्मयं
वित्तं पितृक्रियय्क्किकल्लेन्नतुं वन्नु । ४
मरयवरिलोरुवनटिमलर् कळुकियूट्टुवान्
मानिच्चोरुपणं दक्षिणय्क्किकल्लपोल् । ५

से उचित व्यवहार किया। अमितबलवाले कुरुनृपति धृतराष्ट्र ने भी उनसे पुत्रों का सा व्यवहार किया। जिस प्रकार पहले अपने पुत्र सुयोधन के साथ नीति का बर्ताव किया था, राजा ने अपने सहोदर के पुत्र के साथ वैसा ही किया। उन निर्मलों ने पिता (ताऊ) की शुश्रूषा भी की। पूरा साल बड़े सुख से कटा और उसी प्रकार पन्द्रह बरस और बीते। ७-१३

धृतराष्ट्र का वैराग्य और आश्रमयात्रा

तदनन्तर एक दिन भीमसेन ने दुःख देनेवाली खरी बातें सुनाईं। भीमसेन का कटु वचन सुनने के अवसर पर पार्थिवेन्द्र का वैराग्य हुआ। "चन्द्रवंश के एक राजा के रूप में मेरा जन्म शोभा के साथ हुआ था। यह अत्यन्त विस्मयावह बात भी विधिविहित और सिर पर लिखी हुई प्रतीत होती है कि मेरे पास पितरों की क्रिया कराने के लिए भी धन नहीं है। ब्राह्मणों में किसी के पाँव धुलाकर भोजन खिलाने के लिए और दक्षिणा देने के लिए धन नहीं है। अन्धे राजा उस समय विरक्त होकर

विगतनयननुमतिविरक्तनायप्पोंळे
वेगाल् वनत्तिनु पोवान्पुऱप्पेट्टु । ६
शमनसुतनतुपोंळुतु जनकनोंटुकूटवे
तापेन काननत्तिन्नु पुऱप्पेट्टु । ७
उपरिचरवसुनृपतिदुहितृसुतनन्नेर-
मोटियविटेक्कुटनोंळुन्नळ्ळिनान् । ८
कुरुनृपतितनयनोंटुमटियिण वणङ्ङिनान्
कोंण्टाटि मामुनितानुमरुळ्चेंय्तु । ९
निखिलनृपकुलतिलक ! नीतिज्ञ ! धर्म्मज !
निर्म्मलबुद्धे ! युधिष्ठिर ! केळ्क्क नी । १०
क्षितिपतिकळथ चरमवयसि तनयोदये
कीर्त्तिकलर्न्नु वनत्तिल् वसिक्कणं । ११
अतिनु नरपतियुमितुपोंळुतु करुतीटिना-
नन्यायमिप्पोळ् निनक्कु वनवासं । १२
अतिनुमोंरु समयमिनिवरुमतन्नामोंटो
अच्छनेंप्पोवानयक्केणमिक्कालं । १३
मुनिवरनुमिव पलवुमळ्कोंटरुळ्चेंय्कयाल्
मोदेन तातनेंप्पोवतिन्नेंकिनान् । १४
प्रणयतरहृदयमोंटु तनयनु पितावुटन्
प्रीत्या नयसारवुमुपदेशिच्चु । १५

तुरन्त वन जाने की तैयारी करने लगे। युधिष्ठिर भी तब ताऊजी के साथ बन जाने के लिए तैयार हो गये। १-७ राजा उपरिचर वसु की पुत्री के पुत्र (नारद) उस समय दौड़कर वहाँ पधारे। कुरुनृपति ने पुत्र (युधिष्ठिर) के साथ चरणों की वन्दना की और महामुनि ने सादर निवेदन किया। हे समस्त नृपकुलों के तिलक ! हे नीतिज्ञ ! धर्मपुत्र ! हे निर्मलबुद्धे ! युधिष्ठिर ! सुनो ! राजाओं को चाहिये कि वे वार्द्धक्य में पुत्रों के बड़े होने पर कीर्ति के साथ वन में निवास करें। (वृद्ध) राजा तो अब यही सोच रहे हैं। पर तुम्हारे लिए इस समय वनवास उचित नहीं है। उसका भी एक दिन समय आवेगा। उस समय अवश्य चलो। इस समय तो केवल पिताजी को जाने दो। मुनिवर के इस प्रकार बहुत कहने के कारण युधिष्ठिर ने पिता को हर्ष से जाने दिया। ८-१४ तब पिता ने प्रेमपूर्ण हृदय से पुत्र को सानन्द नयसार का उपदेश दिया। युधिष्ठिर के पिता की प्रीति और पूजा के लिए

धनवुमनवधि जनकमनसि हितमांवण्णं
धर्म्मजन्मा पितृपूजय्क्कु नल्किनान् । १६
कनकमणिवसनबहुविधविभवजालवुं
कालात्मजनसंख्यं कोंटुत्तीटिनान् । १७
विमलसमुदयसमयमोटु पुरप्पेट्टुटन्
विप्रोत्तमन्मार्क्कु दानङ्ङळुं चेय्तु । १८
विशदमति विदुररोटु गान्धारि कुन्तियुं
वीरुळ्ळ सञ्जयन्तानुं पुरप्पेट्टु । १९
विपिनभुवि विरविनोटु चेन्निरुन्नेवरुं
विस्मयमाय तपस्सु तुटङ्ङिनार् । २०
फलजलदलानिलाहारभेदेन पोय्
तत्र कळिञ्ञु पलव संवत्सरं । २१
अथ शमनसुतपवनतनयविजयादिक-
ळच्छनेक्काण्मानटवि पुक्कीटिनार् । २२
मुनिवररुमवनिसुरवररुमेळुन्नळ्ळिनार्
मुख्यनां व्यासनुमप्पोळळुन्नळ्ळि । २३
पितृचरणनळिनयुगळं प्रणेमुस्सदा
पिन्नेप्पराशरनन्दनन्पादवुं । २४
तोळुतुतोळुतधिकपरितापमोरोन्नोरो-
न्नोतिप्परिदेवनं चेय्तनन्तरं २५
विधितनयसुततनयनन्दनन्तन्नुटे
व्यक्तमायुळ्ळोरु योगबलत्तिनाल् २६

निस्सीम धन का दान भी किया। काल के पुत्र (युधिष्ठिर) ने असंख्य स्वर्ण, मणि, वस्त्र, और बहुविध विभय दिये। शुद्ध सूर्योदय के समय उठकर ब्राह्मणवरों को दान दिये गये। निर्मल बुद्धिवाले विदुर के साथ गान्धारी, कुन्ती और मान्य सञ्जय भी चले। वन जाकर सबने यथानियम अद्भुत तप प्रारम्भ किया। फल, जल, पत्र, वायु, आहार में इतने ही भेद के साथ अनेक संवत्सर बीते। १५-२१ तब युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन आदि पिता को देखने के लिए वन गये। मुनिवर और विप्रवर वहाँ सिधारे और मुख्य व्यासमुनि भी वहाँ पहुँचे। सबने पिता के चरणयुगल की वन्दना की, तदनन्तर पराशरपुत्र (व्यास) के चरणों की भी। बार-बार वन्दना करने के बाद उन्होंने तरह-तरह की बातें की

कुरुसमरशिरसि मृतराय जनङ्ङळे-
क्कूट्टमे काट्टिक्कोंटुत्तितु वैकातें । २७
निजतनयशतसहितबन्धुवर्ग्गत्तेयुं
नित्यं मरिच्च पटयुमोक्ककक्कण्टु । २८
सुतसुहृदरिभ्रममुळ्ळ नृपनप्पोळ्
स्वप्नवुं जाग्रत्तुमोक्कुमेन्नु वन्नु । २९
जनकनोटु कनिविनोटनुज्ञयुं कैक्कोण्टु
चेम्मे गजाह्वयं पुक्कितु पाण्डवर् । ३०
तदनु कुरुपतियुमथ जननिकळुमायुटन्
तत्र वनत्तिङ्कल् निन्नु नाकं पुक्कार् । ३१
अमरपुरिमरुवुमवरक्कॆल्लाक्कुं-
माशु युयुत्सुविनेक्कोण्टु धर्म्मजन् ३२
परिचिनोटु गतिवरुवतिन्नुदकादियुं
पार्त्थिवन् चेय्यिच्चु पिण्डवुं नल्किनान् । ३३
जनकजननिकळ् विषयमळकोटु सपिण्डियुं
चेय्तु संवत्सरश्राद्धवुमूट्टिनान् । ३४
धनवुमतिहितमोटु कोंटुत्तितु विप्रक्कुं
दानमानन्दमोटाशीर्व्वचनवुं ३५
नृपतिकुलवरनु तेळिवोटु नल्कीटिनान्
निर्म्मलनाय विदुररतुकालं । ३६

और विलाप किया। तदनन्तर विधितनयसुततनयनन्दन (व्यास) ने अपने विशिष्ट योगबल से कुरुक्षेत्र के युद्ध में मरे जनों को एक साथ दिखला दिया। उन्होंने अपने सौ पुत्रों सहित बन्धु वर्ग को और मरी सेना को भी देखा। २२-२८ तब सुत, सुहृद, शत्रु आदि भेदों का भ्रम रखनेवाले राजा को स्वप्न और जाग्रत् एक प्रतीत हुआ। उसके बाद पिता से प्रेम से आज्ञा लेकर पाण्डव आराम से हस्तिनापुर वापस आये। तदनन्तर धृतराष्ट्र, माताओं के साथ वन से स्वर्ग चले गये। राजा युधिष्ठिर ने उन स्वर्ग में रहनेवालों को बिना विलम्ब के युयुत्सु द्वारा उनकी अच्छी गति होने के हेतु यथानियम अन्त्येष्टि कराया और पिण्ड दिया। जनकों और जननियों के लिए सपिण्डीकरण श्राद्ध कराके आब्दिक श्राद्ध भी कराया। ब्राह्मणों को अत्यधिक धन सानन्द दान दिया गया और निर्मल विदुर ने राजवंशों के श्रेष्ठ को आशीर्वचन दिया। २९-३६ भगवान् के

भगवदनुचरवदनतो निशम्य द्रुतं
भक्त्या भगवल्गतियुमुदन्तवुं ३७
महति भगवति भुवनपति हृदयमात्मना
मायाविहीने लयिप्पिच्चितव्यये । ३८
विबुधसरिदुपतटममर्न्नु मित्रात्मज-
विज्ञानसंयुतज्ञानादिकळल्लां । ३९
भगवदुपदेशमार्ग्गेण केळ्प्पिच्चितु
भास्करपुत्रांशभूतन् विदुररुं । ४०
मुनिकळ्वरनाय माण्डव्यशापं तीर्न्नु
मुख्यनां धर्म्मनोटङ्ङु चेर्न्नीटिनान् । ४१
इति मुनिवरन् नृपन्तन्नोटु चोन्नव-
येल्लां मुनिकळ्क्कु सूतनुं चोल्लिनान् । ४२
सरसवचनेन चोन्नाळ् किळिप्पैतलुं
सत्कथयाकयालेङ्ङळोटिक्कालं । ४३

॥ आश्रमवासं समाप्तं ॥

अनुचर के मुँह से भक्ति के साथ भगवान् की गति और वार्ता सुनकर राजा ने अपने हृदय को महान् मायाविहीन अव्यय भगवान् में लीन कर दिया। गंगा के तटपर जाकर भास्करपुत्र के अंशभूत विदुर ने मित्रात्मजविज्ञानसहित अन्य विज्ञानों को भगवद्विषयक उपदेश द्वारा सुना दिया। मुनिवर माण्डव्य का शाप समाप्त हुआ और विदुर मुख्यधर्म (युधिष्ठिर) से एक हो गये। इस प्रकार मुनिवर ने (वैशम्पायन ने) जो कुछ राजा से कहा, वह सह सूत ने मुनियों को सुना दिया। शुकी ने भी कथा अच्छी होने के कारण हम लोगों को उसे अपने सरस वचनों में सुना दी। ३७-४३

॥ आश्रमवासिक पर्व समाप्त ॥

मौसलं

वरिकरिकिरि किळिमकळे ! नी
वरिनॆल्लिन्नविलरिवरुत्तॊळ्ळुं १
नवनारिकेळसलिलवुं पालुं
नवनीतमोटु गुळकदळिकळ् २
मधुसितादियुं तरुवन् वैकातॆ
मधुरमांवण्णं परक शेषवुं । ३
हरि मुरवैरि नरकारि शौरि
करिपरिवृढपरितापहारि ४
दुरितनाशननमरारि वैरि-
चरितरीतिकळुरचॆय्तीटु नी । ५
विरवॊटु कालं कळयातॆ वृथा
नरजननं नी सफलमाक्केणं । ६
शुकतरुणिकळ्मणि कळमायि-
स्सुखंवरुमारु परञ्ञाळन्नेरं । ७
मनसा विष्णुरातजनुं वैशम्पा-
यनमुनिवरनोटु चोदिच्चितु । ८
नयनहीननां नरपति वानो-
रयनं प्रापिच्चोरनन्तरं नृपन् ९
पितृपतिसुतन् प्रवर्त्तिच्चतॆन्तु
मधुरिपुनाथननुष्ठिच्चवारुं ? १०

मौसलपर्व

हे शुकि ! आओ ! और निकट बैठो । उत्तम धान के चावल का बना चूड़ा, तला हुआ तिल, नये नरियल का रस, दूध, घृतसहित गुड़ और केले, शहद और शक्कर यह सब बिना विलम्ब के दूँगा । अवशिष्ट कथा तो मधुर ढंग से सुनाओ । हरि, मुरवैरि, नरकारि, शौरि, गजेन्द्र का दुःख दूर करनेवाले, पापनाशन और देवों के शत्रुओं के शत्रु के चरितों के प्रकारों का वर्णन करो । बिना समय को व्यर्थ नाश किए मनुष्यजन्म को सफल बनाओ । यह सुनकर शुकियों के मणि ने उस समय मधुर ढंग से अपनी मीठी ध्वनि से सुनाया । १-७ तब विष्णुरात पुत्र (जनमेजय) ने वैशम्पायन मुनिवर से पूँछा— अन्धे राजा के स्वर्ग जाने के बाद पितृपति

तदनु वैशम्पायनमुनिवरन्
मुदितनायुटनरुळ्चेय्तीटिनान् — ११
शृणु नृपवर ! कथाशेषं चौल्वन्
गुणवानाकिय नृपति धर्म्मजन् १२
धरणिमण्डलं परिपालिच्चवा-
रुरचेय्तीट्टुवान् पणियत्रे पारं । १३
भरत हेहय नहुष राघव-
कुरु पूरु पुरूरवो भगीरथ- १४
सगर मान्धातृ पृथु नळ शिबि-
नृग निमि बलि रघु सुहोत्रादि १५
पल पल दिव्यनरपतिवीर-
रलसभावं कैवेटिञ्ञु भूतलं १६
परिपालिच्च नाळिवण्णं वन्नति-
ल्लोरु सौख्यं प्रजासमितिक्कु नूनं । १७
पृथिवीपालकन् गुणवानेन्नाकिल्
कृतयुगत्तिलुं कलियुगं नल्लू । १८
अधर्म्मवित्तेङ्ङुं विळयाते भुवि
स्वधर्म्मनिष्ठया वसिच्चितु लोकं । १९
अथ मुप्पत्तारां वरिषवुं वन्नु
प्रतिभयङ्ङळायुटनुटन् । २०
पेरिके दुर्न्निमित्तवुं काणायवन्नु
परितापं पूण्टु युधिष्ठिरनप्पोळ् । २१

(यम, धर्म) के पुत्र राजा युधिष्ठिर ने क्या किया और मधु के शत्रु नाथ नें क्या किया ? यह सुनकर मुनिवर वैशम्पायन ने मुदित होकर निवेदन किया— हे नृपवर ! सुनो ! अवशिष्ट कथा सुनाऊँगा । गुणवान् राजा युधिष्ठिर ने इस धरणीमण्डल का कैसे परिपालन किया यह कहना कठिन काम है । जब भरत, हेहय, नहुष, राघव, कुरु, पूरु, पुरूरवा, भगीरथ, ८-१४ सगर, मान्धातृ, पृथु, नल, शिवि, नृग, निमि, बलि, रघु, सुहोतृ आदि अनेक नरपतिवीर आलस्य छोड़कर पृथिवी का परिपालन करते थे, तब निस्सन्देह प्रजाओं का इतना सुख न होता था । अगर राजा गुणवान् है तो कृतयुग से भी कलयुग अच्छा हो सकता है । अधर्म का बीज कहीं न जमा और लोग सब स्वधर्मनिष्ठ थे । जब छत्तीसवाँ बरस आया तब

अतु सहदेवनोट्टु परञ्ञप्पोळ्
कुतुकं पूण्टुटनवनुरचेय्तु । २२

कलिकालवर्ण्णनं

इनियुळ्ळ कालं कलियुगमत्रे
मुनिजनङ्ङळुं मरञ्ञुपोमल्लो । १
मळयुं पेय्कयिल्लिनि वेण्टुं नेरं
वळिये भूमियुं विळकयिल्लल्लो । २
कोटिय काट्टुण्टाय्मरङ्ङळुं वीळुं
पट्टतियुं पिटिपेटुं गृहंतोरुं । ३
चतिच्चु कोल्कयुं पोळिपरकयुं
विधिच्च कर्म्मङ्ङळवर् चेय्याय्कयुं । ४
पितृक्रियकळुं वळिये चेय्कयि-
ल्लतिक्रमिच्चीटुं गुरुजनत्तेयुं ५
निजकुलविद्य पठिक्कयिल्लारुं
प्रजकळुं नन्नाय् वरिकयिल्लल्लो । ६
द्विजन्मार् पूणुनूल् कळकयिल्लारुं
भजनं मट्टिल्ल कृपयुमिल्लार्क्कुं । ७

विविध भय लगातार पैदा हुए। अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये। तब युधिष्ठिर दुःखित हुए। जब उन्होंने सहदेव से कहा तब उसने कौतुक से इस प्रकार जवाब दिया। १५-२२

कलिकाल का वर्णन

अब आगे कलियुग का समय है। मुनिजन अदृश्य हो जावेंगे। अब पानी जितना चाहिए उतना न बरसेगा और भूमि भी हरी-भरी न होगी। झंझावात उठेंगे और पेड़ गिरेंगे और घर पर आग लग जायगी। लोग धोखा देकर मारेंगे, झूठ बोलेंगे, विहित कर्म का अनुष्ठान न करेंगे। पितरों की क्रियायें न करेंगे और गुरुजनों की बात न मानेंगे। अपनी कुलविद्या को कोई न पढ़ेगा और प्रजाओं की स्थिति अच्छी न होगी। १-६ द्विजलोग अपने यज्ञोपवीत न बदलेंगे। लोग किसी का भजन न करेंगे और दया किसी में न होगी। राजालोग प्रजाओं से चोरी करके और लूटकर धन व्यर्थ के लिए कमायेंगे। बेईमानी से मुक्त धन किसी के

नृपन्मार् नाट्टिलुळ्ळवरोटु कट्टुं-
कवर्न्नुमार्ज्जिक्कुं वेरुते वित्तवुं । ८
उरुट्टोळिञ्ञिट्टिल्लोरुवनुमर्त्थं
पठिक्कुं कच्चोटत्तिनुं कळवत्रे । ९
कलियुगत्तिलुळ्ळवस्थकळिव
पलवुमेङ्ङने परयुन्नु पार्त्तालू ! १०
पोरुतियिल्लेतुमवनियिलिनि
पुरप्पेटुक वेण्टतु वैकाते नां । ११
इतु सहदेवन् परञ्ञिरिक्कुन्पोळ्
यदुकुलनाशं झटिति केळ्क्कायि । १२
इवण्णं तापसनरुळ्चेय्तनेर-
मवनिनायकन् तोळुतु चोदिच्चु
किमपि विस्तरिच्चरुळिच्चेय्यणं । १३

यदुवंशनाशं

कमलनेत्रन्तन्नुटे लोकप्राप्ति
यदुकुलमेल्लामोटुङ्ङियवारुं
कुतुकमांवण्णमरुळ्चेय्तीटणं । १
तेळिञ्ञु वैशम्पायननरुळ्चेय्तु ।
कळिकळ् केळ्क्केङ्किल् कमलाक्षन्तण्टे २

पास न होगा और व्यापार में भी झूठ घुस जायगा। कलियुग में होनेवाली इस स्थिति को तो सोचो, उसे कैसे बताया जाय ? अब पृथिवी में कहीं शान्ति नहीं है। अब बिना विलम्ब के हम चलें। जब सहदेव यह सब सुनाता था तब यदुकुल का नाश सुनाई दिया। जब तापस (वैशम्पायन) ने इतना कहा, तब राजा ने हाथ जोड़कर निवेदन किया— "इस को ज़रा विस्तर से बतला दीजिये"। ७-१३

यदुवंश का नाश

यदुकुल का नाश होने के अनन्तर कमललोचन (कृष्ण) की लोकप्राप्ति को भी ऐसे सुना दीजिये कि कुतूहल शान्त हो जाय। इस पर प्रसन्न होकर वैशम्पायन ने सुनाया। "अच्छा तो सुनिये कमलाक्ष की लीला को, उनकी माया की महिमा को और उनकी शोभा देनेवाली निजधाम

विळयाट्टुं मायामहिमयुं नन्नाय्
विळङ्ङिट्टुं निजनिलयप्राप्तियुं । ३
धरणीवल्लभन् करुणावारिधि
सरसिजनेत्रन्तिरुवटि मुदा ४
विळङ्ङुं द्वारकापुरियिलास्माऱु
तॆळिञ्ञुवाळुंनाळकमे चिन्तिच्चान् ५
ऒरुवण्णं भूमिभरं कळञ्ञु जान्
पॆरिय भारतसमरव्याजत्ताल् । ६
ऒरुकूट्टं दुष्टरॊटुङ्ङि केवल-
मॊरुकूट्टं दुष्टरुळवायुंवन्नु । ७
मम सुतन्मारामवक्कॊरुनाळुं
शमनमारालुं वरिकयुमिल्ल । ८
अवरॆयुं कूटॆयॊटुक्कुवानिङ्ङ-
न्तॊरु कळिवॆन्तॊत्तिरुन्नरुळुन्पोळ् । ९
भृगु भरद्वाज वसिष्ठ काश्यपा-
द्यखिलतापसरॊरुमिच्चॊक्कवे १०
भगवानॆक्काण्मानॆळुन्नळ्ळुं नेरं
भगवल्पुत्रन्मार् पलरुमॊन्निच्चु ११
मुनिकळक्कण्टु मनसि चिन्तिच्चा-
रिनियिवरॆ नां वलयक्कणमिप्पोळ् । १२
झटिति साम्बनॆच्चमयिच्चीटिना-
रुटलुं गर्भिणियुटॆ वटिवाक्कि । १३

की प्राप्ति को। धरणीवल्लभ, करुणासागर, कमललोचन भगवान् ने प्रमोद के साथ चमकनेवाली द्वारकापुरी में विराजते समय मन ही मन सोचा— "मैंने महाभारत के युद्ध के द्वारा पृथ्वी के भार को कुछ कम कर दिया है। दुष्टों में कई तो समाप्त हुए, हाँ, कुछ दुष्ट पैदा भी हुए। १-७ मेरे जो पुत्र हैं उनकी औरों के द्वारा कभी मृत्यु न होगी। उनकी भी समाप्ति कैसे हो ? जब इस प्रकार सोच रहे थे तब भृगु, वसिष्ठ, काश्यप, आदि तापसवर सब मिलकर भगवान् का दर्शन करने पधारे। भगवान् के पुत्रों ने एक साथ उनको देखकर अपने मन में सोचा— "आज हम इनको परेशान करें"। तुरन्त ही उन्होंने साम्ब को गर्भिणी का वेष पहनाकर, मुनिवरों के समक्ष रखकर, विनयभाव से हाथ

मुनिवरन्मार्तन् तिरुमुल्पिल् वच्चु
विनयं भाविच्चु तॊळुतु चोदिच्चार् । १४
इवळ् पॆरुन्नतु पुरुषनो पॆण्णो ?
दिवसमेतॆन्नुमरुळिच्चॆय्यणं । १५
अतु केट्टन्योन्यमवरुं नोक्किक्क-
ण्टतिनॊरुत्तरमरुळ्चॆय्तीटिनार्— १६
अट्टुत्तिरिक्कुन्नितिवळ्क्कु पेरिप्पोळ्
कट्टुप्पमेरुन्नॊरिरुम्पुलक्कय- १७
ततिनाले कुलं मुटियुं निङ्ङळ्क्कु-
मितिनु किल्लिल्लॆन्नवर्कळुं चॊन्नार् । १८
मुररिपुमतरिञ्ञु मामुनि-
वरन्मारुं मुतिन्नॆळुन्नळ्ळीटिनार् । १९
सकललोकनायकनॆयुं कण्टु
भगवल्भक्तन्मार् मरञ्ञितक्कालं । २०
चिरिच्चु भाषिच्चु नटन्नु बालन्मार्
विरच्चु साम्बनुं प्रसविच्चीटिनान् । २१
इरिम्पुलक्क कण्टतिभयं पूण्टु
परन्पुरुषनोटुणर्त्तिच्चीटिनार् । २२
यदुराजन्तन्नोटरियिक्कॆन्नतु
मधुरिपुतानुमतुकेट्टन्नेरं २३

जोड़कर पूँछा । ८-१४ "इसका बच्चा पुरुष होगा कि स्त्री और यह भी बतलाइये कि प्रसव किस दिन होगा ?" यह सुनकर उन्होंने एक दूसरे का मुँह देखने के बाद उस प्रश्न का इस प्रकार उत्तर दिया— "इस का प्रसव अब निकट है और एक अत्यन्त कठिन लोहे के मुसल का जन्म होगा जिससे तुम लोगों का कुल ही समाप्त होगा, इसमें कोई संदेह नहीं ।" ऐसा उन्होंने कहा । मुररिपु की इच्छा को जाननेवाले महामुनि तदनन्तर उठकर चले गये । सकल लोकनायक का दर्शन करके वे भगवान् के भक्त अन्तर्हित हो गये । बालक तो हँसते-हँसते बातचीत करते हुए चले गये । काँपते हुए साम्ब ने तो प्रसव किया । १५-२१ लोहे का मुसल देखकर डर गये और परपुरुष को जाकर समाचार सुनाया । मधुरिपु ने कहा— राजा यदु को जाकर सब सुनाओ । तब उन्होंने राजा से सब कहा और राजा ने इस प्रकार निवेदन किया । इस लोहे के मुसल को तुम लोग

अवरुं भूपालनोंटु पऱञ्ञप्पो-
ळवनीशन्तानुं पुनरुरच्चेय्तान् । २४
इरिन्पुलक्कयितखिलं निङ्ङळु-
मरंकोंण्टु राकिप्पोंटिच्चु वैकाते २५
कलक्कुकाळियिल् पुनरेन्नालुमि-
क्कुलत्तिनु नाशमोंळिक्करुतत्रे । २६
अतु पोंटिच्चवरुदधियिलिट्टा-
रतुपोंळुतोंरुकषणं शेषिच्चु । २७
अतु समुद्रत्तिलेंऱिञ्ञतुमोंरु-
पृथुरोमं चेन्नु विळुङ्ङीतप्पोंळे । २८
वलयिल् किट्टि मत्स्यवुं कैवर्त्तनु
कोंलचेय्तु कीऱियतुनेरं कण्टु २९
अॅंटुत्तान् कट्टियामिरुन्पुतन् खण्डं
कोंटुत्तान् काट्टाळन् तनिक्कवन्तानुं । ३०
ओंरु शरं तीर्त्तानतुकोंण्टक्काल-
मिरुन्पुलक्कतन् पोंटियायुळ्ळतुं । ३१
तिरवायूटे वन्नटिञ्ञु तीरत्तु
विरवोटेरकत्तृणमायुण्टायि । ३२
धनञ्जयन्तानुं भगवानेक्काण्मान्
तनियेे श्रीमल्द्वारकयकंपुक्कान् । ३३
अरविन्दोत्भवपुरहरादिक-

आरी से रगड़कर चूर-चूर कर दो और बिना विलम्ब के सागर में फेंक दो। तब भी इस कुल का नाश न टल सकेगा। तदनुसार उन्होंने उसे चूर-चूर करके सागर में डाल दिया, पर एक टुकड़ा रह गया था। वह समुद्र में फेंक दिया गया। उसे एक पृथुरोम (एक प्रकार के मत्स्य) ने निगल लिया। २२-२८ वह एक केवट को अपनी जाली में मिला। जब उसने उसे मारकर चीरा तब भीतर लोहे का टुकड़ा पाया जिसे उसने एक जंगली आदमी को दे दिया। उसने उससे एक शर बना लिया। लोहे के मुसल के जो चूर हो गये थे, वे लहरों द्वारा तट पर पहुँचकर वहाँ एरका नामक घास बन गये। उस समय अर्जुन तो भगवान् का दर्शन करने के लिए अकेले श्रीमद्द्वारका पुरी में प्रविष्ट हुए। ब्रह्मा, शिव आदिकों ने अरविन्दाक्ष (कृष्ण) की स्तुति की। उस समय द्वारका में

ळरविन्दाक्षनें स्तुतिचॆय्तीटिनार् । ३४
तॆरुतॆरे द्वारावतियिलक्कालं
पॆरिय दुर्न्निमित्तवु काणाय्वन्नु । ३५
पुरवासिकळोटरुळ्चॆय्तीटिनान्
मुरहरनाय परमपूरुषन्— ३६
अटुत्तितापत्तु नमुक्कतिनत्ते
कटुप्पमेरु दुर्न्निमित्तं काणुन्नु । ३७
इविटं कैविट्टु पुऱप्पॆटुक नां
पवित्रमां तीर्त्थप्रवरमाटुवान् । ३८
भगवदुद्योगं परिचॊटु कण्टु
भगवद्भक्तनुद्धवरु चॊल्लिनान्— ३९
तिरुमनस्सॆन्तॆन्नऱियाञ्ञुण्टुळ्ळिल्
परितापं पारं मम भगवाने ! ४०
अटिमलरिणयॊटु चेर्त्तीटण-
मटियनॆप्पुनरिनि मटियाते । ४१
वेटियाते पोट्टि ! धृतियुमिल्लेतु-
मटियनु पिरिञ्ञिरिप्पतिनेतुं । ४२
अतु केट्टु देवनरुळ्चॆय्तीटिनान्
मतिमानाकुमुद्धवरोटन्नेरं । ४३
पऱञ्ञिटां तव परमार्त्थमॆङ्कि-
लऱिञ्ञुकॊण्टालु विकल्पं कूटाते । ४४

जल्दी-जल्दी अनेक दुर्निमित्त दिखाई दिये । २९-३५ मुरारि परम-पुरुष ने नगरवासियों से कहा । अब हमारी विपद् आ रही है । यही कारण है कि भयङ्कर दुर्निमित्त दिखाई दे रहे हैं । यह स्थान छोड़कर हम लोग पवित्र तीर्थस्थान की यात्रा करने चलें । भगवान् का यह उद्यम देखकर भक्त उद्धव ने निवेदन किया । से भगवन् ! यह न जानने से कि पूज्य क्या चाहते हैं मेरे मन में बहुत दुःख है । इस दास को अपने चरणों से अब बिना हिचके एक कर लीजिये । हे रक्षक ! अब इस दास को अलग रहने के लिए धैर्य बिलकुल नहीं है । ३६-४२ यह सुनकर भगवान् ने मतिमान् उद्धव से निवेदन किया । तुमको परमार्थ बतला दूँगा उसे स्पष्ट रूप से समझ लो, मैं कभी अलग न रहूँगा, क्योंकि मैं हर जगह व्याप्त परमात्मा हूँ । इस प्रकार आत्मा का उपदेश देकर

पिरिञ्ञिरिक्कयिल्लोरिक्कलुं ञानो
निरञ्ञिरिप्पोरु परमात्मावु ञान् । ४५
इवण्णमात्मानमुपदेशिच्चुट-
नवनेयुमयच्चितु भगवानुं । ४६
विदुररोटु चोल्लुक कौषारवि
हृदये ञान् पुनरिरिक्कुमेन्नतुं । ४७
अरुळ्चेय्तनेरं तोळुतवन्तानु
नरनारायणाश्रमं प्रति पोयान् । ४८
पुनरथ यदुवरन्मारुमायि-
क्कनिविनोटुकूटेळुन्नळि नाथन् । ४९
समुद्रतीर्थस्नानवु कळिच्चव—
रमर्त्यपूजयुं कनिवोटु चेय्तार् । ५०
पितृक्कळ्क्कु तृप्ति वरुत्ति वैकाते
यदुक्कळ् दानवुं द्विजन्मार्क्कु चेय्तार् । ५१
कळभमाल्यभूषणवस्त्रङ्ङळा-
ललङ्करिच्चवरहङ्करिच्चेट्टं ५२
भुजिच्चु मद्यवुं झटिति सेविच्चु
भजिच्चितु भगवतियेयुं नन्नाय् । ५३
मदिच्चु तन्नत्तान् मरन्नु यादव-
रुदिच्चोरु रजोगुणबलत्तिनाल् । ५४
शमप्रधानमानसन्मारन्नेरं
भ्रमिच्चु नाणवुमकलेक्कैविट्टार् । ५५

तुरन्त उनको रवाना कर दिया। हे कौषारवि ! विदुर से कहो कि मैं हृदय में सदैव रहूँगा। भगवान् के इस प्रकार कहने के बाद वे (उद्धव) प्रणाम करके नरनारायण के आश्रम को चले गये। तदनन्तर नाथ (कृष्ण) यदुवरों के साथ प्रेम के साथ निकले। समुद्रतीर्थ में स्नान करके उन्होंने भक्ति से देवों की पूजा की। ४३-५० पितरों की तृप्ति कराकर यदुओं ने बिना विलम्ब के ब्राह्मणों को दान दिये। सुगन्ध द्रव्य, माला, आभूषण, वस्त्र आदिकों से अलङ्कृत होकर वे अत्यन्त अहङ्कारयुक्त हुए और भोजन करके तुरन्त उन्होंने मद्यपान भी किया और ढंग से भगवती की सेवा की। अपने मद में और रजोगुण के बल से वे अपने को भूल गये। शमप्रधान मन के होते हुए भी वे उस समय अपने भ्रम में लज्जा तक खो बैठे।

पदकं भारतसमरमूलमाय्
कृतवर्म्मावुं सात्यकियुमुण्टाय् । ५६
परस्परमुण्टायविटे स्पर्द्धयुं
पेरुत्तितुच्चत्तिल् परञ्ञारन्नेरं । ५७
वचसा वन्नील जयमतुमूलं
निशितमायुधमेटुत्तारन्योन्यं । ५८
पकुत्तु तङ्ङळिल् कलहिच्चारेटं
पकुत्तिरुत्तिनारिरुकूट्टाय् तम्मिल् । ५९
पट्टत्वमोट्टुटनटुत्तु वेट्टियुं
तटुत्तितायुधं मुरिच्चुमन्पुकळ् । ६०
मळ्पेय्युंवण्णं चोरिञ्ञारन्योन्यं ।
पुळपोले चोरयोलिक्कयुं कैकाल् ६१
मुरिञ्ञु वीळ्कयुमुटने चाकयुं
परञ्ञुनिल्क्कवे कळुत्तरुक्कयुं । ६२
जनकनेप्पुत्रन् मकनेत्तातनुं
कनिष्ठने ज्येष्ठन् कनिष्ठन् ज्येष्ठने । ६३
मरुमकने मातुलनुं कोल्लुन्नु
मरुमकनम्मामनेयुं कोल्लुन्नु । ६४
शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! भव
भवभयहर ! मूढ ! शिव ! हर ! ६५

भारतयुद्ध के संबन्ध में कृतवर्मा और सात्यकि में वाग्युद्ध प्रारम्भ हुआ। उनकी आपस में स्वर्धा हुई और बढ़ी; दोनों ज़ोर से बोलने लगे। बातों से किसी की विजय न हुई। अतएव दोनों ने तीक्ष्ण आयुधों का ग्रहण किया। ५१-५८ आपस में बाँट कर उन्होंने कलह किया। सब लोग दो पक्षों में बट गये। कोई निकट जाकर दूसरे को मारता है और दूसरा हथियार को रोकता है और तोड़ता है। एक दूसरे पर बरसात के पानी के समान शरवर्षा करता है। रक्त नदी के समान बहने लगा। हाथ पैर टूटकर गिरे। कोई तत्क्षण ही मरता है। बोलते-बोलते किसी का सिर कट जाता है। पिता को पुत्र और पुत्र को पिता, छोटे भाई को बड़ा भाई और बड़े भाई को छोटा भाई मारता है। भांजे को मामा मार डालता है और भांजा मामा को मार डालता है। हे शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! शिव ! हे भव ! हे संसार का भव-नाश करनेवाले ! शिव ! हे हर ! हे हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हे पुरहर !

हर ! हर ! हर ! हर ! हर ! हर !
पुरहर ! स्मरहर ! मृतिहर ! ६६
पेरिकॆ नन्नु माधवनुटॆ माय-
य्क्कॊरुवस्तु पुनररुतातॆयुण्टो ? ६७
शरचापादिकळॊटुङ्ङिय शेषं
परिचॊटेरकत्तृणकणिशत्ताल् ६८
तॆरुतॆरॆत्तम्मिल् प्रहरिक्कुंनेरं
मरणत्तिनेट्टमॆळुतायी तुलों । ६९
मदपरवशमनसा सत्वरं
यदुकुलवररखिलमेरक- ७०
त्तृणमेट्टु तॆरुतॆरॆ मरिच्चुटन्
कुणपमाय्वन्नु शिव ! शिव ! चित्रं । ७१
ऒट्टुङ्ङिक्कूटियोरळवतु कण्टु
दृढनायुळ्ळॊरु बलभद्ररामन् ७२
समुद्रत्तिल् चाटि मुळुकि वैकातॆ
समत्वमोटनन्ततॆयुं प्रापिच्चु । ७३

श्रीकृष्णवैकुण्ठप्राप्ति

भगवानग्रजनुटॆ गति कण्टु
सुखमे योगं पूण्टिरुन्नरुळिनान् । १

हे स्मरहर ! हे मृत्युहर ! ५९-६६ माधव की माया बहुत अच्छी है। उसके लिए कोई असाध्य बात नहीं है। जब धनुष-बाण समाप्त हुए और एरका-तृण के टुकड़ों से लगातार आपस में लड़ने लगे तब मृत्यु प्राप्त करना बहुत आसान हो गया। मद के वश में आकर जल्दी ही यदुकुल के सारे वीर ऐरका तृण के लगने से लगातार मरते गये और शव बने। हे शिव ! शिव ! शिव ! कैसा आश्चर्य है। मृतों की संख्या देखकर दृढ़ बलभद्र समुद्र में कूदे और तुरन्त ही डूबकर अनन्त से एक हो गये। ६७-७३

श्रीकृष्ण की वैकुण्ठप्राप्ति

अपने ज्येष्ठ की गति देखकर भगवान् सुख से योग प्राप्त करके विराजे। पृथ्वी का भार समाप्त हुआ और अपने अवतार के प्रयोजन

अवनिभारवुमखिलं तीर्न्नुता-
यवतारकार्यं कृतमाय् मिक्कतुं । २
इनि वैकुण्ठमां पदं प्रापिच्चिटा-
मिनिक्कु कालं वैकरुतल्लो वृथा । ३
निनच्चेवं देवन् तलत्तें श्रीपाद-
मणच्चिटत्तेत्तुटमेले वच्चु ४
निविर्न्नु जूदेहमिरुन्नरुळिनान् ।
पवनन् तन्नेयुमटक्कि निश्चल- ५
मटच्चु मूलाधारवुमुरप्पिच्चु
पटुत्वमोटु कुण्डलिनिशक्तिये- ६
ज्ज्वलिप्पिच्चु मेन्मेल् सुषुम्नया चक्र-
कुलत्तेयुमोक्कदहिप्पिच्चोरोन्ने ७
दहननवर्कमण्डलत्तोटु तट्टि-
दहनमण्डलत्तिनेयुं पिन्निट्टु । ८
सहसा मुन्नग्निकळुमाय्पीयूष-
किरणमण्डलत्तोटु चेर्न्नु तट्टि- ९
वियर्त्तोळुकिटुममृतधारया
लयिच्चु मूलाधारवुं कुळुर्प्पिच्चु । १०
सपदि ब्रह्मरन्ध्रवुममर्त्तुळ्ळिल्-
त्तपसा योगमोटिरुन्नरुळुन्पोळ् । ११
त्रिभुवनमोक्क निरञ्ज तेजसा
पवननेज्जयिच्चमृतप्लावनं १२

भी अधिकांश सिद्ध हुए। अब मेरा वैकुण्ठ प्राप्त करने का समय आ गया। व्यर्थ विलम्ब न होना चाहिये। ऐसा सोचकर भगवान् ने अपने दायें पाँव को मोड़कर बाईं जाँघ पर रखा और शरीर को सीधा करके बैठे। और प्राण को दबाकर निश्चल हुए और मूलाधार को स्थिर कर दिया। फिर बड़ी कुशलता के साथ कुण्डलिनी शक्ति को सुषुम्ना के द्वारा ऊपर को जगाकर, सभी चक्रों को जलाकर अग्नि के अर्कमण्डल को स्पर्श करने के बाद अग्निमण्डल को भी पीछे कर दिया। १-८ फिर एक दम पहले के अग्नियों के साथ अमृतकिरणमण्डल से मिलकर पसीने के रूप में बहनेवाली अमृतधारा में लीन होकर भूलाधार को ठण्डा किया। फिर तुरन्त ब्रह्मरन्ध्र को भीतर ही दबाकर तप के द्वारा योग

विरवोटु चेर्त्तु निरुकयिल्निन्नु
परिचोट्टु धूमं पुरप्पेटुनेरं १३
निरन्नोरालत्तरमुकळिलाम्मारु
इरुन्नरुळुन्न भगवल्पादत्तें । १४
तुटुक्कनेक्काणायितु काट्टाळनु-
मट्टुत्तितु मेल्ले मरञ्ञु वृक्षत्ते १५
विटपिकळुटे किमपि सूक्षिच्चान्
अटविवासिनां कुलजीवान्तकन् १६
मुसलशेषनिर्म्मित शरधरन्
मुसलिसोदरपदसरसिजे १७
शिततरमाय शरं प्रयोगिच्चान्
विधिविहितत्तालतुमतुनेर- १८
मिरिन्पुलक्कतन् कषणं कोण्टुळ्ळ
शरमाय् वन्नितु पुनरतु चेन्नु १९
भगवल्पादांभोरुहत्तिनु कोण्टु
भगवान्तन्नुटे मतमताकयाल् । २०
वळिये काट्टाळनट्टुत्तु चेन्नप्पो-
ळळिनिल पूण्टु तोळुतु वीणव- २१
नटियनेतुमोन्नरिञ्ञील पोट्टि !
उटमयोटेन्नेप्परिपालिक्केणं । २२

में बैठकर विराजे। तब सारे त्रिभुवन में व्याप्त तेज से प्राण को जीतकर अमृतप्लावन विधिवत् करने के बाद, सिर से धुआँ ढंग से निकलने लगा। तदनन्तर जब एक वटवृक्ष के चबूतरे पर बैठकर विराजे, ९-१४ तब भगवान् का पाँव स्पष्ट दिखाई दिया। उसे देखकर जंगल में रहनेवालों के जीव का अन्त करनेवाला एक शिकारी धीरे-धीरे निकट आया और वृक्षों की आड़ में छिपकर उस मुसल के टुकड़े का बना शर धारण करनेवाले ने मुसली (बलराम) के भाई के पादपद्म पर तीक्ष्ण शर का प्रयोग किया। विधि का विहित होने के कारण वह वही शर था जो लोहे के मुसल के टुकड़े का बना हुआ था। वह जाकर भगवान् के पादपद्म पर लगा, क्योंकि भगवान् का भी वही मत था। मर्यादानुसार जब शिकारी निकट आया तब अपने को नष्ट समझकर उसने हाथ जोड़ा और कहा— हे रक्षक ! मुझे कुछ भी न मालूम था ! अपना समझकर मेरा परिपालन

मुनिवरन्मार् मानसत्तिलुं गोप-
वनितमार् मुलत्तटत्तिलुं पत्मा- २३
करतळिरिलुं बलिशिरस्सिलुं
पुररिपुदेवहृदयत्तिङ्कलुं २४
विधिकरतलङ्ङळिलुं गौतम-
हृदयनायिकादृषद्वपुस्सिलुं २५
विळङ्ङ्ङ्टुं तव पदसरोरुह-
तलत्तिङ्कल् मम शरमेल्पिप्पति- २६
नॊरु तिरुवुळ्ळं कलर्न्नतॆन्तय्यो !
मुरहर ! नारायण ! नरकारे ! २७
शरणं देवेश ! चरणतारिण
करुणावारिधे ! शरणं दैवमे ! २८
तिरुमॆय् कण्टुळ्ळिलिवनानन्दवुं
शरमेल्पिच्चतु निनच्चु भीतियुं २९
कनिवु कण्टॊरत्भुतवुं कैक्कॊण्टु
वणङ्ङिङ्नान् तॆरुतॆरॆक्किरातनुं । ३०
भयप्पॆटेण्ट ञानरिञ्ञवे निन-
क्कयुक्तमल्लितु विधिवशाल् वन्नु । ३१
चतिचॆय्तेन् निन्नॆक्कळिञ्ञजन्मं नी
प्रतिक्रिय पुनरतिनितुमॆटो । ३२

करो । १५-२२ मुनिवरों के मानस में, गोपियों के स्तनतटों पर, कमल-सरोवर के नवपल्लवों में, बलि के सिर पर, पुररिपु महादेव के हृदय में, ब्रह्मा के करतल पर, और गौतम के हृदय की नायिका (अहल्या) के पत्थर के शरीर पर विराजमान तुम्हारे पादपद्म पर मेरे शर को लगने के लिए क्यों तुम्हारे मङ्गलमय मन ने प्रबन्ध किया । हे मुरहर ! नारायण ! नरकासुर के शत्रु ! हे देवेश ! तुम्हारा चरणयुगल ही मेरा शरण है । हे करुणासागर ! हे देव ! तुम ही शरण हो । भगवान् का शुभशरीर देखकर आनन्द, शर छोड़ने के कारण भय, और भगवान् की दया देखकर आश्चर्य का अनुभव करते हुए, किरात (शिकारी) ने जल्दी बारम्बार प्रणाम किया । २३-३० डरो मत ! मुझे यह पहले ही मालूम था । तुमने अनुचित काम नहीं किया है । यह विधिवश हुआ है । मैंने पूर्वजन्म में तुमको धोखा दिया था । यह तुम्हारी उसकी प्रतिक्रिया है । अब से

निनक्किनिच्चिरममरलोकत्तु
मनःखेदं तीर्न्नु वसिक्कामेन्नुटे- ३३
मनःप्रियत्तिनु फलमतायतुं ।
कनक्कनिन्निलुण्टेनिक्कु वात्सल्यं । ३४
अऱियातेयोरु शरं कोण्टच्युत-
चरणमर्च्चिच्चनिमित्तं काट्टाळन् ३५
ओरुनाळुमोरुलयं वरातोरु-
परगतिवन्नु शिव ! शिव ! चित्रं । ३६
खगमुखबुद्ध्या विशिखमर्प्पिच्चु
खगप्रवरनाय् चमञ्ञु काट्टाळन् । ३७
धरणिदेवन्मारतिशयभक्त्या
सरसिजसुमतुळसिपत्रङ्ङळ् ३८
चरणतारिलन्वहमाराधिच्चाल्
वरुन्नोरु फलमिनिक्कु चोल्लामो ? ३९
हरि करुणावारिधि किरातनु
सुरलोकप्राप्ति कोटुत्तनन्तरं ४०
तिरञ्ञु दारुकन् भगवानेक्काणा-
ञ्ञुरुखेदं पूण्टु नटन्नङ्ङोटिङ्ङो- ४१
टुळन्नु तेरुमायवनुं वन्नुक-
ण्टुळन्नु वीणुटन् नमस्कारं चेय्तान् । ४२

तुम अमरलोक में सब दुःख छोड़कर बहुत दिनों तक रहोगे । जान लो कि यह मेरी मनःप्रीति का फल है । तुम्हारे प्रति मेरा गहरा वात्सल्य है । अज्ञान में एक शर के द्वारा अच्युत के चरणों की अर्चा करने के कारण इस व्याध की वह परा गति हुई जो कभी नष्ट नहीं होती है । हे शिव ! हे शिव ! कैसा अद्भुत है ! खग (पक्षी) का मुख समझकर तो व्याध ने शर छोड़ा था पर वह एक खगप्रवर (आकाश में जानेवालों में श्रेष्ठ) बना । ३१-३७ अगर ब्राह्मणलोग बड़ी भक्ति के साथ कमल, अन्य पुष्प और तुलसी के पत्र प्रतिदिन चरणों पर चढ़ावेंगे तो उसका जो फल होगा उसका मैं कैसे वर्णन करूँ । करुणानिधि हरि के किरात को स्वर्गप्राप्ति दिलाने के बाद दारुक भगवान् को खोजता रहा और न देखने से दुःखित हुआ । इधर उधर बहुत घूमकर थकने के बाद वह रथ लेकर आया और भगवान् को देखकर नमस्कार किया । (दारुक ने विलाप किया—) भवगन् ! मुझे क्यों धोखा दिया? मेरा मतिभ्रम तो बढ़ा-चढ़ा हुआ है । ३८-४३

चतिच्चतॆन्तॆन्ट्टे भगवाने ! मम
मतिभ्रमं पारं मुळुत्तिरिक्कुन्नु । ४३
मृदुमृदुलमायरुणमायॊरु-
पदतळिरिलॆन्तॊरु शरमेल्पान् ४४
अवकाशं वन्नतिह भगवाने !
भवदनुमतमऱियाञ्ञॆन्नुळ्ळिल् ४५
परितापं पारं वळरुन्नू पोट्टि !
शरणं मट्टिल्ल करुणावारिधे ! ४६
पिरिञ्ञिरियुन्नीलॊरुनाळुमिनि-
प्पिरिञ्ञिरिप्पानुमरुतु दैवमे ! ४७
चतिप्पानल्लल्ली तुटङ्ङुन्नु नाथ !
यदुप्रवर ! माधव ! जगल्पते ! ४८
तिरुमनसि चिन्तितमॆन्तॆन्नतु
तिरियाञ्ञु खेदं पॆरुताकुन्नु मे । ४९
निरञ्ञ दुःखत्तालटित्तारिल् वीणु
परञ्ञु दारुकन् करयुन्ननेरं ५०
तॆरुन्ननॆत्तेरुमुयर्न्नु मेल्पट्टु
विळङ्ङुमायुधङ्ङळुमायन्नेरं । ५१
नटुङ्ङि दारुकनतुकण्टन्नेरं
पॊटुन्ननॆक्कृष्णनरुळ्चॆय्तीटिनान्— ५२
तॆरुन्ननॆ द्वारावतिक्कु चॆन्नु नी
परञ्ञिटेणमीयवस्थकळॆल्लां । ५३

इस मृदुल, लाललाल पादपल्लव में शर लगने का अवसर कैसे हुआ है, हे भगवन् ! आप का मत न जानने से मेरे मन में दुःख बढ़ रहा है, हे रक्षक! हे करुणासगर! तुम्हें छोड़कर मेरा और कोई शरण नहीं है। एक दिन भी आप से अलग नहीं रहा हूँ, ऐसा न हो कि आगे अलग रहना पड़े। हे दैव! हे नाथ ! हे यदुप्रवर ! हे माधव ! हे जगत्पते ! मुझे धोखा तो नहीं देनेवाले हो ? आप की इच्छा क्या है, यह न जानने से मेरा दुःख बढ़ रहा है। ४४-४९ जब भरे दुःख से चरणों पड़कर दारुक इस प्रकार कहते हुए रोता था तब झट से रथ, अपने चमकनेवाले आयुधों के साथ ऊपर उठा। यह देखकर दारुक काँपने लगा और अचानक कृष्ण बोले। तुम तुरन्त ही द्वारवती चलो और यह सब स्थिति बतला दो। इस क्रियाशील काल

पट्टुत्वमेऱिट्टुन्नोरु कालत्तिन्ट्रे
तट्टुत्तुकूटात बलत्तालिक्कालं ५४
ओट्टुङ्ङ् पण्टुळ्ळ जनङ्ङ्ङळ्मेल्लां
वेंटिञ्ञितग्रजन् धरणितन्नेयुं । ५५
अवनितन्मीते वसिच्चतिन्निनि-
यवसितमायिब्भविक्कुमाऱायि । ५६
अधिकं स्वस्थनायिरुन्न ञान् तानु-
मधुना दुस्थनाय् चमञ्ञितिन्नियुं । ५७
विरविल् स्वस्थनाय् चमयुमाऱत्ते
वरुन्नितेन्नतुमऱियिच्चीटणं । ५८
ओरुत्तरुं द्वारावतियिलाम्माऱ-
ङ्ङरिक्कोल्ला पारं पिळ्ळ्यक्कुमेङ्किलो ५९
समुद्रराजन् वन्नतिक्रमिच्चिट्टुं
गमिच्चुकोळ्ळणमतिनुमुन्नमे ६०
धनधान्याद्युपकरणङ्ङ्ङळोट्टुं
तनयदारङ्ङ्ङळेयुं कटत्तिक्को- ६१
ण्टुटने पोकणं किमपि वैकाते ।
झटिति वारिधि तकक्कुं वन्नप्पोळ् ६२
सुमतियाय वज्रने वाळिक्केन्नु
मम नियोगमर्ज्जुननोटुं चोल्क । ६३

(कलियुग) के अप्रतिहत बल के कारण पुराने लोग सब समाप्त हो गये हैं। मेरे बड़े भाई तो पृथिवी पर से ही हट गये। अब इस पृथ्वी पर निवास करना समाप्त होनेवाला है। ५०-५६ मैं जो बिलकुल स्वस्थ या अब मैं भी दुस्थ हो गया हूँ। यह भी बतला दो कि जल्दी फिर स्वस्थ हो जाऊँगा। कोई भी द्वारवती ही में न रह जाय। नहीं तो बड़ी गलती हो जायगी। सागरराज अब आक्रमण करनेवाला है। इससे पहले ही चले जाना चाहिये। धन, धान्य आदि उपकरणों को लेकर पुत्र, कलत्र आदिकों के साथ अब बिना विलम्ब के जल्दी चले जाना चाहिये। समुद्र तो जल्दी ही आकर सब समाप्त करेगा। मेरी ओर से अर्जुन से कहना कि बुद्धिशाली वज्र से राज कराना। ५७-६३ यह भी कहो कि सभी लोगों को ले जाकर परिपालन करना। यह भी कहो कि यह सब विधि का विहित

तदनु सर्व्वलोकरेयुं कोण्टुपोय्
सदयं पालिक्कॅन्नतुमेल्लां चॉल्क । ६४
विधिविहितमितॊऴिक्करुताक्कु-
मतिनारुं खेदिक्करुतॆन्नुं चॉल्क । ६५
सकललोकेशवचनमेवं के-
ट्टकमे वन्नॊरु परितापत्तॊटुं ६६
कऴल्तळिरिण पलवुरु कूप्पि
मुऴुत्त चिन्तया नटन्नु दारुकन् । ६७
सनकनारदप्रमुखन्माराय
मुनिकळोटुं देवकळोटुं कूटि ६८
कमलजनोटुं गिरिसुतयोटुं
विमलनीश्वरन् त्रिपुरनाशनन् ६९
त्रिभुवनपति सुरपति हरि
विभु मखपति कमलजापति ७०
धरणिभारवुमखिलं तीर्त्तोरो-
तरुणिमारुमाय् रमिच्चनारतं ७१
यदुकुलकीर्त्ति जगति चेर्त्तुळ्ळिल्
सुदृढब्रह्मचर्यवुं दीक्षिच्चुकॊ- ७२
ण्टळविल्लातोरो कळिकळालक-
तळिरखिलजन्मिकळ्क्कु मोदिप्पि- ७३
च्चिनिमेलिल् कलियुगत्तिङ्कलुळ्ळ
मनुष्यर्क्कुं गति वरुत्तिक्कॊळ्ळुवान् ७४

है, इससे कोई भी बच नहीं सकता है। इसके लिए कोई दुःख न करे। सभी लोकों के ईश्वर की यह बात सुनकर भीतर ही भीतर के दुःख के साथ चरणयुगल को बार-बार प्रणाम करके बढ़ी-चढ़ी चिन्ता के साथ दारुक चला गया। सनक, नारद आदि प्रमुख मुनियों, देवों और ब्रह्मा तथा पार्वती के साथ विमल, त्रिपुरनाशक ईश्वर, त्रिभुवनपति, सुरपति, हरि, विभु, यज्ञपति, लक्ष्मीपति ने पृथ्वी के भार को समाप्त करके, भिन्न-भिन्न तरुणियों के साथ रमकर, ६४-७१ इस जगत् में यदुकुल की कीर्ति पैदा करके, भीतर से ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर, अपनी निस्सीम लीलाओं से सभी प्राणियों के अन्तःकरण का प्रमोद पैदा करके, आगे कलियुग में जीनेवाले मनुष्यों के लिए गति का प्रबन्ध करने-हेतु अपनी उत्तरोत्तर

पवित्रकीर्त्तियुं वळर्त्तिमेल्क्कुमेल्
त्रिवर्गवुं भक्तजनत्तिनु नल्कि ७५
परममायुळ्ळ पदत्तॆ प्रापिप्पा-
नॊरुमिच्चन्नेरं तॊळुतु सेविच्चार् । ७६
पुरहरन्तानुं कमलजन्तानुं
पुरन्दरादियुं मुनिवरन्मारुं ७७
मुदितराय् वेदङ्ङळॆक्कॊण्टु नन्नाय्
स्तुतिच्चु सेविच्चु तॊळुतु कुन्पिट्टार् । ७८
ऋजुशरीरनायिरुन्नुटन् प्राण-
विजयमोटग्निसुषुम्नतन्नूटॆ । ७९
विरवॊटु मेल्पोट्टुटन् ज्वलिप्पिच्चु
करयेटि चक्रङ्ङळुं दहिप्पिच्चु । ८०
स्थिरयायॊरु धारणया मूर्द्धनि
हिरण्यतेजस्सुं झटिति दीपिच्चु । ८१
पुऱप्पॆट्टॊरग्नि दहिप्पिच्चु देहं
कुऱच्चिल् कूटातॆ निऱञ्ञॊराभयुं ८२
जगत्तिङ्कलॊक्कॆ विळङ्ङक्काणायि
सुखिच्चु देवन्मारतु कण्टन्नेरं । ८३
पुरुहूतनीलमणिरुचिपोलॆ
तिरुनिऱंपूण्ट पुरुषरूपवुं ८४
भसितमाय्क्काणायितु सुरन्मार्क्कुं ।
मतिमऱन्नॊरु परमानन्दत्ताल् ८५

कीर्ति को भी बनाकर भक्तजन को त्रिवर्ग प्रदान करके उनके परमपद प्राप्त करने हेतु सबने मिलकर प्रार्थना और सेवा की। पुरहर (शिव) और कमलज (ब्रह्मा), इन्द्र आदि देव, और मुनिवरों ने प्रमुदित होकर वेदमन्त्रों के द्वारा (कृष्ण की) स्तुति की, सेवा की, और हाथ जोड़कर प्रणाम किया। ७२-७८ शरीर को सीधा रखते हुए बैठकर प्राणों की विजय द्वारा सुषुम्ना नाड़ी से अग्नि को ऊपर उठाया और चक्रों को जला दिया। तनन्तर स्थिर धारणा द्वारा अपने मूर्द्धा में हिरण्यतेज को जलाया। उस तेज ने शरीर को उद्भासित किया। तब सारे जगत् में एक पूर्ण आभा देदीप्यमान दिखाई दी। उसे देखकर देवगण प्रसन्न हुए। इन्द्र के नीलमणि की प्रभा के समान प्रभावाला, चमकनेवाला एक पुरुषरूप देवों को दिखाई

वळरेक्कल्पकप्पुतुमलर् कोरि-
त्तळिरोटे चोरिञ्ञितु मळपोले । ८६
तुटङ्ङि वाद्यङ्ङळलरिच्चु पुन-
रोटुङ्ङाते पाट्टुं पलतरं कूत्तुं । ८७
नटिक्कुन्नू नल्ल नटन्मारुं कोर्त्तु-
पिटिक्कयुं कूटस्तुतिक्कयुमेल्लां । ८८
कमलसंभवपुरहरादिक-
ळमरन्मारुमाय् नटन्नु मेल्लवे । ८९
परमात्मावाय परब्रह्ममूर्त्ति
परमानन्दरूपनेब्भजिप्पानाय् ९०
निजनिजलोकं गमिच्चारक्कालं
भजनीयन्तन्ने भजिक्कयुं चेय्तार् । ९१
पुनरुटन् द्वारावतियिल् मेविटुं
जननितन्नुटे पतियायुळ्ळोरु ९२
वसुदेवर्तन्नोटुरचेय्तीटिनाळ्—
कुसुमितलतातरुनिरकळुं ९३
पेरिके माळ्कुवानोरु मूलमेन्तु ?
तरणिबिंबवुं करुत्तिरिक्कुन्नु ९४
तेळिविल्लेतुं दिक्कुकळ्क्कुं दीपवुं
विळङ्ङुन्निल्लेतुं मनस्सुं माळ्कुन्नु । ९५

दिया। सबको भुलानेवाले परमानद के कारण कल्पवृक्षों के नये-नये पुष्प तरुण पल्लवों के साथ वर्षा के समान गिरे। ७९-८६ वाद्यों का उच्च घोष भी प्रारम्भ हुआ और न समाप्त होनेवाले गाने और विविध नृत्य। अच्छे-अच्छे नट हाथ में हाथ मिलाये नाच रहे हैं और साथ स्तुति कर रहे हैं। ब्रह्मा और शिव अन्य देवों के साथ धीरे-धीरे चले। परमात्मा, परब्रह्ममूर्त्ति, परमानन्दरूप का भजन करने के लिए उस समय सब अपने-अपने लोक गये। और भजनीय का भजन उन्होंने किया भी। तत्काल ही द्वारवती में रहनेवाली माता ने अपने पति वसुदेवजी से पूँछा— कुसुमित लताओं और वृक्षों के इस प्रकार सूखने का क्या कारण है ? सूर्यबिंब भी कुछ काला हो गया है। ८७-९४ दिशाएँ भी साफ़ नहीं हैं, दीप भी नहीं चमक रहे हैं, मन भी खिन्न सा है। वायु का मान्द्य भी कम हो गया है, भवनों में भी कुछ चमक नहीं है। समुद्र में स्नान करने जो यदुकुल गया था उसका कोई समाचार नहीं है। क्या कारण है कि वे

पवननु मान्द्यं कुरञ्ञु काणुन्नु
भवनङ्ङळक्कुमिल्लोरु निऱमेतुं । ९६
उदधितीर्थत्तिल् कुळिप्पान् पोयोरु
यदुकुलवृत्तान्तवुं केट्टिल्लेतुं । ९७
वरुवानित्र वैकियतुमेन्तव-
रुरुकुन्नु चित्तमतु निरूपिच्चु । ९८
हिमकिरणमण्डलं पणियुन्न
मम तनयन्तन् मुखसरोरुहं ९९
विळङ्ङिक्काणाञ्ञिट्टिनिक्कोरुन्मेषं
कळञ्ञतेन्तेन्नकणक्के तोन्नुन्नु । १००
तळरुन्नु कालुं करङ्ङळुमेल्लां
वळरुन्नु तापमिनिक्कु मेल्क्कुमेल् । १०१
वलत्तुकण्णाटुन्नितु तेरुतेरे
चलिक्कुन्नु तोळुं तुटयुमप्पुरं । १०२
पलवुं देवकि पतितन्नोटुट-
नलसभावं चोन्नळवुकाणायि । १०३
पिरिञ्ञ तेरुं धीरतयुमायेट्
करिञ्ञ भाववुं कलर्न्नतुनेरं १०४
अतिमन्दं मन्दं वरुन्नु दारुक-
नतुकोण्टुण्टोन्नु मनसि तोन्नुन्नु १०५
पुरकेयुण्टेन्टे सकनतुकोण्टु
पेरिके मन्दिच्चुवरुन्नतुमवन् । १०६

आने में इतनी देर लगा रहे हैं ? यह सोचकर मन पिघल रहा है। चन्द्रमण्डल को बनानेवाले मेरे पुत्र के मुखपद्म को विराजते न देखकर मुझे लगता है कि मेरा उन्मेष नष्ट हो गया है। मेरे हाथ-पैर शिथिल हो गये हैं और मेरा दुःख बढ़ता जा रहा है। ९५-१०१ दायीं आँख स्फुरण कर रही है और मेरे अंस और जांघ काँप रहे हैं। देवकी ने अपने पति से अपने दुःख के सम्बन्ध में जो कहा है उसकी थाह नहीं है। अपने रथ और धैर्य को खोकर, और बड़े विषण्ण भाव के साथ बहुत धीरे-धीरे दारुक आ रहा है। इस लिए एक बात मुझे सूझ रही है— मेरे पुत्र पीछे-पीछे आ रहे हैं यही कारण है कि यह धीरे-धीरे आ रहा है। यह सुनकर वैदर्भी प्रसन्न हुई और घर जाकर उसने बिस्तरा बिछाया। और

अतुकेट्टु वैदर्भियुं तेंळिवोटे
सदनं प्रापिच्चु विरिच्चु शय्ययुं १०७
उदकवुं भृङ्गारकङ्ङळिल् निऱ-
च्चुदितानन्दं पार्त्तिरुन्नरुळुन्पोळ् । १०८
पुरवासीजनमॊ॒ळुन्नळ्ळत्तु के-
ट्टिरुन्नारॆवयुं परमानन्दं पू- १०९
ण्टतिल् चिलरोटिप्पॆरुवळिक्कु चॆ-
न्नतिप्रमोदेन वळिक्कु नोक्कियुं ११०
स्तनितं केट्ट चातकङ्ङळॆप्पोलॆ
मनसि सम्मोदं कलर्न्नु मेविनार् । १११
अतुनेरमॊट्टङ्ङटुत्तु दारुकन्
मृतदेहं नटन्नटुक्कुन्नपोलॆ । ११२
भगवद्वृत्तान्तं पलरुं चोदिच्चा-
रकमे वॆन्तुवॆन्तवनुमन्नेरं । ११३
चॆऱुतु मण्टिनानविटॆ वीणान-
ङ्ङुरुण्टुतन्नत्तान् पॆरिकॆत्ताडिच्चान् । ११४
मळपॆय्युंपोलॆ नयनवारियु-
मॊ॒ळुकुन्नु करञ्ञुरुळुन्नु पारिल् । ११५
शिवशिव ! पुनरवनप्पोळ् वन्न-
विवशतयॆन्तु पऱयावल्लेतुं । ११६
चिलरोटुन्नितु चिलर् वीळुन्नितु
चिलर् मोहिक्कुन्नु चिलर् करयुन्नु । ११७

पात्रों में पानी भरकर आनन्द के साथ प्रतीक्षा करती रही । १०२-१०८ नागरिकजन उनका आगमन सुनकर अत्यन्त आनन्दित हुए और प्रतीक्षा करने लगे । उनमें से कुछ लोग राजमार्ग पहुँचे और बड़े प्रमोद के साथ रास्ता देखने लगे । आसमान में स्तनित को सुननेवाले चातक के समान सबके मन में सम्मोद हुआ । उस समय चलते मृतशरीर के समान दारुक तनिक निकट आया । बहुतों ने भगवान् का समाचार पूँछा । वह तो भीतर ही भीतर तप रहा था । जब वह तनिक आगे बड़ा तब गिरा और भूमि पर लोटता हुआ अपने ही ऊपर चोट पहुँचाने लगा । वर्षा के समान उसने आँसू गिराये और भूमि पर लोटता हुआ वह रोया । १०९-११५ हा शिव ! शिव ! उसकी जो उस समय लाचारी

चिलरिरिक्कुन्नु चिलर् किटक्कुन्नु
चिलर् विरय्क्कुन्नु चिलर् तोंळिक्कुन्नु । ११८
चिलर् चिलरेयुं पिटिच्चु केळुन्नु
चिलर् चिलरेच्चेन्नुटने पुल्कुन्नु । ११९
कटल्वर्ण्ण ! कण्ण ! करिमुकिल्वर्ण्ण !
कटल्मकळ् पुल्कुं मणिवर्ण्ण ! नाथ ! १२०
चतिक्कयो चेय्ततिनियारुळ्ळतेन्-
मतिक्कोरानन्दं नल्कुवानीश्वरा ! १२१
पोरुक्कुन्नु ञङ्ङळिनियतेङ्ङने ?
मरिक्कुन्नु वल्ल कणक्किलुमय्यो ! १२२
परिणतशशमृगधरबिंबं
परिचोटु कूप्पुं तिरुवदनवुं १२३
तेळिञ्ञ वेण्णिलावळ्ळेळुंवण्णं
विळङ्ङुं पुञ्चिरिप्पुतुमयुमय्यो १२४
मधुरमायुळ्ळोरमृतत्तेक्काळु-
मतिमनोज्ञमामरुळप्पाटुकळ् १२५
चेविकळिल् केळातिरिक्कुन्नाकिलो
शिवशिव ! पोटी पोरुतियेङ्ङने ? १२६
निरन्नुमञ्ञप्पट्टुटयुं काञ्चियुं
मरन्नुकूटुमो तुटयिणक्कान्पुं ? १२७

हुई उसका वर्णन करना असम्भव है। कुछ लोग दौड़ रहे हैं, कुछ लोग गिर रहे हैं। कुछ लोग बेहोश हो रहे हैं, कुछ लोग रो रहे हैं। कुछ लोग बैठे हैं, कुछ लोग लेटे हैं, कुछ लोग काँप रहे हैं, कुछ लोग छाती पीट रहे हैं, कुछ लोग औरों को पकड़ते हुए रो रहे हैं, कुछ लोग कुछ औरों को छाती लगा रहे हैं। हे सागर के वर्णवाले ! हे कान्हा ! हे कान्हा ! हे घनश्याम ! हे नाथ ! हे इन्द्रनील मणि के वर्णवाले जिसको समुद्रपुत्री (लक्ष्मी) आलिङ्गन करती है ! अन्त में तुम ने धोखा दिया है। अब कौन है जो हमको आनन्द देगा ? हे ईश्वर ! अब हम इसको कैसे सह सकते हैं ? अब किसी प्रकार मरना ही शेष है। ११६-१२२ वह शुभ वदन जिसके सामने पूर्णिमा का चन्द्रबिंब भी झुकता है, मुस्कराहट की वह शोभा जो चमकनेवाली चाँदनी को भी परास्त करे, वह वाणीविलास जो मधुर अमृत से भी अधिक मन और बुद्धि को आनन्द देनेवाला है, अगर कान में सुनाई न देगा तो शिवशिव ! हे रक्षक ! शान्ति कैसे होगी ? वह

पलरुमोरोरोविधमिवण्णमे
पलतरं चॊल्लिक्करयुन्ननेरं १२८
असुरवैरियॆ मनसि चिन्तिच्चु
वसुदेवक्कुं देवकिक्कुमन्नेरं १२९
जनिच्च सन्तापं पऱञ्ञुकूटुवान्
जनिच्चवर्कळिलॊरुत्तरिल्लल्लो । १३०
विदर्भजादि वल्लभमार्क्कुमप्पो-
ळुदिच्चु सन्तापमतिलुपरमत्रे । १३१
पुरन्दरात्मजनिवयॆल्लां कण्टु
परन्पुरुषनॆ मनसि चिन्तिच्चु । १३२
इरुन्नु तन्नत्तान् मऱन्नॊरित्तिरि-
पऱञ्ञु दारुकनरुळ्प्पाटॆल्लां । १३३
यदुवरनामाहुकन्तन्नोटति-
द्रुतं चॊल्लेणमॆन्नतुमुरचॆय्तान् । १३४
उटनॆ पारिजातवुमतिद्रुतं
नटकॊण्टु मेल्पोट्टुयर्न्नु वेरोटे । १३५
नटन्नॊराहुकन् वळियॆ पोय् चॆन्नु
किटन्न यादवरुटलॆल्लां कण्टु । १३६
चितयुमर्ज्जुनन् चमच्चानन्नेर-
मतिसुगन्धचन्दनतरुक्कळाल् । १३७

पीताम्बर, वह काञ्ची और वह ऊरुस्तम्मद्वय कैसे भूले जा सकते हैं ? जब भिन्न-भिन्न लोग इस प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार से विलाप कर रहे थे तब असुरों के शत्रु को याद करते हुए वसुदेव और देवकी के भीतर जो सन्ताप पैदा हुआ उसका वर्णन कर सकनेवाला प्राणियों में कोई नहीं है । १२३-१३० वैदर्भी आदि कान्ताओं को तो उससे भी अधिक सन्ताप पैदा हुआ । अर्जुन ने तो यह सब देखकर परमपुरुष का अपने मन में ध्यान किया । अपने को भूलकर थोड़ी देर बैठे । तब दारुक ने अपनी पूरी बातें कहीं । यह भी कहा कि यदुवर आहुक को सभी बातें बतला देना । तुरन्त ही पारिजात जल्दी निकला और जड़ों के साथ ऊपर को उठा । आहुक तो सीधे चला और उसको मरे यादवों के शव दिखाई दिये । तब अर्जुन ने अतिसुगन्धवाले चन्दन की लकड़ियों से चिता बनायी । १३१-१३७ मधुरिपु (कृष्ण) के शरीर के साथ चिता पर हो

मधुरिपुतिरुवुटलोंटु चेर्न्नु
चितयिलाम्मारु मटियाते चाटि १३८
मधुमौळिकळां प्रणयिनिमारुं
मधुमथनन् तन्नुटलोंटु चेर्न्नार् । १३९
लभिच्चु सायुज्यमवर्क्कंतुकालं
तपस्सु पण्टेट चरिच्चतुमूलं । १४०
तनयनाय् वन्नु पिरन्न कृष्णने
मनसि चिन्तिच्चु मरणं प्रापिच्चु १४१
वसुदेवाख्यनामेळां प्रजापति
वसुमतिपतियोंटु चेर्न्नीटिनान् । १४२
चितमेलाम्मारु पतिच्चु देवकि
पतियुं तानुमाय् सुतनोंटु चेर्न्नाळ् । १४३
पतिनाङायिरं प्रणयिनिमारुं
पतियोंटु चेर्न्नार् पुनरतुकालं । १४४
मुळुकि मेल्लवे करयेरि नामे-
न्नळकोंटे तोन्नि मुहुरवर्क्केल्लां । १४५
यदुक्कळ्क्केल्लावर्क्कुमुदकपिण्डङ्ङळ्
विधिच्चवण्णमे कळिच्चु पार्थनुं । १४६
समुद्रं द्वारकापुरत्तेयुं मुक्कि
समस्तं माधवगृहमोळिञ्ञेल्लां । १४७

जाने के लिए बिना हिचक कर उनकी मीठी आवाज़वाली प्रणयिनियाँ उस पर कूद पड़ीं और मधुमथन के शरीर के साथ हो गयीं। उनको उस समय सायुज्य मिला क्योंकि उन्होंने पहले ही बहुत तपस्या की थी। कृष्ण को जिन्होंने अपने पुत्र के रूप में जन्म दिया था, अपने मन में ध्यान करते हुए सातवें प्रजापति वसुदेव ने मृत्यु को प्राप्त किया और भूमि के पति के साथ एक हो गये। देवकी भी चिता पर कूद पड़ी और अपने पति के साथ पुत्र से एक हो गयी। उस समय (कृष्ण की) सोलह हज़ार प्रणयिनियाँ भी अपने पति के साथ एक हो गयीं। १३८-१४४ उनको ऐसा लगा कि हम सब डूब कर फिर तट पर चढ़ गयी हैं। अर्जुन ने सभी यदुओं के लिए यथाविधि उदक्रिया की। समुद्र ने कृष्ण के भवन को छोड़कर सारी द्वारकापुरी डुबो दी। अर्जुन तो अवशिष्ट नारीजन को लेकर विषण्ण भाव से निकल पड़े। जब वे एक बड़े जङ्गल से

ओंळिञ्ञुळ्ळ नारीजनत्तेयुंकोण्टु
विषण्णनाय् पार्त्थन् नटन्नु वैकाते । १४८
पेरुत्त काट्टूटे नटक्कुन्न नेर-
मुरत्त काट्टाळरटुत्तारन्नेरं १४९
करुत्तेरुं सिहत्तोटु कलहिप्पान्
कुरच्चु नाय्क्कळ् चेन्नटुक्कुन्नपोले । १५०
झटिति क्रुद्धनाय् पुरुहूतात्मज-
नटुत्तु युद्धत्तिनोरुमिच्चनेरं १५१
कुलय्क्कायील विल्लेटुक्कायीलोट्टुं
वलिक्कायीलस्त्रङ्ङळुं तोन्नीलेतुं । १५२
विषभिषङ्मन्त्रनिरुद्धनायोरु
विषधरनेन्नकणक्के फल्गुनन् । १५३
निरुद्योगंपूण्टु किमपि निन्नप्पोळ्
करुत्तेरु काट्टाळरुमटुत्तेटं १५४
परिच्चुकोण्टार् नारिकळेयुमप-
हरिच्चारर्त्थमुळ्ळतुं बलालप्पोळ् । १५५
इतु वरुवतिनवकाशमेन्तु
मधुरिपो ! मुरमथन ! दैवमे ! १५६
निखिलं निन्तिरुवटियुटे माया-
विकृतियत्रे निश्चयं जगत्त्रयं । १५७
अशक्तनाय् वन्नोनिवरे रक्षिप्पा-
नशक्तुवाय् मुन्नमिरुन्नेनल्लो ञान् । १५८

निकल रहे थे तब जङ्गली लोग उनके पास पहुँचे; जैसे शक्तिशाली सिंह से लड़ने के लिए कुत्ते भोंकते हुए उसके पास जाते हैं। तुरन्त ही क्रुद्ध होकर जब अर्जुन युद्ध करने के लिए निकट पहुँचा तब धनुष की डोरी न लगा सका, बाण न उठा सका, कोई अस्त्र न खींच सका, उसको कुछ सूझा ही नहीं। १४५-१५२ उस समय फल्गुन तो विषवैद्य के द्वारा निरुद्ध सर्प के समान हो गया। जब इस प्रकार लाचार होकर खड़ा हो गया तब शक्तिशाली जंगलीजन बहुत निकट पहुंचे और नारीजन को छीन लिया और जो कुछ धन था उसे बलात्कार से लूट लिया। हे मधुरिपो ! हे मुरारे ! हे भगवन् ! क्या कारण है कि यह घटना हुई ? निस्सन्देह यह सारा जगत् आप भगवान् की माया विकृति है। मैं इनकी

इनि ञान् भूमियिलिरुन्नतु मति
वनचरन्मारालू परिभूतनायेन् । १५९
करञ्ञुमोरोन्नु परञ्ञुमिङ्ङने
पिरिञ्ञ नाथने निनच्चु खेदिच्चुं १६०
नटक्कुन्ननेरं विधिवशाल् पुन-
रटुत्तु वेदव्यासनेयुं काणायि । १६१
करुणापीयूषनिधियेक्कण्टवन्
चरणतारिण वणङ्ङि वीळ्कयुं १६२
पोंटुपोंटेप्पोट्टिक्करकयुं कण्णी-
रुटनुटन् वीणङ्ङोलिक्कयुं मटि- १६३
ल्लुटयवरेन्नु परकयुमुळ्ळं
किटुकिटुक्कयुं मुनि कण्टन्नेर- १६४
मरुळिच्चेय्तितु करुणया नर-
वरनामर्ज्जुननोटु कनिवोटे— १६५
निनक्कितुकोण्टोरिळप्पमिल्लेतुं
निनच्चु दुःखियाय्कमरेशात्मज ! १६६
त्रिभुवनत्तिङ्कलोरुवनुण्टो चो-
ल्लिह मानक्षयमनुभवियाते ? १६७
ओरुकालं मानं वरुमभिमानं
वरुमोरुकालमिटकलर्न्नुळ्ळु । १६८

रक्षा करने में अशक्त बना जो पहले बिलकुल शत्रुरहित रहा। मेरा इस भूमि पर रहना अब समाप्त होना चाहिये, मैं जंगली लोगों से पराजित हो गया हूँ। १५३-१५९ रोते हुए और इस प्रकार विलाप करते हुए, दिवंगत नाथ के स्मरण से दुःखित होकर जब वे चल रहे थे तब विधिवश वेदव्यासजी फिर दिखाई दिये। उस करुणामृतनिधि को देखकर अर्जुन ने चरणयुगल की वन्दना की और फूटफूटकर रोया और उसके आँसू जल्दी-जल्दी गिरे, और उसने कहा "अब मेरा और कोई नहीं है", और उसका अन्तःकरण काँपने लगा। यह देखकर मुनि ने बड़ी दया से नरवर अर्जुन से कहा— "इससे तुम्हारी कोई हानि नहीं हुई है। हे इन्द्रपुत्र ! यह सब सोचकर दुःखित न हो जाओ। १६६ कहो ! इस संसार में कोई है जिसने मानक्षय का अनुभव न किया हो ? । कभी मान होता है और कभी अभिमान होता है। दोनों का मेल होता रहता ही है। जनन और मरण, स्वर्ग और नरक, सुख और दुःख आदि सभी द्वन्द्व, सम्पत् और

जनिमृतिस्वर्ग्गनरकयामिनि-
स्सुखदुःखाद्यङ्ङळखिलद्वन्द्वङ्ङळ् । १६९
जगति सम्पत्तुं विरवॊटापत्तुं
भगवानुपोलुं भविक्कुन्नु नूनं । १७०
ऒरु वरिषत्तिन्नुटनें वेनलुं
वरुमतिनिल्ल विकल्पमेतुमे । १७१
दशदिशि कीर्त्ति परत्तिटुन्नॊरु-
दशरथनृपप्रवरनन्दनन् १७२
दशमुखकालनमितविक्रमन्
दशशतच्छदसुहृल्कुलजातन् १७३
अभिमानिकुलशमनीश्वर-
नभिमानमुळ्ळ पुरुषरिल् वन्पन् १७४
स्वधर्म्मदारापहरणवुमव-
न्नधिगतमायिततु धरिक्क नी । १७५
अवनियिलॊरुनरनुमव्वण्ण-
मवमानमनुभविच्चीलोर्क्कणं । १७६
वनितमारिवर् वळञ्ञदेहनां
मुनिवरन्तन्नॆप्परिहसिक्कयाल् १७७
चतिच्चु काट्टाळरटवियिलाट्टि-
यपहरिच्चुपोकॊरुनाळॆन्नल्लो १७८
द्विजशापं तटुक्करुतॊरुवर्क्कुं
विजय ! कण्टतिल्लयो नीतानिप्पोळ् । १७९

विपत् इस जगत् में भगवान् के भी अवश्य होते हैं । एक वर्ष में ग्रीष्म भी होगा इसमें कोई सन्देह नहीं है । दसहों दिशाओं में अपनी कीर्ति फैलानेवाले राजा दशरथ के सुपुत्र, दशमुख के नाशक, अमितविक्रम, सूर्यवंश में पैदा हुए, १६७-१७३ अभिमानियों के कुल का नाश करनेवाले ईश्वर, अभिमानवाले पुरुषों में श्रेष्ठ की भी स्वधर्मपत्नी का अपहरण हुआ, इस बात का स्मरण करो । पृथिवी में किसी भी मनुष्य नें इस प्रकार का अपमान अनुभव नहीं किया है । वक्र देह वाले मुनिवर का परिहास करने के कारण 'जङ्गली जाति ने इन स्त्रियों को जङ्गल में भागकर छीन लिया' ऐसा ही तो ब्राह्मण ने शाप भी दिया था । द्विज-शाप को कोई टाल नहीं सकता । हे अर्जुन ! तुम देख रहे हो । तुम्हारे शौर्य में कोई

तव शौर्यत्तिनु कुऱवुण्टाकय-
ल्लवनिदेवेशनुटे शापत्तिनाल् १८०
अबलमार्क्किन्नितकप्पॆट्टु भवा-
नबलनाकयल्लतु धरिच्चालुं । १८१
प्रियस्वभावनायुऱच्च बन्धुवाय्
वयस्यनायिरुन्नजन् जनार्दनन् १८२
मरिच्चुपोयितोर्त्तु निनच्चो निन्
करच्चिलाकुन्नु शिवशिव ! चित्रम् ! १८३
निनक्कुं मूढत्वं पॆरुतत्रे पार-
मॆनिक्कतोर्त्तोळं चिरियाकुन्नु केळ् । १८४
मरिक्कयुमिल्ल जनिक्कयुमिल्ल
मुरद्वेषि जगत्पति नारायणन् । १८५
धरिच्चिरिक्कुन्नु मनसि नीयुम-
तिरिक्कॆ शोकिप्पानवकाशमिल्ल । १८६
जगदखिलवुं निऱञ्ञिरिक्कुन्न
भगवानुण्टो जन्मवुं मरणवुं ? १८७
धरणिभारवुं कळञ्ञु तन्नुटे
परिकरङ्ङळां यदुकुलत्तॆयुं १८८
ऒटुक्कत्तॊक्कवे मुनिशापव्याजा-
लॊटुक्किक्कूटि तङ्ङळिल् पिणङ्ङिच्चु १८९
परन्नुटे मायामहिमयोर्त्तोळ-
मॊरुवनुमुळ्ळिलऱिञ्ञुकूटुमो ? १९०

कमी नहीं आई है। ब्राह्मण के शाप के कारण स्त्रियों की यह घटना हुई है, यह नहीं कि तुम दुर्बल हो गये हो, जान लो। १७४-१८१ प्रिय-स्वभाव, स्थिर बन्धु, मित्र, अज, जनार्दन का जो देहान्त हो गया उसका स्मरण करते हुए क्या तुम रो रहे हो? हाँ! शिवशिव, कैसा विचित्र है! तुम तो बड़े मूढ़ हो, यह देखकर मुझे हँसी आती है। जरा सुन लो! मुर का शत्रु जगत्पति नारायण न मरता है और न जन्मता है। तुमने यह सब समझ रखा है फिर भी तुम दुःखित हो गये हो, क्यों? सारे जगत् में व्याप्त भगवान् का जन्म कहाँ, मरण कहाँ? । १८२-१८७ पृथिवी के भार को नष्ट करके, अपनी बिरादरी यदुकुल को समाप्त करने-हेतु मुनिशाप को कराया और उनको आपस में लड़वाया। पर की

अमरकुलप्पेरुमाळ्तान् मुन्नं
समरत्तिन्नु पण्टट्टुक्कुन्नेरत्तु १९१
रथत्तिन्मेल्निन्नु परञ्ञुतन्नीले
मधुद्वेषि निन्नोटुटनिन्द्रात्मज ! १९२
निनक्कु विश्वासं वरुवानल्लयो
तनिच्चु विश्वरूपवुं काट्टित्तन्नु १९३
जलरेखयोटु सममाय् वन्नितो
वलरिपुसुत ! निनक्कतोक्कवे ? १९४
परमात्मज्ञानमुपदेशिच्चतु
परमात्मावाय भगवानल्लयो ? १९५
कुरुवीर ! निन्नोट्टिनि मट्टारानुं
सुरवरात्मज ! परञ्ञिटेणमो ? १९६
जगदशेषवुं निरञ्ञिरिप्पोरु
भगवान् तन्मायाविलसितमेल्लां । १९७
इनि निङ्ङळ् भूमि प्रदक्षिणं चेय्तु
मनसा संन्यसिच्चखिलकर्म्मवुं १९८
नियतिकोण्टुळ्ळ पृथक्भावं तीर्न्नु
लयिक्क कारणमतिङ्कल् निङ्ङळुं । १९९
मुनिवरन् द्वैपायनन् वेदव्यासन्
कनिवोटीवण्णमरुळ्चेय्तनेरं २००

माया की महिमा को कौन समझ सकता है ? देवकुलों के नाथ ने पहले ही, जब महायुद्ध प्रारम्भ होनेवाला था, तब रथ पर खड़े होकर, हे इन्द्रपुत्र! तुमको स्वयं उपदेश दिया था। तुमको विश्वास दिलाने ही के लिए तो उन्होंने तुमही को अपना विश्वरूप दिखलाया था। वह सब उपदेश अब तुम्हारे लिये जलरेखा के समान हो गया है, क्या ? । १८८-१९४ परमात्मा भगवान् ही ने तो तुमको परमात्मा का ज्ञान दिया था ! हे कुरुवीर ! हे इन्द्रपुत्र ! तुमसे यह सब और किसी के कहने की क्या आवश्यकता है ? सारे जगत् को व्याप्त किए हुए भगवान् की माया का ही यह सब विलसित है। अब तुम लोग पृथिवी का प्रदक्षिण करो, और सभी कर्मों का मन से संन्यास करो, नियति के कारण जो भेदभाव है उसे त्यागो और कारण में लीन हो जाओ। मुनिवर द्वैपायन वेदव्यास के इस प्रकार कहने पर अर्जुन ने अपने चित्त में जागकर, वन्दना की और मुनिवर अन्तर्धान हो

उणर्न्नु चित्तमोट्टमरेशात्मजन्
वणङ्ङिनान् मङ्ङिञ्जतु मुनीन्द्रनु । २०१
अतुकालं धर्म्मात्मजनु भीमनो-
टतिखेदंपूण्टु पङ्ञानीवण्णं— २०२
अनुजन् द्वारकपुरिक्कु पोयव-
निनियुं वन्नीलेन्ततिनु कारणं ? २०३
कळिञ्ञतु मासं मुळुवन् नालिप्पोळ्
वळङ्ङीलिङ्ङु पोरुवानेन्नो नाथन् ? २०४
पिळच्चु काणुन्नु निमित्तङ्ङळेल्लां
कुळप्पमेतानुं वरिककौण्टत्रे । २०५
पेरिकें मङ्ङिप्पोयितु धरातलं
निङन्न दीपवुं पोलिञ्ञेट्टं मङ्ङि । २०६
मरुवुं मन्दिरं कणक्केयाय्वन्नु
परिषमाय् वीयुन्नितु पवननुं । २०७
कृतिकळुळ्ळिलुं कुङञ्ञतुन्मेषं
हृदि मुनिजनत्तिनुमिल्लानन्दं । २०८
पशुक्कळुं चेविकळुं कूप्पिच्चेट्टं
विशप्पुमोराते मुळुत्त चिन्तया २०९
करञ्ञङ्ङोटिङ्ङोट्टुळन्नु निल्क्कुन्नु
पिरिञ्ञोरु पैतङ्ङळेयुं वेण्टील । २१०
पशुक्किटाङ्ङळुं कुटिक्कुन्नील पाल्
पशुक्कळ् तङ्ङळुं कुटिप्पिक्कुन्नील । २११

गये । १९५-२०१ उन दिनों युधिष्ठिर ने दुःखित होकर भीम से इस प्रकार कहा—हमारा छोटा भाई जो द्वारका गया था अभी लौटा नहीं, क्या कारण है ? अब चार महीने पूरे हो गये । क्या नाथ का यहाँ आना स्वीकार नहीं हुआ ? । अब दुर्निमित्त दिखाई दे रहे हैं । कोई विपत्ति के आने के कारण होगा । सारा धरातल मन्दप्रभ हो गया और भरा दीप भी ठीक से नहीं जल रहा है । भवन अब मरु के समान हो गया है । और तेज हवा चल रही है । प्रजाओं के भीतर उन्मेष कम हो गया और मुनिजन के हृदय में भी आनन्द नहीं है । २०२-२०८ गायें भी अपने कान को खड़ा करके, भूँखी होकर और बड़ी चिन्ता के साथ इधर-उधर भटककर खड़ी हो गयी हैं । अपने अलग हुए बछड़े की परवाह नहीं

शठन्मारानन्नं तेळिञ्ञु काणुन्नु
स्फुटङ्ङळाकुन्निल्लरविन्दङ्ङळुं । २१२
दलङ्ङळुं माळ्कि मरङ्ङळुमेल्लां
फलङ्ङळुं कोळिञ्ञितल्लो काणुन्नु । २१३
तेळिञ्ञ तीर्थङ्ङळ् कलङ्ङिक्काणुन्नु
विळङ्ङिट्टुं ज्योतिर्ग्गणङ्ङळुं मङ्ङि । २१४
ज्वलिक्कुन्नीलाज्याहुतिकोण्टग्नियुं
ज्वलिक्किलो पोट्टिप्पोरिञ्ञिटत्तूटु
वलत्तुभागत्तो वेटिञ्ञु काणुन्नु । २१५
पलतुमेवं दुर्न्निमित्तङ्ङळ् कण्टुं
वलरिपुसुतन् वरवु काणाञ्ञुं २१६
धरणिमंगलमणिमयदीपं
धरणियें वेटिञ्ञुटन् मङ्ञ्ञितें- २१७
न्नकतारिल् तोन्निवरुन्नितु मम
सकल लोकनायक ! सनातन ! २१८
भगवाने ! परपुरुष ! माधव !
शरणमेन्नु धर्म्मजन्मनतारिल् २१९
करुति मारुतियोटु परञ्ञप्पोळ्
वरुन्नतु कण्टु धनञ्जयनतन्ने । २२०
करिञ्ञभाववुं कलर्न्नतुनेरं
करञ्ञवन् चेन्नु युधिष्ठिरन्तन्टे २२१

करती हैं। बछड़े स्वयं दूध नहीं पीते हैं और गायें पिला भी न रही हैं। शठों के मुँह प्रसन्न दीख रहे हैं और अरविन्द खिल नहीं रहे हैं। वृक्षों के पत्ते सब गिर गये हैं और फल भी गिरे पड़े हैं। शुद्ध जल के तीर्थ अब गँदले हो गये हैं और चमकनेवाले ज्योतिर्गण अब हतप्रभ हैं। आज्याहुति से भी अग्नि नहीं जल रहा है; अगर जले भी तो बायीं ओर आवाज़ करता हुआ जलता है, दायीं ओर बिलकुल खाली पड़ा है। २०९-२१५ इस प्रकार अनेक दुर्निमित्त देखकर, और इन्द्रपुत्र के न आने के कारण भूमिमण्डल के मणिमय दीप ने भूमि को छोड़ दिया और अदृश्य हो गये— ऐसा मुझे भीतर सूझ रहा है। हे सकललोकनायक ! सनातन ! भगवान् ! हे परमपुरुष ! हे माधव ! तुम ही शरण हो। ऐसा भीतर सोचकर युधिष्ठर ने भीम से कहा; तब धनञ्जय आते हुए दिखाई दिये। शोक का अनुभव करते हुए उस समय वह रोते हुए जाकर युधिष्ठिर के चरणों

चरणतारिल् वीणवस्थयॆल्लामे
परञ्ञु भावं कॊण्टतुनेरमुळ्ळिल्
अरिञ्ञु धर्म्मजनवस्थ मिक्कतुं । २२२
करञ्ञु कण्णुनीर् तुटच्चु फल्गुनन्
पिरिञ्ञ नाथनॆ मनसि चिन्तिच्चुं २२३
परञ्ञु भूमिक्कॊरलङ्कारमायि-
प्पिऱन्नु देवकितिरुमकन् कृष्णन् । २२४
वॆटिञ्ञु भूमिदेवियॆयुमॆन्नॆयुं
पॊटुन्ननवे पोय्मऱञ्ञरुळिनान् । २२५
इवण्णमॆन्नॆयुं करयुमाराक्कि
सुवर्ण्णवैकुण्ठं त्वरितं प्रापिच्चान् । २२६
यदुकुलमॆल्लां मुटिञ्ञु तङ्ङळिल्
मधुपानं चॆय्तु मतिमऱन्नॊट्टं । २२७
कलहिच्चु मुनिवरर्शापवाक्य-
बलं कॊण्टुण्टाय मुसलत्तालुटन् । २२८
अतु केट्टु धर्म्मतनयन्तन्नुळ्ळिल्
अधिकं वाच्चॊरु परितापं चॊल्वान् २२९
अरुतॊरुवनुमतुमकतारि-
लुरुविचारंकॊण्टटक्कि मॆल्लवे । २३०
भगवल्पादङ्ङळ् मुळुत्त भक्तिकॊ-
ण्टकतारिल् नन्नायुऱप्पिच्चन्नेरं । २३१

पड़े और सारी स्थिति को उन्होंने भाव के साथ कह सुनाया। तब युधिष्ठिर ने सारी स्थिति को समझ लिया। २१६-२२२ अर्जुन ने रोकर आँसू पोंछा और अलग हुए नाथ का स्मरण करते हुए बोले कि देवकी के सुपुत्र कृष्ण ने भूमि के एक अलंकार के रूप में जन्म लिया था। भूमिदेवी को और मुझे छोड़कर यकायक चले गये, विराजते हुए। इस प्रकार मुझे भी रुलाते हुए तुरन्त ही अपने वैकुण्ठ सिधारे। सारा यदुकुल-जन मद्यपान करके अपने को भूलकर आपस में लड़े और मुनिवरों के शाप के कारण जो मुसल पैदा हुआ उससे लड़कर समाप्त हुए। २२३-२२८ यह सुनकर युधिष्ठिर के दिल में जो दुःख पैदा हुआ उसका वर्णन करना किसी के वश में नहीं है। इसलिए उसे भीतर ही भीतर बहुत सोचकर दबा दिया। पूर्ण भक्ति से भगवान् के चरणयुगल को अपने दिल में स्थिर कर दिया।

विरहं कोण्टु गल्गदवर्णङ्ङळाल्
पेरिकैब्बाष्पवुं तुरुतुरे वार्त्तु
नयनवुं तुटच्चमितरोमाञ्चं । २३२
जयजय कृष्ण ! जयजय कृष्ण !
जयजय राम ! जगदभिराम ! २३३
जयजय देव ! करुणावारिधे !
जयजय देव ! वसुदेवात्मज ! २३४
जय मुकुन्द ! देवकीसूनो ! कृष्ण !
जयजय ! नन्दतनय ! गोविन्द ! २३५
जय यशोदानन्दन ! जनार्द्दन !
जय जगल्सृष्टिस्थितिलयकर ! २३६
जय विरिञ्चमाधव ! शिवमय !
जय धृतगुणत्रयमूर्त्ते ! जय ! २३७
जयजय जगल्पवित्र ! सत्कीर्त्ते !
जयजय चित्रचरित्र ! केशव ! २३८
जयजय वृष्णिप्रवर ! कंसारे !
जयजय बाणकरमदहर ! २३९
जयजय जनिमृतिभवहर !
जय विदर्भजापते ! जयजय ! २४०
जयजय धराधर ! मुरहर !
जयजय ! धरापरा ! परापरा ! २४१

विरह के कारण गद्गद स्वर से बहुत आँसू लगातार गिराये और अमित रोमाञ्च के साथ आंखें पोंछीं। हे कृष्ण ! तुम्हारी जय हो ! हे कृष्ण तुम्हारी जय हो ! हे राम ! तुम्हारी जय हो ! हे जगदभिराम ! हे देव ! हे करुणासागर ! तुम्हारी जय हो ! हे देव ! हे वसुदेवपुत्र ! तुम्हारी जय हो ! हे मुकुन्द ! देवकीपुत्र ! कृष्ण ! तुम्हारी जय हो ! हे नन्दतनय ! हे गोविन्द ! तुम्हारी जय हो ! २२९-२३५ हे यशोदानन्दन ! जनार्दन ! तुम्हारी जय हो ! हे जगत् की सृष्टि, स्थिति और लय करनेवाले ! जय हो ! हे विरिञ्चि माधव ! शिवमय ! तुम्हारी जय हो ! हे गुणत्रय धारण करनेवाली मूर्ति से युक्त ! तुम्हारी जय हो ! हे जगत् के पवित्र ! हे सत्कीर्ति ! तुम्हारी जय हो ! हे चित्रचरित्रवाले ! केशव ! तुम्हारी जय हो ! हे वृष्णिप्रवर ! हे कंसारि ! जय हो ! हे

जयजय धराधर ! जयजय
जय धराधर ! कळेबर ! जय २४२
जयजय धरारे ! हर ! जय !
जय सुरासुरनमस्कृत ! जय ! २४३
जय चराचरगुरो ! जयजय
जय पराशरसुतनमस्कृत ! २४४
जयजय परापर ! सदाधार !
जयजय पर परम ! पाहि मां । २४५
जय परमात्मन् ! परब्रह्मात्मक !
जय नारायण ! नरकारे ! जय २४६
जयजय भक्तजनपरायण !
जयजय नाथ ! शरणं दैवमे ! २४७
शमदमयमनियमचेतसा
शमननन्दनन् कुरुकुलवरन् २४८
नृपतियाय्पुनरथ परीक्षित्ति-
न्नभिषेकंचेय्तु सचिवन्मारोटुं । २४९
पटहशंखादि विविधवाद्यङ्ङळ्
पुटपुळङ्ङवे सहजन्मारुमाय् २५०
धरणिदेवतापसवरर्क्कॊटं
पौरुळुं दानंचेय्तभिमतवस्तु २५१

बाण के कर का मद का नाश करनेवाले ! जय हो ! हे जन्म, मरण और भव का नाशक ! हे वैदर्भी के पति ! तुम्हारी जय हो ! हे धराधर ! मुरहर ! हे धरापर ! हे परापर ! हे धराधर ! तुम्हारी जय हो ! हे धराधर ! कलेवर ! तुम्हारी जय हो ! २३६-२४२ हे धरारे हर ! तुम्हारी जय हो ! हे सुर और असुरों के नमस्कृत ! तुम्हारी जय हो ! हे चरों और अचरों के गुरु ! तुम्हारी जय हो ! हे पराशर पुत्र को नमस्कृत ! तुम्हारी जय हो ! हे परापर, सदाधार ! हे पर ! परम ! मेरी रक्षा करो ! हे परमात्मन् ! हे परब्रह्मात्मक ! हे नारायण ! नरकारे ! तुम्हारी जय हो ! हे भक्तजन के एकमात्र आश्रय ! हे नाथ ! हे ईश्वर ! तुम्हारी जय हो ! कुरुकुलवर युधिष्ठिर, शम, दम, यम और नियम का ध्यान करते हुए परीक्षित् को राजा के रूप में सचिवों के साथ अभिषेक करके, २४३-२४९ पटह, शंख आदि विविध वाद्यों के घोष के

सचिवभृत्यादि जनत्तिनु नल्कि
स्वजनतृप्तियुं वरुत्ति मेल्क्कुमेल् २५२
निवृत्तनायाशु पुरप्पेटुवानाय्
सुवृत्तवान् कल्पिच्चितु मुहूर्त्तवुं । २५३
विचित्रं पाण्डवचरित्रं मेलेटं
वचिप्पतिन्नेटं पणियुण्टोर्त्तोळं । २५४
पवित्रमेन्नयुमतु केळ्क्केण्टुकिल्
सुविस्तरं चोल्वानरुतु निङ्ङळ्क्कु २५५
चुरुक्किच्चोल्लां वेण्टुकिल् ञानेन्नल्ला-
मुरत्ताळ् पैङ्किळिमकळुसक्कालं । २५६

॥ मौसलं समाप्तम् ॥

उठते, अपने भाइयों के साथ ब्राह्मणों और तापसों को धन का दान करके, सचिव, भृत्य आदि जन को, उनके इष्ट वस्तुओं का दान करके अपने स्वजन की उत्तरोत्तर तृप्ति करके संपूर्णतया निवृत्त होकर निकल जाने के लिए उस सदाचारवाले ने मुहूर्त निश्चित किया। पाण्डवों का चरित्र विचित्र है। आगे की कथा जितनी जानती हूँ उतनी कहने में श्रम बहुत होगा। वह तो अत्यन्त पवित्र कथा है। अगर सुनना है तो विस्तर से सुनाना तो असंभव है। आप लोगों को संक्षेप में बतला दूंगी, अगर सुनना है। इस प्रकार शुकी ने उस समय निवेदन किया। २५०-२५६

॥ मौसलपर्व समाप्त ॥

महाप्रस्थानं

बाले ! किळिमकळे ! कथाशेषवुं
काले पऱक नी सानन्दमोमले ! १
पालाळिवर्ण्णन् परमन् परापरन्
पालाळिमानिनीवल्लभनीश्वरन् २
कालस्वरूपन् करुणाकरन् परन्
नीलांबुदनिऱमुळ्ळ निरञ्जनन् ३
नीलांबुजायतलोचनन् माधवन्
भूलोकवुं परिपालनं चॆय्तुतन्- ४
कालं कळिच्चु वैकुण्ठमकंपुक्क-
कालं युधिष्ठिरनादिकळुं कृष्ण- ५
लीलकळ् चिन्तिच्चु सर्व्वमुपेक्षिच्चु
बालनु राज्याभिषेकवुं चॆय्तॊरु- ६
शेषमनुष्ठिच्चतॆन्तॆन्नु चॊल्क नी
दोषमशेषमकलुवान् मामकं । ७
शेषं कथ पऱञ्ञीटुवनॆङ्किल् ञान् ।
एषणापाशङ्ङळ् छेदिच्चु धर्म्मजन् ८
विष्णुकुलाधिपन् जिष्णुजसारथि
जिष्णुमुखामरसेवितन् केशवन् ९
कृष्णन् तिरुवटियुं बलभद्ररुं
वृष्णिकळुं कलिकालमटुत्तप्पोळ् १०

महाप्रस्थान पर्व

हे बाले ! हे शुकि ! कथा का शेष यथासमय सानन्द सुनाओ ! क्षीरसागर के समान वर्णवाले परम, परापर, क्षीरसागर की पुत्री के पति, ईश्वर, कालस्वरूप, करुणाकर, पर, नीलमेघ के वर्णवाले, निरञ्जन् नील-कमल के समान आयत लोचनवाले माधव के भूलोक का परिपालन करके, अपना समय समाप्त होने पर वैकुण्ठ प्राप्त करने के बाद, युधिष्ठिर आदिकों ने कृष्ण की लीलाओं का स्मरण करते हुए, सर्वत्याग करके एक बाल का राज्याभिषेक करने के बाद क्या क्या किया, यह बतलाओ ताकि मेरे सब दोष दूर हो जावें । १-७ (तब शुकी ने कहा—) अच्छा तो कथा का शेष सुनाऊँगी । विष्णुकुलाधिप, अर्जुन के सारथि, इन्द्र आदि देवों के सेवित

विष्णुलोकं गमिच्चारेन्नु केळ्क्कयाल्
विष्णुभक्तन्मारिलग्रेसरन् नृपन् ११
उष्णेतरांशुकुलसन्ततियाय
विष्णुरातन्नभिषेकवुं चेय्तेटं १२
उष्णनिश्वासं कलर्न्नु निजहृदि
कृष्णनेद्धयानिच्चुरप्पिच्चु भीमनुं १३
जिष्णुवुं सोदरन्मार् मट्टिरुवरुं
कृष्णयुं कूटि निरूपिच्चु कल्पिच्चु १४
नन्नल्ल भूतलवासं नमुक्किनि
वन्नु कलियुगमेन्नतु निर्णयं । १५
राजावु धर्म्मजनेवं परञ्ञुटन्
प्राजापत्याख्ययामिष्टियु चेय्तुटन् १६
क्षिप्रमात्मारोपिताग्नियायेकदा
सप्रकाशं पुरप्पेट्टितु शान्तराय् । १७
निश्चलात्मा महाप्रस्थानमाश्रित्य
सच्चिल्परब्रह्ममूर्त्ति सनातन- १८
नच्युतनव्ययनव्यक्तनद्वयन्
निश्चयिच्चाक्कुमरिञ्ञुकूटातवन् १९
नारायणन् नरमूर्त्तिमानीश्वरन्
नारदसेवितन् नानाजगन्मयन् २०

केशव, भगवान् कृष्ण और बलभद्र और सभी वृष्णिगण कलिकाल के आने पर विष्णुलोक चले गये—ऐसा सुनकर इच्छा के पाशों को तोड़कर, विष्णुभक्तों में अग्रसर राजा युधिष्ठिर ने, चन्द्रवंश की सन्तान विष्णुरात को अभिषिक्त करके दीर्घ और गरम निश्वास छोड़ते हुए अपने दिल में कृष्ण को ध्यान से स्थिर करके भीम, अर्जुन और अन्य दो भाइयों और द्रौपदी के साथ विचार करके निश्चय किया कि अब भूतल पर निवास करना ठीक नहीं है, इसमें सन्देह नहीं है कि कलियुग आगया है। ८-१५ राजा युधिष्ठिर ने इस प्रकार कहा। तदनन्तर उन्होंने प्राजापत्य इष्टि की और कदाचित् अपने ही ऊपर आरोपित अग्नि के साथ, शान्त होकर सप्रकाश निकल पड़े। उन्होंने महाप्रस्थान के उपलक्ष में सत्-चित् परब्रह्ममूर्ति, सनातन, अच्युत, अव्यक्त, अद्वय, किसी को भी निश्चित रूप से अज्ञात, नारायण, नरमूर्तिवाले, ईश्वर, नारद के सेवित, नानाजगन्मय, नीरजविग्रह, नीरजलोचन, नीरजसंभव का कारण, कोमल, नित्य, निरञ्जन

नीरजविग्रहन् नीरजलोचनन्
नीरजसंभवकारणन् कोमळन् २१
नित्यन् निरञ्जनन् निर्म्मलन् निर्म्ममन्
नित्यविरक्तन् प्रक्कतिपरात्मकन् २२
सत्वादिहीनन् सनकादिसेवितन्
तत्वस्वरूपन् सकललोकेश्वरन् २३
निष्कळन् निश्चलन् निस्पृहन् निष्क्रियन्
निर्ग्गुणनेकननेकजीवात्मकन् २४
भुक्तिमुक्तिप्रदन् भक्तप्रियन् परन्
शक्तियुक्तन् परमात्मा शिवात्मकन् २५
वेदार्त्थभिन्नमूर्त्त्यात्मकन् शाश्वतन्
वेदस्वरूपन् विरिञ्चादिवन्दितन् २६
वेदान्तवेद्यननन्तननामयन्
वेदज्ञनुत्तमनाद्यननाद्यन- २७
त्यानन्दरूपनमृतात्मकन् विभु
चेतनरूपन् जनार्द्दनन् वैकुण्ठ- २८
निन्दीवरेक्षणनिन्दिरावल्लभन्
इन्दुबिंबाननन्दुकुलोत्भव- २९
निन्दुकलाचूडवन्द्यन् मुकुन्दना-
नन्दप्रदन् कैटभान्तकन् गोविन्दन् ३०
नन्दजन् देवकीनन्दनन् यादवन्
वासुदेवन् देवदेवन् मुरान्तकन् ३१

निर्मल, निर्मम, नित्यविरक्त, प्राक्कतिपरात्मक, सत्त्वादिगुणरहित, सनक आदि के सेवित, तत्त्वस्वरूप, सकललोकेश, ईश्वर, १६-२३ निष्कल, निश्चल, निस्पृह, निक्रिय, निर्गुण, एक, एकजीवात्मक, भुक्ति और मुक्ति देनेवाले, भक्तप्रिय, पर, शक्तियुक्त, परमात्मा, शिवात्मक, वेदार्थभिन्न मूर्तिस्वरूप, शाश्वत, वेदस्वरूप, विरिञ्च आदि के वन्दित, वेदान्तवेद्य, अनन्त, अनामय, वेदज्ञ, अनुत्तम, आद्य, अनाद्य, अत्यानन्दरूप, अमृतात्मक, विभु, चेतनरूप, जर्नादन, वैकुण्ठ, इन्दीवरलोचन, इन्दिरावल्लभ, चन्द्रमुख, चन्द्रवंश के समुत्पन्न, इन्दुकलाचूड (शिव) के वन्द्य, मुकुन्द, आनन्दप्रद, कैटभनाशक, गोविन्द, नन्दपुत्र, देवकीपुत्र, यादव, वासुदेव, देवदेव, मुरारि, २४-३१ नारायण का अच्छी तरह से ध्यान किया और धीर युधिष्ठिर निकल पड़े।

नारायणनन्तन्नें नन्नाय् निरूपिच्चु
धीरनां धर्म्मजन् निर्ग्गमिच्चीटिनान् । ३२
सोदरन्मारुं द्रुपदतनूजयुं
सादरं कूटॆप्पिऱके नटकॊण्टार् । ३३
उत्तमन्माराय धर्म्मपुत्रादिक-
ळुत्तरयां दिक्कु नोक्कि नटक्कुन्पोळ् ३४
कृष्णवर्त्मावुटन् प्रत्यक्षरूपेण
जिष्णुतन्नोटरुळ्चॆय्तु कनिवॊटे— ३५
पाण्डुतनूज ! महावीर ! फल्गुन !
गाण्डीवमाय धनूरत्नमिप्पोळे ३६
यादसांनायकन् कैयिल् कॊटुक्क नी
सादरं पोय्कॊळ्विनाकुलं कूटातॆ । ३७
ऎन्नरुळ् चॆय्तॊरु वह्निदेवन्पदं
नन्नाय् वणङ्ङि वळङ्ङिच्चु यात्रयु- ३८
मत्भुतमाकिय गाण्डीवचापवु-
मप्पतिकैयिल् कॊटुत्तु नटकॊण्टार् । ३९

यमधर्म्मराजावु श्वावायि अनुगमिच्चु धर्म्मपुत्रनॆ परीक्षिक्कुन्नतु

धर्म्मराजात्मजन् तन्नॆप्परीक्षिप्पान्
धर्म्मराजन्तानुमाशु पुऱप्पॆट्टु । १

उनके भाई और द्रौपदी सादर उनके पीछे-पीछे चले। उत्तम युधिष्ठिर आदि जब उत्तर दिशा की ओर जा रहे थे तब अग्नि भगवान् प्रत्यक्ष होकर अर्जुन से प्रेम से बोले। हे पाण्डुपुत्र ! महावीर ! फल्गुन ! अपने गाण्डीव धनुष को यादसांपति (वरुण) के हाथ सौंप दो, तदनन्तर आराम से आगे बढ़ो। इस प्रकार कहनेवाले वह्निदेव के चरणों की वन्दना करके यात्रा में आगे बढ़े और अद्भुत गाण्डीव धनुष को (वरुण) के हाथ सौंपकर चले। ३२-३९

धर्मराज यम का कुत्ते के रूप में अनुसरण करते हुए युधिष्ठिर की परीक्षा

धर्मराज (युधिष्ठिर) की परीक्षा करने के लिए धर्मराज (यम) तत्काल ही तैयार हुए। एक कुत्ता बनकर और बड़े क्षीण भाव से और

श्वावायनुगमनंचेय्तितुकूटॆ
भाववुमेट्ं क्षयिच्चतिदीननाय् २
सेवयुं भाविच्चगतिमानाय् श्राद्ध-
देवनुं पिन्पे नटकोण्टितक्कालं । ३
अङ्ङनॆ पोकुन्न नेरत्तु कृष्णयु-
मॆङ्ङनॆयॆन्नरिञ्ञील वीणीटिनाळ् । ४
अप्पोळ् वृकोदरन् धर्म्मजनन्नोटॊ-
रत्भुतं पूण्टु चोदिच्चरुळीटिनान्— ५
द्रौपदि वीणतिनॆन्तॊरु कारणं
भूपते ! चॊल्कॆन्नतुकेट्टु धर्म्मजन् ६
पिन्निल् नोक्कातॆ परञ्ञानुटनिवळ्-
तन्नुळ्ळिलुळ्ळॊरु दोषमतु केळ्क्क । ७
वल्लभन्मारैवरुळ्ळवरेवरुं
तुल्यमल्लेतानुमुण्टु भेदं तदा । ८
पक्षपातं तनिक्कर्ज्जुननन्तङ्कलु-
ण्टुळ्क्कान्पिलॆन्नतिनालिङ्ङिङ्ङवळ् वीणु । ९
पिन्नॆस्सहदेवनुं पतिच्चीटिनान् ।
चॊन्नानतिन्मूलवुं धर्म्मनन्दनन् । १०
वातात्मजन् परञ्ञाशु सहदेव-
पातमरिञ्ञतुनेरत्तु धर्म्मजन् । ११
शास्त्रङ्ङळ्कॊण्टॆन्नॆत्ताळ्त्ति निन्नीटुवान्
धात्रियिलारुमिल्लॆन्नॊरहंभावं १२

अतिदीन होकर उनका अनुगमन किया। श्राद्धदेव (यम) सेवाभाव दिखाते हुए और गतिहीन के रूप में पीछे-पीछे चला। इस प्रकार चलते समय न मालूम कैसे, द्रौपदी तो गिर पड़ी। तब भीम ने आश्चर्यचकित होकर, युधिष्ठिर से पूछा। द्रौपदी के गिर पड़ने का क्या कारण है? हे राजन्! बतलाइए। यह सुनकर युधिष्ठिर ने बिना पीछे देखे कहा—इसके भीतर जो दोष है उसे सुनलो। १-७ उसके पांच पति हैं पर वे उसके लिए तुल्य नहीं हैं, उनमें भेद है। उसके दिल में अर्जुन के प्रति पक्षपात है। यही कारण है कि वह गिर पड़ी। तदनन्तर सहदेव गिर पड़ा। उसका कारण भी युधिष्ठिर ने कहा, जब भीमसेन के कहने से युधिष्ठिर ने उसका पात जान लिया। "शास्त्रों के द्वारा मुझे जीतने

उळ्ळिलुण्टाकयाल् वीणु सहदेव-
नुळ्ळवण्णं नी धरिक्क वातात्मज ! १३
पिन्नेयुं मेल्ले नटन्नारतुनेरं
पिन्नाले पोकुं नकुलन् पतिच्चितु । १४
चौन्नानतुं नृपन्तन्नोटु भीमनुं
मन्नवनुमतिन् कारणं चौल्लिनान् । १५
आरुमे रूपलावण्यमोक्कुं विधौ
पारिलेन्नोटु नेरायवरिल्लेन्नु १६
मानं नकुलन्नु पारमुण्टेप्पोळुं
मानसतारिलतुकोण्टवन् वीणु । १७
वृत्रारिपुत्रनुं वीणानतुमथ
पृथ्वीपतियोटु चौन्नान् वृकोदरन् । १८
कालात्मजन् जिष्णु वीणतु केट्टोरु-
कालं मरिञ्ञु नोक्कीलेन्तोरत्भुतम् ! १९
सोदरन् वीणतिन् कारणमेन्तेन्नु
चोदिच्चितग्रजन्तन्नोटु भीमनुं । २०
उत्तमनाकिय धर्म्मतनूजनु-
मुत्तरं भीमनोटाशु चौल्लीटिनान्— २१
अस्त्रङ्ङळ् कोण्टेन्नोटोत्तवरिल्लेन्नु
वृत्रारिपुत्रनुमुण्टोरहंभावं । २२

वाला इस पृथिवी में कोई नहीं है।" ऐसा अहंभाव उसके दिल में होने के कारण सहदेव गिरा, जान लो हे भीमसेन ! फिर वे धीरे-धीरे आगे चले। पीछे चलनेवाला नकुल गिरा। भीम ने इसे राजा को बतला दिया और राजा ने उसका भी कारण बतलाया। ८-१५ "रूप और लावण्य की दृष्टि से इस पृथ्वी में मेरे समान कोई नहीं है" ऐसा अभिमान नकुल को अपने मन में रहा है। इसलिए वह गिरा। फिर वृत्रारिपुत्र (अर्जुन) गिरा और भीम ने उसे भी राजा को बतला दिया। अर्जुन का गिरना सुनकर भी पीछे घूमकर न देखा, कैसी अद्भुत बात है ! अपने भाई के गिरने का कारण भीम ने बड़े भाई से पूँछा। उत्तम युधिष्ठिर ने भीम को इस प्रकार उत्तर दिया। "अस्त्रप्रयोग में मेरे तुल्य कोई नहीं है" ऐसा अहंभाव अर्जुन के दिल में रहा। १६-२२ यही कारण है कि वह गिरकर मरा। तुम्हारा पात भी अवश्य होनेवाला है। "मैं ही शक्ति-शाली हूँ" ऐसा विचार तुम्हारे दिल में घुसा पड़ा है। इसलिए तुम भी

अॆन्ऩतु कॊण्टवन् वीणु मरिच्चितु
निन्नुटॆ पातवुमुण्टिनि निर्ण्णयं । २३
शक्तनाकुन्ऩितु आनॆन्ऩॊरु निन-
वुळ्ळतारिलुण्टु निनक्कुं किटक्कुन्ऩु । २४
नीयुमतुकॊण्टु वीणुमरिच्चुपों
वायुसुत ! परितापमुण्टाकॊला । २५
उण्टु जनिच्चाल् मरणमॆल्लावनु-
मुण्टाकवेण्ट विषादमतिन्नेतुं । २६
इत्थं पऱञ्ञु पिऱकिल् नोक्कीटातॆ
पृथ्वीपति नटन्ऩीटिनान् पिन्नॆयुं । २७
उत्तरयांदिक्कु नोक्कि नटक्कुन्पो-
ळुत्तमनां धर्म्मपुत्ररुटॆ पिन्पे २८
पोकुन्ऩ भीमनुं वीणुमरिच्चितु
पोकुन्ऩितु वटक्कोट्टवन् पिन्नॆयुं । २९
सारमेयं पिरियातॆ वळियॆ कू-
टारूढतापं नटन्ऩानतुनेरं । ३०
आरुमॊरु गतियिल्लॆन्ऩॊरु भावं
नेरे मुखत्तु नोक्किक्कॊण्टु भाविच्चु । ३१
कूटॆ नटक्कुन्ऩतु कण्टु धर्म्मज-
नूटे वळर्न्ऩितु कारुण्यमेऱ्ऱवुं । ३२
अंबरंतन्निल्निन्ऩन्नेरमन्तिके
पॊन्मयमाय विमानवुं ताणितु ३३

गिरकर मरोगे। हे वायुपुत्र ! इसलिए दुःख मत करो। सभी जन्म लेनेवालों को मरना है, इसलिए कुछ विषाद मत करो। इस प्रकार कहते हुए और बिना पीछे देखे, राजा फिर आगे चले। उत्तर दिशा की ओर चलनेवाले युधिष्ठिर के पीछे जानेवाला भीम गिरकर मरा। पर वह तो उत्तर ही को चलता रहा। कुत्ता तो साथ न छोड़ता हुआ दुःखित होकर पीछे चलता रहा। २३-३० 'मेरा कोई शरण नहीं है', ऐसा भाव औरों का मुँह देखता हुआ, वह प्रगट करता था। इस प्रकार साथ चलनेवाले को देखकर युधिष्ठिर के भीतर करुणा बढ़ी। उस समय आकाश से एक स्वर्णमय विमान उतरा। और एक निर्मल देवदूत भी उतरा, इस उद्देश्य से कि युधिष्ठिर को वहाँ ले जावे। आगे के वृत्तान्त सुनाने में पन्नगनायक

निर्म्मलनाकिय देवदूतन्तानुं
धर्म्मतनयनेक्कोंण्टङ्ङुपोवानाय् । ३४
पिन्नेयुण्टाय विशेषङ्ङळ् चोंल्लुवान्
पन्नगनायकनुं पणियुण्टेंन्नु ३५
नन्नाय् परञ्ञटङ्ङीटिनान् धर्म्मजन्
तन्नुटॆ माहात्म्यमोर्त्तोर्त्तु पिन्नेयुं ३६
नल्ल कथयिनि मेलेटं निङ्ङळ्क्कु
चोंल्लुवनेंन्नु किळिमकळुं चोंन्नाळ् । ३७

॥ महाप्रस्थानं समाप्तं ॥

(शेष) को भी श्रम होगा। ऐसा कहकर वह (वैशम्पायन) चुप हुआ। "पर युधिष्ठिर के माहात्म्य का स्मरण करते हुए आगे की अच्छी कथा भी सुनाऊँगी", ऐसा शुकी ने कहा। ३१-३७

॥ महाप्रस्थानपर्व समाप्त ॥

स्वर्ग्गारोहणं

चोंल्लुचोंल्लिनियुं नी नल्ल सल्ककथयेंल्लां
कल्याणं वरुवानायेंन्नोटु किळिप्पेंण्णे ! १
नल्ल पैन्तेनुं पालुं पळवुं शर्क्करयुं
वेंल्लवुं वेरे पञ्चसारयुं तरुवन् ञान् । २
चोंल्लिनाळतु केट्टु बालप्पैङ्किळिमकळ्
मल्लारियुटॆ भक्तवात्सल्यं केळ्प्पिन् निङ्ङळ् । ३
भक्तरायुळ्ळवरिलुत्तमन् धर्म्मपुत्रन्-
वक्त्रपङ्कजं पार्त्तु चोंल्लिनान् देवदूतन्— ४

स्वर्गारोहण पर्व

हे शुकि ! और अच्छी-अच्छी कथा सुनाओ ताकि हमारा कल्याण हो ! अच्छा शहद दूध, केला और शक्कर गुड़ और चीनी अलग मैं तुम्हें दूँगा। यह सुनकर शुककन्या ने कहा—अच्छा तो तुम लोग मल्लारि के

देवराजाज्ञयाले वन्नितु ञानुमिप्पोळ्
देवलोकत्तिङ्कलेक्काशु पोरिकवेणं । ५
वन्नुटन् विमानमेरीटुक वैकीटातें-
येन्नु देवेन्द्रदूतन् चोन्नतु केट्टनेरं ६
ॲन्नोटुकूटॆप्पोन्न सोदरन्मारुं वीणार्
तन्वङ्गियाय मम भार्ययुं वीणाळल्लो । ७
पिन्नेयुं पिरियातॆ पोन्नितॆन्नोटुकूटॆ-
त्तन्नेयी श्वावुमिवन्तन्नेयुमुपेक्षिच्चु ८
विण्णवर्पुरिक्किनिक्कॆन्नुमे पोन्नुकूटा
पिन्नेयी श्वाविनॆन्तॊराश्रयमॆन्नु चॊल् नी । ९
सर्वतोरक्षेच्छुनश्वपचानपि मुहु-
रुर्व्वीपालकनायालाश्रितनॆन्नुण्टल्लो । १०
निश्चयमरक्षिता ब्रह्महा भवेदिह
रक्षिता हयमेधकर्त्तावॆन्नुण्टल्लो केळ् । ११
आश्रितपरित्यागमॆन्नुं ञान् चेय्कयिल्ल
शाश्वतमाय धर्म्ममॆङ्ङने वॆटियुन्नु ? १२
ॲन्नेयुं कॊण्टु विण्णिल् पोकणमॆन्नाकिलो
मुन्नमी श्वावुतन्नेयङ्ङुटन् करेट्टणं । १३
ॲन्नतु केट्टु चॊवि पॊत्तिनान् देवदूत-
नॆन्ने कष्टमे ! भवानॆन्तितु तोन्नीटुवान् ? १४

भक्तवात्सल्य को सुनो। भक्तों में उत्तम युधिष्ठिर के मुखकमल को देखकर देवदूत ने कहा—मैं देवराजा की आज्ञा से आया हूँ। आपको देवलोक जाना है। जल्दी आकर अविलम्ब विमान पर बैठिये। देवेन्द्र के दूत की यह बात सुनकर (युधिष्ठिर ने कहा—) मेरे साथ जो मेरे भाई चले थे वे गिरे और मेरी तन्वङ्गी पत्नी भी गिरी। १-७ इस पर भी अलग न होकर मेरे साथ ही यह कुत्ता चला आया। इसकी उपेक्षा करके मैं देवलोक कभी न जाऊँगा। अगर जाऊँ तो फिर इस कुत्ते की आश्रय क्या होगा। राजा होकर सबकी रक्षा करना चाहिए, कुत्ते की भी, उसे खानेवाले की भी। फिर यह तो मेरा आश्रित है। जो रक्षा न करे वह अवश्य ही ब्रह्महत्या के समान होगा और जो रक्षा करता है वह अश्वमेधकर्ता के समान, यही प्रसिद्ध है। आश्रित का परित्याग मैं कभी न करूँगा। शाश्वत धर्म कैसे टाला जा सकता है ? अगर मुझको लेकर देवलोक जाना ही है तो पहले इस कुत्ते को विमान पर बैठाइए। यह

धर्म्माधर्म्मङ्ङळरियुन्नवरारुळ्ळतु
धर्म्मनन्दन ! निन्नोटॊत्तिह विश्वत्तिङ्कल् ? १५
कुत्सित जन्तुक्कळिल्वच्चतिनिकृष्टमाय्
सत्समवायनिन्द्यमायती श्वावल्लयो ? १६
कण्टाल् कण् कळुकेणं तॊट्टतु कळयेणं
दृष्टमायतुं पिन्नॆरशुद्धमल्लॆन्नु नूनं । १७
दुष्टजन्तुक्कळिल्वच्चॆत्रयुं निकृष्टमाय्
कष्टमायुळ्ळती श्वावॆन्नतुमरियेणं । १८
स्वर्लोकवासमॊरुकालवुमॊन्निनालु-
मिल्लल्लो खाविन्नतुं नीयरिकिकरिक्कुन्नु । १९
पिन्नेयी सहोदरर् दारसंगादिकळुं
सन्नमाय् सर्वविषयङ्ङळुमुपेक्षिच्चु । २०
मुक्तनाय् विशुद्धात्मावाय नीयॆन्तीवण्णं
युक्तियुक्तङ्ङळल्लातुळ्ळव चॊल्लुन्नतुं । २१
श्वाविङ्कल् निबद्धमां ममत्वमुपेक्षिच्चु
देवयानत्तिन्मेलेरीटुक वैकीटाते । २२
कुन्तीनन्दनन्तानुं चिन्तिच्चु चॊल्लीटिना-
नॆन्तिनित्तरमॆन्नोटिङ्ङनॆ परयुन्नु ? २३
सन्त्यजिच्चीटुकयिल्लाश्रितन्मारॆयति-
नन्तरमेतुमिल्ल पोयालुं भवानॆङ्किल् । २४

सुनकर देवदूत ने कान बन्द कर लिए (और कहा)—हा ! यह कष्ट की बात आप को क्यों सूझी ? ८-१४ हे धर्मपुत्र ! तुम्हारे समान धर्म और अधर्म को जाननेवाला इस विश्व में कौन है ? निन्दित जन्तुओं में अति निकृष्ट और सज्जनों का घृणित क्या कुत्ता नहीं है ? उसे देखकर अपनी आँख धोना है, उसके छूए को फेंक देना चाहिये, उसका देखा तो अशुद्ध हो जाता है। दुष्ट जन्तुओं में सबसे निकृष्ट और सबसे कष्टवाला तो यह कुत्ता है। कुत्ते के लिए स्वर्गवास किसी भी कारण कभी नहीं हो सकता है। यह आप जानते ही हैं। फिर आपके इन भाइयों और पत्नी का नाश हो गया है और सभी विषयों को त्यागकर आप मुक्त और विशुद्धात्मा हो गये हैं। तो फिर क्यों आप ऐसी बात कर रहे हैं जो युक्तियुक्त न हो ? १५-२१ इस कुत्ते में लगे ममता की उपेक्षा करके इस देवयान पर चढ़िये अविलम्ब ही। कुन्तीपुत्र ने सोंचकर उत्तर दिया—मुझसे क्यों आप इस प्रकार कहते हैं ? मैं आश्रित का त्याग न

बन्धमट़ीलेंन्नते केवलमेंनिक्कुळ्ळु
सन्धिक्कुमिनियोंरुकालत्तेंन्नते वेण्टु । २५
स्वधर्म्ममुपेक्षिच्चिट्टुळ्ळोंरु भोगमोंन्नुं
सुधर्म्मावासंपोलुमिनिक्कु वेण्टयल्लो । २६
देवदूतनु चोंन्नानन्नेरमिनि श्राद्ध-
देवनन्दन ! पुनरोंन्नरियेणं भवान् । २७
ममत्वं कोंण्टु बन्धं वेर्टिट्टुकूटायिन्नु
समत्वं कोंण्टु तन्ने मोक्षवुं वन्नीटुन्नु । २८
गांगेयन् वेदव्यासन् मार्क्कंण्डेयनुं पिन्ने
शार्ङ्गपाणियुं बृहदश्वनुं मैत्रेयनुं २९
नारदन् सनल्कुमाराख्यनुं धौम्यन्तानु-
मोरोरोतरं मट्टुमित्यादि दिव्यजनं ३०
निनक्कु दिव्यज्ञानमुपेदशिच्चारतु ।
निनच्चालिनिक्केट़मत्भुतमुण्टाकुन्नु ३१
इनिक्कुमवरुपदेशिच्चतोर्त्तु तन्ने ।
मनक्कान्पिनु चेरुतिळक्कमिल्लायिन्नु ३२
पोयालुं ञानिश्वावुकूटातें पोरिकयि-
ल्लायतविलोचननाकुमेंन् कृष्णनाणें ३३
धर्म्मनन्दननुटें निश्चलवाक्कु केट्टु
धर्म्मराजनुमप्पोळ् प्रत्यक्षनायनल्लो । ३४

करूँगा, इसमें कोई रियायत न होगी। आपको स्वीकार न हो तो आप जायें। मेरा बन्धन तो अभी समाप्त नहीं हुआ, इतना ही तो है? किसी दिन वह भी होजायगा, बस, ठीक है। अपने धर्म की उपेक्षा करके होनेवाला कोई भी भोग सुधर्मानिवास तक मुझे नहीं चाहिये। तब देवदूत ने कहा—हे श्राद्धदेव (यम) के पुत्र! एक बात और जो तुमको मालूम होना चाहिए। ममत्व के कारण ही तो बन्धन अलग नहीं होता। समत्व के कारण ही मोक्ष प्राप्त होता है। २२-२८ गांगेय (भीष्म), वेदव्यास, मार्कण्डेय, शार्ङ्गपाणि, बृहदश्व, मैत्रेय, नारद, सनत्कुमार, धौम्य, और इस प्रकार के अन्य दिव्यजन ने तुमको दिव्यज्ञान का उपदेश दिया है। उसे सोचकर मुझे बहुत आश्चर्य होता है। (यह सुनकर युधिष्ठिर बोले—) उनके उपदेश का स्मरण करके ही मेरे मन में भी तनिक भी विचलन नहीं होता है। आप चले जाइये। मैं इस कुत्ते के बिना न आऊँगा। यह मेरा आयतविलोचन कृष्ण ही है। धर्मपुत्र की यह अटल बात सुनकर

धर्म्मदेवनुमनुग्रहिच्चु तनयने-
द्धर्म्मजन् विमानवुमेरिप्पोय् स्वर्गं पुक्कान् । ३५
प्रीत्या पूर्ण्णैश्वर्यभोगादिकळोटुं कूटि-
द्धार्त्तराष्ट्रज्येष्ठनेक्कण्टितु धर्म्मात्मजन् । ३६
ऐत्रयुं दुष्टनायोरधर्म्मिष्ठनु पुन-
रित्र सौख्यङ्ङळुण्टाय्वन्नतु चित्रमत्रे । ३७
मनसि कुतुकमिल्लिविटेवाळ्वानिनि-
यनुजन्मारुळ्ळेटत्तुटने पोकवेणं । ३८
इत्तरं धर्म्मपुत्रन् चोन्नतु केट्टवारे
वृत्रारिनियोगत्ताल् दूतनुं वन्नु चोन्नान् । ३९
पोरिकेङ्किलो तव सोदरन्मारुळ्ळेट-
त्तारूदानन्दमन्नु केट्टवनोटुं कूटि । ४०
भ्रातावक्कळळ्ळेटत्तु चेन्नतु नेरमेटं
वेदन पूण्टीटिनान् नरकं कण्ट नेरं । ४१
यातनादुःखं कण्टु धर्म्मजनतिवेगाल्
यातनायीटुवतिनारंभिच्चोरुनेरं । ४२
धर्म्मजशरीरत्तेत्तटवि मन्दं मन्दं
कल्मषमकन्नोरु तेन्नल्चेन्नेटनेरं- ४३

धर्मराज वहाँ प्रत्यक्ष हुए। धर्मदेव ने अपने पुत्र का अनुग्रह किया। तब धर्मपुत्र (युधिष्ठिर) विमान पर चढ़कर स्वर्ग गये। २९-३५ वहाँ युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्रों के ज्येष्ठ को पूर्णैश्वर्य और भोगों से युक्त सुखी देखा। (उन्होंने कहा—) "इतने दुष्ट और अधर्मिष्ट को इतना सौख्य जो प्राप्त हुआ है, यह विचित्र है। अब यहाँ रहने की मन में इच्छा है ही नहीं। जहाँ मेरे छोटे भाई हैं वहाँ तुरन्त ही जाना चाहता हूँ।" धर्मपुत्र की इस प्रकार की बात सुनने के समय इन्द्र की आज्ञा से एक दूत आया और बोला— अगर आओगे तो चलो जहाँ तुम्हारे भाई हैं और जहाँ बड़ा आनन्द होता है। यह सुनकर दूत के साथ वहाँ गये जहाँ उनके भाई हैं। वहाँ जाने पर नरक देखकर अत्यन्त दुःखित हुए। उनकी यातनाओं का दुःख देखकर युधिष्ठिर वहाँ चले जाने को जब तैयार हुए तब युधिष्ठिर के शरीर को धीरे धीरे स्पर्श करता हुआ एक निर्दोष मन्दमारुत चलने लगा। ३६-४२ इससे उनके भाइयों को बड़ा आश्वास हुआ और आश्चर्यचकित होकर वे बोले— जितना हो सके उतना यहीं खड़े रहिये। हम लोगों का दुःख आप महानुभाव के शुभशरीर का

माश्वासमुण्टाय्वन्नु सोदरन्मार्क्कुमेट्-
माश्चर्यं पूण्टु चोन्नारवरुमतुनेरं । ४४
निल्क्केणमिविटेयोट्टावोळं ञङ्ङळ्क्कुळ्ळ-
दुःखमोट्टकन्नितु निन्तिरुवटियुटे । ४५
तिरुमेय् तटवि वन्नीटिन काट्टु तट्टि-
प्पोरिकेयुण्टाश्वासमखिलगुणनिधे ! ४६
ऎन्नतु केट्टु तत्र निन्नितु धर्म्मात्मज-
निन्द्रादिदेवगणमन्नेरमेळुन्नळ्ळि । ४७
धर्म्मजन्तन्ने स्वर्गत्तिन्नाशु कोण्टुपोयार्
चिन्मयनाय कृष्णन्तन्नुटे भक्तनप्पोळ् । ४८
धर्म्मदेवन्टे नियोगत्तालञ्जसा मोदा-
लंबरगंगतन्निल् स्नानवुं चेय्तु नन्नाय् । ४९
दिव्यविग्रहनायि स्वर्गत्ते प्रापिच्चप्पोळ्
सव्यसाच्यादिभ्रातृजनत्तेक्काणाय्वन्नु । ५०
द्रौपदेयन्मारेयुं द्रौपदियेयुं कण्टु
भूपति कर्ण्णनेयुं कण्टु सन्तोषं पूण्टान् । ५१
बन्धुक्कळाय विराटद्रुपदादिकळुं
कुन्तीनन्दनन्तन्नेक्कण्टु सन्तोषं पूण्टार् । ५२
धर्म्मजादिकळ् तङ्ङळ्तङ्ङळ्क्कुळ्ळोरु नाना-
कर्म्मङ्ङळुटे फलमोट्टुङ्ङिक्कूट्टुवोळं । ५३
स्वर्गभोगङ्ङळनुभविच्चु वसिच्चितु
सत्गुणवान्माराय पाण्डवादिकळ् पिन्ने । ५४

स्पर्श करके चलनेवाले वायु से दूर हो गया और हे सभी गुणों के निधि ! हमारा बड़ा आश्वास हुआ। यह सुनकर युधिष्ठिर वहीं खड़े रहे। तब वहाँ इन्द्र आदि देवगण पधारे और वे युधिष्ठिर को तुरन्त स्वर्ग ले गये। तब चिन्मय कृष्ण के भक्त (युधिष्ठिर) ने, धर्मदेव की आज्ञा से बड़े प्रमोद से जल्दी आकाशगंगा में स्नान किया और दिव्यशरीर के साथ स्वर्ग पहुँचे। वहाँ सव्यसाचि (अर्जुन) आदि भाई दिखाई दिये। ४४-५० द्रौपदी को, उसके पुत्रों को और कर्ण को देखकर राजा प्रसन्न हुए। बन्धु विराट, द्रुपद आदि, कुन्तीपुत्र (युधिष्ठिर) को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। युधिष्ठिर आदि, अपने-अपने भिन्न कर्मों के फल के समाप्त होने तक स्वर्ग के भोगों का अनुभव करते हुए वहीं रहे। तदनन्तर

ॲल्लारुं तन्टे तन्टे कारणत्तिङ्कल्तन्ने
निर्ल्लीनन्मारायवन्निनतीश्वरनियोगत्ताल् । ५५

फलश्रुति-भारतमाहात्म्यं

श्रीवैशन्पायननुं जनमेजयन् तन्नो-
टेवमादरपूर्व्वमरुळिच्चेय्तानल्लो । १
श्रीमहाभारतमायीटिनोरञ्चां वेदं
श्रीवेदव्यासमुनितानरुळ्चेय्ततॆल्लां । २
सुतनुमतु शौनकादिकळ्क्करियिच्चान्
वेदान्तप्रकरणमायुळ्ळोरितिहासं । ३
जनमेजयनाय नृपनुमस्तिकना-
म्मुनिवर्यनु वरं कोट्टुत्तु सर्प्पसत्रं । ४
समर्प्पिच्चितु पुनरतिनालस्तिकनुं
प्रमदं निज मातृमातुलन्मार्क्कु नल्कि । ५
कुण्डलिकुलत्तॆयुं रक्षिच्चानेतुमॊरु-
दण्डमॆन्निये पुनरस्तीकमुनीन्द्रनुं । ६
अस्तिकनहिकुलं नल्किनाननुग्रह-
मस्तिकमन्त्रचरित्रादिकळ् सन्ध्याकाले ! ७
चिन्तिक्कुं जनङ्ङळ्क्कु सर्पवंशत्तालॊरु-
सन्तापमॊरुनाळुमुण्टाकयिल्लयॆन्नुं । ८

सद्गुणवाले पाण्डव सब अपने-अपने कारण में ईश्वर के नियोग से लीन हो गये । ५१-५५

फलश्रुति-भारत का माहात्म्य

श्रीवैशम्पायन ने जनमेजय से इस प्रकार सादर कहा । इस पाँचवें वेद महाभारत को जैसा वेदव्यास ने सुनाया वैसा ही सूत ने शौनक आदिकों को सुनाया । यह इतिहास वेदान्त का ही एक प्रकरण है । राजा जनमेजय ने मुनिवर अस्तिक को वरप्रदान किया और सर्पसत्र को समाप्त किया । उसी कारण अस्तिक ने अपने मामाओं और अपनी माता को प्रमोद प्रदान किया । उस समय मुनीन्द्र अस्तिक ने बिना दुःख के सर्वकुलों की रक्षा की । १-६ अस्तिक ने सर्पकुल को यह अनुग्रह दिया—जो भी संध्या के समय अस्तिक के मन्त्र और चरित्रों का ध्यान करे उसको सर्पकुल के द्वारा

जनमेजयनिह सत्रवुं समर्प्पिच्चु
मुनिकळ्क्कॆल्लां वेण्ट दक्षिणचॆय्तु नन्नाय् । ९
आशीर्वादवुं परिग्रहिच्चु पुऱप्पॆट्टा-
नाशुतन् पुरोहितामात्यादिजनत्तोटुं । १०
तक्षकशिलतङ्ङल्निन्नु पोय् वेगत्तोटे
पुक्कितु शोभतेटुं हस्तिनपुरत्तिङ्कल् । ११
जनमेजयनुटॆ सर्पसत्रत्तिङ्कल्नि-
न्ननुमोदेन वेदव्यासन्तन् नियोगत्ताल् । १२
वैशम्पायनमुखांभोरुहत्तिङ्कल्निन्नु
वैशिष्टयमेरु महाभारतमितिहासं । १३
विश्रुतमायतॆल्लां शौनकादिकळोटु
निश्शेषमुग्रश्रवस्साय सूतनुं चॊन्नान् । १४
कल्याणं नल्कुं फलश्रुतियुमऱियिच्चा-
नॆल्लामतुमुरचॆय्वान् वेलयुण्टिनिक्किप्पोळ् । १५
नल्लतुवरुमितु केट्टालॆन्नोळिञ्ञॆनि-
क्किल्ल मट्टॊन्नु पऱयावतु निरूपिच्चाल् । १६
चॊल्लुकिलतिल्प्परमुण्टल्लो फलमति-
नॆल्लारुं पात्रमल्लॆन्नाकिलो केट्टुकॊळ्विन् । १७
श्रीमहाभारतत्तिङ्कल् प्रतिपाद्यनाय
तामरसाक्षन् वासुदेवनां कृष्णन्तन्नॆ । १८

कोई सन्ताप न होगा। जनमेजय ने अपना सत्र समाप्त किया और मुनियों को यथेष्ट अच्छी दक्षिणा भी दी। तदनन्तर आशीर्वाद स्वीकार करके अपने पुरोहितों के साथ जाने को तैयार हुए। तक्षकशिला से निकलकर जल्दी चलते हुए शोभावाली हस्तिनपुरी में प्रविष्ट हुए। जनमेजय के सर्पसत्र के अवसर पर प्रमोद से किये व्यास के नियोग से वैशम्पायन के मुखकमल से सुने गये बड़े वैशिष्ट्यवाले महाभारत इतिहास को शौनक आदिकों को संपूर्णरूप में सूत उग्रश्रवा ने सुनाया। कल्याण लानेवाले फलश्रुति को भी सुनाया। वह सब सुनाने में काम बहुत है। इसको सुनने से भला ही होगा। सोचो तो मुझे और कुछ सुनाने को नहीं है। अगर सुनाऊँगा तो उसका परम फल होगा ही। पर सब उस फल के पात्र नहीं है। फिर भी सुन लीजिये। महाभारत का प्रतिपाद्य तो कमललोचन, वासुदेव, कृष्ण ही है। १३-१८ वाक्, मन

वाङ्मनःकायङ्ङ्ळाल् भक्त्यैव नमस्करि-
च्चात्मनि सकळरूपं ध्यानिच्चनन्तरं । १९
निष्कळत्तिङ्कल्त्तन्ने नितरां लयिच्चथ
मुक्तनाय् तॆळिञ्ञुपसंहरिच्चितु सूतन् । २०
तल्प्रकारत्तॆयरियिक्कुन्ने (न् आ) नेन्नु नन्नाय्
शिल्पमायुरचॆय्ताळ् पैङ्किळिमकळ्तानुं । २१
विद्यावेद्याय नमो विद्येभ्यो नमो नमो
धर्म्मेभ्यो नमो धर्म्मधारिणे नमो नमः । २२
देवेभ्यो नमो वासुदेवाय नमो नमः
कृष्णायावर्ण्यायास्मै नारायणाय नमः । २३
नारायणाय नमो नारायणाय नमो
नारायणाय नमो नारायणाय नमः । २४

॥ स्वर्गारोहणं समाप्तं ॥

और शरीर से बड़ी भक्ति के साथ सकल रूप को अपनी आत्मा में ध्यान करके, फिर निष्कल में अत्यन्त लीन होकर सूत ने मुक्ति प्राप्त की और कथा को समाप्त किया। जिस प्रकार कहा, उसको मैं बतला रही हूँ--ऐसा शुकी ने कला से कहा। जो विद्या से वेद्य है उसको प्रणाम हो। विद्याओं को प्रणाम हो, धर्मों को प्रणाम हो, जो धर्म धारण करता है, उसको प्रणाम हो। देवों को प्रणाम, और वासुदेव को बारम्बार प्रणाम। अवर्ण्य कृष्ण को नमोनमः। नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो नारायणाय नमो। १९-२४

॥ स्वर्गारोहण पर्व समाप्त ॥

★ **उर्दू - शरीफ़ज़ाद: (आर्यपुत्र)**— 'उमरावजान अदा' के प्रख्यात लेखक मिर्ज़ा रुस्वा द्वारा रचित अति रोचक उपन्यास। देवनागरी लिपि में लखनऊ की सुमधुर उर्दू भाषा का आनन्द उठाइये। मूल्य ५·००। डाक व्यय पृथक्।

★ **गुरमुखी - श्री जपुजी सुखमनी साहिब**— गुरु नानकदेव और गुरु अर्जुनदेव की अमर वाणी देवनागरी लिपि में। साथ में गीता के सफल पदयानुवादक ख़ानबहादुर ख़्वाज: दिलमुहम्मद का अति प्रसिद्ध प्रवाहमय पदयानुवाद। अनुवाद को पढ़ते समय पाठक झूम उठता है। मूल्य ५·००। डाक व्यय पृथक्।

★ **अरबी - ज़ादे सफ़र** (रियाज़ुस्सालिहीन)— प्रसिद्ध प्रामाणिक हदीस (पैग़म्बर के कलाम) के उर्दू अनुवाद ज़ादे सफ़र का देवनागरी लिपि में सारा पाठ देते हुए कठिन उर्दू शब्दों का हिन्दी अर्थ फ़ुटनोट में दिया गया है। इस्लामी धर्म के सदाचार की स्पष्ट झाँकी है। पृष्ठ संख्या ३३६ मूल्य १२·००। डाक व्यय पृथक्।

★ **फ़ारसी - सिर्रे अक्बर**— (शाहज़ाद: दाराशिकोह कृत—५० उपनिषदों की फ़ारसी व्याख्या में से ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय और श्वेताश्वतर— इन ९ उपनिषदों का अनुवाद। ग्रन्थ में उपनिषदों का मूल संस्कृत पाठ, उनका भारतीय अनुवाद, साथ में शाहज़ाद: दारा की स्पष्ट व्याख्या, पाद-टिप्पणी सहित। एक अभारतीय मुस्लिम शाहज़ादे की तत्वज्ञान में पैठ देखते ही बनती है। हिन्दी रूपान्तरकार हैं काशी विश्वविदयालय के डॉ० हर्षनारायण। पृष्ठ ३००। इस परिश्रमसाध्य ग्रन्थ का मूल्य २०·०० मात्र है। डाक खर्च पृथक्।

★ **बाइबिल - सार**— इस पुस्तिका में बाइबिल में दिये गये सालोमन के नीति-वाक्यों को देते हुए उनके समानान्तर भारतीय नीति-वचनों को उद्धृत किया गया है। मूल्य १·०० मात्र।

वाणी सरोवर

(अपने ढंग का निराला त्रैमासिक पत्र)

इस पत्र में हिन्दी, उर्दू, अरबी, फ़ारसी, संस्कृत, पारसी, बंगला, ओड़िया, मराठी, गुरुमुखी, तमिळ, मलयाळम, असमी, गुजराती, तेलुगु, कन्नड, सिन्धी, कश्मीरी, राजस्थानी और नेपाली के अनुपम ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद तथा देवनागरी लिपि में उनका मूल पाठ धारावाहिक प्रकाशित हो रहा है। वार्षिक शुल्क १०·०० मात्र।

नवीन ग्राहक बननेवाले सज्जनों को सन् १९७० से अब तक का १०·०० प्रतिवर्ष के हिसाब से शुल्क भेजना उनके हित में होगा। बीते हुए वर्षों के अंक न मँगाने पर धारावाहिक चलनेवाले पहले से शुरू अनेक ग्रंथ उनके संग्रहालय में अपूर्ण रह जायँगे। वैसे ट्रस्ट को आपत्ति नहीं है; आप जिस वर्ष से चाहें ग्राहक बन सकते हैं।

ओड़िया-संस्करण

रामचरितमानस-मूल ओड़िया लिपि में
गद्य-पद्य अनुवाद ओड़िया भाषा में

ଗୋସ୍ୱାମୀ ତୁଳସୀଦାସକୃତ

ଶ୍ରୀରାମଚରିତ ମାନସ

(ଓଡ଼ିଆ ଲିପିରେ ମୂଳପାଠ ଏବଂ ଓଡ଼ିଆ ଭାଷାରେ ପଦ୍ୟଗଦ୍ୟାନୁବାଦ)

ପ୍ରଥମ ସୋପାନ

ବାଳକାଣ୍ଡ

ବର୍ଣ୍ଣାନାମର୍ଥସଂଘାନାଂ ରସାନାଂ ଛନ୍ଦସାମପି ।
ମଙ୍ଗଳାନାଂ ଚ କର୍ତ୍ତାରୌ ବନ୍ଦେ ବାଣୀବିନାୟକୌ ॥୧॥
ଭବାନୀଶଙ୍କରୌ ବନ୍ଦେ ଶ୍ରଦ୍ଧାବିଶ୍ୱାସରୂପିଣୌ ।
ଯାଭ୍ୟାଂ ବିନା ନ ପଶ୍ୟନ୍ତି ସିଦ୍ଧାଃ ସ୍ୱାନ୍ତଃସ୍ଥମୀଶ୍ୱରମ୍ ॥୨॥
ବନ୍ଦେ ବୋଧମୟଂ ନିତ୍ୟଂ ଗୁରୁଂ ଶଙ୍କରରୂପିଣମ୍ ।
ଯମାଶ୍ରିତୋ ହି ବକ୍ରୋଽପି ଚନ୍ଦ୍ରଃ ସର୍ବତ୍ର ବନ୍ଦ୍ୟତେ ॥୩॥

ବିବିଧ ପ୍ରକାର   ବର୍ଣ୍ଣ ଅର୍ଥ ରସ   ଛନ୍ଦ ଆଦର ।
ମଙ୍ଗଳଙ୍କ କର୍ତ୍ତା   ବାଣୀ ବିନାୟକେ   ବନ୍ଦେ ସାଦର ॥ ୧ ॥
ବନ୍ଦେ ପୁଣି ଶ୍ରଦ୍ଧା   ବିଶ୍ୱାସ ମୂରତି   ଉମା ମହେଶେ ।
ଯା ବିହୁନେ ସିଦ୍ଧେ   ଦେଖି ନ ପାରନ୍ତି   ସ୍ୱ ହୃଦଇଶେ ॥ ୨ ॥
ବନ୍ଦେ ଜ୍ଞାନମୟ   ନିତ୍ୟ ଶିବ ପ୍ରାୟ   ଶ୍ରୀଗୁରୁ ପଦ ।
ଯାହାଙ୍କୁ ଆଶ୍ରିଣ   ବକ୍ର ଚନ୍ଦ୍ର ମଧ   ସର୍ବତ୍ର ବନ୍ଦ୍ୟ ॥ ୩ ॥

ବର୍ଣ୍ଣ, ଅର୍ଥ, ରସ, ଛନ୍ଦ ଓ ମଙ୍ଗଳସମୂହର ସୃଷ୍ଟିକାରିଣୀ ବାଣୀ ଓ ସୃଷ୍ଟିକାରୀ ଶ୍ରୀ ଗଣେଶଙ୍କୁ ମୁଁ ବନ୍ଦନା କରୁଅଛି ॥ ୧ ॥ ଯାହାଙ୍କ ବ୍ୟତିରେକେ ସିଦ୍ଧ ପୁରୁଷଗଣ ମଧ ନିଜ ହୃଦୟସ୍ଥିତ ଈଶ୍ୱରଙ୍କୁ ଦେଖି ପାରନ୍ତି ନାହିଁ, ଶ୍ରଦ୍ଧା ଓ ବିଶ୍ୱାସର ମୂର୍ତ୍ତି ସେହି ଦେବୀ ଶ୍ରୀ ପାର୍ବତୀ ଓ ମହାପ୍ରଭୁ ଶ୍ରୀ ଶଙ୍କରଙ୍କୁ ମୁଁ ବନ୍ଦନା କରୁଅଛି ॥ ୨ ॥ ଯାହାଙ୍କ ଆଶ୍ରୟ ବଳରେ ଚନ୍ଦ୍ର ବକ୍ର ହୋଇ ସୁଦ୍ଧା ଜଗତରେ ସର୍ବତ୍ର ବନ୍ଦିତ, ସେହି ଜ୍ଞାନମୟ, ନିତ୍ୟ, ଶଙ୍କରରୂପୀ ଗୁରୁଙ୍କୁ ମୁଁ ବନ୍ଦନା କରୁଅଛି ॥ ୩ ॥

संस्कृत मानस-भारती

रामचरितमानस-मूलपाठ-सहित पंक्ति-अनुपंक्ति संस्कृत पद्यानुवाद

तासु प्रभाउ जान नहिं सोई। तथा हृदयँ मम संसय होई ॥
सो तुम्ह जानहु अंतरजामी। पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥
सकुच बिहाइ मागु नृप! मोही। मोरें नहिं अदेय कछु तोही ॥

दो०—दानि-सिरोमनि! कृपानिधि, नाथ! कहउँ सतिभाउ।
चाहउँ तुम्हहि समान सुत, प्रभु सन कवन दुराउ ॥ १४९ ॥

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले। एवमस्तु करुनानिधि बोले ॥
आपु-सरिस खोजौं कहँ जाई। नृप! तव तनय होब मैं आई ॥
सतरूपहि बिलोकि कर जोरें। देबि! मागु बरु जो रुचि तोरें ॥
जो बरु नाथ! चतुर नृप मागा। सोइ कृपाल मोहि अति प्रिय लागा ॥
प्रभु परंतु सुठि होति ढिठाई। जदपि भगत-हित तुम्हहि सोहाई ॥
तुम्ह ब्रह्मादि-जनक जग-स्वामी। ब्रह्म, सकल-उर-अंतरजामी ॥
अस समुझत मन संसय होई। कहा जो प्रभु, प्रवान पुनि सोई ॥
जे निज भगत, नाथ! तव अहहीं। जो सुख पावहिं, जो गति लहहीं ॥

दो०—सोइ सुख, सोइ गति, सोइ भगति, सोइ निज-चरन-सनेहु।
सोइ बिबेक, सोइ रहनि प्रभु, हमहि कृपा करि देहु ॥ १५० ॥

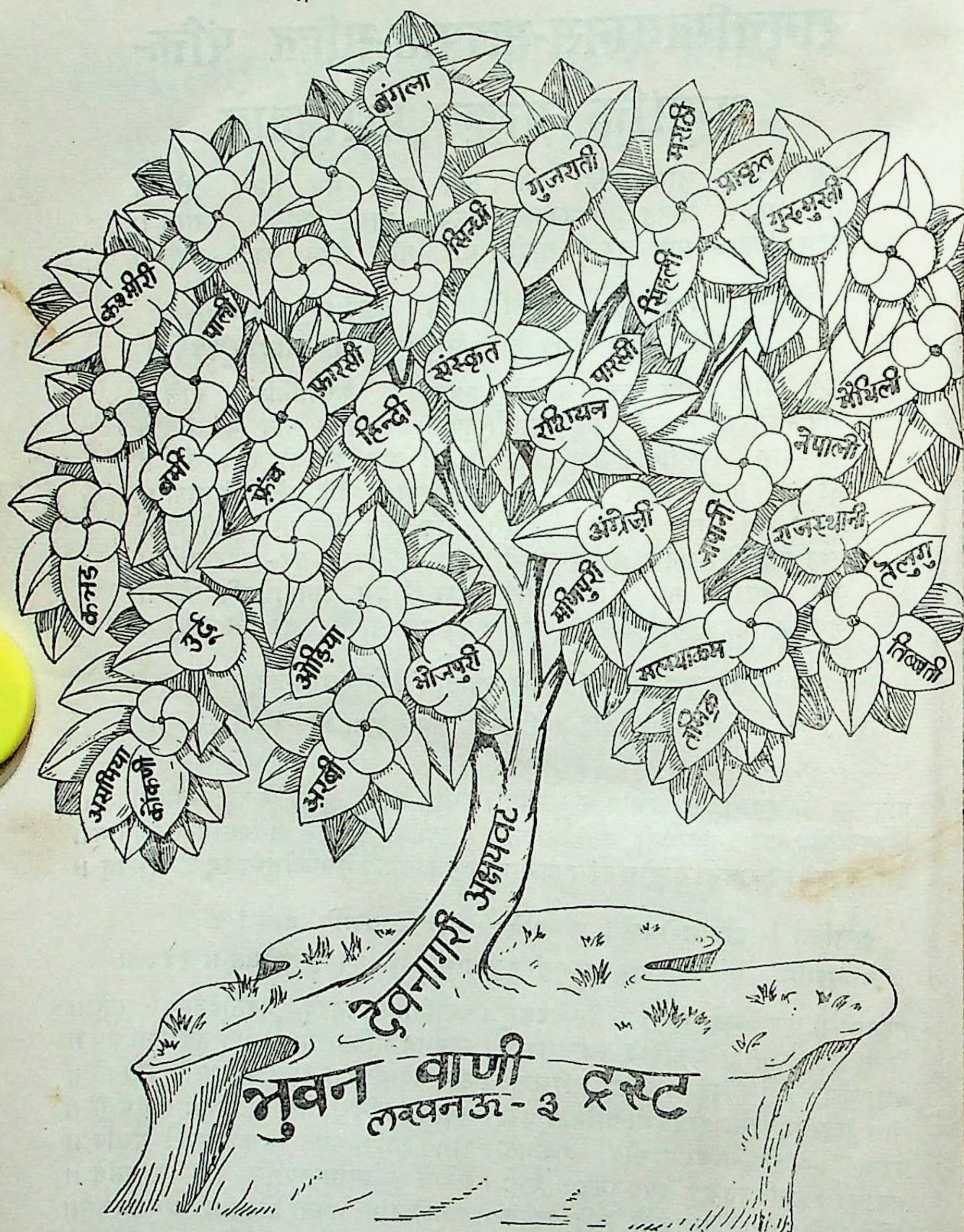
पादपस्य यतस्तस्य स प्रभावं न बुध्यति। तथा ममापि हृदये संशयः सम्प्रजायते ॥
विजानात्येव सर्वं तमन्तर्यामी यतो भवान्। हे स्वामिन्! ममतं काममतो नयतु पूर्णताम् ॥
ईशोऽवदद् याच राजन्! सङ्कोचं परिहाय माम्। न तत् किमपि मे पार्श्वे तुभ्यं देयं न यद्भवेत् ॥

कृपानिधे! दानशिरोमणे! च सत्येन भावेन वदामि नाथ!।
वाञ्छामि पुत्रं भवता समानं गुह्यं प्रभोः किं नृप इत्यवोचत् ॥ १४९ ॥

तस्यामूल्यं वचः श्रुत्वा विलोक्य प्रेम चेदृशम्। दयानिधिस्तमवदद् भवतादेवमेव तत् ॥
किन्तु प्रगत्य कुत्राहं मृगयिष्ये स्वसन्निभम्। स्वयमेव भविष्यामि तस्मात् तव सुतो नृप ॥
बद्धाञ्जलिं समालोक्य शतरूपां हरिस्ततः। ऊचे यद् याच तं देवि! वरो यस्ते प्ररोचते ॥
सोचे यन्नाथ! पटुना राज्ञा यो याचितो वरः। कृपालो! रुचिरोऽतीव प्रतिभातः स एव मे ॥
परन्तु धृष्टता नाथ! महतीयं प्रजायते। रोचते सापि भवते भक्तशङ्कर! यद्यपि ॥
भवान् ब्रह्मादिजनकः समग्रजगतः प्रभुः। समेषां चेतसामन्तर्यामि ब्रह्म च वर्तते ॥
इति ज्ञाने प्रजाते तु संशयो हृदि जायते। तथापि नाथ! भवता प्रोक्तं सर्वं प्रमात्मकम् ॥
वर्तन्तेऽत्यन्तमात्मीया भक्ता ये भवतः प्रभो!। त आप्नुवन्ति यत् सौख्यं यां गतिञ्चाप्नुवन्ति ते ॥

सौख्यञ्च तद् भक्तिगती त एव स्वपादगं प्रेम तदेव सर्वम्।
प्रभो! विवेकः स स एव वासः सर्वं ददात्वित्थमिदं भवान् मे ॥ १५० ॥

' प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी ।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ।। '



प्रतिष्ठाता— नन्दकुमार अवस्थी

ताज़ी विज्ञप्ति

प्रकाशित हो चुके हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण ग्रन्थः—

१ गुजराती—गिरधर रामायण (रचनाकाल-१८३५ ई०) हिन्दी अनुवाद, नागरी लिप्यन्तरण पृष्ठ संख्या १४६० मूल्य ६०·००

२ ,, प्रेमानन्द रसामृत—
ना० लिप्य० हिन्दी अनुवाद पृ० संख्या ४९६ मूल्य ३५·००

३ मलयाळम—अध्यातम रामायण (एळुत्तच्छन् कृत) १५वीं शती हिन्दी अनुवाद, नागरी लिप्यन्तरण पृ०सं० ७५२ मू० ४०·००

४ ,, —महाभारत-एळुत्तच्छन्(१५वीं शती) पृ० १२१६ मू०६०·००

५ बँगला— कृत्तिवास रामायण (पाँचकाण्ड)—१५वीं शती।
हिन्दी पद्या० सहित नागरी लिप्य० पृ० ६२४ मू० २५·००

६ ,, कृत्तिवास लंकाकाण्ड— ,, गद्यानुवाद पृ० ४८८ मू० २५·००

७ ,, ,, उत्तरकाण्ड ,, ,, मूल्य २५·००

८ कश्मीरी—रामावतारचरित-प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत पृ०४८९ मू०२०·००

९ ,, लल्द्यद—(नागरी) हिन्दी गद्य संस्कृत पद्यानु० पृ०१२० ,, १०·००

१० राजस्थानी—रुक्मिणी मंगल पदमभगत कृत। पृ० ३०० मू० १५·००

११ तमिळ— तिरुक्कुरळ्-तिरुवळ्ळुवर कृत। २००० वर्ष से अधिक प्राचीन; नागरी लिप्यन्तरण, गद्य-पद्य हिन्दी अनुवाद, पृ०३५२मू०२०·००

१२ ,, कम्ब रामायण बालकाण्ड(९वीं शती) पृ०६५२ मूल्य ४०·००

१३ ,, ,, अयोध्या-अरण्य पृष्ठ १०२४ मूल्य ७०·००

१४ ,, ,, किष्किन्धा-सुन्दर ,, १०१६ मूल्य ७०·००

१५ ,, ,, युद्धकाण्ड पूर्वार्ध ,, १०१६ मूल्य ७०·००

१६ ,, ,, ,, उत्तरार्ध ,, ८४० मूल्य ७०·००

१७ कन्नड— रामचन्द्रचरित पुराणं, अभिनव पम्प विरचित (जैन-मतानुसार रामचरित्र ११वीं शती) पृ० ६९० मूल्य ४०·००

१८ तेलुगु— मोल्ल रामायण (१४वीं शती) पृ० ४०० मूल्य २०·००

१९ ,, रंगनाथ रामायण (१३वीं शती) अनु. पृ. १३३५ मू० ६०·००

२० ,, श्री पोतन्न महाभागवतमु १-४ स्कन्धपृ० ८५६ मूल्य ७०·००

२१ ,, ,, ,, ५-९ ,, मूल्य ७०·००

२२ ,, ,, ,, १०-१२ स्कन्ध मूल्य ७०·००

२३ मराठी—श्रीरामविजय-श्रीधरकृत(१७वीं शती) पृ० १२२८ मू०६०·००

२४ ,, श्रीहरि-विजय (श्रीधर कृत) पृष्ठ १००४ मू० ७०·००

२५ फ़ारसी—सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत उपनिषद-व्या०) २८०मू०२०·००

२६ उर्दू— शरीफ़ज़ादः (मिर्ज़ा रुस्वा कृत) पृ० १३६ मूल्य ८·००

२७ ,, गुज़श्तः लखनऊ (मौ० शरर) पृ० ३१६ मूल्य २०·००

ताजी विज्ञप्ति

२८ गुरमुखी—श्री गुरुग्रन्थ साहिब पहली सैंची पृ० ९६८ मूल्य ४०·००
२९ ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ९९२ मूल्य ५०·००
३० ,, ,, ,, तीसरी सैंची पृ० ९६४ मूल्य ५०·००
३१ ,, ,, ,, चौथी सैंची पृ० ८०० मूल्य ५०·००
३२ ,, श्री दसम गुरुग्रन्थ साहिब प्रथम सैंची पृ० ८२० मू० ५०·००
३३ ,, ,, ,, ,, दूसरी सैंची पृ० ७०४ मू० ५०·००
३४ ,, ,, ,, ,, यंत्रस्थ मूल्य ५०·००
३५ ,, ,, ,, ,, ,, मूल्य ५०·००
३६ ,, श्रीजपुजी सुखमनी साहब गुरमुखी पाठ तथा ख्वाजः दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनों नागरी लिपि में; पृ०१६४मू० १०·००
३७ ,, सुखमनी साहिब मूल गुटका नागरी लिपि। मूल्य ४·००
३८ सिन्धी— सामी, शाह, सचल की त्रिवेणी पृष्ठ ४१५ मू० २०·००
३९ नेपाली—भानुभक्त रामायण पृ० ३४४ मूल्य २०·००
४० असमिया—माधवकंदली रामायण (१४वीं शती) पृ० ९४३ ,, ६०·००
४१ ओड़िआ–बैंदेहीश-बिळास उपेन्द्रभञ्ज (१८वीं शती) पृ०१०००,, ६०·००
४२ ,, तुलसी-रामचरितमानस—ओड़िआ लिपि में मूलपाठ तथा ओड़िआ गद्य-पद्य अनुवाद। पृ०सं० १४६४ मू० ६०·००
४३ संस्कृत—मानस-भारती रामचरितमानस-सहित संस्कृत पंक्ति-अनुपंक्ति पद्यानुवाद। पृ० ७४० मू० ५०·००
४४ ,, अद्‌भुत रामायण हिन्दी अनुवाद सहित पृ० २४४ मूल्य २०·००

प्रचारित प्रकाशन (ल.कि.घ.)

४५ अरबी क़ुर्आन शरीफ़ मूलपाठ अरबी तथा नागरी लिपि में तथा हिन्दी अनुवाद सहित पृ० १०२४ मू० ४६·००
४६ ,, ,, केवल मूल; अरबी, नागरी दोनों लिपि में पृ०५२०मू० २३·००
४७ ,, ,, केवल हिन्दी अनुवाद पृ० ५३० मूल्य २३·००
४८ ,, क़ौरानिक कोश (पठनक्रम) पृ० १९२ मूल्य १०·००
४९ ,, ज़ादे सफ़र (रियाज़ुस्सालिहीन) भाग १ पृ० ३३६ मू० १५·००
५० ,, तफ़्सीर माजिदी (पारः १ से ५) क़ुर्आन शरीफ़ अरबी व नागरी, दोनों में मूल पाठ, तथा स्व० मौलाना अब्दुल् माजिद दर्याबादी का अनुवाद एवं वृहत् भाष्य हिन्दी में पृ० ५१२ मूल्य ५०·००
५१ बहुभाषाई— 'वाणी सरोवर' त्रैमासिक पत्र वार्षिक मूल्य १५·००

प्राप्ति-स्थान— भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-३

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

यह ग्रन्थ सम्पूर्ण हो चुके हैं (सानुवाद देवनागरी लिप्यन्तरण):—

१—(बंगला) कृत्तिवासरामायण-पाँचकांड नागरी लिप्य०, अवधी पद्यानुवाद मूल्य २५·००
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लंका काण्ड ,, गद्यानुवाद ,, १५·००
३—(मलयाळम) अॆळुत्तच्छन्कृत महाभारत हिन्दी अनु० नागरी लिपि० ,, ४०·००
४—(,,) ,, अध्यात्मरामायण, उत्तररामायण ,, ,, ४०·००
५—(कश्मीरी) रामावतारचरित—प्रकाशराम कुर्यग्रामी कृत ,, ,, २०·००
६—(,,) लल्द्यद—हिन्दी, सस्कृत अनुवाद सहित ,, ७·००
७—बाइबिल सार (सालोमन के नीतिवचन) संस्कृत उद्धरणयुक्त ,, १·००
८—(उर्दू) श्री 'रुस्वा' कृत शरीफ़ज़ाद: (आर्यपुत्र) नागरी लिपि में ,, ५·००
९—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा
ख्वाज: दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानु०—दोनों देवनागरी लिपि में—मूल्य ५·००
१०—(फ़ारसी) सिर्रे अक्बर (दाराशिकोह कृत ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक,
माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तरीय, श्वेताश्वतर) की फ़ारसीव्याख्या हिन्दी में— ,, २०·००
११—(अरबी) रियाज़ुस्सालिहीन ज़ादे सफ़र (इस्लामी हृदीस) प्र० खण्ड ,, १२·००
१२—(तमिळ) तिरुक्कुरळ् नागरी में मूल, हिन्दी गद्य-पद्यानुवाद— ,, २०·००
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर कृत, हिन्दी अनुवाद सहित ,, ४५·००
१४—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत सानुवाद ,, २०·००
१५—(तेलुगु) मोल्ल रामायण सानुवाद लिप्यन्तरण ,, २०·००
१६—(कन्नड) रामचन्द्र चरित पुराणं—जैनसाहित्य (अभिनव पम्प नागचन्द्रकृत) ,, ४०·००
१७—(राजस्थानी) रुक्मिणीमंगल—पदम भगत कृत ,, १५·००
१८—(गुजराती) गिरधर रामायण हिन्दी अनुवाद सहित (नागरी लिपि.) ,, ६०·००
१९—(रामचरितमानस) ओड़िया लिपि में लिप्यन्तरण एवं ओड़िया गद्य-पद्यानुवाद ,, ५०·००
२०—(वाणी सरोवर)—उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक
देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक ,, १०·००

ट्रस्ट के अतिरिक्त, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य, जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

२१—(अरबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद,
टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित— मूल्य ४०·००
२२—(,,) क़ौरानिक कोश क़ुर्आन के पठनक्रम से शब्दार्थ ,, १०·००

ट्रस्ट में प्रकाशित हो रहे सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण ग्रन्थ (यन्त्रस्थ):—

१—(तमिळ) कम्ब रामायण २—(तेलुगु) रंगनाथ रामायण
३—(असमिया) माधवकंदली रामायण ४— ,, पोतन्न भागवतमु
५—(हिब्रू) बाइबिल ओल्ड टेस्टामेण्ट हिन्दी अनु० सहित हिब्रू तथा अंग्रेजी मूल नागरी
६—(ग्रीक) ,, निउ ,, ,, ,, ,, ग्रीक ,, ,, लिपि में
७—(गुरमुखी) श्रीगुरुग्रंथ साहब ८—(ओड़िआ) बैदेहीशबिळास—उपेन्द्र भञ्जकृत
९—(मराठी) श्रीहरि-विजय—श्रीधर कृत मूलपाठ हिन्दी अनुवाद सहित
१०— ,, संत एकनाथ भावार्थ रामायण ११—(कोकणी) ख्रीस्त पुराण
१२—(गुजराती) प्रेमानन्द भजनमाला १३—(उर्दू) गुज़श्त: लखनऊ—मो० शरर
१४—(,,) आबा १५—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५० उपनिषद (द्वि० खण्ड)
१६—(अरबी हृदीस)—(ज़ादे सफ़र) द्वि० खण्ड १७—(अरबी) बुखारी शरीफ़
१८—(सिंधी) स्वामी, शाह, सचल की त्रिवेणी १९—(बंगला) कृत्तिवास उत्तरकाण्ड
२०—रामचरितमानस (तुलसी)—संस्कृत पद्यानुवाद सहित

वाणी प्रेस, लखनऊ—३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३ द्वारा प्रकाशित।
—नन्दकुमार अवस्थी